पं. श्रीराम शर्मा आचार्य वाङ्मय

नीरोग जीवन के महत्वपूर्ण सूत्र

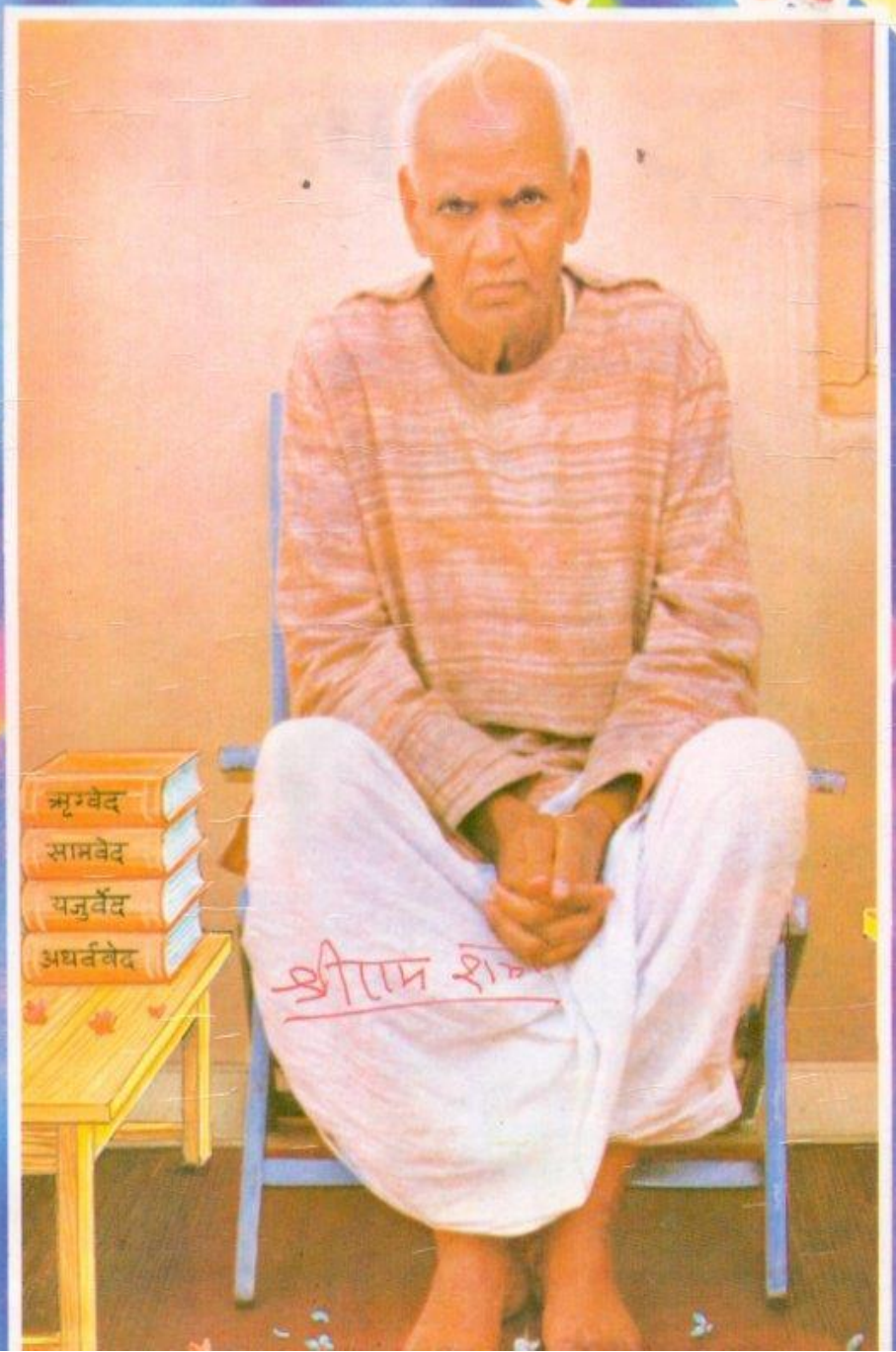

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नीरोग-जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र

सम्पादक
ब्रह्मवर्चस

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकाशक
अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा - २८१००३

© सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रथम संस्करण १९९५

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

मूल्य १२५)

मुद्रक
जनजागरण प्रेस, मथुरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समर्पणम्

ॐ मातरं भगवतीं देवीं श्रीरामञ्च जगद्गुरुम् ।
पादपद्मे तयोः श्रित्वा प्रणमामि मुहुर्मुहुः ॥

मातृवत् लालयित्री च पितृवत् मार्गदर्शिका ।
नमोऽस्तु गुरुसत्तायै श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या ॥

भगवत्याः जगन्मातुः, श्रीरामस्य जगद्गुरोः ।
पादुकायुगले वन्दे, श्रद्धाप्रज्ञास्वरूपयोः ॥

नमोऽस्तु गुरवे तस्मै गायत्रीरूपिणे सदा ।
यस्य वागमृतं हन्ति विषं संसारसंज्ञकम् ॥

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

असम्भवं सम्भवकर्तुमुद्यतं प्रचण्डझञ्झावृतिरोधसक्षमम् ।
युगस्य निर्माणकृते समुद्यतं परं महाकालममुं नमाम्यहम् ॥

त्वदीयं वस्तु गोविन्द ! तुभ्यमेव समर्पये ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विराट गायत्री परिवार एवं उसके संस्थापक-संरक्षक एक संक्षिप्त परिचय

इतिहास में कभी-कभी ऐसा होता है कि अवतारी सत्ता एक साथ बहुआयामी रूपों में प्रकट होती है एवं करोड़ों ही नहीं, पूरी वसुधा के उद्धार-चेतनात्मक धरातल पर सबके मनों का नये सिरे से निर्माण करने आती है । परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य को एक ऐसी ही सत्ता के रूप में देखा जा सकता है जो युगों-युगों में गुरु एवं अवतारी सत्ता दोनों ही रूपों में हम सबके बीच प्रकट हुई, अस्सी वर्ष का जीवन जीकर एक विराट् ज्योति प्रज्ज्वलित कर उस सूक्ष्म ऋषि चेतना के साथ एकाकार हो गयी जो आज युग परिवर्तन को सन्निकट लाने को प्रतिबद्ध है । परमवंदनीया माताजी शक्ति का रूप थीं जो कभी महाकाली, कभी माँ जानकी, कभी मां शारदा एवं कभी माँ भगवती के रूप में शिव की कल्याणकारी सत्ता का साथ देने आती रही है । उनने भी सूक्ष्म में विलीन हो स्वयं को अपने आराध्य के साथ एकाकार कर ज्योतिपुरुष का एक अंग स्वयं को बना लिया । आज दोनों सशरीर हमारे बीच नहीं है किन्तु, नूतन सृष्टि कैसे ढाली गयी, कैसे मानव गढ़ने का साँचा बनाया गया, इसे शान्तिकुंज, ब्रह्मवर्चस, गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान एवं युगतीर्थ आँवलखेड़ा जैसी स्थापनाओं तथा संकल्पित सृजन सेनानी गणों के, वीरभद्रों की करोड़ों से अधिक की संख्या के रूप में देखा जा सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव का वास्तविक मूल्यांकन तो कुछ वर्षों बाद इतिहासविद, मिथक लिखने वाले करेंगे किन्तु, यदि उनको आज भी साक्षात कोई देखना या उनसे साक्षात्कार करना चाहता हो तो उन्हें उनके द्वारा अपने हाथ से लिखे गये उस विराट परिमाण में साहित्य के रूप में युग संजीवनी के रूप में देख सकता है जो वे अपने वजन से अधिक भार के बराबर लिख गये । इस साहित्य में संवेदना का स्पर्श इस बारीकी से हुआ है कि लगता है लेखनी को उसी की स्याही में डुबा कर लिखा गया हो । हर शब्द ऐसा जो हृदय को छूता मन को, विचारों को बदलता चला जाता है । लाखों करोड़ों के मनों के अंतःस्थल को छू कर उसने उनका कायाकल्प कर दिया । रूसो के प्रजातंत्र की, कार्ल मार्क्स के साम्यवाद की क्रांति भी इसके समक्ष बौनी पड़ जाती है । उनके मात्र इस युग वाले स्वरूप को लिखने तक में लगता है कि एक विश्वकोश तैयार हो सकता है, फिर उस बहुआयामी रूप को जिसमें वे संगठनकर्ता, साधक, करोड़ों के अभिभावक, गायत्री महाविद्या के उद्धारक, संस्कार परम्परा का पुनर्जीवन करने वाले, ममत्व लुटाने वाले एक पिता, नारी जाति के प्रति अनन्य करुणा बिखेरकर उनके ही उद्धार के लिए धरातल पर चलने वाला नारी जागरण अभियान चलाते देखे जाते हैं, अपनी वाणी के उद्‌बोधन से एक विराट गायत्री परिवार एकाकी अपने बलबूते खड़े रहते दिखाई देते हैं तो समझ में नहीं आता, क्या-क्या लिखा जाय, कैसे छन्दबद्ध, लिपिबद्ध किया जाय, उस महापुरुष के जीवनचरित को ।

आश्विन कृष्ण त्रयोदशी विक्रमी संवत् १९६७ (२० सितम्बर १९११) को स्थूल शरीर से आँवलखेड़ा ग्राम जनपद आगरा जो जलेसर मार्ग पर आगरा से पंद्रह मील की दूरी पर स्थित है, में जन्मे श्रीराम शर्मा जी का बाल्यकाल-कैशोर्य काल ग्रामीण परिसर में ही बीता । वे जन्मे तो थे एक जमींदार घराने में, जहाँ उनके पिता-श्री.पं. रूपकिशोर जी शर्मा आसपास के दूर-दराज के राजघरानों के राजपुरोहित, उद्‌भट विद्वान, भागवत कथाकार थे किन्तु, उनका अंतःकरण मानव मात्र की पीड़ा से सतत विचलित रहता था । साधना के प्रति उनका झुकाव बचपन में ही दिखाई देने लगा । जब वे अपने सहपाठियों को, छोटे बच्चों को अमराइयों में बिठाकर स्कूली शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता अपनाने वाली आत्मविद्या का शिक्षण दिया करते थे । छटपटाहट के कारण हिमालय की ओर भाग निकलने व पकड़े जाने पर उनने संबंधियों को बताया कि हिमालय ही उनका घर है एवं वहीं वे जा रहे थे । किसे मालूम था कि हिमालय की ऋषि चेतनाओं का समुच्चय बनकर आयी यह सत्ता वस्तुतः अगले दिनों अपना घर वहीं बनाएगी । जाति-पाँति का कोई भेद नहीं । जातिगत मूढ़ता भरी मान्यता से ग्रसित तत्कालीन भारत के ग्रामीण परिसर में एक अछूत वृद्ध महिला की जिसे कुष्ठ रोग हो गया था, उसी के टोले में जाकर सेवाकर उनने घरवालों का विरोध तो मोल ले लिया पर अपना व्रत नहीं छोड़ा ।

उस महिला ने स्वस्थ होने पर उन्हें ढेरों आशीर्वाद दिये। एक अछूत कहलाने वाली जाति का व्यक्ति जो उनके आलीशान घर में घोड़ों की मालिश करने आता था, एक बार कह उठा कि मेरे घर कथा कौन कराने आएगा, मेरा ऐसा सौभाग्य कहाँ। नवनीत जैसे हृदय वाले पूज्यवर उसके घर जा पहुँचे एवं कथा पूरे विधान से कर पूजा की, उसको स्वच्छता का पाठ सिखाया, जबकि सारा गाँव उनके विरोध में बोल रहा था।

किशोरावस्था में ही समाज सुधार की रचनात्मक प्रवृत्तियाँ उनने चलाना आरम्भ कर दी थीं। औपचारिक शिक्षा स्वल्प ही पायी थी किन्तु, उन्हें इसके बाद आवश्यकता भी नहीं थी क्योंकि जो जन्मजात प्रतिभा सम्पन्न हो वह औपचारिक पाठ्यक्रम तक सीमित कैसे रह सकता है। हाट-बाजारों में जाकर स्वास्थ्य-शिक्षा प्रधान परिपत्र बाँटना, पशुधन को कैसे सुरक्षित रखें तथा स्वावलम्बी कैसे बनें, इसके छोटे-छोटे पैम्फलेट्स लिखने, हाथ की प्रेस से छपवाने के लिए उन्हें किसी शिक्षा की आवश्यकता नहीं थी। वे चाहते थे, जनमानस आत्मावलम्बी बने, राष्ट्र के प्रति स्वाभिमान उसका जागे, इसलिए गाँव में जन्मे इस लाल ने नारी शक्ति व बेरोजगार युवाओं के लिए गाँव में ही एक बुनताघर स्थापित किया व उसके द्वारा हाथ से कैसे कपड़ा बुना जाय, अपने पैरों पर कैसे खड़ा हुआ जाय, यह सिखाया।

पंद्रह वर्ष की आयु में वसंत पंचमी की वेला में सन् १९२६ में उनके घर की पूजा स्थली में, जो उनकी नियमित उपासना का तब से आगार थी, जबसे महामना पं० मदन मोहन मालवीय जी ने उन्हें काशी में गायत्री मंत्र की दीक्षा दी थी, उनकी गुरुसत्ता का आगमन हुआ अदृश्य छायाधारी सूक्ष्म रूप में। उनने प्रज्ज्वलित दीपक की लौ में से स्वयं को प्रकट कर उन्हें उनके द्वारा विगत कई जन्मों में संपन्न क्रिया कलापों का दिग्दर्शन कराया तथा उन्हें बताया कि वे दुर्गम हिमालय से आये हैं एवं उनसे अनेकानेक ऐसे क्रियाकलाप कराना चाहते हैं, जो अवतारी स्तर की ऋषि सत्ताएँ उनसे अपेक्षा रखती हैं। चार बार कुछ दिन से लेकर एक साल तक की अवधि तक हिमालय आकर रहने, कठोर तप करने का भी उनने संदेश दिया एवं उन्हें तीन संदेश दिए- १. गायत्री महाशक्ति के चौबीस-चौबीस लक्ष के चौबीस महा- पुरश्चरण जिन्हें आहार के कठोर तप के साथ पूरा करना था। २. अखण्ड घृतदीप की स्थापना एवं जन-जन तक इसके प्रकाश को फैलाने के लिए समय आने पर ज्ञानयज्ञ अभियान चलाना, जो बाद में अखण्ड ज्योति पत्रिका के १९३८ में प्रथम प्रकाशन से लेकर विचार-क्रांति अभियान के विश्वव्यापी होने के रूप में प्रकटा तथा ३. चौबीस महापुरश्चरणों के दौरान युगधर्म का निर्वाह करते हुए राष्ट्र के निमित्त भी स्वयं को खपाना, हिमालय यात्रा भी करना तथा उनके संपर्क से आगे का मार्गदर्शन लेना।

यह कहा जा सकता है कि युग निर्माण मिशन, गायत्री परिवार, प्रज्ञा अभियान, पूज्य गुरुदेव जो सभी एक दूसरे के पर्याय हैं, की जीवन यात्रा का यह एक महत्वपूर्ण मोड़ था, जिसने भावी रीति-नीति का निर्धारण कर दिया। पूज्य गुरुदेव अपनी पुस्तक 'हमारी वसीयत और विरासत' में लिखते हैं कि "प्रथम मिलन के दिन समर्पण सम्पन्न हुआ। दो बातें गुरु सत्ता द्वारा विशेष रूप से कही गई, संसारी लोग क्या करते हैं और क्या कहते हैं, उसकी ओर से मुँह मोड़कर निर्धारित लक्ष्य की ओर एकाकी साहस के बलबूते चलते रहना एवं दूसरा यह कि अपने को अधिक पवित्र और प्रखर बनाने की तपश्चर्या में जुट जाना- जौ की रोटी व छाछ पर निर्वाह कर आत्मानुशासन सीखना। इसी से वह सामर्थ्य विकसित होगी जो विशुद्धतः परमार्थ प्रयोजनों में नियोजित होगी। वसंत पर्व का यह दिन गुरु अनुशासन का अवधारण ही हमारे लिए नया जन्म बन गया। सद्गुरु की प्राप्ति हमारे जीवन का अनन्य एवं परम सौभाग्य रहा।"

राष्ट्र के परावलम्बी होने की पीड़ा भी उन्हें उतनी ही सताती थी जितनी कि गुरुसत्ता के आदेशानुसार तपकर सिद्धियों के उपार्जन की ललक उनके मन में थी। उनके इस असमंजस को गुरुसत्ता ने तोड़कर परावाणी से उनका मार्गदर्शन किया कि युगधर्म की महत्ता व समय की पुकार देख सुन कर तुम्हें अन्य आवश्यक कार्यों को छोड़कर अग्निकाण्ड में पानी लेकर दौड़ पड़ने की तरह आवश्यक कार्य भी करने पड़ सकते हैं। इसमें स्वतंत्रता संग्राम सेनानी के नाते संघर्ष करने का भी संकेत था। १९२७ से १९३३ तक का समय उनका एक सक्रिय स्वयं सेवक-स्वतंत्रता सेनानी के रूप में बीता, जिसमें घरवालों के विरोध के बावजूद पैदल लम्बा रास्ता पारकर वे आगरा के उस शिविर में पहुँचे, जहाँ शिक्षण दिया जा रहा था, अनेकानेक मित्रों-सखाओं-मार्गदर्शकों के साथ भूमिगत हो कार्य करते रहे तथा समय आने पर जेल

भी गये । छह-छह माह की उन्हें कई बार जेल हुई । जेल में भी वे जेल के निरक्षर साथियों को शिक्षण देकर व स्वयं अंग्रेजी सीखकर लौटे । आसन- सोल जेल में वे श्री जवाहर लाल नेहरू की माता श्रीमती स्वरूपरानी नेहरू, श्री रफी अहमद किदवई, महामना मालवीय जी, देवदास गाँधी जैसी हस्तियों के साथ रहे व वहाँ से एक मूलमंत्र सीखा जो मालवीय जी ने दिया था कि जन-जन की साझेदारी बढ़ाने के लिए हर व्यक्ति के अंशदान से-मुट्ठी फण्ड से रचनात्मक प्रवृत्तियाँ चलाना । यही मंत्र आगे चलकर एक घण्टा समयदान बीस पैसा नित्य या एक दिन की आय एक माह में तथा एक मुट्ठी अन्न रोज डालने के माध्यम से धर्मघट की स्थापना का स्वरूप लेकर लाखों-करोड़ों की भागीदारी वाला गायत्री परिवार बनाता चला गया, जिसका आधार था प्रत्येक व्यक्ति की यज्ञीय भावना का उसमें समावेश ।

स्वतंत्रता की लड़ाई के दौरान कुछ उग्र दौर भी आये, जिनमें शहीद भगतसिंह को फाँसी दिये जाने पर फैले जन आक्रोश के समय श्री अरविन्द के किशोर काल की क्रांतिकारी स्थिति की तरह उनने भी वे कार्य किये, जिनसे आक्रान्ता शासकों के प्रति असहयोग जाहिर होता था । नमक आन्दोलन के दौरान वे आततायी शासकों के समक्ष झुके नहीं, वे मारते रहे परन्तु, समाधि स्थिति को प्राप्त राष्ट्र देवता के पुजारी को बेहोश होना स्वीकृत था पर आन्दोलन से पीठ दिखाकर भागना नहीं । बाद में फिरंगी सिपाहियों के जाने पर लोग उठाकर घर लेकर आये । जरारा आन्दोलन के दौरान उनने झण्डा छोड़ा नहीं जबकि, फिरंगी उन्हें पीटते रहे, झण्डा छीनने का प्रयास करते रहे। उनने मुँह से झण्डा पकड़ लिया, गिर पड़े, बेहोश हो गये पर झण्डे का टुकड़ा चिकित्सकों द्वारा दाँतों में भींचे गये टुकड़े के रूप में जब निकाला गया तब सब उनकी सहनशक्ति देखकर आश्चर्य चकित रह गये । उन्हें तब से ही आजादी के मतवाले उन्मत्त श्रीराम मत्त नाम मिला। अभी भी आगरा में उनके साथ रहे या उनसे कुछ सीख लिए अगणित व्यक्ति उन्हें मत्त जी नाम से ही जानते हैं। लगानबन्दी के आँकड़े एकत्र करने के लिए उनने पूरे आगरा जिले का दौरा किया व उनके द्वारा प्रस्तुत वे आँकड़े तत्कालीन संयुक्त प्रान्त के मुख्य मंत्री श्री गोविन्द वल्लभ पंत द्वारा गाँधी जी के समक्ष पेश किये गये । बापू ने अपनी प्रशस्ति के साथ वे प्रामाणिक आँकड़े ब्रिटिश पार्लियामेण्ट भेजे, इसी आधार पर पूरे संयुक्त प्रान्त के लगान माफी के आदेश प्रसारित हुए । कभी जिनने अपनी इस लड़ाई के बदले कुछ न चाहा उन्हें सरकार ने अपना प्रतिनिधि भेजकर पचास वर्ष बाद ताम्रपत्र देकर शांतिकुज में सम्मानित किया । उसी सम्मान व स्वाभिमान के साथ सारी सुविधाएँ व पेंशन उनने प्रधान मंत्री राहत फण्ड, हरिजन फण्ड के नाम समर्पित कर दीं । वैरागी जीवन का, सच्चे राष्ट्र संत होने का इससे बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ?

१९३५ के बाद उनके जीवन का नया दौर शुरु हुआ, जब गुरुसत्ता की प्रेरणा से वे श्री अरविन्द से मिलने पाण्डिचेरी, गुरुदेव ऋषिवर रवीन्द्रनाथ टैगोर से मिलने शांति निकेतन तथा बापू से मिलने साबरमती आश्रम, अहमदाबाद गये । सांस्कृतिक आध्यात्मिक मोर्चे पर राष्ट्र को कैसे परतंत्रता की बेड़ियों से मुक्त किया जाय, यह निर्देश लेकर अपना अनुष्ठान यथावत् चलाते हुए उनने पत्रकारिता के क्षेत्र में प्रवेश किया जब आगरा में 'सैनिक' समाचार पत्र के कार्यवाहक संपादक के रूप में श्री कृष्णदत्त पालीवाल जी ने उन्हें अपना सहायक बनाया। बाबू गुलाब राय व पालीवाल जी से सीख लेते हुए सतत स्वाध्यायरत रह कर उनने अखण्ड ज्योति नामक पत्रिका का पहला अंक १९३८ की वसंत पंचमी पर प्रकाशित किया । प्रयास पहला था, जानकारियाँ कम थीं अत: पुन: सारी तैयारी के साथ विधिवत् १९४० की जनवरी से उनने परिजनों के नाम पाती के साथ अपने हाथ से बने कागज पर पैर से चलने वाली मशीन से छापकर 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका का शुभारंभ किया जो पहले तो दो सौ पचास पत्रिका के रूप में निकली, किन्तु क्रमश: उनके अध्यवसाय घर-घर पहुँचाने, मित्रों तक पहुँचाने वाले उनके हृदय स्पर्शी पत्रों द्वारा बढ़ती-बढ़ती नवयुग के मत्स्यावतार की तरह आज दस लाख से भी अधिक संख्या में विभिन्न भाषाओं में छपती व एक करोड़ से अधिक व्यक्तियों द्वारा पढ़ी जाती है ।

पत्रिका के साथ-साथ 'मैं क्या हूँ' जैसी पुस्तकों का लेखन आरम्भ हुआ, स्थान बदला, आगरा से मथुरा आ गये, दो-तीन घर बदलकर घीयामण्डी में जहाँ आज अखण्ड ज्योति संस्थान है, आ बसे । पुस्तकों का प्रकाशन व कठोर तपश्चर्या, ममत्व विस्तार तथा पत्रों द्वारा जन-जन के अंत: स्थल को छूने की प्रक्रिया चालू रही । साथ देने आ गयीं

परमवंदनीया माताजी भगवती देवी शर्मा, जिन्हें भविष्य में अत्यधिक महत्वपूर्ण भूमिका अपने आराध्य इष्ट गुरु के लिए निभानी थी । उनके मर्मस्पर्शी पत्रों ने, भाव भरे आतिथ्य, हर किसी को जो दुखी था-पीड़ित था, दिये गये ममत्व भरे परामर्श ने गायत्री परिवार का आधार खड़ा किया, इसमें कोई सन्देह नहीं । यदि विचारक्रांति में साहित्य ने मनोभूमि बनायी तो भावात्मक क्रांति में ऋषियुगल के असीम स्नेह ने ब्राह्मणत्व भरे जीवन ने शेष बची भूमिका निभायी ।

'अखण्ड ज्योति' पत्रिका लोगों के मनों को प्रभावित करती रही, इसमें प्रकाशित 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ से लोगों को गायत्री व यज्ञमय जीवन जीने का संदेश मिलता रहा, साथ ही एक आना से लेकर छह आना सीरज की अनेकानेक लोकोपयोगी पुस्तकें छपती चली गयीं। इस बीच हिमालय के बुलावे भी आये, अनुष्ठान भी चलता रहा जो पूरे विधि विधान के साथ १९५३ में गायत्री तपोभूमि की स्थापना, १०८ कुण्डी यज्ञ व उनके द्वारा दी गयी प्रथम दीक्षा के साथ समाप्त हुआ । गायत्री तपोभूमि की स्थापना के निमित्त धन की आवश्यकता पड़ी तो परम वंदनीया माताजी ने जिनने हर कदम पर अपने आराध्य का साथ निभाया, अपने सारे जेवर बेच दिये, पूज्यवर ने जमींदारी के बाण्ड बेच दिये एवं जमीन लेकर अस्थायी स्थापना कर दी गयी । धीरे-धीरे उदारचेताओं के माध्यम से गायत्री तपोभूमि एक साधना पीठ बन गयी। २४०० तीर्थों के जल व रज की स्थापना वहाँ की गयी, २४०० करोड़ गायत्री मंत्र लेखन वहाँ स्थापित हुआ, अखण्ड अग्नि हिमालय के एक अति पवित्र स्थान से लाकर स्थापित की गयी जो अभी तक वहाँ यज्ञशाला में जल रही है । १९४१ से १९७१ तक का समय परमपूज्य गुरुदेव का गायत्री तपोभूमि, अखण्ड ज्योति संस्थान में सक्रिय रहने का समय है । १९५६ में नरमेध यज्ञ, १९५८ में सहस्रकुण्डी यज्ञ करके लाखों गायत्री साधकों को एकत्र कर उनने गायत्री परिवार का बीजारोपण कर दिया । कार्त्तिक पूर्णिमा १९५८ में आयोजित इस कार्यक्रम में दस लाख व्यक्तियों ने भाग लिया, इन्हीं के माध्यम से देश भर में प्रगतिशील गायत्री परिवार की दस हजार से अधिक शाखाएँ स्थापित हो गयीं । संगठन का अधिकाधिक कार्यभार पूज्यवर परमवंदनीया माताजी पर सौंपते चले गये एवम् १९५९ में पत्रिका का संपादन उन्हें देकर पौने दो वर्ष के लिए हिमालय चले गये, जहाँ उन्हें गुरुसत्ता से मार्गदर्शन लेना था, तपोवन नंदनवन में ऋषियों से साक्षात्कार करना था तथा गंगोत्री में रहकर आर्ष ग्रन्थों का भाष्य करना था । तब तक वे गायत्री महाविद्या पर विश्वकोश स्तर की अपनी रचना गायत्री महाविज्ञान के तीन खण्ड लिख चुके थे, जिसके अब तक प्रायः पैंतीस संस्करण छप चुके हैं । हिमालय से लौटते ही उनमें महत्वपूर्ण निधि के रूप में वेद, उपनिषद्, स्मृति, आरण्यक, ब्राह्मण, योगवाशिष्ठ, मंत्र महाविज्ञान, तंत्र महाविज्ञान जैसे ग्रन्थों को प्रकाशित कर देव संस्कृति की मूल थाती को पुनर्जीवन दिया । परमवंदनीया माताजी ने उन्हीं वेदों को पूज्यवर की इच्छानुसार १९९१-९२ में विज्ञान सम्मत आधार देकर पुनर्मुद्रित कराया एवं वे आज घर-घर में स्थापित हैं ।

युग निर्माण योजना व 'युग निर्माण सत्संकल्प' के रूप में मिशन का घोषणा पत्र १९६३ में प्रकाशित हुआ । तपोभूमि एक विश्वविद्यालय का रूप लेती चली गयी तथा अखण्ड ज्योति संस्थान एक तपःपूत की निवास स्थली बन गया, जहाँ रहकर उनने अपनी शेष तप साधना पूरी की थी, जहाँ से गायत्री परिवार का बीज डाला गया था । तपोभूमि में विभिन्न शिविरों का आयोजन किया जाता रहा, पूज्यवर स्वयं छोटे-बड़े जन सम्मेलनों, यज्ञायोजनों के द्वारा विचार क्रांति की पृष्ठभूमि बनाते रहे, पूरे देश में १९७०-७१ में पाँच १००८ कुण्डी यज्ञ आयोजित हुए । स्थायी रूप से विदाई लेते हुए एक विराट सम्मेलन (जून १९७१) में परिजनों में विशेष कार्य भार सौंप, परम वंदनीया माताजी को शांतिकुंज, हरिद्वार में अखण्ड दीप के समक्ष तप हेतु छोड़ कर स्वयं हिमालय चले गये । एक वर्ष बाद वे गुरुसत्ता का संदेश लेकर लौटे एवं अपनी आगामी बीस वर्ष की क्रिया पद्धति बतायी । ऋषि परम्परा का बीजारोपण, प्राण प्रत्यावर्त्तन संजीवनी व कल्प साधना सत्रों का मार्गदर्शन जैसे कार्य उनने शांतिकुंज में सम्पन्न किये ।

सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थापना अपनी हिमालय की इस यात्रा से लौटने के बाद ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान की थी, जहाँ विज्ञान और अध्यात्म के समन्वयात्मक प्रतिपादनों पर शोध कर एक नये धर्म वैज्ञानिक धर्म के मूलभूत आधार रखे जाने थे । इस सम्बन्ध में पूज्यवर ने विराट् परिमाण में साहित्य लिखा, अदृश्य जगत के अनुसंधान से लेकर मानव की प्रसुप्त क्षमता के जागरण तक साधना से सिद्धि एवं दर्शन-विज्ञान के तर्क, तथ्य प्रमाण के आधार पर प्रस्तुतीकरण तक । इसके

लिए एक विराट ग्रन्थागार बना व एक सुसज्जित प्रयोगशाला। वनौषधि उद्यान भी लगाया गया तथा जड़ी बूटी, यज्ञविज्ञान तथा मंत्र शक्ति पर प्रयोग हेतु साधकों पर परीक्षण प्रचुर परिमाण में किये गये। निष्कर्षों ने प्रमाणित किया कि ध्यान साधना मंत्र चिकित्सा व यज्ञोपैथी एक विज्ञान सम्मत विधा है। गायत्री नगर क्रमशः एक तीर्थ, संजीवनी विद्या के प्रशिक्षण का एकेडमी का रूप लेता चला गया एवं जहाँ ९-९ दिन के साधना प्रधान, एक-एक माह के कार्यकर्त्ता निर्माण हेतु युग शिल्पी सत्र सम्पन्न होने लगे।

कार्यक्षेत्र में विस्तार हुआ। स्थान-स्थान पर शक्तिपीठें विनिर्मित हुईं, जिनके निर्धारित क्रियाकलाप थे- सुसंस्कारिता, आस्तिकता संवर्धन एवं जन जागृति के केन्द्र बनना। ऐसे केन्द्र जो १९८० में बनना आरंभ हुए थे, प्रज्ञा संस्थान - शक्तिपीठ-प्रज्ञामण्डल-स्वाध्याय मंडल के रूप में पूरे देश व विश्व में फैलते चले गये। ७६ देशों में गायत्री परिवार की शाखाएँ फैल गयीं, ४६०० से अधिक भारत में निज के भवन वाले संस्थान विनिर्मित हो गये, वातावरण गायत्रीमय होता चला गया।

परमपूज्य गुरुदेव ने सूक्ष्मीकरण में प्रवेश कर १९८५ में ही पाँच वर्ष के अंदर अपने सारे क्रिया कलापों को समेटने की घोषणा कर दी। इस बीच कठोर तप साधना कर मिलना-जुलना कम कर दिया तथा क्रमशः क्रिया कलाप परमवंदनीया माताजी को सौंप दिये। राष्ट्रीय एकता सम्मेलनों, विराट दीप यज्ञों के रूप में नूतन विधा को जन-जन को सौंप कर राष्ट्र देवता की कुण्डलिनी जगाने हेतु उनने अपने स्थूल शरीर छोड़ने व सूक्ष्म में समाने की, विराट से विराटतम होने की घोषणा कर गायत्री जयन्ती २ जून १९९० को महाप्रयाण किया। सारी शक्ति वे परमवंदनीया माताजी को दे गये व अपने व माताजी के बाद संघशक्ति की प्रतीक लाल मशाल को ही इष्ट आराध्य मानने का आदेश देकर ब्रह्मबीज से विकसित ब्रह्मकमल की सुवास को देव संस्कृति दिग्विजय अभियान के रूप में आरंभ करने का माताजी को निर्देश दे गये।

एक विराट श्रद्धांजलि समारोह व शपथ समारोह जो हरिद्वार में सम्पन्न हुए, में लाखों व्यक्तियों ने अपना समय समाज के नव निर्माण, मनुष्य में देवत्व के उदय व धरती पर स्वर्ग लाने का गुरु सत्ता का नारा साकार करने के निमित्त देने की घोषणा की। परमवंदनीया माताजी द्वारा भारतीय-संस्कृति को विश्वव्यापी बनाने, गायत्री रूपी संजीवनी घर-घर पहुँचाने के लिए पूज्यवर द्वारा आरम्भ किये गये युगसंधि महापुरश्चरण की प्रथम व द्वितीय पूर्णाहुति तक विराट अश्वमेध महायज्ञों की घोषणा की गयी। वातावरण के परिशोधन, सूक्ष्मजगत के नव निर्माण एवं सांस्कृतिक व वैचारिक क्रांति के निमित्त सौर ऊर्जा के दोहन द्वारा विशिष्ट प्रयोगों के माध्यम से विशिष्ट मंत्राहुतियों द्वारा सम्पन्न किये गये इन अश्वमेधों ने सारी विश्ववसुधा को गायत्री व यज्ञमय, वासंती उल्लास से भर दिया। स्वयं परमवंदनीया माताजी ने अपनी पूर्व घोषणानुसार चार वर्ष तक परिजनों का मार्गदर्शन कर सोलह यज्ञों का संचालन स्थूल शरीर से किया व फिर भाद्रपद पूर्णिमा १९ सितम्बर १९९४ महालय श्राद्धारंभ वाली पुण्य वेला में अपने आराध्य के साथ एकाकार हो गयीं। उनके महाप्रयाण के बाद दोनों ही सत्ताओं के सूक्ष्म में एकाकार होने के बाद मिशन की गतिविधियाँ कई गुना बढ़ती चली गयीं एवं जयपुर के प्रथम अश्वमेध यज्ञ (नवम्बर ९२) से छब्बीसवें अश्वमेध यज्ञ शिकागो (यू. एस. ए. जुलाई ९५) तक प्रज्ञावतार का प्रत्यक्ष रूप सबको दीखने लगा है।

गुरुसत्ता के आदेशानुसार सतयुग के आगमन तक १०८ महायज्ञ देवसंस्कृति को विश्वव्यापी बनाने हेतु संपन्न होने हैं। युग संधि महापुरश्चरण की अंतिम पूर्णाहुति उसी के बाद होगी। प्रथम पूर्णाहुति नवम्बर १९९५ में कार्त्तिक पूर्णिमा के अवसर पर युगपुरुष पूज्यवर की जन्मभूमि आँवलखेड़ा में मनायी जा रही है। उनके द्वारा लिखे गये समग्र साहित्य के वाङ्मय का जो सत्तर खण्डों में फैला है, विमोचन भी यहीं सम्पन्न हो रहा है। विनम्रता एवं ब्राह्मणत्व की कसौटी पर खरे उतरने वाले वरिष्ठ प्रज्ञापुत्र ही उनके उत्तराधिकारी कहे जायेंगे, यह गुरुसत्ता का उद्घोष था एवं इस क्षेत्र में बढ़ चढ़कर आदर्शवादी प्रतिस्पर्धा करने वाले अनेकानेक परिजन अब उनके स्वप्नों को साकार करने आगे आ रहे हैं। 'हम बदलेंगे-युग बदलेंगे' का उद्घोष दिग-दिगन्त तक फैल रहा है एवं इक्कीसवीं सदी-उज्ज्वल भविष्य, सतयुग की वापसी का स्वप्न साकार होता चला जा रहा है, यह स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूमिका

नीरोग जीवन एक ऐसी विभूति है जो हर किसी को अभीष्ट है । कौन नहीं चाहता कि उसे चिकित्सालयों-चिकित्सकों का दरवाजा बार-बार न खटखटाना पड़े, उन्हीं का, ओषधियों का मोहताज होकर न जीना पड़े । पर कितने ऐसे हैं जो सब कुछ जानते हुए भी रोगमुक्त नहीं रह पाते ? यह इस कारण कि आपकी जीवन शैली ही त्रुटि पूर्ण है मनुष्य क्या खाये, कैसे खाये; यह उसी को निर्णय करना है । आहार में क्या हो यह हमारे ऋषिगण निर्धारित कर गए हैं । वे एक ऐसी व्यवस्था बना गए हैं, जिसका अनुपाला करने पर व्यक्ति को कभी कोई रोग सता नहीं सकता । आहार के साथ विहार के संबंध में भी हमारी संस्कृति स्पष्ट चिन्तन देती है, इसके बावजूद भी व्यक्ति का रहन-सहन, गड़बड़ाता चला जा रहा है । परमपूज्य गुरुदेव ने इन सब पर स्पष्ट संकेत करते हुए प्रत्येक के लिए जीवनदर्शक कुछ सूत्र दिए हैं जिनका मनन अनुशीलन करने पर निश्चित ही स्वस्थ, नीरोग, शतायु बना जा सकता है ।

परमपूज्य गुरुदेव ने व्यावहारिक अध्यात्म के ऐसे पहलुओं पर सदा से ही जोर दिया जिनकी सामान्यतया मनुष्य उपेक्षा करता आया है और लोग अध्यात्म को जप-चमत्कार, ऋद्धि-सिद्धियों से जोड़ते हैं किंतु पूज्यवर ने स्पष्ट लिखा है कि जिसने जीवन सही अर्थों में सीख लिया उसने सब कुछ प्राप्त कर लिया । जीवन जीने की कला का पहला ककहरा ही सही आहार । इस संबंध में अनेकानेक भ्रान्तियाँ है कि क्या खाने योग्य है क्या नहीं ? ऐसी अनेकों भ्रान्तियों यथा नमक जरूरी है, पौष्टिकता संवर्धन हेतु वसा प्रधान भोजन होना चाहिए, शाकाहार से नहीं-मांसाहार से स्वास्थ्य बनता है-पूज्यवर ने विज्ञान सम्मत तर्क प्रस्तुत करते हुए नकारा है । एक-एक स्पष्टीकरण ऐसा है कि पाठक सोचने पर विवश हो जाता है कि जो तल-भूनकर स्वाद के लिए वह खा रहा है वह खाद्य है या अखाद्य । अक्षुण्ण स्वास्थ्य प्राप्ति का राजमार्ग यही है कि मनुष्य आहार का चयन करें क्योंकि यही उसकी बनावट नियन्ता के बनायी है तथा उसे और अधिक विकृत न बनाकर अधिकाधिक प्राकृतिक रूप में लें ।

अनेक व्यक्ति यह जानते नहीं हैं कि उन्हें क्या खाना चाहिए, क्या नहीं ? उनके बच्चों के लिए सही सात्विक संस्कार वर्धक आहार कौन सा है, कौन सा नहीं ? सही, गलत की पहचान कराते हुए पूज्यवर ने स्थान-स्थान पर लिखा है कि एक क्रांति आहार संबंधी होनी चाहिए । पाककला में परिवर्त्तन कर जीवन्त खाद्यों को निष्प्राण बनाने की प्रक्रिया कैसे उलटी जाय, यह मार्गदर्शन भी इसमें है । राष्ट्र के खाद्यान्न संकट को देखते हुए सही पौष्टिक आहार क्या हो सकता है यह परिजन इसमें पढ़कर घर-घर में ऐसी व्यवस्था बना सकते हैं । अंकुरित मूँग-चना-मूँगफली-हरी सब्जियों के सलाद आदि की व्यवस्था कर सस्ते शाकाहारी भोजन व इनके भी व्यंजन कैसे बनाये जायँ इसका सर्वसुलभ मार्गदर्शन इस खण्ड में है । शाकाहार-मांसाहार संबंधी विवाद को एकपक्षीय बताते हुए शाकाहार के पक्ष में इतनी दलीलें दी गयी हैं कि विज्ञान-शास्त्र सभी की दुहाई देने वाले को भी नतमस्तक हो शाकाहार की शरण लेनी पड़ेगी, ऐसा इसके विवेचन से ज्ञात होता है ।

हमारी जीवन शैली में कुछ कुटेवें ऐसी प्रवेश कर गयी हैं कि वे हमारे 'स्टेटस' का अंग बनकर अब शान का प्रतीक बन गयीं हैं । उनके खिलाफ सरकारी, गैरसरकारी कितने ही स्तर पर प्रयास चले हों, उनके तुरन्त व बाद में संभावित दुष्परिणामों पर कितना ही क्यों न लिखा गया हो, ये समाज का एक अभिशप्त अंग बन गयीं हैं । इनमें हैं तम्बाकू का सेवन, खैनी, पान मसाले या बीड़ी-सिगरेट के रूप में तथा मद्यपान । दोनों ही घातक व्यसन हैं । दोनों ही रोगों को जन्म देते हैं-काया को व घर को जीर्ण-शीर्ण कर बरबादी की कगार पर लाकर छोड़ देते हैं । इनका वर्णन विस्तार से वैज्ञानिक विवेचन के साथ करते हुए पूज्यवर ने इनके खिलाफ जेहाद छेड़ने का का आह्वान किया है ।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इन सबके अतिरिक्त नीरोग जीवन का एक महत्वपूर्ण सूत्र है हमारा रहन-सहन । हम क्या पहनते हैं ? कितना कसा हुआ हमारा परिधान है ? हमारी जीवनचर्या क्या है ? इन्द्रियों पर हमारा कितना नियंत्रण है ? क्या हमारी रहने की जगह में धूप व प्रचुर मात्रा में है या हम सीलन से भरी बंद जगह में रहकर स्वयं को धीरे-धीरे रोगाणुओं की निवास स्थली बना रहे हैं, यह सारा विस्तार इस वाङ्मय के उपसंहार प्रकरण में है । आभूषणों, सौन्दर्य प्रसाधनों का उपयोग, नकली मिलावटी चीजों का शरीर पर व शरीर के अन्दर प्रयोग यह सब हमारे स्वास्थ्य पर घातक प्रभाव डालता है यह बहुसंख्य व्यक्ति नहीं जानते । हमारी जीवन - शैली कैसे समरसता से युक्त, सुसंतुलित एवं तनावयुक्त बने, यह शिक्षण जीवन जीने की कला का सर्वाङ्गपूर्ण शिक्षण है एवं इस विद्या में परमपूज्य गुरुदेव को विशेषज्ञ माना जा सकता है ।

हरीतिमा संवर्धन नरवेल परमार्थ साधता है, स्वार्थ भी जीवन शैली आहार-विहार का क्रम बदल कर हर व्यक्ति नीरोग जीवन जी सकता है, यह इस वाङ्मय की धुरी है । निश्चित ही पाठकगण इसके स्वाध्याय से लाभान्वित हो समर्थ स्वस्थ नागरिक राष्ट्र को दे सकेंगे ।

—ब्रह्मवर्चस्

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुक्रमणिका

१. स्वस्थ रहने के मूलभूत सिद्धान्त १.१

२. क्या खायें ? कैसे खायें ? २.१

आहार की उपयोगिता और उसके मूल तत्व २.१
भोजन के पाँच मुख्य उपादान २.१
भोजन में पंच महाभूत और षटरस का सिद्धान्त २.२
आहार के दो महत्वपूर्ण तत्व विटामिन और क्षार २.३
विटामिन 'ए' २.३
विटामिन 'बी' २.४
विटामिन 'सी' २.४
विटामिन 'डी' २.४
विटामिन 'ई' २.५
लवण या क्षार २.५
भोजन पकाना और रसोईघर की व्यवस्था २.५
भोजन के सार को सुरक्षित रखना आवश्यक है २.६
मन्दी आँच पर पकाने का महत्व २.६
भाप पर भोजन पकाना २.७
गेहूँ और चावल का मोटा अंश फेंकना नहीं चाहिए २.७
रसोई का स्थान व पात्र २.८
भोजन का समय २.८
भोजन के पदार्थ २.९
ऋतु और अवस्था के अनुकूल आहार २.९
आयु की दृष्टि भोजन का परिमाण २.१०
उद्योग-धन्धे की दृष्टि से आहार भेद २.११
हमारा स्वाभाविक आहार २.११
फल मनुष्य का स्वाभाविक आहार है २.११
फलों के भेद २.१२
महँगे और सस्ते फल २.१२
सन्तुलित भोजन २.१३
कार्बोज, प्रोटीन और चिकनाई की आवश्यकता २.१४
क्षार और विटामिन वाले पदार्थों का महत्व २.१४
बेमेल और विपरीत आहार २.१५
विभिन्न पाचक रसों की आवश्यकता २.१५
खटाई को रोटी-दाल के साथ खाने का निषेध २.१६
दुग्धाहार और फलाहार २.१६
जल और आहार का सम्बन्ध २.१८
प्राचीन ग्रन्थों में जल की महिमा २.१८
जलपान में नियम की आवश्यकता २.१८
जल कब न पिया जाय २.१९
भोजन का परिमाण और उपवास २.१९
शरीर के वजन के अनुसार भोजन का परिमाण २.१९
आयुर्वेद के आचार्यों का मत २.२०
हमारे घरों का वर्तमान वातावरण २.२१
उपवास की उपयोगिता २.२१
मानसिक स्थिति का भी ध्यान रखिये २.२१
भोजन पर मन का प्रभाव २.२२
बहमी या शक्की होना भी बुरा है २.२२
भोजन का आध्यात्मिक प्रभाव २.२३
सात्विक, राजसिक और तामसिक भोजन २.२३
भोजन की शुद्धता और पवित्रता २.२४
भगवान के प्रसाद के रूप में भोजन ग्रहण करना २.२४
अधर्म का अन्न खाना पतनकारी होता है २.२४
भोजन सम्बन्धी धार्मिक अन्ध-विश्वास २.२५
माँस भक्षण के दोष २.२५
कृत्रिम और मिलावटी भोजन २.२६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डिब्बों में बन्द भोजन की खराबियाँ २.२६
मिठाइयाँ और पकवान २.२७
खाने-पीने की वस्तुओं में मिलावट २.२७
रंग और सेण्ट आदि का उपयोग २.२८
प्राकृतिक जीवन की दृष्टि से आदर्श भोजन २.२८
प्राकृतिक भोजन के सिद्धान्त २.२६
आहार के दो मुख्य विभाग २.२६
क्षारों के अभाव से होने वाली हानियाँ २.३०
कैल्सियम २.३०
फॉस्फोरस २.३०
लोहा २.३०
ताँबा २.३०
मैग्नीशियम २.३१
क्लोरीन २.३१
आयोडीन २.३१
शाकों के पकाने में सावधानी २.३१
चोकर और अंकुरित अनाज के प्रयोग २.३३
प्राकृतिक सन्तुलित भोजन २.३४
माँसाहार का पूर्ण निषेध २.३६
भोजन को यथा सम्भव कम पकाइये २.३८
हिताहार और मिताहार २.३६
हिताहार का महत्व २.४०
मिताहार भी अति आवश्यक २.४१
कुछ सस्ते और सर्वोपयोगी फल २.४२
नीबू २.४२
टमाटर २.४३
गाजर २.४३
आँवला २.४३
भोजन के सम्बन्ध में २४ उपयोगी सूत्र २.४४

३. अक्षुण्ण स्वास्थ्य प्राप्ति का शाश्वत राजमार्ग ३.१

कुपोषण का मूल कारण नासमझी ३.१
आहार पौष्टिक ही नहीं सर्वसुलभ भी हो ३.४
सात्विकता को भुला न दिया जाय ३.८
नैसर्गिक जीवन क्रम आरोग्य प्रदाता ३.११
विपत्ति की जड़ जिह्वा की ललक-लिप्सा ३.१४
मितभुक्, हितभिक्, ऋतभुक् ३.१८
चिन्तन की स्वच्छता भी उतनी ही अनिवार्य ३.२१
चोकर से लाभ उठाइये ३.२५
पोषण सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तथ्य जानिये ३.२६
कुपोषण और उसकी रोकथाम ३.२८
शारीरिक पोषण-सस्ता भी सम्भव ३.२६
कुपोषण की समस्या-आहार विधि से समाधान ३.३१
अंकुरित आहार लें, ओजस बढ़ायें ३.३४
उपयुक्त आहार-जीवन्त आहार ३.३६
गेहूँ का सदुपयोग-रोग और दुर्बलता विनाशक ३.३८
सर्वसुलभ बेहद सस्ता पौष्टिक भोजन ३.३६
कुपोषणजन्य स्वास्थ्य संकट का निराकरण ३.४२
दूध पियें—सौ से भी अधिक वर्ष जियें ३४३
दूध पीना हो तो केवल गाय का पियें ३.४५
पंचगव्य की तेजवर्द्धिनी जीवनदायिनी शक्ति ३.४६
दही एक अतिगुणकारी खाद्य ३.४८
मठा भी पियें ३.५१
बकरी का मठा ३.५२
दुग्ध-अन्नजन्य, पशुजन्य ३.५३
दूध का स्थानापन्न, अन्न सोयाबीन ३.५३
सोयाबीन की उपयोगिता समझी जाय ३.५६
सोयाबीन का विकल्प मूँगफली ३.५८
वनस्पति घी-चिन्ता का विषय ३.६०
विटामिनों का खजाना है सूरजमुखी ३.६१
शहद : एक जीवनशक्तिवर्धक रसायन ३.६३
मधु-मधुर, पौष्टिक तथा रोगनाशक ३.६४
सुपाच्य-गुणकारी आहार शहद ३.६६
आहार शुद्धि और आध्यात्मिकता ३.६८

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार में सात्विकता की आवश्यकता ३.७१
शाक भाजी खाइये-अपनी उमर बढ़ाइये ३.७३
शाकाहार से सन्तोष करना ही बुद्धिमत्ता है ३.७४
पत्तीदार भाजी-सस्ती भी गुणकारी भी ३.७६
आहार के क्षारीय अंश की पूर्ति फल, सब्जियों से ३.७७
शाक अपने घर उगाएँ ३.७९
सब्जियों को सुखाकर रखने का तरीका ३.८३
स्वास्थ्य के लिये कच्ची सब्जियाँ खाइये ३.८४
फल जो पौष्टिक भी और स्वादिष्ट भी ३.८६
फल खायें रोगों को दूर भगायें ३.८८
गरीबों का सेव-अमरूद ३.८६
एक पुष्टिकारक फल-केला ३.८६
फल पोषक ही नहीं रोगनिवारक भी ३.९१
टॉनिक नहीं टमाटर खाइये ३.९३
गाजर खाने से नेत्र ज्योति बढ़ती है ३.९४
दवाओं का प्रयोग आपत्ति धर्म की तरह ही किया जाय ३.९६
स्वास्थ्य संरक्षण में मनोबल का योगदान ३.९८
आरोग्य मात्र शरीर एवं मन तक ही सीमित नहीं ३.१०१

४. शाकाहारी व्यंजन ४.१

आवश्यकता और उपयोगिता ४.१
शुद्धता और सात्विकता ४.१
स्वास्थ्य और दीर्घजीवन ४.१
कम लागत-पूर्ण भोजन ४.१
दावत और प्रीतिभोज ४.२
रुचि और स्वाद ४.२
शाकाहारी व्यंजन बनाना ४.२
आलू के गुलाब जामुन ४.२
आलू के दही-बड़े ४.३
आलू की रस पूरी ४.३
मक्खन पाक आलू ४.३
आलू और टोकरी ४.३
आलू और प्याज ४.३
आलू के पराठे ४.४
आलू की बरफी ४.४
आलू का रायता ४.४
आलू की टिकिया और पकौड़ी ४.४
आलू के खुरमे ४.४
गाजर का हलुआ ४.४
गाजर की खीर ४.५
गाजर के समौसे ४.५
गाजर की काँजी ४.५
गाजर का मुरब्बा ४.५
लौकी की खीर ४.५
गुलाब के लच्छे ४.५
लौकी का कोफ्ता ४.६
लौकी का छिलका ४.६
लौकी का रायता ४.६
बथुए की कढ़ी ४.६
बथुए की कचौड़ी ४.७
बथुए की भूजी ४.७
मैंथी की भुजिया ४.७
मैंथी की कढ़ी ४.७
मैंथी के चीले और कचौड़ी ४.७
मटर का हलुआ ४.८
मटर की टिकिया ४.८
मटर-चूड़ा ४.८
मटर की सिमौरी ४.८
मटर का अचार ४.८
कटलेट ४.९
भरवाँ मूली ४.९
सीताफल या काशीफल का पाग ४.९
शलजम का कटोरा ४.९
मूली की कचौड़ी ४.९
मूली का मुरब्बा ४.१०
पेठा ४.१०
टमाटर का मधुरस ४.१०
फूलगोभी ४.१०
बन्दगोभी और सेव पाग ४.१०
बैंगन का अचार ४.१०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिंघाड़े के लड्डू ४.११
केले की खीर ४.११
केले की पकौड़ी ४.११
कच्चे केले के दही-बड़े ४.११
आम की बरफी ४.११
आम की पकौड़ी ४.११
पके आम की कुल्फी ४.१२
आम का मुरब्बा ४.१२
कच्चे आम का अचार ४.१२
नीबू का मीठा अचार ४.१२
मिश्रित अचार ४.१२
सलाद ४.१३
शलजम का अचार ४.१३

५. तन मन स्वस्थ रहे, ऐसा आहार करें ५.१

जीवन विकास के लिए उपयुक्त आहार आवश्यक ५.१
आहार-चिकित्सा से कायाकल्प ५.२
भोजन तो ठीक प्रकार से करें ५.४
आधुनिक सभ्यता का अभिशाप ५.६
नमक न उपयोगी है न आवश्यक ही ५.७
बिना नमक आसानी से रहा जा सकता है ५.१०
चीनी का प्रयोग भी सावधानी-पूर्वक करें ५.१२
चीनी और चिकनाई की भरमार नितान्त अहितकर ५.१५
कहीं आप खाद्य पदार्थों के साथ जहर तो नहीं खा रहे ५.१८
खाया कैसे जाय ५.२०
खाद्य पदार्थों की बर्बादी ५.२१
अति भोजन की हानिकारक प्रवृत्ति ५.२२
हमारा स्वाभाविक भोजन ५.२३
भोजन का उचित परिमाण ५.२४
शक्ति और पौष्टिकता का झूठा भ्रम ५.२५
भोजन के सत्व को सुरक्षित रखा जाये ५.२६
भोजन के सम्बन्ध में १४ उपयोगी सूत्र ५.२८
भोजन में आध्यात्मिक भावना ५.२९

६. खाते समय इन बातों का ध्यान रखें ६.१

जैसा अन्न वैसा मन ६.१
इस गन्दगी से बचें तो अच्छा ६.३
आहार करने से पूर्व यह ध्यान रखें ६.५
पेट खराब करने वाली बुरी आदतें ६.७
भूख न लगने की शिकायत ६.९
आइये, विचार करें आपको भूख न लगने की शिकायत कैसे पैदा हुई ६.१०
भोजन भगवान को समर्पित कर लिया करें ६.११
अन्न को औषधि मानकर सेवन करें ६.१३
उपेक्षा इनकी भी न करें ६.१४

७. खाद्यान्न संकट और उसका हल ७.१

आयात का आर्थिक दुष्फल ७.१
खाद्य मोर्चा, युद्ध मोर्चा से बड़ा ७.१
भूख मुक्ति आन्दोलन और किसान ७.१
नहिं सम्भव भूखे भजन ७.२
किसान जिन्हें समझना और करना है ७.२
अन्न मोर्चा किसान सँभालें ७.२
सिंचाई के साधन विकसित हों ७.२
फसल की सुरक्षा ७.३
बन्जर जमीन का उपयोग ७.३
सामूहिक कृषि ७.३
अनाज कब, कितना और कैसे बोया जाय ? ७.४
पशु सम्पत्ति की रक्षा ७.४
गल्ले की रक्षा और विक्रय ७.४
सर्व साधारण का परम् कर्त्तव्य ७.४
शाक सब्जी का उत्पादन ७.५
एक आदमी बनाम ६ चूहे ७.५
कणाद वृत्ति ७.५
व्रत या विजय व्रत ७.५
भाप कुकर और पौष्टिक भोजन ७.५
गृहिणियों के कर्त्तव्य ७.६
त्यौहारों पर सादगी ७.६
न्यौते, दावतें बन्द हों ७.६

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्न देवता का अपमान न हो ७.६
भोजन को भगवान का प्रसाद मानें ७.७
जूठन छोड़ना सभ्यता नहीं, असभ्यता ७.८
भिक्षावृत्ति का तिरस्कार किया जाय ७.१०
शाक अन्न का पूरक ७.११
सर्वसुलभ हल–साग भाजी आन्दोलन ७.११
अन्न की कमी साग पूरा करें ७.११
आन्दोलन का मुख्य स्वरूप ७.१२
साग-भाजी के लाभ ७.१२
आर्थिक स्थिति पर प्रभाव ७.१२
कम साधन आमदनी अधिक ७.१२
स्वास्थ्यवर्धक गुण ७.१३
रोग निरोधक तत्व ७.१३
सस्ता और पौष्टिक आहार ७.१३
पत्तेदार सब्जियाँ और जीवन तत्व ७.१३
धार्मिक महत्व ७.१४
रुचिकर वातावरण और वायु शुद्धि ७.१४
रुचिकर व्यायाम समय का सदुपयोग ७.१४
साग-भाजी का उत्पादन ७.१४
क्यारियाँ बनाना ७.१४
बड़े किसान और सिंचाई ७.१५
बरसात में सब्जी का उत्पादन ७.१५
पेड़ों और मिटौरों में ७.१५
बाड़े बनाकर ७.१६
कुओं के आस-पास ७.१६
लकड़ी के डिब्बे और गमले ७.१६
बीज और पौधे रोपना ७.१६
साग भाजी उत्पादन ७.१७
संगठन बनाये जायें ७.१७
लेख, ट्रेक्ट, समाचार ७.१७
बीजों का वितरण ७.१८
पौध वितरण, पौध भण्डार ७.१८
बड़े किसान और माली ७.१८
कुछ उदाहरण देखिये ७.१८
शिविरों का आयोजन ७.१८
कृषि अधिकारियों का सहयोग ७.१९
प्रतियोगिता और प्रदर्शनियाँ ७.१९
उत्पादकों को सहयोग ७.१९
उत्पादन ही नहीं उपयोग भी ७.१९
शाक-सब्जियों के पकवान मिष्ठान्न ७.२०
सब्जियाँ नाश्ते में ७.२०
पौष्टिक गुण नष्ट न हों ७.२०
पकायें नहीं उबालें ७.२०
आन्दोलन का रूप दिया जाय ७.२१
घरेलू शाक-वाटिका, शोभा, स्वास्थ्य सृजन एवं बचत ७.२१
खाद्य संकट का समाधान कुकुरमुत्तों से भी ७.२४
मनुष्य की खुराक घास भी हो सकती है ७.२६

८. माँसाहार : कितना अनुचित कितना उचित ८.१
जैसा अन्न वैसा मन ८.१
मानवीय विशेषता का परित्याग न किया जाय ८.२
हम निर्दयी न बनें ८.३
निरीह प्राणियों पर अत्याचार ८.३
बहाने न ढूँढ़े ८.४
असुरता का पथ न अपनावें ८.५
स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव ८.७
आन्तरिक निर्बलता सुनिश्चित ८.८
ऐसा स्वास्थ्य भी किस काम का ८.९
अण्डे भी त्याज्य एवं हेय ८.११
माँसाहार के समर्थन में भ्रान्त प्रतिपादन ८.१२
हम माँसाहार की हानियाँ समझें ८.१४
माँसाहार से बलवर्धन की मान्यता सर्वथा भ्रमपूर्ण ८.१६
माँसाहार हर दृष्टि से अहितकर ८.१६
आखिर क्यों खाते हैं–आप माँस ८.२१
माँसाहार का परित्याग ही उचित है ८.२१
माँसाहार के अनुकूल मानव प्रकृति नहीं ८.२४
माँसाहार : गुनाह बेलज्जत ८.२७
हड्डियाँ कमजोर करनी हों तो माँस खायें ८.२९
माँसाहारी अल्पजीवी होते हैं ८.२९
इस बर्बादी के बिना भी काम चल सकता है ८.३३
यदि विष ही खाना है तो अण्डे खायें ८.३७

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मौत बुलानी हो तो रोज अण्डा खायें ८.३८
माँसाहारी और शाकाहारियों के मध्य का अन्तर समझा जाये ८.३९

६. तम्बाकू—एक भयानक दुर्व्यसन ६.१

नशा करने की दूषित प्रवृत्ति ६.१
मादक द्रव्यों में पाया जाने वाला विषाक्त तत्व ६.१
मादक द्रव्यों द्वारा स्फूर्ति बढ़ने का भ्रम ६.२
मादक द्रव्य द्वारा बुद्धि नाश ६.२
तम्बाकू सेवन से भयंकर परिणाम ६.३
तम्बाकू का दुर्व्यसन और भारत ६.४
विदेशियों की शासन की कुप्रवृत्ति ६.४
तम्बाकू की खोज ६.५
भारत में तम्बाकू का आगमन कैसे हुआ ६.५
धूम्रपान से होने वाली हानियाँ ६.५
तम्बाकू का विष निकोटीन ६.६
निकोटीन का घातक प्रभाव ६.६
तम्बाकू का वैज्ञानिक विश्लेषण ६.७
तम्बाकू से भीतरी अंगों में खराबी ६.८
तम्बाकू से होने वाली लाखों मौतें ६.८
धूम्रपान के अन्य कुपरिणाम ६.९
धूम्रपान की निरर्थकता ६.९
धूम्रपान से वायु में खराबी ६.९
तम्बाकू का शौक लगने वाले ६.१०
तम्बाकू से स्वास्थ्य की खराबी ६.११
भयंकर अग्नि-काण्डों का जनक धूम्रपान ६.११
धूम्रपान का प्रचार ६.१२
धूम्रपान से आर्थिक संकट ६.१२
स्त्रियाँ और धूमपान ६.१३
धूम्रपान के व्यसन का भावी पीढ़ी पर कुप्रभाव ६.१३
धूम्रपान के लाभों का झूँठा भ्रम ६.१४
धूम्रपान पर सरकारी रोक ६.१५
तम्बाकू के भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक दृष्टि ६.१५
विश्व में तम्बाकू विरोधी अभियान ६.१६
तम्बाकू से कैंसर रोग की वृद्धि ६.१६
इंग्लैण्ड में तम्बाकू विरोधी अभियान ६.१६
प्रसिद्ध वैज्ञानिकों और चिकित्सकों की सम्मतियाँ ६.२०
तम्बाकू से उत्पन्न होने वाले पच्चीसों रोग ६.२०
अमरीका के आदिवासी भी सजग हो गये ६.२१
तम्बाकू की मानव अंगों पर प्रतिक्रिया ६.२१
रूस के टालस्टाय के विचार ६.२२
धूम्रपान छोड़ने का परीक्षण ६.२३
रूस में धूम्रपान के विरूद्ध आन्दोलन ६.२४
भारतीय विचारकों का तम्बाकू निषेध ६.२४
तम्बाकू खाने से कैंसर ६.२४
एक प्रसंग ६.२४
धूम्रपान के विरोध में विद्वानों की सम्मतियाँ ६.२५
धूम्रपान पर भारी व्यय ६.२७
धूम्रपान का व्यसन और सदाचार तथा नैतिकता ६.२७
धूम्रपान से विवेक हानि ६.२८
चरित्रहीनता की वृद्धि ६.२८
मनोबल का नाशकर्त्ता ६.२९
तम्बाकू से तमोगुण की उत्पत्ति ६.३०
संयम का अभाव ६.३०
परलोक भी नष्ट होता है ६.३१
अन्य दुर्व्यसनों की उत्पत्ति ६.३२
धूम्रपान एक दूषित मनोवृत्ति ६.३२
सामाजिक और राष्ट्रीय क्षति ६.३३
नैतिकता का पतन ६.३३
बौद्ध युग में नशा का उन्मूलन ६.३४
मानसिक शक्तियों का ह्रास ६.३६
धूम्रपान और आध्यात्मिकता ६.३६
धूम्रपान कैसे त्यागा जाय ६.३८
सिगरेट पीना छोड़ना ६.३८
सिगरेट से उत्पन्न होने वाले कुछ दोष ६.३९
सिगरेट त्यागने का उदाहरण ६.४०
संकल्प बल के अभाव में कठिनाई होती है ६.४१

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धूम्रपान त्यागने का अन्य उपाय ६.४२
धार्मिक और सामाजिक दृष्टि में धर्मशास्त्रों में निषेध ६.४३
धार्मिक दृष्टिकोण से भी तम्बाकू त्याज्य है ६.४५
पद्म पुराण का उपाख्यान ६.४५
तम्बाकू और भूमि की बर्बादी ६.४६
मर्यादा और शिष्टाचार का पतन ६.४७
धूम्रपान के अन्य दूषित तरीके ६.४८
धूम्रपान सम्बन्धी कुछ ज्ञातव्य बातें ६.४६

१०. समाज में उगे कैंसर के फोड़े १०.१

नशेबाजी का आत्मघाती शिकंजा १०.३
धीमी आत्महत्या नशेबाजी १०.५
नशेबाजी जैसे दुर्व्यसन कड़ाई से रोकें १०.६
प्रत्यक्ष पिशाचिनी-नशेबाजी १०.८
नशेबाजी सबके लिए सब प्रकार अहितकर १०.१०
छात्र वर्ग में पनपती नशेबाजी की कुटेब १०.१२
नशेबाजी की मूर्खता अत्यधिक विनाशकारी १०.१२
नशेबाजी का घातक दौर १०.१४
घातक नशेबाजी से सावधान १०.१६
थकान, नशे से कैसे दूर हो १०.१८
नशीली दवाओं का बढ़ता प्रयोग १०.१६
स्वयं अपनाया गया पागलपन १०.२१
जान-बूझकर क्यों पीता है आदमी जहर १०.२२
बढ़ती नशेबाजी के दुष्परिणाम १०.२४
नशेबाजी में हानि ही हानि है १०.२६
नशेबाजी की आत्मघाती लत १०.२८
नशेबाजी-भौंड़ी आत्महत्या १०.३०
पान से हानियाँ १०.३२
पान वासना प्रदीप्त करता है १०.३२
पान का रासायनिक विश्लेषण १०.३२
पान का दाँतों पर विषैला प्रभाव १०.३३
पान खाना, ओछेपन का प्रतीक १०.३३
हत्यारी अफीम १०.३३
घातक कोकेन १०.३४
कोकोन की हानियाँ १०.३४
नशेबाजी के दुष्परिणाम समझें और समझावें १०.३५

११. मद्यपान–एक घातक कुटेब ११.१

समाज का पतन करने वाली शराबखोरी की दुष्प्रवृत्ति ११.१
मद्यपान और शास्त्रीय दृष्टिकोण ११.३
शैतान की लकड़ी जो समझदारों को भी मूर्ख बनाती है ११.५
दयनीय दुर्दशा की जननी शराब ११.६
मनुष्यता की शत्रु है–शराब ११.१३
ऐसा मद भूल न पीबई जो बहुरि पछिताय ११.१८
विदेशों में मद्यनिषेद्य के प्रयास ११.२२
सत्यानाशी शराब से आत्म रक्षा करें ११.२५

१२. परिधान सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप हो १२.१

योरोप का नग्न सम्प्रदाय १२.१
प्राकृतिक चिकित्सा के अनुयायियों की सम्मति १२.२
कृत्रिम वस्त्रों के दोष १२.३
पश्चिमी फैशन की नकल १२.३
भारतीय परिधान की महत्ता १२.६
आधुनिक कपड़े एक भार की तरह हैं १२.६
गहने पहनने की जंगली रिवाज १२.७
जूतों और मोजों की अधिकता १२.८
छोटे बच्चों के वस्त्र १२.६
कृत्रिम जीवन को त्याग दीजिये १२.११
कपड़े पहनने का सऊर-सलीका १२.१२
वेशभूषा का आधार देशीय सभ्यता संस्कृति रहे १२.१६
केश-वस्त्र और वेश सभ्यों जैसे रखिये १२.१८
यौन-उन्माद भड़कार्ये, ऐसे लिबास न पहनें १२.२०
आखिर आप भड़कीले कपड़े क्यों पहनते हैं १२.२३
फैशन का उन्माद यूनीसैक्स फैशन १२.२२

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिक कसौटी पर फेल-आधुनिक फैशन १२.२६
फैशन का वर्तमान उथली प्रचलन अब बन्द हो १२.२७
स्वास्थ्य पर कपड़ों का दुष्प्रभाव १२.२९
वस्त्रों की स्वच्छता व रख-रखाव १२.३०
वस्त्रों की धुलाई क्यों, किससे और कैसे १२.३४
सूती कपड़ों की धुलाई १२.३४
भट्टी तैयार करना १२.३४
नील लगाना १२.३४
कलफ लगाना--चावलों द्वारा १२.३४
रंगीन वस्त्रों को धोने की विधि १२.३४
छींट के कपड़ों को चोकर से धोने की विधि १२.३५
रेशमी कपड़ों को धोने की विधि १२.३५
ऊनी कपड़ों को धोना १२.३५
प्रेस करना १२.३६
कपड़े रंगने हों तो इस तरह रंगें १२.३६
१. पीला बसन्ती २. हरा रंग ३. बैंगनी रंग पक्का ४. बादामी पक्का ५. सुआपंखी ६. कासनी ७. नारंगी १२.३५
८. कत्थई रंग पक्का ९. खामी रंग पक्का १०. गेरुआ रंग पक्का १२.३६

१३. रहन-सहन में दूरदर्शी विवेकशीलता का समावेश आवश्यक है १३.१

स्वास्थ्य गँवा बैठने में कोई समझदारी नहीं १३.१
शाकाहार और निद्रा का पारस्परिक सम्बन्ध १३.४
भोजन रेशेदार होना चाहिए १३.५
फलाहार तथा शाकाहार १३.६
कुछ फुटकर बातें १३.७
शाकाहार १३.८
जितना कम पके-उतना अच्छा १३.९
पकाने का ढंग भी बदलें १३.९
आहार पद्धति में भारी परिवर्तन की आवश्यकता १३.१२
खाद्य को अखाद्य बनाकर न खायें १३.१६
स्वस्थ रहना हो तो खाने-पकाने के ढर्रे को बदलें १३.१९
खाने की आदतें एवं विधियाँ बदली जायँ १३.२१
क्या खायें ? कैसे खायें ? १३.२५
पाचन-प्रणाली का असाधारण महत्व १३.२९
डबल रोटी--डबल रोटी १३.३२
तुरन्त मरने के लिए जन्मने वाले बच्चे १३.३४
उपवास शरीर-शोधन की महत्वपूर्ण प्रक्रिया १३.३६
उपवास कब और कैसे ? १३.३८
रस में विष मिलाने का कुटिल प्रचलन १३.४०
विषाक्तता के दलदल से आत्मरक्षा की बात सोचें १३.४३
जल का महत्व भी समझें १३.४५
पानीयं प्राणियां प्राणाः १३.४७
जल के उपयोग में कंजूसी न करें १३.४७
पानी कब पीना चाहिए ? १३.४९
पेय जल की पूर्ति एक अनिवार्य आवश्यकता १३.५१
चाय एक हानिकारक व्यसन है १३.५३
स्वास्थ्य का एक शत्रु-चाय १३.५६
चाय के अन्य विकल्प १३.५७
नावणी (नागली) १३.५७
चणक रस १३.५७
यव रस १३.५७
छाछ या मट्ठा १३.५८
गन्ने का रस १३.५८
धान की खीलें १३.५८
ठण्डाई १३.५८
बड़ी सौंफ का पेय १३.५८
स्वादिष्ट पेय १३.५८
हम स्वच्छता की प्रवृत्ति पनपायें १३.५९
गन्दगी की आदत छूटे तो कृमि कीटकों से जान बचे १३.६१
स्वच्छ जलवायु के बिना स्वास्थ्य रक्षा सम्भव नहीं १३.६२
घर बनाते समय यह भी ध्यान रखें १३.६३

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मकान सीलन सड़न वाले न हों १३.६५
हमें धूप और हवा भी चाहिये १३.६७
घरेलू प्रदूषण से उबरना अधिक जरूरी १३.६८
घर की स्वच्छता और सजावट १३.७०
घर पर ही कलई चढ़ाइये १३.७२
आवश्यक उपकरण १३.७३
सावधानियाँ १३.७३
पुराने को नया रूप दें १३.७३
ढीले हुए फर्नीचरों की मरम्मत १३.७४
फर्नीचर पर पालिश १३.७४
पुराने फर्नीचर का नया रूप १३.७४
आराम कुर्सी के कैनवैस को बदलना १३.७५
आवश्यक सामग्री १३.७५
प्लास्टिक के तारों से बुनी कुर्सी की मरम्मत १३.७५
गहरी साँसें लें ताकि मन विकसित हो १३.७५
सिद्धे बिन्दुमहायत्ने किं न सिद्धयति भूत ले १३.७८
उपयोग बनाम उपभोग १३.८१
एण्टीबायोटिक्स का अन्धाधुन्ध प्रयोग बन्द हो १३.८३
औषधि चमत्कारों का घातक अन्ध विश्वास १३.८५
कठिन रोगों का सरल उपचार १३.८७
शीघ्र स्वस्थ होने की रीति-नीति १३.८८
बीमारियों को हम निमंत्रण देकर बुलाते हैं १३.८६
जड़ी-बूटी विज्ञान का नये सिरे से अनुसन्धान १३.६३
आयुर्वेद का पुनर्जीवन हो रहा है १३.६५
शरीर रोग १३.६७
मानसिक रोग १३.६७
चमड़े के उपयोग से परहेज करें १३.६८
मनोरंजन की आवश्यकता और स्तर १३.६६
शृंगार प्रसाधनों की अनुपयुक्तता १३.१०१
सोने-चाँदी के जेवरों से मोह क्यों ? १३.१०२
माथे में सिन्दूर भरना हानिकारक १३.१०४
मानव अंगों का घृणित व्यापार बन्द हो १३.१०५
उपयोगी और अनुपयोगी का अन्तर समझा जाय १३.१०७
सुगन्धित तेल घर में ही बनायें १३.११०

१४. हरीतिमा की वृद्धि से स्वार्थ परमार्थ का समन्वय १४.१

वृक्ष हमारे जीवन प्राण १४.६
वृक्षारोपण का पुण्यफल १४.१०
वृक्ष वनस्पति के प्रति श्रद्धा अक्षुण्ण रहें १४.११
वृक्ष सम्पदा को घटने न दें १४.१३
हरीतिमा से स्नेह बढ़ायें फूल उगायें १४.१६
वनौषधियों से हरीतिमा अभिवर्धन और स्वास्थ्य सम्वर्धन का दोहरा लाभ १४.२०

१५. हमारा स्वास्थ्य संकट और उसका समाधान १५.१

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

स्वस्थ रहने के कुछ मूलभूत सिद्धान्त

हमारा सदा सहायक-सेवक शरीर है। वह चौबीसों घण्टे सोते-जागते हमारे लिये काम करता रहता है। वह जिस भी स्थिति में हो, अपनी सामर्थ्य भर आज्ञा पालन के लिये तत्पर रहता है। सुविधा साधनों के उपार्जन में उसी का पुरुषार्थ काम देता है। इतना ही नहीं, उसकी पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ न केवल ज्ञानवृद्धि का दायित्व उठाती हैं, वरन् समय-समय पर अपने-अपने ढंग से अनेक प्रकार के रसास्वादन भी कराती रहती हैं। नेत्र, कान, नाक, जिव्हा, जननेन्द्रियों द्वारा ज्ञानतन्तु अपने-अपने ढंग के रसास्वादन कराते रहते हैं। इन विशेषताओं के कारण ही आत्मा उसकी सेवा-साधना पर मुग्ध हो जाती है और अपने सुख ही नहीं, अस्तित्व तक को भूलकर उसी में पूरी तरह रम जाती है। उसका सुख-दुःख मानापमान आदि अपनी निज की भाव-संवेदना में सम्मिलित कर लेती है। यह घनिष्टता इतनी अधिक सघन हो जाती है कि व्यक्ति आत्मा की सत्ता आवश्यकता तक को भूल जाता है और शरीर को अपना ही आपा मानने लगता है। उसका अन्त हो जाने पर तो जीवन की इतिश्री ही मान ली जाती है।

ऐसे वफादार सेवक को समर्थ, नीरोग एवं दीर्घजीवी बनाये रखना प्रत्येक विचारशील का कर्त्तव्य है। चाहते तो सभी ऐसा ही हैं, पर जो रहन-सहन, आहार-विहार अपनाते हैं, वह विधा ऐसी उल्टी पड़ जाती है कि उसके कारण अपने प्रिय पात्र को ही अपार हानि उठानी पड़ती है, इतना अत्याचार सहना पड़ता है कि उसका कचूमर तक निकल जाता है और रोता-कलपता, दुर्बलता और रुग्णता से ग्रसित होकर व्यक्ति असमय में ही दम तोड़ देता है।

यह सब उस अज्ञान के कारण होता है, जो होश संभालने से पूर्व ही अभिभावकों के अनाड़ीपन के कारण वह अपने ऊपर लाद लेता है। स्वस्थ-समर्थ रहना कुछ भी कठिन नहीं है। प्रकृति के संकेतों का अनुसरण करने भर से यह प्रयोजन सिद्ध हो सकता है। प्रकृति के सभी जीवधारी यही करते और दुर्घटना जैसी आकस्मिक परिस्थितियों को छोड़कर साधारणतया नीरोग रहते और समयानुसार अपनी मौत मरते हैं। प्रकृति के संदेश-संकेतों को जब सृष्टि के सभी जीवधारी मोटी बुद्धि होने पर भी समझ लेते हैं, तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य जैसा बुद्धिजीवी उन्हें न अपना सके। प्रकृति के स्वास्थ्य रक्षा के नियम व्यवहार में अति सरल हैं, उनके लिये गुरु गम्य ज्ञान प्राप्त करने की अतिरिक्त आवश्यकता नहीं। वे सहज ही समझे और निबाहे जा सकते हैं। उचित और अनुचित का निर्णय करने वाले यन्त्र इसी शरीर में लगे हैं, जो तत्काल यह बता देते हैं कि क्या करना चाहिये, क्या नहीं ? मर्यादाओं का पालन और वर्जनाओं का अनुशासन मानने भर से उद्देश्य की पूर्ति हो जाती है।

आहार-विहार का ध्यान रखने से स्वास्थ्य-रक्षा की समस्या हल हो जाती है। आहार प्रमुख पक्ष है, जिसे स्वास्थ्य अनुशासन का पूर्वार्ध कहा जा सकता है। उत्तरार्ध में विहार आता है, जिसका तात्पर्य होता है नित्य कर्म, शौच, स्नान, शयन, परिश्रम, संतोष आदि। इन्हीं के सम्बन्ध में समुचित जानकारी प्राप्त कर लेने और उनका परिपालन करते रहने से एक प्रकार का आरोग्य का बीमा जैसा हो जाता है।

भोजन के साथ कुछ प्रश्न जुड़ते हैं—क्या खायें ? कब खायें ? कितना खायें ? कैसे खायें ? आदि। इनका समाधान किसी से पूछना नहीं पड़ता, अन्तःचेतना इन्हें स्वयं ही बताती रहती है। स्मरण रहे, मनुष्य की संरचना बन्दर जाति से मिलती-जुलती है। विकासवादी तो यहाँ तक कहते हैं कि बन्दर ही विकसित होते-होते मनुष्य स्तर तक पहुँचा है। जो भी हो, मनुष्य का पेट और पाचन रसायन बन्दर से मिलते-जुलते हैं। बन्दर पूर्णतया शाकाहारी है। माँस वह पचा नहीं सकता। मनुष्य की आँतों की लम्बाई,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

दाँत और नाखूनों की संरचना, पाचक स्राव सभी ऐसे हैं, जो शाकाहार पर निर्भर रहने की बात ही सुझाते हैं। माँसाहार दुष्पाच्य होता है। जिन पशु-पक्षियों का माँस लिया जाता है, उनके शरीर में पाये जाने वाले विषाणु आसानी से खाने वाले के शरीर पर अधिकार जमा लेते हैं। फिर प्राणी वध में जो निर्दयता बरतनी पड़ती है, वह खाने वाले के स्वभाव में सम्मिलित हो जाती है और वह मनुष्यों के प्रति, स्वजन-सम्बन्धियों के प्रति भी वैसा ही क्रूर व्यवहार करने से नहीं चूकता। माँस महँगा तो है ही, उसका स्वाद भी ऐसा नहीं है कि उसे प्राकृतिक रूप में सिंह आदि की तरह खाया जा सके। उसे पकाने में विशेष विधि अपनानी और विशेष मसालों का समावेश करना पड़ता है। खाने वाले की बुद्धि भी वैसी ठस्स तथा स्वभाव क्रूर होने लगता है।

मनुष्य का स्वाभाविक आहार शाक फल है। इन्हें पूरी मात्रा में न पाया जा सके, न खाया जा सके, तो ऐसी व्यवस्था करनी चाहिये कि आहार का आधा भाग सजीव शाक और फल रहे और आधे से अधिक भाग अन्न का रहे। कीमती फल खरीदना गरीब वर्ग के लिये कठिन पड़ता है। आम, बेर, अमरूद, जामुन, शहतूत, पपीता, केला जैसे सस्ते ऋतु फल काम में लाये जा सकते हैं। शाकों में कितने ही ऐसे हैं, जिन्हें कच्ची स्थिति में ही सलाद की तरह खाया जा सकता है। ककड़ी, खीरा, टमाटर, भिण्डी, बैंगन, गाजर, मूली, चुकन्दर जैसी भाजियाँ कच्ची खायी जा सकती हैं। जिनको उबालना आवश्यक है, उन्हें उबाला भी जा सकता है। तोरई, लौकी, कद्दू, आलू, गोभी, सेम आदि को स्वादिष्ट व सुपाच्य बनाने के लिये उबालने की आवश्यकता होती है, पर इन्हें भी चिकनाई में तलना-भूनना नहीं चाहिये। उससे उनके प्राकृतिक जीवन तत्व नष्ट हो जाते हैं। अन्नों को यदि कच्ची स्थिति में खाया जा सके तो सर्वोत्तम, अन्यथा उन्हें बारीक पीसने की अपेक्षा दलिया स्तर का बना लेना चाहिये, ताकि उनके ऊपर रहने वाला पोषण युक्त छिलका नष्ट न होने पाये। चना, मटर, बाजरा, ज्वार, मक्का, जैसे अन्न कच्चे या भूनकर खाये जा सकते हैं। गेहूँ, जौ, दालें, तिलहन ही ऐसे हैं, जिन्हें पीसने-कूटने की आवश्यकता पड़ती है, पर ध्यान रखने योग्य तथ्य यह है कि इन सभी के छिलकों में उनका पोषक अंश अधिक होता है, इसलिये नारियल, कटहल, मूँगफली जैसों के अधिक कठोर छिलके ही हटाने चाहिये। दालों के सम्बन्ध में तो यह बात विशेष ध्यान रखने योग्य है कि उन्हें उसी साबुत स्थिति में ही पकाया जाये। उनका छिलका तथा दो दालों के जोड़ वाला भाग नष्ट न होने दिया जाये। अन्नों को अंकुरित करने की विधि सरल है। दो रात भीगे कपड़े में हवा में लटकते रहने दिया जाये, तो वे अंकुर दे जाते हैं और ऐसी स्थिति में उनका गुण अनेक गुना अधिक बढ़ जाता है। कहते हैं कि अंकुरित गेहूँ, चने, मूँग आदि में बादाम जितनी पुष्टाई होती है।

खुले बर्तन में उबालने से भाप के साथ पदार्थों के पोषक तत्व अधिकांश मात्रा में उड़ जाते हैं, इसलिये जो भी पकाना हो उसे ढक कर पकाना चाहिये। इस दृष्टि से प्रेशर कुकर का इस्तेमाल बहुत सुरक्षित है। उसमें पकाने पर पोषक तत्व उड़ने नहीं पाते। दूध, दही शुद्ध स्थिति में मिल सके तो ठीक, अन्यथा चिकनाई की आवश्यकता पूरी करने हेतु तिल, मूँगफली, सोयाबीन, नारियल आदि को पीसकर प्रयोग में लाया जा सकता है। यदि उन्हें मुँह में ही चबाकर बारीक बनाया जा सके तो और भी अच्छा। पत्तीदार शाक, पालक, मेथी, बथुआ, चौलाई आदि भी कम उपयोगी नहीं होते।

इन दिनों रासायनिक खादों और कीट-नाशक दवाओं की भरमार चलती है। अच्छा हो, अपना निजी छोटा-सा खेत मिल जाये और उसमें खाद्य उत्पादन चलता रहे। घरेलू शाक-वाटिका, आँगनबाड़ी, छत बाड़ी, छप्पर बाड़ी के रूप में इस प्रकार लगाई जा सकती है कि उससे पैसा भी बचे, शुद्ध और ताजी वस्तुयें भी मिलें और उत्पादन पोषण भी तथा रचनात्मक कला-कौशल भी सीखने को मिलता रहे। श्रम से व्यायाम की आवश्यकता पूरी होती रहे।

मसालों का प्रयोग कम से कम करना चाहिये। वे सभी पेट में जलन उत्पन्न करते हैं और स्वादेन्द्रिय का स्वभाव बिगाड़ते हैं, जिनके कारण अनायास ही आवश्यकता से अधिक भोजन करने की आदत बन जाती है। यदि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वाद के बिना रहा न जाय तो नमक, जीरा, धनिया, पुदीना, नीबू, अदरक, आँवला आदि का उपयोग सीमित मात्रा में चटनी के रूप में किया जा सकता है। लाल मिर्चों, हींग, लोंग जैसी तीक्ष्ण वस्तुओं से तो परहेज करना ही चाहिये। सफेद चीनी की अपेक्षा गुड़, शहद, खजूर, मुनक्का आदि से काम चलाना चाहिये। सफेद चीनी तो जहर की तरह हानि ही करती है। मोटे रूप में भोजन के चुनाव में उपरोक्त बातों को ध्यान में रखने से काम चल जाता है।

अब देखना यह है कि कितना खाया जाय और कैसे खाया जाय ? पुरानी कहावत है कि "अन्न को पीना चाहिये और पानी को खाना चाहिये।" बात अटपटी-सी लगती है, पर है सोलहों आने सच। ग्रास को बत्तीस बार चबाने का नियम है, जिसका प्रयोजन यह है कि उसे उतना अधिक मुँह में पीसा जाय कि गले से नीचे उतरने में कठिनाई न पड़े। आमाशय की तरह मुँह में भी पाचक रस होते हैं। वे अगर ठीक तरह पूरी मात्रा में मिलें तो पाचन सरल होगा अन्यथा मुँह का काम भी पेट को करना पड़ेगा। जल्दी-जल्दी ग्रास निगलकर खाने का समय बचा लेने की आदत बुरी है, इससे स्वास्थ्य पर सीधा दबाव पड़ता है। पानी को खाने की बात इसलिये कही गयी है उसे घूंट-घूंट कर चम्मच से इस प्रकार पीया जाना चाहिये कि उसमें भी मुँह की लार का समुचित सम्मिश्रण होता रहे। भोजन के साथ उतना ही पानी पीना चाहिये, जितना कि आहार का सूखापन मिटाने के लिये नितान्त आवश्यक हो। अधिक पानी पीने का क्रम तो भोजन के एक घंटे बाद चलाना चाहिये। यों पानी एक आहार है। उसमें पोषण तो होता ही है भीतर की सफाई करने में भी सहायता मिलती है। दिन-रात में जाड़े के दिनों में आठ गिलास और गर्मी के दिनों दस-बारह गिलास पानी पिया जा सके तो ठीक है। पानी शुद्ध और छना होना चाहिये। जहाँ पानी में अशुद्धता की आशंका हो वहाँ उसे उबालकर ठंडा करके पीना चाहिये। पानी के बर्तन भी उतने ही शुद्ध और स्वच्छ रखने चाहिये जितने कि भोजन के।

कितना खाया जाय ? इसका उत्तर है भूख से कम। आधा पेट आहार से भरना चाहिये। चौथाई पानी के लिये और चौथाई हवा के लिये खाली रखना चाहिये। इतना नहीं खाना चाहिये कि पेट तन जाय और आलस्य आने लगे-सोने का जी करे। यदि आहार स्फूर्ति देने के स्थान पर आलस्य, भारीपन लाने लगे तो समझना चाहिये कि मात्रा आवश्यकता से अधिक हो गयी।

यह ख्याल सही नहीं है कि जितना अधिक खाया जायेगा उतना अधिक बल मिलेगा। बल की बात तो पचने के उपरान्त समझी जा सकती है। अधिक मात्रा में खाया हुआ आहार तो पेट पर दबाव डालता है और शक्ति देने के स्थान पर उसका शोषण करता है। कब खाया जाय ? इस प्रश्न का उत्तर भी सीधा-सा है। जब पिछला अच्छी तरह पच चुका हो, पेट खाली हो गया हो और कड़ाके की भूख लगने लगे। यदि ऐसा न हो तो एक समय ही भोजन करके संतोष करना चाहिये और दूसरी बार का भोजन तब तक के लिये स्थगित कर देना चाहिये। पाचन तन्त्र की दुर्बलता को ढर्रे पर लाने का उपयुक्त उपचार यह है कि किसी एक भोजन से दूसरे भोजन का मध्यवर्ती अन्तर बढ़ा दिया जाय। पूरा या आधा उपवास करना, पाचक औषधियाँ खाते-फिरने की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा है। इसमें आहार का और पेट के पाचक रसों का अपव्यय बचता है।

खाली बैठे रहना एक ऐसी कुटेब है जिसके कारण शरीर ही निठल्ला रहकर आलसी नहीं बनता, वरन् मन भी बेकार समय में कुकल्पनायें करता रहता है। कहा जाता है कि "खाली दिमाग शैतान की दुकान" है। यह उक्ति अक्षरशः सत्य है। जो बेकार रहेगा, उसे सनकें ही सूझती रहेंगी और ताश, चौपड़, शतरंज जैसे व्यसनों को समय काटने के लिये अपनाना पड़ेगा। अपने ही जैसा कोई बेकार साथी ढूँढ़ना या बनाना पड़ेगा।

देखा गया है कि जब तक लोग नौकरी में, व्यवसाय में, उद्योग में लगे रहते तब तक उनका स्वास्थ्य भी ठीक रहता है। पर जैसे ही रिटायर होके निवृत्त जीवन जीने के दिन आते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं, वैसे ही वह कल्पना तिरोहित हो जाती है, कि जैसे ही निश्चिन्त होंगे, चैन मौज की जिन्दगी कार्टेंगे। वस्तुतः काम ही चैन और मौज है। किसी भी काम में रस लेना आरंभ कर दिया जाय, तो वह काम नहीं रहता, वरन् एक खेल बन जाता है।

जिस प्रकार भोजन, शयन और शौच की छुट्टी नहीं होती, उसी प्रकार काम की भी छुट्टी नहीं रहनी चाहिये। काम की प्रकृति बदल जाने पर ही थकान और ऊब दूर हो जाती है। नये काम में नई प्रसन्नता जुड़ जाती है। इसलिये अपनी दिनचर्या इस प्रकार बनानी चाहिये, जिसमें व्यस्तता तो रहनी चाहिये, पर काम की प्रकृति बदलती रहे। इस प्रकार उठने से लेकर सोने तक जहाँ व्यस्तता का आनन्द मिलता रहता है, वहाँ निठल्लेपन की आदत भी नहीं पड़ती और थकान भी नहीं आती। कार्मों के क्रम में भारी और हलकों को इस प्रकार गूँथा जा सकता है जिससे बदलाव का, हलके भारीपन का सिलसिला चलता रहे और साथ ही बदलाव के मनोरंजन का आनंद भी मिलता रहे। मन में से यह बात निकाल देनी चाहिये कि व्यस्तता मनुष्य को थकाती है, वरन् सही बात है कि खाली पड़ा हुआ उस्तरा या मशीन का पुर्जा जंग लग जाने से खराब हो जाता है और जो चलता रहता है वह सही रहता है।

भावनाओं का हर काम में सम्मिश्रण करना चाहिये। भोजन करते समय उसे भगवान का प्रसाद मानना चाहिये और प्रसन्नचित्त होकर खाना चाहिये। कोई चीज अरुचिकर हो तो उसे जूठन रूप में छोड़ने की अपेक्षा पहले ही निकाल देना चाहिये। स्वाद की कमी के कारण भोजन करते समय नाक-भौं सकोड़ना, बनाने वाले पर झल्लाना बुरी बात है। नाराजी के वातावरण में किया हुआ भोजन हानिकारक हो जाता है। जबकि हँसते हुये प्रसन्नचित्त से भोजन करने की आदत रूखे-सूखे भोजन को भी स्वास्थ्य संवर्धक बना देती है। अकेले खाने की अपेक्षा कईयों को मिला-जुलाकर एक पंक्ति में बैठकर खाना और भी अच्छा रहता है।

पेट से अधिक, किसी के आग्रह पर भी नहीं खाना चाहिये। देखा यह गया है कि प्रेम जताने के लिये परोसने वाले जो वस्तु अधिक स्वादिष्ट होती है, उसे अधिक मात्रा में खिलाने का आग्रह करते हैं। ऐसी दशा में नम्रतापूर्वक उस आग्रह को मना ही कर देना चाहिये। आग्रह करने वाला तो अपनी सद्भावना जताकर निश्चिन्त हुआ, पर उस असमंजस का दुष्परिणाम अपने को भुगतना पड़ता है। दावतों में यही होता है। लोग स्वादिष्ट वस्तुओं के लालच में आवश्यकता से अधिक खा जाते हैं और पीछे दुःख भोगते हैं ऐसी स्थिति का सामना करना पड़े तो बरबस जूठन भी छोड़ी जा सकती है।

जितना ध्यान आहार जुटाने का रखा जाता है, उतना ही इस बात का भी रखा जाना चाहिये कि मल-विसर्जन ठीक से हुआ या नहीं। दूसरी बार भोजन करने से पूर्व यह आवश्यक है कि मल त्याग करने के उपरान्त नया भोजन लिया जाय, ताकि पेट में नये आहार के लिये जगह बन जाये। यदि पेट कब्ज रहने लगे तो यही उत्तम है कि एनिमा ले लिया जाय। इसकी विधि कुछ कठिन नहीं है, किसी भी चिकित्सक से सीखी जा सकती है। आरम्भ में दूसरे सहायक की आवश्यकता पड़ सकती है पर बाद में अभ्यास होने पर उसे अकेले भी लिया जा सकता है। एनिमा यन्त्र किसी भी केमिस्ट की दुकान पर मिल जाता है। दस्तावर गोलियाँ लेने की तुलना में एनिमा का उपयोग अधिक निर्दोष है।

कम खाने से कोई दुबला नहीं होता। अधिक खाना ही वह दोष है, जिसके कारण अपच का शिकार होना पड़ता है और पाचन तन्त्र दिन-दिन अशक्त होता जाता है। यह कथन गलत नहीं है कि जितने लोग भुखमरी से मरते हैं उससे दूने अधिक खाने से मरते हैं। पाचन का क्रम सही चलना चाहिये। थोड़े आहार से भी शक्ति की आवश्यकता पूरी होती रह सकती है। पच चुकने के बाद ही आहार का सत्परिणाम हस्तगत होता है।

संसार में तीन चौथाई बीमारियाँ अपच के कारण होती हैं। जो पचा नहीं, वह पेट में पड़ा-पड़ा सड़ता है। सड़न से विषाक्तता उत्पन्न होती है। वह रक्त और वायु के साथ मिलकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर भर में घूमती रहती है। जहाँ भी उसे टिकने योग्य स्थान मिल जाता है, वहीं जड़ जमाकर बैठ जाती है। सूजन, अकड़न, दर्द, व्रण आदि के उपद्रव खड़े हो जाते हैं। यही रोगों की उत्पत्ति का मूलभूत स्वरूप है। बाहर के विषाणुओं के आक्रमण और मौसम का प्रभाव आदि कारण तो उन्हीं को हैरान करते हैं, जिनकी सहनशक्ति और निरोध क्षमता घट जाती है। रोगों के आक्रमण का पूर्व लक्षण दुर्बलता है। उसके अन्य कारण भी हो सकते हैं, पर सबसे बड़ा कारण आहार सम्बन्धी व्यतिक्रम है। जीभ की चटोरी न बनाया गया हो और भोजन में पकवान, मिष्ठान, मिर्चमसाले वाले पदार्थों की भरमार न की गई हो, तो वह स्वयं बताती रहती है कि किसका प्राकृतिक स्वाद उस योग्य है कि उसे खाया जा सके। इसी प्रकार पेट की थैली को अनावश्यक रूप से फैला न लिया गया हो तो पेट भी यह बताता रहता है कि पाचन की उपयुक्त मात्रा में भोजन भीतर पहुँच गया या नहीं। स्वाद और पेट यदि गड़बड़ा न दिये गये हों तो भोजन की उपयुक्तता और मात्रा का संकेत इन्हीं दोनों द्वारा मिलता रहता है। स्वास्थ्य की सुरक्षा का आधा आधार इतने भर से ही हल हो जाता है।

इसके उपरान्त विहार का—रहन-सहन का प्रश्न है, उसे आलस्यवश टाला नहीं जाना चाहिये, वरन् आहार की तरह ही सतर्कता बरतनी चाहिये। मल-मूत्र त्याग के सम्बन्ध में इच्छा को व्यस्तता के बहाने रोकना नहीं चाहिये। जब भी हाजत हो तुरन्त जाना चाहिये, विशेषतया मल त्याग के सम्बन्ध में। प्रातःकाल का और सायंकाल का भोजन से पूर्व का समय इस हेतु सुरक्षित रखना चाहिये। हाजत न होने पर भी इस सन्दर्भ में नियमितता का पालन करना चाहिये। इससे थोड़े समय में आदत पड़ जाती है और पेट पहले से ही नियत कार्य की तैयारी का उपक्रम करने का तानाबाना बुनने लगता है। जब इच्छा होगी तब शौच जायेंगे, यह सोच लेने पर तो पेट का ढाँचा ही गड़बड़ाने लगता है। भोजन के बाद पेशाब जाने की आदत अच्छी है। इसी प्रकार सोने से पूर्व मूत्र त्याग से निवृत्त हो लेना चाहिये, ताकि इस कारण बार-बार नींद खुलने की कठिनाई न पड़े।

मल-विसर्जन के लिये मल-मूत्र के छिद्र ही नहीं, नाक, मुख, रोमकूप आदि भी भीतर की मलीनता का विसर्जन करते रहते हैं। इसलिये इन सब की भी दैनिक शुद्धि होनी चाहिये। दन्त धावन के लिये चूल्हे की जली हुई मिट्टी को कपड़े से छानकर उसमें थोड़ा सरसों का तेल मिलाकर मंजन करते रहना उपयुक्त है। इसी के साथ मुँह, जीभ, मसूढ़े आदि की भी सफाई कर लेनी चाहिये। नाक की श्लेष्मा अक्सर सूख जाती है। उसकी दैनिक सफाई भी आवश्यक है। आँखों में कीचड़ आने लगते हैं, पलकें चिपकने लगते हैं। इन सब की सफाई पर ध्यान न रखने से दन्त क्षय, मुँह में छाले, श्वाँस में दुर्गन्ध आदि की बीमारियाँ होने लगती हैं। दैनिक स्नान भी भारत जैसे गरम देश में आवश्यक है। अति ठंड वाले योरोप जैसे क्षेत्रों में इस सम्बन्ध में थोड़ी ढील भी रखी जा सकती है, पर भारत के हर प्रान्त में, हर ऋतु में यह आवश्यक है। कारण कि त्वचा के अगणित छिद्रों से होकर शरीर से जो भाप निकलती रहती है, उनमें मलीनता के तत्व होते हैं। यदि खुरदरे कपड़े से रगड़-रगड़कर अच्छी तरह स्नान न किया जाय, तो मैल की परत त्वचा पर जम जाती है। उससे रोमकूप के छिद्र बन्द होने लगते हैं और भाप भीतर ही रुककर कई प्रकार की भीतरी गड़बड़ियाँ उत्पन्न करना शुरू कर देती है। चमड़ी पर जमी हुई मैल की परत खुजली, दाद, छाजन, फुन्सी आदि का रूप धारण करती है, स्फूर्ति घटती है और आलस्य छाता है। स्नान में डुबकी मार लेना या ऊपर से लोटे लुढ़का लेना पर्याप्त नहीं, वरन् बन्द जगह में शरीर के प्रत्येक भाग की, विशेषतया बालों की जड़, बगल, जंघायें, जननेन्द्रिय तथा जोड़ वाले स्थानों की भली प्रकार सफाई करनी चाहिये। त्वचा को इतना रगड़ा जाय कि वह लाल हो जाय। इससे स्नान का वास्तविक उद्देश्य पूरा होता है। शरीर पर पानी भर फैला लेने से तो मात्र चिन्ह पूजा होती है। उससे दैनिक स्वच्छता का वास्तविक उद्देश्य पूरा नहीं होता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सोते समय यह ध्यान रखने योग्य बात है कि कपड़े से मुँह ढककर न सोया जाय। इससे साँस के साथ बाहर निकली हुई विषाक्तता फिर फेंफड़ों में जाती है। इस प्रकार शरीर को शुद्ध वायु मिलते रहने का क्रम रुक जाता है। ऑक्सीजन न पहुँचने पर कई प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं और स्वास्थ्य लड़खड़ाता है। यदि ठंड अधिक हो तो टोपा पहन लेना, कान बाँध लेना जैसे उपाय तो अपनाये जा सकते हैं, पर मुँह ढँककर तो नहीं ही सोना चाहिये, भले ही ठंडक के दिन ही क्यों न हों। यदि एक बिस्तर पर दो व्यक्ति सो रहे हों, तो मुँह का खुला रखना और भी आवश्यक है।

स्वच्छता के और भी कितने ही पक्ष ऐसे हैं, जिनके सम्बन्ध में आमतौर से भूल होती रहती है। हाथ और पैरों के नाखून बराबर काटने रहना चाहिये। उनके बीच जो खाली जगह रह जाती है, उसमें कितने ही हानिकारक मलीनताजन्य कीटाणु घुसे रह जाते हैं और वे फिर मुँह, नाक या रोमकूपों के मार्ग से शरीर में प्रवेश करके कई प्रकार की बीमारियों के निमित्त कारण बनते हैं। बात छोटी सी है, पर उसके कई दुष्परिणाम भुगतने पड़ते हैं।

स्वास्थ्य का सफाई से सघन सम्बन्ध है। बीमारी और गन्दगी एक ही बात है। गंदगी जहाँ कहीं जमा होगी वहीं दुर्गन्ध, कुरुचि एवं कुरूपता का ही परिचय नहीं देगी वरन् बीमारियों के उत्पादन का भी उर्वरक क्षेत्र बनेगी। इसलिये देखना चाहिये कि शरीर के भीतर बाहर ही नहीं, प्रयुक्त होने वाले उपकरणों में भी तो गन्दगी कहीं डेरा तो नहीं डाल रही है।

जिन कपड़ों में पसीने का स्पर्श होता है उनकी नित्य साबुन से धुलाई होनी चाहिये। बालों की जड़ों में से भी एक प्रकार का स्राव निकलता रहता है और यदि उसकी नित्य प्रति सफाई न हो तो रूसी के रूप में जमा होता और जड़ पकड़ लेता है। सिर में काले रंग के और कपड़ों में सफेद रंग के जुयें जड़ जमाने लगते और अण्डे देने, वंशवृद्धि करने लगते हैं। बालों की जड़ों में विशेषतया जंघा और बगलों में एक खास तरह की जुईं पैदा होती है और वह अपने पंजे चमड़ी में धँसाकर धीरे-धीरे खून पीती रहती है। यह सब व्यथायें वहाँ पैदा होती हैं जहाँ बालों की, कपड़ों की सतर्कतापूर्वक सफाई नहीं होती। जो कपड़े, बिस्तर रोज-रोज नहीं धाये जा सकते, उनके लिये भी इतना तो किया ही जाना चाहिये कि दिन भर कड़ी धूप में सूखने दिया जाये। इससे भी गन्दगी की एक बड़ी मात्रा हट जाती है।

रसोईघर और शौचालय यह दो स्थान घर में ऐसे हैं, जिनकी समुचित स्वच्छता का ध्यान न रखा जाय तो सड़ा हुआ अन्न दुर्गंध और कृमि कीटक पैदा करने लगता है। नालियों में रेंगने वाले कीड़े और मक्खी मच्छर इसीलिये उपजते रहते हैं कि उनमें खाद्य पदार्थों के कण किसी रूप में पहुँचने लगते हैं और हवा, पानी मिलते रहने से वे अपने समुदाय की बढ़ोत्तरी करते रहते हैं। इन स्थानों को पानी से धोते रहना चाहिये और चूना, फिनाइल आदि कृमि नाशकों का प्रयोग करते रहना चाहिये। जहाँ पीने का पानी रहता है, वहाँ भी सीलन की वजह से कई प्रकार के कीड़े डेरे डालने लगते हैं। मिट्टी के घड़ों को अदल-बदलकर प्रयोग करना चाहिये और उनमें से एक सैट को कई दिन धूप लगाते रहना चाहिये। खाद्य पदार्थों, मसालों, तेल, घी आदि के सम्बन्ध में सावधानी बरती जाये कि उनमें से कोई वस्तु खुली न पड़ी रहे। उनमें से हर वस्तु को ढककर या बन्द डिब्बों में रखना चाहिये। चूहे, छछूँदर, छिपकली, मकड़ी, पिस्सू जैसे कीड़े उनमें घुस जाते हैं। उनके मल-मूत्र एवं थूक में काफी विषैलापन होता है, जो खाद्य पदार्थों के साथ खाने वालों के पेट में पहुँचता है और बीमारियों का आधार बनता है। चूहे बोरी में रखे अनाज में अपना रास्ता बना लेते हैं। थैलों में रखी हुई चीजें भी उनसे नहीं बचतीं। उन्हें साधन मिलते रहें तो उनका झुण्ड एक पूरे आदमी की खुराक खा जाता है। यह घाटा प्रत्यक्षतः मालूम नहीं पड़ता पर हिसाब लगाने पर प्रतीत होता है कि वे अनाज खाकर, कपड़े काटकर कितनी अधिक हानि पहुँचा देते हैं। चूहों के बिल सीमेंट से बन्द करते रहना चाहिये तथा उन्हें पकड़ने, मारने के जो उपाय जहाँ सुलभ हों उन्हें अपनाते रहना चाहिये।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घरों की दीवारें और छतें भी छोटे कीड़ों का अड्डा बन जाती हैं, उन्हें अधिक नहीं तो साल में दो-तीन बार चूने में नीला थोथा मिलाकर पोतने रहना चाहिये। इससे घर सुन्दर भी लगते हैं और हानिकारक कीड़ों के अण्डे भी नहीं बन पाते। लो मात्र जमीन के फर्श पर झाड़ू लगाते हैं। दीवारों और छतों की बात एक प्रकार से भूल ही जाते हैं। शरीर और कपड़ों की तरह घर की भी समुचित सफाई करनी चाहिये। बर्तनों का उपयोग करके, उनकी सफाई करने के उपरान्त इस तरह रखा जाये कि इन तक चूहे, छिपकली आदि की पहुँच न होती रहे। कूड़े को घर की नाली में डालने की अपेक्षा एक कूड़ेदान में ढककर रखना चाहिये और नियत समय पर, नियत स्थान पर उसे भिजवाते रहना चाहिये। जहाँ भी गंदगी दृष्टिगोचर हो उसे तत्काल हटाना चाहिये अन्यथा जमीन उसे पी जाती है और देर तक उसका असर अपनाये रहती है।

घर की दिनचर्या नियमित रखनी चाहिये। जल्दी सोने और जल्दी उठने की आदत ऐसी है, जिससे स्वास्थ्य तो अच्छा रहता ही है, प्रातःकाल जो भी काम हाथ में लिया जाय वह भली प्रकार सम्पन्न होता है। देर तक जागना और देर तक सोते रहना बुरी आदत है। इसमें समय भी बर्बाद होता है और स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। एक व्यक्ति देर में खाता है। देर में घर वापिस लौटता है तो उसकी प्रतीक्षा में अन्यान्यों को बँधे रहना पड़ता है और सामूहिक व्यवस्था पर बुरा असर पड़ता है। इसलिये दिनचर्या का समय विभाजन ऐसा होना चाहिये, जिसका सभी लोग नियमित रूप से पालन करें और सुव्यवस्थित जीवन जियें।

आहार को पचाने के लिये समुचित परिश्रम की आवश्यकता है। जो लोग मस्तिष्क से तो काम लेते हैं पर शारीरिक श्रम से जी चुराते हैं उनका स्वास्थ्य सही नहीं रह पाता। शरीर के सभी अंगों को समुचित श्रम मिलना चाहिये ताकि उनकी सक्रियता और सुदृढ़ता यथावत् बनी रहे। वन्य पशु-पक्षी सारे दिन आहार की तलाश में तथा मनोविनोद के लिये इधर-उधर भागते-दौड़ते रहते हैं। यह आवश्यक है कि फेफड़ों को पूरा काम मिलता रहे। हाथ-पैरों के परिश्रम से हृदय, गुर्दों आदि को पूरा काम मिलता है। माँसपेशियों की सुदृढ़ता के लिये रक्त-संचार का नियमित क्रम बना रहने की दृष्टि से यह आवश्यक है। जिन्हें कड़ा परिश्रम करने का अवसर या अभ्यास नहीं है, वे आरामतलब लोग अपनी काहिली की भारी कीमत चुकाते हैं। शरीर का ढाँचा दुर्बल बना लेते हैं।

जिनकी कार्य पद्धति में शारीरिक श्रम की न्यूनता है, उन्हें व्यायाम की आदत डालनी चाहिये। सबेरे तेज चाल से तीन-चार मील चल लेना अच्छा, सरल और मनोरंजनदायक है। बाहर जाने की बात न बनती हो तो शरीर के हर अवयव को फैलाने-सिकोड़ने-घुमाने के सुगम तरीके किसी से सीख लेने चाहिये या अपनी सूझ-बूझ से उनका आविष्कार कर लेना चाहिये। दुर्बल व्यक्ति बिस्तर पर पड़े-पड़े ही हाथ-पैरों को, कमर गरदन को सकोड़ने फैलाने का व्यायाम कर सकते हैं। ऐसा भी हो सकता है कि लड़कियों के रस्सी उछलने जैसा अथवा एक ही जगह खड़े रहकर पैरों को, हाथों को 'डबल मार्च' की मुद्रा में चलते रहने का व्यायाम किया जाये। लेटकर तो साइकिल चलाने की तरह पैरों को घुमाते रहने जैसा व्यायाम हो ही सकता है। स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली ड्रिल या उसी तरह के अंग संचालन हर किसी के लिये उपयोगी हो सकते हैं। उन्हें बाल-वृद्ध, नर-नारी सभी अपनी स्थिति के साथ तालमेल बिठाते हुये निर्धारित कर सकते हैं। हर हालत में शारीरिक श्रम हर किसी के लिये उपयोगी नहीं आवश्यक भी है। निठल्ले व्यक्ति चर्बी फूलने, जोड़ों में दर्द रहने, पैर अकड़ने, बार-बार पेशाब जाने, नींद कम आने, अपच रहने जैसी कितनी ही छुट-पुट बीमारियों के शिकार बने रहते हैं। जुकाम उनका पीछा छोड़ता ही नहीं। इन व्यथाओं से बचने के लिये आवश्यक है कि दिनचर्या में इतने कड़े परिश्रम की मुद्रा रखी जाये, जिसमें एक बार माथे पर पसीना झलकने लगे।

साँस हमेशा गहरी लेनी चाहिये ताकि फेफड़ों के समूचे भाग में सक्रियता बनी रहे और शरीर को समुचित मात्रा में ऑक्सीजन मिलती रहे। छाती, जिगर, हृदय, आमाशय, आँतों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आदि का व्यायाम होता रहे। जो लोग झुककर बैठते हैं, उनके फेफड़े का बड़ा अंश निष्क्रिय पड़ा रहता है और उसमें क्षय, श्वाँस, खाँसी आदि के रोग कीटाणु पनपने लगते हैं। साँस हमेशा नाक से लेना चाहिये और चलते समय हाथों को आगे-पीछे सैनिकों की तरह हिलाते हुये चलना चाहिये।

चेहरे पर प्रसन्नता भरी मुस्कान बनी रहे ऐसा अभ्यास करना चाहिये। यह एक अच्छी आदत है, जिसे सौम्य एवं सस्ता सौन्दर्य कहना चाहिये। अन्य सभी सौन्दर्य प्रसाधनों को मिला कर भी चेहरे पर उतनी चमक नहीं आती जितनी अकेली मुस्कान भर से उपलब्ध होती है। यह व्यक्तित्व में चार चाँद लगाने वाला नुस्खा है जिसे दर्पण सामने रखकर यह अभ्यास किया जा सकता है कि कैसी मुखाकृति अधिक सुन्दर और अधिक आकर्षक लगती है। चेहरा उदास रखना, रोनी जैसी सूरत बनाये रहना, गुस्सा या आवेश प्रकट करना, निराशा और चिन्ता के भाव व्यक्त करना, लोगों का आकर्षण समाप्त कर देना है। ऐसी प्रकृति वालों से हर कोई बचने, दूर रहने का प्रयत्न करता है। चुप्पी साधे रहना, आत्महीनता और दब्बूपन का चिन्ह है। ऐसे लोगों का मित्र समुदाय दिन-दिन घटता जाता है और सूनेपन जैसी नीरसता छाई रहने से लोग बचने का प्रयत्न करते हैं। उन्हें सुख-दुःख में अपना साझीदार नहीं बनाते।

बहुत पुराने जमाने की बात है जब यह समझा जाता था कि वात, पित्त, कफ के कुपित होने से बीमारियाँ पैदा होती हैं। बाद में उनका कारण ऋतु-परिवर्तन या विषाणुओं का आक्रमण समझा गया। आगे चलकर सोचा गया कि पेट के अपच से ही विजातीय द्रव पैदा होता है और वही मनुष्य को रोगग्रस्त कर देता है। पीछे रक्त की कमी या घटिया होना निमित्त कारण माना गया। अब विज्ञान की नवीनतम और गंभीरतम खोजों ने यह सिद्ध किया है कि शरीर पर वास्तविक नियन्त्रण मन का है। मस्तिष्क के गड़बड़ाने से ही शारीरिक रोग होते हैं और साथ ही मानसिक विकार भी चढ़ दौड़ते हैं। इस निष्कर्ष में बहुत कुछ यथार्थता है। शरीर का स्वामी मन है।" "यथा राजा तथा प्रजा" की उक्ति के अनुसार घोड़े की गतिविधियाँ सवार के संकेतों पर चलती हैं का निष्कर्ष सही पाया गया। जिसका मन उद्विग्नता से भरा रहेगा, जो अशान्त, भयभीत, विक्षुब्ध रहेगा, उसका उत्तेजित मस्तिष्क समूचे शरीर पर अपना प्रभाव डालेगा और उसे चैन से न रहने देगा।

देखा गया है किसी स्वजन की मृत्यु होने का शोक समाचार आता है तो भूख-प्यास-नींद सब भाग जाती हैं और हाल बेहाल हो जाता है। क्रोध की स्थिति में व्यक्ति आपे से बाहर हो जाता है और उन्मादी जैसे वचन बोलता, व्यवहार करता है। भयभीत की स्थिति भी दीन-दुर्बल जैसी हो जाती है। लगता है मानो काठ मार गया हो। न भागते बनता है न विपत्ति से जूझते। यह सब मानसिक उद्विग्नता के शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव हैं। जब स्वभाव में विक्षोभ भरा रहने लगता है, तो समझना चाहिये कि कोई संक्रमण स्तर का रोग हो गया और अब देर-सबेर में प्राण लेकर या पागल बनाकर हटेगा।

मनोविकारों में कुछ सामयिक होते हैं, कुछ स्थाई। सामयिक वे हैं, जो तात्कालिक परिस्थितियों के कारण ज्वार-भाटे की तरह आते हैं और सन्तुलन को उखाड़-पछाड़ कर रख जाते हैं। यह आघात लगने की तरह होते हैं। समय बीतने या विपत्ति टल जाने पर स्थिरता भी आ जाती है। फिर भी उसका प्रभाव कम नहीं पड़ता। एक घंटे का क्रोध एक दिन तेज बुखार आने जितनी शक्ति का हरण कर लेता है।

मन का अचेतन पक्ष शरीर संचालन की विधि व्यवस्था में लगा रहता है। वह सोते-जागते हर समय कार्यरत रहता है। बहिरंग मस्तिष्क का काम कल्पना, विचारणा एवं विवेचना में लगा रहना है। नींद आने पर सोचता है या क्लोराफार्म जैसी कोई नशीली वस्तु के उपयोग से मूर्छित हो जाता है। पर यह स्थिति अचेतन मन की नहीं है। वह जन्म से लेकर मरण पर्यन्त शरीर की रक्त संचार, प्राकुंचन, श्वाँस-प्रश्वाँस, निमेष-उन्मेष, अवयवों के सूत्र संचालन में निरन्तर लगा रहता है। मानसिक उद्वेगों का प्रभाव अचेतन की गहरी परतों तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चला जाता है। फलतः वह अपना कार्य ठीक प्रकार नहीं कर पाता। लड़खड़ाने से बीमारी जैसा माहौल बन जाता है।

वासना, तृष्णा, अहंता-लोभ, मोह, अहंकार के कुविचार मनुष्य को संकीर्ण और स्वार्थी बनाते हैं। इनके दबाव से मनुष्य कुकृत्य करने और अपराधी दुष्प्रवृत्तियाँ अपनाने के लिये उद्यत हो जाता है। आतुरतावश मनुष्य आधा काम करता है, आधा छोड़ता है। चिन्तातुर व्यक्ति किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो जाता है और सामने की कठिनाई के सम्बन्ध में क्या करना है ? यह उसे सूझ नहीं पड़ता। संदेहशील, आशंकाग्रस्त, किसी पर भी उचित-अनुचित आक्षेप करता है और अकारण ही मित्रों को शत्रु बनाता रहता है। भय अधिकांशतः काल्पनिक होते हैं। डरपोक आदमी हर घड़ी यही सोचता रहता है कि न जाने मेरे ऊपर कब गाज गिर पड़े ? कब अनिष्ट बरस पड़े ? विचारों में ऐसे ज्वार-भाटे आते रहने से मनुष्य अर्ध-विक्षिप्त की स्थिति में रहने लगता है। ऐसी दशा वह अपने दैनिक और महत्त्वपूर्ण कार्मों की विधि व्यवस्था बनाने में भी असफल रहता है। पग-पग पर अवरोध व्यवधान आते दीखते हैं। ऐसी दशा में मानसिक सन्तुलन गड़बड़ाया हुआ रहता है और उसका प्रभाव स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। अन्तर्द्वन्द्व चलते रहने से अशान्ति छाई रहती है और उसकी प्रतिक्रिया व्यावहारिक जीवन को अस्तव्यस्त करने में ही नहीं, स्वास्थ्य को गड़बड़ा देने का निमित्त कारण भी बनती है।

शक्तियों के अनावश्यक छरण न होने की बात पर सदा ध्यान रखने की आवश्यकता है। कामुक चिन्तन और अमर्यादित यौनाचार मस्तिष्क खोखला कर देते हैं और जवानी आते-आते बुढ़ापे की स्थिति बन जाती है। चटोरे व्यक्ति सदा अपच के शिकार रहते हैं। अत्यधिक श्रम करने से तो मनुष्य थकता ही है, निठल्ला बैठे रहने पर भी अंग जकड़ जाते हैं। रात को तेज रोशनी में देर तक काम करते, जगते रहने से आँखों पर बुरा प्रभाव पड़ता है, दृष्टि घटने लगती है और मोतियाबिन्द, सिरदर्द, जुकाम जैसी स्थिति बन जाती है। इन सब बातों को ध्यान में रखते हुये, दिनचर्या को नियमित बनाते हुये शक्ति भण्डार को इस प्रकार खर्च करना चाहिये कि अपना काम भी चलता रहे और ऐसा कुछ न होने पाये, जिससे समय से पूर्व ही खोखलापन आ दबोचे।

बीमारियाँ आ धमकने पर विश्राम, स्वल्पाहार, गरम पानी का सेवन, पेट का भारीपन, एनेमा के सहारे हटा देने—जड़ी-बूटी उपचार जैसे हल्के-फुल्के प्रयत्न ही करना चाहिये। जब तक कोई भयंकर संकट की विपत्ति न हो, साधारण स्थिति में एलोपैथी-एण्टीबायोटिक्स आदि दवाओं से बचना चाहिये। वे एक रोग को दूर करके दूसरा रोग खड़ा करती हैं। रोग-कीटाणुओं को मारने के प्रयास में रक्त के जीवन-रक्षक घटकों से भी हाथ धोना पड़ता है।

तुलसी हर रोग में अनुपान भेद से काम दे जाती है। उसका थाँवला घर में लगाने से मच्छर भागते हैं और उसे स्पर्श करके फैलने वाली हवा घर के सभी सदस्यों को लाभ पहुँचाती है।

इन दिनों खाद्य पदार्थों में मिलावट का दौर है। लालची व्यापारी आटे में घटिया आटा और मसालों में सस्ती हानिकारक चीजें मिला देते हैं। इन्हें खरीदते समय यह ध्यान रखना चाहिये कि वस्तुयें प्रामाणिक जगह से ही खरीदी जायें। यदि उन्हें पीसना घर पर ही सम्भव हो सके, तो शुद्धता की अधिक गारन्टी रहेगी। तेल-घी भी विश्वस्त कम्पनियों का डिब्बा बन्द ही लेना चाहिये। खुली चाय कुछ सस्ती तो बिकती है, पर उसमें भी मिलावट की आशंका रहती है। अनाज, दालें यदि घर पर ही तैयार करनी हों, तो उन्हें गरम पानी से अच्छी तरह से रगड़कर धो लेना चाहिये, सब्जियों को भी, क्योंकि कीटनाशक दवाओं और रासायनिक खादों की भरमार से वे पैदावार तो अधिक देती हैं, पर उनमें विषाक्तता का जो अंश रह जाता है, भीतर तक प्रवेश कर जाता है। भीतर का परिशोधन तो कठिन है, पर बाहरी भाग को तो गरम पानी से अच्छी तरह धो ही लेना चाहिये। इसके बाद ही उनका प्रयोग किया जाये। आहार के साथ-साथ हम विष-भक्षण तो नहीं कर रहे हैं, इसका ध्यान रखना आवश्यक है, अन्यथा जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पोषण के निमित्त लिया गया है, वही शोषण का काम करने लगता है।

विष खाने की आदत आरम्भ में कौतूहल और शौक के रूप में ही अपनाई जाती है, पर पीछे वह आदत के रूप में सम्मिलित हो जाती है और छुड़ाये नहीं छूटती। पान, तम्बाकू, बीड़ी सिगरेट का आम प्रचलन होता जाता है। एक को देखकर दूसरा सीखता है। यह वस्तुयें आतिथ्य सत्कार का भी अंग बनती जाती हैं। इनसे बचना ही श्रेयस्कर है। तम्बाकू से कैन्सर, खाँसी, दमा आदि होने की आशंका रहती है। फेफड़े जल जाते हैं इनमें निकोटीन जमता रहता है। मस्तिष्क पर बुरा असर पड़ता है, आमाशय और आँतों की शक्ति घटती है। ऐसी दशा में नशा न पीने वालों की तुलना में पीने वालों का अधिक बीमार पड़ना और जल्दी मरना स्वाभाविक है। मुँह से छोड़ा हुआ धुँआ समीपवर्ती लोगों पर अपना असर छोड़ता है और उन बेचारों को अकारण ही संकट में फँसाता है।

चाय, काफी का प्रचलन भी निरन्तर बढ़ रहा है। इससे जो फुर्ती आती दीखती है वस्तुतः गरम पानी और शक्कर की होती है। चाय, कॉफी तो ऐसी उत्तेजना उत्पन्न करती हैं, जो क्षणिक फुर्ती दिखाने के उपरान्त पहले की अपेक्षा और अधिक सुस्ती, थकान पैदा करती हैं। इससे तो अच्छा है कि तुलसी के पत्ते, दालचीनी, हल्दी आदि का क्वाथ गुड़ डालकर बना लिया जाय। वह क्वाथ चाय, कॉफी की अपेक्षा सस्ता भी पड़ेगा और उन हानियों से भी बचा देगा, जो इन उत्तेजक और विषाक्त पेयों के सेवन से शरीर की जीवनीशक्ति को निरन्तर घटाती जाती हैं। प्रज्ञापेय भी वैकल्पिक पेय के रूप में लिया जा सकता है। किसी भी हालत में चाय या कॉफी एक या दो कप से अधिक एक दिन में नहीं पी जानी चाहिये।

नशे के नाम पर इन दिनों चित्र-विचित्र प्रकार के मादक द्रव्य चल पड़े हैं। भाँग, अफीम, चरस, शराब, ताड़ी जैसी वस्तुओं का एक ही लालच है कि वे सेवन करते ही तुरन्त उत्तेजना देती हैं। इससे लगता है कि फुर्ती आयी और काम करने की सामर्थ्य बढ़ गई। पर जैसे ही खुमारी उतरती है वैसे ही शरीर लुटा-पिटा सा लगने लगता है। हंटर मार-मारकर किसी घोड़े को तेजी से दौड़ाया जाय तो वह जल्दी थक जाता है और अन्ततः अशक्त होकर जमीन पर गिर पड़ता है। यही स्थिति नशेबाज की होती है। आदत पड़ जाने पर उसको छोड़ सकना अति कठिन पड़ता है। वरन् दिनों-दिन उसकी अधिक मात्रा अपेक्षित होती है। जितनी मात्रा बढ़ती जाती है, उतनी ही शरीर को उसके दुष्प्रभाव से हानि भी अधिक होने लगती है।

शराब इन सबसे अधिक घातक है। उसकी विषाक्तता रक्त को, नस-नाड़ियों को, चिन्तन को, रोग-निरोधक शक्ति को, काम करने की सामर्थ्य को बेतरह नष्ट करती है और मनुष्य को उस गुब्बारे की तरह बना देती है, जो हवा भरने पर फूलता है पर जैसे ही हवा निकलती है, वह पतला छिलका मात्र रह जाता है। शराब पीकर मनुष्य बबूले की तरह इतराता-इठलाता है पर उसका असर कुछ ही समय में ढीला पड़ जाने पर वह झाग की तरह बैठ जाता है, बबूले की तरह फूट जाता है।

स्वास्थ्य का सर्वनाश करने के अतिरिक्त शराब की और भी कितनी ही हानियाँ हैं। मात्रा और क्वालिटी बढ़ाने की इच्छा में हैसियत से अधिक पैसा खर्च होता है। उसके कारण समूचे परिवार को तंगी भुगतनी पड़ती है। खुद भी फटे हाल रहते हैं। घर का सामान बिकने और बाहर का कर्ज चढ़ने लगता है जिसे चुकाने का अवसर ही नहीं आता। पैसा घट जाने पर स्प्रिट जैसी विषैली वस्तुयें पीने को विवश होना पड़ता है। इस कुचक्र में कितनों की ही अकाल मृत्यु होती रहती है। बच्चे बिलखते, भूखों मरते हैं और अनाथ जैसी जिन्दगी बिताते हुये मरने वालों को कोसते रहते हैं। दरिद्रता उस परिवार को बेतरह जकड़ लेती है।

शराबी अपनी इज्जत-आबरू खो बैठते हैं, जहाँ-तहाँ पड़ा हुआ नालियों में मुँह रगड़ता है। गालियाँ बकता है, लड़खड़ाता है और कुछ भी उद्दण्डता बरतने लगता है। ऐसे लोग पुलिस द्वारा पकड़े जाते और जेल की हवा खाते हैं। सामाजिक सम्मान तो एक प्रकार से समाप्त हुआ ही समझा जाना चाहिये। उसे अविश्वस्त,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अप्रामाणिक माना जाता है और कोई उसका साथ देने, सहयोग करने को तैयार नहीं होता। उपेक्षित तिरस्कृत स्थिति में ही उसे अपना समय गुजारना पड़ता है। सभी सम्बन्धी, शुभ-चिन्तक उसे इस लत को छोड़ने के लिये समझाने-बुझाने का प्रयत्न करते हैं पर कोई प्रभाव न पड़ने, परिणाम न मिलने के फलस्वरूप खीज और भी अधिक बढ़ती है और खाई और भी चौड़ी होती है। इस प्रकार शराबी अपने लोगों के बीच रहते हुये भी एक प्रकार से तिरस्कृत एवं उपेक्षित रहता है। यह स्थिति ऐसी है, जिसे दयनीय ही कहा जा सकता है।

शराबी जहाँ अपना स्वास्थ्य, सम्मान, पैसा गँवाता है, वहाँ परिवार के भविष्य को भी अन्धकारमय बनाकर छोड़ता है। कोमल प्रकृति और अपरिपक्व वृद्धि के बालक कई बार शराबी का अनुकरण करने लगते हैं और चोरी छुपे उस कुटेब को अपनाने लगते हैं। ऐसा न हो तो भी पिता के, बाबा के, कुसंस्कार वंशानुक्रम के अनुसार पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ते हैं। बुराइयाँ अपेक्षाकृत जल्दी उभरती और आकर्षित करती हैं, जबकि अच्छाइयाँ मुश्किल से और प्रयत्न, परिश्रम से ही गले उतरती हैं। आर्थिक अभाव और सामाजिक तिरस्कार के बीच बच्चों का अन्तराल घुटता रहता है और वे इस योग्य नहीं रहते कि कुछ महत्त्वपूर्ण काम कर सकें या उपयोगी सहयोग प्राप्त कर सकें, फलतः उन्हें आवारागर्दी या अपराधी प्रवृत्ति अपनानी पड़ती है। इस प्रकार बच्चों का भविष्य अन्धकारमय बनाने का पाप नशेबाज ही करता है। इन्हीं सब बातों को देखते हुये विज्ञजनों ने कहा है कि नशेबाजी धीमी आत्महत्या है।

भाँग, चरस अफीम आदि भी शराब के छोटे भाई-बहन हैं। उनकी हानियाँ भी लगभग इसी प्रकार की हैं। शराब की भी बड़ी बहिन अब हेरोइन, हशीश चल पड़ी है। यह उत्साही नवयुवकों में अधिक प्रचलित हुई है। इसके दुष्परिणाम तो इतने बढ़े-चढ़े हैं कि जो इसके कुचक्र में फँसा, समझना चाहिये वह जीवित रहते हुये भी मृतकों की पंक्ति में जा बैठा। वह काम-धाम करने की स्थिति में भी नहीं रहता। एक प्रकार से अर्ध-मूर्छित, अर्ध-विक्षिप्त जैसा स्तर बनाये विनाश का गर्त तलाशता फिरता है। अनेक रोगों का शिकार होने और आत्महत्या जैसे दुष्कर्म करने में प्रायः नशेबाजों की संख्या ही बढ़ी-चढ़ी रहती है।

इन दिनों आहार-विहार के लगभग सभी क्षेत्रों में विकृतियाँ घुसती चली जा रही हैं। इसकी ओर से सतर्क न रहने और समय रहते उनका सुधार न करने का कारण ही है कि लोग अशक्त, रुग्ण रहते और अकाल मृत्यु मरते देखे जाते हैं। यदि इन स्वास्थ्य विघातिनी आदतों को अपनी जीवनचर्या में प्रवेश न करने दिया जाय तो हर व्यक्ति गरीबों में रहते हुये भी स्वस्थ और समर्थ बना रह सकता है।

❑ ❑

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

क्या खायें ? कैसे खायें ?

आहार की उपयोगिता और उसके मूल-तत्व

आहार का मुख्य उद्देश्य शरीर की क्षीणता अथवा घिसाई की पूर्ति करना और उसकी वृद्धि करना भी है। छोट-सा शिशु जिसका भार जन्म-समय ३-४ सेर होता है, धीरे-धीरे बढ़कर दो-डेढ़ मन का युवक बन जाता है, तो यह आहार के द्वारा ही सम्भव होता है। मनुष्य का शरीर प्रति क्षण कुछ-न-कुछ कार्य करता रहता है, गहरी नींद में सो जाने पर भी फेंफड़े और हृदय अपना काम करते रहते हैं। इस कार्य के फलस्वरूप शरीर के कोषाणु (सेल) निरन्तर टूटते रहते हैं, जिसकी मरम्मत अथवा बदलने का भार हमारी जीवनीशक्ति पर रहता है। यह कार्य आहार के माध्यम से ही किया जाता है। यदि किसी कारणवश शरीर को समय पर उपयुक्त आहार न मिले तो थकावट और कमजोरी मालूम पड़ने लगती है और यदि निरन्तर कितने ही दिन तक ऐसा क्रम चले तो शरीर दुर्बल, क्षीण हो जाता है और अन्त में प्राणों का धारण कर सकना भी कठिन हो जाता है।

आहार से हमारे शरीर में गर्मी अथवा ताप की भी उत्पत्ति होती है, जो कि हमारे जीवन का लक्षण माना जाता है। मनुष्य के मृत्युकाल में ताप की परीक्षा की जाती है। जब तक शरीर के किसी अंग में गर्मी जान पड़ती है, तब तक जीवन की आशा की जाती है। पर जब शरीर सर्वथा ठण्डा पड़ जाता है, भीतर-बाहर कहीं भी जरा भी गरमाहट प्रतीत नहीं होती, तो उसे 'मुर्दा' कह दिया जाता है। यह शरीरस्थ ताप हमारी जठरानल में खाद्य पदार्थों के ईंधन की तरह जलने से ही पैदा होता है और इसी से हम कार्यक्षम बने रहते हैं।

मनुष्य का भोजन प्राकृतिक दृष्टि से फल, शाक और अन्न माना गया है। पर अनेक मनुष्य परिस्थितिवश माँस-मछली आदि का भी खाद्य के रूप में उपयोग करते हैं। तीसरी श्रेणी में दूध, दही, घी आदि की गणना की जा सकती है। यह भी यद्यपि प्राणिज पदार्थ हैं, पर इनको प्राप्त करने में न तो किसी का वध करना पड़ता है और न अंग-भंग होता है। वरन् दूध देना प्रत्येक मादा प्राणी की स्वाभाविक प्रवृत्ति है। शैशवावस्था में प्राणी का पोषण दूध से ही होता है और बाद में भी यदि विधिपूर्वक रहा जाय तो दूध के आधार पर पर्याप्त समय तक रहा जा सकता है। इस दृष्टि से कुछ लोग दूध भी पूर्ण भोजन मान लेते हैं।

भोजन के पाँच मुख्य उपादान

इन खाद्य वस्तुओं का वैज्ञानिक प्रणाली से विश्लेषण करने पर जो मुख्य पदार्थ पाये गये हैं, उनको पाँच भागों में विभाजित किया गया है—१. प्रोटीन या माँस जातीय पदार्थ, २. चिकनाई या चर्बी जातीय पदार्थ, ३. कार्बोहाइड्रेट या श्वेतसार जिसका शर्करा में रूपान्तर हो जाता है। ४. क्षार अथवा विभिन्न खनिज लवण। पाँचवाँ पदार्थ जल है जो अनेक खाद्यों में आधे या पौन भाग से भी अधिक होता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से इन सब पदार्थों का हमारे शरीर में एक नियत परिमाण में रहना आवश्यक है। इनमें घटा-बढ़ी होने से ही विभिन्न प्रकार के रोगों का सूत्रपात होता है। इसलिये हमको अपने आहार का निश्चय करते समय ऐसी वस्तुओं को चुनना चाहिये, जिससे ये पाँचों तत्व हमारे शरीर की विशेष परिस्थिति, हमारे काम-धन्धे और हमारी जन्मजात प्रकृति की दृष्टि से उचित परिमाण में प्राप्त हो सकें।

यद्यपि ये पाँचों तत्व प्रत्येक पदार्थ में न्यूनाधिक मात्रा में मिलते हैं, पर कोई पदार्थ ऐसा नहीं है, जिसके अकेले के सेवन करने से शरीर को सब तत्व उचित मात्रा में मिल सकें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ लोग दूध को ऐसा भोजन बतलाते हैं। यह बात छोटी आयु के लिये तो ठीक मानी जा सकती है पर बड़ी उम्र के परिश्रमशील व्यक्ति का पोषण अकेले दूध से नहीं हो सकता। इतना ही नहीं दूध कितने ही लोगों के लिये उनकी प्रकृति के अनुकूल सिद्ध नहीं होता। इसलिये इस बात की आवश्यकता होती है कि दैनिक भोजन की वस्तुओं का ऐसे ढंग से चुनाव किया जाय, जिससे हमारे शरीर को प्रत्येक तत्व उचित मात्रा में मिल जाय और उससे शरीर की वृद्धि और घिसाई की पूर्ति ठीक ढंग से होती रहे। यहाँ यह बात अवश्य ध्यान में रखनी चाहिये कि मनुष्य के शरीर की वृद्धि का समय लगभग २५ वर्ष की आयु तक माना गया है। उस समय तक ऐसे पदार्थों की विशेष रूप से आवश्यकता पड़ी है, जिनमें 'प्रोटीन' (माँस बढ़ाने वाले तत्व) और स्नेह जातीय पदार्थ अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में हों। जैसे-जैसे आयु बढ़ती जाय मनुष्य को शरीर-वृद्धि करने वाले पदार्थों का प्रयोग कम करके शरीर के ताप को स्थिर रखने वाले और क्षार जातीय पदार्थों का सेवन अधिक करने लगना चाहिये।

इस प्रकार उपयुक्त आहार उचित मात्रा में ग्रहण करना ही स्वास्थ्य का मूल-मन्त्र है। पर खेद है कि इस तरफ ध्यान देने वाले व्यक्ति बहुत कम संख्या में दिखलाई पड़ते हैं। अधिकांश लोग तो जिव्हा के स्वाद को ही भोजन की एकमात्र कसौटी मानते हैं। बहुत-से अन्य व्यक्ति बढ़िया, कीमती, पौष्टिक समझे जाने वाले पदार्थों का अधिक मात्रा में सेवन करना स्वाथ्य और शक्ति की दृष्टि से लाभजनक समझते हैं। पर ये दोनों ही दृष्टिकोण भ्रमपूर्ण हैं। स्वास्थ्य-रक्षा के लिये वही भोजन उत्तम माना जा सकता है जो सादा और ताजा हो, जिसके जीवन तत्वों को अनुचित रंधन-क्रिया द्वारा नष्ट न किया गया हो और जिसमें उपर्युक्त पाँचों तत्व अपनी अवस्था और आवश्यकतानुसार प्राप्त हो सकें। इसी को विचारशील व्यक्तियों ने सन्तुलित आहार का नाम दिया है और इसी से हम स्वस्थ और सुखी जीवन व्यतीत कर सकते हैं।

भोजन में पंच महाभूत और षटरस का सिद्धान्त

जिस प्रकार पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने शरीर का निर्माण करने वाले तत्वों को 'प्रोटीन', 'कार्बोज' आदि पाँच विभागों में बाँटा है, उसी प्रकार भारतीय शरीरशास्त्रवेत्ताओं ने पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश, इन पंच महाभूतों के आधार पर षट-रसों का सिद्धान्त निकाला है। उनका कहना है कि प्रत्येक पदार्थ में पंचमहाभूतों का परिमाण न्यूनाधिक होता है, जिसके प्रभाव से उसके स्वाद और गुणों में अन्तर पड़ जाता है। जिन रसों में जिन-जिन तत्वों की प्रधानता होती है, उनका विवरण इस प्रकार दिया गया है—

(१) मधुर रस में पृथ्वी और जल का भाग अधिक रहता है और भोजन में इसकी अधिकता होने से सातों धातुओं की वृद्धि होती है। यह रस पौष्टिक है और दूध को बढ़ाने वाला है। (२) अम्ल या खट्टे रस में पृथ्वी और अग्नि का आधिक्य होता है और यह अग्निवर्धक, पाचक, रुचिकारक, कफ-पित्त और रक्त-पित्त उत्पन्न करने वाला है। (३) लवण रस अर्थात् नमकीन में जल और अग्नि तत्व का आधिक्य होता है। यह शिराओं (रक्त नलिकाओं) के तनाव और खिंचाव दूर करता है और स्वेद रन्ध्रों को खोलकर पसीना लाता है। यह अग्निवर्धक, तीखा तथा भेदक भी होता है। (४) कटुरस में वायु और आकाश की अधिकता रहती है। यह रुचि उत्पन्न करने वाला, कृमि, तृष्णा, विष, कुष्ठ, मूर्छा, दाह का नाश करता है। यह हल्का और बुद्धि बढ़ाने वाला होता है। (५) तिक्त या चरपरे रस में वायु और अग्नि की प्रधानता होती है। यह मलरोग, गलरोग, कोढ़ और सूजन को नष्ट करने वाला होता है और पाचक रुचिकर और शोधक है। (६) कषाय या कसैला रस वायु तथा पृथ्वी तत्व की अधिकता वाला होता है। यह पित्त और कफ का नाश करने वाला, घाव को भरने वाला, ठण्डा और चमड़े को तथा वर्ण को सुन्दर बनाने वाला होता है।

मनुष्य का शरीर पंच महाभूतों से निर्मित हुआ है और जब तक ये पाँचों उचित परिमाण में रहते हैं, तब तक आरोग्य भी बना रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब अनुचित रूप से घट-बढ़ हो जाती है, तभी रोग का सूत्रपात होता है। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सकों ने मिट्टी, जल, सूर्य-ताप आदि द्वारा चिकित्सा की विधियाँ निकाली हैं।

भारतीय विद्वानों के मतानुसार यदि मनुष्य इन छः रसों का उचित मात्रा में सेवन करता रहे तो उसका स्वास्थ्य स्थिर रह सकता है और वह विभिन्न रोगों के आक्रमण से भी सुरक्षित रह सकता है। पर यह सिद्धान्त भली प्रकार समझकर काम में लाने से ही लाभ उठाया जा सकता है। उदाहरणार्थ—आयुर्वेद शास्त्र में पुराना चावल, जौ, गेहूँ, मूँग और शहद तथा खाँड की ही मधुर-रस में गणना की है। पर जो लोग इस बात का ध्यान न रखकर पेड़ा, बर्फी, लड्डू, इमरती, जलेबी आदि मिठाइयों से पेट भरने लगेंगे वे तो लाभ की बजाय अपने स्वास्थ्य को चौपट ही करेंगे। इसी प्रकार तिक्त या चटपटे रस में, सोंठ, पीपल और लहसुन की गणना की गई है। पर जो लोग भोजन में लाल मिर्चों को झोंककर उसी को स्वादिष्ट समझने लगेंगे, वे भी अवश्य किसी-न-किसी रोग से ग्रसित होंगे। इस बात को समझकर आयुर्वेद में जहाँ इन रसों के गुणों को लिखा है, वहाँ यह भी बता दिया गया है कि यदि मधुर रस का परिमाण में अधिक सेवन किया जायेगा तो उससे श्वाँस, वमन, कण्ठ रोग, रक्त-विकार और मधुमेह आदि रोगों की उत्पत्ति हो सकती है। खट्टे रस के अधिक सेवन से दाँत के रोग, कण्ठ तथा छाती में दाह, नाक, कान आदि अंगों से रक्त बहना आदि खराबियाँ पैदा होती हैं। अधिक खटाई खाने से नेत्ररोग पैदा होना तो अपने अनुभव की बात है। अधिक नमक का सेवन करने से खुजली, कोढ़, तृष्णा, दुर्बलता और सन्धियों की शिथिलता पैदा होती है। यह नपुंसकता का उत्पन्न करने वाला भी होता है। कटु रस के अधिक सेवन से धातुक्षय और वातरोग होता है। चरपरे की अधिकता से प्यास की अधिकता होती है, मूर्छा, कँपकँपी होना, कमर में पीड़ा आदि पैदा होते हैं। कषैले की अधिकता से वायु का अवरोध, पेट फूलना, हृदय की कमजोरी आदि होते हैं। इसलिये सब रसों के पदार्थों का उचित मात्रा में स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से ही सेवन करना लाभदायक होता है।

आहार के दो महत्त्वपूर्ण तत्व विटामिन और क्षार

ऊपर आहार के जिन पाँच तत्वों का जिक्र किया गया है, वे स्थूल रूप में सभी खाद्य पदार्थों में देखे जा सकते हैं। पर इनके सिवा आधुनिक समय में एक और तत्व का पता लगाया गया है, जिसको अंग्रेजी में विटामिन कहा गया है। वैज्ञानिकों का मत है कि यह तत्व एक दृष्टि से "खाद्य-प्राण" कहा जा सकता है। यद्यपि उसे स्थूल रूप में नहीं देखा जा सकता, पर प्रभाव की दृष्टि से उसका पता सहज में लगाया जा सकता है। यह प्रत्येक ताजा फल और तरकारी में अधिक मात्रा में पाया जाता है और जैसे-जैसे वह बासी पड़ता जाता है विटामिन का परिमाण घटता जाता है। इसी प्रकार फल और तरकारी को यदि आग पर पकाया जाय तो विटामिनों का बहुत-सा अंश नष्ट हो जाता है। इस प्रकार विटामिन खाद्य पदार्थ के प्राण या जीवन-तत्व की तरह होता है, जिसके नष्ट हो जाने पर पदार्थ बाहर से तो जैसा का तैसा दिखाई देता है पर उसका गुण बहुत कुछ जाता रहता है।

विटामिन का मुख्य कार्य हमारे शरीर के विभिन्न जीवन-रसों में सतेजता उत्पन्न करना होता है। इसके अभाव से शरीर में कई तरह के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अभी तक लगभग बीस प्रकार के विटामिनों का पता लगाया जा चुका है, पर मानव शरीर पर जिन विटामिनों का विशेष प्रभाव पड़ता है और रोगों को दूर करने में जिनसे अधिक सहायता मिलती है उनकी संख्या पाँच ही है और उनको (१) 'ए' (२) 'बी' (३) 'सी' (४) 'डी' और (५) 'ई' के नाम से पहिचाना जाता है।

विटामिन 'ए'

यह पौधों की पत्तियों पर सूर्य का प्रभाव पड़ने से उत्पन्न होता है। पत्तियों से इसका कुछ अंश फल और बीजों में भी पहुँच जाता है। जो पशु हरा चारा खाते हैं, उनके दूध में यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काफी मात्रा में पाया जाता है। पालक, करमकल्ला (पातगोभी), मूली, गाजर, सलाद की पत्ती में विटामिन 'ए' अधिक मात्रा में मिलता है और जो व्यक्ति इन पदार्थों को ताजा रूप में व्यवहार करते हैं, उनके स्वास्थ्य को इससे बहुत लाभ पहुँचता है। शरीर की वृद्धि के लिये इसकी विशेष रूप से आवश्यकता पड़ती है। इसलिये जो बालक शुद्ध दूध और ताजा फल आदि पाते रहते हैं, उनकी वृद्धि शीघ्र होती है और स्वास्थ्य मजबूत रहता है। इससे हमारे ज्ञान तन्तुओं को बल मिलता है और आँखों, आँतों, फेफड़ों, मूत्राशय के ऊपर की झिल्ली की रक्षा होती है। निमोनिया, तपेदिक, पेचिश आदि बीमारियाँ भी इसकी कमी के कारण उत्पन्न हो जाती हैं। जिन बच्चों के शरीर में इसकी कमी होती है, उनको डाक्टर लोग 'काडलिवर आयल' का सेवन करने की सलाह देते हैं, जो एक समुद्री मछली से तैयार किया जाता है। दवा के रूप में उसका प्रयोग अच्छा बतलाया गया है तो भी वह इतना लाभदायक कदापि नहीं हो सकता, जितना शुद्ध दूध और ताजा फल। इसलिये हमको दूध मंदी आग पर थोड़ी देर ही पकाकर काम में लाना चाहिये और पत्तेदार तरकारियों को भी यथासम्भव कच्चा या कम पकाकर खाना चाहिये। आयुर्वेद में इसे "ओजवर्धनीय तत्व' कहा गया है।

विटामिन 'बी'

इसका निर्माण भी पौधों में होता है, पर यह उन तत्वों से उत्पन्न होता है, जो पृथ्वी और वायु से प्राप्त होते हैं। साथ ही एक अन्तर यह भी रहता है कि जहाँ विटामिन 'ए' पत्तों में, विशेषकर कोंपलों और फुनगियों में सबसे अधिक पाया जाता है, विटामिन 'बी' फलों और बीजों में विशेष रूप से मिलता है। यह भी शारीरिक वृद्धि के लिये आवश्यक है और साथ ही माँस-पेशियाँ, स्नायु और त्वचा के कार्यों में भी इससे सहायता मिलती है। गेहूँ, जौ, मक्का, हाथ से कूटा चावल, मटर, चना, गोभी, हरी तरकारियाँ, मूँगफली, अखरोट, नारियल आदि में यह पर्याप्त पाया जाता है। यह विटामिन कई प्रकार का होता है और इसके अभाव से भूख की कमी, थकावट, स्त्रियों के स्तनों में दूध की न्यूनता, बेरी-बेरी की बीमारी आदि शिकायतें पैदा हो जाती हैं। आयुर्वेद में इसे 'पोषणीय तत्व' कहा गया है और इसकी कमी से शरीर के विकास में भारी बाधा पड़ जाती है। हड्डियों के जोड़ों के अकड़ने या ठीक तरह न घूम सकने का कारण भी विटामिन 'बी' का अभाव होता है। जिन लोगों का आहार मुख्य रूप से मशीन द्वारा साफ किया चावल होता है, उनको बेरी-बेरी रोग का अधिक शिकार होना पड़ता है।

विटामिन 'सी'

इसका प्रभाव विशेष रूप से पाचन शक्ति पर पड़ता है। यह नारंगी, नीबू, टमाटर आदि में विशेष रूप से पाया जाता है। करमकल्ला, पालक, मूली, गाजर आदि में भी पर्याप्त मात्रा में मिल सकता है। यह आग पर पकाने से बहुत शीघ्र नष्ट हो जाता है। इसलिये इसकी प्राप्ति के लिये उपरोक्त पदार्थों को कच्चा या बहुत कम पकाकर ही खाना चाहिये। विटामिन 'सी' के अभाव से 'स्कर्वी' नामक बीमारी विशेष रूप से होती है, जिससे खून में दोष पैदा हो जाता है और मसूढ़ा फूलना, जोड़ों का कड़ा पड़ जाना, दाँत कमजोर हो जाना, पायरिया आदि बीमारियाँ उत्पन्न होने लगती हैं। विटामन 'सी' की कमी से स्वास्थ्य निर्बल पड़ जाता है और रोगों को रोकने की शक्ति बहुत घट जाती है। फल और तरकारियों के अतिरिक्त मूँग, मोंठ, चना, मटर आदि अन्नों को भिगोकर और उनमें किल्ला या अंखुआ निकालकर खाने से भी विटामिन 'सी' पर्याप्त मात्रा में मिल सकता है।

विटामिन 'डी'

इसका सम्बन्ध विशेष रूप से हड्डियों से है और जिन बच्चों के शरीर में इसका अभाव होता है, उनकी हड्डियाँ मुलायम होकर झुक जाती हैं और उन्हें 'सूखा' नामक रोग हो जाता है। बड़ी आयु के व्यक्तियों को भी विटामिन 'डी' के अभाव में संधिवात और मधुमेह जैसे रोग हो जाते हैं, सीना सिकुड़ जाता है, तोंद बाहर निकल आती है। यह विटामिन सब फलों और तरकारियों में नहीं पाया जाता है। कुछ पत्ते के सागों, पीली गाजर, पपीता, नारियल, टमाटर में यह पाया जाता है। पर इसकी प्राप्ति का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सब से मुख्य स्रोत सूर्य की धूप है। जो लोग नंगे बदन सूर्य की धूप में रहते हैं उनको यह स्वतः ही मिल जाता है। बच्चों का सूखा रोग और दाँतों का देर से निकलना, देर से चलने लगना, हाथ-पैर पतले होकर पेट का बाहर निकल आना आदि खराबियाँ सूर्य प्रकाश के अभाव से ही होती हैं। ऐसे बच्चों को यदि तेल की मालिश करके सुबह धूप में लिटाया जाय तो उनका स्वास्थ्य शीघ्र सुधर सकता है।

विटामिन 'ई'

इसका प्रभाव पुरुषों की काम शक्ति और स्त्रियों की सन्तानोत्पादन शक्ति पर पड़ता है। जिन स्त्रियों में इसका अधिक अभाव होता है, वे प्रायः बन्ध्या हो जाती हैं। मानसिक शक्ति पर भी इसका प्रभाव बहुत हानिकारक पड़ता है। यह गेहूँ के अंकुर में बहुत अधिक रहता है। इसके सिवा हरे शाक, ताजा दूध, गुड़ में भी पाया जाता है। आयुर्वेद में इसे 'बाजीकरणीय तत्व' कहा गया है और मेवा, गोखरू, ताल मखाना, बादाम पाक, च्यवनप्राश जैसे खाद्यों और औषधियों में उसे बताया गया है।

यद्यपि विटामिन स्वयं कोई दवा या खाद्य नहीं हैं, पर उनकी कमी से हमारे शरीर में विभिन्न प्रकार की बीमारियाँ या निर्बलतायें अवश्य पैदा हो जाती हैं। इनको प्राप्त करने का सबसे सहज तरीका यही है कि हम अपने भोजन को यथासम्भव प्राकृतिक रूप में ग्रहण करें, उसमें ज्यादा, फेर-बदल न करें। साथ ही ताजा शाक और साधारण फलों को भी भोजन में शामिल करते रहें। शाकों और हरी तरकारियों में भी ज्यादा ध्यान इस बात का रखें कि उनमें कुछ चीजें ऐसी हों, जो कच्ची ही खाई जा सकें। इसके लिये सलाद, धनिया, पोदीना, करमकल्ला आदि की पत्तियाँ और कुछ फलों के टुकड़ों को मिलाकर और उनमें जरा-सा नमक तथा नीबू आदि डालकर तीन-चार छटाँक भोजन के साथ खाना बहुत लाभदायक माना गया है।

लवण या क्षार

लवण से अधिकांश लोग नित्य भोजन के साथ मिलाये जाने वाले साधारण नमक का ही अभिप्राय समझते हैं। पर वैज्ञानिकों ने मनुष्य के खाद्य पदार्थों में लगभग २० प्रकार के भिन्न-भिन्न लवण ढूँढ़ निकाले हैं, जो हमारे शरीर को सुरक्षित रखने में बहुत अधिक मदद पहुँचाते हैं। इन लवर्णो में सबसे मुख्य केल्सियम है, जो एक प्रकार का चूना होता है, जिससे हमारी हड्डियाँ और दाँत आदि बनते हैं। यह मुख्यतः दूध से प्राप्त होता है। इसके सिवाय पोटेशियम, सोडियम, लोहा, मेगनेशियम, गन्धक, आयोडीन आदि भी आवश्यक माने गये हैं। लोहे से हमारे रक्त का रंग लाल होता है और उसकी शक्ति बढ़ती है। गन्धक पाचन शक्ति को ठीक करता है। आयोडीन की कमी से गले में घेंघा आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

ये समस्त क्षार हरी तरकारियों और पत्तीदार शाकों में काफी मात्रा में रहते हैं। पर जो लोग अज्ञानवश या स्वाद के ख्याल से तरकारियों को उबालकर उनका पानी फेंक देते हैं, वे सब क्षारों को भी नाली में बहा देते हैं और इस प्रकार अपने शरीर में रोगों को बुलाते हैं। ये लवण अनाजों में भी होते हैं, पर ऊपरी छिलके में ही पाये जाते हैं, जिसे अधिकांश लोग चलनी से छानकर फेंक देते हैं जानवरों को खिला देते हैं। जो लोग स्वस्थ जीवन व्यतीत करने के अभिलाषी हैं उनको इन आदतों को छोड़ देना चाहिये। शाकों का नरम छिलका फेंका न जाय और इसी तरह गेहूँ में से चोकर को न निकाला जाये। गेहूँ तथा अन्य अनाजों को पहले ही साफ कर लेना उचित है। पर पिसने के बाद उनके चोकर को अलग करना ठीक नहीं होता।

भोजन पकाना और रसोईघर की व्यवस्था

भोजन की सामग्री को किस प्रकार और किस रूप में पकाया जाय, यह भी एक महत्त्वपूर्ण विषय है। आधुनिक समय में अनेक विद्वानों ने यह खोज की है कि मनुष्य को पका हुआ भोजन नहीं करना चाहिये। पकाने से प्रत्येक खाद्य पदार्थ का जीवन-तत्व नष्ट हो जाता है या घट जाता है और वह किसी न किसी रूप में लाभ के साथ थोड़ी बहुत हानि भी करता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह तो माना जा सकता है कि मानवीय सभ्यता के आरम्भिक काल में मनुष्य के भोजन का एक बड़ा अंश जंगलों से प्राप्त होने वाले फल, फूल, पत्ते और कन्द आदि थे और उनको बिना पकाये ही काम में लाया जाता था। अब भी अधिकांश जंगली अवस्था में रहने वाले व्यक्ति भोजन को पकाने का कार्य बहुत कम करते हैं। परन्तु हजारों वर्षों के अभ्यास से अब सभ्य-समाज में रहने वाले मनुष्यों की पाचन-शक्ति ऐसी नहीं रह गई है कि वह सब प्रकार के कच्चे भोजन को स्वाभाविक रीति से पचा सके। इसका एक अन्य कारण यह भी है कि अब परिस्थितिवश मनुष्य फलों और पत्तों के बजाय अन्न का प्रयोग विशेष रूप से करते हैं। इन अन्नों का श्वेतसार इस प्रकार के आवरण से ढका रहता है, जिससे हमारे पाचक यन्त्रों के रस का उस पर अधिक प्रभाव नहीं पड़ता। भोजन को पकाने से वह आवरण फट जाता है और श्वेतसार मुलायम होकर ऐसी स्थिति में आ जाता है, जिससे वह हमारे आमाशय में शीघ्र ही पच सकता है।

भोजन के सार को सुरक्षित रखना आवश्यक है

फिर भी जैसा आजकल प्रायः देखा जाता है, भोजन को पकाने का यह तात्पर्य नहीं कि उसे बहुत देर तक पकाया, सेका और भूना जाय। खेद का विषय है कि इस सम्बन्ध में अधिकांश लोग स्वास्थ्य सम्बन्धी बातों का कुछ भी ध्यान नहीं रखते और केवल स्वाद की दृष्टि से भोजन को पकाते हैं। वे समझते हैं कि बहुत-सा घी लगाने, खूब मसाले डालने, बढ़िया छौंक लगाने (बघारने) से भोजन स्वादिष्ट और उत्तम बन सकता है। इस दृष्टि से वे तरह-तरह के व्यंजन और नमकीन तथा मीठे पदार्थ ऐसे बनाते हैं, जिनका जीवन-तत्व बहुत कुछ निकल जाता है और जिनको पचाने में आमाशय को बड़ी कठिनाई होती है। खासकर शाकों को जिस प्रकार उबालकर, भूनकर तथा तलकर बनाया जाता है और उनमें अनेक प्रकार के ढेरों मसाले डाले जाते हैं, उससे उनका सारा लाभजनक अंश नष्ट हो जाता है और केवल फोक या छूँछ ही हमारे खाने में आती है। जैसा हम ऊपर बतला चुके हैं, ये शाक मानव शरीर के लिये बहुमूल्य क्षारों और विटामिन के भंडार होते हैं और उन्हीं के द्वारा हमारा स्वास्थ्य सुदृढ़ और स्थायी बनता है। शाकों को उबालने से ये सब तत्व पानी में घुल जाते हैं, जिसे आमतौर से फेंक दिया जाता है। इस प्रकार अज्ञानवश हम स्वयं अपनी बहुत बड़ी हानि करते रहते हैं और स्वास्थ्य को नष्ट करने वाले कार्य करके बीमारी के बीज बोते रहते हैं।

मन्दी आँच पर पकाने का महत्त्व

भोजन को पकाने में सबसे अधिक सावधानी की बात यह है कि उसे मन्दी आँच पर पकाया जाय। तेज आँच में भोजन पकाने से विटामिन तो अधिकांश में नष्ट हो ही जाते हैं, क्योंकि वे अधिक ताप को सहन नहीं कर सकते। प्राचीन समय में हमारे यहाँ प्रायः उपलों और कण्डों से भोजन पकाने का रिवाज था, जिनकी अग्नि स्वभावतः मन्दी होती है। पर अब प्रायः लकड़ी से काम लिया जाता है और अनेक लोग पत्थर के कोयलों का इस्तेमाल करते हैं, जिनकी आँच बहुत तेज होती है। कुछ लोग स्टोव को प्रयोग में लाते हैं जिसमें मिट्टी के तेल की तीव्र लौ निकलती है। यह ठीक है कि ये सब कार्य सुविधा, खर्च और समय की बचत की दृष्टि से किये जाते हैं, पर उसमें हम उस स्वास्थ्य-रक्षा की सबसे बड़ी बात को भूल जाते हैं, जिसके लिये वास्तव में सब प्रकार के उद्योग-धन्धे, कमाई और खर्च किया जाता है। हम इस बात पर तनिक भी ध्यान नहीं देते कि यदि इस प्रकार के भोजन से हमारे शरीर को उचित शक्ति प्राप्त न हो सकी और हम आन्तरिक अथवा बाह्य दृष्टि से निर्बल होकर तरह-तरह के रोगों के शिकार बनते रहे तो अन्त में हम घाटे में ही रहेंगे। बीमारी में धन का खर्च होने के सिवाय उतने दिन तक बेकार रहने के कारण हम कुछ भी अर्थोपार्जन न कर सकेंगे और फिर शरीर और मन में क्षीणता उत्पन्न होकर हमारी जीवनी शक्ति में भी अवश्य कमी पड़ जायेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाप पर भोजन पकाना

भोजन के तत्व को सुरक्षित रखने के लिये एक सरल विधि यह है कि उसे सीधा आग पर पकाने के बजाय भाप पर पकाया जाय। रोटी तो आग पर ही पकानी होती है, पर दाल, चावल और हर तरह की तरकारी भाप के ऊपर बहुत अच्छी तरह पक जाती है और उसका तत्व अधिकांश में सुरक्षित रहता है। इसके लिये बाजार में एक 'कुकर' बिकता भी है, जिसमें अलग-अलग चीजों को पकाने के लिये तीन-चार छोटे-छोटे पीतल के डिब्बे और एक लम्बा बर्तन होता है जिसमें उन सब डिब्बों को एक के ऊपर एक जमाकर रख दिया जाता है। उस बड़े डिब्बे में पाव भर के करीब पानी डालकर नीचे अँगीठी जला दी जाती है, जिससे भाप उठती है और सब चीजें उसी की गर्मी से पक जाती हैं। इसमें साग केवल उबलते हैं। उनमें ऊपर से नमक-मिर्च अपनी रुचि के अनुसार मिला लिया जाता है। यह भोजन स्वास्थ्य के लिये लाभदायक और सारयुक्त होता है। पर जिन लोगों की जीभ को खूब मसालेदार, चटपटे साग-तरकारियों की आदत पड़ गई है, उनको ये मुश्किल से पसन्द आते हैं।

गेहूँ और चावल का मोटा अंश फेंकना नहीं चाहिये

गेहूँ की रोटी बनाने में बहुत महीन आटा काम में लाना ठीक नहीं होता। एक तो बिजली से चलने वाली चक्की में पिसा आटा वैसे ही बहुत कुछ भुना हुआ-सा हो जाता है, फिर यदि उसे बारीक चलनी से छानकर तमाम चोकर को निकाल दिया जाय तो वह सर्वथा सत्त्वहीन और निकम्मा हो जाता है। ऐसे आटे की रोटियाँ देर से पचती हैं और उनका लाभ भी बहुत कम हो जाता है। गेहूँ के समस्त लाभदायक क्षार चोकर में ही रहते हैं, उन्हें अलग करके खाली मैदा को खाना जान-बूझकर अपने पैरों में कुल्हाड़ी मारने के समान है। आटा मोटा ही पिसाना चाहिये और उसे मोटी चलनी से छानना चाहिये, जिससे केवल तिनका और भूसी निकल जाय, चोकर किसी हालत में आटे से अलग नहीं करनी चाहिये। इस दृष्टि से बड़ी मिलों में पिसा हुआ बहुत बारीक और सफेद आटा प्रयोग में लाना अत्यन्त हानिकारक और स्वास्थ्य को नष्ट करने वाला होता है।

यही बात चावलों के विषय में है। आजकल चावल का छिलका बड़े कारखानों में मशीन द्वारा अलग किया जाता है, जो भूसी के साथ ही चावल के ऊपर लगे लाल पर्त को भी घिस डालती हैं। यह लाल अंश ही चावल का सबसे पौष्टिक भाग होता है और उसी में कई प्रकार के लाभदायक क्षार और विटामिन 'बी' पाया जाता है। इतना ही नहीं आजकल शौकीन खाने वाले तो पालिशदार चमकीले चावल खाना पसन्द करते हैं, जो देखने में मोती जैसे लगें। पर इससे खाने वाले का स्वास्थ्य जो चौपट हो जाता है उसका इन लोगों को कुछ भी ध्यान नहीं होता। इसलिये जो व्यक्ति चावल का स्वाभाविक लाभ उठाना चाहते हैं, उनको यथासम्भव हाथ का कुटा चावल काम में लाना चाहिये और उसका माँड या पानी हरगिज अलग नहीं करना चाहिये, क्योंकि चावल का पौष्टिक भाग उसी में आ जाता है। यही ध्यान दालों के विषय में भी रखना चाहिये। दालों को छिलके समेत खाना ही लाभजनक होता है। जो लोग स्वाद की खातिर छिलका निकाली दाल खाते हैं, वे कब्ज आदि के शिकार हो जाते हैं। मूँग को साबुत बनाना बहुत अच्छा होता है। वह खाने में भी स्वादिष्ट होती है। दालों का छिलका साथ रहने से उनके पचने में सहायता मिलती है और दस्त भी साफ होता है क्योंकि चावल कुछ अंशों में कब्ज करने वाला माना जाता है, इसलिये उसके साथ छिलके की दाल ही ठीक रहती है।

दूध को अधिक पकाना हानिकारक है, इससे उसके समस्त बहुमूल्य विटामिन नष्ट हो जाते हैं। इसीलिये समझदार व्यक्ति सदा से एक उबाल का दूध पीना अच्छा बताते रहे हैं। दूध को यथासम्भव मन्दी आग पर पकाना चाहिये अथवा भाप द्वारा पकाना चाहिये, जिसका वर्णन ऊपर किया जा चुका है। घण्टों तक कढ़ाई में आग पर रखा हुआ और मोटी मलाई पड़ा दूध, जिसे अधिकांश लोग बढ़िया समझते हैं, स्वास्थ्य की दृष्टि से किसी काम का नहीं होता। दूध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सदैव यथासम्भव ताजा ही पीना चाहिये और उसे कम से कम गरम करना चाहिये। वैद्यक शास्त्र में धारोष्ण दूध पीने की बड़ी प्रशंसा की है और निस्सन्देह दूध का सच्चा लाभ उसी दशा में मिल सकता है। पर यह तभी सम्भव है, जबकि गाय अपने घर में पाली जाये। बाजारू दूध की शुद्धता का कोई भरोसा नहीं किया जा सकता। साधारण दूध वाले रोगी, दुर्बल पशुओं का दूध भी बेचते हैं और उसे निकालने तथा बर्तनों में रखने में यथोचित सफाई का कुछ भी ध्यान नहीं रखा जाता। इससे उसमें दूषित कीटाणुओं के उत्पन्न हो जाने की शंका रहती है जो हैजा, दस्त, पेचिश, चेचक आदि रोग उत्पन्न कर सकते हैं। इसलिये बाजार के दूध को आग पर दस-पन्द्रह मिनट रखकर उबाल लेना सुरक्षित होता है।

रसोई का स्थान व पात्र

रसोईघर पृथक् हो या किसी कमरे का भाग ही हो, कच्चा हो या पक्का, उसमें सफाई का ध्यान रखना अत्यावश्यक है। रसोई बनाने के स्थान को नित्य धोना या साफ मिट्टी से पोतना चाहिये। उसमें वायु के लिये खिड़कियाँ रखी जायँ और धुँआ निकालने का भी उचित प्रबन्ध हो। बन्द स्थानों में रसोई बनाने से बनाने वाले को बहुत कष्ट होता है और अनेक बार आँखों पर उसका बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है।

रसोई के बर्तन किसी भी धातु के क्यों न हों, उनका बिल्कुल साफ रखना आवश्यक है। ताँबे और पीतल के बर्तनों में कलई करा ली जाय। यथासम्भव ताँबे के बर्तन को खाना पकाने का काम में लाना ही नहीं चाहिये। घी रखने के लिये मिट्टी व काँच या अल्यूमिनयम के पात्र ठीक रहते हैं। पीतल, काँसे आदि के बर्तनों में रखा घी दो-चार दिन में नीले रंग का और हानिकारक हो जाता है।

रसोई बनाने वाले के वस्त्रों की स्वच्छता का भी विशेष ध्यान रखना चाहिये। अनेक स्थानों में देखा गया है कि रसोईदार की जाति का तो बहुत ध्यान रखा जाता है, पर उसके कपड़े सदैव ऐसे गन्दे रहते हैं कि जिनको यदि स्वच्छताप्रिय मनुष्य देख ले तो उसके बनाये भोजन को हाथ भी न लगावे। अच्छा तो यही है कि इस कार्य को घर की स्त्रियाँ अपने हाथों से ही करें और भोजन की उत्तमता, स्वच्छता, स्वादिष्ट होने का पूरा ध्यान रखकर प्रेमपूर्वक घर वालों को भोजन करावें। समझदार माता या पत्नी आपके भोजन के हर दृष्टि से लाभदायक और निर्दोष होने का जितना ध्यान रख सकती है उतना कोई और नहीं रख सकता। यदि परिवार की जनसंख्या अधिक होने से रंधन-कार्य का भार अधिक हो और घर की परिस्थिति भी उच्च स्तर की हो तो फुटकर कामों के लिये नौकर से भी सहायता ली जा सकती है, पर रसोई का काम पूर्णतः नौकरों पर छोड़ देना और स्वयं उसकी देखभाल न करना, प्रायः हानिकारक सिद्ध होता है।

भोजन का समय

सभी नित्य कर्मों को समय पर करना स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ी कल्याणकारी और सुविधाजनक प्रवृत्ति है। भोजन के सम्बन्ध में भी यह बात पूर्ण रूप से सत्य सिद्ध होती है। चाहे जब और चाहे जो खा लेने की आदत हानिकारक है और ऐसा मनुष्य कभी स्वस्थ नहीं रह सकता। यह बिल्कुल ठीक है कि बिना भूख लगे हर्गिज नहीं खाना चाहिये, जब मनुष्य को कड़ाके की भूख लगती है, उसी समय भोजन का सच्चा आनन्द प्राप्त हो सकता है। पर साथ ही यह भी आवश्यक है कि हमको अपना कार्यक्रम ऐसा बना लेना चाहिये कि नियत समय पर भूख लग आवे और हम उसी समय भोजन कर लें। हमने अनेक बड़े चिकित्सकों के लेखों में पेट सम्बन्धी व्याधियों के ऐसे रोगियों का उल्लेख पाया है कि जो वर्षों तक दवा करने पर भी ठीक न हो सके, पर जब वे नियत समय पर भोजन करने लगे तो उनकी बीमारी पूर्णतः दूर हो गई। इसलिये भोजन के समय को छोटी बात नहीं समझना चाहिये और सदैव समय पर भोजन करने की आदत डालनी चाहिये।

दिन में कितनी बार खाना चाहिये, यह प्रश्न भी प्रायः पूछा जाता है। इस सम्बन्ध में सब के लिये कोई एक-सा अपरिवर्तनशील नियम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो नहीं बतलाया जा सकता, पर प्रौढ़ अवस्था के व्यक्ति यदि दिन में दो बार भोजन करें—एक नौ-दस बजे के आसपास और दूसरा शाम के पाँच-छः बजे के लगभग, तो यह स्वास्थ्य के लिये उत्तम कहा जा सकता है। इस अवस्था में सुबह का जलपान अनावश्यक होता है। जिनको आदत हो गर्मियों में ठण्डाई आदि और जाड़ों में चाय आदि ले सकते हैं। हाँ, जो लोग दिन के बारह-एक बजे खाते हैं, वे सुबह किसी प्रकार का हल्का जलपान भी कर सकते हैं। आशय यही है कि नियत समय पर दो या तीन बार के सिवाय कोई खाने की चीज कभी मुख में नहीं डालनी चाहिये। जो लोग दो बार पूरा भोजन करते हैं और दिन भर में दो-तीन बार चाय या जलपान के नाम पर काफी परिमाण में हलुवा, पकौड़ी, कचौड़ी, नमकीन, मिठाई आदि खाते रहते हैं, उनकी पाचन-क्रिया और स्वास्थ्य कभी उत्तम नहीं रह सकता। विशेष स्थिति के और साधन-सम्पन्न लोगों की बात छोड़ दी जाय, साधारण अवस्था के मनुष्यों को इस प्रकार कई बार खाना अवश्य हानिकारक सिद्ध होगा और युवावस्था में नहीं तो आयु बढ़ने पर, खासकर वृद्धावस्था में उनको इसका कुपरिणाम अवश्य सहन करना पड़ेगा।

भोजन के पदार्थ

हमारे प्राचीन ग्रन्थों में षट-रस भोजन का विधान है और विस्तारपूर्वक यह बतलाया गया है कि गुणों की दृष्टि से किस रस को पहले और किसको पीछे खाया जाये ? इसी प्रकार कितनी ही पुस्तकों में छप्पन प्रकार के व्यंजनों का जिक्र पाया जाता है। सम्भव है ये बातें किसी समय राजाओं और बड़े आदमियों के लिये सच रही हों, पर वर्तमान स्थिति को देखते हुये हम तो पाठकों को यही सलाह दे सकते हैं कि वे यथासम्भव प्रत्येक बार के भोजन में जहाँ तक हो सके कम प्रकार के पदार्थों का उपयोग करें। साधारण श्रेणी के व्यक्ति के यहाँ न तो प्रति दिन षट-रस के खाद्य पदार्थ बन सकते हैं और न वे प्रत्येक पदार्थ के ठीक-ठीक क्रम का पालन कर सकते हैं। बहुसंख्यक जनता को तो रोटी और एकाध प्रकार के दाल, शाक से ही काम चलाना पड़ता है। तो भी जिन लोगों को आदत पड़ जाती है, वे सदैव दो-चार तरह के अचार, मुरब्बे, चटनी, मिठाई आदि को भोजन में सम्मिलित करने की चेष्टा करते ही रहते हैं। हम स्वाद के लिये ऐसे पदार्थों का बहुत थोड़ी मात्रा में प्रयोग करने का विरोध तो नहीं करना चाहते, पर यह स्पष्ट है कि स्वास्थ्य की दृष्टि से भोजन में अधिक प्रकार के पदार्थों का मिश्रण होना हितकारी नहीं है। ऐसा करने से प्रायः एक-दूसरे से विरुद्ध प्रकृति के पदार्थ एक साथ खा लिये जाते हैं, जिससे अनेक बार हानि उठानी पड़ती है। हम यह नहीं कहते कि विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों का सेवन न किया जाय, पर उनको प्रत्येक बार के भोजन में बदलकर काम में लाया जा सकता है। एक बार में दो-तीन प्रकार के खाद्य पदार्थों का ग्रहण करना अधिक हितकर होता है। विशेष अवसर पर होने वाले उत्सवों, विशिष्ट त्यौहारों, विवाह-शादी के अवसर पर होने वाली दावतों पर इस नियम को भंग करना पड़ सकता है, पर उस समय भी जो लोग सावधान रहकर थोड़ा खाने का ध्यान नहीं रखते उनको बाद में कष्ट उठाना पड़ता है। ज्यादा दावत खाने वाले को बीमार भी अधिक होना पड़ता है।

भोजन का मुख्य उद्देश्य शरीर में प्रतिदिन होने वाली स्वाभाविक क्षीणता की पूर्ति करना होता है। इसलिये हमको भोजन में वे पदार्थ उतने ही परिमाण में ग्रहण करने चाहिये, जिनसे वह पूर्ति ठीक ढंग से हो सके। जिस प्रकार आवश्यकता से कम खाने वाला दुर्बल और शक्तिहीन हो जाता है, उसी प्रकार अधिक खाने से शरीर में भारीपन, अजीर्ण, अनपच आदि खराबियाँ पैदा होती हैं। इसलिये चाहे घर में खाया जाय अथवा बाहर, इस बात का सदा ध्यान रखना चाहिये कि पाचन-क्रिया पर, पेट पर कभी अनुचित भार न पड़े। कभी भूल से ऐसा हो जाय तो दूसरी बार कम खाकर या बिल्कुल ने खाकर उसका सुधार कर लेना चाहिये।

ऋतु और अवस्था के अनुकूल आहार

भोजन के सामान्य नियम को जान लेने पर भी ऋतु-परिवर्तन का ख्याल रखकर तदनुसार भोजन के पदार्थों में परिवर्तन करना स्वास्थ्य की दृष्टि से हितकारी होता है। आयुर्वेद के मतानुसार मकर संक्रान्ति के पश्चात्

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब सूर्य उत्तरायण होने लगता है, तब से ठंड का घटना और गर्मी का बढ़ना आरम्भ हो जाता है। इससे मानव शरीर का शोषण पहले की अपेक्षा अधिक होने लगता है और रुक्षता तथा उत्ताप की वृद्धि होती है। इसका सन्तुलन करने को उन दिनों चिकनाईयुक्त ठंडे पदार्थ जैसे ठंडाई आदि का सेवन लाभदायक माना जाता है। इसी प्रकार शीत ऋतु में जब सूर्य के दक्षिणायन होने से उसकी किरणों की शक्ति कम पड़ जाती है और वे शरीर का शोषण कम कर पाती हैं तथा शरीर का उत्ताप भी घट जाता है, उस समय उष्णवीर्य वाले या गर्म पदार्थ अधिक उपयोगी होते हैं। हमारे यहाँ इसी सिद्धान्त के आधार पर प्राचीनकाल से जाड़े के मौसम में पौष्टिक पाक, लड्डू आदि बनाकर सेवन करने का रिवाज है। अब अधिक परिस्थितियों में बहुत कुछ परिवर्तन हो गया है और घी, मेवा आदि पौष्टिक पदार्थ शुद्ध रूप में बड़ी कठिनाई से मिलते हैं। साथ ही पढ़े-लिखे लोगों में शारीरिक काम तथा व्यायाम का अभाव हो जाने के कारण अधिक भारी पाक और लड्डू आदि को ठीक तरह पचाने की शक्ति भी नहीं रह गई है। इसलिये प्रत्येक ऋतु में आवश्यक परिवर्तन करते हुये भी ताजा और सुपाच्य खाद्य पदार्थों के ही सेवन का ध्यान रखना आवश्यक है।

ऋतु के अनुकूल भोजन करने की एक सीधी-सादी विधि यह भी है कि जिस ऋतु में जो खाद्य पदार्थ उत्पन्न होते हैं यथाशक्ति उन्हीं का प्रयोग किया जाय। मौसमी फल, शाक, अनाज, परिमित मात्रा में सदैव हितकर होते हैं। जो लोग आदत से लाचार होकर खास तरह के भोजनों पर जोर देते हैं और ताजा पदार्थ नहीं मिलता तो उसे अचार, मुरब्बे आदि के रूप में खाते हैं या कृत्रिम रूप से डिब्बों में बन्द भोज्य पदार्थों का अधिक सेवन करते हैं वे अवश्य अपने स्वास्थ्य को निर्बल बनाते हैं और सदैव डाक्टरों तथा वैद्यों के आश्रित बने रहते हैं।

आयु की दृष्टि से भोजन का परिमाण

आयु की दृष्टि से भी भोजन के परिमाण और गुरुता-लघुता पर विचार करना चाहिये। आहार सम्बन्धी पुस्तकों में जो सामान्य नियम बतलाये गये हैं, उनको आँख बन्द करके बालक, युवा, वृद्ध सब पर एक साथ लागू कर देना नासमझी की बात है। बालक और युवा लोगों को अवश्व ही विशेष रूप से शक्तिप्रदायक, पौष्टिक भोजन मिलना चाहिये तथा वृद्धावस्था आने पर उसका परिमाण और पौष्टिकता दोनों को ही कम करना आवश्यक है। वैसे वृद्धावस्था में निर्बलता आ जाती है और शरीर की गर्मी भी घटने लगती है इसलिये सामान्य रूप से विचार करने पर वृद्धों को शक्ति प्रदायक और गर्मी उत्पन्न करने वाले भोजनों की और भी अधिक आवश्यकता है। पर सबसे पहले इस बात का, ध्यान रखना चाहिये कि जो कुछ भोजन उनको दिया जाय वह अच्छी तरह पच सके। उस समय जठराग्नि के मन्द पड़ जाने से घी और उससे बने विविध पदार्थ भली प्रकार नहीं पच सकते। वृद्ध शरीर में माँस की वृद्धि भी नहीं होती इसलिये दालों का खाना भी लाभजनक नहीं होता, क्योंकि उनमें 'प्रोटीन' का अंश अधिक होता है, जो पच नहीं सकता। चीनी, गुड़ आदि मीठे पदार्थों से गर्मी उत्पन्न होती है, पर वृद्धावस्था में बहुमूत्र, मधुमेह आदि रोगों की सम्भावना बढ़ जाती है, इससे इन चीजों का अधिक सेवन उचित नहीं कहा जा सकता। सब दृष्टियों से दूध ही एक ऐसा भोजन है, जो शीघ्र पचने के साथ आवश्यक चिकनाई और गर्मी भी दे सकता है। दूध के अलावा पपीता, खरबूजा, चूसने वाला आम, बेल आदि फल भी वे यथाशक्ति सेवन कर सकते हैं। अन्नाहार वृद्धावस्था में अवश्य पहले से आधा ही कर देना चाहिये, क्योंकि पाचक अंगों की शक्ति उस समय इतनी ही बच रहती है। जो लोग अवस्थानुसार आहार का ध्यान रखते हैं और अधिक खाने का लालच त्यागकर सूक्ष्म आहार ही करते हैं, वे बड़ी आयु हो जाने पर भी कार्यक्षम बने रहते हैं और वृद्धावस्था में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनेक महत्त्वपूर्ण कार्यों का सम्पादन करने में समर्थ होते हैं।

उद्योग-धंधे की दृष्टि से आहार भेद

भोजन की किस्म और उसके परिमाण पर उद्योग-धन्धे की दृष्टि से विचार करना अत्यावश्यक है। हमारे देश में प्रायः यह उल्टी बात देखने में आती है कि जो लोग अधिकांश गद्दियों या कुर्सियों पर बैठे रहते हैं वे तो बार-बार अधिक कीमती भोजन करते रहते हैं, और जिन लोगों को दिनभर अनेक प्रकार के मेहनत के कार्य करने पड़ते हैं, उनको रूखा-सूखा और आवश्यकता से भी कम आहार मिलता है। इसका नतीजा यह होता है कि जहाँ एक ओर सम्पन्न स्थिति के लोग अति-भोजन के फलस्वरूप अजीर्ण, कोष्ठबद्धता आदि रोगों से ग्रसित रहते हैं, वहाँ गरीब लोग अल्प-भोजन के कारण क्षीणकाय और दुर्बल बने रहते हैं। यह स्थित अवश्य ही शोचनीय है। विशेषज्ञों ने जाँच करके निर्धारित किया है कि जहाँ बिना परिश्रम करने वाले लोगों का निर्वाह ७-८ छटाँक भोजन में अच्छी तरह हो जाता है, वहाँ साधारण परिश्रम करने वाले व्यक्ति को ११-१२ छटाँक और कठिन परिश्रम करने वाले को १४ छटाँक खाद्य पदार्थ की आवश्यकता होती है। अधिक परिश्रम करने वाले मनुष्य के शरीर में चिकनाई और श्वेतसार का ही व्यय अधिक होता है। प्रोटीन का खर्च ज्यादा नहीं होता। तो भी मजदूरों से ठीक काम लेने के लिये प्रोटीनयुक्त भोजन भी आवश्यक होता है, क्योंकि इससे उनके स्नायु और पठ्ठे मजबूत बनते हैं और अधिक दिनों तक कार्यक्षम बने रहते हैं। इसके विपरीत जिन लोगों को घटिया भोजन पर ही गुजारा करना पड़ता है वे जल्दी ही थक जाते हैं और उन पर वृद्धावस्था भी शीघ्र आती है।

हमारा स्वाभाविक आहार

जब हम मनुष्य के अतिरिक्त सब प्राणियों के जीवन पर दृष्टिपात करते हैं तो जान पड़ता है कि वे, सब प्रकृति द्वारा उत्पन्न पदार्थों को जैसे का तैसा काम में लाते हैं। मनुष्य की तरह कोई अपने भोजन को न तो छीलता, पीसता, काटता, पीटता है और न कोई उसे आग पर रखकर गलाता, भूनता और गर्म करता है। इसका कारण यह है कि जहाँ अन्य पशु और प्राणी अपने लिये प्राकृतिक दृष्टि से उपयुक्त एकाध प्रकार का खाद्य पदार्थ ही सदैव काम में लाते रहते हैं, वहाँ मनुष्य अपनी बुद्धि के जोर से सैकड़ों तरह के पदार्थों को आवश्यकता, स्वाद और कौतूहल की दृष्टि से पेट में डालता रहता है। नतीजा यह होता है कि जहाँ अन्य सब जीवों की शारीरिक स्थिति जीवन भर प्रायः एक-सी बनी रहती है, किसी आकस्मिक दुर्घटना को छोड़कर वे कदाचित् ही निर्बल या अस्वस्थ होते हैं, वहाँ मनुष्यों के साथ में सदैव परिवर्तन हुआ करता है, क्योंकि वे अपने लिये अस्वाभाविक और अनुपयुक्त पदार्थों को भी तरह-तरह से बदलकर खाने के योग्य बनाने की चेष्टा किया करते हैं, जिनका प्रभाव कभी लाभदायक और कभी हानिकारक सिद्ध होता है।

फल मनुष्य का स्वाभाविक आहार है

इस दृष्टि से विचार करने पर मधुर फल ही मनुष्य के लिये प्राकृतिक भोजन सिद्ध होते हैं। उन्हें मनुष्य बिना किसी परिवर्तन के खा सकता है और उनमें वे सब पदार्थ मिल जाते हैं, जिनकी मानव देह को आवश्यकता होती है। दूसरा नंबर कड़े छिलके वाले सूखे फलों (जैसे नारियल, बादाम, अखरोट, मूँगफली आदि) और बीजों (जैसे गेहूँ, चावल, जौ, चना, ज्वार, बाजरा आदि) का है, जिनको मनुष्य नाममात्र के परिवर्तन से ही काम में ला सकता है। पर जिस बुद्धि के प्रताप से मनुष्य ने अपने लिये अनेकों तरह के खाद्य-पदार्थ खोज निकाले, वही बुद्धि उसे निरन्तर उन पदार्थों के रूप को भाँति-भाँति से बदलने और उनमें नये-नये स्वाद तथा गुण पैदा करने में प्रवृत्त करती रहती है। इससे कृत्रिमता बढ़ती है, वस्तुओं के स्वाभाविक प्रभाव में विकार पैदा होते हैं और अन्त में उनका परिणाम रोग, बीमारी और तरह-तरह की व्याधियों के रूप में प्रकट होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उदाहरण के लिये आप मसालों का प्रयोग लीजिये। लाल मिर्च, काली मिर्च, धनियाँ, जीरा, हल्दी, हींग, आमचूर, अजवायन, सौंफ, मेथी, लोंग, दालचीनी, इलायची आदि में से कौन-सी चीज ऐसी है, जिसकी मनुष्य शरीर को आवश्यकता है ? पर इन्हीं चीजों को हमारे भारतवासी स्वाद का आधार और भोजन का सार समझते हैं। वे साग, तरकारी और अन्य कितने ही खाद्य पदार्थों को इन मसालों के साथ घी, तेल में खूब भूनकर या तलकर खाने में स्वर्गीय आनन्द का अनुभव करते हैं। यहाँ अधिकांश व्यक्ति ऐसे हैं, जिनको यदि खाद्य पदार्थ को साधारण रूप से पकाकर दे दिया जाय तो वे उसे गोबर की तरह निकम्मा बताकर दूर हटा देंगे। पर हम देखते हैं कि संसार के अन्य भागों के करोड़ों व्यक्ति इन मसालों का नाम भी नहीं जानते। वे अनाज, फल, माँस आदि पदार्थों को मामूली पकाकर खा लेते हैं और हम से कहीं अधिक स्वस्थ तथा शक्तिशाली बने रहते हैं। यह हमारी भोजन सम्बन्धी बुद्धि का एक उदाहरण है और इस प्रकार अनेकों कार्य करके हम स्वयं अपने स्वास्थ्य के लिये विघ्न-बाधायें उत्पन्न करते रहते हैं।

वर्तमान परिस्थिति में यद्यपि केवल फलाहार पर निर्वाह करना कई कारणों से साधारण व्यक्ति के लिये असम्भव ही समझा जाता है। तो भी उसके महत्त्व से इनकार नहीं किया जा सकता और जो लोग स्वास्थ्य के अभिलाषी हों, उनका कर्त्तव्य है कि वे अपनी परिस्थिति के अनुसार फलों का उपयोग करें। इसका आशय शौकिया फल खाने से नहीं है, न तरह-तरह के मसाले डालकर कचालू की चाट खाने से फलाहार का उद्देश्यपूर्ण हो सकता है। वरन् फलाहार का अर्थ है रोटी-दाल की जगह फलों से उदर पोषण करना। अगर हम पूरी तरह से पेट भरने लायक फल नहीं पा सकते या उतना खर्च नहीं कर सकते तो आधा, चौथाई भाग के बराबर ये ही फल खाये जायें और अन्न को उसी हिसाब से कम कर दिया जाये। एक समय अन्न और एक समय फलों पर निर्वाह करके भी पर्याप्त लाभ उठाया जा सकता है। तरकारियों को भी फल की श्रेणी में ही समझना चाहिये और उनको कच्चा, आधा पका या पूरा पकाकर खाने से भी फलाहार का उद्देश्य पूरा हो सकता है।

फलों के भेद

फलाहार के उपयोगी तथा लाभदायक पदार्थों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—फल और मेवा, जो कि सूखे हुये फल ही होते हैं। इन फलों में भी एक श्रेणी के फल रसयुक्त होते हैं जैसे सन्तरा, नारंगी, मौसमी, मीठा नीबू, खट्टा नीबू, अंगूर, चूसने वाला आम, अनार, टमाटर और गन्ना आदि। इन सबका रस पचने में हल्का होता है और पतला होने के कारण शीघ्र ही शरीर में आत्मसात हो जाता है। इनमें से फुजला या मल का अंश बहुत कम निकलता है और इनका अधिकांश विभिन्न रूपों में शरीर के उपयोग में आ जाता है।

दूसरी श्रेणी के फल गूदेदार होते हैं। उनसे पेट शीघ्र भरता है और उनके हजम होने में भी कुछ ही देर लगती है। अमरूद, बेर, खजूर, सेव, नासपाती, पपीता, खरबूजा, ककड़ी, केला आदि की गिनती गूदेदार फलों में की जाती है। जो लोग रोटी के स्थान पर फलाहार करते हैं उनके लिये इसी प्रकार के फल अधिक उपयोगी होते हैं। इनमें भी पर्याप्त मात्रा में लाभदायक क्षार और अन्य तत्व रहते हैं।

महँगे और सस्ते फल

अधिक प्रसिद्ध मेवों में बादाम, पिस्ता, नारियल की गिरी, अखरोट, छुहारा, काजू, मूँगफली, अंजीर आदि की गिनती की जाती है। इनमें ऊँचे दर्जे की चिकनाई मिलती है और रासायनिक लवण भी पर्याप्त होते हैं। मेवा महँगे होते हैं और ठोस भी माने जाते हैं, इसलिए उनको थोड़ी तादाद में ही खाना काफी होता है। फिर भी नारियल की गिरी, छुहारा और मूँगफली साधारण भाव में मिल जाते हैं और वह स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक होते हैं। ज्यादातर लोग-स्वाद के लिए भुनी हुई मूँगफली खाते हैं, जो अधिक लाभ नहीं करती। पर यदि मूँगफली के कच्चे दाने पानी में भिगोकर छिलका निकाल कर बादाम की तरह खायें या उनको अन्य भोजनों के साथ पकाकर प्रयोग में लाया जाय तो वे शक्ति देने वाले होते हैं। अनेक विशेषज्ञों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ने इस प्रकार मूँगफली का प्रयोग करना बादाम से कुछ ही कम लाभकारी माना है।

नीबू भी एक ऐसा फल है, जो गुणों में बढ़िया फल का मुकाबला करता है और दामों में सस्ता भी होता है। यह पाचन शक्ति को ठीक करता है और कब्ज को मिटाता है। पर इसे रोटी, दाल या तरकारी के साथ खाना व्यर्थ है, जैसा कि हमारे यहाँ प्रायः स्वाद की दृष्टि से किया जाता है। एक-दो नीबू का रस सुबह या दोपहर में पानी में मिलाकर पीना ही उसका सर्वोत्तम प्रयोग है। उसमें नमक या मीठा मिलाकर उसको बर्बाद नहीं करना चाहिये। इस प्रकार प्रतिदिन दो-चार नीबू का सेवन करने से स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक उन्नति होगी।

अंगूर, संतरा सेव आदि फलों के गुणों को तो सभी जानते हैं। ये स्वादिष्ट भी होते हैं और गुणकारी भी। इसलिये अमीर लोग प्रायः इनका सेवन करते हैं। अंगूर का रस शरीर के भीतरी भाग की सफाई बहुत अच्छी तरह करता है। इसकी शक्कर शरीर में बहुत सरलता से मिल जाती है, इसलिए यह कमजोर रोगियों के लिये श्रेष्ठ पथ्य माना जाता है। संतरा आजकल सर्वश्रेष्ठ फल माना जाता है। इसमें विटामिन 'सी' पाया जाता है, जिससे कितने ही शारीरिक रोगों में बड़ा लाभ पहुँचता है। कभी यह सस्ता भी बिकने लगता है और उस समय साधारण व्यक्ति भी इसका सेवन करके लाभ उठा सकते हैं। पपीता भी आजकल सर्वत्र पैदा होने लगा है और यह पेट की खराबियों की बहुत बढ़िया दवा माना गया है। इसको कच्चा और पक्का खाकर सब लोग स्वास्थ्य का सुधार कर सकते हैं। आम भारत का खास फल है जो स्वादिष्ट, लाभदायक और सस्ता भी होता है। यह प्रायः सभी प्रदेशों में होता है और गाँवों के लोग भी इसे काफी तादाद में सेवन करके अपने शरीर और स्वास्थ्य को मजबूत बना सकते हैं। इतना ध्यान अवश्य रहे कि ये गुण चूसने वाले आम के ही हैं। काटकर खाया जाने वाला कलमी आम देर से पचने वाला होता है और अधिक खाने से पेट को भारी कर देता है।

एक बहुत बढ़िया आरोग्यप्रदायक फल, जिसे गरीबों के लिये दैवी वरदान स्वरूप ही कह सकते हैं, टमाटर है। इसका प्रचार तीस-चालीस वर्ष से ही बढ़ा है, पर अब यह देश में सर्वत्र होता है और मौसम में दो-चार आने सेर मिल जाता है। इसकी हल्की खटाई स्वादिष्ट होने के साथ ही विटामिनों का भंडार होती है और इसको एकाध महीना नियमित रूप से खाकर मनुष्य अपने स्वास्थ्य का सहज में सुधार कर सकते हैं। पर टमाटर को खास लाभ उसे कच्चे खाने में ही है। तरह-तरह की तरकारियों के साथ मिलाकर और आग पर खूब पकाकर खाने से वह केवल स्वाद का साधन रह जाता है।

इस प्रकार वर्तमान समय में अनेक फलों के दुष्प्राप्य होने पर भी अगर मनुष्य हृदय से फलाहार करके स्वस्थ-जीवन व्यतीत करना चाहे तो वह सर्वथा असंभव नहीं है। जब साधारण लोग भी आलू, भिण्डी, कटहल, जमीकन्द आदि तरकारियाँ आठ-बारह आना सेर तक खरीदकर काम में लाते रहते हैं तो कोई कारण नहीं कि वे आम, खरबूजा, पपीता, टमाटर, जैसी वस्तुओं को यथेष्ट परिमाण में न खा सकें। इनके अतिरिक्त सस्ते फलों में आमला विटामिन 'सी' का भंडार कहा गया है। पर इसका स्वाद तीखा और कसैला होने से लोग इसका प्रयोग थोड़ी मात्रा में करते हैं। यदि इसका सेवन अन्य वस्तुओं के साथ मिलाकर किया जाय तो इससे बहुत लाभ उठाया जा सकता है।

सन्तुलित भोजन

इसमें अब किसी प्रकार का सन्देह नहीं कि प्राकृतिक रूप से मनुष्य एक शाकाहारी प्राणी है। उसके दाँतों और आमाशय की बनावट से यह सिद्ध होता है कि उसका स्वाभाविक आहार माँस नहीं वरन् फल और सब्जी आदि हैं। जिस जमाने में मनुष्य विशुद्ध रूप से इसी भोजन पर रहते थे, उस समय वे वास्तव में बहुत स्वस्थ, सशक्त और दीर्घायु होते थे। इस समय भी वनमानुष श्रेणी के प्राणियों की जाँच करने से यह बात प्रत्यक्ष सिद्ध हो चुकी है कि केवल जंगली फलों और वनस्पतियों के आधार पर ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे माँसाहारी जीवों से ज्यादा ताकतवर बने रहते हैं और कभी किसी तरह के रोग से पीड़ित नहीं होते।

पर हजारों वर्षों से मनुष्य के रहन-सहन, खान-पान और उसकी आदतों में ऐसा परिवर्तन हो गया कि अब वह न तो सब प्रकार की वनस्पतियों को खा सकता है और न उसे उनमें किसी प्रकार का स्वाद या मजा आ सकता है। कितने ही व्यक्तियों को तो किसी पदार्थ को कच्चे रूप में खाने की बात समझ में ही नहीं आती और वे अनेक स्वादिष्ट फलों को भी थोड़ा-बहुत पकाकर काम में लाना आवश्यक समझते हैं। ऐसी दशा में यह आशा करना कि प्राकृतिक भोजन की बात अधिकांश मनुष्यों की समझ में शीघ्र आ सकेगी और वे उस पर अमल करने लगेंगे, कठिन ही है। इस स्थिति को देखकर भोजन-विशेषज्ञ मनुष्यों के लिये ऐसे संतुलित या 'बैलेंस्ड' भोजन की सलाह देते रहते हैं, जो मनुष्यों की रुचि के अनुकूल हो और जिसके खाने में कोई कठिनाई न पड़े।

कार्बोज, प्रोटीन और चिकनाई की आवश्यकता

कुछ समय पहले तक यही विचार किया जाता था कि जिस भोजन से शरीर को पर्याप्त मात्रा में प्रोटीन, कार्बोज और चिकनाई (फैट) मिल सके, वही ठीक है क्योंकि खून, माँस, वसा आदि -की उत्पत्ति इन्हीं से होती है। पर जैसे-जैसे नई खोजें होती गईं वैसे-वैसे ही यह मालूम होता गया कि उपर्युक्त तीनों तत्व यद्यपि शरीर का निर्माण करते हैं, पर वे तब तक ठीक काम नहीं कर सकते, जब तक उनको खनिज लवणों (क्षार) और विटामिन (जीवन-तत्व) की सहायता न मिले। यदि हमारा भोजन इन दो तत्वों से रहित हो तो कार्बोज आदि निष्प्राण भोजन की तरह सिद्ध होंगे और शरीर को पोषण देने के साथ-साथ अनेक प्रकार के रोगों की उत्पत्ति का कारण भी बनेंगे।

क्षार और विटामिन वाले पदार्थों का महत्व

ये दोनों तत्व शारीरिक व्यवस्था में स्वच्छता लाने और मैल के अंश को हटाने के लिए आवश्यक होते हैं। इन क्षारों की सहायता से ही हमारा रक्त शुद्ध और शक्तिशाली बनता है और शरीर भर की नाड़ियों में घूमकर विभिन्न अंगों को उचित पोषण प्रदान करता है। इसलिये अब संतुलित भोजन का अर्थ यह समझा जाता है कि भोजन में शरीर की आवश्यकतानुसार कार्बोज, प्रोटीन, चिकनाई के साथ-साथ पर्याप्त परिमाण में क्षार-पदार्थ और विटामिन भी हों जो उस भोजन का सदुपयोग करके उसे शरीर द्वारा आत्मसात करने योग्य बना सकें। साथ ही यह भी जान लेना आवश्यक है कि ये दोनों तत्व कहीं अलग से प्राप्त नहीं किये जा सकते वरन् हम जो खाद्य पदार्थ साधारणतः व्यवहार में लाते हैं, ये उन्हीं में सम्मिलित रहते हैं। इसलिये भोजन बनाने में सबसे अधिक सावधानी की बात यही है कि हम खाद्य पदार्थों का प्रयोग इस प्रकार करें कि जिससे ये दोनों तत्व भोजन से पृथक् या नष्ट न हो जायँ और वे अपने लाभदायक रूप में हमारे शरीर के भीतर पहुँच सकें। आजकल लोग खाद्य पदार्थों को जिस प्रकार मशीन से साफ करते और कूटते-पीसते हैं और बाद में उनको जिस प्रकार पकाया जाता है, उससे उनमें क्षार-भाग कम हो जाता है और अम्लता (खटाई) पैदा करने का गुण बढ़ जाता है। यह अम्लता अधिक परिमाण में शरीर और स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होती है और उसे समतुल करने के लिये ऐसे पदार्थों के प्रयोग की आवश्यकता होती है, जो क्षार प्रदान कर सकें। आधुनिक सिद्धान्त के अनुसार संतुलित भोजन का आशय यही है कि मनुष्य अपना भोजन इस प्रकार व्यवस्थित करें कि उसमें क्षार और विटामिन तत्वों की कमी न रहे। यदि इस विषय को अच्छी तरह समझ लिया जाय और तदनुसार आचरण किया जाय तो मनुष्य सहज में नीरोग रहकर शारीरिक सुख प्राप्त कर सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बेमेल और विपरीत आहार

आहार के सम्बन्ध में विचार करते समय इस बात पर भी ध्यान देना आवश्यक है कि कौन-कौन चीजें साथ खाई जा सकती हैं और किन चीजों का मिलाकर खाना हानिकारक सिद्ध होता है। इस विषय पर हमारे यहाँ पहले ही कुछ विचार किया गया है और वैद्यक ग्रन्थों में उसका वर्णन भी पाया जाता है, पर अब वह अधिकांश में अप्रासंगिक और अनुपयोगी-सा जान पड़ता है। उसमें ऐसी दस-बीस चीजों का नाम उदाहरण स्वरूप गिना दिया गया है, जिनको या तो हम काम में लाते ही नहीं या जिनका प्रयोग बहुत ही कम और कभी-कभी किया जाता है। मिसाल के लिये उनमें कहा गया है कि—"दूध के साथ कुलथी, मौंठ, लहसन का विरोध है। उर्द के साथ मूली का, मकोय के साथ पीपल और मिर्च का, ताड़ के फल के साथ दही और तक्र का, बड़हल के फल के साथ उर्द की दाल का, शहद के साथ खिचड़ी का तथा मकोय के साथ गुड़ का विरोध है।"

इनमें से कितनी ही चीजों का प्रयोग हम कदाचित ही करते हैं और जिन चीजों का विरोध बलाया गया है, उनको एक साथ खाने की नौबत शायद ही कभी किसी को आती हो। वास्तविक बात जिस पर हमको ध्यान देना है, वह यह है कि हम जो भोजन नित्य करते हैं, उसके मुख्य उपादानों को किस विधि से उपयोग में लाया जाय, जिससे हमारी पाचन क्रिया ठीक रहे।

विभिन्न पाचक रसों की आवश्यकता

इस सम्बन्ध में आधुनिक विज्ञान की दृष्टि से विचार करने पर यह निष्कर्ष निकलता है कि आहार के भिन्न-भिन्न तत्वों के पचने के लिये अलग-अलग पाचक रसों की आवश्यकता पड़ती है। जैसा ऊपर बतलाया जा चुका है हमारें आहार में तीन ही पदार्थ पोषण करने वाले होते हैं—कार्बोज (श्वेतसार), प्रोटीन (माँस बनाने वाला तत्व) और चिकनाई। इनमें से श्वेतसार गेहूँ, जौ, चावल, बाजरा, ज्वार, मक्का आदि अन्नों में, आलू, सकरकन्द, घुइयाँ (अरबी) जैसे कन्दों में और गुड़, चीनी में पाया जाता है। इस श्वेतसार या कार्बोज को पचाने का मुख्य साधन क्षार है और यह मुँह की लार के साथ ही भोजन में मिलकर पाचन-क्रिया आरम्भ कर देता है। दूसरा तत्व प्रोटीन है, जो सब प्रकार की दालों, सेम, मटर, चना आदि वनस्पतिजन्य आहार में और माँस, मछली, अण्डा, दूध, दही, पनीर आदि प्राणिज पदार्थों में पाया जाता है। इसकी पाचन क्रिया मुँह के बजाय आमाशय के भीतर पहुँचकर, वहाँ की ग्रन्थियों से निकलने वाले अम्लरस से होती है। पर जब ये दोनों प्रकार के, अर्थात् श्वेतसार व प्रोटीन की प्रधानता वाले पदार्थ एक साथ खाये जाते हैं तो दोनों प्रकार के पाचक रस (क्षार और अम्ल) एक साथ निकलते हैं, जिससे क्षार वाला तत्व नष्ट हो जाता है अथवा निर्बल पड़ जाता है। परिणाम यह होता है कि श्वेतसार के पचने में बाधा पड़ जाती है और उसका हमारे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

यह ठीक है कि हम लोग हजारों वर्षों से दाल-रोटी या भात-दाल खाते आये हैं। जो जातियाँ माँस खाती हैं वे रोटी के साथ माँस का भी प्रयोग निस्संकोच भाव से करती आई हैं। इसलिये हम जल्दी ही इस बात को नहीं समझ पाते कि इस प्रकार के भोजन में कोई हानि है। आरम्भ में जब तक शरीर में काफी शक्ति रहती है, इस प्रकार के भोजन से कोई प्रत्यक्ष हानि भी नहीं जान पड़ती और मनुष्य का स्वास्थ्य साधारण एवं कामचलाऊ बना रहता है। पर इस प्रकार के भोजन के कारण पाचक अवयवों को अधिक से अधिक परिश्रम करना पड़ता है, जिससे उनकी शक्ति घटती जाती है और हम लोग चालीस-पचास वर्ष की आयु में ही बुढ़ापे का अनुभव करते लगते हैं। यदि मनुष्य पाचनक्रिया के इस सिद्धान्त को समझकर यथासंभव एक प्रकार का भोजन ही एक समय करे और हानिकारक कार्यों से भी बचा रहे तो सत्तर-अस्सी वर्ष की आयु तक भी बुढ़ापे से बचकर भली प्रकार कार्यक्षम बना रह सकता है।

इस वैज्ञानिक विवेचन की दृष्टि से जब हम भोजन पर विचार करते हैं तो मालूम होता है कि गेहूँ, चावल आदि अन्नों के साथ दाल तथा माँस जातीय पदार्थ नहीं खाने चाहिये और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनके साथ दही, खटाई आदि का मेल ठीक रहता है। चालीस साल से अधिक आयु हो जाने पर दाल आदि प्रोटीन-प्रधान पदार्थ नहीं खाने चाहिये, क्योंकि उस समय शरीर की वृद्धि रुक जाती है, इसलिये भोजन में पाया जाने वाला प्रोटीन बिना पचे ही मल के साथ निकल जाता है।

दूध को भी अलग पीया जाय तो वह शीघ्र पचकर शरीर में आत्मसात हो जाता है। वैसे उसे श्वेतसार और प्रोटीन वाले दोनों तरह के पदार्थों के साथ खाया जा सकता है। बादाम, नारियल की गिरी, काजू, मूँगफली आदि मिगियाँ भी प्रोटीन-प्रधान हैं और कठिनता से पचते हैं। इनको थोड़ी मात्रा में खाया जाय और अन्य भोजनों से प्रथम ही खाया जाय।

खटाई को रोटी-दाल के साथ खाने का निषेध

संतरा, अंगूर, टमाटर आदि फल दूध के साथ खाये जा सकते हैं। पर अन्य खट्टे पदार्थ दूध के साथ नहीं खाने चाहिये, अन्यथा उनके पचने में देर लगती है। खरबूजा, तरबूजा, खीरा, ककड़ी आदि जैसे फलों के साथ भी दूध का खाना बहुत हानिकारक होता है। एक लेखक के मतानुसार खरबूजा और दूध का मेल होने से तो हैजा होने की बहुत संभावना रहती है।

नीबू स्वास्थ्य के लिये बहुत ही लाभदायक माना गया है, पर उसे भी दाल रोटी के साथ खाना भोजन-विज्ञान की दृष्टि से बहुत हानिकारक होता है। कारण यह है कि रोटी, दाल आदि को पचाने के लिये मुँह के भीतर जो लार निकलकर मिलती है, नीबू की खटाई उसके प्रभाव को नष्ट कर देती है। इससे वह रोटी आदि के श्वेतसार को पचाने में बेकार हो जाती है और आमाशय को पाचन-क्रिया में कहीं अधिक परिश्रम करना पड़ता है। नीबू को सदैव सुबह-शाम पानी मिलाकर पीना और उसमें चीनी अथवा नमक आदि कतई न डालना ही सर्वोत्तम है।

दुग्धाहार और फलाहार

दूध भारतवासियों का सर्वोत्तम खाद्य माना गया है। दूध से उत्पन्न होने वाले घी, दही और मठा आदि में से किसी एक या अधिक पदार्थों का सेवन इस देश के सभी व्यक्ति करते हैं। किसी समय तो कहते हैं कि इस देश में दूध की नदियाँ बहती थीं। वैदिक काल में जनसंख्या के अनुपात से गायों की संख्या बहुत अधिक थी और दूध, घी, दही लोगों का मुख्य आहार था।

जैसा बताया जा चुका है दूध में सब तत्व मौजूद रहते हैं, जिनकी मानव शरीर को आवश्यकता होती है और सदैव नहीं तो कुछ समय तक तो केवल दूध पर निस्संकोच भाव से निर्वाह किया जा सकता है। बच्चों और बुड्ढों के लिये तो यह आदर्श आहार माना ही जाता है, पर भारतवर्ष में सामान्य रूप से जिस भोजन को प्रयोग में लाया जाता है, उसके साथ प्रतिदिन २० से ४० तक तोला दूध का सेवन करना भी आवश्यक है। इससे न केवल हमारे शरीर की छीजन की पूर्ति होती है, शरीर की वृद्धि होती है, वरन् साथ ही स्वास्थ्य की रक्षा भी होती है। मानव शरीर की हड्डियों के जोड़ों और संधि-बन्धनों को चिकना, नरम और लचीला बनाये रखने के लिये किसी प्रकार की चिकनाई की आवश्यकता पड़ती है। इसके लिये दूध से प्राप्त होने वाली चिकनाई सर्वोत्तम होती है। दूध में जो श्वेतसार, प्रोटीन मिलते हैं वह बहुत उच्चकोटि के होते हैं और उनसे शरीर के निर्माण में बड़ी सहायता मिलती है। हड्डियों के बनने के लिये जिस कैल्सियम (चूने) की आवश्यकता होती है, वह मनुष्य को दूध द्वारा ही प्रर्याप्त मिल सकता है। इसके अतिरिक्त फास्फोरस, पोटेशियम और लोहा का आवश्यक अंश भी उसमें पाया जाता है, जिनसे हमारे स्वास्थ्य के स्थिर रहने में बड़ी सहायता मिलती है।

यद्यपि दूध को मनुष्य का पूर्ण आहार बतलाया गया है और उसमें स्वास्थ्य को ठीक रखने के सब उपादान भी पाये जाते हैं, तो भी साधारण मनुष्य, जिनको जीवन-निर्वाह के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नित्य पर्याप्त परिश्रम करना पड़ता है, केवल दूध पर निर्वाह नहीं कर सकते। गेहूँ, चावल, दाल आदि से मानव देह को जो कार्बोज मिलता है और जिससे शरीर में ताप उत्पन्न होकर कार्य शक्ति उत्पन्न होती है, वह दूध में अधिक मात्रा में नहीं होता। साथ ही उसमें फुजला (छूँछ) का अंश भी नाममात्र को होता है। यही कारण है कि जब कोई व्यक्ति दस-पाँच दिन केवल दूध पर रहता है तो प्रायः उसे कब्ज हो जाता है और दूध की गाँठें बन जाती हैं। इसलिये दुग्ध-चिकित्सा अथवा विशेष साधन के रूप में तो केवल दुग्धाहार संभव है और लाभदायक भी होता है, पर सामान्य रूप में केवल दूध पर रहना व्यावहारिक नहीं होता। उसे रोटी, तरकारी आदि के साथ चिकनाई और शक्ति प्राप्त करने के उद्देश्य से संतुलित मात्रा में ग्रहण करना ही अधिक उपयोगी होता है।

ऐसी ही बात लगभग फलाहार के सम्बन्ध में है। फलों को मनुष्य का स्वाभाविक आहार माना गया है और स्वास्थ्य को उत्तम बनाये रखने के लिये फलों का प्रयोग एक दृष्टि से अनिवार्य ही समझना चाहिये। जिन क्षार पदार्थों द्वारा हमारा भोजन शीघ्र पचता है, वे मुख्य रूप से शाकों और फलों में ही पाये जाते हैं। इसी प्रकार वे विटामिन या जीवन-तत्व भी, जिनके द्वारा हमारा रक्त शुद्ध और प्रभावशाली बना रहता है और वह सब तरह के रोग कीटाणुओं को नष्ट करता है, फल और शाकों द्वारा ही प्राप्त होते हैं। इस दृष्टि से फल और शाक हमारे आहार के एक बहुमूल्य अंश हैं। जो उनसे सर्वथा वंचित रहते हैं या उनका उचित रूप में प्रयोग नहीं करते, वे कभी उत्तम स्वास्थ्य को प्राप्त करने में समर्थ नहीं हो सकते। पर जैसा अनेक प्राकृतिक चिकित्सक घोषित किया करते हैं कि फलों के सिवा और सब पदार्थ मनुष्य के लिये स्वाभाविक भोजन नहीं हैं और प्रत्येक व्यक्ति को फलों पर ही निर्वाह करना उचित है, वह वर्तमान स्थिति में किसी प्रकार संभव नहीं जान पड़ता। फलाहार आर्थिक दृष्टि से बहुत महँगा पड़ता है और हर मौसम में फलों का प्राप्त कर सकना भी सुविधाजनक नहीं होता। इसी प्रकार जो लोग कड़ी मजदूरी का काम करते हैं, उनका गुजारा भी फलाहार से संभव नहीं है, उनको अधिक प्रोटीन वाला आहार आवश्यक होता है, जिसका फलों में प्रायः अभाव होता है।

इन बातों पर विचार करके हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि फलों का प्रयोग हमारे स्वास्थ्य के लिये बहुत लाभदायक है, उनसे भोजन में रुचि उत्पन्न होती है और आहार के सात्मीकरण (शरीर में मिल जाने) में सहायता मिलती है, पर सामान्य रूप से अधिकांश मनुष्य उन्हीं पर निर्वाह नहीं कर सकते। वर्तमान समय में हजारों वर्षों से हमारा जीवन और रहन-सहन जैसा बन गया है, उसे देखते हुये अन्न और दूध के साथ फलों और कच्ची तरकारियों को आहार के एक अंश के रूप में ग्रहण करना ही व्यावहारिक और लाभदायक है। इस सम्बन्ध में विशेष ध्यान देने की बात यही है कि आजकल भारतवर्ष के निवासी अधिकता में फल और शाकों का जिस प्रकार प्रयोग कर रहे हैं, उसमें कुछ सुधार अवश्य किया जाय। शाक और तरकारियों को अधिक उबालना, उबालकर उनका पानी निकाल देना, उनको तेल, घी में खूब भूनना, तलना उनमें खूब मिर्च, मसाला, खटाई मिला देना आदि ऐसी बातें हैं, जिनके कारण उनका लाभ और गुण प्रायः बिल्कुल नष्ट हो जाता है और केवल छूँछ या फोक ही हमारे हिस्से में आता है। इस तरह का कार्य निस्सन्देह बुद्धिमानी के विपरीत ही माना जायेगा। इस प्रकार जो लोग झूँठे स्वाद के लिये अपने हाथ से अपने भोजन को निस्सार बना लेते हैं, वे यदि आये दिन बीमार होते रहें या उनको सदा किसी न किसी अंग में कष्ट का अनुभव होता रहे और इसके लिये यदि वे किसी अन्य को दोष दें तो यह मूर्खता ही कही जायेगी। जो लोग अपने स्वास्थ्य को ठीक रखने की अभिलाषा रखते हैं, उनको शाक और फलों को जहाँ तक संभव हो, कम से कम परिवर्तन करके काम में लाना चाहिये। शाकों को साधारण पकाना और उनमें से कम मसाला डालना ही हर तरह से हितकारी है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जल और आहार का सम्बन्ध

जल की गिनती यद्यपि आहार में नहीं की जाती और न उसे खाद्य पदार्थ माना जाता है, तो भी वह हमारे आहार का एक बड़ा अंश होता है। हमारे भोजन की कोई वस्तु ऐसी नहीं होती जिसमें जल-तत्व न हो। गेहूँ, चावल, जौ, चना, जैसे सूखे दिखलाई पड़ने वाले अन्नों में आठवाँ हिस्सा जल का होता है। सब तरह की तरकारियों और शाकों में ८०-९० प्रतिशत या इससे भी अधिक जल का भाग रहता है। यदि आप सेर भर दूध पियें तो उसमें भी १४ छटांक जल ही होता है। इसलिये जल को आहार न मानते हुये भी हम भोजन के रूप में उसी का प्रयोग करते हैं और यही कारण है कि हमारे शरीर में भी अधिक भाग पानी का ही होता है। अगर किसी मनुष्य का वजन दो मन हो तो उसमें एक मन अठारह सेर जल ही रहता है।

इतना आवश्यक, उपयोगी और सुलभ होने पर भी अधिकांश व्यक्ति उसका उपयोग ठीक ढंग से नहीं करते। कितने ही लोग तो ऐसे हैं कि जिनको बिना कुछ खाये प्यास ही नहीं लगती। ऐसे लोगों ने 'जलपान' का अर्थ यह बना लिया है कि कुछ खाकर पानी पिया जाय। अनेक लोगों को हमने यह शेखी मारते देखा है कि 'हम तो चाय को छोड़कर कभी पानी को हाथ ही नहीं लगाते।' इसी प्रकार अमीर लोग पानी की जगह प्रायः शर्बत, सोड़ा, लेमनेड, ठंडाई, लस्सी पीना ही अमीरी का चिन्ह समझते हैं। ऐसे लोग अपने हाथों से अपने ही पैरों में कुल्हाड़ी मारते हैं और तरह-तरह की बीमारियों को निमन्त्रित करते हैं।

प्राचीन ग्रन्थों में जल की महिमा

पानी हमारे जीवन का एक मुख्य आधार है और इसलिये इसका एक नाम 'जीवन' भी है। संसार के आदि ग्रन्थ वेदों में भी कहा गया है—"जल से शरीर का अभिसिंचन करो, जल सर्व-प्रधान औषधि है। इससे जीवन सुखमय बनता है।" एक अन्य स्थान पर प्रार्थना करते हुये कहा है—"जल हमें सुख दे, सुखोपभोग के लिये हमें पुष्ट करे। जिस प्रकार माताएँ अपने छोटे बच्चे को दूध पिलाती हैं, उसी प्रकार हे जल ! तुम हमें अपना मंगलकारी रस पान कराओ। तुम हमारे मलों का नाश करो।" महर्षि चरक ने अपनी संहिता में लिखा है कि, "उत्साह, बल और धैर्य देने वाले सब पदार्थों में जल सर्वश्रेष्ठ है।"

जल का ठीक लाभ हम तभी प्राप्त कर सकते हैं, जब उसे शुद्ध, स्वच्छ, ताजा और ठण्डे रूप में पियें। वैसे तो जल सब प्रकार के आहार में सम्मिलित रहता ही है, पर वह उतना ही होता है, जिससे उसका परिपाक शरीर के भीतर हो सके। इससे हमको अपने शरीर की सफाई के लिये अतिरिक्त जल का प्रयोग करना अनिवार्य है। जिस प्रकार शरीर के ऊपर मैल को दूर करने के लिये दिन में एक-दो बार जल से स्नान करना आवश्यक होता है, उसी प्रकार शरीर के भीतरी भाग खासकर शारीरिक मल को बाहर निकालने वाले मलाशय, गुर्दे आदि अंगों की सफाई के लिये समय-समय पर काफी परिमाण में पानी पीना अत्यावश्यक है। जिस प्रकार जल द्वारा नियमित रूप से धोई जाने वाली नाली साफ रहती है, उसमें न कोई चीज सड़ती है न बास आती है, उसी प्रकार नियमपूर्वक जल पीते रहने से हमारे मल बाहर निकालने वाले अवयव भी स्वच्छ रहते हैं और उनमें ताजगी आती रहती है।

जलपान में नियम की आवश्यकता

वैसे तो जल पीने का अवसर वही हो सकता है, जब हमको प्यास लगे, पर जिस प्रकार नियत समय पर भोजन करना, चाहे जब खाते रहने की अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यप्रद होता है, उसी प्रकार नियत समय पर जलपान करना भी विशेष गुणकारी होता है और उससे स्वास्थ्य की उन्नति होती है। स्वास्थ्य-विज्ञान के ज्ञाताओं का मत है कि मनुष्य को प्रतिदिन दो से तीन सेर तक जल पीना चाहिये। सुबह उठकर आध सेर, तीन पाव जल पी लेना स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ा हितकारी माना गया है। हमारे प्राचीन ग्रन्थों में इसका नाम 'उषापान' है और इसको अमृत समान गुणकारी बतलाया गया है। उस समय पेट खाली रहता है और इससे जल पीने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से शरीर की सफाई अच्छी तरह हो जाती है, दस्त साफ होने में भी सहायता मिलती है। इसके पश्चात् दोपहर के समय जब भोजन किये डेढ़-दो घण्टे व्यतीत हो चुके हों, थोड़ा पानी पी लेने से भोजन के आँतों में आगे सरकने में सुविधा होती है। इसी प्रकार रात को सोने से कुछ पहले एक गिलास जल पी लेने से शरीर के मल पृथक् होकर बाहर निकलने योग्य स्थिति में आ जाते हैं।

इस प्रकार जल पीने में खासतौर पर इस बात का ध्यान रखना आवश्यक होता है कि भोजन के थोड़ी देर पहले या खाने के बाद ही उसे न पिया जाय। जल पीना उसी समय अधिक उत्तम होता है, जब कि आमाशय खाली हो और आहार पचने के लिये छोटी आँत में पहुँच चुका हो। आमाशय से आँतों में खाना पहुँचने में लगभग एक या सवा घण्टा लगता है। उस समय पानी न पीना ठीक होता है, क्योंकि इससे पाचक रसों में अधिक जल मिल जाने से पाचक क्रिया में कुछ बाधा पड़ने का अन्देशा रहता है। अधिक गर्मी की ऋतु में जब प्यास का ज्यादा जोर रहता है किसी भी समय प्यास लगने पर थोड़ा पानी पीकर उसे शान्त करना उचित है। उस समय गर्मी के कारण पानी शीघ्र सोख लिया जाता है, इससे हानि की संभावना नहीं रहती।

जल कब न पिया जाय

एक लेखक ने इस विषय पर विचार करते हुये कि 'जल कब नहीं पीना चाहिये' कहा है कि चिकनी चीजें, घी, तेल, मक्खन, मेवा, भुने चना, फल आदि के बाद तुरन्त जल न पीना चाहिये। फलों के ऊपर जल पी लेने से जुकाम की संभावना रहती है। गर्म, चीज जैसे चाय, दूध आदि के ऊपर जल न पियें। दस्त लगने की दशा में भी जल न पियें क्योंकि इससे उनमें वृद्धि होती है। व्यायाम, कड़ी धूप या कठिन परिश्रम के बाद तुरन्त जल न पीना चाहिये, क्योंकि गर्मी-सर्दी एक साथ मिलने से अनेक लोगों को जुकाम, सिरदर्द आदि शिकायतें पैदा हो जाती हैं।

भोजन का परिमाण और उपवास

अनेक व्यक्तियों को यह प्रश्न कुछ अटपटा-सा प्रतीत होगा कि प्रतिदिन कितनी मात्रा में भोजन किया जाय। एक सामान्य ग्रामीण भी इसके उत्तर में तुरन्त कह देगा कि इसमें सोचने-समझने की क्या बात है, जितनी भूख हो उतना ही खाया जायेगा। यह उत्तर देखने में तो सही जान पड़ता है, पर वास्तव में यह समस्या इतनी सहज नहीं है। गरीबों की दृष्टि से तो इसमें विशेष उलझन नहीं है, क्योंकि उनको प्रायः पूरा खाना ही भाग्य से मिलता है, पर धनी और मध्यम वर्ग के व्यक्ति इस सम्बन्ध में प्रायः विपरीत आचरण करते देखे जाते हैं। कहने को तो वे भी भूख लगने पर ही खाते हैं, पर ज्यादातर उनके खाने की कसौटी भूख से नहीं, स्वाद से होती है। ऐसे घरों में प्रतिदिन इस बात पर विचार किया जाता है कि आज कौन-कौन साग-दाल और अन्य भोजन बनाया जाय ? इस विषय में वे न तो पदार्थों के गुण-दोष की निगाह से विचार करते हैं और न अपने स्वास्थ्य का ध्यान रखकर निर्णय करते हैं। उनके विचार करने का आधार प्रायः स्वाद होता है, और यदि मध्यम श्रेणी के व्यक्ति हुये तो खर्च की निगाह से भी विचार करना पड़ता है। ऐसे लोगों को आप प्रायः यह कहते सुन सकते हैं कि—"आज तो अमुक तरकारी अथवा अमुक व्यंजन बड़ा स्वादिष्ट बन गया, जिससे दो रोटी ज्यादा खा ली गईं और पेट भारी जान पड़ रहा है।" ऐसे लोगों के लिये भोजन के परिमाण पर विचार करना निस्सन्देह आवश्यक और महत्वपूर्ण मानना चाहिये।

शरीर के वजन के अनुसार भोजन का परिमाण

आहार-विशेषज्ञों ने इस विषय पर कई दृष्टियों से विचार किया है। उन्होंने शरीर के वजन, आयु, शारीरिक श्रम, मौसम आदि की दृष्टि से आहार के परिमाण का विवेचन किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। उनका मोटा हिसाब यह है कि एक साधारण मनुष्य को अपने शरीर के वजन के १६० वें भाग के बराबर आहार प्रतिदिन करना आवश्यक है। जिन लोगों को ज्यादा मेहनत का काम करना पड़ता है उनको अपने वजन के ११२ वें भाग के बराबर खाना आवश्यक होता है। इसका आशय यह निकला कि यदि किसी व्यक्ति का वजन डेढ़ मन हो तो उसे ७ से ६ छटाँक तक सूखे खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होगी। इसी प्रकार एक अन्य विद्वान ने पौने दो मन वजन वाले व्यक्तियों के लिए परिमित भोजन की एक तालिका बनाई है, जिसमें बतलाया है कि जो लोग कोई खास मेहनत का काम नहीं करते और आराम की जिन्दगी गुजारते हैं उसको प्रोटीन वाले पदार्थ १। छटाँक, श्वेतसार जातीय पदार्थ ६ छटाँक, चिकनाई वाले पदार्थ २।। तोला और क्षारयुक्त पदार्थ १।। तोला, कुल मिलाकर ८ छटाँक, (जल का भार पृथक् समझा जाय) खाद्य पदार्थ जीवन निर्वाह के लिये पर्याप्त समझे जाने चाहिये। जो लोग साधारण परिश्रम के कार्य करके जीवन-निर्वाह करते हैं, उनको शारीरिक पूर्ति के लिये १०।। से १२ छटाँक और कठिन परिश्रम करने वालों को १४ छटाँक तक खाद्य पदार्थों की आवश्यकता होती है।

इसमें सन्देह नहीं कि उपर्युक्त हिसाब काफी सोच-विचार कर और जाँच-पड़ताल के बाद निकाले गये हैं और बहुसंख्यक मनुष्यों के लिये सही भी हैं, पर फिर भी व्यवहारिक जीवन में साधारण मनुष्यों के लिये भोजन को सदैव तोलकर खाना या उसके परिमाण और तत्वों पर हर रोज विचार करते रहना संभव नहीं है। इसलिये हमको विशेष ध्यान इस बात पर देना चाहिये कि अपने दैनिक कार्यों को पूरी ताकत और चुस्ती से करते रहें और हमको उससे किसी प्रकार की थकावट या हानि का अनुभव न हो। डाक्टरों के मतानुसार २५ वर्ष की आयु के बाद शरीर की वृद्धि रुक जाती है और हमारा भार पूर्ववत् बना रहता है। इसलिये यदि हम ३ महीने या ६ महीने बाद अपने वजन की जाँच करते रहें तो यह अनुमान लगा सकते हैं कि हमारे भोजन का क्या प्रभाव पड़ रहा है ? यदि हम बिना कठिनाई के अपना काम करते रहते हैं और हमारा वजन भी ठीक जैसे का तैसा बना रहता है तो उस भोजन को ठीक समझना चाहिये।

आयुर्वेद के आचार्यों का मत

आहार के सम्बन्ध में खोज करने वाले लोगों ने इस प्रकार की और भी अनेक तालिकाएँ बनाई हैं और तत्सम्बन्धी ग्रन्थों में विभिन्न पेशों के करने वाले व्यक्तियों के लिये प्रत्येक उपादान के सम्बन्ध में काफी विचार किया है। उन सबको पढ़कर अन्त में इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि ये तालिकायें हमारा थोड़ा-सा मार्ग-दर्शन कर सकती हैं, पर हमको अपने लिये उचित परिमाण का निर्णय स्वयं ही करना पड़ेगा और उसमें मुख्य रूप से इस बात का ध्यान रखना पड़ेगा कि जो कुछ खाया जाय वह अपने शरीर की अवस्था और शक्ति पर विचार करके ही ग्रहण किया जाय। यही आदिकाल ऋषियों का उपदेश है। आयुर्वेद के सबसे प्राचीन ग्रन्थ "चरक संहिता" में लिखा है—

"मात्राशीस्यात। आहार मात्रा पुनराग्नि-बलापेक्षिणी। द्रव्यापेक्षयाच। त्रिभागसौहित्यं च गुरुणामुपदिश्यते। लघूनामपिच सौहित्यं अग्नेर्युक्त्यर्थम्।"

अर्थात्—"मनुष्यों को भोजन परिमित मात्रा में करना चाहिये। वह उतना ही हो जो अपनी पाचन शक्ति के अनुसार हो। फिर गुरुपाक (देर से पचने वाले) और लघुपाक (शीघ्र पचने वाले) खाद्य पदार्थों का भी ध्यान रखना चाहिये। पचने में भारी पदार्थों को आधा या पौन पेट भरकर ही खाना चाहिये और पचने में हल्के पदार्थों को भी भूख से कुछ कम ही खाना चाहिये, जिससे जठराग्नि का बल बना रहे।"

इसी बात को वैद्यक के दूसरे प्रामाणिक ग्रन्थ 'भाव-प्रकाश' में इन शब्दों में कहा गया है—

कुक्षेर्भागद्वये भोज्यैस्तृतीये वारिपूरियेत।
वायो संचारणार्थाय चतुर्थमवशेषयेत्।।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अर्थात्—"आमाशय के दो भाग भोजन से भरे, एक भाग पानी से पूर्ण करे और चाथा भाग वायु संचारण के लिये खाली छोड़ दे।"

यह परिमित भोजन का स्वाभाविक नियम हो सकता है और इसका पालन करना हमारे ही हाथ में है। हम इस बात को समझ लें कि जितना भोजन अच्छी तरह पच सकता है उतना ही हमारे लिये हितकारी होता है और उसी से हमें पूरी शक्ति और स्वास्थ्य प्राप्त हो सकता है। यदि हम उससे ज्यादा मात्रा में खाते हैं, स्वाद के वशीभूत होकर पेट को ठूँस-ठूँस कर भर लेते हैं तो उसका नतीजा सदैव बहुत हानिकारक होगा। वह कभी ठीक तरह नहीं पच सकता, उससे कब्ज और अजीर्ण की उत्पत्ति होगी अथवा वह अधपके रूप में ही बाहर निकल जायेगा। उससे ताकत मिलना तो दूर रहा, उसे बाहर निकालने में हमारे शरीर की पूर्व संचित शक्ति का अपव्यय होगा और हम कमजोर होते जायेंगे। इसलिये भोजन में स्वाद के कभी वशीभूत नहीं होना चाहिये और सादा, सुपाच्य खाना परिमित मात्रा में ग्रहण करना ही हर तरह से हमारा कर्तव्य है।

हमारे घरों का वर्तमान वातावरण

जो व्यक्ति स्वस्थ जीवन के महत्व को समझते हैं, वे आहार के विषय में सदैव सावधान रहते हैं। फिर भी हमारे अधिकांश घरों में जैसा वातावरण पाया जाता है और नाते-रिश्ते तथा मित्रों के यहाँ जिस प्रकार भोजन खिलाने का आग्रह किया जाता है, उससे थोड़ी-बहुत अनियमितता और भोजन सम्बन्धी गड़बड़ी हो जाना असंभव नहीं है। फिर सब प्रकार के खाद्य पदार्थों के प्रभाव को समझना और सदैव उचित पदार्थ पा सकना भी बहुत सहज कार्य नहीं है। इसके फल से पाचन क्रिया में कुछ कमी पड़ ही जाती है और पेट में दूषित मल जमा हो ही जाता है। यदि समय-समय पर इस मल को निकालकर पाचक अंगों की सफाई का प्रयत्न नहीं किया जायेगा तो उनमें रोग उत्पन्न होंगे और फिर वे समस्त शरीर पर बुरा असर डालेंगे। इस अवस्था के सुधार का एकमात्र स्वाभाविक उपाय यही है कि हम सप्ताह या पन्द्रह दिन में एक दिन उपवास रखा करें। ऐसा करने से आमाशय को एक दिन की छुट्टी मिल जाती है और उसकी शक्ति पाचक यन्त्रों की सफाई करने तथा जमा हुये मल को बाहर निकालने में लग जाती है।

उपवास की उपयोगिता

इस प्रकार के सामयिक उपवास से स्वास्थ्य-रक्षा में बहुत अधिक सहायता मिलती है। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर भारत के प्राचीन धर्म-विधायकों ने एकादशी, रविवार आदि के व्रतों का प्रचार किया था। यदि व्रतों का नियमपूर्वक पालन किया जाय और उस समय कुछ भी न खाकर आमाशय को वास्तव में विश्राम करने दिया जाय तो हमारे शरीर के भीतरी विकार बहुत कुछ बाहर निकल जायेंगे और हम रोगों के खतरे से अधिकांश में मुक्त रहेंगे। यह एक दिन का उपवास बिना किसी भय या आशंका के सदैव करते रहना ही चाहिये। इससे सिवाय लाभ के किसी भी प्रकार की हानि तो किसी दशा में हो ही नहीं सकती। हाँ, यदि कोई रोग उत्पन्न हो गया हो और उसके लिये अधिक दिनों का उपवास करने की आवश्यकता हो तो किसी योग्य चिकित्सक की सलाह से काम करना चाहिये।

मानसिक स्थिति का भी ध्यान रखिये

मन का शरीर के साथ बड़ा घनिष्ठ सम्बन्ध है। प्रत्यक्ष में तो सब प्रकार के कार्य हमारी इन्द्रियाँ ही करती हैं। पर उनका राजा या संचालनकर्ता मन को ही माना गया है। इसिलिये मानसिक विचारों का प्रभाव शरीर पर सदैव पड़ता रहता है। हमारा भोजन भी इससे पृथक् नहीं है। हमारे धर्म-ग्रन्थों में कहा गया है कि मनुष्य जैसा अच्छा या खराब भोजन करता है वैसा ही प्रभाव उसके मन पर पड़ता है। इसी दृष्टि से गीता में सात्विक, राजसिक और तामसिक भोजन का वर्णन विस्तारपूर्वक किया गया है। इसी बात को किसी विचारक ने इन शब्दों में प्रकट किया है कि—"जैसा खाइये अन्न, वैसा बने मन।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोजन पर मन का प्रभाव

पर इस सिद्धान्त का एक दूसरा पहलू भी है। जिस प्रकार भोजन का प्रभाव मन पर पड़ता है उसी प्रकार मन के विचारों और उसकी अवस्था का असर भोजन पर भी पड़ता है। भोजन के समय जो शान्त, प्रसन्नचित रहने का उपदेश दिया गया है, उसका आशय यही है कि किसी प्रकार की उत्तेजना, आवेश, क्रोध या मानसिक हलचल की अवस्था में किया हुआ भोजन ठीक तरह से नहीं पचता और न उससे शरीर को उचित लाभ होता है। इतना ही नहीं अनेक बार तो विशेष उत्तेजना की दशा में किया हुआ भोजन प्रत्यक्ष रूप से हानि पहुँचाता है। इस सम्बन्ध में वैद्यक के ग्रन्थ 'भाव-प्रकाश में कहा गया है—

तृष्णाभय क्रोध परिप्लुतेन लुब्धेन रुग्दैन्य निपीड़ितेन।
प्रद्वेषयुक्तेन वा सेव्यमानमन्ने न सम्यक् परिपाकमेति।।

अर्थात्—"तृष्णा, भय, क्रोध, लोभ, शोक, दैन्य, ईर्ष्या, द्वेष आदि के भाव जिस समय मन में उठ रहे हों या किसी रोग का आक्रामण हो रहा हो तो उस अवस्था में किया भोजन ठीक तरह से नहीं पचता।"

उपर्युक्त कथन पूर्णतया सत्य है। जो भोजन मनुष्य को पसन्द होता है और जिसे देखकर मन प्रसन्न होता है, उसे खाते हुये पाचक अंगों से यथोचित परिमाण में पाचक रस निकलने लगते हैं और उसका परिपाक अच्छी तरह हो जाता है। पर जिस भोजन से मनुष्य को किसी कारण अरुचि हो जाती है, उसे यदि विवशता से खाना भी पड़ा तो चाहे पेट भर जाय पर वह शरीर में ठीक ढंग से नहीं लगता। क्रोध के समय खाया हुआ भोजन अनेक बार बड़ा अनिष्टकारी सिद्ध होता है और तत्काल ही कोई रोग या शारीरिक कष्ट उत्पन्न कर देता है।

बहमी या शक्की होना भी बुरा है

हम यह भी नहीं चाहते कि पाठक इस सिद्धान्त को गलत रूप में समझें और भोज्य पदार्थों के सम्बन्ध में एकदम बहमी या शक्की बन जायें। जो लोग हर एक पदार्थ की अच्छाई-बुराई, शुद्ध-अशुद्ध होने के विषय में जरूरत से ज्यादा शंका करने लगते हैं, वे भी स्वयम् अपनी हानि का कारण बनते हैं। इस प्रकार की मानसिक स्थिति से अच्छे पदार्थ का भी बुरा प्रभाव पड़ सकता है। जो मनुष्य हर एक पदार्थ में बुराई देखता है, उसे उसका नतीजा वैसा ही मिलता है। इसलिये अपनी परिस्थिति या समयानुसार जो कुछ भी सामान्य भोजन मिल सके उसे प्रसन्न चित्त से और शरीर तथा मन के लिये कल्याणकारी समझकर ग्रहण करना चाहिये। उस समय अपने विचारों को धंधे, व्यापार, नौकरी, आर्थिक हानि-लाभ आदि दुनियादारी की बातों की तरफ से हटाकर भोजन की ओर ही रखना उचित है। हम भोजन को जैसे भाव से करेंगे, उसका वैसा ही प्रभाव अवश्य पड़ेगा। बहुत बार देखा गया है कि अनेक लोगों को भोजन में मक्खी आदि गिर जाने की या अन्य प्रकार की अशुद्धि की शंका हो जाती है तो प्रायः उनको वमन हो जाता है, जबकि अन्य लोग जिनको उस विषय में कोई सन्देह न हो उस भोजन को खाते हैं और उनका कुछ भी अनिष्ट नहीं होता।

भोजन करते समय किसी विषय पर गंभीर रूप से विचार करने या किसी महत्वपूर्ण समस्या पर दिमाग को दौड़ाने से शरीर का रक्त मस्तिष्क की तरफ ज्यादा जाने लगता है और पाचक यंत्रों में उसकी कमी होने से कमजोरी आ जाती है। इससे पाचन-क्रिया में बाधा पड़ने लगती है और भोजन देर से या अधूरा पचता है। इसी कारण हमारे प्राचीन ग्रन्थों में एकान्त में एकाग्रचित्त होकर भोजन करने का आदेश दिया है। उस समय मन का अन्य विषयों में भटकते रहना हानिकारक होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोजन का आध्यात्मिक प्रभाव

भोजन का उद्देश्य साधारणतः भूख की निवृत्ति और शरीर का पोषण माना जाता है। प्राणी मात्र जीवन धारण करने के लिये अपनी प्रकृति के अनुकूल कोई न कोई आहार ग्रहण करते हैं। पर मनुष्य को भगवान ने बुद्धि, चतुरता और समझ दी है, जिससे वह किसी एक ही तरह के खाद्य पदार्थ तक सीमित नहीं रहता, वरन् नये-नये पदार्थों को खोजकर, उनमें थोड़ा-बहुत परिवर्तन करके उन्हें उपयोग में लाता रहता है। उदाहरणार्थ—माँस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन नहीं है। कोई मनुष्य शेर, चीते, भेड़िये की तरह किसी बकरी, भेड़ या हिरन को हाथों से पकड़कर, दाँतों से चीर-फाड़कर नहीं खा सकता। पर बुद्धि से काम लेकर वह किसी हथियार से जानवर का वध करता है और उसके माँस को आग पर गर्म करके, गलाकर अपने उपयोग लायक बना लेता है। इस प्रकार मनुष्य कुछ अदल-बदलकर ऐसे पदार्थों को भी भोजन के रूप में उपयोग कर लेता है, जो साधारणतः उसके लिये लाभदायक नहीं हैं।

सात्विक, राजसिक और तामसिक भोजन

इस प्रकार अधिकांश मनुष्य भोजन पर केवल इसी दृष्टि से विचार करते हैं कि वह उनको स्वाद की दृष्टि से कैसा लगता है और उससे कितना पोषण प्राप्त हो सकता है ? पर वे इस बात पर कदाचित ही विचार करते हैं कि भोजन से केवल हमारे शरीर का ही निर्माण नहीं होता वरन् हमारे मन और आत्मा पर भी उनका बड़ा प्रभाव पड़ता है। छान्दोग्य उपनिषद् में कहा गया है—

आहार शुद्धो सत्वशुद्धि सत्वशुद्धो ध्रुवास्मृतिः।
स्मृतिर्लब्धे सर्व ग्रन्थीनां विप्र मोक्षः।।

अर्थात्—"आहार के शुद्ध होने से अन्तःकरण की शुद्धि होती है, अन्तःकरण के शुद्ध हो जाने पर बुद्धि निर्मल होने से सब संशय और भ्रम जाते रहते हैं और तब मुक्ति का मिल सकना सुलभ हो जाता है।"

इसी तथ्य को दृष्टिगोचर करके भारतीय मनीषियों ने आहार को सात्विक, राजसिक और तामसिक तीन विभागों में बाँट दिया है और बतलाया है कि जो व्यक्ति शरीर के साथ अपने मन, विचार, भावना, संकल्प आदि को भी शुद्ध, पवित्र, निर्मल रखना चाहता है, उसका कर्तव्य है कि तामसिक और राजसिक आहार का त्याग कर सात्विक आहार का ही उपयोग करे। गीता के सत्रहवें अध्याय में कहा है—

आहारस्त्वपि सर्वस्य त्रिविधो भवति प्रियः।
यज्ञस्तपस्तथा दानं तेषां भेदमिमं शृणु।। ७।।
आयुःसत्त्वबलारोग्य सुख प्रीति विवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः
सात्विकाप्रिय।। ८।।

अर्थात्—"तीन प्रकृति वालों को अपनी-अपनी प्रकृति के अनुसार भोजन ही प्रिय होता है। इसी प्रकार यज्ञ, तप और दान भी तीन-तीन प्रकार के होते हैं। आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य, सुख और प्रीति को बढ़ाने वाले एवं रसयुक्त, चिकने और स्थिर रहने वाले और स्वभाव से ही मन को प्रिय ऐसे भोज्य-पदार्थ सात्विक स्वभाव के व्यक्तियों को प्रिय होते हैं।"

इसका आशय यही है कि स्वादिष्ट फल, दूध, दही, घी और गेहूँ, चावल आदि विकाररहित अन्न का सेवन करने से ही मनुष्य का स्वास्थ्य उत्तम बना रहता है और उसका मन भी सद्विचारों तथा सद्भावनाओं से युक्त रहता है। इससे विपरीत जो लोग उत्तेजक, तेज स्वाद वाले, बहुत चटपटे, खट्टे पदार्थों का सेवन करते हैं, उनका स्वभाव भी राजसी और तामसी हो जाता है। गीताकार कहते हैं—

कट्वम्ल लवणात्युष्ण तीक्ष्णरूक्ष विदाहिनः।
आहारा राजसस्येष्टा दुःख शोकामयप्रदा।। ९।।
यातयामं गतरसं पूर्ति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजने तामस प्रियम्।। १०।।

अर्थात्—"कड़वे, खट्टे, ज्यादा नमक वाले, अति गरम, तीक्ष्ण, रूखे और दाहकारक एवं दुःख चिन्ता और रोगों को उत्पन्न करने वाले आहार के पदार्थ राजसिक स्वभाव वाले पुरुषों को पसन्द आते हैं और जो तामसी प्रकृति के पुरुष होते हैं, वे वासी, रस रहित, दुर्गन्धयुक्त, अधपके, उच्छिष्ट (जूठे) और अपवित्र भोजन को पसन्द करते हैं।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोजन की शुद्धता और पवित्रता

भोजन की शुद्धता तथा पवित्रता का विषय निस्सन्देह विचारणीय है। जो लोग आत्मोत्कर्ष तथा सद्भावों के महत्व से अनजान हैं और भोजन का एकमात्र उद्देश्य जीभ के चटोरेपन की पूर्ति करना अथवा पेट के गड्ढे को भरना ही समझते हैं वे तो शुद्ध-अशुद्ध, पवित्र-अपवित्र का विचार किये बिना हर तरह की दुकानों में, जलपानगृहों और होटलों में आधे जूठे बर्तनों में गन्दे नौकरों के हाथों का भोजन बड़े शौक से कर लेते हैं। पर फिर उनकी बुद्धि भी राजसी या तामसी हो जाती है और उनमें तथा एक अमीर आदमी के यहाँ पाले हुये बढ़िया भोजन पाने वाले पशु में थोड़ा ही अन्तर रह जाता है। देखने में वे पशु की अपेक्षा स्वाधीन और स्वच्छन्द जाने पड़ते हैं, पर वास्तव में जिस प्रकार पशु अपने स्वामी के अधीन रहता है ऐसे मनुष्य भी अपनी इन्द्रियों और वासनाओं के वशीभूत होकर जीवित रहते हैं। उनका कोई व्यक्तित्व नहीं होता, बुद्धिमान लोगों की निगाह में उनका कोई महत्व नहीं होता और वे तुच्छ जीवों की तरह निरर्थक जीवित रहकर अकाल में ही काल-कवलित हो जाते हैं।

भगवान के प्रसाद के रूप में भोजन ग्रहण करना

भोजन से सर्वोत्तम लाभ प्राप्त करने की विधि यह है कि उसे भगवान के प्रसादस्वरूप समझकर ग्रहण किया जाय। वैसे तो अधिकांश भारतीय भोजन को भगवान की देन समझते हैं और कहा करते हैं कि "दाने-दाने पर मुहर है।" पर व्यवहार में इस पर अमल करने वाले थोड़े ही होते हैं। वास्तव में हमें जो कुछ प्राप्त होता है वह भगवान की कृपा का ही फल है। बिना भगवान के न हमारा कोई अस्तित्व है और न अन्य सांसारिक पदार्थों का। इसलिये जो सच्चा आस्तिक है, उसका कर्तव्य है कि भोजन का उपयोग भगवान के आदेशानुसार करे। नकली जायके अथवा स्वाद के लिये भगवान के उत्पन्न किये लाभदायक पदार्थों को बहुत अधिक बदल डालना जिससे वे सात्विक के बजाय राजसिक अथवा तामसिक हो जायँ अथवा इतना भूनना और तलना कि वे गुणहीन और हानिकर बन जायँ, एक प्रकार से भगवान के नियमों का उल्लंघन करना ही है। इसलिये जो व्यक्ति आध्यात्मिक जीवन के अभिलाषी हों, उनको अवश्य सादा, शुद्ध और पवित्र भोजन ही ग्रहण करने का पूरा-पूरा ध्यान रखना चाहिये।

अधर्म का अन्न खाना पतनकारी होता है

साथ ही हमको एक अन्य विषय का भी ध्यान रखने की आवश्यकता है। वह यह है कि भोजन अन्याय या अधर्म के पैसे से लाया हुआ न हो। बहुत बार ऐसा देखने में आया है कि पवित्र धार्मिक जीवन बिताने वाले व्यक्ति किसी भी विशेष व्यक्ति के यहाँ कुछ समय तक भोजन करने से निन्दनीय घृणित कार्य करने को तत्पर हो जाते हैं। ऐसा होने का कारण कभी-कभी यह भी होता है कि वह भोजन अन्याय या पाप की कमाई का होता है, जिसका प्रभाव सज्जन व्यक्ति को भी एक-बार दुर्जन बना देता है। यही कारण है कि अनेक साधक अपनी कमाई के धन से प्राप्त और अपने हाथ से बनाये भोजन के अतिरिक्त अन्य के यहाँ का अन्न ग्रहण नहीं करते। कुछ भी हो, आध्यात्मिकता की रक्षा के लिये भोजन में किसी प्रकार के पापयुक्त साधन का सम्पर्क न रहने का ध्यान रखना भी आवश्यक है।

हिन्दू-धर्म के शास्त्रों में भोजन की आन्तरिक स्वच्छता पर भी बहुत जोर दिया है। कितने ही व्यक्ति तो इसका अर्थ कोरी छूतछात समझते हैं, पर वास्तव में इसका आधार भोजन पर मानवीय विद्युत का प्रभाव होता है, जिसका असर खाने वाले पर न्यूनाधिक परिणाम में पड़ता ही है। यदि भोजन बनाने वाला कोई नीच विचारों का अथवा निन्दनीय आचरण वाला व्यक्ति हुआ तो उसके द्वारा बार-बार स्पर्श किये गये भोजन में उसके आन्तरिक विचारों का कुछ असर आ जाना स्वाभाविक है। इसलिये हमारे भोजन बनाने का कार्य प्रायः पत्नी, माता या बहिन आदि कोई निकट सम्बन्धी ही करते हैं, जिनके विचार अपने से मिलते-जुलते होते हैं और जो हमको हृदय से प्रेम भी करते हैं। इसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विचार से हमारे यहाँ एकान्त में भोजन करने का भी नियम बनाया गया है जिससे किसी हीन अथवा नीच विचारों वाले व्यक्ति की दृष्टि भोजन पर न पड़े। भोजन के अवसर पर ऐसे व्यक्ति को देखने से अपने मन में कुछ अनुपयुक्त विचार उत्पन्न हो सकते हैं, जो आत्मकल्याण की दृष्टि से हानिकर ही सिद्ध होते हैं।

भोजन सम्बन्धी धार्मिक अंध-विश्वास

पर आज हालत उल्टी दिखाई पड़ रही है। प्राकृतिक और सात्विक भोजन का महत्व तो लोग भूल गये और व्यर्थ के अधंविश्वासों को उसका स्थान दे दिया है। उदाहरण के लिये—कितने ही प्रदेशों में लोग मसूर की दाल खाना बहुत ही बुरा समझते हैं, क्योंकि उसका रंग लाल होता है। एक स्थान में हमने देखा कि कितनी ही जाति वाले केवल इसलिये मसूर नहीं खाते क्योंकि वहाँ 'मसूरियन' नाम की एक देवी की पूजा की जाती है। पर हम ऐसे भी लोगों को जानते हैं कि जो मसूर की दाल खाना तो पाप समझते हैं पर साबुत मसूर खा लेते हैं क्योंकि जब तक उस पर छिलका रहता है तब तक उसका रंग भूरा-सा रहता है—लाल नहीं दिखाई पड़ता और पकने के बाद तो पीला हो ही जाता है। हम नहीं समझते कि ऐसी बातों का धर्म या आध्यात्मिकता से कोई सम्बन्ध हो सकता है। मसूर की दाल के व्यवहार करने या न करने का निर्णय अगर उसके गुण-दोषों के आधार पर किया जाता तो कोई बात न थी, पर एक काल्पनिक बहम के आधार पर उसका बहिष्कार करना बुद्धिमता की बात नहीं मानी जा सकती। इसी प्रकार हमने देखा है कि कई लोग अच्छे लाल रंग के तरबूज को भी इसी कारण नहीं खाते कि कुछ मूर्ख उसे गौमाँस के समान रंग का कह देते हैं। वे लोग लाल हिस्से को छोड़कर सफेद को खा लेते हैं। कितने ही लोग सैंधे नमक को जिसका रंग कुछ लाली लिये रहता है इसी ख्याल से नहीं खाते और बिल्कुल सफेद रंग का नमक तलाश किया करते हैं। इन बातों को, जिनका कोई बुद्धिसंगत आधार नहीं, छोड़ देना ही ठीक है।

कितने ही लोग दूध के पीने पर इस आधार पर एतराज करते हैं कि वह बछड़े का हिस्सा है और उसे दुहकर अपने काम लाना अन्याय है—पाप है। साधारण दृष्टि से यह कथन सत्य जान पड़ता है, पर वर्तमान परिस्थितियों में जब लोगों ने गाय, भैंसों को पालतू बना लिया है और उनको विशेष भोजन देकर दस-दस, पाँच-पाँच सेर दूध देने वाली कर दिया है, तब यह ऐतराज निरर्थक जान पड़ता है। अब ये भैंसें या गायें जितना दूध देती हैं, उनका बछड़ा उसका आधा चौथाई भी नहीं पी सकता। इसलिये बछड़े को पिलाने के बाद शेष दूध का लेना बुरा नहीं समझा जा सकता। हाँ, जो लोग बछड़े को भूखा मार कर या नाम मात्र के लिये पाव, आधा सेर दूध देकर शेष सब दूध को बेचने के लिये निकाल लेते हैं, वे अवश्य दोषी कहे जा सकते हैं। इस कुप्रथा को मिटाना और बढ़िया डेरियों के रूप में अधिक दूध देने वाले पशुओं को काम में लाना ही उचित कहा जा सकता है।

यही बात शहद के सम्बन्ध में कही जा सकती है। वह सर्वोत्तम मीठा पदार्थ माना गया है और आयुर्वेद में अधिकांश नुस्खों में उसका प्रयोग करना लिखा है। पर पुराने तरीके से शहद निकालने वाले जिस प्रकार धुँआ आदि से मक्खियों को उड़ाकर, उनके अंडे-बच्चों सहित छत्ते को निचोड़कर शहद निकालते हैं, उसे देखकर अनेक लोग उसका व्यवहार करना पापपूर्ण बतलाते हैं। निस्सन्देह यह तरीका अन्याय का और गन्दा भी है, क्योंकि इस प्रकार निकाला शहद कभी अच्छा नहीं हो सकता, उसमें मक्खियों के अंडों और मोम का भी कुछ अंश मिलकर उसके स्वाद और गुण को खराब कर देता है। पर आधुनिक ढंग से मक्खियों को पालकर और उनके लिये फूलों के बगीचे लगाकर जो शहद बिना एक भी मक्खी को मारे और छत्ते को नष्ट किये यंत्रों से निकाल लिया जाता है, उसमें उपर्युक्त दोष नहीं बतलाया जा सकता। ऐसी व्यवस्था में मक्खियाँ इतना ज्यादा शहद पैदा कर लेती हैं, जिसे वे स्वयम् नहीं खा सकतीं।

माँस-भक्षण के दोष

पर ये बातें माँस-भक्षण के सम्बन्ध में नहीं कही जा सकतीं। यद्यपि सृष्टि में अनेक प्राणी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरे प्राणियों को खाकर जीवन-निर्वाह करते हैं पर वे ज्ञान और विवेक से शून्य होते हैं और प्रकृति ने उनको जैसा बनाया है उसी का अनुसरण वे करते रहते हैं। पर मनुष्य तो सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी है और उसने ज्ञान सागर में गोता लगाकर आत्मा और परमात्मा के वास्तविक स्वरूप का भी अनुभव कर लिया है, इसलिये यदि वह भी शेर, चीते या कुत्ते, बिल्ली की तरह अन्य प्राणियों को खाकर अपनी उदरपूर्ति करने लगे तो उसे भी एक पशु ही माना जायेगा।

दूसरी बात यह है कि माँस किसी दृष्टि से सात्विक भोजन नहीं कहा जा सकता, जिसका उपदेश गीता में दिया गया है। माँस उत्तेजक आहार है जिससे मनुष्य की वासनायें भड़कती हैं, विवेक कुंठित होता है, स्वार्थ-भाव बढ़ता है और वह आत्मज्ञान के उच्च आदर्श से गिर जाता है। स्वास्थ्य की दृष्टि से भी किसी ने माँस को उत्तम नहीं बतलाया। मनुष्य के दाँतों की बनावट की दृष्टि से वह उसका स्वाभाविक भोजन कदापि नहीं माना जा सकता। फिर भी जो लोग माँस-भक्षण का समर्थन करते हैं, वे अपने स्वार्थ और जिव्हा के स्वाद के कारण ही ऐसा करते हैं। कुछ लोग देवी, भैरों आदि के सामने पशुओं की बलि देकर 'धर्म' के नाम पर उनका माँस खाते हैं। ऐसे लोग साधारण माँसाहारियों से भी कहीं अधिक पापी हैं। वे अपने नीच स्वार्थ के लिये धर्म को भी बदनाम करते हैं। यों जो लोग लाचारी से या अपने देश के वातावरण तथा सामाजिक परिस्थितियों के कारण माँसाहार करते हैं, उनके कार्य को अज्ञानजनित समझा जा सकता है, पर जो लोग जान-बूझकर और कोई आवश्यकता या विवशता न होते हुये भी माँस का उपयोग करते हैं, वे निस्सन्देह निन्दा और घृणा के पात्र हैं। इस प्रकार के माँसाहारी कभी उच्च श्रेणी के मनुष्य नहीं माने जा सकते। आध्यात्मिक दृष्टि से तो माँसाहार घोर निकृष्ट प्रवृत्ति है ही। यही कारण है कि ईसाई और मुसलमान जैसे मजहबों में भी जहाँ साधारण मनुष्यों में माँस खाने का आम रिवाज पाया जाता है, आत्मिक साधन करने वालों के लिये उसका निषेध है। धर्म प्रवृत्ति की उत्पत्ति और वृद्धि के लिये एकमात्र सात्विक भोजन ग्रहण करना ही मनुष्य का कर्तव्य है।

कृत्रिम और मिलावटी भोजन

इस बात को प्रायः सभी समझते हैं कि ताजा, बिना किसी प्रकार की मिलावट का और सादा खाना स्वास्थ्य को ठीक रखता है, फिर भी अधिकांश व्यक्ति आदत और चटोरपन के वशीभूत होकर कृत्रिम खाद्य पदार्थों का उपयोग करते हैं। उदाहरणार्थ—यह सभी जानते हैं कि आम, मिर्च आदि के अचार, जो प्रायः चार, छः या आठ महीने पुराने खाये जाते हैं और जिनमें मिर्च, मसाले तथा तेल की भरमार रहती है, स्वास्थ्य के लिये हितकर नहीं होते। वैद्य, डाक्टर प्रत्येक रोग में तेल, खटाई, मिर्च का परहेज बतलाते हैं और ये तीनों ही पदार्थ अचार में गले-सड़े रूप में मौजूद रहते हैं। फिर भी असंख्यों व्यक्ति बिना अचार के भोजन को पसन्द नहीं करते और बहुत-से तो महीने में दस, बारह दिन सिर्फ अचार से ही खाना खा लेते हैं। ऐसे ही एक सज्जन का किस्सा हमको याद आता है। एक बार हम किसी वैद्य के पास बैठे थे। बातचीत के सिलसिले में वैद्य जी ने कहा कि "हमारे भाई, जिनकी उम्र ६० वर्ष की है, अभी बिलकुल स्वस्थ हैं और जहाँ तक हमको याद आता है, वह कभी बीमार नहीं पड़े हैं।" इसका कारण बताते हुये उन्होंने कहा कि वे सदा रोटी और मूँग की दाल या घिया, तोरई आदि जैसा कोई साग ही खाते हैं और हमेशा दालान आदि में छाया में सोते हैं। इस बात को सुनकर एक सुनने वाला बोल उठा—"वैद्यजी ! आप तो उनको स्वस्थ कहते हैं, पर हमारी समझ में तो वे सबसे ज्यादा बीमार रहने वाले आदमी हैं। जब वे सदा बीमारों को पथ्य में दिया जाने वाला भोजन करते हैं और उसी तरह ठण्डी-गर्मी से बचकर रहते हैं, तो उनको बीमार नहीं तो क्या कहा जाय ?"

डिब्बों में बन्द भोजन की खराबियाँ

आजकल बड़े कहलाने वाले लोगों में विदेशियों की नकल करके डिब्बे में बन्द आहार का प्रचार बढ़ता जाता है। तरह-तरह के फल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और तरकारियाँ विशेष रूप से तैयार करके डिब्बों में बन्द कर दिये जाते हैं और महीनों बाद काम में लाये जाते हैं। इस तरह के सब पदार्थ चाहे देखने में सुन्दर और जायकेदार मालूम हों पर उनमें लाभ कुछ भी नहीं होता। एक विद्वान ने तो उनका नाम 'मुर्दा भोजन' रखा है, क्योंकि उनके स्वाभाविक विटामिन, क्षार पदार्थ आदि सब नष्ट हो जाते हैं और कई महीने तक बन्द पड़े रहने से उनकी जीवनी शक्ति बिलकुल समाप्त हो गई होती है। हमारे देश में भी फलों और वनस्पतियों को मुरब्बे के रूप में चीनी की चाशनी में 'सुरक्षित' रखने का रिवाज है। आचार भी तेल में खट्टे या चटपटे फलों को सुरिक्षत रखने का ही एक तरीका है। ये कृत्रिम अथवा विशेष विधियों से 'सुरक्षित' बनाये गये भोज्य-पदार्थ सब प्रकार से हानिकारक हैं। उनके लिये ताजा फलों और शाकों की अपेक्षा अधिक पैसा देना पड़ता है, वे स्वास्थ्य की हानि करते हैं और यदि उनका अधिक मात्रा में लगातार प्रयोग किया जाय तो मनुष्य के बीमार होने की भी सम्भावना रहती है। इस दृष्टि से ये व्यर्थ की वस्तुएँ ही कही जायेंगी और जो लोग अपने हित-अनहित का ख्याल रखते हैं, उनको इनका प्रयोग यथासंभव कभी नहीं करना चाहिये।

मिठाइयाँ और पकवान

आयुर्वेद में तथा अन्य शास्त्रों में भी मधुर रस की प्रशंसा की गई है और उसे सात्विक भोजन बतलाया गया है। पर जो लोग इसका आशय लड्डू, पेड़ा, जलेबी, इमरती, बालूशाही आदि मिठाइयों से समझते हैं, वे बड़ी भूल करते हैं। भारतीय शरीर शास्त्रवेत्ताओं ने मधुर और स्निग्ध भोजन को उत्तम बतलाया है, पर इसको पढ़कर जो लोग हर रोज घी, चीनी और सूजी का हलुवा खाते हैं, वे स्वास्थ्य की दृष्टि से कभी उन्नति नहीं कर सकते। मधुर रस का अर्थ अनाज, दूध और फलों में पाई जाने वाली उस शर्करा से है, जो उनमें प्राकृतिक रूप से विद्यमान रहती है। इसके सिवा शहद, मिश्री और गुड़ का भी थोड़ी मात्रा में प्रयोग उपयोगी हो सकता है। पर जब मशीनों से बनी सफेद चीनी को मैदा, घी (वास्तव में निकली घी या 'डालडा' आदि) के साथ मिलाकर या तलकर तरह-तरह के आकारों और स्वादों की मिठाइयाँ बना दी जाती हैं, तब वे सब तरह से हानिकारक ही हो जाती हैं, क्योंकि वे बहुत कठिनाई से और देर से पचती हैं और ज्यादा खाने पर कब्ज पैदा करती हैं। वर्तमान समय की खोजों के अनुसार सफेद चीनी को 'जहर' कहा गया है, मैदा लेई की तरह आँतों में चिपटने वाला पदार्थ है और वनस्पति 'घी' तरह-तरह के रासायनिक पदार्थों द्वारा साफ करके बिल्कुल निकम्मा और स्वास्थ्य के लिये घातक पदार्थ होता है। जो इन तीनों के मिश्रण को खुशी-खुशी, सौभाग्य समझकर सदा खाने का प्रयत्न किया करते हैं, उनका भगवान ही रक्षक है।

खाने-पीने की वस्तुओं में मिलावट

वर्तमान समय म खाद्य-पदार्थों का शुद्ध मिल सकना भी एक समस्या हो गई है। बाजार में पूरा दाम देकर चीज खरीदने पर भी उसकी शुद्धता में सन्देह बना रहता है और वास्तव में अनेकों दुकानदार लोगों की स्वास्थ्य हानि की कुछ भी पर्वाह न करके खाद्य पदार्थों में हानिकारक वस्तुओं की मिलावट कर देते हैं। अभी कुछ समय पूर्व सरकार ने इस प्रकार की प्रवृत्ति के विरुद्ध कदम उठाया था और उसमें पता चला कि बाजार में शायद ही कोई ऐसा खाद्य पदार्थ मिलता होगा, जिसमें बेईमान दुकानदार मिलावट न करते हों। गेहूँ के आटा में जुआर या जौ का आटा मिला देना, घी में तरह-तरह के तेल या 'वनस्पति घी' मिलाना, चीनी, बूरा में सेलखड़ी, आटा आदि मिलाना, सरसों और तिल के तेल में घटिया चीजों के तेल मिला देना, खोवा की मिठाइयों में शकरकन्द और अरुई मिलाना आदि की शिकायतें सदा सुनने में आया करती हैं। आजकल पिसे हुये मसालों का प्रचार बढ़ गया है और उनमें आमतौर से गेरू, लकड़ी का चूरा, मिट्टी, तरह-तरह के जंगली बीज आदि मिलाये जाते हैं। ये सब मिलावटी पदार्थ स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक होते हैं और कभी-कभी उनसे भयंकर रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कुछ वर्ष पहले कई शहरों के व्यापारियों ने सरसों के तेल में सत्यानाशी के बीजों का तेल मिलाकर बेचना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आरम्भ किया था, जिससे शीघ्र ही 'बेरी-बेरी' रोग फैल गया था और कितने ही व्यक्ति उसमें मर गये थे।

इस प्रकार की मिलावट करना समाज के प्रति एक जघन्य अपराध है और सरकार का कर्तव्य है कि इस सम्बन्ध में कठोर उपायों से काम ले। जो लोग अपने नीच स्वार्थ के लिये अन्य लोगों के स्वास्थ्य और प्राणों के नष्ट होने की परवाह नहीं करते वे चोर और डाकुओं से भी बढ़कर दोषी हैं, एक नम्बर के विश्वासघाती हैं और उनके साथ किसी प्रकार की दया, ममता का व्यवहार करना उचित नहीं। चाहिये तो यह कि इस प्रकार समाजद्रोही लोगों का समाज स्वयं बहिष्कार करे और उनको कठोर सामाजिक दण्ड दे। सर्व-साधारण को इस सम्बन्ध में स्वयं भी सावधान रहना चाहिये और जहाँ मिलावट का सन्देह हो, वहाँ उस पदार्थ की भली प्रकार से जाँच करके ही खरीदना चाहिये।

रंग और सेण्ट आदि का उपयोग

इस समय लोगों में एक प्रवृत्ति यह भी देखने में आती है कि वे फैशन और शौक के लिये खाद्य पदार्थों में तरह-तरह के रंग और सेण्ट आदि का प्रयोग करते हैं। इमरती, जलेबी आदि में नारंगी रंग आमतौर से मिला दिया जाता है। कहीं-कहीं तो हमने हलवाइयों को जलेबी की मैदा में इतना ज्यादा रंग मिलाते देखा है कि उसे बनते देखकर घृणा होने लगती है। खोंचे वाले सोंठ आदि को आकर्षक बनाने के लिए उसमें रंग मिला देते हैं। इस प्रकार का खोंचा खाने से एक बार हमारे कई परिचित व्यक्तियों के मुख में छाले पड़ गये थे, जो लगभग एक वर्ष में बड़ी कठिनाई से मिट सके। इसी तरह लेमजूस आदि मिठाइयों में जो लाल, पीले रंग डाले जाते हैं, उनसे बालकों को कई प्रकार के रोग लग जाते हैं। आजकल बड़े शहरों में होटल, जलपान गृहों में आमतौर से घटिया पदार्थ काम में लाये जाते हैं और उनको आकर्षक बनाने के लिये उनमें रंग और सेण्टों का प्रयोग किया जाता है, जिससे ग्राहक उनके घटियापन को न जान सकें और धोखे में आ जायें। इस प्रकार के कार्यों से लाखों व्यक्तियों का स्वास्थ्य नष्ट होता रहता है और वे तरह-तरह के रोगों का शिकार बने रहते हैं।

इन दिनों चाय, काफी आदि का प्रचार अधिक बढ़ रहा है और लोग इनको प्रायः बाजारों में ही पीते हैं। अनेक दुकानदार इनको बढ़िया दिखाने के लिये तरह-तरह के कृत्रिम उपायों से काम लिया करते हैं। घटिया चाय और काफी में रंग मिलाकर उसे ऊँचे दर्जे की बतलाया जाता है, चाय की पत्ती में किसी अन्य प्रकार पत्तियों या पहले की उबाली पत्तियों को मिला देना साधारण-सी बात है। साबूदाना, अरारोट, बार्ली आदि जो पदार्थ रोगियों और बच्चों के काम में आते हैं, उनमें भी अक्सर मिलावट की जाती है, जिसका बहुत भयंकर परिणाम होता है। आजकल तो हर तरह की दवाओं में भी मिलावट की शिकायत सुनने में आती है। वंश लोचन, सतगिलोय, कपूर, हींग जैसी साधारणतः प्रयोग में आने वाली वस्तुएँ प्रायः कृत्रिम या मिलावटी बेची जाती हैं। यह मनोवृत्ति सामाजिक स्वास्थ्य की दृष्टि से बड़ी शोचनीय है।

प्राकृतिक-जीवन की दृष्टि से आदर्श भोजन

पिछले अध्यायों में हमने मुख्य रूप से उस भोजन विधि का वर्णन किया है, जो हमारे देश के साधारण मनुष्यों के लिये उपयोगी हो सकती है। हम समझते हैं कि अधिकांश भारतवासी अपनी आर्थिक स्थिति, आरम्भ से पड़ी हुई आदत, पारिवारिक वातावरण और परम्परा के प्रभाव से अपने भोजन में क्रान्तिकारी परिवर्तन नहीं कर सकते। उनसे यह आशा करना कि वे तुरन्त ही दाल, चावल और रोटी के स्थान पर केवल शाक और फलों का ही प्रयोग करने लगेंगे संभव नहीं। इसलिये आरम्भ में स्वास्थ्य-सुधार की दृष्टि से उनका कर्तव्य यही है कि वे आटे में से चोकर को अलग न करें, हाथ से कुटे चावल का प्रयोग करें, जिसके ऊपर लाल पर्त लगा रहता है और तरकारियाँ ज्यादा न छीलें और न उबालकर उनके पानी को फैंकें। इस प्रकार उनके आहार का जीवन-तत्व बहुत कुछ सुरक्षित रह सकेगा और उनके स्वास्थ्य की उन्नति होती चली जायेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राकृतिक भोजन के सिद्धान्त

पर जब हम प्राकृतिक भोजन के सम्बन्ध में विशेष रूप से विचार करते हैं तो उसे स्वास्थ्य के लिये बहुत उपयोगी पाते हैं। इतना ही नहीं जो व्यक्ति अभी तक भोजन में तरह-तरह की भूल करके किसी रोग के पंजे में फँस चुके हैं और जो तरह-तरह की डाक्टरी और वैद्यक दवायें खाकर भी उससे छुटकारा नहीं पा सके हैं, वे प्राकृतिक भोजन का सहारा लेकर उस रोग को जड़-मूल से मिटा सकते हैं। भोजन-वैज्ञानिकों ने तरह-तरह की जाँच करके यह भली-भाँति सिद्ध कर दिया है कि सब प्रकार के रोगों और बीमारियों का मुख्य कारण अनुपयुक्त ढंग का भोजन ही होता है। जो लोग खाद्य-पदार्थ के गुण-दोषों पर ध्यान दिये बिना और अपने शरीर की विशेष परिस्थिति को समझे बिना केवल जिह्वा को तृप्त करने के लिये भोजन करते हैं या भोजन में परिवर्तन करने के झंझट से बचने के लिये जैसा हमेशा से चला आया है, वैसा ही भोजन क्रम चलाते रहते हैं, वे न तो कभी सच्चे स्वास्थ्य का अनुभव कर सकते हैं और न रोग तथा बीमारियों से कभी छुटकारा पा सकते हैं। इसलिये प्राकृतिक भोजन का सिद्धान्त प्रत्येक मनुष्य को भली प्रकार समझ लेना चाहिये और एकदम न हो सके तो धीरे-धीरे उसे अमल में लाने का प्रयत्न करना चाहिये। यह एक ऐसा काम है, जो जितना किया जायेगा उतना लाभ तो सदा देगा ही और जिससे कभी हानि की आशंका नहीं हो सकती।

आहार के दो मुख्य विभाग

प्राकृतिक आहार का सारांश यह है कि हम लोग आमतौर पर जितने प्रकार के खाद्य पदार्थ काम में लाते हैं, वे मोटे हिसाब से दो भागों में विभाजित होते हैं—एक अम्लजातीय अर्थात् खटाई (एसीडिटी) उत्पन्न करने वाले और दूसरे क्षार-जातीय अर्थात् विभिन्न प्रकार के लवण (साल्ट) देने वाले। वैसे हमारे प्रत्येक आहारयोग्य पदार्थ में न्यूनाधिक मात्रा में सभी तरह के आवश्यक तत्व पाये जाते हैं, पर कुछ पदार्थों में प्रोटीन (माँस जातीय), कार्बोज (श्वेतसार) और स्नेह (चिकनाई) आदि की प्रधानता रहती है और कुछ भोजन को ठीक ढंग से पचाकर उसका सात्मीकरण करने वाले अर्थात् उसे शरीर में मिला देने वाले क्षार और विटामिन आदि अधिक मात्रा में मिलते हैं। इनमें से प्रथम प्रकार के उपादानों को प्राप्त करने के लिये हमारे देश में विशेष रूप से तरह-तरह के अन्नों, दालों, गुड़, चीनी, घी और तेल का प्रयोग किया जाता है। अन्य देशों के निवासी, जहाँ माँसाहार का अधिक प्रचार है, कितने ही पशुओं के माँस को भी इसी रूप में ग्रहण करते हैं। दूसरे प्रकार के तत्वों को प्राप्त करने का मुख्य साधन हर तरह के हरे शाक, तरकारी और फल माने गये हैं।

यद्यपि जीवन धारण करने के लिये इन दोनों प्रकार के उपादानों की समान रूप से आवश्यकता है, पर चूँकि क्षार और विटामिन ऐसे सूक्ष्म तत्व हैं जो सामान्य श्रेणी के व्यक्तियों को न तो पृथक् दिखलाई पड़ते हैं और न जिनके प्रभाव को वे भली-भाँति समझ पाते हैं इसलिये वे अन्न, दाल, माँस आदि ठोस पदार्थों को ही जीवन का मुख्य आधार समझते हैं और दूसरे प्रकार के पदार्थों की बहुत कम चिन्ता करते हैं। प्राकृतिक भोजन के ज्ञाताओं के अनुसार यही सबसे बड़ी कमी अथवा अज्ञान है, जिसके फलस्वरूप तरह-तरह की बीमारियों की उत्पत्ति होती है और मनुष्य अनेक प्रकार की शारीरिक निर्बलताओं का शिकार बना रहता है। प्राकृतिक आहार वालों का सिद्धान्त है कि मनुष्य यदि पाव भर या २० तोला के लगभग प्रोटीन और श्वेतसार वाले पदार्थ खाये तो उसे स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये सेर भर या ८० तोला क्षार जातीय पदार्थ ग्रहण करने चाहिये। पर इसके विपरीत सामान्य व्यक्ति समझते हैं कि शाक, भाजी और फल तो फालतू की चीजें हैं। इसलिए वे अन्न आदि ठोस पदार्थों को तो आधा सेर या ४० तोला के लगभग आवश्यक समझते हैं, पर साग-भाजी को छटाँक, आधपाव (५-१० तोला) ही पर्याप्त मान लेते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि उनको स्वास्थ्य-रक्षा के लिये आवश्यक क्षार और विटामिन बहुत कम प्राप्त होते हैं और साधारण काम-काज करते रहने पर भी वे बीच-बीच में तरह-तरह की शारीरिक व्याधियों में ग्रस्त रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

क्षारों के अभाव से होने वाली हानियाँ

वैज्ञानिकों ने अभी तक संसार में लगभग सौ प्रकार के तत्वों का पता लगाया है, जिनमें से १६ मानव-देह में पाये जाते हैं। इनमें से चार—कार्बन, नत्रजन (नाइट्रोजन), ओषजन (आक्सीजन) और उज्जन (हाइड्रोजन) मुख्य माने जाते हैं और शरीर का अधिकांश इन्हीं का रूपान्तर होता है। शेष बारह नाम इस प्रकार हैं—केलसियम, गन्धक, फास्फोरस, सोडियम, पोटेसियम, मैग्नीशियम, लीथियम, फ्लोरीन, क्लोरीन, आयोडीन, सिलकन और लौह। इनमें से कई तत्व मानव देह में अत्यन्त सूक्ष्म परिमाण में पाये जाते हैं और उनका उपयोग भी बहुत सीमित होता है। मुख्य क्षारों का परिचय इस प्रकार है—

१. केलसियम

इसका मुख्य उपयोग हड्डी बनाना और उनको मजबूत रखना माना गया है। जिन छोटे बच्चों की पाचन क्रिया ठीक नहीं होती और उनको भोजन में पर्याप्त मात्रा में चूना नहीं मिलता तो उनकी बाढ़ रुक जाती है और हड्डियाँ भी कमजोर पड़कर टेढ़ी हो जाती हैं। उस समय डाक्टर उनको प्रायः केलसियम मिश्रित औषधियाँ देते हैं। बाजार में बालामृत और ग्राइप मिक्चर के नाम से जो पचासों तरह की पेटेण्ट दवायें बिकती रहती हैं, उनमें मुख्यतः विशेष रूप से तैयार किया चूने का पानी ही शामिल होता है। स्वास्थ्य को ठीक रखने और शरीर की उचित वृद्धि के लिये १३ वर्ष तक के बालकों को प्रतिदिन एक माशा चूना आवश्यक होता है। बड़ी आयु के पुरुषों की जिनकी बाढ़ पूरी हो चुकती है आधा माशा चूना ही पर्याप्त होता है। पर यह चूना हमारे देश की तरह पान के साथ लगाकर खा लेने से काम नहीं देता। वह हमारे शरीर में तभी जज्ब होता है, जब वह विभिन्न प्रकार के प्राकृतिक खाद्यों से शरीर को मिलता है। उदाहरण के लिये दूध में तो यह पाया ही जाता है और छोटे बच्चों को खासतौर पर उसी में से प्राप्त होता है। पालक और गाजर जैसी वनस्पतियों में भी इसका काफी अंश होता है और यदि इन वस्तुओं का कच्ची अवस्था में ही रस निकालकर सेवन किया जाय तो उससे केलसियम की कमी से उत्पन्न होने वाले कई रोग दूर होकर स्वास्थ्य की आश्चर्यजनक उन्नति हो सकती है। अन्नों की चोकर में भी इसका काफी अंश होता है, इसलिये गेहूँ आदि की चोकर को साफ करके आटे में मिलाकर उपयोग में लाना आवश्यक है, चोकर रहित बारीक आटे का लाभ बहुत कम हो जाता है।

२. फास्फोरस

यह भी हड्डियों को बनाने वाला एक उपादन है और केलसियम के साथ इसका संयोग रहना अनिवार्य है। ये दोनों उपादान मिलकर ही हमारी हड्डियों को मजबूत बना सकते हैं। मनुष्य ही नहीं अन्य प्राणियों और वनस्पतियों की वृद्धि के लिये फास्फोरस आवश्यक माना गया है। इससे शरीर के भीतर रासायनिक क्रिया होकर एक रस बनता है जिससे प्रोटीनयुक्त आहार पचता है। फास्फोरस हरे शाकों में काफी परिमाण में रहता है और दूध तथा गिरी के मेवों में भी मिलता है।

३. लोहा

इससे हमारे रक्त में लाल रंग के अणुओं की संख्या बढ़ती है और खून शक्तिशाली बना रहता है। इसका दूसरा कार्य ऑक्सिजन (प्राण वायु) को खींचकर शरीर के कीटाणुओं के पास पहुँचाना है, जिससे शरीर के विकार भस्म हो जाते हैं और खून शुद्ध होता है। यह चौलाई और मैथी के साग में अधिक परिमाण में पाया जाता है। धनिया, पोदीना, मूली, नीम की कोंपल और मूँग की दाल में भी यह काफी मात्रा में मिलता है।

४. ताँबा

यद्यपि शरीर में ताँबे का परिमाण ज्यादा नहीं होता पर तो भी खून को शुद्ध करने में लोहे के साथ ताँबे की भी आवश्यकता होती है। ताँबे को भारतवर्ष में कीटाणुनाशक माना गया है, इसलिये ताँबे के पात्र में जल रखना लाभदायक होता है। साथ ही ताँबे की अधिक मात्रा विष का काम करती है, इसलिये ताँबे के पात्रों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाना पकाने का निषेध है। यह भी हरे शाकों और तरकारियों में विशेष रूप से पाया जाता है।

५. मैग्नीशियम

यह भी एक खनिज लवण है जिसका लोहे के साथ होना स्वास्थ्य के लिये परमाश्यक है। इसकी कमी से पुरुषों में नपुंसकता का दोष पैदा होता है और स्त्रियों की प्रकृति में भी अन्तर पड़ जाता है। यह विशेष रूप से गेहूँ और चावल के ऊपरी भाग अर्थात् चोकर और कना में होता है।

६. क्लोरीन

यह हमारे नित्यप्रति खाये जाने वाले नमक का ही एक रूप है। पर जो नमक ऊपर से मिलाकर खाया जाता है वह हमारे शरीर में सम्मिलित नहीं हो पाता वरन् प्रायः सभी पेशाब के साथ निकल जाता है। इसलिये अधिक नमक खाने से 'यूरिया' नामक विष पैदा होकर मूत्र-विकार पैदा हो जाता है। क्लोरीन तत्व हमको पालक, टमाटर, केला आदि से मिलता है वही शरीर में मिलकर आहार को पचाने का कार्य करता है।

७. आयोडीन

यह पानी के निकट पैदा होने वाले सागों में पाया जाता है। कितने ही फलों से भी मिलता है। इसकी कमी से घेंघे का रोग पैदा हो जाता है। समुद्र से दूरवर्ती पहाड़ों की तराई के प्रदेश में इस तत्व की कमी होती है, जिससे वहाँ घेंघा बीमारी ज्यादा देखने में आती है।

ये सब लवण अल्प मात्रा में होते हुये भी हमारे जीवन के आधार होते हैं। डाक्टरों ने परीक्षा करके मालूम किया है कि अगर हमारे आहार में में इन क्षारों को सर्वथा निकाल दिया जाय तो हम तीस दिन से अधिक जीवित नहीं रह सकते। उन लोगों ने कुछ कुत्तों को बिना क्षार वाला भोजन खिलाकर देखा तो वे सब छब्बीस से छत्तीस दिन के भीतर मर गये। ये क्षार विशेष रूप से विभिन्न प्रकार की हरी तरकारियों में ही मिलते हैं। इसलिये जो लोग स्वास्थ्यरक्षा के इच्छुक हैं, उन्हें अवश्य इनका उचित मात्रा में प्रयोग करना चाहिये और उनको उबालकर पानी कभी नहीं फेंक देना चाहिये क्योंकि उस दशा में अधिकांश क्षार उसी में निकल जाते हैं।

शाकों के पकाने में सावधानी

जीवन के लिये महान् उपयोगी और स्वास्थ्यरक्षा के प्रधान साधन क्षार और विटामिन को उचित मात्रा में प्राप्त करने के लिये शाकों और तरकारियों के पकाने में जितनी अधिक सावधानी बरती जायेगी उतना ही हमारा लाभ है। प्राकृतिक चिकित्सक तो जहाँ तक सम्भव हो नर्म शाकों और तरकारियों को बिना पकाये हुये और कड़े शाकों को मामूली पकाकर खाने पर बहुत अधिक जोर देते हैं। उन्होंने प्राकृतिक आहार करने वाले अनेक व्यक्तियों के प्रत्यक्ष उदाहरण देकर यह सिद्ध कर दिया है कि इस प्रकार आहार ग्रहण करने से प्रत्येक मनुष्य बहुत थोड़े और सस्ते भोजन के द्वारा ही बिल्कुल स्वस्थ और शक्तिशाली बना रह सकता है। यद्यपि बहुत समय के अभ्यास से मनुष्य ने अपने आमाशय को ऐसा खराब कर लिया है कि अब वह सब तरह के खाद्य-पदार्थों को सहज में कच्चे रूप में नहीं पचा सकता। तो भी यदि बालकों को आरम्भ से ही कच्चे शाक, तरकारी और फल खाने की आदत डाली जाय और मैदा, चीनी, मसाले तथा तरह-तरह की चाटों से बचाकर रखा जाय तो उनके स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक परिवर्तन हो सकता है और वे उन पचासों बीमारियों से बचे रह सकते हैं, जो आजकल चारों ओर फैली दिखाई पड़ती हैं।

अब भी अनेक लड़कों को आरम्भ में कच्चा खाने की आदत होती है। भीगे हुये चने, मूँगे, गेहूँ को थोड़ी तादाद में सभी लड़के खा जाते हैं। तरह-तरह के नरम शाक-भाजियों को भी बालक मना करते-करते चबा जाते हैं। इससे यह मालूम होता है कि अधिकांश खाद्य-पदार्थोंको बिना पकाये खाना मनुष्य की प्राचीन समय से आदत रही है, जो आरम्भिक-जीवन में संस्कार के रूप में प्रकट होती है। पर बड़ी आयु के लोग बराबर उसमें बाधा डालते हैं और बालक को सदा भय दिखाते हैं कि ऐसा करने से 'पेट में दर्द होगा' या 'दस्त आने लगेंगे।' इससे जैसे-जैसे वह बड़ा होता जाता है, कच्चे भोजन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से डरने लग जाता है धीरे-धीरे उसका आमाशय कच्चे पदार्थों को पचाने में सर्वथा असमर्थ हो जाता है। अब से पचास वर्ष पहले भी अनेक प्रदेशों में कच्चा चना या चने की दाल भिगोकर खाने का बड़ा रिवाज था और इसे बहुत ताकत देने वाला माना जाता था। उस समय बादाम और अंगूर सब जगह कम ही आते थे और तो क्या मूँगफली भी शौक की चीज समझकर कम ही खाई जाती थी। तब पहलवान लोग भी चना खाकर व्यायाम करते थे और कहा करते थे कि अमीरों को जो लाभ बादाम देता है उससे ज्यादा लाभ भीगा चना गरीबों को पहुँचाता है।

हमारे यहाँ ककड़ी, खीरा, गाजर, मूली, मटर, हरे चना आदि अब भी कच्चे खाये जाते हैं और ये सब स्वास्थ्य के लिये बहुत फायदेमन्द होते हैं। आवश्यकता है कि इनको सदैव पकाकर उनके गुणों को कम न किया जाय, वरन् इनका सलाद आदि बनाकर उनको भोजन के एक भाग के रूप में ग्रहण किया जाय। टमाटर को तो कभी न पकाना चाहिये। वह तो एक रसीला फल है जो अपने खट्टे-मीठे स्वाद के कारण स्वाभाविक रूप में बहुत बढ़िया लगता है। पर हमने ऐसे बुद्धिहीन और कृत्रिम स्वाद पर मरने वाले व्यक्ति देखे हैं, जो टमाटर को शाक-भाजी के साथ खूब पकाते ही नहीं वरन् उसे थोड़ा-सा उबालकर उसका छिलका भी छील डालते हैं। ऐसे "शौकीन" लोगों की बुद्धि पर जितना भी तरस खाया जाय, कम है, जो अपने हाथ से अमृत जैसी चीज को मिट्टी बनाकर खाते हैं, और फिर जन्म भर तरह-तरह की बीमारियों और शारीरिक कष्टों का रोना रोया करते हैं। अन्य कुछ लोग ऐसे होते हैं। जो इन लाभदायक पदार्थों को बिना मसाले के नहीं खा सकते। वे खीरा, ककड़ी ही नहीं, अमरूद और केला जैसे फलों में भी खूब नमक मिर्च डलवाकर ही खाते हैं। ये लोग फलों का स्वाद तो जानते ही नहीं, उनकी जिव्हा केवल नमक-मिर्च के तीक्ष्ण स्वाद का ही अनुभव कर सकती है। ऐसे लोगों की भीड़ आमतौर से डाक्टरों और वैद्यों की दुकानों पर दिखाई पड़ा करती है।

कितने ही प्राकृतिक भोजन के सम्बन्ध में अन्वेषण करने वालों की यह सम्मति है कि जिस भोजन से मानव शरीर में श्लेष्मा की वृद्धि होती है वह अन्त में हानिकारक सिद्ध होता है और अनेक रोगों की उत्पत्ति करता है। इस दृष्टि से सब प्रकार के अनाज, हर तरह की चीनी और दूध, मक्खन, घी आदि सभी पदार्थ मनुष्य के लिये आदर्श आहार नहीं माने जा सकते। इनके श्वेतसार से श्लेष्मा की आवश्यकता से अधिक उत्पत्ति होती है और उसे बाहर निकालने के लिये शरीर को अतिरिक्त काम करना पड़ता है, जो धीरे-धीरे रोगोत्पत्ति का कारण बन जाता है। इसलिये जो लोग पूर्ण स्वास्थ्य के अभिलाषी हैं और सदैव रोगों को दूर रखना चाहते हैं, उनको भोजन में केवल फल, तरकारी और शाकों का प्रयोग करना चाहिये और वह भी कच्चे या भाप द्वारा पकाये रूप में। हम समझते हैं कि साधारण मनुष्य इस प्रकार का परिवर्तन एकदम नहीं कर सकते, अनेक बार ऐसा प्रयत्न करने से ऐसा शारीरिक संकट पैदा हो जाता है कि जिससे जीवन खतरे में पड़ जाता है क्योंकि सामान्य मनुष्यों के शरीर में जगह-जगह अनेक प्रकार के पुराने विकार, विजातीय द्रव्य दबे पड़े रहते हैं। वे ऐसे आदर्श भोजन के प्रयोग से थोड़े समय में ही उभर आते हैं और रोगों के रूप में बाहर निकलने लगते हैं। कभी-कभी उनका प्रकोप ऐसा जोरदार होता है कि मनष्य की मृत्यु भी हो जाती है।

इसलिये जो व्यक्ति इस सिद्धान्त से लाभ उठाना चाहते हैं उनको क्रमशः अपने भोजन में परिवर्तन करना पड़ता है और साथ ही भीतर इकट्ठे विकारों की सफाई भी करते रहनी पड़ती है। इसके लिये उपवास का भी सहारा लेना पड़ता है, क्योंकि उसके बिना भीतरी अंगों के दोष कभी पूरी तरह निकल नहीं सकते। इसलिये प्राकृतिक भोजन के अनुयायी को अन्न का परिणाम घटाने, फल, शाकों के आहार को बढ़ाने और साथ ही उपवास की संख्या भी अधिक करते जाने का ऐसा समन्वय करना पड़ता है कि जिससे भीतरी विकारों का उभार एकाएक न हो और वे धीरे-धीरे निकलकर शरीर सर्वथा शुद्ध और निरोग बन जाय। इस कार्य में अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिस्थिति, शारीरिक अवस्था और मानसिक दृढ़ता के हिसाब से एक से तीन वर्ष तक का समय लग सकता है। पर यह निश्चय है कि जिस व्यक्ति ने इस सिद्धान्त को भली प्रकार समझ लिया है और अध्ययन द्वारा अथवा किसी प्राकृतिक चिकित्सक के पास रहकर उसके नियमों और विधियों को ठीक तरह से समझ लिया है, वह यदि दृढ़तापूर्वक उनका पालन करे तो रोगों से सर्वथा मुक्त होकर आदर्श स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन प्राप्त कर सकता है। पर यह एक तरह की साधना है, जिसको वे ही लोग कर सकते हैं, जिनकी सात्विक वृत्ति हो और जो चटोरेपन की आदत से बचे हुये हों। इसके सिवाय अपने घर और परिवार के वातावरण का भी ख्याल रखना जरूरी है। अगर समस्त घर वाले राजसिक और तामसिक भोजन के अभ्यासी हैं, वहाँ मिर्च, मसालों और मिठाई, खटाई का खूब प्रयोग होता है तो किसी एक व्यक्ति को अपने आहार में उपर्युक्त परिवर्तन कर सकना वहाँ न तो सम्भव होगा और न सुविधाजनक। इसलिये हम स्वास्थ्य को ठीक रखने के लिये फल और तरकारियों को स्वाभाविक रूप में व्यवहार में लाने की सलाह तो सबको देते हैं, पर अन्न, दूध, गुड़, चीनी आदि को बिल्कुल छोड़ने के लिये सामान्य व्यक्तियों से कहना उचित नहीं समझते। हमारे देश की वर्तमान परिस्थिति में केवल फल और तरकारियों का व्यवहार बहुसंख्यक लोगों के लिये कठिन ही है, जिस पर सदा टिक सकना शायद ही सम्भव हो सके। उनको अन्यत्र बतलाया मिश्रित—समतुल भोजन ही हितकर है। उससे उनका स्वास्थ्य स्थिर रह सकेगा और रोगों के भयंकर आक्रमण से वे बचे रहेंगे।

चोकर और अकुंरित अनाज के प्रयोग

अनाज का प्रयोग करने में सबसे अधिक ध्यान देने की बात यह है कि उसके चोकर को फेंका हर्गिज न जाय। जौ के सिवाय और किसी अन्न में इतनी भुसी नहीं होती, जिससे उसके आटे को छानने की आवश्यकता पड़े। इसलिये स्वास्थ्यरक्षा की दृष्टि से गेहूँ, बाजरा, चना, मक्का, ज्वार आदि सब अन्नों के आटे को बिना छाने ही काम में लाना चाहिये और जौ को पहले ही कूटकर उसकी भूसी को निकाल देना चाहिये। डाक्टरों के मतानुसार यह अन्न की चोकर मानव-देह के लिये बहुत लाभदायक होती है और उससे पाचन-क्रिया में बहुत सुधार हो जाता है। वैज्ञानिक विश्लेषण से ज्ञात हुआ है कि आध सेर चोकर में ११६ ग्रेन पोटाश पाया जाता है जबकि बिना छने आटे में उसका परिमाण ३७ ग्रेन तथा मैदा में केवल ११ ग्रेन होता है। यह पोटाश हृदय की गति को ठीक करके समस्त शारीरिक अवयवों को पुष्ट करता है। इसकी कमी से नासूर, दाँतों का खोखला होना अथवा शीघ्र गिर जाना, हाजमा बिगड़ जाना आदि खराबियाँ उत्पन्न होती हैं। पोटाश के साथ ही चोकर में लोहा और केलसियम (चूना) की मात्रा भी काफी पाई जाती है। यह हमारे स्वास्थ्य के परमावश्यक क्षार हैं, जिनसे रक्त शुद्ध और शक्तिशाली बनता है तथा हड्डियाँ मजबूत होती हैं। अगर किसी को पेट की खराबी की शिकायत हो तो उसे गेहूँ के आटे में आठवाँ या छठा हिस्सा चोकर ऊपर से मिलाकर काम में लाना चाहिये, जिससे कब्ज मिटकर शौच खुलकर आने लगेगा। चोकर के लाभों को देखकर अनेक चिकित्सक चोकर की चाय बनाकर पीने की सलाह दिया करते हैं। इससे खाँसी, जुकाम, ज्वर आदि में काफी लाभ होता है और चाय से होने वाले दोषों से भी बचाव होता है।

मूँग, मोंठ या गेहूँ आदि को भिगोकर तथा अंकुर निकालकर खाने से भी स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक लाभ होता है। इसके लिये मूँग को चार-छः घण्टे भिगोकर और गेहूँ को पन्द्रह-बीस मिनट भिगोकर भीगे कपड़े में लपेटकर रख देते हैं, जिससे आठ-दस या बीस घण्टे में अंकुर निकल आते हैं। इन अन्नों को भरपेट खाना तो सबके लिये संभव नहीं है पर यदि सुबह- शाम जलपान के रूप में एक-एक मुट्ठी अनाज अच्छी तरह चबाकर खायें तो यह काफी शक्तिप्रदायक होता है। चना का सेवन भी इसी प्रकार किया जाता है, पर वह कुछ भारी होता है इसलिये कमजोर व्यक्तियों के लिये उसे उपयुक्त नहीं कहा जा सकता। कुछ लोग तो गेहूँ में अखुआ निकालकर और उसे सुखाकर आटा तैयार कराते हैं। उनके मतानुसार उस आटे की रोटी विशेष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवनीशक्ति वाली होती है। पर यह कार्य उसी के लिये संभव है, जिसको इतनी फुर्सत हो कि इस प्रकार का विशेष आटा स्वयं परिश्रम करके तैयार कर सके या फिर ऐसे लोग इसका प्रयोग कर सकते हैं, जिनके यहाँ नौकर-चाकर ऐसे कार्यों की व्यवस्था कर सकें।

प्राकृतिक संतुलित भोजन

जो व्यक्ति अपने भोजन में बहुत अधिक परिवर्तन नहीं कर सकते, वे यदि अपने वर्तमान भोजन में आवश्यक सुधार करलें और आहार का परिमाण घटाकर उतना ही रखें जितने की शरीर को वास्तव में आवश्यकता है, तब भी वे सदैव स्वस्थ और रोगों से बचे रह सकते हैं।

भारतीय भोजन की प्रशंसा करने वाले एक विद्वान ने लिखा है कि भारतवासियों के दाँत बड़ी उम्र तक मजबूत रहते हैं, पर अंग्रेजों के दाँत प्रायः जल्दी गिर जाते हैं। इसका कारण दोनों के खाने का अन्तर ही है। भारतवासी प्रायः मोटा, सादा और अपने हाथ से तैयार किया भोजन खाते हैं, जबकि अंग्रेज अक्सर होटलों में कृत्रिम ढंग से प्रस्तुत खाद्य-पदार्थों का सेवन करते हैं, जो ऊपर से तो चमक-दमक वाले होते हैं पर कई तरह के जीवन-तत्वों की दृष्टि से प्रायः निकम्मे ही सिद्ध होते हैं।

इसी लेखक का कथन है कि भारतीय खाद्य-पदार्थों में गेहूँ सर्वश्रेष्ठ है। गेहूँ में पाये जाने वाले श्वेतसार और लसदार आटा, गर्मी और फुर्ती पैदा करने में बहुत बढ़िया होते हैं। लसदार आटे से बाहर चोकर की कई तहें होती हैं, जिनमें फास्फोरस और अन्य खनिज लवण काफी परिमाण में पाये जाते हैं। इनमें से फास्फेट हड्डियों और दाँतों के निर्माण तथा मजबूती में बहुत सहायक होता है। गेहूँ में विटामिन 'बी' भी पाया जाता है जो स्नायुओं को ठीक दशा में रखने के लिये आवश्यक माना गया है। गेहूँ के बाहरी भाग में बिल्कुल खुरदरा चोकर रहता है जो यद्यपि शरीर का पोषण तो नहीं करता पर अन्य पदार्थों को हजम करने में सहायक होता है और मल को बाहर निकालने के काम में भी आता है। पर ये सब लाभ तभी प्राप्त हो सकते हैं जब हम गेहूँ का मोटा आटा पीसकर बिना छना हुआ आटा व्यवहार में लायें। इसके बजाय जो लोग बाजार में बिकने वाला बारीक आटा काम लाते हैं, जिसमें से पूरा चोकर निकालकर घोड़ों और गायों के खाने के लिये बेच दिया जाता है और केवल श्वेतसार बच रहता है, वे लोग सब प्रकार के क्षारों और विटामिन से वंचित रह जाते हैं। इस आटे को भी खमीर का मसाला डालकर सड़ाया जाता है और तब उसकी डबलरोटी बनाई जाती है, जो प्रत्यक्ष में पेट भरने के सिवाय शारीरिक अवयवों के निर्माण में कुछ काम नहीं देती। इस तथ्य को समझकर अब योरोप और अमरीका के डाक्टर भी "पूरे गेहूँ" (ह्वेल ह्वीट) से बने खाद्य-पदार्थ खाने का प्रचार करने लगे हैं। हमारे घरों में जो गेहूँ का दलिया बनाकर काम में लाया जाता है वह "पूर्ण गेहूँ" खाने का सबसे उत्तम ढंग है।

यही बात दूध के सम्बन्ध में है। यह भी शरीर को बनाने वाला सर्वोत्तम पदार्थ है और इसमें केलसियम, फास्फेट, मैग्नीशियम, लोहा और विटामिन सभी स्वास्थ्य के लिये उपयोगी तत्व पर्याप्त रूप में प्राप्त होते हैं। पर शौकीन और स्वादप्रिय लोग इसकी भी बड़ी दुर्दशा करते हैं। वे दूध को घण्टों पकाकर, उसका खोवा, रबड़ी पेड़ा, कलाकन्द आदि बनाकर उसके उपयोगी तत्वों का पूरी तरह नाश कर डालते हैं। दूध से बनी मिठाइयों में केवल श्वेतसार ही शेष रहता है, जो चीनी के साथ मिलकर दुष्पाच्य हो जाता है और आमाशय को खराब करता है। दूध से लाभ उठाने का तरीका उसे धारोष्ण पीना या मन्दी आँच पर एक उबाल का पकाकर काम में लाना ही है। दूध का दही और मठा बनाकर काम में लाना और भी अधिक लाभदायक होता है, क्योंकि ये शीघ्र पचते हैं और इनमें एक ऐसा 'एसिड' (अम्लतत्व) पैदा हो जाता है, जो आँतों के तन्तुओं को नष्ट करके वृद्धावस्था को दूर रखता है। पचास-साठ वर्ष पहले रूस के डाक्टर मेचनीकॉफ ने अनेक परीक्षाएँ करके यह सिद्ध किया था कि दही और मठा दीर्घ जीवन प्राप्त करने के लिये सर्वोत्तम पदार्थों में से है। उन्होंने बतलाया था कि वर्तमान समय में सबसे अधिक दीर्घजीवी लोग बलगेरिया में पाये जाते हैं, जिसका मुख्य कारण वहाँ के निवासियों में दही का विशेष प्रचार ही है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राणिज आहार में केवल दूध-दही ही ऐसे पदार्थ हैं, जिन्हें लोग सुविधापूर्वक प्राप्त कर सकते हैं और जिनमें शरीर को पोषण करने वाले सब तत्व अच्छे रूप में मिलते हैं। दूध की चिकनाई सर्वश्रेष्ठ होती है और इसी कारण हमारे यहाँ सब धर्म-कार्यों में घृत का प्रयोग आवश्यक माना गया है। दूध की चीनी बहुत शीघ्र पचती है और शरीर में उचित रूप से ताप उत्पन्न करती है। शरीर की छीजन की पूर्ति करने के लिए जिस 'एमिनो ऐसिड' की आवश्यकता होती है, वह दूध में ही पर्याप्त परिमाण में मिलता है। दूध के नैट्रोजन का ६७ या ६८ प्रतिशत शरीर के साथ सात्मीकरण हो जाता है और उसकी एक विशेषता यह होती है कि अन्य पदार्थों के नैट्रोजन की तरह उसके द्वारा हमारे शरीर के भीतर हानिकारक 'यूरिक एसिड' की उत्पत्ति नहीं होती। कुछ लोग वाद-विवाद के अवसर पर कुतर्क करके दूध को भी माँस, मछली, अण्डा आदि प्राणिज पदार्थों की श्रेणी में रखते हैं, पर यह दलील बिल्कुल निकम्मी है। दूध और माँस की किसी तरह बराबरी नहीं की जा सकती। घास-पात तथा अन्य वानस्पतिक आहार खाकर सभी मादा जातीय पशु दूध देती हैं और उससे उनकी हानि नहीं होती। इतना ही नहीं यदि कभी उनके दूध को नहीं निकाला जाय तो बेचैन होने लगती हैं और उनको किसी प्रकार की बीमारी भी हो जाती है। पर माँस बिना पशु का पूर्ण रूप से नाश किये और बिना काटे-छाँटे बिना प्राप्त नहीं हो सकता। माँस प्राप्त करने में क्रूरता तथा निर्दयता की भावना उत्पन्न होती ही है। पर दूध में अगर विधिपूर्वक लिया जाय तो उससे किसी का कुछ भी नुकसान नहीं होता और हमको एक ऐसा पदार्थ मिल जाता है, जिसका सात्मीकरण अपेक्षाकृत शीघ्र होता है और जो प्रत्येक अवस्था में शक्ति, स्फूर्ति और कार्यक्षमता प्रदान करता ही है। यही कारण है कि प्राचीन भारतीय साहित्य में दूध को 'भूलोक का अमृत' कहा गया है और उसको सब प्रकार शुद्ध, सात्विक और स्वाभाविक भोजन बतलाया है।

प्राकृतिक-भोजन की तीसरी आवश्यक चीज हरी तरकारियाँ हैं, जिनके विषय में हम पीछे बहुत कुछ लिख चुके हैं। हमको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि 'विटामिन' के सबसे बड़े स्रोत में तरकारियाँ और शाक ही हैं। अनाज और घी, तेल के खाने से हमारे शरीर परिश्रम करने लायक बने रह सकते हैं, पर हमारे चेहरे और अंगों में ताजगी और रौनक विटामिन्स से ही आती है। एक लेखक ने इसका उदाहरण देते हुए बतलाया है कि गरमी की ऋतु में जब गाय, भैंसों को सूखी घास और भूसा खाकर निर्वाह करना पड़ता है, तो उनका चमड़ा फीका और सूखा दिखाई पड़ने लगता है, बाल झड़ जाते हैं और देह में झुर्रिया पड़ जाती हैं। पर जब बरसात आती है और चारों ओर हरी-घास पैदा हो जाती है तो उसे खाकर उनके शरीर फिर से चिकने-चुपड़े दिखाई पड़ने लगते हैं और शरीर में फुर्ती आ जाती है। इसका कारण हरी घास में पाये जाने वाले विटामिन और क्षार ही होते हैं, जिनका व्यवहार स्वास्थ्य-रक्षा के लिये अनिवार्य माना गया है। मनुष्यों के लिये तो इनकी और भी अधिक आवश्यकता है, क्योंकि वे अपने भोजन को तरह-तरह से पीसकर, छानकर, पकाकर, उबालकर, मसाले मिलाकर विकृत कर डालते हैं। हरी तरकारियों के प्रयोग से ही उन भोजनों की त्रुटियाँ दूर होकर वे संतुलित (बैलैन्सड) बन सकते हैं। पर खेद का विषय है कि इन हरी तरकारियों को भी हम पकाकर और उबालकर सारहीन बना डालते हैं। इसीलिये प्राकृतिक चिकित्सक आजकल 'सलाद' का प्रयोग करने पर बहुत अधिक जोर देते रहते हैं। इसका आशय यही है कि भोजन के साथ हमको कम से कम आध पाव या एक पाव ऐसी हरी चीजें अवश्य खानी चाहिये, जो पकाई न गई हों वरन् ऐसे ही काटकर रकाबियों में सजा दी गई हों। ऐसी चीजों में मूली, गाजर, टमाटर, खीरा, ककड़ी, धनिया, पोदीना आदि का नाम लिया जा सकता है। अगर इनमें सलाद (लेटूस), करमकल्ला या पालक की पत्तियाँ मिला दी जायें तब भी स्वाद में कोई अन्तर नहीं पड़ता और ये तीनों चीजें विटामिन्स की दृष्टि से सर्वश्रेष्ठ होती हैं।

इन भोज्य पदार्थों के साथ जिन लोगों की रुचि और सामर्थ्य हो वे खजूर, अंजीर, किशमिश, छुहारा आदि सूखे फलों का भी उपयोग कर सकते हैं। इनमें जो मिठास पाया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है, वह एक प्रकार की फल-शर्करा होती है, जो हमारे शरीर में बहुत शीघ्र मिलकर गर्मी और शक्ति देती है। अन्य अनाजों तथा गन्ने की चीनी में जो श्वेतसार होता है वह पहले चीनी की शक्ल में बदलकर ही पचने योग्य बनता है, जिससे काफी देर लगती है और उसका पूरी तरह चीनी बन सकना भी सम्भव नहीं होता। इसलिये उपर्युक्त पदार्थों में से जो जहाँ सुविधापूर्ण मिल सके, उसका भोजन के साथ प्रयोग करना लाभदायक होगा।

माँसाहार का पूर्ण निषेध

किसी पिछले अध्यायं में हमने आध्यात्मिक दृष्टिकोण से माँसाहार की निकृष्टता प्रतिपादित की है। पर यदि केवल आहार की दृष्टि से विचार किया जाय तब भी माँस एक ऐसा पदार्थ है, जिसका प्रयोग कोई मनुष्य जानबूझकर और राजी-खुशी से नहीं कर सकता। माँस निस्सन्देह एक गन्दा पदार्थ है, जो शरीर के बाहर और भीतर भी बहुत जल्दी सड़ता है। जिन पशुओं को माँस के लिये मारा जाता है, उनमें कोई न कोई बीमारी होती ही है। यद्यपि पशु-वध-गृहों में पशुओं की डाक्टरी की परीक्षा का नियम है, पर एक तो डाक्टरी करने भी सब तरह की बीमारियों का पता चल नहीं सकता और दूसरे यह कि जैसा अन्य सब सरकारी कामों की अवस्था है इस महकमे में भी भ्रष्टाचार का अभाव नहीं है। अधिकांश पशु-डाक्टर कसाइयों से प्रति बकरी कुछ फीस लेते ही हैं और इस कारण अनेक साधारण दोषयुक्त पशुओं को भी पास कर देते हैं। इस प्रकार के माँस में बीमारी के जो कीड़े होते हैं, उनमें से कुछ तो आग पर पकाने से मर जाते हैं, पर कुछ फिर भी नहीं मरते और खाने वालों के स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डालते हैं। कुछ जानवर स्वयं गन्दी चीज खाने वाले होते हैं, जैसे-सूअर और मुर्गी आदि। इनके माँस में भी उस गन्दगी का असर होता है। जाँच करने वालों ने यह भी पता लगाया है कि जब जानवर को जबर्दस्ती कसाईघर में ले जाते हैं तो वह प्रायः बहुत घबड़ा जाता है, जिसके कारण उसके शरीर में एक तरह का तेज जहर पैदा हो जाता है और वह मनुष्य के लिये हानिकारक होता है। इस प्रकार विचार करने से माँस एक निकृष्ट श्रेणी का पदार्थ ही सिद्ध होता है। एक साधारण अनुभव की बात यह भी है कि कच्चे माँस को देखकर प्रायः सभी को घृणा होती है। जब खूब पकाकर और मसाले आदि मिलाकर उसकी शक्ल और स्वाद को बदल दिया जाता है, तभी उसे लोग खा पाते हैं।

माँसाहार के पक्षपाती प्रायः यह दलील देते हैं कि माँस की नैट्रोजन और चिकनाई वनस्पति के नैट्रोजन तथा चिकनाई की अपेक्षा शीघ्रता से पच जाती है और ताकतवर होती है। पर आज तक माँस और वनस्पति खाने वालों की जितनी बार परीक्षा की गई है, उन सबमें वनस्पति आहार करने वाले ही मजबूत और कार्यक्षम सिद्ध हुये हैं। अमरीका के येल विश्वविद्यालय के प्रोफेसर फिशर ने इस दृष्टि से एक बार ४६ व्यक्तियों की परीक्षा की थी। हाथ की पकड़ में माँसाहारी पहलवान केवल २२ मिनट ठहर सके किन्तु शाकाहारी ५५० से २०० मिनट ठहर सके। पैरों की कसरत में माँसाहारी अधिक से अधिक ३८३ बैठक कर सके और शाकाहारी ७३१ तक कर सके। जर्मनी में ३२ व्यक्तियों को १२।। मील की दौड़ में शामिल किया गया। उनमें जो छः व्यक्ति प्रथम आये वे सब शाकाहारी थे। इतना ही नहीं शाकाहारी सौ मील की दौड़ में भी अपनी सहन शक्ति के कारण सफल हुये, जबकि माँसाहारी बीच में ही दम तोड़ बैठे।

जीव-जगत पर दृष्टि डालने पर भी यही सिद्ध होता है कि शाकाहार अधिक शक्ति प्रदायक और स्वास्थ्य की वृद्धि करने वाला होता है। हाथी, ऊँट और घोड़े जितना परिश्रम करते हैं उतना कौन-सा माँसाहारी पशु कर सकेगा ? शक्ति की निगाह से तो भैंसे और बैल भी शेर से अधिक शक्तिशाली होते हैं। शेर थोड़ी देर के लिए तेजी फुर्ती दिखाकर शिकार को मार सकता है, पर यदि लगातार कोई परिश्रम का काम लिया जाय तो वह बहुत जल्द थक जायेगा। फल और वनस्पति का व्यवहार करने वाले मनुष्य ही प्रत्येक कार्य में अधिक सहनशील और परिश्रमी सिद्ध होते हैं। सेना में काम करने वाले सिपाहियों की जाँच करने से भी यही विदित हुआ है कि अधिक समय तक परिश्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के काम करते रहने के कार्यों में शाकाहारी व्यक्ति माँसाहारियों से अधिक सफल होते हैं। फलाहार, और शाकाहार से स्त्रियों और पुरुषों का शारीरिक सौष्ठव बढ़ता है और बच्चों की बुद्धि का विकास भी होता है।

कुछ लोग माँस को प्रोटीन शीघ्र पचने की बात कहकर उसका समर्थन करते हैं, पर उनको यह भी जानना चाहिए कि प्रोटीन के शीघ्र पचने पर भी माँस कब्जी उत्पन्न करता है, उसका मल देर से और कठिनाई से निकलता है। फिर यदि इस दृष्टि से माँस का मुकाबला बादाम, अखरोट, काजू, पिस्ता आदि प्रोटीन वाले वनस्पति खाद्य से किया जाय तो ये मेवे हर तरह माँस से बढ़कर साबित होते हैं। वे माँस के बराबर ताकत देते हैं, पर न तो उनमें कोई गन्दगी होती है और न वे कोष्ठबद्धता पैदा करते हैं। माँस में बहुत शीघ्र ऐसा विषाक्त तत्व पैदा हो जाता है, जिसके सेवन से कै, दस्त हो जाते हैं और अनेक बार बीसियों आदमी एक साथ मर जाते हैं। पर फल, तरकारी, अन्न में ऐसा दोष कभी देखने को नहीं आता। उलटा फलों की सुन्दरता देखकर वैसे ही चित्त प्रसन्न हो जाता है, उनकी गन्ध भी सबको भाती है और स्वाद की दृष्टि से उनको सर्वश्रेष्ठ माना गया है। माँस में सब बातें इससे विरुद्ध ही देखने में आती हैं।

यह सत्य है कि अन्य पशु-पक्षियों की तरह मनुष्य का कोई नियत भोजन नहीं है, वह अनेक प्रकार के पदार्थों को भाँति-भाँति के परिवर्तन करके खाने योग्य बना लेता है, पर फिर भी यह मानना पड़ेगा कि माँस मनुष्य का स्वाभाविक भोजन किसी प्रकार सिद्ध नहीं हो सकता। मनुष्य के दाँतों, उसके आमाशय और पचाने वाली आँतों की लम्बाई से यह स्पष्ट जान पड़ता है कि वे माँसाहारी जीवों के इन अंगों से सर्वथा भिन्न हैं। मनुष्य से मिलता-जुलता शारीरिक सगंठन वनमानसों का होता है। जर्मनी के हेकल आदि विज्ञान विशारदों ने बहुत कुछ जाँच करके बतलाया है कि "मनुष्य और वनमानस के शारीरिक ढाँचे ही एक-दूसरे से नहीं मिलते वरन् सभी मुख्य-मुख्य बातों में उनके शारीरिक अवयव एक-दूसरे से मिलते-जुलते होते हैं। हमारे और वनमानस के शरीर में प्रधान हड्डियाँ एक ही क्रम में पायी जाती हैं, जैसे वनमानस के हृदय में चार खाने होते हैं वेसे ही हमारे हृदय में भी होते हैं, जिस क्रम से उसके जबड़े में ३२ दाँत होते हैं उस क्रम से हमारे जबड़ों में भी पाये जाते हैं, हमारे आमाशय में जो पाचक ग्रन्थियाँ हैं, वही वनमानस के आमाशय में भी हैं। दोनों की सन्तानोत्पत्ति का तरीका बिल्कुल एक-सा होता है।"

वनमानस और बन्दर श्रेणी के जीव जिनका मनुष्य से इतना अधिक सादृश्य है, केवल फल और वनस्पतियों पर निर्वाह करते हैं। इन वनमानसों में 'गुरिल्ला' नाम का प्राणी इतना शक्तिशाली और भंयकर स्वभाव का होता है कि वह एक ही थप्पड़ से शेर को मार देता है। पर वह भी कभी माँस नहीं खाता। जंगल के फल और कन्द आदि ही उसके खाद्य होते हैं। इसलिये प्राणियों के आहार पर विचार करने वाले विद्वानों ने एकमत से यह स्वीकार किया है कि मनुष्य आरम्भ में अवश्य ही वनस्पति और फलों का आहार करने वाला प्राणी था, माँसाहार की प्रवृत्ति बाद में विशेष परिस्थितियों में उत्पन्न हुई है।

माँसाहार स्वास्थ्य की दृष्टि से इतना हानिकारक है कि किसी भी रोग की चिकित्सा करते समय चिकित्सक उसका निषेध कर देते हैं और दूध, फल आदि के उपयोग की सलाह देते हैं। माँसाहारियों पर विविध प्रकार के रोगों का आक्रमण शीघ्र हो जाता है। क्षय रोग से माँस का निकट सम्बन्ध बताया जाता है, क्योंकि यह रोग अनेक पशुओं को भी होता है, जिनके माँस का व्यवहार करने से मनुष्यों पर भी उसका प्रभाव पड़ जाता है। भगन्दर के रोग का मुख्य कारण माँसाहार ही होता है, क्योंकि माँस का फुजला (मल) कठिनाई से बाहर निकलता है, इसिलये लगातार माँस खाने वालों के मलद्वार में विकृति आकर भगन्दर की उत्पत्ति हो जाती है। भगन्दर रोग के एक बहुत प्रसिद्ध चिकित्सक डा. बेल ने पचास वर्ष पहले लिखा था कि संसार में प्रति वर्ष ढाई करोड़ व्यक्ति, और अकेले इंग्लैण्ड में तीस हजार व्यक्ति प्रतिवर्ष भगन्दर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रोग के कारण मर जाते हैं। इसका कारण माँसाहार की अधिकता ही होता है। जब ये रोगी माँस को छोड़कर वानस्पतिक आहार पर आ जाते हैं तो शीघ्र ही आरोग्य हो जाते हैं।

इसी प्रकार अन्य कई डाक्टरों का कथन है कि स्नायु पीड़ा सम्बन्धी रोग प्रायः माँसाहार के फलस्वरूप ही वृद्धि को प्राप्त होते हैं। इसका मुख्य कारण माँस में पाया जाने वाला 'यूरिक एसिड' होता है, जो रक्त में मिलकर शरीर भर में फैल जाता है और हड्डियों के जोड़ों तथा संधि-स्थानों में जाकर इकट्ठा हो जाता है। इसके फल से गठिया, सूजन, पीलिया, निमोनिया आदि की उत्पत्ति होती है और प्रतिवर्ष करोड़ों व्यक्ति इनके चंगुल में फँसकर असमय में प्राण-त्याग करते हैं। अधिकांश लोग माँस के साथ पर्याप्त परिमाण में अन्न, फल, हरी तरकारी आदि का भी प्रयोग करते रहते हैं, जिससे माँस से होने वाली हानि कम पड़ जाती है। यदि कोई व्यक्ति केवल माँस पर ही जीवन-निर्वाह करे तो निस्सन्देह उसके शरीर में बहुत अधिक विकृति आ जाय। पर केवल वानस्पतिक आहार पर करोड़ों व्यक्ति जीवन-निर्वाह करते हैं और उनका स्वास्थ्य सदैव उत्तम बना रहता है तथा परिश्रम करने में भी वे माँसाहारियों से अधिक कार्यक्षम सिद्ध होते हैं।

जिस प्रकार शारीरिक दृष्टि से माँस-भक्षण हानिकारक है, उसी प्रकार मानसिक दृष्टि से वह त्याज्य है। माँस-भक्षण से बुद्धि और स्मरण-शक्ति पर हानिकारक प्रभाव पड़ता है और ऐसे व्यक्ति अनेक विषयों में बड़ी कठिनाई से प्रगति कर सकते हैं। इससे मनुष्य की मनोवृत्तियाँ भी चंचल और उत्तेजित रहती हैं और यह एक ऐसी बात है, जिसका प्रत्येक कार्य की सफलता पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। कोई भी कार्य क्यों न हो जब तक उसे स्थिर और शांत मन से न किया जायेगा, सफलता मिलना कठिन ही होता है। जो व्यक्ति इस दोष से बचकर शुद्ध और पवित्र वानस्पतिक भोजन करते हैं, उनका मनोभाव सात्विक रहता है, वे सबके साथ प्रेम, सहानुभूति और सच्चाई का व्यवहार करते हैं और इससे स्वयं भी जीवन में सबका सहयोग और सुख, शांति प्राप्त करते हैं।

यद्यपि योरोप और अमरीका के निवासी धार्मिक अथवा जातीय दृष्टि से माँस-भक्षण को बुरा नहीं मानते पर शारीरिक और मानसिक दृष्टि से विचार करके ही वहाँ के बड़े-बड़े डाक्टरों ने इसकी निन्दा की है। डा. टाड फैरियर ने कहा है कि "हमारा मन विचारों का परिशोधक (फिल्टर) है। यदि शरीर-यंत्र विषाक्त कणों से लिप्त होगा तो विचार भी उसकी छूत से न बच सकेंगे। माँसाहार मन को मलिन, ज्ञानेन्द्रियों को कुण्ठित और कर्मेन्द्रियों को शिथिल करता है।" वहाँ के एक बहुत बड़े विद्वान तथा मनीषी बैंजमिन फ्रैंकलिन का कथन है कि "शुद्ध भाव तथा तीव्र कल्पना शक्ति एकमात्र निरामिष भोजन द्वारा ही उत्पन्न होती है।" भारत के प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों ने भी माँस को बहुत भारी भोजन बतलाया है और कहा है कि यह कठिनाई से पचता है, जिससे अन्त में हानिकारक सिद्ध होता है।

भोजन को यथासंभव कम पकाइये

प्राकृतिक भोजन विधि का सारतत्व यह है कि मनुष्य अधिक पकाये और बहुत दिनों के रखे हुये भोजन का प्रयोग कम से कम करे और यथासंभव ताजा फल, तरकारी और अन्न के बनाये ताजा पदार्थ खाये। जैसा पहले बतलाया जा चुका है बासी खाद्य-पदार्थ तामसी हो जाते हैं। हमारे यहाँ उत्सवों, विवाह-शादी और मृतक के अंतिम संस्कार करने के अवसर पर भी तरह-तरह की मिठाइयाँ और पकवान बनाने की चाल है। लोग इन चीजों को प्रायः स्वादवश आवश्यकता से अधिक खा जाते हैं। इस तरह का सामान प्रायः खर्च से अधिक परिमाण में बनाया जाता है, जिससे परिवार के लोग कई दिन तक उसे बासी खाया करते हैं। इससे पेट खराब होता है और कई लोग बीमार पड़ जाते हैं। आश्चर्य की बात है कि लोग ताजा फल और दूध में तो हानि समझते हैं और मैदा, चीनी तथा निकृष्ट प्रकार के घी से बना भोजन बड़ी खुशी के साथ ग्रहण कर लेते हैं। जो लोग कहते हैं कि बेर खाँसी का घर है, अमरूद के बीजों से पेट में दर्द हो जाता है, संतरा ठण्डा होता है, आम में खटाई है, केला भारी है, खजूर गर्म है, वे लोग वास्तव में भ्रम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में पड़े हैं। फल और मेवा मनुष्य का स्वाभाविक आहार है और उनको यदि विधिपूर्वक तथा समयानुसार खाया जाय तो हर्गिज हानि नहीं हो सकती। ये एक तरह के वहम हैं, जो सामान्य लोगों की बातें सुनते-सुनते हमारे दिमाग में घुस गये हैं। पर जब कोई आदमी बुद्धि से इनकी परीक्षा करता है, उसको ये निस्सार ही प्रतीत होते हैं।

वर्तमान परिस्थिति और लोक व्यवहार को देखते हुये हम सर्वसाधारण को यह सलाह तो नहीं दे सकते कि वे शीघ्र ही पके हुए अन्न का भोजन त्यागकर पूर्ण रूप से बिना पकाये फलों या अन्य वनस्पतियों का प्रयोग करने लग जायें। पर इतना हम कह सकते हैं कि यह एक उच्च आदर्श है और इस पर हम जितना अधिक चल सकेंगे उतनी हमारे स्वास्थ्य की उन्नति होगी और हम निरोग जीवन बिता सकेंगे। साथ ही हम यह भी समझा देना चाहते हैं कि इस प्रकार के परिवर्तन में जल्दी नहीं करनी चाहिये। अनेक लेखक बिना सोचे-समझे अन्नाहार की निन्दा करके तुरन्त फल खाने की सलाह देने लगते हैं और कहते हैं कि "यदि सब लोग फल खाने का निश्चय कर लें तो पृथ्वी में इतने फल मिल सकते हैं कि जो सब लोगों से खाये भी न जा सकें। पुराने जमाने में सभी मुनि, ऋषि अधिकांश अन्य व्यक्ति भी कन्द, मूल, फल खाते थे और उनको कभी फलों की कमी नहीं होती थी।" यह बात शायद उस समय ठीक रही हो जब पृथ्वी भर में दस-बीस करोड़ मनुष्य रहते थे, पर अब जबकि पृथ्वी की जनसंख्या दस करोड़ से बढ़कर तीन अरब तक पहुँच चुकी है, तब यह बात वैसी सहज नहीं है। आजकल भोजन के लिये हर तरह की योजनाओं के करने और प्रतिदिन करोड़ों मन प्राणिज आहार खा डालने पर भी संसार में खाद्य-सामग्री की कमी अनुभव की जा रही है और इसको हल करने का एकमात्र उपाय जन-संख्या को नियंत्रण में रखना ही समझ में आ रहा है। इसलिये सब लोगों को फल और मेवा खाने की सलाह देना सिद्धान्त की दृष्टि से ठीक माना जा सकता है, पर व्यवहार की दृष्टि से अभी वह समय बहुत दूर है।

ऐसी अवस्था में अपनी परिस्थिति और वर्तमान साधनों को देखते हुये हम सर्वसाधारण को यही सलाह दे सकते हैं कि वे मिर्च, मसाले, पकवान, मिठाई, अचार आदि अनावश्यक और हानिकारक पदार्थों को तो अवश्य त्यागने का प्रयत्न करें और अन्न तथा तरकारी का सीधा सादा भोजन ही काम में लायें। अगर अनाज का आटा मोटा तथा बिना छना हुआ काम में लाया जाय और तरकारियों को जहाँ तक सम्भव हो कम पकाया जाय तो मनुष्य का स्वास्थ्य आदर्श नहीं तो सुदृढ़ और कार्यक्षम अवश्य रह सकता है। फिर भी फलाहार और शाकाहार के आदर्श भोजन होने से हमको इनकार नहीं और जो अपनी आर्थिक सुविधा के द्वारा अथवा गाँव में रहने और निजी खेत-बगीचा आदि होने की विशेष परिस्थिति के आधार पर अन्नाहार को क्रमशः कम करते हुये फलाहार का जितना अधिक प्रयोग कर सकेंगे उतना ही उनके लिये लाभ होगा। हमारा मतभेद इस सिद्धान्त से तनिक भी नहीं है कि "फल और वनस्पतियाँ अपने स्वाभाविक रूप से मनुष्य का सर्वोत्तम आहार हैं।" हमारी सम्मति इतनी ही है कि इस सिद्धान्त का पालन सुविधानुसार ही करना पड़ेगा और चूँकि संसार की वर्तमान परिस्थिति में अधिकांश मनुष्यों के लिये इसे ग्रहण कर सकना कठिन है, इसलिये वर्तमान प्रचलित आहार में ही जीवन तत्वप्रदायक शाक-भाजी और साधारण फलों का इस प्रकार मेल करना चाहिये कि जिससे रोगों का कारण दूर हो सके और स्वस्थ-जीवन का लाभ उठाया जा सके।

हिताहार और मिताहार

तैत्तिरीय उपनिषद् में एक मंत्र आता है कि "अन्नंहि भूतानां ज्येष्ठ। तस्मात् सर्वौषधमुच्यते" अर्थात् "सब प्राकृतिक पदार्थों में अन्न ही सबसे पहले उत्पन्न हुआ, इसलिये वही सबके लिये औषध कहा जाता है।" इसी सिद्धान्त को यूनान के सर्वप्रथम चिकित्सक 'हिपोक्रेटिस' ने, जो अब से लगभग २४०० वर्ष पहले हुआ था और योरोपियन डाक्टरी विद्या का आदि गुरु माना जाता है, इन शब्दों में प्रकट किया है कि "तेरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार ही तेरी औषध हो और तेरी औषध ही तेरा आहार हो।" इन दोनों कथनों का आशय यही है कि जो लोग नियमपूर्वक केवल हितकारी आहार ग्रहण करते हैं, वे एक दृष्टि से औषध-सेवन के लाभों को स्वयमेव प्राप्त करते रहते हैं। ऐसे लोगों को फिर वैद्यों की गोलियों, हकीमों के कुश्तों और डाक्टरों के इंजेक्शनों की आवश्यकता नहीं पड़ती। जो व्यक्ति आहार के गुण और अवगुणों पर विचार करके हिताहार और मिताहार का ध्यान रखेगा वह सदैव स्वस्थ और व्याधिमुक्त रहकर जीवन का सच्चा सुख प्राप्त करने में समर्थ होगा। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर श्री भागवत पुराण में कहा गया है—

तावज्जितेन्द्रियो न स्याद्विजितान्येन्द्रियः पुमानः।
नजयेद्रसनं यावज्जितं सर्वजिते रसे।।

अर्थात्—"जब तक मनुष्य जिव्हा-इन्द्रिय को वश में नहीं कर लेता तब तक वह जितेन्द्रिय नहीं हो सकता। जिव्हा पर विजय प्राप्त होने से ही समस्त इन्द्रियों पर विजय प्राप्त हुई समझी जा सकती है।"

हिताहार का महत्व

यदि भली प्रकार विचार किया जाय तो स्पष्ट जान पड़ता है कि हमारी देह और मन का निर्माण आहार द्वारा होता है। हम जैसा भला या बुरा आहार ग्रहण करेंगे वैसा ही हमारा शरीर भी बन जायेगा। इसलिये जो लोग शिकार उत्पन्न करने वाला भोजन करते होंगे, उनको किसी औषधि से वास्तविक लाभ पहुँच सकना सम्भव नहीं हो सकता। स्वास्थ्य की प्राप्ति और रोगों का निराकण प्रकृतिदत्त बातें हैं। जो उसके नियमों को समझकर उनका पालन करेगा वह कभी रोगी नहीं हो सकता और जो उन नियमों का उल्लंघन करेगा, वह रोगों के चंगुल से छुटकारा नहीं पा सकता। इसका आशय यह भी नहीं कि प्रत्येक मनुष्य एक ही प्रकार का खाद्य-पदार्थ ग्रहण करे अथवा वह प्रत्येक पदार्थ को आहार के रूप में काम लावे। इसमें भी अपनी प्रकृति के अनुकूल पदार्थों का चुनाव करना चाहिये। कुछ पदार्थों में स्वास्थ्य प्रदायक तत्व की अधिकता होती है और किसी में कमी होती है। इसी प्रकार मनुष्यों की शारीरिक प्रकृति में गर्म और ठण्डे होने का भी अन्तर होता है जिसे आयुर्वेद में पित्त-प्रकृति और कफ-प्रकृति के नाम से कहा गया है। इसलिये जो प्राकृतिक खाद्य-पदार्थों के स्वास्थ्यप्रदायक तत्व और अपनी शारीरिक प्रकृति का ध्यान रखते हुये सदा हितकारी भोजन करने का नियम रखेगा, वही प्रकृति देवी से सुन्दर और सुदृढ़ स्वास्थ्य का वरदान पा सकेगा।

प्रकृति का रस सबसे अधिक पत्तों और फलों में ही पाया जाता है। रूखे अथवा कठोर खाद्य-पदार्थों की अपेक्षा हम इन रसदार पदार्थों को ही सहज में खा सकते हैं और उनके रस का स्वात्मीकरण कर सकते हैं। इसलिये फल और शाक ही हमारे वास्तविक भोजन के पदार्थ हैं और वे ही हमारे लिये औषधि का काम भी दे सकते हैं। इस नियम से हटकर हम जितना कृत्रिमता का आश्रय लेते जायेंगे, खाद्य-पदार्थों को कूटकर, पीसकर, पकाकर उदरस्थ करेंगे, उनका स्वास्थ्य-प्रदायक गुण न्यून होता जायेगा और जीवन निर्वाह के साथ-साथ उनके कुछ विकार भी हमको ग्रहण करने पड़ेंगे। ये ही विकार जब इकट्ठा होकर अधिक हो जाते हैं तो वे रोग अथवा किसी प्रकार की शारीरिक पीड़ा के रूप में प्रकट होते हैं। इस प्रकार उचित या अनुचित आहार ही हमारे स्वास्थ्य या अस्वास्थ्य का आधार ठहरता है।

इस प्रकार आहार लाभ और हानि दोनों बातों का कारण होता है। जैसा विद्वानों ने कहा है कि दुनिया में कोई चीज बुरी नहीं है, बुरा या भला उसका उपयोग होता है। वेदों में तो यहाँ तक कह दिया गया है कि "अन्नं मृत्युं उत जीवातुं आहुः" अर्थात् "आहार ही मृत्यु है और आहार ही जीवन है।" आहार को यदि आवश्यकता, समयानुकूल उचित मात्रा में ग्रहण किया जायेगा तो वह जीवनदायक होगा और यदि उसे इन बातों का ध्यान न रखकर विपरीत रूप में लिया जायेगा तो वह विषरूप होकर जीवन के नाश का कारण होगा। इसलिये जो लोग स्वाद या आग्रह की दृष्टि से चाहे जब और चाहे जो खाद्य पदार्थ खा लेते हैं और इस बात का भी ध्यान नहीं रखते कि हम जितना खा रहे हैं, उतना हजम भी हो सकेगा या नहीं, वे अन्त में कष्ट ही उठाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिताहार भी अति आवश्यक है

जिस प्रकार स्वास्थ्य-रक्षा के लिये हिताहार का बहुत अधिक महत्व है, उसी प्रकार मिताहार की भी बहुत अधिक आवश्यकता है। बुद्धिमानों का कथन है कि अगर अमृत को भी उचित से अधिक परिमाण में ग्रहण किया जायेगा तो वह भी विष का काम करेगा। हमारे यहाँ साधारण जनता और विशेषकर ग्रामीण लोगों में आमतौर से यह ख्याल फैला हुआ दिखाई पड़ता है कि "हम जितना अधिक खायेंगे उतना ही अधिक बलवान और दीर्घजीवी बनेंगे।" यह एक बहुत ही गलत और बुद्धिहीनता का खयाल है और यदि जाँच की जाय तो पता चलेगा कि अधिक और 'ताकतवर' भोजन खाने वालों की अपेक्षा अधिक थोड़ा और सादा भोजन करने वाले ही अधिक शक्तिशाली और बड़ी आयु के होते हैं। दो-चार पहलवान अथवा दस-बीस विशिष्ट शरीरिक शक्तिसम्पन्न व्यक्तियों की बात तो छोड़ दीजिये, पर अधिकांश में ज्यादा परिमाण में भोजन करने वाले व्यक्ति शीघ्र ही बूढ़े और शीघ्र ही मरते देखे जाते हैं। चाहे गरीब हो या अमीर सुदृढ़ स्वास्थ्य और निरोगता प्राप्त कर सकने का एकमात्र उपाय संयम और नियम का जीवन व्यतीत करना ही है। धनवान लोगों में भी जो लोग लम्बी आयु पाते हैं और उस समय भी कार्यक्षम बने रहते हैं, उनके रहन-सहन का पता लगाने पर यही मालूम होता है कि उनका खान-पान और रहन-सहन बहुत ही नियमित और संयमपूर्ण रहा है। इसी प्रकार कितने ही गरीब भी सौ वर्ष से ऊपर पहुँच जाते हैं और तब भी पर्याप्त शारीरिक श्रम करके अपनी रोटी आप कमाते रहते हैं। इसका कारण भी उनकी संयमपूर्ण आदतें और स्वाभाविक रहन-सहन होता है। इसलिये फ्रांस के महावार नेपोलियन का यह कहना बिल्कुल ठीक है कि "संसार में भूख अथवा अल्पाहार से उतने व्यक्ति कभी नहीं मरते जितने कि अधिक और विपरीत भोजन के कुप्रभाव से मरते हैं।" इस भाव को अंग्रेजी की एक कहावत में इस प्रकार दर्शाया गया है कि "हम जितना भोजन करते हैं, उसका एक तिहाई भाग हमारा पालन करता है और दो तिहाई भाग से डाक्टरों का पालन होता है।" अर्थात् जितना हम अक्सर खाया करते हैं उसके एक तिहाई से ही हमारे शरीर का काम ठीक तरह चल सकता है और हम पूर्ण स्वस्थ बने रह सकते हैं। उसके अतिरिक्त जितना अधिक खाया जाता है वह रोगोत्पत्ति का कारण होता है, जिसके फलस्वरूप हमको डाक्टरों के पास जाना पड़ता है और उनकी जेब गरम करनी पड़ती है।

गीता में सात्विक, राजसिक, तामसिक भोजनों का वर्णन करते हुये बतलाया है कि "सात्विक भोजन के अनुयायी ही मानसिक और शारीरिक शक्ति, स्वास्थ्य, सुख और संतोष प्राप्त कर सकते हैं।" यहाँ पर सात्विक भोजन का आशय केवल पथ्य और शुद्ध खाद्य-पदार्थों से ही नहीं है, वरन् इस कथन से यह भी प्रतीत होता है कि भोजन को उचित मात्रा में श्रद्धा और शान्ति के साथ किया जाय। हमारे यहाँ अन्न को केवल भूख का बुझाने वाला जिव्हा को तृप्त करने वाला एक भौतिक पदार्थ ही नहीं माना गया है, वरन् उसको 'अन्न देवता' कहा गया है। इससे हम यह समझते हैं कि जो कोई अन्न का उपयोग श्रद्धा, भक्ति और संयम की विधि से करेगा, उसी को उसका वास्तविक कल्याणकारी फल निरोग जीवन और दीर्घायु प्राप्त हो सकता है। इसके विपरीत जो लोग केवल स्वाद की दृष्टि से जिव्हा इन्द्रिय के वशीभूत होकर असंयमित रूप से अन्न का उपयोग करेंगे, वे उसके श्रेष्ठ लाभों से वंचित रहेंगे। इतना ही नहीं जो अन्न का सेवन बुरी रीति से करते हैं, उसका दुरुपयोग करते हैं, अन्न उनको नष्ट ही कर डालता है। इस तथ्य को प्रकट करते हुये वेद की तैत्तिरीय संहिता में कहा है—"अद्यतेऽत्ति च भूतानि। तस्मादन्नं तदुच्यते।" अर्थात् "आहार को मनुष्य खाते हैं और आहार मनुष्यों को खाता है, इसी से आहार का नाम 'अन्न' कहा गया है।" इस सबका आशय यही है, जो आहार नियमों का पालन करते हुये विधिपूर्वक खाया जाता है, वह हमारे लिये स्वास्थ्यप्रदायक होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और जिस आहार को हम नियमों का उल्लंघन करके जिव्हा की लोलुपतावश मनमाने ढंग से खाते हैं, वह शरीर में मल के रूप में परिणित होकर स्वास्थ्य की हानि और रोगों का कारण बनता है।

कुछ सस्ते और सर्वोपयोगी फल

प्राकृतिक भोजन का उपदेश देने वालों के लेखों में फलाहार की सम्मति पढ़कर अधिकांश लोग उसे बिना सोचे-विचारे तुरन्त ही निरर्थक मान बैठते हैं। इसका कारण यह नहीं कि वे फलाहार के लाभों से इनकार करते हों वरन् कहते हैं कि "आजकल जब अमीर लोग भी अधिक फल खाने की हिम्मत नहीं करते और जब मध्यम श्रेणी के लोगों को अच्छी तरकारियाँ भी खरीदना कठिन हो जाता है तो फिर साधारण श्रेणी के लोगों के लिये फलाहार की सम्मति देना व्यावहारिक दृष्टि से क्या अर्थ रखता है।"

पर उन लोगों के विचारने में एक भूल होती है। वे केवल अंगूर, संतरा, सेव, अनार, अनन्नास, अलूचा, अंजीर आदि जैसे बहुमूल्य पदार्थों की ही फलों में गिनती करते हैं, जबकि वास्तविक बात यह है कि जिन चीजों को निरन्तर साधारण समझा जाता है, वे इन प्रसिद्ध फलों की अपेक्षा अधिक गुणकारी और उपयोगी होती हैं। एक तो स्थानीय होने के कारण वे हमारी प्रकृति के अधिक अनुकूल होती हैं और दूसरे वे हमको ताजा मिल सकती हैं, जबकि बढ़िया समझे जाने वाले फल दूर से आते हैं और प्रायः दस-पन्द्रह दिन पहले के तोड़े होते हैं। नीचे हम कुछ ऐसे ही फलों का परिचय देते हैं, जो साधारण मूल्य के होते हुये भी स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से अनमोल सिद्ध होते हैं।

१. नीबू

प्राकृतिक चिकित्सा में इस समय हजारों सुयोग्य चिकित्सकों के अनुभव के आधार पर नीबू सर्वश्रेष्ठ स्वास्थ्य-रक्षक फल बतलाया गया है। एक अंगरेज डाक्टर ने अपनी पुस्तक 'स्वास्थ्यप्रद फल' में लिखा है कि "भ्रमवश लोग नीबू के रस को एक खटाई समझा करते हैं। यह खून शुद्ध करने के लिए अक्सीर होने के साथ ही सिर से पैर तक शरीर की भीतरी सफाई करने में अद्वितीय है। इसको लगातार इस्तेमाल करने से आँखों की रोशनी बढ़ जाती है और मोतियाबिन्द तक ठीक हो सकता है। बच्चों के लिये यह विशेष लाभकारी है। हर प्रकार के ज्वर, अफरा आदि उदर रोग, खाँसी जुकाम, दमा, गठिया, पक्षाघात, क्षय, कैंसर में नीबू फायदा पहुँचाता है। यह एक उत्तम श्रेणी का कीटाणुनाशक है, जिसमें केलसियम, मेग्नेसियम तथा फास्फोरस काफी मात्रा में पाये जाते हैं। इसे निःसंकोच फलों का राजा कहा जा सकता है।" एक अन्य लेखक के मतानुसार नीबू केवल मनुष्यों के लिये ही नहीं वरन् अन्य प्राणियों के लिये भी हितकारी है। कुछ पश्चिमी वैज्ञानिकों ने इसकी परीक्षा करने के लिये कुछ बन्दरों को शराब पिलाकर बीमार कर दिया। दूसरे दिन उनके सामने कितने ही प्रकार के फल रखे गये। उन बीमार बन्दरों ने उनमें से केवल नीबू ही उठाकर खा लिये और कुछ देर बाद वे चंगे हो गये।

अब से लगभग दो सौ वर्ष पहले योरोप के लोगों को नीबू के गुणों का कुछ भी पता न था। उसी समय स्काटलैण्ड के एक प्रसिद्ध डाक्टर जेम्सलिण्ड ने एक पुस्तक लिखकर बतलाया कि साग, तरकारी और फलों के अभाव से जब मनुष्य के रक्त में विकार उत्पन्न होकर 'स्कर्वी' रोग पैदा हो जाता है तो उसकी सर्वोत्तम दवा नीबू का सेवन करना ही है। गठिया और तीव्र ज्वर में भी नीबू के नियमित रूप से सेवन करने से बड़ा लाभ पहुँचता है। दो-चार विशेष अवस्थाओं को छोड़कर नीबू सदैव लाभकारी सिद्ध होता है और यदि विधि-पूर्वक प्रयोग किया जाय तो इससे पचासों रोग दूर हो सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२. टमाटर

कुछ दिन पहले हमारे देशवासी टमाटर से सर्वथा अनजान थे और कोई इसकी कदर नहीं करता था। उसके बाद महात्मा गाँधी ने इसके गुणों पर प्रकाश डाला और बतलाया कि यह स्वास्थ्य के लिये लाभदायक विटामिन और क्षारों के प्राप्त करने का बड़ा अच्छा साधन है। तब से इसका प्रचार बढ़ने लगा और अब बाजार में कभी-कभी यह एक रुपये सेर तक बिक जाता है। इसमें विटामिन ए, बी और सी पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं और इसका छिलका और बीज 'फुजले' के रूप में बड़े उपयोगी होते हैं। इन गुणों की दृष्टि से इसको आजकल आहार का एक आदर्श पदार्थ माना जाता है और बच्चे, बूढ़े, युवा सब अपनी रुचि के अनुसार इसका उपयोग करते हैं।

टमाटर मोटापा, पेटों के समस्त रोग, कब्ज, दस्त आदि में फायदा पहुँचाता है। विटामिन सी की बहुतायत के कारण यह 'स्कर्वी' रोग (मसूढ़ों का फूलना और चर्म विकार आदि) में बहुत प्रभावशाली सिद्ध हुआ है। बेरी-बेरी और एक्जिमा में इसके सेवन से लाभ होता है। जिन बच्चों को सूखा रोग हो उनको बढ़िया लाल टमाटर का रस नियमपूर्वक देने से शीघ्र ही आराम होता है। कई वैज्ञानिकों का कथन है कि टमाटर में अन्य सब खाद्य-पदार्थों से अधिक विटामिन होते हैं। अमरीका के कोलम्बिया विश्वविद्यालय के प्रोफेसर डा. शर्मन का कहना है कि "वजन के हिसाब से देखा जाय तो टमाटर को चाहे जैसे खाया जाय, विटामिन की दृष्टि से वह काहू (लेटिस) नीबू और संतरा के जोड़ का है। मक्खन में जितना विटामिन 'ए' होता है, उससे अधिक टमाटर में पाया जाता है।" एक अन्य चिकित्सक का मत है कि "किसी भी एक पदार्थ के खाने से जो रोग उत्पन्न हुआ हो, उसको दूर करने में टमाटर सबसे अधिक उपयोगी है। बुखार के अवसर पर टमाटर का रस देने से ज्वर की गर्मी बहुत दूर होती है और बहुत आराम जान पड़ता है।"

३. गाजर

यह एक बहुत सस्ती और गरीबों के उपयोग की चीज समझी जाती है, पर गुणों की दृष्टि से यह अनमोल है। जो काम अमीरों के लिये संतरा का रस करता है, वह गरीबों के लिये गाजर के रस से पूरा हो सकता है। संग्रहणी, चर्म रोग तथा गुर्दे की बीमारियों में गाजर का रस अत्यन्त लाभदायक सिद्ध होता है। इसमें लोहे का अंश अन्य खाद्यों की अपेक्षा बहुत अधिक होता है, जिससे यह रक्त को शुद्ध तथा ताकतवर बनाती है। यह सुन्दरता को बढ़ाने वाली है। इसके खाने से चमड़े में मुलामियत और चमक आती है, चेहरा चमकने लगता है। पर ये सब गुण कच्ची गाजर खाने और उसका रस पीने में हैं। खोया के साथ गाजर का हलवा बनाकर खाने से तो वह काबिज और गरिष्ठ होकर स्वास्थ्य की हानि करती है।

४. आँवला

यह भारतीय चिकित्साशास्त्र में अमृत के समान लाभकारी बतलाया गया है और एक जगह स्पष्ट लिखा है कि "यह सदैव पथ्य होता है। नेत्र, मस्तिष्क, पाचन-क्रिया आदि के लिये यह बड़ा हितकारी है।" इसको विटामिन सी की खान कहा गया है, जिससे 'स्कर्वी' आदि रोगों में यह बहुत अधिक गुणकारी होता है। प्रमेह और प्रदर रोगों की भी यह अत्युत्तम औषधि हैं। कषैलेपन के कारण लोग इसका उपयोग कम करते हैं या फिर मुरब्बा बनाकर खाते हैं। यह ठीक ढंग नहीं है। इसको चटनी बनाकर स्वाद से खाया जा सकता है अथवा ताजा कूटकर और थोड़ी खाँड़ मिलाकर एक दो दिन धूप में रखकर खाने से यह लाभदायक होता है।

इनके सिवाय खजूर, मूँगफली, पपीता, करमकल्ला और पालक भी ऐसे पदार्थ हैं जो बहुत कीमती नहीं हैं, पर जो विधिपूर्वक सेवन करने से अनेक रोगों को दूर करते हैं और जिनसे स्वास्थ्य की बहुत वृद्धि हो सकती है। पक्का पपीता यदि महँगा मिले तो कच्चे पपीते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की तरकारी खाने से भी पेट की दशा में बहुत सुधार होता है। मूँगफली को यदि कच्चा ही बादाम की तरह भिगोकर और पीसकर उपयोग में लाया जाय तो वह बड़ी शक्तिप्रदायक और पुष्टिकारक सिद्ध हो सकती है। करमकल्ला की नर्म पत्तियों को कच्चा काटकर ही सलाद की तरह खाने से विटामिनों का पूरा लाभ मिल सकता है। पालक भी बहुत कोमल पदार्थ है और उसको पकाना ही हो तो भाप पर पकाकर खाना उचित है, जिससे उसके विटामिन अधिक नष्ट न हों। यदि किसी रोग की चिकित्सा के लिये आवश्यक हो तो पालक की पत्तियों का रस निकालकर पीना ही सर्वोत्तम है।

भोजन के सम्बन्ध में २४ उपयोगी सूत्र

भोजन का क्षेत्र बहुत विस्तृत है और देश-भेद तथा मनुष्यों की प्रकृति-भेद के कारण उसके कोई सर्वमान्य नियम बना सकना संभव नहीं है। हम इतना ही कर सकते हैं कि कुछ सामान्य और हितकारी नियम बतला दें, फिर उनके वास्तविक आशय को समझकर अपने ऊपर उन्हें प्रत्येक मनुष्य स्वयं ही लागू कर सकता है। इसी दृष्टि से भोजन-विज्ञान के मुख्य-मुख्य सिद्धान्त और उनको व्यवहार में लाने के सम्बन्ध में कुछ सुझाव हमने बतलाये हैं। इसके सिवा अन्य विद्वानों ने इस विषय का और भी अधिक विवेचन किया है और भोजन द्वारा स्वास्थ्य प्राप्त करने की कितनी ही विधियाँ बतलाई हैं। उन सबका वर्णन इन थोड़े से पृष्ठों में कर सकना तो संभव नहीं है, पर हम उनका सारांश संक्षेप में यहाँ दे रहे हैं, जिससे पाठक उनको ध्यान में रख सकें और सुविधानुसार प्रयोग में ला सकें।

(१) भोजन के परिमाण के सम्बन्ध में कई चिकित्सकों ने यह सुझाव दिया है कि आमाशय को तीन भागों में विभाजित करके एक भाग को ठोस पदार्थों से भरना चाहिये, दूसरे को चाटने योग्य और पेय पदार्थों से और तीसरे भाग को बात, पित्त, कफ के विचरण के लिये खाली रखना चाहिये। इस नियम को ठीक ढंग से समझकर उसका पालन करने से स्वास्थ्य-रक्षा में बहुत सहायता मिलती है।

(२) भोजन सदा नियत मात्रा में करना चाहिये। कभी कम और कभी ज्यादा भोजन करना हितकारी नहीं हो सकता। नपा-तुला और नियत समय पर खाने से पाचन-क्रिया में सुविधा रहती है और स्वास्थ्य में शीघ्र ही किसी प्रकार का व्याघात नहीं पड़ता।

(३) भोजन के समय प्रसन्नचित रहना आवश्यक है। यदि संयोगवश भोजन के समय मन में क्रोध, शोक के भावों का उदय हो जाय तो उस समय भोजन न करना ही उत्तम है। ऐसे मानसिक विकारों की अवस्था में किया हुआ भोजन प्रायः हानिकर ही होता है। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर करके हमारे यहाँ एकान्त में सब प्रकार से पवित्र होकर भोजन करने का आदेश दिया गया है और साथ ही भोजन के पहले भगवान का ध्यान करके मन को पूर्णतः शान्त कर लेने का विधान भी बतलाया है।

(४) अधिक भोजन सब तरह से अहितकर होता है। सब प्रकार के खाद्य पदार्थों को इतने ही परिमाण में खाना चाहिये कि पेट में न उस समय बोझ मालूम हो, न बाद में भारीपन की शिकायत पैदा हो।

(५) जिस भोजन को देखने से घृणा उत्पन्न हो या जिसमें अरुचि जान पड़े उसे कभी न खाना चाहिये। ऐसे भोजन से चित्त प्रसन्न नहीं होता और उस अवस्था में उसका ठीक तरह पचना भी कठिन होता है।

(६) बासी भोजन करना हानिकर होता है। खासकर दिमागी काम करने वालों और विद्यार्थियों को उसका प्रयोग बिल्कुल छोड़ देना चाहिये क्योंकि उससे आलस्य उत्पन्न होता है और स्मरण शक्ति भी घटती है।

(७) पका हुआ भोजन खाते समय थोड़ा-सा गर्म अवश्य होना चाहिये। इससे उसका स्वाद ठीक रहता है, वह जठराग्नि को प्रदीप्त करता है, शीघ्र पचता है, वायु को निकालता है और कफ को शुद्ध करता है। पर अधिक गर्म भोजन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी आमाशय में श्लेष्मा को बढ़ाकर हानि पहुँचाता है। इसलिये शरीर ताप से थोड़ा ही अधिक गर्म भोजन लाभकारी होता है।

(८) रोटी को ठीक तरह सेकना चाहिये। वह न तो जली हो और न कच्ची। कच्ची रहने से पेट में दर्द, अजीर्ण आदि उत्पन्न करती है और जली हुई सारहीन हो जाती है।

(९) एक समय में एक या दो प्रकार का भोज्य पदार्थ ग्रहण करना ही अधिक लाभप्रद है। पर भिन्न-भिन्न समय पर उसे बदलना भी आवश्यक है, जिससे शरीर को सब प्रकार के तत्व मिलते रहें।

(१०) अधिक गरम या अधिक ठण्डा खाना दाँतों के लिये हानिकारक होता है। मामूली गर्म ताजा खाना ही हर तरह से उत्तम रहता है। ज्यादा गर्म पदार्थ खाकर ठण्डा पानी पीने से अनेक व्यक्तियों के दाँतों में तकलीफ हो जाती है।

(११) भोजन में कुछ चिकनाहट रहना भी आवश्यक है। अग्नि पर पकाने से अन्न और अन्य खाद्य पदार्थों की स्वाभाविक स्निग्धता नष्ट हो जाती है। इसलिये उसमें घी या तेल का कुछ अंश ऊपर से शामिल करना आवश्यक होता है। चिकना होने से भोजन अग्निवर्धक और बलवर्धक होता है और आँतों के भीतर खिसकने में भी सुविधा होती है।

(१२) अन्न से बने पदार्थ साधारणतः तीन घण्टे में पचते हैं, इसलिये उससे पहले तो दूसरी बार कदापि भोजन करना ही नहीं चाहिये। वैसे स्वास्थ्य की दृष्टि से दो बार के भोजनों के बीच छः घण्टे का अन्तर रहना आवश्यक है। यदि पहली बार के भोजन के पचने के पहले ही दूसरी बार भोजन कर लिया जाय तो पहले का आधा पचा और नया बिना पचा भोजन मिलकर शारीरिक विकार उत्पन्न करते हैं और दोषों को कुपित कर देते हैं।

(१३) भोजन करने में जल्दी करना ठीक नहीं, इससे शरीर में रूखापन पैदा होता है और आलस्य बढ़ता है। प्रत्येक ग्रास को अच्छी तरह चबाकर ही निगलना चाहिये और एक समय के भोजन में साधारणतः आधे घण्टे का समय लगाना चाहिये। खूब चबाकर खाने से थोड़े से भोजन में ही मन तृप्त हो जाता है और ठीक तरह से पचकर शरीर में लगता भी है।

(१४) हमारे दैनिक आहार में क्षार और विटामिनयुक्त आहार अर्थात् तरकारी और फलों का परिमाण कार्बोज और प्रोटीन वाले आहार अर्थात् गेहूँ, चावल, दाल, आलू आदि की अपेक्षा तीन गुना अवश्य होना चाहिये। जो लोग निर्धनता के कारण फल और शाक आदि का सदा प्रयोग न कर सकते हों तो उनके मूँग, मौंठ, चना, बाजरा, गेहूँ आदि अन्नों को भिगोकर तथा अंकुरित कर थोड़ी बहुत मात्रा में उनको कच्चा ही खाना चाहिये। इससे भी विटामिन अधिक प्राप्त हो सकेंगे।

(१५) घी और तेल में तली हुई चीजों को जहाँ तक सम्भव हो बहुत कम खाया जाय। ये प्रायः गरिष्ठ होती हैं और देर से पचती हैं। घुइयाँ (अरुई), कटहल, उर्द की दाल जैसे स्वभावतः भारी पदार्थों को भी बहुत कम मात्रा में कभी-कभी खाना ही उचित है।

(१६) भोजन करते समय बहुत हँसना और बोलना भी ठीक नहीं रहता। इससे अनेक बार कोई चीज श्वाँस नली में चली जाती है, जिससे एकदम खाँसी उठने लगती है और कष्ट होता है।

(१७) सुबह के वक्त चाय, काफी जैसी चीजों के बजाय अगर गरम पानी में नीबू निचोड़कर पिया जाय तो स्वास्थ्य के लिए बड़ा लाभदायक होता है।

(१८) थोड़ी भूख रहे तभी भोजन से हाथ खींच लेना चाहिए। भोजन करते समय अपने स्वास्थ्य, शक्ति और आयु का ध्यान रखना चाहिये। जो अधिक भोजन से बचेगा वह नीरोग जीवन व्यतीत कर सकेगा।

(१९) दोपहर का भोजन करने के पश्चात् दस-बीस मिनट लेटकर विश्राम करना लाभदायक होता है, पर सोना नहीं चाहिए, अन्यथा आलस्य आ जायेगा और लाभ के स्थान पर हानि होगी। शाम का भोजन करने के पश्चात् मील भर टहल लेना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(२०) शाम का भोजन सोने से दो-तीन घण्टा पहले करना ही ठीक होता है। खाते ही सो जाने से आहार के पचने में गड़बड़ी होती और नींद भी सुखमय नहीं होती।

(२१) भोजन में एक साथ बहुत से शाक, अचार, मुरब्बा, मिठाइयाँ आदि का होना निश्चित रूप से हानिकारक है। ऐसा भोजन बेमेल हो जाता है और उसके पचने में कठिनाई होती है। एक प्रसिद्ध अंगरेज एडीसन ने लिखा है कि "जब तरह-तरह के भोजनों के पात्र मेरे सामने आते हैं तो मैं उन पात्रों की आड़ में विविध रोगों को घात लगाए हुए बैठा देखता हूँ।" भोजन में बहुत तरह के पदार्थ होने से उनको आवश्यकता से अधिक परिमाण में खा लिया जाता है, जिससे पाचन-क्रिया में व्याघात होता है।

(२२) भोजन के साथ किसी प्रकार का रसेदार शाक या दाल होना ठीक रहता है। इसका अर्थ यह नहीं कि भोजन को उसमें भींजकर खायें। पर सूखा भोजन करने से पचने में कठिनाई होती है, कलेजे में जलन होने लगती है और खट्टी डकारें आती हैं। इससे रक्ताभिसरण की क्रिया में भी बाधा पड़ती है।

(२३) भोजन में घी, तेल आदि स्निग्ध पदार्थ इतने ज्यादा भी न हों कि उसका पचना कठिन हो जाय। अनेक लोग अज्ञानवश खूब घी, मक्खन आदि खाना शक्तिप्रदायक मानते हैं। पर कुछ विशेष व्यायामशील लोगों के अतिरिक्त अन्य सभी लोगों के लिये ऐसा भोजन कठिनाई से पचता है। अच्छा तो यह है कि घी को भोजन में पकते समय ही डाल दिया जाय। कच्चा घी शीघ्र नहीं पचता।

(२४) यह स्मरण रखना चाहिए कि शरीर में शक्ति और स्वास्थ्य अधिक भोजन से नहीं आते, वरन् जो भोजन अच्छी तरह पचकर रस और शुद्ध रक्त के रूप में परिवर्तित हो जाता है, वही शरीर को पोषण देता है और पुष्ट बनाता है। दुनियाँ में करोड़ों व्यक्ति ऐसे हैं कि जो अपनी वास्तविक आवश्यकता से दुगना-तिगुना भोजन कर लेते हैं, जिसका अधिकांश उनके शरीर से बिना पचे या आधा पचे हुए ही निकल जाता है। इसलिये एक विचारक ने ऐसे मनुष्यों के लिए यह उपदेश दिया है कि "खाने को आधा, पानी को दूना, कसरत को तिगुनी और हँसने को चौगुना करो।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अक्षुण्ण स्वास्थ्य प्राप्ति का शाश्वत राजमार्ग

कुपोषण का मूल कारण नासमझी

समझदारी का सदुपयोग यह है कि उसके सहारे सीधा रास्ता तलाश किया जाय और ऊँचा उठने, आगे बढ़ने में उपलब्ध शक्तियों को नियोजित किया जाय। इसके विपरीत यदि समझदारी कुचक्र रचने लगे, विनाश पर उतरे, उलटे रास्ते चले तो उससे हानि ही हानि है। उससे तो वे नासमझ अच्छे जो कछुए की तरह धीमी चाल चलते, लक्ष्य का ध्यान रखते और उछलने वाले खरगोश से आगे निकलकर बाजी जीतते हैं।

मनुष्य की तुलना में इस दृष्टि से वे पशु अधिक समदार हैं, जिन्होंने प्रकृति मर्यादाओं को अपनाये रखा है और मनुष्य के नागपाश तथा प्रकृति प्रकोप का सामना करते हुए भी अपना अस्तित्व बनाये रखा है, जो इन साधन रहित परिस्थितियों में भी मात्र अपनी काया, प्रकृति प्रेरणा और कठोर श्रम करने पर सम्भव हो सकने वाली निर्वाह व्यवस्था भर से काम चलाते और सुख-चैन की जिन्दगी जीते हैं। एक मनुष्य है, जो विपुल- वैभव का अधिष्ठाता होते हुए भी आये दिन ऐसे त्रास सहता है जैसे पुराणों में यमदूतों द्वारा नरक क्षेत्र में पहुँचने पर दिये जाने का उल्लेख है। होना यह चाहिए था कि स्रष्टा के इस सुरम्य उद्यान में मनुष्य शरीरधारी देवोपम स्तर का निर्वाह करता और अपने प्रभाव क्षेत्र को स्वर्ग में अवस्थित नन्दन वन जैसा सुरम्य बनाकर रखता। पर दुर्भाग्य को देखा जाय, ठीक उलटी स्थिति में उसे दिन गुजारने पड़ रहे हैं।

सबसे निकटवर्ती, सबसे वफादार, सबसे उपयोगी अपना शरीर है। उसी पर सवारी गाँठकर जीवन की लम्बी मंजिल पूरी की जाती है। इसी वैभव के सहारे इच्छा-अभिलाषाओं को पूर्ण करने का सुयोग मिलता है। जब तक वह सही है तब तक ही शान्तिपूर्वक रहना, विभिन्न प्रकार के रसास्वादन करना तथा प्रगति पथ पर आगे बढ़ सकना सम्भव होता है। वह गड़बड़ाये तो करते कुछ नहीं बनता। दिन गुजारना तक कठिन पड़ता है। उलटे त्रास सहना पड़ता है। रोते-कलपते समय कटता है और साथी-सम्बन्धियों पर सेवा-सहायता करने से लेकर धन व्यय करने तक का भार लदता है।

इतना जानते हुए भी यदि कोई जान-बूझकर अपने पैरों पर कुल्हाड़ी मारे, काँटों पर चले, गड्ढे में गिरे और बर्र के छत्ते में हाथ डाले तो कोई क्या करे ? समझदारी का अभाव समझ में आता है। उसके लिए भाग्य-भगवान को दोष देकर भी जी हलका किया जा सकता है किन्तु तब क्या किया जाय जब समझदारी उलटे रास्ते चले ? पैर ऊपर करके हाथों के बल, धरती से सिर रगड़ते हुए चलने में विशिष्टता के अहंकार का प्रदर्शन करे।

मनुष्य की गतिविधियों को देखकर ऐसी ही स्थिति का अवलोकन करना पड़ता है। जब अपने परमप्रिय सेवक सम्बन्धी के लिए नासमझी भरी अनीति अपनाते हुए देखा जाता है, तब आश्चर्य होता है, असमंजस होता है कि मनुष्य की समझदारी को सराहा जाय या उसकी उलटे पैरों चलने लौटने की विडम्बना को मूर्खतापूर्ण कहकर कोसा जाय।

शरीर के साथ जो व्यवहार किया जाता है, उसे उलट-पुलट कर देखा जाय तो एक शब्द में विचित्र ही कहा जा सकता है। शरीर के साथ शत्रुता निबाही जाय, उसे तोड़-फोड़कर बर्बाद किया जाय ऐसा भी किसी का मन नहीं दीखता। यदि ऐसी बात रही होती तो उसे वस्त्र-आभूषणों से, शृंगार प्रसाधनों से क्यों सजाया जाता ? केश-विन्यास बनाने जैसे अनेकों कामों में कितना समय लगता है ? सजधज में कितना धन व्यय होता है ? वाहनों, सेवकों द्वारा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसके लिए कितनी सुविधायें प्रदान की जाती हैं। विनोद के कितने ही साधन जुटाये जाते हैं ? पोषिक आहार लेने का भी ध्यान रहता है। इन सब बातों को देखते हुए यह कैसे कहा जाय कि अपनी काया के प्रति किसी का मन शत्रुता निबाहने का है और उसे बर्बाद कर देने का इरादा बन गया है।

दूसरी ओर दृष्टि डालने से जो दृश्य सामने आता है, उसे देखते हुए यह मानने को भी जी नहीं करता कि शरीर को मित्र माना गया है और उसकी सुरक्षा, स्थिरता तथा प्रगति का वैसा ध्यान रखा गया है जैसा कि किसी समझदार को रखना चाहिए था। एक-एक करके पर्यवेक्षण करना हो तो सर्वप्रथम दृष्टि आहार पर जानी चाहिए क्योंकि इसी ईंधन के सहारे यह भट्टी गरम रहती है और इसी पर पकने वाली खिचड़ी के सहारे जीवन की गाड़ी चलती है। रस-रक्त का तेल-पानी ही है, जिसके बलबूते यह मोटर दौड़ती है। इस सन्दर्भ में असावधानी बरती जाय, उलटी नीति अपनाई जाय तो स्पष्ट है कि उस आधार को विषाक्त होना पड़ेगा, जिसे आरोग्य की आधारशिला कह सकते हैं। अनुपयुक्त आहार करते रहने पर भी कोई किस प्रकार अपने स्वास्थ्य को अक्षुण्ण रख सकेगा ? इस तथ्य को समझने में कोई बड़ी कठिनाई नहीं होनी चाहिए। फिर भी स्पष्ट है कि आहार के सम्बन्ध में वह ढर्रा अपनाया गया है, जिसके रहते निरोग रह सकने की बात सोची भी नहीं जा सकती। आश्चर्य यह है कि दुष्परिणाम भुगतने में इतनी देरी क्यों होती रहती है। प्रकृति को कठोर अनुशासन की अधिष्ठात्री कहा जाता है फिर भी वह मनुष्य के साथ धीमी और थोड़ी प्रताड़ना देने की उदारता क्यों कर दिखा पाती है ?

अभ्यस्त आहार का निरीक्षण-पर्यवेक्षण किया जाय तो प्रतीत होता है कि उसे निर्जीव और विषाक्त बनाने में काई कमी नहीं रहने दी गई है। स्वादिष्ट के ध्रुवकेन्द्र समझे जाने वाले नमक पर दृष्टि डाली जाय तो प्रतीत होता है कि यह मनुष्य के आहार में सम्मिलित होने योग्य स्थिति में किसी भी प्रकार नहीं है। रासायनिक विश्लेषण करने पर वह 'सोडियम क्लोराइड' नामक विष है। जिसकी पोषण में सहायता दे सकने जैसी स्थिति तनिक भी नहीं है। जो नमक शरीर में घुलते और पोषण प्रदान करते हैं वे अन्न, शाक, फल आदि खाद्य पदार्थों में प्रचुर परिमाण में विद्यमान हैं। वे ही पचते और खपते भी हैं। इस प्रकार शरीर की लवण आवश्यकता की पूर्ति के लिए उसका समुचित अनुपात उन खाद्य पदार्थों में सँजोया है, जो खाने के काम आते हैं। उनका अन्यान्य रासायनिक पदार्थों के साथ ऐसा समन्वय भी रहता है, जिससे उनके पचने में सुविधा रहे। आवश्यक नहीं कि उन उपयोगी लवणों का स्वाद खारा ही रहे। 'फ्रूट साल्ट' खारे कहाँ होते हैं ?

मनुष्य है जिसे खारी नमक के बिना एक ग्रास गले उतारना कठिन पड़ता है। दाल, शाक चटनी, अचार कुछ क्यों न हो-हरेक में चटकीला नमक रहना चाहिए। इसके बिना जायका ही क्या ? यह बुरी आदत जानबूझकर डाली गई है। संसार के अनेक क्षेत्र इन दिनों भी ऐसे हैं जहाँ खारी नमक का उपयोग प्रायः नहीं ही होता है। देखा-देखी प्रचलन हुआ है तो उसकी मात्रा नगण्य जितनी रखी गई है। इसका प्रतिफल प्रत्यक्ष है। उन क्षेत्रों में सभ्य जगत की प्राणप्रिय बीमारियाँ अभी भी पहुँच नहीं पाई हैं।

अन्य मसालों के सम्बन्ध में भी यही बात है। जीरा, धनियाँ, हल्दी जैसे मसालों को तो किसी प्रकार सहन भी किया जा सकता है किन्तु मिर्च, लौंग, हींग, तेजपात जैसे गरम मसाले तो ऐसे हैं जिन्हें एक प्रकार का तेजाब ही कहना चाहिए। वे जलाने-गलाने के अतिरिक्त दूसरा कोई काम कर ही नहीं पाते। हन्टर मार-मार कर दौड़ने जैसी उत्तेजना देकर पेट के साथ अत्याचार ही करते रहते हैं। अधिक खाये को जल्दी पचाने की बात अमतौर से मसालों को लाभ बताते हुए कही जाती है। पर वस्तुतः वे निर्दय चाबुकमार की गतिविधियाँ ही अपनाते हैं और नशे की तरह आदत में सम्मिलित हो जाने के बाद यह विवशता उत्पन्न करते हैं कि उनके बिना गाड़ी धकेगी ही नहीं।

मिर्च-मसालों के आवेश में मनुष्य अधिक खा जाता है। जो अभक्ष्य थे उन्हें भी निगल जाता है। अवांछनीय तत्वों को शरीर में प्रवेश

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

देने पर कोई अपनी चतुरता की डींग क्यों न हाँकें, पाक विद्या के निष्णात अपने कौशल की शेखी कितनी ही क्यों न बघारें—वास्तविकता यह है कि उस चतुरता के सहारे आरोग्य के सर्वनाश का ही द्वार खुलता है। लाड़-चाव में प्रियजनों को सवादिष्ट व्यंजन बना-बनाकर खिलाना और अधिक खाने का आकर्षण या दबाव प्रस्तुत करना वस्तुतः ऐसी शत्रुता है जिसे लोक व्यवहार में मित्रता, शुभेच्छा का प्रदर्शन समझा जाने लगा है।

न जाने यह समझदारी कहाँ से मनुष्य पर चढ़ दौड़ी कि अधिक खाने से अधिक बल मिलता है, जबकि बात तथ्य के सर्वथा विपरीत है। पेट की बनावट ही ऐसी है कि यदि वह आधा भरा हो तो ही पाचन का ठीक प्रबन्ध कर सकता है। हाँडी खाली रहे तो ही उफनते-उबलने की गुंजायश रहने पर ठीक प्रकार पकेगी। मथानी में दही बिलोने के कारण जो हलचल होती है उसके लिए जगह छोड़नी पड़ती है। यदि हाँडी खचाखच भरी हो तो पकने की प्रक्रिया कैसे पूरी हो ? मथानी को गरदन तक भर दिया गया हो तो बिलोने पर जो उथल-पुथल होती है उसके लिए स्थान कैसे मिले ?

पेट के खाली रहने पर ही पाचन की गुंजायश रहती है। सीमित रस-स्राव होने पर सीमित मात्रा का आहार ही पचता है। गले तक बोझा भर लेने पर यह आशा छोड़ ही देनी चाहिए कि वह ठीक प्रकार पचेगा और उपयुक्त पोषण प्रदान कर सकेगा। मिर्च-मसाले इस व्यवस्था को बुरी तरड़ बिगाड़ देते हैं। उनसे दुहरी हानि है। एक यह कि वे अपनी उत्तेजक विषाक्तता के कारण पाचनतंत्र की तोड़-फोड़ करते हैं तथा दूसरी यह कि उस लालच में अधिक मात्रा में खाते जाने पर भी हाथ रुकता नहीं। फलतः पेट को अकारण अत्यधिक श्रम करने पर भी पोषण के नाम पर खाली हाथ रहना पड़ता है। अपच उत्पन्न होने पर बीमारियों का आक्रमण दौड़ पड़ता है सो अलग। इस प्रकार स्वादिष्ट के नाम पर नमक और मसालों का उपयोग होता है। उनसे लाभ जैसा तो कुछ मिलता नहीं, शरीर पर विपत्ति लदती है।

मिर्च-मसालों जैसी स्थिति ही चिकनाई-मिठाई की है। तेल-घी को अलग से निकालकर खाने से वे तत्व अलग हो जाते हैं, जो चिकनाई को पचाने में काम आते हैं। तिल, मूँगफली, सोयाबीन आदि को चबा लिया या पीसकर उपयोग किया जाय तो वे उचित मात्रा में होने पर पोषण का प्रयोजन पूरा करेंगे। तेल निकालने पर उसे पचाने वाले तत्व खली में निकल जाते हैं और वह चिकनाई अत्यधिक गरिष्ठ हो जाती है। घी खाने की अपेक्षा दूध-दही लेना गनीमत है। वैसे जितनी चिकनाई की शरीर को आवश्यकता है उतनी सन्तुलित आहार में सहज ही मिल जाती है। अन्न, दाल आदि में भी चिकनाई होती है। अलग से उसे लेना आवश्यक नहीं है पर यदि लेने का मन ही हो तो उसे उन बीजों के रूप में ही लेना चाहिए जिनमें तेल ही नहीं उसको पचाने वाले तत्वों का भी उपयुक्त अनुपात रहता हैं।

शकर के सम्बन्ध में भी यही बात है। अन्न मुँह में पिसता है तो जीभ से निकलने वाले रस ही उसे ग्लूकोज के रूप में परिवर्तित कर देते है। पेट में पहुँचते-पहुँचते वह उपयुक्त मात्रा में शकर से भरा-पूरा होता है। फिर सामान्य खाद्य पदार्थों में भी शकर का समुचित अनुपात रहता है। उसे अलग से खाने की कोई आवश्यकता नहीं। मीठे फलों में उसका अनुपात पर्याप्त होता है। प्रायः सभी फल मीठे होते हैं। खजूर, अंजीर, दाख आदि में तो उसकी मात्रा बहुत अधिक होती है। शहद की भी प्रशंसा है। यों चीकू से लेकर चुकन्दर तक में उसकी पर्याप्त मात्रा रहती है। मन चले तो गन्ना भी चूसा जा सकता है। शकर प्राप्त करने की इतनी ही मर्यादा है। चरम सीमा तक पहुँचा हो तो बिना पाउडर के शोधा गया गुड़ या राब तक आगे बढ़ा जा सकता है। सफेद चीनी तो सफेद विष कही गई है। कैल्सियम निकल जाने पर तो वह दाँत, मसूड़े, अस्थि पिंजर आदि सभी को गलाती है। मधुमेह, रक्तचाप, यकृत रोग, पेट के कीड़े जैसे रोग उत्पन्न करने में तो उसकी ही करामात काम करती है। यदि सफेद चीनी का उपयोग आहार से हटा दिया जाय तो विष भक्षण चटोरपन, अपव्यय एवं अधिक खाने जैसे अनेक अभिशापों से सहज छुटकारा मिल सकता है।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य की शरीर संरचना पूर्ण शाकाहारी जैसी है। वह वानर प्रजाति है। इस वर्ग समुदाय के. लिए माँसाहार तनिक भी तुक नहीं। दाँत, आँत जैसे अवयवों की बनावट ऐसी है नहीं जो माँस पचा सके। तल-भूनकर के लोग बाँस और आक के पत्ते जैसी वस्तुओं के व्यंजन बना लेते हैं। इसका तात्पर्य यह तो नहीं हुआ कि वे मनुष्य की आहार-सूची में सम्मिलित होनी चाहिए। माँस मनुष्य के लिए न तो सुपाच्य है और न उपयुक्त। वह मात्र हिंस्र प्राणियों के लिए ही उपयोगी है, मनुष्य में सहज स्वभाव पाई जाने वाली दया भावना भी इसकी आज्ञा नहीं देती कि वह शरीर और मन पर बुरा प्रभाव डालने वाले माँसाहार पर उतरे, जबकि शाकाहारी पदार्थों का बाहुल्य प्रकृति ने उसके लिए पहले से ही सँजोकर रख दिया है।

आहार क्षेत्र में घुसी हुई अवांछनीयताओं में से कुछ पर ऊपर की पंक्तियों में प्रकाश डाला गया है। भूनने-तलने की समूची प्रक्रिया ही ऐसी है, जिसे हर दृष्टि से अबुद्धिमत्तापूर्ण ही कहा जायेगा। व्यंजनों का प्रचलन अपने समय का सबसे बड़ा अभिशाप है। थाली में अनेकों कटोरियों का सजाया जाना, अनेक स्वादों की भरमार होना-ऐसी नासमझी है, जिसके कारण चटोरेपन की दाद खुजाने जैसी राहत भले ही मिलती हो पर परिणामतः उससे हानि ही हानि है। हितसाधन जैसी बुद्धिमत्ता की उसमें कहीं झाँकी तक नहीं होती।

गलत रास्ते पर चलने की जानकारी मिलते ही यात्री वापिस लौट पड़ते हैं, जो भूल का परिमार्जन सही रास्ता अपनाकर करते हैं। उपरोक्त अभ्यस्त कुटेबों को यदि आहार प्रक्रिया में से हटाया जा सके तो यह भूल सुधार का एक उत्साहवर्धक प्रयोग होगा। उसका सत्परिणाम हाथों हाथ स्वास्थ्य में आशाजनक परिवर्तन के रूप में दृष्टिगोचर होगा। वस्तुत सारी पोषण समस्याओं का कारण वह नासमझी है जो मनुष्यों के मन-मस्तिष्कों में जड़ जमाये बैठी है। जब तक अज्ञानान्धकार नहीं दूर होगा, अवांछनीयताएँ आहार में प्रवेश कर बीमारियाँ बढ़ाती रहेंगी, बाहरी उपचार निरर्थक ही रहेंगे।

आहार पौष्टिक ही नहीं सर्व-सुलभ भी हो

शरीर को भोजन की आवश्यकता मुख्यतः दो कारणों से पड़ती है। पहले शरीर की वृद्धि और मरम्मत के लिए तथा दूसरे शरीर में वांछित गर्मी और शक्ति उत्पन्न करने के लिए। मनुष्य का शरीर निरन्तर निर्मित होती रहने वाली, अभिवृद्धि करने वाली प्रकृति की अद्‌भुत रचना है। किसी मकान का निर्माण करने के लिए जिस प्रकार ईंट, चूना, सीमेन्ट, लकड़ी और लोहे का सामान जरूरी होती है, उसी प्रकार शरीर के लिए भी विभिन्न पोषक तत्व आवश्यक होते हैं, जो खाद्य पदार्थों से मिलते हैं।

शरीर निरन्तर गतिशील, क्रियाशील भी रहता है। इसके लिए एक शक्ति की आवश्यकता होती है। रेल को चलाने के लिए वाष्पशक्ति चाहिए। अन्य मशीनें और कल-कारखाने भी वाष्पशक्ति या विद्युतशक्ति से चलते हैं। यदि उन्हें वह शक्ति मिलना बन्द हो जाय तो सम्बन्धित यन्त्र बन्द हो जाते हैं। शरीर भी किसी मशीन से कम नहीं है। उसे चलाने के लिए जिस शक्ति की आवश्यकता रहती है, वह भोजन से ही प्राप्त होती है। हम जो आहार ग्रहण करते हैं, जो कुछ भी खाते हैं, उससे हमारा पाचन संस्थान पोषक तत्व चुन लेता है और उन्हें रक्त में मिलाकर रक्त परिवहन संस्थान को सुपुर्द कर देता है। यहाँ से जिन अंगों को जिन पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है वहाँ रक्त द्वारा वे तत्व पहुँच जाते हैं।

भोजन से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व ही शरीर में शक्ति पैदा करते हैं। इसके अतिरिक्त शरीर को जीवित रखने के लिए गर्मी भी अपेक्षित होती है जिससे हमारा शरीर गर्म रहता है। इस गर्मी को हम जीवन की गर्मी भी कह सकते हैं। भोजन के पोषक तत्व जब शरीर में शक्ति पैदा करते हैं तो उनसे जीवन की यह वांछित गर्मी स्वयं ही प्राप्त हो जाती है। इसलिए आवश्यक है कि हम जो भोजन करें उस भोजन में पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में विद्यमान रहें ताकि शरीर को आवश्यक पोषण मिलता रहे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्वस्थ और शक्तिशाली शरीर के लिए वैज्ञानिकों ने पोषक तत्वों को आवश्यक बताया है वे हैं—प्रोटीन्स, लवण, कार्बोहाइड्रेट्स, चर्बी और विटामिन्स। भोजन में यह तत्व पर्याप्त मात्रा में रहें तो शरीर की अभिवृद्धि और उसकी अद्‌भुत मशीन में होने वाली टूट-फूट का कार्य भली प्रकार चलता रह सकता है।

समझा जाता है कि इन पोषक तत्वों के लिए उच्चकोटि का आहार चाहिए। जैसे प्रोटीन्स के लिए सोयाबीन, सूखे मेवे और सूखी फलियों वाले शाक। चर्बी के लिए बादाम, अखरोट, पिस्ता, काजू, घी, विटामिन्स के लिए फल, दूध, दही आदि। जिन खाद्य पदार्थों में ये तत्व पर्याप्त मात्रा में हैं, उनकी एक लम्बी सूची है और कई बहुत महँगे होने कारण सर्वसाधारण के लिए खाद्य पदार्थ सुलभ भी नहीं हो पाते। इसलिए सामान्य जनता के दुर्बल स्वास्थ्य में कुपोषण भी एक बड़ी समस्या है।

जब भी कभी पौष्टिक भोजन की बात चलती है तो औसत स्तर के व्यक्ति इसे महँगा होने के कारण अपने लिए दुर्लभ ही बताते हैं। परन्तु बात ऐसी नहीं है। साधारण भोजन भी ठीक प्रकार से खाया-पकाया जाये तो उसमें भी पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक तत्व मिल जाते हैं। गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि अनाज शकरकन्दी, आलू, अरबी, मूली जैसे शाक । दूध, दही, नीबू गुड़ आदि में भी पर्याप्त विटामिन होते हैं और वे उन महँगे खाद्य पदार्थों की तरह ही शरीर के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी करते हैं। वैज्ञानिक विश्लेषणों से पता चला है कि गन्ने, शहद और खजूर में भी उतने ही विटामिन्स तथा लवण होते हैं जितने कि किशमिश और मुनक्का जैसे सूखे मेवों में।

अधिकांशतः सामान्य खाद्य पदार्थों में भी पर्याप्त मात्रा में विटामिन्स और पोषक तत्व मिल जाते हैं, जितने कि महँगे और सूखे मेवों, फलों में। गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि अनाज तथा शाक, सब्जियाँ भी पोषक तत्वों से भरपूर हैं। फिर क्या कारण है कि इन पोषक तत्वों में पर्याप्त मात्रा में विटामिन्स होते हुए भी अधिकांश व्यक्तियों का भोजन पोषण रहित या अपर्याप्त पोषण देने वाला होता है। किसी स्वास्थ्य वैज्ञानिक ने इसका कारण बताते हुए लिखा है कि अधिकांश लोग इसलिए बीमार नहीं पड़ते कि उन्हें पोषक आहार जो महँगे बताये जाते हैं, नहीं मिलते बल्कि इसलिए अस्वस्थ रहने लगते हैं कि उनके खानपान का तरीका अवैज्ञानिक होता है।

आमतौर पर लोगों को यह कहते-सुनते पाया जाता है कि दूध नहीं मिलता, घी मँहगा होने के कारण नहीं खरीद सकते, वनस्पति के दर्शन हैं आदि। महँगाई के कारण कई वस्तुओं के सुलभ न होने की बात एक सीमा तक सही है क्योंकि इनकी आवश्यकता, शरीर को पौष्टिकता प्रदान करने के लिए पड़ती है, जबकि दूध और घी के अलावा भी अन्य पौष्टिक खाद्य हैं जो सर्वसाधारण के नियमित व्यवहार में आते हैं। लेकिन उनका प्रयोग गलत ढंग से किये जाने के कारण उनसे उचित लाभ नहीं मिलता। फिर भी आहार में पोषक तत्वों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। इस सर्दी में आहार सम्बन्धी जो शोधें हुयीं तथा उनके परिणामस्वरूप जो निष्कर्ष आये, वे सर्वसाधारण तक नहीं पहुँच पाये। यही कारण है कि अधिकांश व्यक्ति घी, दूध और सूखे मेवों, महँगे फलों को ही स्वास्थ्यवर्धक पौष्टिक खाद्य मानते हैं। प्रायः कहा जाता है कि आजकल महँगाई के जमाने में केवल अमीर लोग ही घी, दूध खा-पीकर स्वस्थ्य रह सकते हैं। गरीबों या मध्यम वर्ग के व्यक्तियों के लिए तो पोषक आहार स्वप्न की ही बात है।

यह बात अधुनातन वैज्ञानिक निष्कर्षों और अनुसंधानों के आधार पर गलत सिद्ध हो रही है। यह सच है कि घी-दूध पोषक तत्वों से परिपूरित आहार है किन्तु यह भी सच है कि यही मात्र पोषणपूर्ण खाद्य नहीं है। पूरा पोषण प्राप्त करने के लिए अन्य खाद्य पदार्थों की भी आवश्यकता रहती है। यदि बुद्धिमानी से भोजन का चुनाव किया जाय तो हम काफी सस्ते मूल्य में परिवार के लिए अच्छा और पोषणपूर्ण भोजन जुटा सकते हैं।

उदाहरण के लिए दूध को ही लें। अच्छी किस्म के दूध का मूल्य प्रायः तीन-चार रुपये प्रति लीटर बैठता है। सर्वसाधारण की इतनी

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामर्थ्य नहीं होती कि वह तीन-चार रुपये रोज दूध पर खर्च कर सके। फलतः दो-ढाई सौ ग्राम दूध लेकर चाय के रूप में ही सुबह नाश्ता कर लिया जाता है। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये प्रयोगों से यह निष्कर्ष सामने आये हैं कि ५० ग्राम अंकुरित चने २५० ग्राम दूध के बराबर पौष्टिक होते हैं। अंकुरित चनों को खूब चबा-चबाकर खाने से उसका रस मुँह में भरता रहता है। इस प्रकार अंकुरित चने खाने से दूध के समान ही पौष्टिक तत्व प्राप्त होते हैं।

आरम्भ में इस प्रकार अंकुरित चने खाने से उनमें स्वाद नहीं आता। फीके और अस्वाद होने के कारण चने खाने को मन नहीं करता, परन्तु उसका अपना एक अलग ही स्वाद होता है। यदि इनमें रुचि ली जाय तो अंकुरित चनों के खाने और उनमें रस लेने की आदत डाली जा सकती है। इसके लिए चनों में हलका सा नमक डालकर और कागजी नीबू निचोड़कर स्वाद पैदा किया जा सकता है। नीबू का रस और नमक डालकर चने खाने से भरपूर मात्रा में प्रोटोन, विटामिन और खनिज लवण प्राप्त किये जा सकते हैं। मूल्य की दृष्टि से भी यह नाश्ता मँहगा नहीं होता। मुश्किल से पाँच व्यक्तियों के परिवार के लिए पचास पैसे का नाश्ता पड़ता है। चाय में तो उससे ज्यादा ही खर्च पड़ता है।

पोषक तत्वों की पर्याप्त प्राप्ति के लिए जब फलों की बात चलती है तो लोगों का ध्यान अंगूर, अनार और सेव जैसे फलों की ओर जाता है तथा महँगाई की कठिनाई सामने आती है। लेकिन कोई जरूरी नहीं कि मँहगे फल ही खाये जाएँ। सभी क्षेत्रों में होने वाले मौसमी फल मिल जाते हैं, जो काफी सस्ते भी रहते हैं जैसे—खीरा, ककड़ी, अमरूद, जामुन, आम, चीकू, पपीता आदि। तीसरे पहर प्रायः सभी घरों में चाय बनती है और नाश्ता के लिए कुछ ना सही तो रोटी और चावल का प्रयोग तो किया ही जाता है। उसे रोककर यदि ताजे और मौसमी फल खाये जाएँ तो अपराह्न कालीन नाश्ते में पर्याप्त पौष्टिक तत्व मिल सकते हैं। जाड़ों के दिनों में सन्तरे बहुतायत से मिलते हैं। औसत साइज का एक सन्तरा २५ पैसे तक मिल जाता है। पूरे परिवार के लिए पाँच सन्तरे पर्याप्त होते हैं।

इतना खर्च भी अपनी शक्ति से बाहर लगे तो एक किलो गाजर भी काफी हैं। कच्ची गाजर में पर्याप्त मात्र में विटामिन 'ए' तथा खनिज लवण होते हैं। गाजर के अलावा इन दिनों शलजम, मूली, टमाटर आदि सब्जियाँ भी बेहद सस्ती मिलती हैं और अपर्याप्त पोषक तत्वों से भी परिपूर्ण रहती हैं।

इसी प्रकार आँवला भी पर्याप्त पोषणपूर्ण खाद्य है। इनमें विटामिन सी भी बहुत अधिक मात्रा में होता है जो कि दाँतों और रक्त के लिए बहुत आवश्यक है। जिन दिनों ताजे आँवले मिलते हैं, उन दिनों कच्चे आँवले खाने चाहिए। यदि अच्छे न लगें तो उनकी चटनी बनायी जा सकती है। जब आँवलों की फसल खतम हो जाय तो सूखा आँवला इस्तेमाल किया जा सकता है। रात को आँवला भिगोकर उसे सिल-बट्टे पर पिसवाकर चटनी बनवाई जा सकती है। इस प्रकार कितने ही तरीकों से आँवलों का उपयोग किया जा सकता है। विटामिन सी और खनिज लवण के अतिरिक्त आँवलों में और भी कई पोषक तत्व होते हैं। आयुर्वेद में तो उसे वृद्ध व्यक्तियों को भी यौवन प्रदान करने वाला बताया गया है।

दूध की आवश्यकता भी सभी घरों में पड़ती है और प्रायः सभी लोग थोड़ी बहुत मात्रा में दूध खरीदते हैं। यह बात और है कि महँगा होने के कारण दूध पर्याप्त मात्रा में नहीं खरीदा जा सकता। ऐसी दशा में दूध का विकल्प सप्रेटा दूध खरीदा जा सकता है। सप्रेटा दूध शुद्ध दूध की अपेक्षा सस्ता होता है। शुद्ध दूध से उसमें एक ही गुण कम है वह है घी अथवा मक्खन। शुद्ध दूध में से घी या मक्खन निकालकर ही सप्रेटा तैयार किया जाता है। उसमें घी भले ही नहीं रहता परन्तु उसके अलावा सभी पोषक तत्व (प्रोटीन्स, कैल्शियम, खनिज लवण और विटामिन) उतनी ही मात्रा में रहते हैं जितने कि शुद्ध रूप में।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊपर जिन खाद्य पदार्थों के सुझाव दिये गये हैं वे भी सस्ते हैं और सर्वसाधारण की क्रय शक्ति की सीमा में आते हैं। इनका प्रयोग सभी कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त खाना पकाने की विधि में भी थोड़ा सुधार कर लिया जाय तो पकाते समय जो बहुत-से विटामिन पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं, उन्हें पचाया जा सकता है। जैसे—आमतौर पर गृहिणियाँ आटे को छानकर चोकर फेंक देती हैं। चोकर के साथ बहुत-से विटामिन फिक जाते हैं। जिन सब्जियों के छिलके कड़े नहीं होते, उन्हें भी छील दिया जाता है, जबकि ऐसा करने से कई विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

आहार के पोषक तत्वों की रक्षा के लिए सब्जियों को अधिक देर तक नहीं पकाया जाना चाहिए और न ही उनमें बेहद मसाले बगैरह डालकर उनकी पौष्टिकता को नष्ट करना चाहिए। इस प्रकार साधारण आमदनी वाले परिवार भी अपने लिए पर्याप्त पोषणपूर्ण आहार अपनी शक्ति सामर्थ्य के भीतर रहकर ही प्राप्त कर सकते हैं।

बिना पकाये हुए अनाजों के प्रयोग में गेहूँ की घास बनाकर खाने की एक नई कड़ी और जुड़ी हुई है और उस विधि को प्रयोगकर्ताओं तथा उपयोग करने वालों ने अतीव उपयोगी बताया है। अमेरिका की एक महिला डॉक्टर एन० विरामोर ने अपनी पुस्तक 'व्हीटग्रास मैनुअल' में इसके प्रयोगों और अनुभवों का सविस्तार वर्णन लिखते हुए यह भी बताया है कि किस प्रकार गेहूँ की घास का उपयोग विभिन्न रोगों की चिकित्सा में उपयोगी और प्रभावकारी सिद्ध होता है। उन्होंने गेहूँ को 'हरित रक्त' की संज्ञा देते हुए यह बताया है कि यह रस मनुष्य के रक्त से ४० प्रतिशत मिलता-जुलता है।

डॉ. विरामोर का कथन है कि स्वस्थ व्यक्ति यदि उसका सेवन करें तो उनके शरीर में जीवनी शक्ति प्रखर होती है और रोगियों में शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता आश्चर्यजनक रीति से बढ़ती है। इससे पोषण के लिए उपयुक्त इतने अधिक बहुमूल्य तत्व उपलब्ध होते हैं जितने कि अच्छी से अच्छी खुराक से भी प्राप्त नहीं हो सकते। इसे किसी भी रोग में दवा के रूप में दिया जा सकता है और कोई भी इसे श्रेष्ठतम टॉनिक के रूप में सेवन कर सकता है।

गेहूँ की घास से हरित रक्त बनाने की विधि बहुत सरल है। कुछ टोकरे या रद्दी पेटियों में खाद मिली मिट्टी भर दी जाती है। इनकी संख्या दस-बारह होनी चाहिए। प्रत्येक टोकरी में बारी-बारी से गेहूँ के अच्छे बीज बो दिये जाते हैं। उन्हें छाया में रख दिया जाता है और पानी दिया जाता रहता है। तीन-चार दिन में ही ये बीज उग आते हैं और आठ-दस दिन में करीब सात-आठ इन्च ऊँचे हो जाते हैं, इस प्रकार दस-बारह दिन में पहले बोये बीजों से उगे तीस-चालीस पौधे उखाड़कर उनकी जड़ें काटकर हटा दीजिए। अंकुरों को धोकर थोड़े पानी के साथ सिल पर पीसकर कपड़े में छान लीजिए। इस प्रकार जो पेय तैयार होता है, उसे एक गिलास प्रतिदिन पीने से सम्पूर्ण पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी हो जाती है। दूसरे दिन दूसरे बोये अंकुर लिए जाना चाहिए और जिस टोकरे में से उन्हें उखाड़ा जाए उसमें दुबारा बोने का क्रम नियमित रूप से जारी रखना चाहिए। इस प्रकार सिलसिला टूटने नहीं पायेगा और प्रतिदिन गेहूँ की घास मिलती रहेगी।

इस गेहूँ की घास के चमत्कारी सत्परिणामों का सविस्तार उल्लेख करते हुए डॉ. विरामोर ने एक और प्रयोग लिखा है, जो गेहूँ घास के बराबर तो नहीं फिर भी बहुत कुछ लाभदायक है। वह विधि यह है कि आधा कप धुले और बिने हुए गेहूँ किसी काँच या चीनी के बर्तन में डालिए और उन पर दो कप पानी डालकर ढक दीजिए, बारह घण्टे तक इन्हें भिगोये रखने के बाद गेहूँ को मसलकर अलग कीजिए और पानी को छानकर पीजिए। यह पानी भी बहुत गुणकारी है। भीगे हुए गेहूँ दलिये आदि के काम में लाये जा सकते हैं।

इस प्रकार खाद्य पदार्थों को यथासम्भव उनके प्राकृतिक रूप में लिया जाए। उन्हें कम से कम भूना या पकाया जाय और उनके उपयोगी अंश को नष्ट न किया जाय। इतनी साधारण-सी सावधानी बरतने पर गरीबी जैसा उपलब्ध आहार भी अपनी पोषक विशेषता बनाये रह सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सात्विकता को भुला न दिया जाय

मानवी सत्ता जिस प्रकार संवेदनशील है, उसी प्रकार उसके आहार में भी सम्पर्क क्षेत्र का प्रभाव ग्रहण करने की क्षमता है। इसी बात को यों भी कह सकते हैं कि मनुष्य का पाचन तन्त्र विलक्षण है, वह न केवल आहार से शारीरिक पोषण प्राप्त करता है, वरन् उसमें सन्निहित सूक्ष्म शक्ति एवम् सम्वेदना भी ग्रहण करता है। जबकि वन्य प्राणी शरीर प्रधान होने के कारण मात्र रक्त-माँस ही प्राप्त करते हैं।

यों चेतना के सम्पर्क से प्रभावित तो सभी पदार्थ होते हैं, पर यह विशेषता मानवी-आहार में विशेष रूप से पाई जाती है। वह उगाने, पकाने, परोसने वाले व्यक्तियों से प्रभावित होती है। स्थानों में संव्याप्त भिन्न-भिन्न प्रकार के वातावरण उस पर अपनी छाप छोड़ते हैं। फलतः वह जिसके पेट में जाता है, उसके न केवल शरीर में वरन् मनःसंस्थान में भी भली-बुरी विशेषतायें उत्पन्न करता है, जो अपने भीतर अर्जित कर रखी थीं।

एक पुरानी लोकोक्ति है—जैसा खाये अन्न वैसा बने मन। तात्पर्य यह है कि आहार के साथ जुड़ी हुई विशेषतायें न केवल शरीर को वरन् मन को भी प्रभावित करती हैं। चिन्तन के प्रवाह में हेर-फेर करती हैं। दृष्टिकोण को, स्वभाव को, रुझान को मोड़ने-मरोड़ने में अपने स्तर का समावेश करती हैं। आहार में पाये जाने वाले पोषक पदार्थों की तालिका से परिचित यह जानते हैं कि इसका खाने वाले के शरीर पर क्या प्रभाव पड़ेगा। पहलवानों के लिए चिकनाई अधिक उपयोगी पड़ती है और मरीज के लिए सुपाच्य दाल दलिया-शाकाहार-फलाहार। बालकों को एक स्तर का आहार दिया जाता है, तो प्रौढ़ों को दूसरी तरह का, वृद्धों को तीसरी तरह का। यह निर्धारण शरीरों की स्थिति एवं आवश्यकता का ताल-मेल बिठाते हुए किया जाता है। पशुओं को कड़ी मेहनत की थकान उतारने के लिए एक तरह का चारा-दाना दिया जाता है, तो दूध उतरने के लिए दूसरी तरह का। बकरी और हाथी के लिए भी उनके अनुरूप खाद्य जुटाना पड़ता है। उसमें भिन्नता इस आधार पर रहती है कि उसकी पाचन प्रकृति कैसी है और पेट कितनी मात्रा में भरता है। यही बात मनुष्यों के सम्बन्ध में भी है, उनकी शारीरिक माँग और पाचन की स्थिति देखते हुए निर्णय करना पड़ता है कि कौन क्या खाये ? कितना खाये ?

यहाँ विचारणीय विषय है कि मनुष्य के सर्वाधिक महत्वपूर्ण तन्त्र मनःसंस्थान को प्रभावित करने में आहार की क्या विशेष भूमिका होती है, इस सम्बन्ध में कुछ गहराई में उतरने की आवश्यकता है। मोटी बुद्धि तो इतना ही सोच सकती है कि शरीर के अन्यान्य अवयवों की भाँति मस्तिष्क भी एक अंग है। जिस रस-रक्त से समूचे शरीर को पोषण मिलता है, उसी स्तर का, उसी अनुपात का प्रभाव मस्तिष्क पर भी पड़ना चाहिए। इस जानकारी में कोई विवाद जैसी बात नहीं है, तो भी दृष्टव्य यह है कि क्या चिन्तन क्षेत्र की कल्पना, बुद्धिमत्ता, दूरदर्शिता, नीति-मत्ता, मान्यता, आकांक्षा एवं प्रकृति जैसी विशेषताओं को भी आहार का स्तर कुछ प्रभावित करता है क्या ! स्तर से तात्पर्य है मानवी गरिमा से सम्बन्धित उत्थान और पतन। निकृष्टता एवं उत्कृष्टता को उत्तेजना देने वाला प्रवृत्ति प्रवाह।

अनुभव बताता है कि आहार में न केवल रस-रक्त का निर्माण करने की क्षमता है वरन् वह चिन्तन के स्तर को भी प्रभावित करता है। यहाँ चर्चा बुद्धिमत्ता बढ़ाने वाली ब्राह्मी, शतावरि, बच, शंखपुष्पी, गोरखमुण्डी जैसी औषधियों का प्रयोग उपयोग करके मानसिक क्षमता को उत्तेजन देने वाले उपचार की नहीं हो रही है, वरन् यह विचारा जा रहा है कि आहार की क्या विशेषतायें मनुष्य की भाव सम्वेदनाओं से सम्बन्धित उत्कृष्टता-निकृष्टता को उभारती हैं। इन विशेषताओं का पर्यवेक्षण करने के लिए खाद्य-वस्तुओं के रासायनिक संगठन का उतना महत्व नहीं है, जितना कि उनके साथ जुड़े हुए अदृश्य वातावरण एवं प्रभाव का। यह प्रभाव उन व्यक्तियों से सम्बन्धित है, जिनने उसे कमाया, उगाया, पकाया, परोसा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तियों की अपनी-अपनी विशेषतायें हैं। उनके गुण, कर्म, स्वभाव एक-दूसरे से भिन्न होते हैं। नर-नारायण, नर-देव, नर-पशु, नर-पिशाच के चार वर्गीकरण पुरातन हैं। उनमें और भी कितनी शाखायें हो सकती हैं। यह विभाजन वर्ग, लिंग-वैभव, शिक्षा व्यवसाय, कौशल आदि से सम्बन्धित नहीं वरन् आदर्शवादिता विषयक उत्कृष्टता और निकृष्टता के अनुपात के आधार पर है। कितने ही पशु प्रवृत्ति के पिछड़े मूढ़मति अदूरदर्शी एवम् अभ्यस्त आदतों से बेहतर जकड़े होते हैं। इन्हें हेय या हीन ही कह सकते हैं। इन्हीं में कुछ उद्दण्ड, आततायी, निष्ठुर प्रकृति के होते हैं और सदा अनीति ही सोचते तथा कुकृत्य ही करते हैं। सज्जनोचित चिन्तन और व्यवहार तो उनसे यदा-कदा ही बन पड़ता है। इन नर-वानरों और नर-पामरों, नर-पशुओं और नर-पिशाचों से सर्वथा विपरीत एक दूसरा वर्ग वह है, जिनमें से एक को सज्जन तथा दूसरे को उदात्त कह सकते हैं। सज्जन मानवी गरिमा का ध्यान रखते, मर्यादायें पालते और सभ्य सुसंस्कारियों जैसा जीवन जीते हैं। वस्तुतः इन्हें ही सच्चे अर्थों में मनुष्य कहा जा सकता है। इससे भी ऊँचा स्तर उनका है, जो अपने प्रति कठोर और दूसरों के प्रति उदार होते हैं। स्वयं ब्राह्मणोचित अपरिग्रही संयमी रीति-नीति अपनाकर क्षमताओं को बड़ी मात्रा में बचा लेते हैं और उन्हें पुण्य-परमार्थ के लिए नियोजित करके असंख्यों का उद्धार करते रहते हैं। इन्हें सामान्य भाषा में सन्त और अध्यात्म-भाव में ऋषि, देवता, तपस्वी, मनीषी आदि कहते हैं। इस वर्गीकरण से यह पता चलता है कि भाव सम्वेदनाओं एवम् स्वभाव आचरण के आधार पर किस प्रकार अनेकानेक विभाग विभाजन मनुष्यों के हो सकते हैं ?

यह चर्चा इसलिए हो रही है कि आहार पर पड़ने वाले प्रभाव के सम्बन्ध में यह जाना जा सके। किस स्तर के व्यक्तियों के प्रभाव क्षेत्र में विनिर्मित हुआ आहार किन प्रभाव-विशेषताओं से सम्पन्न हो सकता है और उसका उपयोग करने वाले पर क्या प्रभाव प्रभाव पड़ सकता है। शारीरिक पोषण में जो प्रभाव खाद्य पदार्थों में पाये जाने वाले रसायनों का होता है ठीक वैसा ही उदरस्थ करने वाले के मनःसंस्थान पर भावनात्मक प्रभाव उन विशेषताओं का पड़ता है, जो आहार के उत्पादन से लेकर परोसने की मध्यवर्ती लम्बी प्रक्रिया के साथ किसी न किसी रूप में जुड़े रहे हैं। इन्हीं व्यक्तियों की भली-बुरी विशेषतायें उस आहार के साथ अदृश्य रूप से जुड़ी रहती हैं और खाने वाले को उसी दिशा में मोड़ती-घसीटती हैं।

आहार किस क्षेत्र में किस प्रकृति के लोगों द्वारा बोया-उगाया गया। उसे काटने, साफ करने, पीसने, पकाने में किन-किन के साथ उस उत्पादन का सम्पर्क सधा। देखभाल तो इस गहराई तक भी की जानी चाहिए, पर इतनी लम्बी दौड़ न सध सके, तो कम से कम इतना तो देखा ही जाना चाहिये कि पकाने वाले-परोसने वाले किस प्रकृति के हैं ? जो खाया जा रहा है, वह रासायनिक दृष्टि से सुपाच्य एवम् जीवन तत्वों सहित है या नहीं। इसके लिए आहार की अपनी प्रकृति भी होती है। गीता में इसका सात्विक, राजसिक और तामसिक के रूप में त्रिविधि वर्गीकरण हुआ है। सात्विक से तात्पर्य अमृताशन स्तर के आहार से है। उबले हुये चावल-दाल, दलिया, खिचड़ी जैसे आहार को अमृताशन कहते हैं। शाक-भाजी भी साथ में ही उबाले जा सकते हैं। हलका-सा नमक, अदरक, नीबू जैसे सम्मिश्रण भी स्वाद की दृष्टि से किये जा सकते हैं। ऐसा कुछ भी न मिलाया जाय, तो अस्वाद व्रत भी निभता है और सात्विकता का अनुपात और भी अधिक बढ़ जाता है। दूध-दलिया, दूध-चावल भी अमृताशन वर्ग में आते हैं।

राजसी-तामसी स्तर के वे हैं, जिनमें तलने-भूनने का आश्रय लिया जाता है, चिकनाई, मिठाई तथा मसालों की भरमार की गई हो। इन दिनों दावतों में प्रायः ऐसी ही वस्तुयें परोसी जाती हैं। कई-कई दिन पूर्व के बनाये बिस्कुट जैसे पदार्थ इसी श्रेणी में आते हैं। उत्तेजक मादक पेय भी तमोगुणी कहे जा सकते हैं। होटलों में जहाँ एक ही रसोईघर में शाकाहारी, माँसाहारी वस्तुयें पकती हैं, जूते पहने, बिना नहाये, मैले-कुचैले हाथों से पकाते-परोसते हैं। एक के प्रयोग के बाद दूसरे के सामने भी वे ही बर्तन बिना अच्छी तरह धोये-माँजे रख दिये

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाते हैं। ऐसी दशा में उनमें किया हुआ भोजन उन कुसंस्कारों से जुड़ जाता है, जो पहले लोगों ने उस पात्र के साथ छोड़े थे।

पिछले दिनों रोटी-बेटी की पवित्रता का प्रचलन था। अब उसमें शिथिलता आने लगी है। जाति-बिरादरी और ऊँच-नीच की दृष्टि से तो इस प्रकार के प्रतिबन्धों की आवश्यकता नहीं है, किन्तु आहार में सात्विकता, सुसंस्कारिता बनी रहे, इसका ध्यान रखा जाना चाहिये। पकाने-परोसने वाले शारीरिक मानसिक दृष्टि से नीरोग तो होने ही चाहिए, साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिये कि वे कुकर्मी, कुसंस्कारी एवं दुष्ट स्वभाव के न हों। छूत के रोग एक-दूसरे से तक पहुँचते हैं, इसी प्रकार के सम्पर्क से कुसंस्कार भी आक्रमण करते हैं। खान-पान के सम्बन्ध में इन बातों का विशेष ध्यान उन लोगों को रखना चाहिये, जो अपनी चित्त-वृत्तियों को उच्चस्तरीय रखना चाहते हैं और चिन्तन में अवांछनीयता को घुसने न देने के लिए विशेष रूप से इच्छुक हैं।

पिप्पलाद ऋषि ने मात्र पीपल के फल खाकर ही निर्वाह किया था। औदुम्बर ऋषि गूलर मात्र लेकर जीवनचर्या चलाते थे। कणाद जंगली घासों से उपलब्ध होने वाले साँवा, मकरा, कोदों, साठी जैसे अनायास ही उत्पन्न होने वाले बीज कणों को समेटकर पेट भरते थे। कन्द-मूल-फल पर ऋषियों की उदरपूर्ति होती थी। यह सब अब वन, वन-प्रदेशों में अनायास उत्पन्न नहीं होता, प्रयत्नपूर्वक स्वयं उगाना पड़ता है। अच्छा तो यही है कि अपने एक छोटे खेत में परिवार के लायक अन्न और शाक स्वयं उगायें। इससे परिवार भर को श्रमरत रहने का अवसर मिलेगा। आलस्य से बचने और सृजन चिन्तन का अभ्यास बढ़ेगा। जिनके पास खेत नहीं है, वे भी आँगनबाड़ी, छतबाड़ी, छप्परबाड़ी की व्यवस्था बनाकर मौसम के अनुरूप शाक-भाजी उगाने का प्रयत्न करें। छोटे परिवार की शाक-व्यवस्था इतने से भी चल सकती है। बड़ा परिवार हो, तो भी चटनी के लायक धनियाँ, पोदीना, अदरख, पालक, सलाद जैसी वस्तुयें आसानी से बोई-उगाई जा सकती हैं।

इन दिनों रासायनिक खादें और कीट-नाशक दवाओं की भरमार है। कोल्ड स्टोरों में महीनों तक रखे रहने पर भी आहार की ताजगी चली जाती है। इन बातों को ध्यान में रखते हुए ऐसा प्रबन्ध करें कि आहार उत्पादन की दिशा में स्वावलम्बी होने के लिए प्रयत्नशील रहा जाये। महत्व समझने, ध्यान करने और प्रयत्न करने पर मनुष्य अनेक गुत्थियों के समाधान ढूँढ़ निकालता है। तब कोई कारण नहीं है कि परम प्रिय काया-आरोग्य जैसी सम्पदा एवं स्वजन-स्नेहियों से भरे परिवार—की महती आवश्यकता को पूरा करने के लिए खाद्य-पदार्थों की शुद्धता के लिए कुछ न कुछ तो किया ही जा सकता है।

अपना खेत न हो तो पड़ौसियों से उसे किराये पर लिया जा सकता है। कुछ अधिक जमीन मिल सके तो आहार उत्पादन में ही गौ-पालन को भी सम्मिलित कर लेना चाहिये। कृषि-उपज का अन्न भाग मनुष्य के लिए और चारा पशुओं के लिए एक साथ उत्पन्न होता है। कृषि और पशु-पालन का संयोग-सुयोग भी है।

इन दिनों बाजार में खरीदने पर दूध के नाम पर जो मिलता है, उसकी जानकारी सभी को है। मिलावट ही नहीं, गन्दगी भी उसमें भरी रहती है। स्वच्छता जब अपने स्वभाव में ही नहीं है, फिर जिसका उपयोग दूसरों को करना है, उसे शुद्धतापूर्वक दुहने, स्वच्छ बरतन में रखने और देर तक रखे रहने पर उसकी उपयोगिता नष्ट हो जाने की बात कौन सोचे ? दूध की आवश्यकता यदि सचमुच ही अनुभव होती है, तो परस्थितियों को देखते हुए एक कदम और आगे की बात सोचनी चाहिये और गौ-पालन की अपनी व्यवस्था आप करनी चाहिये।

गाय से गोबर, गोबर से भूमि को खाद, खाद से उपज, उपज से मनुष्य और पशुओं का निर्वाह, यह एक ऐसा चक्र है, जिसे गतिशील रखने में भूमि, पशु और मनुष्य, तीनों की ही भलाई है। इस गतिचक्र को बनाये रहा जाये तो सरल, सौम्य, सात्विक और सुखी, समृद्ध जीवनचर्या का उपक्रम ठीक प्रकार बना रह सकता है। इसमें स्वास्थ्य की सुरक्षा भी है। सुखी, सन्तुलित, सन्तुष्ट और स्वस्थ-समृद्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवनचर्या भी इसी प्रकिया में समाहित है। अन्न-शाक की तरह दूध का भी स्वास्थ्य-सुरक्षा में योगदान है। कभी दूध बाहर से भी शुद्ध मिल सकता था, पर आज तो समय के प्रभाव से वह सब भी दुर्लभ होता जा रहा है। ऐसी दशा में तद्विषयक स्वावलम्बन और भी अधिक आवश्यक हो गया है।

आरोग्य से न केवल आहार का वरन् श्रम का भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। शारीरिक श्रम की उपेक्षा करने पर कल-पुर्जे शिथिल ही नहीं पड़ जाते, वरन् जंग खाये औजार की तरह बेकार भी हो जाते हैं। श्रम को आहार के साथ जोड़ कर एक समग्र स्वास्थ्य-शृंखला को पुनर्जीवित किया जा सकता है। आटा-दलिया हाथ की चक्की से पीसा जाये, धान कूटे जायें, दूध दुहने और मथने का अभ्यास रखा जाये, कुएँ से पानी खींचने और कपड़े धोने जैसे घरेलू काम-काजों को अपनाये रहने पर महिलाओं को उपयोगी श्रम करने का अवसर मिलता रह सकता है। बच्चे तक फूल-पौधों से बछड़ों-बैलों के साथ खेलते रह सकते हैं। पक्षियों के साथ आँख-मिचौनी चलती रह सकती है। कैसे सुखद, स्वाभाविक और सन्तोष-उल्लास से भरा-पूरा हो सकता है, यह जीवनक्रम। इस पुरातन परम्परा को यदि नये उत्साह और नई सूझ-बूझ के साथ अपनाया जा सके तो समझना चाहिये कि स्वस्थता और प्रसन्नता के दिन फिर वापस लौट आये।

इस सन्दर्भ में सीखना कुछ नहीं है। जो भुला दिया गया है, उसे फिर से स्मरण करना है और जो प्रगतिशीलता के अहंकार में उद्धत स्वेच्छाचार अपना लिया गया है, उसे भुला देना है। यह भूलने और स्मरण करने की विधा ही उस स्वर्णिक युग को वापस ला सकती है, जिसे हम सब उच्छ्वास भरते हुए सतयुग के नाम से स्मरण करते रहते हैं।

आरोग्य मात्र शरीर तक ही सीमित नहीं है। उसकी परिधि मानसिक स्वस्थता तक चली जाती है। स्वस्थ शरीर और स्वच्छ मन दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। एक गिरेगा तो दूसरा भी स्थिर न रह सकेगा। इसलिए जब भी सोचना हो, दोनों की सम्मिलित स्वस्थता की बात सोचनी चाहिये। इसके लिए आहार और विहार दोनों पर समान रूप से ध्यान देना चाहिये और ऐसा जीवनक्रम अपनाना चाहिये, जिससे इनमें से एक भी टूटने-डगमगाने न पाये। इस सन्दर्भ में सर्वप्रथम आहार की उपयुक्तता पर ध्यान देना होगा और यह देखना होगा कि वह पौष्टिक ही नहीं, सात्विक स्तर का भी है क्या ?

नैसर्गिक जीवन-क्रम आरोग्य प्रदाता

सौर ऊर्जा को जगत की आत्मा और प्राणियों की जीवन-धारा कहा गया है। उसके संतुलित सहयोग से ही पृथ्वी का यह सुरम्य वातावरण बना है। वनस्पतियों के उत्पादन और प्राणियों के निर्वाह में प्रत्यक्ष कारण कुछ भी क्यों न हो, परोक्ष कारण सौर ऊर्जा का ही माना जायेगा। उससे बरसने वाली गर्मी, रोशनी की उपयोगिता-आवश्यकता से तो सभी अवगत हैं, पर इस रहस्य से बहुत कम परिचित हैं कि सविता की किरणों से जीवन भी बरसता है और साथ ही आरोग्य पर आक्रमण करने वाली गन्दगी जैसी अगणित अवांछनीयताओं से त्राण मिलता है। इसलिए सूर्य सान्निध्य में रहने और उसके द्वारा बरसने वाली जीवनधारा से अधिकाधिक लाभान्वित होने का प्रयत्न करना चाहिए।

वनस्पतियों में हरीतिमा का सौन्दर्य और पोषण का बाहुल्य मात्र धरती का ही अनुदान नहीं है, उसके साथ सविता देवता का वरदान और भी अधिक मात्रा में जुड़ा हुआ है। फल, शाक और अन्न मनुष्य के प्रमुख खाद्य पदार्थों में हैं। इनमें सर्वाधिक पोषण ऊपरी छिलकों में पाया जाता है। विटामिन डी० जैसा अत्यधिक उपयोगी तत्व समूचे फल की तुलना में उसके छिलके में ही प्रधान रूप से पाया जाता है। इसे हटा देने के उपरान्त जो गूदा शेष रहता है उसे एक प्रकार से सिर काट लेने के बाद बचा हुआ धड़ ही समझना चाहिए। होता यही है। स्वादिष्टता के क्षेत्र में अपनी प्रवीणता बताने वाले लोग आमतौर से प्रत्येक खाद्य-पदार्थ से छिलका अलग करने का प्रयत्न करते हैं। वह कुरूप तो लगता है, फिर कसैला भी तो होता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। तनिक कड़ा रहने के कारण उसे चबाने में मेहनत करनी पड़े तो वह बड़े आदमियों और नाजुक मिजाज वालों को बर्दाश्त कैसे हो ?

दालें छिलका उतारकर पकाई जाती हैं। कोमल फलों तक के छिलके उतारे जाते हैं। केला, आम, नारियल जैसों की बात दूसरी है, पर जब सेव, अमरूद तक को छीलने की आवश्यकता पड़े तो समझना चाहिए कि चोचले-बाजी की हद हो गई। अनाज की भूसी उतार कर उसे मैदा, सूजी के रूप में सफेद-सुन्दर बनाया जाता है। आज का यही प्रचलन है। इसे ऐसा ही समझना चाहिए, जैसा कि गूदा फेंककर गुठली चबाने लगना। मोती की ऊपरी चमक उतर जाने पर वह दो कौड़ी का हो जाता है। छिलके उतार देने के बाद खाद्य-पदार्थों की प्रायः वैसी ही दुर्गति होती है।

जिनके लिए चटोरापन ही आराध्य है तथा आहार का रंग, रूप, गन्ध और स्वाद ही सब कुछ है, उनसे कुछ कहना व्यर्थ है। उनके लिए अभक्ष्य को भक्ष्य और भक्ष्य को अभक्ष्य सिद्ध करने में भी अपनी चतुरता और कलाकारिता की भी तुष्टि होती दीख सकती है। ऐसी भ्रान्तियों-विकृतियों से ही अधिकांश लोगों पर बुद्धिभ्रम सवार है। नशे के आवेश में सुनने-समझने जैसी स्थिति ही नहीं रहती। उनसे कोई क्या कहे जब जानने-मानने का मूढ़ नहीं तो फिर व्यर्थ की सिर फोड़ी से मतलब भी क्या निकलता है ? चर्चा समझदारी की है, प्रगति की बात सोचने के साथ-साथ यह भी देखना होता है कि कहीं भूल तो नहीं हो रही ? किसी छेद में से पानी तो नहीं रिस रहा है। ऐसे लोग भूल सुधारने के लिए तत्पर रहते हैं। जो होता रहता है, वह ठीक है—ऐसा दुराग्रह हठवादियों को ही होता है और ऐसे अड़ियल अन्ततः घाटे में ही रहते हैं।

खाद्य-पदार्थों के छिलके उतारने की बात प्रकारान्तर से सूर्य देवता का तिरस्कार करना है। उनके द्वारा बरसाये जाने वाले जीवन तत्व को लात मारकर घर से बाहर खदेड़ना है, यदि वैसा न किया गया हो, तो संभव है कड़ा चबाने और कुछ कसैलापन रहने जैसी कमी दीखती, किन्तु बदले में जो लाभ मिलता, उसे बहुमूल्य टॉनिक खरीदते रहने से कम न आँका जाता। गेहूँ के छिलके में विटामिन 'बी' का बाहुल्य रहता है। वह विटामिन 'बी' जिसकी सिफारिश डाक्टर लोग कर हर कमजोर के लिए करते हैं और जिनके पैकेट खरीदने में ढेरों रुपये खर्च होते हैं। विटामिन डी. की बात पहले ही कही जा चुकी है। इनके अतिरिक्त और भी अनेकों पोषक तत्व हैं जिन्हें आहार के छिलके वाले भाग में ही पाया जाता है। गेहूँ की भूसी और दालों की चूनी दुधारू जानवरों को खिलाकर उनकी दूध की मात्रा और पुष्टाई बढ़ाई जाती है, किन्तु यह नहीं सोचा जाता कि इस बहुमूल्य अंश का उपयोग अपने लिए भी किया जाय, तो क्या बुरा है ?

बात खाद्य पदार्थों के छिलके तक ही सीमित नहीं है। मनुष्य शरीर पर भी एक छिलका चढ़ा है जिसे त्वचा कहते हैं। इसे सूर्य सम्पर्क से बचाकर रखा जाय तो उसकी भी वही दुर्गति होगी, जो बन्द कमरे में उगने पर अंकुरों की होती है। वे बहुत समय नहीं जीते। रोशनी और गर्मी के अभाव में कुम्हलाते और दम तोड़ते देखे जा सकते हैं। त्वचा और सूर्य प्रकाश के बीच भारी व्यवधान उत्पन्न करने वाले कपड़ों की यदि भरमार रहे, अवयवों को कसे जकड़े रहा जाय, तो किसी अच्छे परिणाम की आशा नहीं की जा सकती।

इसलिए मनुष्य को अन्य प्राणियों की तरह अपनी त्वचा को सूर्य सम्पर्क का लाभ उठाने देना चाहिये। चमड़ी अपने आप में एक अच्छा खासा परिधान है। उसे जान-बूझकर दुर्बल न बनाया जाय, तो उसकी मौलिक क्षमता के सहारे ऋतु प्रभाव का सामना किया जा सकता है और गर्मी-सर्दी से अनायास ही सुरक्षा सधती रह सकती है। हाथ प्रायः हर मौसम में खुले रहते हैं। चेहरे के सम्बन्ध में भी यही बात है। नाक पर कोई टोपा कहाँ लगाता है। चेहरे पर होठों पर जाकिट कसे हुए किसे देखा जाता है ? यह अवयव खुले ही रहते है। उन पर मौसम का कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। यही बात समस्त शरीर पर भी लागू होती है। कपड़े न पहने जायँ या कम पहने जायँ तो स्वतः वैसा अभ्यास हो जायेगा, जिसके कारण सर्दी-गर्मी के कारण किसी प्रकार की हानि होने का अवसर न मिले। वनवासी, आदिवासी ऐसी ही स्थिति में रहते हैं। उन्हें ऋतु प्रभाव से पीड़ित होने जैसी शिकायत करते कहीं नहीं सुना गया।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इसके विपरीत कपड़े लादे रहने वालों की शिकायत बना रहती है कि ठण्ड लग गई या लू का आक्रमण हुआ। एअर कण्डीशन कमरों में रहने वालों को इस संकट से ग्रसित पाया गया है कि बाहर निकलने पर उन्हें जुकाम होता है, निमोनिया होता है, लू सताती है। इसमें ऋतु प्रभाव कारण नहीं है। यदि वैसी बात होती, तो हर किसी पर वह मुसीबत उतरती। जब वह प्रकोप अधिकतर एअर कण्डीशन कमरों में रहने वाले पर ही उतरे तो समझना चाहिये कि चमड़ी की सहन-शक्ति कुण्ठित कर देने वाली आवरण सज्जा का ही यह प्रतिफल है। लंगोट कसे रहने वाले मर्दों और तंग चोलियों या पेटियों से जकड़ी रहने वाली औरतों के बेढंगे कसे अवयव विशेष रूप से दुर्बल और पीले देखे जाते हैं। सूर्य को शत्रु मानने और उसके प्रभाव सम्पर्क से लाभ उठाने से कतराने वाले लोग सुरक्षा दीवार खड़ी नहीं करते वरन् एक महत्वपूर्ण अनुदान से वंचित होकर घाटे में ही रहते हैं।

सूर्य की तरह ही पवन देवता के भी अनुदान मनुष्य की जीवन सम्पदा का भण्डार भरते हैं। सभी जानते हैं कि साँस द्वारा ग्रहण की जाने वाली प्राण वायु पर जीवन निर्भर रहता है। अन्न जल के बिना तो कुछ समय निकल भी सकता है, पर साँस न मिलने पर तो दम घुटते और प्राण निकलते देर नहीं लगती। ऑक्सीजन प्राणी का सबसे बड़ा और सबसे बहुमूल्य आहार है। उसे पवन ही प्रदान करता है। काया के कण-कण में, राम-रोम में उसकी पहुँच होती है। तब स्वास्थ्य अक्षुण्य रहता है और उत्पन्न होती रहने वाली गन्दगी में बुहारी लगती है। इस उपक्रम के रुक जाने पर इतना बड़ा संकट उत्पन्न होता है, जिसे जीवन की इतिश्री ही माना जा सके।

शरीर न केवल नाक से साँस लेता है, वरन् त्वचा में विद्यमान असंख्य रोमकूपों द्वारा भी वह प्रक्रिया चलती रहती है। त्वचा पर मोम, कोलतार, शीरा आदि पोत दिया जाय तो भी दम घुट जायेगा। भारी और कसे कपड़े लाद लेने से भी न्यूनाधिक मात्रा में यही कठिनाई उत्पन्न होती है। ठण्डक से बचने का लाभ सोचकर या साज-सज्जा का ठाठ-बाट अपनाकर जो लोग अधिक कपड़े पहनते हैं, वे सूर्य और पवन दोनों ही देवताओं की अहैतुकी अनुकम्पा का प्रत्यक्ष तिरस्कार करते हैं। इस अवज्ञा में मात्र हानि ही है, लाभ जैसा तो कहीं कुछ है ही नहीं।

मकान भी एक प्रकार का शरीर है। उसमें सूर्य और पवन की प्रवेश व्यवस्था रहनी चाहिए। चोर के डर से खिड़कियाँ ने छोड़ना निकलने भर का एक दरवाजा रखना मालगोदाम के लिए तो उपयुक्त हो सकता है, पर मनुष्य के निवास करने योग्य वे नहीं माने जा सकते। जहाँ धूप नहीं पहुँचती वहाँ बीमारी डेरा डालती है। यह उक्ति अक्षरशः सत्य है। सीलन, सड़न, घुटन, बदबू वाले मकानों में रहना गन्दगी में रहने वाले विषाणुओं को छाती के नीचे पालकर रखने जैसा है। इससे पेड़ के नीचे खुली हवा-धूप में रहना हजार गुना अच्छा। चोरों के डर से यदि सँकरी गलियों में और नीचे की मंजिल वाली कोठरियों में रहना पड़ता हो तो अच्छा है कि उस माल-असबाव को-धन-दौलत को बेच दिया जाय और इस प्रकार का जीवन-क्रम स्वीकार किया जाय जैसा कि गाड़िया-लुहार अपनी बैलगाड़ियाँ लेकर जहाँ-जहाँ घूमते रहते हैं, कड़ी मेहनत से लोहा पीटकर आजीविका कमाते हैं।

देखना यह है कि स्वास्थ्य का महत्व समझना गया या नहीं। स्वस्थ शरीर में स्वस्थ आत्मा के रहने का सिद्धान्त गले उतारा या नहीं। 'पहला सुख निरोगी काया' वाली उक्ति की गरिमा स्वीकारी गयी या नहीं। यदि हाँ, तो फिर एक ही उपाय है कि पिछले दिनों लम्बे समय से जो भूलें अपनाई जाती रही हैं, उन्हें साहसपूर्वक सुधारा जाय और प्रकृति के साथ छोड़-छाड़ करने, उनकी अवज्ञा करते हुए मनमानी ठानने के दुराग्रह को छोड़ दिया जाय। प्रकृति अनुसरण की कसौटी पर कसने के उपरान्त प्रतीत होगा कि अपनी इन दिनों की आदतें और परम्परायें बुरी तरह अवांछनीयताओं से भर गई हैं। इनका कायाकल्प जैसा सुधार परिवर्तन होना चाहिए। इसके लिए प्रवाह को चीरकर उलटी दिशा में चल सकने वाली मछली जैसा साहस एकत्र करना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रयोजन में सूर्य और पवन का अधिकाधिक सान्निध्य उपलब्ध किया जाय। वे दोनों अश्विनी कुमारों की तरह उच्चस्तरीय चिकित्सक हैं। च्यवन ऋषि के बुढ़ापे को जवानी में बदल देने वाले अश्विनी कुमारों के अनुग्रह से जो चमत्कारी लाभ उन दिनों देखने को मिला था, उसकी पुनरावृति सूर्य और पवन को अधिकाधिक समीपता में रहने की योजना बनाकर अपने समय में अपने ढंग का लाभ हम सब भी उठा सकते हैं।

पहनने के कपड़े तो कम रखे जी जायँ, वे हलके, कम और हवादार भी होने चाहिए। पसीने के सम्पर्क में आते रहने के कारण जहाँ उन्हें धोते रहना आवश्यक है, वहाँ यह भी कम महत्वपूर्ण नहीं है कि उन्हें धूप में न केवल गीलापन दूर होने तक सुखाया जाय वरन् देर तक गरम होते रहने का अवसर दिया जाय, ताकि उनमें पनपने वाले विषाणुओं से छुटकारा मिल सके। भारी बिस्तर, तकिये जो नहीं धोये जा सकते, उन्हें भी धूप में उलट-पुलट कर गरम करना चाहिए। चारपाइयों में खटमल आदि पलते रहते हैं। उन्हें भी धूप में सुखाते रहने और खौलता गर्म पानी डालते रहने की आवश्यकता है। कोठों में रखे अनाज, कनस्तरों में बन्द आटा, दाल आदि को भी जल्दी-जल्दी धूप लगाते रहना चाहिए क्योंकि उसमें सीलन के कारण छोटे कीड़े उत्पन्न होने और स्वास्थ्य संकट बनाने जैसी विपन्नता खड़ी न हो।

भारतीय धर्म में सूर्योपस्थान, सूर्याध्यदान, स्तवन, आदित्य हृदय आदि का महत्व है। गायत्री मन्त्र में सविता की आराधना है। उसका आध्यात्मिक भावनात्मक महत्व तो है ही, साथ ही यह यह संकेत-निर्देश भी सन्निहित है कि सूर्य सम्पर्क में अधिकाधिक समय तक रहा जाय और खाद्य पदार्थों से लेकर त्वचा, वस्त्र, उपकरण, साधन आदि को भी उन सान्निध्य का भरपूर लाभ ले सकने का अवसर दिया जाय।

हनुमान जी पवनसुत थे। भीम भी वायु देवता के पुत्र थे। ऋषि उसी अमृतोपम प्राण सम्पदा को अधिक मात्रा में अर्जित करने के लिए हिमालय के वन्य प्रदेशों में निवास करते और प्राणायाम जैसे योगाभ्यासों में निरत रहते थे। हम खुली हवा में रहने और गहरी साँस लेने का अभ्यास तो कर ही सकते हैं। उतना न बन पड़े तो भी प्रातः दो-तीन मील तेज चाल से चलते हुए गहरी साँस लेते-छोड़ते हुए खुली हवा वाले क्षेत्र में टहलने के लिए जाते रहने का नियम तो बना ही लेना चाहिए। यह सुविधा घर के अन्य सदस्यों को, स्त्री बच्चों को मिलती रहे इसके लिए प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए बड़े नगरों के गली-कूचों में रहने की अपेक्षा छोटे देहातों में एक मंजिल खपरैल वाले ऐसे घर बनाकर रहना चाहिए, जिसमें धूप और हवा का निर्बाध प्रवेश होता रहे। नगर में काम करने जाना पड़े तो भी नित्य दूर की यात्रा करने का परिश्रम उपयोगी व्यवसाय समझकर किया जा सकता है। ऐसे मकानों को अधिक संख्या में बड़ी-बड़ी खिड़कियों वाला बनाया जा सकता है, जब कि घनी आबादी में घिच-पिच निवास की ही विवशता रहती है।

छोटे देहातों में भी इन दिनों सँकरी गलियों में बसावट बसी है। घर की नालियाँ गली में बहती और कीचड़ बनाये रहती हैं। अच्छा हो नये सिरे से गाँव बसाये जायँ। वैसी बड़ी व्यवस्था न बन पड़े, तो भी विज्ञजनों को अन्यान्य जोखिमें उठाते हुए भी अपने निवास के लिए खुली धूप-हवा वाला स्थान बनाना चाहिये, भले ही वह सस्ते साधनों का, कम टिकाऊ और बार-बार मरम्मत वाला ही क्यों न हों ?

सूर्य और पवन सर्वोत्तम चिकित्सक हैं। उनमें रुग्णता निवारण और आरोग्य-सम्वर्धन का असाधारण गुण है। यह सोचते हुए उनके अधिकाधिक सम्पर्क वाली रीति-नीति ही अपनानी चाहिए।

विपत्ति की जड़-जिव्हा की ललक लिप्सा

काया को निरोग या रोगी रखना बहुत कुछ जिव्हा की गतिविधियों पर निर्भर है। जन्मजात रूप से हर किसी की जीभ को प्रकृति-अनुशासन का स्मरण रहता है। उसें चटोरी तो बाद में ब्लात्कारपूर्वक बनाया जाता है। बुरी आदतें तो प्रयत्न करने पर किसी को भी डाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जा सकती हैं। सरकस के वन-मानुस सिगरेट पीते देखे गये हैं। कितनों की बिना बीड़ी पीये टट्टी नहीं होती। कई नींद की गोली खाये बिना सो नहीं सकते। इसी प्रकार कुटेब की जकड़न में फँस जाने पर जीभ भी चटोरी हो जाती है और ऐसे जायके माँगती है, जो स्वभावतः उसकी आवश्यकता के सर्वथा विरुद्ध, विपरीत है।

किस जीवधारी के लिए क्या आहार उपयुक्त या अनुपयुक्त है, इसकी जाँच-पड़ताल के लिए भीतर प्रवेश करने से पूर्व पदार्थ की आवश्यक जाँच-पड़ताल के लिए एक सुयोग्य पारखी पर्यवेक्षक दरवाजे पर नियुक्त है। उसे स्वाद के आधार पर ये निर्णय देने की क्षमता प्राप्त है कि क्या गले से नीचे उतरने दिया जाय और किसके प्रवेश पर रोक लगायी जाय। प्रत्येक प्राणी इसी आधार पर अपने आहार की जाँच-पड़ताल करता है और मात्र वही ग्रहण करता है जो उसके उपयुक्त है। गाय भूखी मर सकती है पर माँस नहीं खायेगी। सिंह प्राण-संकट उत्पन्न होने पर भी घास खाकर रहने के लिए रजामंद न होगा।

रिश्वत खाने के आदी गलत-सही का विवेक खो बैठते हैं। जीभ के सम्बन्ध में भी यही बात होती है। यदि उसकी परख-क्षमता को तथा कथित 'स्वादिष्ट' पदार्थ खिला-खिलाकर कुंठित या विकृत कर दिया गया है तो फिर स्वाभाविक है कि यथार्थवादी निर्णय दे सकने की स्थिति उसकी न रहे। तब वह भी कड़वी शराब या अफीम की तरह नशेबाजी जैसी रट लगाने लगे।

एक और भी बात है कि वस्तु का स्वरूप बदल देने पर उसकी असलियत का पता लगाना कठिन हो जाता है। उबालने, तलने, भूनने, मिर्च-मसाले-शकर-सुगन्ध आदि मिला देने पर भी यह पता नहीं चलता कि क्या भक्ष्य है, क्या अभक्ष्य ? जब तक वस्तु अपने असली रूप में है तभी तक उसकी परख हो सकती है। अनेक तरह के सम्मिश्रण कर देने पर जाँच-पड़ताल कैसे हो ?

प्रत्येक प्राणी आहार को उसके असली रूप में ही ग्रहण करता है। जीवन एवं पोषण भी उसी स्थिति में रहता है। अन्यथा कूटने, भूनने पर तो उसका सारतत्व निचुड़ कर, उड़कर अपना गुण ही गँवा बैठता है। मनुष्य स्वाद के लिए अभक्ष्य को भक्ष्य और भक्ष्य को अभक्ष्य बनाने के लिए ऐसी उलट-पुलट करता है, जिसको योगाभ्यासियों के शीर्षासन और नटों की तरह हाथ के बल चलने जैसा कौतुक ही समझा जा सकता है। पाकविद्या के नाम पर ऐसी ही बाजीगरी इन दिनों होटलों से लेकर घरों तक में मान्यता पाने लगी है। स्पष्ट है कि इसमें खाद्य पदार्थ के अधिकांश गुण समाप्त हो जाते हैं। भूनने, तलने के उपरान्त आहार मात्र स्वादिष्ट कोयल जैसा बनकर रह जाता है, जिसकी पेट पर भार लादने के अतिरिक्त और कोई उपयोगिता विशेषता शेष नहीं रह जाती।

नमक-मिर्च और खटाई-मिठाई के आधार पर बनाई गई तथाकथित स्वादिष्टता का परिणाम यह होता है कि इस ललक में अनावश्यक मात्रा में ठूँस-ठाँस होती है और बेचारा पेट इतना लद जाता है मानो गधे की पीठ दुहरी हो रही हो। बात बोझ लादने भर की भी तो नहीं है। जो खाया गया है, उसे पचाने के लिए बहुमूल्य पाचक रसों की आवश्यकता होती है। उनकी मात्रा कम पड़े तो स्पष्ट है कि जो खाया गया है वह पचेगा नहीं। जो पचता नहीं सो सड़ता है। सड़न से विष भरी गैस उत्पन्न होती है। यही है वह विग्रह जो शरीर के जिस-तिस अवयव में भ्रमण करता रहता है और जहाँ भी रुकता है वहीं विस्फोट खड़े करता है। इन विस्फोटों को ही दाह, शोथ, दर्द, तनाव, व्रण आदि के रूप में प्रकट होने पर उन्हें विभिन्न रोगों का नाम दिया जाता है। आमतौर से रुग्णता और दुर्बलता का यही आधारभूत निदान है। जब सही मात्रा में, सही स्तर का रस-रक्त न बनेगा तो पोषण के अभाव में दुर्बलता का दौर रहेगा ही। दुर्बलता के रहते शरीर में उत्पन्न होने वाली गन्दगी को ठीक तरह बाहर निकाल पाना संभव नहीं होता। रुका हुआ विष जहाँ कहीं जायेगा वहीं फूटेगा, पीड़ा उत्पन्न करेगा। इतना जाना जा सके तो प्रतीत होगा कि आने नाम रूपों वाले रोगों का वास्तविक कारण अपच है। उसी उद्गम से अपने वाले प्रवाह में जो छोटी-बड़ी, टेढ़ी-सीधी लहरें उठती हैं उन्हीं को विभिन्न रोगों के नाम से जाना जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बात छोटी-सी लगती है पर काय संस्थान को जर्जर बनाने में जिस घुन का योगदान रहता है, वह अपच ही है। परहेज का दर्शन पक्ष तो सभी भली-भाँति समझते हैं, सिर हिलाते भी देखे जाते हैं और पथ्यापथ्य पर लम्बे भाषण देते नजर आते हैं। परन्तु व्यावहारिक जीवन में ये बातें कोरा ढकोसला भर सिद्ध होती हैं। बहुसंख्य व्यक्ति खटाई, बघार, अतिरिक्त नमक, मिर्च के बिना रह ही नहीं सकते। मात्र रसना को तृप्ति दी जाने पर वह कितने कुछ दुष्परिणाम खड़े कर सकती है, इसकी कल्पना भी नहीं की जाती। आहार असंयम से प्रारम्भ हुई यह शृंखला पेप्टिक अल्सर, डिसेण्ट्री, पेट में कीड़े, लीवर की कमजोरी, मुँह में छाले, बवासीर, रक्त में अम्लाधिक्य का स्वरूप लेती हुई सारी काया को अन्दर अव्यवस्थित करती चली जाती है। उपचार इन प्रतिक्रियाओं का किया जाता है, मूल का नहीं। लक्षण कुछ दिन मिट जाते हैं, फिर उभरकर विकराल रूप में सामने आते हैं।

ऐसी दशा में सारी भ्रान्तियों को मिटाते हुए उनका उपचार एक ही किया जाना चाहिए-अपच का निवारण। यह काम पाचकचूर्ण, गुटिकाओं, आसव-अरिष्टों का नहीं वरन् उन उपायों के अवलम्बन का है, जिनसे पेट पर लदने वाला अनावश्यक वजन घटे और उसे उतना ही काम करना पड़े जिसे कर सकने में वह सक्षम है। पेट पर अनावश्यक भार क्यों लदता है ? इसका उत्तर एक है—चटोरपन की ललक में तब तक ठूँस-ठाँस करते जाना जब तक कि पेट तनने न लगे और फटने की पूर्व सूचना न देने लगे। इसे एक शब्द में पाचन तन्त्र के प्रति बरता गया निष्ठुर अत्याचार ही कहा जा सकता है। आज हममें से अधिकांश को ऐसे ही अत्याचारी अपराधियों की पंक्ति में खड़ा किया जा सकता है और आत्मघात की एक प्रक्रिया अपनाने जैसा अभियोग भी चल सकता है। मनुष्य कृत दण्डविधान में इस प्रकार के अपराध करने वालों को प्रताड़ना देने का अनुबन्ध नहीं है तो क्या ? प्रकृति के अपने कानून तो हैं। ऐसे कठोर, ऐसे सुनिश्चित जिनसे बच निकलना कठिन है। कल न सही परसों तो उनके दुष्परिणाम भुगतने ही होते हैं। रोगी को जो व्यथाएँ सहनी पड़ती हैं, उनकी तुलना नरक के यमदूतों के जल्लादी प्रसंगों से की जा सकती है। बर्बर समाजों में अंग काटने, कोड़े मारने जैसे प्रचलन आदिम युग की तरह अभी भी विद्यमान हैं। रोगजन्य पीड़ाओं की उनसे तुलना की जा सकती है और इसे प्रकृति व्यतिरेकों से उत्पन्न होने वाली स्वसंचालित विधि व्यवस्था कहा जा सकता है।

बात वहाँ से आरम्भ होती है, जहाँ मनुष्य जीव की आदत बिगाड़कर उसे चटोरी बनाने के लिए पाकविद्या के नाम पर प्रवंचना भरी दुरभिसन्धि रचता है। मसाले और मिठाई खाना मनुष्य की मौलिक प्रकृति में सम्मिलित नहीं है। छोटे बच्चे को मिर्च चखाई जाय तो वह तिलमिलाने लगेगा और उस प्रभाव को निकाल—बहाने के लिए मुँह से पानी बहने लगेगा। मसाले ऐसे ही अवांछनीय पदार्थ हैं, जो आँख, नाक जैसे कोमल स्थानों तक पहुँच जाने पर आफत करते हैं और उस पहुँच को खदेड़ने के लिए पानी बहाने लगते हैं। शकर के सम्बन्ध में भी यही बात है। वह मुँह की लार का अनावश्यक क्षरण करती है, साथ ही गले में दाह भी। मुँह की लार-सैलावा इतना निरर्थक पदार्थ नहीं है कि उसे भोजन चबाने तक सम्मिश्रण करने के अतिरिक्त अन्य अवसरों पर भी अकारण बहाया जाय। उसका भण्डार भी सीमित है। अनावश्यक क्षरण का परिणाम यह होता है कि नाक, कान, आँख, मस्तिष्क आदि के लिए काम आने वाला पोषण नीचे खिसकता है और उन्हें अभावग्रस्त स्थिति का सामना करना पड़ता है। मसाले व केवल पेट पर ही भार लादते हैं वरन् मुँह के बहुमूल्य रसों को अनावश्यक मात्रा में बहाकर सिर पर अवस्थित बहुमूल्य अवयवों की सामर्थ्य का भण्डार खाली करते हैं। इससे दुहरा घाटा है। लाभ मात्र इतना ही है कि जीभ को थोड़ी देर के लिए दाद जैसे खुजली खुजाने का मजा चखने को मिलता रहे। कोई यह भी सोच सकता है कि जायकेदार भोजन, अधिक मात्रा में खाया गया इसलिए उससे लाभ भी अधिक मिलेगा, यह भंयकर भूल है। जो पचता है वही पोषण प्रदान करता है। बिना पचा, भाररुप भोजन तो पाचन तन्त्र के गिरने लगने जैसी विपन्नता ही उत्पन्न करता है। उससे जो रस बनता है, उसे विषभरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गैस ही कह सकते हैं। इस विषाक्तता को उगाने वाला व्यक्ति पोषण के अभाव में दुर्बल भी रहेगा और विग्रहों की भरमार जमते जाने पर चित्र-विचित्र रोगों का शिकार भी होगा।

इस सारी विपत्ति की जड़ वहाँ से आरम्भ होती है, जहाँ मनुष्य हरे आहार से मुँह मोड़कर उसे स्वादिष्ट बनाने के लिए जलाने, उबालने की बात सोचता है। सृष्टि के सभी प्राणी सजीव आहार ग्रहण करते हैं। मनुष्य शाकाहारी है इसलिए उसका स्वाभाविक भोजन हरी वनस्पतियाँ अपने स्वाभाविक रूप में ही हो सकती है। फलाहार इस दृष्टि से सर्वोत्तम कहा जा सकता है। बड़े पेड़ों पर लगने वाले महँगे फल खरीदना यदि महँगा पड़ता हो तो सस्ते ऋतुफलों से भी काम चल सकता है। शाक प्रजातियों में भी कितनी ही ऐसी हैं, जो फलों का काम देती हैं। खरबूजा, तरबूजा, टमाटर, पपीता, केला जैसे फल ऐसे ही हैं जिन्हें फल और शाक के मध्यवर्ती कह सकते हैं। जब फसल आती है तब आम, जामुन, शहतूत, अमरूद गाड़ी भर-भर कर आते है और अनाज से कहीं सस्ते बिकते हैं। शाकों में कितने ही ऐसे हैं जो बिना पकाए कच्चे भरपेट खाये जा सकते हैं। बैगन, भिण्डी, गाजर, मूली, चुकन्दर, सलाद चौलाई, पालक आदि ऐसे हैं जो बिना उबाले भी खाए जा सकते हैं। अनाजों में सभी ऐसे हैं, जो पककर सूखने से पहले जब तक हरे गीले हैं तब तक भली प्रकार कच्चे खाए जा सकते हैं। सूख जाने पर उन्हें पानी में भिगोकर अंकुरित किया जा सकता है और हरी, कच्ची सजीव स्थिति में फिर वापिस लौटाया जा सकता है।

लगता हो कि इतना पीछे लौट सकना इतनी जल्दी संभव न हो सकेगा तो फिर इतना तो करना ही चाहिए कि सूखे अन्न की मात्रा कम और शाक फलों की मात्रा अधिक रखी जाए। भूनने, तलने की अपेक्षा मन्दी आग पर ढक्कन बन्द करके उबालने भर से काम चलाना चाहिए।

यह स्मरण रखनें योग्य तथ्य है कि हर खाद्य पदार्थ के छिलके वाले भाग में सबसे अधिक सारतत्व होता है। इसलिए नितान्त विवशता होने पर ही छिलका हटाने की बात सोचनी चाहिए अनाजों में से किसी का भी छिलका न उतारा जाय, उन्हें दलिये के रूप में प्रयोग किया जा सके तो सर्वोत्तम अन्यथा आटे को छानकर छिलका फिर उसी में मिला देना चाहिए। चावल पालिश किए हुए नहीं, हाथ के कुटे हुए लिए जायें। दालें साबुत बनाई जायें ताकि उनका छिलका और दोनों दलों की की मध्यवर्ती गठान बर्बाद न होने पाये। शाकों में अरबी, कटहल जैसे कुछ ही शाक ऐसे हैं जिनका छिलका हटाए बिना काम नहीं चलता अन्यथा अधिकांश को छिलके समेत उबाला जा सकता है। आलू, लौकी, तोरई जैसे शाकों में छिलका हटाने की आवश्यकता तो है ही नहीं।

खाते समय चार बातों का ध्यान रखने से काम चल जाता है। एक यह कि चौबीस घण्टे में दो बार से अधिक न खाया जाय। बीच में जरूरत पड़े तो कोई पेय भर लिया जाय। बार-बार न खाया जाय। दूसरा यह कि ग्रास को देर तक इतना चबाया जाय कि वह मुँह के स्राव मिलने पर गले से नीचे सरलतापूर्वक उतर सकने जितना पतला हो जाय। तीसरा यह कि आधे पेट खाया जाय। आधा हवा-पानी की गुंजायश रखने के लिए खाली रखा जाय। चौथा यह कि भोजन के समय थोड़ा ही पानी पिया जाये। हो सके तो नहीं लिया जाय। आवश्यकतानुसार एक घण्टा उपरान्त पिया जा सकता है। इन निर्धारणों का कड़ाई से पालन किया जाय और ऐसा नियम बनाया जाय कि सप्ताह में एक दिन न सही, एक समय का उपवास तो किया ही जाय। उपवास से मतलब कुछ न खाने, पेट को विश्राम देने से है। काम न चले तो दूध, छाछ, रस, रसा जैसा कोई पतला पेय मात्र लेना चाहिए। ऋषि अन्न के नाम पर भूनकर-तलकर जो खाद्य पदार्थ बनाए जाते हैं वे उपवास का प्रयोजन पूरा करना तो दूर उल्टे अपच को ही जन्म देते हैं। उपवास का अर्थ ही है—परिपूर्ण विश्राम।

अदरख, नीबू, आँवला, धनिया, पुदीना जैसी वस्तुएँ अवश्यकतानुसार दाल, शाक में मिलाई जा सकती हैं। मिर्च, लौंग, हींग जैसे गरम मसालों से तो परहेज ही करना चाहिए। शकर के स्थान पर गुड़ लिया जा सकता है, पर उसकी मात्रा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी कम ही होनी चाहिए। कई चीजें एक साथ लेने की अपेक्षा यह अच्छा है कि एक समय में दो ही वस्तुएँ ली जायें। दलिया, खिचड़ी जैसे अमृताशन हलके भी रहते हैं और सस्ते भी। उन्हीं में कोई शाक काटकर डाला जा सकता है। भोजन स्वाद के लिए नहीं, औषधि मानकर लिया जाय और उसके गुणों को प्रधानता दी जाय। पकाने एवं परोसने में सफाई-सात्विकता के अतिरिक्त उस कार्य को करने वालों के स्वास्थ्य पर भी नजर रखना आवश्यक है। गन्दगी किसी भी स्तर की क्यों न हो, भोजन के साथ मिलकर खाने वालों के स्वास्थ्य और संतुलन पर बुरा प्रभाव डालती है।

खानपान के सम्बन्ध में पड़ी हुई बुरी आदतों को छोड़कर औचित्य की मर्यादा के अनुरूप नया स्वभाव ढाला जा सके तो समझना चाहिए कि दुर्बलता एवं रुग्णता से पीछा छुड़ाने वाले नव निर्धारण का सुयोग सौभाग्य हाथ आ गया।

मितभुक्, हितभुक्, ऋतभुक्

कहा जाता है कि महर्षि चरक अपनी संरचना और शिक्षा का समुचित विस्तार कर चुके तो उन्हें यह जानने की सूझी कि उनके प्रतिपादन का रहस्य कितनों ने समझा, इसका पता लगाया जाय। उपरोक्त प्रयोजन के लिए महर्षि ने एक कपोत का रूप बनाया और उस क्षेत्र में पहुँचे, जहाँ चिकित्सकों की भरमार थी। पक्षि रूप धारी चरक ने अपनी भाषा में चिकित्सकों से एक मार्मिक प्रश्न पूछा—कोऽरुक' अर्थात्- कौन रोगी होता है ? इस प्रश्न से उनका मन्तव्य यह था कि जो मूल कारण को जानता होगा वही उसकी रोकथाम के उपाय सोचेगा। चिकित्सा उपचार भी उसी का सफल होगा। अन्यथा औषधि मात्र से अस्वस्थता का स्थायी निराकरण कहाँ सम्भव है ? कपोत चरक ने बारी-बारी सभी से चिकित्सकों के सम्मुख वही प्रश्न दुहराया 'कोऽरुक् ! रोगी कौन बनता है ? निरोग कैसे होता है ?

प्रश्न के उत्तर में सभी ने अपनी मान्यता व्यक्त की। रोग मुक्त होने के निमित्त सभी उपचार बताते चले गये किसी ने भी यह न बताया कि रोगी पड़ने का अवसर ही न आवे, अथवा जो रुग्ण हो गया है, उसे सहज ही उससे छुटकारा पाने का अवसर मिल जाय। उत्तर तो सभी के शास्त्र-सम्मत थे पर उनमें सारे सिद्धान्त का समावेश न रहने से उन्हें सन्तोष न हुआ और वे खिन्न मन से उदास होकर एक कोने में जा बैठे। सोचन लगे या तो मुझे पक्षी समझकर उपेक्षित किया गया है अथवा इन लोगों का अनुभव गम्भीर नहीं है।

उधर से महर्षि वाग भट्ट निकले। उनसे भी कपोत ने वही प्रश्न पूछा। उनने कपोत रूपी चरक को पहचान लिया और नतमस्तक होकर उन्हीं की भाषा में प्रत्युत्तर देते हुए तीन प्रतिपादन प्रस्तुत किये।

"मित भुक"—अर्थात् भूख से कम खाना।

"हित भुक"—अर्थात् सात्विक खाना।

"ऋत भुक"—अर्थात् न्यायोपार्जित खाना।

जो इन तीनों बातों का ध्यान रखेंगे, उन्हें बीमार पड़ने का अवसर ही न आवेगा। ऐसी दशा में बिना चिकित्सा के ही स्वास्थ्य ठीक बना रहेगा।

इन दिनों स्वास्थ्यकर आहार के सन्दर्भ में अमुक रसायनों के बाहुल्य को सन्तुलित आहार कहा जाता है और अमुक की कमी रहने पर कुपोषण की शिकायत होने की बात कही जाती है। इन दिनों कुपोषण दूर करने के लिए खाद्य सन्तुलन पर बहुत महत्व दिया जा रहा है और यह सोचा जा रहा है कि किस प्रकार आहार का रासायनिक स्तर बढ़ाया जाय। यह प्रयत्न सामान्यतया ही है। रासायनिक उत्कृष्टता की बात को महत्व मिलना ही चाहिए, पर साथ ही यह भी ध्यान रखा जाना चाहिए कि पकाने की प्रक्रिया एवं खाने की पद्धति में तो कहीं कोई त्रुटि नहीं रह रही है। इस सन्दर्भ में बरती गई लापरवाही ऐसी है, जिसके कारण बहुमूल्य पौष्टिक पदार्थ भी तथाकथित कुपोषण वाले आहार से भी गये वन बीते जाते हैं।

कुपोषण वाले पदार्थों के कारण शारीरिक विकास में जो कमी रह जाती हैं तथा मानसिक विकास में अवरोध उत्पन्न होता है, उसकी जानकारी सर्वविदित है। अब इस क्षेत्र में चल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहे अनुसंधानों ने एक नया मोड़ लिया है। जिनको पर्याप्त मात्रा में पुष्टाई मिलती है, वे कुपोषण ग्रस्तों से भी गई-गुजरी स्थिति में क्यों पड़े रहते हैं ? उन्हें वे लाभ क्यों नहीं मिलते, जो खाद्य रसायनों का गुणगान करते हुए आमतौर से बताये जाते हैं।

इस असमंजस का समाधान ढूँढ़ने के लिए स्वास्थ्य में संलग्न कितने ही शोध संस्थान अपने-अपने ढंग से काम कर रहे हैं। इन्डियन कौंसिल ऑफ मेडीकल रिसर्च—इन्डियन इन्स्टीटयूट ऑफ मेडीकल साइन्स—नेशनल इन्स्टीटयूट ऑफ न्यूट्रीशन—पोस्ट ग्रेजुएट इन्स्टीट्यूट ऑफ मेडीकल एजूकेशन एण्ड रिसर्च जैसी भारत की शोध सस्थाएँ न केवल देश की आर्थिक परिस्थितियों में अधिक उपयोगी खाद्यान्नों की सिफारिशें कर रही हैं वरन् यह भी सोच रही हैं कि उपयोगी स्तर का आहार ग्रहण करने पर भी असंख्यों को क्यों उसका लाभ नहीं मिलता है ? यह समस्या उन सभी लोगों की है, जो आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न और बौद्धिक दृष्टि से सुशिक्षित होते हुए शारीरिक दृष्टि से दुर्बल और रुग्ण बने रहते हैं। इससे प्रतीत होता है कि आहार का सन्तुलित होना ही पर्याप्त नहीं, वरन् उसके पकाये और खाये जाने का तरीका भी अपना विशिष्ट महत्व रखता है। इस सन्दर्भ में बरती गई असावधानी भी आहार का स्तर मूल्यवान होते हुए भी उसके प्रभाव परिणाम से वंचित रहना पड़ता है।

तेज आग पर देर तक पकाने से सभी खाद्य अपनी मौलिक विशेषताओं का अधिकांश भाग गँवा बैठते हैं। चिकनाई में तलने-भूनने से रही-बची उपयोगिता भी नष्ट हो जाती है। मसाले ही भरमार से वह आहार न रहकर नशारहित मादक द्रव्य बन जाता है और उत्तेजना ही नहीं, विषाक्तता भी उत्पन्न करता है।

खाने के सम्बन्ध में बरती जाने वाली भूलें और भी दुर्भाग्यपूर्ण हैं। कम चबाना, जल्दी-जल्दी में निगलते जाना आहार को मुख में सम्मिलित होने वाले पाचक रसों से वंचित रखना है। जायकेदार चीजें स्वभावतः भूख से अधिक मात्रा में उदरस्थ होती रहती हैं। एक बार का किया हुआ आहार पचने से पहले ही उस पर नई खेप की बात लद जाती है। यही है अपच का प्रधान कारण। पेट में बिना पचा आहार सड़ता है। सड़न से उत्पन्न विषैली गैसें शरीर के विभिन्न अवयवों में पहुँचकर वहाँ चित्र-विचित्र बीमारियों का सृजन करती हैं। इन गलतियों के रहते पौष्टिक भोजन भी कुपोषण के कारण अखाद्य ठहराये जाने वाले आहार से भी गया-बीता बन जाता है।

आवश्यक नहीं कि गरीब लोगों को कीमती खाद्य सामग्री खरीदने के लिए दबाया और उसकी परिस्थित का उपहास उड़ाया जाय। अच्छा यह है कि हरे शाक-भाजी बिना पकाये या कम पकाये खाने की आदत डाली जाय और उनमें पाये जाने वाले बहुमूल्य क्षार एवं खनिजों को पोषण में सम्मिलित होने का अवसर दिया जाय। सूखे अन्नों को अंकुरित करके तथा धीमी आग पर उबालकर खाने का तरीका भी ऐसा है, जिससे मोटे अनाज मेवे जैसा गुण देने लगते हैं।

प्राकृतिक खाद्य-पदार्थों से अंकुरित आहार सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। अंकुरित होते समय बीजों में पायी जाने वाली प्रोटीन, विटामिन, एन्जाइम एवं मिनरल (खनिज लवण) की वृद्धि असाधारण रूप से होती है। अंकुरण के समय अन्न की जीवनी शक्ति विकासोन्मुख एवं अधिक सक्रिय होती है। उस स्थिति में एन्जाइम की मात्रा बीजों में अत्यधिक बढ़ जाती है जो शरीरगत चयापचय क्रिया को अधिक अच्छी तरह सम्पन्न कर रक्त संचार व पाचन तन्त्र को विशेष शक्ति प्रदान कहते हैं।

तेज आग पर उबाल देने या भून देने से बीजों की अंकुरण क्षमता प्रायः नष्ट हो जाती और जीवनी शक्ति भी बहुत मात्रा में कम हो जाती है। अंकुरित आहार कम मात्रा में ग्रहण किए जाने पर भी पोषण की आवश्यकता पूरी हो जाती है। अंकुरित करने के लिए कोई भी अनाज या बीज का प्रयोग किया जा सकता है। उनमें परिवर्तन भी करते रहना चाहिए। सामान्यतया अंकुरण के लिए गेहूँ, चना, मूँग, मूँगफली, मटर, सोयाबीन आदि प्रयुक्त किये जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंकुरित किये गये अन्न एवं बीजों में प्रोटीन की प्रचुरता हो जाती है। साथ ही जटिल एवं गरिष्ठ प्रोटीन का रूपान्तरण सरल प्रोटीन अमीनो एसिड्स में हो जाता है। बीजों के अंकुरण के पश्चात् श्लेष्मा कारक एवं गैस उत्पन्न करने का दोष ह्रुत ही न्यून रह जाता है। अंकुरण के तीन-चार दिन बाद गेहूँ में विटामिन 'सी' की मात्रा तो ३०० प्रतिशत तक बढ़ जाती है। इसी प्रकार विटामिन 'बी' काम्प्लेक्स की मात्रा भी अंकुरण की प्रक्रिया में कई गुना बढ़ जाती है।

अंकुरण की सरल विधि से सस्ता व सहज ही पौष्टिक भोजन हर किसी को उपलब्ध हो सकता है। इससे प्रचुर मात्रा में प्रोटीन, विटामिन एवं पोषक तत्व मिल जाते हैं। कुपोषण की समस्या का सहज समाधान इससे हो सकता है। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि अंकुरित आहार सस्ता, सन्तुलित व पूर्ण आहार है।

आहार के निर्धारण में अब एक और तत्व सामने है, जिसे खाद्य की जीवनी शक्ति एवं प्राण ऊर्जा कहा गया है। यह रासायनिक संरचना से भिन्न है। अब तक प्रोटीन, स्टार्च, लवण, खनिज, आदि रसायनों का सन्तुलन ही खाद्य का स्तर गिना जाता रहा है, अब उन पदार्थों में पाई जाने वाली प्राण चेतना का अन्वेषण वर्गीकरण भी चल पड़ा है और उस सूक्ष्म प्रभाव के आधार पर उपयोगिता एवं समर्थता का प्रतिपादन होने लगा है। भारतीय अध्यात्म विज्ञान के सूक्ष्मदर्शी सदा से पदार्थों की सात्विक, राजस, तामस प्रकृति की चर्चा करते रहते हैं। यह सब क्या हैं ? उसकी व्याख्या पिछले दिनों तो नहीं हो सकी थी, पर अब इस खोज से यह पता लगता है कि पाये जाने वाले रसायनों से भी अधिक महत्वपूर्ण पदार्थों की प्राण ऊर्जा होती है।

प्राण शक्ति या सूक्ष्म शक्ति जिसे विज्ञान की भाषा में 'बायोप्लाज्मा' कहते हैं, सृष्टि के प्रत्येक कण-कण में विद्यमान है, परन्तु चेतन तत्वों विशेषतः जीव-जन्तु, मनुष्य एवं पेड़-पौधों में अधिक सक्रिय रहती है। सन् १९६८ में रूस के कुछ प्रसिद्ध वैज्ञानिकों के एक संगठन ने अपने अनुसन्धान कार्य का प्रकाशन कराया जिसमें उन्होंने लिखा था कि "समस्त चेतन प्राणियों, पौधों, मनुष्यों एवं जानवरों में एक स्थूल शरीर होता है और एक सूक्ष्म शरीर। सूक्ष्म शरीर में ही प्राणशक्ति रहती है।

अमेरिका के येल यूनीवर्सिटी के डॉ० वर्र एवं नायपि ने दो वृक्षों के बीच एक सेन्सिटिव वोल्टमीटर जोड़कर निःसृत होने वाली सूक्ष्म प्राण शक्ति का मापन व अंकन का सफल प्रयोग किया। इस शोध कार्य में उन्हें कई वर्ष तक अथक परिश्रम करना पड़ा।

पौधों में प्राणशक्ति के निरन्तर प्रवाह के सम्बन्ध में 'क्रिस्टोफर बड' एवं 'पीटर टॉम्किन्स' ने अपनी "दी सीक्रेट लाइफ ऑफ प्लान्ट" पुस्तक में लिखा है कि पौधे भी अन्य जीवों एवं मनुष्य की तरह प्राणशक्ति के स्तर से प्रभावित होते हैं। पौधों की प्राणशक्ति मनुष्यों और जीव-जन्तुओं को प्रभावित करती है। जैव रसायन विशेषज्ञ 'डा० एनल फ्रीड फेफर' ने पशु, मनुष्य वे पौधों की सूक्ष्म प्राणिक शक्ति का परीक्षण किया। उन्होंने अपने प्रयोगों से सिद्ध किया है कि प्राकृतिक भोज्य-पदार्थों में प्राणशक्ति का स्पन्दन अधिक सशक्त होता है। शारीरिक आवश्यकताओं के लिए प्राकृतिक भोजन में पाये जाने वाले विटामिन, खनिज लवण उपयुक्त व पर्याप्त हैं। कृत्रिम खाद्य-पदार्थों में प्राणशक्ति की मात्रा न्यून होने से उनका जैविक महत्व बहुत कम होता है।

प्रकृति मनुष्य के लिए सामग्री सूर्य की अग्नि में पकाकर समग्र रूप में प्रस्तुत किया करती है। टहनी में से आम तभी टपकता है जब वह पककर खाने योग्य हो जाता है। यही बातें प्रायः अन्य सभी फलों पर लागू होती हैं। अन्न के दाने भी पककर तैयार हो जाने पर ही पौधे से अलग होते हैं। प्रकृति प्रदत्त उपहारों को उसी रूप में ग्रहण करना स्वास्थ्यप्रद होता है। इनमें शरीर के पोषण के लिए आवश्यक सभी तत्व विद्यमान रहते हैं। खाद्य पदार्थों को गरम करने, उबालने अथवा भूनने से वे अप्राकृतिक हो जाते हैं। उसी तरह स्वाद बढ़ाने की दृष्टि से अलग से नमक, मिर्च, मसाले, गुड़, शक्कर आदि वस्तुएँ मिलाकर जायके के लोभ में उन्हें अखाद्य बना दिया जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य के अतिरिक्त अन्य कोई भी जीव अपना भोजन पकाकर नहीं खाता। फल, फूल घास, अनाज आदि उन्हें जिस रूप में प्रकृति ने प्रदान किया होता है उसी रूप में वे उसे ग्रहण किया करते हैं। जंगली पशु जेब्रा, जिराफ, हिरन, जंगली भैंसे, नील गाय तथा पक्षी तोता मैंना आदि हमेशा फल-फूल, अन्न, पत्तियाँ आदि खाते हैं। यही कारण है कि वे कभी बीमार पड़ते भी नहीं देखे जाते हैं, परन्तु मनुष्य अपने खाद्य को अप्राकृतिक बनाकर खाने के फलस्वरूप किसी न किसी बीमारी से ग्रसित होता रहता है। प्रकृति के अंचल में स्वस्थ्य रहने वाले जीव भी मनुष्य के सम्पर्क में आकर बीमार पड़ जाते हैं।

स्वास्थ्य की दृष्टि से देखने पर कच्चे खाद्य पदार्थों में अपेक्षाकृत अधिक पोषक तत्व विद्यमान होते हैं। प्रमाणस्वरूप देखा जा सकता है कि उबाले अथवा भूने गये दाने अंकुरित नहीं होते। उनकी उत्पादन शक्ति नष्ट हो जाती है। परन्तु कच्चे दाने अंकुरित होकर पौधे के रूप में विकसित होते हैं। हड्डियों की मजबूती के लिए आवश्यक स्टार्च अधिक मात्रा में कच्चे खाद्य पदार्थों से ही मिलते हैं। दाँतों का व्यायाम और पाचन रस की प्राप्ति भी कच्चे पदार्थों से होती है। मुँह से अधिक अच्छी तरह चबाने के कारण पर्याप्त 'लार' निकलकर इनमें मिल जाती है।

कच्चे भोजन का स्वरूप क्या हो, यह उस फल, सब्जी या अनाज के प्रकार पर निर्भर करता है। दानेदार अन्न को अंकुरित कर खाना लाभप्रद होता है। इससे उनमें पोषक तत्व की मात्रा बढ़ जाती है। गेहूँ, चना, मटर, मूँग आदि को अंकुरित करने के लिए १२ से २४ घन्टे तक भिगो लें। बाद में पानी अलग कर मोटे कपड़े में पोटली बाँधकर २४ घन्टे तक लटका दें। अंकुरित होने पर चबा-चबाकर खायें तो बहुत लाभ होगा। दाँतों के व्यायाम के साथ ही पोषक रस भी अधिक मिल जाता है।

फलों अथवा सब्जियों को सलाद के रूप में लेना चाहिए। गाजर, मूली, ककड़ी, खीरा, लौकी, भिंडी, टिन्डा, पालक, धनियाँ, पुदीना आदि को छोटे-छोटे टुकड़ों में काटकर मिला लें। इनमें पोषक तत्व सुरक्षित रूप में मिल जाता है। अतएव सलाद ही ग्रहण करें। किसी भी स्थिति में कच्चा भोजन हमारे लिए बहुत लाभप्रद है। यदि कारणवश उबाल-भूनकर खाना ही पड़े तब भी कच्चे भोजन को कुछ न कुछ अंशों में अवश्य लिया जाना चाहिए। स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि भोजन को सन्तुलित आहार की श्रेणी में तभी गिना जा सकता है जब उसमें कच्चे आहार का समावेश समुचित मात्रा में किया गया हो।

चिन्तन की स्वच्छता भी उतनी ही अनिवार्य

पिछली भूलों का परिमार्जन, वर्तमान का परिष्कृत निर्धारण एवं उज्ज्वल भविष्य का निर्माण यदि सचमुच ही अभीष्ट हो, तो इसके लिए विचार संस्थान पर दृष्टि जमानी चाहिए। इस मान्यता को सुस्थिर करना चाहिए कि समस्त समस्याओं का उद्गम भी यही है और समाधान भी इसी क्षेत्र में सन्निहित है। यह सोचना सही नहीं है कि धन-वैभव के बाहुल्य से मनुष्य सुखी एवं समुन्न बनता है। इसलिए सब कुछ छोड़कर उसी का अधिकाधिक अर्जन जैसे भी संभव हो, करना चाहिए, इस भ्रान्ति से जितनी जल्दी छुटकारा पाया जा सके, उतना ही उत्तम है।

शरीर की बलिष्ठता और चेहरे की सुन्दरता का अपना महत्व है। धन की भी उपयोगिता है और उसके सहारे शरीर यात्रा के साधन जुटाने में सुविधा रहती है। इतने पर भी यह तथ्य भुला नहीं दिया जाना चाहिए कि व्यक्तित्व का स्तर और स्वरूप, चिन्तन क्षेत्र के साथ अविच्छिन्न रूप से जुड़ा हुआ है। व्यक्तित्व का स्तर ही वस्तुतः किसी के उत्थान-पतन का आधारभूत कारण होता है। उसी के अनुरूप भूतकाल बीता है, वर्तमान बना है और भविष्य का निर्धारण होने जा रहा है। उसकी उपेक्षा करने पर भारी घाटे में रहना पड़ता है। स्वास्थ्य का-शिक्षा का-प्रतिभा का-सम्पदा का-पद अधिकार का-कितना ही महत्व क्यों न हो, पर उनका लाभ मात्र सुविधा संवर्धन तक सीमित है। यह सम्पदा अपने लिए तथा दूसरों के लिए मात्र निर्वाह सामग्री ही जुटा सकती है, पर इतने भर से बात बनती नहीं, आखिर शरीर ही तो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

व्यक्तित्व नहीं है, आखिर सुविधाएँ मिल भर जाने से ही तो सब कुछ सध नहीं जाता, कुछ इससे आगे भी है। यदि न होता तो साधन सम्पन्न ही सब कुछ बन गये होते, तब महामानवों की कहीं कोई पूछ न होती, न आदर्शों का स्वरूप कहीं दृष्टिगोचर होता और न मानवी गरिमा का प्रतिनिधित्व करने वाले महामानवों की कहीं आवश्यकता-उपयोगिता समझी जाती।

समझा जाना चाहिए कि व्यक्ति या व्यक्तित्व का सार-तत्व उसके मनःसंस्थान में केन्द्रीभूत है। अन्तःकरण, अन्तरात्मा आदि नामों से इसी क्षेत्र का वर्णन-विवेचन किया जाता है। शास्त्रकारों ने, "मन एव मनुष्याणां कारणं बंध मोक्षये' 'आत्मेव आत्मनः बन्धु आत्मैव रिपुरात्मनः' 'उद्दरेदात्मनात्मानम् नात्मानम् अवसादयेत्' आदि अभिवचनों में एक ही अंगुलि निर्देश किया है कि मन के महत्व को समझा जाय और उसके निग्रह के, परिशोधन—परिष्कार के निमित्त संकल्पपूर्वक साधनारत् रहा जाय। मन को जानने की उपमा विश्व-विज्ञान से दी गई है, जो अपने ऊपर शासन कर सकता है, वह सबके ऊपर शासन करेगा—इस कथन में बहुत कुछ तथ्य है।

मन का, आत्मा का, जो निरूपण किया जाता है उसे एक शब्द में विचारणा का स्तर ही कहना चाहिए। मान्यताएँ, भावनाएँ, आस्थाएँ इसी क्षेत्र की गहरी परतें हैं। कल्पना, विवेचना, धारणा इसी क्षेत्र में काम करती हैं। सम्मान, आदत, स्वभाव की खिचड़ी इसी चूल्हे पर पकती है। लगने को यह भी लगता है, कि विचार बिना बुलाये आते हैं और अनचाहे ही चढ़ दोड़ते हैं पर वास्तविकता ऐसी नहीं है। हम कोई दिशा-धारा निर्धारित करते हैं और उस सरिता में तदनुरूप लहरें उठने लगती हैं।

भीतरी हेर-फेर का बाह्य क्रिया-कलापों और परिस्थितियों में परिवर्तन होना सुनिश्चित है। मनःस्थिति के अनुरूप परिस्थिति के बदल जाने की बात को सभी विज्ञजन एक स्वर से स्वीकार करते हैं। अस्तु परिस्थितियों को बदलने के निमित्त मनःस्थिति को बदलना प्राथमिक उपचार की तरह माना गया है। विचारों में मूढ़ता भरी रहने पर, भ्रान्तियों और विकृतियों के अम्बार लगे रहने पर यह सम्भव नहीं कि किसी को गई-गुजरी स्थिति में पड़े रहने से छुटकारा मिल सके। जिसका भाग्य बदलता है, उसके विचार बदलते हैं। विचार बदलने से मतलब है—अवांछनीयताओं की खोज-कुरेद और जो भी अनुपयुक्त है, उसे बुहार फेंकने का साहस भरा निश्चय।

यहाँ एक तथ्य और भी स्मरण रखने योग्य है कि मात्र कुविचारों का समापन ही सब कुछ नहीं है। एक कदम उठाने, दूसरा बढ़ाने के उपक्रम के साथ ही यात्रा आरम्भ होती है। छोड़ने पर खाली होने वाले स्थान को रिक्त नहीं रखा जा सकता। उस स्थान पर नई स्थापना भी तो होनी चाहिए। अनौचित्य के अनुकूलन के साथ ही औचित्य का संस्थापन भी आवश्यक है। ऑपरेशन से मवाद निकालने के उपरान्त घाव भरने के लिए तत्काल मरहम-पट्टी भी तो करनी पड़ती है। कुविचारों की विकृत आदतों का निराकरण तब हो सकता है, जब उस स्थान पर सत्प्रवृत्तियों को प्रतिष्ठित कर दिया जाए, अन्यथा घोंसला खाली पड़ा रहने पर चमगादड़ न सही अबाबील रहने लगेगा।

दुष्प्रवृत्तियाँ, अवांछनीय आदतें, कुविचारणाएँ बहुत समय तक अभ्यास में सन्निहित रहने पर स्वाभाविक प्रतीत होने लगती हैं, निर्दोष लगती हैं और कभी-कभी तो उचित एवं आवश्यक दीखने लगती हैं। उनके प्रति पक्षपात बनता है और मोह जुड़ता देखा गया है। ऐसी दशा में उन्हें ढूँढ निकालना और यह समझ सकना तक कठिन पड़ता है कि उनसे कुछ हानियाँ भी हैं या नहीं। इसका निश्चय श्रेष्ठ, सज्जनों और दुष्ट दुर्जनों की सद्गति एवं दुर्गति का पर्यवेक्षण करते हुए किया जा सकता है। जो दुष्प्रवृत्तियों को अपनाते रहे, हेय जनों जैसी मनःस्थिति में संतुष्ट रहे, अचिन्त्य चिन्तन में निरत रहे, उन्हें ठोकरें खाते और ठोकरें मारते हुए ही दिन काटने पड़े हैं, जिनने प्रगति की बात सोची और वरिष्ठता के लिए आकांक्षा जगाई, उन्हें साथ ही वह निर्णय भी करना पड़ता है कि व्यक्तित्व का स्तर उठाने वाली विचार प्रक्रिया को अपनाने, स्वभाव का अंग बनाने में कोई कोर कसर न रहने दी जायेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इस सन्दर्भ में सर्वप्रथम उन आदतों से जूझना चाहिए जो एक प्रकार से अपंग स्थिति में डाले रखने के लिए उत्तरदायी हैं। पक्षाघात पीड़ितों, अपंगों, अशक्तों की तरह हीनता के विचार भी ऐसे हैं, जिनके रहते किसी का भी पिछड़ेपन से पिंड छूटना असम्भव है। 'लो ब्लड प्रेशर' के मरीज ऐसे पड़े रहते हैं, जैसे लंघन करने वाले ने चारपाई पकड़ ली हो और करवट बदलना तक कठिन हो रहा हो। आलसियों की, अकर्मण्यों की गणना ऐसे ही लोगों में होती है। वे समर्थ होते हुए भी असमर्थ बनते हैं, निरोग होते हुए भी रोगियों की चारपाई में जा लेटते हैं। आरामतलबी, काहिली, कामचोरी, हरामखोरी ऐसी ही मानसिक व्यथा है, जिसके कारण बहुत कुछ कर सकने में समर्थ व्यक्ति भी अपंग-असमर्थों की तरह दिन गुजारता है। ढेरों समय खाली होने पर भी महिलाओं की तरह उसे जैसे-तैसे काटता है, जबकि उन क्षणों का किन्हीं उपयोगी कार्मों में नियोजन करने के उपरान्त कुछ ही समय में अतिरिक्त योग्यता का धनी बना जा सकता था, सक्षमों, सुयोग्य प्रतिभावानों और सुसम्पन्नों की पंक्ति में खड़ा हुआ जा सकता था।

'आलस्य' शरीर को स्वेच्छापूर्वक अपंग बनाकर रख देने की प्रक्रिया है। इसी प्रकार प्रमाद मन को जकड़ देने वाली रीति-नीति है। प्रमादी सोचने का कष्ट सहन करना नहीं चाहता है, जो चल रहा है, उसी से समझौता कर लेता है। नया कुछ सोच न सकने पर, नया साहस न जुटा सकने पर, प्रगति की सुखद कल्पनाएँ करते रहना, शेखचिल्ली की तरह उपहासास्पद बनना है। आलसी उन कार्मों को नहीं करते, जो बिना कठिनाई के तत्काल किये जा सकते थे। इसी प्रकार प्रमादी उतार-चढ़ावों के सम्बन्ध में कुछ भी सोचने का कष्ट नहीं उठाते। मात्र जिस-तिस पर दोषारोपण करते हुए, दुर्भाग्य का रोना रोते हुए मन हल्का करते रहते हैं, जबकि दोष उनका अपना होता है। परिस्थितियों को बदलने—सुधारने के लिए जिस सूझ-बूझ, धैर्य संतुलन, साहस एवं प्रयास की आवश्यकता पड़ती है, उसे जुटा न पाने का प्रतिफल यह होता है कि अनीति जड़ जमा लेती है। पिछड़ापन ऐसा सहचर बनकर बैठ जाता है, जिसे हटाने या बदलने जैसी कोई बात बनती ही नहीं। अस्तव्यस्त विचारों को यदि वर्तमान को सुधारने वाले उपाय ढूँढ़ने में लगाया जा सके और वर्तमान परिस्थितियों से तालमेल बिठाते हुए अगला कदम क्या हो सकता है, यदि इस पर व्यावहारिक दृष्टि से चिन्तन किया जा सके तो प्रगति पथ पर बढ़ चलने का कोई मार्ग अवश्य मिलेगा, पर जिसने पत्थर जैसी जड़ता अपना ली है, उसे रचनात्मक प्रयासों में लग पड़ने के लिए न आलस्य छूट देता है न विचारों की असंगत उड़ानों से विरत करके कुछ व्यावहारिक उपाय सोचने की सुविधा, प्रमाद की खुमारी रहते बन पड़ती है। वस्तुतः प्रगतिशीलता के यही दो अवरोध चट्टान की तरह अड़ते हैं। इन्हें हटाने बिना कोई गति नहीं कोई प्रगति नहीं।

मनुष्य को हीन बनाने वाले मनोविकारों में उदासी और निराशा प्रमुख हैं। पेट भरने के बाद नदी की बालू में लोट-पोट करने वाले मगर और उदरपूर्ति के उपरान्त कीचड़ में मस्त होकर पडे रहने वाले वाराह को फिर दीन-दुनिया की कोई सुध नहीं रहती। जब बासी पच जाता है और झोले में खालीपन प्रतीत होता है, तभी वे उठने और कुछ करने की बात सोचते हैं। 'पंछी करें न चाकरी, अजगर करें न काम' का उदाहरण बनकर जो समस्त कामनाओं से रहित परमहंसों की तरह दिन गुजारते हैं और 'राम भरोसे जो रहे पर्वत पै हरियाय' के भाग्य भरोसे जो समय काटते हैं, उन्हें 'ना काहू सों दोस्ती ना काहू सो बैर' वाली स्थिति रहती है। वे न कल की सोचते हैं न परसों की। उन उदासीन सम्प्रदाय का दर्शन अपनाने वालों के लिये प्रगति और अवगति से कुछ लेना-देना नहीं होता, मुट्ठी बाँधकर आते और हाथ पसारकर चले जाते हैं, न शुभ की आकांक्षा, न अशुभ की उपेक्षा—ऐसी उदासीनता पिछड़े और गये-गुजरे स्तर का प्रतीक है।

निराशा इससे बुरी है, वह सोचती भी है और चाहती भी, किन्तु साथ ही अपनी असमर्थता, भाग्य की मार, परिस्थितियों की प्रतिकूलता, साथी की बेरुखी जैसी निषेधात्मक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संभावनाओं पर ध्यान केन्द्रित करती है और कदम उठाने से पहले ही असफल रहने का दृश्य देखती और हार मान लेती है। ऐसे लोग उदास रहने वालों की अपेक्षा अधिक दीन-हीन स्थिति में होते हैं और सन्तोष भी हाथ से गँवा बैठते हैं।

अशुभ की आशंका जिन्हें डराती रहती है, वे चिन्तातुर पाये जाते हैं। कुछ चाहते तो हैं, किन्तु सूझबूझ और पुरुषार्थ के अभाव को परिस्थितिजन्य गतिरोध मान बैठते हैं। अपने को ऐसे चक्रव्यूह में फँसा पाते हैं, जिसमें से बच निकलने का रास्ता अवरुद्ध पाते हैं, इस स्तर के व्यक्ति चिन्तातुर देखे जाते हैं, घबराहट में सिर धुनते हैं, हड़बड़ी में कुछ का कुछ कहते, कुछ करते और सोचते हैं, वह सब बेतुका होता है। अपनी परेशानी साथियों के सामने इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं, मानो आकाश टूटकर उन्हीं पर गिरा हो। यों इस कथन में उनका प्रयोजन सहायता न सही, सहानुभूति पाने का तो होता ही है पर वे यह भूल जाते हैं कि हारते का सभी साथ छोड़ देते हैं। मित्र भी कन्नी काटने लगते हैं। इस दुनियां में सफल, साहसी और समर्थ को ही साथियों का भी सहारा मिलता है। डूबते को देखकर लोग दूर रहते हैं, ताकि चपेट में आकर कहीं उन्हें भी न डूबना पड़े। उदार-परोपकारी तो जहाँ-तहाँ उँगलियों पर गिनने जितनी सख्या में ही पाये जाते हैं। ऐसी दशा में चिन्तातुर, निराश, भयभीत संत्रस्त, कायर, दुर्बल होने की दुहाई देने के नाम पर यदि सहानुभूति अर्जित करना चाहता हो तो भी उसे नहीं के बराबर सफलता मिलेगी। जो मिलेगी वह भी उथली एवं व्यंग्य-तिरस्कार से भरी हुई होगी। सहायता तो कहीं से कदाचित् ही मिल सके। यह भी हो सकता है जिनसे सामान्य स्थिति में थोड़ी-बहुत सहायता की आशा थी, उससे भी हाथ धोना पड़े।

अपने आपको कमजोर करने और गिराने का यह अवसाद-उपक्रम जिसने भी अपनाया है, वे घाटे में रहे हैं। मनोबल को गिराना भी धीमी आत्महत्या है, जो रोग-निवारण, अर्थ-उपार्जन, सौभाग्य-संवर्धन, संकट-निवारण जैसे अगठित महत्वपूर्ण कार्यों में अजस्र सहयोग प्रदान करता है। गिराने, थकाने और खोखला बनाने वाले उपरोक्त मनोविकारों में चिन्तन का निषेधात्मक प्रवाह ही आधारभूत कारण होता है। जैसे सोचा होता है, उसमें वास्तविकता का नगण्य-सा ही अंश रहता है। कुकल्पनाओं का घटाटोप ही, 'शंका-डाक मनसामते' की उक्ति चरितार्थ करता है। कुकल्पनाओं के अँधरे में झाड़ी की आकृति भूत जैसी बन जाती है। साहस और विवेक की मात्रा घट जाने पर ऐसे अनगढ़ विचार उठने लगते हैं, जिनसे विपत्ति का आक्रमण और उसके कारण विनाश का भयावह दिवास्वप्न आँखों के सामने तैरने लगता है।

जब कल्पना-जगत में बेपर की उड़ानें ही उड़नी हैं तो फिर उन्हें विधेयात्मक स्तर की क्यों न गढ़ा जाय ? असफलता के स्थान पर सफलता का स्वप्न देखने में क्या हर्ज है ? संकट के न आने और उसके स्थान पर सुखद सम्भावनाओं के आगमन की बात सोचने में भी कोई अड़चन नहीं होनी चाहिए। यथार्थता तो समय पर ही सामने आती है। आशंका तो कल्पना पर आधारित हो सकती है, सो भी मनगढ़न्त। जब गढ़ना ही रहा तो भूत क्यों गढ़ा जाय, देवता की संरचना करने में भी तो उतनी ही शक्ति लगेगी। डर वास्तविक नहीं होते। जितने संकट अनगढ़ मस्तिष्क द्वारा सोचे जाते हैं, देखा गया है, उनमें से आधे-चौथाई भी सामने नहीं आते। काली घटाएँ सदा बरसने वाली ही नहीं होतीं।

अनुकूलताएँ और प्रतिकूलताएँ धूप-छाँव की तरह आती-जाती रही हैं। उनमें से एक भी चिरस्थायी नहीं होती। सामने आने वाली परिस्थितियों का समाधान ढूँढ़ने के लिए और भी अधिक सूझबूझ की, साहस एवं पुरुषार्थ की आवश्यकता पड़ती है। उन्हें जुटाने के लिए मनोबल तगड़ा रहना चाहिए अन्यथा निराशा, चिन्ता, भय जैसी कुकल्पनाएँ घिर जाने पर तो हाथ-पैर फूल जाते हैं, कुछ करते-धरते नहीं बन पड़ता है, फलतः अपने ही बुने जाल में मकड़ी की तरह फँसकर अकारण कष्ट सहना पड़ता है। जो इनसे बचता है, वह अक्षुण्ण स्वास्थ्य का श्रेयाधिकारी बनता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चोकर से लाभ उठाइये

खाद्यान्नों को पिसवाकर प्रायः उन्हें छाना जाता है। छानने में गेहूँ, ज्वार, मक्का आदि अनाज का ऊपरी छिलका चलनी में रह जाता है। गृहिणियाँ इस छिलके को जिसे बोलचाल की भाषा में चोकर कहते हैं, या तो फेंक देती हैं अथवा पशुओं को डाल देती हैं। यदि यह मालूम हो सके कि इस प्रकार अनाज का सबसे अधिक पौष्टिक भाग व्यर्थ चला जाता है, तो बहुत-से लोग इस प्रकार की गलती नहीं करेंगे।

कई लोग तो ऐसे भी होते हैं, जो चोकर के लाभकारी गुणों को जानते हुए भी उसे निकाल फेंक देते हैं। इसे तो स्वादलिप्सा का दुर्गुण ही कहा जायेगा। जिसकी किसी भी प्रकार अनुशंसा नहीं की जानी चाहिए। ऐसे लोगों को समझा सकना भी मुश्किल है। ब्रिटेन में काफी वर्षों पहले चोकर के गुणों की जाँच की जा चुकी है। वैज्ञानिकगण प्रयोगों से इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि इस प्रकार खाद्य पदार्थों के सर्वाधिक पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं। वहाँ तो इसका प्रयोग कई भयंकर बीमारियों के उपचार में पथ्य रूप में भी किया जाता है। तपैदिक, कब्ज, मन्दाग्नि तथा मधुमेह जैसे रोगों की कुछ विशेष अवस्थाओं में एक भाग चोकर और आठ भाग गेहूँ के आटे की रोटियाँ ही खाने को दी जाती हैं। स्नायु दुर्बलता एवं रक्ताल्पता के रोगियों को चोकर की चाय बनाकर पिलायी जाती है। साफ चोकर को उसके छह गुने पानी में मिलाकर आधा घण्टे तक उबालने से चोकर की चाय तैयार हो जाती है। सुस्वादु बनाने के लिए उसमें शहद, चीनी अथवा नींबू का रस भी मिलाया जा सकता है। इसका एक प्याला प्रातः-सायं पीने से स्वस्थ्य व्यक्तियों को भी काफी लाभ होता है। इसका उपयोग कई व्यक्ति बाजार में मिलने वाली चाय के स्थान पर करने लगे हैं। एक ओर जहाँ यह पेय बाल-वृद्ध-युवा सभी के लिये स्फूर्तिदायक सिद्ध हुआ है, वहीं यह पीने वालों को गले की खराश, सर्दी, जुकाम आदि से भी बचाता है।

गेहूँ के वजन का पाँचवाँ भाग चोकर होता है परन्तु इस पाँचवें भाग में गेहूँ के सभी पोषक तत्वों का तीन चौथाई हिस्सा समाया होता है। इसका रासायनिक विश्लेषण करने पर पता चला है कि मामूली चोकर में ३ प्रतिशत चिकनाई, बारह प्रतिशत प्रोटीन तथा एक तिहाई भाग स्टार्च होता है। चूने और अन्य खनिज लवणों की मात्रा इसमें काफी होती है। एक पौण्ड चोकर वाले आटे में चार ग्रेन चूना होता है, जो शरीर की आवश्यकता के अनुसार पर्याप्त है। आटे का चोकर निकाल दिये जाने पर उसका चूना भी निकल जाता है। स्मरणीय है चूना शरीर के लिए अत्यावश्यक है। प्राकृतिक रूप से यह आवश्यकता पूरी न होने पर शरीर के कई अंगों को पोषण नहीं मिल पाता। दन्त क्षय का रोग चूने के अभाव में ही होता है। अपने भोजन में बारीक छने आटे अथवा मैदे का प्रयोग करने वाले के दाँत अन्य लोगों की अपेक्षा जल्दी गिरते हैं अथवा खोखले हो जाते हैं।

डॉ. बुंज ने ज्ञात किया है कि आटे से चोकर निकाल देने पर उसका आधा लौह तत्व समाप्त हो जाता है। मैदे में तो यह तत्व इससे भी कम रह जाता है। ऐसे आटे में से पोटेशियम का तीन चौथाई भाग, फास्फोरस का अस्सी प्रतिशत भाग तथा कैलशियम का आधा भाग निकल जाता है, जो शरीर और स्वास्थ्य के लिये निश्चय ही अपोषणकारी है।

स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य सन्तुलन और विजातीय तत्वों में चोकर महत्वपूर्ण भाग अदा करता है। कोष्ठ शोधन में तो यह हरी सब्जियों तथा फलों की तुलना में भी ज्यादा अच्छा साबित हुआ है। कोष्ठ शुद्धि के लिए उपयोग में लाई जाने वाली दवाओं की तरह यह आँतों को उत्तेजित नहीं करता बल्कि उन्हें बल और स्फूर्ति प्रदान कर सुचारु रूप से कार्य चलाने में मदद देता है। अतः यह ध्यान रखना चाहिए कि जो हम काम में लाते हैं, उसमें से चोकर निकाला नहीं गया हो।

आटा हाथ की चक्की पर नहीं भी पीसा जा सके और मशीन की चक्की पर ही पिसवाना पड़े तो मोटा पिसवाइये और चोकर जैसा महत्वपूर्ण अंश फेंकिये नहीं। रोटियाँ खुरदरी बनें तो हर्ज नहीं, वे पोषक होंगी, शीघ्र पचेंगी,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कब्ज नहीं रहेगा। मोटा आटा रोटी बनाने के तीन-चार घण्टे पहले गलाकर रख लेना और भी उत्तम रहता है। इससे उसके जीवन तत्व बढ़ जाते हैं।

चोकर में अपने वजन का बीसवाँ भाग खनिज लवण, तेरहवाँ भाग फॉस्फोट ऑफ पोटाश, तीन प्रतिशत चिकनाई, बारह प्रतिशत प्रोटीन, एक तिहाई माड़ी (स्टार्च), सामान्य मात्रा में लोहा, केल्शीयम, फास्फोरस आदि पोषक व रक्षक तत्व रहते हैं। इसे निकाल देने से आटे में ४/५ भाग फास्फोरस, ४/५ भाग लोहा, तीन चौथाई पोटेशियम, आधा भाग केल्शीयम और उसमें उपस्थित उपरोक्त तत्व कम हो जाते हैं, जिससे हमें गहूँ से जितनी शक्ति, जितना पोषण, जितना रक्षण मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पाता। इससे दोहरी हानि होती है। एक तो उसके पूरे तत्वों का लाभ हमारे शरीर को नहीं मिल पाता और उनके अभाव में कई रोगों का आक्रमण सहज हो जाता है। दूसरे चोकर में कुल गेहूँ का छठा भाग वजन होता है। चोकर फेंकने का अर्थ है इस महँगाई के जमाने में छः किलो गेहूँ का साढ़े पाच किलो ही हो जाना। यदि आधा चोकर पिस भी जाता हो तो भी आधा तो फेंका ही जाता है।

प्रकृति ने गेहूँ के ऊपर छिलके में चोकर को रखकर उसकी पाचन क्षमता को बढ़ा दिया है। चोकर में जल्दी पचने व मल को बाहर निकालने की शक्ति होती है। इसका प्रयोग जुलाब के रूप में भी किया जा सकता है।

इंग्लैण्ड में पहले क्षय रोग से ३६००० व्यक्ति प्रति वर्ष मरते थे। नार्थ राइडिंग ने खाद्य पदार्थों की पोषकता को बढ़ाकर क्षय रोगियों की इस मृत्यु दर को कम किया तो उसमें चोकर का काफी मात्रा में प्रयोग किया गया था। इसके पश्चात् क्षय रोगियों के भोजन में चोकर का स्थान वहाँ प्रमुख कर दिया गया।

चोकर के साथ पाँच, छः गुना आटा मिलाकर इसकी रोटियाँ भी बनाई जा सकती हैं। इसी प्रकार उसके बिस्कुट व केक भी बनाये जा सकते हैं। ये रोटियाँ, बिस्कुट, केक आदि कब्ज, मन्दाग्नि, मधुमेह तथा क्षय रोगियों के लिये उत्तम पथ्य का काम देती हैं। चोकर की चाय बनाकर पीने से भी स्नायु दौर्बल्य व रक्ताल्पता आदि रोगों में काफी लाभ मिलता है।

चोकर की चाय बनाने के लिए साफ चोकर को उसके तोल के छः गुने पानी में अच्छे ढक्कनदार पानी में आधा घण्टे तक उबालकर उसमें आवश्यकतानुसार स्वाद के लिये शहद, शक्कर, निम्बू का रस आदि मिलाकर गुनगुनी पी जा सकती है। उबालकर उसे छान लेना चाहिए।

इतने महत्वपूर्ण खाद्य पदार्थ को आटे से निकालकर फेंकने की बात सोचना भी अविवेकपूर्ण है। इसका लाभ सभी को लेना चाहिए। प्रचलित अवैज्ञानिक पाक पद्धति में सुधार करना चाहिए ताकि हमारे शरीर को पोषण देने वाले और उसके रोगों से बचाने वाले तत्वों को हम व्यर्थ समझकर फेंक न दें। यों तो हमारी पाक पद्धति में जो सुधार अपेक्षित है, उसका वर्णन इस लघु-लेख में सम्भव नहीं पर चोकर से लाभ उठाने की बात तो गाँठ बाँधकर रखने जैसी है।

पोषण सम्बन्धी कुछ महत्वपूर्ण तथ्य जानिये

दुर्बल मनुष्य अपने को सशक्त बनाने के लिये डॉक्टरों की शरण में जाते हैं, मानो समर्थता का भण्डार उन्हीं की पेटियों, शीशियों में बन्द हो। वे उन्हें टॉनिक लेने की सलाह देते हैं। कमजोरी के लक्षणों की पूछताछ करके मिनिरल, विटामिन, प्रोटीन, कैल्शियम आदि की विशेषताओं वाली दवाओं के लेने का सुझाव देते हैं।

प्रशंसा हो या निन्दा एक ही बात को अनेक मुखों से सुना जाय, तो व्यक्ति एक प्रकार से स्वसम्मोहित जैसा हो जाता है। निर्माता और विक्रेता उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा करते हैं, क्योंकि उन्हें सीधा आर्थिक लाभ होता है। डॉक्टर भी उन्हीं को सीधा सुझाव इसलिये देते हैं कि रोगी का समाधान करने के लिये उनके पास और कोई उपाय नहीं है।

बात एक सीमा तक सच भी है कि शरीर संरचना को देखते हुए यह पदार्थ उपयोगी भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहे और माने जाते हैं। शरीर को स्थिरता और दृढ़ता प्रदान करने में इनका महत्वपूर्ण योगदान भी है, किन्तु देखना यह है कि मुँह से खाने के उपरान्त वे क्या प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं।

शरीर की प्रकृति यह है कि वह किन्हीं पौष्टिक पदार्थों को भी उनके साथ रहने वाले सम्मिश्रणों के साथ ही हजम करती है, अन्यथा उन्हें निकाल बाहर करती है। गन्ना सुपाच्य है। वह प्राकृतिक अवस्था में खाया जाने पर पीलिया जैसे यकृत रोगों में लाभदायक होता है, किन्तु उसके पाचक तत्व निकाल देने पर सफेद चीनी हड्डियों से, दाँतों से अपने लिये आवश्यक पाचन खींचती और उन्हें कमजोर करती है। यही बात विटामिन आदि के सम्बन्ध में भी है। वे विभिन्न प्रकार के शाक-फलों में मिश्रित रहने पर सरलतापूर्वक पच जाते हैं, पर विटामिन 'बी' की गोलियाँ खाने पर वह पच नहीं पाते और पेशाब द्वारा बाहर निकल जाते हैं। पीला पेशाब होने लगने को देखते हुए यह तथ्य स्पष्ट समझा जा सकता है। कैल्शियम मूली आदि हरी सब्जियों में होता है। उस रूप में खाये जाने पर वह शरीर में घुल जाता है। अन्यथा कैल्शियम के इन्जैक्शन लेते रहने पर उसकी परत हड्डियों के ऊपर जम जाती है और जो उसके द्वारा आशा की गयी थी, वह पूरी नहीं होती।

इसी उद्देश्य की पूर्ति करने वाली दवाओं से कैमिस्टों की दुकानें भरी पड़ी रहती हैं। उनके निर्माता इन सबका अथक गुणगान करते हैं। आकर्षक विज्ञापनों द्वारा यह बताया जाता है कि दुर्बल शरीर को बलिष्ठ बनाने के लिये इनका सेवन रामबाण उपचार है। इनके सेवन से शरीर की हर कमी और हर आवश्यकता पूरी होती है, जबकि तथ्य इसके विपरीत देखा जाता है।

चिकित्सा विज्ञानियों द्वारा किये गये परीक्षणों से पता चलता है कि कैल्शियम की अत्यधिक मात्रा इस्तेमाल करने से नाड़ियों की क्रियाशीलता निरन्तर घटती चली जाती है। आलस्य-प्रमाद अपना प्रभाव जमाने लगता है। ऊतकों में इसके जमाव से कैन्सर जैसी प्राणघातक व्याधि की सम्भावना भी बढ़ जाती है और व्यक्ति स्वास्थ्य संकट जैसी स्थिति में फँस जाता है।

यही बात विटामिन 'बी' की गोलियों के साथ देखी जाती है। चिकित्सा-विशेषज्ञों का कहना है कि यदि एक गोली प्रतिदिन लम्बे समय तक ली जाय तो व्यक्ति चर्मरोग का शिकार बन जाता है। पीलिया और आंत्र सम्बन्धी बीमारियों की भी आशंका होने लगती है। यकृत अपनी सामान्य क्रिया को त्याग असामान्य बनता दिखाई पड़ने लगता है। इन असामान्यताओं से रक्त भी अछूता नहीं रहने पाता। उसमें यूरिक अम्ल की मात्रा में वृद्धि होने लगती है, जो दूसरी नई व्यथा को जन्म देती है।

परीक्षणों के दौरान यह पाया गया है कि विटामिन 'डी' को यदि सामान्य मात्रा की तुलना में पाँच गुना अधिक लिया जाय तो प्रयोक्ता की बौद्धिक क्षमता क्षीण पड़ने लगती है और केन्द्रिय तंत्रिका प्रणाली गड़बड़ा जाती है। इसकी अतिशयता की दशा में वयस्क लोगों के गुर्दे और बच्चों के कोमल अन्तरांग प्रभावित होने लगते हैं। वे निष्क्रिय और बीमार पड़ जाते हैं। यदि इसकी मात्रा में १५-२० गुना और वृद्धि कर दी जाय, तो इसका कुप्रभाव सिर-दर्द, मितली तथा दस्त के रूप में प्रत्यक्ष दृष्टिगोचर होने लगता है। इसी प्रकार विटामिन 'ई' का लम्बी अवधि तक प्रयोग करते रहने से रक्त के जमने की प्राकृतिक क्षमता धीरे-धीरे नष्ट हो जाती है। ऐसे व्यक्ति को यदि कभी चोट लग जाय और खून बाहर निकलने लगे तो फिर वह जमने का नाम ही नहीं लेता। इस प्रकार व्यक्ति असामयिक मौत का शिकार होता है।

लेडी इरविन कॉलेज दिल्ली की क्वालिटी टेलरिंग लेबोरेटरी के विशेषज्ञों के मतानुसार यदि एक स्वस्थ व्यक्ति ग्लूकोज का प्रयोग आवश्यकता से अधिक करता है तो मानसिक अवसाद की स्थिति उत्पन्न होने की बराबर संभावना बनी रहती है।

यह उन कृत्रिम तथा अप्राकृतिक रसायनों व गोलियों के प्रभाव-परिणाम हैं, जिन्हें आज उत्तम पोषणदायक पदार्थ माना जाता है और प्रायः प्रत्येक व्यक्ति उनके पीछे आकर्षित होते देखा जाता है। हो भी क्यों नहीं, क्योंकि उनके साथ तत्काल और तुरन्त लाभान्वित होने का जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आकर्षण जुड़ा होता है। भूल यहीं होती है। जिन्हें तत्काल लाभकारी समझा जाता है, उनकी अधिक, अप्राकृत और जल्दी-जल्दी ली गयी मात्रा उल्टा असर दिखाती है। लाभ की जगह उनके दूरगामी परिणाम बुरे रूप में सामने आते हैं। इसकी जगह प्राकृतिक रूप में उनकी उचित मात्रा को आहार में सम्मिलित किया जाय तो आवश्यक विटामिन्स और लवण के रूप में आवश्यक पोषण भी होता रह सकता है और स्वास्थ्य सम्बन्धी खतरे की संभावना भी जाती रहती है।

यहाँ उचित मात्रा से तात्पर्य नहीं कि एक गोली के स्थान पर चौथाई गोली खाई जाय, वरन् यह है कि उन्हें प्राकृतिक संमिश्रणों के साथ यथावत् स्थिति में लिया जाय। इस हेतु जिन पदार्थों में यह पौष्टिक तत्व रहते हैं, उन्हें यथावत् स्थिति में खाद्य रूप में ही लिया जाय, तभी वे उचित मात्रा में होंगे और तभी पच भी सकेंगे।

इसका तात्पर्य यह हुआ कि पोषण के लिये आहार पर निर्भर रहना चाहिये। वे फलों और शाकों में पर्याप्त मात्रा में होते हैं। ऋतु फलों में भी वे तत्व होते हैं, जो अंगूर आदि में पाये जाते हैं। अमरूद, बेर, शहतूत, आम आदि फल कम पोषण प्रदान करने वाले नहीं। शाकों के विटामिन बहुत कोमल होते हैं, इसलिये टमाटर, ककड़ी जैसे शाकों को कच्चा ही लेना चाहिये। जिन्हें उबालना आवश्यक हो, उन्हें प्रेशर कुकर में उबालना चाहिये ताकि पानी में चले जाने वाले भाग को फेंकना न पड़े।

वस्तुतः आहार चिकित्सा ही समुचित पोषण प्रदान करती है। सुपाच्य पदार्थों को समुचित मात्रा में लेते रहा जाय और उन्हें चबा-चबा कर खाया जाय तो वे कहीं अधिक लाभदायक होंगे। रस निकालकर पीने की अपेक्षा यह अच्छा है कि मुँह में ही चबाकर उनका रस भाग पेट में पहुँचाया जाय और छूँछ भाग को गन्ने की तरह उगल दिया जाय।

कुपोषण और उसकी रोकथाम

संयुक्त राष्ट्र खाद्य एवं कृषि संगठन के महा निदेशक एडुअर्ड सौमा ने आँकड़े प्रस्तुत करते हुए बताया है कि इस समय विश्व में ५० करोड़ लोग कुपोषण का शिकार हैं। इससे कम आयु के बच्चों को जहाँ पाँच वर्ष की अल्पायु में ही दम तोड़ देना पड़ता है, वहीं जीवन बचने वालों में से अधिकांश को ऐसी दशा में रहना पड़ता है, जिसमें रोग प्रतिरोधी क्षमता के अभाव में रोगों से लड़ने की क्षमता कम या समाप्त हो जाती है। तीसरी दुनियाँ के नाम से पुकारे जाने वाले पिछड़े देशों में पोषक आहार के अभाव में महिलायें एवं बच्चे सबसे अधिक बीमार पड़ते और काल-कवलित होते हैं। भारत में इन दिनों ५५ प्रतिशत बच्चे कुपोषण ग्रस्त हैं। करोड़ों व्यक्ति प्रोटीन की कमी के कारण असामयिक मृत्यु एवं शारीरिक विकलांगता के शिकार हो जाते हैं।

अपने देश में शहरी एवं ग्रामीण दोनों ही क्षेत्रों में कुपोषण एक गंभीर समस्या बनी हुई है। इसके कारण अनेकानेक बीमारियों की दिन-दिन बढ़ोत्तरी होती जाती है। इन बीमारियों से मनुष्य दुर्बल बना रहता है और रुग्णता के छोटे-बड़े लक्षण उस पर छाये रहते हैं। ऐसे रोगों में प्रमुख हैं—ऐनीमिया, बेरी-बेरी, अंधता, सूखा रोग, स्कर्वी आदि।

पिछले वर्ष भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् के विशेषज्ञों द्वारा किये गये एक अध्ययन में बताया गया है कि अपने देश में कुपोषित व अल्प पोषित महिलाओं एवं बच्चों की संख्या सबसे अधिक है। यह स्तर ग्रामीण अंचलों की अपेक्षा शहरी गंदी बस्तियों में और भी बढ़ा-चढ़ा है। वहाँ ५४ प्रतिशत से भी अधिक परिवारों में कैलोरी उपभोग काफी अपर्याप्त है। इसी तरह का एक अध्ययन राष्ट्रीय पोषण संस्थान द्वारा किया गया है, जिसमें पाया गया है कि देश में ३ वर्ष की उम्र के ६३ प्रतिशत बच्चे एवं ५ वर्ष तक की उम्र के ४५ प्रतिशत बच्चे ऐनीमिया से पीड़ित हैं। ६७ प्रतिशत प्रिस्कूल बच्चे रक्ताल्पता से ग्रस्त हैं, जिसका प्रमुख कारण पोषाहार में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रोटीन, विटामिन जैसे तत्वों का न होना बताया गया है।

कुपोषण और अन्धता का तो जन्मजात सम्बन्ध है। इसके कारण अपने देश में प्रतिवर्ष ४० हजार से अधिक बच्चे अपनी नेत्र ज्योति खो बैठते हैं। विटामिन 'ए' की कमी के कारण प्रतिवर्ष ७४ लाख बच्चे विभिन्न नेत्र रोगों से ग्रस्त पाये जाते हैं। उचित पोषक तत्वों के अभाव में 'बेरीबेरी' एवं 'पैलाग्रा' नामक बीमारियाँ प्रमुख रूप से फैलती हैं। अस्थियों की कोमलता भी कुपोषण द्वारा उत्पन्न हुए अभिशापों में से एक है। ऐसे व्यक्तियों की हड्डियाँ टेढ़ी हो जाती हैं और तनिक-सा आघात लगने पर टूटने लगती हैं। अंग-अवयव अशक्त और कुरूप हो जाते हैं।

सूखा रोग भी इसी प्रकार की बीमारी है। जिस प्रकार बड़ों को क्षय रोग गलाता है, उसी प्रकार छोटे बच्चे सूखा रोग से ग्रसित होकर अस्थि पिंजर मात्र रह जाते हैं और अकाल मृत्यु के ग्रास बनते हैं। इसी तरह 'स्कर्वी' भी कुपोषण जन्य बीमारी है। जो सूखा एवं असंतुलित भोजन करने वालों को आमतौर से होती है। तले-भुने एवं वासी-बुसे भोजन से पेट तो भर जाता है, ताजगी नहीं आती। माँ का दूध जल्दी छुड़ा देने से भी बच्चों में कुपोषण होता है और वे तरह-तरह की बीमारियों से ग्रस्त रहने लगते हैं।

शरीर में रक्त की कमी, त्वचा का पीला और पुलपुला होना, पैरों में जलन-अकड़न भी इसी श्रेणी के रोगों में हैं जो बताते हैं कि आहार में उपयुक्तता का ध्यान नहीं रखा गया। सूर्य की धूप की कमी, हरे शाक-भाजियों और शाक-फलों के छिलके हटा देना भी ऐसी भूल हैं, जिसके कारण कुपोषणजन्य रोग हो सकते हैं। ऐसे रोगों में गलगण्ड भी एक है, जो पानी में आयोडीन की कमी के कारण होता है।

शरीर को स्वस्थ, बलिष्ठ, निरोग, दीर्घजीवी एवं स्फूर्तिवान बनाये रखने के लिये ऐसा आहार चाहिये, जिसमें शरीर की सभी आवश्यकताओं को पूरा कर सकने की क्षमता हो। इस हेतु इस बात पर ध्यान दिया जाना चाहिये कि जो खाया जा रहा है, उसमें आवश्यक पोषक तत्व उपयुक्त मात्रा में हैं या नहीं।

सामान्य अन्न को अंकुरित करके, हरे शाक-भाजियों पर अधिक निर्भर रहकर तथा दालें और मूँगफली जैसी चिकनाई का समुचित मात्रा में प्रयोग करके गरीब लोग भी उस व्यथा से बच सकते हैं, जो कुपोषण के कारण उन्हें सहनी पड़ती हैं। यह अभाव छोटे बच्चे के लिये तो और भी अधिक कष्टकर होता है। वे न केवल दुबले, अविकसित रह जाते हैं, वरन् कई प्रकार की बीमारियों से भी घिर जाते हैं।

कुपोषण खाद्य पदार्थों के अभाव या सस्ता होने से नहीं होता। वस्तुओं को खाने योग्य बनाने, स्वच्छता का ध्यान रखने और उपेक्षा के दुष्परिणामों को ध्यान में रखने से भी वह सतर्कता उत्पन्न हो सकती है, जो कुपोषणजन्य संकटों से छुड़ा सके।

शारीरिक पोषण—सस्ता भी संभव

संतुलित आहार में प्रोटीन का उपयुक्त भाग रहना अति आवश्यक है। निरन्तर हमारी शरीर कोशिकाओं का क्षरण होता रहता है, जिसकी पूर्ति प्रोटीन की उपयुक्त मात्रा से ही होती है। भोजन में इसका सन्तुलन बिगड़ने से शारीरिक वृद्धि रुक जाती है। शरीर सूखने लगता है और रोग प्रतिरोधक क्षमता घट जाती है। अधिक परिश्रम भी नहीं हो पाता है तथा मृत्यु और बुढ़ापे का संदेश जल्दी ही सामने आ उपस्थित होता है। इस दृष्टि से आहार विज्ञान में दालों को "बॉडी बिल्डिंग" शरीर निर्माणकारी उत्तम प्रोटीन, काबोहाइड्रेट, विटामिन तथा खनिज लवणों व अन्य सभी पोषक तत्वों से भरपूर व सर्वोपरि बताया गया है।

भारतीय आहार में व्यवहृत दालों के अन्तर्गत चना, अरहर, मूँग, उड़द, मसूर आदि प्रमुख हैं, जिनको कि अल्प साधनों वाले व्यक्ति भी नियमित रूप से सेवन कर सकते हैं और वे प्रोटीन तथा अन्य पोषक तत्वों की कुपोषणता से बच सकते हैं। आहार विज्ञानियों के विश्लेषणों व अनुसंधानों से यह तथ्य अब बिल्कुल स्पष्ट हो गया है कि माँस की अपेक्षा दालों में प्रोटीन अधिक होता है। आहार विज्ञान के वर्गीकरण के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अनुसार प्रति १०० ग्राम दाल में पाई जाने वाली प्रोटीन की मात्रा—चना की दाल में २०.८ प्रतिशत, मसूर में २५.१ प्रतिशत, मूँग की दाल में २४ प्रतिशत, उड़द की दाल में २४ प्रतिशत, अरहर की दाल में २२.३ प्रतिशत, मूँगफली में २६ प्रतिशत और सोयाबीन में ४३.२ प्रतिशत पाई जाती है। जबकि अण्डों में १३ प्रतिशत, मछली में १६ प्रतिशत तथा माँस में २० प्रतिशत से भी कम प्रोटीन पाया जाता है।

इस प्रकार दालों में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होती है। इसके साथ ही दालें "बी" वर्ग के विटामिनों—विशेषकर थायमीन तथा फॉलिक एसिड की सर्वोत्तम स्रोत होती हैं। इनमें नायसीन भी प्रचुर मात्रा में मौजूद होता है। अंकुरित साबुत दालें—जैसे कि अंकुरित चने और मूँग में 'बी' श्रेणी के प्रायः सभी विटामिन तथा विटामिन 'सी' प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। डाक्टर बहुधा अपने बीमारों को जीवनी शक्ति बढ़ाने के लिए विटामिन 'बी' प्रयोग करने के लिए सलाह देते हैं, जिसका उपयोग रक्त की कमी, अपच, थकान, स्नायु दुर्बलता जैसी कठिनाइयों में आवश्यक मानते हैं। लोग खरीदते भी हैं और खाते भी हैं लेकिन वह लाभ स्थाई रूप से मिलता नहीं है, जो कि स्वाभाविक मात्रा सामान्य खाद्य पदार्थों के माध्यम से पेट में जाकर पचती हैं और रक्त में सम्मिलित होती हैं तभी उसे शरीर अंगीकार करता है। ऊपर की ठूँस-ठाँस को वह स्वीकार ही नहीं करता है और उस बोझ को उतारकर फेंक देता है।

आहार विज्ञानियों के अनुसार दालों में कैल्शियम लौह, लवण तथा फास्फोरस भी अच्छी मात्रा में उपलब्ध होता है। विभिन्न प्रकार के एन्जाइम के स्रोत तो दालें हैं ही । इनके उपयोग के लिए साबुत दालों को रात भर जल में भिगोकर तथा लगभग २४ घण्टे के लिए इन फूली हुई दालों को गीले कपड़े में बाँधकर रखा जाना अनिवार्य होता है। इस प्रक्रिया में फलियों के अन्दर मौजूद "एन्जाइम" सक्रिय होकर दालों की पोषक मात्रा में बढ़ोत्तरी ला देते हैं। अंकुरण प्रक्रिया में फाइटेट तथा टैनन जैसे—कुपोषण कारक व शर्करायें विघटित हो जाती हैं तथा अंकुरित दालों में पेट में गैस उत्पन्न करने वाला प्रभाव नष्ट हो जाता है।

आहारशास्त्रियों ने सुविधा की दृष्टि से प्रोटीन को दो वर्गों में रखा है— पूर्ण और अपूर्ण प्रोटीन। पूर्ण प्रोटीन दूध, पनीर, मूँगफली आदि में प्रचुर मात्रा में उलब्ध होती है और अपूर्ण प्रोटीन गेहूँ, मटर, जौ, सेम आदि में पाई जाती है, जो जीवन तो बनाये रखती हैं, पर उसमें वृद्धि की गुंजायश नहीं। यदि इनके साथ प्रोटीन युक्त पदार्थों को और मिला लिया जाय तो आहार में सामंजस्य बिठाया जा सकता है।

साधारणतया अपने देश की गरीब जनता को आहार में प्रोटीन, विटामिन ए, रिबोफ्लैविन, कैल्सियम जैसे पोषक पदार्थ प्रचुर मात्रा में उलब्ध नहीं हो पाते। कैलोरी की आवश्यक मात्रा को भी वे ग्रहण करने में बहुत पीछे हैं। प्रोटीन की अभावग्रस्तता केवल चिकनाई और कार्बोहाइड्रेट ही पूरी नहीं करती। ऐसी स्थिति में यह नहीं मान लेना चाहिए कि भोजन में कैलोरी और प्रोटीन की मात्रा कम है। इसका रहस्य तो भोजन पकाने की उस कला में सन्निहित है जिसमें उपलब्ध खाद्य पदार्थों को सही ढंग से पकाकर उनका सदुपयोग किया जाता है। दूध, दही न मिले तो चिन्तित होने जैसी बात नहीं। फल और हरी सब्जियों से भी यह शक्ति अर्जित की जा सकती है।

भोजन में कैलोरी की न्यूनता को पूरा करने के लिए मूँगफली, सोयाबीन एवं जड़ या कंद वाली सब्जियों का सेवन करना अत्यधिक लाभप्रद पाया गया है। गाजर को पोषण विज्ञानियों ने सर्वाधिक उपयोगी बताया है। दाल की अपेक्षा मूँगफली अधिक महँगी पड़ती है, फलस्वरूप जन सामान्य इसे अपने आहार में बहुत कम सम्मिलित रखते हैं। लेकिन यह एक बहुत बड़ी भूल है। एक-दो रुपये की दाल से १३८० कैलोरी ८६ ग्राम प्रोटीन की मात्रा प्राप्त होती है, जबकि उतने ही पैसों से यदि मूँगफली खरीद ली जाय तो २७५० कैलोरी तथा प्रोटीन की मात्रा दुगुनी प्राप्त हो जायेगी। सोयाबीन तो और भी अधिक सस्ती पड़ती है और प्रोटीन एवं पोषक शक्ति की दृष्टि से सर्वाधिक मात्रा वाली होती है। कन्द एवं जड़ों वाली सब्जियों को हरी पत्तियों वाली साग-भाजियों की तरह ही प्रयुक्त करते रहा जाय तो स्वास्थ्य संवर्धन का उद्देश्य पूरा होता रह सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रोटीन की कमी कैसे पूरी हो ? यह प्रश्न प्रायः लोगों के मन-मस्तिष्क में निरन्तर खटकता रहता है। नवीनतम शोध अनुसंधानों के आधार पर आहार विज्ञानियों ने इस संदर्भ में निष्कर्ष निकाला है कि प्रोटीन की मात्रा में अभिवृद्धि करनी है तो कम और अधिक "लाइसीन" वाले दो पदार्थों के सम्मिश्रण से यह उद्देश्य पूरा किया जा सकता है। सोयाबीन की दाल और अनाज को परस्पर मात्रा में मिला देने से प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा शरीर को मिल जाती है। इसी तरह यदि कोई भी व्यक्ति ५० ग्राम हरी पत्ती वाली सब्जियों का इस्तेमाल भोजन में रोजाना करता रहे, तो उसे विटामिनों की कमी नहीं रह सकती। छोटी आयु के बच्चों के लिए तो इसकी ३० ग्राम मात्रा ही पर्याप्त है। इसमें दालों का सम्मिश्रण कर देने से सभी के लिए पर्याप्त पोषक तत्व मिल सकते हैं।

शारीरिक पोषण के लिए प्रोटीन बहुत आवश्यक है। वैसे यह दूध, पनीर आदि में अधिक मात्रा में उपलब्ध होती है, किन्तु उसे हम सस्ते दामों में पाई जाने वाली वस्तुओं से भी प्राप्त कर सकते हैं जैसे—सोयाबीन, गेहूँ, फलियों तथा मूँगफली। बहुत-सी सब्जियों द्वारा भी प्रोटीन प्राप्त की जा सकती है। सब्जियों को अधिक मसालों में बिना भूने स्वादिष्ट ढंग से तैयार करके चावल, दाल, बेसन तथा आटे का प्रयोग किया जाय तो शरीर को वे सभी प्रोटीन मिल सकेंगे जिनकी हमारे शरीर को आवश्यकता है। हरी सब्जियों एवं सोयाबीन में प्रोटीन प्रचुर मात्रा में पाई जाती है, इसीलिए शाकाहारी व्यक्तियों को डाक्टर सोयाबीन खाने का परामर्श दिया करते हैं।

कुपोषण की समस्या—आहार विधि से समाधान

समझा जाता है कि कुपोषण की बीमारियाँ तथा स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्यायें पर्याप्त पोषक आहार न मिलने के कारण उत्पन्न होती हैं। शरीरशास्त्रियों द्वारा निर्देशित सन्तुलित आहार की तालिका के अनुसार यदि भोजन की व्यवस्था की जाए तो वह इतनी महँगी होती है कि थोड़े ही लोगों को सन्तुलित भोजन उपलब्ध हो पाता है। और फिर जिन लोगों को सन्तुलित भोजन सुलभ होता है, वे भी पूरी तरह स्वस्थ कहाँ रहते हैं ? गरीब लोगों को छोटी बीमारियाँ और कमजोरी जैसी शिकायतें पैदा होती हैं तो उन्हें राज-रोग होते हैं। अपने आसपास दृष्टि दौड़ाकर यह भलीभाँति समझा जा सकता है कि स्वास्थ्य और रोग सम्पन्नता या निर्धनता से जरा भी सम्बन्धित नहीं है। सम्पन्न लोग बीमार पड़ते हैं, जिन्हें सब प्रकार की सुख-सुविधाओं सहित पौष्टिक भोजन सुलभ होता है और गरीब लोग भी स्वस्थ रहते हैं, जिन्हें कम पौष्टिक और रूखा-सूखा खाने को मिलता है।

यहाँ आहार की पौष्टिकता का महत्व कम नहीं किया जा रहा है न ही कुपोषण की समस्या को कम कर आँका जा रहा है। कुपोषण अपने आप में एक जटिल समस्या है। लेकिन प्रश्न यह है कि पोषक आहार उपलब्ध रहते हुए भी लोग बीमार क्यों रहते हैं ? वैसे तो पौष्टिक भोजन प्राप्त कर सकने की स्थिति में सभी नहीं रहते। उससे भी बड़ी कठिनाई यह है कि जो कुछ उपलब्ध होता है, उसे भी ठीक तरह खाने-पकाने की विधि से जनसाधारण अपरिचित ही है। क्या गरीब और क्या अमीर, सभी कोई भोजन को ठीक ढंग से न पकाने के कारण आहार में जो पोषक तत्व रहते हैं उन्हें जला-भुनाकर नष्ट कर देते हैं। स्वाद के कारण हो या अज्ञानवश, पकाने की दोषपूर्ण पद्धति अपनाने से आहार का पोषक तत्व या तो निकल जाता है अथवा नष्ट हो जाता है और हाथ आता है केवल उसका सारहीन-तत्वहीन अंश।

खाने-पकाने की यह दोषपूर्ण पद्धति, इसके प्रचलन का जो भी कारण हो इतनी महँगी पड़ती है कि उससे भोजन का महत्व जीभ के स्वाद तक ही सीमित रह जाता है और उसका उद्देश्य ही समाप्त हो जाता है। पिछले दिनों हाइजीन इन्स्टीट्यूट के अध्यक्ष डॉ. के. गाविल ने कुपोषण की समस्या पर आयोजित एक विचारगोष्ठी में बताया कि अपने देश में शाक और फलों का कम उत्पादन होना तथा उन्हें कम महत्व दिये जाने के कारण पर्याप्त पौष्टिक आहार लोगों को उपलब्ध नहीं हो पाता है, जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ शाक-सब्जियाँ और मौसमी फल आदि उपयोग में लाये जाते हैं, उन्हें खाने योग्य बनाने की विधियाँ भी इतनी दोषपूर्ण हैं कि हम उपलब्ध का भी सही ढंग से उपयोग नहीं कर पाते।

शरीरशास्त्रियों के अनुसार स्वास्थ्य संरक्षण के लिए जिन रसायनों की आवश्यकता पड़ती है, उनमें कैलशियम, फास्फोरस, लौह, पोटाश आदि तत्व हैं, जो प्राकृतिक रूप से फलों और शाकों में पाये जाते हैं। औषध रूप में इन्हें लिया जाय तो वे रक्त में इस तरह घुल नहीं पाते जैसे कि फलों एवं शाकों के द्वारा ग्रहण करने पर शरीर में घुलते हैं और उसके अंग बन जाते हैं। आँवला, टमाटर, मौसमी जैसे फलों में विटामिन सी की समुचित मात्रा रहती है। गाजर, चुकन्दर, बन्दगोभी जैसे सामान्य एवं सस्ते शाकों में विटामिन 'ए' की पूर्ति सहज ही हो जाती है। सस्ता पड़ने वाला और कहीं भी उगाया जा सकने वाला केला तक विटामिन ए, बी, सी, डी और ई से भरपूर होता है।

संसार के अन्य देशों की अपेक्षा अपने देश में फल और शाकों की भारी कमी है। कुछ फल महँगे पड़ते हैं तो उनके स्थान पर सस्ते फल अपनाकर काम चलाया जा सकता है। अमरूद, आम, बेर, जामुन आदि फल अपनी ऋतुओं पर प्रायः सस्ते ही पड़ते हैं। खरबूजा, तरबूजा, ककड़ी, खीरा आदि बेलों पर लगने वाले फल भी आर्थिक दृष्टि से कमजोर व्यक्तियों के लिए महँगे फलों की आवश्यकता पूरी करते हैं। गाजर, टमाटर, मूली, भिण्डी आदि शाक ऐसे हैं, जिन्हें कच्चा ही खाया जा सकता है। नीबू और आँवला भी अपने मौसम के समय अधिक महँगे नहीं पड़ते परन्तु उपयोगिता की दृष्टि से उनकी गिनती किसी कीमती फलों से कम नहीं की जा सकती।

किन्तु जैसा कि कहा जा चुका है, शाक-तरकारियों के रूप में अपने देश में जो कुछ उपलब्ध होता है और जिनका प्रयोग किया जाता है, उन्हें पकाने का ढंग ऐसा है कि उससे शाक-भाजियों का पोषक तत्व ही नष्ट हो जाता है। शाक-भाजियों में आमतौर पर बहुत भूल हो जाती है। यह नहीं सोचा जाता कि अधिक जलाने-भूनने से उनके पोषक तत्व ही नष्ट हो जायेंगे और फिर उस निर्जीव, निःसत्व भोजन से पेट भरने के अतिरिक्त और कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता।

शाक-तरकारियों को पकाने में यदि समुचित सावधानी बरती जाए तो उनकी उपयोगिता अक्षुण्ण बनी रह सकती है। इसके लिये ताजी अच्छी तरकारियाँ ही छाँटी जानी चाहिए। सस्तेपन के लोभ में सड़ी-गली और बासी-कूसी नहीं खरीदी जानी चाहिये कि अब तो वे खरीद ही गई हैं, इसलिये उन्हें पेट में डाल ही लेना चाहिये। खराब चीजें खरीदने से पैसा चला गया तो पैसा खर्च होने का दर्द कम करने के लिए स्वास्थ्य गँवा देने का खतरा मोल लेना कोई बुद्धिमत्ता नहीं है।

शाक-तरकारियों को पकाने के लिए चढ़ाने से पूर्व उन्हें अच्छी तरह धोकर साफ कर लेना भी आवश्यक है ताकि उनके ऊपर चिपकी हुई गन्दगी से ठीक तरह छुटकारा पाया जा सके। इसके बाद उन्हें इतना ही पकाया जाना चाहिए जितने से वे खाने योग्य थोड़ी मुलायम हो सकें, घुल जाने के लिए उन्हें देर तक पकाते रहने से उनका पोषक-तत्व ही नष्ट हो जाता है।

जहाँ तक सम्भव हो शाक-तरकारियों और दाल, दलिया आदि को पानी में उबालने की अपेक्षा भाप से उबालना चाहिये। तेज आग की अपेक्षा मन्दी आग का उपयोग करना उनके पोषक तत्वों की सुरक्षा के लिए अधिक उपयोगी है। जब पानी खौलने लगे तब उसमें सब्जियाँ डालिए। आरम्भ में ही डाल देने पर उनका देर तक अग्नि संस्कार हो जाने से वे अपना गुण खो बैठती हैं। प्रेशर कुकर या कोयले से प्रयुक्त होने वाले भाप कुकर, सब्जियाँ पकाने की दृष्टि से सर्वोत्तम हैं। पकाते समय पानी उतना ही डालना चाहिए कि बाद में उसे निकालकर फेंकना न पड़े। इस पानी में सब्जियों का बहुत-सा सार तत्व रहता है। फेंकने की अपेक्षा तो उसे सूप बनाकर भी लेना अच्छा है।

यथासम्भव छिलके समेत सब्जियाँ पकाना चाहिए। छिलके उन्हीं शाक-फलों के निकालना चाहिए जो बहुत कड़े हों और खाने में खराब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगते हैं। इसी प्रकार फलों को भी यथासम्भव छिलके समेत ही उपयोग में लाना चाहिये।

कढ़ाई का उपयोग सबसे अधिक हानिकारक है। पेंदा ही काला नहीं रहता अपितु वह, हर खाद्य पदार्थ का प्राकृतिक सौन्दर्य नष्ट करके उसे भी काला-कलूटा, कलुषित और कुपाच्य बना देती है। तलने और भूनने के बराबर खाद्य पदार्थों के साथ दूसरा कोई अत्याचार नहीं है, जो किया जाता हो। पूड़ी-पकवान, मिठाई तथा तले-भुने शाक आदि सभी उसी में पकते हैं और कहना नहीं होगा कि इस तरह का गरिष्ठ भोजन पेट पर अतिरिक्त भार तो डालता ही है, उसकी सुन्दरता को भी नष्ट कर देता है। इन तले-भुने पदार्थों से जीभ का स्वाद थोड़ी-सी देर के लिए भले ही पूरा हो जाता हो पर इससे धन तथा समय की जो बर्बादी होती है, पेट की तबाही और स्वास्थ्य की गड़बड़ी जिस प्रकार उत्पन्न होती है, उन्हें किसी दृष्टि से लाभप्रद नहीं कहा जा सकता। स्वास्थ्य पर उनका हानिप्रद प्रभाव ही पड़ता है। इन हानियों के साधन जुटाना ही जिसका काम है, उस कढ़ाई को कलमुँही कहा गया है, तो वह उचित ही है। उसे चौके से जितना दूर रखा जा सके उतना ही अच्छा है।

फसल के समय पर कच्चे अनाज मिलते हैं। वे सूखे और पिसे अनाज की तुलना में कहीं अधिक पोषक होते हैं। मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूँ, मटर आदि थोड़ा-सा भून लेने पर वे और भी अधिक पौष्टिक हो जाते हैं। वैसे उन्हें कच्चे भी खाया जा सकता है। सूखे अनाजों को पानी में भिगोकर अंकुरित किया जा सकता है तथा उन्हें कच्चा या उबालकर खाया जा सकता है। सूखे बीजों में जीवन तत्व बहुत स्वल्प मात्रा में होता है, उन्हें अंकुरित करने पर पोषक तत्व कई गुना बढ़ जाते हैं। उनमें ऐसे रासायनिक परिवर्तन हो जाते हैं, जिनसे पाचन अधिक सरल हो जाए। अंकुरित बीजों के अणु अमीनो एसिड के रूप में बदल जाते हैं और उनकी पौष्टिकता तथा पाचन क्षमता में पर्याप्त वृद्धि हो जाती है। अंकुरित बीज फल, सब्जी और माँसाहार की तुलना में कई गुना श्रेष्ठ हैं और बहुत अधिक पोषण प्रदान करते हैं। गेहूँ, जौ, सोयाबीन, मूँग, मसूर, चना, मटर, मूँगफली जैसे बीजों को इनके प्राकृतिक रूप में ही खाया जाए तो वे साधारण आटे या दाल के रूप में खाने की अपेक्षा अधिक गुणकारी सिद्ध होते हैं।

बिना पकाये हुए अनाजों के प्रयोग में गेहूँ की घाट बनाकर खाने की एक नई कड़ी और जुड़ी हुई है और उस विधि को प्रयोगकर्ताओं तथा उपयोग करने वालों ने अतीव उपयोगी बताया है। अमेरिका की एक महिला डॉक्टर एन. विरामोर ने अपनी पुस्तक 'व्हीटग्रास मैनुअल' में इसके प्रयोगों और अनुभवों का सविस्तार वर्णन लिखते हुए यह भी बताया है कि किस प्रकार गेहूँ की घास का उपयोग विभिन्न रोगों की चिकित्सा में उपयोगी और प्रभावकारी सिद्ध होता है। उन्होंने गेहूँ की "हरित रक्त" की संज्ञा देते हुए यह बताया है कि यह रस मनुष्य के रक्त से ४० प्रतिशत मिलता-जुलता है।

डॉ. विरामोर का कथन है कि स्वस्थ्य व्यक्ति यदि इसका सेवन करें तो उनके शरीर में जीवनी शक्ति प्रखर होती है और रोगियों में शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता आश्चर्यजनक रीति से बढ़ती है। इससे पोषण के लिए उपयुक्त इतने अधिक बहुमूल्य तत्व उपलब्ध होते हैं, जितने कि अच्छी से अच्छी खुराक से भी प्राप्त नहीं हो सकते। इसे किसी भी रोग में दवा के रूप में दिया जा सकता है और कोई भी उसे श्रेष्ठतम टॉनिक के रूप में सेवन कर सकता है।

गेहूँ की घास से हरित रक्त बनाने की विधि बहुत सरल है। कुछ टोकरे या रद्दी पेटियों में खाद मिली मिट्टी भर दी जाती है। इनकी संख्या दस-बारह होनी चाहिये। प्रत्येक टोकरी में बारी-बारी से गेहूँ के अच्छे बीज बो दिए जाते हैं। उन्हें छाया में रख दिया जाता है और पानी दिया जाता रहता है। तीन-चार दिन में ही ये बीज उग आते हैं और आठ-दस दिन में करीब सात-आठ इन्च ऊँचे हो जाते हैं, इस प्रकार दस-बारह दिन में पहले बोये बीजों से उगे तीस-चालीस पौधे उखाड़कर उनकी जड़ें काटकर हटा दीजिए। अंकुरों को धोकर थोड़े पानी के साथ मिला सिल पर पीसकर कपड़े में छान लीजिए। इस प्रकार जो पेय तैयार होता है उसे एक गिलास प्रतिदिन पीने से सम्पूर्ण पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी हो जाती है। दूसरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिन बोये अंकुर के लिए जाना चाहिए और जिस टोकरे में से उन्हें उखाड़ा जाए, उसमें दुबारा बोने का क्रम नियमित रूप से जारी रखना चाहिए। इस प्रकार सिलसिला टूटने नहीं पाएगा और प्रतिदिन गेहूँ की घास मिलती रहेगी।

इस गेहूँ घास के चमत्कारी सत्परिणामों का सविस्तार उल्लेख करते हुए डॉ. विरामोर ने एक और प्रयोग लिखा है, जो गेहूँ घास के बराबर तो नहीं फिर भी बहुत कुछ लाभदायक है। वह विधि यह है कि आधा कप धुले और बिने हुए गेहूँ किसी काँच या चीनी के बर्तन में डालिए और उन पर दो कप पानी डालकर ढक दीजिये, बारह घण्टे तक इन्हें भिगोये रखने के बाद गेहूँ को मसलकर अलग कीजिए और पानी को छानकर पीजिए। यह पानी भी बहुत गुणकारी है। भीगे हुए गेहूँ दलिये आदि के काम में लाये जा सकते हैं।

इस प्रकार खाद्य पदार्थों को यथासम्भव उनके प्राकृतिक रूप में लिया जाए। उन्हें कम से कम भूना या पकाया जाए और उनके उपयोगी अंश को नष्ट न किया जाए। इतनी साधारण-सी सावधानी बरतने पर गरीबी जैसा उपलब्ध आहार भी अपनी पोषक विशेषता बनाये रह सकता है।

अंकुरित आहार लें, ओजस बढ़ायें

अंकुरित अन्नों को जीवंत आहार की संज्ञा दी गयी है। भुने हुए बीज खेत में बोने पर न तो वे उगते हैं और न पौधों के रूप में विकसित होते हैं वरन् जमीन में पड़े-पड़े सड़ जाते हैं। लगभग यही स्थिति आग पर पकाये जाने वाले खाद्यान्न की होती है। इस तरह के खाद्य पदार्थ निष्प्राण एवं सत्वहीन बनकर रह जाते हैं। आवश्यक शक्ति अर्जित करने के लिये अंकुरित अनाजों को आहार रूप में ग्रहण करने की कला ऐसी है, जिसका हमारे जीवन, काया और स्वास्थ्य से गहरा सम्बन्ध है। इससे जीवनी शक्ति का अभिवर्धन करने वाले अनिवार्य पोषक तत्व प्रचुर परिमाण में शरीर को तो मिलते ही हैं साथ ही अधिक खाने और पेट पर अनावश्यक बोझ लाद देने की व्यथा से भी हम बच जाते हैं। आरोग्य की दृष्टि से अंकुरित आहार उत्तम होने के साथ ही श्रम, समय, ईंधन और पैसे की बचत भी करता है।

आहार विज्ञानियों का कहना है कि सूखे अन्नों, दलहनों और तिलहनों में केवल पृथ्वी तत्व की बहुलता होती है। अंकुरित हो जाने पर प्रकृति उन पर अपने विशिष्ट अनुदार बरसाने लगती है और पृथ्वी तत्व के साथ-साथ उनमें जल, वायु, सूर्य और प्रकाश तत्व भी परिपूर्ण मात्रा में भर जाते हैं। इसके अतिरिक्त प्रकृति अपनी कला और रचना द्वारा उन बीजों को अतिरिक्त प्रोटीन, विटामिन, चिकनाई एवं खनिज लवण जैसे जीवन तत्वों से भी लबालब भर देती है। अंकुरण के उपरान्त अब वह मात्र अनाज नहीं रह जाते वरन् अन्न, फल, शाक-सब्जी तीनों की भूमिका एक साथ निभाने लगते हैं। अंकुरित आहार सस्ता भी पड़ता है और पाचन एवं स्वास्थ्य सम्वर्धन की दृष्टि से औषधि का भी काम करता है अतः जहाँ तक हो सके, खाद्यान्नों को उनके प्राकृतिक रूप में ही ग्रहण किया जाय। इसके लिये उन्हें पानी में भिगोकर नरम बना लेने भर से काम चल जाता है।

अंकुरित अन्न-धान्यों को पूर्ण आहार के रूप में लेने पर प्रायः आशंका किसी के मन में उठ सकती है कि कच्चा अन्न सभी के लिये उपयुक्त नहीं पड़ता। उसे खाने पर पेट खराब हो सकता है, पाचन क्रिया गड़बड़ा सकती है और फिर वह स्वादिष्ट भी तो नहीं होता। वैकल्पिक आहार पर अनुसंधान कर रहे वैज्ञानिकों ने इस संदर्भ में गहन खोजें की हैं और पाया है कि जब अंकुरित गेहूँ, चना एवं सेम के बीजों के सेवन से विभिन्न प्रकार उदर विकार दूर हो सकते हैं तो कोई कारण नहीं कि जिनका पाचन तंत्र सबल एवं स्वस्थ है, उन्हें यह लाभकारी सिद्ध न हों। उनका कहना है कि अंकुरित हो जाने के पश्चात् बीजों के रेशे, छिलके तथा तंतु हमारी आँतों का परिशोधन करते हैं। सरल घटकों में टूट जाने के कारण उन्हें आत्मसात करने में पाचन अंगों को भी कम शक्ति खर्च करनी पड़ती है। चूँकि इन बीजों को देर तक पचाना पड़ता है, अतः पेट में पहुँचने से पूर्व मुँह में लार के साथ मिले हुए रसायनों के कारण उनका अधिकांश भाग वहीं पच जाता है। आँतों में पहुँचने पर उनका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाचन-परिवर्त्तन जल्दी होता है, जिससे रक्त निर्माण की प्रक्रिया में तीव्रता आती है। जीवन्त आहार की थोड़ी-सी मात्रा से ही पेट भर जाता है। तले-भुने एवं पके हुए निष्क्रिय भोजन अधिक मात्रा में खाते रहने के कारण आये दिन दवा भक्षण की आवश्यकता पड़ती रहती है, उससे भी छुटकारा मिल जाता है।

अंकुरित पदार्थों का सेवन आर्थिक दृष्टि से बहुत सस्ता पड़ता है। प्रायः एक रुपये की लागत में ही एक व्यक्ति का दिनभर का आहार जुट जाता है। आहार विशेषज्ञों ने दस व्यक्तियों के लिए संतुलित अंकुरित अन्नों की एक आहार तालिका प्रस्तुत की है। उसके अनुसार गेहूँ २०० ग्राम, चना, मूँग ज्वार या बाजरा एवं मूँगफली में से प्रत्येक १००-१०० ग्राम मात्रा में लेकर सबको सम्मिलित रूप में साफ पानी में १२ घण्टे तक भिगोकर रखने के उपरान्त १२ घण्टे तक किसी मोटे कपड़े में लपेटकर रख देना चाहिये। अधिक जीवन्त बनाने के लिये इसे किसी खिड़की के पास लटकाकर रखा जा सकता है, जहाँ से हलकी धूप और रोशनी आ रही हो। कपड़ा सूखने न पाये, इसका सदा ध्यान रखना पड़ता है और तब ३६ घण्टे में बढ़िया अंकुर निकल आते हैं। ऋतु प्रभाव के कारण बीजों के अंकुरित होने में कम-ज्यादा समय लग सकता है। सोयाबीन के दाने अवश्य देर से उगते हैं, अतः उन्हें अलग से अंकुरित करना ही अच्छा रहता है। इसे मूँगफली के विकल्प के रूप में प्रयुक्त किया जा सकता है।

अंकुरित अन्नों को स्वादिष्ट एवं रुचिकर भी बनाया जा सकता है। प्लेटों पर निकालकर उसमें टमाटर, मूली, गाजर, खीरा, ककड़ी, सलाद पत्ती, लेटूस, धनिया, अदरक, पुदीना आदि को बारीक काटकर मिलाया जा सकता है। भुना हुआ जीरा एवं हल्का नमक आवश्यकतानुसार ऊपर से छिड़क देने पर जायकेदार बन जाता है। मीठा एवं स्वादिष्ट बनाने के लिये गुड़, पिण्ड खजूर, नारियल, नीबू, अंगूर, इलायची आदि डाल देने पर पुष्टिकारक व्यंजन तैयार हो जाता है।

भारतीय पोषणविदों ने अंकुरित अन्नों की पोषण क्षमता पर गंभीरतापूर्वक अनुसंधान किया है और पाया है कि इस तरह के खाद्यान्न पौष्टिकता की दृष्टि से मनुष्य के लिये सर्वोत्तम आहार हैं। प्रयोग परीक्षणों द्वारा पाया गया है कि अनाज एवं दालों को अंकुरित करने पर उनमें सन्निहित प्राकृतिक शक्तियाँ सक्रिय हो उठती हैं और उनकी पोषण क्षमता में अभिवृद्धि करती हैं। उनसे प्रस्फुटित नयी कोपलें अतिरिक्त विटिामिनों एवं खनिज तत्वों से भर जाती हैं। इससे विटामिन 'सी' दस गुनी तथा थायमिन, रिबोफ्लेविन और निकोटनिक ऐसिड दुगुनी हो जाती है। अंकुरण से दालों में कुछ हानिकारक तत्वों का विघटन हो जाता है और साथ ही लौह तत्व अपने रासायनिक यौगिकों से अलग होकर अधिक मात्रा में शरीर को मिलने लगता है। इतना ही नहीं, अंकुरण से बीजों में भी भारी परिवर्तन होता है। इस अवस्था में दालों की ऊपरी परत फट जाती है और काफी नरम पड़ जाती है, जिससे कम समय में ही वे आसानी से खाने योग्य बन जाती हैं। कार्बोहाइड्रेट एवं प्रोटीन से सम्बन्धित कोशिकाओं के विघटित हो जाने से उन्हें पचाने में आँतों को विशेष सुविधा रहती है। मैथी एवं सोयाबीन जैसे बीजों को अंकुरित कर लेने पर उनकी गुणात्मकता तो बढ़ती ही है, साथ में उनका तीखापन या कसैलापन भी कम हो जाता है।

एप्लाइड न्यूट्रीशन पर अनुसंधानरत वैज्ञानिकों का कहना है कि ज्वार, बाजरा, गेहूँ, जैसे अन्न तथा चना, मटर, मूँग की दालों एवं मैथी, तिल, मूँगफली आदि तिलहनों को अंकुरित अवस्था में ग्रहण करने पर पौष्टिक मान बढ़े होने के कारण सामान्य आहार की तुलना में ये अधिक लाभदायक सिद्ध होते हैं। शिशु आहार के रूप में अंकुरित महुवे को बहुत उपयोगी पाया है। इसी तरह सेम एवं ब्रूसेल जैसी सब्जियों के अंकुरित दानों में कैल्शियम, फास्फोरस, आयरन तथा विटामिन 'ए' प्रचुर परिमाण में मिलने के कारण उनकी उपयोगिता अब आहार चिकित्सकों में महत्वपूर्ण बन गयी है। इन्सुलिन जैसे रसायन इन बीजों के अंकुरों में अपनी प्राकृतिक अवस्था में पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। फलतः डायबिटीज के रोगियों के उपचार में औषधि का काम भी इनसे लिया जा रहा है। अंकुरों को पीसकर उनका रस निकाल लेने और प्रतिदिन पर्याप्त मात्रा में पीने से सन्तोषजनक परिणाम निकलता है। इस तरह अंकुरित आहार स्वास्थ्य एवं अभिवर्धन के साथ-साथ शक्ति तथा ओजस् तेजस् की वृद्धि का अतिरिक्त लाभ प्रस्तुत करता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपयुक्त आहार-जीवन्त आहार

आयुर्वेद ग्रन्थों में वर्णित है कि प्राचीनकाल के ऋषि-मनीषियों का आहार प्रायः कन्द-मूल, फल या कच्चा अन्न हुआ करता था, उसे ग्रहण करके वे पूर्ण स्वस्थ, दीर्घजीवी एवं ओजस्वी, तेजस्वी बने रहते थे। ईसाई धर्मग्रन्थ बाइबिल में भी इसी तरह उल्लेख मिलता है कि अनाजों को उनके प्राकृतिक रूप में रखकर लोग सौ वर्ष की आयु पा लेते थे। आज भी कच्चा आहार उतना ही उपयोगी हो सकता है, जितना कि पहले कभी था। आहार-विहार में परिवर्तन करके न केवल लम्बी अवधि तक शारीरिक मानसिक स्वास्थ्य को अक्षुण्ण बनाये रखा जा सकता है, वरन् जीवन्त अन्न-धान्यों, फलों, सब्जियों का उपयोग करके कायाकल्प जैसा नवजीवन प्राप्त किया जा सकता है।

जीवंत आहार की प्रमुख विशिष्टता यह है कि शारीरिक परिपुष्टता एवं मानसिक विकास के लिए जिन आवश्यक पोषक तत्वों, एन्जाइमों, विटामिनों आदि की आवश्यकता पड़ती है, वह इसमें प्रचुरता से विद्यमान रहते हैं। आग पर पकाये जाने पर इनमें से अधिकांश पाचक तत्व नष्ट हो जाते हैं। परिणामस्वरूप अच्छी तरह न तो उनका पाचन हो पाता है और न रक्त में विलय ही। कच्चे आहार से स्वस्थ आँतें अपने अंदर स्थित बैक्टीरियल फ्लोरा के साथ उक्त सत्वों के माध्यम से लगभग एक हजार एन्जाइमों एवं विभिन्न विटामिनों को प्राप्त कर लेती हैं। प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञानियों के अनुसार कच्चे आहार की तुलना में पका हुआ भोजन स्वादिष्ट तो होता है, पर उच्च तापमान के कारण उसमें सन्निहित प्रोटीन एवं शर्करा दुष्पाच्य बन जाती है। खनिज लवण, एन्जाइम तथा विटामिन पूर्णतः नष्ट हो जाते हैं तो चिकनाई एवं कार्बोहाइड्रेट अधिक ताप के कारण विघटित होकर विष का काम करने लगते हैं। यही कारण है कि पौष्टिक पकवान लेते रहने पर भी पेट खराब रहता है। उसकी पूर्ति के लिए कृत्रिम विटामिनों, खनिजों का सहारा लेना पड़ता है। कच्चे एवं अंकुरित अनाजों को आहार में सम्मिलित कर लेने पर इस व्यथा से सरलतापूर्वक छुटकारा पाया जा सकता है।

सुप्रसिद्ध चिकित्साविज्ञानी डा. राल्फबर्चर ने नैसर्गिक जीवंत आहार एवं अंकुरित अन्नों की उपादेयता पर गंभीर खोजें की हैं और पाया है कि इनमें एक विशिष्ट प्रकार की पोषक क्षमता विद्यमान होती है। उनके अनुसार अंकुरित अन्नों को खाने से हमें छः प्रकार के औषधीय तत्व प्राप्त होते हैं, जो रोगकारक विषाणुओं को नष्ट करने के साथ ही जीवनीशक्ति का भी अभिवर्धन करते हैं। इसके ६२ प्रतिशत तत्वों को आँतें अवशोषित कर उसे रक्त, माँस, मज्जा आदि के निर्माण योग्य बना देती हैं, जबकि पके हुए आहार का मात्र ३५ प्रतिशत भाग ही जीवनीशक्ति बढ़ाने वाली प्रक्रिया में प्रयुक्त हो पाता है। अंकुरित अन्नों एवं हरी सब्जियों में पाये जाने वाले तत्व शारीरिक कोशिकाओं एवं तन्तुओं के खनिजीय और रासायनिक सन्तुलन को स्थिरता प्रदान करते हैं। फलतः असंतुलन जन्य बीमारियों का शमन स्वमेव हो जाता है। इससे न केवल मानसिक तनाव दूर होता है, वरन् कैल्सियम, पोटेशियम, सोडियम, मैग्नीशियम जैसे तत्वों की समुचित उपलब्धता के कारण हृदय की कार्यक्षमता भी बढ़ जाती है। उसके स्नायुतंत्र सशक्त एवं सक्रिय बने रहते हैं।

मनुष्य प्रकृतितः शाकाहारी है। पहले वह अपना आहार नैसर्गिक रूप में ही ग्रहण करता था। पकाकर खाना तो उसे सभ्यता के विकास के साथ सीखा है। यही कारण है कि आँतें पके हुए आहार की अभ्यस्त बन गई हैं। किन्तु इससे पर्याप्त पोषक तत्व न मिलने के कारण हममें से अधिकांश को समय से पूर्व जरा-जीर्णता के साथ ही अनेकानेक बीमारियों का भी शिकार बनना पड़ रहा है। प्रख्यात आहारविद् हेन्स एण्डरसन के कथानुसार यदि इस भूल को सुधारकर प्राकृतिक आहार की तरफ लौटा जा सके तो कोई कारण नहीं कि स्वस्थ एवं दीर्घ जीवन का लाभ न उठाया जा सके। अनुसंधानपूर्ण अपनी कृति—"द न्यू फूड थेरेपी" में उनने कहा है कि वैज्ञानिक खोजों एवं परीक्षणों द्वारा जब यह सिद्ध हो गया है कि कच्चे अन्न, फल एवं सब्जियाँ सूर्य किरणों की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति को अवशोषित कर अपने बीज कोषों में अवधारित कर लेती हैं। प्राकृतिक रूप में इन्हें खाने पर, उस ऊर्जा भण्डार को हमारी आंत्र कोशिकाएँ पीछे आत्मसात कर लेती हैं और उसे पचाने में भी उन्हें कोई विशेष श्रम नहीं करना पड़ता।

हरी शाक-सब्जियों एवं अंकुरित अन्नों के क्लोरोफिल युक्त रस को 'ग्रीन ब्लड' के नाम से सम्बोधित किया गया है, इसमें पोषण प्रदान करने एवं स्वास्थ्यवर्धन करने वाले सभी प्रकार के तत्वों का समावेश होता है। खून को शुद्ध करके रक्त कणों की अभिवृद्धि करने में उक्त रस की भूमिका महत्वपूर्ण होती है। चिकित्सा विज्ञान डा. ब्रिशर इसे 'सूर्य-शक्ति केन्द्रित' मानते हैं और कहते हैं कि क्लोरोफिल के अणु मानव रक्त में पाये जाने वाले हीमोग्लोबिन कणों से बहुत कुछ समानता रखते हैं। यही कारण है कि इसके सेवन से रक्तकणों की संख्या में असाधारण रूप से अभिवृद्धि देखी जाती है। हरे रस का नियमित सेवन रक्त अभिसंचरण की प्रक्रिया को संतुलित तथा हृदयतन्त्र को सशक्त बनाता है। श्वसनतंत्र, गर्भाशय एवं आँतों के लिए इसे विशेष लाभकारी पाया गया है। कायिक निर्माण में काम आने वाले अमीनो एसिड की प्रक्रिया को तीव्रता प्रदान कर पुष्टिवर्धन का कार्य भी ग्रीन ब्लड से सहज संभव बन पड़ता है। इन्हीं गुणों के कारण इसे एक उत्तम टॉनिक माना गया है।

नोबेल पुरस्कार विजेता विख्यात चिकित्साशास्त्री डॉ. फिशर ने रक्ताल्पता दूर करने में अंकुरित अन्नों के जवारे का सफल प्रयोग किया है। इसके अतिरिक्त आंत्रशोध, त्वचारोग, पेट में अल्सर, पायरिया जैसे रोगों से ग्रस्त १२०० व्यक्तियों के उपचार में भी इससे उन्हें पर्याप्त सहायता मिली है। उनके अनुसार अंकुरों के रस में अब तक सौ से अधिक जीवन रक्षक तत्व खोजे जा चुके हैं। परीक्षणोपरान्त उनने अंकुरित गेहूँ को पूर्ण आहार बताया है और कहा है कि एक ग्राम अंकुर में जितने अधिक पोषक तत्व पाये जाते हैं, उसकी तुलना में २५ गुनी अधिक शाक-सब्जियाँ भी मिलकर उसकी पूर्ति नहीं कर सकतीं। शरीर के अन्दर एकत्र दूषित पदार्थों को दूर कर रस रक्त का परिशोधन-अभिवर्धन करने में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

धान्यों के अंकुर पोषकतत्वों और औषधीय गुणों से युक्त होने के कारण दुर्बलता दूर करने के साथ-साथ शरीर में रोग प्रतिरोधी क्षमता का भी विकास करते हैं। इस संदर्भ में अमेरिका की महिला चिकित्सा विज्ञानी डॉ. एन. विग्मोर ने गहन अनुसंधान किया है। प्राकृतिक चिकित्सा सम्बन्धी संस्था—'हिपोक्रेट हेल्थ इन्स्टीट्यूट' में वह अपने मरीजों का जवारे के रस से उपचार करती हैं। उनके अनुसार जीवंत आहार से कितने ही रोगियों को नवजीवन मिला है। इस प्रयोग के लिए उनने गेहूँ को सबसे अधिक उपयोगी पाया है। इसके अंकुरों में कैंसर रोधी 'लेट्राइल' नामक एन्जाइम बहुत अधिक मात्रा में पाया जाता है। डा. लेट्राइल के अनुसार मूल बीज में जितनी मात्रा में लेट्राइल होता है, अंकुरित अन्नों एवं कच्ची सब्जियों में यह सौ गुना अधिक पाया जाता है। इसी तरह सेम के बीजों को अंकुरित कर लेने पर उसमें सन्निहित 'इन्सुलिन' कई गुना अधिक बढ़ जाता है। मधुमेह रोगियों के लिए अंकुरित सेम बहुत लाभकारी सिद्ध हुआ है।

आहार विज्ञानियों का कहना है कि किसी अन्न-धान्य, दाल आदि के अंकुर अपने आरम्भिक काल में विटामिनों के भण्डार होते हैं। इनमें विटामिन बी काम्पलेक्स, 'सी' ई, तथा एफ प्रचुर मात्रा में विद्यमान होते हैं। पाँच दिन के अंकुरित गेहूँ एवं जई में सामान्य दानों की तुलना में पाँच सौ गुना अधिक जीवन तत्वों का बाहुल्य देखा गया है। उसी तरह प्रोटीन की मात्रा एवं विविधता में भी अभिवृद्धि पायी गई है। शुरू के दिनों में इस अंकुर में प्रायः स्टार्च भर होता है, किन्तु जैसे-जैसे वे बढ़ते जाते हैं, स्टार्च शक्ति प्रदान करने वाले शुगर में बदल जाता है। उनके अनुसार अंकुरित अन्नों को सदैव कच्चा ही खाना चाहिए। उबालने पर उनके उपयोगी तत्व नष्ट हो जाते हैं। क्लोरोफिल युक्त अंकुरित आहार तैयार करने के लिए उसे कपड़े से ढककर हल्की धूप में रखना पड़ता है। इससे उनमें हरापना आ जाता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिसे सलाद के रूप में अथवा पीसकर घोल के रूप में भी प्रयुक्त किया जा सकता है।

चिकित्सा विज्ञानी डॉ. इयार्प थामस का कहना है कि अंकुरित अन्न एवं उनके जवारे निश्चित रूप से नवयुग के लिए उपयुक्त आहार-औषधि हैं। रोग नाशन एवं आरोग्य सम्वर्धन की दुहरी क्षमता से सम्पन्न इस आहार को उनने सभी आयु वर्ग के व्यक्तियों के लिए उपयुक्त पाया है। अशक्त रोगी भी जीवंत आहार से स्वस्थ हो जाते हैं। इस प्रयोग में ऐसेलोगों कोआरंभ में गेहूँ का पानी दिया जाता है जिसे एक कप गेहूँ के स्वस्थ बीजों को दो कप पानी में २४ घण्टे भिगोकर रखने पर तैयार किया जाता है। प्रतिदिन दो-तीन ग्लास इस पानी को छानकर देते रहने पर शरीर का वजन भी बढ़ता है, स्फूर्ति भी आती है तथा जीवनी-शक्ति भी बढ़ती है।

गेहूँ का सदुपयोग—रोग और दुर्बलता विनाशक

दैनिक जीवन में सीधे-साधे ढंग से काम आने वाली वस्तुओं का महत्व हम भूल जाते हैं और कभी-कभी मिलने वाली, अजनबी तथा महँगी वस्तुओं को नियामत समझकर अपनाने के लिए दौड़ते हैं।

गेहूँ को ही लीजिये। वह रोज खाये जाने वाला अभ्यस्त अन्न है पर उसका महत्व भी हम कहाँ समझते हैं और कहाँ उसका सदुपयोग करते हैं ? गेहूँ का छिलका जिसे भूसी या चोकर कहा जाता है आमतौर से उसे छानकर फेंक देते हैं और यह भूल जाते हैं कि उनमें बहुमूल्य जीवन तत्व विटामिन और खनिज—मिनिरल भरे होते हैं। एक आदमी के आटे में जितना चोकर निकलता है उतने में बाजार से खरीदे जाने वाले एक रुपया मूल्य से अधिक के विटामिन और मिनिरल होते हैं। यदि चोकर समेत रोटी खाई जाय तो पौष्टिक तत्व खरीदने के लिए औषधि विक्रोताओं का दरवाजा खटखटाने और रंग-बिरंगी शीशियाँ खरीदने में जेब खाली न करनी पड़े।

एक दिन रात पानी में भिगोकर यदि गेहूँ खाया जाय तो उसमें सूखे गेहूँ की अपेक्षा तीन गुने अधिक पोषक तत्व बढ़ जाते हैं। गेहूँ की महत्ता के सम्बन्ध में कुछ दिन पूर्व डा. एन. विरामोर ने पुस्तक लिखी है। नाम है—"Why Suffer & Answer wheat grass Manna।"

इस पुस्तक में लेखिका ने गेहूँ की नव अंकुरित घास के रस की अत्यधिक प्रशंसा की और लिखा है—संसार में कोई रोग ऐसा नहीं जिसे इस घास के उपयोग से अच्छा न किया जा सकता हो। उन्होंने इसे बुढ़ापा दूर करने वाली महत्वपूर्ण पुष्टई भी बताया है और अनुसन्धानों का विवरण दिया है, जिनमें कठिन रोगों पर इस रस के उपयोग से विजय प्राप्त की गई। वे इसे 'हरे रक्त' की उपमा देती हैं और कहती हैं—यह रस मानव रक्त से ४० प्रतिशत मेल खाता है।

इस रस को बनाने की विधि इस प्रकार है—एक दर्जन मिट्टी के गमले या ऐसे ही कोई चौड़े बर्तन ले लीजिये। उनमें खाद और मिट्टी भर दीजिए। इनमें अच्छे किस्म का गेहूँ बो दीजिए। थोड़ा पानी डालिये और छाया में किसी बरामदे में इन गमलों को रख दीजिए। तीन-चार दिन में अंकुर उग आयेंगे और आठ-दस दिन में वे सात-आठ इंच बढ़ जायेंगे।

इनमें से ३०-४० पौधे पहले दिन जड़ सहित उखाड़ लें। जड़ को काटकर फेंक दीजिये। बाकी घास को धोकर सिल पर थोड़े पानी के साथ पीस लीजिए। इससे लगभग आधे गिलास ठण्डाई जैसा रस बन जायेगा। इसे छानकर पिया जाय। सुबह-शाम दोनों समय यह रस पीना चाहिए। यह हर मर्ज की औषधि का काम देगा और पोषण में किसी कीमती फल के रस से कम उपयोगी सिद्ध न होगा। रस न निकालना हो तो उस घास के छोटे टुकड़े कर सलाद की तरह अथवा साग-सब्जी में मिलाकर खाये जा सकते हैं।

इस घास को सात-आठ इंच से बड़ा नहीं होने देना चाहिए। बड़े होने पर उनकी उपयोगिता घट जाती है। एक दर्जन गमलों की जरूरत इसीलिए पड़ती है कि जिस गमले से घास उखाड़ी गई है उसमें उसी दिन नया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गेहूँ बो दिया जाय। इस प्रकार इन अंकुरों का ऐसा फेर बना रहे कि वे नियमित रूप से मिलती रहें। इस प्रकार वे हमेशा मिलते रह सकते हैं। रस ज्यादा देर नहीं रखा रहना चाहिए। धारोष्ण दूध की तरह उसकी उपयोगिता तुरन्त पीस-छानकर पीने में ही है। दो घण्टा भी रखा रहने दिया जाय तो उसकी उपयोगिता नष्ट हो जायेगी। हाँ, घास इतनी जल्दी खराब नहीं होती। वह एक-दो दिन रखी रहने भी दी जा सकती है।

दूसरा लाभप्रद प्रयोग यह लिखा है—आधा कप गेहूँ धोकर किसी साफ बर्तन में दो कप पानी में भिगो दीजिए। इसे बारह घण्टे बाद निकालिये और छानकर सुबह-शाम दो बार पीजिये। गेहूँ का दलियाँ बनाकर खायें।

सर्व-सुलभ बेहद सस्ता पौष्टिक भोजन

शरीर को भोजन की आवश्यकता मुख्यतः दो कारणों से पड़ती है। पहले शरीर की वृद्धि और मरम्मत के लिए तथा दूसरे शरीर में वांछित गर्मी और शक्ति उत्पन्न करने के लिए। मनुष्य का शरीर निरन्तर निर्मित होने वाली, अभिवृद्धि करने वाली प्रकृति की अद्‌भुत रचना है। किसी मकान का निर्माण करने के लिए जिस प्रकार ईंट, चूना, सीमेण्ट, लकड़ी और लोहे के सामान जरूरी होते हैं, उसी प्रकार शरीर के लिए भी विभिन्न पोषक तत्व आवश्यक होते हैं, जो खाद्य पदार्थों से मिलते हैं।

शरीर निरन्तर गतिशील, क्रियाशील भी रहता है। इसके लिए एक शक्ति की आवश्यकता होती है। रेल को चलाने के लिए वाष्पशक्ति चाहिए। अन्य मशीनें और कल कारखाने भी वाष्पशक्ति या विद्युतशक्ति से चलते हैं। यदि उन्हें वह शक्ति मिलना बन्द हो जाय तो सम्बन्धित यंत्र बन्द हो जाते हैं। शरीर भी किसी मशीन से कम नहीं है। उसे चलाने के लिए जिस शक्ति की आवश्यकता रहती है, वह भोजन से ही प्राप्त होती है। हम जो आहार ग्रहण करते हैं, जो कुछ भी खाते हैं उससे हमारा पाचन संस्थान पोषक तत्व चुन लेता है और उन्हें रक्त में मिलाकर रक्त परिवहन संस्थान को सुपुर्द कर देता है। यहाँ से जिन अंगों को जिन पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, वहाँ रक्त द्वारा वे तत्व पहुँच जाते हैं।

भोजन से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व ही शरीर में शक्ति पैदा करते हैं। इसके अतिरिक्त शरीर को जीवित रखने के लिए गर्मी भी अपेक्षित होती है, जिससे हमारा शरीर गर्म रहता है। इस गर्मी को हम जीवन की गर्मी भी कह सकते हैं। भोजन के पोषक तत्व जब शरीर में शक्ति पैदा करते हैं तो उनसे जीवन की यह वांछित गर्मी स्वयं ही प्राप्त हो जाती है। इसलिये आवश्यक है कि हम जो भोजन करें उस भोजन में पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में विद्यमान रहें ताकि शरीर को आवश्यक पोषण मिलता रहे।

स्वस्थ और शक्तिशाली शरीर के लिए वैज्ञानिकों ने जिन पोषक तत्वों को आवश्यक बताया है, वे हैं—प्रोटीन्स, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट्स, चर्बी और विटामिन्स, भोजन में यह तत्व पर्याप्त मात्रा में रहें तो शरीर की अभिवृद्धि और उसकी अद्‌भुत मशीन में होने वाली टूट-फूट का कार्य भली प्रकार चलता रह सकता है।

समझा जाता है कि इन पोषक तत्वों के लिए उच्चकोटि का आहार चाहिए। जैसे प्रोटीन्स के लिए सोयाबीन, सूखे मेवे और सूखी फलियों वाले शाक, चर्बी के लिए बादाम, अखरोट, पिस्ता काजू, घी, विटामिन्स के लिये फल, दूध, दही आदि। जिन खाद्य पदार्थों में ये तत्व पर्याप्त मात्रा में हैं, उनकी एक लम्बी सूची है और कई बहुत महँगे होने के कारण सर्वसाधारण के लिये खाद्य पदार्थ सुलभ भी नहीं हो पाते। इसलिए सामान्य जनता के दुर्बल स्वास्थ्य में कुपोषण भी एक बड़ी समस्या है।

जब कभी भी पौष्टिक भोजन की बात चलती है तो औसत स्तर के व्यक्ति इसे महँगा होने के कारण अपने लिए दुर्लभ ही बताते हैं। परन्तु बात ऐसी नहीं है। साधारण भोजन भी ठीक प्रकार से खाया-पकाया जाये तो उसमें भी पर्याप्त मात्रा में पौष्टिक तत्व मिल जाते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि अनाज शकरकन्दी, आलू, अरबी, मूली जैसे शाक। दूध, दही, नीबू, गुड़ आदि में भी पर्याप्त विटामिन होते हैं और वे उन महँगे खाद्य पदार्थों की तरह ही शरीर के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता पूरी करते हैं। वैज्ञानिक विश्लेषण से पता चला है कि गन्ने, शहद और खजूर में भी उतने ही विटामिन्स तथा लवण होते हैं, जितने कि किशमिश और मुनक्का जैसे सूखे मेवों में।

अधिकांशतः सामान्य खाद्य पदार्थों में भी पर्याप्त मात्रा में विटामिन्स और पोषक तत्व मिल जाते हैं, जितने कि महँगे और सूखे मेवों, फलों में। गेहूँ, ज्वार, बाजरा, मक्का आदि अनाज तथा शाक, सब्जियाँ भी पोषक तत्वों से भरपूर हैं। फिर क्या कारण है कि इन पोषक तत्वों में पर्याप्त मात्रा में विटामिन्स होते हुए भी अधिकांश व्यक्तियों का भोजन पोषण रहित या अपर्याप्त पोषण देने वाला होता है। किसी स्वास्थ्य वैज्ञानिक ने इसका कारण बताते हुए लिखा है—अधिकांश लोग इसलिए बीमार नहीं पड़ते कि उन्हें पोषक आहार जो महँगे बताये जाते हैं, नहीं मिलते बल्कि इसलिए अस्वस्थ रहने लगते हैं कि उनके खान-पान का तरीका अवैज्ञानिक होता है।

आमतौर पर लोगों को यह कहते सुनते पाया जाता है कि दूध नहीं मिलता, घी महँगा होने के कारण नहीं खरीद सकते, वनस्पति के दर्शन भी दुर्लभ हैं आदि। महँगाई के कारण कई वस्तुओं के सुलभ न होने की बात एक सीमा तक सही है क्योंकि इनकी आवश्यकता शरीर को पौष्टिकता प्रदान करने के लिए पड़ती है, जबकि दूध और घी के अलावा भी अन्य पौष्टिक खाद्य हैं, जो सर्वसाधारण के नियमित व्यवहार में आते हैं। लेकिन उनका प्रयोग गलत ढंग से किये जाने के कारण उनसे उचित लाभ नहीं मिलता। फिर भी आहार में पोषक तत्वों के महत्व को नकारा नहीं जा सकता। इस सदी में आहार सम्बन्धी जो शोधें हुईं तथा उनके परिणामस्वरूप जो निष्कर्ष आये वे सर्व-साधारण तक नहीं पहुँच पाते। यही कारण है कि अधिकांश व्यक्ति घी, दूध और सूखे मेवों, महँगे फलों को ही स्वास्थ्यवर्धक पौष्टिक खाद्य मानते हैं। प्रायः कहा जाता है कि आजकल महँगाई के जमाने में केवल अमीर लोग ही घी-दूध खा-पीकर स्वस्थ रह सकते हैं। गरीबों या मध्यम वर्ग के व्यक्तियों के लिए तो पोषक आहार स्वप्न की ही बात है।

यह बात अधुनातन वैज्ञानिक निष्कर्षों और अनुसंधानों के आधार पर गलत सिद्ध हो रही है। यह सच है कि दूध-घी पोषक तत्वों से परिपूरित आहार हैं किन्तु यह भी सच है कि यही एकमात्र पोषणपूर्ण खाद्य नहीं है। पूरा पोषण प्राप्त करने के लिए अन्य खाद्य पदार्थों की भी आवश्यकता रहती है। यदि बुद्धिमानी से भोजन का चुनाव किया जाय तो हम काफी सस्ते मूल्य में परिवार के लिए अच्छा और पोषणपूर्ण भोजन जुटा सकते हैं।

उदाहरण के लिए दूध को ही लें। अच्छे किस्म के दूध का मूल्य प्रायः दस रुपये प्रति लीटर बैठता है। सर्व-साधारण की इतनी सामर्थ्य नहीं होती कि वह तीन-चार रोज दूध पर खर्च कर सकें। फलतः दो-ढाई सौ ग्राम दूध लेकर चाय के रूप में ही सुबह नाश्ता कर लिया जाता है। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये प्रयोगों से यह निष्कर्ष सामने आये हैं कि ५० ग्राम अंकुरित चने २५० ग्राम दूध के बराबर पौष्टिक होते हैं। अंकुरित चनों को खूब चबा-चबाकर खाने से उसका रस मुँह में भरता रहा है। इस प्रकार अंकुरित चने खाने से दूध के समान ही पौष्टिक तत्व प्राप्त होते हैं।

आरम्भ में इस प्रकार अंकुरित चने खाने से उनमें स्वाद नहीं आता। फीके और अस्वाद होने के कारण चने खाने को मन नहीं करता, परन्तु उसका अपना एक अलग ही स्वाद होता है। यदि इनमें रुचि ली जाय तो अंकुरित चनों के खाने और उनमें रस लेने की आदत डाली जा सकती है। इसके लिए चनों में हलका-सा नमक डालकर और कागजी नीबू निचोड़कर स्वाद पैदा किया जा सकता है। नीबू का रस और नमक डालकर चने खाने से भरपूर मात्रा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में प्रोटीन, विटामिन और खनिज लवण प्राप्त किये जा सकते हैं। मूल्य की दृष्टि से भी यह नाश्ता महँगा नहीं होता। मुश्किल से पाँच व्यक्तियों के परिवार के लिए पचास पैसे का नाश्ता पड़ता है। चाय में तो इससे ज्यादा ही खर्च पड़ता है।

पोषक तत्वों की पर्याप्त प्राप्ति के लिए जब फलों की बात चलती है तो लोगों का ध्यान अंगूर, अनार और सेव जैसे फलों की ओर जाता है तथा महँगाई की कठिनाई सामने आती है। लेकिन कोई जरूरी नहीं है कि महँगे फल ही खाये जायँ। सभी क्षेत्रों में होने वाले मौसमी फल मिल जाते हैं, जो काफी सस्ते भी रहते हैं जैसे—खीरा, ककड़ी, अमरूद, जामुन, आम, चीकू, पपीता आदि। तीसरे पहर प्रायः सभी घरों में चाय बनती है और नाश्ता के लिए कुछ न सही तो रोटी और चावल का प्रयोग तो किया ही जाता है। उसे रोककर यदि ताजे और मौसमी फल खाये जायँ तो अपरान्ह कालीन नाश्ते में पर्याप्त पौष्टिक तत्व मिल सकते हैं। जाड़ों के दिनों में सन्तरे बहुतायत से मिलते हैं। औसत साइज का एक सन्तरा १ रुपये तक मिल जाता है। पूरे परिवार के लिए पाँच सन्तरे पर्याप्त होते हैं।

इतना खर्च भी अपनी शक्ति से बाहर लगे तो एक किलो गाजर काफी है। कच्ची गाजर में पर्याप्त मात्रा में विटामिन ए तथा 'खनिज लवण' होते हैं। गाजर के अलावा इन दिनों शलजम, मूली, टमाटर आदि सब्जियाँ बेहद सस्ती मिलती हैं और पर्याप्त पोषक तत्वों से भी परिपूर्ण रहती हैं।

इसी प्रकार आँवला भी पर्याप्त पोषण पूर्ण खाद्य है। इनमें विटामिन भी बहुत अधिक मात्रा में होता है, जो कि दाँतों और रक्त के लिए बहुत आवश्यक है। जिन दिनों ताजे आँवले मिलते हैं, उन दिनों कच्चे आँवले खाने चाहिए। यदि अच्छे न लगें तो उनकी चटनी बनायी जा सकती है। जब आँवलों की फसल खतम हो जाय तो सूखा आँवला इस्तेमाल किया जा सकता है। रात को आँवला भिगोकर उसे सिल-बट्टे पर पिसवाकर चटनी बनाई जा सकती है। इस प्रकार कितने ही तरीकों से आँवलों का उपयोग किया जा सकता है। विटामिन सी और खनिज लवण के अतिरिक्त आँवलों में और भी कई पोषक तत्व होते हैं। आयुर्वेद में तो उसे वृद्ध व्यक्तियों को भी यौवन प्रदान करने वाला बताया गया है।

दूध की आवश्यकता भी सभी घरों में पड़ती है और प्रायः सभी लोग थोड़ी बहुत मात्रा में दूध खरीदते हैं। यह बात और है कि महँगा होने के कारण दूध पर्याप्त मात्रा में नहीं खरीदा जा सकता। ऐसी दशा में दूध का विकल्प सपरेटा दूध खरीदा जा सकता है। सपरेटा दूध शुद्ध दूध की अपेक्षा सस्ता होता है। शुद्ध दूध से उसमें एक ही गुण कम है वह है घी अथवा मक्खन। शुद्ध दूध में से घी या मक्खन निकालकर सपरेटा तैयार किया जाता है। उसमें घी भले ही नहीं रहता परन्तु उसके अलावा सभी पोषक तत्व (प्रोटीन्स, कैलशियम, खनिज लवण और विटामिन्स) उतनी ही मात्रा में रहते हैं जितने कि शुद्ध रूप में।

ऊपर जिन खाद्य पदार्थों के सुझाव दिये गये हैं वे भी सस्ते हैं और सर्व-साधारण की क्रयशक्ति की सीमा में आते हैं। इनका प्रयोग सभी कर सकते हैं। इनके अतिरिक्त खाना पकाने की विधि में भी थोड़ा सुधार कर लिया जाय तो पकाते समय जो बहुत-से विटामिन पोषक तत्व नष्ट हो जाते हैं, उन्हें बचाया जा सकता है। जैसे—आमतौर पर गृहिणियाँ आटे को छानकर चोकर फेंक देती हैं। चोकर के साथ बहुत-से विटामिन फिक जाते हैं। जिन सब्जियों के छिलके कड़े नहीं होते, उन्हें भी छील दिया जाता है, जबकि ऐसा करने से कई विटामिन नष्ट हो जाते हैं।

आहार के पोषक तत्वों की रक्षा के लिए सब्जियों को अधिक देर तक नहीं पकाया जाना चाहिए और न ही उनमें बेहद मसाले बगैरहा डालकर उनकी पौष्टिकता को नष्ट करना चाहिए। इस प्रकार साधारण आमदनी वाले परिवार भी अपने लिए पर्याप्त पोषणपूर्ण आहार अपनी शक्ति सामर्थ्य के भीतर रहकर ही प्राप्त कर सकते हैं। आवश्यकता इस बात की है कि आहार को चुनने और पकाने में अपेक्षित सूझ-बूझ तथा सावधानी बरती जाय।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुपोषणजन्य स्वास्थ्य-संकट का निराकरण

सम्पन्नता, चिकित्सा और शिक्षा में अभिवृद्धि होने पर भी जन स्वास्थ्य का गिरता स्तर हर किसी के लिए चिन्ता का विषय है। मनुष्य भले ही धनवान, विद्वान, सम्मानित, पदासीन क्यों न हो किन्तु यदि उसका स्वास्थ्य बिगड़ा हुआ है तो इन सम्पदाओं के रहते हुए भी सुखी नहीं रहा जा सकता। दुर्बलता और रुग्णता घेरे रहे तो व्यक्ति सोचता कुछ भी क्यों न रहे, करने की दृष्टि से अक्षम ही बना रहेगा। रुग्णता अपने साथ व्यथा बेचैनी भी लिये रहती है। सहायता के लिए दूसरों को पुकारती है। निराशा और खीज की ऐसी मनःस्थिति बनी रहती है जिसमें न पराक्रम बन पड़े और न सहयोग जुटा सकने योग्य मनःस्थिति ही रहे। प्रखर बुद्धिमत्ता भी रोगी शरीर में देर तक नहीं टिकती। सबसे महत्वपूर्ण अवयव मस्तिष्क भी रुग्णता के रहते कुछ ठीक तरह काम नहीं करता।

इन कठिनाइयों को सहना-अन्य सभी सफलताएँ और सम्पदाएँ प्राप्त करने की प्रसन्नता तराजू के एक पलड़े पर रखी जाए तो रुग्णता से उत्पन्न विपत्ति को दूसरे पलड़े पर रखने से, दूसरा ही भारी पड़ता है।

दुर्बलता पहले आती है और रुग्णता उसके बाद आ धमकती है। दोनों सहोदर बहनें हैं जिन्हें साथ-साथ रहे बिना चैन नहीं पड़ता। कमजोरी का कारण कुपोषण बताया जाता है। कुपोषण अर्थात् ऐसा भोजन जिसमें पौष्टिक तत्वों की कमी रहे। इन दिनों कुपोषण दूर करने के लिए महँगे खाद्य पदार्थों की आवश्यकता जोर-शोर से बताई जाती है और उसे दूर करने के लिए आर्थिक स्थिति सुधारने वाला उपाय अपनाने की सलाह दी जाती है।

बड़े दिमाग वाली और विभीषिकाओं की बात को महत्व देने में हर्ज नहीं किन्तु कुपोषण के निवारण हेतु इतनी देर ठहरने की आवश्यकता नहीं जितनी देर में कि आर्थिक स्थिति सुधरे और पौष्टिक पदार्थों की खरीदने की ही नहीं उनके अतिरिक्त उत्पादन की भी व्यवस्था बने। वर्तमान स्थिति को देखते हुए इसमें सदियाँ गुजर सकती हैं। इतने में एक पीढ़ी ही बदल जायेगी। आज के दुर्बल बच्चे तब तक इस स्थिति में जा पहुँचेंगे जिन्हें आयु की दृष्टि से जवान किन्तु स्थिति की दृष्टि से बुड्ढा कहा जा सके। जीर्ण-शीर्ण शरीर आये दिन रोगों से आक्रान्त भी बने रहते हैं। ऐसी दशा में वे उन दिनों इतना बचा या कमा भी सकेंगे या नहीं, जिससे पौष्टिक भोजन पर्याप्त मात्रा में खरीदा जा सके। यह सन्देह का विषय है।

इतनी लम्बी मंजिल पार करने की अपेक्षा यह अधिक सरल है कि खान-पान की आदत बदल दी जाय। लोग तला-भुना खाने की आदत छोड़ सकें और व्यंजनों की अपेक्षा हरा प्राकृतिक भोजन ग्रहण करने की नीति अपना लें तो इतने भर से कुपोषण की समस्या हल हो सकती है। हरे शाक-भाजी घर-आंगन में भी बोये-उगाये जा सकते हैं। छप्पर, बरामदे पर भी बेलें चढ़ाई जा सकती हैं जो फलियाँ देती रहें। छतों पर गमले टोकरे रखकर भी शाक या चटनी में काम आने वाले पौधे उगाये जा सकते हैं। अन्न को अंकुरित करके कच्चा या उबालकर खाया जा सकता है। पके सूखे अन्न को पीसकर खाने की अपेक्षा उन्हें अधपकी स्थिति में भी कच्चा या भून-उबालकर खाया जा सके तो कुपोषण की समस्या इन्हीं दिनों, इतनी ही लागत से पूरी हो सकती है, जितने में कि गरीब लोग इन दिनों निर्वाह चलाते हैं। इस परिवर्तन के लिए किसी पंचवर्षीय योजना के लिए साधन जुटाने पर सफल होने की प्रतीक्षा में ठहरने की आवश्यकता नहीं। यह कार्य इन्हीं दिनों आदतों और दृष्टिकोणों में थोड़ा-सा अन्तर कर लेने भर से सम्पन्न हो सकता है।

दूध, घी की कमी की, उनकी महँगाई की बात आम चर्चा की विषय रहती है और पशुपालन से लेकर डेरी व्यवसाय चलाने जैसे अनेक कार्यक्रम बनते रहते हैं। यदि उनके लिए आवश्यक साधन न जुट पाये, तब भी इतना तो लगे हाथों हो सकता है कि तिल, मूँगफली, सोयाबीन आदि की लुगदी पानी में घोलकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पतली बनाई जा सके और उसे दूध की जगह काम में लाया जा सके। यह घोल भी लगभग दूध की आवश्यकता पूरी कर सकता है। उसमें दही, छाछ आदि भी बन सकते हैं। इस व्यवस्था को बनाने में तनिक-सा घरेलू हेर-फेर करने की भी आवश्यकता है। सस्ता दूध बेचने वाली डेरियाँ खुलने की प्रतीक्षा में बैठे रहने की अपेक्षा यह क्या बुरा है कि जो पैसा उन दिनों भोजन व्यय में खर्च करना पड़ता है, उसी में थोड़ी उलट-पुलट कर ली जाय और उस संकट से छुटकारा पाया जाय तो पहाड़ उठाने जैसा भारी दीखता है।

पौष्टिक खाद्यान्नों की महँगाई के कारण कुपोषण की बात कही जाती है। सस्ते अन्नों में उतना पोषण नहीं पाया जाता है जितना कि गेहूँ आदि महँगे अन्नों में होता है। गेहूँ सस्ता हो उपज बढ़े, नई भूमि मिले, सिंचाई के साधन जुटें जैसी लम्बी और महँगी योजना बनाने की अपेक्षा यह कहीं सरल है कि किसी अन्न या दाल का छिलका बर्बाद न होने दिया जाय। चोकर समेत आटा, छिलके समेत शाक खाने की आदत डाली जाय। ऐसी रोटी महँगे अनाजों की तुलना में किसी भी प्रकार कम पौष्टिक नहीं होती।

रोटी के साथ बथुआ, चौलाई, मैथी, मूली आदि मिलाकर बनाते रहने से ही भोजन कहीं अधिक सस्ता हो जाता है साथ ही स्वादिष्ट और पौष्टिक भी। इस परिवर्तन को महिलाएँ बड़ी आसानी से आरम्भ कर सकती हैं।

किसान तम्बाकू, अफीम, सौंफ, जीरा आदि महँगी फसलें बोने के स्थान पर आलू, शकरकन्द, प्याज, गाजर, मूली, चुकन्दर, शल्जम आदि बोने लगे तो उन्हें लाभ भी अधिक हो। खाने वालों को भी सस्ते मेल में वैसा भोजन पर्याप्त मात्रा में मिल सकता है, जिससे कुपोषण से बचने में गरीबी को एकमात्र कारण न माना जाय।

मेवे, फल, दूध, घी आदि खरीदने की मनाही कौन करता है। जिन्हें सुविधा है वे कुछ भी खरीदें और कुछ भी खायें। पर चर्चा वह बन्द होनी चाहिए, जिससे गरीबी को ही कुपोषण का एकमात्र कारण बताया जाता है और साधनों का बाहुल्य करने वाली सम्पन्नता उपलब्ध होने तक इन्तजार करने को कहा जाता है। समस्या इतनी जटिल नहीं है जिसके लिए लम्बी और महँगी योजना बनाये बिना काम ही न चल सके और अवरोधों को अडिग कहकर जिस-तिस पर दोषारोपण करके संतोष कर लिया जाय।

इसके लिए अभीष्ट साधन जुटने तक के लिए हाथ पर हाथ रखकर बैठने की आवश्यकता नहीं है। आज की स्थिति में जो संभव है, उसी में क्यों न किया जाय ? कल बढ़िया साधन उपलब्ध होने पर बड़ी वस्तुएँ प्राप्त करने की योजनाएँ बनाने में हर्ज नहीं। पर अव्यवहारिक यह है कि जो आज की स्थिति में हो सकता उसकी ओर ध्यान ही न दिया जाय और संकटों को दुर्भाग्य स्तर का मानकर उसके टहलने के सम्बन्ध में निराश हो बैठा जाय।

फिर एक बात और भी विचारणीय है कि गिरते स्वास्थ्य का एकमात्र कारण कुपोषण ही नहीं है। गन्दगी, आलस्य, असावधानी-बहुप्रजनन, फिजूलखर्ची, सामाजिक कुरीतियाँ जैसे अन्य कारण भी हैं, जो दरिद्रता के साथ-साथ पिछड़ापन भी मनुष्य पर लादते हैं और शारीरिक, मानसिक दुर्गति में बड़ा कारण बनते हैं। निराकरण उनका भी होना चाहिए। स्वास्थ्य सुधार की बात सोचते समय इन व्यवधानों को भी भुला नहीं दिया जाना चाहिए।

दूध पियें—सौ से भी अधिक वर्ष जियें

"आज की दुनिया का अच्छा से अच्छा स्वादयुक्त भोजन मैंने किया। सर्वोत्तम भोग भोगे। उस समय मैंने किसी भी प्राकृतिक नियम का विचार नहीं किया। उसी का प्रतिफल है कि मेरा पेट अपनी जीवनी शक्ति खो बैठा, निष्क्रिय, निकम्मा और बेकार हो गया। मुझे ऐसा लगता है कि पेट में पत्थर भरे पड़े हैं। एक छोटी-सी चपाती भी हजम करना मेरे लिये पहाड़ उठाने के बराबर कठिन है। यदि कोई मेरा पेटा ठीक कर दे तो उसे चिकित्सा के अतिरिक्त १० लाख डालर का पुरस्कार दूँगा।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह था विज्ञापन अमरीका के प्रसिद्ध करोड़पति "जान राक फेलर" का। भोग-विलास के असीम अनियन्त्रित साधन मनुष्य की जो दुर्गति कर सकते हैं, राक फेलर उन सबसे ग्रस्त थे। उसी का परिणाम था कि वे चाय और सिगरेट के अतिरिक्त जीवन धारण रखने के लिये मात्र कुछ दवायें और इंजेक्शन ही ले सकते थे। उनका विज्ञापन पढ़कर डाक्टरों की कतारें लग गईं। जितना झटका जा सकता था उन्होंने पैसा झटका, पर क्या तो राक फेलर और क्या डाक्टर, उन बेचारों को कौन बताता कि रोग-शोक अपनी भूल अपने पाप के परिणाम होते हैं। उनसे सुरक्षा का एक ही उपाय होता है पश्चाताप और प्राकृतिक जीवन की ओर वापसी। शार्टकट रास्ते से चलकर कोई प्राकृतिक दण्ड से बचना चाहे तो यह नितान्त असम्भव है।

अन्त में एक प्राकृतिक चिकित्सक की सलाह पर राक फेलर ने दुग्ध चिकित्सा कराई और तब वह फिर से एक नई जीवनी शक्ति प्राप्त करने में सफल हुये।

दूध वास्तव में ऐसा ही पेय है जो जर्जर शरीर को भी नई जीवनी शक्ति प्रदान कर सकता है। चरक का कथन है—"पयः पथ्यं यथामृतम्" अर्थात्—दूध तो अमृत के समान पथ्य है। दूध से आयु, बल, तेज, नेत्र ज्योति, सौन्दर्य, गालों की तथा ओठों की लालिमा, हृदय और फेफड़ों में शक्ति की वृद्धि ही नहीं होती, उसके नियमित सेवन और कल्प से रक्तचाप, कब्जा, एनेमिया, फोड़े-फुन्सी, स्त्रियों के रोग, अनिद्रा, अग्निमन्दता, पथरी, गठिया, दमा, श्वेत प्रदर, नपुंसकता, डायबिटीज, अतिसार, बवासीर आदि अनेक रोगों में अमृत, औषधि के समान लाभ होता है। दूध के दस गुणों का वर्णन करते हुए प्रसिद्ध भेषयज्ञ चरक ने लिखा है—

स्वादु शीतं मृदु स्निग्ध बहलं श्लेक्ष्णीपच्छिलम्।
गुरु मन्द प्रसन्नं च गव्य दश गुणं पयः।।

अर्थात्—दूध में स्वादिष्ट, ठण्डा, कोमल, चिकना, गाढ़ा, सौम्य, सात्विक लसदार भारी बाह्य प्रभाव से देरी से ग्रहण करने वाला तथा मन को प्रसन्न करने वाला, यह दस गुण होते हैं। "धारोष्ण दूध की तो आयुर्वेद में भूरि-भूरि प्रशंसा की गई है और उससे असाध्य रोग ठीक होने की बात विश्वासपूर्वक कही गई है। धारोष्ण दूध तुरन्त निकाले गये दूध को कहते हैं। उसे ज्यों का त्यों छानकर पीना चाहिये।

डा० श्रीमती एलाव्हीलर विलौक्स ने दूध को हृदय रोगों और कैंसर तक में लाभदायक माना है। डा० फ्रेडरिक हाफमैन दूध को पूर्ण आहार और स्वास्थ्य का जनक कहा करते थे।

इन पौष्टिक और औषधीय गुणों का कारण वह तत्व है जो दूध में प्राकृतिक रूप से विद्यमान रहते हैं। प्रोटीन जो शरीर में माँस बनाते हैं, टूट-फूट ठीक करते हैं, बल प्रदान करते हैं, केसिन, लैकोट—ग्लोब्यूमेन, एल्ब्यूमिन, एमिनो एसिड, स्टार्च आदि १०१ रासायनिक तत्वों का सम्मिश्रण दूध में पाया जाता है। इसकी चर्बी सुपाच्य और तेजवर्धक होती है। गाय के दूध में तो मल की मात्रा बिलकुल ही न्यून होती है। यदि एक माह तक लगातार गौ-दुग्ध का सेवन किया जाय तो मनुष्य उससे एक वर्ष के बराबर शक्ति अर्जित कर सकता है। नियमित रूप से दूध पीने वाले लोगों को कभी बीमारियाँ नहीं होती, कमजोरी नहीं सताती। यही कारण था कि प्राचीनकाल में हमारे बच्चों को युवावस्था तक अधिक खुराक दूध की ही मिलती थी। अन्न लोग काफी बड़ी आयु में खाना प्रारम्भ करते थे। इससे उन्हें न केवल सौ वर्ष तक विविध भोगों का रसास्वादन करते हुये सशक्त और निरोग जीवन जीने का लाभ मिलता था वरन् लोग वृद्धावस्था तक तेजस्विता बनाये रखने में समर्थ होते थे। आज लोगों ने दूध छोड़कर अप्राकृतिक पेय पीने शुरू कर दिये हैं, उनकी हानियाँ अनेक रोगों के रूप में स्पष्ट देखी जा सकती हैं। आज का मनुष्य जितना सभ्य है, उससे अधिक रोगी है। उसका कारण बाल्यावस्था में पर्याप्त दूध का न मिलना भी शामिल है।

दूध में विटामिन की मात्रा पर्याप्त परिमाण में होती है। "ए" और "डी" विटामिन्स तो बहुतायत से पाये जाते हैं। खनिज लवण जो कि बच्चे के विकास के लिये बहुत आवश्यक होते हैं, दूध में पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। सौ ग्राम दूध में फास्फोरस ·०६३ ग्राम, लोहा ·००२ ग्राम, कैल्शियम १.२० ग्राम पाया जाता है। इसके

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अतिरिक्त वैनेडियन, क्रोमियन, टिन, अल्म्यूनियम, अभ्रक, सीसा आदि भी पाये जाते हैं। माँ के दूध में रजत की पर्याप्त मात्रा पाई जाती है। यह तत्व शरीर को बलवान बनाते हैं। यही कारण है कि पहलवान लोग सबसे ज्यादा आहार दूध का ही करते हैं।

दूध यों भेड़, बकरियों, ऊँट और गधों का भी गुणकारी होता है और कई तरह की बीमारियों में इनका उपयोग करते हैं पर ओज, गुण और सौन्दर्यवर्धक तत्व अधिकांश माँ और गाय के दूध में ही पाये जाते हैं। सम्भवतः भारतवर्ष दुनियाँ का पहला देश है, जहाँ आदि काल से ही मातायें बच्चों को स्तन-पान कराती रही हैं, आधुनिक सभ्यता के प्रभाव के कारण आजकल पढ़ी-लिखी स्त्रियाँ इस परम्परा से मुख मोड़ रही हैं, यह उचित नहीं है। माँ के दूध में माँ के संस्कार भी घुले हुये होते हैं, वह बच्चे के निर्माण में बड़े सहायक होते हैं, अतएव इसे पवित्र कर्तव्य मानकर बच्चे को दूध हर माँ को पिलाना चाहिये।

आयुर्वेद में अनेक प्रकार के कल्प बताये गये हैं और जीर्ण-शीर्ण शरीर के पुनर्निर्माण में उन सबका प्रयोग चिकित्साशास्त्री करते रहे हैं। दीर्घकालीन अनुभवों के बाद दूध कल्प को सर्वाधिक लाभदायक पाया गया। उससे शरीर में बल वीर्य की वृद्धि और अंग-अंग में नया तेज फूट पड़ता है। पाचन प्रणाली में एक नई शक्ति आती है। कब्ज यदि स्थायी रूप से कभी ठीक हो सकता है तो वह एकमात्र दूध से ही ठीक हो सकता है और कोई उपाय इससे अच्छा नहीं। दुग्ध कल्प का सबसे अच्छा प्रभाव गुर्दों पर, वीर्य और मूत्र रोगों पर होता है। उससे गुर्दे के विष धुलकर साफ हो जाते हैं। पेट की सफाई तथा आँखों में नई चमक, त्वचा की मल निवारक शक्ति में वृद्धि होती है तथा अनेक रोग जड़ से दूर हो जाते हैं। दूध में आयु संवर्धन की आश्चर्यजनक शक्ति है।

दूध हमारी शक्ति और समर्थता का आधार है, उसके प्राकृतिक गुणों को पहचान सकें तो हम न केवल शक्ति संचय कर सकते हैं वरन् खाद्य समस्या और स्वास्थ्य संरक्षण की आवश्यकता को भी पूरा कर सकते हैं।

दूध पीना ही हो तो केवल गाय का पियें

अमेरिकन एकाडैमी ऑफ जनरल प्रेक्टिस के नेशनल आफीसर डाक्टर और फ्लोरिज (अमेरिका) के ख्यातिनामा डाक्टर वाल्टर डब्ल्यू साकेट का कथन है कि आदमी जिन फिजूल बातों में उलझ गया है, उनमें एक यह भी है कि दूध और उससे बने पदार्थों को आवश्यक मानकर पेट में ठूँसते रहना। उनने अपनी पुस्तक "ब्रिंगिंग ऑफ बेबीज" में लिखा है कि दूध एक महत्वपूर्ण पदार्थ है। उसमें सब तो नहीं पर बहुत सारे पोषक पदार्थ मिलते हैं। पर वह उपयुक्त केवल बच्चों के लिए ही हैं। "दूध एक पूर्ण भोज्य पदार्थ है।" इस मान्यता का मैं तभी समर्थन करूँगा जब उसमें 'केवल शिशुओं के लिए' शब्द और जोड़ दिया जाय। वे कहते हैं चूहिया से लेकर हाथी तक जब सभी प्राणियों के बच्चे ही दूध पर रहते हैं और बड़े होकर सब दाँतों से कुतरी जाने वाली खुराक पर निर्भर रहते हैं तो वही बात मनुष्य पर क्यों लागू नहीं होनी चाहिए।

दूध के सम्बन्ध में विरुद्ध विचार रखने वालों में डा. साकेट अकेले नहीं हैं, उनके मत का समर्थन संसार के अन्यान्य स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने भी किया है। न्यूयार्क सिटी हैल्थ डिपार्टमैन्ट ब्यूरो ऑफ न्यूट्रिशिन के अधिकारी डा. नार्मन जोलिफ ने कहा है कि मनुष्य को अधिकधिक तीस प्रतिशत ही वसा ऊर्जा प्राप्त करनी चाहिए और वह हमारे शाकाहारी भोजन से सहज ही प्राप्त हो जाती है। दूध अथवा माँस, मछली की आवश्यकता मनुष्य को बिल्कुल भी नहीं है।

अमेरिकन मेडीकल ऐसोसियेशन के अधिवेशन में कनाडा के प्रतिनिधि डॉक्टर हान्स सिलाइ ने बताया कि उनके परीक्षणों से यह निष्कर्ष सामने आया है कि कैलशियम की अनावश्यक मात्रा ग्रहण करने वाले लोगों को समय से पहले बुढ़ापा आ घेरता है। दूध में कैलशियम की बहुलता है। उसके सेवन में अनावश्यक उत्साह दिखाने वाले अपना यौवन समय से पहले गँवा बैठते हैं। उनने छोटे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बालकों को बाहरी दूध की अपेक्षा फलों के रस पर पालने की सलाह देकर अपने संरक्षण में कितने ही बालकों को उनकी अपेक्षा अधिक स्वस्थ बनाया, जिनको बाहरी दूध पर पाला गया था। उन्होंने गर्भिणी महिलाओं को भी दूध के स्थान पर फलों का रस लेने की ही सलाह दी है और इसका अधिक अच्छा परिणाम देखा है।

अपने देश में दूध का उत्पादन ही बहुत कम है। दुबले दुधारू पशु बहुत थोड़ा दूध देते हैं और उनमें से अधिकांश भरी जवानी में ही कसाई के घर चले जाते हैं। गरीबी के कारण इन दिनों तो लोग इतना महँगा दूध खरीद नहीं पाते। जो खरीद सकते हैं, उन्हें पानी, अरारोट आदि न जाने क्या मिला सफेद पानी मिलता है। ऐसी दशा में दूध का मोह छोड़ा भी जा सकता है। यदि खरीदना और पीना ही हो तो गाय के दूध को ही प्रमुखता देनी चाहिए।

गोदुग्ध में ए, बी, सी, डी, ई, वर्ग के विटामिन समुचित मात्रा में विद्यमान हैं, जबकि भैंस के दूध में वे बहुत ही कम पाये जाते हैं। उसमें कैरोटिनि तत्व न रहने से एक कठिनाई यह भी रहती है कि वे जल्दी ही नष्ट हो जाते हैं। गोदुग्ध में जो पीलापन पाया जाता है वह उसकी अति महत्वपूर्ण रासायनिक विशेषता है।

गोदुग्ध में प्रोटीन ३.३, वसा ३.६, शकर ४.६ और क्षार ७.७५ प्रतिशत होते हैं, उसके प्रोटीन को तीन भागों में विभक्त किया जा सकता है—(१) एलब्यूमिन (२) केसिन (३) लैक्टोगलो ब्यूमेन। यह तीनों ही मानव शरीर की महत्वपूर्ण आवश्यकताओं को पूरा करते हैं। संसार के विविध पदार्थों में पाये जाने वाले प्रोटीनों में गोदुग्ध का प्रोटीन सर्वोत्तम माना गया है उसमें जो एमिनोएसिड पाये जाते हैं वैसा संतुलित स्तर अन्यत्र कहीं नहीं पाया जाता।

इस दृष्टि से उपयोगिता केवल गोदुग्ध की है। भैंस का दूध पीने की अपेक्षा तो सोयाबीन पानी में पीसकर उसका सफेद पानी दूध के स्थान पर काम में लेना अधिक सस्ता और अधिक उपयोगी है।

पंच-गव्य की तेजवर्द्धिनी, जीवनदायिनी शक्ति

डा. मैकनीकॉफ साहब को एक बार यह सोचकर बड़ा विस्मय हुआ कि ६ करोड़ आबादी वाले जर्मन देश में शतजीवियों की संख्या केवल सौ ही है, जबकि केवल ५० लाख आबादी वाले अल्गेरिया में शतायु पुरुषों की संख्या ५००० से भी अधिक है। उन्होंने इसके कारण की खोज के लिये बल्गेरिया के निवासियों के स्वास्थ्य की विस्तृत जाँच की और यह पाया कि उन लोगों के आहार में गाय के दूध और दही (पोगुर्ट) की मात्रा अधिक रहती है। गो-दधि में कुछ ऐसे विशेष प्रकार के बैक्टीरिया पाये जाते हैं, जो आँतनली को साफ रखते हैं, उसमें मल नहीं जमा होने देते, जिससे शारीरिक शक्ति का अधिकांश भाग अवयवों के पोषण और विकास करने में लगता है। रोग और बीमारियों के निरोध से बची हुई शक्ति ही उनके तेजस्विता और दीर्घ-जीवन का कारण है। बल्गेरिया निवासियों के इस सौभाग्य की स्मृति में ही डाक्टर साहब ने उक्त बैक्टीरिया जाति का नाम "बेसिलस बल्गेरिक्स" रक्खा।

यह खोज बहुत ही सामान्य और साधारण मानी जानी चाहिए—उस तुलना में जो उपलब्ध शताब्दियों पूर्व भारतीयों को हुई थी। यहाँ का जन-जीवन अधिकांश गौमाता पर निर्भर था। अन्न को केवल सहायक मात्रा में ही लिया जाता था। आहार की अधिकांश आवश्यकता दूध से पूरी की जाती थी। बच्चों को काफी युवक हो जाने तक केवल दुग्धाहार की कराया जाता था, जिससे उनके शरीर का एक प्रकार से रोग-प्रूफ हो जाते थे। दीर्घ जीवनदायिनी शक्तियों के कारण ही वे लम्बी आयु और प्रचुर भोग सौ वर्ष तक सुखपूर्वक भोगते थे। गौ की महत्ता का मुख्य कारण यही था। उस पर एक प्रकार सम्पूर्ण लौकिक और भौतिक सुख टिका हुआ था। उसे देखते हुए गौ को इतनी अधिक आध्यात्मिक प्रतिष्ठा देना सर्वथा बुद्धिसंगत ही था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गाय के दूध के आश्चर्यजनक लाभों से आज सारा संसार परिचित है, पर हम भूल गये हैं। इंग्लैण्ड जैसे छोटे देश में १६३२ और १६३६ के मध्य गौरक्षा और दूध पर चालीस करोड़ रुपया व्यय किया गया जबकि इसी वर्ष केवल "अधिक दूध पीओ" अभियान के प्रचार में ६ लाख रुपया खर्च किया। सरकार ने गर्भिणी स्त्रियों, बच्चे वाली माताओं, शिशुओं, स्कूल जाने वाले बच्चों और श्रमिक मजदूरों को बिना मूल्य या बहुत कम पैसों में दूध दिया ताकि लोग मांसाहार की प्रवृति त्याग दें और गाय के दूध के लाभों से लाभान्वित हो सकें। ब्रिटिश युवकों की ऊँचाई और तोल बढ़ जाने के अनेक आँकड़े "दि इकॉनामिस्ट" पत्रिका के १० जून, १६३६ पृष्ठ ५६४ में देखे जा सकते हैं। पत्रिका में बताया गया है—

"हमारे भोजन में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, चिकनाई, खनिज लवण और विटामिन सम्मिलित हों तो हम अधिक स्वस्थ और दीर्घजीवी हो सकते हैं। यह सब तत्व गाय के दूध में विद्यमान हैं। गाय के दूध की प्रोटीन इतनी अच्छी होती है कि स्वयं ६५ प्रतिशत पच जाती है और साथ में ५ प्रतिशत गेहूँ की प्रोटीन को भी पचा देती है। केवल गेहूँ २० प्रतिशत प्रोटीन दे सकता है पर यदि उसमें दूध का सम्मिश्रण हो जाता है तो ६० प्रतिशत प्रोटीन शरीर को मिल जाती है। गाय के दूध की चीनी श्रेष्ठ बलदायक और अतिरिक्त पाचन शक्ति देने वाली होती है।"

निर्बल हुए बच्चों, युवकों और माताओं के स्वास्थ्य तथा शारीरिक विकास में गाय के दूध से आश्चर्यजनक परिवर्तन किये जा सकते हैं। डा. एच. सी. कैरीमेन के अनुसार, "लन्दन मेडिकल रिसर्च कौन्सिल" के परिणामों से यह जानकर लोग आश्चर्य में पड़ गये कि विकासशील बालक की क्षुधा पूर्ति के लिए जितना आहार पर्याप्त है उसमें यदि १२ औंस गाय के दूध की वृद्धि कर दी जाय तो प्रत्येक बच्चे के वजन में औसतन ४ से ७ पौण्ड तक की वार्षिक वृद्धि होगी और वार्षिक ऊँचाई का मान १.८५ इन्च से २.६५ इन्च तक बढ़ेगा। इस निष्कर्ष से प्रभावित होकर स्काटलैण्ड में पाठशाला दूध (स्कूल-मिल्क) की योजना चलाई गई जो बाद में योरोप और एशिया में सर्वत्र लोकप्रिय हुई।

गाय के दूध में २५ प्रकार के खनिज लवण जिनमें कैलशियम हड्डी बनाने, फास्फोरस हड्डी और मस्तिष्क बनाने, लोहा रक्त में लाली बनाये रखने, आयोडीन शरीर में शांति और स्फूर्ति के लिये व थाइराइट ग्लैण्ड्स को ठीक रखने के लिये बहुत आवश्यक है। वे ऐसी अवस्था में उपलब्ध हैं कि हमारा शरीर उन्हें सुगमता से पचा लेता है। लवणों की कमी से जब शरीर में कोई रोग हो जाता है, तब आयोडीन, फास्फोरस, कैल्शियम आदि से युक्त दवाइयाँ, डाक्टर लोग सेवन के लिये देते हैं, पर अक्षम शरीर उन्हें पचा नहीं पाते। अतः औषधियों की प्रतिक्रिया हानिकारक हो सकती है, उनका विजातीय द्रव्य कुछ मात्रा में जमा रह जाता है, जो कभी भी किसी दूसरे रोग के रूप में फूट सकता है। पर यदि खनिज तत्वों की पूर्ति के लिये गाय के दूध का सेवन किया जाय तो वह स्वयं ही ऐसी औषधि का काम पूरा कर देता है। गर्भकाल में केवल दूध पीने की आयु तक बालक इन लवणों का बड़ा भाग माता से ही ग्रहण कर लेता है। इसीलिये चरक आदि आयुर्वेद ग्रन्थों में गर्भिणी को अधिक दूध देने की आवश्यकता बताई गई है। ऐसा न करने से बच्चा और जच्चा दोनों निर्बल हो सकते हैं।

दूध की तरह गाय के दूध से जमाया हुआ दही भी बड़ा गुणकारी होता है। कई बार तो वह दूध की अपेक्षा अधिक गुणवर्धक समझा जाता है। दूध में जो चर्बी या फेट्स होते हैं—दही के रूपान्तर वे समाप्त हो जाते हैं और वह सुपाच्य और रोग निरोधक हो जाता है। इस सम्बन्ध में विस्तृत खोजें की गई हैं, उनसे पता लगा है कि एक क्यूबिक सेन्टीमीटर दूध में ५ से १० लाख तक ऐसे अणु रहते हैं, जो रोगाणुओं को मारने का काम करते हैं, दही में उनकी संख्या सौ गुनी अधिक बढ़ जाती है। इसलिये दही या मट्ठा दूध की अपेक्षा अधिक स्वास्थ्यवर्द्धक हो जाता है। इससे शरीर में ताजगी, प्रसन्नता और आरोग्यता बढ़ती है। दही सेवन करने से मानसिक शीतलता, चैतन्यता और मुख की लावण्यता में वृद्धि होती है। यह अनुभूत प्रयोग है। इन लाभों को काई भी व्यक्ति कुछ दिन के निरन्तर प्रयोग से ही देख सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति-पदार्थ के रूप में गौ-घृत को अमृत तुल्य माना गया है। मद्रास के सेनेटरी कमिश्नर डा. किंग साहब ने अनेक परीक्षणों से सिद्ध किया था कि प्लेग की बीमारी के समय गाय के घी से मिश्रित चावल और केसर से प्लेग दूर होता है। जबलपुर टी. बी. सैनिटोरियम में गौघृत के हवन से ८० टी. बी. के बीमारों को लाभ पहुँचा। गाय के दूध की चिकनाइयों से श्रेष्ठ होती है स्वाद, सुगन्ध और सात्विकता में गाय के घी की कोई तुलना नहीं। इसमें क्रमिनाशक गुण विशेष होता है। सभी वनस्पति तत्व होने पर भी गाय का घी सुपाच्य और शक्तिवर्द्धक होता है।

गाय के गोबर और मूत्र में ऐसे तत्व होते हैं जो रोगाणुओं को नष्ट करने की भारी सामर्थ्य रखते हैं। घरों के चौके इसीलिये गोबर से लीपे जाते हैं। गोमय शरीर में मलकर स्नान करने से चर्म रोग दूर होते हैं। गोबर को उबालकर लेप करने से गठिया जैसा रोग अच्छा होता है, कटे घाव को जोड़ने की शक्ति गोबर में होती है। इसी तरह गौमूत्र के बारे में—चरक संहिता में लिखा है—

गव्यं सुमधरं किञ्चद् दोषघ्नं कृमिकुष्ठनुत्।
कण्डूघ्नं शमपेत पीतं सम्यग्दोषोदरेहितम्।।

"अर्थात—गोमूत्र के सेवन से कृमि रोग कोढ़, खुजली, प्लीहा आदि रोग दूर हो जाते हैं।" गोबर और गोमूत्र की खाद की उपजाऊ शक्ति का मुकाबला आधुनिक रासायनिक खादें नहीं कर पाती हैं, यह बात वैज्ञानिक भी मानते हैं।

उपरोक्त लाभ आज भी प्राप्त किये जा सकते हैं पर इसके लिए गौ-पालन और गौ-संरक्षण आवश्यक है। अपने स्वास्थ्य तथा सम्पत्ति की रक्षा भी हम गाय की सुरक्षा रखकर कर सकते हैं। इस सम्बन्ध में दो मत नहीं हो सकते।

दही एक अति गुणकारी खाद्य

दूध और दही में प्रत्यक्षतः कोई विशेष अन्तर नहीं मालूम पड़ता पर परीक्षण करने पर दोनों के भीतर गुण और प्रभाव की दृष्टि से बड़ा अन्तर पाया जाता है। रासायनिक पदार्थों में काफी अन्तर आ जाता है।

कच्चे दूध में कृमि-कीटाणु होने और गैस बनने की शिकायत रहती है। तुरन्त का दुहा धारोष्ण दूध मिल सके, तो दूसरी बात है। उसमें भी यह होना चाहिए कि दुहने वाले के हाथ, निकालने का बर्तन तथा थन अच्छी तरह साफ किये गये हों। ऐसा दूध मात्र उन्हीं को मिल सकता है, जो घर पर दुधारू जानवर पालते हैं और दुहते समय उसमें अशुद्धता का प्रवेश होने की गुञ्जायश नहीं छोड़ते। बीमार पशुओं का कच्चा दूध भी कम हानिकारक नहीं होता। उसे उबालना आवश्यक होता है, किन्तु उबालने पर दूध के प्राकृतिक गुणों का घट जाना स्वाभाविक है। भाप के साथ अनेकों उपयोगी तत्व हवा में उड़ जाते हैं। उसे जितना अधिक उबाला जाय, उतना ही वह गरिष्ठ होता जाता है, पाचन में हैरानी उत्पन्न करता है।

दूध में "जामन" देकर यदि उसे जमा दिया जाय, तो कुछ ही घण्टों में उसका स्वरूप बदल जाता है, पतले से गाढ़ा हो जाता है, स्वाद बदल जाता है और ऐसे अम्ल बढ़ जाते हैं, जो पचाने में सहायक होते हैं। चिकनाई की आवश्यक मात्रा चर्बी बढ़ाती है और हृदय नलिकाओं में जमाव, जकड़न पैदा करती है। उससे रक्त की चाल घट जाती है और हृदय का दौरा पड़ने जैसा खतरा रहता है पर यह कठिनाई दही में नहीं है। यद्यपि उसमें भी चिकनाई की पर्याप्त मात्रा होती है, किन्तु जो नये किस्म का बैक्टीरिया उसमें उत्पन्न हो जाता है, उसमें पाचक तत्वों की भरमार होती है। इसके अतिरिक्त दूसरे किस्म के ऐसे पदार्थ भी उसमें पैदा हो जाते हैं, जो जीवनी शक्ति बढ़ाने और मस्तिष्क को बल देने में सहायक होते हैं।

बिनोवा जीवन के अन्तिम अध्याय में दही और शहद पर निर्भर रहने लगे थे। उनके पेट में अल्सर की शिकायत थी। दूसरी चीजें ठीक प्रकार पचती नहीं थीं। इन परिस्थितियों में उनने दही का प्रयोग किया और उसे हर दृष्टि से उपयोगी पाया। यह अन्यान्यों के लिए भी सही हो सकता है। बाल, वृद्ध, गर्भिणी—सभी कमजोर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्तर के लोग उससे लाभ उठा सकते हैं। कई रोगों में चिकित्सक दही का पथ्य बताते हैं। जिस प्रकार दुग्ध कल्प किया जाता है, उसी प्रकार छांछ कल्प भी होता है। छाछ और कुछ नहीं, दही का पानी मिला स्वरूप है। जिनके पेट कमजोर होते हैं, उन्हें छाछ अधिक सरल पड़ती है।

पहलवानों और बलिष्ठों के लिए जो लाभ मक्खन करता है, वही साधारण स्वास्थ्य वालों या कमजोरों के लिए दही करता है। धार्मिक और मांगलिक कार्यों में दही का उपयोग बराबर होता है। उसे देव प्रयोजनों में लाया जाता है। पंचामृत में दही की प्रधानता होती है। आतिथ्य दही के बिना अधूरा माना जाता है।

माँस, मछली, अण्डे आदि की जिस प्रयोजन के लिए सिफारिश की जाती है, वे सभी दही से पूरे हो सकते हैं। दूध के सम्बन्ध में दो मत हो सकते हैं। वह किसी को अनुकूल पड़ता है, किसी को नहीं। इसलिए ऐसे लोग दूध को चाय-कॉफी आदि के साथ थोड़ी-सी मात्रा में लेते हैं, किन्तु दही के बारे में ऐसा कोई विवाद नहीं है। वह हर किसी को अनुकूल पड़ता है। स्वाद के लिए उसमें शहद, गुड़ आदि मीठी वस्तुएँ या नमक जैसे हल्के मसाले मिलाये जा सकते हैं। वैसे दही में अपना निज का स्वाद ही ऐसा उत्तम है, जिसमें किसी अन्य मिलावट की आवश्यकता नहीं होती।

भोजन को सुपाच्य, स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्धक बनाने में दही की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। भारतीय संस्कृति में चिरकाल से ही दही की महत्ता को अंगीकार किया गया है। यज्ञ, हवन, विवाह-संस्कार तथा मंदिरों में प्रसाद आदि के मांगलिक अवसरों पर दही का प्रयोग सदैव होता रहा है। शास्त्रकारों ने राम और कृष्ण के बाल्य जीवन में भोज्य-पदार्थों के वरीयताक्रम में सर्वप्रथम दही के प्रयोग को ही महत्वपूर्ण एवं रुचिकर बताकर पौराणिक मान्यता भी प्रदान की है।

आहार विज्ञान के विशेषज्ञों का कहना है कि एक स्वस्थ बालक की आँतों में दही को जन्म देने वाले कीटाणुओं के अतिरिक्त अन्य किसी प्रकार के कीटाणु ही नहीं होते हैं। किन्तु उसकी आयु वृद्धि के साथ-साथ दही उत्पादक कीटाणुओं की संख्या निरन्तर घटती चली जाती है। यही कारण है कि बड़ी उम्र के लोगों को दूध देर से पचता अथवा पेट में सड़न उत्पन्न करता है। इसलिए दूध की अपेक्षा दही को स्वास्थ्य संरक्षण के लिए अधिक लाभकारी माना गया है।

दूध पेट में पहुँचकर दही के रूप में ही जमता और अपनी प्रभावशीलता का परिचय देता है। लेकिन दही में सुपाच्यता का गुण होने के कारण पेट को वैसी क्रिया सम्पन्न करने में अतिरिक्त भार उठाना नहीं पड़ता। इसलिए जिन्हें दूध नहीं पचता, उन्हें दही सरलतापूर्वक पच जाता है। वैज्ञानिकों द्वारा किये गये परीक्षणों से एक ही तथ्य हाथ लगा है कि दही का ८० प्रतिशत भाग शरीर को पोषक तत्व प्रदान करने के काम आता है, जबकि दूध का २० प्रतिशत हिस्सा ही इस उद्देश्य को पूरा कर सकने में सक्षम हो पाता है। दूध में केसीन प्रोटीन और दही में लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया होता है। केसीन को जमाने में लैक्टिड ऐसिड ही काम आता है। इस समूची रासायनिक क्रिया को पूरा करने में कुछ अतिरिक्त गुण भी उत्पन्न हो जाते हैं। यानी दही में कैल्शियम की मात्रा दूध से ठीक १८ गुना अधिक होती है। इतना ही नहीं, दही में समाविष्ट लैक्टिक ऐसिड जमाने वाले बर्तन की धातु के सूक्ष्म गुणों को भी सोख लेता है, जो आरोग्य एवं दीर्घायुष्य का कारण बन जाते हैं। दूध को लम्बे समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता, पर दही को रखने में वैसी कोई समस्या उत्पन्न नहीं होती है। दूध की चिकनाई से रक्त में कोलेस्टेरोल (घुलनशील चर्बी) की मात्रा बढ़ती है और हृदय रोग का कारण बन जाती है। दही में ऐसा नहीं होता इसलिए हृदय एवं रक्तचाप के रोगी को दही सेवन का परामर्श ही चिकित्सक देते रहे हैं।

जिन देशों की आहार व्यवस्था के अन्तर्गत विविध विधि भोज्य पदार्थों में दही को प्राथमिकता दी गयी है, वहाँ पर स्वास्थ्य का स्तर भी सुधरा है और दीर्घजीवन की संभावनाएँ भी बढ़ी हैं। रूस के जार्जिया प्रदेश की ५०

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लाख की आबादी में लगभग ७० हजार से भी अधिक लोग ऐसे हैं, जो अपने जीवन के सौ वर्ष बड़ी प्रसन्नता और स्वस्थता के साथ पूरे कर चुके हैं। इसके बाद बुलगारिया का नम्बर आता है, जहाँ पर १०० वर्ष तक जीना तो जीवन की सहज-स्वाभाविक प्रक्रिया माना जाता हे। इस दीर्घायुष्य का कारण दही ही है।

आयुर्वेद शास्त्र में दही को पाचक, रक्तपोशक, हृदय व मस्तिष्क को शीतलता व शान्ति प्रदान करने वाला, यकृत की क्षमता में वृद्धि करने वाला, वात-कफ नाशक औषधि के रूप में वर्णित किया गया है। अपच, अतिसार, प्रमेह और श्वेत कुष्ठ में तो यह बड़ा ही प्रभावकारी सिद्ध होता है। यही कारण है कि दही का नियमित सेवन करने वाले सदैव स्वास्थ्य सानंद बने रहते हैं।

दही स्वास्थ्य के लिए एक उत्तम खाद्य माना गया है। इसमें कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ होते हैं, जिनके कारण यह दूध की अपेक्षा जल्दी पचता है। आमाशय को इसे पचाने में कोई विशेष परिश्रम नहीं करना पड़ता। जिन लोगों की पाचन प्रणाली की स्वाभाविक शक्ति कमजोर पड़ जाती है उन्हें मन्दाग्नि, अपच, कब्ज, गैस जैसी अनेकानेक बीमारियाँ घेरे रहती हैं। उनके लिए दूध अनुकूल नहीं पड़ता, उस समय दही या उससे बनी लस्सी, मठा, छाछ का उपयोग करने से आँतों की गरमी दूर हो जाती है। पाचन क्रिया अच्छी तरह से होने लगती है और भूख खुलकर लगती है।

दही, दूध का ही एक परिवर्तित रूप है। दूध में 'जामन' डालने पर ही कुछ घंटों में उसका स्वरूप बदल जाता है। दूध के कणों का परिवर्तन थक्कों के रूप में हो जाता है। स्वाद भी बदल जाता है। यह सब एक प्रकार के जीवाणुओं की उपस्थिति के कारण होता है, जिन्हें लैक्टिक ऐसिड बैक्टीरिया कहते हैं। इनकी उपस्थिति के कारण दुग्ध शर्करा लैक्टिक अम्ल में परिवर्तित हो जाता है। यह अम्ल पाचन-शक्ति को बढ़ाने में विशेष भूमिका निभाता है। दही में पाये जाने वाले बैक्टीरिया शरीर में स्थित अन्य प्रकार के रोगोत्पादक कीटाणुओं को नष्ट करने एवं भोजन को पेट में सड़ने से बचाते हैं। इसके अतिरिक्त उसमें कुछ ऐसे रासायनिक पदार्थ भी उत्पन्न हो जाते हैं, जो जीवनीशक्ति बढ़ाने एवं मस्तिष्क को बल प्रदान करने में सहायक होते हैं।

चिकित्सा विज्ञानियों ने विभिन्न अनुसंधानों के आधार पर यह सिद्ध कर दिया है कि आँतों के भीतर क्षार के जो कण जम जाते हैं, उनसे आँतों की झिल्ली मोटी पड़ जाती है। उनका लचीलापन मारा जाता है। फलतः पाचन-क्रिया कमजोर पड़ जाती है। इसका असर मनुष्य के शरीर पर पड़े बिना नहीं रहता। शरीर की ऊपरी त्वचा पर झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं, बाल सफेद होने लगते हैं और समय से पूर्व ही बुढ़ापा आ जाता है। यदि क्षार का जमाव अधिक मात्रा में होने लगे तो शरीर के जोड़ों पर सूजन आ जाती है और गठिया जैसे रोग हो जाते हैं। पर दही का नियमित सेवन करने वाले पाचन-सम्बन्धी इन विकृतियों से छुटकारा पा लेते हैं। फलतः उन्हें बुढ़ापा भी जल्दी नहीं घेरता।

आयु वृद्धि के उपायों की खोज करने वाले नोबेल पुरस्कार से सम्मानित फ्रांस के प्रख्यात वैज्ञानिक एली मैचिनीकॉफ ने अपनी पुस्तक—"द प्रोलागेशन ऑफ लाइफ" में बताया है कि जैसे-जैसे मनुष्य की आयु बढ़ती जाती है पाचन नलियों में हानिकारक जीवाणुओं एवं क्षार के कणों का जमाव बढ़ता जाता है। इससे उत्पन्न विष, रक्त में मिलकर जरावस्था के लक्षण प्रकट करते हैं। किन्तु यदि भोजन के साथ दही का प्रयोग किया जाय तो उसमें पाये जाने वाले लैक्टिक एसिड बैक्टीरिया उन विषैले जीवाणुओं का सफाया कर देते हैं। आँतों में पहुँचकर ये जीवाणु क्षार के कणों को बाहर फेंकने लगते हैं, जिससे आँतों की रसांकुरिकाओं—बिल्लाई को उत्तेजना मिलती है और ये सक्रियतापूर्वक काम करने लगती हैं। आँतों में साम्यावस्था आ जाने के कारण पाचन क्रिया अच्छी तरह से होने लगती है। रक्त में जो क्षार का अधिकांश भाग प्रवेश कर जाता है, उसकी भी सफाई होने लगती है। दूध की अपेक्षा दही में अधिक कैलोरिक मात्रा होती है परन्तु लैक्टिक ऐसिड की उपस्थिति के कारण यह सरलता से पच

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है। इस अम्ल की कमी से अंग शिथिल पड़ते और वृद्धावस्था के लक्षण प्रकट होते हैं। उस कमी को भी दही पूरा करता है। अतः जिनकी पाचनक्रिया कमजोर हो गई हो अथवा जो बूढ़े हो गये हों उनके लिए यह विशेष लाभकारी है। जिन लोगों के आहर में दही और लस्सी की प्रधानता रहती है, उनकी आयु अपेक्षाकृत अधिक पाई गई है।

रूस के चिकित्सा-विज्ञानियों ने अपने देश के अजरवेजान, उज्वेकिस्तान आदि प्रान्त के निवासियों के स्वस्थ रहने एवं दीर्घायुष्य होने के कारणों का पता लगाया है। अपने अध्ययन में उन्होंने पाया है कि उन लोगों के भोजन में दधि का प्रमुख स्थान है, जिसे ये नियमित रूप से खाते और स्वस्थ रहते हैं। बिनोवाजी जीवन के उत्तरार्ध में दही और शहद पर निर्भर रहने लगे थे और उसे हर दृष्टि से उपयोगी पाया था। मूर्धन्य वैज्ञानिक एम. ब्रिगेरॉफ के अनुसार बल्गारिया के अधिकतर लोग स्वस्थ एवं शतायु होते हैं। दही, लस्सी, मट्ठा उनके मुख्य भोज्य पदार्थ हैं।

अमेरिका में दही को 'योगर्ट' कहा जाता है, वहाँ के सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डॉ. बरनार मैकफेडन का कहना है कि शरीर को विकार रहित बनाये रहने में यह महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। इसका आधा पाचन जीवाणुओं द्वारा पेट के बाहर ही हो जाता है। इसलिए इसे पचाने में यकृत एवं आँतों को बहुत कम परिश्रम करना पड़ता है। वह जल्दी पच जाता है। इसमें चिकनाई से बनने वाली चर्बी तथा उससे उत्पन्न रक्त नलिकाओं में कोलेस्ट्रॉल के जमाव का भी खतरा नहीं रहता है। यद्यपि पर्याप्त मात्रा में चिकनाई इसमें भी होती है किन्तु जीवाणु एवं कैल्शियम की अधिक मात्रा में उपस्थिति भोजन के प्रोटीन आदि जटिल पदार्थों को सरल घटकों में विभाजित कर देते हैं, जिससे पाचन जल्दी होता है। साथ ही यह ब्लड कोलेस्ट्राल को कम करके हृदय के ऊपर पड़ रहे चर्बी के बोझ को हल्का कर देते हैं। यदि उचित ढंग से भोजन या पेय रूप में इसे नित्य-प्रति लिया जा सके तो वह स्वास्थ्य के लिए गुणकारी औषधि का काम करता है।

दही में जो पानी छूटता है उसे 'तोड़' कहते हैं, इसमें दूध के मौलिक पोषक तत्व अधिकतम अंश में सुरक्षित रहते हैं। अतः इसे बाहर नहीं फेंकना चाहिए वरन् दही के साथ मथकर अथवा अलग से उपयोग कर लेना चाहिए। यह थकावट को दूर करने वाला, सुपाच्य, रुचिकर तथा आँतों के लिए लाभकारी माना गया है।

आयुर्वेदीय ग्रंथों में दही को त्रिदोषनाशक बताया गया है, चरक, सुश्रुत एवं अष्टांग संग्रह आदि आयुर्वेद शास्त्रों के अनुसार यह भोजन में रुचि उत्पन्न करने वाला तथा बल, वीर्य एवं माँसवर्धक होता है। खाने में खट्टा तथा पोषण में स्निग्धता प्रधान होता है। अतिसार, विषम, ज्वर, अरुचि, मूत्रकृच्छ और शरीर के कृश होने पर दही का सेवन हितकारी माना गया है। यकृत एवं आँतों के रोग, संग्रहणी, मन्दाग्नि मधुमेह, पेट के कीड़े, उल्टी, पतले दस्त आदि रोगों में इसे विधिपूर्वक लेने से लाभ होता है। इसमें सेंधा नमक, भुना एवं पिसा हुआ जीरा तथा पोदीना मिलाकर खाने से आँतों के रोगकारक कीटाणुओं का शमन होता है। पाचनशक्ति प्रदीप्त होती एवं क्षुधा बढ़ती है। दही में गुड़, शक्कर मिलाकर खाने से तृष्णा एवं दाह का शमन होता है। इसके साथ मूँग की दाल खाने से स्वास्थ्य अच्छा रहता है। गरम, अधिक खट्टा, घी के साथ, रात को एवं वर्षा ऋतु में दही खाने से दोषों की उत्पत्ति होती है। पोषण प्रदान करने के स्थान पर अनुपात सही न होने के कारण हानि पहुँचा सकता है, इस तथ्य को भी ध्यान में रखना जरूरी है।

मठा भी पियें

न तक्र सेवी व्यथते कदाचित्—
न तक्र दग्धा प्रभवन्ति रोगा।
यथा सुराणाममृतं सुखाय,
तथा नराणाम् भुवितक्रमाहुः।।

अर्थात्—तक्र यानी मठा सेवन करने वाला मनुष्य कभी रोगों के जाल में नहीं फँसता और रोगी मनुष्य का तक्रसेवन से रोग जल जाता है और तक्र से जला हुआ रोग पुनः उत्पन्न नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता। जिस प्रकार से देवलोक में अमृत हितकर है। ठीक उसी प्रकार भूमिलोक पर मठा मनुष्यों का हितकारक है।

मठा पाँच प्रकार का बनाया जाता है। (१) घोल, (२) मथित, (३) तक्र, (४) उदश्वित और (५) लच्छिका।

१. घोल

मलाई के सहित बिना जल डाले जो दही को मथा जाता है, ऐसे मठे को घोल कहते हैं। इसमें शक्कर मिलाकर खाने से बात-पित्त का नाश करता तथा आनन्द देता है।

२. मथित

मथित और घोल में इतना ही अन्तर है कि मथित में से मलाई अलग कर देते हैं। यह कफ और पित्त का नाश करता है।

३. तक्र

जिसमें मथते समय दही का चौथाई भाग पानी डाल दिया जाय। यह मल को रोकने वाला, कसैला, खट्टा, पाक में मधुर है और हल्का है। उष्णवीर्य (गरम) अग्नि दीपक, वीर्य वर्धक, पुष्टिकारक और वात नाशक है।

४. उदश्वित

जिसमें दही का आधा भाग जल मिले। यह कफ कारक बल बढ़ाने वाला और आम का नाश करता है।

५. लच्छिका

(छाछ) जिससे मलाई निकाल ली गई हो और मथकर बेहिसाब जल मिलाया जाय। यह शीतल, हलका, पित्त, प्यास और थकावट को दूर करता है। सेंधा नमक और वायुनाशक है।

अब दुग्धभेद से मठे के गुणों को भी देखिये। दुग्धभेद से मठा अनेक प्रकार का हो सकता है। यथा—गाय, भैंस, बकरी, भेड़, घोड़ी, ऊँटनी आदि के दूध से भी मट्ठा बन सकता है परन्तु हम यहाँ केवल गाय, भैंस तथा बकरी के मठे के गुणों की ही चर्चा करेंगे। गाय का मठा बवासीर और उदरविकार का नाश करता है तीनों दोषों को शान्त करता है। यह दीपन, रुचिकारक और बुद्धिवर्धक है। शरीर में बलवर्धक और हृदय को शक्ति देने वाला है। गाय का मठा सब मठों से विशेष गुणकारी है।

बकरी का मठा

संग्रहणी, वायुगोला, बवासीर, शूल और पाण्डु रोग को नष्ट करता है। यह हलका और चिकना होता है। तीनों दोषों को शान्त करता है और श्वाँस, कास में बड़ा गुणकारी है। भैंस का मठा, अतिसार, बवासीर, संग्रहणी और प्लीहा नाशक है। यह कफकारी है तथा वातपित्त को शान्ति करता है।

चरक में लिखा है कि तक्र दीपन, ग्राही और हलका होने के कारण ग्रहणी रोग में हितकर है। पाक में मधुर होने के कारण पित्त प्रकोप से बचाता है। मधुर, अम्ल और चिकना होने से वायुनाशक है। कषाय और उष्ण होने से कफ में हितकर है।

प्रो. ड्यूकले और मैशिनी काफ आदि प्रसिद्ध जन्तु शास्त्र विशेषज्ञों का मत है कि मठे में लैक्टिक जन्तु रहते हैं, जो शरीर के विषैले कीड़ों का नाश करके हमारे शरीर के लिये विशेष उपकारी होते हैं।

ऋतुओं के अनुसार मठे का सेवन निम्नलिखित वस्तुओं के साथ करना अधिक लाभदायक होता है—

हेमन्त, शिशिर और वर्षा ऋतु में मठा या दही खाना उत्तम है किन्तु शरद, बसंत और ग्रीष्म में प्रायः हानिकारक है। दही या मठा कफ कारक है साथ ही पित्त को भी बढ़ाता है इस कारण बसन्त में हानिकारक होता है क्योंकि इस ऋतु में तो कफ स्वयं ही बढ़ जाता है और रोग उत्पन्न करता है। ग्रीष्म ऋतु और शरद ऋतु में पित्त कुपित हो जाता है, इस कारण पित्त गुण वाला दही इन ऋतुओं में हानिकारक है। इसलिए भिन्न-भिन्न ऋतु में मठा भिन्न प्रकार से सेवन करना चाहिये।

वर्षा ऋतु में सैंधा नमक, ग्रीष्म और शरद में चीनी तथा शिशिर और बसन्त में सोंठ, पीपल, मिर्च और जवाखार मिलाकर मठासेवन करना चाहिये। इस प्रकार ऋतु अनुसार तक्र सेवन से विशेष उपकार होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मठे में निम्न गुण विशेष पाये जाते हैं। क्षुधा को बढ़ाता है, आँखों की पीड़ा को शान्त करता है और जीवनी शक्ति को बढ़ाता है। शरीर में माँस और रक्त की कमी को दूर करता है। आम को नष्ट करता है तथा कफ और वायु को शान्त करता है।

इन्हीं गुणों को ध्यान में रखते हुए आयुर्वेद में स्वस्थ रहने के उपायों का निरूपण करते हुए लिखा है कि—

भोजनान्ते पिबेत्तक्रम्,
निशान्ते च पिबेज्जलम्।
निशा मध्ये पिबेद्दुग्धम्,
किं वैद्यस्य प्रयोजनम्।।

अर्थात्—जो मनुष्य प्रातःकाल उठते ही जल पीता है और भोजन के अनन्तर मठे को व्यवहार करता है तथा शयन समय में दूध पीकर सोता है। उसे कभी किसी वैद्य या डाक्टर की आवश्यकता नहीं होती। यानी मठे में अनेकों ऐसी विशेषतायें भरी पड़ी हैं, जिसका सर्वांशतः कह देना बड़ा दुष्कर है। मठे से कायाकल्प तक किया जाता है।

दुग्ध—अन्न-जन्य, पशु-जन्य

दूध की प्राप्ति केवल गाय, भैंस, बकरी आदि चौपायों से ही होती हो सो बात नहीं है, प्रकृति ने अन्नों और कन्दों में भी दूध की पर्याप्त मात्रा रखी है। मक्का के दूधिया भुट्टों का दूध, ज्वार की पकती बालियों के शस्य कर्णों में उपस्थिति दूध का स्वाद भी बहुतों ने चखा है। जौ में, गेहूँ में भी एक अवस्था में दूध रहता है। गीली मूँगफली के दानों में भी दूध होता है। शकरकन्द में दुग्ध की मात्रा कम नहीं होती उसके पतले तंतु को तोड़ते ही वह दर्शन देने लगता है।

गीली अवस्था में अन्नों में जो रस होता है वह एक प्रकार का दूध ही है, जैसे—गाय, बकरी, भैंस, घोड़ी, गधी, ऊँटनी आदि का दूध होता है।

स्वाद और गुणवत्ता में अन्नों में रहने वाला यह दूध चौपायों से मिलने वाले दूध से किसी प्रकार कम नहीं होता। यह बात दूसरी है कि मनुष्य ने अपनी आँतों को अपनी खाने की गलत आदतों के कारण इतना बलहीन और निर्जीव बना रखा है कि वह उन्हें पचा न सके।

अन्न जब तक गीले रहते हैं, तब उनमें दूध रहता है। वही सूखकर कड़ा अन्न बन जाता है। इन्हीं अन्नों को जब पानी में गलाकर रखा जाता है तो वह कड़ा अन्न पुनः दूध में परिवर्तित हो जाता है। इसीलिये महात्मा गाँधी और राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन मनुष्य के लिये चौपायों का दूध त्याज्य मानते थे और कहते थे कि मनुष्य के जब तक दाँत नहीं उगते, उसे दूध पीने का अधिकार है। बाद में वह अन्न खाये—कच्चा अन्न।

उपरोक्त दोनों महापुरुषों ने अपने व्यक्तिगत अनुभवों के आधार पर कही थी यह बात। उनकी दृष्टि से तो उनके कथन सर्वथा अनुभव सिद्ध सत्य थे। पर आज तक मनुष्य का चौपायों के दूध के साथ पौष्टिकता का और स्वास्थ्य संवर्द्धन का जो आग्रह रहा है, उसे मिटा पाना तो सम्भव नहीं। हाँ, पर इतना तो कहा ही जा सकता है कि दूध जैसे चौपायों से प्राप्त किया जा सकता है वैसे ही अन्नों, कंदों और फलों से भी प्राप्त किया जा सकता है।

गेहूँ, ज्वार, जौ, बाजरा के कच्चे कर्णों से मक्का के दूधिया दानों से, शकरकंदी के तन्तुओं से, नारियल की गिरी से, गीली मूँगफली व सोयाबीन आदि के दानों से सहज ही दूध प्राप्त किया जा सकता है। यही नहीं सोयाबीन और मूँगफली तो ऐसे खाद्य हैं, जिनसे दूध बनाया भी जा सकता है।

या तो गेहूँ के दानों को अठारह घण्टे भिगोकर रखने पर उन्हें पीसा जाय तो उनसे दूध निकल आता है। पर जो दूध सोयाबीन या मूँगफली से बनाया जाता है, वह गुणों में कमोवेश में गाय-भैंस के दूध जैसा होता है।

दूध का स्थानापन्न अन्न—सोयाबीन

घी, दूध की नदियाँ बहाने वाला हमारा प्राचीन गौरव तो अब केवल स्मृति बनकर रह गया है। हमारे देश में दूध का उत्पादन इतना स्वल्प होता है कि प्रति व्यक्ति दूध का औसत दो छटांक से अधिक सम्भव नहीं हो सकता। उस स्वल्प मात्रा में से भी छैने व खोए की मिठाइयाँ बनाने में बहुत सा दूध भेंट चढ़ जाता है। उसी प्राणदायी अमृत को पेट में सड़ाने वाली छूँछ—मिठाइयों के रूप में खाया जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिठाइयाँ बनाने के बाद जो दूध बचता है उससे बालकों, वृद्धों व रोगियों की आवश्यकता भी पूरी नहीं हो पाती। सामान्य व्यक्ति के लिए दूध तो एक दुर्लभ वस्तु बनकर रह गया है।

उत्पादन स्वल्प और उपभोक्ता अपरिमित होने के कारण दूध के दाम आसमान को छूने लगते हैं। ऊँचे दामों पर दूध मिलता है, वह शुद्ध और ताजा हो इसकी गारण्टी नहीं होती। गरीब आदमी तो इतना महँगा सफेद पानी (दूध) नहीं खरीद सकता। पाँच सौ रुपया महीना कमाने वाला आदमी १० रुपये किलो का दूध खरीदने की बात सोच भी नहीं सकता।

ऐसी विकट परिस्थिति से उबरने के दो ही रास्ते हैं, श्वेत क्रान्ति करके दुग्ध का उत्पादन बढ़ाया जाय। यह थोड़े समय में तो सम्भव है नहीं और न प्रत्येक व्यक्ति इस सम्बन्ध में कुछ कर सकता है। गाँवों में तो फिर भी गाय, भैंस आदि पाली जा सकती हैं, किन्तु नगरों व कस्बों में तो यह सब सम्भव नहीं हो सकता। दूसरा उपाय दूध का कोई स्थानापन्न खोजना हो सकता है। कई वस्तुएँ ऐसी हैं जो दूध की स्थानापन्न बन सकती हैं। उनमें सबसे बाजी मार ले जाने वाला पदार्थ सोयाबीन है।

भारत के 'खाद्य अनुसन्धान केन्द्र, मैसूर' ने मूँगफली से दूध बनाने में सफलता प्राप्त की है जो रंग, स्वाद व गुणों में पशुजन्य दुग्ध से मिलता-जुलता है। किन्तु घर में बनाने पर उतना अच्छा दूध नहीं बन सकता। दूसरे मूँगफली के दूध में क्षार बहुत कम मात्रा में होता है जिसके कारण वह दुष्पाच्य होता है। सोयाबीन के द्वारा बनाए दूध में वह बात नहीं होती। यही कारण है कि कई देशों में इसने पशुजन्य दुग्ध जैसी ही लोकप्रियता अर्जित कर ली है।

जापान व अमेरिका में सोयाबीन ने गाय के दूध के स्थानापन्न का स्थान ले लिया है। चीन के शंघाई नगर में सोयाबीन द्वारा बनाया दूध गाय, भैंस के दूध की तरह ही बन्द बोतलों में बाजार में बिकता है। इस दूध की दस किस्में वहाँ उपलब्ध हैं। जापान में प्रत्येक गाँव में सोयाबीन के दूध की दुकानें हैं।

मन्चूरिया तथा चीन के उत्तरी भागों में तो गाय का दूध देखने को भी नहीं मिलता, वहाँ तो सोयाबीन का दूध ही सब लोग प्रयोग में लाते हैं।

गाय के दूध में जो तत्व होते हैं उनकी तुलना सोयाबीन के कृत्रिम दूध से की जाय तो यह बात साफ हो जाती है कि गाय के दूध के स्थान पर इसका प्रयोग करके उन सब तत्वों को न्यूनाधिक मात्रा में पाया जा सकता है जो गाय के दूध में मिलते हैं।

प्रोटीन जो कि हमारे शरीर की वृद्धि तथा टूट-फूट की मरम्मत के लिये बहुत आवश्यक है, वह गाय के दूध में ३.०५ प्रतिशत मिलता है व सोयाबीन के दूध में ३.०२ से ४.६५ प्रतिशत तक मिल जाता है। चिकनाई गाय के दूध में ४.०० प्रतिशत तक होती है, सोयाबीन में यह २ से ३.१० तक मिल जाती है। यह चिकनाई की मात्रा सामान्य मनुष्य के लिये कम नहीं पड़ती। किसी को उससे अधिक चिकनाई चाहिये तो अन्य खाद्य तेलों से यह कमी पूरी की जा सकती है। खनिज लवण गाय के दूध में ५.०० प्रतिशत होते हैं और सोयाबीन के दूध में ०.४१ से ०.५० प्रतिशत तक होते हैं। विटामिन ए, थायमीन, रिबोफ्लीब, चूना, फास्फोरस, लोहा तथा नायसीन आदि तत्व भी उन्नीस-बीस मात्रा में दोनों में समान रूप से मिलते हैं।

सोयाबीन या अन्य पदार्थों द्वारा बनाए गये कृत्रिम दूध में वे सभी गुण तो किसी भी हालत में नहीं आ सकते जो गाय, भैंस के दूध में होते हैं। किन्तु जब वह उपलब्ध ही नहीं हो सकता और सामान्य आदमी की कृत्य सामर्थ्य से परे होता है तो वैसी स्थिति में सोयाबीन का दूध गाय के दूध के स्थान पर प्रयुक्त करके शरीर की वे आवश्यकतायें लगभग पूरी की जा सकती हैं जो दूध से पूरी होती थीं।

कुपोषण की जो भयंकर विडम्बना हमारे समाज में फैली हुई है उससे परित्राण पाने के लिये इस बहुप्रयोजनीय अन्न को अन्धे की लाठी बनाया जा सकता है तथा राजस्थान की उस प्रचलित लोकोक्ति 'नहीं मामा के स्थान पर काना मामा ही भला' की तरह अभावों की पूर्ति की जा सकती है।

पर्याप्त दूध नहीं मिल पाने के कारण बच्चों का शारीरिक-मानसिक विकास नहीं हो पाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गर्भवती तथा प्रसूता और स्तन पान कराने वाली माताओं को दूध नहीं मिले तो उनका स्वास्थ्य का ढाँचा तो लड़खड़ाता ही है, भावी शिशु की शारीरिक, मानसिक बुनियाद भी कमजोर ही रह जाती है। वृद्ध लोगों का पाचन संस्थान शीघ्र पचने वाले भोजन की माँग करता है, उन्हें भी दूध मिलना ही चाहिये। रोगी लोग जो अन्नाहार करने में असमर्थ होते हैं, उनके लिए भी दूध की अनिवार्य आवश्यकता होती है। इन लोगों को दूध नहीं मिले तो वे कुपोषण के शिकार हुए बिना नहीं रहते। इन्हें सोयाबीन का दूध दिया जा सकता है।

सामान्य स्वस्थ व्यक्ति को भी दूध उपलब्ध नहीं होने की स्थिति में आहार विषयक आवश्यकताओं के लिये—अनिवार्य खाद्य तत्वों के लिए दूसरे खाद्य पदार्थों से पूर्ति करने की अपेक्षा सोयाबीन के दूध से सब तत्वों को पाना ठीक रहता है।

सच पूछा जाय तो भारत जैसे गरीब और पिछड़े देश में कई लोगों के लिए रोटी मिल जाना भी बहुत बड़ी बात है। पेट भरना ही जहाँ कठिन हो रहा हो वे लोग आवश्यक तत्वों की ओर ध्यान ही कहाँ दे पाते हैं। ऐसी स्थिति में यह सस्ता दूध अन्न की कमी को भी दूर करने में सहायक हो सकता है। इस सस्ते दूध को बाजार में उपलब्ध करना आज के समय में पुण्य कार्य है।

यों सोयाबीन का प्रयोग गेहूँ के आटे के साथ मिलाकर रोटी के रूप में, दालों तथा अन्य पकवानों के रूप में भी किया जा सकता है किन्तु दूध बनाने से उसके गुणों व पाचकता में वृद्धि हो जाती है।

सोयाबीन का दूध बनाने के लिए पीले व हरे रंग का सोयाबीन उत्तम रहता है। यह दीखने में मटर जैसा होता है। यह दालों के वर्ग में आता है। लाल व काले रंग की इसकी दो अन्य किस्में भी होती हैं। काली व लाल सोयाबीन मनुष्यों के काम की नहीं होती, इसे पशु खाते हैं।

सोयाबीन के अच्छे स्वस्थ दानों को चुनकर पहले धूप में सुखाना चाहिए फिर उसकी दाल दलकर छिलके पृथक् कर लेने चाहिए। इस दाल को पीसकर आटा बनाकर भी दूध बनाया जा सकता है तथा दाल को चार घंटे तक पानी में भिगोकर सिल पर पीसकर भी दूध बनाया जा सकता है। आटे वाली विधि सरल है। आटा अधिक दिनों तक रखने से उसके पोषक तत्व कम हो जाते हैं। अतः एक साथ अधिक आटा नहीं पिसाना चाहिए। आटा खूब महीन होना चाहिये।

सोयाबीन का प्रयोग प्रति व्यक्ति पचास ग्राम से लेकर सौ ग्राम तक ही करना चाहिये। अधिक प्रयोग करने पर हमारा पाचन तन्त्र उसे पचा नहीं पायेगा और लाभ के स्थान पर हानि होगी। वैसे यह अन्य दालों की अपेक्षा शीघ्र पचने वाला होता है। प्रोटीन युक्त दालों में यही एक ऐसी दाल है जो दुष्पाच्य नहीं होती। फिर भी 'अति सर्वत्र वर्जयेत्" के स्वर्णिम नियम का पालन करते हुए निर्धारित मात्रा से अधिक का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

सोयाबीन के आटे को छः गुना पानी में घोलकर करीब आधा घण्टा पड़ा रहने दें। फिर उस घोल को बारीक कपड़े से छान लें। जो छना हुआ द्रव है वही दूध है। उसके अतिरिक्त जो सीठी बच रहती है, उसे गेहूँ के आटे में मिलाकर रोटी बनायी जा सकती है या दाल व सब्जी में डाली जा सकती है।

इस छने हुए दूध को मंद आँच पर दो उबाल आने तक गर्म कर लीजिये। जब यह गुनगना रह जाय, तो इसमें आधा छोटा चम्मच खाने का सोड़ा, दो छोटा चम्मच खाने के काम आने वाले चूने का पानी, चार छोटे चम्मच गुलाब-जल और यदि उपलब्ध हो तो थोड़ा-सा गाय का दूध मिला देने से स्वाद बढ़ जाता है। चूने का पानी कैल्शियम की पूर्ति करने के लिए मिलाया जाता है और गुलाब-जल सुगन्धी के लिये। इस दूध में देशी शक्कर मिलाकर काम में लिया जाय तो दूध से मिलने वाले पोषण का लाभ लिया जा सकता है।

इसी दूध में सूखे मेवे डालकर खीर बनाई जा सकती है। पकाया हुआ दलिया या चावल मिलाकर भी खीर बन सकती है। मीठा करने के लिए शक्कर के स्थान पर छुहारे व ताड़ गुड़ का प्रयोग करना उत्तम रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सोयाबीन को गलाकर सिल या खरल पर पीसकर बनाये जाने वाली प्रक्रिया बहुत श्रम साध्य है। इस प्रकार बनाये गये दूध में अधिक जीवन तत्व पाये जाते हैं। सोयाबीन के छिलकों का प्रयोग नहीं करना चाहिये। ये बहुत देर से पचते हैं व पेट खराब करते हैं। आटे से दूध बनाना बहुत सरल होता है।

सोयाबीन के इस दूध में थोड़ा दूसरा सपरेटा दूध मिलाकर जामन देकर जमा देने पर चार-पाँच घण्टे में दही जम जाता है। इस दही का सामान्य दही की तरह खाने अथवा कढ़ी, रायता व सब्जी बनाने में प्रयोग किया जा सकता है।

इसके दही में पानी मिलाकर मथने पर दही की छाछ (मट्ठा) बनाई जा सकती है। इसमें मक्खन भी निकलता है जो अच्छा स्वादिष्ट होता है। सोयाबीन के खौलते दूध में नीबू का रस डालकर उससे छैना भी बनाया जा सकता है जिससे मिठाइयाँ बनाई जा सकती हैं। विदेशों में इससे पनीर भी बनाया जाता है। इसी दूध का पाउडर भी बन सकता है।

सोयाबीन का प्रयोग दूध, दही, मट्ठा व पनीर बनाने के अतिरिक्त मिठाइयाँ व पकवान तथा बिस्किट, नानखटाई बनाने में होता है। इसकी कढ़ी व दाल भी बनती है। इससे तेल भी निकाला जा सकता है।

अपने इन गुणों व अनेकानेक उपयोगों में आने के कारण इस फसल को गरीबों की कामधेनु के अलंकरणों से विभूषित किया जा चुका है। इस पौधे में हर मिट्टी व हर प्रकार के जलवायु में उगने व फलने की आश्चर्यजनक क्षमता पायी जाती है। हमारे देश में भी अब इसका उत्पादन बढ़ रहा है फिर भी इसका उपयोग न जानने के कारण इसकी बिक्री बाजार में अन्य अनाजों की तरह नहीं हो पाती।

इसका अधिकाधिक उत्पादन व इसके प्रयोगों का प्रचार करने की हमारे देश में बड़ी आवश्यकता है। सोयाबीन का दूध, दही जिस प्रकार जापान, चीन व मन्चूरिया में बाजार में दुकानों पर बिकता है वैसा ही हमारे देश में भी होना चाहिये। इसके लिये प्रयास करने चाहिये। पचास पैसे किलो का यह दूध, दही मिलावटी दूध व पाउडर के दूध से अधिक ही लाभ देगा व बिकेगा यह सुनिश्चित है।

सोयाबीन की उपयोगिता समझी जाय

बच्चों को कुपोषण से बचाने व उनके समुचित विकास के लिए दूध की बहुत अधिक आवश्यकता पड़ती है परन्तु अशुद्धता एवं कमी, मँहगाई के कारण दूध समुचित मात्रा में नहीं मिल पाता। शरीर के पोषण के लिए प्रोटीन, चर्बी, कार्बोहाइड्रेट, क्षार, विटामिन की आवश्यकता पड़ती है। ये सारे तत्व दूध या सोयाबीन में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होते हैं। सोयाबीन से निर्मित दूध, दही, मट्ठा गाय-भैंस के दूध से कहीं अधिक उत्तम होता है किन्तु इसका मूल्य दूध के मूल्य की अपेक्षा सोलह गुना कम है। सोयाबीन में माँस से दुगुना, अण्डे से तिगुना और दूध से ग्यारह गुना अधिक प्रोटीन पाया जाता है। इसमें २.१ प्रतिशत शर्करा पाई जाती है किन्तु श्वेतसार न होने के कारण अधिक खाने पर पेशाब में चीनी नहीं मिलती अतः मधुमेह की बीमारी की सोयाबीन मुख्य औषधि है। सोयाबीन लौह की अधिकता के कारण रक्ताल्पता में विशेष सहायक है। यह दुर्लभ 'बी-विटामिनों' से युक्त है। सोयाबीन—स्मरण शक्ति तथा कार्यक्षमता बढ़ाने में, स्नायुओं को शान्त करने में, शरीर को स्वस्थ रखने में, चिड़चिड़ापन को दूर करने में, यौवन को दीर्घस्थायी बनाने में, व लम्बी आयु प्रदान करने में सर्वाधिक उपयोगी प्रमाणित हुआ है। इसकी एक विशेष वस्तु मस्तिष्क की मरम्मत करती है। यह एक क्षारधर्मी है एवं फास्फोरस व कैल्सियम का मुख्य प्राप्ति केन्द्र है।

हजारों वर्षों से मंगोलिया, जापान, मंचूरिया, चीन आदि देशों में इसका उपयोग अधिकाधिक किया जाता है। चीनियों का दृढ़ विश्वास है कि इससे शरीर का वजन बढ़ता है तथा शरीर में शीघ्रता से वृद्धि, शरीर का रंग उज्ज्वल एवं शरीर सुगठित व स्वस्थ हो जाता है। इन तथ्यों की पुष्टि यूरोप, अमेरिका आदि के अन्वेषणों से की जा चुकी है।

गर्मियों में बच्चों के दस्त में सोयाबीन का दूध बहुत लाभकारी होता है। शीघ्र पच जाता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और पेट की ऐंठन समाप्त हो जाती है। बोस्टन के दमाग्रस्त बच्चे—जो दूध या खाना नहीं पचा पाते थे, उन्हें सोयाबीन का दूध अधिक लाभकारी रहा एवं दमे का असर भी बहुत कम रहा।

डा. एराह ने १९१० में सोयाबीन के आटे को पानी में मिलाकर पेचिश से ग्रस्त बच्चे को दिया तो उसकी पेचिश बन्द हो गयी। उबाइयाँ, अंतड़ियों के सभी रोग, जी मिचलाना आदि आटे के प्रयोग से दूर हो जाते हैं।

बम्बई के माटुंगा अनाथालय के डा. तिलक ने सोयाबीन के आटे को गेहूँ-बाजरे में २० प्रतिशत मिलाकर बच्चों को दिया तो उनके स्वास्थ्य पर बहुत अच्छा प्रभाव पड़ा। इसके आटे में मिलाने से रोटी के पोषक गुण प्रचुर मात्रा में बढ़ जाते हैं। आटे में २० प्रतिशत चर्बी होने के कारण घी की आवश्यकता बिल्कुल नहीं पड़ती। इसकी रोटी अधिक टिकाऊ और सुपाच्य भी अधिक होती है।

उत्तरी चीन और मंचूरिया में न दूध मिलता है न मिलने पर कोई पीता है। वहाँ के शिशु सोयाबीन के दूध से स्वस्थ रहते हैं क्योंकि बच्चों के शरीर में सोयाबीन के प्रोटीन का ६० प्रतिशत भाग ग्रहीत होता है।

यह भ्रान्तिपूर्ण तथ्य है कि यह बहुत देर से हजम होता है। यदि इसे उचित ढंग से पकाया जाय तो पौष्टिक तत्वों के होते हुए भी अन्य खाद्यान्नों से अधिक सुपाच्य होता है। मुख्यतः यह इतना सुपाच्य है कि बूढ़े, कमजोर, बच्चे तथा रोग से उठे लोगों के पथ्य में बहुत ही अधिक लाभकारी प्रमाणित है।

सोयाबीन मुख्यतः हरे, पीले, बादामी , काले रंग में मिलता है। काले रंग का सोयाबीन पशुओं के उपयोग में आता है।

सोयाबीन से विनिर्मित दूध पौष्टिकता की दृष्टि से काफी उपयोगी है। यदि इस दूध में खौलते समय ही प्रति पाव दो चम्मच गुड़ व थोड़ा कपूर व थोड़ी इलायची चूर्ण डाल दें तो स्वाद में निखार आ जाता है और गंध भी चली जाती है। दूध में चीनी के प्रयोग से कुछ गन्ध रह जाती है इस तरह पाँच रुपये के सोयाबीन में ढाई किलो दूध तैयार हो जाता है।

दही में लैक्टोबेसिलस—"लैक्टिक एसिड" उत्पन्न कर के पेट के सभी विभिन्न रोगों के कीटाणुओं को नष्ट कर डालता है तथा स्वास्थ्यप्रद कीटाणुओं को बसाता है। यह पूर्णतया प्रमाणित हो चुका है कि सोयाबीन के दही के कीटाणु अन्य दूध से निर्मित दही के कीटाणुओं से आकार में दुगुने संख्या में अधिक होते हैं। सोयाबीन के दही के कीटाणु बड़ी तेजी से बड़ी आँत में फैलकर पाचन क्रिया को शक्तिशाली बनाते हैं।

दही से मट्ठा बनाया जा सकता है। चीनी और नीबू के मिला देने से स्वादिष्ट शरबत बन जाता है। चीनी के स्थान पर मट्ठे में मधु या तरल गुड़ अधिक स्वादिष्ट लगता है।

सोयाबीन से जब दूध बनाकर खौलाते हैं उसी समय उसमें नीबू का रस डाल दें। पानी कटकर उत्तम छैना बन जाता है। इसमें चीनी मिलाकर खायें अथवा मिठाइयाँ बनायें। कोचीन, चीन में इसी छैने को सुखाकर उसे चूर्णकर बिस्कुट, रोटी व दही प्रभृति के साथ विस्तृत रूप में व्यहृत किया जाता है।

सोयाबीन को भूनकर उसके छिलके फैंक दें, चक्की में पिसाकर आटा तैयार कर लें। यह गेहूँ के मैदे से भी अधिक लाभकारी होता है। जर्मनी, रसिया, इंग्लैण्ड व अमेरिका आदि देशों में गेहूँ के आटे को अधिक पौष्टिक बनाने के लिए उसमें सोयाबीन प्रचुर मात्रा में मिलाते हैं।

सोयाबीन को दिन में, दो-तीन बार पानी बदलकर रखने से लगभग दो दिन में अंकुरित हो जाता है। इन अंकुरों में बहुत से पौष्टिक तत्व निहित होते हैं। चीन में सोयाबीन के अंकुर सब्जी की तरह प्रयोग किये जाते हैं तथा साल भर अंकुरित सोयाबीन की बिक्री होती है। अंकुरण से सोयाबीन अधिक सुपाच्य हो जाता है एवं इसमें निहित प्रोटीन, चीनी, 'बी' व 'सी' विटामिन अधिक वृद्धि पाते हैं। कोई-कोई मूल्यवान 'बी' विटामिन लगभग सौ गुना तक वृद्धि पाता है।

इसे साधारणतया सिझाकर सब्जी बनाई जा सकती है और सलाद के साथ खाने पर भी स्वादिष्ट लगता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सोयाबीन की गोली बनाकर गत जर्मनी के महायुद्ध में सैनिकों को दी जाती थी। इससे अधिक समय तक कुछ नहीं खाते थे और पुष्ट रहते थे। आजकल अमेरिका और यूरोप में इसे दूध के विकल्प के रूप में शिशु खाद्य, माल्ट सोयाबीन, डिब्बे में बन्द हरा सोयाबीन, कच्चा सोयाबीन, खाना पकाने का तेल, सलाद तेल, सोयाबीन का मक्खन, चाकलेट, बिस्कुट, मधुमेह के रोगी का खाद्य, विभिन्न नाश्ते एवं चटनी मुख्य हैं।

सोयाबीन का उपयोग अन्य कार्यों में भी होता है। इससे रंग, वार्निश, प्लास्टिक, बरसाती कपड़ा, कृत्रिम रबड़, मोमक्ती, साबुन, अयेल क्लॉथ, छापने की स्याही, गुड़िया, खिलौने, वनस्पति घी, ग्लिसरीन आदि निर्मित किया जाता है। बीज निकालने के बाद इसका पौधा चारे के काम में आता है। तेल निकालने के बाद भूसी खेत की उत्पादन शक्ति बढ़ाने में प्रयुक्त की जाती है।

आजकल सोयाबीन की खेती विश्व में सर्वाधिक की जाती है। चीन, जापान, मन्चूरिया, मंगोलिया, कोरिया, अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, रसिया और आस्ट्रेलिया में इसकी खेती व्यापक स्तर पर की जाती है। अमेरिका में प्रतिवर्ष ७४ करोड़ डालर मूल्य का सोयाबीन उत्पादित किया जाता है।

अपने देश में सोयाबीन के उत्पादन तथा उपयोग का प्रचलन आवश्यक है। नये प्रयोग में परम्परावादियों को सदा अनख लगता है और ये ढर्रे में परिवर्तन करने के लिए सहज रजामन्द नहीं होते। यह कठिनाई सोयाबीन की कृषि करने तथा आहार में सम्मिलित करने के सम्बन्ध में भी हो सकती है तो भी इस उपयोगी प्रयोग के लिये उत्साह उत्पन्न करने और उसके लाभ समझने-समझाने का प्रयत्न तो होना ही चाहिए।

सोयाबीन का विकल्प मूँगफली

सोयाबीन यों तो दाल वर्ग का एक धान्य है पर उसमें दूध में पाये जाने वाले अधिकांश तत्व मौजूद हैं। इतने पर भी उसका मूल्य दूध की तुलना में दशवाँ भाग ही है। संसार भर में अब तक सोयाबीन से अधिक पोषणदायक धान्य दूसरा नहीं खोजा जा सका है। इसमें विटामिन, खनिज लवण, प्रोटीन, शर्करा एवं चिकनाई के वे सभी रासायनिक पदार्थ मौजूद हैं, जिनकी मानवी शरीर के पोषण के लिए आवश्यकता पड़ती है।

सोयाबीन में इतनी विशेषता होते हुए भी एक कठिनाई यह है कि उसके उत्पादन की ओर लोगों का ध्यान कम ही गया है। इसलिए उसकी फसल जहाँ-तहाँ स्वल्प मात्रा में ही होती है। इसलिए अन्य धान्यों की तुलना में यह महँगा भी रहता है। ऐसी दशा में उसके समकक्ष तिलहन, मूँगफली को काम में लाना होगा। संसार के समस्त देशों की तुलना में उसकी फसल ३५ लाख टन—अर्थात् सबसे अधिक होती है। अन्य तिलहनों की अपेक्षा ये सस्ती भी रहती है, इसलिए वनस्पति घी तथा सामान्य तेल प्रयोजनों में उसी का उपयोग अधिक होता है।

मूँगफली सस्ती होते हुए भी शक्ति की दृष्टि से बहुत आगे है। उसमें प्रति पौण्ड २४५० कैलोरी-पाई जाती है। यदि उसे हजम किया जा सके तो गरीबों की मेवा कही जाने वाली मूँगफली को उच्च-कोटि का पौष्टिक खाद्य-पदार्थ कहा जा सकता है। विश्लेषण की दृष्टि से उसमें २.४ प्रतिशत प्रोटीन, ४.५ प्रतिशत चिकनाई, ४.२ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट तथा ०.०२ प्रतिशत खनिज लवण पाये जाते हैं। तुलनात्मक दृष्टि से उसे सोयाबीन से कुछ ही कम गुणवान पाया जायेगा।

अपने देश में प्रधानतया गेहूँ, चावल, दाल, चिकनाई, शक्कर का खाद्य-पदार्थों के रूप में प्रयोग करते हैं। इनमें सुपाच्य प्रोटीनों की कमी रहती है। दालों में उसकी मात्रा कुछ अधिक तो होती है, पर स्तर की दृष्टि से वह घटिया और पचाने में कठिन पड़ती है। सुपाच्य प्रोटीन दूध-दही का होता है, पर वह तो उस व्यक्ति के हिस्से में १०० ग्राम के लगभग ही आता है जबकि सामान्य श्रमिक को कम से कम एक किलो की आवश्यकता है। फिर दूध मँहगा भी तो है। सामान्य श्रेणी का मनुष्य उतना पैसा खर्च नहीं कर सकता। अस्तु, पोषण की आवश्यकता पूरी करने के लिए सुलभ और सस्ते पोषक पदार्थ मूँगफली को अपने आहार में सम्मिलित करने से सन्तुलित आहार की आवश्यकता का एक भाग पूरा किया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामान्य श्रम करने वाले व्यक्ति को दिन भर में ८५ ग्राम प्रोटीन, ३५ ग्राम चिकनाई, ४०० ग्राम अन्न, ५०० ग्राम फल, सब्जी तथा कुछ खनिज लवणों की आवश्यकता पड़ती है। इन पदार्थों में से कई की पूर्ति मूँगफली से हो सकती है। चिकनाई का अंश अधिक होने से वह पचने में कठिन पड़ती है, इसका सरल उपाय यह है कि कोल्हू में पेलकर उसका दो-तिहाई तेल निकाल दिया जाय और एक-तिहाई तेलयुक्त खली को आटे में मिलाकर तथा दूसरी प्रकार खाया जाय। प्रचलन के अनुसार यह खली पशुओं के काम आती है, पर वह मनुष्यों के लिए भी समान रूपे से उपयोगी है, और उसका उपयोग पौष्टिक खाद्य-पदार्थ के रूप में किया जा सकता है। सोयाबीन का तेल भी इसी प्रकार निकाला जा सकता है और उसे सुपाच्य बनाया जा सकता है। सोयाबीन का दूध बनाते समय अथवा आटा बनाने से पूर्व उसे उबालने की विधि अपनाई जाती है। इसका उद्देश्य तेल का अंश निकाल देना ही है। यही कार्य उसे भी कोल्हू में पेलकर तेल निकाल देने और खली का उपयोग करने से भी हो सकता है। एक-तिहाई खली और दो-तिहाई आटा मिलाकर रोटी बनाई जा सकती है। यह अपेक्षाकृत सस्ती भी पड़ेगी और पौष्टिक भी रहेगी। जिनकी पाचन-शक्ति अच्छी है, वे प्रायः १५० ग्राम कच्ची मूँगफली भी पचा सकते हैं, पर कम परिश्रम करने वालों के लिए उसमें अधिक मात्रा में रहने वाला तेल हजम करना कठिन पड़ता है। यदि उसे ५० ग्राम जितनी स्वल्प मात्रा में अच्छी तरह चबाकर कच्चा खाया जा सके तो भी अच्छा है।

पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के शोध-कर्ताओं ने असली दूध और मूँगफली के दूध की तुलना करते हुए कई बातों में समान और कई में मूँगफली के दूध को अधिक अच्छा बताया है। उनका कहना है कि दोनों में प्रोटीन और कैल्शियम की मात्रा समान है। किन्तु चिकनाई, फास्फोरस, विटामिन-ए आदि की मात्रा मूँगफली के दूध में अधिक है। इसका बनाना सोयाबीन के दूध से भी अधिक सरल है। दाने दो घण्टे पहले पानी में भिगो दिये जायँ। इतने में ही लाल छिलके फूल जाते हैं और मसलकर अलग किये जा सकते हैं। इसके बाद इन बीजों को सिल पर पीसकर लुगदी बनाली जाय और उसे पानी में घोल छानकर दूध बना लिया जाय। इच्छानुसार गरम या ठण्डे रूप में उसका प्रयोग किया जा सकता है। दही का जामन देने से इसका भी दही बन जाता है। सोयाबीन की तरह इसके बीजों को भी खौलते पानी में पन्द्रह मिनट उबाला जाय तो तेल की मात्रा घट जाती है। कमजोर पेट वाले लोगों के लिए दानों को उबालकर तब लुगदी बनाना अच्छा रहता है। आटे में सोयाबीन की खली की मात्रा कम मिलती है, पर मूँगफली की खली उससे कुछ अधिक मिलाई जा सकती है।

इन दिनों गाय, भैंस के दाम बढ़ते जा रहे हैं। कटने के कारण संख्या भी कम हो रही है। साथ ही चारा भी सस्ता नहीं है। ऐसी दशा में इस बढ़ती हुई महँगाई में अगले दिनों घी, दूध के सस्ते होने की आशा नहीं करनी चाहिए। शुद्ध वस्तुएँ मिलने लगने की आशा तब तक करनी पड़ेगी जब तक नया युग नहीं बदला जाता। इसलिए जो देर में करना पड़े उसे समय से पूर्व अपनी बुद्धिमानी के सहारे ही कर लिया जाय तो क्या बुरा है ?

घी का उपयोग पूड़ी-पकवानों में होता है। अब लोगों के पेट ऐसे नहीं रहे जो ऐसी गरिष्ठ वस्तुयें हजम कर सकें। जो हजम न हो सके उसे परम्परा के कारण अपनाये रहना व्यर्थ है। संसार भर के किसी भी देश में इतनी अधिक चिकनाई वाली वस्तुयें नहीं खाई जातीं। पहलवानों या पत्थर तोड़ने वालों की बात अलग है, आज तो मध्यम स्वास्थ्य वाला पकवान खाकर बीमार पड़ता है चाहे वह असली घी का बना हो या नकली का। समय आ गया जब दावत की सामग्रियों का नये सिरे से निर्धारण किया जाय। लोग अनायास ही बड़े पानी गप्पे जैसी चीजें चाट वालों की दुकान पर बैठकर खाते हैं। खारी-मीठे बिस्कुटों का रिवाज बढ़ता है। अगले दिनों नई पाक विद्या का आविष्कार होगा। इसके लिए देश में प्रचलित विभिन्न स्वाद-पदार्थों का सम्मिश्रण करके दावतों की ऐसी सामग्री बन सकती है, जिसमें चिकनाई की मात्रा कम हो। डॉक्टर एक स्वर से रक्तचाप का, हृदय रोगों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का, मुटापे का कारण अक्सर चिकनाई खाना बताते हैं। चिकित्सकों की यह राय बहुत दिनों तक अनसुनी नहीं की जा सकती। समय ने एक से बढ़कर एक आविष्कार करा लिये। सौ रुपया किलो का घी देव-दुर्लभ हो जाने और वेजीटेबिल में भी जाल-जंजाल भरा रहने की वजह से जिन्हें मिष्ठान-पकवान की नितान्त आवश्यकता पड़ेगी, खालिस तेल का उपयोग करेंगे। उसकी जातियाँ तो और भी सहज उपलब्ध हैं। नारियल, विनोला, मूँगफली, तिल, सोयाबीन जैसे तेलों में से जो जिनके स्वाद के अनुकूल पड़े, जो सरलता से उपलब्ध हों, वे उन्हें काम में ला सकते हैं। यह तथाकथित घी की तुलना में सस्ते पड़ेंगे ही, साथ ही जी में यह उथल-पुथल भी न रहेगी कि न जाने क्या बनाकर क्या दिया गया होगा और जो दिया गया है उसमें क्या अगड़म्-बगड़म् भरा हुआ है।

उपरोक्त तेलों में से जो पसंद तो हों पर अभ्यास न होने के कारण गले न उतरते हों, उनका उपाय है कि उन्हें शोधित कर लिया जाय। धुली तिली का तेल, मूँगफली का तेल बाजार में मिलता है। घर पर भी यह साफ करने की क्रिया कठिन नहीं है। हर तेल के फार्मूले कुशल हलवाई जानते हैं। नीबू डालकर, कॉजी के सहारे तेल को डालकर उसका गँदलापन नीचे बिठा देने और साफ वाला ऊपर तैरा लेने की विधि से किसी भी तेल को गंध रहित बनाया जा सकता है। जिनका पकवानों के बिना काम न चलता हो, वे उन्हें इन्हीं के सहारे आसानी से बना सकते हैं।

इस परिवर्तन का एक बड़ा लाभ यह होगा कि असली दूध यदि किसी को मिल सकता हो तो उसका उपयोग पकवानों में, खोये में, मिठाई में प्रयोग न होने से बच्चों को, बीमारों को किसी भी प्रकार मिल तो सकेगा। असली घी, दूध का अधिकांश भाग इन्हीं व्यंजनों में नष्ट हो जाता है जो पैसा और स्वास्थ्य दोनों को ही खराब करता है।

कोई जमाना था जब असली-नकली घी का बहुत झमेला चलता था। जो नकली घी का प्रयोग करते थे, उन पर नाक-भौं सिकोड़े जाते थे और पेट खराब कर देने जैसे ताने दिये जाते थे। पर अब कुछ ही दिन में समय पूरी तरह बदल गया। गरीब-अमीर सभी के यहाँ वेजीटेबिल घी इस्तेमाल होता है, इसमें किसी दुराब-हिसाब की आवश्यकता भी नहीं पड़ती। सभी जानते हैं कि असली और नकली एक ही चीज के दो नये नाम हैं। शेखीखोर गाँठ काटते हैं और बढ़-चढ़कर बातें करते हैं। भले आदमी असलियत को बिना लाग-लपेट के कह देते हैं अब एक और कदम आगे बढ़ना ही है। साफ सुथरे तेल को खाने में किसी को आपत्ति न होगी। वैसे वैचारिक दृष्टि से यही अच्छा है कि तिल शक्कर के लड्डू बनाकर ऐसी मिठाई बनायें जिसमें न नाक-भौं सिकोड़ने की आवश्यकता हो न जेब कटाने और प्रथा-प्रचलन के नाम पर अगड़म- बगड़म् उदरस्थ करने की।

वनस्पति, घी—चिन्ता का विषय

गान्धी जी कहते थे कि तेलों का गाढ़ापन या भारीपन आसानी से कम किया जा सकता है और उसे खाने के काम में भली प्रकार लाया जा सकता है। फिर उसे घी की शक्ल देने के लिए क्यों जमाया जाय और क्यों महँगा बनाया जाय ? यह एक जाली काम है। जाली सिक्का बनाने पर कड़ी सजा होती है। फिर जाली घी बनाने वालों को क्यों छूट दी जाय ? शक्ल बदलकर कुछ को कुछ दिखा देना, एक प्रकार की बाजीगरी है। यह मन बहलाव मनोरंजन तक के लिए किया जाय, तो कुछ तुक भी है। पर जब उसका उपयोग खाद्य पदार्थ के रूप में किया जाता है, तो फिर उसे वास्तविक रूप में ही रहना चाहिए।

तेल में हाइड्रोजन गैस जैसे तत्व गुजारे जाते हैं, तब उसके जमने की प्रक्रिया पूरी होती है। यह एक बहकावा है। बहकावा भी ऐसा जिससे खाने वाले को अतिरिक्त पैसा देना पड़ता है और स्वास्थ्य में विकृति आने का जोखिम भी रहता है। पाचन की दृष्टि से भारी पड़ता है। निर्माण कार्य में प्रयुक्त होने वाली प्रक्रिया में जिन रसायनों का उपयोग होता है, वे सर्वथा निर्दोष नहीं हैं। उनका एक अंश मिला रह जाता है और फिर वह धीर-धीरे अपना प्रभाव छोड़ते रहकर हानिकारक तत्वों का एक बड़ा जमाव शरीर में कर देता है। इससे सामान्य स्वास्थ्य को हानि ही पहुँचती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अच्छा यही है कि शुद्ध तेल खाने की आदत डाली जाय। तिल का, मूँगफली का, नारियल का, सोयाबीन का तेल ऐसा ही है, जिससे अप्रिय गंध नहीं आती। केवल सरसों का तेल ही ऐसा है, जिसमें गंध और स्वाद की दृष्टि से तीखापन होता है। इसे घटाने के लिए उसे पकाते समय नीबू डालकर गंधरहित किया जा सकता है।

तेल यदि अपने ही समीपवर्ती कोल्हू से तैयार किया गया है, उसमें चर्बी आदि वस्तुयें मिलाये जाने की आशंका नहीं रहती, अन्यथा मिलावट करने की कला में प्रवीण लोग ऐसा करने में नहीं चूकते जिसमें उन्हें मोटा मुनाफा मिले। भले ही खाने वाला अनजान में उसे उदरस्थ करे, जिसे उपयोग करने की भावनात्मक दृष्टि से तनिक भी इच्छा नहीं है। जिस वनस्पति तेल में चर्बी आदि की मिलावट हो, उनके डिब्बों पर इसका उल्लेख होना चाहिए। इससे कम-से-कम खाने वालों को यथार्थता का ज्ञान तो रहेगा। वे किसी धोखेबाजी के शिकार तो न होंगे।

महँगे असली घी का स्थान वेजीटेबिल घी लेता जा रहा है। फलतः असली घी की माँग कम होती जा रही है। खपत कम होने कारण लोग असली घी का व्यवसाय करने से, पशु पालन से हाथ सिकोड़ते जाते हैं। इससे उन कार्यों में लगे हुये अनेक लोगों की आजीविका मारी जाती है। गृह उद्योग स्तर का एक बड़ा, साथ ही उपयोगी कार्य भी समाप्त होता जा रहा है। परिस्थिति यह बनती जा रही है कि अब असली घी के दर्शन दुर्लभ होने लगेंगे और उस साधारण से एवं पौष्टिक खाद्य से वंचित होना पड़ेगा।

भारत कृषि प्रधान देश है। यहाँ खेती के साथ पशु-पालन का भी व्यवसाय जुड़ा रहता है। दूध की बिक्री तो बड़े नगरों के इर्द-गिर्द होती है। जो गाँव दूर पड़ते हैं, जहाँ यातायात की, परिवहन की सुविधा नहीं है, वहाँ दूध नहीं बिकता, वरन् घी ही बनाया जाता है, जिसे इकट्ठा करके बेचा जा सके, पर अब तो नकली घी की भरमार से वह पशु-पालन का धन्धा भी बेतरह घटता जा रहा है। यह सब हमारे लिए चिन्ता का विषय है। इसका कुछ समाधान खोजा जाना चाहिए।

विटामिनों का खजाना है सूरजमुखी

सूरजमुखी पहले तो किसी-किसी के यहाँ मात्र फूलों की दृष्टि से बगीचे में उगाया जाता था किन्तु आजकल देश भर में सूरजमुखी की खेती तेल पूर्ति के उद्देश्य से की जा रही है। शासन द्वारा भी सूरजमुखी की खेती को प्रोत्साहन दिया जा रहा है।

सूरजमुखी नाम से प्रसिद्ध होने में इस पौधे की कुछ विशेषतायें हैं। यह सूरजमुखी इस कारण कहलाता है कि इसका फूल जो बहुत बड़ा होता है, अपना मुख सदैव सूरज की ओर किए रहता है। प्रायः सूर्य उगने से पहले फिर पूर्व की ओर अपना मुख कर लेता है। इसके व्यवहार से लगता है मानो पूर्व जन्म का कोई सविता भक्त पौधा बनकर खड़ा हो गया हो और सविता देव की उपासना में संलग्न हो।

सूरजमुखी पर विदेशो में पहले शोधें हुई हैं। भारत में तो इसके तेल को खाद्य तेल के रूप में प्रयोग किया जा रहा है। मात्र इस उद्देश्य को लेकर ही विश्लेषण किया गया था। इस विश्लेषण में विदेशों की शोध का प्रतिपादन करके पाया गया कि यह विटामिन डी और ए से भरपूर है और खाद्य तेल के रूप में इसका उपयोग किया जाना निरापद है। अब इसका तेल कहीं-कहीं उपयोग में लाया जाने लगा है। इसका अधिकांश तेल वनस्पति (जमा हुआ तेल) बनाने में खपत होता है।

अमेरिका स्थित इण्डियाना विश्वविद्यालय के रसायन विभाग के प्रोफेसर डाक्टर इजरालेबिन ने इस पर शोध कार्य किया है। रासायनिक विश्लेषण में उन्होंने लिखा है कि उसमें ३५ प्रतिशत फॉस्फोरस, ७.५ प्रतिशत कैल्शियम और कुछ क्लोरीन पाया जाता है। रासायनिक विश्लेषण के अतिरिक्त उन्होंने इसका स्वयं प्रयोग करके खाकर अनुभव किया कि प्रारम्भिक सप्ताह में ही उनमें आश्चर्यजनक परिवर्तन हुआ है। उनके मसूढ़ों से रक्त आना बन्द हो गया है। कुछ सप्ताह पश्चात् दाँतों के छेद बन्द हो गये और छे (केविटी) हो जाने से जिन दाँतों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पायरिया होने की आशंका थी वह समाप्त हो गई। उन्होंने आँख पर भी इसका प्रभाव देखा। उनकी आँख में रह-रहकर कम्पन होता था, वह सदा के लिए समाप्त हो गया। यही नहीं आँखों की दृष्टि बढ़ गई और आँखों में बर्फ के कारण चौंधियाने का कष्ट था, वह भी चला गया। उन्हें शारीरिक शक्ति में वृद्धि का अनुभव हुआ तथा त्वचा में परिवर्तन देखे।

सूरजमुखी के बीज़ों को उन्होंने २-३ मुट्ठी प्रतिदिन की मात्रा में तीन वर्ष तक खाकर यह अनुभव बतलाये हैं—

सूरजमुखी के बीजों में विटामिन "बी" बहुत मात्रा में होता है। विटामिन "ए" भी इसमें बहुत होता है। यह विटामिन आँखों और त्वचा के लिए महान् उपयोगी होते हैं। सिर के बाल कड़े और खुरदरे हो जाने पर भी विटामिन "ए" पर्याप्त मात्रा में मिलता रहे तो व्यक्ति दीर्घायु होकर स्वस्थ बना रह सकता है। बुढ़ापे की शिथिलता में यह उपयोगी है।

इसमें जल, प्रोटीन, वसा, कार्बोहाईड्रेट और शर्करा भी पाये जाते हैं। इनमें प्रोटीन और वसा कमशः ४६ और २६ प्रतिशत पाये जाते हैं। विटामिन ए और बी से भी संयुक्त हैं। कैल्शियम और फॉस्फोरस भी पर्याप्त मात्रा में होते हैं। अतः यह एक उत्तम खाद्य हो सकता है।

रूप के निवासी इसकी विशेषतायें बहुत पहले से जानते थे। इसके इन गुणों के कारण विगत द्वितीय महायुद्ध में रूस में इसका खूब प्रयोग हुआ। सेना के सिपाहियों को भी इसका प्रयोग कराया गया। आकस्मिक खाद्य के रूप में उनकी जेबें सूरजमुखी के बीजों से भरी रहती थीं और जब भी उन्हें अवसर मिलता, उन्हें फोड़कर खाते रहते। रूस में इसका बहुत प्रचलन है। वहाँ के लोग भारत की तरह इसे मूँगफली और चिलगोजा जैसे जेबों में डालकर घूमते हैं और एक-दूसरे के मिलने पर सम्मान से देकर साथ-साथ खाते रहते हैं। इनको भूनकर नमक लगाकर भी खाया जाता है किन्तु भूनने से इसके विटामिनों में अन्तर हो सकता है। अतएव कच्चे बीज अधिक उपयोगी रहते हैं।

सूरजमुखी के द्वारा दूध की कमी की पूर्ति की जा सकती है। दूध में जो विटामिन "ए" और कैल्शियम मिलता है, उसका अधिकांश भाग तो उसके रख-रखाव और गरम करने में समाप्त हो जाता है। उसको कृत्रिम ढंग से रखने में अधिकांश पोषक तत्व विकृत हो जाते हैं और सारे का सारा शरीर के द्वारा ग्राह्य नहीं होता। किन्तु सूरजमुखी के विटामिन विकृत नहीं होते और इसके पोषक तत्व सारे के सारे पच जाते हैं और शरीर के अंश बन जाते हैं।

इस समय देश में पोषक आहार की कमी की बात चली हुई है। देश की तीन चौथाई जनता को आहार के द्वारा पोषक तत्व प्राप्त नहीं होते और उनकी कमी के कारण विभिन्न रोगों के लिए तो यह प्रकृति का वरदान ही समझना चाहिए। किसान इतने मूल्यवान, प्रकृति प्रदत्त पोषक तत्वों से भरपूर सूरजमुखी को तो थोड़े से पैसे में बेच देता है और स्वयं अपोषण का कष्ट भोगता रहता है। यदि उन्हें इस बात का शिक्षण मिल सके तो वे इसका सदुपयोग कर सकते हैं और अपना आहार पुष्ट तत्वों से भरपूर बनाकर लाभ उठा सकते हैं।

यो तो प्रत्येक वनस्पति फूल, फल के पौधे सूरज की गर्मी से ही उगते, बढ़ते, फूलते और फलते हैं किन्तु सूरजमुखी की विशेष अभिरुचि सूर्य की ओर होती है, सविता देवता से विशेष तत्व प्राप्त करता है। उसके माध्यम से दृष्टि दोष, कैल्शियम, फॉस्फोरस प्रोटीन की न्यूनता तथा विटामिन ए, बी की कमी से उत्पन्न दोषों के लिए इसका प्रयोग किया जा सकता है। त्वचा और बालों के रोग भी इससे दूर किये जा सकते हैं। पैरों की खाल फटना, बिवाई फटने में भी इसका लाभ ले सकते हैं।

आज सभ्य समाज के लोग ऊँचे दामों में कृत्रिम विटामिन औषधि के रूप में उपलब्ध करते हैं जो पूर्ण रूप से शरीर द्वारा ग्रहण नहीं होते, उनका बहुत बड़ा अंश शरीर से बिना घुले ही निकल जाता है। सूरजमुखी के विटामिन शरीर द्वारा पूर्ण रूप से पचा लिए जाने से अधिक उपयोगी और सक्रिय सिद्ध हुए हैं। प्रकृति से सीधे विटामिन प्राप्त करने का यह सर्व सुलभ और सबसे सस्ता साधन है। इससे निर्धन और धनवान सभी समान रूप से लाभ उठा सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूरजमुखी की इस नवीन खोज से लाभ उठाया जाना चाहिए। जो लोग नगरों में, कस्बों में रहते हैं जिनके पास भूमि खेती के लिए नहीं है वे भी इससे लाभ उठा सकते हैं। सूरजमुखी को आँगनबाड़ी, शाक-वाटिका में सरलता से उगाया जा सकता है। घरों के बाहर अहातों में, फूलों की क्यारियों और गमलों में भी सूरजमुखी लगाकर घर की सजावट, साज-सज्जा और बीज प्राप्त करने के लिए दोहरे लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं। इसका फूल देखने में भी सुन्दर होता है। इस प्रकार सर्वसाधारण जिनके पास भूमि नहीं है, वे भी इससे लाभान्वित हो सकते हैं। इसकी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए तो इसे गमलों में या छतों पर मिट्टी डालकर भी उगाया जाय तो अनुचित नहीं होगा। थोड़े से प्रयत्न और परिश्रम से यदि इससे लाभ प्राप्त किए जा सकते हैं, तो उतना कर लेना ही समझदारी होगी। इस आर्थिक संकट के समय सबको इसके उपयोगी तत्वों से पोषक आहार की पूर्ति का लाभ ले लेना उचित ही होगा।

शहद : एक जीवनी शक्ति वर्धक रसायन

शहद एक ऐसा रसायन है जिसका प्रयोग आयुर्विज्ञान के प्रवक्ता ऋषियों से लेकर, ओलम्पिक खेलों को जन्म देने वाले यूनान के खिलाड़ी एवं अन्यान्य पाश्चात्य एवं भारतीय विद्वान जीवनी शक्ति बढ़ाने के लिये प्रयोग करते आये हैं। इसे यौवन का आधार एवं वार्धक्य मिटाने वाला माना गया है, जो कि अत्युक्तिपूर्ण नहीं है। यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि यदि सही आहार सही क्रम से लिया जाता रहे तो वह आयु को बढ़ाता है, रोगों को भगाता है। शहद की इस क्षमता को आहार विज्ञानी चिर-पुरातन काल से जानते हैं एवं शारीरिक स्फूर्ति के लिये खिलाड़ियों एवं मानसिक शांति एवं प्रफुल्लता के लिये अध्ययनशीलों के लिये इसके प्रयोग का विधान बताते आये हैं।

थकान का आना ही बुढ़ापे का परिचायक है। यदि इसे मिटाया जा सके तो चिरयौवन का आनन्द लिया जा सकता है। संभवतः शहद की सफूर्तिदायक क्षमता के कारण ही यूनानी चिकित्सकों ने इसे काफी लोकप्रिय बनाया। दूध और शहद के सम्मिश्रित रूप 'एम्ब्रोसिया' का प्रचलन टॉनिक के रूप में यूनानियों ने ही विश्व भर में किया।

प्रख्यात रूसी वैज्ञानिक निकोलाई ने आहार में शहद की उपयोगिता पर गहन अध्ययन किया है। उनने अपने शोध निष्कर्ष में बताया है कि जो व्यक्ति प्राकृतिक जीवन से जुड़े रहते हैं, उनमें जीवनी शक्ति अधिक होती है। उनका कहना है कि रूस में काकेशसवासियों की आयु औसत सौ वर्ष है क्योंकि वे "मधुमक्खी पालन" का धन्धा करते हैं और पराग मिश्रित शहद का सेवन करते हैं। इसी प्रकार पाकिस्तान में हुन्जा, इन्चवेडर की विलकेम्बेम्बा घाटी एवं उनके पड़ौसी देश कोलम्बिया, पेरू के कुछ क्षेत्र ऐसे हैं जहाँ लोगों की औसत आयु सौ वर्ष है। जहाँ शुद्ध वायु एवं जल तो मिलता ही है, लोगों के आहार में शहद भी अनिवार्य रूप से सम्मिलित रहता है। वैज्ञानिकों ने शहद को प्राकृतिक अमृत बताया है, जिसके अभाव में आज व्यक्ति की औसत आयु ५५-६० वर्ष की ही रह गयी है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में मधु की विशेषतायें बताते हुए कहा गया है कि यह आँखों के लिये लाभकारी, तृष्णा, कफ विकार, रक्त विकार, पित्त विकार, कुष्ठ, प्रमेह, कृमि रोग, छर्दि रोग, श्वांस रोग, कास तथा अतिसार रोगों को नष्ट करता है। व्रणों का शोधन, उन्हें पुष्ट और नये कोषों का रोपण भी करता है। स्वाद मधुर तथा विपाक में कुछ कटु होता है। यह उच्च श्रेणी का यौगिक है, क्योंकि उसका निर्माण विभिन्न प्रकार के फूलों के पराग से होता है। ऋषि-मुनियों ने अमृत को रस माना, जिसके पान से यौवन जैसा आनन्द ले सके। ऐसा अमृत चिरकाल में देव-दानवों ने समुद्र मंथन से प्राप्त किया था। इसी प्रकार की दिव्य औषधियों के सेवन से वयोवृद्ध च्यवन ऋषि यौवन अवस्था में बदल गये। ऐसा ही अमृत रावण ने अपनी नाभि में रखा था।

ऐसे ही अमृत की खोज आधुनिक वैज्ञानिक कर रहे हैं। इनमें से इंग्लैण्ड के खाद्य वैज्ञानिक डॉ० नील ल्याल द्वारा आविष्कृत "पालेन बी" की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गोली है। जिसके सेवन से शक्ति प्राप्त की जा सकती है। इसी प्रकार डॉ० आना आसलन ने भी "जी. एच. थ्री" (जेरोविराज एच. थ्री") नामक गोली का आविष्कार किया जिसके द्वारा यौवन जैसी शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। फिर भी अक्षुण्य स्वास्थ्य के लिये शहद को ही अमृत तुल्य बताया गया है।

डॉ० जी. डब्ल्यू. एन. थामस ने शहद को हृदय रोगी को स्वस्थ करने, हृदय की मांस पेशीयों को शक्तिवान बनाने और गति को तेज करने वाला, अनेक रोगों में लाभकारी व बलवर्द्धक बताया है। उनने न्यूमोनिया जैसे रोगों के उपचारों में शहद को उपयोगी पाया। इसके सेवन से रोगी पूर्णतः रोगमुक्त हो जाते हैं। अमेरिकी वैज्ञानिक डाक्टर ए० वी० स्टुअर्ट वेन्ट ने शहद के स्वास्थ्यकारी गुणों पर अनुसंधान किया है और बताया है कि इससे श्वास रोग, पेचिस और टाइफाइड के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं। उनके अनुसार विभिन्न प्रकार के चर्म रोगों में शहद का सेवन पानी में घोलकर किया जाय तो लाभ होता है। जले स्थान पर लगाने से उष्णता शान्त होती है। कब्ज को दूर करने के लिये शहद का उपभोग बहुत लाभकारी माना गया है। शहद को पानी में मिलाकर पीने से कब्ज से छुटकारा मिल जाता है।

जिन बच्चों के दाँत नहीं निकलते हों, सोते में पेशाब करते हों, पेट में तकलीफ रहती हो, वजन कम होता जा रहा हो तो शुद्ध शहद को सेवन कराने से इन रोगों से छुटकारा मिलता है। गले और मुँह के रोगों में पानी और शहद के गरारे कराने से लाभ मिलता है।

खाद्य वैज्ञानिकों के अनुसार शहद पाचन तंत्र की अनेक बीमारियों को दूर करके, उन्हें शक्ति प्रदान करता है। यह औषधि होने के साथ-साथ उत्तम टॉनिक भी है।

मधु—मधुर, पौष्टिक तथा रोगनाशक

मधु-मक्खियाँ प्राकृतिक हलवाई हैं। उनके द्वारा बनाई गयी यह मिठाई—शहद बाजार में मिलने वाली मिठाइयों की तरह न तो शीघ्र बासी होती है और न पेट खराब करके रोगों को निमन्त्रित ही करती है, वरन् अधिक समय तक रहने पर अधिक गुणकारी हो जाती है।

परिश्रम से एकत्रित की हुई हजारों वनस्पतियों का सत्व हमें एक स्थान पर एकत्रित हुआ शहद के रूप में मिल जाता है। इसमें जो स्वाभाविक शक्तिवर्धक तथा रोग निरोधक तत्व मिलते हैं, उन्हें आज बोतलों में बन्द औषधिओं और टॉनिकों में पाना सम्भव ही नहीं होता।

रासायनिक विश्लेषण करने पर शहद में अलब्यूमेन, चीनी, चर्बी, पराग, केसर, विटामिन सी तथा प्रचुर मात्रा में खनिजों का समग्र मिश्रण यह शहद कई रोगों के लिए औषधि का काम देता है। इसमें जो चिकनाई मिलती है, उसे पचाने में पाचन-संस्थान को कोई श्रम नहीं करना पड़ता। बीमार तथा कमजोर मनुष्यों को यह नया जीवन प्रदान करती है।

शहद सस्ता तथा पौष्टिक भोजन है, जो रक्त में मिलकर उसे ऊष्मा तथा शरीर को बल प्रदान करता है। शहद विषाणुओं को मार देता है।

यों यह कई वर्षों तक रखा रहने पर भी सड़ता नहीं किन्तु यदि उसमें किसी की मिलावट कर दी जाय तो शीघ्र ही या तो वह उससे अलग हो जाता है या खाने योग्य नहीं रह जाता। इस प्रकार यह अपनी प्रामाणिकता को बनाये रखता है।

शहद में जो तत्व पाये जाते हैं, उन तत्वों को मिलाकर शहद निर्माण के लिए वैज्ञानिकों ने अथक प्रयास किए, किन्तु उन्हें सफलता नहीं मिल सकी, जबकि दूध तथा अन्य पदार्थ इस प्रकार बनाये जा चुके हैं।

चाय के स्थान पर एक कप पानी में दो चम्मच शहद डालकर इस पेय को नित्य लिया जाय तो शरीर की थकान दूर होती है, रोग प्रतिरोध क्षमता बढ़ती है तथा पाचन नियमित होता है। बल तथा स्वास्थ्य वृद्धि के लिए उपयुक्त पदार्थों में शहद का स्थान सर्वोपरि है। इसके लिए पाचन-संस्थान को कोई श्रम नहीं करता पड़ता है। मिठाइयों तथा टॉनिकों के भ्रम जाल से छूटकर यदि इस प्राकृतिक वरदान का उपयोग किया जाय, हानिकारक पेय पदार्थों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

स्थान पर इसे प्राथमिकता दी जाय तो उनके कुप्रभावों से सहज ही बचा जा सकता है।

आजकल भारतवासी इस नैसर्गिक देन से वंचित हो रहे हैं। शहद इतना महँगा हो चुका है कि साधारण स्थिति का व्यक्ति उससे लाभ नहीं उठा पाता। अन्य देशों में जबकि सहायक कुटीर उद्योगों के रूप में इस व्यवसाय की निरन्तर वृद्धि हो रही है। भारतवासियों के पास समय होते हुए भी इस बिना किसी खर्च के व्यवसाय को नहीं अपनाया जा रहा है, जबकि कृषक तथा देहाती क्षेत्र में रहने वाले अन्य सभी वर्गों के द्वारा उसे आसानी से चलाया जा सकता है। इससे पारिवारिक आवश्यकताओं की पूर्ति ही नहीं होगी वरन् अन्य व्यक्तियों को भी यह सुलभ हो सकेगा।

अन्य देशों के निवासियों का अनुकरण करके मुर्गी पालन तथा मत्स्य पालन जैसे तामसिक उद्योगों का विकास जब यहाँ हो रहा है, उसको निरुत्साहित करके यदि मधुमक्खी पालन उद्योग पर ध्यान दिया जाय जाय तो उससे आर्थिक और शारीरिक लाभ प्राप्त करने का एक उपयोगी द्वार खुल सकता है। इस सम्बन्ध में खादी ग्रामोद्योग आयोग के केन्द्रीय कार्यालयों से पत्र व्यवहार द्वारा समुचित जानकारी प्राप्त की जा सकती है। आयोग इस सम्बन्ध में आर्थिक अनुदान एवं प्रशिक्षणादि की सुविधा भी प्रदान करता है।

धर्म ग्रन्थों में मधु को इतनी महत्ता अकारण ही नहीं दी गयी। वैज्ञानिकों ने सिद्ध कर दिया है कि यह एक अत्यन्त उत्कृष्ट पौष्टिक आहार है। इसमें वे सभी तत्व पाये जाते हैं, जो कि शारीरिक, मानसिक शक्ति को बढ़ाते हैं। तन्तुओं का निर्माण करने वाला प्रत्यामिन, रक्त के लिए आवश्यक लोहा तथा हड्डियों को मजबूत बनाने वाला चूना इसमें पर्याप्त मात्रा में रहता है। शहद में १.०६% खनिज लवण पाये जाते हैं। ये लवण हैं—चूना, क्लोरीन, पोटेशियम, ताँबा, लोहा, मैग्नीज, मैग्नेशियम, फास्फोरस, गन्धक, सोडियम तथा सिलीकॉन सिलिका। इनके अतिरिक्त 'बी' और 'सी' विटामिन भी पाये जाते हैं।

गंगाजल की भाँति शहद की भी यह विशेषता होती है कि यह वर्षों तक रखे रहने पर भी खराब नहीं होता। १९२३ में मिश्र के फराओं तूतनखामेन के पिरामिड में रूसी वैज्ञानिकों को एक पात्र मिला, जिसमें ३३०० वर्ष पुराना मधु पाया गया। परंतु आश्चर्य ! न तो उसका स्वाद ही बिगड़ा था और न गुणों में न्यूनता आयी थी।

औषधि रूप में मधु का प्रयोग प्राचीन काल से ही होता आया है। वैद्यक ग्रन्थों में तो यहाँ तक कहा गया है कि मधुमता पंचामृत पान करने से राज यक्ष्मा से बचाव होता है। वैद्य लोग प्रायः मधु के साथ ही दवाएँ देते हैं। उनका कथन है कि इसके साथ दवा देने से उस औषधि का प्रभाव द्विगुणित हो जाता है। रूसी लोक कथाओं में युद्ध में आहत सैनिकों का सौ वर्ष पुराने शहद से उपचार किये जाने का प्रसंग है।

आधुनिक काल में भी चिकित्सा वैज्ञानिकों का ध्यान इसके गुणों की ओर गया है और उन्होंने इससे विविध रोगों का उपचार किया है। पेट के रोगों पर मधु का आश्चर्यजनक प्रभाव देखा गया है। मास्को पोषक आहार संस्था द्वारा रोगियों को प्रतिदिन ६०० किलोग्राम मधु दिया गया जिसके परिणामस्वरूप दर्द, मितली, अम्ल, पित्त, कब्ज आदि बहुत शीघ्र हो गये।

शहद के गुणों का रासायनिक विश्लेषण करने पर वैज्ञानिकों ने पाया है कि यह कीटाणु नाशक भी है। डॉक्टर डब्ल्यू० जी० सैकट ने एक परख नलिका में टाईफाइड, पेचिस आदि विविध रोगों के कीटाणु रखे और उसमें शहद भर दिया। कुछ समय उपरान्त पाया गया कि सारे कीटाणु मर गये थे।

मास्को के प्राकृतिक चिकित्सालय में टी० बी० से गले हुए फेंफड़े वाले कुछ रोगियों का उपचार भी शहद से किया गया। प्रत्येक रोगी को प्रतिदिन ४०० से ७५० ग्राम तक शहद का सेवन कराया गया। परिणाम यह हुआ कि उनका वजन बढ़ा, खाँसी कम हुई तथा रक्त संचालन में भी सुधार हुआ। सैप्टिक युक्त घावों पर, जिन पर साधारण दवाओं का कोई प्रभाव नहीं हो रहा था, शहद का प्रयोग किया गया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और पाया गया कि कुछ ही दिन में घाव साफ होकर भरने लगे तथा मवाद भी कम हो गया।

अमरिका के प्रसिद्ध डॉक्टर जे० एच० केलाग ने अपने परीक्षणों के आधार यह प्रतिपादित किया है कि यदि बालकों को प्रथम नौ मास तक मधु दिया जाय तो उन्हें छाती के रोग नहीं होते साथ ही वे हृष्ट-पुष्ट भी बनते हैं।

हृदय की निर्बलता, मूर्च्छा, राजयक्ष्मा, खाँसी, जुकाम, निमोनिया, डिप्थेरिया, एक्जिमा, स्कर्वी, सिरदर्द आदि अनेकानेक रोगों के उपचार के लिये मधु एक हितकारी औषधि है। इसके असाधारण गुणों के कारण ही विश्व के कोने-कोने में यह प्रयुक्त होता है। यदि हम भी रोगों से बचना चाहते है, पूर्णतः स्वस्थ रहना चाहते हैं तो प्रकृति के इस अनुपम उपहार का नियमित तथा निश्चित रूप से प्रयोग करें।

सुपाच्य-गुणकारी आहार—शहद

वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि शहद में स्वास्थ्य के लिए उपयोगी खनिज लवणों के साथ ही बहुमूल्य विटामिन भी उपलब्ध हैं। सामान्यतः यह कुछ विशेष चीनीयुक्त क्षार पदार्थों तथा धातु पदार्थों का सम्मिश्रण होता है किन्तु इसकी ७५ प्रतिशत चीनी वह नहीं है, जो गन्ना मिलों द्वारा उत्पादित की जाती है। इस चीनी के अतिरिक्त दो प्रकार की चीनी और खोजी गई है—(१) ग्लूकोज अंगूरी, (२) फलों के रस से उत्पादित फ्रक्टोज शर्करा। इन चीनियों का कोई हानिकारक प्रभाव रोगी पर नहीं पड़ता, जबकि सामान्य चीनी उनके लिए हानिप्रद हुआ करती है। मधु में मिलने वाली अंगूरी शर्करा बहुत आसानी से पचने वाली होती है।

एक मधुमक्खी को एक पौण्ड शहद बनाने के लिए तीन-चार सौ पौण्ड पुष्प रस इकट्ठा करना पड़ता है। अपने भार का आधे वजन का पुष्प रस लादे उन्हें ४००० मील की यात्रा सम्पन्न करनी पड़ती है। पुष्प मिलने पर वह अपनी जीभ की सहायता से फूल की नली में विद्यमान पुष्परस की छोटी मात्रा खींचकर अपनी मधु संग्रही थैली में एकत्रित करती जाती है। वह दिन भर जिस पुष्परस को इकट्ठा करती जाती है उसे मधु के रूप में बदलने के लिए सक्रिय रहती है। पी० ई० नेरिस (प्रसिद्ध रसायन विद्) के अनुसार मधु मात्र पुष्प रसों का संग्रह ही नहीं है, वरन् यह मधुमक्खी का श्रम तत्व ही है, जिसको पाकर पुष्परस मधुरस के रूप में परिणत हो जाता है। इसे गाढ़ा बनाने के लिए अपने सिर को भीतर की ओर करके द्वारों पर डैनों से पंखा किया करती हैं। इस मेहनत के कारण ही छतों के आसपास मधुर-मधुर गुंजन सुनाई पड़ता है, जो अच्छा भी लगता है और वातावरण को प्रफुल्लित बनाये रखता है। इसके स्थूल लाभ को न लें, तो भी मधुमक्खी अपने अथक परिश्रम से उस उक्ति को सार्थक करती है कि "मेहनत का फल सदा मीठा होता है।"

शहद श्रम की परिणति होने के कारण पौष्टिक, सुपाच्य और दुर्बलता को सरलता से दूर करने वाला है। कठिन शारीरिक श्रम करने वालों को शक्ति देता है और स्फूर्तिवान बनाता है। यह आमाशय में जाते ही सरलता से पच जाता है। पाचन-तन्त्र को अतिरिक्त श्रम नहीं करना पड़ता। औषधि के रूप में शहद की आयुर्वेद में प्रशंसा की गई है। इसका श्रेष्ठ अनुपान हानिरहित, मृदु, कफनाशक और जीवनी शक्ति बढ़ाने वाला है। इसमें उत्कृष्ट कोटि का अल्कोहल और इथीरियल ऑयल होता है जो कि श्वांस फूलने, दमे के रोग और उसके तीव्र प्रकोप में लाभदायक पाया गया है। टायफाइड, निमोनिया जैसे रोगों में यह लीवर और आँतों की कार्यक्षमता को बढ़ाता है। फोड़े-फुन्सियाँ, जहरीले घाव, फफोले आदि में इसका उपयोग यूरोप जैसे देशों में किया जाता है। प्रयोग के आधार पर देखा गया है कि गहरे घावों पर मधु की पट्टी बाँध देने पर घाव आसानी से भर जाता है और किसी प्रकार के 'इन्फेक्शन' का डर नहीं रहता है।

वृद्धावस्था में ठण्ड अधिक सताती है, अधिक कम्बल, रजाई ओढ़ने पर भी हाथ-पैर ठण्डे रहते हैं, ऐसे व्यक्ति भी यदि दूध के साथ इसका सेवन करें तो शरीर में शीघ्र ही गरमी आ जाती है। मोटापा, कब्ज और रक्त की कमी में शहद का शरबत कुछ ही दिनों में लाभ पहुँचाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह खून के लाल अणु और हीमोग्लोबिन की संख्या में उचित तालमेल बैठाए रहता है। यह हृदय उत्तेजक मात्र नहीं होता, वरन् उसको ऊष्मा देने वाला घटक होता है। उसके इस गुण की, सराहना एडिनवर्ग के डॉ० जी० एन० डब्ल्यू टॉमस ने की है।

शहद में सदा उपयोगी एवं शुद्ध बने रहने का गुण विद्यमान है। ज्यों-ज्यों यह पुराना पड़ता जाता है, गुणवत्ता बढ़ती जाती है। यूनानी साहित्य के अनुसार सिकन्दर के शव को शहद के एक बड़े घड़े में रखा गया था, ताकि दफन करने के लिए राजधानी तक ले जाने के काल में उसमें कोई विकृति न आने पाये।

विश्व के अधिकांश शतायु पार लोगों ने जहाँ अपने जीवन में सीधी-सादी प्राकृतिक जीवन चर्या, आहार-विहार, संयम को स्थान दिया है, वहाँ उन्होंने यह भी स्वीकारा है कि इसमें शहद का भी अमूल्य योगदान रहा है। पाइथागोरस ने अपने ६० वर्ष के दीर्घायुष्य का श्रेय शहद को दिया। डेमोक्रेट्स, अरस्तू कहा करते थे कि शहद स्वास्थ्य और दीर्घायुष्य दोनों प्रदान करता है। सर एडमण्ड हिलेरी स्वयं मधुमक्खी पालक थे। शेरपा तेनजिंग भी नियमित शहद का सेवन करते थे। आक्सफॉर्ड यूनिवर्सिटी के डॉ० रेनोटड आस्टिन ने ३० दिवसीय मधु कल्प करने जब नवयुवकों जैसी स्फूर्ति प्राप्त की तो कहा था- "मिठाई की जगह मधु खाओ, दूध के साथ मधु खाओ, चीनी की जगह मधु खाओ।" भारतीय पहलवान गामा, विश्व प्रसिद्ध हैवीवेट चैम्पियन पहलवान जिम लैण्डीज, २६ वर्षों तक विश्व के सबसे तेज धावक का रिकार्ड बनाने वाले डब्लू० जी० जार्ज आदि मधु को सुहावने स्वाद के कारण ही प्रिय खाद्य नहीं मानते थे, वरन् उनका विश्वास था कि उससे उनको महान् प्रयत्नों के अनुरूप ही अतिरिक्त ऊर्जा मिला करती थी।

वर्नाड मैक फैडेन ने अपने शरीर पर ही अनेकानेक प्रयोग-परीक्षण किये ताकि वह जान सकें कि किस खाद्य से क्या असर पड़ता है ? एक प्रयोग में तो उन्होंने घर से २३ मील की दूरी नंगे पाँव, मात्र एक गिलास जल तथा मधु पर रहकर तय की। साहित्यकार बर्नाड शॉ भी शहद सेवन करके साहित्य-साधना में बैठते थे। ईसाई गिरजाघरों में दूध और शहद को समर्पण का द्योतक माना जाता है। इसी दृष्टि से वपतिस्मा में शहद प्रयुक्त होता है। भारतीयों में भी मधु पर्क से स्वागत सत्कार की क्रिया सम्पन्न कराई जाती है।

सचमुच शहद जैसा उपयोगी, गुणकारी, पौष्टिक एवं सुपाच्य दूसरा आहार नहीं है। जहाँ तक सम्भव हो अच्छे स्वास्थ्य के लिए इसका सेवन किया जाय। किन्तु यह शुद्ध रूप में तभी उपलब्ध होगा, जब एडमण्ड हिलेरी की तरह मधुपालन को प्रोत्साहन दिया जाय। इससे जहाँ रोजगार की समस्या दूर होगी, वहाँ सर्वोपयोगी शुद्ध शहद सबको प्राप्त होगा। इसके पालन में भी कोई कठिनाई नहीं है। इसके बारे में थोड़ी जानकारी ही पर्याप्त है। अतः मधुपालन खुद किया जाय और दूसरों को भी इसके लिए प्रोत्साहित किया जाय।

शहद में जो रासायनिक पदार्थ हैं, वे मानव शरीर के लिए बहुत महत्वपूर्ण हैं। उनका अनुपात भी ऐसा विलक्षण है कि उपयोगिता को अनेक गुनी बढ़ा देता है। आश्चर्य इस बात का है कि उस प्रकार के सम्मिश्रण को किसी प्रयोगशाला में नहीं बनाया जा सकता। उसमें प्राणि-शरीर का समावेश ही नहीं, कौशल और वह पक्ष भी सम्मिलित है, जो प्रकृति ने विशेष रूप से मधुमक्खियों को प्रदान किया है।

शहद में नौ रसायनों और छह विटामिनों का सम्मिश्रण है। पर उनका स्तर उससे कहीं अधिक ऊँचा है जैसा कि मनुष्य अपने प्रयत्नों से उसकी अनुकृति बनाने में समर्थ हो सका है। शहद को आजकल छत्तों में भी मधु-मक्खी पालकर एकत्र किया जाता है। आसपास जैसे परागकण होते हैं वैसे ही स्वाद का मधु एकत्र हो जाता है। यहाँ तक कि उन्हीं फलों के रसों के सत्व को उस मधु में देखा जा सकता है। मधु का बनना सृष्टा की कलाकारिता का अद्भुत नमूना है। छत्ते इतने विशिष्ट होते हैं कि उनमें १/१००० इंच का अन्तर होने पर भी मधुमक्खियाँ उनमें प्रवेश नहीं करतीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

माउन्ट एवरेस्ट की सर्वोच्च चोटी पर चढ़ने वाले एडमण्ड हिलेरी न्यूजीलैण्डवासी थे और मधुमक्खी पालन करते थे। उनके पिता ने बतलाया कि हिलेरी का पराक्रम और साहस का श्रेय मधु को है क्योंकि वह बहुत मधु खाते थे। दूसरे एवरेस्ट विजेता तेनसिंह भी हिमालय में पाए जाने वाले मधु का अधिक मात्रा में सेवन करते थे, उनकी भी शक्ति का स्रोत यह मधु ही था।

जर्मन वैज्ञानिक श्वाँस फूलने पर दमे के रोगियों को अपने पास एक बोतल मधु रखने की सलाह देते हैं। श्वाँस फूलने या दम घुटने पर तुरन्त मधु के प्रयोग से श्वाँस कष्ट को आराम हो जाता है और वह गहरा श्वाँस लेने लगता है। मधु में उच्चकोटि के अल्कोहल और इथीरियल ऑयल पाए जाते हैं, जो कि श्वाँस वेग को शीघ्र कम कर देते हैं। इसके अतिरिक्त इसमें कुछ हरमोन्स भी हैं, जिनका विश्लेषण आज तक नहीं हो पाया है, ऐसा वैज्ञानिकों का कथन है।

इंगलैण्ड के रेडक्रास (हम्वर्ग) के अस्पताल में जलने के फफोलों और फरंकलों आदि में मधु लगाने का प्रयोग करते हैं। जलने का दाग भी मधु लगाने से नहीं होता। ब्रिटिश एडमिरल 'टी' ने पनडुब्बी के खल्लासीयों को हजारों पौण्ड मधु दिया था। इसका कारण यह है कि मधु खाने से लोगों में धूम्रपान की इच्छा नहीं होती और पनडुब्बियों में धूम्रपान मना है। जनरल अस्पताल रीडिंग में घाव एवं कटे को भरने के लिए भी मधु का उपयोग होता है। नोर्विस में सर्जिकल घावों में भी मधु से ड्रेसिंग करते हैं। अस्पतालों में घावों को मधु क्यों भरता है। इस पर अनुसंधान करने से पाया गया कि मधु नमी को आकर्षित करता है और सोख लेता है। काँच की बोतल और पोर्सलीन पॉट्स से भी मधु नमी को सोख लेता है। हर प्रकार के जीवाणुओं को जिन्दा रहने के लिए नमी की आवश्यकता होती है। घावों पर मधु की पट्टी बाँधने से नमी नहीं पनप सकती। इसलिए जर्म्स से मधु रक्षा करता है।

रक्त में हीमोग्लोबिन की मात्रा अधिक होने से भी नुकसान है और कम होने से एनीमिया होता है। डाक्टर्रों के अनुसार मधु के सेवन से हीमोग्लोबिन की सही मात्रा बनी रहती है। मधु उत्कृष्ट टॉनिक है और उत्तेजक भी है। गम्भीर स्थितियों में ब्रान्डी, स्प्रिट आदि के बदले मधु देना अधिक उपयोगी एवं लाभप्रद है। मधुप्युएल और फूड दोनों हैं। जिन बूढ़ों के रात्रि में हाथ-पैर ठण्डे हो जाते हैं और अधिक कम्बल ओढ़ना पड़ता है, ऐसे लोग सोते समय एक गिलास दूध के साथ मधु ले लें तो उन्हें शीघ्र गर्मी आ जाती है और हाथ-पैर ठण्डे नहीं होते। शहद एक श्रेष्ठ अनुपान है जो आयुर्वेदिक औषधियों में प्रयुक्त होता है।

वस्तुतः शहद सम्बन्धी खोजों से उसकी विलक्षणता का क्रमशः रहस्योद्घाटन होता जाता है। यह मनुष्य के लिए अत्यधिक गुणकारी खाद्य है।

आहार-शुद्धि और आध्यात्मिकता

मानव देह के निर्माण, पोषण और वृद्धि का मुख्य आधार आहार है। यद्यपि वायु और जल भी मनुष्य के लिए आवश्यक आहार हैं, पर चूँकि ये प्रायः अनायास या अल्प आयास से ही प्राप्त होते रहते हैं, इसलिए हम अन्न या अन्य खाद्य पदार्थों को ही आहार की संज्ञा देते हैं। मनुष्य जिस क्षण से पृथ्वी पर आता है तभी से उसे किसी न किसी रूप में आहार की आवश्यकता होती है और जब तक उसकी देह पुनः पंचत्व में नहीं मिल जाती तब तक अपना अस्तित्व स्थिर रखने के लिए उसे आहार सम्बन्धी चिन्ता लगी रहती है। यदि विश्लेषण करके देखा जाय तो संसार में बहुसंख्यक व्यक्तियों के लिए भोजन या आहार ही जीवन का सर्वप्रधान उद्देश्य और कार्य है, इसी के लिये जीते और मरते हैं। आज सभ्य समाज में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं जिनका ध्यान सदैव भोजन के प्रश्न पर ही केन्द्रित रहता है और जो सवेरे उठते ही यह हिसाब लगाया करते हैं कि आज किसी समय क्या-क्या भोज्य सामग्रियाँ बनाई जायेंगी ? ऐसे ही असंख्यों लोग पाये जाते हैं जो भोजन के लिए अपने स्वास्थ्य,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आरोग्य, पदवी, प्रतिष्ठा तक का बलिदान कर डालते हैं और केवल भोजन सम्बन्धी स्वाद के लिए प्राण उत्सर्ग कर देते हैं।

पर हम यदि ऐसे 'पेटू' या 'स्वाद-प्रिय' लोगों की बात छोड़ भी दें तो संसार में कोई भी विद्वान, बुद्धिमान, विचारक, पण्डित, सन्त महात्मा ऐसा कहीं नहीं मिलेगा, जिसको आहार की आवश्यकता न हो और जिसे इस संबंध में थोड़ी-बहुत चिन्ता न करनी पड़ती हो। कारण यही है कि शरीर के अस्तित्व का आधार आहार ही है और इसी के द्वारा हमको वह शक्ति प्राप्त होती है जिससे हम जीवन के विविध व्यापारों को सम्पन्न कर सकते हैं। मानव जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य आध्यात्मिक उन्नति बतलाया गया है और उसे प्राप्त करने के लिये मनुष्य को भौतिक जगत का ध्यान कम करके परमात्मा का ध्यान, भजन, साधन करने की आवश्यकता होती है। पर यदि आहार का अभाव हो जाय तो यह भजन और ध्यान दो-चार दिन भी नहीं हो सकता। इसी तथ्य को समझकर कोई अनुभवी कह गया है—"भूखे भजन न होय गुपाला, यह लो अपनी कण्ठी माला।"

आहार के इतना महत्वपूर्ण होने पर भी, मानव-जीवन के साथ उसका ऐसा घनिष्ठ और अविच्छेद्य सम्बन्ध होने पर भी, हम देखते हैं कि उसकी उपयोगिता और महत्व पर लोग बहुत कम ध्यान देते हैं और उसका एकमात्र उद्देश्य और विधि यही समझते हैं कि किस प्रकार अनुकूल पदार्थों से पेट को भर लिया जाय। कुछ अधिक बुद्धिमान और समझदार हुये तो भोजन का निर्णय करते समय स्वास्थ्य का भी ध्यान रख लेते हैं और केवल जीभ के स्वाद को महत्व न देकर अपनी शारीरिक प्रकृति के अनुकूल पौष्टिक और सुपाच्य पदार्थों का चुनाव करते हैं। पर इससे आगे बढ़कर इस बात पर विचार करने का कष्ट शायद लाख में एक व्यक्ति भी नहीं उठाता कि शरीर के अतिरिक्त भोजन का हमारे मन से सम्बन्ध है और फिर उसका प्रभाव बुद्धि तक भी पहुँचता है। मन और बुद्धि ही मनुष्य की सांस्कृतिक और आध्यात्मिक प्रगति के मुख्य आधार हैं और जो मनुष्य इस क्षेत्र में अग्रसर होने की चेष्टा नहीं करता, उसका मानव-जीवन ही व्यर्थ है। इसलिए जो व्यक्ति वास्तव में अपना कल्याण चाहता है और इस नर जन्म को सफल बनाने की इच्छा रखता है उसे आहार-शुद्धि पर अवश्य ध्यान देना चाहिए।

हम यह स्वीकार करते हैं कि हिन्दू समाज के एक वर्ग में आहार-शुद्धि का नियम अभी तक पाया जाता है। हमारे कितने ही प्राचीन प्रणाली के भाई चौके-चूल्हे के नियमों का बड़ी कट्टरता से पालन करते हैं और ऐसे लोग भी पाये जाते हैं जो बाहरी व्यक्ति का हाथ लग जाना तो दूर, उसकी छाया पड़ जाने से भी भोजन को अशुद्ध और त्याज्य मान लेते हैं। ऐसे व्यक्तियों और घरों की बातें भी हमने सुनी हैं जो भोजन के प्रत्येक पदार्थ को, यहाँ तक कि लकड़ी और कोयलों को भी धोकर ही चौके के भीतर ले जाते हैं। हम इन बातों की उपेक्षा नहीं करते और न इनके महत्व को न्यून करना चाहते हैं। भोजन की सामग्री के संग्रह करने और पकाने में सफाई और शुद्धता का जितना भी अधिक ख्याल रखा जाय उतना अच्छा ही है। पर इतना हम अवश्य कहेंगे कि यह सफाई वास्तविक होनी चाहिए केवल दिखावटी और नाममात्र की नहीं। हमने देखा है कि जो लोग अपने चौके को किसी को नहीं छूने देते और लकड़ियों पर भी गंगा या जमुना जल के छींटे मार देते हैं वे ही चौके के भीतर ऐसा कपड़ा पहिन कर जाते हैं, जो गन्दगी की खान होता है अथवा यदि उनके बरतनों की परीक्षा की जाय तो उनके किनारों या भीतरी भागों में महीनों पुरानी गन्दगी मिल सकती है। उन बर्तनों का मुकाबला यदि एक अँगरेज के, जो खाने से धर्म और पुण्य का कोई सम्बन्ध नहीं जोड़ता, चीनी मिट्टी और काँच के चमचमाते बर्तनों से किया जाये तो हमको अपनी 'शुद्धता' पर कभी गर्व करने का अवसर नहीं मिल सकता।

पर यह शुद्धता भी बाहरी है। अनपढ़ लोग भले ही चौका-चूल्हे में पाप-पुण्य समझा करें पर हमारे पूर्वजों ने इन नियमों को सफाई और स्वास्थ्य की दृष्टि से ही जारी किया है। यह सच है कि प्रत्येक मनुष्य के आचार और विचारों में एक प्रकार की शक्ति होती है, जिसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रभाव आस-पास के पदार्थों और वातावरण पर पड़ता है। कुछ लोगों के विचार तो स्वभावतः ऐसे प्रबल होते हैं कि उनकी दृष्टि जिस किसी वस्तु या खासकर उत्तम भोज्य पदार्थ, सुन्दर वस्त्राभूषण, आकर्षक बालक-बालिका पर पड़ती है वही उससे प्रभावित हो जाता है। यदि ऐसा व्यक्ति नीच और दुष्टतायुक्त विचारों का हुआ तो उससे हानि होना भी अवश्यम्भावी होता है। पुराने विचारों के घरों में जो 'नजर' लगने की बात प्रायः सुना करते हैं, उसका यही रहस्य है। इसलिए भोजन को बाहरी व्यक्तियों के सम्पर्क से पृथक् रखना और शुद्धतापूर्वक एकांत स्थान में ग्रहण करना किसी दृष्टि से बुरा या निरर्थक नहीं कहा जा सकता, बल्कि वह शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभप्रद है।

पर इस बाह्य शुद्धि की अपेक्षा आहार की आन्तरिक शुद्धि अधिक ध्यान देने योग्य है। बाह्य शुद्धि में कुछ त्रुटि होने से उसका स्वास्थ्य पर जो कुप्रभाव पड़ता है, उसका निराकरण आगे चलकर संयम, उपवास औषधि आदि द्वारा हो सकता है। पर हमारा आहार जिस स्रोत या साधन से हमको उपलब्ध होता है, वही यदि अशुद्ध है—दूषित अथवा पापयुक्त है तो उसका जो बुरा प्रभाव हमारे मन, बुद्धि और आत्मा पर पड़ेगा उससे छुटकारा पा सकना वैसा सहज नहीं है। उदाहरणार्थ—जो धन चोरी, डाका या किसी की हत्या करके लाया गया है, उससे शारीरिक पुष्टि भले ही प्राप्त हो जाय पर मन और आत्मा की शुद्धि उससे कभी नहीं हो सकती है। आप इतने बड़े-बड़े डाकुओं और चोरों के नाम सुनते रहते हैं, वे लोग सदैव हजारों और लाखों रुपया प्राप्त करके मौज मजा करते रहते हैं पर उनमें से कभी कोई सुखी, शांत और सन्तुष्ट देखने में नहीं आया वे चाहें और कानूनों के चंगुल से बच भी जायें पर उनका सुख, मौज-मजा क्षणस्थायी ही होता है। अपने मन में तो वे सदा तरह-तरह के अनुतापों और भयों का अनुभव करते ही रहते हैं, पर कुछ ही समय में उनको पापों का फल प्रत्यक्ष रूप से भोगते हुए भी देखा जा सकता है। यही बात अन्य व्यवसायों के विषय में भी कही जा सकती है।

लोग समझते हैं कि व्यापार, नौकरी, लेन-देन आदि में चालाकी से रुपया कमाने में कोई दोष नहीं हो सकता। पर हम बताना चाहते हैं कि बेईमानी और कपट का व्यवहार किसी भी रूप में और किसी भी क्षेत्र में क्यों न किया जाय वह बुरा ही है और उसका फल सदैव हानिकारक ही होगा। कौन कह सकता है कि आपकी जेब काटकर सौ रुपया निकाल लेने वाला गिरहकट तो पापी है और विश्वास रखने वाले ग्राहकों को एक सेर शुद्ध घी में पाव भर डालडा मिलाकर बेचने वाला और इस प्रकार प्रतिमाह सौ दो सौ, या अधिक रुपया बेईमानी से कमाने वाला दुकानदार उससे अधिक पापी नहीं है ? जो पुलिस वाला सौ रुपया के वेतन के अलावा दो-डेढ़ सौ रुपया मासिक अपराधियों को छोड़कर प्राप्त करता है या जो अदालत का पेशकार या मजिस्ट्रेट मुकदमे वालों से हजारों रुपया रिश्वत लेकर झूठ को सच करते हैं, निरपराधी व्यक्ति को दण्डित करते हैं, क्या ऐसे भ्रष्टाचारी पापी नहीं हैं ? आप कैसे आशा कर सकते हैं कि जो रुपया इस प्रकार लोगों से अन्याय करके उनकी आत्मा को दुःखी करके प्राप्त किया गया है, जिसमें अनेकों लोगों की 'हाय' का असर समाया हुआ है, उसके द्वारा प्राप्त किया गया भोजन अपने शरीर, मन और आत्मा के लिये वैसा ही उपयोगी और लाभदायक सिद्ध होगा, जैसा कि दिन भर तन तोड़ कर मजदूरी द्वारा अथवा ईमानदारी और परिश्रम के साथ नौकरी करके प्राप्त किया हुआ भोजन होता है ? प्रागट में चाहे बेईमानी करने वाला व्यक्ति दूध-मलाई, हलुआ-पूरी खाये और ईमानदार व्यक्ति रोटी दाल जैसे साधारण भोजन से ही पेट भरले, पर दोनों प्रकार के व्यक्तियों के आन्तरिक जीवन पर दृष्टि डाली जायेगी तो पहले की अपेक्षा दूसरे प्रकार का व्यक्ति सुखी और संतुष्ट प्रतीत होगा।

जिस आधार पर असत उपायों द्वारा कमाये गये धन द्वारा भोजन त्याज्य माना गया है, वही बात माँस-भोजन आदि पर लागू होती है। जिस व्यक्ति को आत्म-जगत का कुछ ज्ञान है, वह भली प्रकार जानता है कि आध्यात्मिक दृष्टि से समस्त संसार में एक ही तत्व व्याप्त है और जीव मात्र एक ही परमात्मा के अंश स्वरूप हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस समय चाहे मनुष्य अधिक चैतन्य, ज्ञान और बुद्धि से युक्त जान पड़ता हो, पर भौतिक उपादान और आत्म-शक्ति की दृष्टि से उसमें और अन्य छोटे या बड़े प्राणियों में कोई अन्तर नहीं है। इसलिये जो माँस किसी प्राणी को मारकर और कष्ट पहुँचाकर प्राप्त किया गया है, उसमें उसके करुण और आर्त भाव अवश्य लिपटे रहेंगे और वे उसे भोजन के रूप में ग्रहण करने वालों की मानसिक स्थिति पर अवश्य विपरीत प्रभाव डालेंगे। जिन देशों के निवासी प्राकृतिक परिस्थितियों के कारण विवश होकर माँस-मछलियों का भोजन करते हैं वे क्षम्य माने जा सकते हैं, पर यह निश्चित है कि वे आध्यात्मिक प्रगति के पथ पर अग्रसर नहीं हो सकते। यही कारण है कि प्राचीन काल से ही यह भारत भूमि देवताओं के लिये भी दुर्लभ मानी गई थी, क्योंकि यहाँ फल-फूल की अधिकता होने से आहार शुद्धि अधिक संभव है, और आध्यात्मिक प्रगति के लिये अन्य साधन भी सुलभ हैं।

आहार और आध्यात्मिकता का सम्बन्ध ऐसा अकाट्य है कि आत्म-कल्याण की कामना रखने वाले व्यक्ति को उसमें सदैव सावधान रहना अवाश्यक है। आहार की बाह्य और आन्तरिक दोनों प्रकार की शुद्धि परमावश्यक है। बाह्य शुद्धि का तो बहुत कुछ सम्बन्ध मनुष्य के स्वास्थ्य से भी है इसलिये सभी समझदार आदमी न्यूनाधिक परिमाण में उसका ध्यान रखते हैं। पर आन्तरिक शुद्धि अथवा आहार को प्राप्त करने के लिये साधना की शुद्धि सूक्ष्म विषय है और उसकी सच्चाई-झुठाई बाहर सिद्ध करने की अपेक्षा अपने मन में ही विचारने की बात है। हम चाहे अन्य लोगों के सामने अपने खोटे काम का भी औचित्य तर्क द्वारा क्यों न सिद्ध कर दें, पर अपने मन और अन्तरात्मा को हम धोखा नहीं दे सकते। भीतर ही भीतर हम अपनी कमजोरी ओर पाप का अनुभव करते ही रहते हैं।

आहार में सात्विकता की आवश्यकता

मानव शरीरधारी के लिये स्वास्थ्य-रक्षा की समस्या सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। यद्यपि अनेक अनभिज्ञ व्यक्ति धन को ही सबसे बड़ी चीज बतलाते हैं ओर अन्य लोग बढ़िया भोज्य सामग्री, चमक-दमक की पोशाक, सुन्दर महल, गाड़ी, मोटर आदि वाहनों को सुख का आधार कहते हैं पर थोड़ा-सा ही विचार करने पर मालूम हो जाता है कि ये सब चीजें उत्तम स्वास्थ्य होने पर ही उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। दुनियाँ में ऐसे सैकड़ों व्यक्ति मिल सकते हैं, जिनके पास लाखों या करोड़ों की संख्या में भी धन मौजूद है और सब प्रकार की सुख-सामग्री भी जिनको प्राप्त है, पर जो सदा रोगी और दुःखी ही बने रहते हैं। ऐसे ही अनेक व्यक्ति तो यहाँ तक दुःखी होते हैं कि आत्मघात करके दुःखों से छुटकारा पाने की चेष्टा करते हैं।

अब से पचास-साठ वर्ष पहले अमरीका के मि० राकफेलर संसार के सबसे बड़े धनी व्यक्ति समझे जाते थे। उस समय उनकी सम्पत्ति का अनुमान एक अरब रुपये के लगभग किया जाता था। पर धन कमाने में ही सदा संलग्न रहने के फलस्वरूप उनका स्वास्थ्य खराब हो गया था और उनके आमाशय में ऐसी खराबी पैदा हो गई थी कि वे किसी तरह का खाद्य-पदार्थ पचा नहीं सकते थे। करोड़पति से भी बढ़कर धनवान होने पर भी वे साधारण भोजन के लिये तरसते थे। अन्त में एक डॉक्टर ने उनको मक्खन निकला हुआ दूध जिसे अनेक स्थानों में तो फेंक दिया जाता है, खाने को बताया और वह उनको किसी प्रकार हजम होने लगा।

इस दृष्टि से सही और स्थायी स्वास्थ्य मनुष्य की सबसे बड़ी सम्पत्ति है, जिसके आधार पर मनुष्य चाहे तो अपने जीवन को हर तरह से सार्थक बना सकता है। पर इसमें भी अधिकांश मनुष्य एक भूल यह करते हैं कि वे इस विषय पर पर केवल शारीरिक—भौतिक दृष्टि से ही विचार करते हैं। अगर वे अच्छा आहार प्राप्त करके हृष्ट-पुष्ट बन जाते हैं और बिना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसी विशेष बीमारी के अपना नित्य का काम ठीक तरह से करते रहते हैं तो इस स्थिति को सन्तोषजनक मान लेते हैं। वे इससे आगे बढ़कर इस बात पर कभी विचार नहीं करते कि शरीर के साथ ही उनकी मानसिक स्थिति का ऊँचा रहना और आत्मिक शान्ति का प्राप्त करना भी आवश्यक है। वस्तुतः मानसिक और आत्मिक क्षेत्र शरीर की अपेक्षा विशेष महत्व के होते हैं। यदि ये दोनों ठीक दशा में न रहें तो शारीरिक स्वास्थ्य का स्थायी रह सकना भी सम्भव न होगा। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर रखकर श्रीमद्भगवद्गीता में कहा गया है—

आयुः सत्व बलारोग्य सुख प्रीतिविवर्धना।
रस्याः स्थिग्धाः स्थिरा हृद्या आहारा सात्विकप्रियाः।।

अर्थात् "सात्विक आहार आयु, बुद्धि, बल, आरोग्य सुख और प्रीति की वृद्धि करने वाला होता है।" इसके विपरीत राजसिक आहार, चाहे वह अधिक स्वादिष्ट तथा चटपटा जान पड़ता है और उसके द्वारा आरम्भ में ताकत और हिम्मत की अधिकता भी जान पड़ती है, पर अन्त में वह रोग, दुःख और चिन्ता का उत्पन्न करने वाला ही सिद्ध होता है—

कट्वम्ललवणात्युष्णा तीक्ष्णरूक्षविदाहिनाः।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोक भय प्रदाः।।

इस भेद का मुख्य कारण यही है कि जहाँ सात्विक भोजन से मनुष्य के आध्यात्मिक भावों की वृद्धि होती है, सद्वृत्तियों का विकास होता है, सद्गुणों की ओर मन झुकता है, वहाँ राजसिक और तामसिक आहार से आत्मा पर अन्धकार का पर्दा पड़ने लगता है और सद्विवेक की शक्ति कुण्ठित होकर मन कुमार्ग पर जाने लगता है। ऐसी स्थिति में लोग चाहे आरम्भ में कुछ व्यसनों या शौकों की पूर्ति होने से खुशी भले ही मना लें पर इसका अन्तिम परिणाम पतन के सिवाय और कुछ नहीं हो सकता है।

आहार का सबसे पहला नियम यह है कि वह भली प्रकार पचकर शरीर के पोषणार्थ उत्तम रस और रक्त के रूप में परिणित हो सके। यही कारण है कि अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थों, उपनिषदों, चिकित्सा ग्रन्थों में हर जगह यह आदेश दिया गया है कि आमाशय के आधे भाग को भोजन से भरे, चौथाई को पानी से भरे और शेष चौथाई को वायु के संचारार्थ खाली रहने दे जिससे भोजन का परिपाक भली प्रकार हो सके। पर जैसा हम भली प्रकार जानते हैं कि सब प्रकार की मिठाइयाँ और अधिक घी वाले पदार्थ गरिष्ठ होते हैं और यदि उनको अधिक मात्रा में खाया जाय तो अनपच होकर रस और रक्त को अशुद्ध बनाते हैं। यही कारण है कि जो पण्डे, पुजारी आमतौर से मिष्ठान्न और पकवान का भोजन पाते रहते हैं, उनमें सात्विकी के बजाय राजसिक और तामसिक प्रवृत्ति ही विशेष देखने में आती है।

आहार के इस आध्यात्मिक पहलू को दृष्टिगोचर रखकर ही ग्रन्थों में सुपच खाद्य पदार्थों का अल्प मात्रा में सेवन का आदेश दिया है। जो ऐसा नहीं करते उनके लिये देर तक आसन पर बैठ सकना, प्राणायाम के द्वारा नाड़ी शुद्ध कर सकना और ध्यान में मन लगाये रख सकना कठिन हो जाता है। आरम्भिक यौगिक क्रियाओं का एक उद्देश्य यह भी होता है कि शरीर की पूरी तरह शुद्धि हो जाय और किसी तरह की व्याधि अथवा शारीरिक कष्ट का चिन्ह न रहे। क्योंकि जिसके मन की एकाग्रता तथा ध्यान शारीरिक कष्टों के कारण भंग होते रहेंगे वह मन को वशीभूत करके चित्त की वृत्तियों को संयमित करने में कदाचित् ही समर्थ हो सकता है। इसलिये योगी को सर्वप्रथम स्वादेन्द्रिय को वश में करके अपने आहार का इस प्रकार नियमन करना पड़ता है कि उसमें साधनों को करने लायक शक्ति तो पूर्ण मात्रा में बनी रहे, पर पेट में किसी प्रकार की गंदगी, कब्ज, वायु की अधिकता आदि दोष उत्पन्न न हों।

यदि मनुष्य पाशविकता और लम्पटता से ऊपर उठकर सचमुच आध्यात्मिक जीवन में प्रवेश करने का इच्छुक हो तो उसके लिये अपने आहार में सुधार करना अनिवार्य है। हमारा भोजन न्याययुक्त उपायों से उपार्जित, किसी भी प्राणी को किसी प्रकार का कष्ट न देकर प्राप्त किया हुआ, सात्विक-गुणयुक्त तो होना ही चाहिये, पर साथ ही यह भी ध्यान रखा जाय कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यथासम्भव स्वाभाविक और प्राकृतिक अवस्था में भी हो। परम्परा और पुराने अभ्यास देखते हुए आज हम यह तो नहीं कह सकते कि मनुष्य आग पर पकाये भोजन का पूर्णतया त्याग कर केवल फल, मूल और पत्तों का ही उपयोग करने लगे, पर हम यह अवश्य कहेंगे कि पके हुए भोजन के परिमाण में कमी करके साथ में कच्चे फल, शाक, पत्ते का व्यवहार अवश्य करना चाहिये और अपनी शारीरिक और आर्थिक परिस्थिति को देखते हुए प्राकृतिक भोजन परिमाण क्रमशः बढ़ाते चलना चाहिये।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि अन्न, दूध, फल-फूल और पत्तों का सादा भोजन आध्यात्मिकता की प्राप्ति में सहायक होता है। जब कृत्रिम पदार्थ, मिर्च मसाले से युक्त उत्तेजिक भोजन, घी, तेल, चीनी, मैदा आदि के बने गरिष्ठ पकवान मनुष्य में शारीरिक और मानसिक विकार उत्पन्न करके उसे पतनकारी मार्ग में ढकेलते हैं, तब प्राकृतिक भोजन का उचित परिमाण में व्यवहार करना शरीर और मन को स्वस्थ्य रखते हुये, आत्मोत्थान के मार्ग को भी प्रशस्त करेगा। हमको यह भी स्मरण रखना चाहिये कि आजकल मनुष्य जो भोजन और विषय की दृष्टि से असंयमशील हो गये हैं, उसका एक कारण यह भी है कि वे स्वाद और चटोरेपन के वशीभूत होकर कृत्रिम उपायों से स्वादिष्ट चटपटे बनाये गये खाद्य पदार्थों को आवश्यकता से अधिक खाते रहते हैं। इससे उनका शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य नष्ट हो जाता है और उनकी मनोवृत्तियाँ विकार युक्त होकर पाप-मार्ग की ओर प्रवृत्त होने लगती हैं। इसलिए आध्यात्मिकता के अभिलाषी को अन्य सत्कर्मों और सदाचरणों के साथ आहार की शुद्धता, पवित्रता और प्रकृति अनुकूल होने का भी ध्यान रखना आवश्यक है। वे लोग भूल में हैं जो चौके-चूल्हे और छूआछूत के नियमों का पालन करने को ही पवित्रता और धार्मिकता का प्रमाण समझ लेते हैं। वास्तविक महत्व अपने परिश्रम की न्याययुक्त कमाई से प्राप्त किया भोजन का है। जिसको हिताहार और मिताहार की दृष्टि से ग्रहण किया जाय, वही मनुष्य को सात्विकता और आध्यात्मिकता की दृष्टि ने उच्च बना सकता है।

शाक-भाजी खाइये—अपनी उमर बढ़ाइये

आज लोगों में मिथ्या विश्वास जम गया है कि चाहे वह माँस हो अथवा खोये से बनी हुई मिठाइयाँ, जितना अधिक चर्बी वाला आहार ग्रहण किया जायेगा मनुष्य शक्तिशाली और दीर्घजीवी बनेगा, जबकि हमारे ऋषि चरक का कहना है दूध, शाक, छाछ, फल और हलके से हल्का आहार लेने से शक्ति, तेज और आयु की वृद्धि होती है।

गाँधीजी इंग्लैण्ड गये तब अंग्रेजों ने इनसे मांस लेने को कहा। गाँधीजी ने कहा—इतना गरिष्ठ भोजन करके मैं अपने पेट को नरक नहीं बनाऊँगा। इस पर अंग्रेज एक कविता बनाकर गाँधीजी को चिढ़ाया करते थे—"बिहोल्ड माइटी इंगलिश हि गवर्न्स इण्डियन स्माल, बिकाज आफ बीइंग मीट ईटर ही इज फाइव कबिट्स टाल" (अंग्रेजों को देखो कितना ताकतवर है वह छोटे-छोटे भारतीयों पर शासन करता है और माँस खाने के कारण ही पाँच कबिट लम्बा है)"

गाँधीजी थे विनम्र स्वभाव के व्यक्ति। बहस करना उन्हें अच्छा नहीं लगता था, चुप रह गये। पर कुछ दिन बाद ही अमेरिका के कारनेल विश्वविद्यालय के वैज्ञानिक डाक्टर एम० मैंकके ने एक परीक्षण किया। उन्होंने कुछ चूहे के बच्चों को बहुत गरिष्ठ ढंग का चर्बी वाला भोजन खिलाया। इनके शरीरों को विकास तो अत्यन्त तीव्र हुआ पर वे बेचारे ७३० दिन में ही मृत्यु के घाट उतर गये। मरते-मरते वह डा० मैंकके को यह बता गए कि जीवन की सरपट दौड़ मनुष्य को जल्दी ही मार देती है। थोड़ा चलो, आराम से चलो, देश और दुनियाँ का बहुत समय तक आनन्द लेते हुये चलो। जो लोग इस नीति को कम से कम आहार के मामले में धारण करेंगे वे दीर्घजीवी अवश्य होंगे, यह बात अगले प्रयोग से सिद्ध हो गई।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्होंने अन्य चूहों को कम कैलोरी वाला किन्तु अधिक विटामिन और खनिज अम्ल वाला भोजन दिया तो वे ५०० दिन से भी अधिक जीवित रहे। इस प्रकार उन्होंने यह सिद्ध कर दिया कि मनुष्य को जीवनवर्धक आहार की आवश्यकता है, उसी में अधिक शक्ति भी होती है भले ही मनुष्य देखने में ज्यादा मोटा, लम्बा और पहलवान टाइप का न हो। उन्होंने हिसाब लगाकर बताया कि यदि मनुष्य शाक-भाजी, फल आदि पर ही रहना प्रारम्भ करे तो उसकी आयु २५० वर्ष तक हो सकती है। यदि पर्याप्त संयम भी रख लिया जाये तो यह आयु और भी बढ़ाई जा सकती है।

इसी सिद्धान्त की पुष्टि अमेरिका के ही वैज्ञानिक डा० जानब्योरकस्तेन ने ही है। उन्होंने जीवित कोशकीय द्रव्य (जिससे मनुष्य का शरीर बना है, जिसे प्रोटोप्लाज्म कहते हैं) का रासायनिक विश्लेषण करते समय पाया कि उसके प्रोटीन के अणु एक प्रकार के रासायनिक पदार्थ द्वारा जुड़े रहते हैं। मनुश्य का शरीर—एन्जाइमों की सहायता से इस पदार्थ को घुलाकर सुपाच्य बनाता और नये कोशों की वृद्धि व अपना विकास करता है। यदि हमारा भोजन गरिष्ठ और माँस जैसे भारी खाद्यों वाला है तो इसका मतलब यह है कि प्रोटीन को जोड़ने वाले रसायन अत्यन्त कड़े हैं। वृद्धावस्था तक यह इतने कड़े हो जाते हैं कि नये कोषों का बनाना ही बन्द करा देते हैं। यही नहीं यह भीतर ही भीतर सड़ने लगते हैं जिससे विष पैदा होता है, मनुष्य के शरीर व हड्डियों की लचक नष्ट हो जाती है इसलिए वृद्धावस्था में तो विशेष रूप से हल्का आहार ही लेना चाहिये। पर यदि मनुष्य सारे ही जीवन हलका आहार रखे तो वह शरीर की क्षमतायें बनाये रखने में समर्थ होता है और अपना जीवन कई सौ वर्षों तक सुरक्षित रख सकता है। इस बात को यों भी कहा जा सकता है—

मदिरा-माँस छोड़कर जो भी शाक, दूध,फल खाता है।
जीता है सौ वर्ष—शत्रुओं को भी मार भगाता है।।

शाकाहार से संतोष करना ही बुद्धिमत्ता है

अमेरिका के आहार विशेषज्ञों ने मनुष्य के शरीर द्वारा अवशोषित की जा सकने वाली प्रोटीन को एन. पी. यू. (नेट प्रोटीन यूटीलाइजेशन) की संज्ञा दी है तथा प्रत्येक खाद्य पदार्थ में इसकी मात्रा को निश्चित बताया है। दूध में प्रोटीन ८२ एन. पी. यू. होती है। इससे कुछ अधिक प्रोटीन अण्डे में पाया जाता है, परन्तु शरीर के लिए यह अत्यंत हानिकारक सिद्ध होता है। चावल में पाये जाने वाले शरीरोपयोगी प्रोटीन की मात्रा ७० एन. पी. यू. होती है, जबकि माँस में यह मात्र ६७ एन. पी. यू. ही होती है। गेहूँ के चोकर सहित आटे या दलिया में प्रोटीन की मात्रा ६७ एन. पी. यू. होती है, परन्तु यह माँस से श्रेष्ठ एवं अधिक उपयोगी तथा सस्ती भी होती है। माँस में हानि-कारक विषाक्त तत्व पाये जाते हैं, जो अन्नों में नहीं होते।

विभिन्न दालों में भी प्रोटीन की प्रचुर मात्रा उपलब्ध होती है—मसूर की दाल में ४०, मूँग की दाल में ५७, चने की दाल में ४३ तथा सोयाबीन में ६१ एन. पी. यू.। दाल, चावल गेहूँ आदि की प्रोटीनों में एक विशेषता यह भी है कि ये एक-दूसरे की पूरक होती हैं। इनके संयुक्त प्रयोग से भोजन में प्रोटीन की मात्रा अण्डे-माँस की अपेक्षा अत्यधिक हो जाती है। वैज्ञानिकों के अनुसार विटामिन की समस्त आवश्यकता की पूर्ति मात्र १०० ग्राम हरी-साग-सब्जियों से हो जाती है। इस प्रकार अन्य और शाक मिलकर सन्तुलित आहार की आवश्यकता पूरी कर देते हैं। यहा-कदा दूध, दही आदि का सेवन वसीय पदार्थों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर देता है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए जिस संतुलित आहार की आवश्यकता है, उसमें माँस वर्ग के पदार्थों को सम्मिलित करने की कोई आवश्यकता नहीं है। शाकाहारी खाद्य पदार्थों में जो पोषण पाया जाता है, उनमें माँसाहार की तुलना में सरलतापूर्वक पाचन होने की विशेषता कहीं अधिक है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन् १९२४ में प्रोफेसर इलियर और उनके सहयोगियों ने मिश्र की ३० हजार ममी (मृत शरीरों) का परीक्षण किया। कुछ उच्च वर्गों की ममी में दाँत की खराबियाँ पायीं गईं। अन्य लोगों में यह दन्त ह्रास नगण्य ही था। कुछ आर्थाइटिस के रोगी मिले। केवल पाँच पथरी के शिकार पाये गये, जिनमें तीन गुर्दों की पथरी एवं दो पित्त की पथरी के रोगी थे। कैंसर और रिकेट्स का एक भी रोगी नहीं मिला। उस समय पूरे मिश्र राष्ट्र के निवासी, कुछेक उच्च वर्गों को छोड़कर प्रायः सभी प्राकृतिक आहार करते थे और शाकाहारी एवं सतोगुणी प्रकृति के थे।

स्वास्थ्य विशेषज्ञों के कथनानुसार, सिडनी से ए. एफ. पी. द्वारा प्रसारित समाचार में कहा गया है कि आस्ट्रेलिया के निवासी अधिक माँस खाते हैं, इसके परिणामस्वरूप उनमें से अधिकांश को अपनी जान गँवानी पड़ती है। आस्ट्रेलिया-निवासी प्रतिदिन अथवा कभी-कभी दिन में दो बार माँस खाने के अभ्यस्त हैं। तदनुरूप उनके शरीर में कोलेस्ट्रोल का स्तर बहुत अधिक होता है जो कि स्वास्थ्य का दुश्मन ही है। प्रायः माँसाहार का अर्थ मृत्यु-दंड ही समझना चाहिए।

सिडनी स्थिति सेंट विर्सेट अस्पताल के श्री लियोन साइमन का कहना है कि 'माँस न तो सुपाच्य है और न पोषक। जिन्दा रहने के लिए तथा स्वास्थ्य संवर्धन की दृष्टि से माँस खाना कतई आवश्यक नहीं है।'

एडीलेड विश्वविद्यालय के प्रोफेसर बी. डब्ल्यू. मैकपूरलेन ने कहा है—'जिन क्षेत्रों में भी साप्ताहिक उपवास का प्रचलन है वहाँ माँसाहारी क्षेत्रों की तुलना में हृदय रोग एक चौथाई मात्र है।'

हाल ही में रूस के एक व्यक्ति की १६० वर्ष की उम्र में मृत्यु हुई। उसने अपनी मृत्यु के समय पत्रकारों को अपने दीर्घ जीवन का रहस्य बताया—शाकाहारी भोजन, हर परिस्थिति में प्रसन्न रहना, गर्मो और चिंताओं को पास न फटकने देना, प्रायः दूर तक खुली हवा में टहलना, खुले वातावरण में निवास करना, दिन भर परिश्रमरत रहना, जल्दबाजी में कोई भी काम नहीं करना तथा रात को बेफिक्री से सोना।

फ्लोरिडा विश्वविद्यालय के कृषि विभाग ने १९६७ में एक स्वास्थ्य बुलेटिन में बताया था कि अंडे में अत्यन्त हानिप्रद विषाणु (वाइरस) होते हैं।

कैलीफोर्निया के दो वैज्ञानिक डा. कैथरीन निम्मो तथा डा. जे. अमेन ने एक समाचार प्रसारित किया कि अंडे में 'कालेस्ट्रोल' नामक विष पाया जाता है जो हृदय रोग का एक प्रमुख कारण है। इन्होंने अपनी खोजों से यह सिद्ध किया है कि अंडे खाने से व्यक्ति उच्च रक्त चाप (हाइ ब्लड प्रेशर) का शिकार हो जाता है, जो बाद में हृदय रोग में परिणत हो जाता है। अंडे खाने से जिगर सम्बन्धी कई प्रकार की बीमारियाँ प्रकट होती हैं तथा पाचन-किया में अवरोध उत्पन्न होता है। यहीं नहीं, इससे गुर्दे में पथरी उत्पन्न हो जाती है-आमाशय, आँत और रक्त नलिकाओं में घाव हो जाते हैं तथा रोगों से बचने की शारीरिक शक्ति क्षीण हो जाती है। पेचिश आदि रोगों के लिए प्रायः अंडे ही जिम्मेदार हैं क्योंकि घायल आँतों में इन रोगों के कीटाणु पनपते हैं।

रक्त नलिकाएँ शरीर की अत्यंत कोमल रचनाएँ हैं, जिनके लचीलेपन पर ही हमारा जीवन निर्भर है। आदमी जो क्रमशः बूढ़ा होता है उसका मुख्य कारण है, रक्त नलिकाओं का लचीलापन कम होना। रक्त नलिकाएँ क्रमशः मोटी होती जाती हैं और उनका लचीलापन खत्म होता जाता है, जिसके कारण रक्त नलिकाएँ सँकरी हो जाती हैं और रक्त के सामान्य प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करती हैं इसी बाधा के कारण रक्तचाप बढ़ता है। शरीर के समस्त अंगों को ठीक से रक्त वितरित नहीं हो पाता। फलस्वरूप अंगों और माँसपेशियों को अपने श्रम के अनुपात में न तो पर्याप्त भोजन मिल पाता है और न ही ऑक्सीजन। अंगों तथा माँसपेशियों का क्षय होना शुरू हो जाता है। शरीर के चर्म सिकुड़ने लगते तथा आदमी अधिक आयु न होने पर भी बूढ़ा दीखने लगता है। इंग्लैंड के वैज्ञानिक डा. रावर्ट ग्रास, इरविंग डेविडसन तथा प्रो. ओंकाडा ने अंडों के प्रभाव का परीक्षण किया। उन्होंने पाया कि जो लोग लगातार अंडा अथवा अंडे से बनी चीजों का प्रयोग करते हैं, उनकी पाचन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शक्ति कमजोर हो जाती है। उन्हें पेचिश तथा पेट में गैस बनने की शिकायत रहने लगती है।

अमेरिका के डॉ. ई. वी. कोनलाम की बहु-प्रचलित पुस्तक 'पोषण का नवीनतम ज्ञान' में लिखा है—'अण्डों में कैल्सियम तथा कार्बोहाइड्रेट की कमी होती है। इस कारण भी भोजन का अमाशय में बड़ी तेजी से सड़ना आरम्भ होता है। अन्ततः यह पेट के रोगों को उत्पन्न करने का कारण बनता है।

डा. आर. जे. विलियम का कहना है—'हो सकता है, अंडा खाने से शुरू में कुछ लोग अपने को अधिक स्वस्थ अनुभव करें परन्तु बाद में वे इससे कई बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

हार्वर्ड मेडीकल स्कूल अमेरिका के चिकित्सक डा. ए. वाचमैन अपने सहयोगी डा. एस. बर्नस्टीन के साथ एक विशेष अध्ययन कार्य में जुटे थे। विषय था मनुष्य के लिए माँसाहार उपयुक्त है या शाकाहार ? अध्ययन उपरान्त दोनों डॉक्टर इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि—माँसाहार से शरीर की हड्डियाँ क्रमशः कमजोर होती तथा गलती जाती हैं। शाकाहारियों के साथ ऐसी कोई बात नहीं होती है।

डा. एलेग्जैंडर टैंक ने उक्त दोनों डाक्टरों के परीक्षणों की पुष्टि करते हुए बताया कि माँस को पचाने में शरीर में अधिक ताप उत्पन्न होता है तथा इस अतिरिक्त ताप के कारण गुर्दों की रक्त छानने की प्रक्रिया बहुत तेज हो जाती है। फलस्वरूप लवणों और क्षारीय पदार्थों की अत्यधिक मात्रा अन्य छने हुए तत्वों के साथ बाहर निकल आती तथा मूत्र के माध्यम से शरीर से बाहर चली जाती है। इससे शरीर में इन तत्वों की काफी कमी होती जाती है, जिसका दुष्परिणाम हड्डियों के कमजोर होने के रूप में प्रकट होता है।

तथ्यों को देखते हुए बुद्धिमानी इसी में है कि माँसाहार से दूर रहा जाय। शरीर की जीवनी शक्ति को सुरक्षित रखने, मानवी सहृदयता को अपनाये रहने की दृष्टि से शाकाहार पर संतोष करना ही दूरदर्शिता है।

पत्तीदार भाजी—सस्ती भी, गुणकारी भी

चौलाई पत्तीदार सब्जी है जिसके बोने-लगाने में किसी प्रकार का परिश्रम नहीं करना पड़ता। घर के पीछे कहीं खाली जगह में इसे लगा जा सकता है। बीज भी बोये जा सकते हैं और गाँठें तोड़कर भी गाढ़ी जा सकती हैं। पानी ठीक तरह लगता रहे और खाद की कमी न पड़े तो पत्तियाँ दो महीने में आने लगती हैं। तोड़ लेने पर फिर नई कोपलें उग आती हैं। इस प्रकार दस पेड़ लगा देने पर एक परिवार के लिए रोज के लिए साग बन सकता है। लागत कुछ नहीं ।

बहुमूल्य पदार्थों से इतनी भरीपूरी कि बढ़िया से बढ़िया शाक भाजी का मुकाबला कर सकती है।

१०० ग्राम पत्तियों में पाये जाने वाले पदार्थों का अनुपात इस प्रकार है—प्रोटीन ४.०, चिकनाई ६.५, खनिज लवण २.७, कैलशियम ३७.७, फास्फोरस ८.७, लौह १०.५, मैग्नेशियम २४.७, पोटेशियम ०.३३, इनके अतिरिक्त भी बहुत-से खनिज और लवण चौलाई में पाये जाते हैं, जो भोजन की अपूर्णता को दूर करते हैं। पत्तियों में खुज्जा होता है, वह पेट साफ करने के काम आता है।

पालक, मैथी आदि कई शाकों को लोग बड़े परिश्रम से बोते हैं। फिर भी वे हर मौसम में जिन्दा नहीं रहते। चौलाई की यह विशेषता है कि वह हर महीने में जीवित रहती है। यह वर्षों काम देती है। पत्तीदार शाकों में चौलाई अपने ढंग का अनौखा है। इसको लगाने और प्रयोग करने का प्रयत्न किया जा सके तो स्वास्थ्य की दृष्टि से एक अनमोल उपहार हाथ लग सकता है।

यों पत्तीदार सब्जी सभी गुणकारी हैं। वे आंतों की सफाई करती हैं, जिन्हें दस्त साफ नहीं होता उनके लिए वे बुहारी का काम करती हैं। बथुआ, पालक, मेथी, चने की पत्ती, सरसों की पत्ती इनमें न्यूनाधिक मात्रा में समान गुण हैं। दैनिक भोजन में एक भाजी पत्तीदार नित्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रखी जा सके तो यह स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत उपयोगी है।

इनका उगाना बहुत सरल है। खाद, पानी की उतनी जरूरत नहीं होती और न बढ़िया जमीन तैयार करनी पड़ती है, मामूली खाली जगह में इन्हें आसानी से बोया जा सकता है। पत्तियाँ तोड़ लेने के बाद नई कोपलें फिर से निकल आती हैं इस प्रकार एक बार लगाया गया पौधा महीने में दस बार तोड़ा जा सकता है।

यह सस्ता भी इतना है कि गरीब से गरीब व्यक्ति भी अपने घर के आस-पास बो सकता है या पास-पड़ौस से मुफ्त प्राप्त कर सकता है। बथुआ, बैशाख की फसल के साथ-साथ अनायास ही उग आता है। उसे निरर्थक समझकर किसान ऐसे ही उखाड़कर फेंक देते हैं इसी प्रकार चने की पत्तिया तोड़ने के लिए किसान खुशी से बुला ले जाते हैं क्योंकि तोड़ने के बाद नई-नई कोपलें निकलती हैं और बोने वाले को कई गुना लाभ होता है। पालक-मैंथी जितने कोमल होते हैं उतने ही खाने में अच्छे लगते हैं साथ ही उनकी पैदावार भी अधिक होती है। इसलिए जिनके पास अपना खेत नहीं है वे किसी किसान से पूछकर उसके खेत में से इन सागों को मुफ्त प्राप्त कर सकते हैं। जिन्हें मुफ्त न लेना हो वे अपने घर के आस-पास की जमीन में बो सकते हैं। गमले, टोकरी आदि में इन्हें छत पर आँगन में बोया जा सकता है। वस्तुतः गुणकारी भाजियों में चौलाई का दर्जा ऊँचा है। उसमें खनिज, विटामिन, प्रोटीन आदि की पर्याप्त मात्रा है।

पत्तीदार भाजियों को उबाला और पीस लिया जाय, फिर आटे में मिलाकर उसकी रोटी बनाई जाय तो स्वादिष्ट भी होती है और सस्ती भी। आधा अनाज और आधी पत्ती दोनों को मिला लिया जाय तो भोजन इतना सस्ता साथ ही इतना स्वादिष्ट बनता है कि गरीब-अमीर सभी समान रूप से लाभ उठा सकें। प्रचलन न जाने क्यों इसका नहीं है। हमें पत्तीदार भाजी को अधिकाधिक प्रयोग में लाना चाहिए।

आहार के क्षारीय अंश की पूर्ति फल, सब्जियों से

आहार को मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया जा सकता है और दोनों एक-दूसरे के पूरक हैं। एक भाग को अम्लीय कहा जा सकता है, दूसरे को क्षारीय। अम्लीय अंश अन्न, दाल, गुड़, चीनी, घी आदि से प्राप्त होता है, तो क्षारीय अंश हरी सब्जियों एवं ताजे फलों से। इन क्षारीय अंश हरी सब्जियों एवं ताजे फलों से। इन क्षारीय अंशों में ही कैल्शियम, लोहा, ताँबा, मैग्नीशीयम, क्लोरीन, आयोडीन आदि तत्व रहते हैं। अतः भोजन में इनका पर्याप्त अंश रहना आवश्यक है। आहार-विशेषज्ञों के अनुसार २०० ग्राम प्रोटीन, अम्लीय और कार्बोज पदार्थों के साथ कम से कम ८० ग्राम क्षारीय पदार्थ लेना आवश्यक है।

इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु फलों तथा साग-भाजी को भोजन में प्रमुख स्थान देना चाहिए।

पालक, मैंथी, नोनियां, चौलाई, सहजना की पत्ती, सरसों की पत्ती, मीठी नीम, चने की पत्ती, धनियां, पुदीना आदि पत्ते वाली भाजियों तथा भिंडी, लौकी, तोरई, टिंडा, करेला, ककड़ी, टमाटर, परवल जैसी हरी सब्जियों को भोजन में प्रमुख स्थान देना सस्ता भी पड़ता है, पोषक एवं लाभकारी भी। सेम, मटर, हरी सोयाबीन, राजमा, हरा चना आदि फली वाली सब्जियाँ भी ऐसी ही सुलभ व उपयोगी होती हैं। जिस ऋतु में प्रकृति में जो साग-सब्जी उपलब्ध होती है, वह उस ऋतु के लिए प्रायः उपयोगी होती है।

सब्जियों के विटामिन्स तथा खनिज लवण पूरी मात्रा में उपयोग में लाने के लिए इन्हें धीमी आँच में पकाना चाहिए। पत्ते वाली सब्जियाँ बहुत देर तक और तेजी से रगड़कर नहीं धोनी चाहिए। कोई भी सब्जी काटने के बाद नहीं धोनी चाहिए अन्यथा उनके खनिज लवण धुल जाते हैं। अधिक घी, तेल, मिर्च-मसालों का उपयोग साग-सब्जियों को निष्प्राण बना डालता है। जो सब्जियाँ कच्ची ही खाई जा सकती है, उन्हें वैसा ही खाना चाहिए। उनकी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बढ़िया सलाद बनायी जा सकती है। पालक, खीरा, ककड़ी, गाजर, मूली, मटर, सलाद, प्याज, टमाटर आदि को काटकर-मिलाकर ऐसी सलाद बना लेते हैं और उसमें नीबू, अदरक, धनियाँ, पुदीना, कालीमिर्च को मिला लेते है तो स्वादिष्ट एवं पौष्टिक सलाद तैयार हो जाती है।

मौसमी फल अपने मौसम में सस्ते होते हैं। उनका भरपूर उपयोग करना चाहिए। खीरा, ककड़ी, खरबूज, तरबूज, आम, जामुन, केला, अमरूद, नीबू, सन्तरा आदि ऐसे ही फल हैं। ऋतु अनुसार इनमें से किसी न किसी को भोजन में प्रायः शामिल किया जा सकता है। जिनके पास घर से लगी थोड़ी भी जमीन है, उन्हें घरेलू शाक-वाटिका अवश्य ही विकसित करनी चाहिए और जीवन-तत्व से भरपूर इन सब्जियों तथा फलों को घर में ही पैदा करना चाहिए।

हमारे पोषण के लिए आवश्यक अनेक तत्व हमें इन्हीं सब्जियों तथा फलों से ही प्राप्त होते हैं। जैसे-कैल्शियम। यदि इसकी कमी हो जाये, तो हड्डियों का विकास रुक जाता है, दन्तक्षय जैसे रोग पनपते हैं। यह कैल्शियम गाय के दूध, सूखे फलों, मूँगफली और सोयाबीन में भी होता है। हरी साग-सब्जी जैसे—चुकन्दर, गाजर मटर, अंगूर, सूखी अंजीर आदि में इनका बाहुल्य रहता है। मठा और गो-दुग्ध में भी इसकी अच्छी मात्रा हुआ करती है।

लोहा रक्त के लाल कणों का अंश होता है। इसकी कमी रक्ताल्पता तथा अन्य रक्त-सम्बन्धी विकारों को जन्म देती है। लौह-तत्व हरी सब्जियों में प्रचुर होता है।

बथुआ में ४.२ प्रतिशत, लाल चौराई में २१४, चने में पत्ते में २३.८, मकोय-पत्ती में २०५, मेथी-पत्ती में १६.६, पोदीना में १५.६, सरसों के साग में १२.५, धनियाँ की पत्ती में १० तथा पालक में ५ प्रतिशत लोहा पाया जाता है।

फलों एव मेवों में १००० ग्राम, बादाम में ३६ मिली ग्राम, अखरोट में ३१, सेव में ०३, केला में ०.६, मिलीग्राम लोहा पाया जाता है। प्याज और दालों में भी यह प्राप्त होता है।

हरी सब्जियों आलू, ककड़ी, खीरा, टमाटर, मटर केला, नीबू, नारंगी, खजूर आदि से तथा गो-दुग्ध से फास्फोरस, गन्धक, पोटेशियम, मेग्नीशियम, सोडियम, आयोडीन, मैग्नीज आदि भी मिलते हैं, जो कि पोषण लिए नितांत आवश्यक हैं।

दैहिक विकास के लिए अनिवार्य तत्व विटामिन्स भी सब्जियों-फलों में ही पर्याप्त होते है। आँतों, कान, आँख, नाक को स्वस्थ बनाये रखने के लिए आवश्यक पोषण विटामिन 'ए' देता है। छोटे बच्चों, गर्भवती महिलाओं को इनकी अधिक आवश्यकता होती है। सामान्य व्यक्तियों से चौ-गुना विटामिन 'ए' एक वर्ष से दो वर्ष वर्ष तक के बच्चों के लिए चाहिए, जबकि दो वर्ष से बड़े बच्चों और महिलाओं को आठ गुनी मात्रा में यह आवश्यक होता है।

पेट-सम्बन्धी परेशानियाँ-कब्ज, भूख कम लगना, पेट में ऐंठन, अन्तड़ियों में सूजन आदि विटामिन 'बी' की कमी का परिणाम होते हैं। चर्मरोग पेट की खराबियों की ही प्रतिक्रिया होते हैं। पोलियो, बेरीबेरी जैसे रोग इसके अभाव में पनपते हैं।

पाचन-क्रिया के लिए विटामिन 'सी' की भी इतनी ही आवश्यकता होती है। उसकी कमी से स्कर्वी, मसूड़ों के रोग, हड्डी के रोग, गठियावात, पायरिया, डिप्थीरिया आदि हो जाते हैं।

विटामिन 'डी' शरीर संरक्षण के लिए आवश्यक है। बच्चों में सूखा रोग और वयस्कों में सन्धिवात, मधुमेह आदि इसी की कमी के परिणाम होते हैं।

विटामिन 'ई' सन्तानोत्पादन शक्ति का वर्धक होता है। उसके अभाव में पुरुषों में नपुसंकता एवं स्त्रियों में वंध्यापन आ जाता है। इस प्रकार विटामिना की आवश्यकता स्पष्ट है।

विटामिन 'ए' ताजे दूध, दही, मक्खन, घी, मलाई, छाछ, आलू, फूलगोभी, पालक, मूली, गाजर, शलजम, शकरकन्द, टमाटर, मैंथी, चौलाई, सहजना एवं अजवाइन की पत्तियों में, आम, अमरूद, नीबू, आदि फलों में तथा गेहूँ में पाया जाता है। विटामिन 'बी' वस्तुतः विटामिनों का एक समूह है। यह चना, मटर, गेहूँ, चावल, दाल, आटा, चोकर तथा दूध, मट्ठा आदि में भी पाया जाता है और हरी सब्जियों, शहद, मेवा, टमाटर, सेव, प्याज, फूलगोभी में भी। रसेदार सब्जी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बनाये जाने पर सब्जी से अलग होकर यह रसे में ही आ जाता है।

मटर, सेम, मूँग, चना-गेहूँ को अंकुरित कर खाने पर उनसे विटामिन 'सी' भरपूर मात्रा में मिल जाता है। खाद्य पदार्थों को अधिक रगड़कर धोने अथवा उन्हें उबालकर पानी फेंक देने से विटामिन 'सी' भी पानी के साथ ही चला जाता है। आलू, प्याज, गाजर, शलजम, पालक, सलाद, पत्तागोभी में तथा नीबू, अंगूर, सेब, अनार, केला में यह पाया जाता है। 'आबले' में विटामिन 'सी' बड़ी मात्रा में होता है। ऋतु में उपलब्ध होने पर यदि एक ताजा आँवला प्रतिदिन खाया जाये, तो विटामिन्स 'सी' की पर्याप्त मात्रा प्राप्त हो जाती है। साग-सब्जियों का विटामिन 'सी' उन्हें भूनने या देर तक पकाने से नष्ट हो जाता है।

विटामिन 'डी' सूर्य-किरणों में भरपूर पाया जाता है। छोटे बच्चों को सरसों के तेल की मालिश कर सुबह धूप में लिटाने से यह जीवन-तत्व अच्छी मात्रा में मिलता रहता है। त्वचा के द्वारा सूर्य-किरणों से यह जीवन-तत्व सोख लिया जाता है। खुले चारागाहों में चरने वाले पशुओं के दूध में भी विटामिन 'डी' पर्याप्त होता है और माँ के दूध में भी। बड़ों द्वारा भी प्रातःकालीन धूप सेवन इस दृष्टि से आवश्यक होता है और उससे विटामिन 'डी' की वांछित मात्रा मिलती रहती है।

विटामिन 'ई' चोकर सहित गेहूँ का आटा खाने से प्राप्त होता रहता है। छाने हुए आटे में यह नहीं रह जाता। गाय के दूध, हरी सब्जियों, मटर, सेम, भिण्डी, लहसुन, प्याज, तरबूज, सलाद तथा हाथ के कुटे चावल में भी 'ई' विटामिन पाया जाता है।

विटामिनों तथा क्षारीय अंशों के अभाव में भोजन असन्तुलित रहता है। उससे पर्याप्त पोषण नहीं हो पाता। मनुष्य का शारीरिक विकास रुक जाता है। तरह-तरह के रोग एवं विकार उभर आते हैं। फिर उनके उपचार में बहुत अधिक पैसा तथा समय खर्च होता है। पीड़ा-परेशानी होती है तथा उल्लास-प्रसन्नता का अभाव जीवन को बोझिल बना देता है।

सन्तुलित आहार का यह अर्थ नहीं कि प्रतिदिन तौल-तौलकर विभिन्न वस्तुएँ भोजन में शामिल की जायँ और वैसा न कर पाने पर पछताते रहकर मानसिक चिन्ता तथा शारीरिक अस्वस्थता बढ़ाते रहें। इतना ध्यान अवश्य रखना चाहिए कि भोजन में अम्लता-वर्धक तत्वों की ही भरमार न रहे। अन्यथा वही भोजन कुछ दिनों बाद पेट को गरिष्ठ लगने लगेगा। आहार में क्षारीय अंशों की भी पर्याप्त मात्रा होनी चाहिए। हरी साग-सब्जी तथा ऋतु अनुकूल सुलभ फलों का समावेश रखने से आहार में यह सन्तुलन बना रहता है। वे अधिक मँहगे भी नहीं पड़ते। यदि थोड़ी सजगता रहे, प्रमाद-आलस्य तथा रूढ़ि से बचा रहा जाय, तो उनकी नियमित पूर्ति कठिन नहीं।

दैनन्दिन आहार की व्यवस्था में ही यह सजगता उचित है। अन्यथा बाद में पछताना पड़ता है। भोजन में अम्लीय अंश अधिक होने से गैस-विकार जैसे कष्ट उपस्थिति होते हैं।

बच्चों के भोजन में क्षारीय अंशों का समुचित समावेश न हुआ तो उनकी शारीरिक वृद्धि ही रुक जाती है। बच्चों को शारीरिक शक्ति व ह्रास की पूर्ति के लिए अधिक पौष्टिक भोजन चाहिए। अतः उन्हें हरी सब्जियाँ व फल अच्छी मात्रा में दिये ही जाना चाहिए। परिवार में ही ऐसे सन्तुलित भोजन का अभ्यास रखा जाय, तो उससे सभी को लाभ होता है। बच्चे को भी आसानी से प्रतिदिन वैसा आहार मिलता रहता है। अतः आहार में इस सन्तुलन का समावेश आवश्यक है।

शाक अपने घर उगाएँ

अब तक यह जाना जाता रहा है कि मानव शरीर को अन्न और माँस से अधिक स्वास्थ्य और पौष्टिकता मिलती है, पर अब वैज्ञानिक बराबर यह अनुसंधान करते जा रहे हैं कि अन्न की अपेक्षा शाक-भाजी से शरीर को वह सभी तत्व आसानी से मिल जाते हैं जिनसे शरीर को अधिक तेज, स्निग्धता, शक्ति और दीर्घ जीवन मिलता है। पौष्टिक तत्व प्राकृतिक रूप से हरी सब्जियों में सर्वाधिक पाये जाते हैं। सब्जियों में रोगों के अणु उत्पन्न न होने की विलक्षण क्षमता पाई जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह तो शाक के स्वास्थ्य सम्बन्धी लाभ थे, आजीविका की दृष्टि से भी भाजी उत्पादन में लाभ ही है। अनुमान है कि जिस खेत में जितना परिश्रम करके १ रुपया कमाया जा सकता है शाक-भाजी उत्पादन करकें उसमें ही ढाई रुपये अधिक कमाये जा सकते हैं।

शहरों के किनारे रहने वाले कुछ किसानों के पास बहुत थोड़ी जमीन होती है, वे उतने से ही भरपूर कृषि का लाभ उठाते हैं। एक खेत में तीन-तीन, चार-चार बार हरे साग उगा लेते हैं, इनकी बाजार में खपत भी आराम से हो जाती है और दाम भी अच्छे मिलते हैं।

अभी ग्रामीण किसानों का इस ओर ध्यान कम है। इस कारण लोग चाहते हुए भी साग-सब्जी का पूरा लाभ और आनन्द नहीं ले पाते। मुख्य बात यह बताने की है कि कृषि की अपेक्षा साग-सब्जी का उत्पादन अधिक होता है। इस वर्ष इटावा के जिलाधीश ने आलू उत्पादन के आँकड़े एकत्रित किये, उन्होंने पाया कि एक एकड़ में आलू का औसत उत्पादन ५५० मन तक बैठता है जबकि उसमें गेहूँ अधिक से अधिक ५० मन तक बैठता है। आलू साग और अन्न दोनों का ही काम देता है। उपवास आदि अवसरों पर धान, सिंघाड़े आदि के आटे पर पैसा भी अधिक लगता है और वे उपवास में ग्रहण करने योग्य भी नहीं होते, आलू इस दृष्टि से सबसे अच्छा उपवास में ग्रहण करने योग्य साग है।

नमाजपुर (बहराइच) के पियारे मिर्जा नामक एक किसान ने एक एकड़ में ४८० मन आलू रिकार्ड उत्पादन कर कृषकों का ध्यान इस ओर खींचा। गाजीपुर के श्री रामसिंह नामक किसान ने पिछले वर्ष ४ एकड़ भूमि में केवल आलू, टमाटर, गोभी, बैंगन, करेला, कुम्हड़ा आदि का उत्पादन किया। उन्होंने बताया-कुल परिश्रम और मजदूरी काटकर उससे उन्हें ५ हजार रुपये का लाभ हुआ। ४ एकड़ भूमि में भारी अन्न से उन्हें पहले मुश्किल से १ हजार रुपये की आय होती थी।

साग-भाजी के बढ़ते आर्थिक लाभ देखकर कानपुर के आस-पास के किसानों ने बड़ी मात्रा में साग उत्पादन करना प्रारम्भ कर दिया है। इसमें युवक किसान अधिक रुचि ले रहे हैं।

'मिनिस्ट्री आफ फूड एण्ड एग्रीकल्चर' नई दिल्ली के एक्स्टेन्शन डाइरेक्टरेट ने विज्ञप्ति नम्बर ५८/६७ में टमाटर की अधिक पैदावार देने वाली किस्म का विवरण छापा है। इस किस्म को को० १ कल्याणपुर का नाम दिया गया है। उसे बोकर किसान फी हेक्टर ३७ से ६० क्विंटल तक पैदावार ले सकते है। वैसे भी टमाटर की सामान्य पैदावार ३० से ५० क्विटल तक मिलती है। टमाटर की इस किस्म के पौधे बौने होते हैं। बहुत ज्यादा फैलते नहीं इसलिए उन्हें लकड़ी के गमलों में घरों के आस-पास भी जमाया जा सकता है। इसके हर गुच्छे में ६ से ८ तक फल लगते हैं। इस तरह घर में ही उत्तम भाजी का आनन्द उठाया जा सकता है और उस पर होने वाले खर्चे को बचाया जा सकता है।

शाकाहार की मात्रा बढ़ा देने पर ही आर्थिक लाभ है। अन्न की अपेक्षा साग-भाजी सस्ती भी होती है। उसे नमक-मिर्च मिलाकर स्वादिष्ट भी बनाया जा सकता है इसलिए उत्पादन और उपभोग दोनों ही दृष्टि से शाक आर्थिक लाभदायक है। हममें से प्रत्येक को इस लाभ को उठाना चाहिए।

घरों में पुष्प और शाक उगाने का आन्दोलन चलाने हमारे लिए कितनी ही दृष्टियों से उपयोगी है। काम छोटा सा है पर उसकी उपलब्धियों पर तनिक अधिक गम्भीरता से विचार किया जाय तो प्रतीत होता है कि देखने में सामान्य बात भले ही लगती हो, पर वस्तुतः है वह अनेक दृष्टियों से असामान्य।

मोटे तौर पर सबसे बड़ा लाभ उसका आर्थिक लाभ सामने आता है। साल के अधिकांश समय में शाक-भाजी काफी मँहगी बिकती है। कई बार तो उनका मूल्य दूध के भाव जितना हो जाता है। जिस प्रकार दूध खरीदना हर किसी के बस की बात नहीं, उसी प्रकार आज-कल गरीब लोगों को तो शाक के लिए भी तरसना पड़ता है। दालों में पानी डालकर पतला बना लिया जाता है, इसलिए वे रोटी के साथ लगावन का काम दे जाती हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और किसी प्रकार काम चल जाता है। पर इसका अर्थ यह नहीं कि शाक की उपयोगिता नहीं है और उसके बिना भी सन्तुलित भोजन की आवश्यकता पूरी हो सकती है।

हरी शाक-भाजी भी प्रकारान्तर से फलों की आवश्यकता पूरी करती हैं। सूखे अन्न उतने जीवन्त नहीं रहते। सूखने पर उनकी वह सजीवता नष्ट हो जाती है जो आहार में प्रधान रूप से होनी चाहिए। विटामिन ए, बी, सी, डी, आदि का भोजन में होना आवश्यक है। उनके अभाव में शरीर कुपोषण का शिकार होकर दुर्बल और रुग्ण रहने लगता है। उपयोगी विटामिन प्रधानतया फलों और शाकों में पाये जाते हैं। मनुष्य शरीर की संरचना बन्दर से मिलती-जुलती होने के कारण वस्तुतः उसका मूल आहार फल ही होने चाहिए पर वे जमीन कृषि कर्मों में प्रयुक्त होने के कारण कम उपलब्ध होते हैं, फलतः मँहगे बिकते हैं। उनकी आंशिक आवश्यकता शाकों से पूरी हो सकती है। स्वास्थ्य रक्षा की दृष्टि से भोजन में कौन-कौन से पदार्थों का समुचित समावेश होना चाहिए ? जो यह जानते हैं वे शाक-भाजी को पूरा महत्व देते हैं और उन्हें आहार में निश्चित रूप से सम्मिलित रखते हैं।

गरीबी के कारण हमें सस्ता भोजन चाहिए। यों शाकों का मूल्य महँगा और दालें सस्ती होती हैं। शाकों में आलू, अरबी आदि अन्य शाकों की अपेक्षा सस्ते तो रहते हैं, पर उनमें कठोरता रहने के कारण उतना गुण नहीं रहता। अन्न की तरह ही यदि शाक-भाजी की कृषि पर अधिक ध्यान दिया जाय, उनका उत्पादन बढ़े, लोकरुचि उनकी आवश्यकता समझें और माँग करें तो उनका अधिक उत्पादन और सस्तापन भी सम्भव है। पर अभी तो खरीदार और उत्पादक इस ओर उपेक्षा ही बरत रहे हैं, फलतः शाक प्रायः मँहगे ही बने रहते हैं और उनका लाभ सम्पन्न लोग ही ले पाते हैं। सामान्य लोगों को उनके बिना ही काम चलाना पड़ता है। फलतः पोषक तत्वों के अभाव में उन्हें आरोग्य की दृष्टि से एक बहुत बड़ी क्षति सहन करनी पड़ती है।

इस अभाव की पूर्ति के लिए घर-घर में उगाई जाने वाली शाक वाटिकाएँ बड़ी महत्वपूर्ण हैं। उनमें थोड़ा उत्साह दिखाया जाय तो बिलकुल मुफ्त में घर की आवश्यकता को बहुत हद तक पूरी कर सकने जितनी मात्रा में शाक उगाये जा सकते हैं। इससे न केवल पोषक तत्व ही प्राप्त होते हैं वरन् आर्थिक बचत भी होती है। आधा किलो प्रतिदिन की औसत का शाक तो छोटे घरों में भी उगाया जा सकता है। जिनके आँगन बड़े हैं और आसपास थोड़ी जगह खाली है, वे इस औसत को एक किलो नित्य तक भी कर सकते हैं। बरसात में दिनों में तोरई, लौकी उतनी पैदा की जा सकती हैं कि उन्हें पड़ौसियों को भी उपहार में दिया जा सके अथवा बेचा जा सके। यह एक अच्छा खासा गृह उद्योग है। पुराने जमाने में चक्की पीसना और चर्खा चलाना गृह उद्योग मान जाते थे, अब उतना ही उपयोगी शाक उत्पादन को बानया जा सकता है। इसका आर्थिक लाभ प्रत्यक्ष है, बाजार में पैसा नहीं डालना पड़ता। साथ ही दुकानों पर कई-कई दिन बासी, पुराने, सूखे, मुरझाये, नीरस और गुणरहित शाक खरीदने की अपेक्षा बिलकुल ताजी स्थिति में पाने का विशेष लाभ मिल जाता है। यह दुहरा लाभ थोड़ा उत्साह उत्पन्न करने भर से, हर घर-परिवार को मिल सकता है। आर्थिक बचत और स्वास्थ्य रक्षा के प्रश्न सामाजिक एवं राष्ट्रीय समस्याएँ हैं, उन्हें घर परिवार के मोर्चे पर सम्भालने के लिए, शाक वाटिका आन्दोलन बहुत हद तक सहायक हो सकता है। अपना निज का लाभ तो प्रत्यक्ष ही है।

शाक वाटिका लगाना कुछ भी कठिन नहीं है। आँगन में, छत पर थोड़ी बहुत खुली जगह प्रायः हर घर में होती है। कहीं कच्ची जमीन का हिस्सा हो तो उसमें अथवा साबुन, चाय आदि की रद्दी पेटियों, टूट घड़े-सुराहियों के पेंदे, आदि में मिट्टी भरकर उसी में शाक-फल उगाये जा सकते हैं। यह कोई बहुत बड़ी कला नहीं है। किसान परिवारों के लोग जानते हैं कि उपजाऊ मिट्टी में थोड़ा खाद मिलाकर, उसे शाकोत्पादन के उपयुक्त बनाया जा सकता है। किस महीने में क्या बोया जाता है और क्या नहीं, इस सम्बन्ध में भी सावधानी बरतनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाहिए। खुली हवा और धूप पौधे को मिलना आवश्यक होता है। बन्द जगहों में मनुष्य भले ही जिन्दा रह लें पर पौधे तो उस स्थिति में जीवित रह नहीं पाते।

इन संक्षिप्त और सर्वसुलभ जानकारियों की कई किताबें बाजार में मिलती हैं, कोई किसान या माली भी बता सकते हैं। यह जानकारियाँ इस पत्रिका में भी आगे मिल सकती हैं। यह बहुत ही सरल हैं। महिलाएँ इन्हें आसानी से याद रख सकती हैं और यदि थोड़ा उत्साह हो तो सहज ही अपने घर-आँगन में शाक वाटिका खड़ी कर सकती है। इस प्रयत्न का मधुर प्रतिफल उन्हें कुछ सप्ताहों में ही सामने खड़ा दीख सकता है।

रचनात्मक प्रवृत्तियों में उत्साह होना व्यक्तित्व के समग्र विकास की दृष्टि से अत्यंत ही लाभदायक है। निर्माण कार्यों में रुचि जागे और उनमें दत्तचित होकर जुटने की उमंग बनी रहे, उसके लिए अवसर मिलता रहे तो बनाने, संभालने, उत्पन्न करने का स्वभाव बन जाता है। व्यायामशाला में किया हुआ अभ्यास आगे चलकर शरीर को परिपुष्ट बनाता है और उसके अनेकानेक लाभ मिलते हैं। घरेलू शाक वाटिका के माध्यम से रचनात्मक प्रवृत्ति जगाई जा सकती है। निर्माण कार्य की दिशा में मुड़ी हुई इच्छाशक्ति कई लाभ उत्पन्न करती है। मानसिक तीक्ष्णता, श्रम में उत्साह, कुछ करके दिखाने की उमंग, सतर्कता, सावधानी जैसे गुणों के विकास में यह शाक वाटिका मानसिक प्रखरता उत्पन्न करने के लिए एक प्रकार की व्यायामशाला का ही प्रयोजन पूरा कर सकती हैं। इसमें महिलाएँ न केवल स्वयं लग सकती हैं, वरन् अपने बच्चों को भी लगा सकती हैं। उनके स्वभाव में सृजनात्मक प्रवृत्तियों का समावेश होना ऐसा बीजारोपण है, जिसके फलित होने पर समूचा व्यक्तित्व ही सुविकसित दृष्टिगोचर हो सकता है। अभिभावकों की ओर से बच्चों को दिया गया यह एक बड़ा अनुदान है।

मनुष्य की सहज प्रवृत्ति कुछ बनाने, बढ़ाने की होती है। कृषि उद्योग, पशुपालन आदि के सहारे न केवल आर्थिक लाभ कमाया जाता है, वरन् उस जन्मजात सहज आकांक्षा की पूर्ति भी होती है, जो सृजन कार्यों में संलग्न रहने के माध्यम से अपने अनुभव, उत्साह एवं कौशल को विकसित करने के लिए निरन्तर उमगती रहती है। बच्चे अनगढ़ रूप से इसी दिशा में कुछ न कुछ करते रहते हैं। अनुभव के अभाव में उनका यह उत्साह खटपट जैसा लगता है और उससे हर्ज होने पर डाँट भी पड़ती है। उसे उचित दिशा देने के लिए शाक वाटिका जैसे रचनात्मक कार्य सामने रखे जायें, तो उनके उत्साह को उपयुक्त दिशा मिल सकती है और बाल शिक्षा का एक मनोवैज्ञानिक साधन बन सकता है। माताएँ अपने चार-पाँच वर्ष से अधिक आयु वाले बालकों की रुचि इन कार्यों में लगा सकती हैं। उनसे अपनी देख-रेख में कुछ काम कराते हुए एक उपयोगी शिक्षण दे सकती हैं।

सन्तान उत्पन्न करने और उसे पाल-पोसकर बड़ा करने की इच्छा, मनुष्य की जन्मजात सृजनात्मक प्रवृत्ति की ही एक धारा है। कुत्ते, बिल्ली जैसे पशु और तोता, मैना, तीतर जैसे पक्षी पालने में आर्थिक दृष्टि से कुछ लाभ नहीं है, उनकी साज-सँभाल में पैसा भी खर्च होता है और समय भी, फिर भी उसमें उत्साह इसलिए रहता है कि उससे सृजन एवं पोषण की इच्छा को फलित होने में सहायता मिलती है। जड़ और चेतन की मध्यवर्ती स्थिति वनस्पति हैं। पेड़ पौधे, घास-पात, जड़ी-बूटी इसी वर्ग में आते हैं। पौधे, बच्चों की तरह बढ़ते हैं, कलियों और फूलों के रूप में हँसते हैं। फलों के रूप में अपनी सफलता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। पौधों की हरियाली कोमलता एवं संरचना में प्रकृति का अनुपम सौन्दर्य बिखरता रहता है। यही कारण है कि लोग वन्य प्रदेशों में जाकर प्रकृति की शोभा को निहारते और प्रसन्न होते हैं। उद्यान और पार्क बनाते एवं उनमें टहलने जाते हैं। सुरुचि सम्पन्न व्यक्ति घरों में थोड़ी जगह छोड़ते और उनमें हरियाली उगाते हैं। मेजों पर गुलदस्ता सजाना इसी सुरुचि का परिचायक है।

शाक वाटिका इसी सुरुचि को विकसित एवं तृप्त होने में सहायता करती हैं। घर में फलदार पौधे लगाना गाय, बकरी जैसे दुधारू पशु पालने की तरह है। उसे फलदार वृक्ष लगाने का एक छोटा रूप कहा जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रुचि हो तो फूलों के पौधे गमलों में लगाये और सुसज्जित रूप से रखे जा सकते हैं। घरों में जो चित्र टाँगे जाते हैं, उनमें भी फल-फूलों वाले पेड़-पौधे रहते हैं। कागजी चित्रों की अपेक्षा जीवन्त पौधे लगाना और उनकी हरीतिमा तथा खिले पुष्पों का आनन्द लेना कितना अधिक वास्तविक होता है, इसका प्रत्यक्ष अनुभव किया जा सकता है। कल्पना और यथार्थ में जो अन्तर है, वही चित्र सज्जा एवं फूल-पौधे लगाने के बीच देखा जा सकता है। हरी-भरी बेलें खम्भों और छतों पर छा जाने पर कितनी मनोरम लगती हैं। हरियाली का सामने रहना आँखों की ज्योति बढ़ाता और शीतलता प्रदान करता है। मस्तिष्क का तनाव दूर करने और शान्ति प्रदान करने में हरीतिमा की उपयोगिता सर्वविदित है। सभी सौन्दर्य पारखी और कलाप्रेमी लोग अपनी आन्तरिक तृप्ति के लिए हरीतिमा के सम्पर्क में रहने का अधिकाधिक प्रयत्न करते हैं। यह सुरुचि हर गरीब-अमीर परिवार में विकसित की जानी चाहिए। तुलसी के पौधे घरों में भावनापूर्वक स्थापित करने को धर्म मान्यता में इस कारण भी महत्ता दी गई है।

प्राचीनकाल में ऋषियों के आश्रम और गुरुकुल उपवनों में ही बनाये जाते थे। आज-कल भी अच्छे स्तर के विद्यालयों और शोध संस्थानों में हरियाली, लॉन, बगीचे आदि पर्याप्त मात्रा में रहते हैं। इसका कारण यह है कि प्रकृति में-हरीतिमा में, मस्तिष्क का तनाव दूर करने की, मन को उल्लसित करने की अद्‌भुत क्षमता है। अध्ययन और चिन्तन के लिए इसीलिए उसकी उपयोगिता बहुत अधिक है। चिन्तन के साथ शरीर को भी स्वस्थ रखने में हरियाली का पर्याप्त योगदान रहता है। इसी तथ्य को समझकर गुरुकुलों से लेकर आजकल के विकसित शिक्षण संस्थानों तक में हरियाली को विशेष महत्व दिया जाता है।

आरोग्य विज्ञान के विद्यार्थी यह जानते हैं कि अन्न और जल से भी बढ़कर हवा का महत्व है। अन्न-जल के बिना कुछ समय तक मनुष्य जीवित भी रह सकता है, पर दूषित वायु तो देखते-देखते दम घोंट देती है। मनुष्य जो साँस छोड़ता है, उसमें कार्बन डाइ-आक्साइड होती है। ग्रहण करने वाली वायु में ऑक्सीजन की समुचित मात्रा होनी चाहिए। पौधे कार्बन खाते और आक्सिजन छोड़ते हैं। इस प्रकार मनुष्य और पौधे एक दूसरे के अन्योन्याश्रित साथी, जीवन-मरण के सहचर और एक दूसरे के पूरक हैं। एक के द्वारा छोड़ी गई वायु दूसरे के लिए आहार है। पौधों को साथ रखकर, उनके साथ रहकर हम अपनी जीवन सम्पदा को बढ़ाते हैं और शुद्ध साँस रूपी बहुमूल्य आहार की व्यवस्था जुटाते हैं।

घरेलू शाक वाटिका के ऐसे-ऐसे अनेक लाभ हैं। उनको दृष्टि में रखते हुए हमारा यह प्रयन्त होना चाहिए कि हर घर में सृजनात्मक प्रवृत्ति को साकार करने के लिए आवश्यक उत्साह उत्पन्न हो। महिला जागरण संगठन के सदस्यों को इसका शुभारम्भ अपने-अपने घरों से कर ही देना चाहिए, और जहाँ कहीं अपनी पहुँच हो वहाँ भी इस आरोपण उत्पादन के लिए उत्साह उत्पन्न करना चाहिए। साथ ही इसकी आवश्यक जानकारी देने तथा आरम्भिक सहयोग देने के लिए भी प्रयत्नशील रहना चाहिए। शाक वाटिका आन्दोलन को अग्रगामी बनाकर हम लोग देखने में छोटे प्रतीत होने वाले, किन्तु परिणाम में अति महत्वपूर्ण लोकसेवा कार्य में संलग्न हो सकते हैं।

सब्जियों को सुखाकर रखने का तरीका

आहार में सब्जियों का असाधारण महत्व है। शारीरिक विकास के लिए आवश्यक पोषक तत्वों की समुचित मात्रा हरी सब्जियों में उपलब्ध रहती है। इनमें कमोरोमिल अन्य भोज्य पदार्थों की अपेक्षा काफी अधिक रहता है। विटामिन, प्रोटीन, लवण, पानी, कैल्सियम आदि पोषक तत्वों की इनमें कमी नहीं रहती। प्रतिदिन के आहार में हरी सब्जियों का रहना आवश्यक है। या यों कहा जा सकता है कि हरी सब्जियों के बिना पोषक तत्वों की पूर्ति कर सकना कठिन हो जाता है। बाल-वृद्ध, नर-नारी, स्वस्थ एवं रोगी सभी सब्जियों का सेवन सभी मौसम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में करते हैं। न केवल पौष्टिक तत्वों की दृष्टि से वरन् खाद्यानों की मात्रा में सब्जियों से काफी हद तक बचत की जा सकती है। अतः प्रत्येक मौसम में सब्जियों का सेवन लाभप्रद ही है।

शहरों में तो हरी सब्जियाँ प्रायः सदैव मिल जाती हैं। पर गाँवों में ऐसा कम होता है। फिर किसी ऋतु में तो सब्जियों की भरमार रहती है और कभी अभाव हो जाता है। इसका कारण है कि विशेष मौसम में विशेष सब्जियों का उत्पादन। अभाव वाले दिनों में उनकी कीमत बढ़ जाती है। उन दिनों के लिए कुछ सब्जियाँ ऐसी होती हैं जो सुखाकर रखी जा सकती हैं। सुखाकर रख देने से अभाव के दिनों में मँहगी सब्जी खरीदने की अपेक्षा सस्ती पड़ती है। पालक, मैथी, चना की भाजी, आलू, गोभी, मटर गाजर, चुकन्दर, सलजम, भिण्डी, भुट्टा, ग्वार, सेमी, अरबी, टमाटर आदि ऐसी सब्जियाँ हैं जिन्हें सुखाकर रखा जा सकता है। किन्तु उचित ढंग से सुखाई न जायँ और रखने का तरीका गलत हो तो रखी हुई सब्जियाँ फफूँदी लगकर खराब हो जाती हैं। यहाँ पर सब्जियों को उचित ढंग से सुखाकर रखने का तरीका बताया जा रहा है।

जिन सब्जियों को सुखाकर रखना हो उन्हें साफ पानी में धोकर घास, कचरा आदि साफ कर लें। फिर धुली हुई सब्जी के छोटे टुकड़े काट लें। इन टुकड़ों को नमक व सोडा मिश्रित पानी में चार-पाँच मिनट उबाल लें। नमक और सोड़ा के पानी में सब्जियों को उबाल लेने से उनका हरा रंग बना रहता है। स्वाद भी उत्तम हो जाता है। जिससे उसका ऊपरी कठोर भेष सुलायम हो जाता है। जिससे सुखाते समय धूप की गरमी अन्दर तक के कोषों तक पहुँच जाती है तथा सब्जियाँ अच्छी तरह सूख जाती हैं। नमक के प्रभाव से अधिक दिनों तक टिकने की शक्ति बढ़ जाती है तथा सोड़ा के प्रभाव से उनके रंग में कोई विशेष परिवर्तन नहीं हो पाता। जल्दी खराब होने की सम्भावना नहीं रहती।

उबले हुए टुकड़ों को गंधक का धुँआ दिखा दें। किसी बन्द कमरे में चारपाई पर कपड़ा बिछाकर उस पर उबले सब्जी के टुकड़ों को बिखेर दें। चारपाई के नीचे अँगीठी में अंगारे रखकर उसमें थोड़ा सा गंधक डाल दें फिर कमरा बन्द कर दें। थोड़ी देर में गंधक का धुँआ उठेगा और उन टुकड़ों में भी प्रवेश कर लेगा। १५-२० मिनट के बाद उन्हें निकालकर धूप में सूखने डाल दें। गंधक का धुँआ दे देने से सब्जियों के कीटाणु नष्ट हो जाते हैं तथा सड़ने और फफूँदी आदि लगने का डर नहीं रहता। वे अधिक सुरक्षित हो जाती हैं।

धूप में सुखाते समय मक्खियों से बचाने के लिए जालीदार या पतले कपड़े से ढँककर रखें तथा बीच-बीच में सब्जियों के टुकड़ों को पलटते रहें। अच्छी तरह सूख जाने पर उन्हें सूखे तथा बन्द डिब्बे में रखकर ढक्कन को गीली मिट्टी या मोम पिघलाकर लीप दें। ताकि कहीं से हवा या शीत लगने न पावे। फिर जब भी इसका साग बनाना हो उसे २ घन्टे पूर्व गरम पानी में भिगोकर काम में लाया जा सकता है।

मौसम में ही सब्जियों को सुखाकर रख देने से अपनी इच्छानुसार साग खाने तथा इसके लाभों को प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार से सुखाई जाने पर इनमें रासायनिक परिवर्तन नहीं होता। अन्यथा हरी सब्जियों में कुछ ही दिनों में खराबी सड़न आने लगती है। सुखाकर रख देने से ऐसा नहीं होता।

स्वास्थ्य के लिये कच्ची सब्जियाँ खाइये

पुरातन युग का आदमी कच्चे आहार का प्रयोग करता था और परिणामस्वरूप स्वस्थ जीवन व्यतीत करता था। सभयता के विकास और समय के उलट-फेर ने भोजन को पकाने और उसके साथ अनेक प्रकार के मसाले इस्तेमाल करने का तरीका सिखा दिया। इससे कई तरह की हानियाँ और विकार उत्पन्न हुए, जो आज भी किसी न किसी रूप में देखे जा सकते हैं। यह भी सच है कि आज हम अपने पूरे आहार को कच्चा प्रयोग करने में असमर्थ हैं, क्योंकि हमारा पेट और पाचन शक्ति पकाये हुए आहार को ही स्वीकार करने की अभ्यस्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बन चुकी है। पर इस सच्चाई से इन्कार नहीं किया जा सकता कि आहारिक लाभ प्राप्त करने की दृष्टि से कच्चे आहार विशेषकर फल और हरी तरकारियाँ अधिक लाभदायक हैं। क्योंकि उनमें खनिज द्रव्य तथा विटामिन्स (जो पकाने से नष्ट हो जाते हैं) अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। भली प्रकार स्वस्थ बने रहने के लिए यह आवश्यक है कि थोड़ी बहुत कच्ची सब्जी प्रतिदिन प्रयोग की जाये।

ऐसी तरकारियाँ जिन्हें प्रतिदिन कच्चा खाया जा सकता है, निम्न प्रकार हैं—

गाजर

कहने को बहुत सस्ती और साधारण तरकारी है किन्तु अपने आप में विटामिन्स का भण्डार है। इसमें विटामिन्स ए, बी, सी, फौलाद, चूना, निशास्ता और चीनी आदि पाये जाते हैं। शारीरिक विकास के लिये अत्यन्त उपयोगी सब्जी है। गाजर के रस में एक विशेष प्रकार का शक्तिप्रद तत्व है, जो शरीर में स्वच्छ खून उत्पन्न करने में अद्वितीय है। गाजर के प्रयोग से आँखों की ज्योति भी तीव्र होती है।

टमाटर

हरी तरकारियों में टमाटर सर्वाधिक उपयोगी है। इसके इस्तेमाल से शरीर में खून की वृद्धि होती है। इसमें फौलाद की मात्रा अधिक है, जिससे शरीर में रोगों का मुकाबला करने की शक्ति बढ़ती है। टमाटर कब्ज को भी दूर करता है, आँतों की बीमारियों में लाभ पहुँचाता है। टमाटर बच्चों के प्रतिपालन और उनके दाँत मजबूत बनाने में अत्यन्य उपयोगी है। स्त्रियों में इसके इस्तेमाल से दूध की वृद्धि होती है और दूध पीने वाले बालकों को ऐसी माताओं का दूध स्वस्थ और सशक्त बनाता है।

मूली

भोजन को शीघ्र पचा देती है, किन्तु स्वयं देर में पचती है। मूली को पचाने के लिए उसको पत्तियाँ अवश्य खानी चाहिये। मूली बवासीर, पीलिया, गुर्दे और मूत्राशय की पथरी, तिल्ली, दमा, रज और पेशाब की रुकावट में अत्यन्त लाभदायक है।

चुकन्दर

जिगर को शक्ति तथा मस्तिष्क को तरावट पहुँचाता है। जोड़ों के दर्द में अत्यन्त लाभदायक है। यह औरतों का दूध भी बढ़ाता है।

खीरा

स्वाभाविक तौर पर सर्द तर है। कब्ज दूर करता है। प्यास, गर्मी, पीलिया, पेशाब की जलन और पेशाब का रुक-रुक कर आना जैसे रोगों में विशेष तौर पर उपयोगी है।

प्याज

जिन्हें प्याज की गन्ध अप्रिय न हो अथवा धार्मिक मान्यताओं के अनुसार आपत्ति न हो, वे प्याज का भी सेवन कर सकते हैं। इसमें कैल्शियम, सोडियम, पोटेशियम, गन्धक और फौलाद पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। हमारे शरीर से गन्धक खारिज होती रहती है, इसलिए गन्धक की कमी को पूरा करने के लिये प्याज का इस्तेमाल आवश्यक है। प्याज शरीर में गन्धक पैदा करने के अतिरिक्त भोजन को भली प्रकार पचाने में भी सहायता देता है।

ककड़ी

यह फल का फल है और सब्जी की सब्जी। प्यास, गर्मी और पेशाब की जलन को दूर करती है।

हरी तरकारियों को सावधानी से पकाने पर भी उनके विटामिन कुछ न कुछ अवश्य नष्ट हो जाते हैं। जहाँ तक सम्भव हो कच्ची या बहुत कम पकाई हुई तरकारियाँ प्रयोग में लानी चाहिए ताकि उनमें विटामिन्स और अन्य खनिज तत्व सुविधा से प्राप्त किये जा सकें। कच्ची सब्जियों में पानी और एक ऐसी हलकी तुर्शी मौजूद रहती है, जो पाचन किया को ठीक और तीव्र बनाने में अत्यन्त उपयोगी होती है। इसलिये यथासम्भव कच्ची सब्जियों का ही अधिकाधिक उपयोग करना चाहिये। प्याज, टमाटर, गाजर, मूली, ककड़ी, लौकी आदि के छोटे-छोटे टुकड़े काटकर तथा उनमें धनिया, नमक, नीबू, अदरक मिलाकर सबको एक साथ सलाद के रूप में खाया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फल-जो पौष्टिक भी और स्वादिष्ट भी

स्वास्थ्य की दृष्टि से अब फलों का महत्व बढ़ता ही जा रहा है। अधिकतर खाद्य पदार्थों में भिन्न-भिन्न प्रकार की मिलावट के कारण लोगों का विश्वास उन वस्तुओं से हटता जा रहा है और हर अच्छी वस्तु भी अब शंका की दृष्टि से देखी जाने जाने लगी है। धनी और निर्धन सभी अपनी आर्थिक स्थिति के अनुसार फलों का चयन करके लाभान्वित हो सकते हैं।

फलों में विटामिन और खनिज लवण की मात्रा काफी होती है। अधिकतर फलों का ८० प्रतिशत भाग जल और ७ से ३३ प्रतिशत भाग कार्बोहाइड्रेटों से परिपूर्ण रहता है। स्टार्च की मात्रा कच्चे फलों में अधिक होती है जो पकने पर शक्कर में बदल जाती है। जो फल अधिक मीठे होते हैं उनमें फ्रक्टोज की मात्रा भी अधिक होती है। यह एक प्रकार की सरल शक्कर है जो चीनी से भी अधिक मीठी होती है। हाँ, शरीर को शक्ति देने वाले पोषक अंशों व प्रोटीन की मात्रा अवश्य कम होती है।

फलों में मुख्यतः विटामिन 'ए' काम्प्लेक्स तथा विटामिन 'सी' की प्रचुरता रहती है। पके पपीते और पके आम में विटामिन 'ए' की मात्रा सबसे अधिक होती है। आम में टमाटर और सन्तरे से लगभग १३ गुना और कटहल से १० गुना विटामिन होता है। एक वयस्क व्यक्ति को २२५ ग्राम पपीता अथवा १०० ग्राम आम विटामिन 'ए' की दृष्टि से रोज खाना पर्याप्त रहता है। बच्चों के लिए इससे आधी मात्रा में काम चल सकता है। कुछ चिकित्सकों का कहना है कि विटामिन 'ए' की कमी से क्षय रोग भी हो जाता है। उसकी कमी से दाँत कमजोर हो जाते हैं, रात्रि में दिखाई कम पड़ता है और संक्रामक रोग भी अपना प्रभाव जल्दी डाल सकते हैं। इस विटामिन से नेत्र-ज्योति में वृद्धि, शारीरिक विकास, संक्रामक रोग से लड़ने की शक्ति, दाँतों की चमक, नाड़ी संस्थान और त्वचा के सौन्दर्य में वृद्धि होती है।

अनन्नास, टमाटर, नीबू जातीय फलों तथा इमली के गूदे में विटामिन 'बी' की मात्रा फलों से अधिक होती है। केला, पपीता, अमरूद तथा आम में विटामिन 'बी' की मात्रा प्रायः समान होती है। ताजे फलों में विटामिन 'बी' की दृष्टि से आलूबुखारे का प्रथम स्थान है।

आँवले में विटामिन 'सी' की मात्रा सबसे अधिक होती है। वैसे तो यह विटामिन जरा गर्मी में नष्ट हो जाता है। पर आँवले में ऐसे रासायनिक तत्व हैं जिससे इसके सूख जाने पर भी विटामिन 'सी' काफी मात्रा में बना रहता है। अमरूद, नीबू, पका आम, पका पपीता, चकोतरा, अनन्नास, सन्तरा, काजूफल तथ पके टमाटर ऐसे फल हैं जिसमें विटामिन 'सी' की पर्याप्त मात्रा होती है। इसकी कमी से दाँत तथा मसूड़े कमजोर हो जाते हैं। इससे बच्चों को विशेष रूप से लाभ होता है क्योंकि हड्डियों के बनने में सहायता मिलती है। चोट लगने अथवा जलने से बने हुए घाव तथा टूटी हड्डियों को जोड़ने में विटामिन 'सी' काफी कार्य करता है। इससे बड़े से बड़े घाव जल्दी ही भर जाते हैं। 'स्कर्वी' नामक रोग से सुरक्षित रखने में विटामिन 'सी' विशेष उपयोगी सिद्ध हुआ है।

सेव, केले और कटहल में विटामिन 'सी' की मात्रा बहुत कम होती है। यदि कोई व्यक्ति इनसे ही पूर्ति करना चाहे तो उसे ६ किलोग्राम या २ किलोग्राम सेव अथवा ६०० ग्राम पके कटहल का गूदा नित्य खाना होगा। वैसे जिन फलों में विटामिन 'सी' की बहुलता होती है उनमें से कोई एक कम मात्रा में लेकर भी कार्य चलाया जा सकता है। दैनिक आवश्यकता की पूर्ति हेतु इन फलों में से कोई एक निर्धारित मात्रा में ग्रहण कर सकते हैं। आँवला १० ग्राम, अमरूद २५ ग्राम, अनन्नास १०० ग्राम, टमाटर १०० ग्राम, सन्तरा, नीबू, मौसमी या चकोतरा १०० ग्राम, पपीता १५० ग्राम, आम ३०० ग्राम।

शारीरिक या मानसिक दुर्बलता, हड्डियाँ कमजोर होना, दाँत खराब होना, रक्त का अभाव, घाव का देर में भरना तथा त्वचा या मसूड़ों से रक्त प्रवाह आदि रोगों में विटामिन 'सी' वाले फलों का खूब प्रयोग करना चाहिये। ताजे आँवले

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके लिये विशेष उपयोगी हैं। इनके अभाव में सन्तरा, नीबू, मौसमी, पपीता और टमाटर आदि का उपयोग करना चाहिए।

फलों में विटामिन के अतिरिक्त मुख्यतः लोहा, कैल्शियम, सोडियम तथा क्लोरीन आदि खनिज लवण पाये जाते हैं। लोहा सेव में सबसे अधिक होता है इसके बाद आँवले और अमरूद का नम्बर आता है। वैसे इमली के गूदे में सेव से लगभग ६ गुना, आँवले से ८ गुना, अमरूद से १० गुना, आम से ३० गुना, आम से और पपीते से ३५ गुना अधिक लोहा होता है। फास्फोरस, पोटेशियम, सोडियम और क्लोरीन कम-ज्यादा प्रायः सभी फलों में होते हैं। कैल्शियम की मात्रा सेव, केले, आम, पपीते, नाशपाती व टमाटर में प्रायः समान होती है। रासायनिक क्रियाओं के संचालन और नियन्त्रण हेतु इन खनिज लवणों का विशेष महत्व है। फास्फोरस और कैल्शियम अस्थि पञ्जर की रचना में सहायता करते हैं।

सभी फलों में कार्बोहाइड्रेट ४ प्रतिशत से २६ प्रतिशत तक, प्रोटीन ०२ से ११ प्रतिशत तथा चिकनाई ०१ से ०३ प्रतिशत तक होती है। केला ऐसा फल है जिसमें स्टार्च व शक्कर की काफी मात्रा होती है। फलों की स्टार्च व शक्कर शरीर को शक्ति प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त इन फलों में कई प्रकार के अम्ल भी पाये जाते हैं जैसे—सेव, आलू बुखारे में अम्ल, सन्तरे, नीबू व चकोतरे में सिट्रिक अम्ल और अंगूर व इमली में टारटैरिक अम्ल।

खट्टे फलों में खट्टापन अम्लों के कारण ही होता है। शरीर में इनका आक्सीकरण होने पर ये क्षार बन जाते हैं। किसी व्यक्ति को अधिक अम्ल की शिकायत हो तो उसे फल अधिक खाने चाहिए। गेहूँ आदि खाद्यान्न अम्ल पैदा करते हैं अतः उस अम्लता को सन्तुलित रखने के लिए फलों व सब्जियों का खाना आवश्यक है।

शरीर की भीतरी क्रियाओं के नियन्त्रण में फलों से बहुत सहायता मिलती है। इनमें जो रेशे वाला भाग होता है यद्यपि वह हजम नहीं होता पर आँतों व पेट में जो पचा हुआ भोजन रहता है उसे आगे खिसकाने में अवश्य मदद करता है। फलों में चिकनाई व प्रोटीन की कमी होती है अतः यह शीघ्र ही पच जाते हैं और कब्ज से मुक्ति मिल जाती है। अमरूद और पपीते में पैक्टिन नामक कार्बोहाइड्रेट होता है जो स्वयं तो नहीं पचता पर अन्य वस्तुओं को पचाने में सहायक होता है।

आजकल फलों की खेती करने वाले लोग फलों के पौधों का चुनाव करते समय आकार, पैदावार और स्वाद का ध्यान रखते हैं। इस प्रकार के पौधों से प्राप्त फलों में विटामिन की मात्रा कम होती है। उदाहरण के लिए 'बेली नेलित' सेव की एक किस्म होती है जो खाने में बड़ा स्वादिष्ट होता है पर उसमें विटामिन सी और डी की मात्रा बहुत कम होती है। जबकि एक दूसरे प्रकार के सेव में उससे ५ गुने विटामिन अधिक होते हैं। अतः बागवान भी ऐसी किस्मों को उगायें जिनमें रोग निरोधक तत्व अधिक हों, इससे सामाजिक दृष्टि से बड़ा हित हो सकता है।

कभी-कभी यह प्रश्न भी सामने आता है कि जब रोग निवारण हेतु हमारे पास अनेक प्रकार की औषधियाँ हैं फिर फलों को औषधि रूप में बदलने की क्या आवश्यकता है ? बात सीधी-सी है कि बीमारी से छुटकारा पाने के नियमित रुप से औषधियों का प्रयोग कौन करेगा ? जबकि फलों में रोगी को किसी प्रकार की हानि पहुँचाये बिना स्वास्थ्य की अपूर्व शक्ति होती है।

अतः फलों का हमारे दैनिक भोजन में प्रमुख स्थान होना ही चाहिये, हाँ खरीदते समय अवश्य इस बात का ध्यान रखें कि देखने में सुन्दर तथा स्वस्थ हों। दगीले, चोट खाये हुए या फफूँदी लगे फलों को सस्ती दर पर खरीदने का लालच छोड़ दें। गन्दी दुकानों पर जहाँ हजारों मक्खियाँ भिनभिनाती हों, फल न खरीदें। क्योंकि फलों के साथ-साथ बीमारियाँ भी घर चली गईं तो हमारा उद्देश्य पूर्ण कैसे हो सकेगा।

आज हमारे भोजन में कृत्रिमता काफी बढ़ गई। खटाई-मिर्च तथा तेल में भुने पदार्थों को देखकर तो उसके वास्तविक रूप का पता ही नहीं चल पाता। हम उससे कम लागत में खरीद

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर फलों को न स्वयं खाना चाहते हैं और न अपने बच्चों को ही खिलाते हैं। क्या ही अच्छा हो यदि हम स्वादिष्ट फलों की उपयोगिता स्वास्थ्य की दृष्टि से भी परखने का प्रयास करने लगें।

फल खायें रोगों को दूर भगायें

स्वस्थ एवं निरोग रहने के लिए समुचित पोषण का मिलना आवश्यक है। वह न मिले तो कुपोषणजन्य कितने ही रोगों का सामना करना पड़ता है। समझा यह जाता है कि कुपोषण का सम्बन्ध गरीबी अथवा आर्थिक तंगी से है, जिसके कारण पोषक आहार नहीं जुट पाता। जबकि यथार्थता कुछ और ही है। खान-पान की बुरी आदतें तथा आहार के विषय में जानकारियों का अभाव ही कुपोषण का प्रमुख कारण है। कीमती आहार की तुलना में सस्ती एवं सर्वसुलभ चीजों से भी उतने पोषक तत्व प्राप्त किये जा सकते हैं जितने कि शरीर के लिए आवश्यक हैं। अनाज, दालों तथा सब्जियों को सही रीति से पकाने पर उनके पोषक तत्व नष्ट नहीं होते। इनके अतिरिक्त जिन तत्वों की पोषण में कमी पड़ती है उनकी पूर्ति आसानी से मौसमी फलों से की जा सकती है।

प्रकृति मौसम के अनुरूप विभिन्न प्रकार के फल देती है। वे सस्ते एवं सर्वसुलभ रहते हैं। केला, आम, अमरूद, खीरा, ककड़ी, जामुन, बेर, टमाटर, नीबू, तरबूज, खरबूज आदि फल प्रायः सर्वत्र आसानी से मिल जाते हैं तथा सस्ते भी रहते हैं। आम आदमी भी उन्हें खरीद सकता है। नारंगी, संतरे, काजू, किशमिश, बादाम, छुहारा क्षेत्र विशेष में पैदा होने के कारण मँहगे होते हैं। मध्यम वर्ग का व्यक्ति उन्हें नहीं खरीद सकता है। इनके अभाव में भी उपरोक्त फलों से प्रचुर परिमाण में पोषक तत्व प्राप्त किये जा सकते हैं। फलों के विषय में संसार के मूर्धन्य शरीरशास्त्री एक मत हैं कि खाद्यान्नों की तुलना में वे शरीर को अधिक शक्ति प्रदान करते हैं।

इस सम्बन्ध में कुछ और भी रोचक तथ्य प्रकाश में आये हैं। फलों में विटामिनों एवं खनिज तत्वों की अधिकता क्यों रहती है, इसके बारे में वर्षों से खोजबीन हो रही थी, उसका रहस्योद्घाटन अब हुआ है। न्यू साइंटिस्ट पत्रिका की खबर के अनुसार जर्मनी के वैज्ञानिक एलोइस बेबेलिक ने अपने परीक्षण में पाया कि 'फलों के पेड़-पौधों में सामान्य पौधों की अपेक्षा अतिरिक्त विशेषता यह पायी जाती है कि वे भूमि से बहुमूल्य धातुओं को चूसकर अपनी कोशाओं में जमा करते रहते हैं। विभिन्न प्रकार के वृक्षों में यह विशेषता भिन्न-भिन्न स्तर की होती है। विभिन्न धातुओं के भिन्न-भिन्न परिमाण में चूसने की विशेषता के कारण ही फलों के गुणों में अन्तर पाया जाता है। जिस तरह लोहा, सोना, ताँबा आदि की खदानें तैयार होती रहती हैं उसी प्रकार विभिन्न प्रकार के वृक्ष भिन्न-भिन्न तरह की धातुएँ मिट्टी से अवशोषित करते तथा अपने भीतर जमा करते रहते हैं।

अपने परीक्षण में उन्होंने अनेकों फल देने वाले वृक्षों का अध्ययन किया। उदाहरणार्थ—केला, संतरा, नीबू आदि के वृक्षों में उन्होंने पाया कि सामान्य पेड़ पादप जिन धातुओं को नहीं सोख पाते, ये वृक्ष आसानी से खींचकर अपने भीतर भरते रहते हैं। किन धातुओं का अवशोषण करना चाहिए, इसकी जानकारी इन वृक्षों को अच्छी तरह होती है। प्रतिकूल परिस्थितियों में इनके भीतर अपने ग्रहण करने योग्य धातुओं के चयन की पात्रता भी रहती है। जमीन में कैल्शियम, लोहा, पोटेशियम आदि की कमी रहने पर वे उन तत्वों को ग्रहण करते हैं जो उस भूमि में आसानी से उपलब्ध रहते हैं पर उनके लिए अधिक उपयोगी हों, सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि ये वृक्ष भूमि से किसी भी तत्व को ग्रहण करके उनकी उत्कृष्टता के अनुसार वरण करते हैं। वैज्ञानिक एलोइस के अनुसार "वे मिट्टी में पोटेशियम के अभाव में सोना तथा मैग्नीशियम के अभाव में यूरेनियम को चुनते हैं जो अत्यन्त बहुमूल्य धातुएँ समझी जाती हैं। विभिन्न रसों के साथ सन्तुलित परिमाण में मिलने से वे फलों में अतिरिक्त शक्ति भर देते हैं।

कुपोषण से बचने तथ स्वास्थ्य आरोग्य का लाभ लेने के लिए आवश्यक है कि खानपान के तौर-तरीकों पर ध्यान देने के अतिरिक्त मौसमी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फलों को भी आहार में स्थान दिया जाय जो सर्वत्र आसानी से मिल जाते हैं।

गरीबों का सेव–अमरूद

आजकल फल नाम की चीज तो अमीरों को ही मिल सकती है, गरीबों को तो सूखी रोटी और दाल ही नसीब हो जाय तो बहुत है। ऐसी बात हमें प्रायः इधर-उधर या राह चलते सुनने को मिल जाती है, तो मन में विचार उठता है कि लोग मँहगे फलों को ही फल की श्रेणी में गिनते हैं, तभी तो ऐसी बात कहते हैं। सस्ते फलों की ओर ध्यान देने लगें तो वे हर तबके के आदमी की पहुँच के भीतर हैं।

अमरूद को ही लीजिए। वर्ष में दो बार फलने वाला अमरूद गरीबों का सेव बन सकता है। आयुर्वेद के निघंटु रत्नाकर में इसके गुण यों बताये गये हैं—"अमृत फल (अमरूद) सुस्वादु, कुछ खट्टा, ठण्डा, चिकना, रुचिकर, वीर्यवर्धक, त्रिदोषनाशक तीखा तथा भारी, कुछ कफ एवं बात बढ़ाने वाला और उन्मादनाशक होता है।"

इसकी सेव से तुलना करें तो हम देखेंगे कि यह सेव से किसी प्रकार उन्नीस नहीं बैठता। तत्वों की दृष्टि से सेव में ८५.६ प्रतिशत पानी, ०.३ प्रतिशत प्रोटीन, ०.१ प्रतिशत चिकनाई, ०.३ प्रतिशत खनिज पदार्थ, १३.४ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, ०.०१ प्रतिशत केलशियम, ०.०२ प्रतिशत फास्फोरस तथा १.७ प्रतिशत लोहा होता है। अमरूद में ७६.१ प्रतिशत पानी, १.५ प्रतिशत प्रोटीन, ०.२ प्रतिशत चिकनाई, ०.८ प्रतिशत खनिज पदार्थ, १४.५ प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट, ०.१ प्रतिशत केल्शियम, ०.४४ प्रतिशत फास्फोरस व १.० प्रतिशत लोहा है। तुलना करके देख लीजिए कि सेव से एक चौथाई से भी कम मूल्य पर मिलने वाला अमरूद गरीबों का सेव बन सकता है या नहीं।

विटामिनों की दृष्टि से भी अमरूद सेव की तुलना में कुछ कम नहीं। सेव में विटामिन सी ०.०३ प्रतिशत होता है वहाँ अमरूद में २.६६ प्रतिशत। विटामिन ए दोनों में नाममात्र को होता है। विटामिन बी सेव में १२ प्रतिशत व अमरूद में ०.०२ प्रतिशत होता है।

अमरूद हृदय, मस्तिष्क तथा आमाशय को बल देता है। शरीर की उष्णता को कम करके शक्ति-स्फूर्ति देता है व प्यास कम करता है। यह शरीर का रंग निखारता है। विटामिन ए, बी, सी, के साथ लोहा, चूना व फास्फोरस होने के कारण यह गर्भिणी के लिये भी उपयोगी है। कोष्ठबद्धता को अमरूद दूर करता है।

वैसे तो अमरूद कभी भी खाया जा सकता है परन्तु इसे भोजन के पहले ही खाना उचित है। भोजन के बाद खाने से यह कब्ज कर सकता है। तीसरे पहर पका अमरूद खाने में कोई हर्ज नहीं है। स्वस्थ आदमी किसी भी समय अमरूद खा सकता है।

लोग कहा करते हैं यह बादी करता है, ठण्डा होता है। पर ऐसी स्थिति उसी समय उत्पन्न होती है जब अत्यधिक मात्रा में सेवन कर लिया जाता है। खाते समय इसके बीजों का बचाव किया जाय तो उत्तम है। अमरूद खाने कारण कभी अजीर्ण की शिकायत हो तो सोंफ व अजवाइन का प्रयोग करना ठीक रहता है।

आयुर्वेद के 'निघण्टु-रत्नाकर' में इसे अमृत फल कहा गया है।

पहाड़ी भागों को छोड़कर, भारतवर्ष में अमरूद सर्वत्र पाये जाते हैं। इसका फल गोल, लम्बा, कहीं लाल व कहीं सफेद गूदे का होता है। इसकी कई किस्में होती हैं—चित्तीदार, करेला, इलाहाबादी, बेदाना आदि।

बाग-बगीचों में लगाने के लिये यह एक उपयुक्त वृक्ष है। वर्ष में दो बार फल देने के कारण यह अच्छी आय भी दे देता है। एक बार लगा देने के बाद साज-सम्हाल की जाती रहे तो वृक्ष पचास वर्ष तक कुछ न कुछ फल देता ही रहता है। अमृत फल अमरूद की खेती और उसके प्रयोग को प्रोत्साहित किया जाना आय एवं पोषण की दृष्टि से लाभकारी है।

एक पुष्टिकारक फल—केला

आजकल अधिकांश लोगों में यह धारणा सी बन गयी है कि माँस खाना लाभदायक होता है। माँसाहार की वृद्धि में यह भ्रांत मान्यता भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एक कारण है। यह तामसिक अभक्ष्य आहार मनुष्य के शरीर और वजन की वृद्धि की दृष्टि से भी फलों से हार जाता है। केला एक ऐसा ही फल है जो शरीर और भार वृद्धि के लिये आश्चर्यजनक सिद्ध होता है। जो पुष्टिकारक भोजन के द्वारा अपने शरीर-भार की वृद्धि चाहते हैं उन्होंने केले का प्रयोग करके देखा तो वे चकित रह गये।

केले का जन्म-स्थान भारत व मलय देश है। किन्तु अब यह अपनी उपयोगिता के कारण सम्पूर्ण शीतोष्ण कटिबन्ध में उगाया जाता है।

फलों में केला अपनी कीमत को देखते हुए गरीब व अमीर दोनों की सामर्थ्य के भीतर रहता है। जो लोग महँगे फल नहीं खा सकते वे भी केला खा सकते हैं। मध्य प्रदेश, महाराष्ट्र, राजस्थान तथा दक्षिणी भारत में केले का मूल्य बहुत कम होता है क्योंकि यहाँ केले का उत्पादन क्षेत्र निकट होने से पहुँच सुलभ होती है।

केला शीतल, मधुर व पुष्टिकर फल है। सौ ग्राम केले से ५३ कैलोरी शक्ति मिलती है जो दूसरे फलों की तुलना में अधिक है। केले में १३ प्रतिशत प्रोटीन, ०.२ प्रतिशत चिकनाई, ०.७ प्रतिशत खनिज पदार्थ, ३६.४ प्रतिशत कार्बोहाईड्रेट तथा कुछ मात्रा में केल्शियम, फास्फोरस, लोहा आदि खनिज भी होते हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि यह अन्न और फल दोनों के गुणों से युक्त है। साथ ही इसमें विटामिन 'ए', विटामिन 'सी', सोडियम, पोटेशियम, आदि तत्व भी होते हैं जो हमारे शरीर के लिये बहुत आवश्यक हैं।

दूध और केला बहुत उत्तम आहार है। दूध और केला साथ खाने के बाद अन्य आहार लेने की आवश्यकता नहीं रहती। जो अपने को दुबला समझते हैं और शरीर भार वृद्धि के इच्छुक हैं वे कुछ दिनों तक इसी आहार पर निर्भर रहें तो उनके शरीर में द्रुत गति से वृद्धि होती है। केले में प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट का आधिक्य होता है जिससे यह अधिक मात्रा में खाने पर पच नहीं पाता। 'अति सर्वत्र वर्जयेत' के स्वर्ण नियम के अनुसार अधिक खाने पर तो अमृत भी विष बन जाता है। यदि केला अधिक खा लिया हो तो एक-दो इलायची खाने से वह सरलतापूर्वक पच जाता है।

केला कच्चा व पक्का दोनों ही रूपों में प्रयुक्त होता है। अम्ल रहित होने के कारण यह गैस पेट के रोगियों के लिये भी उत्तम पथ्य का काम देता है। मन्दाग्नि, गुर्दा व ग्रन्थि रोगों में भी इसका आहार ठीक रहता है। पेचिस में पके केले का प्रयोग अच्छा रहता है। पके केले को पचाने के लिये पाचन तन्त्र को बहुत अधिक श्रम नहीं करना पड़ता। अतः सामान्य पाचन शक्ति वाले भी इसका व्यवहार कर सकते हैं। कच्चा केला पके की अपेक्षा सुगमतापूर्वक नहीं पच सकता है। पके केले का ६५ से ६६ प्रतिशत भाग शरीर ग्रहण कर लेता है। इसमें जो शर्करा रहती है वह सुपाच्य होती है।

केले का फल ही नहीं उसका पौधा भी काम में आता है। इसका रेशा जूट के रेशे की तरह ही उपयोगी होता है। इसका मूल्य भी जूट से अधिक होता है। अफ्रीका में केले के सूखे छिलकों से साबुन भी बनाया जाता है। इसके तने को जानवर खाते हैं। कागज उद्योग में भी यह कच्चे माल के रूप में प्रयुक्त होता है।

फलाहार मनुष्य के शरीर, मन और आत्मा की स्वस्थता की दृष्टि से सर्वोत्तम आहार है और केला एक सर्वसुलभ पुष्टिकारक फल है वजन व शरीर बढ़ाने वालों को अन्य दुराग्रहों में न पड़कर इसका प्रयोग करना चाहिए।

केला एक ऐसा फल है जो विश्व में सर्वत्र बारहों महीने उपलब्ध होता है। इसकी गणना पवित्र फलों में की जाती है। भारत में विभिन्न पर्व, त्यौहारों, पूजा, विवाह तथा अन्य सभा-सम्मेलनों-समारोहों के अवसर पर केले के पौधों से तोरणद्वार सजाये जाते हैं तथा सामूहिक प्रीतिभोजों के अवसर पर लोग इसके पत्ते का उपयोग पत्तल के रूप में करते हैं। उगांडा और अन्य कई अफ्रीकी देशों में लोगों को मुख्य भोजन केला ही है। कच्चे केले को सुखाकर उसके आटे का उपयोग वे रोटी बनाने में प्रयुक्त करते हैं और उसी पर उनका जीवन-निर्वाह चलता है। पके केले तो खाये ही जात है। कच्चे केले को उबालकर या भूनकर भी खाते हैं। कच्चे केले और उसके फूल सब्जी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के रूप में प्रयुक्त होते हैं। दक्षिण भारत में तो इसका प्रचलन बहुत है।

वैज्ञानिक अनुसंधानों के अनुसार बहुगुणी केला संसार का सर्वोत्तम फल है। केले में पौष्टिक तत्व प्रचुर परिमाण में पाये जाते हैं। कार्बोहाइड्रेट के अतिरिक्त इसमें आयरन, कैल्शियम, सल्फर, कॉपर पर्याप्त मात्रा में विद्यमान होते हैं। जीवनी शक्ति प्रदान करने वाले फास्फोरस का अद्‌भुत भण्डारण इस फल में पाया जाता है। केले के नियमित सेवन से रक्त कणों में अभिवृद्धि होती है और हड्डियाँ पुरिपुष्ट होती हैं।

केला बहुत ही सुपाच्य फल है। इसमें पाया जाने वाला 'पैक्टिन' नामक तत्व आँतों की सफाई में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हरा और कच्चा केला देर से पचता है। इसे उबालकर या सब्जी बनाकर खाने से वह आसानी से पच जाता है। सब्जी बनाते समय इसमें कम से कम घी, तेल, मसाला डाले जायँ, तभी गुणकारी होता है। अल्सर में केले की सब्जी बहुत लाभदायक होती है। पके केले खाने से बचे छिलके भी कम गुणकारी नहीं होते । उनमें पर्याप्य मात्रा में जीवनदायी तत्व होते हैं। अतः उसे अलग करके साफ-स्वच्छ छिलकों की सब्जी बनायी जा सकती हे, जो लाभदायक होने के साथ-साथ स्वादिष्ट भी होती है। जिन्हें बार-बार शौच जाने की शिकायत कोलाइटिस या अन्य वजहों से रहती हो, उनके भोजन में चावल के साथ केले की सब्जी लाभदायक होती है। केले को दही के साथ रायते के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है।

अच्छी तरह से पका हुआ चित्तीदार केला स्वास्थ्य के लिये उत्तम माना गया है। कमजोर बच्चों को, जिन्हें भूख कम लगती हो, उल्टी हो जाती हो, उनके लिये केले का सेवन विशेष रूप से लाभकारी होता है। पके केले को दही या दूध के साथ दिन में दो-तीन बार नित्य सेवन करने से वजन बढ़ता है। केले को दिन में ही खाना चाहिये, रात्रि में खाया हुआ केला देर से पचता है। खाली पेट केले खाने से कब्ज की शिकायत भी हो सकती है, ऐसी स्थिति में केले खाने के बाद एक छोटी इलायची चबा लेनी चाहिये जिससे उसकी पाचन क्रिया शीघ्र होती है।

केला घरेलू औषधि का भी काम करता है। अपच, आँत की सूजन, अल्सर आदि में पका केला या कच्चे केले की सब्जी लाभदायक होती है। मुँह के छाले भी इससे ठीक हो जाते हैं। पेट में जलन होने पर पका केला खाने से वह शांत हो जाती है। पेचिश अतिसार में उसे दही में मथकर थोड़ा-सा काला नमक मिलाकर खा लेने से वह बन्द हो जाती है। पीलिया, रक्ताल्पता जैसे रोगों में कच्चे केलों की सब्जी बहुत लाभ पहुँचाती है।

फल होने के साथ ही केला एक परिपूर्ण खाद्य पदार्थ भी है, जिसमें स्वास्थ्यकारक सभी आवश्यक पोषक तत्व मौजूद हैं। इसकी पौध रोपने लायक जगह प्रायः हर व्यक्ति के घर-आँगन के आस-पास होती है। एक बार रोपने के बार कई वर्षों तक इससे फल प्राप्त करते रह सकते हैं।

फल–पोषक ही नहीं रोग निवारक भी

मानव-शरीर यन्त्र की रचना के अनुरूप यदि कोई भोजन है तो वह है फलाहार। फल सरस, सात्विक, सुपाच्य, बल, बुद्धि तथा ओजवर्धक होते हैं। फलाहार दीर्घ जीवन का आधार है।

आरम्भ में मनुष्य फलों पर ही निर्भर था। हमारे आर्षग्रन्थों में वृक्षों की महिमा यत्र-तत्र वर्णित होने का कारण यही है। ज्यों-ज्यों मनुष्य प्रकृति से दूर हटता गया उसका जीवन कृत्रिम होने लगा तभी रोगों ने उसे आ दबोचा।

आज फलाहार मँहगा हो गया है जिससे साधारण आय वाले इसी पर निर्भर नहीं रह सकते। इसका यह अर्थ नहीं कि फलाहार की आशा ही छोड़ दी जाय। प्रयास करें तो फिर हम फलों की छोटी सी वाटिका लगाकर इस अभाव को पूरा कर सकते हैं।

पूर्ण आहार के रूप में सही पर इतने फल तो हम नित्य अपने आहार में सम्मिलित कर ही सकते हैं जिससे हम रोगों से बचे रह सकें। धूम्रपान, चाय आदि निरर्थक व हानिकारक मदों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के धन का उपयोग फल खरीदने में कर सकते हैं। आये दिन हानिकारक औषधियाँ खरीदने में जो हम धन लगाते हैं वह यदि फलाहार में लगाया जाय तो हम बीमार ही न पड़ें तथा भावी बीमारियों से बच जायें।

महँगे न सही नीबू, आँवला, टमाटर, खीरा आदि फल तो हम प्रयोग में ला ही सकते है। स्वाद के वशीभूत जिव्हा पर कुछ संयम करें तो हम कुछ अंशों में फलाहार से लाभ उठा सकते हैं तथा शारीरिक, मानसिक, आत्मिक स्वास्थ्य पा सकते हैं।

आजकल हमारे देश में भी माँस-भक्षण तथा शराब पीने की प्रवृत्ति निरन्तर बढ़ती जा रही है। यह बड़ी चिन्ताजनक है। यह यह प्रवृत्ति बड़ी ही घातक है। मनुष्य को पशु बनाने वाले इस आहार से बचना ही चाहिये।

जो माँसाहार कर सकते हैं, शराब पी सकते हैं उनको ज्ञात है कि इन दोनों में से न तो कोई फलों जैसा स्वादिष्ट ही है और न उतना सुलभ ही। फलों की दुकान कितनी सुन्दर लगती है, उनकी सुगन्ध से मन में एक स्फूर्ति आती है। इसके कारण फलों की दुकान कहीं भी लगी हुई देखी जा सकती हैं किन्तु माँस, मदिरा की दुकान एकान्त में लगती है। स्पष्ट है कि यह कर्म अवैध है। क्या ही अच्छा हो कि इस प्रवृत्ति को छोड़कर वे उसी धन का उपयोग फलाहार में करें तो यह उनके व समाज के हित में होगा।

डा० जे० एच० केलाग्स का कथन है—"रसदार फलों में विटामिन, खनिज खासकर लोहा व चूना होता है जो प्रचुर शक्ति देता है तथा रोगों से बचाता है।"

टमाटर में क्रिटिक एसिड, ऐलिक ऐसिड तथा ऑक्सालिक एसिड होता है तथा नमक, पोटाश, चूना, मेग्नेशिया तथा लोहा होता है। यह लिवर व किडनीज को शक्ति सम्पन्न बनाता है। इससे बद्धकोष्ठता दूर होती है। इन्हें कच्चे ही खाना चाहिये।

सन्तरा रक्तशोधक होता है। यह सारे शरीर संस्थान को जाग्रत करता है, शक्ति देता है। यह क्षुधावर्धक है। इसमें विटामिन सी, बी, तथा ए प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं। स्कर्वी रोग की यह अचूक औषधि है। यह कोष्ठबद्धता दूर करता है। अस्थियों की कमजोरी दूर करता है। सन्तरा व अंगूर का मिश्रित रस 'रक्ताल्पता' व हड्डियों की कमजोरी दूर करता है।

केला ए, बी, सी, डी, चार विटामिनों से पूर्ण होता है। माँस की कमी को इसके खाने से पूरा किया जा सकता है। केला व दूध पर ही रहा जाय तो आश्चर्यजनक परिणाम होता है।

आम में प्रचुर मात्रा में शुद्ध शर्करा होती है। उसमें लोहा तथा अन्य पोषक अम्ल होते हैं। यह गठिया, अतिसार तथा मधुमेह दूर करता है।

अनार शक्तिदायक, शीतल तथा क्षुधावर्धक होता है। पेचिस में बहुत उपयोगी है। भाषण कर्ताओं को इसका रस बहुत लाभदायक होता है।

अनन्नास हमारे घरों में गले की खराबी पर पहले प्रयोग में लाते थे। यह तिल्ली बढ़ जाने की औषधि है।

पपीता में 'पेपिन' नाम का एक तत्व होता है। यह भोजन पचाने में बड़ी सहायता करता है तथा आमाशय के विकार दूर करता है। प्रदर रोग के लिए यह बड़ा लाभदायक है।

जामुन से मधुमेह दूर होता है। यह मूत्र के साथ शर्करा जाने को रोकता है।

सेव के लिए यह कहावत प्रसिद्ध है "एक सेव रोज खाओ तो डाक्टर के पास कभी न जाओ।" नितान्त सत्य है। सेव बहुत शक्तिदायक, सुपाच्य तथा रक्तवर्धक होता है। इससे ब्लड प्रेशर में लाभ होता है।

आँवले के फल में जितना मिटामिन सी होता है अन्य किसी में नहीं होता। आँवला कई प्रकार के रोग दूर करता है। पायरिया की तो यह अचूक औषधि है। आयुर्वेद में आँवले की बड़ी महिमा है।

चीकू तथा चकोत्रा रक्तशोधक होते हैं। अंगूर क्षुधावर्धक तथा शक्तिदायक होते हैं। मन्दाग्नि में यह बड़े लाभकारी होते हैं। द्राक्षा (मुनक्का) पेट ठीक रखने के लिये एक आशाजनक औषधि है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अभी तक शरीर यन्त्र की जो जानकारी वैज्ञानिकों ने अर्जित की है यह तो आधी भी नहीं है। शरीर यन्त्र में ऐसे-ऐसे रहस्यमय चक्र तथा संस्थान हैं कि जिनके जागरण पर विश्व का रूप ही कुछ और दिखाई देने लगता है।

हम अभी जो संसार अपनी इन्द्रियों के द्वारा देख, सुन तथा समझ रहे हैं, यदि हमारी इन्द्रियों में एक या दो की वृद्धि हो जाय तो उनका स्वरूप ही कुछ और हो जाये। जिन्हें आज हम अलौकिक कहते हैं कल वही लौकिक कहलाई जाने लगे।

यह सामर्थ्य यौगिक क्रियाओं द्वारा प्राप्त की जा सकती है। इसके लिय अनिवार्य है कि हमारा आहार विहार सात्विक हो। हमारे जो अंग पोषण पाने से वञ्चित हैं वे पोषित होकर बढें तथा आपकी सामर्थ्य विकसित करें। यह सामर्थ्य जब पीढ़ी दर पीढ़ी विकसित होगी तो विश्व का स्वरूप हमारे सामने अधिक स्पष्ट होने लगेगा।

आज जो कृत्रिम भोजन हम करते हैं यह इन मर्मस्थलों को निष्क्रिय बनाता है तथा शरीर की सामर्थ्य का अधिकांश भाग इन्हें पचाने में ही लग जाता है। शेष जो कुछ बचता है वह कृत्रिम आहार के द्वारा की गई टूट-फूट को रोकने में खर्च हो जाता है।

फलाहार इन सब कृत्रिमताओं से सर्वथा दूर होने के कारण हमारे आत्मिक विकास में सहायक होता है।

इतना सब किया जाना सम्भव नहीं हो तो भी कम से कम इस दृष्टिकोण से तो फलाहार करना ही चाहिये कि जिससे हम रोगग्रस्त न हों। साथ ही साथ वृक्षारोपण के महत्व को देखते हुए प्रत्येक परिवार को यथा साध्य यह प्रयास करना चाहिये कि 'कैसे भी हो, कहीं से भी हो फलों के वृक्ष अवश्य लगाने चाहिए। यह आवश्यक नहीं कि जो आम बोए वही फल खाए। फल जब अधिक संख्या में उत्पन्न होंगे तो वे इतने सस्ते तथा सुलभ हो जायेंगे कि प्रत्येक व्यक्ति इस नियामत से वञ्चित न रहेगा।

टॉनिक नहीं टमाटर खाइये

फल मनुष्य के लिए सर्वोत्तम अहार है, मनुष्य की शरीर संरचना के लिहाज से भी और उसके शारीरिक, मानसिक, आत्मिक स्वास्थ्य सम्वर्धन के लिए भी। किन्तु फलों का नाम लेते ही लोगों के मस्तिष्क में सेव, अंगूर, नाशपाती, अनार आदि कीमती फलों का चित्र घूम जाता है जो उनकी सामर्थ्य से परे की वस्तु हैं। किन्तु यदि कुछ और खोज की जाय तो कई फल ऐसे दीखेंगे जो सस्ते भी होते हैं और गुणों में कीमती फलों से भी अधिक मूल्यवान। टमाटर एक ऐसा ही फल है। उसे गरीबों का टॉनिक भी कहा जाता है।

आज तक कितने खाद्य पदार्थ सामने आये हैं उनमें टमाटर ही एक ऐसा पदार्थ है जिसमें सबसे अधिक विटामिन होते हैं। विटामिनों की शरीर संरक्षण में महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। पौष्टिक और बलवर्धक पदार्थों के सेवन की यदि धन, सोना, जेवरात संग्रह से तुलना करें तो विटामिन उनकी सुरक्षा, हिफाजत की सामर्थ्य कहे जाएँगे जिनके अभाव में शारीरिक स्वास्थ्य को लुटते देर नहीं लगती। रोग रूपी लुटेरे उसे लूट ले जाते हैं।

हम स्वास्थ्य सम्वर्धन की बात सोचते समय यही भूल करते हैं कि जो शरीर को शक्ति दे वह पदार्थ अच्छे किन्तु यह नहीं सोचते कि इनके साथ ही सुरक्षात्मक भोजन भी आवश्यक है। उस सुरक्षात्मक भोजन में, जिसकी मात्रा सम्पूर्ण भोजन में साठ प्रतिशत होनी चाहिए, टमाटर का मुख्य स्थान है।

टमाटर में ६२.८ प्रतिशत पानी, ४.५ प्रतिशत कार्बोज, १.६ प्रतिशत प्रोटीन, ०.७ प्रतिशत खनिज पदार्थ, स्टार्च ०.०१ प्रतिशत तथा काफी मात्रा में विटामिन 'ए', 'सी', पर्याप्त मात्रा में लोहा, फॉस्फोरस, कैल्शियम तथा थोड़े अंशों में एमिनो एसिड होते हैं।

कोलम्बियो विद्यालय के प्रसिद्ध आहार शास्त्री डॉ. शर्मन इसको विटामिन 'सी' की प्राप्ति में निम्बू, नारंगी के जोड़ का मानते हैं। मधुमेह के रोगी के लिए पथ्य रूप में यह बहुत लाभकारी है। यह क्षुधावर्धक, अग्नि दीपक,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाचक, कान्तिवर्धक और स्नायुओं के लिये रसायन है। ऐसा आयुर्वेद के ज्ञाताओं का मत है

सब खाद्य पदार्थों में सबसे अधिक विटामिन वाला, सब्जियों में सबसे अधिक अम्ल युक्त, रक्तशोधक फल टमाटर उन टॉनिकों से कई गुना लाभकारी है जो बाजार में आकर्षक सीलबन्द बोलतों में मिलते हैं और विज्ञापन के प्रचार तन्त्र के सहारे खूब बिकते हैं।

टमाटर की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इसे एक छोटे से गमले से लेकर कई एकड़ के खेतों में सुगमतापूर्वक उत्पन्न किया जा सकता है। इसके लिए न तो विशेष खाद की ही आवश्यकता होती है और न कीटाणु ही इस पर अधिक आक्रमण करते हैं। घरेलू शाक वाटिका के लिए यह बहुत ही उपयुक्त पौधा है। वर्षा ऋतु में जब प्रकृति जी खोलकर वर्षा करती है हमारे मकान की छत पर लकड़ी या टिन के छोटे बड़े बक्सों में या घर के सामने पड़ी फालतू जमीन पर क्यारियाँ बनाकर टमाटर के पौधे लगा दिये जाएँ तो दो महीनों के बाद ही लाल-लाल सेव जैसे मनोहर व गुणकारी ताजा-ताजा टमाटर आपको उपलब्ध हो सकते हैं। न बाजार जाने का झंझट और न ही बासी होने की आशंका। आपके परिवार के लिए यह प्रयोग बड़ा उपयोगी रहेगा।

टमाटर की पौध पहले एक बक्से में या क्यारी में लगा दें। छः इंच बड़े हो जाने पर इन्हें एक-एक फुट की दूरी पर लगा दें। वर्षा ऋतुओं में भी टमाटर आपकी वाटिका की शोभा बढ़ाने व रसोई की जरूरत पूरी करने में समर्थ है। यह प्रकृति प्रदत्त टॉनिक आपके परिवार की दैनिक आवश्कयताओं को भी पूरा करेगा और परिवार के सदस्यों के स्वास्थ्य सम्वर्धन में भी उपयोगी रहेगा। यह बाजार में बन्द बोतलों में मिलने वाले टॉनिकों की अपेक्षा अधिक गुणकारी व विश्वसनीय है।

गाजर खाने से नेत्र-ज्योति बढ़ती है

शरीर के अन्य अंगों की भाँति हमारे नेत्रों पर भी आहार का विशेष रूप से प्रभाव पड़ता है। प्रायः देखा गया है कि भोजन में विटामिन 'ए' का अभाव होने पर ही दृष्टिक्षीणता, अन्धता अथवा रतौंधी की शिकायतें हुआ करती हैं। अमेरिका के प्राकृतिक चिकित्सकों ने यह पता लगाया है कि गाजर में पुनः दृष्टि शक्ति प्राप्त कराने के विशेष गुण हैं। कुछ वर्ष पूर्व अमेरिकन प्राकृतिक चिकित्सक इमनुइल जोसेफ्रसन का लेख प्रकाशित हुआ था। उसमें उन्होंने एक बालक पर, जो करीब-२ अन्धा हो चला था, प्रयोग किया। उन्होंने उसे प्रतिदिन तीन कच्ची या ठीक तौर के पकायी हुई गाजर खाने को बताया। इससे उसकी आँखें शीघ्र ही निरोग होने लगीं। तीन महीने के बाद उसकी आँखों में कोई भी खराबी न रह गई। गाजर में विटामन 'ए' रहता है। हरे शाक और भाजियों में एक प्रकार का पीला पदार्थ होता है जो स्वतः विटामिन 'ए' उत्पन्न करता है।

घास में विटामिन 'ए' और वह पीला द्रव पदार्थ अधिक मात्रा में मौजूद रहता है। पिछले महायुद्ध के समय हँगेरियन सैनिकों को अच्छा भोजन न मिल सकने के कारण रतौंधी आने लगी, जिससे उन्हें रात के समय कुछ सूझता ही न था। इस प्रकार वे रात के समय पहरा देने में असमर्थ हो गए। लेकिन वहाँ के मेडीकल अफसरों को पता लगा कि उनके सैनिक क्षुधा से आतुर होकर घास खाने लगे तो उनकी रतौंधी गायब हो गई।

उक्त प्राकृतिक चिकित्सक ने यह भी पता लगाया है कि यदि बालकों के भोजन में विटामिन 'ए' का अभाव हो तो चश्मे से भी उनकी दृष्टिक्षीणता दूर नहीं की जा सकती।

प्रयोग के बाद यह ज्ञात किया गया है कि यदि गर्भिणी स्त्री को विटामिन 'ए' न मिले, तो उनके बच्चे अपेक्षाकृत मन्दबुद्धि होंगे और वे बचपन में ही अपनी आँखें खो बैठेंगे। शरीर के स्नायु जाल को लाभ पहुँचाने में भी विटामिन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'ए' अत्यधिक उपयोगी साबित हुआ है। यदि माताऐं चाहती हैं कि उनके बच्चे सुन्दर और स्वस्थ हों तो उन्हें अपने भोजन में विटामिन 'ए' को विशेष रूप से प्रधानता देनी चाहिये।

विटामिन 'ए' के अतिरिक्त दृष्टि शक्ति कायम रखने के लिए अन्य प्रकार के भी आहार तथा पौष्टिक पदार्थों का सेवन करना समान रूप से आवश्यक है। सुन्दर, स्वस्थ और उपयुक्त भोजन के ही द्वारा काफी समय तक अपनी आँखों की दृष्टि शक्ति अक्षुण्य रखी जा सकती है।

आँखों के जिन स्नायुओं के कारण हम देखते हैं उन्हें स्वस्थ बनाए रखने के लिए विटामिन 'बी' आवश्यक है। विटामिन 'सी' आँखों की पुतलियों को अच्छी स्थिति में रखने तथा आँखों की अन्य तरह की बीमारियों से मुक्त करने के लिए बड़ा उपयोगी है। अक्सर विटामिन 'सी' की कमी होने पर मोतियाबिन्द की बीमारी हो जाया करती है। यह देखा गया है कि भोजन में नारंगी, अंगूर या मुनक्का तथा इसी प्रकार के अन्य फलों की अधिक मात्रा रखने से अनेक संक्रामक रोग दूर किए जा सकते हैं। आँखों के लिए विटामिन 'सी' भी गुणकारी है। आँखों से कम दिखाई पड़ना यह आजकल बहुत साधारण बीमारी हो गई है। इस दृष्टिक्षीणता के लिए गाजर एक बड़ी लाभदायक और सस्ती औषधि है। सिर के बाल सफेद हो जाने या झड़ने लगने अथवा रूखे होने सरीखे रोग भी गाजर के सेवन से दूर होते हैं।

गाजर : एक औषधि, एक टॉनिक

कैरोटीन की आवश्यकता शरीर को हर समय पड़ती है। इसकी मात्रा गहरे रंग की सब्जियाँ, नारंगी, मौसमी, चकोतरा, टमाटर, पत्ता गोभी, स्क्वैस, चेकी गोभी (ब्रूसेल्स स्प्राउट्स) आदि में अधिक पाई जाती है। गाजर इसका सबसे बड़ा स्रोत है। जिन्हें प्रायः कब्ज की शिकायत बनी रहती है, उनके लिए यह सबसे बढ़िया पाचक औषधि है। रक्तशोधक होने के साथ ही यह शरीर में अम्ल तथा क्षार का सन्तुलन ठीक बनाये रखता है। गाजर एक ऐसा प्राकृतिक आहार है जिसे कच्चा खाया जा सकता है और नेत्रों की स्वस्थता से लेकर शरीर के समस्त अंग-अवयवों को स्वस्थ एवं नीरोग बनाये रखा जा सकता है। गाजर के रस से कैन्सर जैसे घातक रोग तक दूर हो जाते हैं।

इस संदर्भ में डा. एच. ई. क्रिश्नर ने गहन खोजें की हैं। उनने अपनी पुस्तक "लिव आन फूड जूसेज" में गाजर रस से कैंसर दूर भगाने के अनेक दृष्टांत दिए हैं। एक महिला श्रीमती कैथरिन फिशर रक्त कैंसर से पीड़ित थी। जिसे ल्यूकोमिया कहते हैं। प्रथम प्रसव में उसके स्वस्थ लड़की जन्मी, लेकिन कुछ ही दिनों में वह पीली पड़ने लगी। डाक्टरों ने रक्त कैंसर बताया और पाँच दिनों की अल्पावधि में पच्चीस बार उसे रक्त चढ़ाया गया किन्तु सब बेकार। वह दस दिनों में ही मर गयी। फिशरो की दूसरी संतान जन्म से ही ल्यूकोमियाग्रस्त थी, किन्तु उसको गाजर पर रखा गया। प्रतिदिन पाँच सौ ग्राम रस तीन माह तक देने के बाद उसे फल सब्जी दी गयी। चिकित्सकों के आश्चर्य का तब ठिकाना न रहा जब उन्हें एक वर्ष बाद रक्त परीक्षण में बीमारी के लक्षण दिखाई न पड़े। तीसरी संतान के रक्त की जाँच होने पर ल्यूकोमिया के लक्षण नहीं मिले, क्योंकि श्रीमती फिशरो ने गर्भधारण काल से ही प्रचुर मात्रा में गाजर रस लेना आरंभ कर दिया था।

अमेरिका की अनेक संस्थाओं ने जैसे— सेन्टर फार साइन्स फार पब्लिक, नेशनल हार्ट एण्ड लंग्स ने गाजर रस का परीक्षण बाईस हजार लोगों पर किया है। परीक्षण में टान्सिल, डिसेन्ट्री, एपेन्डीसाइटिस, कैंसर, एनीमिया, पथरी, एसिडिटी, अल्सर, खून खराब होना तथा आँतों के रोग में गाजर के रस ने चमत्कारी परिणाम प्रस्तुत किए।

गाजर में बीटा कैरोटिन बड़ी मात्रा में होता है जिसकी वजह से मानव शरीर विटामिन 'ए' तैयार कर लेता है। इससे पुराना कैंसर ठीक करने में सहायता मिलती है साथ ही सेवन करने से रोगियों को रोग से त्राण मिलता है। विटामिन "ए-बी-सी-डी-ई" एवं "जी" भी गाजर में प्रचुर मात्रा में विराजमान होते हैं। इनमें विटामिन "ए" का महत्व सर्वोपरि है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आँखों के लिए यह बहुत आवश्यक है। इसके अतिरिक्त इसमें प्राप्त विटा. ई से बन्ध्यत्व दूर होता है। प्रजनोत्पादक क्षमता बढ़ती है। कैंसर के कोशों का विकास रुक जाता है। इसके नित्य सेवन से रोग प्रतिरोधी शक्ति बढ़ती है क्योंकि गाजर रस में पोटेशियम, कैल्शियम, मैंगनीज एवं लौह खनिज भी पाये जाते हैं।

गाजर में इन्सुलीन जैसे तत्व तथा टाकोकीलिन नामक हारमोन पाये जाते हैं। मधुमेह के रोगियों को जहाँ चीनी से हानि होती है, वहीं गाजर की चीनी लाभदायक होती है। गाजर में ऐन्टीसेप्टिक गुण है, जिसके कारण शरीर में रोगाणुओं का प्रवेश रुकता है और घाव जल्दी भरते हैं। इसमें म्यूसिन नामक तत्व है जो अन्तर्त्वचा पर स्नेहन का काम करता है। इसमें ऐसे क्षार भी हैं जो आसानी से हजम होते और भोजन की अम्लीयता (एसिडिटी) दूर करते हैं।

श्रीमती मेरी सी. हॉग्ले द्वारा लिखित पुस्तक "फूड दैट अल्केनाइज एण्ड हील" में रक्त में जहर होने, एनीमिया, रक्तक्षीणता तथा रक्त के अन्य रोगों में गाजर को रामबाण कहा गया है। फ्रान्स, जर्मनी तथा योरोप के कई भागों में किसान पाचन तन्त्र की गड़बड़ी में गाजर का प्रयोग बड़े पैमाने पर सफलतापूर्वक किया करते हैं। अम्लता को निष्क्रिय बनाने वाला गुण गाजर में विद्यमान है, इसकी पुष्टि हाउसर तथा वर्क ने अपनी पुस्तक "डिक्शनरी आफ फूड" में की है।

गाजर को टुकड़ों में काटकर छाया में सुखाकर भी रक्खा जाता है। जब गर्मियों में सब्जी उपलब्ध नहीं होती है तो थोड़ा सा पानी में उबालकर हल्का मसाला मिलाकर स्वादिष्ट सब्जी बनाकर भी खाया जा सकता है। मार्च-अप्रैल में गाजर काटकर पानी में नमक, राई डालकर पानी का अचार बनाया जाता है। जिन्हें खुश्की अथवा उदर विकार रहता है, उनके लिए इस प्रकार गाजर का उपयोग करना बहुत गुणकारी सिद्ध होता है।

जिन्हें आँतों की बीमारी हो, उन्हें गाजर का रस नित्य पीना चाहिए। इससे आँतों के अल्सर तक ठीक हो जाते हैं। जीर्ण रोगों का उपचार भी गाजर के रस से सम्भव है। पोषक की दृष्टि से यह सर्वोत्तम टॉनिक है।

दवाओं का प्रयोग आपत्ति धर्म की तरह ही किया जाय

बीमारियों का एक-मात्र हल औषधियाँ ही नहीं हैं। स्वास्थ्य की थोड़ी सी भी जिन्हें चिन्ता है, वे संयम बरतते हैं, आहार-विहार में सन्तुलन बनाये रखते हैं तथा दवाओं से विशेषकर एलोपैथिक दवाओं से परहेज बरतते हैं। जो प्रकृति के नियमों का पालन करते हैं, दिनचर्या नियमित रखते हैं वे बीमार कम पड़ते हैं और पड़ते भी हैं तो उनकी रोगनिरोधक क्षमता इतनी होती है कि वे शीघ्र ठीक हो जाते हैं। आजकल एलोपैथिक दवाओं के प्रचलन से रोग ठीक करने का सर्वत्र प्रचलन है। किन्तु रोगी की रोग निरोधक क्षमता कितनी कम होती जा रही है, इसका अन्दाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि एक रोग छोड़ता है, दूसरा आक्रमण कर देता है। अब डॉक्टर भी इस बात को मानते हैं कि एलोपैथिक दवायें अपने पीछे लम्बे समय तक चलने वाला घातक प्रभाव छोड़कर चली जाती हैं। एलोपैथिक दवायें तब और अपना घातक प्रभाव छोड़ती हैं जब रोग का कारण और लक्षण जाने बिना उन्हें प्रयोग किया जाता है।

डॉ. इरासम्स डार्विन ने लिखा है कि मेरा विश्वास है कि निकट भविष्य में चिकित्सा जगत में अब एक नया मोड़ आने ही वाला है। चिकित्सक अगले दिनों दवाओं का उपयोग अनिवार्य स्थिति में ही किया करेंगे। उनका मुख्य काम उनकी उन भूलों का पता लगाना होगा, जिनके कारण उसे बीमार होना पड़ा। चिकित्सक उसकी भूल-सुधार का परामर्श दिया करेंगे और उसे प्रकृति के अनुरूप खान-पान, रहन-सहन की सलाह दिया करेंगे और यह बताया करेंगे कि प्रकृति के अनुरूप चलने के अतिरिक्त स्वास्थ्य संकट के निवारण का और कोई कारगर उपाय नहीं है।

डॉ. डब्ल्यू. एन. व्हाइट लिखते हैं कि अब समय आ गया है जब चिकित्सा के नये आधार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

खड़े करने पर अधिक बल देना चाहिये और रूढ़िता के कारण ज्ञात किये बिना लक्षणों के आधार पर दवायें लिख डालने की उतावली नहीं करनी चाहिये।

ख्याति प्राप्त एलोपैथ सर्जन डॉ. जे. एच. टिल्डन ने वृद्धावस्था में औषधियों द्वारा चिकित्सा करना छोड़ दिया था और रोगियों को मात्र स्वास्थ्य के लिये परामर्श देते थे। उनका कहना था कि डॉ. लोग रोगी को बीमारी की दवा दिये चले जाते हैं किन्तु उन बुरी आदतों से रोकने की सलाह नहीं देते हैं जिनसे रोगी बार-बार बीमार पड़ता है। जब तक जड़ नहीं काटी जाती तब तक पत्ते तोड़ने भर से कोई स्थायी समाधान नहीं निकलने वाला और यह तब सम्भव है जब रोगी के प्रति डॉक्टर की सहानुभूति हो और रोगी को डॉक्टर की नेक सलाह मानकर अपने दोष-दुर्गुणों को त्यागने की सम्मति सूझ पड़े। डॉक्टरों के लिये रोगी रोजगार का अच्छा माध्यम है और उनकी इच्छा यही रहती है कि उसी प्रकार रोगी आते रहें और उनका रोजगार क्रम चलता रहे। इस क्रम को रोका जाना चाहिये।

ज्यूरिक मेडीकल न्यूज में डॉ. एम. बर्कले का एक लेख छपा है। उन्होंने औषधि विज्ञान की असफलता को स्वीकार करते हुए लिखा है कि अनेकानेक दवाओं के प्रयोग से शरीर के जीवकोषों की संरचना एवं हारमोन स्राव में इतना व्यवधान पड़ता है कि आगे चलकर कोई दवा कारगर असर नहीं दिखा पाती एवं कोई संतोषजनक परिणाम हस्तगत नहीं होता। कितनी ही बार उल्टे परिणम देखने को मिले हैं। ब्रिटेन की चिकित्सा पत्रिका "लैन्सेट" ने एल. डोपा नामक दवा के तात्कालिक लाभ के फेर में पड़कर स्वास्थ्य सन्तुलन को चौपट बनाने वालों के विचित्र व रोमांचकारी अनुभव लिखे हैं। इस दवा को कम्पन रोग के लिये रामबाण औषधि समझकर प्रयोग किया जाता रहा। किन्तु कुछ समय बाद कम्पवाय के स्थान पर सनक, बड़बड़ाना और पागलपन के लक्षण उभरते देखकर लोगों में खलबली मच गयी और दवाओं का प्रयोग तत्काल रोक देना पड़ा।

अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त डॉ. विलियम हार्बर्ट, डॉ. विलियम ब्राउन भी इस बात पर जोर देते हैं कि वर्तमान में जादूगरी के आधार पर टिकी हुई चिकित्सा प्रणाली में आमूल-चूल परिवर्तन होना चाहिए और लोगों की मानसिकता को बदला जाना चाहिये कि सामयिक रोग, पीड़ा अथवा कष्ट को हटा देना ही चिकित्सा का उद्देश्य नहीं है। वास्तविक उपचार तो वह है, जिसमें रोगमुक्त होने की रीति-नीति गले उतारी जा सके, ताकि आये दिन बीमार होने की नौबत ही न आये और यदि कभी-कभार कोई बीमार हो भी जाय तो डॉ. के पास दौड़ पड़ने की उतावली न मचाई जाये। ऋतु परितर्वन के समय सर्दी-जुकाम होना कोई रोग नहीं है, बल्कि शरीर उस सन्धिकाल में अपना संतुलन बिठाता है और रोगी उतावली में मारक औषधियाँ लेकर रोग भगाना प्रारम्भ कर देते हैं। इससे नयी-नयी बीमारियाँ उपज पड़ने का खतरा उत्पन्न हो जाता है।

प्रो. एच. जी. कांक्स ने लिखा है कि बीमारों की बुद्धिमानी इस बात में है कि "वे कम से कम औषधियाँ प्रयोग करें, सो भी उस हालत में जब रोग काबू के बाहर हो अर्थात् संयम बरतने पर भी न दबाया जा सके।" विद्वान चिकित्सों कों का कथन है कि अच्छे होने वाले रोगियों के सम्बन्ध में यह दावे से नहीं कहा जा सकता कि वे मात्र दवाओं के प्रयोग से ही अच्छे हुए हैं। वस्तुतः प्रकृति हर रोग के निवारण में लगी रहती है और अधिकांश रोगी उसकी कृपा से ही अच्छे होते हैं, श्रेय औषधियों को मिल जाता है। जबकि वास्तविकता यह है कि शरीर में पहले से ही रोग-निरोधक क्षमता होती है। असंयम बरतने, कुपोषण अथवा कुछ मानसिक कारणों से यह जीवनी-शक्ति कम होती जाती है और व्यक्ति रोग की चपेट में चला जाता है।

असंयम और अव्यवस्थित रहन-सहन अपनाने से शरीर में टूट-फूट होती है। वही रोग और कष्ट के रूप में दिखाई देता है। ऐसे अवसरों पर उचित यही है कि शरीर पर अनावश्यक भार डालना बन्द कर थोड़ा विश्राम किया जाय और रुग्ण पाचन प्रणाली को थकान

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से बचाने के लिये या तो हल्के पदार्थों का सेवन किया जाय अथवा बन पड़े तो उपवास जैसे तरीके अपनाये जायँ। सर्दी, जुकाम, बुखार जैसे साधारण रोगों में दवा लेकर रोग दबाने की जो उतावली मचाई जाती है, उससे तत्काल क्षणिक आराम भले ही मिलता हो, किन्तु रोग दवाओं की विषाक्तता मिलकर रोगी को एक प्रकार से सदा के लिये अपने चंगुल में फँसे रहने के लिये बाध्य करती है। छोटे-मोटे रोग ही इन दवाओं के कारण असाध्य रोगों में परिणत हो जाते हैं।

महात्मा गाँधी ने लिखा है कि थोड़ी सी तबियत खराब होते ही हकीम, डॉक्टरों के पास दौड़ने की हमारी आदत हो गयी है। हममें से प्रत्येक का विश्वास सा बन गया है कि रोग बिना औषधि के ठीक ही नहीं होते। बूढ़ा हो या बालक, कमजोर हो या बलवान छोटे-मोटे सर्दी-जुकाम के लिये भी दवा लेने में विश्वास रखते हैं। यह एक महान भूल है, जिसके फलस्वरूप अनेकों नयी विपत्तियाँ सामने आ खड़ी होती हैं। रोगों का उपचार तो होना चाहिये, पर उनमें औषधियों का विशेषकर एलोपैथिक दवाओं का प्रयोग रोग के असाध्य होने पर ही किया जाना चाहिए अन्यथा छोटे-छोटे साधारण रोगों में मारक दवायें लेकर शरीर की रोग-निरोधक क्षमता को अनावश्यक नष्ट करने की उतावली जीवन के लिये मँहगी पड़ सकती है।

दवायें जिन पदार्थों से निर्मित की जाती हैं, वे हमारे स्वाभाविक खाद्य नहीं हैं अन्यथा वे स्वस्थ रहने पर भी लिये जाते। उनमें प्रायः मानवी प्रकृति के प्रतिकूल तत्व ही अधिक रहते हैं, जो उन्मत्त हाथी की तरह अपनी और शत्रु की सेना का विनाश करते हैं। यह सत्य है कि औषधियाँ रोगाणुओं को मारती हैं, पर जीवन रसों को भी हानि पहुँचाये बिना नहीं रहतीं। अस्तु आपत्ति धर्म की तरह यदि इनका उपयोग करना भी पड़े तो सीमित मात्रा और सीमित समय तक ही इनका सेवन किया जाना उचित है। रोग की जड़ काटने के लिये उपवास, सीमित आहार, संतुलित एवं सुपाच्य भोजन ही करना चाहिऐ। आहार-विहार का संयम और संतुलन अपनाकर यदा-कदा वनौषधियों का सेवन करते रहकर कृत्रिम औषधियों के प्रयोग से छुटकारा पाना सम्भव है।

स्वास्थ्य संरक्षण में मनोबल का योगदान

वर्कले कैलीफोर्निया के डायरेक्टर कैनेथ पैलिटियर ने कहा है कि अगले दिनों मात्र काय चिकित्सा पद्धति पर रोग उपचार को अवलम्बित न रखा जा सकेगा। उसके साथ मानसिक परिशोधन और परिशोधन के प्रयोग भी जोड़ने होंगे। मनुष्य मात्र शरीर नहीं है, उसमें मन की सत्ता का भी बाहुल्य है। मन ही है जो शरीर को उठाने, गिराने की भी भूमिका निभाता है। इसलिए शरीर को मात्र रासायनिक संरचना मानकर औषधियों पर ही पूरी तरह निर्भर रहना उचित न होगा। हर रोगी की मानसिक स्थिति में भी सामयिक परिवर्तन करने की बात सोची जानी चाहिए।

इसी तरह की उक्ति अलवर्ट श्वीटसर की भी थी। वे रोगियों का औषधि उपचार तो करते थे पर साथ ही उन्हें प्रार्थना, परिशोधन एवं प्रसन्न रहने की भी शिक्षा देते थे। वे अक्सर कहा करते थे कि मनुष्य के भीतर भी एक डाक्टर है। यदि उसका साथ लेकर चिकित्सक अपना उपचार क्रम चलाये तो निश्चय ही अधिक मात्रा में और अधिक जल्दी रोगों से निवृत्ति मिलेगी।

इन दिनों चिकित्सा क्षेत्र में एक से एक बढ़कर प्रयोग हो रहे हैं और नित नये निष्कर्ष हस्तगत हो रहे हैं। किन्तु उसमें विचार विद्या का समावेश न रहने से जैसी मिलनी चाहिए वैसी सफलता मिल नहीं रही है।

कैलोफोर्निया विश्वविद्यालय की एक शोध मंडली ने अपने अनुसंधानों से चिकित्सा जगत में खलबली मचादी। उनने एक जैसी स्थिति के रोगियों के दो वर्ग किये। एक को औषधि विशारदों द्वारा किये जाने वाले बहुमूल्य उपचारों के अन्तर्गत रखा गया और दूसरे वर्ग को मात्र गुण रहित औषधियों के सहारे रखकर बहलाया जाता रहा। किन्तु देखा गया कि दोनों की प्रगति में कोई खास अन्तर नहीं था। गुण रहित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

औषधियों से तात्पर्य है नमक का पानी या शकर की गोलियाँ अथवा सामान्य खाद्य पदार्थों का औषधि जैसा रूपान्तरण।

गुणरहित औषधियाँ भी मारक उत्तेजक औषधियों जैसा गुण क्यों दिखाती हैं। इस सम्बन्ध में जाँच-पड़ताल से पता चला कि मस्तिष्क में उत्पन होने वाला एक विशेष तत्व ऐंडोर्फीन' न केवल पीड़ा हलकी करता है वरन् रोगों से मुक्ति दिलाने के भी काम आता है। उसे अधिक मात्रा में उत्पन्न करने में मुनष्य का मानसिक विश्वास या उत्साह अधिक काम करता है। यदि गुणरहित औषधियाँ भी रोगी की मनःस्थिति को जल्दी अच्छी होने का विश्वास दिला सकें तो यह तत्व अधिक मात्रा में उत्पन्न होगा और रोगी आन्तरिक स्थिति के अनुरूप स्वयमेव अच्छा होने लगेगा।

'कमेटी फार दि इनवेस्टिगेशन आफ पैरानार्मल' के प्रतिनिधि डा० लेवाक मार्टिन गार्डडर ने अनेक प्रयोग परीक्षणों से यह सिद्ध किया है कि प्रसन्नचित्त, उत्साही तथा आत्मविश्वासी प्रायः बीमार ही कम पड़ते हैं और यदि पड़ते हैं तो उनकी बीमारी न तो लम्बी चलती है और न अधिक कष्ट ही देती है। शोधकर्ता वैज्ञानिकों से लेकर गम्भीर उत्तरदायित्व वहन करने वाले सेनापतियों तक में अधिक सफल वे लोग हुए हैं जो अधिक प्रसन्नचित्त रहते थे और चिन्ता, उद्विग्नता के दबाव से बचे रहते थे।

अमेरिकन साइको सोमेटिक सोसायटी के अध्यक्ष राबर्ट ऐडर का कथन है कि अधिक महत्वपूर्ण और अधिक परिमाण में काम करने वाली व्यस्तताग्रस्त नहीं रही है। उनने हलका-फुलका स्वभाव बनाया है और हँसना-हँसाना सीखा है। इस प्रकार दबाब रहित मनोभूमि के द्वारा ही अधिक सूझ-बूझ का परिचय दे सकना सम्भव होता है वे जहाँ अधिक सफल होते हैं वे शारीरिक दृष्टि से भी निरोग रहते हैं।

वाल्टर रीड आर्मी मेडीकल सेन्टर ने सैनिकों की रुग्णता और चिकित्सा के सन्दर्भ में जो निष्कर्ष निकाले हैं उनसे पता चला है कि जिन्हें भय, आशंका और खिन्नता घेरे थी उनकी सामान्य-सी चोटें भी देर में अच्छी हुईं। इसी प्रकार जिन्हें घर की याद सताती रही उनकी जीवनी शक्ति कमजोर हुई और जुकाम, गला बैठना, अनिद्रा, अपच जैसी शिकायत बनी ही रही। इसके विपरीत अलमस्त स्वभाव के सिपाही अधिक गहरी चोट या रुग्णता से ग्रसित होने पर भी अपेक्षाकृत जल्दी अच्छे हो गये।

माडण्ड सिताई स्कूल आफ मेडीसिन—न्यूयार्क के अध्यक्ष मार्टिन स्टाइन ने कहा है विषाणु तो हवा में ही हर जगह इतनी अधिक संख्या में मँडलाते रहते हैं कि उनसे बच सकना उनके लिए भी सम्भव नहीं जो सफाई या रोकथाम का बहुत ध्यान रखते हैं। वे तो साँस के द्वारा भी शरीर में घुस सकते हैं। प्रश्न यह है कि उनके कारण किन्हें कितनी क्षति पहुँचती है ? किस पर वह आक्रमण कितना हलका या भारी होता है ? उसके उत्तर में आमतौर से रक्त कणों में पाई जाने वाली जीवनी शक्ति का कारण जाना जाता है। किन्तु नये निष्कर्ष यह बताते हैं कि मानसिक स्थिति के कारण घटने-बढ़ने वाली विद्युत शक्ति ही वस्तुतः रोग निरोध का काम करती है। उसका सहयोग पाये बिना रक्त कण भी निर्बल रहते हैं और अपने काम को अन्जाम ठीक तरह नहीं दे पाते। इसके विपरीत मनस्वी लोग शरीर के अथवा रक्त भाग के दुर्बल होते हुए भी रोगों के आक्रमण से बचे रहते हैं। आक्रान्त होने पर देर तक उनके चँगुल में फँसे नहीं रहते।

प्रसिद्ध पत्रिका 'सटरडे रिब्यू' के सम्पादक नार्मन कर्जिस ने अपनी भयंकर बीमारी के दिनों का संस्मरण लिखा है और बताया है कि सत्रह वर्ष लगातार बीमार पड़े रहने के कारण वे निढाल हो गये थे और निराश रहने लगे थे। भविष्य अँधेरे से भरा और मृत्यु के निकट दीखता था। इन दिनों उनके एक हितैषी ने हँसने-हँसाने का उपाय आजमाने की सलाह दी। वे बिस्तर पर पड़े-पड़े ही हास्य विनोद की पुस्तक पढ़ते फलतः बार-बार हँसने-मुसकराने का अवसर मिलता। यही था वह उपचार जिसने उनकी अनिद्रा दूर की, रुग्णता घटाई और सुधारने-उभारते उन्हें इस योग्य बनाया जिससे फिर से समर्थ लोगों की तरह काम कर सकें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

राक फेलर यूनिवर्सिटी न्यूयार्क के शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक अनुसंधान विभाग के अध्यक्ष नील मिलर ने लिखा है कि अब वह समय चला गया तब सभी रोगों को प्रकृति विपर्यय या विषाणु आक्रमण के कारण उत्पन्न हुए माना जाता था और उनकी चिकित्सा के लिए मात्र औषधियों का ही सहारा लिया जाता था। अब हम बहुत आगे आ गये हैं और ऐसे अगणित तथ्य दीखते हैं जो मन की स्थिति को स्वस्थता, अस्वस्थता के साथ जोड़ते हैं। अनुसंधान बताते हैं कि मानसिक दृष्टि से उद्विग्न व्यक्ति शारीरिक व्यथाओं के चंगुल में फँसा ही रहेगा। स्थिर स्वास्थ्य के लिए प्रस्तुत प्रमाणों के आधार पर मानसिक सन्तुलन और उत्साह को नितान्त आवश्यक पाया जाता है।

हार्वर्ट मेडीकल स्कूल के डा० वेन्सन का कथन है कि मानसिक विश्रान्ति पर चिर यौवन और दीर्घ जीवन अवलम्बित है। जो लोग उद्विग्न रहते हैं वे पौष्टिक आहार या अन्यान्य सुविधा साधन प्राप्त करने पर भी निरोग रह नहीं पाते। ऐसी विश्रान्ति मानसिक संयम का अभ्यास करने पर सरलतापूर्वक उपलब्ध हो सकती है। इस सम्दर्भ में डेविड ब्रेस्लर ने अनेकों हृदय रोगियों पर परीक्षा करके पाया कि उनकी निराशा दूर करने से इतना अधिक लाभ हुआ जितना कि बहुमूल्य उपचार से भी उन्हें उपलब्ध नहीं हो रहा था।

सान फ्रांसिस्को के हृदय रोग अनुसंधान में निरत डा० मेयर फ्रीडमेन ने कहा है—लम्बे पर्यवेक्षण के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचा गया है कि हृदय रोगियों को आत्मविश्वास उत्पन्न करने तथा निराशा-आशंका से पीछा छुड़ाने की शिक्षा दी जानी चाहिए। उनकी व्यथा दूर करने में मात्र औषधियों पर अवलम्बित रहने से काम न चलेगा।

लार ऐजोलस के डा० फील्डिंग का कहना है कि सुधारी हुई नवीनतम चिकित्सा पद्धति में शारीरिक रुग्णता मिटाने के लिए औषधियों के प्रयोग में एक पक्ष और जुड़ना चाहिए कि रोगी का आत्मविश्वास कैसे जगाया जाय और उसमें आशा भरा उत्साह किस प्रकार बँटाया जाय।

यौवन अक्षुण्ण रखा जा सकता है। यौवन का अर्थ चेहरे की चमक बनाये रहना या त्वचा पर झुर्री न पड़ने देना ही नहीं है वरन् स्फूर्ति एवं कार्य-क्षमता को अक्षुण्ण बनाये रहना है। इसके दो आधार हैं—एक मनोबल एवं उत्साह, दूसरा लगन एवं पराक्रम। यह दोनों ही गुण प्रधानतया मानसिक हैं। मनोबल बढ़ा रहे तो यह व्यवस्था हर आयु में बनी रह सकती है। शर्त एक है कि रुग्णता का आक्रमण शरीर पर न हो और मस्तिष्क पर मनोविकारों की आक्रमकता न चढ़ दौड़े।

यह दोनों ही उपाय अपना सकना मनुष्य के अपने हाथ में है। आत्मविश्वास और साहस बनाये रहने के लिए ऐसी दिनचर्या से भी कार्य-पद्धति अपनानी चाहिए जिसमें सरलतापूर्वक सफलता मिलती रहे और मनोबल क्रमिक गति से निरन्तर बढ़ता रहे। यही बात आरोग्य के सम्बन्ध में है। इसके लिए कोई विशेष उपचार तलाश करने की आवश्यकता नहीं है। आहार-विहार को प्रकृति के अनुरूप बनाये रहा जाय। जीवनचक्र में शालीनता का अनुशासन रखे रहा जाय तो न दुर्बलता से पाला पड़ेगा और न रोगों का शिकार होना पड़ेगा। वृद्धावस्था में शक्तियाँ घटती हैं तो तदनुसार शारीरिक-मानसिक श्रम का भार और स्तर हलका रखा जा सकता है। इतनी-सी सावधानी बरतने पर मनोबल और शरीर बल दोनों ही अपने-अपने स्थान पर सही बने रह सकते हैं।

कष्टकारक बुढ़ापा जीवनक्रम को अस्त-व्यस्त, अव्यवस्थित रखने की अवांछनीय परिणति है। यदि शरीर और मन को सरल, सौम्य ढंग से रहने दिया जाय और उन्हें अनौचित्य के रस्सों से बाँधकर खाई-खंदकों में घसीटने-पटकने की अव्यवस्था न फैलाई जाय तो बिना किसी अतिरिक्त उपाय के आरोग्य एवं उत्साह को अक्षुण्ण बनाये रखा जा सकता है। यही है यौवन, जो मरण पर्यन्त सदा साथ देता है और सहायता करता रह सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आरोग्य मात्र शरीर एवं मन तक ही सीमित नहीं

जीवन का सही रूप में सदुपयोग बन पड़े, उसका समुचित लाभ और आनन्द उठाया जा सके। इसके लिए स्वस्थता सर्वप्रथम और सर्वप्रमुख आवश्यकता है। उसके बिना प्रगति पथ पर लम्बी दूरी तक चला जा सकना तो दूर उल्टे अनेकानेक त्रासदायक संकट खड़े होते रहते हैं। इन्हीं से निपटने में शक्ति चुक जाती है। ऐसी दशा में कोई ऐसा महत्वपूर्ण उत्पादन सम्भव नहीं हो पाता, जो अपने या दूसरों के काम आ सकने का श्रेय प्राप्त कर सके।

दुर्भाग्य इस बात का है कि स्वास्थ्य की महत्ता का आभास तब होता है जब वह हाथ से चला जाता है। इन तथ्यों से खोखले हो चुकने पर फिर पूरी तरह पूर्व स्थिति में पहुँच सकना भी सम्भव नहीं होता। कहा जाता है कि दान न करने के बाद परलोक में नरक मिलता है। पर इस तथ्य को यदि प्रत्यक्ष देखना हो तो अस्वस्थता को पाप माना और उसके कारण जिस प्रकार की व्यथा-अपंगता में जीना पड़ता है, निकटवर्तियों की उपेक्षा जिस प्रकार बढ़ती है उसे देखते हुए अनुभव किया जा सकता है कि नरक का छोटा किन्तु प्रत्यक्ष रूप क्या हो सकता है। इस दृष्टि से अस्वस्थता को एक बढ़ा-चढ़ा दुर्भाग्य और स्वस्थ रहने को सौभाग्य कहा जा सकता है। शर्त इतनी ही है कि स्वस्थता का सदुपयोग बन पड़े और दुष्प्रवृत्तियों में निरत होने से शरीर एवं मन को पूरी तरह से रोका जा सके।

साधारणतया शारीरिक दुर्बलता और बीमारी से बचे रहने को ही आरोग्य समझा जाता है। माँसलता, सुगढ़ता और समर्थता को आरोग्यजन्य उपहार माना जाता है। पर वस्तुतः बात इतनी छोटी और सीमित है नहीं। मन मस्तिष्क भी काया का ही एक अंग अवयव है। उसकी विचारणा, विवेकशीलता और बुद्धिमत्ता भी समग्र आरोग्य की ही एक महत्वपूर्ण कड़ी है। मान्यताएँ, आकांक्षाएँ, भावनायें, आदतें इसी क्षेत्र की विभूतियाँ हैं। इनको भी अवाछंनीयताओं से मुक्त होना चाहिए। दूरदर्शी विवेकशीलता को उथला नहीं होना चाहिए। समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, बहादुरी का विकसित स्वरूप ही मानसिक स्वस्थता का परिचायक है। लोभ, मोह और अंहकार को कुपित बात, पित्त, कफ की तरह अनिष्टकारी ही माना जाना चाहिए जबकि लाग इस सम्बन्ध में उदासीनता और उपेक्षा ही अपनाये रहते हैं। उन्हें यह समझ नहीं होती कि शारीरिक आरोग्य की तुलना में मानसिक सन्तुलन किसी भी प्रकार कम महत्वपूर्ण नहीं है।

बात इतने पर भी समाप्त नहीं होती। आर्थिक, पारिवारिक, सामाजिक स्वास्थ्य भी उतना ही अधिक आंवश्यक है। इन धाराओं के साथ भी जीवन का सुविस्तृत रूप जुड़ता है। शरीर सही हो पर मन विक्षिप्तों, अर्द्ध-विक्षिप्तों, सनकियों, उद्दण्ड, असभ्यों की स्थिति में रह रहा हो, तो समझना चाहिए कि शरीर के निरोग रहते हुए भी समग्र स्वस्थता का लाभ और आनन्द मिल सकना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है। आर्थिक स्वास्थ्य की महिमा भी कम नहीं है। शरीर और परिवार की उचित आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए ईमानदारी के साथ परिश्रमपूर्वक कमाया हुआ धन होना चाहिए। उसका अभाव रहे तो अभावग्रस्त स्थिति में विक्षोभों के बीच घुटन भरे दिन गुजारने पड़ेंगे। दरिद्रता के साथ दीनता भी सहचरी बन जाएगी। पुण्य परमार्थ का प्रयोजन तो कदाचित् ही बन पड़ेगा। अत्यधिक व्यस्तता, अस्तव्यस्तता, अभावग्रस्तता और महत्वाकांक्षाओं की आग में जलते हुए लोग शरीर रोगियों की अपेक्षा अधिक गई गुजरी स्थिति में होते हैं। इन सभी बातों पर दृष्टि रखने वाले आर्थिक स्वावलम्बन और उस स्तर की समर्थता पर समुचित ध्यान रखने के लिए जोर देते हैं।

परिवारिक सुव्यवस्था भी आरोग्य का एक अविच्छिन्न अंग है। बड़ा परिवार यदि पारस्परिक मनोमालिन्य, असहयोग से ग्रसित हो, सभी को मनमर्जी चलाने और आपाधापी बरतने की लत पड़ी हो तो फिर सहयोग के आधार पर क्रमिक विकास की ओर चल सकना सम्भव ही नहीं होगा। सह जीवन का आनन्द किसी को भी मिल न सकेगा। खाने-सोने की सुविधा तो सरायों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धर्मशालाओं, होटलों में भी मिल जाती है। परिवार की आवश्यकता तो इसलिए पड़ती है कि उसमें आत्मीयता, सद्भावना, सेवा-साधना और प्रफुल्लता, प्रसन्नता का आदान-प्रदान परिजनों के बीच निरन्तर चलता रहता है। जबकि मात्र भोजन, शयन जैसी सुविधायें तो अन्य स्थानों में भी मिल जाती हैं। जेलखानों के कैदी और बाड़े में बन्द जानवर भी शरीरगत सुविधायें प्राप्त कर लेते हैं, पर वहाँ परिवार का अभाव रहने से निवासियों को किसी आनन्द की अनुभूति नहीं होती। अकेलापन उन्हें और बीमार कर देता है। घर-परिवार को सर्वसाधारण के जीवन में उपलब्ध तपोवन कहा -जा सकता है, जिसमें सद्गुणों और सत्प्रवृत्तियों को चरितार्थ करने का अभ्यास निरन्तर करते रहना बन पड़ता है। अवाँछनीयताओं का उन्मूलन अपने निज के व्यक्तित्व के उपरान्त परिवार क्षेत्र में ही कर सकना सरल पड़ता है। उस समुदाय पर दुलार के साथ-साथ सुधार करने की भी पूरी-पूरी गुंजाइश रहती है। संयुक्त परिवार अगले दिनों की अनिवार्य आवश्यकता बनकर रहेंगे। हर व्यक्ति स्त्री-बच्चों को लेकर एक निजी परिवार बसाने और 'डेढ़ चावल की अलग खिचड़ी पकाने, ढाई ईंट के महल जुटाने में सफल हो नहीं सकेगा। विश्व व्यवस्था परिवार के सिद्धान्त को लेकर ही कम्यून सिस्टम पर बन या चल सकेगी' अस्तु ! शरीर और मन से एक कदम आगे बढ़ते ही आर्थिक और पारिवारिक स्वस्थता की आवश्यकता सामने आ खड़ी होती है। यह भी सभी के व्यक्तिगत जीवन से सम्बद्ध है। आत्म परिष्कार और व्यक्तित्व विकास के लिए निजी क्षेत्र में इन सभी पर समुचित ध्यान देने और समग्र प्रगति का प्रयत्न करने की आवश्यकता पड़ती है।

सामाजिक क्षेत्र को जीवन की बहुमुखी गतिविधियों को सुविस्तृत क्षेत्र में कार्यान्वित करने का कार्य क्षेत्र कह सकते हैं। मनुष्य की संरचना सामाजिक प्राणी के रूप में हुई है। आदिम काल की अनगढ़ स्थिति से क्रमशः आगे बढ़ते-बढ़ते आज के सुविधा सम्पन्न युग तक आ पहुँचने का श्रेय मनुष्य की बढ़ती हुई सहकारी प्रवृत्ति को ही दिया जा सकता है। यदि आदान-प्रदान का, एक ही क्षमताओं से दूसरों को लाभान्वित होते रहने का राजमार्ग न बना होता तो अन्य वन्य पशुओं की तरह उसे भी वैसा ही रहना पड़ता। वन मानुषों और नर वानरों से तनिक भी ऊँची अच्छी स्थिति उसे उपलब्ध न हुई होती। अभी वनवासी और घुमक्कड़ कबीले अपनी पिछड़ी हुई छोटी दुनियाँ में रहते और किसी प्रकार जीवित रहने के साधन हस्तगत कर पाते हैं। प्रगतिशीलता का दूसरा पक्ष सहकारिता है। दोनों का अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। निपट एकाकी, सर्वथा व्यक्तिवादी, संकीर्ण, स्वार्थपरतावादी नीति अपनाकर एकाकी जीवन कदाचित ही कोई जी सके।

यह समाज के नाम से जाना जाने वाला संयुक्त क्षेत्र है। मछली सुविस्तृत जलाशय में ही प्रगति करती और सुखी रहती है। मनुष्य को भी सामाजिक आदान-प्रदान के लिए उपयुक्त परिस्थितियाँ उत्पन्न करनी पड़ती हैं। विषैले जलाशय की मछलियाँ मर जाती हैं या फिर कष्टपूर्वक विषैली होकर जीवन गुजारती हैं। सामाजिक अव्यवस्था और अराजकता की स्थिति में भी सर्वसाधारण का जीवन दूभर हो जाता है। शान्ति, समृद्धि, प्रगति और प्रसन्नता के सभी द्वार बन्द हो जाते हैं। इसलिए समाज में स्वस्थ परम्पराओं को प्रतिपादित करना, उन्हें समर्थ, समुन्नत बनाना कठिन हो जाता है। प्राचीनकाल के साधु, ब्राह्मण, परिव्राजक इसी आवश्यकता की पूर्ति के लिए निरन्तर जुटे रहते थे। शासन का नियन्त्रण दण्ड विधान भी इसी हेतु गढ़ा और खड़ा किया गया है।

सामाजिक वातावरण अपने प्रभाव क्षेत्र के हर व्यक्ति को प्रभावित करता है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए हर नागरिक को समाज की सुविधाओं में समुचित योगदान देते हुए अपने नागरिक कर्तव्यों का पालन करना चाहिए। समग्र, सर्वांगपूर्ण स्वस्थता का लाभ लेने के लिए हमें शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक और सामाजिक स्वस्थता को अक्षुण्ण बनाये रखने हेतु समुचित प्रयत्न करना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शाकाहारी व्यञ्जन

आवश्यकता और उपयोगिता

वर्तमान खाद्य संकट के तात्कालिक हल के लिए यह बहुत आवश्यक हो गया है कि लोग शाकाहार पर अधिक ध्यान दें। १ औंस अनाज की प्रति व्यक्ति कमी को १ औंस प्रति व्यक्ति के हिसाब से यदि सब्जी की मात्रा बढ़ा दी जाय तो देश को अन्न के लिए विदेशियों का मुँह न ताकना पड़े। आहार शास्त्रियों के मत से भी भोजन का संतुलन बनाये रखने के लिए एक व्यक्ति के भोजन में २५० ग्राम सब्जी तो होनी ही चाहिए। इस स्वाभाविक मात्रा को यदि लोग अपने आहार में ग्रहण करने लगें तो न केवल खाद्य-संकट दूर हो जाय वरन् आपात्कालीन परिस्थितियों के लिए काफी अन्न की बचत करना भी सम्भव हो जाय।

शुद्धता और सात्विकता

त्यौहारों, व्रत और पर्वों पर हमारे यहाँ फलाहार या शाकाहार पर रहने का विधान है। यह विधान आहार की सात्विकता के मन पर पड़ने वाले सूक्ष्म प्रभाव को ध्यान में रखकर बनाया गया है। शाक और फलों में प्राकृतिक शुद्धता होती है, जिससे मन और बुद्धि में भी शुद्धता और सात्विकता की प्रवृति बढ़ती है। इस प्रकार की मनोभूति का उपलब्ध कर लेना मनुष्य जीवन की सफलता, सुख और सार्थकता के लिए कल्याणकारक ही माना गया है। अतएव किन्हीं विशेष व्रत या त्यौहारों के अतिरिक्त भी फलाहार और शाकाहार को जितना अधिक स्थान अपने आहार में दे सकें उतना ही अच्छा है।

स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन

फल और सब्जियों में एक प्रकार का रेशेदार गूदा होता है, वह पाचन क्रिया में अपने आम मददगार होता है इसलिए साग आसानी से न केवल पच जाते हैं वरन् पाचन क्रिया को भी उद्दीप्त करते हैं। इससे स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन मिलता है। सब्जियों में अनाज की अपेक्षा प्रोटीन का भाग भले ही कुछ कम हो पर इनसे मल नहीं बढ़ता। फलस्वरूप शरीर में स्फूर्ति, उत्साह, कर्मठता, प्रसन्नता, नीरोगिता रहती है। यह गुण दीर्घ जीवन और सुदृढ़ स्वास्थ्य के अचूक रामबाण उपाय हैं।

"कासाब्लांका—१७ जनवरी हज मोहम्मद बेन वशीर का, जिनके बारे में यह कहा जाता है कि वह दुनियाँ के सबसे अधिक उम्र वाले व्यक्ति थे, कल १६६ वर्ष की उम्र में निधन हो गया। उनका सबसे बड़ा पुत्र वाचिग जिसकी उम्र ११० वर्ष बताई जाती है, वे भी अपने पिता के समान ही स्वस्थ हैं। हल मोहम्मद बेन के अपने पीछे ३५ बेटे बेटी और ५२ पोते-पोतियाँ हैं। वह इतने वर्षों तक किस प्रकार जिये इसका रहस्य यहा बताया गया है कि वह सिर्फ उबली सब्जियाँ लेते थे। जीवन में उन्होंन न कभी शराब पी न सिगरेट।"

ऐसे अनेकों अधिक आयु वाले शाकाहारी व्यक्तियों के समाचार अखबारों में आया करते हैं। उन्हें पढ़ते तो हैं पर उपेक्षापूर्वक, मूल कारण की सम्भावनाओं पर कम विचार करते हैं। हमारे पुरखे प्रायः सभी शतायु होते थे इसका कारण भी उनके आहार में शाक और फलों का अधिक स्थान होना था। दुःख है कि अब वह पद्धति समाप्त सी हो गई और लोगों की अधिकतम आयु ६० वर्ष से भी कम रह गई है।

कम लागत, पूर्ण भोजन

आहारशास्त्रियों का कहना है कि यदि थोड़े से दूध की व्यवस्था हो जाय तो फल और शाक मनुष्य के पूर्ण भोजन का काम दे सकते हैं। हम अपने आहार की व्यवस्था इस सिद्धान्त के आधार पर करें तो हमारा भोजन थोड़ी लागत में तैयार हो सकता है। गरीब व्यक्ति भी आसानी से ऐसे आहार की व्यवस्था कर सकते हैं। आलू, शकरकन्द, लौकी, गाजर आदि के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भाव २ रुपये किलो से अधिक नहीं होते। एक किलो सब्जी दोनों समय के पूर्ण भोजन के लिए पर्याप्त है। पर यदि आटे, दाल की व्यवस्था करनी हो और एक व्यक्ति के लिए कम से कम आधा किलो आटा और १२५ ग्राम दाल आवश्यक हो तो उतने के लिए भी ५ रुपये पैसे खर्च करने पड़ेगे। लकड़ी आदि का कुल खर्च मिलाकर ६ रुपये से कम न पड़ेगा, जबकि शाकाहारी भोजन इससे आधे ३ रुपये में ही तैयार हो जायेगा समय और व्यवस्था भी बहुत थोड़ी करनी पड़ेगी, परिश्रम भी बहुत कम करना पड़ेगा।

दावत और प्रीतिभोज

खाद्य संकट बढ़े नहीं, इसके लिए सरकार ने बड़ी दावतों और भोजों पर पाबन्दी लगा दी है। अन्न बेकार न जाये इसके लिये इस प्रकार की कानूनी व्यवस्था उचित भी हो सकती है पर विवाहों तथा घरेलू उत्सवों पर होने वाले प्रीति-भोजों की शृंखला टूट जाय ऐसा पूर्णतया सम्भव नहीं दिखाई देता। इन अवसरों पर खोवे की बनी मिठाइयों और अनाज से बने हुए पकवानों की मात्रा घटाकर शाकाहारी व्यंजनों की मात्रा बढ़ा दी जायें तो दावतें सफल और शानदार हो सकती हैं। कम खर्च में अनेक तरह के व्यंजन परोसे जा सकते हैं और दावतों और प्रीतिभोजों का आकार भी आवश्यकतानुसार रखा जा सकता है। अन्न की बर्बादी का प्रश्न न उठे तो सरकारी हस्तक्षेप का आखिर प्रयोजन भी क्यों रहे ?

रुचि और स्वाद

चूँकि रुचि और स्वाद का अपना कोई पैमाना नहीं है, इसलिए सम्भव है कुछ दिन इस तरह के व्यञ्जन कम स्वादिष्ट जान पड़ें, पर यदि वे निरन्तर सभ्यास में आते रहें तो कुछ दिनों में उन्हीं में काफी स्वाद अनुभव किया जा सकता है। विभिन्न देशों के लोगों की स्वाद सम्बन्धी विभिन्न प्रकार की रुचियाँ होती हैं जो दूसरों के लिए मेल नहीं खातीं पर वे जिनके अभ्यास में आ गई होती हैं उन्हें काफी प्रिय होती हैं। अँग्रेज लोग चाकलेट और केवल शक्कर से बनी मिठाई-लेमन जूस बहुत पसन्द करते हैं, पर यदि वह किसी भारतीय बच्चे को दें वह उसे कड़ुवा कहकर थूक देगा। पाश्चात्य देशों में माँसाहार तथा प्याज आदि में लोगों को अधिक स्वाद आता है पर वे हमारे लिये घृणित वस्तुयें हैं। वहाँ लोग सब्जियों को केवल उबाल लेते हैं और वैसे ही थोड़े नमक से खा लेते हैं पर हमारे यहाँ उसे जब तक पूरी तरह चिकनाई और मसालों से तल नहीं लेते तब तक स्वादिष्ट नहीं मानते। इसलिए इन व्यञ्जनों में स्वाद को कोई मापदण्ड नहीं रखा जा सकता पर यदि इन्हें अपने आहार में पर्याप्त स्थान मिले तो यही सब कुछ दिन के अभ्यास से काफी रुचिकर और स्वादिष्ट किये जा सकते हैं।

शाकाहारी व्यञ्जन बनाना

विविध व्यंजनों के बनाने की जो विधियाँ प्रस्तुत की जा रही है, उनमें सामिग्री का औसत सामान्य रखा गया है। आवश्यकतानुसार कम या ज्यादा अनुपात में बनाने के लिये सामिग्री की तौल बढ़ाई जा सकती है। मेवा बुरकने के लिए उसकी कोई निश्चित मात्रा न रखी जायेगी। गृहिणियाँ उसकी व्यवस्था अपनी स्थिति और सुविधानुसार कर सकती हैं।

आलू के गुलाबजामुन

आलू आधा सेर, चीनी, पाव, दूध आधा सेर, एक छटाँक मैदा, बताशे, इलायची, खाने का सोड़ा और घी।

विधि

आलुओं को उबालकर उनका छिलका उतार दें और उसे कद्दूकस में कसकर गुँधे हुये आटे की तरह बनालें। गाँठें न रहें। फिर उसे दूध के साथ कड़ाही पर चढ़ा दें और कलछुल से चलाते रहें ताकि कड़ाही में आलू जलें नहीं। खोये के समान आलू कुछ गीले रहें तभी उन्हें उतारकर उसमें मैदा और खाने का सोड़ा या अरारोट और इलायची मिला लें। इसके बाद एक-एक बताशा बीच में रखकर गुलाबजामुन की गोलियाँ बना लें।

इस बीच चीनी में आधा सेर पानी डालकर दो तार की चासनी बनालें और दुबारा घी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डालकर कड़ाही आग पर चढ़ा लें। अब गोलियों को उसमें डालकर भून लें। जब वे हलके गुलाबी रंग के हो जायें, तो उन्हें निकालकर चासनी में डालते रहें। इस तरह सारी गोलियाँ पका लेनी चाहिये और उन्हें चासनी में तब तक डाले रखना चाहिये, जब तक चासनी के रस से रसगुल्ले भर न जायें। ठण्डे हो जाने पर उनमें गुलाब जल छिड़ककर खाने से यह गुलाबजामुन बड़े स्वादिष्ट लगते हैं।

आलू के दही बड़े

आलू एक सेर, अरारोट एक छटाँक, दही एक सेर तथा हरा धनियाँ, नमक, इलायची, कालीमिर्च, जीरा, घी आदि।

विधि

एक सेर देशी आलू को उबालकर उनके छिलके निकाल डालें और बिलकुल महीन पीस लें। फिर सब मसाले उसमें डालकर के आवश्यकतानुसार अरारोट मिलालें और उसे आटे की तरह गूँध लें। इसके बाद किसी चीनी मिट्टी, कलई के बर्तन में दही डालकर उसे अच्छी तरह मथकर उचित मात्रा में नमक और भुना हुआ जीरा मिला लें। अब आलू का कड़ा गुँधा हुआ गूदा जितना बड़ा-बड़ा बनाना हो उस अनुपात में निकालकर गोले बनाकर उन्हें पानी के सहारे चपटे गोलाकार बनालें और घी में हलके गुलाबी रंग की शक्ल में भूनकर दही में डालते जायें। इस तरह नमकीन दही बड़े तैयार हो जाते हैं।

आलू की रसपूरी

एक सेर आलू, चीनी तीन पाव, घी, पिस्ते की हवाई, एक छटाँक, अरारोट और अपनी सुविधानुसार कटा हुआ मेवा डालें।

विधि

आलू उबाल डालें और फिर उनका छिलका निकालकर उसे पीस लें। चीनी में पानी डालकर उसकी चासनी तैयार कर लें। अब कड़ाई में घी छोड़कर उसे आग पर चढ़ा दें। आँच अधिक तेज या मन्दी न रहे। आलू की गोली-सी बनाकर उसमें मेवा भरकार चिपटी कर लो और अरारोट के घोल में डुबो-डुबोकर उसे घी में डालते जायें और पक जाने पर उसे चासनी में डालते रहें। खाने से पहले इनमें इलायची, पिस्ता आदि बुरक कर थोड़ा गुलाबजल छिड़क लेना चाहिए। आलू के साथ थोड़ा-सा और खोया मिला लेने से रसपूरी और भी स्वादिष्ट बनती है।

मक्खन पाक आलू

आलू और दही, नमक, मिर्च, मसाला अपनी रुचि के अनुसार।

विधि

किसी चाकू से आलू के ऊपर का हलका वाला छिलका तराशकर निकाल दें और उनके छोटे-छोटे टुकड़े काट लें। इन सबकों एक छिछले बर्तन में डाल दें और उसमें मक्खन मिलाकर बर्तन को ढक दें और उसे हलकी आँच की आग पर चढ़ा दें। आलू लगने न पावें इसके लिये उन्हें बार-बार हिलाते रहें। धारे-धीरे वे फूटते जायेंगे और उनमें दही समाता चला जायेगा। आलू पक जाने पर उतार लें। नमक मसाले पहले या ऊपर से भी मिलाए जा सकते हैं।

आलू की टोकरी

आलू एक सेर, आधी छटाँक दालमोठ का मसाला, मूँगफली के तले हुए दाने और घी।

विधि

आलुओं को छीलकर कद्दूकस में कसकर लच्छे बना लें और उन्हें किसी साफ कपड़े में रखकर उनका पानी निचोड़ दें। फिर चाय छानने की छोटी और साफ छन्नी में इन लच्छों को भरकर उसे किसी कटोरी से दबादें जिससे आलू टोकरी की शक्ल में बदल जाते हैं अब छन्ने समेत आलुओं की टोकरी को आग में भून लें और भूनकर उसे छन्नी ठोंककर निकाल लें। इसके बाद उसमें मसाला लगे हुए मूँगफली के दाने भरकर परोसिए और खाइये।

आलू और प्याज

आलू, प्याज, दही और मसाले।

विधि

जितने आलू चाहें उन्हें बिना छिले लेकर आग में तब तक पकावें, जब तक वे नरम न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ ज़ायें। इसके बाद उनका छिलका उतारकर बारीक टुकड़ों में काटलें। फिर उन्हें किसी कम गहरे बर्तन में भुनने को रख दें और उस पर मक्खन से तला हुआ प्याज थोड़ा-थोड़ा छिड़क दें। अब उसे एक चूल्हे पर रखकर पकायें जब काला पड़ता दिखाई दे तो उसे उतार लें और खाने को परोसें।

आलू के पराठे

आलू को उबालकर उसमें थोड़ा-सा आटा तथा मैंथी, हरी मिर्च, हरा धनिया और नमक मिलाकर उसके पराठे या पूड़ियाँ बनाकर गर्म-गर्म पराठे दही के साथ खाने से स्वादिष्ट लगते हैं। बिना दही के भी खाये जा सकते हैं और मैंथी की जगह बथुआ आदि कोई अन्य हरी पत्ती का साग मिलाया जा सकता है।

आलू की बरफी

आधा सेर आलू को धीमी आँच में भूनकर उनके ऊपर का छिलका उतार लें। फिर बारीक भुर्ता बनाकर घी में भूनें। लाली आ जाने पर उतार लें। तीन पाव चीनी की चाशनी बनाकर उसमें भुर्ता डालदें और उसे साफ चम्मच से चलाते रहें। छोटी इलाइची पीसकर डालदें। मूँगफली के दाने, चिरौंजी, कच्चे नारियल और बादाम आदि मेवे क़ाटकर चासनी के साथ मिलालें तो बरफी और भी स्वादिष्ट होगी। जब भुर्ता जम जाय तो उसे थाली पर फैला दें और ठण्डा हो जाने पर उसकी कतली काटकर सबको खाने के लिए दें। आलू के स्थान पर शकरकन्द की भी बरफी बनाई जा सकती है। विधि यही है, आलू के स्थान पर शकरकन्द का प्रयोग करना चाहिए।

आलू का रायता

आलू को उबालकर छिलके उतार लीजिये। फिर उसे हाथों से मल डालिये। जीरा भूनकर और बारीक पीसकर दही में डाल दीजिये। उचित मात्रा में नमक और पिसी हुई मिर्च मिलाकर आलू उसी में डाल दीजिये, आपका रायता तैयार जायेगा।

आलू की टिकिया और पकौड़ी

आलू को उबालकर उसे मलकर आटे की तरह बना लीजिए और उसमें नमक, मिर्च, मसाला मिलाकर रख लीजिए। अब इसे टिकिया बनाकर तवे पर घी डालकर भूनिये। दोनों तरफ लाल-लाल पक जाने पर उसे चटनी के साथ गरम-गरम खाना और खिलाना चाहिए।

आलू के खुरमे

कच्चे आलुओं के छिलके उतारकर उसके पतले-पतले गोलाकार में ही टुकड़े काटकर उन्हें मिर्च, मसाला लगाकर सुखा लीजिए, सूख जाने पर उन्हें घी में भूनकर खाने के साथ परोसना चाहिये।

गाजर का हलुआ

एक सेर गाजर, आधा सेर दूध, एक पाव चीनी, आधा पाव घी, थोड़ी केसर और मेवे-सुविधानुसार।

विधि

गाजर को खूब धोकर साफ कर लीजिये फिर उसे कद्दूकस से कस लीजिए। कद्दूकस तैयार हो जाने पर दूध को छानकर कड़ाही में डाल दीजिये और उसी में गाजर मिलाकर मन्दी आँच पर पकने दीजिए। आँच तेज न करें अन्यथा दूध के उफन जाने का डर रहेगा। बीच-बीच उसे कलछुली से चलाते रहिये। जब गाजर आधे से अधिक पक जायें तो उसी में चीनी मिला दीजिए। बाद में जब दूध सूख जाय ओर गाजर भी पक जाय तो कड़ाही नीचे उतार लीजिये और उसका सारा माल एक साफ बर्तन में निकालकर कड़ाही को धो डालिये और उसे दुबारा आग पर चढ़ा दीजिये। थोड़ा घी डालकर जब वह गर्म हो जाये तो गाजर का हलुआ उसी में डालकर भून लीजिए। जब उसमें सोंधापन आ जाये तो उसमें मेवे और केसर मिलाकर उतार लीजिये और उसे थोड़ी देर तक ठण्डा होने दीजिए। इसके बाद थाली में निकालकर रख लीजिए और खाने के समय लोगों को परोसिये। एक दो दिन रखना पड़े तो उसमें चाँदी के वर्क भी लगाये जा सकते हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह हलुआ कब्ज और मस्तिष्क के लिये बहुत लाभकारी होता है।

गाजर की खीर

एक सेर गाजर, एक सेर दूध, आधा पाव चीनी, चिरौंजी, किसमिश, इलायची, नारियल आदि मेवा।

विधि

अच्छे लाल-लाल गाजर धोकर साफ कर लीजिए और उनका कद्दू-कस कर लीजिए। इधर एक कड़ाही में दूध चढ़ा दीजिए। जब दूध उबलने लगे तो उसमें गाजर का कद्दू- कस डाल दीजिए। गाजर पक जाय और दूध कुछ गाढ़ा हो जाए तो उसमें चीनी मिलाकर उतार लीजिए और उतरते ही उसमें मेवा बुरक दीजिए और ठंडी होने के लिए थोड़ी देर तक ढकी रहने दें इसके बाद खिलायें।

गाजर के समोसे

गाजरों को नमकीन उबलते हुए पानी में उबालें। पक जाने पर बाहर निकाल लें और ऊपर का छिलका निकालकर गूदे को आटे की तरह मिलालें और उसमें थोड़ा मक्खन और रुचि के अनुसार मसाला मिलाकर उसे कड़ाही में चढ़ाकर आधा घण्टा तक पकायें। पक जाने पर उसे उतार लें और उसमें अपनी रुचि की चटनी मिलाकर फिर चढ़ा दें इस बार १० मिनट में ही उतार लें और गर्म-गर्म प्रयोग में लायें।

गाजर की काँजी

एक सेर गाजर का कद्दू-कस, दो सेर पानी, आधा पाव राई, नमक, मिर्च रुचि के अनुसार और थोड़ी-सी अजवाइन। इन सबको मिलाकर किसी चीनी मिट्टी के ढक्कनदार बर्तन में रखदें। तीन दिन में खमीर उठ आएगा। बस काँजी तैयार है। बर्तन यदि मिट्टी का हो तो काँजी ठण्डी होती है। उसे काँच के गिलास या कप में निकालकर पीना चाहिए। पीतल के बर्तन प्रयोग न करें। पीने के लिए मिट्टी के कुल्हड़ प्रयोग किए जा सकते हैं।

गाजर का मुरब्बा

मुरब्बा के लिए गाजरों को अच्छी तरह से धोकर उनकी लम्बी-लम्बी फाँकें काटलें। फिर किसी बर्तन में पानी के साथ इन टुकड़ों को डालकर उबलने के लिए रख दें। पक जाने पर किसी झीनी टोकरी में उड़ेल दें जिससे पानी निकल जाय और गाजर के टुकड़े बचे रहें। इन्हें किसी साफ कपड़े पर फैलाकर इनका पानी सुखालें। अब चीनी की दो ताव की चाशनी तैयार करलें और उसे उतारकर उसमें गाजर और इलायची, केसर तथा केवड़ा आदि डालकर ठण्डा करलें। फिर उसे किसी चीनी मिट्टी के बड़े बर्तन में भरकर रख दें। चार-पाँच दिन में मुरब्बा बनकर तैयार हो जाता है। गाजर का मुरब्बा हृदय और मस्तिष्क को शक्ति को प्रदान करता है। गर्भवती स्त्रियों के लिए यह बहुत लाभदायक होता है।

लौकी की खीर

एक सेर लौकी (घिया), एक सेर दूध, आधा पाव चीनी, किशमिश, गरी, चिरौंजी, पिस्ता आदि मेवा।

विधि

लौकी का छिलका तथा उसके भीतर के बीज के साथ वाला गूदा निकालकर फेंक दें। तरकारी वाले हिस्से का कद्दू कसकर रख लें। दूध को आग पर चढ़ा दें। जब वह उबलने लगे तो उसमें लौकी का कद्दू-कस डाल दें। जब लौकी गल जाय तो उसमें चीनी डाल दें और उतारने के दो मिनट पूर्व इसमें मेवा डाल दें। खीर कुछ पतली ही रहे। यह खीर स्वादिष्ट भी होती है और स्वास्थ्यवर्द्धक भी। लौकी कड़वी न हो, इसकी पहले ही लौकी का एक टुकड़ा मुँह में रखकर जाँच कर लेनी चाहिये।

गुलाब के लच्छे

एक लौकी एक सेर चीनी, गुलाब-जल, एक छटाँक चूने का पानी।

विधि

लौकी को छीलकर कद्दूकस में लम्बाई में कसें जिससे लच्छे बड़े-बड़े निकल सकें। किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़े बर्तन में चूने के पानी के साथ लच्छे डाल दें और पाँच मिनट तक पड़े रहने दें। इसके बाद उसे निकालकर तीन-चार बार साफ पानी से धो लें। फिर एक बड़े पतीले में पानी भरकर उसके ऊपर साफ कपड़ा बाँध दें। जब पानी खौल जाय तो लौकी के लच्छे कपड़े पर रख दें। पाँच-छः मिनट बाद उतारकर लच्छे थाली में टेढ़ी करके रख दें। अब एक सेर चीनी में एक प्याला पानी डालकर चाशनी बनायें। जब चाशनी सूखने लगे तो उसमें लच्छे डालकर साफ कलछुल से चलायें। जब लच्छे सूखने लगें तो नीचे उतारकर कुछ देर चलाकर कड़ाही में से निकाल लें और गुलाब जल छिड़ककर गीले कपड़े से ढक दें। इसके बाद प्लेट में सजाकर खाने के लिए वितरित करें।

लौकी का कोफ्ता

पतले छिलके की लौकी एक सेर, बेसन आध पाव, हरी मिर्च, धनियाँ, मसाला और अदरख अपनी रुचि के, घी या तेल।

विधि

लौकी छीलकर कद्दूकस में कस लें। बीज और भीतर का गूदा न रहे। इसके बाद कद्दू-कस लौकी को पानी में डालकर उबाल लें। उबल आने पर चलनी में रखदें ताकि उसका सब पानी नीचे से निकल जाय। अब सूखा बेसन तवे या कड़ाही में हल्की आँच में भून लें। मसाला महीन पीसकर रख लें। अब लौकी का पानी हथेली से दबाकर निचोड़ दें तथा मसाला बेसन, नमक यह सब उसमें मिला लें। नीबू का रस निचोड़कर उसे खट्टा करना चाहें तो कर लें। अब घी कड़ाही आग पर चढ़ा दें और इस पिट्ठी की गोल-गोल टिकियाँ बनाकर उसमें भून लें और गरम-गरम खाने को परोसें।

लौकी का छिलका

लौकी के छिलके को उबली हुई चने या अरहर की दाल के साथ तड़का देकर छोंक लीजिए। नमक, हरा धनियाँ, मिर्च, अदरख तथा खटाई मिला दीजिये। यह छिलका खाने में भी स्वादिष्ट होता है साथ ही स्वास्थ्यवर्द्धक भी होता है। इसी तरह केले, करेले और कद्दू के छिलकों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

लौकी का रायता

आधा सेर लौकी को कद्दू-कस में कसकर उसे पानी के साथ उबाल लें। पक जाने पर चलनी में रखकर पसालें। १ सेर दही को किसी मर्तबान में मथकर उसमें भुना हुआ जीरा, नमक, मिर्च मिलाकर रखें। इसमें उबला हुआ लौकी का कद्दूकस मिला लें। इस रायते में हींग की बघार भी दी जा सकती है।

बथुए की कढ़ी

आधा किलो बथुआ, २ किलो दही, २०० ग्राम बेसन, हल्दी, जीरा, मैंथी, लाल मिर्च, अदरख, नमक, हींग और कच्ची घानी का तेल।

विधि

पहले बथुए को साफ पानी की बाल्टी में धो लें फिर उसे चने के साग की तरह काटलें और उसे भगोने में एक किलो पानी के साथ पकने के लिए आग पर चढ़ा दें। साग पक जाय तो उसे उतार लें और ठन्डा जो जाने पर उसे निचोड़कर सुखा लें। अब दही को किसी चीनी मिट्टी के बर्तन में छाछ की तरह मथलें और उसमें बेसन खूब अच्छी तरह मिलालें। दही में बेसन की गाठें न रहें। अदरक को काटकर रखलें। अब किसी कड़ाही में तेल डालकर आग में चढ़ायें। तेल गर्म हो जाने पर जीरा, मैंथी, अदरख और हींग को भूनकर ऊपर से हल्दी और धनियाँ छोड़ दें। थोड़ा पानी डालकर मसाले की सुगन्ध आने तक भूनें। मसाला भुन जाने पर बेसन घुली छाछ को कढ़ाही में छोड़ दें और धीरे-धीरे कलछुली से चलायें। अनुमान से नमक डालकर उसे हल्की आँच में पकायें। काफी देर तक आग में रखने पर जब कढ़ी अच्छी तरह से पक जाए तो उसे उतार लें। कढ़ी के सम्बन्ध में कहा जाता है कि उसे जितना पकाया जाय उतना ही स्वादिष्ट होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बथुए की कचौरी

आधा सेर बथुआ और आधा ही सेर आटा, लालमिर्च, हींग, आमचूर तथा घी।

विधि

बथुये को अच्छी तरह साफ करलें और उसे पानी में डालकर आग पर उबाल लें। पके हुए साग का पानी निचोड़कर उसे सिल या कुण्डी पर पीसलें। उसके बाद थोड़े से घी में मिर्च और हींग भूनें और ऊपर से बथुआ डालकर उसे अच्छी तरह भून लें। इसमें थोड़ा-सा अमचूर और नमक मिलाकर उतार लें। आटे में थोड़ा-सा घी और नमक डालकर कचौड़ियों का आटा गूधें और उसकी लोई काटकर यह बथुआ की पिठ्ठी भरकर छोटी-छोटी कचौड़ियाँ, कड़ाही में पकायें और उन्हें गर्म-गर्म खाने को परोसें। इसी तरह बथुये की बेढ़ई या पराठे भी बनाये जा सकते हैं।

बथुए की भूजी

बथुए को पहले पानी खूब अच्छी तरह से धो लें और उसे बारीक काट लें। भगोने में पानी डालकर बथुआ उबाल लें और ठण्डा हो जाने पर उसका पानी निचोड़ लें। कड़ाही चढ़ायें, घी डालकर उसमें हींग, जीरा, बादामी रंग हो जाने तक भूनें। ऊपर से मिर्च डालकर एक मिनट भूनें और बथुआ उसमें छौंक दें। थोड़ा-सा नमक डालकर और मन्द आँच में बथुये को भून लें। भूजी बन जाने पर नीचे उतार लें और ऊपर से इलायची तथा दालचीनी बुरक लें।

यह भुजिया इस प्रकार केवल बथुए की बनाई जाती है और आलू उबालकर उसके साथ भी बनाई जाती है, जो इससे अधिक स्वादिष्ट होती है।

बथुए का रायता

बथुये को अच्छी तरह धोकर साफ कर लें और मंद आँच में उबालकर पका लें। गल जाने पर नीचे उतार लें और ठन्डा होने पर निचोड़ लें। दही में थोड़ा पानी मिलाकर उसे मथ लें। दही मिट्टी या चीनी मिट्टी के बर्तन में रहे। अब बेसन, काला और सफेद जीरा, इलायची, राई, लाल मिर्च, काली मिर्च तथा हींग आदि को घी के साथ कड़ाही में भून लें और बारीक पीस लें। अब बथुआ सहित सब सामान मथे हुए दही में डालकर अच्छी तरह मिला दें और नमक छोड़ लें। बस बथुए का रायता तैयार हो गया।

मैंथी की भुजिया

मैंथी आधा किलो, आधा किलो बेसन, नमक मिर्च व हल्दी आदि।

विधि

मैंथी को साफ करके बारीक काट लें। फिर उसे बेसन के घोल के साथ मिला लें। बेसन और मैंथी मिला घोल गाढ़ा रहना चाहिए। कड़ाही में घी या तेल डालकर उसकी पकौड़ियाँ बनाइये। पकौड़ियाँ खानी हों तो कुछ करारी सेकिये अन्यथा कुछ कम सिकी रखना चाहिए। अब एक बटलोई या भगोने में हरा धनियाँ, टमाटर, हरी मिर्च, हींग, जीरा आदि का बघार देकर इन पकौड़ियों को डाल दीजिए थोड़ी देर में स्वादिष्ट भुजिया बनकर तैयार हो जायेगी।

मैंथी की कढ़ी

मैंथी उबालकर पीस लें। दही को अच्छी तरह फेंटकर बेसन और मैंथी मिलाकर एक घोल तैयार कर लीजिए, इसके बाद बथुये की कढ़ी बनाने की तरह इसकी भी कढ़ी बना लेनी चाहिए।

मैंथी के चीले और कचौड़ी

मैंथी को कुछ कम उबाल लें। उसे मोटी पीसकर बेसन के घोल में मिलाकर चीले का घोल तैयार कर लें। इसमें हरी मिर्च, हरा धनियाँ काटकर ऊपर से डाल दें। अब आप इन्हें तवे में डालकर चीलों की तरह सेक लें। चटनी के साथ खाने से यह स्वादिष्ट लगते हैं। कचौड़ी के लिये अथवा भरवा पराँठों के पिठ्ठी तैयार करनी पड़ेगी। इसके लिए उबली मैंथी को पीसकर उसमें मैंथी, जीरे आदि मसालों का बघार देकर भून लें। जब भुन जाय तो उसे कचौड़ी या पराँठों में भरिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके पहले बथुये का रायता बनाना बताया गया है। बथुये की जगह मैंथी का प्रयोग करके उसी विधि से मैंथी का रायता तैयार किया जा सकता है।

मटर का हलुआ

मटर २५० ग्राम, चीनी २५० ग्राम, घी २५० ग्राम, बादाम व पिस्ता एक-एक छटाँक, केशर व इलायची अनुमान से।

विधि

मटर के दानों को सिल पर काफी महीन पीस लें। कलईदार बर्तन में घी डालकर धीमी आँच में भूनिये। शक्कर की चाशनी बनाकर उसमें मटर डालिये और तब तक चलाइये जब तक चाशनी न सोख जाय और घी न निकलने लगे। अब सारा मेवा डालकर उतार लीजिए। मटर का हलुआ खाने में स्वादिष्ट, रुचिकर और स्वास्थ्यकर होता है। बादाम और पिस्ते का प्रतिबन्ध नहीं है। निर्धन व्यक्ति उसे न मिलायें केवल इलायची और चिरौंजी आदि मिलाकर बना सकते हैं।

मटर की टिकिया

उबले मटर के दाने निकालकर उन्हें सिल पर महीन पीस लीजिए। हरा धनियाँ हरी मिर्च काटकर मिला लीजिए। मटर की पिट्ठी में जब सब मसाला मिल जांय तो उसकी छोटी-छोटी टिकिया बनाकर तवे पर डालिये और उसके चारों ओर हल्का-हल्का घी या तेल डालकर उलट-पुलट कर सेककर चटनी के साथ गर्म-गर्म खाने के लिए दें। पीठी में जीरा, काली मिर्च, हल्दी तथा नमक मिला लेना चाहिए।

मटर-चूड़ा

आधा किलो चूड़ा, १ किलो मटर, १२५ ग्राम दूध, किशमिश, अदरख, हरी मिर्च, हरा धनियाँ, सूखा गरम मसाला, पिसा हुआ हल्दी और नमक।

विधि

मटर को कच्चा छीलकर दाने निकाल लें और उन्हें साफ बर्तन में रख लें। इसी तरह चूड़ा भी साफ कर लें और उसमें दूध डालकर मिला लें। ताकि चूड़ा नर्म पड़ जाय। अब कड़ाही चढ़ाइये और उसमें थोड़ा घी छोड़िये। घी के गरम होते ही जीरा, अदरख, मिर्च आदि छोंक डालकर पहले मटर को छोंक दीजिए और किसी बर्तन से कड़ाही को ढक दीजिये । तीन मिनट के बाद उसमें हल्दी और मसाला डालकर चलाइऐ। इसके बाद उसे दुबारा ढक दें और हल्की आँच पर पकने दें। जब मटर तीन चौथाई गल जाये तो उसमें चूड़ा डालकर कुछ देर तक चलाइए। इसी समय उसमें पहले का शेष घी भी डाल दीजिए। नमक, किशमिश, हरी मिर्च और हरा धनियाँ काटकर डाल दीजिए और उसे कलछुल से दो-तीन बार अच्छी तरह चलाकर फिर ढक दें और २ मिनट के बाद उतार लें। यह आपका मटर-चूड़ा तैयार हो गया।

मटर की सिमौरी

मटर के दाने निकालकर घी में हींग और जीरे का तड़का देकर छोंक दें। अन्दाज से नमक डालकर ढक दें। जब मटर आधा गल जाय तो नीचे उतारकर आमचूर मिलाकर महीन पीस डालें। अब मैदे में छटाँक भर घी का मोवन देकर उसे गरम पानी से गूँध लें। इसकी छोटे आकार की पतली पूड़ी बनाकर उसमें मटर की पीठी भर दें और ऊपर से दूसरी उसी आकार की पूरी से ढककर उन दोनों के किनारों को गुझिया की तरह गूँथ लें। इस तरह पहले सब समौरियाँ बनाकर रख लें। इसके बाद घी डालकर कड़ाही आग में चढ़ाकर इन्हें पकालें। यह सिमौरियाँ खाने में बड़ी स्वादिष्ट और स्वास्थ्य के लिए भी लाभदायक होती हैं। सिमौरी तथा समोसे में कोई अन्तर नहीं, केवल रूपान्तर होता है।

मटर का अचार

मटर का दाना १ किलो, तेल १२५ ग्राम, मिर्च, धनियाँ, जीरा, हल्दी, सौंफ और नमक आवश्यकतानुसार।

विधि

बटलोई या भगोने में पानी भरकर ऊपर से कोई साफ कपड़ा बाँध दें और उसके ऊपर मटर के दाने रखकर किसी पतले ढक्कन से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

ढक दें और उसे आग पर चढ़ा दें। आँच हल्की ही रहे ताकि भाप तेज न हो। इस तरह मटर को भाप से पकाया जाय। इसे यदि भाप-कुकर में पकाया जाय तो और भी अच्छा है। मटर जब गलने लगे तो उसे उतार लें और ठन्डा हो जाने पर उसमें मसाला मिला दें। ऊपर से हल्दी-तेल मिलाकर एक-दो दिन तक धूप में रखें इससे अचार तैयार हो जायेगा।

कटलेट

२५० ग्राम मटर का दाना, गाजर २०० ग्राम, आलू एक किलो, प्याज (इच्छा और रुचि होने पर) जीरा, हींग, नमक व मिर्च।

विधि

गाजर और प्याज के छोट-छोटे टुकड़े काटकर मटर में मिलालें और किसी बर्तन में घी, हींग व जीरे का बघार देकर छोंक दें। भली प्रकार पक जाने पर नीचे उतार लें। इसके बाद आलू उबाल लें और ठन्डा हो जाने पर उसे मसलकर इसी मटर वाले मिश्रण में मिलादें। छोटी-छोटी टिकिया बनाकर धीमी आँच में घी डालकर सेकें और चटनी मिलाकर खाने को दें। यह कटलेट काफी स्वादिष्ट होता है।

भरवाँ मूली

मोटी नरम मूली १ किलो, धनियाँ १ छटाँक, सौंफ आधा पाव, लाल मिर्च, जीरा, लोंग, बड़ी इलायची, दालचीनी, पुदीना, आमचूर, हींग, नमक और घी।

विधि

पहले सब मसालों को अलग-अलग घी के साथ भून लें और सिल पर बारीक-बारीक पीस लें। इसके बाद मूली को साफ करके उसे इस तरह चीरें कि एक टुकड़ा बाहर निकल आये जिसे बाद में ढक्कन की तरह बन्द किया जा सके। अब इन्हें पानी में डालकर उबाल लें और ठन्डा कर लें। फिर चिरे हुए भाग में मसाला भरकर उस टुकड़े से बन्द कर दें। कड़ाही में घी या तेल डालकर उन्हें धीमी आँच में खूब भून लें। भुन जाने पर नीचे उतार लें। इसे सब्जी की तरह अथवा दाल के साथ भी खाया जाता है।

सीताफल या काशीफल पाग

एक किलो पका काशीफल लेकर बिना छिलका उतारे हुये काट लें और पानी के साथ उबाल लें। उबल जाने पर पानी निचोड़ दें। अब कड़ाही में घी डालकर उसे ५ मिनट पकायें और उसके बाद ऊपर से दूध डाल दें। अपनी रुचि और सुविधानुसार चिरोंजी, किसमिश, पिस्ता आदि मेवा साफ करके रखें। जब दूध काफी गाढ़ा हो जाय और पाग दूध में अच्छी प्रकार घुल जाय तो उसमें मेवा डाल दें। चीनी डालकर नीचे उतार लें। ठन्डा हो जाने पर परोसकर खायें। चान्द्रायण व्रत अथवा उपवास के दिनों में इसका प्रयोग करने से बुद्धि में सात्विकता आती है। स्त्रियों के लिए काफी लाभदायक होता है।

शलजम का कटोरा

बड़े-बड़े शजलम, कच्ची गाजर, कसा हुआ गोला, घी।

विधि

शलजमों को छीलकर उन्हें तब तक उबालो जब तक वे नरम न हो जायें। उतारकर ठन्डा कर लो और बीच में छेद करके पोला कर लो। गाजर को कद्दू-कस कर लो और घी में तल लो। तले हुए गाजर शजलमों के पोले हिस्से में भर दे। ऊपर से कसा हुआ गोला रखकर मन्दी आँच में सेंक लें और गरम-गरम खाने को परोसें।

मूली की कचौड़ी

पहले मूली लेकर उन्हें अच्छी तरह साफ करके उबाल लें और कद्दूकस में कसलें। फिर लच्छों का पानी निचोड़कर किसी साफ बर्तन में रख लें। इसके बाद बेसन लेकर उसे घी के साथ धीमी आँच में लाल-लाल भून लें। बेसन की मात्रा मूली की तौल की आधी रहनी चाहिए। इसके बाद सौंफ, इलायची, लाल मिर्च, हरी मिर्च, हरा धनियाँ, अदरख, हींग और नमक पीसकर बेसन ओर मूली के लच्छों के साथ मिलालें। इस पिठ्ठी को मैदे या आटे की लोइयों में भरकर कचौड़ी बनायें और घी में गुलाबी रंग की पकालें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मूली का मुरब्बा

पहले मूली को पानी से अच्छी तरह साफ करके कद्दूकस में कस लीजिए। फिर एक बड़े बर्तन में पानी भरकर आग में चढ़ा दीजिए। जब पानी उबलने लगे तो मूली के कद्दू-कस लच्छे उसमें डाल दें और १५ मिनट तक पकने दें, इसके बाद उतार लें। अब चीनी की दो तार की चासनी बनालें और उसमें मूली के लच्छे निचोड़कर डाल दें और उसे आग पर ही पकने दें। जब दो उबाल आ जायें तो नीबू का रस निचोड़ दें और उसे पकने दें। अच्छी तरह पक जाने पर नीचे उतारें और ठन्डा हो जाने पर काँच या चीनी मिट्टी के मर्तबान में भरकर रखें।

पेठा

१ किलो पेठे का गूदा, १ किलो चीनी, फिटकरी आधी छटाँक, केवड़ा।

विधि

पेठे के बीज, छिलके और बीच का बेकार का गूदा निकालकर लम्बी-लम्बी फाँकें काटलें। इन्हें सुई से अच्छी तरह गोदकर पानी में छोड़ते जाइये। फिर फिटकरी सहित पानी में डालकर आग में चढ़ाइये और तीन उबाल आने तक पकाइये। इसके बाद उबले हुए पानी से पेठे को धोकर रख दें। अब चीनी की दो तार की चासनी बनालें और उसमें पेठे के टुकड़ों को डाल दें। जब चासनी गुच्छेदार हो जाय तब उसे ठन्डी कर लजिये और केवड़ा डालकर चलाइये। यह आपका स्वादिष्ट पेठा तैयार हो गया। पेठा मस्तिष्क को शीतलता प्रदान करता है।

टमाटर का मधुरस

एक किलो टमाटर, चीनी, मक्खन, कालीमिर्च और नमक।

विधि

टमाटर धोकर काट लें। किसी कलई के भगोने में डालकर पानी मिलालें और उसे आग पर धीमी आँच में तब तक पकावें जब तक टमाटर नर्म न हो जायें। नरम हो जाने पर उन्हें किसी छलनी में रगड़कर रस निकाल लो। अब मक्खन को पिघलायें और उस पर टमाटर का रस, नमक, कालीमिर्च और दो चम्मच चीनी मिलादें और उसे थोड़ी देर आग पर पकने दें। पक जाने पर उतार लें और गर्म-गर्म परोसें। इसे गाढ़ा रखना हो तो मक्खन के साथ तोले भर आटा भी मिला लेना चाहिए।

फूलगोभी

इसको पकाने के लिए ऐसी देगची लें जिस पर कसकर ढक्कन आ जाता हो। पानी डालकर थोड़ी चीनी अथवा नीबू का रस डाल दें ताकि फूलगोभी के सिरे सफेद रहें। इसे तब तक रौंधो जब तक गोभी नरम न पड़ जाय। इसके बाद काली मिर्च तथा नमक भी डाल दें। इसको परोसने के पहले इस पर या तो पिघला हुआ मक्खन छिड़क लें या मक्खन लगे पाव रोटी के छोटे-छोटे टुकड़े डाल लें।

बन्दगोभी और सेव-पाग

१ किलो कटी हुई पत्तागोभी , आधा किलो छिला और कटा हुआ सेव, एक औंस मक्खन, १२५ ग्राम प्याज, चीनी, काली मिर्च और नमक।

विधि

किसी भगोने में मक्खन पिघलावें। इसमें सेब और प्याज छौंककर पाँच मिनट तक पकने दें। आँच हलकी रहे। अब इसमें गोभी के तराशे हुए पत्ते डाल दें। थोड़ा-सा पानी डालकर नमक, कालीमिर्च और चीनी मिलाकर ढक दें और एक घंटे तक पकने दें। इसके बाद उतारकर गरम-गरम खाने के लिये परोसें। यह स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्द्धक होती है। जो न चाहें वे प्याज न मिलायें।

बैंगन का अचार

१ सेर बैंगन, १-१ छटाँक अदरख, मैंथी और राई, सूखा हुआ धनिया, सौंफ, कलौंजी, हींग, तेल डेढ़ पाव, नमक व मिर्च अन्दाज से, एक प्याला सिरका।

विधि

बैंगन के गोलगोल कतरे काटकर पानी के साथ उबाल लीजिए। इसके बाद उसे उतारकर कपड़े पर पानी सूखने के लिये फैला दें। अदरक को छीलकर पीस लें व राई भी पीस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लें। धनिया, मैंथी, हींग सूखे तवे पर भूनकर पीसें। अब तेल कढ़ाई में डालकर आग पर चढ़ायें और उसमें अदरख भूनें। फिर राई, मैंथी, धनिया हींग, नमक, मिर्च डालकर थोड़ी देर हिलायें फिर सिरका छोड़कर उतार लें। मसाला ठंडा होने पर बैंगन के टुकड़ों में लपेटकर मर्तबान में डालते जायें। बैंगन में पानी नहीं रहना चाहिये । दो-चार दिन धूप में रखकर काम में लावें। कलौंजी और सौंफ ज्यों का त्यों मिलाना चाहिए। यह अचार एक वर्ष तक खराब नहीं होता है।

सिंघाड़े के लड्डू

आधा किलो सिंघाड़े का आटा, एक छटाँक दूध, २५० ग्राम घी, ३०० ग्राम चीनी या बूरा, बादाम, किशमिश, चिरौंजी, पिस्ता आदि इच्छानुसार।

विधि

आटे में दूध मिलाकर मसलें और थोड़ी देर रखा रहने दें। घी डालकर कढ़ाई आग में रखें और उसमें सिंघाड़े का आटा डालकर सुनहरा भून लें। नीचे उतारकर चीनी और मेवा मिलाकर लड्डू बनालें।

केले की खीर

आधा किलो कच्चे केले, १।। किलो दूध, चीनी और सुविधानुसार बादाम, किशमिश, चिरौंची तथा केवड़ा।

विधि

केले को उबालकर छील लें और गूदे को पीस लें। अब दूध को उबालें और उसमें यह गूदा डाल दें। फिर धीमी आँच में उसे गाढ़ा होने दें तब तक मेवा काट लें और उसमें डालकर उतार लें। ठण्डा होने पर केवड़ा मिला दें। छोटी इलायची को भी पीसकर डाल सकते हैं।

केले के पकौड़े

कच्चे केले, बेसन, इमली या आमचूर, नमक, मिर्च, हल्दी, हरा धनिया, हरी मिर्च और तेल या घी।

विधि

केले को उबालकर गूदा हाथ से मसल लें। फिर बेसन को थोड़ा भून लें और उसे उतारकर केले का गूदा व मसाला सब मिलाकर फेंट लें। कड़ाही में घी डालकर इसकी गोलियाँ बनाकर सेंक लें। चटनी के साथ गर्म- गर्म खाना चाहिए।

कच्चे केले के दही-बड़े

केले की उबालकर अच्छी तरह मसल लें। गूदे में नमक, मिर्च, मसाला, जीरा व हरा धनिया मिलाकर फेंट लें ओर उसकी गोलियाँ बनाकर घी या तेल के साथ गुलाबी रंग का पकालें। दही को मथ लें और उसमें इन पकौड़ियों को डाल दें। दही में अन्दाज से नमक व मिर्च मिला दें। बस आपके स्वादिष्ट दही बड़े तैयार हैं।

आम की बरफी

अच्छे बड़े-बड़े कच्चे आम लेकर उनका कद्दू-कस कर लें। आम में रेशे न रहें। किसी कलईदार बर्तन में पानी उबालकर इन लच्छों को डालिए और तीन मिनट बाद यह पानी निकाल दीजिए और दूसरा पानी डालिये। उबलने पर दो मिनट लच्छे पानी में रखिए। इसके बाद उतारकर अलग करलें और लच्छों को किसी टोकरी में रखकर पानी निचोड़ लें। कढ़ाई में थोड़ा घी डालकर इन लच्छों को भी गुलाबी सा भूनें और उसमें खोया मिलाकर लगभग एक पाव चीनी की चासनी बनाकर इसमें डालदें और पिसी हुई छोटी इलायची, चिरौंजी, किसमिश, पिस्ता इत्यादि मेवे डालकर बर्फी जमालें और जम जाने पर उसकी बर्फी काट लें।

आम की पकौड़ी

आम को छीलकर छोटे-छोटे टुकड़े काट लें। बेसन में नमक, मिर्च, अजवाइन, गरम मसाला तथा थोड़ा-सा पानी मिलाकर उसे फेंट लें, फिर कढ़ाही में तेल डालकर चढ़ायें। कच्चे आम के टुकड़ों को बेसन में लपेटकर हलकी आँच में पकौड़ियाँ सेकें। लाल रंग की सिक जाने पर निकाल लें और चटनी बनाकर उसके साथ खायें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पके आम की कुलफी

दो सेर दूध को उबालने रख दें। गाढ़ा होकर एक सेर के लगभग रह जाये तो उतारकर ठंडा कर लें। पके हुए मीठे आमों को रस निकालकर दूध में मिलायें। इसमें अपने स्वाद के अनुसार चीनी तथा छोटी इलायची पीसकर मिला दें। कुछ मेवा को मिलाना चाहो तो वह भी डाल दें। अब उसे चम्मच से टीन के साँचों में भरकर ढक्कन के जोड़ों के ऊपर आटा लगा दें। जब आटा कुछ कड़ा हो जाये तो उन्हें किसी मिट्टी के बर्तन में ५-६ किलो बर्फ, नमक और थोड़ा-सा सोरा मिलाकर रखें। इन साँचों को रखकर हिलाते-डुलाते रहें। कुछ देर बाद एक साँचे को निकालकर उसे हिलाकर देखें कि कुलफी जम गई है या नहीं। जम जाने पर साँचों से निकालकर प्लेट में रखकर खायें।

आम का मुरब्बा

आमों को छीलकर के सलाई से गोद लें। फिर चूने के पानी में कुछ घण्टों के लिये रखें। इसके बाद चार-पाँच बार स्वच्छ पानी से धो डालें और चाकू से बड़े-बड़े टुकड़े तराश लें। चीनी की दो तार की चासनी बनाकर उसमें टुकड़े डाल दें, इससे चासनी कुछ पतली पड़ जायेगी अतएव उसे आँच पर ही पतली होने दें। दो तार की हो जाने पर उतारकर छोटी इलायची, एक तोला केशर, मीठा रङ्ग, किशमिश, बादाम, दालचीनी और लौंग मिला दें, ठंडा हो जाने पर किसी काँच के बर्तन में रखें। आम के गूदे और चीनी का क्रमशः ढाई और चार का अनुपात रहना चाहिए।

कच्चे आम का अचार

पहले आम को अच्छी तरह धोकर किसी साफ कपड़े से अच्छी तरह पोंछ लें। फिर किसी तेज धार के चाकू से गुठली समेत काट लें। टुकड़े इच्छानुसार लम्बे या चौखूटे काटें। अन्दर के बीज निकालकर फेंक दें। किसी चीनी मिट्टी के बर्तन में यह आम रख दें और उसमें थोड़ी हल्दी व नमक डालकर हिलावें और धूप में सूखने के लिये रख दें। जब पानी अच्छी तरह सूख जाये, तब उसमें काला जीरा, सौंफ, मिर्च पीसकर अन्दाज से मिला दें। दूसरे दिन तेल को अच्छी तरह गरम कर लें और उसमें दो-चार तेजपात डाल लें। फिर इसे अचार वाले बर्तन में तब तक भरें जब तक वह आमों की सतह से ऊपर न आ जाये। इसे कई बार बीच-बीच में भी धूप में रखते रहना चाहिए।

नीबू का मीठा अचार

पचास नीबू, आधा किलो चीनी, अजवायन, नमक व मिर्च।

विधि

पहले नीबू को साफ पानी से धोकर कपड़े पर सुखा लें। चीनी, अजवायन, नमक, पिसी मिर्च सब एक में मिला लें। अब इन नीबुओं में से तीस नीबू लेकर ऊपर से ऐसी चार फाँकें करें कि नीचे के हिस्से में चारों फाँकें जुड़ी रहें। इन फाँकों के बीच में चीनी मिला हुआ मसाला भरिये और उसे दबाकर किसी काँच के बर्तन में रखते जाइए। बर्तन का मुँह ढक्कन से बन्द कर एक दिन धूप में रखिए। दूसरे दिन शेष रहे नीबुओं का रस किसी काँच के प्याले में निचोड़कर छान लें और उसे अचार में छिड़ककर धूप में रख दें। जब तक अचार गल न जाए उसे रोज धूप में रखें। यह अचार काफी स्वादिष्ट होता है।

मिश्रित अचार

दो किलो कच्चे आम, एक किलो हरे करेले, आधा किलो कटहल, एक किलो भिण्डी, आधा किलो टिंडे, डेढ़ किलो सरसों का तेल, आधा किलो नमक, मैंथी २५० ग्राम, १२५ ग्राम सौंफ, हल्दी, जीरा, राई और कलौंजी अन्दाज से।

विधि

मसालों को पीसकर आधा किलो तेल में सान लें। सभी सब्जियों को धोकर के साफ कर लें। जिसका छिलका उतारना हो उनका छिलका साफ कर लें। आम और कटहल के छोटे-छोटे टुकड़े काट लो। शेष चीजों को चार भागों में चीरकर मसाला भर दें। मर्तबान या काँच का बर्तन लें और उसमें सबसे पहले टिंडे डालकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊपर से आम के टुकड़े रख दें। फिर करेले और उसके ऊपर भिंडी व कटहल के टुकड़े डाल दें और ऊपर से तेल भर दें। बारीक कपड़े से उसका मुँह बन्द कर दें और उसे दिन में धूप और रात में ओस में रखा रहने दें। आठ-दस दिन तक ऐसा करने से अचार तैयार हो जाता है।

सलाद

मौसम के अनुसार, अमरूद, केला, गाजर, टमाटर, ककड़ी, खीरा, सेब, अनानास, नासपाती आदि विभिन्न फलों के छोटे-छोटे टुकड़े काटकर उन्हें प्लेटों में सजा लेना चाहिए। ऊपर से नमक पिसा हुआ मसाला बुरककर खाने को देना चाहिए। प्रत्येक ऋतु में इस तरह के फलों का सलाद बनाना खाना चाहिए। एक समय भोजन और एक समय सलाद लेना पाचक क्रिया के लिए काफी लाभदायक होता है, इससे पेट साफ हो जाता है। कम-से-कम सप्ताह में एक या दो दिन भी एक समय सलाद ली जाय तो उससे पेट की पाचन क्रिया ठीक होती है और पेट को विश्राम मिलता है।

शजलम का अचार

शजलम २ किलो, सरसों का तेल ५०० ग्राम, लाल मिर्च ५० ग्राम, राई पिसी ५० ग्राम, गर्म मसाला पिसा २५ ग्राम, अदरक १०० ग्राम, लहसुन १०० ग्राम, गुड़ १०० ग्राम, सिरका २५० ग्राम, नमक अन्दाज से।

विधि

अच्छे मोटे ताजा शलजम लीजिए। छिलका उतारकर मोटे-मोटे टुकड़े कर लें। खौलते पानी में टुकड़ों को उबालें ओर नीचे उतारकर पानी निकाल दें और टुकड़ों को कपड़े पर सुखा लें। अदरक और लहसुन को साफ कर बारीक काटकर रखें । आग पर तेल खौलाएँ। शजलम के टुकड़ों को तल में तल लें। शेष बाकी बचे तेल में अदरक और शेष मसालों को हलका भूनकर नीचे उतार लीजिए। सिरके में गुड़ घोलें और छानकर रख लें। टुकड़ों को तेल मसाले में डालकर अच्छी तरह मिला लें। अब ऊपर से सिरका कड़ाही में छोड़िए और अचार को एक जानकर राई की बुरकनी देकर मिर्तबान में भरकर रख दें। अचार को कभी-कभी हिलाते रहें। साथ ही खाना आरम्भ कर दें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तन-मन स्वस्थ रहे, ऐसा आहार करें

जीवन विकास के लिए उपयुक्त आहार आवश्यक

अन्न को शास्त्रों में 'प्राण' की संज्ञा दी गई है। अन्न को प्राण कहने में न तो कोई अयुक्तता है और न अत्युक्ति। निःसन्देह वह प्राण ही है। भोजन के तत्वों से ही शरीर में जीवनी शक्ति का निर्माण होता है। उसी से माँस, रक्त, मज्जा, अस्थि तथा ओजवीर्य आदि का निर्माण हुआ करता है। भोजन के अभाव में इन आवश्यक तत्वों का निर्माण रुक जाये तो शरीर शीघ्र ही स्वत्वहीन होकर स्तब्ध हो जाय।

'अन्न' सर्व साधन रूप शरीर का आधार है। प्रत्येक मनुष्य तन, मन अथवा आत्मा से जो कुछ दिखाई देता है, उसका बहुत कुछ आधार हेतु उसका आहार ही है। जन्म काल से लेकर मृत्युपर्यन्त प्राणी का पालन, सम्वर्धन एवं अनुवर्धन आहार के आधार पर ही हुआ करता है। किसी का बलिष्ठ अथवा निर्बल होना, स्वस्थ अथवा अस्वस्थ होना बहुत अंशों तक भोजन पर ही निर्भर रहता है।

समस्त सृष्टि तथा हमारे जीवन के लिए भोजन का इतना महत्व होते हुए भी कितने व्यक्ति ऐसे होंगे जो प्राण रूप आहार के विषय में जानकारी रखते हों और उसके सम्बन्ध में सावधान रहते हों। संसार में दिखलाई देने वाले शारीरिक एवं मानसिक दोषों में अधिकांश का कारण आहार सम्बन्धी अज्ञान एवं असंयम ही है। जो भोजन शरीर को शक्ति और मन बुद्धि को प्रखरता प्रदान करता है, वही असंयमित अथवा अयुक्त होने पर उन्हें रोगी एवम् निस्तेज भी बना देता है। शारीरिक अथवा मानसिक विकृतियों को भोजन विषयक भूलों का ही परिणाम मानना चाहिये। अन्न दोष संसार के अन्य दोषों की जड़ है— "जैसा खाये अन्न वैसा बने मन" वाली कहावत से यही प्रतिध्वनित होता है कि मनुष्य की अच्छी-बुरी प्रवृत्तियों का जन्म एवं पालन अच्छे, बुरे आहार पर ही निर्भर है। निःसन्देह मनुष्य जिस प्रकार का राजसी, तामसी अथवा सात्विकी भोजन करता है, उसी प्रकार उसके गुणों एवम् स्वभाव का निर्माण होता है और जिनसे प्रेरित उसके कर्म भी वैसे ही हो जाते हैं फलतः कर्म के अनुसार ही मनुष्य का उत्थान-पतन हुआ करता है। जो मनुष्य इतने महत्वपूर्ण पदार्थ 'भोजन' के सम्बन्ध में अनभिज्ञ है अथवा असंयम बरतता है उसे बुद्धिमान नहीं कहा जा सकता। आध्यात्मिक उन्नति करने के लिए युक्ताहार विहार का नियम कड़ाई के साथ पालन करने के लिए कहा गया है, जो मनुष्य किसी भी क्षेत्र में स्वस्थ, सुन्दर, सौम्य एवं समुन्नत जीवनयापन करना चाहता है उसके लिए भोजन सम्बन्धी ज्ञान तथा उसका संयम बहुत आवश्यक है। भोजन के प्रति असंयम व्यक्ति अन्य किसी प्रकार के संयम का पालन नहीं कर सकता। भोजन का संयम अन्य इन्द्रियों के संयमों के पालन करने में बहुत कुछ सहायक होता है।

जीवन निर्माण के आधार भोजन सम्बन्धी अज्ञान कुछ कम खेद का विषय नहीं है। मनुष्य जो कुछ खाता है और जिसके बल पर जीता है, उसके विषय में 'क, ख' तक न जानना निःसन्देह लज्जा की बात है। कितने आश्चर्य का विषय है कि जो मनुष्य कपड़ों लत्तों, घर-मकान और देश-देशान्तर के विषय में बहुत कुछ जानता है या जानने के लिए उत्सुक रहता है, वह जीवन तत्व देने वाले भोजन के विषय में जरा भी नहीं जानता और न जानना चाहता है। इसी अज्ञान के कारण हमारी भोजन सम्बन्धी न जाने कितनी भ्रान्त धारणायें बन गई हैं। अनेक लोग यह यह समझते हैं कि जो भोजन जिव्हा को रुचिकर लगे, जिसमें दूध, दही, मक्खन आदि पौष्टिक पदार्थों का प्रचुर मात्रा में समावेश हो, मिर्च-मसाले इस मात्रा में पड़े हों जिन्हें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखकर ही मुँह में पानी आये वही भोजन सबसे अच्छा है। इसके विपरीत बहुत से लोग भोजन के नाम पर पापी पेट में जो कुछ माँस, घास, कूड़ा-कर्कट मिल जाये, डाल लेना ही आहार का उद्देश्य समझते हैं।

भोजन के विषय में यह दोनों मान्यताएँ भ्रमपूर्ण एवं हानिकारक हैं। भोजन का प्रयोजन न तो जिव्हा का स्वाद है और न पेट को पाटना। जो मसालेदार, चटपटे और तले-जले पदार्थों का सेवन करते हैं, उनकी पाचन शक्ति कमजोर हो जाती है और जो निस्सार एवं तत्व हीन भोजन से पेट को पाटते रहते हैं, उनका आमाशय शीघ्र ही अशक्त हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप दोनों मान्यताओं वालों को रोगों का शिकार बनना पड़ता है। रोग शरीर के भयानक शत्रु हैं—सभी जानते हैं—किन्तु ऐसा जानते हुए भी उनके मल-मूत्र कारक आहार सम्बन्धी त्रुटियों को दूर करने के लिए तत्पर होने को तैयार नहीं।

भोजन का एकमात्र उद्देश्य भूख निवृत्ति ही नहीं है, उसका मुख्य उद्देश्य आरोग्य एवं स्वास्थ्य ही है। जिस भोजन ने भूख को तो मिटा दिया किन्तु स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव डाला वह भोजन उपयुक्त भोजन नहीं माना जायेगा। उपयुक्त भोजन वही है, जिससे क्षुधा की निवृत्ति एवं स्वास्थ्य की वृद्धि हो।

विटामिनों की दृष्टि से हरे शाक तथा फल आदि ही स्वास्थ्य के लिए आवश्यक एवं उपयुक्त आहार हैं। इसके अतिरिक्त क्षार नामक आवश्यक तत्व भी फलों तथा शाकों से पाया जा सकता है। अनाज के छिलकों में भी यह तत्व वर्तमान रहता है किन्तु अज्ञानवश मनुष्य अधिकतर अनाजों को छील-पीसकर यह तत्व नष्ट कर देते हैं।

कहना न होगा कि प्रकृति जिस रूप में फलों, शाकों तथा अनाजों को पैदा और पकाया करती है, उसी रूप में ही वे मनुष्य के वास्तविक आहार हैं। उनको न तो अतिरिक्त पकाने अथवा उनमें नमक, शक्कर आदि मिलाने की आवश्यकता है। किन्तु मनुष्य का स्वभाव इतना बिगड़ गया है कि वह शाक-भाजियों तथा अन्न आदि को उनके प्रकृत रूप में नहीं खा सकता। इसके लिए यदि आहार को थोड़ा-सा हल्की आँच पर पका लिया जाये तब भी कोई विशेष हानि नहीं होती । किन्तु जब उनको बुरी तरह तला या जला डाला जाता है तो निश्चय ही उनके सारे तत्व नष्ट हो जाते हैं और वह आहार अयुक्ताहार हो जाता है। जहाँ तक सम्भव हो खाद्य पदार्थों को प्रकृत रूप में ही खाना चाहिये अथवा मंदी आँच या भाप पर थोड़ा-सा ही पकाना चाहिये। मिर्च, मसालों का प्रयोग निश्चय ही हानिकारक है इनका उपयोग तो बिलकुल करना ही नहीं चाहिए।

इन सब बातों का मुख्य तात्पर्य यह है कि मनुष्य के लिए उपयुक्त भोजन उसी को कहा जायेगा जिसके विटामिन तथा क्षार आदि तत्व सुरक्षित रहें, जो आसानी से पच जाये और जिसमें अधिक से अधिक सात्विक गुण हों। फल, शाक, मेवा, दूध आदि ही ऐसे पदार्थ हैं, जो मनुष्य के लिए स्वास्थ्यवर्धक आहार हैं।

इसके साथ ही भोजन के संयम में स्वल्प अथवा तृप्ति तक भोजन करना ही ठीक है, अधिक भोजन से मनुष्य में आलस्य, प्रमाद, शिथिलता आदि ऐसे आसुरी दोष आ जाते हैं, जिनसे न तो वह परिश्रमी रह पाता है और न सात्विक स्वभाव का। असात्विकता अथवा असुरता मनुष्य को पतन की ओर ही ले जाती है। काम, क्रोध आदि विचारों की प्रबलता भी असंयमित एवं अयुक्त आहार करने से ही होती है। यदि शरीर सब तरह से स्वस्थ एवं शुद्ध है तो मनुष्य का मन निश्चय ही सात्विक रहेगा। सात्विक मन एवं स्वस्थ शरीर के सम्पर्क से आत्मा का प्रसन्न तथा प्रमुदित रहना निश्चित है, जो कि एक दैवी लक्षण है जिसे भोजन के माध्यम से मनुष्य को प्राप्त करने का प्रयास करना ही चाहिए।

आहार चिकित्सा से कायाकल्प

शरीर आहार से बनता है यह एक सुविदित तथ्य है। मन को भी ग्यारहवीं इन्द्रिय कहा गया है। इस प्रकार मन भी शरीर का ही एक भाग हुआ। इस प्रकार आहार का स्तर जैसा भी होगा, शरीरगत स्वास्थ्य एवं सन्तुलन भी उससे प्रभावित होगा। व्याधियाँ जितनी आहार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के सात्विक मानसिक होने, पोषण कुपोषण के कारण होती हैं, उतनी जीवाणु विषाणुओं के कारण नहीं। इस प्रकार यदि आहार को ही मात्र साध लिया जाय तो परिपूर्ण रूप से स्वस्थ बने रहा जा सकता है। चिकित्सा के पीछे मूलभूत दर्शन यही है। तरह-तरह के सम्मिश्रणों से बचकर यदि एक समग्र आहार व्यक्ति विशेष के लिये सुझाया जा सके तो मल शोधन और बलवर्धन संभव है। इस सम्बन्ध में जानकारी का अभाव ही भ्रान्तियों को जन्म देता है। यदि ये भ्रान्तियाँ मिटाई जा सकें तो स्वास्थ्य के क्षेत्र में एक क्रान्ति संभव है।

आत्मिक प्रगति का विचार करते ही सर्वप्रथम आहार साधना की बात सामने आती है। स्वाध्याय, सत्संग, कथा-कीर्तन, धर्मानुष्ठानों की तरह आहार में सात्विकता-सदाशयता के समावेश को-आहार कल्प को भी आध्यात्मिक उत्कर्ष के अनिवार्य आधारों में सम्मिलित किया गया है। यह प्रयोग प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में यदा-कदा चलते रहते हैं पर जिस मनोभूमि में, तप-तितीक्षा युक्त वातावरण में यह कल्प साधना की जाती है वह कितनी फलदायी होती है, यह वे जानते हैं जो एक माह एक ही आहार पर रहे, स्वयं को बदलकर रहे। ऐसा परिवर्तन जो किसी और औषधि से संभव नहीं, कायाकल्प के तुल्य ही जिसे ठहराया जा सकता है, मात्र आहार साधना की ही फलश्रुति है।

इस कल्प साधना में धर्मानुष्ठानों से भी अधिक आहार नियमन पर ध्यान दिया गया है। आहार निग्रह के उपरांत मनोनिग्रह कठिन नहीं है। आहार के विभिन्न कल्पों में फल, शाकादि वर्ग, अन्नों के अंकुरित भाग, रस द्रव्य यथा दूध-मट्ठा, फलों के रस आदि के द्वारा शरीर शोधन और बल पोषण का उल्लेख किया जाता है। चरक, सुश्रूत, प्रभृति ऋषियों ने अनेकानेक औषधि कल्पों का भी शरीर शोधन एवं जीवनी शक्तिवर्धन हेतु विधान बनाया है। पर यहाँ उनका उल्लेख विषयान्तर होगा। आहार चिकित्सा को भी एक आन्दोलन के रूप में प्रज्ञा संस्थानों माध्यम से चलाया जाता है, इसी की चर्चा यहाँ संक्षेप में की जा रही है। विस्तार से उसका विवेचन अगले दिनों इस विषय पर प्रकाशित होने वाली पुस्तक में किया जा रहा है। सभी नियुक्त कार्यकर्त्ताओं या अगले दिनों प्रशिक्षण हेतु वाले बालों प्रज्ञा परिजनों को एकौषधि विज्ञान की तरह, एक ही आहार की चिकित्सा में भी पारंगत किया जा रहा है।

आहार चिकित्सा में प्रमुख सिद्धान्त एक ही है। भाँति-भाँति के मिश्रणों से बचा जाय, प्राकृतिक आहार को ही साधक की प्रकृति के अनुरूप दिया जाय। धातु परिशोधन व बल पुष्टि के लिये इससे बढ़कर और कोई साधन नहीं। एक ही आधार से सन्तोष कर उसे सजीव एवं प्राकृतिक रूप में लिया जाय तो उसके चमत्कारी परिणाम होते हैं। वन में विचरण करने वाले, प्रकृति के सम्पर्क में रहने वाले पशु-पक्षी कहाँ मसालेदार भोजन खाते हैं, वे कभी अस्वस्थ होते देखे नहीं जाते। आहार शास्त्रियों ने मनुष्य के लिए सर्वश्रेष्ठ भोजन फल निर्धारण किया है। इनसे अधिक लाभदायक शीघ्र पचने वाला, जीवनी शक्ति वर्धक शुद्ध रक्त बढ़ाने वाला और कोई पदार्थ प्रकृति जगत में नहीं है। फलों में प्रमुख है आम, खरबूजा, पपीता, खजूर, अमरूद, अंगूर, अनन्नास, सेव, नख, चीकू, शहतूत, केला, नारंगी एवं मौसमी।

इनके बाद बारी आती है शाक तरकारियों की। ये सजीव तो हैं पर स्वादेन्द्रिय के अनुकूल बहुसंख्या नहीं होती। अपने प्राकृतिक रूप में खाने योग्य कम ही होती है। लौकी, तोरई, रतालू, टिण्डे कच्चे नहीं खाए जाते। इन्हें आग पर पकाने की आवश्यकता पड़ती है। टमाटर, गाजर, मूली, खीरा, ककड़ी आदि ऐसे हैं, जिन्हें कच्चा भी सलाद के रूप में खाया जा सकता है।

सूखे मेवे बलवर्धक शक्तिदायक तो होते हैं पर सुपाच्य नहीं होते। पाचन में गरिष्ठ तथा सबके लिये सुलभ न होने के कारण इन्हें खाया जाना अपनी चिकित्सा पद्धति के अनुसार उचित नहीं है। दूसरे परिपूर्ण आहार होते हुए भी किसी एक पर पूरी तरह रहना शरीर विज्ञान की दृष्टि से भी संगतियुक्त नहीं है। सूखे पदार्थों का रस नष्ट हो जाने के कारण वे उतने लाभदायक भी नहीं रहते। इनकी तुलना में हरे अन्न अच्छे हैं। चना, मटर, बाजरा, ज्वार, गेहूँ आदि भिगोकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंकुरित कर कच्ची अवस्था में या हल्का पका-कर खाये जायें तो बड़े लाभदायक होते हैं। इनके अतिरिक्त दूब, गेहूँ के जवारे, बरसीम अपने आप में परिपूर्ण हैं। ऐसे उदाहरण विद्यमान हैं कि इनमें से कोई एक पर रहकर व्यक्तियों ने अवधि विशेष काटी और अभूतपूर्व परिवर्तन अपने अन्दर अनुभव किया। अनुकूल पड़ने पर दूध, दही, मट्ठा का भी कल्प किया जा सकता है।

'दुग्ध कल्प' की चर्चा सर्वाधिक होती रहती है। यह सर्व सुलभ है भी। पर मात्र दूध पर एक माह तक बने रहने के लिये साधक की प्रकृति का उसके अनुकूल होना जरूरी है। द्रव्य के प्रयोग की एक सामान्य प्रतिक्रिया है-कोष्ठबद्धता। इसका ध्यान रखते हुए ही निर्धारण किया है कि दुग्ध पर रह सकने की स्थिति व्यक्ति की है या नहीं। पाश्चात्य देशों में तो दुग्ध कल्प का प्रचलन अब बढ़ता ही जा रहा है। प्रतिपादन यह है कि सभी रोग किसी आवश्यक तत्व, खनिज या विटामिनों की कमी के कारण होते हैं। हृदय रोग के रोगियों व मस्तिष्कीय रक्त स्राव के गम्भीर मरीजों को चिकित्सक महीनों तक दूध पर रखते हैं।

उसके लिए गाय का ताजा दूध ही लिया जाय। धीमी आँच पर पकाकर दो-तीन उबाल देकर ठण्डा किया दूध पिया जाय। एक दिन पूर्व उपवास, फिर कल्प का आरम्भ मात्र थोड़ी चीनी डालकर एक बार में पावभर से आधा किलो तक लेते हुए दिन भर में अपनी-अपनी पाचन शक्ति के अनुसार ५ किलो तक दूध लिया जा सकता है। धीरे-धीरे चम्मच से स्वाद लेते हुए दूध पिया जाय।

मट्ठा या दही कल्प सभी को अनुकूल नहीं पड़ता। फिर भी जहाँ ऐसा लगे कि निभाया जा सकता है, वहाँ इसे भी किया जा सकता है। फलों में सबके लिये सुलभ फल है अमरूद, पपीता, खरबूजा आम व केला। इन्हें संपूर्ण रूप से गूदे के रूप में लिया जा सकता हैं। सेव को सब ले नहीं सकते, फिर भी जो मात्र इसी पर रहना चाहें, उसे उबालकर सुपाच्य बनाकर छिलका निकालकर खायें। इसी प्रकार अमरूद के बीज भाग को अलग कर मात्र गूदे को धीरे-धीरे चबाकर लेना चाहिये। रस वाले सभी फल महँगे होने से तथा रस की मात्रा पेट भरने योग्य न होने से परिपूर्ण आहार की भूमिका नहीं निभा पाने पर उस पर कोई बन्धन नहीं है। हर बार थोड़ा-थोड़ा रस चम्मच से पिया जाय। एक साथ अधिक ले लेने से हानि की संभावना अधिक है। आम का फल मृदुरेचक है। आमाशय व आँतों की सफाई, रस शोधक व बलवर्धन के लिये इसे श्रेष्ठतम माना जाता है। फल मौसम के अनुकूल चुने जायँ व पूरी तैयारी के साथ शरीर शोधन की यह तपश्चर्या की जाय।

बथुआ, पालक, मैंथी चौलाई, लौकी, तोरई ककड़ी, खीरा ऐसी तरकारियाँ हैं, जिन्हें उबालकर लेने पर तथा स्वाद के लिये ऊपर से नमक आदि कम से कम प्रयुक्त करने पर ये शरीर शोधन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। ये सब्जियाँ अपने आप में समग्र हैं। इनमें सभी तत्व प्रचुर मात्रा में हैं।

कल्प हेतु अंकुरित अन्न भी चुने जा सकते हैं। गेहूँ, चना, मूँग इन्हीं में आते हैं। इन्हें बाद में थोड़ा भूनकर भी लिया जा सकता है। कल्प छोड़ते समय सामान्य नियम एक ही है। धीरे-धीरे नियमित आहार पर आया जाय। शरीर को इस योग्य बनाना कि सामान्य आहार पचा सकें। यह तभी संभव है, जब धीरे-धीरे कल्पावधि से दालों के पानी, मात्र दलिया तदुपरान्त सब्जी फिर परिपूर्ण आहार इस प्रकार परिवर्तन लाया जाय।

भोजन तो ठीक प्रकार से करें

कुछ वर्षों पूर्व ही रूस के एक विख्यात मनोवैज्ञानिक पावलाव ने जानवरों के भोजन पर कुछ प्रयोग किये और बड़े आश्चर्यजनक परिणामों पर पहुँचे। उन्होंने कुछ बिल्लियों पर प्रयोग किया। बिल्ली को भोजन दिया गया और वैज्ञानिक यन्त्रों द्वारा यह जानने की कोशिश की गयी कि भोजन करते समय तथा उसके बाद वह आहार कैसे पाचन संस्थान में पहुँचा और उस पर शरीर की क्या प्रतिक्रिया हुई। जैसे ही बिल्ली के पेट में भोजन पहुँचा पाचन संस्थान ने पचाने वाले रस छोड़े, तभी एक कुत्ते को भी उस कमरे में लाया गया। बिल्ली, कुत्ते को देख कर डर गयी और वह खाना छोड़कर अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीवन रक्षा के लिए इधर-उधर ताकने लगी। फिर कुत्ते को बाहर निकाल दिया गया। बिल्ली भोजन तो करने लगी थी परन्तु उसके पाचन तन्त्र से जो एन्जाइम्स छूटने लगे थे वे बंद हो गये। यन्त्रों द्वारा पता चला कि कुत्ते के अन्दर आते ही पेट ने रस छोड़ना बन्द करा दिया था और यह स्थिति छः घण्टे बाद तक बनी रही थी। यह इसलिए हुआ कि कुत्ते के आते ही बिल्ली चिन्ता और भय में पड़ गयी थी तथा चिन्ता और भय के मनोवेगों का प्रभाव उसके पेट पर हुआ और पेट ने पाचक रस मिलाना बन्द कर दिया।

पावलाव इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इन दाहकारी मनोवेगों का कुप्रभाव मनुष्य के स्वास्थ्य और जीवन पर भी बड़ा बुरा पड़ता है। उसे यह जानकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि जब बिल्ली पर यह गुजरती है तो फिर मनुष्य का क्या होता होगा, जो चौबीसों घण्टों चिन्ता, भय, क्लेश, ईर्ष्या, द्वेष और उतावली में डूबा रहता है। शरीर व्यवस्था का थोड़ा बहुत अन्तर होने से इस प्रक्रिया में थोड़ा कम-ज्यादा अन्तर भले ही हो परन्तु मनःस्थिति का भोजन पर अवश्य प्रभाव पड़ता है।

यह बात उस स्थिति के अनुभवों से स्वयं ही सिद्ध होती है, जब मनुष्य भोजन करते समय बहुत ही चिन्ताकुल तथा दुःखी हो। इन मनोभावों की प्रबलता में मनुष्य का जी ही नहीं होता भोजन करने का। मनोभावों की प्रबल दशा में शरीर की माँग ही नहीं होती कि वह भोजन करे। लेकिन थोड़े बहुत अन्तर से चौबीसों घण्टे यही बात रहती है कि हम जो भोजन करते हैं और जिस मनःस्थिति में रहते हुए करते हैं वह मनःस्थिति किये गये भोजन को पचाने में बाधक ही बनती है सहायक नहीं।

लम्बे समय से चली आ रही मनुष्य की स्थिति ने शायद पाचन व्यवस्था पर भार डाल दिया हो लेकिन यह बिल्कुल भी सम्भव नहीं है कि वह भोजन समुचित रूप से पच जाता हो। यही कारण है कि मनुष्य बार-बार बीमार पड़ता है और उसे बार-बार डॉक्टरों की आवश्यकता पड़ती है क्योंकि भोजन जो एक प्रार्थनापूर्ण प्रक्रिया है, प्रभु का प्रसाद समझकर ग्रहण क्रिया गया आहार है। वह यदि गलत ढंग से लिया जा रहा है तो अपना वांछनीय प्रभाव नहीं उत्पन्न कर सकता और परिणाम में लाभदायक होने की अपेक्षा हारिकारक ही ज्यादा सिद्ध होगा। दुनिया के लगभग सभी चिकित्सकों का यह मत है कि बीमारियों का कारण गलत ढंग से किया गया भोजन ही है।

भारतीय धर्मशास्त्रों में मनीषियों ने इसी कारण बड़ा युक्तिपूर्ण नियम बनाया है कि—भोजन प्रसन्नतापूर्वक, आनन्दित होकर, धीरे-धीरे भगवान का प्रसाद मानकर ही किया जाना चाहिए। यह एक ऐसी क्रिया है जिसे करते समय मनःस्थिति जितनी ही अधिक आनन्दपूर्ण और उल्लासपूर्ण होगी उतनी ही हितकर होगी। परन्तु अधिकांश मनुष्य तो हिंसक भोजन ही करते हैं। प्रख्यात दार्शनिक हार्नोव का कहना है कि—हिंसक भोजन का एकमात्र अर्थ माँसाहारी भोजन करना ही नहीं ही, हिंसक भोजन यह भी है कि कोई आदमी उस स्थिति में भोजन कर रहा है, जबकि उसकी भावदशा भोजन के लिए तैयार नहीं है। वह क्रोध में है, चिन्ता में है और ईर्ष्या में है तो वह माँसाहार से भी ज्यादा हिंसक है। जब किसी और प्राणी का माँस लेकर भोजन किया जाता है, तब वह तो हिंसक भोजन है ही, लेकिन जब चिन्ता और दुःख में उसका अपना ही माँस अन्दर जलता है, तब वह जो भोजन कर रहा है, वह और भी अधिक हिंसा है।

भोजन के सम्बन्ध में एक और आश्चर्य-जनक बात एक प्रख्यात डॉक्टर केनेथवाकर ने कही है—"लोग जो भोजन करते हैं उसमें से आधे भोजन से उनका पेट भरता है और आधे भोजन से डॉक्टरों की जेबें भरती हैं। अगर वे आधा भोजन ही करें तो वे बीमार ही नहीं पड़ेंगे और न ही उन्हें कभी डॉक्टरों के पास जाने की जरूरत पड़ेगी।' पढ़ने, सुनने में यह बात आश्चर्य भरी है परन्तु है बिल्कुल सच। निरीक्षणात्मक दृष्टिकोण से यदि हम अपने द्वारा ग्रहण किये जाने वाले आहार के सम्बन्ध में सोचें तो आसानी से यह पता चल जायेगा कि जो भोजन हम कर रहे हैं और जितनी मात्रा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में कर रहे हैं तथा जिस प्रकार का कर रहे हैं—वह हमारे स्वास्थ्य के लिए हितकारी कम और हानिकारक ही ज्यादा सिद्ध होगा।

यद्यपि कुछ लोग भोजन न मिलने से मरते हैं तो उनसे अधिक संख्या ऐसे लोगों की है जो अतिभोजन के कारण मरते हैं। वैज्ञानिक प्रयोगों द्वारा यह सिद्ध हो चुका है कि कोई भी व्यक्ति बिना भोजन किये तीन माह तक आसानी से जीवन चला सकता है। भारतीय तपस्वियों और योगियों ने तो आत्म-प्रयोगों द्वारा इस क्षेत्र में मनुष्य शरीर की सामर्थ्य और क्षमता को और भी अधिक उच्च सिद्ध किया है, परन्तु एक साधारण व्यक्ति विज्ञान की दृष्टि से तीन माह तक बिना किसी बाधा के बिना भोजन किये स्वस्थ और नीरोग रह सकता है। लेकिन कोई व्यक्ति तीन माह तक नियमित रूप से अति भोजन करे तो किसी भी स्थिति में जीवित न बचेगा। सौभाग्य से यदि जिन्दा रह भी जाय तो मृत व्यक्ति की तरह।

अति भोजन के साथ-साथ एक और दोष है हमारी आहार पद्धति में। हम जो भोजन करते हैं शरीर की आवश्यकता को दृष्टिगत रख कर नहीं करते। थाली में सजे विभिन्न पकवान, तीखे, चरपरे, खट्टे, मीठे, तेज जले-भुने खाद्य पदार्थ शरीर को स्वस्थ रखने की अपेक्षा हमें रुग्ण और बीमार ही बनाते हैं। हमारी भोजन की थाली में आधे से अधिक पदार्थ जहरीले होते हैं। हम जानते भी हैं कि इन पदार्थों का उपयोग शरीर व्यवस्था में किसी भी प्रकार सहायक नहीं है फिर भी उनका प्रयोग करते चलते हैं—महज स्वाद के कारण। महज स्वाद के कारण किया गया भोजन, उसके गुण-दोष को बिना ध्यान में रखकर किया गया भोजन मनुष्य के स्वास्थ्य के लिए किसी भी प्रकार हितकारक नहीं हो सकता, वह जहर का ही काम करेगा और जहर भी ऐसा जो व्यक्ति के शरीर में धीर-धीरे रमता है और बहुत दिनों बाद अपना घातक कुप्रभाव बताता है। बन्दूक की गोली या जहर की शीशी कुछ क्षणों में थोड़े से समय में ही जीवन का अन्त कर देती हैं। परन्तु स्वेच्छा से ग्रहण किया गया इस प्रकार का विष व्यक्ति की घुट-घुट कर हत्या करता है। उसे तड़पा-तड़पा कर मारता है। भोजन की यह दूषित प्रक्रिया मनुष्य शरीर को खोखला और कमजोर ही बनाती है। इस प्रक्रिया का एकदम विपरीत परिणाम होता है। भोजन जब कि स्वास्थ्य और शक्ति के लिए ही किया जाता है, रोग और बीमारी लाने लगे तो जीवन कैसे बच सकेगा ? इसकी कोई सम्भावना ही नहीं है।

अतएव भोजन के सम्बन्ध में इन दो-तीन मोटी-मोटी साधारण किन्तु अति महत्वपूर्ण बातों को ध्यान में रखा जाय तो शरीर और जीवन के लिए आहार का प्रयोजन भली-भाँति पूरा हो सकता है। कुछ ही समय तक इन आवश्यक बातों का ध्यान रखने से अनुभव किया जा सकता है कि हमारी वर्तमान भोजन प्रणाली कितनी दोषयुक्त और अस्वास्थ्यकारी है। पाश्चात्य देशों में इस दिशा में जो खोजें की गयी हैं, वे भी भारतीय धर्म दर्शन के भोजन सम्बन्धी सिद्धान्तों की ही पुष्टि और समर्थन करती हैं।

आधुनिक सभ्यता का अभिशाप

वास्तव में पिछले सौ-दो सौ वर्ष के भीतर सभ्यता की वृद्धि के नाम हर हमारे खान-पान में जो परिवर्तन हुए हैं, वे वरदान की बजाय शाप ही सिद्ध हुए हैं। चाहे इस बीच में हमने लिखने-पढ़ने और शिल्प तथा उद्योग-धन्धों में क्रान्तिकारी प्रगति की हो, पर रहन-सहन और खान-पान में जो परिवर्तन हुए हैं, वे कभी शुभ अथवा बुद्धिमत्ता के प्रमाण नहीं माने जा सकते हैं। उस समय जब हम अपना आटा घर की चक्की पर पीसकर मोटी रोटी बनाकर खा लेते थे और शाक-तरकारी के नाम पर दस-पाँच तरह के हरे शाक या मामूली तरकारियाँ ही मिल पाती थीं, अन्यथा छाछ, दूध आदि से ही काम चला लेना पड़ता था, तब हम जितने कार्यक्षम रहते और वैद्य हकीमों के पास हमको जितना कम जाने की जरूरत पड़ती थी, इस समय हमारी हालत उससे बहुत बदतर हो रही है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आजकल एक तरफ डाक्टरों और दवाओं की संख्या बहुत बढ़ती जा रही है और दूसरी ओर रोगों में भी उतनी ही अधिकता हो रही है। वास्तव में यह इस युग की एक विचित्र परस्पर-विरोधी स्थिति है कि एक ओर डाक्टर इतने कुशल होते जा रहे हैं कि वे हृदय और फेफड़े को भी काटकर फिर से ठीक कर देते हैं। ऐसे-ऐसे इन्जेक्शन निकल आये हैं जो मृतप्राय को जिन्दा कर देते हैं और अस्पतालों और डाक्टरों की दुकानों पर मरीजों की भीड़ दिन दूनी रात चौगुनी होती जाती है। इससे हम इसी स्पष्ट निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि कृत्रिम जीवन में चाहे कितनी भी चमक-दमक क्यों न हो उसका परिणाम कभी अच्छा नहीं हो सकता। आधुनिक योरोपीय सभयता की देन का चाहे जितना ढिंढोरा पीटा जाय, पर वास्तव में उसने हजारों जातियों और करोड़ों व्यक्तियों का जीवन चौपट करके उनको सब तरह से दुःखी और अशान्त बना दिया है। अमरीका के रेड इन्डियन, अफ्रीका के हवशी, आस्ट्रेलिया के मूल निवासी, भारत की ग्रामीण जनता के जो लोग इस सभ्यता के संसर्ग में आने से पहले सुदृढ़ स्वस्थ, शक्तिशाली दीर्घायु, बड़ा डील-डौल आदि विशेषताओं से युक्त थे, वे अब निर्बल, रोगी और कार्य शक्ति में पहले की अपेक्षा बहुत न्यून दिखाई पड़ते हैं। ऐसे परिवर्तनों का उदाहरण देते हुए एक बार होनोलूलू (जापान के पास वाले हवाई द्वीप के एक निष्पक्ष ईसाई पादरी ने लिखा था—

"योरोप निवासियों के आने के पहले यहाँ के निवासी 'पोईपर' (मोटे अन्न का बना जातीय भोजन) पर निर्वाह करते थे, साथ में केले आदि फल खा लेते थे तथा पीने में केवल शुद्ध जल का व्यवहार करते थे। वे जब इस प्रकार साधारण प्राकृतिक भोजन करते थे, उनके डील-डौल बढ़े होते थे और शरीर में ताकत भी खूब होती थी। जब योरोप के निवासी आये तो उन्होंने कहना शुरू किया कि केवल माँस और मदिरा से ताकत मिल सकती है। तब वहाँ माँस के लिये पशु भेजे जाने लगे और मदिरा भी दूसरे देशों से आने लगी। वहाँ एक सरदार ने सन् १८१६ में सबसे पहले अपना खान-पान बदला था। अब तो सूअर का माँस उनका जातीय भोजन हो गया है और जिन नाम की शराब पेय-पदार्थ। इसका परिणाम यह हुआ है कि अब वे बहुधा फोड़े-फुन्सी आदि त्वचा रोगों में या दमा के रोग में फँसे रहते हैं। गर्मी, सुजाक आदि की बीमारियाँ भी उनमें मिलती हैं और बहुतों को कोढ़ हो जाता है।

इस प्रकार के उदाहरणों की संसार में कमी नहीं जिनमें सरल और स्वाभाविक जीवन व्यतीत करने वाली जातियों के व्यक्ति कृत्रिम सभ्यता के फेर में पड़कर हीन अवस्था को प्राप्त हो गये। योरोप वालों ने उनको लिखाया-पढ़ाया, ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा दी, इसकी बुराई तो हम नहीं करते पर उन्होंने स्वास्थ्य तथा चरित्र की दृष्टि से उनमें जो दोष उत्पन्न कर दिये उनका समर्थन कैसे किया जा सकता है ? यों तो थोड़ा-बहुत मद्य-माँस और नशे के अन्य पदार्थ सभी देशों में निम्न वर्ग में पहले भी प्रचलित थे, पर उनको सदैव गर्हित और हानिकारक ही माना जाता था। पर इस नई सभ्यता ने उनको उच्च वर्ग में भी खुले तौर पर सम्माननीय स्थान दे दिया, इससे संसार की असीम क्षति हुई है। उससे लोगों के चरित्र का स्तर बहुत गिर गया है और उनका स्वास्थ्य भी दूषित हो गया है। अब जो थोड़े-से लोग डाक्टरों का कीमती इलाज कराने में समर्थ हैं, प्रतिदिन इन्जेक्शन लगवाने का खर्च कर सकते हैं, उनकी बात तो छोड़ दीजिये, पर शेष सामान्य स्थिति के लोगों को इसके कारण परेशानी, कष्ट, अभाव को ही सहन करना पड़ता है। उनका जीवन पहले की अपेक्षा दुःखपूर्ण और निम्न श्रेणी का ही बन गया है।

नमक न उपयोगी है न आवश्यक ही

प्रचलन में नमक का मिश्रण आहार का एक आवश्यक अङ्ग माना जाता है किन्तु चिकित्सकीय मत के अनुसार यह दृढ़तापूर्वक प्रतिपादित किया जाने लगा है कि नमक बिल्कुल छोड़ देना ठीक है।

शरीरशास्त्र एवं जैव रसायन की दृष्टि से नमक शरीर में बिल्कुल कम हो जाने पर जीवन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

धारण किये रहना सम्भव नहीं है। इसी तथ्य के आधार पर पश्चिमी देशों तथा रूस में अपना स्वास्थ्य सुधारने के इच्छुकों को नमक छोड़ने की सलाह देने में डाक्टर लोग हिचकिचाते थे। रूस में जिन लोगों को हृदय के और रक्ताभिसरण रोग होते हैं, उन लोगों को नमकरहित आहार लेने का सुझाव देते हैं। इन चिकित्सकों का यह भी अनुभव है कि सामान्य रोग जैसे कि सर्दी, जुकाम, ब्रोन्काइटिस और सामान्य चर्मरोगों में केवल नमक छोड़ देने से अन्य किसी प्रकार की दवा न लेने पर भी वे रोग ठीक हो जाते हैं।

ऐसा होने का करण यह बताया जाता है कि नमक रहित आहार लेने से शरीर में पाये जाने वाले अतिरिक्त नमक को पचाने तथा पेशाब के माध्यम से बाहर फेंकने का अतिरिक्त श्रम भार गुर्दे व अन्य ग्रन्थियों को नहीं उठाना पड़ता है। नमक न्यूनाधिक मात्रा में लेने से शरीर में पड़ने वाले प्रभावों का सर्वेक्षण करके विभिन्न देशों में पाये गये तथ्य इस प्रकार हैं—उत्तरी जापान के लोग बहुत अधिक मात्रा में नमक लेते हैं तथा इस क्षेत्र में ब्रेन स्ट्रोक से मृत्यु की संख्या बहुत अधिक पायी जाती है। दक्षिण पेसीफिक के आदिवासी नमक कभी नहीं खाते उन्हें रक्तचाप एवं मस्तिष्क के स्ट्रोक की शिकायत कभी नहीं होती है।

अमरीका के हब्शी बहुत अधिक मात्रा में नमक लेते हैं, उनमें उसी क्षेत्र के गोरे लोगों की अपेक्षा तीन गुना अधिक रक्तचाप हुआ करता है। इसलिए अमरीका के डाक्टरों ने यह घोषित किया है कि यदि प्रत्येक व्यक्ति नमक रहित आहार लेना शुरू करे तो रक्तचाप के रोग में बिना किसी प्रकार के औषधि उपचार का सहारा लिए ५०% कमी हो सकती है।

यह एक बहुत ही अच्छी चीज है कि कैन्सर के रोग से जितने अधिक लोगों की मृत्यु होती है, उससे अनेक गुने लोगों की मृत्यु रक्तचाप की शिकायत से हुआ करती है। मनुष्य के प्रवाहित रक्त में ३० ग्राम नमक होता है। शरीर के अन्य जीवकोष तथा स्रवित रसों आदि में कुल मिलाकर ३०० ग्राम नमक होता है। दक्षिण पेसीफिक के आदिवासी जो नमक नहीं लेते हैं, उन्हें रक्त सम्बन्धी कोई रोग न होने का रहस्य नमक रहित भोजन तथा उनके प्राकृतिक जीवन क्रम में निहित है। एक ओर यह बात सही है कि हृदय एवं गुर्दे की बीमारियों के लिये नमक नुकसानदेह है तो दूसरी ओर कई लम्बे समय से थकान-ग्रस्त लोगों को विशेष अवसर पर औषधि की तरह नमक देने से उनका खोया स्वास्थ्य एवं बल तेजी से वापिस लौट आता है। अस्पतालों में आपरेशन के बाद अधिकतर लोगों की जान बचाने के लिए 'सेलाइन वाटर' देना पड़ता है। एक ओर नमक लेने वाले और नमक न लेने वालों की तुलना करने पर पाया गया है कि नमक लेने वालों को न लेने वालों की अपेक्षा २ से ३ गुना अधिक ब्लडप्रेशर पाया जाता है।

सोवियत डाक्टरों के अनुसार विभिन्न मनुष्यों पर नमक का प्रभाव भिन्न-भिन्न होता है। यह देखा गया है कि आरामतलब लोगों की अपेक्षा श्रमशील लोगों पर नमक का कुप्रभाव बहुत कम होता है। अमरीका के रॉकफेलर यूनिवर्सिटी के १९८१ के अनुसन्धानों के अनुसार जो व्यक्ति नमक के प्रभावों के प्रति अति संवेदनशील हैं, उनके डिब्बाबंद व कारखानों में निर्मित आहारों से नमक दूर कर देने पर अधिक स्वास्थ्य लाभ होता है। इसी प्रकार ब्रिटेन के लिसेस्टर रॉयल इन्फर्मरी' के एक अध्ययन में डाक्टरों ने बताया है कि अधिक नमक के कारण स्वस्थ लोगों की तुलना में दुर्बलों और रोगियों को अधिक नुकसान होता है।

आर्थर हल एस. (कमिश्नर फूड एण्ड ड्रग एडमिनिस्ट्रेशन) ने हर अमेरिकावासी को यह सलाह दी है कि उन्हें अच्छे स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये कम से कम सोडियम का उपयोग करना चाहिए। अमेरिकन मेडिकल एसोसिएसन ने कई अति-उत्तेजना से ग्रस्त रोगियों को नमक खाने की मात्रा प्रतिदिन २ ग्राम (एक चाय के चम्मच) तक लेने की सलाह दी है। जापान में अधिक नमक खाने के कारण एक तिहाई जनसंख्या अति-उत्तेजना से ग्रस्त पायी गई और प्रति ६ व्यक्तियों में से एक व्यक्ति को उच्च रक्त-चाप का रोगी पाया गया। यहाँ के लोग ६ ग्राम नमक प्रतिदिन खाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मिसीसिपी सेन्टर विश्वविद्यालय के हरबर्ट लैंग-फोर्ड ने कई रोगियों को रक्तचाप को नियन्त्रित करने के लिए २ ग्राम नमक खाने के लिए बाधित किया।

ड्यूक विश्वविद्यालय के वाल्टर केम्पनर ने 'राइस डाट' की प्रणाली से कई अतिरिक्त चाप रोगों को ठीक किया। ब्राजील के पनोममो इण्डियन्स, काला हाड़ी मरुस्थल के वुसमेन और सोलोमन द्वीप में रहने वाले कबीले भी इसके उदाहरण हैं। वे कम नमक खाते हैं, अतः वहाँ अति-उत्तेजना का शिकार कोई भी नहीं होता जबकि उन्नत देशों के लागों को अतिरिक्त-चाप का शिकार पाया जाता है। न्यूटन-बेल्सले हास्पीटल के चीफ आफ मेडिसिन-लारपेज ने यह दावा किया है कि नमक खाने की मात्रा को दो ग्राम प्रतिदिन तक घटा देने से किसी तरह की भी हानि नहीं हो सकती है। ईरान में ४ ग्राम नमक प्रति दिन लोग खाते हैं। यहाँ भी अति उत्तेजना एक पहेली बनी हुई है।

संसार के कितने लोग नींद के लिए बेचैन बने रहते हैं, इसका ठीक अनुमान तो नहीं लगाया जा सकता किन्तु यह संख्या करोड़ों में है जिन्हें आ तो नींद आती नहीं या कम आती है या नींद के लिए बेचैन रहते हैं और अनेक प्रकार की औषधियों का प्रयोग करते हैं।

प्रो० कोराल्ट ने इस निद्रा समस्या का गहन अध्ययन किया है और अनेक रोगियों पर लगातार ५ वर्षों तक प्रयोग करने के उपरान्त इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि—जो लोग नमक का अधिक प्रयोग करते हैं अथवा शक्कर अधिक खाते हैं उनको अनिद्रा रोग लग जाता है, क्योंकि सामान्य मनुष्य को भोजन और स्वाद के अतिरिक्त उसके बाद के परिणामों, हानि-लाभ का ज्ञान रंच मात्र भी नहीं होता।

प्रो. कोराल्ट का कहना है कि अधिक नमक खाने वालों के शरीर के कोषाणुओं को इस विजातीय तत्व को शरीर से निष्कासित करने के लिए अधिक श्रम करना पड़ता है। ऐसी अवस्था में जब कोषों को चैन न मिलेगा तो अनिद्रा अथवा तन्द्रा जैसी अवस्था बना रहना स्वाभाविक है। अनिद्रा के रोगी जब अधिक नमक खा लेते हैं तो उन्हें अधिक बेचैनी बढ़ जाती है। किन्तु नमक कम करते ही रोगी को स्वाभाविक नींद लगती है। अनिद्रा के जीर्ण रोगियों को प्रो-कोराल्ट रात्रि के भोजन में केवल फलाहार, उबली तरकारियाँ खाने और नमक का त्याग करने का सुझाव देते हैं। नमक कम करने से मोटापा भी दूर होने लगता है।

शरीर में अनेक प्रकार के नमक होते हैं और उनकी पूर्ति के लिए आहार में नमक की मात्रा रहनी आवश्यक है। किन्तु ध्यान रखने योग्य बात एक ही है कि वे वनस्पति वर्ग के होने चाहिए, खनिज वर्ग के नहीं। हर वनस्पति में क्षार होते हैं। अन्न, फल, शाक, दूध, आदि सामान्य आहार में उन लवणों की मात्रा भरी रहती है, जो शरीर के लिए आवश्यक हैं किन्तु वे खनिज नमक की तरह खारी या जायकेदार नहीं होते। 'फूट साल्ट' बाजार में बिकते हैं। वे खारी नहीं वरन् कड़ुए-कसैले होते हैं। विटामिन भी एक विशेष प्रकार के नमक ही हैं कितनी ही वनस्पतियों को जलाकर उनके क्षार निकाले जाते हैं उनका उपयोग भी होता है पर वे स्वाद में खारी नहीं होते। जितने नमक की शरीर को आवश्यकता है, उतना सामान्य खाद्य पदार्थों में सहज ही समाहित होता है और उतने भर से शरीर की स्वाभाविक आवश्यकता सहज ही पूरी होती रहती है। इसके लिए उस खनिज नमक की तनिक भी आवश्यकता नहीं पड़ती जो बाजार में खारेपन का स्वाद उत्पन्न करने के लिए बिकता है और भोजन में अलग से मिलाया जाता है।

रासायनिक विश्लेषण के अनुसार खनिज नमक सोडियम क्लोराइड है। यह हलका विष है। उसमें पोषण का कोई गुण नहीं। वह तम्बाकू, भांग की तरह एक विषैला पदार्थ है, जो नशेबाज को आदत की तरह वैसा ही भोजन करते रहने के कारण स्वभाव का अंग बन गया है। ऐसे तो बहुत-से लोगों का काम नशा पिये बिना भी नहीं चलता। कइयों को बीड़ी पिये बिना टट्टी तक नहीं उतरती। यह अवांछनीय आदत है। इससे किसी लाभ की आशा अपेक्षा नहीं की जा सकती क्योंकि उसमें पोषण जैसा कुछ है नहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोजन सम्बन्धी कितनी ही बुरी आदतों के लोग शिकार पाये जाते हैं। पर अभ्यस्त हो जाने के कारण यह समझ में नहीं आता कि इसमें कोई गलती की जा रही है क्या ? जैसे बिना अच्छी तरह चबाये, जल्दी-पल्दी में ग्रास निगलते जाना। जैसे पेट में हवा-पानी के लिए जगह न छोड़कर उसे बुरी तरह ठूंस ठूंस कर भर लेना। जैसे एक साथ अनेक प्रकार के चित्र-विचित्र स्तर के पदार्थों को खाना और पाचन व्यवस्था का सारा ढाँचा लड़खड़ा देना। ठीक इसी प्रकार नमक के बिना भोजन में स्वाद न आना, उसे ग्रहण करते समय नाक-भौं सिकोड़ना भी ऐसी ही बुरी आदत है, जो उपयोगिता के कारण नहीं, लगातार सेवन करते रहने पर स्वभाव का अंग बन गई है और अब अफीम आदि खाने की तरह न केवल अच्छी ही लगती है वरन् उसे छोड़ देने की बात सोचने से ऐसी आशंका होने लगती है कि उससे कहीं नुकसान न होने लगे। कमजोरी न आने लगे।

अच्छा हो हम अपनी भोजन सम्बन्धी आदतों को सुधारें। उसे जलाने, भूनने, तलने, मसाले मिलाने, चिकनाई की भरमार करने जैसे खाने में जायकेदार किन्तु परिणाम में सर्वथा हानिकारक अभ्यासों को विवेक एवं साहस के साथ परित्याग कर दें। मनोबल के अभाव में ऐसा एक साथ न बन पड़े तो भी इतना प्रयत्न तो करना ही चाहिए कि इन नमक जैसे अखाद्यों की मात्रा क्रमशः घटाते चलें और उसे न्यूनतम रखकर ही काम चलायें।

बिना नमक आसानी से रहा जा सकता है

विश्व में कई जातियाँ ऐसी भी हैं, जो सभ्यता की दृष्टि से सदियों पिछड़ी हुई हैं और उनमें नमक का प्रचलन कतई नहीं है। अल्जीरिया के मूल निवासी तथा कोलम्बिया नदी के तटवर्ती मैदानों में बसने वाले लोग नमक का बिलकुल प्रयोग नहीं करते। सहारा के बद्दू कबीले के लोग नमक को उसी प्रकार घृणास्पद तथा त्याज्य समझते हैं जैसे एक धर्मनिष्ठ भारतीय माँस और मदिरा को। मध्य अफ्रीका के लाखों आदिवासी प्रशान्त महासागर के मध्य द्वीपों में रहने वाले लोग नमक को अनावश्यक मानते हैं तथा उसका प्रयोग भी नहीं करते। साईबेरिया के मूल निवासी और नेपाल के सुदूर प्रान्तों में बसने वाले लोग भी नमक नहीं खाते। फिर भी उनका स्वास्थ्य और शरीर बल आज के २०वीं शताब्दी के सभ्य व्यक्ति से कई गुना बेहतर है।

ये उदाहरण उन व्यक्तियों की धारणा को निर्मूल सिद्ध करने के लिए पर्याप्त हैं जो यह समझते हैं कि नमक नहीं खायेंगे तो न जाने क्या हो जायेगा ? कुछ लोग तो यहाँ तक कहते पाये गये हैं कि नमक न खाने वाले व्यक्ति का शरीर विषाक्त हो जाता है। उसके शरीर में कई दूषित तत्व आकर सञ्चित हो जाते हैं।

विज्ञान की आधुनिक गवेषणाओं के अनुसार नमक मनुष्य शरीर के लिये एकदम अनावश्यक है। स्वास्थ्य और शरीर व्यवस्था के लिए जितना नमक आवश्यक होता है, वह प्राकृतिक रूप से अन्न और सब्जियों के रूप में अपने आप मिल जाता है। भारतीय योग ग्रन्थों में आहार शुद्धि का जहाँ उल्लेख आता है, वहाँ प्रत्याहार साधना के अन्तर्गत नमक का प्रयोग बन्द कर देने की बात भी कही गई है। भारतीय धर्मग्रन्थों में नमक के त्याग को एक व्रत के रूप में निरूपित किया गया है। धार्मिक दृष्टि से नमक त्याग महत्व तो है ही, विज्ञान की खोज ने भी इस नियम की पुष्टि की है। यही नहीं नमक को शरीर के लिए हानिकारक भी माना है।

रसायन शास्त्र की भाषा में नमक को सोडियम क्लोराइड कहा गया है। क्लोरीन एक जहरीली गैसी है जिसका एक हल्का सा झोंका मनुष्य को २४ घण्टे तक बेहोश कर देने के लिए पर्याप्त है। थोड़ी-सी अधिक मात्रा उसे दूसरे लोक भी पहुँचा सकती है। इसके योजकों को आहार रूप में लेने से आमाशय यन्त्र की श्लेष्मिक झिल्ली को हानि पहुँचती है तथा शरीर के कैलशियम का भी क्षरण होता है जिससे शरीर में पक्षाघात और मिरगी के रोगों की सम्भावना रहती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सुप्रसिद्ध अमरीकी आहार विशेषज्ञ ने इस सम्बन्ध में बड़ी निष्कर्षपूर्ण खोज की है और उसे पूर्णतया विष बताया है।

एक शंका उठना स्वाभाविक है कि नमक यदि विष है तो फिर शरीर पर उसका प्रभाव क्यों नहीं पड़ता ? इसका एक बहुत बड़ा कारण है शताब्दियों से नम्क का प्रयोग करते चले आ रहे मानव जाति का शरीर और उसके कोष अभ्यस्त हो गये हैं। फिर भी मनुष्य शरीर की प्रकृति इस तत्व की उपस्थिति सहन नहीं करती और पसीने, मूत्र आदि के रूप में यह विसर्जित होता रहता है।

फिर भी इसका प्रभाव किसी न किसी रूप में तो होना ही है और वह होता है दुःसाध्य रोगों के रूप में। रक्तविकार, हृदयरोग, आमाशय के रोग आदि कई बीमारियों का कारण नमक ही है। डाक्टर लोग रोगी की चिकित्सा करते हुए परहेज में नमक न खाने की सलाह देते हैं इसका यही कारण है शरीर में नमक की मात्रा बढ़ते रहने पर रोग का दूर होना मुश्किल है।

कुछ वैज्ञानिकों ने नमक को अफीम, संखिया जैसे विषैले मादक द्रव्यों की श्रेणी में गिना है और वस्तुतः वह है भी अफीम संखिया खाने के तुरन्त बाद बड़ी तेज प्यास लगती है उसी प्रकार स्वभाव से अधिक नमक खा लेने पर थोड़ी-थोड़ी देर से पानी पीते रहना पड़ता है।

कुछ दिनों तक नमक का प्रयोग न करने पर शरीर में जो स्वास्थ्य, शक्ति और बल का अनुभव होता है, उसे देखकर फिर कभी नमक खाने की इच्छा नहीं होगी।

डाक्टर हैरी बैंजामिन का कथन है कि नेत्रों की ज्योति घट जाना, मोतियाबिंद उतरना अधिक नमक सेवन के कारण होता है। जो लोग नमक से परहेज करते हैं, वे इन बीमारियों से बचे रहते हैं।

डा० प्रीमकांट ने मैक्सिको के स्वास्थ्य का इतिहास लिखते हुए लिखा है पुराने-जमाने में इस देश के लोग नमक का प्रयोग जरा भी नहीं करते थे। तब उनकी काम करने की क्षमता बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। बाद में वे लोग नमक के आदी हो गये और कमजोर, बीमार रहने लगे।

जिसे नमक खाने की आदत नहीं है, उसे एक चम्मच नमक खिला दिया जाय तो उसके दिल की धड़कन बढ़ जायेगी। धीरे-धीरे आदत पड़ जाने पर जाने की बात दूसरी है अन्यथा जिन्हें आदत नहीं हैं उन्हें खिलाने पर जहरीला असर होता है। डाक्टर के. लौंग ने हिरन के बच्चे पाले, उन्हें नमक खिलाने की आदत डाली जिससे वे सभी बीमार हो गये।

डा० सोलन का कथन है कि नमक को पाचक कहना गलत है। सही बात यह है कि उससे पाचन शक्ति को नुकसान होता है। जिन्हें ज्यादा नमक खाने की आदत होती है, उन्हें बुढ़ापा जल्दी घेरता है और माँसपेशियाँ ढीली पड़ जाती हैं।

ऐसे नुकसान देह विष-नमक को खाने की आदत डालकर मनुष्य ने अपना अहित ही किया है। जो आदी हैं, उनका उसे छोड़ देने में ही कल्याण है।

प्रसिद्ध इतिहासज्ञ पेस कॉट ने लिखा है कि पुराने मैक्सिको में एकेलास कलस नामक एक जाति रहती थी। इन्हें पहले नमक के बारे में कुछ भी पता नहीं था। साथ ही वह जाति कठोर परिश्रमी और दिलेर थी, पर मैक्सिको के जीते जाने के बाद उस जाति का हर व्यक्ति पहले की अपेक्षा कम परिश्रमी और अधिक आलसी हो गया। प्राचीन काल में बहलीक, सौराष्ट्र, सिन्धु और सुबीर अभिजनों के निवासी बहुत अधिक नमक खाते थे। यहाँ तक कि दूध भी बिना नमक के उन्हें नहीं भाता था। आगे चलकर वे शक्तिहीन हो गये। उनके अन्दर पहले जैसा उत्साह नहीं रह गया, वे परिश्रम से भी जी चुराने लगे।

अमेरिकी आहार विशेषज्ञ डा० लैडयागो, डा० हैनरी ब्लैक वर्न जैसे प्रख्यात स्वास्थ्य विज्ञानियों ने नमक की हानियों को उजागर करते हुए कहा है कि जिस प्रकार सिगरेट के पैकिटों पर "स्वास्थ्य के लिए हानिकारक" चेतावनी लिखी रहती है, उसी प्रकार नमक की थैलियों पर भी वैसा ही उल्लेख होना चाहिए। होटलों में जिस प्रकार स्वच्छता के नियम पालन के लिए दबाव डाला जाता है और नियन्त्रण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रखा जाता है, उसी प्रकार उनके द्वारा पकाये-परोसे भोजनों में यह भी जाँच-पड़ताल होनी चाहिए कि वे कहीं निर्धारित मात्रा से अधिक नमक तो ग्राहकों को नहीं खिला देते हैं।

चीन के अनुभवी चिकित्सक डॉ. सी. हैमन बैरो कहते हैं कि "नमक के घोल को पीकर आत्महत्या करना चीन में आत्महत्या का एक साधारण तरीका है, जिसकी चिकित्सा करना कुशल चिकित्सक के लिये भी कठिन पड़ता है। ठीक ऐसे ही खानपान में अतिरिक्त नमक का उपयोग शरीर को ऐसा मन्द विष देना है, जिसका इलाज सम्भव नहीं है।

पशु चिकित्सक पशुओं को जुलाब के रूप में नमक खिलाने की सलाह देते हैं। नमक की अधिक मात्रा पशुओं के लिये भी जानलेवा सिद्ध होती है। डॉक्टरों ने परीक्षण के तौर पर यह ज्ञात किया है कि दो या तीन पौण्ड नमक एक घोड़े का प्राण आसानी से ले सकता है। ऐसे ही चार-पाँच पौण्ड से एक गाय तथा आधे पौण्ड से एक भेड़ या बकरी आसानी से मर सकती है।

शरीर के लिये नमक की जितनी मात्रा आवश्यक होती है, उतनी तो शाक-सब्जियों और फलों में प्राकृतिक रूप से विद्यमान रहती है पशु-पक्षियों के जीवनपर्यन्त स्वस्थ और मस्त रहने का एक ही रहस्य समझ में आया है कि वे प्राकृतिक लवण के अतिरिक्त पृथक् से नमक का प्रयोग नहीं करते । यदि मनुष्य भी उसकी अनावश्यक मरमार को रोककर आवश्यकतानुसार ही सेवन करने की विधि-व्यवस्था को अपना सके तो नमक औषधि का कार्य भी पूरा कर सकता है। अत्यधिक रक्तस्राव, बहुमूत्र, वमन, अतिसार और हैजा जैसे रोगों के कारण शरीर में निर्जलीकरण की स्थिति उत्पन्न होने लगती है। ऐसी दशा में अन्य जीवनोपयोगी तत्वों के घोल के साथ नमक को भी औषधि रूप में प्रयुक्त किया जाता है।

प्राकृतिक खाद्य पदार्थों में अनावश्यक रूप से मिलाया गया नमक शरीर के लिये हर दृष्टि से हानिकारक ही सिद्ध होता है। कैल्शियम (चूना) और लोहा वाले पदार्थों का उचित मात्रा में सेवन करते रहा जाय तो अन्य सभी प्रकार के नमक स्वयमेव ही आवश्यकतानुसार इन्हीं से मिलते रहते हैं।

चीनी का प्रयोग भी सावधानीपूर्वक करें

खाद्य पदार्थों में शक्कर का उपयोग बहुतायत से होता है। मीठा होने के साथ ही उसे शक्ति का मुख्य स्रोत मान लेने के कारण विश्व में इसकी खपत भी बढ़ी है। प्रायः सभी प्रकार की मिठाइयों से लेकर चाय, कॉफी, शरबत तक इसके बिना फीके रहते हैं। रंग-बिरंगे पेय पदार्थों, टाफियाँ, बिस्कुट, चॉकलेट आदि विविध रूपों में सफेद चीनी प्रयुक्त होती है। इनका सर्वाधिक उपयोग बच्चे करते हैं और आये दिन पेट खराब होने, स्वास्थ्य बिगाड़ने की शिकायत करते हैं। इस संदर्भ में स्वास्थ्य विज्ञानियों ने गहन अनुसंधान किये हैं और जो निष्कर्ष प्रस्तुत किये हैं, वे आश्चर्यचकित करने वाले हैं।

पिछले दिनों अमेरिका के स्वास्थ्य विभाग ने बच्चों पर कुपोषण के प्रभाव का अपने देश के दस प्रान्तों में व्यापक सर्वेक्षण कराया। पाया गया कि एक से पाँच वर्ष के लगभग २२ प्रतिशत बच्चे एनीमिया रोग से ग्रस्त थे। सर्वेक्षण में यह भी पाया गया कि ६ से १८ वर्ष तक के बच्चे एक वर्ष में १६० पौण्ड से भी ज्यादा चीनी का उपयोग करते हैं। फलस्वरूप चीनी की बहुलता के कारण दाँत खराब होने के साथ-साथ पाचन प्रणाली भी अस्त-व्यस्त हो जाती है।

विशेषज्ञों का कहना है कि अधिक शक्कर खाने से रक्त में शर्करा का स्तर शीघ्र ही बढ़ जाता है, जिसके परिणामस्वरूप अन्तःस्रावी प्रणाली से पैन्क्रियाजजन्य अनुक्रिया को प्रोत्साहन मिलता है। इसकी परिणति मस्तिष्क और केन्द्रीय नाड़ी मण्डल को रक्त शर्करा की कमी के रूप में सामने आती है, जिसे 'हाइपोग्लाइसेमिया' नामक बीमारी के रूप में जाना जाता है। न्यूयार्क के वरिष्ठ चिकित्सक डॉ. जॉन डब्ल्यू. टिनटोरा ने अपनी एक रिपोर्ट में बताया है कि अमेरिका के पागलखानों में बहुधा ८० प्रतिशत रोगियों को कोई मस्तिष्क दोष नहीं होता वरन् वे रक्त में शर्करा की कमी से उत्पन्न उक्त रोग से ग्रस्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं। क्योंकि मस्तिष्क का पोषण मुख्यतः रक्त द्वारा पहुँचाये गये शर्करा से होता है, इसलिये रक्त शर्करा की कमी का दुष्प्रभाव सबसे पहले मस्तिष्क में ही दृष्टिगोचर होता है। अधिकांश चिकित्सक इस गड़बड़ी को मस्तिष्कीय बीमारी समझ बैठते हैं और रोगियों को पागलखाने में बन्द कर दिया जाता है। ऐसे रोगियों को मात्र उनके भोजन क्रम में आवश्यक परिवर्तन कराकर दो-तीन सप्ताह में ही ठीक किया जा सकता है। सुप्रसिद्ध महिला चिकित्साविज्ञानी डॉ. हेनरी एम. साल्जर ने इस तरह के रोगियों की चिकित्सा में आहार परिवर्तन से उल्लेखनीय सफलता पाई है।

अमेरिका के ही उटाह विश्वविद्यालय के अपराध विज्ञान विशेषज्ञ डॉ. एलेक्जेण्डर रॉस, प्रोफेसर बिलफोर्ड तथा रसायन शास्त्री डॉ. जाफरी ब्लैण्ड ने पुराने बाल अपराधियों का आहार विश्लेषण करने पर पाया है कि उन अपराधी बच्चों में से ३२ प्रतिशत बच्चों ने अपने आहार में चीनी का अत्यधिक उपयोग किया था। इसी तरह का निष्कर्ष कैलीफोर्निया स्टेट कॉलेज के समाज कल्याण विभाग के संचालक डॉ. स्टीफेन जे. शूयेन्थलेर ने प्रस्तुत किया है। उनने लगभग ३०० बाल अपराधियों के आहार का विश्लेषण किया और पाया कि वे सभी अधिक मात्रा में मीठा विशेषकर सफेद चीनी खाने वाले थे। जब उनके आहार से चीनी बिल्कुल हटा दी गयी और कुछ महीने पश्चात् उनके स्वास्थ्य एवं व्यवहार परिवर्तन का विश्लेषण किया गया तो पाया गया कि ४८ प्रतिशत अपराधी बच्चे सामान्य हो गये।

सुप्रसिद्ध आहार विशेषज्ञ डॉ. डेरिक लांसडेल एवं डॉ. रेमण्ड जे. शैमवजर ने भी बच्चों के आहार में शक्कर की अधिकता एवं उसके दुष्प्रभावों का गंभीरतापूर्वक अध्ययन किया है। देखा गया है कि इसको अधिक मात्रा में खाने से शरीर में थियामिन नामक तत्व की कमी हो जाती है, जिसके कारण नींद की गड़बड़ी, बेरी-बेरी, सीने में दर्द, लगातार ज्वर एवं हकलाने जैसी कितनी ही बीमारियाँ धर दबोचती हैं। ज्योतिमंदता या रतौंधी के भी लक्षण प्रकट होने लगते हैं। चीनी के प्रयोग में सबसे अधिक उपयोग बोतल बन्द ठण्डे पेयों का है। पोषण विज्ञानी डॉ. डब्ल्यू. मर्ट्ज के अनुसार आहार के रूप में चीनी का अधिकाधिक उपयोग बच्चों में उत्साहपूर्ण कार्य करने तथा नयी बातें सीखने के प्रति उदासीनता पैदा करता है।

इन सभी प्रयोग-परीक्षणों का एक ही निष्कर्ष है कि शक्कर का प्रयोग कम ही परिमाण में स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभकारी हो सकता है। अधिक मात्रा में खाने से हानि ही हानि है।

वैज्ञानिक तकनीक के विकास के पहले कहीं भी श्वेत चीनी का उपयोग खाद्य-पदार्थों में नहीं होता था। या तो शर्करायुक्त पदार्थों को प्राकृतिक रूप में प्रयोग किया जाता था अथवा उनकी शर्करा को कम से कम रूपान्तरित करके उपयुक्त मात्रा में ही लिया जाता था। लोग आज की तुलना में रोगी भी कम होते थे साथ ही दीर्घजीवी एवं जीवन के अन्तिम दिनों तक कार्यक्षम बने रहते थे। पता नहीं यह भ्रान्ति लोगों के मन में कैसे जम गई कि सफेद चीनी सभ्य लोगों के खाने की चीज है और गुड़, शीरा आदि सस्ते शर्करायुक्त खाद्य गरीबों के लिए हैं। इस भ्रान्ति का ही परिणाम है कि तथाकथित बड़े रोगों में अधिकांश मधुमेह के रोगी पाये जाते हैं।

इस तथ्य से सभी शरीरशास्त्री सहमत हैं कि शरीर को ऊर्जा प्राप्त करने के लिए कार्बोहाइड्रेट्स में शर्करा का विशेष योगदान होता है। इसके पाचन में समय भी अपेक्षाकृत कम लगता है। परन्तु आजकल शर्करा के लिए परिष्कृत चीनी की जिस प्रकार खपत बढ़ रही है उसे देखकर चिकित्सक एवं वैज्ञानिक वर्ग चिन्तित है। शर्करा शरीर के लिए आवश्यक तो है, किन्तु उस रूप में नहीं जिसमें कि अधिसंख्य लोग अन्धाधुन्ध प्रयोग करते हैं। विगत दो-तीन दशकों से वैज्ञानिक चेतावनी देते आ रहे हैं कि परिष्कृत चीनी का अत्यधिक प्रयोग स्वास्थ्य के लिए हानिकर है। यहाँ तक कि परिष्कृत श्वेत चीनी को श्वेत विष की संज्ञा से सम्बोधित किया जाने लगा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देखने में तो लाल गुड़ की अपेक्षा श्वेत चीनी बहुत आकर्षक लगती है और लोग पसन्द भी उसे ही अधिक करते हैं। तथाकथित शहरी लोगों की देखादेखी ग्रामीण लोगों की भी अभिरुचि श्वेत चीनी के प्रयोग की ओर बढ़ने लगी है। अन्धानुकरण का जो परिणाम हुआ करता है, वही हो भी रहा है। जो ग्रामीण गुड़ का प्रयोग छोड़कर श्वेत चीनी का अधिक प्रयोग करने लगे हैं—सर्वेक्षण से पता चला है कि उनके स्वास्थ्य में गिरावट आई है। यहाँ यह तो नहीं कहा जा रहा है कि केवल चीनी के ही प्रयोग से स्वास्थ्य संकट बढ़ रहा है, अन्यान्य कारणों के साथ यह भी एक मुख्य कारण है।

चीनी के परिष्कृतीकरण के कारण उसमें किसी प्रकार के खनिज लवण, विटामिन्स या एन्जाइम्स शेष नहीं रह जाते, जिससे उसके निरन्तर प्रयोग से अनेक प्रकार की बीमारियाँ, विकृतियाँ उत्पन्न होकर पनपने लगती हैं। दन्त चिकित्सकों का कहना है कि दाँतों के क्षय का मूल कारण अधिक चीनी का उपयोग करना है। वे तो छोटे बच्चों को चीनी से दूर रखने का ही परामर्श देते है। चीनी के अत्यधिक प्रयोग से शरीर में कैल्शियम और फास्फोरस का सन्तुलन बिगड़ता है, जो सामान्यतया ५ और २ होता है। साथ ही चीनी के पाचन के लिए अतिरिक्त कैल्शियम की आवश्यकता पड़ती है। शरीर में उसकी कमी हो जाने से आर्थराइटिस, कैन्सर-वायरस संक्रमण आदि अनेक रोगों के होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

चिकित्सा-शास्त्रियों का यह भी कहना है कि चीनी को पचाने के लिए शरीर के पाचनतन्त्र में विटामिन बी-काम्पलेक्स का होना अनिवार्य है। अधिक चीनी का प्रयोग करने से विटामिन बी-काम्पलेक्स की कमी होने लगती है, जिसके कारण अपच, अजीर्ण, चर्म रोग, हृदयरोग, कोलाइटिस, स्नायुतन्त्र सम्बन्धी बीमारियाँ उत्पन्न होने की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं। श्वेत चीनी के अधिक प्रयोग से यकृत (लीवर) में ग्लाइकोजिन की मात्रा घटती है, जिसके फलस्वरूप थकान, उद्विग्नता, घबराहट, सिरदर्द, दमा, डाइबिटीज आदि विविध व्याधियाँ आ घेरती हैं और व्यक्ति असमय काल के गाल में समा जाता है। लन्दन मेडीकल कालेज के सुप्रसिद्ध हृदय रोग विशेषज्ञ डॉ० लुइकिन अधिकांश हृद्रोगों के लिए चीनी को उत्तरदायी मानते हैं और शरीर को ऊर्जा प्राप्ति के लिए गुड़, खजूर, मुनक्का, अंगूर, शहद, आम, केला, मौसमी, खरबूजा, तरबूज, पपीता, शकरकन्द, गन्ने का रस आदि में से जो सामान्यतया उपलब्ध हों, लेने का सुझाव देते हैं।

जर्मन रसायन शास्त्री बैडिल ने चीनी के प्रयोग कुत्तों पर किये। उन्होंने सात प्रतिशत चीनी मिले जल के इन्जेक्शन कुत्तों को दिये तो उन्होंने देखा कि शरीर की श्लेष्मिक कलाओं में जलन पड़ने लगती है, उनका रंग लाल हो जाता है। चीनी की मात्रा में वृद्धि करने पर उनकी लालिमा और बढ़ जाती है। इस प्रयोग के समय बेचैनी के कारण कुत्ते की छट-पटाहट इतनी बढ़ गई कि चिकित्सक को अपना प्रयोग रोकना पड़ा।

इसी तरह का एक प्रयोग डा० ओगटा ने भी कुत्तों पर किया। उन्होंने माँस के साथ एक तोला चीनी मिलाकर खिलाई। इसका परिणाम यह निकला कि कुछ दिनों में एक चौथाई पाचन शक्ति घट गई।

एचिसन टाबर्टसन नामक चिकित्सक ने वायु व नेत्र रोग से पीड़ित रोगियों को १०० ग्राम चीनी का शर्बत ढाई सौ ग्राम पानी में बनाकर दिया तो थोड़ी ही देर में रोगियों की हालत बिगड़ने लगी। अधिकतर लोगों को उल्टियाँ हुईं, पेट में दर्द और छाती में जलन पड़ने लगी, दाँत खट्टे हो गये। इन्हीं रोगियों को जब फल की शरकरा पिलाई गई तो कोई कष्ट नहीं हुआ। डाक्टर टाबर्टसन ने यह भी देखा कि नाश्ते में चीनी का अधिक उपयोग करने से आमाशय की श्लेष्मिक कलाओं से श्लेष्मा इतना अधिक निकलता है कि पाचन तन्त्र को ही कमजोर बना देता है।

अमेरिका के मिशीगन विश्व-विद्यालय के दाँत विशेषज्ञ का कहना है कि चीनी का सबसे अधिक कुप्रभाव दाँतों पर पड़ता है। उन्होंने देखा कि जिन बालकों के आहार में मिठाइयों को स्थान दिया गया था उनके दाँत शीघ्र ही खराब होने लगे और जब मीठी चीजें निकाल दी गईं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो उनके दाँत पुनः स्वस्थ हो गये। संसार के विभिन्न देशों में चीनी की अधिक खपत करने वाला देश अमेरिका ही है, इसीलिए दाँतों के रोगियों की संख्या भी सबसे अधिक है। एक जाँच से पता चला है कि वहाँ ४ लाख बच्चे हृदय रोग से, १० लाख कान के रोग से, ४० लाख पोषक तत्वों के अभाव से, ६० लाख टांसिल बढ़ने से, १ करोड़ दन्त रोगों से और डेढ़ करोड़ अन्य रोगों से पीड़ित हैं। रोगी बच्चों की इतनी बड़ी संख्या का मुख्य कारण चीनी से बनी मिठाइयों का उपयोग करना है।

चिकित्सकों ने जब यह देखा कि चीनी के अत्यधिक प्रयोग से लोगों के दाँत समय से पूर्व ही गिर जाते हैं और नाना प्रकार के रोग होते हैं तो उसकी रोकथाम पर विचार-विमर्श हेतु देहली में एक सेमीनार का आयोजन किया गया, जिसमें डेन्टल काउन्सिल ऑफ इण्डिया के अध्यक्ष कर्नल एन० एन० बेरी ने बताया कि यदि दाँत की बीमारियों की रोक-थाम के लिए प्रयास न किये गये तो सौ वर्ष बाद यह स्थिति आ जायेगी कि प्रत्येक व्यक्ति २० वर्ष की उम्र में ही बिना दाँतों का हो जाया करेगा।

आज से १४ वर्ष पूर्व नार्थ कैरोलिना (अमेरिका) के चिकित्सक सैन्डसर ने सन्धियों की सूजन का रोग जिन बच्चों को था उनका इलाज करने से पूर्व मिठाई बिलकुल बन्द करादी। कुछ दिनों बाद उन्होंने देखा कि मिठाई खाने वाले बच्चों की अपेक्षा इनका स्वास्थ्य शीघ्र सुधर गया।

जब चीनी का प्रयोग अधिक मात्रा में किया जाता है तो उसका विशेष अंश आँतों में एकत्रित होने लगता है, जिससे पेट में वायु बनने लगती है। मधुमेह, आँव, मंदाग्नि, अजीर्ण, आँतों में जलन, जीभ पर दाने तथा हृदय रोग जैसी अनेक बीमारियाँ इसी शकर की देन हैं। चीनी के उपयोग से सम्पूर्ण शरीर ही विषाक्त हो जाता है। शरीर की अस्थियाँ दुर्बल, माँस-पेशियाँ अशक्त तथा शरीर में लौह एवं अनेक जीवन तत्वों की कमी जा जाती है।

अनेक रोगों को जन्म देने के कारण चिकित्सक चीनी को स्वास्थ्य का शत्रु मानने लगे हैं। चीनी के तैयार करने का ढंग ही इतना दोषपूर्ण है कि अन्त में सिवाय मिठास के और कुछ शेष ही नहीं रहता। फिर भी इस मीठे विष को लोगों को चाव से खाता देख आश्चर्य होता है। शरीरशास्त्रियों ने शर्करा को कार्बोहाइड्रेट की तरह उपयोगी माना है। भोजन में प्रयुक्त होने वाली शर्करा को हम चार रूपों में देख सकते हैं—

१. अन्न के पाचन से बनी।
२. फलों की मिठास से प्राप्त।
३. दूध से मिलने वाली।
४. गन्ने से बनी।

इन चार प्रकार की मिठास में अधिकतर लोग गन्ने से बनी शकर से ही अधिक परिचित हैं, पर शरीर इसका उपयोग सामान्य रूप से अन्य शर्कराओं की तरह नहीं कर पाता। इसीलिए गाँधी जी ने सफेद चीनी को मनुष्य के लिए अप्राकृतिक खाद्य-पदार्थ माना है। गुड़ या खाँडसारी शकर में जो तत्व पाये जाते हैं, वह चीनी में नहीं मिलते। चीनी के बदले में मिठास की पूर्ति हेतु गुड़, शहद, छुहारे, खजूर, मुनक्का और किशमिश आदि का प्रयोग किया जा सकता है। यह खाने में भी स्वादिष्ट लगते हैं और साथ ही कैलशियम, प्रोटीन और लौह जैसे तत्वों की भी प्राप्ति हो जाती है।

गुड़ में जो क्षार हैं वह शकर में कहाँ मिलते हैं ? फलों की प्राकृतिक मिठास की जितनी प्रशंसा की जाये उतनी ही कम है क्योंकि यह मांस-पेशियों तथा रक्त को बढ़ाने और हड्डियों को मजबूत करने का काम करती है। मौसमी फ़ल सस्ते और सुविधा से प्राप्त भी हो जाते हैं।

स्वस्थ जीवन की प्राप्ति तथा रोगों से मुक्त होने के लिए यह आवश्यक है कि खाद्य-पदार्थों में शकर की मात्रा जहाँ तक सम्भव हो घटाई जाये।

चीनी और चिकनाई की भरमार नितान्त अहितकर

परिवार में आहार व्यवस्था का प्रमुख स्थान है अतएव स्वास्थ्य और आरोग्य के सामान्य नियमों की जानकारी रखनी आवश्यक है। आहार में चीनी और चिकनाई की भी आवश्यकता है;

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर उन्हें सीमित परिमाण में ही लिया जाना चाहिए। अति सर्वत्र वर्जित की गई है। कहते हैं कि अति मात्रा में लिया गया अमृत भी विष बन जाता है। चीनी और चिकनाई हमारे सामान्य खाद्य पदार्थों में से प्रायः प्रत्येक में उपयुक्त मात्रा में विद्यमान रहती है। जितना शरीर माँगता है, उतना अंश इन दोनों पदार्थों का अन्न, दूध, शाक, फलों में पर्याप्त परिमाण में पाया जाता है। अलग से घी, तेल खाने की या चीनी लेने की वस्तुतः कोई आवश्यकता नहीं है।

सामान्य आहार मुँह की लार के सम्मिश्रण से सहज ही शर्करा—युक्त बन जाता है और वह पेट में जाकर चीनी की आवश्यकता पूरी कर देता है। यदि अलग से शर्करा की आवश्यकता समझी भी जाय तो वह खजूर, अन्जीर, किशमिश आदि मेवों से, शहद से अथवा गाजर, चुकन्दर आदि शाकों से सहज ही मिल जाता है। आजकल स्वाद के लिए जिस तरह चीनी की भरमार की जाती है, उससे शरीर को तनिक भी लाभ नहीं पहुँचता; वरन् पाचन तन्त्र पर अनावश्यक भार पड़ता है। साथ ही अस्थि दुर्बलता, दाँतों की खराबी, जिगर के रोग, रक्त चाप आदि अनेकों रोग उत्पन्न होते हैं।

यही बात चिकनाई के सम्बन्ध में है। घी, तेल में पकाई हुई चीजें स्वादिष्ट तो लगती हैं; पर साथ ही गरिष्ठ भी बहुत होती हैं। कड़ा शारीरिक श्रम करने वाले ही उन्हें पचा सकते हैं। सामान्य शारीरिक स्थिति वाले लोगों को दूध से, तिल, मूँगफली आदि से जो सन्तुलित एवं अन्य रसायन समिम्श्रणों के साथ जो चिकनाई मिलती है वही सुपाच्य एवं हितकारी होती है।

पकवान और मिष्ठान्न खाना अमीरी का, सौभाग्य का चिन्ह माना जाता है। त्यौहार उत्सवों में उन्हीं की भरमार रहती है। मेहमानों को चीनी चिकनाई प्रधान पदार्थ ही खिलाये जाते हैं। समझा जाता है कि यह उनके स्वागत सम्मान का सूचक हुआ। पर वास्तविकता इससे बिलकुल उलटी है। यह दोनों ही पदार्थ गरिष्ठ हैं। पाचन यन्त्र को बिगाड़ते और बीमारियों को आमन्त्रित करते हैं। यदि आहारशास्त्र की तनिक भी जानकारी हमें हो और स्वाद से स्वास्थ्य की उपयोगिता अधिक प्रतीत हो तो निश्चय ही इन दोनों मुँहलगी खाद्य विकृतियों पर तुरन्त नियन्त्रण करने की आवश्यकता अनुभव होगी।

रासायनिक विश्लेषण की दृष्टि से चीनी को कार्बोहाइड्रेट वर्ग में गिना जा सकता है। उसमें ने कोई विटामिन है और न कोई खनिज तत्व। वह केवल उत्तेजना प्रदान करती है। खाद्य का मुख्य गुण पोषण प्रदान करना है; पर वैसा उसमें कुछ भी नहीं है। उसे हजम करने के लिए जितनी इन्सुलिन चाहिए उतनी शरीर में उत्पन्न न होने से जिगर की कई प्रकार की खराबियाँ अधिक मात्रा में सफेद चीनी खाने वालों को आ घेरती हैं।

न्यूयार्क नगर-स्वास्थ्य विभाग द्वारा किये गये एक अनुसंधान में ७०० अधेड़ व्यक्तियों में से आधे को वसा और चीनी युक्त और आधों को उनसे मुक्त रखकर एक वर्ष तक परीक्षण किया गया। मालूम पड़ा कि चीनी-चिकनाई खाने वाले अधिक बीमार पड़े और उनका परहेज करने वालें का स्वास्थ्य अपेक्षाकृत कहीं अच्छा रहा।

इसी प्रकार की जाँच सामान्य लोगों पर की गई तो पता चला कि चीनी-चिकनाई अधिक खाने वालों में से एक लाख के पीछे ६४२ हृदय रोगों से पीड़ित हैं ; जबकि कम या न खाने वालों में उतने ही लोगों में सिर्फ १७६ को दिल सम्बन्धी शिकायतें हैं। पचास वर्ष की उम्र के बाद तो यह अनुपात ड्योढ़ा हो गया अर्थात् ढलती आयु को यह गरिष्ठ पदार्थ और भी अधिक तेजी से हानि पहुँचाने लगे।

आमतौर से लोग स्वादवश चिकनाई और चीनी की मात्रा उससे कहीं अधिक खाते हैं जितनी कि शरीर को वस्तुतः आवश्यकता है। फलतः उन्हें हृदय रोगों से ग्रसित होना पड़ता है। ४० वर्ष के बाद जबकि पाचन तन्त्र शिथिल पड़ जाता है और पित्ताशय एवं अग्नाशय के रसों में कमी आ जाती है तब तो इन गरिष्ठ पदार्थों की बढ़ी हुई मात्रा का पचना और भी अधिक कठिन हो जाता है।

स्पष्ट है कि जो खाते हैं उससे शक्ति नहीं मिलती वरन् उससे मिलती है जो पचता है। चिकनाई और चीनी स्वादिष्ट भले ही लगे, पर वह पचने में कठिन पड़ती है। ढलती उम्र में तो वह और भी अधिक दुष्पाच्य हो जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनसे पेट पर अतिरिक्त भार पड़ता है। इस अवांछनीय भार से जो बीमारियाँ उत्पन्न होती हैं उनमें हृदय रोग मुख्य है। रक्त में चिकनाई का अंश बढ़ जाने से वह गाढ़ा और फुटकी दार बनने लगता है और हृदय के रक्त संचार कार्य में बाधा उत्पन्न करता है।

हर नमक खारी ही नहीं होता उनके स्वाद भिन्न प्रकार के भी होते हैं। समुद्री नमक दाल में नहीं डाला जा सकता उसमें कड़ुआपन होता है; फिर भी वह पूर्णतया नमक वर्ग का है। अन्य कितने ही प्रकार के क्षार लवण खाद्य-पदार्थों में रहते हैं पर ये सेंधे नमक की तरह स्वादिष्ट नहीं होते। ठीक इसी प्रकार खाद्य-पदार्थों में रहने वाली बहुमूल्य शर्कराओं में अनेकों ऐसी होती हैं जिनमें मिठास नहीं होता; फिर भी वे पूर्णतया शर्करा वर्ग की हैं और मीठी लगने वाली शकर से किसी भी प्रकार कम गुणकारी नहीं हैं। हम अपने समान्य सन्तुलित आहार से प्रायः दो प्याले भरकर शर्करा प्राप्त कर लेते हैं जो शरीर का स्वाभाविक क्रिया - कलाप चलाने के लिए सब प्रकार पर्याप्त है। उसके अतिरिक्त जायकेदार चीनी की कुछ भी आवश्यकता नहीं रह जाती। यदि चीनी अलग से खाना बन्द कर दिया जाय तो इससे किसी का कुछ हर्ज नहीं क्योंकि शरीर की आवश्यकता भर को शर्करा तो सामान्य खाद्य-पदार्थों द्वारा पर्याप्त मात्रा में मिल ही जाती है।

फलों, मेवों और शाकों में प्रतिशित कितनी शर्करा होती है उसका आभास नीचे दिये कुछ विवरणों के आधार पर जाना जा सकता है।

सूखा खजूर—७५.४, सूखा अन्जीर—६८.४, काजू—२७.१, बादाम—१६.६, केला—२३.०, अंगूर—२५.३, सेव—१४.६, चुकन्दर—१२.६, सन्तरा—११.२०, रस भरी—१४.८, बेर—१२.३, आलू—२२.५, गाजर—१६.२, मटर—१२.१।

इंग्लैण्ड के आहार विज्ञान विशेषज्ञ प्रो० जोनयूदकिन ने बताया है कि मात्र चिकनाई अधिक खाने के कारण ही नहीं हृदय रोग अधिक चीनी खाने से भी उत्पन्न होते हैं। हृदय के लिए हानि पहुँचाने वाले पदार्थों की सूची में चीनी को भी प्रमुख स्थान दिया जाना चाहिए।

राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन ने अपने एक भाषण में कहा था—"सन् १६२१ में तो चीनी राजनीतिक कारणों से छोड़ी थी पर पीछे भोजन शास्त्र का अध्ययन करने पर जाना कि वह हमारे शरीर के लिए निकम्मी ही नहीं घातक भी है। वह आँतों में जलन पैदा करती है और दूसरी तरह के नुकसान पहुँचाती है। गुड़ और लाल शकर तो खाई भी जा सकती है पर सफेद चीनी के बारे में तो मैं यह चाहूँगा कि उसका उत्पादन ही बन्द कर दिया जाय।

शरीर को शक्ति देने के लिए जिस चीनी की आवश्यकता पड़ती है, वह शहद, मेवे, फल, अनाज आदि में उचित सन्तुलन के साथ पाई जाती है। इसे ग्लूकोज कहते हैं। ग्लूकोज के अतिरिक्त लैक्टोस भी एक प्रकार की चीनी है जो बहुत करके दूध में पाई जाती है। सेलूलूज और सुक्रोज वर्ग की चीनी तभी सुपाच्य होती है जब वह अन्य रसायनों के साथ सन्तुलित मात्रा में मिली हो। गाजर में सुक्रोज स्तर की चीनी है। जो अनुपातिक सन्तुलन के कारण हमारे लिए शक्तिदायक सिद्ध होती है। किन्तु यही सुक्रोज जब अन्य रसायनों से अलग करके केवल सफेद चीनी के रूप में निकाल ली जाती है तो वही दुष्पाच्य और हानिकारक बन जाती है। वह आँतों पर अतिरिक्त दबाब डालती है और पचाने के लिए कैल्शियम की आवश्यकता को पूरी करने के लिए दाँतों, हड्डियों तथा माँसपेशियों को कचोटती है।

सफेद चीनी एक दृष्टि से बिलकुल निस्सार है। उसमें से प्रोटीन, विटामिन, खनिज आदि ईख में रहने वाले सारे उपयोगी पदार्थ निकालकर बिलकुल साफ कर दिये जाते हैं। मिठास के अतिरिक्त और दूसरी कुछ भी ऐसी वस्तु शेष नहीं रह जाती जो शरीर के पोषण में तनिक भी सहायता पहुँचा सके। उसे अधिक से अधिक इतना कहा जा सकता है कि गर्मी बनाये रखने वाले ईंधन का काम दे जाती है। वह शरीर में घुल नहीं पाती। बाहर निकालने के लिए खदेड़े जाते समय वह कुछ न कुछ विकृतियाँ और बीमारियाँ ही शरीर में छोड़ जाती है। इस निरर्थक और हानिकारक वस्तु का मात्र जीभ के स्वाद के कारण इतना अधिक प्रचार बढ़ रहा है, यह देखकर आश्चर्य होता है।

सफेद चीनी की तुलना में गुड़ कहीं अधिक मूल्यवान है। उसमें कितने ही उपयोगी तत्व रहते हैं। विटामिन बी० तो उसमें रहता ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। इसके अतिरिक्त उसकी प्रतिशत मात्रा में निम्न अनुपात से अन्य उपयोगी पदार्थ भी बने रहते हैं।

गान्धी जी गुड़ के हिमायती थे। उनके 'हरिजन' पत्र में कई स्वास्थ्य विशेषज्ञों की सम्मतियाँ इस सन्दर्भ में छपी थीं। डा० अन्सारी ने लिखा था कि पचने और पोषण की दृष्टि से गुड़ की उपयोगिता चीनी की अपेक्षा कहीं अधिक है। डा० मेकल का मत था—'सफेद चीनी में सारे मूल्यवान गुण नष्ट हो जाते हैं, जबकि वे गुड़ में बने रहते हैं। चीनी के मुकाबले में गुड़ बेहतर चीज है।

गुड़ में ढेरों उपयोगी पदार्थ रहते हैं। उसमें प्रतिशत का विश्लेषण इस प्रकार है—प्रोटीन २%, चिकनाई ०%, खनिज ६%, कार्बोहाईड्रेट ६%, कैल्शियम ८%, फास्फोरस ०.४%, लोहा ११%, कैलोरी प्रति दस ग्राम पीछे ३८५।

अस्वाद व्रत में नमक की तरह शर्करा को भी त्याज्य माना गया है। इससे जीभ को संयम में रखने और अखाद्यों को त्यागने की विवेक बुद्धि जागृत होती है। उद्देश्यपूर्ण तप से शारीरिक लाभ प्रत्यक्ष है कि शक्ति के अनावश्यक अपव्यय की बचत होती है। मानसिक लाभ यह है कि विवेकयुक्त कार्य करने एवं संयम बरतने की संकल्प शक्ति बलवान होती है। आहार में से राजभिकता हटा दी जाय और सात्विकता बढ़े तो आत्मबल भी बढ़ेगा ही। इन सभी दृष्टियों से चीनी चिकनाई की वर्तमान भरमार को रोकना और सदा सात्विक आहार प्राप्त करके सन्तुष्ट रहना ही श्रेयस्कर है।

कहीं आप खाद्य पदार्थों के साथ जहर तो नहीं खा रहे

विविध रंगों से सजी-सँवरी धरती की गोद का लाड़ला शिशु—मानव, अपनी माँ धरती की तरह ही रंग प्रिय है। बेरंगी चीज उसे बेमजा, और अनाकर्षक लगती है। उसकी इस रंग प्रियता ने खाने की वस्तुओं में भी रंग का जौहर दिखलाया है और भारत वर्ष जैसे छः ऋतुओं वाले देश में तो कुछ अधिक ही रंगों की बहारें खिली हैं रंगीन खाद्य-पेय पदार्थों के रूप में।

बाजार में निकल जाइये एक से एक बढकर मिठाइयाँ सजी रहती हैं दुकानों पर और उन्हें आकर्षण प्रदान करता है रंग। हर चीज आपको रंगीन मिलेगी जलेबी लो तो रंगीन, बर्फी लो तो रंगीन और तो और एक-एक मिठाई में चार-चार, पाँच-पाँच रंगों का मेल मिलाते हैं मिठाई बनाने वाले। इस रंग ने लोगों के मन को स्वाद से कुछ अधिक ही मोहा है। जिव्हा को स्वेच्छा चरिणी और स्वादोन्मुख बनाने में बहुत कुछ इन रंगों का हाथ रहता है जो आँखों की चिरोरी करके जिव्हा तक अपना संदेश पहुँचा देते हैं। किन्तु कभी आपने सोचा भी है कि आँखों को भाने वाले और जिव्हा के प्रेरित करने पर मन को बहकाने वाले ये रंग-बिरंगे रंग कितने घातक भी हो सकते हैं मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये।

मिठाईयों को ही लें अन्य पदार्थों की चर्चा आगे से हो पाएगी। प्रथम तो मिठाइयाँ स्वयं ही स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होती हैं। मैदे की बनाई गई मिठाईयाँ पेट में जाकर सड़न पैदा करती हैं। करेंगी क्यों नहीं मैंदे का तो गुण ही लोई बनकर लिपटना है तो वह आँतों से क्यों नहीं लिपटेगा। मैदा जब लिपटा रहेगा तो सड़ेगा भी सही। बिस्कट, केक, पेस्ट्री आदि अंग्रेजी ढंग के पकवान भी इसी मैदे से बने होने के कारण उतने ही सड़न के कारण होते हैं। खोए की मिठाइयाँ भी कोई लाभकारी नहीं होतीं। दूध के सारे तत्व तो खोआ बनाने की प्रक्रिया में ही जल जाते हैं। बच रहता है छूँछ वह भी सफेद चीनी जिसे महात्मा गांधी सफेद जहर कहा करते थे, से संयुक्त होकर दुष्पाच्य और छूँछ रह जाती है। उस पर से इसमें मिलाये जाने वाले अप्राकृतिक रंग ने तो उनको और भी घातक बना दिया है।

गुणवन्ता जिसमें होती है उसे सजने-सँवरने की क्या आवश्यकता ? रोटी जिसे हम रोज खाते हैं उसे कभी सजाने सँवारने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती। उसे रोज-रोज खाते हुए भी ऊबते नहीं। क्योंकि उसमें गुणवत्ता है उसमें रंग डालने की बात हम सोचते ही नहीं और सजी-सँवरी मिठाइयाँ एक दिन खायी तो अच्छी लगी। दूसरे दिन भी खानी पड़ी तो बेमन से खाई पर आगे यदि खाना पड़े तो फिर मन ही नहीं करता न खायी जा सकती है। हमारी भूख, हमारी जिव्हा सब मिठाई के विरोध में हड़ताल करने लगते हैं। इस गुणवत्ता का उपयोगिता से विहीन होने के कारण उसे रंगीन बनाना पड़ता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य की सहज स्वाभाविक कलाप्रियता एवं रंगप्रियता का लाभ उठाकर मिठाइयाँ आदि ने अपने को रंगीन बनाकर मिठाई विक्रेताओं की दुकान चलती रहने देने की व्यवस्था बनाई है।

मिठाई और खाने की सामग्रियों में जमकर प्राकृतिक रंग मिलाये जाते रहे तब तक तो इन रंगों के द्वारा तो कुछ अधिक हानि नहीं हुई। यह आवश्यक होता रहा है कि इन रंगों ने मनुष्य को टूँस-टूँस कर खाने के लिये ललचाया है, उसे पेटू बनाया है और उसका यह पेटूपन कई रोगों का कारण बना है साथ ही स्वास्थ्य नाश का कारण भी।

औद्योगिक कान्ति के पहले खाद्य पदार्थों में मिठाईयों में प्रायः प्राकृतिक रंग ही मिलाये जाते रहे थे। ये रंग कुछ अधिक हानिप्रद नहीं थे। मिठाईयाँ तो अपने आप में रोगों की जड़ रही थीं, इसमें तो शक नहीं। औद्योगिक क्रान्ति के बाद जब प्राकृतिक रंगों के स्थान पर कृत्रिम रासायनिक रंगों का प्रयोग होने लगा, तब से मनुष्य के लिये ये मिठाईयाँ नमक छुरी-सी घातक बन रह गयीं।

रंगों के आकर्षण में यह जहर भी हो सकता है। यह जहर अनेकानेक रोगों का जनक भी हो सकता है। ये कृत्रिम रंग पाश्चात्य देशों में ही आविष्कृत हुए, पहले वही आइसक्रीम, केक, पेस्ट्री, शरबत, आइस केन्डी जैसे व्यंजनों में यह प्रयुक्त हुआ। यह घातक रंग प्रयुक्त होते ही रहे। वर्षों तक और लोग उन्हें खाते रहे और बीमार होते रहे पर किसी को पता ही न चला कि यह उन रंगों की करामात है।

वर्षों बाद खोज करने पर इनकी पोल खुलनी आरम्भ हुई। सबसे पहले मक्खन रंगने में प्रयुक्त होने वाले पीले रंग 'बटर यलो' का नम्बर आया। खोज से ज्ञात हुआ कि यह सिरोसित फैलाता। बटर यलो के बाद दूसरी संश्लेषित और अकार्बनिक रंगों की बारी आयी तो वे प्रायः सभी हानिकारक सिद्ध हुए। इनमें ताँबा, पारा, शीशा आदि जहरीले पदार्थ मिले रहते हैं। परीक्षणकर्ताओं ने यह माना कि प्राकृतिक रंग लगभग हानिकारक नहीं होते।

इन शोधों के अनन्तर पश्चिमी देशों में प्रायः सभी संश्लेषित और अकार्बनिक रासायनिक रंगों को खाद्य पदार्थों में मिलाना वैधानिक अपराध माना जाने का विधान बना। सबसे पहले संयुक्त राज्य अमेरिका ने इन रंगों पर पाबंदी लगाई। लाल, नीले और पीले बुनियादी संश्लेषित रंगों के शुद्ध रूप में प्रयोग की छूट रखी गयी। इनका कड़ाई से पालन करने की व्यवस्था और नियम तोड़ने वालों के लिये दण्ड व्यवस्था बनायी गयी। संयुक्त राज्य अमेरिका के बाद कुछ ही वर्षों में सभी पाश्चात्य देशों में खाद्य सामग्री में मिलाये जाने वाले रंगों के सम्बन्ध में कानून बनाए गये।

विज्ञान से मनुष्य ने समय और दूरी पर विजय पायी उसके साथ ही ये रंग हमारे देश में भी आये। यहाँ भी मिलाये गये यहाँ भी कानून बने और कानून के बने रहते भी खाद्य पदार्थों में मिलावट का क्रम चलता रहा। बाजार में मिलने वाले बोतल बंद शरबतों, आकर्षक रैपरों में लिपटे बिस्कुटों, बेबी फूड, कन्फेक्शनरी, मिठाइयों में ही नहीं यहाँ तक की दालों पर भी यह रंग चढ़ाया जा सकता है और स्वार्थवश कई लोग ऐसा करते भी हैं।

बम्बई के श्रीमती मोतीबाई ठाकर सी होम साइंस रिसर्च प्रोजेक्ट के ऑनरी डायरेक्टर डा० बी० सदा शिवन जो बीस वर्ष तक बम्बई महा नगरपालिका के म्युनिसिपल इन्ड पब्लिक एनालिस्ट पद पर कार्य कर रहे थे, जाने-माने आधार जीव रसायनशास्त्री हैं। उन्होंने अपनी बीस वर्ष के महानगर पालिका के म्यूनिसिपल एन्ड पब्लिक एनालिस्ट के रूप में किये अनुभवों का ब्यौरा देते हुए बताया है—"मैं १९४९ से लगभग बीस वर्ष तक वृहत्तर बम्बई में म्यूनिसिपल एन्ड पब्लिक एनालिस्ट रहा और प्रति वर्ष खाद्य सामग्री के हजारों नमूनों का विश्लेषण किया और बहुत सारे मुकदमों में गवाही दी। बहुत तरह की खाद्य सामग्रियाँ मेरे सामने से गुजरीं और मैंने गौर किया कि इनमें बड़े अनुपात में ऐसी चीजें थी जिनमें रंग मिले थे और ये रंग भी ऐसे जो कानून के अनुसार वर्जित थे।"

सरकार ने खाद्य पदार्थों में की जाने वाली मिलावट तथा खाद्य पदार्थों में वर्जित रंग मिलाये जाने की घृणित प्रवृत्ति को रोकने के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कानून बनाये हैं। नगरपालिकाओं के स्वास्थ्य अधिकारियों के नियंत्रण में जो खाद्य निरीक्षक होते हैं, उन्हें किसी भी संदिग्ध पदार्थ को पकड़ने और उनके नमूने लेकर विश्लेषण के लिये ऊपर भेजने के कई अधिकार दिये हुए हैं।

खाद्य निरीक्षकों द्वारा लिये गये नमूनों में यही विश्लेषक कुछ हानिकारक और वर्जित रंग मिले हुए पाता है तो ऐसा करने वाले व्यक्ति पर न्यायालय में अभियोग चलाया जाता है और दोषी पाये जाने पर उसे सजा देती है। पर उसके बावजूद भी पिछले काफी समय तक न तो मिलावट में ही कमी आयी और न ही वर्जित रंगों के प्रयोगें में ही।

केन्द्रीय सरकार ने खाद्य पदार्थों में जिन रंगों को मिलाने की छूट दी है वे हैं— (१) कोचिनियल या कार्मा इन किरमिजी लाल रंग जो कॉर्कस केफ्टाई नामक कीड़े से बनता है (२) केरोटिन और केरोटिनायड पीला व नीला रंग जो पत्तियों से व गाजर से बनता है, (३) क्लोरोफील—पत्तियों का हरा रंग (४) राईबोफ्लेवीन (५) कोमेल जए शक्कर से बना भूरा रंग, (६) अनाटो, पीला, नारंगी बिक्सा ओरे लाना नामक पौधे के बीजों से बना रंग (७) केसर (८) कर्कुमीन और (२) पीलामीण रंग। ये किसी भी अनुपात में खाद्य पदार्थों में मिलाये जा सकते हैं।

कानून की पकड़ तभी काम करती है, जब कि जनता भी जागरूक हो और कर्मचारी भी ईमानदार। इस पकड़ से बचने की गलियाँ भी कम नहीं रहीं। बीस वर्ष के एनालिस्ट के जीवन में अर्जित अनुभवों के आधार पर डा० बी० सदा शिवन ने बताया है कि आज कल सबसे सरलता से उपलब्ध है केसरिया रंग, यह खाद्य पदार्थों में मिलाने के लिये स्वीकृत नहीं है। पर यह थोड़ी-थोड़ी मात्रा में खूब मिलता है और धड़ल्ले से मिलाया जाता है। यह मिलाया ही नहीं केवल दालों को चमकाने में भी काम में लाया जाता है।

वे यह भी स्वीकारते हैं कि प्रयोगशाला में किसी खाद्य पदार्थ में मिले हुए रंग की जाँच करना यों सरल है पर न्यायालय में उसे सिद्ध करना उतना आसान नहीं है। वे स्वयं भी कुछ मुकदमों में मूँग की दाल में केसरिया पीला रंग मिलाने की बात इसलिए सिद्ध नहीं कर पाये थे कि उन्होंने एक ही प्रणाली से उसका विश्लेषण किया था अतः उनकी रिपोर्ट विश्वसनीय नहीं मानी गयी।

रसायन विज्ञान ने इन नानाविध विष युक्त रंग का ही नहीं, सेक्रन "जैसे पावडर और नाना विध एर्सेस खोज निकाले जिनसे गंध उड़े। मिट्टी के तेल को कई प्राकृतिक गंधों युक्त तेल जैसा बना देना सहज सम्भव है। इन सब खोजों का मिलावटियों ने खूब लाभ उठाया है। इसका एक घातक स्वरूप है खाद्य पदार्थों में अस्वीकृत रंगों का मिलाना।

खाने वाले समझते हैं कि वे मिठाई केक, बिस्किट खा रहे हैं और यदि उस आकर्षक मिठाई में मिलाया गया रंग यदि स्वीकृत रंग नहीं हैं तो वह हानिकारक है और जहरीला है तो यह मिठाई खाना कितना महँगा पड़ सकता है। यों भी मिठाइयाँ कोई लाभकारी खाद्य पदार्थ नहीं होतीं। बोतल बंद शरबत, स्वेत रंग-बिरंगे, आइसक्रीम और आइस केन्डी तथा बिस्किट, केक, पेस्ट्रियां आदि जो बाजार में बिकती हैं इनमें इन हानिकारक रंगों का कितना प्रयोग हो सकता है, इसे डा० वी० सदाशिवम ने अपने बीस वर्ष के खाद्य विश्लेषक ने अनुभवों के रूप में बताया ही है।

जब हर वस्तु में मिलावट हो रही हो और खाद्य पदार्थों में विशेषकर तो ऐसी स्थिति में स्वास्थ्य नाश और रुग्ण होने से बचाव करने की दृष्टि से अपनी स्वादप्रियता और रंगप्रियता को छोड़कर बाजारू खाद्य का प्रयोग बंद कर देना विवेकपूर्ण है। यदि हानिकारक होते हुए भी मिठाइयाँ आदि का चाव मिटता नहीं तो व्यक्ति घर पर शाकाहारी मिष्ठान्न और व्यंजन बनायें। उनमें भी देशी शक्कर, गुड़ और प्राकृतिक रंगों का तथा गाजर, हल्दी आदि के रंगों का प्रयोग किया जाना ही उचित है, स्वास्थ्य रक्षण दृष्टि से।

खाया कैसे जाय ?

केवल निमन्त्रण खाने वाले भोजन-भट्ट ही खाने के सम्बन्ध में ऐसी मूर्खता नहीं करते, सुशिक्षित और उच्च पदस्थ कहलाने वाले व्यक्ति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी इस प्रकार की कुटेबों से मुक्त नहीं देखे जाते। प्राकृतिक नियम के अनुसार बड़ी आयु के लोगों को दिन में दो बार भोजन करना पर्याप्त है, पर ये पढ़े-लिखे और विद्वान कहलाने वाले दिन भर में ५ बार हल्का या भारी भोजन कर लेते हैं। इस सम्बन्ध में महात्मा गाँधी का स्वानुभव बड़ा शिक्षाप्रद और साथ ही मनोरंजक भी है। उन्होंने लिखा है—

"मैं निजी अनुभव की बात कहता हूँ और जब अपने पिछले दिनों की बात याद करता हूँ तो हँस पड़ता हूँ और लज्जित हो जाता हूँ। उन दिनों मैं सुबह चाय पीता था, दो-तीन घण्टे बाद जलपान और एक बजे दिन को भोजन करता था। फिर तीन बजे चाय पीता था और सात-आठ बजे के बीच रात में भोजन करता था। उन दिनों मेरी हालत दयनीय थी। मैं काफी मोटा था, फिर भी औषधियों की बोतलें पास ही रखी रहती थीं। अधिक खाने के लिए मैं सदा पचाने वाली औषधि का सेवन करता था और पुष्टिकारक औषधि भी खाता था। लेकिन उस समय मुझमें आज से तिहाई भी काम करने की शक्ति और साहस न था, यद्यपि वे मेरी युवावस्था के दिन थे। ऐसा जीवन सचमुच दयनीय ही नहीं बल्कि पापमय और घृणित है।"

यद्यपि भोजन के सम्बन्ध में बिल्कुल निश्चित नियम बना सकना असम्भव है, क्योंकि इसमें पेशे के भेद से, धनवान् और गरीबी के श्रेणी भेद से, देश-भेद से, आयु-भेद से अन्तर करना ही पड़ेगा। तो भी एक मोटा नियम सबके लिए स्वीकार किया जा सकता है कि खूब भूख लगने पर भोजन किया जाय और पेट में जितनी गुंजायश जान पड़े उससे कुछ कम मात्रा में भोज्य-सामग्री ग्रहण की जाय।

ऐसे लोगों में प्रायः यह देखा जाता है कि एक बार का खाया हुआ भोजन ठीक पच नहीं पाया कि दूसरी बार खाने का समय आ पहुँचा। ऐसे लोग भूख और शारीरिक आवश्यकता के आधार पर भोजन नहीं करते वरन् रसोईघर के नियमों और स्वाद के अनुसार आचरण करते हैं। जबकि प्रकृति के सिद्धान्तानुसार किसी एक प्रकार का पदार्थ स्वाभाविक रूप में ग्रहण करना सर्वोत्तम होता है, आजकल के ज्ञान-विज्ञान में निपुण कहलाने वाले ये व्यक्ति नित नये भोज्य-पदार्थों की खोज करते रहते हैं और कई कई पदार्थों को मिलाकर, अनेक प्रकार के मसाले मिलाकर, तरह-तरह से पकाकर उनको उपयोग में लाते हैं। यह प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है कि रसोईघर में इतनी खोज-बीन और श्रम कभी इस दृष्टि से नहीं होता कि इन परिवर्त्तनों में करने से वह पदार्थ शरीर के अधिक अनुकूल, सुपाच्य और स्वास्थ्यप्रद हो जायेगा। वरन् आजकल की समस्त 'पाक कला' का उद्देश्य सीधी-सादी खाद्य सामग्री को ऐसे व्यञ्जनों में बदल देना होता है, जिससे वह देखने में सुन्दर और खाने में 'जायकेदार' जान पड़े।

खाद्य-पदार्थों की बर्बादी

उदाहरण के लिए आप दूध को ही लीजिये। इसे 'भूलोक का अमृत' बतलाया गया है और निस्सन्देह यह एक सीमा तक स्वास्थ्य, शक्ति, निरोगिता समस्त शारीरिक अंगों और मानसिक वृत्तियों के विकास की दृष्टि से बहुत उत्तम पदार्थ माना जा सकता है। इसमें मानव शरीर और मस्तिष्क का निर्माण करने वाले पौष्टिक तत्त्व, क्षार, विटामिन आदि बहुत उपयुक्त रूप में मिल पाते हैं। पर इनका सर्वोत्तम लाभ तभी मिल सकता है, जब हम उसे गाय, भैंस, बकरी आदि के थन से निकलते ही ज्यों का त्यों धारोष्ण रूप से पी लें। यदि इस प्रकार की सुविधा उपलब्ध न हो और उसे कुछ घण्टे रख कर काम में लाना पड़े तो यह व्यवस्था कर दी गई है कि उसे आग पर थोड़ा उबालकर काम में ले आया जाय, जिससे वे हानिकारक जीवाणु जो रखे रहने से बढ़ जाते हैं, दूर हो जायें। इस प्रकार का पकाया दूध धारोष्ण दूध की अपेक्षा गुणों में न्यून अवश्य हो जायेगा, तो भी उससे शरीर के पोषण और शक्ति प्राप्त होने में पर्याप्त सहायता मिलेगी।

पर हमारे यहाँ ऐसे लागों की कमी नहीं जिनको यह 'अमृत' कहा जाने वाला दूध स्वाभाविक रूप से किसी काम का नहीं जान पड़ता और वे उसे तरह-तरह की तरकीबों से इतना बदल डालते हैं कि अनजान आदमी पहचान भी नहीं सकता कि यह वही दूध है। वे दूध को घण्टों तक आग पर रखकर और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घोंट-घोंट कर उसका 'खोआ' बना डालेंगे। हम नहीं जानते कि यह 'खोआ' या 'खोया' नाम किस आधार रखा गया है। पर यह प्रत्यक्ष दिखाई पड़ता है कि इस तरह का परिवर्तन करने से दूध के सब गुण खो जाते हैं—नष्ट हो जाते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा के ज्ञाता तो इस 'खोवा' को 'दूध का कोयला' कहते हैं क्योंकि इतनी देर तक आग पर रखे रहने से उसके लाभकारी अंश—क्षार और विटामिन सब जल-भुन कर नष्ट हो जाते हैं। फिर जब इस खोवा को चीनी-बूरा आदि मिलाकर खूब पकाया और घोंटा जाता है और उसे पेड़ा, बरफी, गुझिया, लड्डू आदि तरह-तरह की आकृतियों में बदल कर उस पर पिस्ता, चिरोंजी, चाँदी के वर्क आदि लगाकर सजा दिया जाता है, तब वह 'स्वाद-प्रिय और 'पाक-कला' के प्रेमियों को पसन्द आता है।

यह बात फलों के सम्बन्ध में दिखाई देती है। आम हमारे यहाँ का सर्वोत्तम फल माना जाता है और वास्तव में स्वाद और गुणों का ऐसा समन्वय शायद ही किसी और फल में पाया जाता हो। पर उसे भी हम ताजा खाने के बजाय तरह-तरह के रूपों में बदलकर ही खाने की कोशिश करते हैं। फलों और अन्य खाई जाने वाली हरी वनस्पतियों में जो 'विटामिनों' का अपूर्व तत्त्व पाया जाता है, वह ताजी अवस्था में ही रहता है। जैसे-जैसे समय बीतता जाता है, ये विटामिन कम पड़ते या नष्ट होते जाते हैं। पर हमारे यहाँ आम को पेड़ से तोड़ने के बाद दस-दस, पन्द्रह-पन्द्रह दिन तक पाल में रखने के बाद बेचा और खाया जाता है, जिससे उसके गुणों में बहुत अन्तर पड़ जाता है। फिर उसमें भी कितने ही लोग चीनी, नमक, मिर्च, मसाला न मालूम क्या-क्या मिलाकर खाते हैं। इसके सिवा लाखों मन आमों का अचार मुरब्बा बनाकर चार-छः महीने बाद खाया जाता है। इतने समय तक फल का गुण कैसे बचा रहेगा यह विचारणीय है। यही कारण है कि जहाँ आम का फल हर तरह से उत्तम और लाभकारी माना गया है, उसके अचार को प्रत्येक चिकित्सक महा हानिकारक बतलाता है और किसी भी बीमारी के इलाज में सबसे पहले उसका परहेज रखने की हिदायत कर दी जाती है।

अति भोजन की हानिकारक प्रवृत्ति

प्राचीन-काल में जब सामान्य जनता में ज्ञान-विज्ञान का आजकल के समान प्रचार भी नहीं हुआ था, लोगों के अधिक स्वस्थ और दीर्घजीवी होने का कारण यही था कि वे अल्प-भोजी थे। उस समय तक उन्होंने स्वाद की निगाह से सैकड़ों प्रकार के व्यञ्जन, पकवान, अचार, मुरब्बे आदि का 'आविष्कार' नहीं किया था और बहुत ही साधारण जो कि रोटी, सत्तू और दूध आदि पर ही निर्वाह करते थे। इसके अतिरिक्त जो बहुत मामूली जंगली फल-फूल आस-पास में मिल जाते थे उनको भी काम में ले आते थे। इन वस्तुओं में कोई ऐसी बात नहीं जिससे स्वाद के प्रलोभन से अधिक बार-बार खाने की इच्छा हो। पुराणों के कथनानुसार त्रेतायुग में पेड़ों से किसी प्रकार का शहद या रस पैदा होता था, उसी से सब लोग काम चलाते थे। द्वापर में अन्न की खेती कुछ आरम्भ हुई। ऐसी दशा में सब लोगों का मिताहारी और अल्पभोजी होना निश्चित ही था। वे बहुत भूख लगने पर उतना ही केवल किसी एक प्रकार का भक्ष्य पदार्थ ग्रहण करते थे जितने की शरीर को अत्यन्त आवश्यकता होती थी। ऐसे लोग यदि सदैव सवस्थ रहें और आयु का अन्त आने पर शान्तिपूर्वक देह त्याग दें, तो उसमें आश्चर्य क्या है ?

पर आजकल बहुसंख्यक लोग ऐसे हो गये हैं जो जानते ही नहीं कि सच्ची भूख क्या होती है ? सामान्य स्वास्थ्य वाले मनुष्य के लिए दिन में दो बार भोजन करना पर्याप्त माना गया है जिसमें भी एक बार प्रातःकाल हल्का भोजन करना ही लाभकारी बतलाया गया है। पर आजकल खाते-पीते लोगों में चाय और बिस्कुट, नमकीन आदि का जलपान, दोपहर का भोजन तथा शाम की ब्यालू तो आवश्यक ही मान ली गई है। इसके सिवा जो अपने को अधिक पुष्ट बनाना चाहते हैं वे दोपहर के तीन बजे के लगभग भी कुछ खा लेते हैं और रात को सोते समय आधा सेर दूध पी लेना भी 'गुणकारी' मानते हैं। अनेक वैद्यक ग्रन्थों में भी सोते समय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूध पीने की सलाह दी गई है, पर उस दशा में शाम का भोजन छोड़ देना या बहुत अल्प करना आवश्यक है।

जो लोग इस प्रकार चार-पाँच बार खायेंगे और उसके लिए बढ़िया स्वादिष्ट भोज्य पदार्थ तैयार करायेंगे, वे यदि अपनी पाचन शक्ति की अपेक्षा अधिक खा जायँ तो उसमें कुछ भी असम्भव नहीं है। यह हिसाब भी उन लोगों का है, जो नियम का पालन करते हुए भोजन करते हैं। पर जिन लोगों को चटोरेपन की आदत लग गई है उनकी तो बात मत पूछिये। ऐसे लोगों का मुँह दिन भर चलता ही रहता है। कभी खोंचा खा लिया, तो फिर कुलफी मलाई वाला आ गया। फिर दालमोंठ वाले ने आवाज लगाई, तो उसके बाद रसगुल्ला वाला दिखाई पड़ गया। सारांश यह है कि ऐसे व्यक्ति अकेले या संगी-साथियों के साथ दिन में बार-बार कुछ न कुछ खाते रहते हैं और इसमें अपनी बड़ी शान समझते हैं कि इतना खाने-पीने पर भी हमको कोई नुकसान नहीं होता। मेले-तमाशों और दावतों में तो ऐसे लोग इतनी 'अति' कर देते हैं कि दूसरे ही दिन 'तबियत खराब होने की खबर' आती है वैसे भी ऐसी अनियमितता और पेट की शक्ति से अधिक चाहे तो अंट-शंट खाते रहने से जिन्दगी दो-चार या दस-पाँच पर्ष ही प्रकट में ठीक तरह चलती है। उसके बाद शरीर के भीतर इकट्ठे होने वाले दोषों का प्रभाव दिखाई देने लगता है। तब उनको साल छः महीना कामचलाऊ स्वास्थ्य से ही निर्वाह करना पड़ता है और हद से हद पचास-साठ वर्ष की आयु तक इस संसार को खाली करके चला जाना होता है।

हमारा स्वाभाविक भोजन

मनुष्य के लिए सबसे अधिक लाभकारी और स्वाभाविक भोजन कौन-सा है—यह विषय काफी विवादग्रस्त है। जैसा हम आरम्भ में कह चुके हैं इसमें देश-भेद और जाति-भेद से विभिन्न प्रकार की सम्मतियाँ सुनने में आती हैं। इस समय संसार की अधिकांश आबादी को भोजन की दृष्टि से तीन भागों में बाँटा जा सकता है। प्रथम भाग वह है जो मुख्यतः अन्नाहार करता है। इनमें पूर्ण शाकाहारी भारतवर्ष के कुछ लोग ही हैं, जो परम्परा और धर्म के अनुसार भी माँस को सर्वथा त्याज्य मानते हैं। शेष लोगों में से बहुसंख्यक ऐसे हैं जो धार्मिक रस्मों के कारण कभी-कभी माँस खा लेते हैं पर उनका नियमित भोजन किसी प्रकार की कृषि सम्बन्धी पैदावार ही है। संसार के किसान इसी श्रेणी में आते हैं और अन्य गरीब लोग भी व्यय की निगाह से ऐसा निरामिष आहार ही करते हैं, अतः इस वर्ग की संख्या सर्वाधिक है।

दूसरी श्रेणी में मिश्रित भोजन करने वाले हैं। इनमें इंग्लैंड, अमरीका, चीन, जापान आदि के मध्यम वर्ग के लोग हैं। भारत के धनी मुसलमान तथा माँसाहारी जातियों के हिन्दू भी इसी में शामिल हैं। तीसरी श्रेणी में वे लोग हैं जो केवल माँस खाते हैं। ऐसे ठण्डे या जंगली प्रदेश के मनुष्य हैं, जहाँ खेती नहीं की जा सकती अथवा उनको इसका ज्ञान नहीं। ऐसे लोगों की संख्या अपेक्षाकृत बहुत कम है।

जब हम इन तीनों प्रकार के भोजनों के सम्बन्ध में विचार करते हैं और यह जानना चाहते हैं कि मनुष्य का वास्तविक भोजन क्या है तो हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि मनुष्य का स्वाभाविक भोजन माँस नहीं हो सकता है। यो काटपीट और देर तक आग पर उबालकर उसे काम में ला सकते हैं। पर वह मनुष्य के लिए स्वाभाविक किसी प्रकार नहीं कहा जा सकता। मनुष्य के दाँत और आमाशय की बनावट शाकाहारी जीवों से मिलती है। इस दृष्टि से मनुष्य की तुलना बन्दर से की जा सकती है, क्योंकि उसके दाँत और पेट मनुष्य से बहुत कुछ मिलते-जुलते हैं। बन्दर कभी माँस नहीं खा सकता और यदि किसी प्रकार धोखे बदले हुए रूप में उसे माँस खिलाया जाय तो वह बीमार हो जायेगा। घास खाने वाले गधा, घोड़ा हिरन आदि से भी मनुष्य के अंग कुछ मिलते हुए होते हैं। पर माँसभक्षी जीवों से, जैसे—शेर, चीता, भेड़िया आदि से उसके दाँतों और आमाशय की बनावट में बहुत अधिक अन्तर होता है। इससे वैज्ञानिकों ने यही निश्चय किया है कि मनुष्य का भोजन माँस नहीं है, वरन् फल और मूल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। इसका अधिक विवेचन करते हुए एक स्थान पर बतलाया गया है—

"फलों के अन्दर वह सब तत्व पाये जाते हैं, जो मनुष्य के लिये आवश्यक हैं। केला, आम सन्तरा, खजूर, अंगूर, सेव, बादाम, मूँगफली आदि में पुष्टिकारक तत्व पर्याप्त मात्रा में मिलते हैं। वैज्ञानिकों की यह भी राय है कि भोजन को पकाना नहीं चाहिये, धूप में पके हुए फल ही सबसे अधिक लाभदायक होते हैं, पकाये हुए भोजन का पुष्टिकारक और स्वास्थ्यवर्धक अंश बहुत कुछ नष्ट हो जाता है। 'जो वस्तु बिना आग पर पकाये हम नहीं खा सकते उसे प्रकृति ने हमारे लिये नहीं बनाया है, यही मानना चाहिए।'

भोजन का उचित परिमाण

भोजन का उचित परिमाण अथवा उसकी मर्यादा क्या हो ,इसके लिए कोई ऐसा सामान्य नियम नहीं बताया जा सकता, जो प्रत्येक व्यक्ति पर लागू किया जा सके। एक ही घर में रहने वाले दो प्रौढ़ व्यक्तियों में से एक ३-४ रोटी खाकर रहता है, जबकि दूसरा ६-७ तक खा जाता है। फिर दफ्तर में ८ घण्टे बैठकर काम करने वाले क्लर्क और सुबह से शाम तक फावड़ा चलाने या लकड़ी चीरने वाले मजदूर में भोजन के परिमाण में अन्तर होना स्वाभाविक ही है। पुरुष और स्त्रियों के भोजन में थी अन्तर देखा जाता है।

यद्यपि आजकल संसार में भोज्य-साम्रगी की कमी का बहुत शोर मचा है पर खाद्य-विशेषज्ञों का मत है कि वर्तमान समय में ६० प्रतिशत व्यक्ति जरूरत से अधिक ही खाते हैं। जैसा भारतीय पुराणों में कहा गया है कि 'कलियुग में अन्न में ही प्राण रहता है' आजकल लोगों के मन में यह बात जम गई है कि जितना अधिक खाया जाता है उतना ही शरीर पुष्ट और ताकतवर बनता है। जबकि वास्तविकता यह है कि अधिक भोजन शारीरिक और मानसिक दोनों शक्तियों को घटाता है। पुराने युग की बातों को तो जाने दीजिये, जबकि कहा जाता है कि बहुसंख्यक व्यक्ति महीनों और वर्षों तक बहुत ही कम आहार कर और अनेक समय पत्तों और जल पर ही रहकर तपस्या करते थे, पर आजकल भी ऐसे लोग मिल सकते हैं जो सामान्य लोगों से आधा या चौथाई आहार ग्रहण करते हैं, और फिर भी जिनका स्वास्थ्य बहुत अच्छा बना रहता है। एक लेखक ने तो स्वयं अपने ऊपर परीक्षण करके यह प्रतिपादित किया है कि यदि भोजन के सत्व को नष्ट न किया जाय तो ४० तोले के बजाय ४ या १० तोले में हमारा काम बड़ी अच्छी तरह चल सकता है और उससे हमारे स्वास्थ्य की अभूतपूर्व उन्नति हो सकती है।

यद्यपि हम मौजूदा हालत को देखते हुए अपने एक औसत दर्जे के देशवासी से यह आशा नहीं कर सकते कि वह ऐसे आदर्शवादी या अपवादस्वरूप लोगों की शिक्षा को मानकर अपने आहार में बहुत कमी कर सकेंगे, तो भी अगर वे बिना किसी प्रकार का खतरा उठाये अपने भोजन में दो-चार महीने तक प्रति मास एक-एक दो-दो तोले अन्न की कमी करें और उसे पहले की अपेक्षा कुछ कम पकाने और अधिक चबाकर खाने का अभ्यास बढ़ावें तो स्वास्थ्य की दृष्टि से वे लाभ में ही रहेंगे। अनुभवी लोगों का कहना है कि जो व्यक्ति उचित एवं मामूली भोजन करता है उसको कभी कब्ज आदि की शिकायत नहीं होती और उसका पाखाना कुछ कड़ा और दुर्गन्धरहित होता है तथा बिना प्रयास के तुरन्त निकल जाता है। उसका कुछ भी अंश मलद्वार में लगा नहीं रह जाता, जैसा कि स्वस्थ पशुओं में देखा जाता है, जिसका मलद्वार बिना धोये, पोंछे साफ बना रहता है।

मनुष्य के आहार का परिमाण नियत कर सकने के उद्देश्य से वैज्ञानिकों ने प्रत्येक खाद्य पदार्थ का विश्लेषण करके उनके खाद्य सत्व का निर्णय किया है, जिसे 'कैलोरी' का नाम दिया गया है। उदाहरण के लिए इस सिद्धान्तानुसार आधी छटाँक गेहूँ के आटे में ११३ 'कैलोरी' होती है, दालों में १००, बादाम, अखरोट आदि मेवों में १८३, मूँगफली में १५५, गाय के दूध में १८ और भैंस के दूध में ३० कैलोरी होती है। इस गणना के आधार पर उन्होंने घर के भीतर काम करने वालों या हल्के काम करने वालों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिए पूरा भोजन ७ छटाँक आटा, १ छटाँक दाल, ८ छटांक दूध या छाछ आदि बतलाया है, जिसमें कुल मिलाकर १८७० 'कैलोरी' होती है। पर जो लोग मेहनत-मजदूरी का काम करते हैं, उनको ८ छटाँक आटा, १ छटाँक दाल अंकुर निकला चना, मोंठ आदि आवश्यक बतलाया गया है, जिससे ३२५० कैलोरी प्राप्त हो सकती है, गर्भवती स्त्री के लिए ३५०० कैलोरी की जरूरत होती है क्योंकि उसे उदरस्थ शिशु का भी पोषण करना पड़ता है।

जैसा कहा जा चुका है भोजन के परिमाण के सम्बन्ध में कोई निश्चित नियम नहीं बनाया जा सकता। इस सम्बन्ध में भारतीय आयुर्वेद शास्त्र का यह नियम ही व्यावहारिक है कि जितनी भूख हो उसका तीन चौथाई भाग ही खाया जाय और आमाशय के शेष भाग को जल तथा वायु के संरक्षण के लिए खाली रखा जाय। यदि भोजन के बाद खट्टी डकारें आने लगें अथवा कुछ देर ठहरकर वायु विकार उत्पन्न हुआ तो समझ लेना चाहिए कि हमने आवश्यकता से अधिक खाया है। वैसे तो हमारे यहाँ ऐसे लोगों की भी कमी नहीं जो दो-तीन सेर लड्डू, पेड़ा या रबड़ी या बीस-तीस रोटी एक साथ खाने को अपनी बड़ाई समझते हैं और इनके लिये शर्त बदने को तैयार हो जाते हैं पर इतना खाना हजम होकर रस-रक्त के रूप में परिणित तो हो नहीं सकता। बस नतीजा यह होता है कि उसका अधिकांश भाग मल बनकर पेट में भर जाता है। जब ऐसे लोगों के शरीर की मलयुक्त स्थिति पर विचार करते हैं तो एक प्रकार की घृणा का भाव ही पैदा होता है। इस प्रकार अधिक खाना अपने शरीर और समाज के प्रति एक पाप ही है।

शक्ति और पौष्टिकता का झूठा भ्रम

इस प्रकार विचार करने से हम इसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि केवल स्वाद की निगाह से भोज्य पदार्थों में तरह-तरह के परिवर्तन करना कभी शरीर के लिये हितकारी नहीं हो सकता। हमारे देश के प्राचीन ग्रन्थों में तो आहार को एक प्रकार की 'औषधि' बतलाया गया है, जो 'भूख' रूपी रोग का निवारण करने को ग्रहण की जाती है। उस युग के ऋषि-मुनि, जिनकी कृतियों पर हम अभी तक अभिमान करते हैं और संसार की अन्य जातियों के विद्वान भी जिन्हें सम्मान की दृष्टि से देखते हैं भोजन को इसी दृष्टि से देखते थे, भोजन का इसी दृष्टि से प्रयोग करते थे। उन्होंने न कभी पेड़ा-लड्डू के दर्शन किये थे और न पूड़ी-कचौड़ी का स्वाद चखा था। वे प्रायः दूध, शहद और जंगलों में कन्द, मूल फलों पर ही निर्वाह करते थे और वह भी उतनी ही मात्रा में जिससे शरीर-रक्षा हो सके। इस प्रकार अधिक कार्य और अल्प भोजन का परिणाम यह होता था कि वे जो कुछ खाते थे वह पूरी तरह पचकर शरीर में आत्मसात् हो जाता था और वास्तविक शक्ति उत्पन्न करता था। इसी से वे पूर्ण स्वस्थ और दीर्घ-जीवी रहकर ऐसे कार्य कर सकने में समर्थ हो सके, जिससे आज तक उनका नाम स्मरण किया जाता है।

पर आजकल हम बिल्कुल उल्टी दिशा में जा रहे हैं। हम समझते हैं कि जितना अधिक और बढ़िया खाया जायेगा उतना ही हम मोटे और तगड़े होंगे, उतनी ही ताकत आयेगी। इस भ्रम में पड़कर अमीर और साधन-सम्पन्न लोग स्वयं और अपने बच्चों को अधिक से अधिक घी, दूध, मेवा, मिठाई खाने, खिलाने की चेष्टा करते हैं। ऐसे लोग अपने सामने लड़कों की दाल में छटाँक, आधा पाव घी डलवाकर खिलाते हैं और सुबह से शाम तक कई बार पौष्टिक (गरिष्ठ) पदार्थ खाने का आग्रह करते हैं। उनका आशय यही होता है कि इस प्रकार उनके लड़के शीघ्र मोटे, ताजे और शक्तिशाली हो जायें। पर नतीता प्रायः उल्टा होता है। वे चाहे देखने में भले मोटे ही हो जायें पर उनमें वास्तविक ताकत, सहनशक्ति बहुत कम होती है। जबकि एक सूखी रोटी खाने वाला मजदूर स्वस्थ रहकर सुखी जीवन बिताता रहता है। ये 'मोटेमल' युवावस्था से ही दवाओं का सहारा लेने लगते हैं और अधेड़ होने तक तो अनेक रोगों के शिकार बनकर वैद्यों और डाक्टरों के भरोसे ही जिन्दगी के दिन पूरे करने लगते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस प्रकार अनाप-शनाप खाकर मोटे और तगड़े होने की कोशिश हर तरह से प्राकृतिक नियमों के विपरीत है और उससे किसी तरह यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता। 'सेठ' और 'लाला' लोगों की बात छोड़ दीजिये, जो पहलवान कहलाने वाले सेरों घी और बादाम हर रोज खा जाते हैं और उन्हें पचाने को हजारों दण्ड-बैठकें लगाते हैं, वे भी सच्चे स्वास्थ्य की दृष्टि से गये-गुजरे ही होते हैं, ऐसे लोगों की वास्तविक दशा का वर्णन करते हुए स्वास्थ्य विषयक पुस्तकों के एक लेखक ने लिखा है–

"प्रयाग ही में एक बड़े मोटे और प्रसिद्ध पहलवान थे। बीस साल पहले की बात होगी कि मुझे भी व्यायाम और कुश्ती का शौक हुआ। मैं सायंकाल के समय उनके अखाड़े में जाया करता था। कुछ दिन बाद चर्चा चलने पर पहलवान महोदय ने कहा—मास्टर साहब, मुझे बवासीर का रोग है। करीब आधा सेर खून रोज पाखाने के साथ निकल जाता है। यह न होता तो न जाने हम कितने 'तन्दुरुस्त' हो जाते। मैं दो सौ बादाम रोज खाता हूँ और एक हजार डण्ड तथा एक हजार बैठक लगाता हूँ। अगर यह रोग न होता तो मेरा शरीर न जाने कैसा बन गया होता ?"

पहलवान जी की वह दशा सुनकर मैं अवाक् रह गया। मुझे आश्चर्य होने लगा कि ऐसा हट्टा-कट्टा आदमी बवासीर से किस प्रकार पीड़ित हो सकता है ? मैंने खोज करनी शुरू की। कई पहलवानों का साथ किया और उनसे परिचय बढ़ाया तो मुझे यही विदित हुआ कि अधिकांश पहलवानों को बवासीर का रोग अवश्य होता है।

वास्तविक बात यह होती है कि ये पहलवान कृत्रिम जीवन व्यतीत करके अपनी माँसपेशियों की वृद्धि तो कर लेते हैं और लगातार व्यायाम करके उनको और मजबूत भी बना लेते हैं, पर उनके भीतरी शारीरिक अंगों पर अति भोजन के कारण जो कुप्रभाव पड़ता है, उससे उनकी जीवनी शक्ति बहुत न्यून पड़ जाती है। ऐसे लोगों के शरीर में इतनी भी सहन शक्ति नहीं होती कि किसी बीमारी का सामना देर तक कर सकें। हिन्दुस्तान का सबसे बड़ा पहलवान गुलाम, जिसने एक बार दुनियाँ भर के पहलवानों को लड़ने के लिए ललकारा था और पेरिस की प्रदर्शनी में पं० मोतीलाल जी नेहरू के साथ जाकर प्रसिद्ध तुर्की पहलवान मादरअली को पराजित किया था वही गुलाम पहलवान कलकत्ते में हैजा हो जाने पर ढाई घण्टे में मर गया। और भी ऐसे अनेक पहलवानों के उदाहरण मिले हैं, जो अवसर पड़ने पर किसी संक्रामक बीमारी का मुकाबला नहीं कर सके और अकाल में ही मृत्यु-मुख में चले गये।

इसका कारण यही है कि खूब लम्बे-चौड़े और विशाल शरीर के होते हुए से व्यक्तियों की देह विजातीय द्रव्यों से भारी होती है। हमने किसी पुराने विचार वाले के मुख से एक कहावत सुनी थी कि 'मल में ही बल' है। ऐसे पहलवानों में जो ताकत होती है वह 'मल' की ही होती है। जब तक वह मल अपने स्थान में दबा पड़ा रहता है तब तक तो कोई खराबी नहीं जान पड़ती, पर जब किसी आकस्मिक घटना के कारण वह उखड़ जाता है तो उसका दूषित प्रभाव शरीर भर में व्याप्त हो जाता है और भयंकर परिणाम तुरन्त प्रकट हो जाता है।

भोजन के सत्व को सुरक्षित रखा जाये

फल मनुष्य का आदर्श भोजन है और जहाँ पोषण योग्य फल अधिक मात्रा में होते हैं वहाँ के निवासियों के उदाहरण से भी यह सिद्ध होता है कि फलाहार निस्सन्देह स्वास्थ्य वृद्धि के लिये अति उत्तम है, तो भी वर्तमान परिस्थिति में जब महँगाई के कारण फलों का मिलना दिन पर दिन कठिन होता जाता है, अतः सर्वसाधारण की उनके प्रयोग की सलाह देना निरर्थक है। इस समय तो अनाज का मिलना भी एक समस्या होती जा रही है और यदि हम उसका प्रयोग भी सोच-समझकर आरोग्यता के नियमानुसार करें तो बहुत कुछ लाभ उठा सकते हैं।

गेहूँ और अन्य अनाजों के व्यवहार में भी सबसे प्रधान बात यह है कि उनका कोई भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंश अलग न किया जाय और उनको बहुत बारीक न पीसा जाय। आजकल बड़े शहरों में जो मिलों का आटा बिकता है, वह इस दृष्टि से बहुत घटिया और सत्व से रहित होता है। एक तो तेज चाल की बिजली या इञ्जिन से चलने वाली चक्कियों में गर्मी के कारण अन्न का सार यों ही बहुत कुछ जल जाता है, फिर उसे बारीक चलनियों से छानकर उसकी चोकर को बिल्कुल अलग कर दिया जाता है। इन दोनों बातों से आटा साररहित और पचने में गरिष्ठ हो जाता है। एक चिकित्सक ने जाँच करने के लिए दो कुत्ते लेकर एक को मशीन के आटे की रोटी खिलाई और दूसरे को हाथ से बनाये आटे का भोजन दिया। पहला कुत्ता कमजोर होकर जल्दी मर गया जबकि दूसरा बहुत दिनों तक स्वस्थ बना रहा।

गेहूँ आदि को उपयोग में लाने का सबसे बड़ा अच्छा तरीका यही है कि उसे अच्छी तरह साफ करके हाथ की चक्की में कुछ मोटा पीस लिया और बिना छाने उसकी 'रोटियाँ' बनाई जाएँ। इसकी रोटियाँ मिल के आटे की अपेक्षा नर्म और स्वाद में अच्छी होंगी, चाहे देखने में वे वैसी सफेद और आकर्षक न लगें। पोषक तत्व तो उसमें अधिक रहेगा ही क्योंकि अन्न के उपयोगी क्षार उसकी चोकर में ही रहते हैं। केवल जौ में ऊपरी भूसी का अंश इतना अधिक होता है कि उसे पीसने के पहले फटक-कर छुड़ा दिया जाना चाहिए। अन्यथा मक्का, बाजरा, ज्वार आदि सभी अन्न ऐसे हैं कि उनको साफ करके पीसा जाय तो छानने की कोई जरूरत नहीं होती है।

इन अन्नों को अगर मोटा दलकर दलिया के रूप में पकाकर खाया जाय तो उनकी पोषक शक्ति अधिक रहती है और पचने में भी सुगमता रहती है। इस प्रकार दलिया के रूप में अनाज के खर्च में भी कमी आ सकती है। रोटी, परौंठा के रूप में जिस व्यक्ति के लिये आधा सेर (४६५ ग्राम) अन्न की आवश्यकता होगी उसका काम दलिया के रूप में डेढ़ पाव (३५० ग्राम) में ही चल सकता है। इसी प्रकार यदि हम गेहूँ और चना आदि को भिगोकर अंकुरित करके थोड़ा उबालकर या कच्चा ही (जिनको जैसा अनुकूल हो सके) खायें तो अन्न की मात्रा एक पाव ही रह सकती है। आजकल हम जो तरह-तरह के भोज्य पदार्थ कृत्रिम स्वादयुक्त तैयार करते हैं उसमें अन्न की बर्बादी भी होती है और लालचवश खाया भी अधिक जाता है। यह परिस्थिति अन्न के खर्च और स्वास्थ्य-हानि दोनों की निगाह से त्यागने योग्य है।

यद्यपि ऐसे लोग जिन्होंने इस विषय पर कभी गम्भीरता से विचार नहीं किया है अथवा जिनमें तर्क और बुद्धि का प्रयोग करके ऐसे विषयों को समझ सकने की क्षमता नहीं है, अन्न की इस प्रकार बचत करने की बात को हँसी में उड़ा देने की चेष्टा करेंगे, पर उनको स्मरण रखना चाहिये कि जनसंख्या की असीमित वृद्धि और आर्थिक परिवर्तनों के कारण अब ऐसा समय समीप आ चुका है, जब प्रत्येक मनुष्य के लिये पूरा अनाज मिल सकना असम्भव हो जाय। यद्यपि आज भी हमारे देश में सौ में से १०-२० व्यक्ति ऐसे निकलेंगे जिनको भरपूर अन्न प्राप्त नहीं होता। पर कोई आश्चर्य नहीं कि दस-पाँच वर्ष में ही ऐसे लोगों की संख्या ८०-६० तक जा पहुँचे।

इसलिये वर्तमान समय में जीभ के स्वाद के लिये अथवा अब तक पड़ी आदतों के कारण अन्न को ऐसे ढंग से काम में लाना जिससे उसकी बर्बादी हो, एक गलत तरीका है। उससे जहाँ एक ओर स्वास्थ्य की खराबी होती है दूसरी ओर समाज की कुसेवा होती है। इस समय यदि हम खाद्य-समस्या पर विचार करके अपनी भोजन पकाने की विधि और बहुत तरह के भोज्य पदार्थों की संख्या को घटाने की ओर ध्यान दें, तो इससे हमारा तथा देश का बहुत कुछ हित साधन हो सकता है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से तो ऐसा खाना कभी हानिकारक हो ही नहीं सकता, यदि उचित परिमाण का ध्यान रखा जाय। हमको एक मजदूर का उदाहरण मालूम है, जिसे एक बार बेकारी के कारण दो-तीन महीने तक अत्यन्त गरीबी के दिन बिताने पड़े थे। उन दिनों उसे बड़ी कठिनता से दस-बारह तोला मटर मिल जाती थी। लाचार होकर वह उन्हीं को थोड़ा-थोड़ा करके मुँह में डाल लेता और बड़ी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देर तक चुभलाकर मुँह में ही नर्म करता और तब धीरे-धीरे चबाकर खाता। यद्यपि प्रकट में यह दशा अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण जान पड़ती थी, पर बाद में उस मजदूर ने बतलाया कि "उन दिनों मेरा स्वास्थ्य जितना उत्तम और निरोग हो गया था उतना मैंने जीवन में और कभी अनुभव नहीं किया।" वास्तविक तथ्य यही है कि प्रत्येक खाद्य-पदार्थ अपने स्वाभाविक रूप में जितना शक्ति- प्रदायक और गुणकारी होता है उतना ही उसे तरह-तरह से बदल डालने और नमक मिर्च, मसालों की भरमार करके खाने से वह हर्गिज नहीं रहता।

भोजन के सम्बन्ध में १४ उपयोगी सूत्र

भोजन का क्षेत्र विस्तृत है और देश-भेद तथा मनुष्यों की प्रकृति भेद के कारण उसके कोई सर्वमान्य नियम बना सकना सम्भव नहीं है। हम इतना ही कर सकते हैं, कि कुछ सामान्य और हितकारी नियम बतला दें फिर उसके वास्तविक आशय को समझकर अपने ऊपर उन्हें प्रत्येक मनुष्य स्वयं ही लागू कर सकता है। इसी दृष्टि से भोजन-विज्ञान के मुख्य-मुख्य सिद्धान्त और उनको व्यवहार में लाने के सम्बन्ध में कुछ सुझाव हमने बतलाये हैं इसके सिवा अन्य विद्वानों ने इस विषय का और भी अधिक विवेचन किया है और भोजन द्वारा स्वास्थ्य प्राप्त करने की कितनी ही विधियाँ बतलाई हैं। इन सबका वर्णन इन थोड़े से पृष्ठों में कर सकना तो सम्भव नहीं है, पर हम उनका सारांश संक्षेप में यहाँ दे रहे हैं, जिससे पाठक उनको ध्यान में रख सकें और सुविधानुसार प्रयोग में ला सकें।

(१) भोजन के परिमाण के सम्बन्ध में कई चिकित्सकों ने यह सुझाव दिया है कि आमाशय को तीन भागों में विभाजित करके एक भाग को ठोस पदार्थों से भरना चाहिये, दूसरे को चाटने योग्य और पेय पदार्थों से और तीसरे भाग को वात, पित्त, कफ के विचरण के लिये खाली रखना चाहिये। इस नियम को ठीक ढंग से समझकर उसका पालन करने से स्वास्थ्य-रक्षा में बहुत सहायता मिलती है।

(२) भोजन सदा नियत मात्रा में करना चाहिए। कभी कम और कभी ज्यादा भोजन करना हितकारी नहीं हो सकता। नपा-तुला और नियत समय पर खाने से पाचन-क्रिया में सुविधा रहती है और स्वास्थ्य में किसी प्रकार का व्याघात नहीं पड़ता।

(३) भोजन के समय प्रसन्नचित्त रहना आवश्यक है। यदि संयोगवश भोजन के समय मन में क्रोध, शोक के भावों का उदय हो जाय तो उस समय भोजन न करना ही उत्तम है। ऐसे मानसिक विकारों की अवस्था में किया हुआ भोजन प्रायः हानिकारक होता है। इसी तथ्य को दृष्टिगोचर करके हमारे यहाँ एकान्त में सब प्रकार से पवित्र होकर भोजन करने का आदेश दिया गया और साथ ही भोजन के पहले भगवान् का ध्यान करके मन को पूर्णतः शान्त कर लेने का विधान भी बतलाया है।

(४) अधिक भोजन सब तरह से अहितकर होता है। सब प्रकार के खाद्य पदार्थों को इतने ही परिमाण में खाना चाहिए कि पेट में न उस समय बोझ मालूम हो न बाद में भारीपन की शिकायत पैदा हो।

(५) जिस भोजन को देखने से घृणा उत्पन्न हो या जिसमें अरुचि जान पड़े उसे कभी न खाना चाहिये। ऐसे भोजन से चित्त प्रसन्न नहीं होता और उस अवस्था में उसका ठीक तरह पचाना भी कठिन होता है।

(६) बासी भोजन करना हानिकारक होता है। खासकर दिमागी काम करने वालों और विद्यार्थियों को उसका प्रयोग बिल्कुल छोड़ देना चहिये क्योंकि उससे आलस्य उत्पन्न होता है और स्मरण शक्ति भी घटती है।

(७) पका हुआ भोजन खाते समय थोड़ा सा गर्म अवश्य होना चाहिए। इससे उसका स्वाद ठीक रहता है, वह जठरग्नि को प्रदीप्त करता है, शीघ्र पचता है, वायु को निकालता है और कफ को शुद्ध करता है। पर अधिक गर्म भोजन भी आमाशय में श्लेष्मा को बढ़ाकर हानि पहुँचाता है। इसलिए शरीर ताप से थोड़ा ही अधिक गर्म भोजन लाभकारी होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(८) रोटी को ठीक तरह सेकना चाहिये। वह न तो जली हो और न कच्ची। कच्ची रहने से पेट में दर्द, अजीर्ण आदि उत्पन्न करती है और जली हुई सारहीन हो जाती है।

(९) एक समय में एक या दो प्रकार का भोज्य ग्रहण करना ही अधिक लाभप्रद है। पर भिन्न-भिन्न समय पर उसे बदलना भी आवश्यक है जिससे शरीर को सब प्रकार के तत्व मिलते रहें।

(१०) अधिक गरम या अधिक ठण्डा खाना दाँतों के लिए हानिकारक होता है। मामूली गर्म ताजा खाना ही हर तरह से उत्तम रहता है। ज्यादा गर्म पदार्थ खाकर ठण्डा पानी पीने से अनेक व्यक्तियों के दाँतों में तकलीफ हो जाती है।

(११) भोजन में कुछ चिकनाहट रहना भी आवश्यक है। अग्नि पर पकाने से अन्न और अन्य खाद्य पदार्थों की स्वाभाविक स्निग्धता नष्ट हो जाती है। इसलिये उसमें घी या तेल का कुछ अंश ऊपर सें शामिल करना आवश्यक होता है। चिकना होने से भोजन अग्निवर्धक और बलवर्धक होता है और आँतों के भीतर खिसकने में भी सुविधा होती है।

(१२) अन्न से बने पदार्थ साधारणतः तीन घण्टे में पचते हैं, इसिलए उससे पहले तो दूसरी बार कदापि भोजन करना ही नहीं चाहिए। वैसे स्वास्थ्य की दृष्टि से दो बार के भोजन के बीच छः घण्टे का अन्तर रहना आवश्यक है। यदि पहली बार के भोजन के पचने के पहले ही दूसरी बार भोजन कर लिया जाय तो पहले का आधा पचा और नया बिना पचा भोजन मिलकर शारीरिक विकार उत्पन्न करते हैं और दोनों को कुपित कर देते हैं।

(१३) भोजन करने में जल्दी करनी ठीक नहीं इससे शरीर में रूखापन पैदा होता है और आलस्य बढ़ता है। प्रत्येक ग्रास को अच्छी तरह चबाकर ही निगलना चाहिये और एक समय के भोजन में साधारणतः आधे घन्टे का समय लगना चाहिए। खूब चबाकर खाने से थोड़े-से भोजन में ही मन तृप्त हो जाता है और ठीक तरह से पचकर शरीर में लगता भी है।

(१४) हमारे दैनिक आहार में क्षार और विटामिनयुक्त आहार अर्थात् तरकारी और फलों का परिमाण कार्बोज और प्रोटीन वाले आहार अर्थात् गेहूँ, चावल, दाल, आलू आदि की अपेक्षा तीन गुना अवश्य होना चाहिए।

यह सामान्य नियम हैं, जिनका पालन स्वास्थ्य और आरोग्य की दृष्टि से सभी के लिए हितकर और लाभदायक होता है।

भोजन में आध्यात्मिक भावना

साधारणतः मनुष्य भोजन पर इसी दृष्टि से विचार करते हैं कि वह स्वाद की दृष्टि से कैसा लगता है और उससे कितना पोषण मिलता है ? पर यह एक अपूर्ण दृष्टिकोण है। भोजन से केवल हमारे शरीर का ही निर्माण नहीं होता वरन् उससे मन और इन्द्रियों का भी घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। आध्यात्मिक विचार करने वाले विद्वानों ने तो सद्प्रवृत्तियों की दृष्टि से भोजन को अधिक महत्व दिया है। 'छान्दोग्य उपनिषद्' में कहा है—

आहार शुद्धौ सत्वशुद्धिः सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः।
स्मृतिलब्धे सर्वग्रन्थीनां विष मोक्षः।।

अर्थ—"आहार के शुद्ध होने से अन्तःकरण की शुद्धि होती है, अन्तःकरण के शुद्ध हो जाने पर बुद्धि निर्मल हो जाती है। उसके सब शप्त और भ्रम जाते रहते हैं और तब मुक्ति का मिलना सुलभ हो जाता है।"

इस प्रकार विचार किया जाय तो भोजन का शुद्ध, सात्विक होना इतनी बड़ी बात है कि उस पर जीवात्मा के उद्धार या बन्धन की बात निर्भर रहती है। हम जिव्हा के जरा-सी देर के स्वाद के लिए मिर्च मसालों से भरा भोजन करते हैं पर यह नहीं सोचते कि उससे जो उत्तेजना, मानसिक विकार उत्पन्न होंगे, उनका परिमाण कैसा पतनकारी हो सकता है ? इसी तथ्य को 'भागवत महापुराण' में इन शब्दों में प्रकट किया है—

तावज्जितेन्द्रियो न स्वाद्विजितान्येन्द्रिय पुमान।
न जयेन्द्रसनं याविज्जि सर्वजिते वसे।।

अर्थात्—"जब तक मनुष्य जिव्हा इन्द्रिय को वश में नहीं करता जब तक वह जितेन्द्रिय नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहा जा सकता। जिव्हा पर विजय प्राप्त करने में ही अन्य इन्द्रियों पर विजय प्राप्त हुई समझी जा सकती है।"

सभी धर्मों के विद्वानों ने इस मानव-शरीर को भगवान का मन्दिर बतलाया है। इसलिए इसे बाहर-भीतर से स्वच्छ, पवित्र रखना हमारा कर्तव्य है। हमारी योग्यता इसी बात में है कि हम इस शरीर रूपी मन्दिर को जैसा शुद्ध और सक्रिय जन्मकाल में पाते हैं वैसा ही आजन्म बनाये रखकर अन्त में भगवान् को अर्पण कर दें। यदि हम भोगों में आसक्त होकर जिव्हा के गुलाम बनकर इसे नष्ट-भ्रष्ट रोगी गन्दा बना देंगे तो यह भगवान को अर्पित करने के लायक कैसे रह सकता है ?

इसलिये भारत के सन्त पुरुषों ने भोजन की यह मर्यादा स्थापित की है कि भोजन को भगवान् के प्रसाद के रूप में ग्रहण किया जाय। वैसे तो जो कुछ है भगवान् का है। जब उसने जन्म दिया है तो वही खाने को देता है। 'जब दाँत न थे तब दूध दियो अब दाँत दिये तो अन्न न देहैं' इस तरह की उक्तियों को कहकर हम भगवान् की असीम कृपा का वर्णन किया करते हैं। भगवान् के दिये हुए प्राकृतिक पदार्थों को हम किस प्रकार तरह-तरह से विकृत बनाकर तलकर, भूनकर, जलाकर, सड़ाकर खाते हैं, उनको सात्विक से तामसिक बना देते हैं—यह कैसी भगवान् की भक्ति या आस्तिकता है ?

इसी दृष्टि से अनन्य धार्मिक जनों ने 'अस्वाद-व्रत का विधान बतलाया है। भोजन को केवल शरीर-रक्षा का साधन समझा जाय और उससे केवल उन्हीं वस्तुओं को ग्रहण किया जाय जो स्वास्थ्य और कार्य-क्षमता को स्थिर रखने के लिये आवश्यक हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाते समय इन बातों का ध्यान रखें

जैसा अन्न वैसा मन

अध्यात्म-विद्या के वैज्ञानिक ऋषियों ने आहार के सूक्ष्म गुणों को अत्यन्त गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया था और यह पाया था कि प्रत्येक खाद्य पदार्थ अपने में सात्विक, राजसिक और तामसिक गुण धारण किये हुये हैं और उनके खाने से मनोभूमि का निर्माण भी वैसा ही होता है। साथ ही यह भी शोध की गई थी कि आहार में निकटवर्ती स्थिति का प्रभाव ग्रहण करने का भी एक विशेष गुण है। दुष्ट, दुराचारी, दुर्भावनायुक्त या हीन मनोवृत्ति के लोग यदि भोजन पकावें या परसें तो उनके वे दुर्गुण आहार के साथ सम्मिश्रित होकर खाने वाले पर अपना प्रभाव अवश्य डालेंगे। न्याय और अन्याय से, पाप और पुण्य से कमाये हुये पैसे से जो आहार खरीदा गया है, उससे भी वह प्रभावित रहेगा। अनीति की कमाई से जो आहार बनेगा वह भी अवश्य ही उसके उपभोक्ता को अपनी बुरी प्रकृति से प्रभावित करेगा।

इन बातों पर भली प्रकार विचार करके उपनिषदों के ऋषियों ने साधक को सतोगुणी आहार ही अपनाने पर बहुत जोर दिया है। मद्य, माँस, प्याज, लहसुन, मसाले, चटपटे, उत्तेजक, नशीले, गरिष्ठ, बासी, बुसे तमोगुणी, प्रकृति के पदार्थ त्याग देने ही योग्य हैं। इसी प्रकार दुष्ट प्रकृति के लोगों द्वारा बनाया हुआ अथवा अनीति से कमाया हुआ आहार भी सर्वथा त्याज्य है। इन बातों का ध्यान रखते हुये स्वाद के लिये या जीवन रक्षा के लिये जो अन्न औषधि रूप समझकर, भगवान् का प्रसाद मानकर ग्रहण किया जायेगा, वह शरीर और मन में सतोगुणी स्थिति पैदा करेगा और उसी के आधार पर जीवन में प्रसन्नता व शान्ति मिलनी सम्भव होगी।

उपनिषदों में इस सम्बन्ध में अनेकों आदेश भरे पड़े हैं जैसे—

"खाया हुआ अन्न तीन प्रकार का हो जाता है। उसका जो स्थूल भाग है वह मल बनता है, जो मध्यम भाग है वह माँस बनता है और जो सूक्ष्म भाग है, वह मन बन जाता है। पीया हुआ जल तीन प्रकार का हो जाता है। उसका जो स्थूल भाग है, वह मूत्र बन जाता है, जो मध्यम भाग है वह रक्त हो जाता है जो सूक्ष्म भाग है वह प्राण हो जाता है हे सौम्य ! मन अन्नमय है। प्राण जलमय है। वाक् तेजोमय है।"

—छान्दोग्य, अध्याय ६ खण्ड ५

अन्न ही बल से बढ़कर है। इसी से यदि दस दिन भोजन न मिले तो प्राणी की समस्त शक्तियाँ क्षीण हो जाती हैं और वे फिर तभी लौटती हैं, जब वह पुनः भोजन करने लगे। तुम अन्न की उपासना करो। यह अन्न ही ब्रह्म है।"

—छान्दोग्य अध्याय ६ खंड ६

"आहार में अभक्ष्य त्याग देने से चित्त शुद्ध हो जाता है। आहार शुद्धि से चित्त की शुद्धि स्वयमेव हो जाती है। जब चित्त शुद्ध हो जाता है तो क्रम से ज्ञान होता जाता है और अज्ञान की ग्रन्थियाँ टूटती जाती हैं।"

—पाशुपत ब्रह्मोपनिषद्

"आहार शुद्ध होने से अन्तःकरण की शुद्धि होती है। अन्तःकरण शुद्ध होने से भावना दृढ़ हो जाती है और भावना की स्थिरता से हृदय की समस्त गाँठें खुल जाती हैं।" —छान्दोग्य

तैत्तरीय उपनिषद् में इस सम्बन्ध में अधिक प्रकाश डाला गया है और आत्म-कल्याण के इच्छुकों को आहार-शुद्धि का विशेष रूप से ध्यान रखने का निर्देश किया गया है।

अन्नाद्वै प्रजाः प्रजायन्ते। याः काश्च पृथिवीꣳश्रिताः। अथो अन्ने नैव जीवन्ति। अथैनदपियन्त्यन्ततः। अन्नꣳहि भूतानां जेष्ठम्। तस्मात्सर्वौषधयमुच्यते। सर्वं वै तेऽन्नमाप्तुवन्ति येऽन्नं ब्रह्मोपासते।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"इसी पृथ्वी पर रहने वाले समस्त प्राणी अन्न से ही उत्पन्न होते हैं। फिर अन्न से ही जीते हैं। अन्त में अन्न में ही विलीन हो जाते हैं। अन्न ही सबसे श्रेष्ठ है। इसलिये वह औषधि रूप कहा जाता है। जो साधक अन्न की ब्रह्म रूप में उपासना करते हैं, वे उसे प्राप्त कर लेते हैं।"

तस्माद्वा एतस्मादन्नरसमयादन्योऽन्तर आत्मा प्राणमयः। तेनैष पूर्णः। सवा एष पुरुष विध एव। —तैत्तरीय २/२

"इस अन्न रसमय शरीर के भीतर जो प्राणमय पुरुष है, वह अन्न से व्याप्त है। यह प्राणमय पुरुष ही आत्मा है।"

अन्नं न निन्द्यात्। तद् व्रतम्। प्राणो वा अन्नम्। शरीरमान्नादम्। प्राणे शरीरं प्रतिष्ठितम्। शरीरे प्राणः प्रतिष्ठितः। तदेतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितम्। स य एतदन्नमन्ने प्रतिष्ठितं वेद प्रतितिष्ठिति। अन्नवानन्नादो भवति। महान भवति। प्रजया पशुभिब्रह्मावर्चसेन। महान कीर्त्या। —तैत्तरीय ३/७

"अन्न की निन्दा न करे, यह व्रत है। प्राण ही अन्न है। शरीर प्राण पर आधारित है। इसलिये वह अन्न में ही स्थित है। जो मनुष्य यह जान लेता है कि मैं अन्न में ही प्रतिष्ठत हूँ वह प्रतिष्ठावान् हो जाता है। अन्नवान् हो जाता है। प्रजावान् हो जाता है, पशुवान भी। वह ब्रह्मतेज से सम्पन्न होकर महान् बनता है। कीर्ति से सम्पन्न होकर भी महान् बनता है।"

आगे चलकर अष्टम अनुवाक में और निर्देश है—

अन्नं न परिचक्षीत। तद व्रतम्। ..... अन्नं बहु कुर्वीत तद् व्रतम्।

अन्न की अवहेलना न करे। यह व्रत है। अन्न को बहुत बढ़ावे। यह व्रत है।"

हाउ्वु, हाउ्वु, हाउ्वु। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्। अहमन्नादोउ्ऽहमन्नादो-उ्ऽहमन्नादः। —तैत्तरीय ३/१०

"आश्चर्य ! आश्चर्य !! आश्चर्य !!! मैं अन्न हूँ। मैं अन्न हूँ ! मैं अन्न हूँ ! मैं ही अन्न का भोक्ता हूँ ! मैं ही अन्न का भोक्ता हूँ ! मैं अन्न का भोक्ता हूँ !"

आहार शुद्धौ सत्वशुद्धिः सत्वशुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः। स्मृतिलभ्ये सर्व ग्रन्थीनां विप्र मोक्ष स्तस्यै मृदित कषायाय तमसस्पादर्शयति भगवान् सनत्कुमारः।

"जब आहार शुद्ध होता है, तब सत्व यानी अन्तःकरण शुद्ध होता है। अन्तःकरण शुद्ध होने पर विवेक बुद्धि ठीक काम करती है। उस विवेक से अज्ञानजन्य बन्धन-ग्रन्थियाँ खुलती हैं। फिर परम-तत्व का साक्षात्कार हो जाता है। यह ज्ञान नारद को भगवान् सनत्कुमार ने दिया।"

अथर्ववेद में अनुपयुक्त अन्न को त्याज्य ठहराया गया है। प्राचीन काल में हर व्यक्ति आहार ग्रहण करने से पूर्व यह देखता था कि यह अन्न किस प्रकार के व्यक्ति द्वारा उपार्जित एवम् निर्मित है। उसमें थोड़ा भी दोष होने पर उसे त्याग दिया जाता था। केवल पुण्यात्माओं का अन्न ही लोग स्वीकार करते थे। किसी के पुण्यात्मा होने की एक कसौटी यह भी थी कि लोग उसका अन्न ग्रहण करते हैं या नहीं।

अथर्ववेद ६/६/२५ में कहा गया है—

सर्वा वा एष जग्ध पाप्मां यस्यान्नमश्नन्ति।

अर्थात्—वही व्यक्ति पुण्यात्मा है जिसका अन्न दूसरे खाते हैं।

आज भी वह पुरानी प्रथा देहाती क्षेत्रों में किसी रूप में प्रचलित है कि जिसके आचरण अनुचित समझे जायें, उसके यहाँ का अन्न जल ग्रहण न किया जाय। जातिच्युत होने में यही दण्ड मुख्य होता है।

वाल्मीकि रामायण में अन्तःकरण को देवता के रूप में प्रस्तुत करते हुये इसी प्रकार का प्रतिफल बताया गया है, लिखा है—

"यदन्न पुरुषो भवति तदन्नास्तस्य देवताः।

"अर्थात्—मनुष्य जैसा अन्न खाता है वैसा ही उसके देवता खाते हैं।"

कुधान्य खाकर साधना करने से साधक का इष्ट भी भृष्ट हो जाता है और उससे जिस प्रतिफल की आशा की गई थी, वह प्रायः नहीं ही प्राप्त होता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस गन्दगी से बचें तो अच्छा

आहार से मन पर पड़ने वाले सूक्ष्म प्रभाव को देखकर हिन्दू-धर्म में खाप-पान की शुद्धता को अत्यधिक महत्त्व दिया गया है। जी चाहे जहाँ और जिसके हाथ का शुद्ध-अशुद्ध आहार प्राप्त करने में निषेधपूर्ण वैज्ञानिक है। हिन्दुओं के रीति-रिवाजों का अध्ययन करने वाले विदेशी-अन्वेषकों ने भी यह मान लिया है कि अनुचित स्थानों में गन्दगी से भरा भोजन करना शारीरिक तथा मानसिक दोनों तरह के स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है। किन्तु इस विशाल और पवित्र देश में आहार की सफाई के क्षेत्र में व्यापक उदासीनता नजर आती है। विदेशी ढंग के भयंकर गन्दगी भरे होटल, रेस्तरां तथा सिनेमाओं में भोजन तथा जलपान करने की घृणित दुष्प्रवृत्ति यहाँ भी निरन्तर बढ़ती जा रही है। पाश्चात्य नकल और हमारी लापरवाही के कारण चारों ओर गन्दगी का यह घिनौना वातावरण बढ़ता चला जा रहा है और इससे जन स्वास्थ्य को भयंकर खतरा उपस्थित हो रहा है।

आधुनिक सभ्यता की होड़ में इस समय नैतिक मर्यादाओं का कितना उल्लंघन हो रहा है, इसका प्रत्यक्ष दर्शन शहरों में हो जाता है। चूल्हे, चौके की सफाई मिटाकर लोग घृणित होटलों में खाना पसन्द करते हैं। सार्वजनिक स्थानों की गन्दगी के बीच जिस उत्साह के साथ लोग खान-पान करते हैं, वह ऐसी समस्या है, जिसे रोकना समाज की स्वास्थ्य-स्थिरता की दृष्टि से तो उपयोगी है ही, नैतिक दृष्टि से भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं। इस कुरीति में अब महिलायें तथा बालिकायें भी साथ देने लगी हैं अतः इस समस्या का निदान ढूँढ़ना अब नितान्त आवश्यक हो गया है।

शहर के किसी गली में जाइये उधर ही शानदार बोर्ड लगे होटल दिखाई देंगे। जहाँ जाइये, जिधर जाइये आपको भोजन तैयार मिलेगा। मजदूर, नौकरी पेशे वालों के अतिरिक्त अब गृहस्थ तथा विद्यार्थी आदि भी इन स्थानों में भोजन करना पसन्द करते हैं। चाय तथा अन्य पेय पदार्थों का प्रचलन आम हो गया है। इतना तो प्रायः हर शहरी कर लेता है। होटलों की बढ़ोत्तरी से ही पता चल जाता है कि उनकी बिक्री कितनी तेजी से हो रही है ? जिस गति से होटलों की संख्या बढ़ रही है, उसी गति से उनकी गन्दगी और स्वास्थ्य का खतरा भी बढ़ रहा है। उनकी आन्तरिक व्यवस्था को देखकर, लोगों से यह अनुरोध करने को विवश होना पड़ता है कि स्वास्थ्य एवम् समाज की नैतिकता को बचाये रखने के लिये वे इनका उपयोग न करें तो अच्छा है।

किसी भी होटल में जाइये भीड़ का ताँता देखते ही बनता है। इनमें सब तरह के बीमार, गन्दे, अस्वस्थ व्यक्ति बराबर आते रहते हैं और वस्त्रों तथा जूतों के साथ लाई हुई गन्दगी का एक अंश छोड़ते जाते हैं। शाम तक बाहरी गन्दगी से होटल पूरी तरह भर जाता है और इस तरह उस गन्दगी का पूरा संग्रहालय बन जाता है।

इसके बाद फर्नीचर की स्थिति पर नजर दौड़ाइये। इसे न तो कभी बाहर निकालकर धूप से सेका जाता है न ही गर्म जल से इसकी सफाई की जाती है। जहाँ भोजन पकता है, वहाँ एक प्रकार के कीड़े पैदा हो जाते हैं, जो इन फर्नीचरों की दराजों में छुपे रहते हैं। कुछ कीटाणु इतने छोटे होते हैं, जो दिखाई तो नहीं देते किन्तु वहाँ की वायु में समाये हुये रहते हैं और जो भी लोग वहाँ जाते हैं साँस के साथ उनके शरीर में प्रवेश करते रहते हैं। मेजों कुर्सियों की जिस ढंग से सफाई की जाती है, वह और भी घृणित है। कई दिनों का पुराना कपड़ा जो जूठन से भरा हुआ होता है—उस कपड़े से और भोजन कर्त्ताओं द्वारा मेजों पर गिराये गये जल से उन्हें साफ कर दिया जाता है। इस प्रकार वह सफाई भी गन्दगी बढ़ाने वाली होती है। मेजों में अजीब किस्म की सड़ानें पैदा हो जाती हैं।

फर्नीचर की तरह आले, आलमारी, दराज तथा नित्य प्रयोग में आने वाले बर्तनों की भी यही अवस्था होती है। उनमें रोज की गन्दगी का कुछ न कुछ अंश शेष बचा रह जाता है, जो हर दूसरे दिन के ताजे भोजन को भी गन्दा करने में पूरी मदद देता है। खान-पान की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

वस्तुओं में उससे अधिक लापरवाही बरती जाती है। अपना लाभ देखने वाले होटल मालिकों को औरों के स्वास्थ्य का कुछ भी ध्यान नहीं रहता। शाम तक जो सब्जी शेष रह जाती है, उसे दूसरे दिन की सब्जी तथा दाल में मिलाकर उसमें मिर्च, मसाले, खटाई आदि मिलाकर इस योग्य बना दिया जाता है कि लोग यह न समझ सकें कि इसमें बासी भोजन मिला दिया गया है। कई बार तो ऐसे भोजन पकड़े गये हैं, जिनमें कीड़े-मकोड़े तथा अखाद्य पदार्थ तक पाये गये हैं। दाल, सब्जी की तरह गुँधे हुये आटे का प्रयोग कई दिनों तक किया जाता रहता है। आटे को ढकने वाले कपड़े तथा अन्य खुले गन्दे खाद्य पदार्थों को देखकर अरुचि होती है, लगता है कैसे इन गन्दे पदार्थों को लोग उदरस्थ करते होंगे।

जिस स्थान पर होटल का नौकर जूठे बर्तनों की सफाई करता है, उसे देखने का अवसर मिल जाय तो किसी को भी घृणा आये बिना न रहेगी। खचाखच भीड़ में बार-बार स्वच्छ जल लाकर बर्तनों को धोने की फुरसत किसे होती है ? एक टब या बड़े से बर्तन में कई दिनों का गन्दा पानी भरा होता है, वहीं पास में कोई गन्दा कपड़ा पड़ा हुआ होता है। साफ करने वाला लड़का जूठे बर्तनों तथा प्लेटों को उस गन्दे पानी में डुबोकर बाहर निकाल लेता है और उसी गन्दे कपड़े से पोंछकर दुबारा इस्तेमाल के योग्य बना लेता है। किन्तु यदि किसी खुर्दबीन जैसे यन्त्र से देखा जाये तो बर्तनों में असंख्यों कीटाणु तथा गन्दगी के कण शेष रह जाते हैं। उन्हीं में बार-बार लोग भोजन करते रहते हैं।

होटलों में आने वाले लोगों में कितने ही ऐसे भी होते हैं, जिन्हें कोई छूत की बीमारी होती है। मुँह की गन्दगी तो प्रायः सभी में होती है। चाय आदि के जो गिलास इस्तेमाल किये जाते हैं, उनमें सफाई का उचित प्रबन्ध न होने के कारण दूसरों की बीमारी के कीटाणु लटके रह जाते हैं और इस तरह गन्दगी तथा बीमारी के कीटाणुओं का आदान-प्रदान चलता रहता है।

कभी-कभी इस क्रिया में होटलों के नौकर, बैरे या वेटर भी पूरा साथ देते हैं। खाये हुये व्यक्ति की जूँठी थाली उठाकर ले जाते हैं और बिना हाथ धोये साफ किये हुये नये मेहमान को नई थाली लगाकर पेश कर देते हैं। पहले की गन्दगी हर दूसरे तक पहुँचाने का कार्य ऐसे बैरे कुशलतापूर्वक पूरा करते रहते हैं।

भीतरी गन्दगी तो होती ही है। प्रायः खाद्य पदार्थ भी खुले रखे जाते हैं, जिनमें मक्खियाँ भिनभिनाती रहती हैं। सड़क पर चलने वाले तेज वाहनों द्वारा उड़ाई हुई धूल, धुआँ आदि के कारण भी वह आहार अशुद्ध होता रहता है और उसका दुष्प्रभाव खाने वालों पर पड़ता रहता है।

होटल के रसोई भाग पर काम करने वाले लोगों की दशा भी कम दयनीय नहीं होती। गन्दे लोगों द्वारा पकाये हुआ भोजन भी गन्दा ही हो सकता है। गन्दे हाथों से आटा गूँथना, बीड़ी पीते हुये रोटी पकाना, बीच-बीच में उनके भी खाने-पीने का दौर चलता रहता है। इस तरह होटलों में सच पूछा जाय तो गन्दगी पकती और गन्दगी ही खिलाई जाती है। इस तरह लोगों के शरीरों पर उसका दूषित प्रभाव ही पड़ता है, जो नियमित भोजन करने वालों के लिये स्वास्थ्य की खराबी की समस्या पैदा करता है।

यह गन्दगी लोगों से छुपी रहती हो सो बात नहीं, पर लोग इस दिशा में इतने लापरवाह होते हैं या यों कहना चाहिये कि वे आधुनिक सभ्यता के रंग में इतना रंगे हुये हैं कि उन्हें यह सोचने का अवसर भी नहीं मिलता कि यह गन्दगी कितनी हानिकारक हो सकती है ?

आहार न केवल स्वास्थ्य के लिये वरन् आत्म-विकास, दीर्घ-जीवन तथा मनोबल की प्राप्ति का भी साधन है। शास्त्रकार ने आहार से जीवन की प्रत्येक गतिविधि को प्रभावित होना बताया है। भारतीय जीवन में इसलिये भोजन में अनेक धार्मिक प्रतिबन्ध लगाये हैं। कई स्वच्छ होटल भी हो सकते हैं, उन्हें छोड़कर इन गन्दे होटल तथा मलीन सार्वजनिक स्थानों में आहार लेना इस दृष्टि से बहुत हानिकारक है। आहार की शुद्धता पर हमारा ध्यान जाना ही चाहिये, चूल्हे, चौके को जितना शुद्ध व पवित्र रखा जाये उतना ही अच्छा। आहार की गन्दगी से हमें स्वास्थ्य व नैतिक जीवन का संरक्षण जरूर करना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार करने से पूर्व यह ध्यान रखें

महापुरुषों ने मानव-जीवन का उद्देश्य स्पष्ट करते हुये बताया है कि परमात्मा ने जीवात्मा को सत्कर्मों द्वारा आत्म-विकास करने के लिये संसार में भेजा है। किन्तु इस निश्चित उद्देश्य का मुख्य साधन शरीर ही है। शरीर द्वारा ही सत्कर्म सम्पादित हो सकते हैं और उसी की सहायता से कोई साधना सम्भव हो सकती है। इसीलिय। विचारकों ने कहा है कि—शरीर एक औजार है, जो आत्मा को उठाने के लिये दिया गया है।

शारीरिक महत्ता की माँग है कि इस साधन अथवा आत्मोन्नति का सहायक औजार सदा निर्विकार तथा कार्यक्षम बना रहे, तभी प्रगति की आशा की जा सकती है। शरीर के विकारग्रस्त हो जाने, औजार के खराब हो जाने से प्रयोजन सिद्ध न होगा। शरीर स्वस्थ तथा सतेज रहेगा, उन्नति की साधना चलती रहेगी अन्यथा सारी प्रगति उसी प्रकार बन्द पड़ी रहेगी जैसे मशीन के खराब हो जाने से उत्पादन रुक जाता है। शरीर का मुख्य आधार भोजन है। हमारा शरीर यन्त्र जिस मांस, रक्त, हड्डी आदि उपकरणों से बना है, उनका निर्माण भोजन द्वारा ही होता है। यदि शरीर को कुछ समय तक भोजन से वंचित रखा जाये तो वह शीघ्र ही निर्बल होकर निकम्मा हो जाये। नित्य-प्रति, क्रियाओं में संलग्न रहने से शरीर में जो छीजन तथा शिथिलता आती रहती है, उसकी पूर्ति उसी भोजन से होती है, जिसे हम सब ग्रहण किया करते हैं। भोजन न केवल शरीर के माँस पिंड के लिये आवश्यक है वरन् वह जीवन-तत्व का भी मुख्य कारण है। बिना किसी प्रकार का आहार लिये जीवन सुरक्षित नहीं रह सकता। भोजन करना जीवधारी की अपरिहार्य प्रक्रिया है। इसके बिना न शरीर ठहर सकता है और न जीवन सुरक्षित रह सकता है। इनके अभाव में फिर आत्मोन्नति के उद्देश्यपूर्ति का प्रश्न ही नहीं रह जाता। इसलिये भोजन को शरीर-साधन का मुख्य आधार ठीक उसी प्रकार माना गया जिस प्रकार उसकी विकृति आत्मा की दुर्गति का कारण होती है।

आध्यात्मिक उन्नति केवल शारीरिक स्वास्थ्य पर भी निर्भर नहीं है। इसके लिये मानसिक तथा बौद्धिक स्वास्थ्य की भी नितान्त आवश्यकता है। मानसिक अथवा बौद्धिक स्वास्थ्य का सम्बन्ध भी भोजन से गहराई के साथ जुड़ा हुआ है। मनुष्य की सारी छोटी-बड़ी क्रियायें, भले-बुरे कर्मों सदासद् विचारों का उत्तेजन तथा संचालन बहुत कुछ भोजन के प्रभाव पर निर्भर रहता है। अन्न के अनुसार ही मनुष्य का मन बनता है। पिछली पंक्तियों में आचार्यों ने चेतावनी दी है कि आहार के मामले में अधिकाधिक सावधानी बरती जाये, जिससे वह अपनी अन्तिम एवं सूक्ष्म अवस्था में पहुँचकर मनुष्य के अन्तःकरण में सात्विकता तथा सद्प्रवृत्तियों का ही निर्माण करे। संस्कारों की शुद्धता तथा सद्गुणों की तेजस्विता भोजन से अनिवार्यतः अनुबन्धित है। अतः मानव-जीवन, शरीर तथा अन्तःकरण की उपयुक्तता एवम् स्वास्थ्य, जिस पर आत्मिक उन्नति निर्भर है मुख्यतः भोजन पर ही आधारित है। अस्तु भोजन के लिये यथा अधिक ज्ञान प्राप्त कर लेना अत्यन्त आवश्यक है। हम कब, क्या, क्यों और किस प्रकार खायें, न खायें यह जानकारी ही भोजन सम्बन्धी ज्ञान माना गया है।

भोजन का मुख्य उद्देश्य शरीर तथा आत्मा के कल्याण की दिशा में अग्रसर करना है न कि जिह्वा की स्वाद-लिप्सा को तृप्त करना। किन्तु खेद है कि हम सब आज इसी विपरीत दिशा में चल पड़े हैं। प्रकृति ने मानव शरीर को ऐसे अद्भुत अंग-प्रत्यंगों द्वारा वैज्ञानिक ढंग से बनाया है कि यदि उनका सुचारु एवम् समुचित रूप से उपयोग किया जाये तो वह आजीवन स्वस्थ तथा सतेज बना रह सकता है। जिस मनुष्य को परमात्मा ने अरुग्ण रहकर कल्याण लाभ करने के लिये जन्म दिया है, वह आजीवन आधि-व्याधियों का आखेट बना रहकर अश्रेयस्कर मृत्यु को प्राप्त करे, तो इससे बढ़कर मानव-जाति का दुर्भाग्य और क्या हो सकता है ? आत्मोन्नति तो दूर, वह सामान्यतः प्रसन्न एवम् प्रफुल्ल भी नहीं रह पाता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इस असफलता का मुख्य कारण आहार-विहार सम्बन्धी असंयम ही है। हम सब स्वास्थ्य सम्मत मार्ग को छोड़कर इन्द्रियों के वशीभूत होकर कुमार्ग पर चलने लगे हैं। विद्वानों ने मनुष्य की रसेन्द्रिय अर्थात् जिव्हा को बड़ा प्रबल बतलाया है। जिसने इस पर नियन्त्रण कर लिया उसने मानो आत्म-कल्याण के मूलमन्त्र को ही पा लिया।

आज हममें से अधिकांश लोग स्वादेन्द्रिय एवम् पेट को ही तृप्त करने के लिये भोजन किया करते हैं। क्या खाना चाहिये और क्या न खाना चाहिये इसका विचार नहीं रखते। भोजन का महत्त्व स्वाद की दृष्टि से नहीं उन तत्वों की दृष्टि से आंका जाना चाहिये, जो शरीर के स्वास्थ्य के लिये आवश्यक एवम् उपयोगी हो। तत्वहीन अनुपयुक्त भोजन शरीर में जाकर विकार उत्पन्न करता है, जिससे स्वास्थ्य का अहित होता है।

स्वास्थ्य की दृष्टि से भोजन में विटामिन तथा क्षार दो तत्वों का होना बहुत आवश्यक है। विटामिनों को भोजन का प्राण माना गया है। विटामिनरहित भोजन निष्प्राण तथा निरर्थक होता है। इस प्रकार बेकार का सारशून्य भोजन पेट में घास-कूड़े की तरह भरा रहकर सड़ता और विकार पैदा करता है। जिस खाद्य में वांछित विटामिन तत्व न हो अथवा किन्हीं कारणों से उनका यह तत्व नष्ट हो गया हो वह मनुष्य के लिये अखाद्य माना गया है।

यों तो विटामिनों के अनेक प्रकार होते हैं, किन्तु मानव स्वास्थ्य के लिये ए. बी. सी. तीन विटामिन बहुत आवश्यक बतलाये गये हैं। इन तत्वों की प्राप्ति ताजा फलों तथा कई प्रकार की शाक-भाजी से अच्छी तरह हो जाती है। किन्तु सूखे सड़े, गले तथा बासी पदार्थों में यह नष्ट हो जाते हैं। साथ ही जो चीजें अधिक भून, पका अथवा तली दी जाती हैं, उनका भी खाद्य प्राण नष्ट हो जाया करता है। यही कारण है कि स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से बासी, सड़ी-गली और अधिक भुनी व तली चीजों के प्रयोग का निषेध किया गया है। जो भी भोजन लिया जाये वह उपयुक्त होने के साथ-साथ ताजा, पवित्र तथा शुद्ध भी होना चाहिये।

विटामिन 'ए' पालक, बन्दगोभी, मूली गाजर, सलाद आदि शाकों में विशेष रूप से पाया जाता है। इन शाकों को यथासम्भव स्वाभाविक रूप में खाने से ज्ञान-तन्तुओं के साथ-साथ आँखों, आँतों, फेफड़ों तथा मूत्राशय को लाभ होता है।

विटामिन 'बी' जो भूख बढ़ाने, क्षुधा उत्तेजित रखने, शरीर को सक्रियता देने, रक्त बढ़ाने के साथ-साथ माँस-पेशियों, स्नायुओं, त्वचा तथा समग्र शरीर संस्थान को स्वस्थ तथा स्निग्ध रखने में सहायक होता है। लगभग सभी फलों, हरी तरकारियों और गेहूँ, जौ, मक्का, चावल (हाथ का कुटा) मटर और चने में पाया जाता है।

विटामिन 'सी' जो पाचन-संस्थान को शक्ति और पाचन-क्रिया को सक्रियता देता है, साथ ही जिसकी कमी अथवा अभाव खून को दूषित बना देता है, शरीर में निर्बलता, मसूड़ों में सूजन, दाँतों में पायरिया आदि के विकार पैदा कर देता है, उसकी प्राप्ति नीबू, नारंगी, टमाटर, रसभरी, आदि रस तथा सूक्ष्म अम्ल वाले फलों तथा मूली, गाजर, पालक आदि शाक-भाजियों में विशेष रूप से पाया जाता है। इसके अतिरिक्त दो विटामिन 'डी' और 'ई' भी स्वास्थ्य रक्षा के दृष्टिकोण से आवश्यक माने गये हैं। इनमें से 'डी' जो अस्थि अवयवों को सशक्त तथा सुडौल बनाता है, उनकी कमजोरी दूर करता है, विशेष रूप से पीली गाजर, पपीता और नारियल आदि ऐसे फलों में पाया जाता है, जिनमें कुछ-कुछ कसाय तत्व मौजूद हो। विटामिन 'डी' जो स्त्री-पुरुषों की प्रजनन शक्ति सुरक्षित रखता है, हरे सागों, ताजे दूध, गुड़ तथा मेवा आदि से प्राप्त होता है। किन्तु वह सब विटामिन अथवा खाद्य-प्राण इन वस्तुओं से मिलते तभी हैं, जब यह अधिक से अधिक स्वाभाविक रूप में ही खाये जायें। वस्तुओं को भून डालने, तल डालने, अधिक पका डालने या मिर्च मसाला मिला डालने से यह तत्व या तो कम हो जाता है या पूरी तरह नष्ट हो जाता है।

स्वास्थ्यदायक क्षार जैसे कैल्शियम सोड़ा, गन्धक, लोहा, मैगनेशियम, जो कि हड्डियों के साथ पूरे शरीर संस्थान को सबल तथा सुदृढ़ बनाने का काम करते हैं, अधिकतर हरे शाकों,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सब्जियों, फलों तथा अनाजों के छिलकों से प्राप्त होते हैं। जो लोग न छीलने योग्य फलों, तरकारियों आदि को छीलकर खाते अथवा जौ दालनों का छिलका उतारकर और अन्य अन्नों के चोकर छानकर प्रयोग करते हैं, हरे शाकों को उबालकर उनका पानी निकाल देते हैं, वे इन आवश्यक तथा लाभदायक क्षारों से वंचित रह जाते हैं। ऐसे लोग मानों तत्व सहित वस्तुओं को न खाकर उनका फोक ही पेट में जमा कर लेते हैं, जो लाभ तो करता ही नहीं, साथ ही पेट में अनेक विकार पैदा कर देता है।

इस प्रकार देख सकते हैं कि मनुष्य के लिये उपयुक्त तथा लाभदायक भोजन, हरे शाक, फल, दूध तथा मेवा आदि तथा चोकर सहित अन्न ही हो सकता है। इनके अतिरिक्त जो लोग माँस, मछली अण्डा आदि का प्रयोग करते हैं, वे मानों विपरीत आचरण करते हैं। यद्यपि आजकल इन तामसी पदार्थों में भी विटामिन अथवा खाद्य-प्राण की घोषणा की जाती है, तथापि यह मनुष्य के लिये अस्वाभाविक एवं अप्राकृतिक भोजन है। जो किसी प्रकार भी उचित नहीं। इस प्रकार का अयोग्य तथा अमानवीय भोजन करने से पेट तो खराब होता ही है मनुष्य की वृत्तियाँ भी विकृत भी हो जाती हैं। यह भोजन काम, क्रोध आदि नाशक विकारों तथा बुद्धि विभ्रम उत्पन्न करने वाले होते हैं।

पेट खराब करने वाली बुरी आदतें

पेट को खराब करने वाली बुरी आदतों में (१) बिना पूरी तरह चबाये जल्दी-जल्दी ग्रास निगल जाना। (२) पानी का बहुत कम या बहुत ज्यादा उपयोग (३) बार-बार कुछ न कुछ खाते रहना (४) नाक, मुँह सिकोड़ते हुये भोजन। (५) भोजन में अनेक प्रकार की वस्तुयें इकट्ठी करना—यह पाँच बातें अधिक हानिकारक मानी गई हैं। प्रत्येक ग्रास को धीरे-धीरे इतना चबाया जाना चाहिये कि वह मुँह में स्रवित होने वाले रस से तथा पिसने से भली प्रकार पतला हो जाये। यदि जल्दी-जल्दी में अधकुचले ग्रास निगल लिये गये हैं तो मुँह का काम भी पेट को करना पड़ेगा और उसे दुहरा श्रम करना पड़ेगा। जिस प्रकार अमाशय से निकलने वाले रस भोजन को पचाते हैं, उसी प्रकार मुँह से निकलने वाले रसों का भी पाचन में प्रमुख भाग रहता है। जल्दी में निगले हुये ग्रास मुँह में स्रवित होने वाले रसों का पूरी मात्रा में मिश्रण न होने के कारण पचने में बहुत देर लगाते हैं। भोजन तो क्या पानी भी धीरे-धीरे घूँट-घूँट कर, चूँस-चूँस कर पिया जाना चाहिये, जिससे उसमें भी मुँह के पाचक रस मिल जायें।

भोजन के साथ कम पानी पीना चाहिये। एक घण्टे बाद एक गिलास पानी ठीक है। इसके बाद २४ घण्टे में कम से कम तीन सेर पानी जरूर पी लेना चाहिये। इससे पाचन कार्य में सहायता मिलती है। एक साथ बहुत अधिक पानी पीना उचित नहीं, इससे पेट में गड़बड़ी उत्पन्न होती है। आधा पेट भोजन से, चौथाई जल से भरना चाहिये और एक चौथाई हवा आने-जाने के लिये खाली रखना चाहिये।"—यह पुरानी कहावत स्वर्ण अक्षरों में लिखने योग्य है और इस नियम को पालन करते रहा जाय तो बीमार पड़ने का अवसर ही न आवे। बिना भूख लगे कुछ खाना-पीना पेट पर अत्याचार करने के समान है। जब पिछला खाया हुआ पच जाय और खाली पेट फिर अपना आहार माँगने लगे तभी कुछ खाना उचित है। इसके विपरीत कई व्यक्ति शौक, फैशन, सत्कार, आग्रह, शान, स्वाद आदि की दृष्टि से कुछ न कुछ बार-बार खाते रहते हैं। हाँडी में पहली खिचड़ी पक नहीं पाई तब तक उसी में नये चावल डाल दिये गये तो उसका क्या परिणाम होगा ? आधी कच्ची और आधी पकी वस्तुयें जिस हाँडी में पड़ी हैं, उससे किसी का क्या प्रयोजन सिद्ध होने वाला है ? एक बार का खाया हुआ जब तक पचा नहीं तब तक दूसरा और खा लिया तो पेट में कच्ची-पक्की खिचड़ी वाला क्रम चलता रहेगा और उस परिपाक से अच्छा रस रक्त उत्पन्न न हो सकेगा।

स्वाद, आदत या सत्कार के बहाने बार-बार मुँह चलाने की पद्धति बुरी है। वह तो तभी अच्छी हो सकती थी, जब हम अन्य पशु-पक्षियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की तरह दिन भर के प्रयत्न से थोड़ा-थोड़ा आहार प्राप्त कर सकते। मनुष्य प्राणी बन्दर से बहुत कुछ मिलता-जुलता है। बन्दर पेड़ों पर अपने आहार की तलाश में घूमता रहता है। जहाँ थोड़ा-सा मिल गया उसे खाकर फिर उसी खोज में अन्यत्र चला गया। इस प्रकार एक-एक, दो-दो फल करके दिन भर में अपना पेट भरने लायक व्यवस्था जुटा पाता है। बकरी, हिरन, ऊँट, चींटी, गिलहरी और कबूतर आदि भी ऐसा ही करते हैं। उन्हें एक स्थान में पूरा भोजन नहीं मिलता फिर उनका ग्रास छोटा और पेट बड़ा होता है इसलिये वे दिन भर खाते रहें तो बात दूसरी है, पर मनुष्य की परिस्थितियाँ अब भिन्न हो गईं, उनके पेट जितना भरपूर आहार एक दो बार में थाली में आ जाता है और थोड़ी ही देर में उसका पेट भर जाता है। ऐसी दशा में उसे उन जीवों का अनुकरण करना पड़ेगा, जो भरपेट पाकर निश्चिन्त हो जाते हैं और जब तक दुबारा भूख नहीं लगती, खाने का नाम नहीं लेते। सिंह, मगर, साँप, सुअर आदि ऐसे ही प्राणी हैं, जिन्हें एक ही बार भर पेट भोजन प्राप्त कर लेने का अवसर मिल जाता है। जब उनका पेट भर गया तो फिर घर बैठे सामने आये हुये भोजन की ओर भी वे आँख उठाकर नहीं देखते।

भोजन सम्बन्धी बुरी आदतों में चौथी आदत है नाक सकोड़ते हुये खाना। कोई चीज कम स्वादिष्ट या अपनी आदत से भिन्न प्रकार की बनी हो तो अक्सर खाने वाले की भवें टेढ़ी होने लगती हैं। कई तो ऐसे भोजन का तिरस्कार करते देखे गये हैं। यह अन्न भगवान का अपमान है। अन्न हमारा जीवन है, प्राण है, उसके प्रति औषधि जैसी श्रद्धा और प्रसाद जैसी भावना रहनी चाहिये। वस्तुतः भोजन भूख रूपी बीमारी की औषधि ही है। औषधि का गुण देखा जाता है स्वाद नहीं। हमें अपने आहार का चुनाव उसके गुणों के आधार पर करना चाहिये, स्वाद के आधार पर नहीं। गुण विहीन तथा हानिकारक वस्तुयें यदि स्वादिष्ट भी हों तो भी नहीं लेना चाहिये और यदि उपयोगी वस्तुयें स्वादरहित भी हैं तो भी उन्हें प्रसन्नता और श्रद्धापूर्वक खाना चाहिये। सामने आई हुई चीजों में से यदि कोई वस्तु अनुपयुक्त है तो उसे शान्त मन से छोड़ देना चाहिये और अन्य वस्तुओं से काम चला लेना चाहिये। नमक आदि कुछ चीज ज्यादा कम हो तो उसमें सुधारकर लेना चाहिये। पर चित्त को किसी भी दशा में खिन्न नहीं करना चाहिये। कोई और चिन्ता, शोक, भय, क्रोध, के कारण उपस्थित हो गये हों तो उस समय भोजन नहीं करना चाहिये।

प्रकृति का नियम भी यही है। क्षोभ उत्पन्न होने के समय भूख बन्द हो जाती है। पाचन क्रिया मन्द हो जाती है। उन क्षणों में जो कुछ भी खाया जायेगा केवल हानि ही करेगा। चाहे स्वाद की कमी के कारण हो, चाहे बाहरी कोई झंझट हो, क्षुब्ध मन से कभी भी भोजन नहीं करना चाहिये। खाते समय मन बहुत प्रसन्न, शान्त और उत्साहित होना चाहिये। ऐसी मनोदशा में पाचन यन्त्र ठीक काम करते हैं और आहार का समुचित लाभ प्राप्त होता है।

थाली में भोज्य पदार्थों की संख्या कम से कम होनी चाहिये। कटोरियाँ जितनी ही कम होंगी पेट को उतनी ही सुविधा रहेगी। यह सभी जानते हैं खाद्य पदार्थों में कुछ वस्तुयें जल्दी और कुछ देर से पचने वाली होती हैं। मेवा, मिठाई, हलुआ, रबड़ी जैसे पदार्थ पचने में बहुत देर लगती हैं और हल्की किस्म के शाक या छाछ जल्दी पच जाते हैं। आमाशय और आँतों में भी उनकी क्रियायें भिन्न-भिन्न प्रकार की होती हैं। यदि इन सबको इकट्ठा कर दिया जाये तो कुछ जल्दी पकेंगी, कुछ देर लगा लेंगी। इन आधी कच्ची और आधी पक्की प्रक्रिया से रस रक्त भी आधे पके ही बनेंगे। एक हाँडी में चावल, साबूदाना, चना, उड़द, बैंगन, कटहल आदि विभिन्न प्रकार के पदार्थ इकट्ठे करके पकने रखे जायें तो साबूदाना दस मिनट में पक जायेगा और चना उड़द में घण्टों लगेंगे ? तब तक बेचारे साबूदाने को उबलते-उबलते सत्व-विहीन हो जाना पड़ेगा। बैंगन जल्दी बन जायेंगे पर कटहल को बहुत देर लगेगी। यह हाँडी घंटों में जब तैयार होगी तो जल्दी पकने वाली चीजों का कचूमर ही निकल गया होगा और वे अधिक ताप सहन करने से खराब भी हो गई होंगी। ऐसा सम्मिश्रण एवम् परिपाक कभी अच्छा परिणाम प्रस्तुत नहीं कर सकता। एक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय में समान परिपाक वाली एक-दो चीजें ही लेनी चाहिये। उनकी संख्या जितनी कम रहेगी उतनी पचने में सुविधा रहेगी।

आहार सम्बन्धी इन मोटी-मोटी बातों की उपेक्षा करने से ही लोगों के पेट खराब होते हैं और फिर वह खराबी पीढ़ी दर पीढ़ी एक पैतृक सम्पत्ति के रूप में आगे चलने लगती है। जैसे पुरखों की जमीन जायदाद, जाति बिरादरी बच्चों को विरासत में मिलती है, उसी प्रकार बीमारियों का सिलसिला भी चलता है। दमा, उपदंश, कोढ़, अर्श आदि की तरह कब्ज भी पुरखों उत्तराधिकार की तरह बच्चों को मिलता है और फिर वे भी उसी से ग्रसित रहने लगते हैं। इस प्रकार अब हर पीढ़ी पर स्वास्थ्य की स्थिति बुरी से, अधिक बुरी होती चली जा रही है। यह कहना गलत है कि अच्छी घी नहीं मिलता, दूध महँगा है, डालडा चल पड़ा है, इससे स्वास्थ्य बिगड़ गये। सही बात यह है कि भोजन सम्बन्धी हमारी आदतें बिगड़ने से ही पेट खराब हुये और पेट खराब हाने से बीमारी और कमजोरी ने हमें घेर लिया। शुद्ध घी, शुद्ध दूध का मिलना भी कुछ तो महत्त्व रखता है पर उतना नहीं कि उसके बिना हमारा स्वास्थ्य ही चौपट हो जायेगा।

खाद्य पदार्थों की उत्कृष्टता का कुछ मूल्य है तो सही पर उतना नहीं जितना लोगों ने समझ रखा है। यदि बात ऐसी ही होती तो वे अमीर लोग, जिन्हें कीमती, बढ़िया और शुद्ध खाद्य पदार्थ पर्याप्त मात्रा में आसानी से प्राप्त होत हैं अवश्य निरोग और बलवान ही होते। इसके विपरीत गरीब आदमियों को दुबला और बीमार ही रहना पड़ता। पर होता इससे विपरीत है। अमीरों को बीमार और गरीबों को निरोग देखकर यह निष्कर्ष निकलता है कि खाद्य-पदार्थों की उत्कृष्टता का महत्त्व एक बहुत छोटी सीमा तक ही है। पेट ठीक होता है वह अपने काम के तत्व घटिया पदार्थों में से भी निकाल लेते हैं।

भूख न लगने की शिकायत

मनुष्य स्वस्थ है यह उसकी गतिविधियों को देखकर जाना जा सकता है। यह आवश्यक नहीं कि चिकित्सक प्रमाणित करे तभी यह माना जाय कि अमुक व्यक्ति का स्वास्थ्य चंगा है। कुछ सामान्य नियम हैं, जिनके व्यवहृत होने से स्वस्थ होने न होने का सहज अनुमान किया जा सकता है।

आपको काम करते समय आलस्य और जम्हाई नहीं आती तो समझिये आपका स्वास्थ्य सही है। उल्लास, उत्साह और काम करने की रुचि निरोग आदमी में ही हो सकती है। गिरे हुये शरीर वाला रुक-रुक कर, भिंच-भिंच कर अरुचिपूर्वक काम की बेगार उठायेगा। इसी प्रकार यदि प्रगाढ़ निद्रा आ जाती है और दुःस्वप्न नहीं आते तो भी यह समझना चाहिये कि स्वास्थ्य ठीक है और शरीर के प्रति कोई चिन्ता करने की जरूरत नहीं है।

तीसरा महत्त्वपूर्ण नियम यह है कि आपको भूख भी खुलकर लगनी चाहिये। यदि आपको भूख न लगने की शिकायत रहती है तो यह समझना चाहिये कि आपके स्वास्थ्य की दिशा और भविष्य अच्छा नहीं। आजकल यह समस्या बहुसंख्यकों की है। अनेक कारणों से लोगों की स्थिति ऐसी बन गई है कि उन्हें ऐसी तीव्र भूख नहीं लगती जैसी सड़क कूटने वाले मजदूरों की होती है। भोजन में तरह-तरह के स्वाद उत्पन्न करने की आवश्यकता इसी कारण हुई जान पड़ती है अन्यथा भूखे को रोटी चाहिये स्वाद नहीं। रोटियों में रूखी सब्जी में ही वह दम होता है, जो शरीर को मजबूत और निरोग बनाये रख सकें, पर प्रश्न यह है कि आपको मन्दाग्नि की, अपच की, भूख न लगने की शिकायत न होनी चाहिये।

भूख की तीव्रता जितनी अधिक होगी, पाचन-क्रिया भी उतनी ही सशक्त होगी। पाचन-क्रिया ठीक होगी तो रक्त भी पर्याप्त मात्रा में बनेगा और मल का निष्कासन भी सरलता से होगा। रक्त की पर्याप्त मात्रा बनी रहे और पेट में मल न रुके तो फिर शरीर के बीमार होने का कोई कारण नहीं रह जाता। वह सन्तुष्ट बना रहे इसके लिये आपको भूख लगने की ओर ध्यान रखना चाहिये। भोजन से शक्ति और तृप्ति तो मिलती है। मानसिक समाधान तथा सन्तोष भी होता है पर यह सन्तोष और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाधान तभी सम्भव है, जब भूख का डाक्टर भी आप से सहमत हो अन्यथा उदरस्थ आहार पेट से बगावत कर देगा और उसकी चिनगारियाँ रोग-शोक की दशा में सारे शरीर से फूट पड़ेंगी। शरीर की विकृत अवस्था का संकेत आहार के प्रति अरुचि से हो जाता है, इसलिये यह बहुत जरूरी है कि आपको भूख ऐसी लगे कि समय पर भोजन न मिलने पर आप तिलमिला उठें और जो कुछ मिल जाये उसे प्रेमपूर्वक खा लें।

कोष्ठबद्धता जो स्वास्थ्य का प्रबल शत्रु है, भोजन की अरुचि का परिणाम है। भूख लगे नहीं, खाना खाते जायें तो पेट में मल की दीवारें चढ़ती जायेंगी और आँतें मल के कारण फूलकर कमजोर हो जायेंगी और शक्ति उत्पादन क्रिया में शिथिलता आ जायेगी।

आइये विचार करें आपको भूख न लगने की शिकायत कैसे पैदा हुई ?

एक बात तो यह है कि असमय भोजन के कारण मन्दाग्नि उत्पन्न होती है। भोजन के उपरान्त पेट के लिये एक निश्चित विश्राम का समय होता है। उतने समय में शक्ति-ग्रहण और मल को मलाधार की ओर धकेल देने की क्रिया आँतें पूरी करती हैं। इसके बाद अगले मोर्चे के लिये उन्हें पर्याप्त विश्राम की आवश्यकता होती है। दो क्रियायें करने के बाद पेट आराम करने लगता है पर जो लोग इसमें बाधा उत्पन्न करते हैं और समय के पूर्व आहार लेकर उसे छेड़ते हैं, पेट उनसे रुष्ट हो जाता है। यह नाराजगी मन्दाग्नि द्वारा प्रकट होती है और उनका स्वास्थ्य पर तत्काल दूषित प्रभाव पड़ता है।

प्रातःकाल हल्का पेय, दोपहर को रोटी-दाल या चावल, सब्जी आदि जो रुचि और प्रकृति के अनुकूल पड़े, ग्रहण कर लीजिये। सायंकाल दलिया, दूध, फल या हल्का शाकाहार कर लीजिये। बस, इस नियम को भंग न कीजिये। कभी चाय कभी बिस्कुट, कभी चाट, कभी पकौड़े—यह बुरी आदत है। असमय, बार-बार भोजन करते रहेंगे तो पेट ठीक नहीं रहेगा और आपका स्वास्थ्य भी गिर जायेगा।

भोजन की दिनचर्या भी नियमित होनी चाहिये। ऐसा करने पर पेट का सन्तुलन खराब न होगा, अच्छा तो यह रहे कि जब तक तीव्र भूख नहीं लगती, तब तक आप खाइये ही नहीं।

आपके पेट का स्वभाव आप जैसा ही है यह जान लीजिये। सप्ताह में एक दिन रविवार की सरकारी छुट्टी मिलती है। वह न मिले तो आप नाखुश न हो जाये। कृपा कर अपने पेट को भी सप्ताह नहीं तो १५ दिन, इतना भी नहीं तो एक माह में एक दिन का अवकाश अवश्य दीजिये।

पेट का अवकाश उपवास है। अभी तक आपने उपवास नहीं किया इसलिये आपको अच्छी भूख नहीं लगती। अब आगे से ऐसा नियम बना लीजिये कि प्रति रविवार, एकादशी या जो दिन उपयुक्त हो उस दिन आप पूरे दिन या एक बार भूखे रहने का अभ्यास किया कीजिये।

पर कहीं ऐसा न करें कि आज एक बार न खाकर पाव-भर अन्न बचाया और दूसरे दिन आज का एक पाव + पिछला एक पाव अर्थात् आधा सेर खाना एक साथ खा लिया। ऐसा करेंगे तो पेट खराब हो जायेगा और शेष भूख भी मर-मिट जायेगी।

कहीं आपके आहार में अन्न की मात्रा अधिक और जल की मात्रा कम तो नहीं ? पानी आहार से अधिक लीजिये। आहार के एक घंटे बाद शीतल जल पीने का नियम बड़ा उपयोगी है। इससे पेट साफ रहता है, भूख खुली रहती है।

अपने आहार में गरिष्ठता न बढ़ाइये। मिठाइयाँ, मावे की बनी वस्तुयें कम खाइये। नमक, मिर्च, गुड़, तेल शक्कर, खटाई आदि का प्रयोग जितना कम कर सकें अच्छा है। अधिक दूध और घी भी भूख को शिथिल करते हैं। माँस, मद्यपान, बीड़ी, सिगरेट, चाय आदि की गर्मी से भी भूख कमजोर होती है, जितना बच सकें बचिये। तीखी औषधियों के सेवन से बचना आवश्यक है, यह आपके पेट की क्रिया-शक्ति को नष्ट कर डालती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार लेते समय जलवायु का भी ध्यान रखना चाहिये। गर्मियों के दिन में विचारवान् लोग मोटा आहार कम लेते हैं और तरल पेय-पदार्थों की मात्रा बढ़ा देते हैं। यह स्मरण रखिये कि आहार जठराग्नि को मन्द न करे उसी के अनुसार भोजन और पेय की मात्रा ऋतु के अनुकूल कम या अधिक कीजिये।

दो बार खाना खाते हैं तो दो बार शौच भी जाया करें। मल की सड़ती हुई गर्मी भोजन के प्रति अरुचि पैदा करती है। दुबारा भोजन तब करना चाहिये, जब पहला शौच हो जाये और आप स्नान कर लें। शौच और स्नान से भूख खुल जाती है।

यह दोनों क्रियायें जल्दबाजी में मत करिये। इनका सम्बन्ध भीतरी और बाहरी सफाई से है। यह सफाई सुव्यवस्थित और पूर्ण हुई तो शरीर निरोग, मन प्रसन्न जठराग्नि प्रदीप्त रहेगी। शौच गन्दे स्थानों में न जाया करें। पाखानों की दुर्गन्ध भी भूख को मारती है। अतः यदि सम्भव हो तो शौच करने दूर जंगल की ओर जाना चाहिये।

किन्तु कृपया शक्तियों का अपव्यय भी तो न करें। आहार ठीक किया सही, परिश्रम भी पर्याप्त करते हैं पर यह न भूलें कि ब्रह्मचर्य तोड़ना भी भूख रोकने का बड़ा जबर्दस्त कारण है। अति कामुकता का भोग का प्रभाव सीधे पेट की क्रियाओं पर पड़ता है। विषयी व्यक्ति का आहार भी ठीक रहना कठिन है। इसलिये इन्द्रिय-सेवन की अधिकता से शक्तियों का तेजी से पतन होता है और एक ऐसी ध्वंसात्मक गर्मी भीतर ही भीतर पैदा होती रहती है। जो खून को सुखाती रहती है। इससे उन्हें ठीक भूख लगना बन्द हो जाती है।

यह तीन नियम हैं जिन पर भूख का कम-ज्यादा लगना निर्धारित है। इन्हें ठीक कर लिया जाये तो मन्दाग्नि की शिकायत दूर हो सकती है।

आपका आहार और उससे सम्बन्धित क्रियाएँ दुरुस्त होनी चाहिये। परिश्रम करने से जी न चुराना चाहिये और ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिये। यह बातें आपको मंजूर हों तो विश्वास कीजिये आपकी मन्दाग्नि ठीक हो जायेगी। इनका उल्लंघन करना ही भूख न लगने का कारण है और इसी से स्वास्थ्य को जबर्दस्त धक्का लगता है।

भोजन भगवान को समर्पित कर लिया करें

आप प्रतिदिन भोजन करने बैठते हैं। उस समय स्वाद की भड़क और भूख की जल्दी में आप यह नहीं सोचा करते कि यह आहार किसने प्रदान किया है कदाचित् आप से यह प्रश्न कोई पूछे तो आप कहेंगे—यह अन्न मैंने पैदा किया, मेरी धर्मपत्नी ने बनाया। बस यह सब मेरा है, इसमें किसी का राई-रत्ती अधिकार नहीं, जैसे चाहूँगा वैसे भोगूँगा।

आपका इस प्रकार सोचना मिथ्या है। माना आपने श्रम किया तो उसके बदले आप ही उसे भोगने जा रहे हैं। आपकी धर्मपत्नी ने बनाया है, इसीलिये तो आपकी इच्छानुसार बना है। पर आप थोड़ा ऊँचे उठकर विचार कीजिये कि आपके इस अन्न में सृष्टि के नियामक परमात्मा का अधिकार भी है। उसने धरती न बनाई होती तो आप अन्न कहाँ उगाते ? बीज न बनाया होता तो क्या पैदा कर लेते ? फिर कहीं आपका ही अस्तित्व न होता, यह मनुष्य शरीर न मिला होता तो इसे भोगने की सामर्थ्य आप में कहाँ से आती ? आपको भोग के साधन प्रदान किये गये हैं तो उस दाता के प्रति कृतज्ञ भी तो होना चाहिये।

भोजन करने के पूर्व आप उसे परमात्मा को सपर्मित कर दिया करें, तो इसमें आपका घटेगा कुछ नहीं वरन् अन्न की शक्ति के साथ भावना बल भी बढ़ेगा। आपको शक्ति और ओज प्रदान करने में इस प्रकार की भावना की महत्ता अद्वितीय है।

जो भोजन आप ग्रहण करते हैं उसी के द्वारा आपका पोषण और नव निर्माण नहीं होता, प्रत्युत्त भोजन करते समय आपकी जैसी मनःस्थिति होती है, मन जैसा सूक्ष्म प्रभाव फेंकता है और जैसी भावनायें लेकर भोजन करते हैं, उनका भी आपके जीवन निर्माण से महत्त्वपूर्ण सम्बन्ध होता है। उन भावनाओं का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विकास शरीर के रक्त, माँस, वीर्य और प्राण के द्वारा प्रस्फुटित होकर सारे जीवन में बिखर जाता है। परमात्मा को भोजन समर्पित करने से जो सात्विक और पवित्र विचार-प्रवाह उमड़ता है, वह अपने शरीर और जीवन में घुल जाता है। शरीर पुष्ट और बलिष्ठ बनता है। साथ में संकल्प मजबूत होते हैं और उस निश्चयात्मक बुद्धि से बनने वाला जीवनक्रम भी अधिक सुव्यवस्थित बन पड़ता है।

प्रातःकाल से लेकर दोपहर तक काम करने में आपके सामने अनेक प्रकार की परिस्थितियाँ आती हैं। कभी क्रोध उत्पन्न होता है, कभी खिन्नता आती है। कभी भय पैदा होता है, कभी निराशा उत्पन्न होती है। अनेक तरह के बुरे विचार भी प्रभावित करते रहते हैं। काम की कठोरता में उत्तेजना, उद्विग्नता, ईर्ष्या, द्वेष होना स्वाभाविक-सा है। कई बार दूसरे लोग अपने काम में बाधायें डालते हैं, उसके कारण प्रतिशोध की भावनायें भी भड़क उठती हैं। दोपहर को घर लौटते हैं तो अशुभ विचारों का पूरा बोझ साथ लेते आते हैं। यह कुत्सित विचार भोजन करते समय भी बने रहें तो वे स्थायित्व ग्रहण करने लगेंगे। परमात्मा के प्रति समर्पण का विचार करते ही आपकी अन्तरात्मा विशाल होती है। उसमें सारे कलुष-काषाय घुल जाते हैं। आगे के लिये एक स्वस्थ चैतन्यता अनुभव करने लगते हैं।

आहार ग्रहण करते समय भावनाओं के सम्मिश्रण का फल अलौकिक है। इससे आत्मा में स्वर्गीय शान्ति का अवतरण होता है। बच्चे अपनी माँ का दूध पीते हैं तो कितनी अठखेली करते हैं। कभी मुँह नोचते हैं तो कभी चूम-चटकार करते हैं। तरह-तरह के आमोद-प्रमोद करता है बालक। माँ के प्रति उसकी कृतज्ञता पूर्ण प्रकट होती है। माँ भी यह देखकर अपना ममत्व उड़ेलती है। दूध के साथ भावनायें पिलाती है। बच्चे के स्वास्थ्य और सुडौलता में दूध उतना महत्त्वपूर्ण नहीं होता जितना माँ-बेटे के द्वारा विनिर्मित उल्लास और ममता भरा वातावरण। वह दूध बच्चे के लिये शहद से भी अधिक मीठा, शक्तिवर्द्धक और अमृत के समान होता है।

मनुष्य का पिता परमात्मा है। पिता की शक्ति और सामर्थ्य माता से बढ़कर होती है। अपने पुत्र की भावनाओं को देखकर उसका जी भर आता है, तब वह अपने शिशु को अपनी भावनाओं का रस उसी तरह पिलाता है जैसे माता अपने बेटे को पिलाती है। निर्लेप, भव्य और उत्तम मनःस्थिति सुन्दर स्वास्थ्य के लिये प्रथम आवश्यक तत्व है। भयपूर्ण, क्लान्त या उद्विग्न मनःस्थिति में भोजन करना आलस्य और रोग-शोक को निमन्त्रण देना है।

"जो कुछ भोजन आप पा लेते हैं, वह पाचन के उपरान्त शरीर का एक भाग बन जाता है, उस भोजन के साथ जो कुछ सूक्ष्म विचार थे वे भी शरीर में बस जाते हैं। लोग समझते हैं खाद्य-पदार्थ में शक्ति है इसलिये आहार की बाहरी सफाई पर तो ध्यान देते हैं किन्तु आन्तरिक स्वच्छता को उपेक्षित करते हैं, इससे उत्तम स्वास्थ्य नीरोग शरीर की आकांक्षा नहीं सफल होती।" यह शब्द थियोसोफिकल सोसायटी के विद्वान सन्त लेडबीटर ने "वस्तु की आन्तरिक दशा" नामक पुस्तक में लिखे हैं।

परमात्मा पूर्ण पवित्रता का प्रतीक है। जब वह भोजन में हमारे साथ बैठ जाता है तो सात्विकता की लहर दौड़ने लगती है। परमात्मा का प्रसाद पुष्टिदायक, मधुर, स्वादिष्ट और थोड़ा होता है। प्रसाद-भावना से लिया हुआ आहार भी वैसा ही होना चाहिये। मीठा, स्वल्प, सात्विक और स्वादिष्ट। इसी में स्वास्थ्य की सम्भावनायें भी टिकी हैं। जब भगवान साथ नहीं होता तभी लोग अखाद्य पदार्थ भक्षण करते हैं। माँस, मिर्च मसालेदार गरिष्ठ पदार्थ, प्याज और इसी तरह के अन्य दूषित पदार्थों का सेवन वही लोग करते हैं, जो परमात्मा को अपने अन्दर धारण नहीं करना चाहते। इसी के फलस्वरूप उन्हें स्वास्थ्य का सुख नहीं मिलता, भावनाओं का सुख नहीं मिलता।

आहार का उद्देश्य मन को, स्वादेन्द्रिय की तृप्ति करना मात्र नहीं, वरन् उसका जीवन की गतिविधियों से गहरा सम्बन्ध है। जिस व्यक्ति का जैसा भोजन होगा, उसका आचरण भी तदनुकूल होगा। आहार शुद्धि की आवश्यकता पर प्रकाश डालते हुये छान्दोग्य उप० में लिखा है—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"आहार शुद्धौ सत्व शुद्धिः सत्व शुद्धौ ध्रुवा स्मृतिः स्मृतिलाभे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः।"

अर्थात्—आहार की शुद्धि से सत्व की शुद्धि होती है। सत्त्व की शुद्धि से बुद्धि निर्मल और निश्चयी बनती है। पवित्र और निश्चय बुद्धि के द्वारा ही मनुष्य मोक्ष प्राप्त करते हैं।

जिसके जीवन में अनेक बुराइयाँ धँसी हैं, अनेक मनोविकारों से ग्रस्त है, उसे अपना जीवन सीधी राह पर लाने का प्रारम्भिक एक साधन आहार शुद्धि और परमात्मा को समर्पित कर भोजन लेना है। आहार में ईश्वरीय दिव्यात्मा का समावेश होता है तो काम, क्रोध, उत्तेजना, चंचलता, निराशा, उद्वेग आदि बुराइयाँ दूर होती हैं। स्वास्थ्य शक्ति और सौन्दर्य बढ़ता है। यह मनुष्य का कर्त्तव्य भी है। जिस परमात्मा ने हमें यह अलौकिक भोग इस धरती में दिया है, उसके प्रति समर्पण का भाव न रखें तो यह मनुष्य की धृष्टता होगी। उसे जो मिलता है, मिला है, वह परमात्मा की कृपावश मिलता है। उनकी इस कृपा के प्रति कृतज्ञ होना हमारा प्रमुख कर्त्तव्य होना चाहिये।

भोजन के साथ श्रद्धा और आनन्द का समावेश होना भी आवश्यक है। भोजन को पोषक औषधि माना जाय। इसी भाव से उसे ग्रहण किया जाय। औषधि रूपी आहार हमारी दुर्बलता और रुग्णता को दूर करता है, इसका भाव मन में भरे रखा जाये। जो आहार थाली में सामने आये हैं, उसे भी भावनापूर्वक शिरोधार्य किया जाये। किसी वस्तु में रुचि हो या उसका स्वादप्रिय न हो तो उठाकर अलग रखा जा सकता है। यह एक स्वाभाविक और सहज कथन हुआ। किसी वस्तु के मन के अनुरूप न होने पर चिढ़ जाना, बड़ाबड़ाना या उठाकर फेंक देना। यह अन्न भगवान का प्रत्यक्ष निरादर है। बनाने में रोटी का कोई भाग कच्चा रह गया हो या जल गया हो तो उतना अंश बिना मुँह पर किसी प्रकार का तनाव लाये उसे हटाया जा सकता है। किन्तु अश्रद्धा अथवा नाराजी किसी भी स्थिति में मन पर नहीं आने देना चाहिये। मन के कुभाव से अमृतोपम भोजन भी विषयुक्त हो जाता है।

भोजन करते समय बात-चीत करनी पड़े तो उतनी ही करनी चाहिये, जितनी नितान्त आवश्यक है। ज्यादा बातें सुनते हुये भोजन करने से वह न ठीक तरह पिस पाता है और न उसका मनोरम स्वाद ही आता है।

भोजन के प्रत्येक ग्रास को रुचिपूर्वक खाया जाय। उसका रस एवं आनन्द लिया जाय। विश्वास किया जाय कि यह आवश्यक पोषक तत्वों से परिपूर्ण है। इतना ही नहीं भोजन कक्ष में प्रसन्नता का सुरुचिपूर्ण वातावरण बनाये रखा जाय। बहुत न बोला जाय अन्यथा ग्रास भोजन नली में न जाकर वायुनली में जा सकता है। मोट-मोटे अधकुचले ग्रास निगलने से भी भोजन प्रक्रिया में संकट खड़ा हो सकता है। इसलिये भोजन के समय शांत एवं प्रसन्न रहने का विधान है।

अन्न को औषधि मानकर सेवन करें

अन्न को संस्कार निर्माता कहा गया है। मानसिक संस्कारों के निर्माण में इसका विशेष योगदान रहता है। हमारा गुण कम और स्वभाव वैसा ही बनता है, जैसा हम अन्न खाते हैं। कहा भी गया है "जैसा खायें अन्न, वैसा बने मन।" कुधान्य अथवा अभक्ष्य कुसंस्कार डालता है और पापवृत्तियों की ओर ले जाता है। यह हमारे आत्मबल को क्षीण कर हमारी प्रगति के मार्ग को अवरुद्ध करता है। इसके विपरीत शुद्ध सात्विक आहार, सुसंस्कार और सत्प्रवृत्तियों को जागृत करता है, इससे आत्मबल बढ़ता है और हमारी प्रगति का मार्ग प्रशस्त होता है। इसलिये यह आवश्यक है कि हमारा अन्न सात्विक, परिश्रम तथा ईमानदारी की कमाई का हो। ऐसा अन्न ही हमारे मन पर स्वच्छ एवं स्वस्थ संस्कार डालने में सफल होगा।

यदि भोजन के साथ प्रसाद भावना का समन्वय न किया जाय, केवल पेट भरने के लिये स्वाद के लिये उसे खाया जाये, तो वह उदर पूर्ति मात्र कर सकता है, उसका अन्य कोई सूक्ष्म प्रभाव न होगा। इसीलिये हिन्दू धर्म में भगवान को भोग लगाकर, भोजन को प्रसाद रूप में ही ग्रहण करने की परम्परा है। जो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भगवान को समर्पण किये बिना खाता है, वह गीताकार की दृष्टि में 'चोर' है।

आयुर्वेद में आहार को क्षुधारोग की औषधि माना गया है। औषधि में स्वाद क्या देखना ? जो लोग दवा में गुण न देखकर उसका जायका पसन्द करते हैं, वे अस्वस्थता से छुटकारा नहीं पा सकते। भोजन में उसकी सात्विकता और पौष्टिकता ही विचारणीय है, स्वाद तो उसमें उल्टा विघ्न उपस्थित करता है। स्वाद की दृष्टि रखकर नमकीन, चटपटे, मीठे, तले हुये कुरमुरे, चिकने आदि जो पदार्थ खाये जाते हैं, वे पाचन क्रिया को बिगाड़कर हमें नाना प्रकार के रोगों से ग्रस्त ही करते हैं।

स्वाद न देखने का अर्थ यह नहीं कि भोजन को अरुचिकर एवं अग्राह्य रूप में बनाकर खाया जाये। बुस गया है तो भी खाया ही जाये, दूध फट गया है, खटांध आ रही है तो भी पिया ही जाये, यह उचित नहीं। अरुचिकर चित्त में घृणा पैदा करने वाली, अखरने, खटकने वाली बात भोजन में न हो, यह तो देखना ही चाहिये। पर बात इतना ही है कि केवल मीठे या मसाले के आधार पर, केवल स्वाद के आधार पर भोजन को महत्त्व न दिया जाये। ऐसी धार्मिक अभिरुचि बना लेने से एक लाभ यह भी है कि मनुष्य सीध-सादे भोजन से संतुष्ट हो जाता है। भोजन में मिर्च, मसाले अथवा मिठास के अभाव में न वह क्रुद्ध होता है और न खिन्न।

उपेक्षा इनकी भी न करें

ऐसा नहीं सोचना चाहिये कि खाना पेट में पहुँचकर सहज ही सीधे-साधे तरीके से रक्त मांस बन जाता है और शक्ति देने लगता है। भोजन के रक्त और शक्ति के रूप में बदलने के लिये उन रसों का सम्मिश्रण आवश्यक होता है, जो मुँह आमाशय, आँत, जिगर आदि में से निकलकर खाद्य पदार्थों में मिलते हैं और उन्हें पचने योग्य बनाते हैं। यदि इन रसों का सम्मिश्रण कम हो या वे दुर्बल किस्म के हों तो फिर भोजन चाहे कितना ही हल्का या सुपाच्य क्यों न हो ठीक तरह से पचेगा नहीं और पेट में अपच-सड़न जैसी अनेकों शिकायतें पैदा करेगा। जलन, दर्द, पेट, फूलना, उल्टी, पेचिश, दस्त न होने, सूजन, जैसी पीड़ायें खड़ी हो जायेगी। इसलिये जहाँ भोजन में क्या-क्या खाद्य पदार्थ हैं, इसका ध्यान रखना है, वहाँ यह भी ध्यान रखना है कि पेट में पहुँचे आहार में पाचक रसों का समुचित सम्मिश्रण हुआ या नहीं।

इस सन्दर्भ में दो बातें ध्यान रखने योग्य हैं। एक तो यह कि जितनी मात्रा में पाचक रस निकलते हैं, उनको पचाने की शक्ति को ध्यान में रखते हुये ही पेट में भोजन का माप निर्धारित किया जाये। दूसरे यह कि पाचन रसों का भोजन में ठीक तरह घुलने का अवसर दिया जाय। इन दानों बातों को ध्यान में रखा जाये तो खाया हुआ आहार ठीक तरह पच भी जायेगा और यह शक्ति देगा। अन्यथा वेसिलसिले खाये हुये उत्तम पदार्थ भी अपच उत्पन्न करेंगे और हानिकारक सिद्ध होंगे।

दो-चार दिन की परीक्षा करके यह देखना चाहिये कि पेट कितना भोजन करने पर हल्का रहता है और ठीक तरह पचा लेता है। स्वाद-स्वाद में ज्यादा खा जाने पर पेट ठुँस जाता है, उसमें हवा पानी की भी जगह नहीं बचती। यह बहुत ही बुरी बात है। आमाशय में दही बिलोने जैसी क्रिया होती है, जिसके लिये फैलने-फूलने की जगह चाहिये। ठूँसकर खाने से पेट भिंच जाता है, न उसमें से पूरे रस निकल पाते हैं ओर न आवश्यक उलट-पुलट हो पाती है। ऐसी दशा में अपच का होना स्वाभाविक है। अधिक खाते रहने के कारण पेट की थैली चौड़ी हो जाती है और ठूँसकर खाने की आदत पड़ जाती है। इसे छोड़ना चाहिये। आदत पर ध्यान न देकर परखना चाहिये कि पेट कितना खाने से हल्का रहता है और कितनी मात्रा को ठीक तरह पचाकर अगले बार कड़ाके की भूख लगने जैसी स्थिति बना देता है। अपने लिये उतनी ही मात्रा पर्याप्त मान लेनी चाहिये और पुरानी आदत पर नियन्त्रण करके उतना ही खाकर सन्तोष करना चाहिये।

यह सोचना बिल्कुल गलत है कि अधिक खाने से अधिक ताकत आती है। वास्तविकता यह है कि जितना ठीक तरह पच सकेगा, उतने में ही बल मिलेगा कम खाने से कमजोरी नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आती वरन् पूरा रक्त बनता है। यह शरीर हल्का रहता है। पेट जितना पाचन रस निकालता हो, उसमें पचने की जितना क्षमता हो उससे कुछ खाने में हर्ज नहीं ज्यादा तो भूलकर भी नहीं खाना चाहिये, पेट से पूछकर यह निर्धारित करना चाहिये कि कितनी मात्रा पर्याप्त है। जब तक पेट में कड़ाके की भूख द्वारा अधिक की मांग न करे, तब तक उस पर अनावश्यक बोझ नहीं डालना चाहिये। अधिक लादने पर गधे की कमर टूट जाती है। अधिक खाने से पेट की भी ऐसी ही दुर्गति होती है। आधा पेट खाना, चौथाई, हवा के लिये, चौथाई पानी के लिये खाली रखने के सिद्धान्त जिनके व्यवहार में आता है, वे निरोग रहते और दीर्घजीवी बनते हैं। हर दृष्टि से तो अधिक खाने वाले पेटू लोग ही रहते हैं।

भोजन का समय नियत रहना चाहिये। जो खाना हो उसी समय खाना चाहिये। सारे दिन बकरी की तरह मुँह चलाते रहना बहुत ही बुरा है। हाँडी से एक बार दाल दूसरी बार चावल, तीसरी बार शाक, कुछ, चौथी बार कुछ डालते रहा जाय तो इनमें से एक भी चीज ठीक तरह नहीं पकेगी। कोई जल जायेगी और कोई कच्ची रह जायेगी। दिन में दो बार खाना पर्याप्त है। बीच में प्रातः और तीसरे प्रहर हल्के पेय पदार्थ लिये जा सकते हैं। दूध, छाछ, नीबू का पानी, फलों का रस, तरकारियों का जूस जैसी चीजें प्रातः और तीसरे प्रहर लेने के लिये ठीक हैं। भारी भोजन नहीं करना चाहिये। कड़ी शारीरिक मेहनत करने वाले दलिया जैसी कोई पतली, हल्की चीज ले सकते हैं। वजनदार नाश्ता करना गलत है। रात को सोते रहने के कारण, बिना परिश्रम की स्थिति रहती है और सबेरे तक भोजन ठीक तरह नहीं पच पाता। इसलिये सबेरे उठकर मुँह-हाथ धोने के पश्चात् शौच जाने से पहले या पीछे एक बड़ा गिलास पानी पीना चाहिये। इससे टट्टी और पेशाब की सफाई में मदद मिलती है। इसके बाद सबरे हल्का-पतला कुछ पेय ही लिया जा सकता है। आजकल लोगों को नाश्ते में पकौड़ी, टोस्ट मक्खन जैसी भारी चीजें खाने की आदत पड़ गई है। इससे पेट पर असामयिक दबाब पड़ता है। जब तक रात का भोजन ठीक तरह पच नहीं पाया, तब तक दूसरा नया भार लद गया है। पेट को इतना अवकाश मिलना चाहिये कि रात को बिना पचा भोजन पचाकर पिछला काम निपटा सके और नया वजन उठाने में समर्थ हो सके। पिछेला बोझा जब तक उतरा नहीं है, तब तक नया लद जाय तो यह एक प्रकार का अत्याचार ही होगा। सबेरे भारी नाश्ता करने वालों को दोपहर की भूख ठीक से नहीं लगती। पश्चिमी देशों में भारी नाश्ते का प्रचलन है। वे काम पर खाकर जाते हैं पर उस गलती का सुधार ऐसे करते हैं कि मध्याह्न का भारी भोजन नहीं करते। 'लंच टाइम' एक बजे के करीब होता है तब उनका भोजन बहुत ही हल्का और थोड़ा होता है ताकि काम करने में आलस्य न आवे। पूरा भोजन तो वे रात को करते हैं। उनकी नकल करनी हो तो भारी नाश्ता करने पर दोपहर का भोजन नहीं करना चाहिये। रात के और सबेरे के दोनों भोजनों को पचाने के लिये पर्याप्त समय देना चाहिये। किन्तु अपने यहाँ तो दोपहर का पूरा भोजन करने का ही रिवाज है। ऐसी दशा में एक आदत तो छोड़नी ही चाहिये। नाश्ता करना हो तो दोपहर का भोजन देर में और हलका। दोपहर को पूरा खाना है तो नाश्ता बन्द। दोनों में अच्छा यही है कि भारी नाश्ते की आदत छोड़ दी जाय। इससे रात की अपच पूरी हो जायेगी और दोपहर को खुलकर भूख लगेगी।

सप्ताह में एक दिन उपवास रखने की आदत डाली जानी चाहिये। कार्यालयों में हर जगह साप्ताहिक अवकाश मिलता है। पेट तो चौबीस घण्टे काम करने वाला कर्मचारी है। नौकर तो आठ घण्टे ही काम करके साप्ताहिक छुट्टी के अधिकारी बन जाते हैं फिर जिसे चौबीस घण्टे काम करना पड़ता हो, उसे तो और भी अधिक अवकाश पाने का अधिकार है। स्पष्ट है कि इस छुट्टी से थकान दूर होती है और अधिक उत्साह से काम करने की स्फूर्ति मिलती है। पेट के साथ भी ऐसा ही उदार सद्व्यवहार करना चाहिये कि वह सप्ताह में एक दिन अपनी थकान उतारने वाली छुट्टी प्राप्त कर लिया करें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उपवास का प्रचलित तरीका अत्यन्त हानिकारक है, जिसमें अन्नरहित पकवान और मिष्ठान्न ठूँस-ठूँस कर खाने की छूट रहती है। यह तो रोज मर्रा के साधारण भोजन के स्थान पर और भी गरिष्ठ बोझा लादने का अत्याचार हुआ। इससे तो उपवास का उपहास ही होता है। करना ही हो तो ठीक तरह छुट्टी देनी चाहिये। पानी तो पीते रहा जाय पर और कुछ न खाया जाय तो ही उपवास का उद्देश्य पूरा हो सकता है। छूट लेनी हो तो दूध, छाछ, फलों का रस, शाकों का रसा जैसी हल्की प्रवाही चीजें लेनी चाहिये। मन न माने तो उबली सब्जी का फल थोड़ी मात्रा में ले सकते हैं। पूरे दिन का उपवास न बन पड़े तो आधे दिन का भी रखा जा सकता है। तीसरे प्रहर कुछ खा लिया जाय, रात को बिल्कुल नागा रखी जाये। बहुत ही जरूरत पड़ जाये तो दूध आदि कुछ हल्का-पतला ले लें। दिनभर भूखे रहना और सूर्य डूबते ही भर पेट खाना—ऐसा उपवास भी व्यर्थ है। असल में छुट्टी शाम के भोजन की होनी चाहिये ताकि लगातार लम्बे समय तक पेट को विश्राम मिले।

उपवास को एक घरेलू परम्परा का रूप मिलना चाहिये। इसे स्वास्थ्य-रक्षा के साथ धार्मिक रूप भी दिया जा सकता है। सप्ताह में जो भी दिन अनुकूल पड़ता हो, उस दिन के लिये पूरे परिवार का यह नियम ही बनना चाहिये कि कम से कम एक समय तो शाक-भाजी या दाल-दलिया जैसी किसी पतली वस्तु पर रहना पड़ेगा और उन्हें भी भर पेट न खाया जायेगा। इस अर्ध उपवास से भी लाभ है। यह प्रथा हर घर में चल पड़े तो स्वास्थ्य, रक्षा के साथ-साथ देश की खाद्य समस्या के समाधान में भी योगदान मिल सकता है। सप्ताह में चौदह बार के भोजन में से एक समय का भी कट जाय तो लगभग सात प्रतिशत अन्न बच सकता है और अन्न की जो कमी रहती है, वह सहज ही पूरी हो सकती है। यदि उत्पादन पूरा होने लगे तो इतना अन्न अन्य अभावग्रस्त देशों को भेजकर उन्हें उपकृत कर सकते हैं और विदेशी मुद्रा कमा सकते हैं। सप्ताह में एक समय शाकाहारी या प्रवाही पदार्थों पर रहना किसी के लिये भी कठिन नहीं हो सकता पर इससे लाभ सभी का है। बहुत छोटे बच्चे, बूढ़े, बीमार जो भूख नहीं सह सकते, उनको छूट देकर शेष वयस्कों में से प्रत्येक को इस उपवास नियम को मात्र स्वास्थ्य की दृष्टि से ही नहीं राष्ट्रीय समृद्धि और आत्मिक पवित्रता की दृष्टि से भी अपनाना चाहिये। शास्त्रों में उपवास का बहुत महात्म्य बताया गया है। इससे स्वर्ग, मुक्ति, आत्मिक पवित्रता, ईश्वर प्राप्ति जैसे अनेक प्रतिफल मिलने की बात कही गई है। इसे योग साधन, तपश्चर्या स्तर का नियम पालन समझना चाहिये। स्त्रियाँ चाहें तो घर के थोड़े-थोड़े सदस्यों को समझा-बुझाकर इस उपवास प्रक्रिया में सम्मिलित कर सकती हैं। जितने सदस्य सहमत होंगे वे सभी लाभ उठावेंगे। शेष का मन भी, प्रयत्न चलता रहे तो इस उपयोगी नियम के पालन में सहमत हो सकता है।

प्रत्येक ग्रास को अच्छी तरह चबाकर खाया जाना चाहिये जल्दी-जल्दी अध-कुचले ग्रास निगलते रहने से जो थोड़े समय की बचत होती दिखाई पड़ती है, वह अन्ततः बहुत महँगी पड़ती है। कुचलने-पीसने का काम दाँतों का है लेकिन वह आँतों को करना पड़ता है। बिना पिसे साबित ग्रासों को तो आखिर हजम नहीं किया जा सकता।

पुराने लोग कहते थे—"ग्रास को बत्तीस बार चबाना चाहिये। रोटी पीनी चाहिये और पानी खाना चाहिये।" यह उक्तियाँ अटपटी लगती हैं पर हैं बहुत ही सारगर्भित। ग्रास बत्तीस बार चबाया जाय या कम-ज्यादा, इस संख्या का उतना महत्त्व नहीं जितना इस बात का है कि भोजन पिसकर इतना बारीक और गीला हो गया या नहीं जो सहज ही गले से नीचे उतर सके। इसके लिये यह आवश्यक है कि दाँतों में उसकी अच्छी पिसाई की जाये। इससे दाँतों का व्यायाम होता है और उनकी जड़ें मजबूत रहती हैं। पशु दाँतों से घास चरते और पीछे उसकी जुगाली करते हैं, उससे उनके मसूड़ों को काफी श्रम पड़ता है और बुढ़ापे में भी उनके दाँत बने रहते हैं। हम यदि ऐसे ही अध-कुचले ग्रास निगलते रहेंगे और दाँतों को पूरा परिश्रम नहीं करने देंगे तो वे निठल्ले पड़े रहकर समय से पहले ही रोगी होकर उखड़ जायेंगे। अच्छी तरह चबाना जबड़े और मसूड़ों का अच्छा खासा व्यायाम है, जिससे उनकी सुरक्षा बनी रहती है।

इससे भी बड़ी बात यह है कि चबाते समय जीभ और जबड़े में रहने वाली छोटी-छोटी अगणित रस ग्रन्थियों से जो पानी सरीखा द्रव

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पदार्थ निकलता है, वह पचाने की दृष्टि से प्रकृति का दिया हुआ बहुमूल्य उपहार है। इस स्राव के आहार से मिलने से उसका बहुत कुछ पाचन तो मुँह में ही हो जाता है और पेट को पचाने में अपेक्षाकृत बहुत सुविधा रहती है। वस्तुतः पाचन के तीन संस्थान हैं—(१) मुँह (२) आमाशय (३) आँतें। तीनों से ही अपने-अपने ढंग के स्राव निकलते हैं और उनके समुचित सम्मिश्रण से ठीक तरह पाचन हो पाता है। इनसे एक भी जगह के अपने-अपने ढंग के अनौखे स्रावों में से कुछ भी कमी रह जायेगी तो दूसरे स्थानों के स्राव बड़ी कठिनाई से ही उसकी आधी-अधूरी पूर्ति कर पावेंगे। गन्ने की फसल पक जाने पर देहातों में कोल्हू से रस पेलते हैं और फिर कढ़ावों से उनका गुड़ पकाते हैं। उसकी विधि यह होती है कि तीन कढ़ावों की भट्टी होती है। पहले कढ़ाव में रस थोड़ा पक जाता है तो उसे दूसरे में डालते हैं, दूसरे में पककर कुछ और गाढ़ा होता है फिर तीसरे में डाला जाता है और वहाँ ठीक से गुड़ बन जाता है। यदि एक दो ही कढ़ाव में पकाकर गुड़ बनाने का प्रयत्न किया जाय तो उसमें बहुत-सी कमियाँ व खराबियाँ रह जायेंगी। रासायनिक नियमों के अनुसार यह उलट-पुलट का परिवर्तन आवश्यक होता है। ठीक यही बात पेट की समझनी चाहिये। मुँह, आमाशय और आँतों की तीनों ही भट्टियाँ पाचन में अपनी-अपनी भूमिका निभाती हैं। मुँह का काम चबाना भर नहीं है वरन् पचाने का एक महत्त्वपूर्ण अध्याय पूरा कर देना भी है। यदि चबाने में जल्दबाजी की गई तो मुँह से निकलने वाले अत्यन्त महत्त्वपूर्ण रसों का आहार से सम्मिश्रण न हो सकेगा और उस कमी के कारण वह आगे चलकर आमाशय और आँतों में भी गड़बड़ी ही करता रहेगा। अस्तु मुँह द्वारा अच्छी तरह चबाये जाने और लार द्वारा उसे पतला किये जाने को पूरा महत्त्व दिया जाना चाहिये।

एक दृष्टि से भोजन को बहुत प्रवाही न बनाया जाय तो ज्यादा अच्छा है अन्यथा दूध दलिया या पतली खीर जैसी चीजों को लोग ऐसे ही गटक जाते हैं। दन्त संस्कार तो नाम मात्र का ही करते हैं। गाढ़ी और कड़ी चीजें तो गटकी नहीं जा सकती, उन्हें गले से नीचे उतारने को मजबूर होकर कुचलना चबाना ही पड़ता है। वैसी पतली वस्तुओं में मूलतः कोई दोष नहीं है। पतली चीजों को भी कुछ देर मुँह में रखा जाये और उन्हें पीसने की जरूरत न होने पर भी दन्त-संस्कार करके मुँह के रस मिलने का अवसर दिया जाये तो ये पतली चीजें भी उतनी ही गुणकारक हो सकती हैं। पानी को खाने और रोटी को पीने की उक्ति इसी तथ्य को ध्यान में रखकर बनाई गई है। पानी को भी गटागट एक साँस में न पिया जाये वरन् हर घूँट को थोड़ी देर मुँह में रखकर तब गले से नीचे उतारा जाये। रसों का स्राव तभी होता है, जब मुँह में हरकत होती है, इसलिये पानी पीते समय भी खाने जैसा मुँह चलाया जाय तो उसमें उपयुक्त मात्रा में मुँह की लार मिल जायेगी और पानी दूध या जो भी खाया-पिया जायेगा सभी आसानी से पचने योग्य बन जायेगा। पानी को खाने की उक्ति में इसी तथ्य की ओर ध्यान दिलाया गया है। दूध, छाछ, पतला दलिया आदि खाते समय भी इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिये।

रोटी खाते समय न्यूनतम पानी पिया जाना चाहिये अन्यथा पानी की अधिकता से वह बिना पचे ही आमाशय से आँतों की तरफ खिसक जायेगा—उससे फुलाव बढ़ेगा। पाचक रस अधिक पानी में घुल जाने के कारण उतने सशक्त न रहेंगे। अधिक पानी में थोड़ा साबुन डाल दिया जाय तो उसमें एक छोटा रूमाल भी ठीक तरह साफ नहीं होगा, जबकि उतने ही साबुन को थोड़े पानी में घोलने से वह कपड़ा भली-भाँति साफ हो सकता था। यही बात भोजन के समय अधिक पानी पी जाने से होती है। तेज मसाले की जलन-गरम भोजन से उत्पन्न दाह एवं जल्दी गले से उतारने के लिये अधिक पानी का प्रयोग किया जाता है। यह तीनों ही गड़बड़ न हों और शान्त चित्त से रुचिपूर्वक भोजन किया जाय और चबाने की उपयोगिता समझी जाय तो कोई कारण नहीं कि बीच में अधिक पानी पीने की जरूरत पड़े।

शरीर को कब कितनी मात्रा में पानी की आवश्यकता है, इसका पता प्यास की न्यूनता-तीव्रता से लग जाता है। पर हमारी चेतना परख भी अब ऐसी झीनी हो गई है, जो ठीक से वस्तु स्थिति का पता नहीं लगा पाती। तेज मसाले खाने से जलन प्यास के रूप में प्रतीत होती है, जबकि वस्तुतः शरीर में उस समय पानी की मात्रा घट जाने जैसी शिकायत नहीं होती। इसी प्रकार नशे की हालत में अथवा कोई गम्भीर विचार सामने आ जाने पर भूख

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्यास सभी विस्मृत हो जाती है। अस्तु पानी की आवश्यकता पूरी करने के लिये विवेक से भी काम लेना पड़ता है। विशेषतया बच्चे जो प्यास की आवश्यकता को अपने विवेक से उतनी अच्छी तरह समझ नहीं पाते अभिभावकों को ही शरीर और पानी की आवश्यकता का सन्तुलन मिलाकर उन्हें पानी देते रहना पड़ता है। बड़ों के सम्बन्ध में भी इसी तरह का ध्यान रखने की आवश्यकता समझी जानी चाहिये।

गर्मी में अधिक और सर्दी में कुछ पानी की जरूरत पड़ती है। औसतन सामान्य मौसम में ढाई किलो पानी हर रोज पेट में पहुँचना चाहिये। दूध, छाछ आदि के अतिरिक्त इतना शुद्ध पानी शरीर को मिलता रहे तो ठीक है। भोजन से पहले आधा गिलास पानी पिया जाता है पर भर पेट पी लेने से गड़बड़ी पड़ेगी। इसी प्रकार भोजन के एक-डेढ़ घन्टे तक भी बहुत पानी नहीं पीना चाहिये। इसके बाद थोड़ा-थोड़ा करके दो-तीन गिलास पानी पी लेना अच्छा रहेगा। इससे ताजगी रहती है—पाचन-क्रिया में सहायता मिलती है। गर्मी के दिनों में तो इससे भी अधिक पीना चाहिये।

यों पानी भी एक प्रकार का आहार ही है। उसमें भी जीवन तत्व भरे पड़े हैं। आसानी से हर जगह प्रचुर मात्रा में मिल जाने के कारण उसका मूल्य नहीं समझा गया है पर उसमें घुले रहने वाले रासायनिक पदार्थों को देखा जाय तो प्रतीत होगा कि वह भी दूध से कुछ ही घटिया किस्म का पेय पदार्थ है। शरीर में लगभग तीन चौथाई पानी और एक चौथाई ठोस पदार्थ है। पेशाब, पसीना, साँस तथा अन्य मलों के साथ पानी बाहर निकलता रहता है। इसकी पूर्ति के लिये भोजन में रहने वाला थोड़ा-सा जलीय अंश पर्याप्त नहीं, से अलग से प्राप्त करना चाहिये। अमीर लोग फलों का रस, हल्का दूध तथा अन्य पौष्टिक प्रवाही पदार्थ लेकर पानी की आवश्यकता पूरी करते हैं फिर भी ऐसे बहुत-से खनिज पदार्थ प्राप्त करने शेष रह जाते हैं। जो केवल शुद्ध पानी से ही प्राप्त होते हैं। अस्तु पानी को भी आहार रूप में प्राप्त करते रहना चाहिये।

बहुत गरम और बहुत ठंडी चीजें पीने की आदत, पेट और मसूड़ों को बेतरह खराब करती हैं। इन दिनों गरमा गरम चाय, काफी दूध और बर्फ पड़ा हुआ पानी शर्बत, सोड़ा, कोका कोला आदि पीने का प्रचलन बढ़ गया है। मलाई की बर्फ और आइसक्रीमों के तरह-तरह के रंग रूप बनने लगे हैं। रेफ्रीजिरेटरों में पानी, दूध आदि ठण्डा होता रहता है और बर्फ जमती रहती है। ऐसे फेरी वाले तथा दुकानदार हर जगह मिलेंगे जो गरमा गरम या ठंडी चीजें बेचते हैं। भोजन में भी हर चीज गरम खाने की फरमायश रहती है। यह अति ठंडक और अति गर्मी दाँत, मसूढ़े, जीभ, कंठ, श्वांस नली आमाशय, मस्तिष्क और पूरे शरीर में अनावश्यक उत्तेजना उत्पन्न करके, उन्हें शक्तिहीन बनाती है। शरीर के तापमान जितने गरम खाद्य पदार्थ ही उपयोगी होते हैं। उन्नीस इक्कीस तो चल सकता है पर जिनके तापमान में बहुत अधिक अन्तर है, वे निश्चित रूप से बुरा असर डालेंगे।

भोजन गरम ही होना चाहिये यह फरमायश बिलकुल बेहूदा है। आदत के कारण गर्म चीजें अच्छी लगने लगी हों, बात दूसरी है पर गुण के हिसाब से कुछ घंटे का रखा हुआ भोजन यदि ठंडा हो गया है तो उसकी ताजगी में रत्ती भर अन्तर नहीं आता। बिस्कुट, मिठाइयाँ, फल, मेवे आदि वस्तुयें लोग चावपूर्वक ऐसे ही खाते हैं और उन्हें गुणहीन नहीं मानते। फिर रोटी के लिये ही वैसा आग्रह क्यों होना चाहिये। इस गर्म-गर्म भोजन के झंझट में बेचारी स्त्रियों को जितना समय नष्ट करना पड़ता है, उतने में ये विद्याध्ययन और दसियों आवश्यक काम निपटा सकती हैं। रात को, दोपहर को मर्द कितनी देर में घर आते हैं— उनके लिये चूल्हा जलाये बैठे रहना कितना कष्टकर, असुविधाजनक और कितना समय नष्ट करने वाला होता है, इसे भुक्तभोगी ही समझते हैं। गर्म भोजन की अपेक्षा कुछ घण्टे का रखा भोजन सामान्य तापमान का हो जाने के कारण हानिकारक नहीं वरन् लाभदायक होता है। यह तथ्य यदि समझा जा सके तो स्वास्थ्य और समय बर्बाद करने वाली इस बुरी आदत से हर समझदार घर को छुटकारा मिल सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

खाद्यान्न संकट और उसका हल

एक ऐसे देश के लिए जहाँ लगभग ३६ करोड़ एकड़ भूमि के फसल बोई जाती हो और जहाँ ७ करोड़ एकड़ भूमि के लिए सिंचाई की व्यवस्था हो, बाहर से अनाज मँगाना न तो उसकी प्रतिष्ठा के लिए और न ही उसके आत्म-सम्मान के लिए शोभा की बात है। दुनियाँ में और भी देश हैं, जो क्षेत्रफल में भारत से छोटे हैं और जिनके पास कृषि योग्य जमीनें भी काफी कम हैं तो भी वे अपने देशवासियों के लिए अनाज की व्यवस्था पूरी कर लेते हैं। पर इतने साल बीत जाने पर भी भारत खाद्यान्न के मामले में आत्म-निर्भर न बन सका, इससे बढ़कर दुःख की और कौन-सी बात हो सकती है ?

आयात का आर्थिक दुष्फल

खाद्यान्न के क्षेत्र में हमारी अभाव की स्थिति आर्थिक विषमता उत्पन्न करती है। विदेशों से मँगाये हुए अनाज के बदले में भारत को करोड़ों रुपयों की अर्जित विदेशी मुद्रा गँवानी पड़ती है। यदि हम खाद्यान्न के क्षेत्र में आत्म निर्भर हो जायें तो हमारी करोड़ों रुपये की मुद्रा देश की विकास योजनाओं, सैनिक तथा रक्षा-सम्बन्धी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति के काम आ सकती है। यदि हम विदेशी अन्न के आयात पर निर्भर रहेंगे तो सक्रिय युद्धकाल में यह आयात एकदम बन्द हो सकता है, जिससे उस समय देश को अत्यधिक कष्ट भी उठाना पड़ सकता है।

खाद्य-मोर्चा, युद्ध-मोर्चा से बड़ा

आज की रणनीति भी खाद्यान्न के आधार पर बनती और चलती है। गत दो महायुद्धों के अध्ययन से इस सम्बन्ध में जो जानकारियाँ मिली हैं, उनका आज हमारे लिए बड़ा महत्त्व है। १९४१ के महायुद्ध में जर्मनी की हार का कारण भोजन का अभाव होना ही था। १९३९ में हिटलर ने सबसे पहले पोलैण्ड, आस्ट्रेलिया एवं चेकोस्लोवाकिया पर आक्रमण की योजना बनाई थी, उसमें उसने यह आशा की थी कि यह देश जल्दी ही अन्न के कारण मैदान छोड़ जायेंगे। सितम्बर के भारत-पाकिस्तान युद्ध में अमरीका द्वारा दिखाई गयी सख्ती भी यह सोचने को विवश करती है कि कोई भी देश यदि राजनैतिक दखल नहीं चाहता और रणनीति में दूसरों के आश्रित नहीं रहना चाहता तो उसे खाद्यान्न के मोर्चे पर सबसे पहले ध्यान देना चाहिए। भोजन के बिना सैनिक लड़ भी तो नहीं सकते। भोजन का प्रश्न एक निर्णायक महत्त्व रखता है। रक्षा के साधन जुटाने के लिए जहाँ हमें धन और सोने की जरूरत है, अनाज की आवश्यकता उससे भी अधिक है। यदि हम चाहते हैं कि कोई अन्य देश प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से हमारे राजनैतिक सिद्धान्तों में दवाब न डाले तो अन्न के मामले में हमें आत्मनिर्भर होना ही पड़ेगा। पेट के लिए भारत को विदेशियों के यहाँ गिरवी नहीं रख सकते। हमें अपने खान-पान, कृषि-साधन, रहन-सहन में इस भाँति परिवर्तन करना ही पड़ेगा, जिससे ७० प्रतिशत अनाज की कमी को पूरा करके देश को अनाज के सम्बन्ध में स्वावलम्बी बना सकें।

भूख-मुक्ति आन्दोलन और किसान

युग-निर्माण योजना की पृष्ठभूमि यह है कि राष्ट्र के सामाजिक जीवन में धार्मिक, आध्यात्मिक एवं नैतिक आदर्शों का पुनर्जागरण हो। इस प्रकार का जीवन मनुष्य के लिए सुलभ भी है, सुखद भी। फिर भी लोगों की मनोवृत्तियाँ अभी धार्मिक तथ्यों की ओर नहीं जाती, धर्म में लोगों की रुचि नहीं है। इसका एक मुख्य कारण यह भी है कि लोगों को प्रारम्भिक आवश्यकताओं की चिन्ता से मुक्ति नहीं मिलती। खाद्य की समस्या भी उन मूल आवश्यकताओं में से ही है, जिनके बिना न तो मनुष्य धार्मिक रह सकता है और न रहकर उसमें देर तक टिक ही सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

'नहिं सम्भव भूखे भजन'

एक बार स्वामी विवेकानन्द शिकागो में 'हिन्दू-धर्म की सर्वोपरिता' पर व्याख्यान कर रहे थे। उनका भाषण बड़ा दार्शनिक था। गहन तथ्यों और सूक्ष्म तत्वों का उन्होंने ऐसा सुन्दर विश्लेषण किया कि श्रोता मन्त्र-मुग्ध रह गये। पर अभी भाषण पूरी तरह समाप्त नहीं हुआ था कि एक अमेरिकन ने खड़े होकर पूछा-"महाशय ? यदि आपका धर्म इतना व्यापक और विशाल है तो आप अपने भारतीयों को क्यों नहीं धर्मनिष्ठ बनाते, अमेरिका वालों को धर्म सिखाने की ऐसी क्या आवश्यकता पड़ी।" इस प्रश्न ने एकाएक स्वामीजी को गम्भीर कर दिया। एक भी पल रुके बिना तत्काल जवाब दिया— "भारतवर्ष को अँग्रेजों ने इतना गरीब बना दिया है कि वे अब धर्म को समझने की स्थिति में नहीं रहे, उन्हें आज धर्म नहीं रोटी की आवश्यकता है।

स्वामी जी का उक्त कथन आज हमारे सामने स्पष्ट है। भूख से मुक्ति का आन्दोलन एक ऐसा आन्दोलन है, जो हम सभी के दिलों में सहानुभूति उत्पन्न करता है। महात्मा गाँधी ने एक बार कहा था कि भगवान् गरीबों के समक्ष रोटी के सिवाय किसी दूसरे रूप में नहीं आ सकता तो भूख से मुक्ति का मतलब अन्ततः यही हुआ कि अच्छा खाद्यान्न अधिकाधिक पैदा किया जाय। यह कार्य मुख्य रूप से किसान का है। किसान अन्नदाता है अतः प्रजा के लिये अन्न की सुविधा उत्पन्न करना उसी का काम है। सरकार और उपभोक्ताओं का केवल आंशिक सहयोग हो सकता है।

किसान जिन्हें समझना और करना है

भारतवर्ष में ८० प्रतिशत व्यक्ति प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से कृषि करते हैं। यह संख्या इतनी अधिक है कि यदि सभी किसान निश्चय करलें कि वे राष्ट्र को किसी भी हालत में भूखा नहीं मरने देंगे और इस संकल्प को रचनात्मक रूप दे दें तो भुखमरी दो वर्ष में ही न जाने कहाँ चली जाय ? किन्तु हमारा किसान अभी अनपढ़ है। उसे खेती मजबूरन करनी पड़ती है शौक से नहीं। आजकल के जो पढ़े-लिखे नवयुवक निकलते हैं, वे नौकरी के लिए शहरों की ओर भागते हैं, इसलिए कृषि कार्यों में कोई सुधार नहीं हो पाता। किसानों के प्रशिक्षण की आज सबसे अधिक आवश्यकता है, यह कार्य चाहे समाज-सुधारक करें अथवा सरकार। लोकसेवी संस्थाओं, विद्यार्थियों को भी इसमें हाथ बँटाना चाहिये।

अन्न मोर्चा किसान सँभालें

राष्ट्र संकट में गुजर रहा है। सभी क्षेत्रों में युद्ध-स्तर पर तैयारियाँ चल रही हैं तो किसान को भी चाहिये कि वे अन्न मोर्चे पर किसी से पीछे न रहें। अब उन्हें धन की दृष्टि से फसलों की आवश्यकता का परित्याग करना चाहिये। गन्ना, जूट, चाय आदि का क्षेत्र कम किया जाय और गेहूँ, चावल, आलू तथा शाक-भाजी के उत्पादनों पर अधिक ध्यान दिया जाय। आलू की उपज बढ़ाई जाय तो उससे एक ही खेत में साल में दो फसलें हो जाती हैं और आलू की पैदावार भी अच्छी होती है। बैंगन, टमाटर, गोभी, लौकी, कुम्हड़ा, काशीफल, तोरई, टिण्डे, शलजम, मूली, पालक, बथुआ, मैंथी आदि शाक-भाजियों की फसलें अधिक से अधिक बढ़ाई जायें ताकि कम जमीन से काफी पैसा मिले और उनका दुहरा उपयोग हो जाय।

शाक-सब्जियों का एक स्वतन्त्र आन्दोलन भी चल सकता है और एक सहायक आजीविका के रूप में अपनाया जा सकता है। शाक-भाजी की मात्रा बढ़े तो लोगों को अन्न की कमी से काफी राहत मिले। स्वास्थ्य का सुधार होने का लाभ तो उससे अनायास ही मिल सकता है।

जल्दी होने वाली फसलों में जैसे बाजरा, मक्का, मेडुआ, चना, मटर आदि का उत्पादन-क्षेत्र बढ़ाना चाहिये। गाँवों में जितनी जमीन उपलब्ध हो, उसका एक इंच भाग भी बेकार न जाने देना चाहिये। घरों के आस-पास भी आलू, सकरकन्द, अरबी आदि शाक-सब्जियों का उत्पादन करना चाहिये।

सिंचाई के साधन विकसित हों

भारतवर्ष में किसान अब तक सिंचाई के लिये अधिकांश प्रकृति पर ही निर्भर रहे हैं। वर्षा हो जाय तो भली-भला अन्यथा सूखा पड़ा। अब इधर की उपेक्षा अच्छी नहीं। सिंचाई के लिए

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुएँ खुदाने, तालाबों और पोखरों में बाँध लगाने और बेड़ी चलाने का कार्य भी किसानों को करना चाहिये। सिंचाई के लिए पर्याप्त साधन हों तो कृषि बढ़ाने में काफी हद तक मदद मिल सकती है। इसके लिये नये किसानों को अधिक से अधिक परिश्रम करने की आवश्यकता होगी।

विकास खण्डों के माध्यम से सरकार जो सिंचाई के साधन प्रस्तुत कर रही है, और जो अभी हमारे परम्परागत अभ्यास नहीं हैं, उनका प्रयोग खुलकर करना चाहिए। नये यन्त्र, पम्प, बिजली, ट्यूबवैल, ट्रेक्टर बीज आदि की जो भी सुविधायें मिल रही हैं, उनका पूरा उपयोग करना चाहिए। यदि इन्हें खरीदने में पैसे की कठिनाई जान पड़े तो सहकारी समितियों का निर्माण कर इनको उपलब्ध किया जा सकता है। पर अब किसानों का उद्देश्य यह रहे कि अभी जो ४/५ भाग जमीन की सिंचाई नहीं हो पाती, उसके लिए भी सिंचाई की व्यवस्था हो जाय और प्रकृति के भरोसे न रहना पड़े। खाद की सुविधा के लिए सबसे बड़ी बात यह है कि गाँवों का गोबर बरबाद न किया जाय। जो अमोनियम सल्फेट आदि की रासायनिक खादों का साधन नहीं जुटा सकते उनके लिए गोबर की खाद हीरा है। खेद है कि गाँव वाले इस बहुमूल्य खाद को उपले बनाकर जला डालते हैं। गोबर डालने के स्थान भी खुले होते हैं, जिससे वायु और सूर्य की रोशनी के द्वारा यह खाद व्यर्थ सूखती रहती है। सिंचाई के बाद इस समस्या को हल किया जाना जरूरी है। गोबर कम्पोस्ट गड्ढों में ही डाला जाय और उसे मिट्टी की परत से ढकते रहा जाय, समय-समय पर उनमें पानी का छिड़काव भी होता रहे ताकि गोबर भीतर ही भीतर सड़ता रहे। जानवरों के बाँधने के स्थानों को तराशकर इस तरह ढालू कर लेना चाहिये कि किसी बर्तन में उनका मूत्र नालियों द्वारा एकत्रित होता रहे इसे भी चाहे तो कम्पोस्ट गड्ढों में छिड़काव करने के काम में ले सकते हैं।

किसानों को खाद बनाने की सही पद्धति का अनुसरण करना चाहिए। साथ ही दूसरी सस्ती और सुलभ खादों की जानकारी भी उन्हें मिलनी चाहिये। हरी खादें कृषि की उपज बढ़ाने में बड़ी उपयुक्त होती है। ढैंचा, फूलसन, नील आदि को बोकर जब वे कुछ बड़े हों तो वे उस खेत को जोतकर इन्हें खेत में ही पलटकर खाद का काम ले लेना चाहिये। यह खाद बड़ी उपयोगी होती है। सरकारी खादों का भी सुविधानुसार प्रयोग हो तो अच्छा है।

फसल की सुरक्षा

खेतों को आरक्षित न रखना किसानों का कार्य है। दूसरे देशों की तरह अभी हमारे खेतों में कँटीले तारों के उपयोग का तो प्रबन्ध नहीं हो सका है पर मेड़ों में काँटेदार झाड़ियाँ गाड़कर उनकी सुरक्षा का सभी प्रबन्ध कर सकते हैं। गन्ने की सुरक्षा की तरह दीवारें खड़ी करके, उसमें नागफनी जैसी चीजें स्थाई रूप से गाड़कर खेतों को जंगली जानवरों से बचाया जा सकता है। खेतों के बीच और आस-पास जहाँ चूहों के बिल हों, उनमें डी. डी. टी. छिड़कने की व्यवस्था करनी चाहिये। अपने-अपने चक के पास छप्पर डालकर रात में वहाँ बसने की व्यवस्था हो सकती हो तो वैसा भी करना चाहिए ताकि रात में जंगली जानवर फसल नष्ट न कर सकें।

बन्जर जमीन का उपयोग

बन्जर जमीन को भी उपजाऊ बनाने का प्रयत्न कर, कृषि कार्य में उपयोग किया जाना चाहिए। कुछ परत या खेती के योग्य बंजर भूमि को भी किसान अपने पट्टों पर लिखवा सकते हैं। तात्पर्य यह है कि हमारी जमीन से अधिक से अधिक हिस्सा खेती के काम में प्रयुक्त किया जाना चाहिये।

सामूहिक कृषि

जिन किसानों के पास छोटी जोतें होती हैं, वे अपना सारा समय उसी में बर्बाद करते रहते हैं। ऐसे किसानों को सामूहिक रूप से खेती करनी चाहिए। छोटे किसानों के पास साधनों का भी अभाव होता है पर सम्मिलित-कृषि से यह परेशानी दूर हो जाती है। कृषि के लिए यन्त्र, बैल तथा कई आदमियों की व्यवस्था हो जाने से छोटी जोतों से भी लाभदायक परिणाम उपलब्ध हो सकते हैं। पर जो लोग ऐसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सामूहिक व्यवस्था में राजी न हों उन्हें तो थोड़ी जमीन दबाकर रखने की अपेक्षा कोई अन्य व्यवसाय कर लेना अच्छा होगा।

अनाज कब, कितना और कैसे बोया जाय ?

घाघ आदि की कहावतों में वर्षा आदि के लक्षणों और फसल बोने की शास्त्रीय पद्धति पर काफी प्रकाश डाला गया है और बतलाया गया है कि बीज बोने के पूर्व उसका संस्कार होना चाहिये। उदाहरणार्थ—मूँग और उड़द के बीज ५ दिन तक धूप और ओस में रखकर बोये जाये धान के बीजों को ७ दिन तक धूप और ओस में रखना चाहिए। ईख के पैरों में गोबर मिलाकर लेप करके बोया जाय। इन सबकी अलग-अलग जानकारी किसानों को रहनी चाहिये

हमारे यहाँ किसान प्रति एकड़ औसतन आठ या नौ पंसेरी गेहूँ का बीज बोते हैं, जिससे उपज का औसत प्रति एकड़ आठ मन के लगभग होता है, अगर हम डिवलर से बुबाई करें तो प्रति एकड़ १ पंसेरी गेहूँ कम लगता है पर उपज बढ़ जाती है। इस प्रकार डिबलर की बुबाई आठ करोड़ टन बीजों में से एक करोड़ टन अनाज बचाया जा सकता है। डिबलर लकड़ी का एक लगभग १० इन्च का वर्गाकार फ्रैम होता है। उसमें बाँस या किसी पोली लकड़ी को हल के पीछे खूँट के साथ कसकर बाँध दिया जाता है, जिससे पिसाई की मशीन की तरह फ्रेम में गेहूँ भर देने से बीज अपने आप सन्तुलित मात्रा में गिरता रहता है।

खेत बोने के पहले उसकी कितनी कमाई की जाय, कब पानी और खाद देकर मिट्टी को नरम बनाया जाय, जोतने और बोने के समय अलग-अलग हल की गहराई कितनी रहे, इन सब बातों का ज्ञान भी किसान को होना चाहिए।

पशु सम्पत्ति की रक्षा

पशुओं की रक्षा और उनकी नस्ल सुधारने का उत्तरदायित्व भी कृषकों पर ही आता है। पशुओं से शक्तिवर्द्धक दूध, घी, मक्खन तो मिलता ही है साथ ही खाद और कृषि के लिए बैल भी मिलते हैं इसलिए पशुओं को सम्पत्ति माना गया है। हमारे पास उत्तम किस्म के बैल होंगे तो उनसे खेतों की जुताई तथा सिंचाई आदि में बड़ी सुविधा मिलती है, यह सभी किसान जानते हैं। इसी प्रकार बैलों को ठीक समय पर नाथना बधिया करना तथा प्रशिक्षित करने का ज्ञान भी किसानों को होना चाहिए। पशु-सम्वर्धन के लिए सामूहिक व्यवस्थायें भी की जा सकती हैं। बैल कृषि के आधे अंग हैं अतः इनकी उपेक्षा को एक प्रकार का अपराध समझना चाहिए।

गल्ले की रक्षा और विक्रय

खलिहान से उठाकर गल्ला घर पहुँच जाता है तो किसान उसे घरों में लापरवाही से जहाँ-तहाँ पलट देते हैं, जिससे चूहों को मनमानी करने की सुविधा मिल जाती है। सुरक्षा की समुचित व्यवस्था नहीं की जाती तो गल्ले को सीलन पकड़ लेती है या उसमें घुन लग जाता है। इसलिए अनाज को बड़े पके मिट्टी के बर्तनों, पक्की कोठियों में वर्षा तथा कीड़ों से बचाकर रखने की पूरी व्यवस्था रहनी चाहिए।

किसानों को अपने पास अपनी आवश्यकता भर का गल्ला रखकर शेष को बेच देना चाहिए। गल्ला रोकने से खाद्यान्न की कृत्रिम कमी पैदा होती है, जिसका व्यापारी व मुनाफाखोर अनुचित लाभ उठाते हैं। गल्ला बाजार में ही बेचा जाय। इसके बाद की जिम्मेदारी सरकार की है, वह उसे चाहे जिस रूप में क्रय करे।

किसान इन कर्तव्यों का पालन करें, श्रम करें और अन्नोत्पादन को युद्ध-स्तर पर चलाने का पूरा प्रयास करे तो इस समस्या के समाधान में बड़ा सहयोग मिल सकता है।

सर्वसाधारण का परम कर्त्तव्य

अन्न की कमी की पूर्ति कैसे की जाय ? इसके चार प्रमुख साधन हैं—(१) उत्पादन में वृद्धि (२) उपभोग में कमी (३) बर्बादी की रोक (४) अन्न के स्थान पर शाक-सब्जियों का प्रयोग। हमें जिन कार्यक्रमों का प्रसार करना है, वे अन्तिम उद्देश्यों के अन्तर्गत आते हैं। उत्पादन में वृद्धि को लेकर अप्रत्यक्ष सहयोग और सुझाव तो दिये जा सकते हैं पर उसका अधिकांश हल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किसान और सरकार के पास है। दूसरी उपभोग की बहुत बड़ी जिम्मेदारी का हम निर्वाह करलें तो आधी खाद्यान्न समस्या इसी से हल हो सकती है।

शाक-सब्जी का उत्पादन

द्वितीय महायुद्ध के समय ब्रिटेन ने अपनी खाद्य समस्या की पूर्ति के लिए आलू का उत्पादन किया था, इससे बहुत सहायता मिली थी। शाक-सब्जी तथा आलू के अधिक उत्पादन पर उपभोक्ताओं को विशेष ध्यान देना उपयुक्त होगा। घर के पिछवाड़े, सामने, अगल-बगल अहाते में जहाँ-कहीं भी थोड़ी-बहुत बेकार जमीन मिले, वहाँ बाड़ी आदि लगाकर कद्दू तोरई, लौकी, मेथी, बैंगन आदि का उत्पादन आसानी से किया जा सकता है। फूलों के पौधों की मात्रा घटाकर उतनी जमीन भी इसी काम में प्रयुक्त की जा सकती है, जहाँ जगह कम है वहाँ कुछ नहीं तो पोदीना, अदरक, धनिया, पालक, टमाटर आदि गमलों, लकड़ी की पेटियों में मिट्टी भरकर ही उगाये जा सकते हैं, इससे उत्पादन का वातावरण तो बनेगा।

शाक-सब्जी का उत्पादन ही न करें वरन् दैनिक आहार में उसकी आधी से भी अधिक मात्रा रहे। इसका स्वास्थ्य पर भी बड़ा अच्छा असर पड़ता है। पाचन-सुधार और विटामिन की दृष्टि से भी शाकाहार का बड़ा महत्त्व है। गेहूँ, चावल आदि खाद्य पदार्थों का जितना कम उपयोग कर सकें बचत उतनी ही अधिक होगी। सब्जी के साथ मोटे अनाज जैसे—जौ, चना, मक्का, बाजरा का उपयोग करना बचत और स्वास्थ्य दोनों के लिए लाभदायक है।

एक आदमी बनाम ६ चूहे

अमेरिका से प्राप्त एक उद्धरण प्रस्तुत करते हुए भारत के खाद्य निगम के प्रधान श्री पाई ने यह बताया कि एक दिन में ६ चूहे पूरे एक व्यक्ति के भोजन के बराबर अन्न खा जाते हैं या बर्बाद कर देते हैं। उन्होंने कहा कि जनसंख्या के साथ देश में चूहों की संख्या भी बढ़ रही है। आगे चलकर २।। अरब चूहों से अन्न बचाने की व्यवस्था करनी पड़ेगी।

हमें इसके लिए पहले से गल्ले को सुरक्षित रखना चाहिए। घरों में चूहों के स्थानों को बन्द कर देना चाहिए। कीड़े-मकोड़ों से भी अन्न की रसुक्षा करनी चाहिए। 'केन्द्रीय खाद्य वैज्ञानिक अनुसन्धान संस्था' मैसूर ने एक प्रकाशन में बताया कि यदि अन्न की ऐसी बर्बादी को रोका जा सके तो लगभग १ करोड़ टन अन्न की बचत सम्भव हो सकती है।

कणाद वृत्ति

महर्षि कणादि खेतों में छूटे हुए अनाज के ३६० दाने भरकर रख दिया करते थे और वर्ष भर उसी को खाया करते थे। यह वृत्ति अब भी लोगों को इस रूप में अपनानी चाहिए कि अन्न का एक दाना भी बेकार न जाये। खेतों और खलिहानों का 'शीला' पूरी तरह बीन लेना चाहिए और घर में नियमित भोजन 'अनाग्रह भोजन' की प्रवृत्ति डालकर ऋषि-पर-को जाग्रत रखना चाहिए।

व्रत या विजय व्रत

धार्मिक दृष्टि से व्रत-उपवासों का महत्त्व माना जाता है। पेट की पाचन क्रिया दुरस्त रखने, मन्दाग्नि मिटाने तथा अनेक दूसरी बीमारियों में भी 'पथ्य' को परमोपयोगी कहा गया है। धार्मिक व स्वास्थ्य की दृष्टि से प्रतिदिन एक समय, साप्ताहिक या आंशिक उपवास सभी को करना चाहिए। पर जो लोग ऐसी मान्यता न रखते हों, उन्हें भी सप्ताह में एक दिन विजय-व्रत के रूप में मनाना चाहिए, इससे अनाज की बचत तो होगी ही जनता में राष्ट्रीयता और एकता की भावना भी पैदा होगी।

भाप-कुकर और पौष्टिक भोजन

आजकल "स्टीम कुकर्स" का प्रयोग बढ़ रहा है। भोजन बनाने की यह वैज्ञानिक विधि भाप पर आधारित है। इसमें अन्न की बचत ईंधन और समय की बचत होती है तथा आहार के पौष्टिक तत्व नष्ट होने से बच जाते हैं। इसे खरीदने के लिए बाजार जाने की आवश्यकता न पड़ेगी।

घी या मिट्टी के तेल के कनस्तर को लीजिए और ऊपर का हिस्सा काटकर खोल दीजिए और उसका बक्सनुमा ढक्कन बनवाकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसमें छोटी कुण्डी और कब्जे लगवा दीजिए ताकि उसे मजबूती से बन्द किया जा सके। ३-४ इन्च व्यास और २ इंच ऊँचाई की एक गोडरी (रिंग) ले लीजिए। यह रिंग डालडा का आधा पौण्ड वाले डिब्बे का पैंदा काटकर बन सकता है। अब इस रिंग को डिब्बे के बीच में रखिये और उसके ऊपर दो-तीन बड़ी बटलोइयों में एक के ऊपर एक दाल, चावल रख दीजिए। डिब्बे में २ इन्च पानी भरकर चूल्हे पर चढ़ा दीजिए ताकि भाप न निकले। ४५ मिनट के बाद सभी बटलोइयों का खाना पका हुआ मिलेगा। इस प्रकार का भोजन स्वादिष्ट भी होता है और पौष्टिक भी, जिससे अन्न की खपत कम हो जाती है।

गृहिणियों के कर्त्तव्य

चावल और दालों को पकाने में स्त्रियाँ काफी दाने बरबाद करती हैं। चावल का माँड़ निकाल देती हैं, इससे पौष्टिक तत्व नष्ट हो जाता है साथ ही तोला दो तोला चावल भी निकल जाता है। इतने विशाल देश में अनुमान है कि इस नगण्य बर्बादी से ही ८ लाख टन चावल चला जाता है। इसे ऊपर की पद्धति से रोका जा सकता है।

परिवार को खाने-पीने की वस्तुयें तैयार करने और परोसने में यह देखना चाहिए कि ऐसी भोजन सामग्री तैयार हो, जिसमें गेहूँ का उपयोग कम हो। बच्चों को परोसते और खाना खिलाते समय अन्न की बर्बादी न हो इसका विशेष ध्यान रखें। घर में आये हुए अतिथियों को आग्रहपूर्वक अधिक खिलाना अब कोई शिष्टाचार नहीं रहा। यह भी उपयुक्त नहीं है कि उन्हें पचास तरह का खाना एक साथ परोसा जाय। यदि ऐसा ही करना है, तो लौकी की खीर, गाजर का हलुआ, आलू के गुलाब जामुन, गुलाब के लच्छे, आलू या शकरकन्द की रसपूरी, सिंघाड़े के लड्डू, आलू के पराठे आदि तरह-तरह के व्यंजन जिनमें अनाज का कम उपयोग ही कम कर सकती हैं। उससे उनकी भावना भी रह जायेगी, स्वागत भी बढ़िया हो जायेगा और अन्न की बचत भी हो जायेगी।

त्यौहारों पर सादगी

भारतवर्ष में जितने त्यौहार होते हैं, उतने विश्व में कहीं नहीं होते। प्रत्येक माह कोई उत्सव पर्व या त्यौहार आता है। इनसे शिक्षायें ग्रहण करने वाले धार्मिक कार्यक्रमों का तो अब ज्ञान रहा नहीं केवल भोजन में मिठाई और पकवानों वाली विशेषता शेष रही है। इससे खाद्यान्न की बर्बादी होती है।

अब त्यौहारों अथवा गृह-समारोहों में पूड़ी-पकवान, मिठाई, कचौड़ी, पकौड़ी आदि विभिन्न व्यंजनों के वृहद् आयोजन न किए जावें। चिकनाई में घी, तेल का उपयोग कम से कम करें। सस्ते तथा स्थानीय रूप से उपलब्ध मौसमी फलों आदि का उपयोग अधिक करें। स्त्रियों के त्यौहारों की तरह पुरुष भी प्रत्येक त्यौहार पर एक समय भोजन करें।

न्यौते, दावतें बन्द हों

खाद्यान्नों की बचत की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण कदम बड़ी दावतों और स्वल्पाहार को समाप्त अथवा सीमित करके उठाया जा सकता है। आज यह सभी को स्पष्ट है कि शादी-विवाह, मृतक-भोज आदि में हजारों व्यक्तियों को भोज कराया जाता है। इन भोजों में पकाये आहार का लगभग एक चौथाई भाग नष्ट हो जाता है। ये वर्तमान समय में अधिकांशतः सामाजिक प्रतिष्ठा की स्थापना अथवा दबाव के कारण होते हैं, जबकि वास्तविकता यह है कि ऐसे भोजों से आज तक किसी की प्रतिष्ठा या अप्रतिष्ठा नहीं हुई। अतः इस फिजूलखर्ची को हमें गम्भीरतापूर्वक समझना चाहिए और उन्हें अविलम्ब बन्द कर देना चाहिए। इसमें कुछ सामाजिक प्रतिरोध उत्पन्न होता हो तो उसका साहसपूर्वक मुकाबला करने से भी नहीं हिचकना चाहिए।

अन्न देवता का अपमान न हो

हिन्दू धर्म में अन्न को देवता माना गया है। देवताओं का सम्मान करना—उनके अपमान का अवसर न आने देना एक परम पुनीत धर्म कर्तव्य माना जाता है। वे देव शक्तियों जो हमारे जीवन को धारण किये रहने में, विकसित होने में सहायता करती हैं, निश्चय ही आदर की पात्र हैं। इस आदर बुद्धि के द्वारा ही हम उनसे अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शास्त्र अन्न को महान देव मानते हैं। यह शिव का रूप है। प्रत्येक शुभ कार्य में उसका प्रयोग होता है। सभी देवताओं के पूजन में चावल अनिवार्य है। चावल के बिना हमारा एक भी धार्मिक कर्मकाण्ड पूरा नहीं हो सकता। चावल के साथ-साथ या उसके अभाव में अन्न अन्न भी काम में आते हैं। मतलब केवल चावल से नहीं है वह तो अन्न देव का प्रतीक मात्र है। दीखने में सुन्दर लगने के कारण ही उसे प्रमुखता दी गई है, मूलतः यह अन्न का ही सम्मान है। अन्न को प्राण कहा गया है। उसे खाकर ही हम जीवित रहते हैं, वह न मिले तो जीवन धारण किये रहना संभव नहीं। ऐसे जीवन-प्राण अन्न देवता का हिन्दू धर्म में अत्यधिक सम्मान किया गया है। उसे प्रसाद रूप में ग्रहण करने की परम्परा है। थाली सामने आते ही हम नेत्र बन्द कर भगवान का नाम लेकर भोग लगाते हैं। तब उसे प्रसाद मानकर ग्रहण करते हैं। इस प्रसाद भावना के साथ ग्रहण किया गया अन्न हृष्टि, तुष्टि, पुष्टि, वृद्धि, शक्ति, शान्ति, कान्ति, क्षान्ति यह आठ लाभ प्रदान करता है। यदि उसके साथ देव भावना का समन्वय न किया जाय, केवल पेट भरने के लिए, स्वाद के लिए ही उसे खाया जाय, भोग न लगाया जाय तो वह उदर पूर्ति मात्र कर सकता है, उससे वे सूक्ष्म शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक लाभ नहीं हो सकते, जो अन्न में छिपे देवतत्वों को श्रद्धा, एवं प्रसाद भावना के साथ ग्रहण करने पर ही उपलब्ध किये जा सकते हैं। इसीलिए हिन्दू धर्म में अन्न को भगवान का भोग लगाकर प्रसाद रूप में ग्रहण करने की ही परम्परा है। जो भगवान को समर्पण किये बिना खाता है, वह गीताकार की दृष्टि में 'चोर' है।

अन्न देवता को भोजन का रूप देते समय देव प्रक्रियाओं को अपनाना पड़ता है। रसोईघर को झाड़ बुहारकर, लीप-पोत कर, मँजे-धुले स्वच्छ बर्तन लेकर ही प्रयोग करते हैं। रसोई बनाने वाला नहा-धोकर, धुले कपड़े पहनकर वह कार्य बहुत ही शुद्धतापूर्वक आरंभ करता है। खाते समय भी हाथ-पैर धोकर कपड़े उतारकर स्वच्छ भोजन पवित्र स्थान में बैठकर ही ग्रहण किया जाता है। इसमें सफाई रखने की मोटी बात तो सन्निहित है ही साथ ही प्रमुख बात यह है कि अन्न देवता का समुचित सम्मान किया जाय। देव कार्यों के उपयुक्त पवित्रता का वातावरण बनाये रखा जाय।

अन्न से न केवल शरीर यात्रा चलती है वरन् मानसिक संस्कार भी बनते हैं। उसके द्वारा गुण, कर्म और स्वभाव की दिशाऐं बदलती हैं। कुधान्य खाने से, अभक्ष्य ग्रहण करने से मन में सुसंस्कृत जमते हैं और पाप वृत्तियाँ जागृत होती हैं। इसके विपरीत कुसंस्कार सात्विक आहार के द्वारा अनायास ही सत्प्रवृत्तियाँ उत्पन्न होती हैं। इसी दृष्टि से हमारे धर्म में रसोई की पवित्रता पर बहुत जोर दिया गया है। हमारी रोटी ईमानदारी से कमाई हुई, स्वच्छतापूर्वक बनाई हुई, पौष्टिक और गुणकारी पदार्थों से युक्त तो होनी ही चाहिए, साथ ही उसमें देव भावना रखकर उसे अन्तः श्रद्धा के द्वारा, प्रसाद रूप में ग्रहण किया जाना भी आवश्यक है, तभी वह अन्न अपनी शक्ति को शरीर यात्रा तक ही सीमित न रखकर मानसिक और आत्मिक क्षेत्र में सत्प्रवृत्तियाँ उत्पन्न करने वाला बना सकता है। हर हिन्दू का एक परम पुनीत धर्म कर्तव्य है कि भोजन को पहले भगवान को समर्पण कर भोग लगावे और पीछे उसे प्रसाद समझकर ग्रहण करे। इस पुनीत परम्परा को अपनाये रहकर हम हिन्दुत्व के उन महान् आदर्शों से लाभान्वित हो सकते हैं, जो मनुष्य को सच्चा मनुष्य-देव मनुष्य, भूसुर-बनाने के प्रमुख आधार हैं।

भोजन को भगवान का प्रसाद मानें

अन्न देवता को भगवान का प्रसाद मान कर ग्रहण करने की धर्म मान्यता के साथ-साथ एक जिम्मेदारी हम पर अनायास ही आ जाती है कि "भोजन का तिरस्कार न किया जाय।" केवल स्वाद की कमी के कारण उस पर नाक-भौं न सकोड़ी जाय। स्वाद की दृष्टि रखकर नमकीन, खट्टे, चटपटे, मीठे, कुरकुरे, मुरमुरे, तले हुए, चिकने आदि जीभ को उत्तेजित करने वाले जायके के आधार पर जो पसंदगी बनाई जाती है, वह मनुष्य की मूर्खता का चिन्ह है। इससे वह खाद्य-अखाद्य का, उपयोग-अनुपयोगी का, आवश्यकता और मात्रा का, भेद भूल जाता है। फलस्वरूप पाचन क्रिया को बिगाड़कर नाना प्रकार के रोगों से ग्रस्त होता है। प्रसाद रूप

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार तैयार करने वाले को स्वाद का नहीं, सात्विकता और गुणशीलता का ही ध्यान रखना होता है क्योंकि भगवान की रुचि इसी प्रकार के आहार से होती है। आहार को आयुर्वेद शास्त्रों में क्षुधा रोग की औषधि माना गया है। औषधि में स्वाद क्या देखना ? जो लोग दवा में गुण न देखकर उसका जायका पसन्द करते हैं, वे अस्वस्थता से छुटकारा नहीं पा सकते। भोजन में उसकी सात्विकता एवं पौष्टिकता ही विचारणीय है, स्वाद तो उसमें उलटा विघ्न उपस्थित करता है। इसका अर्थ यह नहीं कि भोजन को अरुचिकर एवं अग्राह्य रूप में बना कर खाया जाय। कोई अखरने वाली, खटकने वाली, अरुचिकर, चित्त में घृणा पैदा करने वाली बात भोजन में न हो, यह तो देखना ही चाहिए पर केवल मीठे या मसाले की अधिकता को ध्यान में रखकर ही किसी आहार को महत्व न दिया जाय क्योंकि ऐसा उत्तेजक आहार स्वाद ही स्वाद में खा लिया जाता है दूसरे मीठा और मसाला शरीर में अनावश्यक पैदा करके अनेक रोगों का हेतु भी बनता है। इसलिए आरोग्य, दीर्घजीवन और मानसिक स्वास्थ्य की चिन्ता रखने वाले व्यक्ति सदा हलका और सादा, सात्विक और अनुत्तेजक भोजन औषधि रूप में उपयुक्त मात्रा का ध्यान रखकर ही ग्रहण करते हैं।

ऐसी धार्मिक अभिरुचि बना लेने पर मनुष्य सीधे सादे, बिना मिर्च मसाले के भोजन से संतुष्ट हो जाता है। जो सामने आ गया उसे प्रसाद रूप में प्रसन्नता पूर्वक ग्रहण करता है। मिर्च, मसाले कम हैं या मीठे की न्यूनता है इस दृष्टि से कोई भोजन उसे अप्रिय नहीं होता। न इसके लिये वह भोजन बनाने वाले पर क्रुद्ध होता है, न मन में खिन्नता मानता है। वह बहुत सावधानी से थाली पर दृष्टि डालकर यह देख लेता है कि वस्तुओं की मात्रा उतनी तो नहीं है, जो उससे न खाई जा सके या ऐसी कोई वस्तु तो नहीं है, जो उसे नापसंद रहती है। ऐसी चीजों को या अधिक मात्रा में आई हुई वस्तु को वह खाना आरंभ करने से पूर्व ही हटा देता है ताकि झूठन न छोड़नी पड़े।

जूठन छोड़ना सभ्यता नहीं, असभ्यता

जूठन छोड़ना अन्न देवता का अपमान करना है। शास्त्रकारों का कथन है कि "जो लोग जूठन छोड़कर अन्न देवता का तिरस्कार करते हैं, उन्हें अगले जन्मों में कीट, पतंग आदि की ऐसी योनियाँ मिलती हैं, जिनमें अन्न के लिये तरसना पड़े। अन्त में वे सूकर आदि की योनियों में आकर अन्न की विष्ठा को भी प्रसन्नतापूर्वक शिरोधार्य करने के उपरान्त मनुष्य की उस योनि में आते हैं, जिसमें अन्न, भोजन प्राप्त होता है।" अपमान तो देवताओं को भी पसंद नहीं। अपनी दुर्गति कराना कौन पसंद करता है ? जिन अन्न देवता के लिए लाखों योनियाँ तरसती हैं उस सौभाग्य का जूठन के रूप में तिरस्कार करना मनुष्य के अहंकार का चिन्ह है। समय चक्र उनके इस अहंकार को चूर करने में समर्थ है। वह कुछ ही दिन में इन अहंकारियों को इसका मजा भी चखा देता है। उन्हें उन योनियों में ले जाकर पटकता है, जिनमें अन्न के लिए तरसते ही रह जाना पड़ता है।

जूठन छोड़ना पाप है। इस तथ्य को हृदयंगम कर लेने पर थाली पर हाथ डालने से पूर्व यह काफी सावधानी से सामने आई हुई हर चीज को देखना होता है कि इसमें अभिरुचि या अधिक मात्रा में खाद्य तो नहीं है। यदि है तो उसे बिगाड़ने से पूर्व ही हटा देना उचित है। हाँ देखने में जिस बात का पता न चले तो ऐसे अनुपयुक्त स्वाद की वासी, बुसी, कड़ुई, अधिक मिर्च की, गन्दी, बाल, मक्खी आदि पड़ी हुई कोई चीज हो तो उसे जूठन का विचार न करके छोड़ा जा सकता है। खाने पर कोई पदार्थ हानिकारक प्रतीत हो तो उसे छोड़ा जा सकता है। भूल से पेट का अंदाज ठीक न लगने पर भोजन कुछ अधिक मात्रा में आ जाय तो भी उसे छोड़ देना चाहिए। पर ऐसे अपवाद विशेष अवसर कभी-कभी ही आते हैं। साधारणतः भोजन की मात्रा को देख लेने और चटोरेपन की बुरी आदत को त्याग देने से जूठन छोड़ने की स्थिति नहीं आने पाती।

अन्न को जब भगवान का प्रसाद मान लिया गया तो उसे तिरस्कार करने की अधार्मिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बात से बचना ही उचित है। सत्यनारायण कथा में आता है कि लीलावती अपने पति के आगमन का समाचार सुनकर उतावली में 'प्रसाद' की उपेक्षा करके चली गई तो उसे भगवान के रोष का भागी बनना पड़ा। इसी प्रकार तेगध्वज राजा को गोप-बालकों के 'प्रसाद' को तिरस्कृत करने के कारण राज्य, धन और स्त्री-पुत्रों से वंचित होना पड़ा। ऐसे असंख्यों उदाहरण धर्मशास्त्रों में मौजूद हैं, जिनमें स्पष्ट है कि भगवान के प्रसाद का-अन्न का तिरस्कार न करना चाहिये। जिस प्रकार विद्या की प्रतीक पुस्तकों को ललियाने से विद्या चली जाती है और रुपया-पैसा को पैरों तले कुचलने से लक्ष्मी विदा हो जाती है, उसी प्रकार अन्न देवता भी तिरस्कृत होकर क्रोध करते हैं और उस व्यक्ति को दाने-दाने का मुहताज, दरिद्री, बनना पड़ता है।

धार्मिक दृष्टिकोण से जूंठन छोड़ना देवताओं का तिरस्कार करना है। राष्ट्रीय दृष्टि से भी देखा जाय तो भी जिस देश को अपना पेट पालने लायक अन्न पैदा न होता हो, विदेशों से करोड़ों रुपये का अनाज हर साल मँगाना पड़ता हो वहाँ अन्न के एक दाने का अपव्यय करना भी देश भक्ति के विरुद्ध है। विदेशी लोग अन्न न दें या युद्ध छिड़ जाय तो जो अनाज अपने देश में पैदा होता है, उसी से काम चलाना पड़ेगा। जूठन छोड़ने की बुरी आदत के कारण जो लाखों टन प्रतिदिन अन्न बर्बाद हो जाता है यदि उसे बचा लिया जाये तो यह बड़ी ही दूरदर्शिता एवं देश भक्ति पूर्ण बात मानी जायेगी। इससे देश की अन्न समस्या के हल होने में भारी सहायता मिल सकती है। यदि हर व्यक्ति अपने वर्तमान आहार में से जूँठन छोड़ने की आदत त्यागकर या दो चार ग्रास कम खाकर एक तोला अन्न भी बचाने लगे तो देश की वह अन्न समस्या जिसके बिना सारी प्रगति व्यर्थ हो सकती है—आसानी से हल हो जायगी।

वे बड़ी दावतें बन्द होनी चाहिए, जिनमें अन्न की अनावश्यक बर्बादी होती है। दावतों के बारे में हमारे दृष्टिकोण में परिवर्तन होना आवश्यक है। उतने ही व्यक्तियों को प्रीतिभोजों में आमंत्रित कि जाय जितने नितान्त आवश्यक हों। संख्या में कमी करके अन्न के अपव्यय को रोका जाये, दावतों में कम किस्म की चीजें बनाई जाये। बहुत तरह की चीजें बना देने पर खाने वाले की चटोरी नीयत डाँवाडोल हो जाती है और जिस चीज को वह अधिक स्वादिष्ट समता है, उसे अधिक खाने के लिए कम स्वादिष्ट चीजों को छोड़ देता है, इसप्रकार बहुत ही जूंठन बचती है। आर्थिक दृष्टिकोण से देखा जाय तो भी जूँठन छोड़ना हानिप्रद सिद्ध होता है। दावतों एवं प्रीतिभोजों में होने वाले धन के अपव्यय को रोका जाय तो वह किसी अन्य उपयोगी कार्य में लगाया जा सकता है। बूँद-बूँद करके घड़ा भर जाता है। घरों में नित्य-प्रति छोड़ी जाने वाली जूठन का यदि हिसाब लगाया जाय तो वह भी काफी बैठ जाता है। इसलिए बुद्धिमान पुरुषों को इससे बचना चाहिये।

देखा जाता है कि विवाह-शादियों में, दावतों में, प्रीति-भोजों में हर आगन्तुक पत्तल पर बहुत जूठन पड़ी छोड़ता है। कोई मेहमान किसी के घर पर जाय तो भी वह थाली में काफी जूँठन छोड़ता है। इस बुरी आदत के पीछे यह भ्रम काम करता है कि भोजन कराने वाला मेजवान उस खाने वाले को बहुत प्यार करता है और इतना खिलाना चाहता है कि उससे खाया नहीं जाता और जूँठन छोड़ने की मजबूरी आ पड़तो है। खिलाने वाला, जूठन को अपने आतिथ्य की सफलता मानते हैं। परोसने वाले भी आग्रह करते हैं और अनावश्यक मात्रा में परस देते हैं। फलस्वरूप जूठन पड़ी रहती है। अब समय आ गया है कि यह बेवकूफी की बातें बन्द की जानी चाहिए। अतिथि को भरपेट भोजन कराया जाय, यह ठीक है पर इसमें क्या बुद्धिमानी है कि जिस अन्न को इस तरह बर्बाद किया जाय। परोसने वाले पूछकर परोसें, आवश्यकतानुसार मात्रा में दें यही उचित है। खाने वाले को चाहिए कि पेट से अधिक मात्रा में एक टुकड़ा भी लेने से बलपूर्वक मना कर दें।

खिलाने वाले का इससे क्या श्रेय रहा कि पेट से अधिक खाने का आग्रह करके अपने अतिथि को अस्वास्थ्यकर स्थिति में डालने के लिए मजबूर करें, और आवश्यकता से अधिक चीजें परसें ? यह तो उस अतिथि के साथ एक प्रकार की शत्रुता हुई। इसी प्रकार खाने वाला भी जब जूँठन छोड़ने का आदी बनता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो खिलाने वाले के धन का अपव्यय कराके प्रकारांत्तर में उसके साथ दुश्मन जैसा ही आचरण करता है। यदि खाने वाला और खिलाने वाला दोनों ही एक-दूसरे के सच्चे शुभ चिन्तक हैं तो यह अवसर न आने देंगे कि थाली में जूठन छोड़ी जाय। यदि वे ऐसा नहीं करते तो न केवल परस्पर ही एक-दूसरे को हानि पहुँचाते हैं वरन् राष्ट्र का भी अहित करते हैं। खाद्य समस्या से परेशान राष्ट्र को इस जूठन छोड़ने की बुरी आदत द्वारा और अधिक संकट में डालना निस्सन्देह एक प्रकार का देशद्रोह है। अनेक गरीबों को इस बर्बादी के कारण अन्न से वंचित रखने का पाप तो प्रत्यक्ष ही है। हम में से हर समझदार नागरिक को जूंठन छोड़ने की बुरी आदत जितनी जल्दी हो सके छोड़ देनी चाहिए।

भंगी के लिए जूठन छोड़ने में जो लोग उदारता अनुभव करते हैं, उन्हें बहुत ही दंभी और विवकहीन कहा जा सकता है। भंगी को जूठन ही दी जाय इसमें क्या तुक है। यदि उसे उतना ही शुद्ध भोजन दे दिया जाय तो क्या हानि है ? किसी को जूठन खिलाना आरोग्यशास्त्र के अनुसार उस पर अत्याचार करना है, इससे उसे वह रोग हो सकते है, जो जूँठन छोड़ने वाले में थे। इस प्रकार यह जूठन उसके लिए रोग और मौत के उपहार देना उसके साथ कोई उदारता नहीं कही जा सकती। इससे उस भंगी का आत्मसम्मान गिरता है, वह अपने आत्मा की दृष्टि से हीन और पतित बनता है। सेर आधासेर जूठन के बदले किसी की आत्मा को दीनता-हीनता का अनुभव कराना उसके आत्मबल को नष्ट करने वाले आक्रमण के समान है। इन भारी हानियों को पहुँचा कर भंगी को जूठन देने वाले लोग यदि सचमुच ही उदार हैं तो उन्हें अच्छा स्वच्छ भोजन उतनी मात्रा में देना चाहिए अन्यथा उनकी यह उदारता की डींग सर्वथा थोथी, अविवेकपूर्ण एवम् पाखण्ड मात्र ही मानी जायेगी।

जब स्वास्थ्य की बाजी लगाने का धर्म संकट उत्पन्न हो जाय, उन विशेष अपवादों को छोड़कर हमें जूँठन छोड़ने की आदत का सर्वथा परित्याग कर देना चाहिए। न घर में न रिश्तेदारी में, न दावतों में ऐसे अवसर उत्पन्न होने दें कि जूठन छोड़ी जाये। यह अन्न देवता का अपमान करने वाली अधार्मिक बात है। राष्ट्रीय अन्न समस्या की दृष्टि से देशभक्ति का तकाजा है कि इस बुरी आदत को तत्काल छोड़ा जाय। किसी को जूठन खिलाना उसके साथ उदारता नहीं अत्याचार है।

भारतीय संस्कृति के हर अनुयायी को अपना भोजन शुद्ध कमाई का, स्वच्छतापूर्वक बनाया हुआ, भगवान का भोग लगाकर करना चाहिए। सात्विकता और उपयोगिता की दृष्टि से ही आहार का उपभोग करें, न कि स्वाद की दृष्टि से। जूठन छोड़ने का पाप कर्म तो हम तुरन्त ही त्याग दें। इसी पर हमारे शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का सच्चा विकास अवलम्बित है।

भिक्षावृत्ति का तिरस्कार किया जाय

चाणक्य ने आदेश दिया है कि पूरी तरह काम-विचार शांत हो जाने पर वृद्धावस्था में स्त्री-पुरुष आदि के जीवन निर्वाह की उचित व्यवस्था के बाद यदि समाज अनुमति दे दे तो उसे संन्यास लेना चाहिये, ऐसे समाज-सेवी सन्तों का अब पूर्णतया अभाव है। अब साधुओं में ६६ प्रतिशत कामचोर और हरामखोर भरे हैं। यह हमारे सामाजिक जीवन को खाद्यान्न की दृष्टि से बुरी तरह दबाये हुए हैं।

इस समय सारे देश में ५५ लाख साधु हैं। यह प्रतिदिन औसतन तीन पाव भोजन करते होंगे तो एक दिन में १ लाख ६ हजार ३७५ मन अन्न की व्यवस्था करनी पड़ती है। इस हिसाब से १ महीने में ३२८१२५० मन तथा एक वर्ष में ३६३७५००० मन गल्ला केवल इन साधुओं के लिए सुरक्षित रखना पड़ता है। यदि यह कहा जाय कि विदेशों का गल्ला साधुओं के लिए आता है तो कोई अतिशयोक्ति न होगी। इस पर भी साधु हमारी श्रद्धा और निष्ठा के पात्र बने हुए हैं। हमें भिखारियों को भीख देकर भिक्षावृत्ति को प्रोत्साहन नहीं देना चाहिए। यदि इनकी संख्या ऐसी ही रही तो अधिक अन्न उपजाने का भी कोई अच्छा नतीजा न निकलेगा और अन्न संकट इसी तरह ही बना रहेगा।

इन कारणों पर हम सबको पूरे विवेक के साथ विचार करना चाहिए और अन्न के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

राष्ट्रीय-संकट को हल करने में अपना हार्दिक सहयोग प्रदान करना चाहिए। इस बारे में जरा भी सन्देह नहीं है कि भारत खाद्य के मामले में आत्म-निर्भरता प्राप्त कर सकता है, सिर्फ उसे ऐसा करने के लिये दृढ़ निश्चय करने की जरूरत है। कृषि उत्पादन बढ़ाने, बचत और बर्बादी रोकने की नीतियों और कार्यक्रमों को अमल में लाने की इच्छा और क्षमता जाग्रत हो जाय तो न केवल खाद्यान्न के लिये आत्म-निर्भर हो सकते हैं वरन् खाद्य समुन्नत देशों की श्रेणी में पहुँच सकते हैं।

शाक अन्न का पूरक

समय-समय पर देश को भीषण महँगाई का सामना करना पड़ता है, उसका एक मात्र कारण है कि यहाँ अन्न का अभाव है। अनाज की महँगाई के कारण ही दूसरी चीजों के दाम और भाव इतने अधिक बढ़ गये हैं कि सामान्य आर्थिक स्थिति के व्यक्ति के लिए जीवन-निर्वाह करना भी कठिन हो गया है। यह संकट तभी दूर हो सकेगा जब हमारा अन्न-धन बढ़ेगा।

पर अभी जो कृषि की उपज बढ़ाने के लिए योजनायें और कार्यक्रम तैयार किये जा रहे हैं, उनके लाभ देखने में कुछ नहीं, काफी समय लगेगा। सरकार सिंचाई का प्रबन्ध कर रही है, कृषि निगम की स्थापना, बीज भण्डार, कृषि-यन्त्र, उर्वरक तथा छोटे सिंचाई के साधनों का प्रसार आदि इन पर सरकार तेजी कर रही है, उससे अन्न समस्या को सुलझाने में बड़ा बल मिलेगा। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है, पर यह दीर्घकालीन योजनाएँ हैं, इनके विकसित होने में काफी समय लगेगा, काफी कठिनाइयाँ आयेंगी अनेक उलझनें पैदा होंगी। लोगों को अधिक देर तक भूखा भी नहीं रखा जा सकता और विदेशी सहायता पर भरोसा भी नहीं किया जा सकता, ऐसी अवस्था में तात्कालिक हल पर विचार करना बहुत आवश्यक हो गया है।

सर्व सुलभ हल—साग-भाजी आन्दोलन

खाद्य पदार्थों में सब्जियाँ ही ऐसी हैं, जो बहुत शीघ्र ही पर्याप्त मात्रा में उगाई जा सकती हैं। भूमि के अन्दर पैदा होने वाली शाक-भाजी जैसे—आलू अरबी, मूली, गाजर, सलगम, प्याज, शकरकन्द, चुकन्दर, ओलमिस, अदरख आदि। महीने से लेकर पाँच माह तक में अल्प-श्रम और स्वल्प—साधनों से तैयार हो जाती हैं।

भूमि के ऊपर पैदा होने वाली सब्जियों में कुछ को छोड़कर प्रायः सभी दो-तीन महीने में ही तैयार हो जाती हैं। भिण्डी, मटर, ककड़ी, बैंगन, टमाटर, सेम, फूलगोभी, बन्दगोभी, गाँठगोभी, पालक, मिलेरी, मेथी, सलाद, सौंआ, बथुआ, करम साग, चौलाई, कुलफा, लौकी, पौंय, टिंडा, तोरई, चरचींड़ा, करेला, कद्दू, परवल आदि को पौध लगाने से तैयार होने में २-३ माह से अधिक समय नहीं लगता। यह सब्जियाँ एक पौधे से ही कई बार उपलब्ध होती रहती हैं। लौकी, कोहड़ा आदि तो बेल से ही ५ से लेकर १० मन तक पैदा हो सकते हैं। थोड़े सिंचाई के साधन विकसित कर लिए जायँ तो इनकी एक वर्ष में कई फसलें उत्पन्न की जा सकती हैं।

अन्न की कमी साग पूरा करे

देश में पैदा होने वाले खाद्यान्न का केवल १० प्रतिशत भाग बाहर से मँगाना पड़ता है। सब्जी का उत्पादन बढ़े और लोग उसे आहार की मात्रा में प्रमुख स्थान दें तो यह १० प्रतिशत अनाज की कमी उसी से पूरी हो सकती है। एक व्यक्ति के हिस्से में यदि दोनों समय के लिये आधा किलो अनाज पर्याप्त हो और परिवार में कुल १० आदिमयों को आहार की आवश्यकता हो तो ५ किलो आटे की प्रतिदिन आवश्यकता होगी। पर यदि एक व्यक्ति का आहार राष्ट्रीय कमी के अनुपात से कम कर दिया जाय तो ४।। किलो आटा मिलता है और केवल आधा किलो आटे की कमी रह जाती है। अब यदि यह नौ सदस्य अपने-अपने आहार से प्रत्येक व्यक्ति कुल, ६० ग्राम आटा कम कर दें और उसकी पूर्ति के लिए सब्जी की मात्रा दुगुनी कर देने से ही १० सदस्यों के लिए आहार पर्याप्त हो जायेगा और उसमें आर्थिक कठिनाई भी नहीं आयेगी। आधा किलो आटा आठ आने में आता है, जबकि आठ आने में कोई भी सब्जी डेढ़-दो किलो से कम नहीं आयेगी। उत्पादन और उपभोग दोनों की आवश्यकतायें पूरी हो जायेंगी और देश को बाहरी आयात का मुँह न देखना पड़ेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आन्दोलन का मुख्य स्वरूप

साग-भाजी आन्दोलन का मुख्य उद्देश्य है "खाद्यान्न-समस्या का तत्काल हल" पर इसके गौण लाभ अनेक हैं। उनको पाने के लिए किसानों में व्यापक रूप से यह प्रेरणा भर देने की आवश्यकता होगी कि वे अपनी जमीन का कुछ अंश केवल साग-सब्जी उत्पादन के लिए ही नियत रखें। आम जनता में भी यह प्रवृत्ति होनी चाहिए, साथ ही उसके उपयोग की मात्रा में वृद्धि होनी चाहिए। पिछले महायुद्ध में ब्रिटेन ने अपनी खाद्यान्न समस्या को आलू का उत्पादन और दैनिक आहार में उसकी खपत को बढ़ाकर हल किया था। ऐसा ही उदाहरण यहाँ भी प्रस्तुत करना चाहिए, ताकि हम यह व्यक्त कर सकें कि भारतवर्ष अपने स्वाभिमान की रक्षा के लिए हर स्थिति का मुकाबला कर सकता है। खाद्यान्न की धार्मिक पवित्रता, स्वाधीनता की रक्षा एवं आत्म-निर्भरता के लिए भी यह हल सर्व सुलभ और उपयोगी है। इसका महत्त्व हमारे यहाँ बहुत दिनों पहले से ही विदित है।

साग-भाजी के लाभ

खाद्य-समस्या के तात्कालिक हल के बाद "साग-भाजी उगाओ" आन्दोलन का महत्त्व कम हो जायेगा ऐसा सोचना भूल है। उसका स्थायी महत्त्व सामयिक महत्त्व से कई गुना अधिक है। अभी इसका स्वरूप है "विदेशी आयात बन्द करो" बाद में इसे "साग-भाजी उगाओ—जीविका कमाओ"—और "सब्जी खाओ—स्वास्थ्य बनाओ" के रूप में परिवर्तित किया जा सकता है। किसी भी रूप में लें इससे अनेक वैयक्तिक, सामाजिक एवं राष्ट्रीय लाभ हैं, अतः विकास की अन्य योजनाओं के साथ इसे भी हमें अनेक कार्यक्रमों में मुख्य स्थान देने की आवश्यकता पड़ेगी।

आर्थिक स्थिति पर प्रभाव

भारतवर्ष में जमींदारी-प्रथा अति प्राचीन काल से चली आ रही है, वह बड़े रूप में तो मिट गई पर छोटे रूप में अभी भी विद्यमान है। फलस्वरूप किसानों में कृषि के लिए जमीन की व्यवस्था में आज भी बड़ी विषमता है। जिस परिवार में ५ आदमी हैं, उसके पास कुल १० बीघे जमीन और जिसके घर में कुल १० सदस्य हैं, उसके यहाँ १०० बीघे जमीन—ऐसी विषमता कहीं भी देखी जा सकती है। इसका अर्थव्यवस्था और उत्पादन की क्षमता पर बड़ा बुरा असर होता है। जिन किसानों के पास कम जमीन होती है, वे दो बड़ी फसलों को थोड़े समय में कर लेते हैं, शेष समय बेकार रहते अथवा बँटाई की खेती करते हैं। आजीविका एवं श्रम के सदुपयोग—इन दोनों ही दृष्टियों से यह काम घाटे का है। राष्ट्र की अर्थव्यवस्था पर इसका बुरा असर पड़ता है। इसका स्थायी हल तो जमीन का समुचित वितरण ही है, पर जब तक वे मान सकें, तब तक जिनके पास जमीन कम है उनके लिए यह उपाय ठीक है ताकि अपनी थोड़ी जमीन में शाक-भाजी की फसलें उगायें और अपना खर्च निकाल लें।

श्रम व्यर्थ न जाये और अल्प साधन वाले किसानों को भी आजीविका की पूरी व्यवस्था बनी रहे इसके लिए साग-भाजी का उत्पादन बड़ा लाभदायक है। एक ही खेत में वर्ष में ३-४ फसलें आसानी से उगाई जा सकती हैं। थोड़ी-सी सिंचाई की व्यवस्था कर ली जाये तो कम जमीन वाले किसान भी अपनी पैदावार कई गुनी बढ़ा सकते हैं। पिछले वर्ष कोत्तिकम्पुरम् मद्रास के एक किसान को वहाँ की पंचायत ने इस बात पर पुरस्कृत किया था कि उसने दो बीघे खेत से वर्ष में आलू, मटर, बैंगन तथा धान की चार फसलें उत्पन्न की। इससे उसमें उसे पिछली आमदनी ३०० प्रतिशत की जगह ८०० रुपये की आमदनी हुई। इस किसान ने अब नियमित रूप से अपनी जमीन में फूल और सब्जियों का उत्पादन प्रारम्भ कर दिया है।

कम साधन आमदनी अधिक

एक बीघे खेत के लिए बीज, बैल, रखवाली आदि में जितने पैसे और समय खर्च करके एक अनाज की फसल उगाई जा सकती है, सब्जी की खेती उससे काफी कम में हो जाती है। १ या डेढ़ रुपये के बीज एक बीघे खेत के लिए काफी होंगे। खाद भी हलकी ही देनी पड़ेगी। पानी के बड़े साधन उपलब्ध न हों तो घर के बच्चों को लगाकर भिण्डी, तोरई, धनियाँ आदि हल्की सब्जियों की सिंचाई तो बड़ी आसानी से बाल्टियों द्वारा भी की जा सकती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सब्जी की खेती का लाभ १।। महीने बाद से ही मिलना शुरू हो जाता है। खपत बढ़ती है, तो गाँव के मजदूरों को, फेरीवालों को अथवा अपने ही घर के लोगों को बाजार में ले जाकर बेचने का काम मिल जाता है और फसल का आर्थिक लाभ भी जल्दी ही देखने को मिल जाता है।

स्वास्थ्यवर्धक गुण

हम जो आहार ग्रहण करते हैं साधारणतया उसमें अनाज, जिसमें गेहूँ, जौ, चना आदि सम्मिलित होते हैं, का भाग अधिक होता है। इससे शरीर को प्रोटीन, स्टार्च, हाइड्रोकारबोरेट आदि की अधिक मात्रा तो मिलती है और शरीर भी बढ़ता है किन्तु इस अनाज में अधिक मल उत्पादकता का एक बड़ा दोष भी है। इससे शरीर के पाचन संस्थान में मल बढ़ता है, जो अक्सर बीमारियों के रूप में फूटता रहता है। फल और तरकारियों का गुण इससे भिन्न होता है इनमें गर्मी की मात्रा तो कम होती है पर अन्य अनेक स्वास्थ्यवर्धक गुण पाये जाते हैं। मल की सफाई और पाचन संस्थान की सुदृढ़ता के लिये तो साग-भाजी को उपयोग नितान्त लाभदायक है।

हमारे आहार में विभिन्न विटामिनों का अभाव हमारे देश की पौष्टिक पथ्य की समस्याओं में से एक गम्भीर समस्या हो गई है। स्वास्थ्य मन्त्रालय तक इस बात से काफी चिन्तित है। स्वास्थ्य विभाग के कमिश्नर ने कुछ दिन पूर्व एक वक्तव्य में बताया कि, आहार में कैरोटीन के अभाव से लोग कद में छोटे रह जाते हैं, इससे रोग निरोधक शक्ति तथा कीटाणुओं के आक्रमण को रोकने की शक्ति नष्ट हो जाती है, जिससे आँख, कान, नाक तथा फेफड़ों के अनेक रोग उत्पन्न हो जाते हैं। कुन्नूर के आहार विशेषज्ञों का मत व्यक्त करते हुए स्वास्थ्य अधिकारियों ने बताया कि इस कमी को पूरा करने के लिये बालकों और तरुणों को प्रतिदिन सब्जियों का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिये।

रोग निरोधक तत्त्व

सब्जियों में रोगों से बचाव करने के लिए विटामिन "ए", "बी", "सी" कैल्शियम तथा लोहे जैसे खनिज पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं। सब्जियों के पत्ते, डंठल, फूल, ऊपरी तथा निचला हिस्सा सभी उपयोगी होते हैं। ये भोजन पचाने में बड़ी मदद करते हैं। चौलाई, मेथी, पालक, बन्दगोभी, सरसों और सोजनी जैसी सब्जियों में जो कैल्शियम तथा लोहा होता है, उससे शरीर में रोगों को बचाने की शक्ति आती है।

भिण्डी, मटर, सेम, आलू आदि दानेदार सब्जियों में प्रोटीन तथा विटामिन "सी" काफी मात्रा में पाया जाता है। पीले रंग के कद्दू टमाटर, कटहल, कच्चे केले, बैंगन, घिया, तोरई आदि में भी विटामिन और अन्य शक्तिवर्द्धक तत्त्व प्रचुर मात्रा में पाये जाते हैं।

सस्ता और पौष्टिक आहार

शरीर के लिये आवश्यक स्टार्च का मुख्य स्रोत अनाज माने जाते हैं पर सब्जियों से मिलने वाला स्टार्च अनाज के मुकाबले काफी सस्ता पड़ता है। इस दृष्टि से आलू, अरबी, शकरकन्द, रतालू, चुकन्दर, मूली, गाजर तथा टैपिओका जिन्हें कन्दमूल मानते हैं, काफी सस्ते पड़ते हैं, उनसे आहार की आवश्यकता भी पूरी होती हैं एवं स्टार्च भी मिल जाता है। थोड़े अनाज के साथ यदि इस तरह की सब्जियों का प्रयोग किया जाय तो स्वाद, स्वास्थ्य एवं खाद्य-संकट सभी बातों का एक साथ हल निकलता है। इनमें माँसपेशियों के लिये, आवश्यक प्रोटीन के लिये दाल और दूध की थोड़ी मात्रा को संयुक्त कर लिया जाय तो अनाज की कमी के बावजूद भी अपना आहारपूर्ण पौष्टिक बन सकता है।

पत्तेदार सब्जियाँ और जीवन-तत्त्व

हरी पत्तीदार सब्जियाँ प्राकृतिक औषधियों से कम मूल्यवान नहीं होतीं, इनमें पालक, मेथी, चौलाई, बथुआ आदि में जीवन विकास के अमूल्य तत्त्व भरे पड़े हैं। रासायनिक विश्लेषण के अनुसार इनमें तत्त्वों का वर्गीकरण इस तरह है—

(१) पानी ८१८ प्रतिशत (२) प्रोटीन ४.६ प्रतिशत
(३) वसा ०.६ प्रतिशत (४) खनिज पदार्थ १.६ प्रतिशत
(५) रेशा १.०० प्रतिशत (६) कार्बोहाइड्रेट ६.८ प्रतिशत
(७) कैल्शियम ०.४७ प्रतिशत।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इससे विटामिन 'ए' और 'बी' की पर्याप्त मात्रा तथा प्रति आधी छटांक की मात्रा १६ कैलोरी जीवनी शक्ति इन सब्जियों से प्राप्त होती है। इसमें सब्जियों की अमूल्य स्वास्थ्य सम्वर्धन शक्ति का सहज ही अनुमान किया जा सकता है।

धार्मिक महत्त्व

एक प्राचीन कहावत है "जैसा खाये अन्न वैसा बने मन" के अनुसार अनाज से फलों का महत्त्व अधिक है। धर्मग्रन्थों में ऐसे निर्देश हैं कि विशेष अनुष्ठानों, उपवास, व्रत तथा पर्व और त्यौहारों पर फलाहार किया जाना चाहिए। ऐसे आहार से बुद्धि व विचारों की सात्विकता बढ़ती है। ऋषि-महर्षि केवल फल, शाक और कन्दमूल खाकर रहते थे। उनकी आन्तरिक पवित्रता, बौद्धिक, विलक्षणता एवम् मेधा शक्ति का कोई पारावार नहीं था, इसमें उनके आहार की सात्विकता ही प्रमुख थी। पर चूँकि आजकल जनसंख्या के अनुपात से फल पर्याप्त मात्रा में नहीं मिल सकते पर यह आवश्यकता बहुत कुछ सब्जियों से पूरी हो जाती है इसलिए अब फलाहार की अपेक्षा शाकाहार का महत्त्व फलों की महँगाई को देखते हुए भी अधिक होना चाहिए।

विशेष व्रत-त्यौहारों पर आलू, शकरकन्द, गाजर, कद्दू आदि उबालकर खाने की परम्परा भी है। इन्हें अपने दैनिक आहार में नियमित स्थान देकर, आहार के स्वाद को बढ़ाया जा सकता है और सात्विकता को भी। शकरकन्द, गाजर आदि कच्चे भी खाये जाते हैं तो उनमें पौष्टिक शक्ति भी अधिक होती है और आसान अस्वाद व्रत भी हो जाता है। इन्हें खाने में रुचि भी रहती है कुछ सब्जियों को उबाल कर उसमें हलका नमक, मिर्च मिलाकर भी लिया जा सकता है, इससे भी उसकी सात्विकता बनी रहती है और व्रत भी हो जाता है।

रुचिकर वातावरण और वायु शुद्धि

साग-सब्जियों की सघन कुंजों की हरियाली आँखों को बड़ी प्रिय मालूम होती है और उससे मन को बड़ी शान्ति मिलती है। हरे वातावरण में एक सात्विक-सी मानसिक प्रसन्नता अनुभव होती है और उसका लोगों के विचारों तथा आचरण पर भी वैसा ही प्रभाव पड़ता है। हरियाली बढ़ने से वायुमण्डल की गन्दगी भी कम होती है और उनके फूलों से वायु शुद्धि भी होती है। प्राचीन काल में कुंज बनाकर रहने की परम्परा आध्यात्मिक दृष्टि से बड़ी मूल्यवान समझी जाती थी, यह कार्य आज भी उसी रूप में प्राप्त किया जा सकता है और गर्मियों आदि के मौसम में जबकि सारी प्रकृति निर्जन निर्वसन-सी प्रतीत होती है, तब भी शान्तिदायक हरियाली बनाये रखी जा सकती है।

रुचिकर व्यायाम-समय का सदुपयोग

कार्यालयों में काम करने वाले कर्मचारी तथा देहातों के विद्यार्थी एवम् अध्यापक व्यायाम की दृष्टि से साग-भाजी उगाने का काम करें तो इससे उनकी रचनात्मक प्रतिभा का विकास तो होगा ही साथ ही शारीरिक क्षमताओं में भी अभिवृद्धि होगी। यह व्यायाम बड़ा रुचिकर होता है। इससे मनुष्य की कोमल वृत्तियाँ जागृत होती हैं और भाव में गम्भीरता आती है। जो समय व्यर्थ के कार्यों में बुराइयाँ पैदा करने में लगता है उसका सुन्दर सदुपयोग भी होता है। साग-सब्जी उत्पादन का महत्त्व किसी भी दृष्टि से कम उपयोगी नहीं वह हर तुला पर लाभदायक ही ठहरता है।

साग-भाजी का उत्पादन

लोगों के मन में इसप्रकार की इच्छा जागृत हो जाय कि हम साग-भाजी का उत्पादन करेंगे ही तो यह कार्य इतना सरल है कि उसे कोई भी व्यक्ति स्वल्प श्रम, थोड़े-से पैसों तथा जमीन के काफी अभाव में भी रुचिपूर्वक कर सकता है। घर के छोटे-छोटे बच्चों में रचनात्मक प्रवृत्तियों का विकास करने का यह सुन्दर साधन है। इस माध्यम से उनका मनोरंजन, व्यायाम तथा नैतिक विकास भी होता रहता है।

क्यारियाँ बनाना

घर के आस-पास की बेकार पड़ी जमीन में खुरपी तथा फावड़ों के साथ जितनी जमीन उपलब्ध हो उस हिसाब से क्यारियाँ बनाकर उनकी हल्की मेंड़ उठा लेनी चाहिए। साधारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तौर पर एक क्यारी १२ × १० फुट की हो पर जमीन की उपलब्धि को देखते हुए इससे छोटी या बड़ी भी रखी जायँ तो कुछ हर्ज नहीं।

साग-भाजी के लिए रेतीली या चिकनी मिट्टी कम उपयोगी मानी जाती है। इसके लिये सबसे अच्छी दोमट मिट्टी होती है। अगर अपनी पास की मिट्टी ऐसी न हो तो बाहर के खेतों से कुछ मिट्टी लाकर अपने क्यारियों में पलट लेनी चाहिए। आमतौर पर घरों के आस-पास की मिट्टी इसके उपयुक्त होती है इसलिए बाहर से मिट्टी लाने की बहुत ही कम जरूरत पड़ेगी। क्यारियों के घास-पात काटकर उसमें खूब पानी भरकर एक-दो दिन के लिए यों ही खुला छोड़ दिया जाय। जब मिट्टी पूरी तरह पानी सोखकर नर्म हो जाय और कुछ सूखापन आने लगे तो उसे अच्छी तरह गोड़ लेना चाहिये और उसमें खाद मिला देनी चाहिए। दो-तीन बार अच्छी तरह गोड़ाई करने के बाद मिट्टी के ढेले समाप्त हो जायेंगे और वह भुरभुरी बन जायेगी। अब इस क्यारी में अपनी सुविधानुसार कोई भी सब्जी बो सकते हैं।

बड़े किसान और सिंचाई

जिनके पास केवल दो-तीन क्यारियाँ हों उनके लिये सिंचाई की कोई बड़ी दिक्कत नहीं होती। घर के कुयें से बाल्टियों में पानी लाकर सिंचाई हो जाती है, पर बड़े-उत्पादन में साग-भाजी, खाद और पानी पर्याप्त सुविधा माँगती है। साग-सब्जी का सघन उत्पादन भी इसी ढंग से होता है। पहले सारे खेत को सींचना पड़ता है और फिर उसे खाद देकर नर्म कर लिया जाता है। इसके बाद उसकी छोटी-छोटी क्यारियाँ बनाकर बीज बोये जाते हैं।

बड़ी खेती में सिंचाई के साधनों पर मुख्य रूप से ध्यान देना पड़ता है ताकि सब्जियों को जल्दी-जल्दी पानी दिया जा सके। नहर का पानी उपलब्ध हो सके तो अच्छा है अन्यथा कुयें या पोखर से पानी की ऐसी व्यवस्था रहे, जिससे सप्ताह में समयानुसार सिंचाई होती रहे। इसके लिए चर्सी या पुर, रहट, मायादास या बुलन्दशहरी बाल्टी, ट्यूब वेल्स या चैन पम्प में लाये जा सकते हैं। थोड़ी जमीन में हैण्ड-पम्प भी लगाये जा सकते हैं।

बरसात में सब्जी का उत्पादन

पानी की अधिक आवश्यकता को ध्यान में रखकर साग-सब्जी का अधिकांश उत्पादन बरसात के दिनों में किया जाता है। यह अपेक्षाकृत सरल भी होता है। वर्षा के एक-दो पानी हो जाने के बाद मिट्टी काफी नरम पड़ जाती है तो उसमें गड्डे खोदकर बीज बोने में कठिनाई नहीं रहती। यह गड्ढे छप्परों के आस-पास किसी वृक्ष के नीचे बोयें ताकि उनकी बेलों को थोड़ा-सा सहारा देकर ऊपर चढ़ाया जा सके। ऐसी सब्जियों में लौकी, तोरई, कद्दू, कुम्हड़ा, चरचीड़ा आदि मुख्य हैं। इनकी बेलें काफी गोलाई में फैलती हैं इसलिए यदि जमीन में उतना स्थान न मिलता हो तो उन्हें बाँस या अन्य किसी लकड़ी का सहारा देकर ऊपर छप्पर या पेड़ पर चढ़ा देना चाहिए। पेड़ की मोटी डालियों में या छप्परों में बेलें मजबूती से फैलती रहती हैं और वहाँ बिना किसी कठिनाई के फल लगते रहते हैं। ऊँचाई पर पत्तियों को सूर्य की रोशनी भी पर्याप्त मात्रा में मिलती रहती है। इसलिए आमतौर पर बीज ऐसे ही स्थानों में डालना चाहिए, जहाँ से ऊपर आसानी से चढ़ जायें। साथ ही यह भी ध्यान रखना चाहिए कि फैलाव का स्थान ऐसा हो जो भारी फलों का वजन आसानी से उठा सके।

पेड़ों और भिटौरों में

हिन्दुस्तान में गोबर के उपले बनाकर उनके ऊँचे भिटौरे खड़े करने की प्रथा हर गाँव में होती है। कण्डों को स्तूपनुमा चुनकर उसे चारों तरफ से एक मोटी गोबर की परत से ढक दिया जाता है ताकि वह वर्षा आदि से कण्डों को सुरक्षित रख सके। बरसात के दिनों में ये खुलते भी नहीं इसलिये सब्जियों की बेलें चढ़ाने के काम में ले लेना चाहिए।

गर्मियों में तैयार हुए भूसे, कड़बी या अरहर आदि की लकड़ियों के पौंड़े भी इसी तरह किसान खेतों में लगा देते हैं। इन पौड़ों के किनारे-किनारे एक या डेढ़ फुट जमीन छोड़कर चारों तरफ से गड्ढे बनाकर बीज को बो देना चाहिये। बड़े होने पर पौधे अपने आप ऊपर चढ़ जाते हैं और फूलने-फलने लगते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन गड्ढों को डेढ़ बलिस्त से बड़ा नहीं रखना चाहिए क्योंकि इन्हें पानी की उतनी ही मात्रा पर्याप्त होती है, जितनी आस-पास की मिट्टी मजे में सोख ले।

बाड़े बनाकर

चौड़ी जमीन की व्यवस्था न हो सके तो घर के सहन के आखिरी हिस्से पर पेड़ों की सूखी डालियाँ, टहनियाँ काफी दूर तक लम्बाई में मजबूती से काफी गहराई में गाढ़ देनी चाहिये। नीम, महुआ, बबूल, झाऊ आदि की सूखी डालियाँ आसानी से मिल सकती हैं। कदाचित् डालियों वाली लकड़ियाँ न मिल सकें तो बाँस या ढाक के सीधे लट्ठे लेकर भी गाढ़े जा सकते हैं और उनमें ऊपर भी कई लकड़ियों को एक-दूसरे के साथ बाँधकर बाड़े की शक्ल का बना लेना चाहिए। तब इन बाड़ों के आस-पास छोटे-छोटे गड्ढे बनाकर थोड़े-थोड़े अन्तर से बीज बो दीजिए। जहाँ बरसाती नालियाँ बहती हों उनके किनारे भी ऐसे बाड़े लगाये जा सकते हैं। जब पौधे उग आयें तो उन्हें इन लकड़ियों के सहारे ऊपर चढ़ा देना चाहिए। जब बेलें काफी फैल जायें तो उनके फलों के बढ़ने में वजन पाकर टूट जाने का खतरा न रहे इसके लिए नीचे झंखाड़दार लकड़ियों का सहारा बना देना चाहिए। लौकी, काशीफल, कुम्हड़े आदि के फल काफी वजनदार होते हैं उनको चढ़ाते समय इस बात का पूरा ध्यान रखना चाहिए कि जो लकड़ियाँ गाढ़ी गई हैं, वे इतनी मजबूत हैं कि इनके फलों के वजन को आसानी से सह सकती हैं। इसके लिए इन बाड़ों को बहुत ऊँचा तभी उठाया जाय जब आधार भी उतना ही मजबूत हो और ऊपर बेलों के फैलने के लिए मजबूत टट्टियाँ भी लगी हों। इस प्रकार की व्यवस्था से मकान की शोभा भी बढ़ेगी और उससे फल भी काफी मात्रा में उपलब्ध हो सकेंगे। जमीन की भी कोई अधिक आवश्यकता न होकर एक सकरी पगडण्डी काफी होगी।

कुओं के आस-पास

घरों के बाहर जहाँ कुओं की फर्श पर बैठकर लोग स्नान करते हैं, उस पानी की नियमित व्यवस्था न होने से वह चारों तरफ फैलता या एक स्थान पर सड़ता रहता है। इस पानी को एक चक्करदार नाली में घुमाकर उसके किनारे- किनारे टमाटर, बैंगन आदि सब्जियाँ लगा देनी चाहिये और अधिक स्थान मिल सके तो क्यारियों वाली सब्जियों के लिए सिंचाई की व्यवस्था भी इसी नाली के द्वारा हो सकती है। पर यहाँ यह ध्यान देने की आवश्यकता पड़ेगी कि साबुन लगाया हुआ पानी उनमें न पहुँचे अन्यथा उससे सारी सब्जी बर्बाद हो सकती है।

लकड़ी के डिब्बे और गमले

जिन लोगों के पास जमीन का नितान्त अभाव हो वे लोग धनियाँ, मिर्च, अदरख, पोदीना, टमाटर, चटनी में काम आने वाली आदि सब्जियों का उत्पादन गमलों में भी कर सकते हैं। इन गमलों को किसी ऐसे स्थान पर रखना चाहिए, जहाँ उन्हें पर्याप्त धूप मिल सके। इनकी मिट्टी समय-समय पर पलटती जाती रहे और उसमें ताजी मिट्टी दी जाती रहे।

गमलों की अपेक्षा लकड़ी की पेटियाँ जिनमें पार्सल आदि आते हैं, उनमें मिट्टी भरकर टमाटर पैदा करने का सफल प्रयोग किया गया है। एक बार मिट्टी डालकर और उसमें टमाटर लगाकर एक पौध से अँगरेजी टमाटर की ५-६ पौण्ड मात्रा बड़ी आसानी से प्राप्त की जा सकती है। इसप्रकार की अनेक पेटियाँ छतों में रखकर उनमें बैंगन, टमाटर, मटर आदि बोये जा सकते हैं। यह व्यवस्था शहर के उन व्यक्तियों के लिये भी उपयोगी है, जिनके पास अहाते नहीं होते और घरों के आस-पास बिलकुल भी बेकार जमीन नहीं होती।

बीज और पौधे रोपना

बीज या हल्के बीजों की पौध नहीं बनती, यदि उग भी आती है तो वह कमजोर होती है और उससे पैदा होने वाली सब्जियाँ भी कम ताकत वाली होती हैं। इसका ध्यान पहले से ही रखना चाहिए। बीज को किसी अच्छे बीज भण्डार से ही लेकर रखना चाहिए, पर जब स्वयं उसकी फसल उत्पादन करने का क्रम चल पड़े तो अपनी फसल से ही स्वस्थ और उम्दा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फल चुनकर, उन्हें बीज के लिये रख लेना चाहिए। सुखाये हुए बीजों को हवा की नमी और कीड़ों से बचाने के लिए किसी काँच के बन्द बर्तन में रखना चाहिए। बीजों को सुरक्षित रखने के लिए उनमें राख मिलाकर भी रखा जाता है। जिन शीशियों में बीज रखे जायें, उनमें नेफ्थलीन की गोलियाँ भी रखी जा सकती हैं।

आलू, अरबी आदि सब्जियाँ अंकुरित बोई जायें तो उनके पौधे अधिक स्वस्थ होते हैं इसके लिए बोने से कुछ दिन पूर्व इन बीजों को किसी नमी वाले स्थान में रख देना चाहिए और ऊपर से गीला कपड़ा डालकर ढंक देना चाहिये। यह बीज छाया में ही रखे रहें। वहीं धीर-धीरे उनके अंकुर फूट पड़ेंगे, तब उन्हें खेत या क्यारियों में कहीं भी ले जाकर बोया जा सकता है।

साग-भाजी उत्पादन

युग-निर्माण योजना के शत-सूत्री कार्यक्रमों का एक महत्त्वपूर्ण अंग है। इससे धार्मिक, आध्यात्मिक, आर्थिक एवं औद्योगिक अनेक लाभ हैं, अतः उसके लिए पर्याप्त समय भी राष्ट्रीय पुनरुत्थान में अभिरुचि रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति को देना पड़ेगा और उसकी रूपरेखा भी अन्य आन्दोलन जैसी ही होगी। लोग इन लाभों को समझे और उन्हें शाक-सब्जी को आहार में समुचित स्थान देने की उपयोगिता समझाई जाय तो लोग प्रसन्नतापूर्वक उसे प्रयोग में लाने के लिये तैयार हो सकते हैं।

संगठन बनाये जायें

सहकारी कृषि, प्रगतिशील सभायें, युवक-मण्डल अनेक संगठनों की तरह शाक-भाजी आन्दोलन को संचालित करने के लिये छोटे-छोटे स्वेच्छा संगठन बनाये जायें। व्यक्तिगत रूप से जो अपनी सेवायें समाज को दे सकते हो, वे भी वैसा करें पर एक व्यक्ति की योग्यता और कर्तृत्व का उतना लाभ नहीं होता जितना एक से अधिक व्यक्तियों के संगठन का। कई व्यक्तियों के मिल जाने से शक्ति बड़ी हो जाती है, उत्साह बढ़ता है, काम में सरलता आती है। योजना को कई दृष्टिकोणों से समझकर नई योजनाओं को प्रसारित करने की सूझ-बूझ आती है।

उत्साही लोक-सेवी मिल-जुल कर ऐसी समितियाँ बना सकते हैं, जो इन आन्दोलन के विभिन्न पहलुओं पर विचार कर सकें और निर्धारित कार्यक्रमों को क्रियान्वित कर सकें। इनका मुख्य कार्य अपने गाँव और उसके आस-पास के क्षेत्र में इस आन्दोलन का रचनात्मक संचालन करना चाहिये।

लेख, ट्रेक्ट और समाचार

किसी मुख्य आयोजन के लाभ, कार्यक्रम और विज्ञापन के लिये छोटे-छोटे बुलेटिन प्रसारित करने की प्रथा इस युग में बड़ी प्रभावशाली साबित हुई है। ऐसी बुलेटिनों का प्रकाशन यह संगठन कर सकते हैं और साग-सब्जी सम्बन्धित अनेक तरह की जानकारी सर्वसाधारण तक पहुँचा सकते हैं। आवश्यकतानुसार छोटे-बड़े बुलेटिन वितरण अथवा विक्रय के लिए प्रकाशित हो सकते हैं, उनमें साग-भाजी के लाभों से लेकर उगाने, पैदावार बढ़ाने तथा अन्यान्य जानकारी दी जा सकती है।

साग-सब्जियों की उपयोगिता पर प्रकाश डालने वाले लेख लिखे जायें और उन्हें समाचार-पत्रों तथा अन्य पत्रिकाओं में छपने के लिए भेजना चाहिए ताकि लोगों का उधर ध्यान आकर्षित हो। "गाजर खाइये कद बढ़ाइये" "स्वास्थ्य का सरताज बथुआ" "पालक खाइये स्वास्थ्य बनाइये" "आलू उगाओ अधिक कमाओ" इसप्रकार के एक-एक विषय के अनेक लेख जानकार एवं अनुभवी लोगों द्वारा पत्र-पत्रिकाओं को भेजे जा सकते हैं।

लोगों में एक मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति यह होती है कि उन्हें औरों को काम करते देखकर उत्साह मिलता है। ऐसे कार्य जगह-जगह होते हैं और लोग लाभ भी उठाते हैं पर बहुत-से लोगों को उनका पता नहीं होता। ऐसे समाचार जहाँ भी जानकारी में हो रहे हों उन्हें आकर्षक रूप देकर अखबारों में छपने के लिए भेजना चाहिए। अपराधपूर्ण समाचार पढ़कर जब लोगों को अपराध में रुचि बढ़ सकती है तो इस प्रकार के समाचार पढ़कर लोग साग-भाजी के उत्पादन

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और उपभोग में रुचि न बढ़ायें ऐसा सर्वथा सम्भव नहीं। दूसरों की प्रेरणा पाकर लोग निश्चय ही उसे स्वयं भी करने की योजना बनाते और करते हैं।

बीजों का वितरण

गाँव के अनपढ़ किसानों को यह भी पता नहीं चल पाता कि शहर में बीज-भण्डार कहाँ हैं और शाक-सब्जियों के अनेक तरह के बीज कहाँ से मिल सकते हैं ? समय के अभाव में ऐसा कर भी नहीं सकते कि शहर जायें और पता लगाकर बीज ले आयें। यह कार्य समितियों, शाखाओं तथा स्वेच्छा सङ्ठनों को करना चाहिये। काफी मात्रा में भिण्डी, तोरई लौकी, ककड़ी, तरबूज, आलू, कद्दू, सेम, मटर आदि के बीज लाकर उन्हें कागज या कपड़े कीं छोटी-छोटी थैलियों में तौलकर हिफाजत से रख लिये जायें। इनके ऊपर स्याही से वजन और उनकी कीमत लिख दी जाय। थैलियाँ ज्यादातर तोल, छटाँक या १०० ग्राम तक ही बनाई जायें और उनकी कीमत २, ४, या ८ आने से अधिक न रखी जाये। जो लोग अधिक खरीदना चाहें उन्हें, थैलियों या पुड़ियों की अपेक्षा तौलकर बीज दिये जायें। इस प्रकार के बीज भण्डार हर संचालन केन्द्र के पास जगह-जगह रहें।

पौध-वितरण पौध-भण्डार

किन्हीं संगठनों या व्यक्तियों को, जिनको कुछ जमीन सुविधापूर्वक उपलब्ध हो सकती हो, उन्हें चाहिए कि वे उतनी जमीन में गोभी, बैंगन, टमाटर, मिर्च, गाजर, सकरकन्द आदि की पौध छोटी-छोटी क्यारियों में बो लें। फसल का समय आने पर लागत से थोड़ा अधिक दाम लेकर किसानों को बेच देनी चाहिए। जिन लोगों के घरों के सामने छोटी-छोटी क्यारियाँ बन सकती हों उन्हें भी इन पौध-भण्डारों से पौध खरीदकर सब्जी पैदा करने की प्रेरणा देनी चाहिए।

बड़े किसान और माली

यदि समितियों के पास ऐसी गुंजाइश न हो तो वे इसके लिये बड़े किसानों और मालियों को भी प्रोत्साहन देकर पौध की आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं। साथ ही उन्हें अपनी जमीन के एक निश्चित हिस्से में नियमित रूप से शाक-भाजी की बड़ी फसल पैदा करने की प्रेरणा देनी चाहिए। युग-निर्माण योजना की शाखाओं के अन्तर्गत कुछ ऐसे प्रेरणादायक कार्य हुए भी हैं और हो भी रहे हैं।

कुछ उदाहरण देखिये

बल्लभपुर के चौधरी दीनानाथ सिंह पिछले दस वर्षों से कृषि कार्य कर रहे हैं, उनकी लम्बी खेती है तो भी जितनी अधिक आय उन्हें दो वर्षों से ही रही है, उतनी पहिले कभी नहीं हुई। इसका मुख्य कारण यह है कि उनकी ५ बीघे जमीन अब विशुद्ध रूप से केवल सब्जियों के लिए ही प्रयुक्त की जा रही है। चक-डूँगर के किसान जइती ने इस वर्ष ड्यौढ़ी आमदनी प्राप्त की है। इसका एकमात्र कारण यह है कि अपनी ५० बीघे जमीन में आलू और दूसरे साग पैदा किये। अब उनका इरादा है कि १० बीघे खेती केवल साग-सब्जी के लिए ही रखी जाय। इस जमीन में उन्होंने एक कुआँ खुदवाकर, उसे बाड़े के रूप में परिणित कर दिया है।

शिविरों का आयोजन

जनता और किसानों को इस दिशा में प्रोत्साहित करने के लिए सुविधानुसार न्यूनाधिक दिनों के प्रशिक्षण शिविर भी चलाये जा सकते हैं। इनमें किसानों को बीजों से परिचित करना, साग की अच्छी उपज के लिए मिट्टी तैयार करना, खाद और पानी देना, कीड़ों से बचाना उत्पादन बढ़ाने के प्रयत्न, बिक्री के ढंग आदि प्रशिक्षण विषय रखे जा सकते हैं। इस सम्बन्ध में भाषणों तथा प्रत्यक्ष ज्ञान द्वारा आधिकाधिक जानकारी दी जाय और लोगों को साग-सब्जी उत्पादन की अधिक से अधिक योग्यता बढ़ाई जाय।

इन प्रशिक्षण शिविरों में आहार की सामूहिक व्यवस्था रहे और उसमें भोजन के रूप में अधिकांश तरकारियाँ और सब्जियों के बने तरह-तरह के व्यंजन परोसे जायें। इस प्रकार का आहार रुचिकर, स्वादिष्ट और स्वास्थ्यवर्द्धक भी होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृषि अधिकारियों का सहयोग

कृषि कार्यों में सामान्य जनता की जानकारी बढ़ाने के उद्देश्य से सरकार ने विकास क्षेत्रों में कृषि अधिकारी नियुक्त किये हैं। इनका सहयोग लेकर साग-सब्जी के सम्बन्ध में लोगों को सम्मतियाँ और जानकारी दिलाई जा सकती हैं। केन्द्रीय कृषि मन्त्रालय तथा राज्य कृषि-अनुसन्धान संस्थानों की मदद भी ली जा सकती है। वहाँ के अधिकारियों को बुलाकर इस सम्बन्ध में भाषण कराना, साहित्य मँगाकर उसके उपयोगी अंश की जानकारी सामान्य जनता तक पहुँचाना भी लाभदायक हो सकता है।

"आपके यहाँ यह जमीन बेकार पड़ी है लीजिये यह रहे बीज यहाँ अमुक सब्जी बो दीजिये, इसमें यह लगा दीजिये, यहाँ बोइये। अपने साथियों से आप साग उत्पादन के लिए यह कह सकते हैं। बीज कैसे बोयें ? पानी कैसे दें ? और उनकी हिफाजत कैसे करें ? यह सब बातें भी समझनी चाहिए।

अध्यापक अपने विद्यालयों में बच्चों को अतिरिक्त समय में इसप्रकार की शिक्षा देकर उन्हें गाँवों में भेज सकते हैं। विद्यार्थियों का प्रभाव भी लोगों पर अच्छा होता है और इस तरह समाज-सेवा का क्षेत्र भी उनके लिये विकसित होता है। शिक्षा-संस्थाओं को अब सरकार की ओर से कृषि के प्रशिक्षण के लिए जमीनें भी मिलती हैं। अध्यापक इसका सर्वोत्तम उपयोग सब्जियों के उत्पादन के प्रशिक्षण में कर सकते हैं। इन छोटे कृषि फार्मों को देहातों में उत्पादन के प्रशिक्षण को इस तरह विकसित किया जाय ताकि लोग विद्यालय के समय के बाद वहाँ जाकर उन्हें देख सकें और इस सम्बन्ध में जो उनकी जिज्ञासायें और शंकायें हों उनका भी समाधान कर सकें।

प्रतियोगिता और प्रदर्शनियाँ

लोगों को बीज या पौध देकर ही यह आशा नहीं कर लेनी चाहिए कि उससे लोगों में सब्जी के उत्पादन की पर्याप्त रुचि जागृत हो जायेगी। लोगों में इस रुचि का विस्तार करने के लिए प्रतियोगितायें रखनी चाहिए। समितियों को चाहिए कि वे बीज देते समय भी घोषणा करें कि इस वर्ष जिस व्यक्ति की आलू की फसल सबसे अच्छी होगी उसे "सर्वश्रेष्ठ सब्जी उत्पादक" का प्रमाण-पत्र दिया जायेगा। उसका सार्वजनिक अभिनन्दन किया जायेगा और छोटा-मोटा पुरस्कार भी प्रोत्साहन के लिए दिया जायेगा। यदि कुछ प्रभावशाली व्यक्तियों या पंचायतों का सहयोग मिल सके तो बड़े स्तर पर प्रतियोगितायें रखी जा सकती हैं और उनमें बडे इंनाम की भी व्यवस्था की जा सकती है।

इन प्रतियोगिताओं का निर्णय प्रदर्शनियों के रूप में किया जाय। वर्ष में एक या दो बार गाँव, कई गाँव अथवा विकास क्षेत्रों के अन्तर्गत प्रदर्शनियों के आयोजन हों, जिनमें लोग सबसे अच्छी, बड़ी सब्जियों को प्रदर्शन के लिए लाकर रखें। उसके साथ में एक कागज में उत्पादक का नाम लिखकर रखें। प्रदर्शनी को देखने के लिए बाहर गाँवों में प्रचार किया जाय और उसे एक छोटे से मेले का रूप दे दिया जाय। वहाँ एक दल ऐसा भी रहे जो स्टालों पर घूमने वालों को शाक-सब्जी उगाने सम्बन्धी आवश्यक पूछ-ताछ का जवाब भी देता रहे।

उत्पादकों को सहयोग

सब्जी पैदा करने वालों को विक्रय की कठिनाई हो सकती है। छोटे उत्पादकों की खपत तो फेरी लगाकर सब्जी बेचने वाले कर लेते हैं पर यदि बड़ी मात्रा में सब्जी का उत्पादन हो तो उन्हें मंडियों में पहुँचाने में सहयोग देने का कार्य भी इन समितियों को करना चाहिये। हर मंडी के अलग-अलग सब्जियों के ताजे भाव मालूम किये जाते रहें, जिनसे अधिक लाभ में सब्जियों के विक्रय की व्यवस्था होती रहे और वह सूखने या खराब न होने पावे। समितियाँ स्वयं भी विक्रय की व्यवस्था कर सकती हैं। किसानों को उचित मूल्य मिल रहा है और उनकी हरी सब्जियाँ विक्रय के लिए नहीं रुक रही हैं इन दोनों बातों पर पूरा ध्यान रखा जाय तो किसानों का उत्साह अनाज की अपेक्षा सब्जी व्यवसाय में लगा रह सकता है।

उत्पादन ही नहीं उपयोग भी

कार्यकर्त्ताओं का ध्यान उत्पादन सम्बन्धी सुविधाओं की ओर ही न रहे वरन् लोगों में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सब्जियाँ अधिक मात्रा में खाने के लिए भी एक समानान्तर आन्दोलन चलना चाहिए। इसकी प्रमुख आवश्यकता यह है कि लोगों को सब्जियों के प्रयोग से होने वाले लाभ और उनके पौष्टिक तत्त्वों की जानकारी बढ़े। पाश्चात्य देशों के माँसाहारी लोग भी शाक-सब्जियाँ कच्ची और उबालकर बिना मिर्च-मसालों के खूब खाते हैं, अनाज की खुराक तो वहाँ नाम मात्र के लिए है। फलस्वरूप भारतीयों की तुलना में उनका डीलडौल भी काफी स्वस्थ और हट्टा-कट्टा होता है। हमारे देश में इस तरह की जानकारी का अभाव है। सब्जियों की अपेक्षा लोग अनाज, दाल और चावल अधिक खाते हैं। इस रुचि और आहार क्रम में परिवर्तन लाने के लिए उपर्युक्त सभी साधनों को उसी प्रकार क्रियान्वित किया जाना चाहिए, जिस तरह सब्जी के उत्पादन वृद्धि के लिए बताये गये हैं। सब्जी आन्दोलन का आधा भाग विशुद्ध रूप से इस बात पर आधारित है कि लोग उसका उत्पादन ही न करें वरन् उसे अधिक से अधिक मात्रा में खायें और अपना स्वास्थ्य भी बढ़ायें।

शाक-सब्जियों के पकवान, मिष्ठान्न

शहरों में खीरे, ककड़ी, उबले हुए आलू, मटर आदि के अनेक तरह के व्यंजन बनाकर फेरी वालों के द्वारा चलते-फिरते बेचे जाते हैं। इसप्रकार का प्रयोग गाँवों की छोटी-छोटी दुकानों, स्कूलों और अन्य सार्वजनिक स्थानों पर किया जा सकता है। इस सम्बन्ध में अखण्ड-ज्योति संस्थान ने एक छोटा ट्रेक्ट छाप दिया है।

उबली हुई तरकारियों को शीशे के डिब्बों में रखा जाये, उसमें सादे नमक मसाले मिलाकर लोगों को कम पैसों में खिलायें तो उससे लोगों की रुचि बढ़ सकती है। दूध, घी, आदि का हमारे देश में वैसे ही अभाव हो रहा है फिर खोया और उससे बनी हुई चीजें पेट के लिये हानिकारक भी होती हैं। सामान्य स्वास्थ्य के व्यक्ति के लिए तो मिठाई एक प्रकार का विष ही है, उसको खाने से लोगों को थोड़ा जायका भले ही मिल जाता हो पर उसके स्वास्थ्य पर उसका निश्चित रूप में बुरा प्रभाव पड़ता है। मिठाई की जगह सब्जियों के नमकीन तथा मीठापन स्वादिष्ट आहार बेचने का यह प्रयोग स्वास्थ्य और रुचि की दृष्टि से उपयोगी ही होगा और सस्ता भी पड़ेगा।

सब्जियाँ नाश्ते में

घरों में स्त्रियाँ नाश्ते के लिए सब्जी की मिठाई का प्रयोग करें, इसके लिए स्त्रियोपयोगी शिक्षण और जानकारी की अलग से व्यवस्था रहे। कुम्हड़े का पेठा, लौकी की खीर, गाजर का हलुआ, सकरकन्द की पकौड़ी और पुआ, आलू के पराठे इस तरह के स्वादिष्ट व्यंजन बनाकर लोगों को नाश्ते में, अतिथियों के स्वागत और जलपान में अधिक मात्रा में प्रयुक्त कर सकती हैं इससे सब्जी की खपत बढ़ती है, स्वाद भी बना रहता है और मिठाइयों से होने वाला पाचक की गड़बड़ी का भी कोई भय नहीं रहता।

पौष्टिक गुण नष्ट न हों

सब्जियों में अपार पौष्टिक तत्त्व होते हुए भी लोग उनका ठीक ढंग से उपयोग नहीं कर पाते और पकाते समय उसका बहुत-सा उपयोगी अंश जला देते या छिलके के रूप में निकाल-कर फेंक देते हैं। पकाते समय सावधानी रखने का तात्पर्य यह है कि सब्जी छीलने से लेकर काटने और परोसने तक सावधानी रखना। सब्जियों के ज्यादा ताकत वाले गुण छिलकों के बिलकुल नीचे रहते हैं इसलिए जहाँ तक सम्भव हो, सब्जियों को बिना छिलका उतारे हुए प्रयोग में लाया जाय और इस बात के लिए लोगों को प्रशिक्षण व जानकारी दी जाये। अगर छीलना ही हो तो अधिक मोटी पर्त न छीलें और छील-कर उसे धूप में या हवा में न रखें। सब्जी को पानी में बहुत मलकर न धोना चाहिये और न ही पानी में काटकर पड़े रखना चाहिए, इससे सब्जियों के खनिज लवण, विटामिन तथा रंग पानी में घुल जाते हैं और उनकी शक्ति कम हो जाती है। जिस पानी में सब्जी उबाली जाये उसे फेंकना नहीं वरन् उसको दाल या अन्य किसी तरह से भोजन में ही प्रयोग कर लिया जाये।

पकायें नहीं उबालें

आमतौर पर लोग तेज आँच में मिर्च-मसालों के साथ सब्जियों को देर तक भूनते हैं,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिससे उनका पौष्टिक तत्त्व नष्ट हो जाता है। सब्जियों का अधिक से अधिक लाभ उठाने के लिए भाप के कुकर का प्रयोग करने पर जोर दिया जाना चाहिये। तेल के टीन को काटकर ऐसे आसान कुकर घर में भी बनाये जा सकते हैं। कार्यकर्त्ता उन्हें बनाकर खुद भी लोगों को सिखा सकें या वितरित कर सकें तो इससे लोगों को और अधिक सुविधा ही मिलेगी।

इसी प्रकार सब्जियों में अधिक मिर्च मसाला भी न रहे। रुचिकर बनाने के लिए उबली हुई सब्जियों में हलका नमक, मिर्च, धनियाँ, जीरा पोदीना, नीबू या अदरक आदि मिला लें तो कुछ हर्ज नहीं पर उन्हें घी-तेल या डालडा आदि में तला जाना उनके पौष्टिक तत्त्वों से हाथ धोना है। इन सब बातों की जानकारी भी बढ़ाई जानी चाहिए। शाक-भाजी का उत्पादन बढ़े। लोग उन्हें अधिक से अधिक आहार में स्थान दें और उनके पौष्टिक गुणों को बचाये रखें तो यह आन्दोलन धर्म, अर्थ और स्वास्थ्य की दिशा में तीन क्रान्ति पैदा कर सकता है।

आन्दोलन का रूप दिया जाए

विदेशी कहा करते हैं कि भारतीय "अनाज के कीड़े" होते हैं वस्तुस्थिति पर विचार करें तो यह कथन कुछ अत्युक्ति नहीं है। पाश्चात्य देशों में जितना लोग साग-सब्जियों और फलों का प्रयोग करते हैं हमारे यहाँ ठीक इससे उल्टा होता है। सब्जियों की अपेक्षा यहाँ अनाज खाना लोग अधिक पसन्द करते हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में महीने में कहीं एक-दो बार लोगों को शाक-सब्जी खाने का अवसर मिलता है। अनाज के भारीपन के कारण लोगों के स्वास्थ्य भी अच्छे नहीं रहते। इधर खाद्य संकट भी सदैव बना रहता है।

इन दोनों बातों को दूर करने के लिए सब्जी का अधिक उत्पादन और प्रयोग आवश्यक है पर यह तभी सम्भव है, जब इस दिशा में विशेष प्रयत्न किये जायें और लोगों में इस प्रकार की मनोवृत्ति उत्पन्न की जाये। यह कार्य केवल युग-निर्माण शाखाओं के द्वारा ही पूरा नहीं हो सकता, उसमें जन-साधारण की भी उतनी ही रुचि जागृत होनी चाहिये। यह कार्य सामाजिक कार्यकर्त्ताओं द्वारा ही विशेष महत्त्व देकर पूरा किया जाये। गाँव-गाँव में सब्जियों की हरियाली उगे। किसान अन्नोत्पादन के साथ-साथ साग-भाजी के उत्पादक को अधिक महत्त्व दें। इसके साथ ही दैनिक आहार में शाक-सब्जियों की मात्रा बढ़े। इससे हमारी कई समस्याओं का समाधान हो सकेगा तो नये वातावरण का निर्माण भी होगा। इस क्षेत्र में अब उपेक्षा न की जानी चाहिए। शाकाहार के महत्त्व को हमें बढ़ाना ही चाहिए इसमें व्यक्ति और राष्ट्र सबका भला है।

घरेलू शाक-वाटिका, शोभा, स्वास्थ्य-सृजन एवं बचत

निरोग काया जिन गिने-चुने नियमों पर निर्भर है, उनके विषय में बहुसंख्य व्यक्तियों को अपरिचित ही देखा जाता है। स्वास्थ्य रक्षा संबंधी यह अज्ञान आहार के विषय में अधिक है। यही कारण है कि हमारे राष्ट्र में कुपोषण संबंधी रोग अधिक होते हैं। इससे अगणित बच्चे व बड़े अकाल मृत्यु को प्राप्त होते हैं तो दूसरी ओर जीवनी शक्ति के गड़बड़ा जाने के कारण रोगों का बाहुल्य भी पाया जाता है।

बहुत कम यह जानते हैं कि आहार की पूर्ति कुछ ऐसे साधनों से भी हो सकती है, जो सर्वसुलभ हैं अथवा न्यूनतम श्रम से जिन्हें उपजाया जा सकता है। शाक-सब्जियाँ हमारे दैनिक प्रयोग में आती हैं। वे लागत की दृष्टि से अन्न की तुलना में सस्ती भी हैं एवं उपलब्ध स्थान पर—घर, आँगन, छत पर थोड़े से साधनों से ही उगाई जा सकती हैं। पोषक तत्त्वों की इनमें बहुलता होती है एवं विविधता के कारण वे रुचिकर भी होते हैं। भारत जैसे विकासशील मूलतः शाकाहारी कृषि प्रधान राष्ट्र के लिए जहाँ हरीतिमा को देवोपम मानकर उनकी अभ्यर्थना की जाती है, इनका महत्त्व और भी आँका जाना चाहिए। अन्य देशों में कुपोषण विलास के साधनों के बढ़ते चले जाने से, आहार की अनियमितता, विकृति एवं अधिक मात्रा के कारण है तथा हमारे देश में आहार के प्रमुख घटकों की अनुपलब्धि के कारण है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाद्यान्न—दालें कभी भी सब्जी का विकल्प नहीं बन सकते। इनका उत्पादन एवं आयात भी एक सीमा तक हो सकता है। फिर उनसे सभी प्रमुख घटकों की पूर्ति कहाँ हो पाती है, जो जीवनी शक्तिवर्धन हेतु उत्तरदायी माने जाते हैं। संतुलित पोषक आहार तो हरी सब्जियाँ एवं अन्न के परस्पर संतुलन से बनता है। हरी सब्जियों की उपलब्धि यदि प्रचुर मात्रा में हो तो वे अन्न का विकल्प भी बन सकती हैं। कम से कम अन्न के उपभोग की मात्रा इससे घट सकती है। इस प्रयोजन हेतु एक ही मार्ग है-घर-घर में शाकवाटिका प्रचलन। प्रज्ञा अभियान ने अपनी दससूत्री रचनात्मक योजना में इसे महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है एवं पौधशाला नर्सरी, बीज भण्डार राष्ट्र में स्थान-स्थान पर स्थापित किये जाने का एक आन्दोलन चलाया है।

पोषण संमुचित रूप से होता रहे संतुलित आहार का व्यक्ति स्वयं चयन कर सके, इसके लिए अनिवार्य है कि जनमानस में संव्याप्त वे भ्रान्तियाँ मिटें जिनके कारण ग्राह्य आहार भी तल-भून कर पोषक तत्वरहित कर दिया जाता है। हरी वनस्पतियाँ कच्चे सलाद के रूप में अथवा उबालकर साधारण से मसालों के सम्मिश्रण से अपने गुण भी नहीं खोतीं स्वाभाविक रूप में शरीर में पहुँचकर बलवर्धन ही करती हैं। बासी-गली, काफी दिनों की रखी शीतगृह में सहेजी गयी सब्ज़ियाँ बाहर से भले ही ताजी नजर आएँ, वीर्य व प्रभाव की दृष्टि से हीन होती हैं। उनसे वह उद्देश्य पूरा नहीं होता, जो सुपोषण के सिद्धान्तों में निहित है। अच्छा यही है कि सब्जियाँ अपने घर, आँगन, छत, छप्पर जो भी स्थान उपलब्ध हो, वहाँ लगायी जायँ। यहाँ उनकी समुचित देखभाल होती रह सकती है, थोड़े से परिश्रम से वर्ष भर घर के सदस्यों के लिये प्रयोग जितनी मात्रा में पैदा हो सकती है तथा 'बागवानी एक श्रेष्ठ व्यायाम' की उक्ति भी सार्थक होती रह सकती है। कन्द लकड़ी के बक्सों में, क्षुप छोटी पॉलीथन की थैलियों में तथा बेलें घर की बाड़ या छप्पर-छत पर चढ़ाकर पैदा किए जा सकते हैं। न्यूनतम स्थान हो तो भी काफी कुछ बागवानी उसमें हो सकती है।

अपवाद वश कहीं स्थान उपलब्ध न हो तो वहाँ सहकारी स्तर पर चार-पाँच परिवार मिलकर साझे की जमीन में शाकवाटिका लगा सकते हैं। सम्मिलित श्रम में जो आनन्द है वह अकेले में नहीं। पारस्परिक सहकार तो इससे बढ़ता ही है, उत्पादन भी इस स्तर का हो सकता है कि न केवल उनकी पूर्ति होती रहे—खाद, निराई-गुड़ाई के उपकरण हेतु अर्थ उपलब्धि भी होती रहे।

महात्मा गाँधी ने खादी एवं स्वदेशी वस्त्र आन्दोलन द्वारा एक जिहाद छेड़ा था, जिसका मूल उद्देश्य था—राष्ट्र को स्वावलम्बी बनाना। न्यूनतम कार्यक्रम बीज रूप में विकसित होकर कितना बड़ा स्वरूप उसका बन गया यह सभी जानते हैं। आज की विश्वव्यापी खाद्य समस्या के परिप्रेक्ष्य में हमें इस न्यूनतम कार्यक्रम साग-भाजी उगाओ स्वास्थ्य बनाओ, अन्न बचाओ जीविका कमाओ' को आन्दोलन का स्वरूप देना होगा। इसकी फलश्रुतियाँ अपरिमित हैं, राष्ट्रीय विकास—एवं स्वावलम्बन की गरिमा जैसे पक्ष तो साथ जुड़े ही हैं।

शुभारम्भ हेतु एक या डेढ़ रूपये के बीज, थोड़ी-सी जमीन एवं सर्वसुलभ घरेलू खाद के प्रयोग से इस आन्दोलन को गति दी जा सकती है। पानी की सिंचाई के बड़े साधनों की भी आवश्यकता नहीं। इतने छोटे स्थान के लिए तो बाल्टी या फुहारे से अल्प समय में ही सिंचाई की जा सकती है। इसप्रकार सब्जी की खेती का लाभ एक या डेढ़ माह के अन्दर ही मिलने लगता है।

उर्वरा शक्ति को बढ़ाने के लिए प्राकृतिक खाद ही सर्वोत्तम है। पत्तियाँ पशुओं का गोबर—पेशाब जमीन में दबा देने से सड़कर खाद रूप में बदल जाता है। भूमि के स्वाभाविक रूप में ही यह घुल-मिल जाता है।इस प्रकार प्राप्त फसल निश्चित ही गुणवत्ता प्रधान होती है। सौ वर्ग फुट भूमि के लिए पाँच टोकरी खाद पर्याप्त रहती है। बीजों के लिए यदि एक केन्द्रीय भण्डार हो तो सर्वोत्तम है यदि ऐसा न हो सके तो बीज स्वयं ही तैयार करना चाहिए स्वथ्य—रोगरहित पौधों से प्राप्त बीज सर्वश्रेष्ठ गुण वाले होते हैं। बीजों को नमी लगने से वे खराब हो जाते हैं। इसी कारण उन्हें नमी मुक्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

काँच की शीशियों में बन्द कर बेकेलाइट ढक्कन से बन्द कर देना चाहिए। विक्रेता के यहाँ से खरीदना पड़े तो दीखने में साफ, पूरे आकार के, घुन से मुक्त बीज ही लेना चाहिए।

बुवाई पौध द्वारा भी हो सकती है एवं बीज को सीधे भूमि में बेकार भी। अंकुरित बीज एक साथ पॉलीथिन की थैलियों में पौध के रूप में तैयार किए जाते हैं। ऐसी पौध एक साथ एक स्थान पर तैयार कर वितरित की जा सके तो उत्तम है। प्रज्ञा अभियान द्वारा शांतिकुंज में ऐसी ही व्यवस्था की गयी है। यदि बीज ही लगाने पड़ें तो लकड़ी का बक्सा, गमले, क्यारी में रखी मिट्टी की अच्छी तरह गुड़ाई करके उसमें पहले खाद मिला लेनी चाहिए। आँगन में उपलब्ध जमीन को क्यारियों में विभाजित कर मिट्टी समतल कर बीज छोड़ देना चाहिए। बीजों के ऊपर एक बारीक तह खाद की देकर फुहारे से पानी धीमे-धीमे देना चाहिए। बीजों के बीच में क्षुप के बढ़ने पर फैलने योग्य स्थान अवश्य रखना चाहिए। यह सावधानी जरूरी है कि वर्षा अथवा सिंचाई से एकत्रित पानी के निकास की समुचित व्यवस्था हो।

उपकरण जो किसी भी घरेलू शाकवाटिका के लिए अनिवार्य माने जाते हैं, वे हैं—फावड़ा, खुरपी, कुदाली, जमीन को समतल करने के लिये करहा, कैंची, चाकू, हजारा एवं वाल्टी, टोकनी जैसी रोजमर्रा के प्रयोग की वस्तुएँ।

जनवरी माह में लगायी जा सकने योग्य सब्जियाँ हैं गाजर, मुली, शलजम, गांठगोभी एवं चुकन्दर पहले पखवाड़े में तथा ककड़ी, लौकी मिर्च, तोरई, खीरा, परवल, बैंगन दूसरे पखवाड़े में। फरवरी में पहले पखवाड़े में वे सब सब्जियाँ लगाई जा सकती हैं, जिनका उल्लेख जनवरी के दूसरे पखवाड़े के लिये किया गया। फरवरी के दूसरे पखवाड़े एवं मार्च के पूरे माह में करेला, टिण्डा, भिण्डी, काशीफल, बैंगन, पौदीना जैसी सब्जी लगाई जा सकती हैं। अप्रैल के पहले पखवाड़े में भिण्डी, खीरा, ककड़ी, पालक, ग्वार, लौकी तथा दूसरे पखवाड़े में चौलाई के साथ पहले वर्णित सभी औषधियाँ लगाई जा सकती हैं। मई के पूरे माह में मूली, खीरा, भिण्डी, पालक, चौलाई लगाई जा सकती हैं। जून में भिण्डी, करेला, सेम व अरबी के अलावा टमाटर, काशीफल, फूलगोभी पूरे माह भर लगाए जा सकते हैं।

जुलाई का प्रथम पखवाड़ा भिण्डी, फूलगोभी, सेम, मूली, ग्वारफली तथा द्वितीय पखवाड़ा शलजम, गाँठगोभी, मिर्च, टमाटर के लिये उपयुक्त है। वर्षा लगभग हर स्थान पर इस माह में आरंभ हो जाती है अतः इनके रख-रखाव, वृद्धि हेतु कुछ अधिक नहीं करना पड़ता। अगस्त माह में फूलगोभी, गाँठगोभी, भिण्डी, बैंगन, सेम, टमाटर, सलाद, मिर्च आसानी से पैदा किए जा सकते हैं, जबकि सितम्बर माह कन्द यथा आलू, प्याज, लहसुन एवं टमाटर, मिर्च, सलाद के लिये सही माना जाता है। इसी माह के दूसरे पखवाड़े में, परवल, मटर, टिण्डा भी लगाए जा सकते हैं। अक्टूबर में उपरोक्त सब्जियों के अतिरिक्त शलजम, गाजर, चुकन्दर, सिमला मिर्च, शकरकन्द भी लगायी जा सकती है। नवम्बर का माह शीत के आगमन का समय है। इसमें गाजर, मूली के अतिरिक्त सलाद, मटर, सेम मुख्य सब्जियाँ हैं, जिनकी बुवाई की जाती है। दिसम्बर में सेम, लौकी, तोरई, पोदीना, करेला प्रथम पखवाड़े में तथा तोरई, शकरकन्द, चुकन्दर, सलाद, टमाटर दूसरे पखवाड़े में लगाये जाने वाली सब्जियाँ हैं। यह एक मोटा सिद्धान्त हुआ। बुवाई का समय एक सप्ताह इधर-उधर भी हो सकता है। लेकिन बीज व पौध लगाते समय इन समय विशेषों का ध्यान रखना जरूरी है। इन सभी में बीजों के बीच में से ७ इंच का तथा कतारों के बीच १२ से १५ इंच का अन्तर रखना ठीक है।

काशीफल लौकी, परवल, तोरई, फल वाली तथा सेम, ऐसी फली वाली तरकारियाँ हैं, जिन्हें बेल के रूप में छप्पर पर छाया-चढ़ाया जा सकता है। बरामदे में, पोर्च में, खम्बों के सहारे भी ये चढ़ जाती हैं। मटर, ग्वांर, मिर्च, टमाटर, भिण्डी, बैंगन, करेला, टिण्डा, खीरा ऐसी तरकारियां हैं, जिन्हें सीमित स्थान पर लकड़ी के बक्सों में पॉलीथिन के बैगों में रखकर छत पर अथवा आँगन में लगाया जा सकता है। यों तो मूली, गाजर, शलजम, चुकन्दर, सलाद, अदरक, लहसुन भी लगाए जा सकते हैं पर इन्हें आलू, अरबी, गाँठगोभी व पातगोभी की तरह क्यारियों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में लगाया जाना ही उपयुक्त माना जाता है। जो भी सब्जी अधिक तादाद में लगानी हो, स्थान उपलब्ध हो तथा कन्द प्रधान सब्जियों को प्रधानता देनी हो तो क्यारियाँ बनाकर बीच में उपयुक्त जगह छोड़ते चलना ही ठीक रहता है।

कुछ बीज कड़े होते हैं और जमने में अधिक समय लेते हैं। अतः इन्हें पहले पानी में भिगो लेना चाहिए। बीजों को कुछ देर बाद निकालकर सतह से चौथाई या आधा इंच नीचे रखकर ऊपर से मिट्टी भुरभुरा दें। हल्का-सा पुआल बिछाकर आवश्यकतानुसार थोड़ा पानी छिड़क दें। पौधे जैसे-जैसे अंकुरित होने लगें पुआल को धीरे-धीरे हटा देना चाहिए। पानी फुहारे से देना ही ठीक है। छोटे-छोटे गमलों में इन पौधों को ६-७ इंच, लम्बे होने व जड़ें मोटी हो जाने पर स्थानान्तरित किया जा सकता है। लगाते ही पानी दे दिया जाय।

आंगन में पर्याप्त स्थान छोटे खेत की आकृति में उपलब्ध हों तो शाक-भाजी की फसल एक बार ही खेतों में बोकर उगाई जाती है। जुताई-बुवाई खाद देने का ढंग ठीक वैसा ही है जैसा कि बड़े खेतों में किया जाता है। निराई-गुड़ाई समय-समय पर होती रहे इसका ध्यान रखना जरूरी है। जो सब्जियाँ रवी की (अक्टूबर-नवम्बर) होती हैं, उनमें पानी की आवश्यकता पड़ सकती है। खरीफ की फसलों को सिंचाई की कम आवश्यकता पड़ती है।

विभिन्न प्रकार की शाक-सब्जियों में दैनिक प्रयोग के लिये वर्ष भर कोई न कोई ऐसी तरकारी उपलब्ध हो सकती है, जिससे पोषक आहार की पूर्ति भली प्रकार होती रहे। स्टार्च-विटामिन्स की प्रधानता की दृष्टि से आलू, शलजम, चुकंन्दर, गाजर, काशीफल भली प्रकार अपनी भूमिका निभा सकते हैं। पाचन संस्थान की दृष्टि से मूली, सलाद, पालक, चौलाई, बथुआ बड़े उपयुक्त ठहरते हैं, शकरकन्दी भारतवर्ष की मुख्य वनस्पति है, जो अन्न की कमी को पूरी करती है। इसे ऋषि अन्न माना जाता है। इसके आटे से पकवान बनते हैं व गरीब जन समुदाय इसे भूनकर बड़े चाव से खाता है।

अदरक, धनियाँ, प्याज, लहसुन, मिर्च, चटनी की जरूरत पूरी करते हैं। आहार को संतुलित बनाने के लिये इससे अधिक स्वादिष्ट सस्ता सुपाच्य सम्मिश्रण और हो भी क्या सकता है ? अदरक क्षुधावर्धक होने के साथ पाचक रसों को उत्तेजित करने वाली उपयुक्त औषधि भी है। सुण्ठी इसी को सुखाकर बनाई जाती है, जो मसालों व वातरोगों में काम आती है।

टमाटर, हर मौसम में पैदा होने वाला समग्र आहार है, जो विटामिन्स से भरपूर है एवं सर्वसुलभ है। वैज्ञानिक इसके गुण गाते हुए नहीं थकते। पुष्टिवर्धक होने के साथ ही यह सुस्वाद, सुपाच्य एवं एक औषधि भी है। उसके अलावा, मटर, पत्तागोभी, सेम, करोंदा, चने की भाजी, मैथी, सोआ सभी गुणों की दृष्टि से भरी-पूरी है।

इस सभी की महत्ता को समझाया जा सके तो कोई कारण नहीं कि पोषण की समस्या से जूझा न जा सके। बागवानी को नियमित व्यायाम रूप में अपनाया जाता रहे एवं रख-रखाव के तरीकों की मामूली-सी जानकारी में रुचि लेकर हरीतिमा संवर्धन के इस शाकवाटिका आन्दोलन को चलाया जा सके तो अन्न का विकल्प साग बनाया जा सकता है, रोगों में नष्ट होने वाली धन राशि बचायी जा सकती है, कई घण्टों के मानव श्रम की हानि को रोका जा सकता है। शाकवाटिका से न केवल शोभा बढ़ती है सृजन-प्रक्रिया को बल मिलता है वरन् बचत भी होती है एवं ब्याज में स्वास्थ्य अलग से अनुदार रूप में मिलता है।

खाद्य संकट का समाधान कुकुरमुत्तों से भी

खाद्य पदार्थों की बढ़ती महँगाई एवं घटती पौष्टिकता को देखते हुए यह आवश्यक हो गया है कि जन सामान्य का सस्ते, सहज उपलब्ध एवं अनुपयोगी समझे जाने वाले खाद्य पदार्थों की ओर ध्यान आकर्षित किया जाय, ताकि उसकी उपयोगिता सिद्ध हो और लोग पौष्टिकता की समस्या से मुक्ति पा सकें। इन खाद्य पदार्थों में जंगल एवं दलदल में उगने वाली एक ऐसी वनस्पति है, जिसे प्रायः घटिया एवं अनुपयोगी समझा जाता है, जबकि फ्रांस एवं रूस जैसे देशों में इसे पर्याप्त पौष्टिकता वाले तत्वों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रूप में स्वीकारा गया है एवं खाद्य के रूप में उसका उपयोग भी किया जाता है। उसका नाम है-कुकुरमुत्ता। इसे छत्रक के नाम से भी जाना जाता है। अंग्रेजी एवं वनस्पति शास्त्र में इसे मशरूम अथवा ऐगेरिकस के नाम से जानते हैं। भारत के जंगलों में यह पर्याप्त मात्रा में होता है।

बहुलता के कारण भले ही इसका मूल्य नगण्य गिना जाता हो और अनुपयोगी प्रतीत होता हो, किन्तु पोषक तत्वों एवं खनिज लवणों की दृष्टि से स्वास्थ्य के लिए यह अत्यन्त लाभकारी है। मनुष्य शरीर के लिए आवश्यक सभी तत्व इसमें पाये जाते हैं। खनिज के रूप में पोटेशियम, फास्फोरस एवं सल्फर के तत्व पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध होते हैं, इसे सब्जी के रूप में लेना १०० ग्राम मधु रस (शहद) खाने के समान है। इसमें जिंक, कॉपर रहने के कारण यह रक्त की जीवनी शक्ति को बढ़ाते हैं। मशरूम छत्रक में विटामिन 'बी-१' 'डी' एवं 'ए' भी पाए जाते हैं।

इसकी उपयोगिता लोगों को काफी अर्से के बाद ज्ञात हुई अन्यथा इसे निकृष्ट पदार्थों की श्रेणी में गिना जाता था। सर्वप्रथम ग्रीक के 'वनस्पति जगत के पिता' एवं दार्शनिक थेयोफ्रेस्टस ने चौथी शताब्दी में इसकी उपयोगिता को सिद्ध किया एवं अपने ग्रन्थ में इसकी विशेषताओं का उल्लेख किया। पाँचवीं शताब्दी में रोम के लेखक एवं प्रकृतिविद् प्लीनी प्रथम ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'नेचुरल हिस्ट्री' में समस्त छत्रक कुकुरमुत्ते वर्ग की उपजातियों को खोजा और सिद्ध किया कि ये वनस्पति वर्ग के अत्यन्त लाभकारी पादप हैं।

१७१८ में फ्रेंच वनस्पति विज्ञानी सेण्टसेन वेलेण्ट ने स्पष्ट रूप से घोषणा की कि ये ईश्वर की अनूठी कलाकृति है एवं विभिन्न परिस्थितियों में अन्न की आवश्यकताओं की इससे पूर्ति की जा सकती है।

मशरूम के अनेक प्रकारों में सभी वर्ग उपयोगी स्तर के हैं। कई स्थानों पर उसके संबंध में अच्छी मान्यता है, जबकि अनेक स्थानों पर उसे अवशिष्ट पदार्थ की उपपत्ति माना जाता है, किन्तु वैज्ञानिक दृष्टि से यह विशुद्ध वनस्पति है। इसकी तीव्रतम अभिवृद्धि ने वनस्पति विज्ञानियों को हैरत में डाल दिया। आरंभ में वे यह नहीं तय कर पा रहे थे कि इसे जन्तु वर्ग में रखा जाय या वनस्पति वर्ग में। अंत में परीक्षणों के आधार पर कहना पड़ा कि ये घास एवं झाड़ियों के ही स्वरूप हैं, जिनमें फूल एवं फल नहीं लगते यह कभी-कभी पेड़ों में भी पाये जाते हैं, जिसमें कार्बोहाइड्रेट तो रहता है, किन्तु क्लोरोफिल का अभाव होने के कारण हरा रंग नहीं होता। ये पेड़-पौधों को नाइट्रोजन युक्त यौगिक देते हैं, जिससे पेड़-पौधे तेजी से बढ़ते एवं जीवनी शक्ति सम्पन्न होते हैं।

मशरूम 'कुकुरमुत्ते तीव्रतम गति से बढ़ने वाली वनस्पति है। तीन दिन में ही ये पूर्ण परिपक्व हो जाते हैं। कुछ मशरूम बंदगोभी के आकार के होते हैं। इसकी अस्सी हजार प्रजातियाँ पाई जाती हैं। पृथ्वी पर ऐसा एक भी स्थान नहीं है, जहाँ पर ये न उगते हों। सोवियत ध्रुव विज्ञानियों ने इसे एंटार्टिक क्षेत्र में भी खोज निकाला है।

रूस, अमेरिका, जापान, आस्ट्रेलिया जैसे देशों में लोग इसे चावपूर्वक खाते हैं और शक्ति प्राप्त करते हैं। ग्रामीण इलाकों में ही नहीं अपितु कई राज्यों के शहरों में भी इसे भोजन में प्रसन्नतापूर्वक सम्मिलित किया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों का तो यह प्रिय भोजन है ही। किन्तु यदि शहरी लोग भी इसकी उपयोगिता को समझकर समुचित रीति से जितना उपलब्ध है, उसका प्रयोग किया करें, तो खाद्य संकट का बहुत कुछ समाधान निकल सकता है एवं कुपोषण से होने वाली हानि से बचा जा सकता है। कुकुरमुत्ते को त्याज्य एवं हेय दृष्टि से देखा जाना उचित नहीं। यदि इसकी उपयोगिता समझी जाय, तो इसमें निहित विटामिन्स, खनिज, लवण, कार्बोहाइड्रेट मनुष्य को दूध, घी, शहद जैसे पदार्थों में पाये जाने वाले पोषक तत्वों की अकेली पूर्ति कर सकता है। अतः लोगों का ध्यान इस ओर भी आकर्षित करना, इसकी पौष्टिकता बताना और खाद्य के प्रमुख विकल्प के रूप में इसकी उपयोगिता समझाना वनस्पति-शास्त्रियों का प्रमुख कर्तव्य हो जाता है। यदि ऐसा संभव हो सके, तो एक सीमा तक ग्रामीण क्षेत्रों में कुपोषण की समस्या से निपटा जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य की खुराक घास भी हो सकती है

मनुष्य का आहार क्या होना चाहिए इसके संबंध में शरीर में पाये जाने वाले रसायनों की पूर्ति कर सकने वाले संतुलित भोजन को अपनाने का परामर्श दिया जाता है। पर कुछ सम्पन्न देशों को छोड़कर उन्हें जुटाना हर किसी का काम नहीं है। इसलिए पर्यवेक्षण से पता चलता है कि संसार के पिछड़े क्षेत्रों में आहार का जो प्रचलन है, वह संतुलित आहार की श्रेणी में नहीं आता। फिर भी पेट की आदत पड़ जाने के कारण वे पचने लगते हैं और स्वस्थ जीवन में कोई हानि नहीं पहुँचाते।

उत्तरी ध्रुव के एस्किमों लोगों का एक ही आहार है—मछली। वे भी उसे पकाने का अवसर कभी-कभी ही पाते हैं अन्यथा उन्हें कच्ची ही खाते रहते हैं। जबकि कच्चा मांस मनुष्य के लिए दुष्पाच्य ही माना गया है। उत्तरी अफ्रीका के वनवासी पशुओं का कच्चा रक्त पीते हैं। जबकि आहार विज्ञान की दृष्टि से वह मनुष्य के लिए हानिकारक हैं।

समुद्रों में लम्बा जीवन बिताने वाले समुद्री काई (शैलाव) तलाशते हैं। अकेले जल-जन्तु ही उन्हें रास नहीं आते ? भारत के विभिन्न भागों में ज्वार, बाजरा, मक्का आदि से काम चलता है। गेहूँ और चावल का उपयोग तो सम्पन्न लोग ही कर पाते हैं। पर उन सस्ते अनाजों के सम्बन्ध में कुपोषण की बात कही जाने पर भी पीढ़ियों से प्रयुक्त होते चले आ रहे हैं।

वनवासी क्षेत्रों के लोग कन्द-मूल खाकर काम चला लेते हैं, जबकि वे सन्तुलित आहार की परिभाषा में नहीं आते। पशुओं की प्रवृत्ति और भी विचित्र होती है। वे घास और मांस में भी अपनी रुचि के अनुसार खोजबीन करते हैं।

अन्न संकट और बढ़ती जनसंख्या को देखते हुए विचारशील लोग मनुष्य की आहार प्रकृति में अन्तर करने की आवश्यकता पर बहुत जोर देते हैं। उनका प्रतिपादन शाक-भाजियों को उगाने-खाने का है क्योंकि फसल जल्दी आती है और मात्रा भी अधिक मिलती है। साथ ही सुपाच्य भी है।

इससे भी एक कदम आगे बढ़कर गेहूँ की पौध जब तक उसके डंठल कड़े न हों पानी में पीसकर लेते रहने को अच्छी किस्म का टॉनिक माना गया है। इसका प्रयोग कमजोर रोगियों पर करने पर आश्चर्यजनक लाभ होते देखा गया है। समुद्री शैलाव (घास) तथा तालाबों के ऊपर तैरने वाली काई के सम्बन्ध में भी ऐसा ही अभिमत व्यक्त किया गया है। इन घासों को अच्छी तरह धोकर साफ कर लेना आवश्यक है।

पशुओं द्वारा खाई जाने वाले दूब के सम्बन्ध में प्रयोग करते हुए एक व्यक्ति ने जीवन का अधिकांश भाग व्यतीत कर दिया। वे सज्जन हैं प० जर्मनी में जन्मे वाल्टर कार्लेनियस। वे दूब के ऊपर वाला कोमल हिस्सा लेते हैं और दांतों से उसे भली प्रकार पीसकर उदरस्थ करते हैं। उनकी आयु इन दिनों ७० वर्ष से ऊपर है पर अपने साथ वालों में सबसे अधिक ताकतवर माने जाते हैं। अब तक ४६ बार तैराकी की विश्व चैम्पियनशिप जीतकर एक कीर्तिमान स्थापित कर चुके हैं। लोहे की मोटी छड़ें हाथ से मोड़ देना उनकी कलाइयों की मजबूती का प्रमाण है। वे गरीबी के कारण घास नहीं खाते, वे उसके गुणों पर मुग्ध हैं। वे इसके अतिरिक्त दूध, घी, रोटी, अण्डे आदि भी नहीं लेते हैं क्योंकि घास उनकी दृष्टि में पूर्ण भोजन है। जब बड़े-बड़े जानवर उसके सहारे जिंदगी काट लेते और निरोग रहते हैं, तो कोई कारण नहीं कि मनुष्य उस पर निर्भर न रह सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मांसाहार : कितना अनुचित कितना उचित ?

मनुष्यता का लक्षण धर्म है और धर्म का मूल दया में निहित है। जिस मनुष्य के हृदय में दया नहीं वह मनुष्यता के पूर्ण लक्षणों से युक्त नहीं कहा जा सकता। यह दया मनुष्य की वह करुण भावना ही मानी जायेगी, जो संसार के प्रत्येक प्राणी के लिये बराबर हो ! उन मनुष्यों को कदापि दयावान नहीं कहा जा सकता, जो अपनों पर कष्ट अथवा आपत्ति आई देखकर तो दुःखित हो उठते हैं, किन्तु दूसरों के कष्टों के प्रति उनमें कोई सहानुभूति अथवा संवेदना नहीं होती और वे मनुष्य तो क्रूर अथवा बर्बर की श्रेणी में रक्खे जावेंगे, जो अपने तुच्छ स्वार्थ के कारण दूसरों को असह्य पीड़ा देते हैं।

करुणा, दया, क्षमा, सम्वेदना, सहानुभूति तथा सौहार्द्र आदि गुण एक दया के ही अनेक रूप अथवा उसकी ही शाखा-प्रशाखाएँ हैं। जब तक जिसमें इन गुणों का अभाव है, मनुष्य योनि में उत्पन्न होने पर भी उसे मनुष्य नहीं कहा जा सकता।

इस प्रकार मनुष्यता की परिभाषा करने पर माँस भोजियों पर क्रूरता का आरोप आता है। क्रूरता मनुष्यता का नहीं पाशविकता का लक्षण है। फिर भला इस प्रकार पाशविक प्रवृत्ति रखने वाला मनुष्य अपने को सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी किस मुँह से कहता है ?

यह बात सही है कि अध्यात्म-जिज्ञासा मनुष्यता का एक समुन्नत, उदात्त एवं मांगलिक सार है। मनुष्यता की सार्थकता भी वास्तव में इसी में है कि मनुष्य अध्यात्म मार्ग से चलकर परमात्मा को पहचाने, उसे प्राप्त करे। अपने इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिये मनुष्य को धर्म के लक्षणों को अपनाना ही होगा, दयावान् बनना होगा।

जैसा अन्न वैसा मन

माँस भोजन मानवता की स्थापना एवं स्थिरता में बहुत बड़ा बाधक है। आन्तरिक उन्नति के लिये मनुष्य के तन-मन और बुद्धि निर्विकार होने चाहिये। मनुष्य के इन तीनों साधनों का निर्माण उस अन्न, उस भोजन से होता है, जो मनुष्य खाता है। भोजन से रक्त माँस, मज्जा सारे शारीरिक तत्व बनते हैं और अपने में वे सारे गुण-अवगुण समाहित कर लेते हैं, जो उस भोजन अथवा अन्न में होते हैं। यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि "अन्न के अनुसार मन बनता है।" यही कारण है कि तत्वदर्शी ऋषि-मुनियों ने भोजन की स्वच्छता एवम् उपयुक्तता पर बहुत बल दिया है। यदि मानव के निर्माण में, उसकी प्रवृत्तियों के बनने में भोजन का कोई विशेष प्रभाव न होता तो मनीषीजन उसकी खोज, उसके गुण-अवगुण तथा उपयुक्तता-अनुपयुक्तता पर माथा-पच्ची न करते। उनके पास इतना समय कहाँ था कि वे अनावश्यक बातों में अपनी बुद्धि को उलझाते और आयुर्वेद के विद्वान् रचयिता पथ्य-अपथ्य पर ही इतना विवेचन करते।

माँस तमोगुण प्रधान भोजन है। इसके खाने से मनुष्य स्वभाव में क्रोधमयता की बहुतायत हो जाती है। मनुष्य भयानक रूप से इसके वशीभूत रहकर मानवता की सौम्य प्रकृति से दूर हट जाता है। मानवीय तत्वों की प्रगति के लिये मनुष्य को अपने भोजन का समुचित निर्वाचन करना होगा। उसे खाने के लिये ऐसी ही चीजें चुननी होंगी, जो मन की असुरता को मिटायें और बुद्धि की सात्विकता बढ़ाने में सहायक हों। यह निर्विवाद सिद्ध है कि यह उत्तरदायित्व सम्पादन करने में सात्विक और केवल सात्विक भोजन ही सफल हो सकता है। आज हमें खाद्य-अखाद्य की विवेचना करने में समय और श्रम नष्ट करने की आवश्यकता नहीं। मनीषियों ने मनन और खोजियों ने प्रयोगों और आयुर्वेदियों ने अनुभव के आधार पर भक्ष्य-अभक्ष्य का प्रश्न पूर्ण रूप से हल कर दिया है। मनुष्य का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

स्वाभाविक एवं प्राकृतिक भोजन में माँसाहार के लिये कोई स्थान नहीं है।

निषिद्ध भोजनों में माँस भोजन का पहला नम्बर है, क्योंकि मनुष्य के तन, मन, बुद्धि विवेक तथा आत्मा का नाश कर देता है। यह न केवल अध्यात्म मार्ग से ही भ्रष्ट कर देता है अपितु मनुष्यता से भी गिरा देता है। अन्न-संयम से यदि मनुष्य देवता न भी बने तो कम से कम मनुष्य तो बना ही रहे। मनुष्यता से विमुख होकर पाशविकता अथवा पैशाचिकता अंगीकार कर लेना सृष्टि के सर्वश्रेष्ठ प्राणी मनुष्य के लिये एक धिक्कारपूर्ण लांछन के अतिरिक्त क्या कहा जा सकता है ?

मानवीय विशेषता का परित्याग न किया जाय

मैत्री एवं मर्यादा, दो वे आधारभूत गुण हैं, जिनके आधार पर मनुष्य-प्राणी अन्य पशु-पक्षियों से अलग माना जाता है। जिसमें यह दो आधारभूत गुणों की कमी है, उसे और कुछ भी कहा जाये मनुष्य कहना कठिन होगा। करुणा, अहिंसा, क्षमा, सम्वेदना, सहानुभूति तथा सौहार्द्र आदि गुण मैत्री के अन्तर्गत ही आते हैं। जिसके हृदय में समस्त प्राणियों के प्रति मैत्री भाव होगा, वह किसी को अनुचित पीड़ा न पहुँचायेगा, वरन् औरों के दुःख को भी स्वयं अपना दुःख अनुभव करेगा।

इसी प्रकार संयम-नियम, विधि-विधान आदि व्यवस्थायें मर्यादा के अन्तर्गत आती हैं। यह गुण भी मनुष्य में ही होते हैं, जिनके कारण यह समाज के रूप में रह रहा है और अपने अधिकार व कर्त्तव्य को ठीक से समझकर किसी की मर्यादा सीमा का उल्लंघन नहीं करता। समाज में अशान्ति तथा संघर्ष होता तब ही है, जब कोई एक मर्यादा की सीमा का उल्लंघन करता है। पशुओं अथवा अन्य जीव-जन्तुओं में न तो मैत्री भाव होता है और न कोई मर्यादा। इसीलिये इस मैत्री एवं मर्यादा के कारण मनुष्य सृष्टि का सर्वश्रेष्ठ प्राणी माना जाता है और वास्तव में है भी।

अब यदि सर्वश्रेष्ठता का मुकुट पहनते हुये मनुष्य अपने इन आधारभूत गुणों का परित्याग करता है तो उसे अपनी इस पदवी से अपदस्थ होना ही होगा। क्रूर कर्मों में हत्या सबसे बढ़कर है। किन्तु माँस भोजन तो उससे भी घोर क्रूर कर्म है। माँस के लिये एक तो मूक, निरपराध एवम् विवश पशुओं की गर्दन पर छुरी फेरकर उनकी हत्या की जाती है, फिर उसके शव के टुकड़े-टुकड़े करके रसोई में पकाया जाता है, फिर दाँतों से चबा-चबाकर उदरस्थ किया जाता है और इतना करने के बाद स्वादपूर्ण सन्तोष की श्वाँस ली जाती है। उफ ! कितनी भयंकर क्रूरता है ! कितना पैशाचिक कृत्य है ! कोई हत्यारा भी अपने शत्रु को अधिक से अधिक मारकर ही छोड़ देता है, किन्तु यह माँस भोजी कोई अपराध न करने पर भी अकारण पशु को, उस पशु को जो न तो उसका इरादा समझ सकता है, न कोई विरोध कर सकता है, न कोई शिकायत कर सकता है, न दया की भीख माँग सकता है और न अपनी पीड़ा कह सकता है, जबर्दस्ती पछाड़कर मारता है, उसकी गर्दन काटता है, उसकी बोटी-बोटी करता है और फिर हर्षपूर्वक पकाकर परिवार के साथ बैठकर भोग लगाता है, उसे खाता है, स्वाद लेता है और सन्तोष प्रकट करता हुआ तारीफ किया करता है।

यह कौन-सी मनुष्यता है, कौन-सी सभ्यता है ? इन सर्वश्रेष्ठता का दम्भ करने वालों से पूछा जाये कि क्या तुम्हारी सर्वश्रेष्ठता का यही लक्षण है, तुम्हारी सभ्यता की यही पहचान और तुम्हारी मनुष्यता की यही कसौटी है ? उस अहानिकर एवम् निरीह पशु का क्या अपराध था ? उसने तुम्हारा क्या बिगाड़ा था ? जिसे उसके स्वजनों और साथियों के बीच से पकड़कर आपने काट डाला और पकाकर खा लिया। अभी थोड़ी देर पहले जो ईश्वर की सृष्टि के बीच खेलता-खाता हुआ खुश हो रहा था, उस प्राणी को आपने बिना किसी भय, विचार अथवा भाव के ऐसे मार डाला मानो यह जीवन की कोई स्वाभाविक क्रिया है, जिस पर सोच-विचार करने की आवश्यकता ही नहीं। उस निर्दोष पशु का आपकी सीमा में यदि कोई अपराध था तो यह कि वह निर्बल था, आपसे कमजोर था, आपके आश्रित और आप पर विश्वास करने वाला था, न जाने वे तथाकथित मनुष्य किस मिट्टी के बने होंगे, जो इतना क्रूर कर्म कर सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम निर्दयी न बनें

मनुष्य की शोभा दयालु होने में है, धर्मात्मा बनने में है, न कि मुर्दा पशुओं का माँस खाने में। एक बार यदि मनुष्य अपनी उस तस्वीर की कल्पना करके देखे तो सही—कि जब वह कसाई की दुकान पर लोथड़ों के बीच बैठा हुआ उसके अंग-प्रत्यंगों को निर्दयतापूर्वक कटवाता है, तब कैसा लगता है ? और बताये कि उसमें और उन गीधों-चीलों और कौओं में क्या अन्तर है, जो दुकान के आस-पास एक टुकड़े के लालच में मँड़राते और बैठे रहते हैं। जरा उस कसाई को ध्यान से देखो जो उस कंटे हुए पशु को लगातार खण्ड-खण्ड कर रहा है और जिसके हाथ-पैरों, मुँह और कपड़ों पर खून के छींटे और छिछड़े पड़े हैं, क्या उसमें और किसी पिशाच-प्रतिमा में कोई अन्तर मालूम होता है ? कितनी वीभत्सता और भयंकरता है इस महादृश्य में ! ऐसा नहीं कि इसका अनुभव निरामिष भोजियों को ही होता हो और मांस भोजी इससे प्रभावित न होते हों, किन्तु दुर्भाग्यवश वे स्वाद अथवा संस्कारोंवश उसे अनुभव करते हुये उपेक्षा कर देना चाहते हैं। देखकर भी अनदेखा और समझते हुये भी नसमझी का स्वाँग करते हैं। यह कितनी बड़ी आत्मवञ्चना है ?

मनुष्य जिन पशुओं का मांस खाता है उनके पाशविक दोष मनुष्य में भी आ जाते हैं। वह काम व क्रोध की वृद्धि हो जाने के कारण बहुत हद तक मानवीय मर्यादाओं का उल्लंघन करने की दुर्बलता के वशीभूत रहने लगता है। पशु की जड़ता और दुर्बुद्धिता उसमें भी आ जाती है। मनुष्य के आकार में रहते हुये भी मनुष्य प्रवृत्तियों से बहुत कुछ पशु जैसा हो जाता है।

मांस भोजन और क्रोध की प्रवृत्ति को इस सीमा तक बढ़ा देता है कि उसका स्वभाव अहंकार, आवेश तथा अधैर्य से भर जाता है। जरा-जरा-सी बात पर लड़ पड़ना, मार-पीट कर बैठना उसका स्वभाव बन जाता है। हत्या, चोरी, डकैती, बलात्कार, व्यभिचार आदि अपराध करने वालों में अधिकतर मांस भोजी ही होते हैं। मांस भोजी के रक्त में इतनी ऊष्मा रहती है कि एक नगण्य-सा कारण आने पर ही वह बारूद की तरह भड़क उठता है और उसकी निर्बल बुद्धि उसे कोई अपराध करने से नहीं रोक पाती। आज विश्व पर दृष्टि डालकर स्पष्ट देखा जा सकता है कि युद्ध उकसाने और हर समय उसकी बात करने वाले राष्ट्रों में अधिकतर माँस भोजी राष्ट्र ही हैं। यदि संसार से माँस-भोजन का बहिष्कार कर दिया जाये तो संसार से युद्ध की प्रवृत्तियाँ कम से कम पिचहत्तर प्रतिशत दूर हो जायें।

मनुष्य की उंगली में जब एक छोटी-सी फाँस भी लग जाती है तो वह पीड़ा से कराह उठता है। तब फिर मांस भोजी मनुष्य यह क्यों अनुभव नहीं करता कि वह जिस पशु की गर्दन पर छुरी घुमाता है, उसे कितना कष्ट होता होगा ?

निरीह प्राणियों पर अत्याचार

यदि हमारे बच्चे को कोई किसी अपराध के कारण ही मार बैठता है या कोई कठोर व्यवहार कर देता है, तब तो हम आपे से बाहर होकर उसे बुरा-भला कहने लगते हैं, किन्तु किसी पशु के सुकुमार छौने को मारकर उसका मृत मांस खाने में न तो अपनी निन्दा करते हैं, न अपने पर क्रोध करते हैं और न कोई दण्ड देते हैं। बल्कि उसे उल्टा अपना अधिकार समझ लेते हैं यह इसीलिये ही तो कि उन निरीह पशुओं का कोई साथी नहीं और न वे स्वयं संगठित होकर एक-दूसरे की सहायता कर सकते हैं। उनका पक्ष लेने और उनकी ओर से विरोध करने वाला कोई इस संसार में नहीं है।

यदि यह दीन पशु बोलते नहीं, आपका विरोध नहीं करते तो यह नहीं सोच लेना चाहिये कि इनको पीड़ा नहीं होती। इन मूक एवम् अबोध पशुओं की तरह अपने बेजुबान बच्चों, छोटे-छोटे भाई-बहनों को तो कोई मारता नहीं। यदि किसी की बेजुबानी ही मनुष्य को उनके मार सकने का अधिकार देती है तो फिर वह अपने मूक-शिशुओं को क्यों नहीं मारता ?

'मित्रस्य चक्षुसा सर्वाणि भूतानि समीक्षे'।

'आत्मवत् सर्वभूतेषु' तथा—'सर्वभूत हिते रताः'।।

के गुण ही मनुष्य की शोभा है। मनुष्य की शोभा पशु-पक्षी तथा जीव-जन्तु खाने में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं है। आहार-विहार और आचार-विचार की उच्चता ही मनुष्य को अन्य जीव-जन्तुओं से भिन्न करके उसे सर्वश्रेष्ठ की पदवी पर पहुँचाती है। यदि वह उसका त्याग कर उनकी ही तरह अपना रहन-सहन बना ले तो मनुष्य को क्या अधिकार रह जाये कि वह अपने को सृष्टि का सरताज कहे। आज यदि मनुष्यों की तरह ही पशुओं में भी बुद्धि और प्रतिरोध की शक्ति होती तो मनुष्य उनको इस प्रकार न मार पाता और न सता पाता। इस पर भी जो सिंह व्याघ्र आदि पशु उससे शक्तिशाली हैं, उससे अधिक हिंस्र हैं, उनके पास तो माँस भोजी मनुष्यों की छाया तक भी नहीं जाती। सबल से डरना और निर्बलों को सताना मनुष्यता नहीं है।

बहाने न ढूँढ़ें

मांस भोजी व्यक्ति अपने समर्थन में बहुधा यह कहा करते हैं कि वे तो कसाई से माँस खरीदकर लाते हैं, स्वयं अपने हाथ से किसी पशु का वध नहीं करते। यह दलील इसलिये ठीक नहीं बैठती कि यदि किसी कसाई से पूछा जाय तो वह यह कहता है कि चूँकि लोग मांस खाना पसन्द करते हैं, उसकी मांग करते हैं इसलिये वह पशुओं को मारता है। यदि लोग मांस न खायें तो वह पशुओं को कदापि न मारेंगे।

बहुत-से मांस भोजी यह दलील देते हैं मांस भोजन-स्वास्थ्य के लिये लाभदायक है। यह शाकाहार की अपेक्षा अधिक शक्तिदायक भी होता है।

मांस भोजन के समर्थकों की यह दलील भी बहुत ही लचर और कमजोर है। इसके उत्तर में सबसे पहले यह कहा जा सकता है कि क्या जो मांसाहार नहीं करते वे स्वस्थ नहीं होते ? क्या शाकाहारी मांस भाजी की अपेक्षा कमजोर होते हैं ? ऐसा नहीं। मांस भोजन से शक्ति का विश्वास एक भ्रान्त धारणा मात्र ही है। मांस भोजी अपने में जिस शक्ति का अनुभव करते हैं, वह वास्तव में उनकी शारीरिक उत्तेजना मात्र ही होती है। मांस भोजी कोई काम बड़े वेग से प्रारम्भ तो करता है, किन्तु थोड़ी देर में ही थक जाता है। किसी काम को पूर्ण तन्मयता के साथ बहुत देर तक नहीं कर सकता। काम करने में उसकी मांसपेशियाँ बहुत शीघ्र गर्म हो जाती हैं। जिसके कारण वह शीघ्र ही शिथिल हो जाता है, मांस भोजी अपने मस्तिष्क में एक उत्तेजना, एक आवेश और एक रोष लेकर काम करता है। उसे कोई काम करने में वह सात्विक रुचि नहीं रहती, किसी काम के करने में जिसकी आवश्यकता होती है। मांस भोजी निश्चित रूप से कोई सूक्ष्म एवं कलापूर्ण कार्य नहीं कर सकता। वह अधिकतर स्थूल काम करने में ही सक्षम होता है। यह वास्तविक स्वास्थ्य का लक्षण नहीं है।

यह वैज्ञानिक सत्य है जो भोजन आमाशय पर अधिक दबाव डाले बिना आसानी से पच जाता है, वही भोजन ठीक-ठीक स्वास्थ्यदायक होता है। मांस भोजन संसार का सबसे गरिष्ठ भोजन है। वह कभी भी पूरी तरह से मनुष्य के शरीर में नहीं पच सकता और जो कुछ पचता है वह भी पूर्ण स्वास्थ्यदायक तत्व उत्पन्न नहीं करता। अपाच्य भोजन स्वास्थ्यदायक नहीं अस्वास्थ्यकर ही होता है। मांस भोजी एक बार निरामिष भोजी से भले ही मोटा-तगड़ा दिखाई दे, किन्तु वह अन्दर से बहुत ही कमजोर होता है।

शक्ति की परीक्षा एवं उदाहरण को ले लिया जावे तो देखा जा सकता है कि विशुद्ध तृण एवम् शाकाहारी जीव जैसे—हाथी, घोड़ा, बैल, गेंडा, सूअर गुरिल्ला आदि शेर, चीता, स्यार, भेड़िया कुत्ता, बिल्ली जैसे मांसाहारी जीवों से कहीं अधिक शक्तिशाली होते हैं। सूखा भूसा खाने वाले बैल की जगह पर मांसाहारी शेर को हल में जोत दिया जाये तो दस कदम भी नहीं खींच सकता। दस भेड़िये एक ऐसी गाड़ी को नहीं खींच सकते जिसको एक बैल खींच सकता है। एक हाथी, एक गैंडा शैर जैसे बीस हिंस्र जीवों को एक कच्चे ढेल की तरह कुचलकर रख सकते हैं।

एक गुरिल्ला वृक्ष को हिलाकर रख देता है। एक लंगूर एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर कूदते समय यदि चाहता है तो बिना किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सहारे के आधे बीच से ही तड़पकर वापस आ सकता है। यह सब शाकाहार का ही चमत्कार है, शाकाहारी मांसाहारियों की अपेक्षा कहीं अधिक शक्तिमान्, दमदार और स्थैर्य्यवान् होते हैं। मांस तमो दोषपूर्ण भोजन है और तामस प्रधान व्यक्ति कभी भी सच्चे अर्थों में स्वस्थ नहीं रह सकता।

शाकाहारियों की अपेक्षा मांसाहारी कहीं अधिक अस्वस्थ पाये जाते हैं। पशुओं के मांस में ऐसे बहुत-से तत्व होते हैं, जो मानव शरीर के अनुकूल नहीं होते और अनेक प्रकार की व्याधियों को जन्म देते हैं। जिस प्रकार शाक-सब्जियों की खराबी मनुष्य को स्पष्ट दिखाई देती है और वह उनको निकालकर फेंक देता है, उस प्रकार पशु मांस में रोग के कीटाणु दिखाई नहीं देते और खाने पर वे कीटाणु मांस भोजी के शरीर में प्रवेश कर जाते हैं और उसे रोगी बना देते हैं। बहुत-से ऐसे रोग होते हैं, जो प्रत्यक्ष में तो दिखलाई नहीं देते, किन्तु मनुष्य शरीर को अन्दर ही अन्दर घुलाकर रख देते हैं। बहुत-से बचपन के रोग जवानी में और जवानी के रोग बुढ़ापे में उभर-कर मनुष्य की जिन्दगी दूभर कर देते हैं।

असुरता का पथ न अपनावें

मनुष्य के अन्दर देवत्व और असुरता दोनों का निवास है। वह जिसे चाहे प्रोत्साहन देकर बढ़ा सकता है और जिसे चाहे उपेक्षा करके हतोत्साह कर सकता है। मनुष्य के अन्दर देवत्व के प्रमुख चिन्ह हैं—दया, उदारता, प्रेम, सेवा, परोपकार। यह तत्व जिसने अपने अन्दर जितने विकसित कर लिये, वह उतने ही अंशों में देवत्व के समीप माना जा सकता है। इसके विपरीत जिसमें निष्ठुरता, अनुदारता, द्वेष, शोषण, स्वार्थ की मात्रा जितनी अधिक है, उसे उतने ही अंशों में असुर कह सकते हैं। धर्म और ईश्वर की मान्यता का एकमात्र निष्कर्ष यह है कि मनुष्य असुरता से बचे और देवत्व की ओर अग्रसर हो।

इस दृष्टि से आज की स्थिति बहुत ही शोचनीय है। लोग कहते हैं कि हम धर्म और ईश्वर को मानते हैं, पर व्यवहार उनका इससे उल्टा होता है। निर्दयता और अत्याचार का व्यवहार करने वाले वस्तुतः आस्तिकता और धार्मिकता से दूर ही कहे जा सकते हैं। जिनके अन्तःकरण में ईश्वर और धर्म की किरणें पहुँचेंगी, उनमें दयालुता अवश्य उत्पन्न होगी। वह दूसरे के दुःख में दुःखी होने से अपने आपको रोक न सकेगा। जिसे दूसरे के दर्द में अपने दर्द जैसी अनुभूति होती है, उसे ही इन्सान कहना चाहिये। दया ही इन्सानियत का दूसरा नाम है। आज लोग अपने को इन्सान तो कहते हैं, पर इन्सानियत से दूर हटते जा रहे हैं।

मांस खाने की न तो उसकी प्रवृति है और न आवश्यकता। संसार में अन्न और वनस्पति इतनी पर्याप्त मात्रा में मौजूद हैं कि वह खुशी-खुशी उनसे अपना जीवन-क्रम चला सकता है। पौष्टिक पदार्थों की दृष्टि से दूध, घी, मेवे, फल आदि एक से एक उत्तम पदार्थ संसार में मौजूद हैं, पर शैतानियत का कुचक्र तो देखिये, लोग सीधे, सरल और शान्तिदायक मार्ग को छोड़कर बेचारे निर्दोष, निरीह जानवरों के खून के प्यासे बने रहते हैं। जीभ के स्वाद के कारण मांस को अपनी खुराक में स्थान देते चले जा रहे हैं। कहा यह भी जाता है कि इसमें पौष्टिक तत्व है। इससे ताकत आती है, अनाज की कमी की इससे पूर्ति होती है, पर यह सब बहाने मात्र हैं। जीभ का स्वाद ही प्रधान कारण है, दूसरा कारण हत्या जैसे नृशंस कार्य में भागीदार बनकर अपने को वीर, पराक्रमी, साहसी आदि मानने की आत्म-वञ्चना है। मांस खाना स्वास्थ्य की दृष्टि से अनावश्यक ही नहीं, हानिकारक भी है। उससे बल वृद्धि होना तो दूर और उलटी नाना प्रकार की बीमारियाँ आ धेरती हैं। केवल नास्तिक ही यह कह सकते हैं कि धरती माता की छाती में अपने पुत्रों को पिलाने लायक रस नहीं रहा। हाथ-पैरों पर और आत्मा पर थोड़ा-सा जोर दिया जाये तो धरती से हम इतना खाद्य प्राप्त कर सकते हैं कि लोक तो क्या तीन लोक उससे आनन्दपूर्वक अपना काम चला सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सत्पुरुषों ने सदा ही इस कुकर्म से लोगों को हटाने के लिये प्रयत्न किया है और इस बात पर जोर दिया है कि लोग इस अनीति से दूर हटें। सभी मजहबों के धर्म-ग्रन्थों ने एक स्वर से मांसाहार का निषेध किया है और इस बुराई पर अड़े हुये लोगों को कटु शब्दों में धिक्कारा है। हिन्दू धर्म में तो पग-पग पर अहिंसा का प्रतिपादन है, पर अन्य धर्म जो हिंसा और मांसाहार पर विश्वास करते हैं, उनके धर्म-ग्रन्थों ने भी इन दुष्प्रवृत्तियों के विरुद्ध बहुत कुछ कहा है। बाइबिल में एक स्थान पर आया है—"ऐ देखने वाले ! देखता क्यों है ? काटे जाने वाले जानवरों के (कष्टों के) लिये अपनी जुबान खोल।" इस मन्त्र का उद्देश्य यह है कि भले आदमी पशु-हत्या को चुपचाप सहन न करें वरन् इन निरीह प्राणियों के कष्ट मिटाने के लिये मांसाहार के विरुद्ध आन्दोलन करें। महात्मा ईसा ने स्पष्ट कहा है—"तू किसी को मत मारे। तू मेरे समीप मनुष्य बनकर रह। प्राणियों की हत्या मत कर ! उनका मांस न खा।"

कुरान में लिखा है कि—"हरा पेड़ काटने वाले, मनुष्यों की खरीद-फरोख्त करने वाले, जानवरों को मारने वाले तथा परस्त्रीगामी को खुदा माफ नहीं कर सकता। खुदा उसी पर रहम करता है, जो उसके बनाये जानवरों पर दया दिखाता है।"

मनु भगवान् ने तो मांसाहार का समर्थन करने वाले तक के हत्यारा कहकर पुकारा है—

अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रय विक्रयी।
संस्कर्त्ता चोपहर्ता च खादकश्चेति घातका।।

—मनुस्मृति ५—५१

मांसाहार का समर्थन करने वाला, मांस भक्षण की अनुमति देने वाला, मांस खरीदने या बेचने वाला, पकाने वाला और खाने वाला यह सभी हत्यारे कसाई हैं।

महाभारत में कहा गया है—मांस खरीदने वाला धन से पशु की हत्या करता है, खाने वाला स्वाद द्वारा हत्या करता है, मारने वाला छुरे से हत्या करता है। यह सभी हत्यारे हैं। जो दूसरों का मांस खाकर अपना मांस बढ़ाना चाहते हैं, उनसे नीच और कौन होगा ?

भीष्म पितामह ने धर्मराज युधिष्ठिर को उपदेश देते हुये महाभारत में कहा है—"जो मांस खाते हैं वे भी अगले जन्म में उन मरे हुये प्राणियों द्वारा खाये जाते हैं। माँसाहारी जिस योनि में भी जन्म लेते हैं, उसी में अस्त्रों से काटे जाने वाला दण्ड भोगते हैं। अपने पापों के कारण कुम्भीपाक नरक में डाले जाते हैं और गला घोंट-घोंटकर भारी त्रास के साथ सताये जाते हैं।

भारतवर्ष अनादि काल से इस पाप से मुक्त रहा है। सभ्य समाज में यहाँ सभी लोग माँसाहार को घृणा की दृष्टि से देखते रहे हैं। जो इस व्यसन में लिप्त थे, उन्हें असुर, चाण्डाल आदि निन्दनीय शब्दों से पुकारा जाता रहा है। विदेशी यात्री जो समय-समय पर यहाँ आते रहे हैं, उनने अपनी यात्रा के अनुभव अपने देशों में प्रकाशित कराये हैं, उससे इसी ऐतिहासिक तथ्य की पुष्टि होती है।

यात्री फाह्यान् ने सन् ३९९ से ४१४ तक १५ वर्ष उत्तर भारत का भ्रमण किया था। उसमें लिखा है—"चाण्डालों के अतिरिक्त कोई भी सभ्य भारतवासी किसी जीवित प्राणी का वध नहीं करता था, न मादक पेय पीता था। कसाईखाने और शराबखाने की दुकानें इस देश में कहीं नहीं थी।"

रोमनयात्री मार्कोपोलो सन् १२६० से १२९५ तक भारत भ्रमण करता रहा। उसने लिखा है—"चाण्डालों को छोड़कर और कोई गाय भैंस आदि बड़े जानवरों का मांस नहीं खाता था। भारतवासी किसी जीव की हत्या नहीं करते। यदि किसी को बकरे आदि के मांस की आवश्यकता होती थी तो उसे इस कार्य के लिये अरब या अन्य किसी विदेशी से यह कार्य कराना पड़ता था।"

जे. टी. ह्वीलर द्वारा लिखित 'मुसलमानी शासन काल में भारतवर्ष' नामक पुस्तक में श्री डैलावैले नामक एक प्रत्यक्षदर्शी की गवाही अंकित की गई है—"भोजन की दृष्टि से हिन्दू प्रदेशों की यात्रा करना बड़ा कठिन था। खान-पान के मामले में हिन्दू बड़े कट्टर थे। इनके यहाँ मांस-मछली तो नाम मात्र को न थी। आटा, चावल, दूध भी मोल नहीं देते थे"। इसी पुस्तक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में डा. जान फ्रायर का एक बयान अंकित है—"हिन्दू लोग अन्न, शाक और फलों पर जीवन-निर्वाह करते हैं। वे किसी जीव का मांस नहीं खाते। अण्डे खाने का भी प्रचलन बिल्कुल न था।"

स्वास्थ्य पर दुष्प्रभाव

यह कहना सरासर गलत है कि मांस खाने से स्वास्थ्य अच्छा बनता है या ताकत आती है। यह केवल एक मूढ़ विश्वास और किम्बदन्ती मात्र है। वैज्ञानिक परीक्षणों ने इसे सर्वथा असत्य साबित किया है और बताया है कि मांस खाने से ताकत बढ़ना तो दूर उल्टे अनेकों प्रकार के रोगों की वृद्धि होती है। कुछ प्रामाणिक स्वास्थ्य विशेषज्ञों के अभिमत को देखिये—

डाक्टर हेग ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'डाइट एण्ड फूड' में लिखा है—"शाकाहार से शक्ति उत्पन्न होती है और मांस खाने से उत्तेजना बढ़ती है। परिश्रम के अवसर पर मांसाहारी जल्दी थक जाता है। अफीम, कोकीन, शराब आदि नशीली चीजों की भाँति माँस भी उत्तेजक पदार्थ है। जब इसकी आदत पड़ जाती है तो वह शराब आदि अधिक उत्तेजक पदार्थों की जरूरत अनुभव करता है। यदि वे न मिलें तो सिर-दर्द, उदासी, स्नायु-दुर्बलता आदि का शिकार हो जाता है। ऐसे लोग ही बहुधा निराशाग्रस्त होकर आत्महत्या करते हैं।" इंग्लैण्ड में मांस और शराब का प्रचार बहुत अधिक है इसलिये शाकाहारी देशों की अपेक्षा यहाँ आत्महत्यायें भी अधिक होती हैं।

अमेरिकन डाक्टर शिरमेट ने लिखा है कि—"शाकाहार पर रहने वालों को टाइफाइड बहुत कम होता है।" डाक्टर क्लार्डसन का कथन है कि—"जिन बच्चों को मांस खिलाया जाता है, वे बड़े होने पर सुस्त आलसी, झेंपू और दुर्बल होते हैं। उनके लिये अन्न, शाक और दूध ही सर्वोत्तम आहार है" डाक्टर मेनरी पडरो का मत है—"मुझे पक्का विश्वास हो गया है कि मांस खाने वालों की अपेक्षा अन्न खाने वाले बहुत कम बीमार पड़ते हैं और यदि पड़ते भी हैं तो अपेक्षाकृत जल्दी अच्छे हो जाते हैं। डाक्टर पार्कस ने अपने व्यक्तिगत अनुभव का उल्लेख किया है कि—"मांसाहार के कारण ही वे बहुत दिनों सिर दर्द, मानसिक थकावट तथा गठिया से ग्रसित रहे।" डाक्टर ब्राउन का कथन है कि—"यह सम्भव है कि कोई मांसाहारी इस अमानुषिक भोजन के दुष्परिणामों से कुछ दिन बचा हो, पर देर-सबेर में उसका प्रभाव प्रकट होकर ही रहेगा। जिगर और गुर्दे में खराबी होना तथा क्षय कैंसर, गठिया आदि रोगों में बहुधा मांसाहार ही प्रधान कारण होता है।" डाक्टर रसैल ने अपनी 'सार्वभौम भोजन' पुस्तक में लिखा है—"जहाँ मांसाहार जितना कम होगा, वहाँ कैंसर की बीमारी भी उतनी ही कम होगी।" डाक्टर लक्स शैय ने लिखा है—"अपेन्डीसाइटिस की बीमारी मुख्यतया मांसाहार के कारण होती है।" डाक्टर एच. चिर्टिंटन ने अपनी पुस्तक फिजियोलोजीकल इकानेमी' में लिखा है कि—"मांसाहार के पक्ष में यह दलील थोथी है कि उससे हमें प्रोटीन प्राप्त होने के कारण ताकत बढ़ती है। जितनी प्रोटीन हमें आवश्यक है, उतनी शाकाहार से आसानी के साथ मिल सकती है! मांस द्वारा जो अनावश्यक प्रोटीन प्राप्त की जाती है, वह अत्यन्त हानिकारक सिद्ध होती है।"

शरीर विज्ञान के विशेषज्ञ अब इस नतीजे पर पहुँच रहे हैं कि—"मांस, अन्न की अपेक्षा कम पौष्टिक है। वह अनावश्यक ही नहीं हानिकारक भी है। इससे शरीर आलसी बनता है और दाँतों की जड़ें कमजोर हो जाती हैं। रक्त विकार, कैंसर, गठिया और उन्माद सरीखे अनेकों शारीरिक एवम् मानसिक रोगों की इससे उत्पत्ति होती है।"

लन्दन की 'वेजीटेरियन एसोसियेशन' ने मांसाहारी और शाकाहारी श्रेणी के एक-सी स्थिति के हजारों लोगों का शारीरिक और मानसिक अनुसन्धान किया है। इन परीक्षणों के आधार पर यही निष्कर्ष निकला है कि माँसाहारियों की अपेक्षा शाकाहारी लोग अधिक श्रम करते हैं, कम बीमार पड़ते हैं और दीर्घजीवी होते हैं। मानसिक क्षेत्र में ऐसी ही प्रतिक्रिया देखी गई है। शाकाहारियों की अपेक्षा मांसाहारी अधिक उद्दण्ड, क्रोधी, मन्दबुद्धि और अपराधी मनोवृत्ति के पाये गये हैं। जापान के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रो.

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वेज्ज भी अनेक परीक्षणों के बाद इसी निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मनुष्य के लिये निरामिष भोजन ही सब प्रकार उपयुक्त है।

अंग्रेजी के प्रसिद्ध लेखक जार्ज बर्नाडशा निरामिष भोजी थे। उनसे एक बार डाक्टरों ने कहा था कि—"आप मांसाहार न करेंगे तो मर जायेंगे।" शा ने उत्तर दिया कि यदि मैं दूसरों का मांस खाये बिना नहीं जी सकता तो मेरा मर जाना ही उत्तम है। जब शा महोदय मरे तब उनकी वसीयत के अनुसार उनके जनाज़े के साथ भेड़ें, बकरे, मुर्गे और मछलियाँ निकाली गईं क्योंकि वे मनुष्य को ही नहीं इन पशु-पक्षियों को भी अपना कुटुम्बी मानते थे। वे कहा करते थे अपने कुटुम्बियों को मारकर खा जाना और पशुओं का मांसाहार करना बराबर है।

दार्शनिक पैथागोरस ने एक स्थान पर कहा है—"ऐ मौत के ओढ़े में उलझे हुये इन्सान ! अपनी तश्तरियों को माँस से सजाने के लिये जीवों की हत्या करना छोड़ दे। जो भोले-भाले पशुओं की गरदन पर छुरी चलवाता है, उनका करुण-क्रन्दन सुनता है, जो अपने हाथों पाले हुये पशु-पक्षियों की हत्या करके अपनी मौज मनाता है, उसे अत्यन्त तुच्छ स्तर का व्यक्ति समझना चाहिये। जो पशुओं का माँस खा सकता है, वह किसी दिन मनुष्यों का भी खून पी सकता है।" बौद्ध धर्म, जैन धर्म में अहिंसा का प्रबल प्रतिपादन किया गया है। भगवान् बुद्ध और भगवान् महावीर का दृष्टिकोण प्राणिमात्र के प्रति दया, करुणा, मैत्री और आत्मीयता का व्यवहार करने का था। माँसाहार को उन्होंने अत्यन्त घृणित पैशाचिक कृत्य बताया है। मानवता का यही तकाजा है कि हम पशु-पक्षियों से प्यार करें—उनके साथ वैसा ही मधुर व्यवहार करें जैसा बड़े भाई छोटे भाई के साथ करता है।

खाद्य पदार्थों के साथ उनके सूक्ष्म संस्कार भी जुड़े होते हैं, जो खाने वाले के आत्मिक और मानसिक संस्थान पर प्रभाव डालते हैं। पशु-पक्षियों का माँस उनके हीन संस्कार से परिपूर्ण होता है, जिसके कारण खाने वाले में वे ही पाशविक प्रवृत्तियाँ पैदा होती हैं, जो उस पशु में थीं। मारे जाते समय तो उसकी मनोदशा भारी क्रोध, उद्वेग तथा चीत्कारपूर्ण होती है। माँस में वही भावनायें समाई होती हैं, जिसके कारण खाने वाला वैसे ही मनोविकारों से ग्रस्त होने लगता है। यदि थोड़ी देर के लिये यह मान भी लिया जाय कि शरीर को मांसाहार से कुछ लाभ हो भी जाये तो उसके कारण मनःक्षेत्र में जो पाशविक प्रवृत्तियाँ बढ़ती हैं, वह हानि भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। इन्सान यदि अपनी इन्सानियत खोकर हैवान बनने चले तो उसका भैंसे के समान बलवान् हो जाना भी किसी काम का नहीं गिना जायेगा।

आन्तरिक निर्बलता सुनिश्चित

माँसाहार अशुद्ध भोजन है। इससे बना हुआ वीर्य दूषित होता है, जिससे अधिकतर माँस भोजियों की सन्तानें रोगी, आवेशग्रस्त एवम् अनैतिक आचरण में रुचि लेने वाली उत्पन्न होती हैं। आँख, दाँत, कान आदि इन्द्रियाँ जितनी शीघ्र मांसभोजियों की खराब होती हैं, उतनी शीघ्र शाकाहारियों की नहीं। इन सब विकृतियों का एक विशेष कारण है। एक तो मांस स्वयं ही हानिकारक होता है दूसरे उसे पकाने, स्वादिष्ट करने और सुपाच्य बनाने के लिये उसमें तरह-तरह के मसाले तथा अन्य रासायनिक वस्तुयें डाली जाती हैं, जो शरीर में अनेक प्रकार के अवांछनीय तथा हानिकारक तत्त्व उत्पन्न कर देती हैं, जिससे मनुष्य का रोगी होना अवश्यम्भावी हो जाता है।

किन्हीं-किन्हीं का कहना है कि मांसभोजी बहादुर होता है और इसके लिये वे अनेक आक्रान्ताओं तथा युद्धकर्त्ताओं का उदाहरण भी देते हैं। यह धारणा भी गलत है। मांसभोजी बर्बर तो हो सकता है किन्तु वीर कदापि नहीं। बर्बरता वीरता नहीं, कायरता का लक्षण है। वीर वह है जो किसी सदुद्देश्य के लिये तलवार उठाये, वीर वह है जो कि कष्ट उठाकर भी किसी दूसरे को अपने स्वार्थ के लिये कष्ट न दे। वीर वह है जो रणक्षेत्र में जाकर भागता नहीं। वीर वह है जो अपने बल का प्रदर्शन निर्बलों पर न करके आततायियों के विरुद्ध करे। वीर वह है जो सताने के बजाय निर्बलों एवं असहायों की रक्षा करे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किन्तु इनमें से एक भी गुण किसी बर्बर में नहीं देखा जाता। निर्बलों को सताना और सबल के सामने गिड़गिड़ाना यही बर्बर का सहज स्वभाव होता है। संसार के जितने भी आततायी-आक्रान्ता हुये हैं, उन्होंने किसी वीर से टक्कर लेने की अपेक्षा निर्बलों को ही अधिक सताया है। जो वीर है वह वीरगति ही प्राप्त करता है, किन्तु बर्बर आततायी सदैव ही कुत्ते की मौत मारा जाता है। मांस भोजन के समर्थन में किसी बर्बर आक्रान्ता को बहादुर कहना मनुष्यता के उदात्त गुण वीरता का अपमान करना है।

मांसाहारियों और शाकाहारियों की शक्ति परीक्षा करने के लिये संसार में अनेक स्पर्धात्मक परीक्षण किये गये। आज से लगभग पैंसठ-छियासठ वर्ष पूर्व सन् १८९९ में क्वेटा नामक स्थान पर मांस भोजियों तथा निरामिष भोजियों के बीच रस्साकशी कराई गई। एक ओर मांसभोजी अंग्रेज सिपाही थे और दूसरी ओर सिक्ख रेजीमेन्ट के निरामिष भोजी जवान। कुछ समय की खींचतान के बाद अंग्रेज सिपाहियों के हाथ छिल गये और थककर उन्हें रस्सा छोड़ना पड़ा। निरामिष भोजी सिक्ख जवानों की जीत हुई।

सन् १८६८ में एक बार जर्मन में शाकाहारी और मांसाहारी बीस व्यक्तियों में सत्तर मील पैदल चलने की होड़ हुई। इनमें से बीस मांसाहारी और छः शाकाहारी थे। इस प्रतियोगिता में भी मैदान शाकाहारियों के हाथ रहा। सारे शाकाहारी मांसाहारियों से बहुत पहले गन्तव्य स्थान पर पहुँच गये। शाकाहारियों में से सबसे पहले यात्रा पूरी करने वालों को चौदह घण्टे लगे थे। चौदह मांसाहारियों में से केवल एक आदमी निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचा, वह भी अन्तिम शाकाहारी से एक घण्टे बाद, बहुत ही थका-मादा जबकि शाकाहारी पूर्ण स्वस्थ तथा प्रसन्न थे। उस एक को छोड़कर बाकी तेरह मांसाहारी केवल पैंतीस मील चलकर शिथिल हो गये थे।

विशुद्ध शाकाहार करने वाले सत्तर वर्षीय जे. ब्रेसन ने इंग्लैण्ड के सम्मेलन में अपना अनुभव बतलाते हुये कहा—सरकार के आदेशानुसार सैनिकों को शाकाहार की शिक्षा देने के लिये मैं साइकिल पर स्काटलैण्ड गया। इन आठ दिनों की यात्रा में मैं बराबर शाकाहार करता रहा। शाकाहार करते रहने से मेरा स्वास्थ्य बिल्कुल ठीक रहा और आठ दिन साइकिल से चलकर भी जब मैं गन्तव्य स्थान पर पहुँचा, तब मुझमें इतनी शक्ति थी कि मैं बड़े से बड़े लट्ठे उठा सकता था और कठिन से कठिन काम कर सकता था।

मांस भोजन से मनुष्य को शराब पीने की लत लग जाती है और इन दोनों चीजों का प्रभाव मिलकर मनुष्य के स्नायु-मण्डल को निर्बल कर देता है और उसमें निराशा तथा विषाद के भाव घर कर बैठते हैं। इस कारण से वह तनिक-सी भी प्रतिकूलता सहन कर सकने में सर्वथा असमर्थ हो जाता है और बड़ी जल्दी आत्महत्या के लिये उद्यत हो उठता है। यही कारण है कि मांस व मदिरा का प्रयोग अधिक करने वाले पाश्चात्य देशों में सबसे अधिक आत्महत्या की घटनायें होती हैं।

ऐसा स्वास्थ्य भी किस काम का ?

यद्यपि मांस भोजन बहुत ही अस्वास्थ्यदायक है, तथापि यदि एक बार यह भी मान लिया जाय कि इससे स्वास्थ्य लाभ होता है, तब भी क्या किसी प्राणी को मारकर और उसका मांस खाकर स्वास्थ्य बढ़ाना मनुष्य को शोभा देता है। मान लीजिए यदि कोई डाक्टर किसी को यह बतला दे कि मनुष्य का मांस सबसे अधिक स्वास्थ्यदायक होता है तो क्या वह उसके लिए मनुष्य का माँस खाने लगेगा ? इसी प्रकार यदि कोई किसी से यह कह दे कि यदि वह अपने बच्चों का रक्त अपने शरीर में ले ले तो स्वस्थ रहेगा तो क्या वह स्वास्थ्य के लोभ में वैसा करने को तैयार हो जायेगा ? नहीं वह ऐसा कदापि नहीं कर सकता ! कारण—एक तो वह कानून तथा अन्य सामाजिक अथवा वैयक्तिक भय से मनुष्य को मारकर उसका मांस प्राप्त नहीं कर सकता, दूसरे ममता-मोह के कारण अपने बच्चों का खून भी नहीं ले सकता। वह भले ही अस्वस्थ रहकर मर क्यों न जाये किन्तु ऐसा न कर सकेगा। बात यह है कि बेचारे पशुओं का न तो कोई रक्षक है और न कोई उनकी सुनने वाला है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसलियें मांसभोजी अपनी पाशविक स्वाद वृत्ति को सन्तुष्ट करने के लिये उनकी हत्या किया करते हैं और अपनी बुराई को छिपाने के लिये स्वास्थ्य आदि का बहाना जोड़ लेते हैं। वैसे न तो माँस में स्वास्थ्य के गुण हैं और न उसमें कोई स्वाद ही होता है।

मांस यदि मनुष्य का प्रकृति सम्मत स्वाभाविक भोजन होता तो निश्चित ही उसके शरीर की रचना उसी के अनुसार होती और मांस छोड़कर उसकी अभिरुचि अन्नों तथा वनस्पतियों के प्रति न होती। आज से हजारों वर्ष पूर्व शेर, चीते, भेड़िये आदि जिस प्रकार मांस खाया करते थे, उसी प्रकार आज भी खा रहे हैं। मांस भोजन उनका प्राकृतिक भोजन है। इसके बिना वे जीवित नहीं रह सकते। शेर को यदि मांस से हटाकर अन्न अथवा वनस्पति पर रखा जाये तो वह दो दिन भी जीवित नहीं रह सकता। स्वाभाविक भोजन की यही दो सबसे बड़ी पहचानें हैं कि जिसके लिये जो भोजन प्रकृति सम्मत है, उसके अनुसार प्राणी के शरीर की रचना होती है और उसी भोजन के अतिरिक्त न तो वह किसी अन्य प्रकार के भोजन को खा सकता है, न उसकी उसमें रुचि होगी और न वह उसके बिना जीवित रह सकता है।

मनुष्य में इन दोनों में से एक बात भी नहीं है। न तो उसके शरीर की रचना मांस भोजन के अनुरूप है और न मांस पर उसका जीवन निर्भर है। मांस भोजी पशुओं के लक्षणों में कतिपय लक्षण इस प्रकार हैं, जैसे—उनके दाँत बड़े-बड़े कीलों की तरह बड़े दृढ़, बिरबिरे, ठोस और पैने होते हैं। इससे उनको यह सुविधा रहती है कि वे अपने शिकार को आसानी से चीर-फाड़कर खा सकते हैं। उनके दाँतों में मांस के रेशे नहीं हिलगते। उनके पंजों में बड़े-बड़े दृढ़ नाखून होते हैं, जिससे वे अपने शिकार को आसानी से घायल कर सकते हैं और उसके शरीर का आवरण विदीर्ण कर सकते हैं। मांस भोजी पशु जीभ से पानी पीते हैं और मैथुन क्रिया में परस्पर बँध जाते हैं। उनकी भोजन-नली मनुष्यों की अपेक्षा छोटी होती है, जिससे माँस उसमें देर तक रुकने नहीं पाता। मनुष्य में ऐसा एक भी लक्षण नहीं होता।

अनेक लोग मांस में स्वाद की दुहाई देते हैं। मांस में यदि फलों आदि की तरह स्वाभाविक स्वाद होता तो मनुष्य विविध प्रकार के मसाले डालकर स्वादिष्ट बनाने का प्रयत्न न करता और न उसका प्रकृति स्वरूप छिपाने के लिये उसे विविध रूपों में बदलता और यदि एकबार उसमें मांसभोजियों की दृष्टि से स्वाद की कल्पना भी कर लें, तब भी उसमें वह स्वाद आया कहाँ से ? मनुष्य एक मात्र उन्हीं पशुओं का मांस खाता है, जो विशुद्ध शाकाहारी अथवा तृणजीवी होते हैं, उक्त पशुओं के माँस में जो स्वाद माना जाता है, वह उन्हीं वनस्पतियों का गुण होता है, जिन्हें खाकर वे जीते हैं। माँस जीवी पशुओं का माँस कोई भी मनुष्य नहीं खाता और यदि वह भूल से ऐसा कर ले तो या तो मर जाये अथवा ऐसे घातक रोगों का शिकार हो जाये, जिनसे उद्धार होना असम्भव नहीं तो कम से कम दुःसाध्य तो होता ही है। इसका कारण स्पष्ट है कि मांस खाने से मांस भोजी जानवरों का मांस विषैला हो जाता है। इस प्रकार जो मनुष्य मांस का उपयोग करते हैं, उनके शरीर में भी विषैले तत्व पैदा हो जाते हैं।

संसार में मांसप्रिय तथा उसके खाने का समर्थन करने वालों को बूचड़ खाने में ले जाकर वहाँ का हृदयद्रावक, रोमांचकारी, भयंकर एवं वीभत्स दृश्य दिखलाया जाये और उनसे कहा जाये कि देख लो मनुष्य ! तुम्हारे मांस भोजी होने कारण तुम्हारी नारकीय रुचि, इच्छा और क्षुधा की सन्तुष्टि के लिये यह क्या होता है ? क्या बिगाड़ा है इन बेचारे बेजुबान पशुओं ने जिन्हें हजारों की तादाद में खन्ते पर काटा जाता है ? यह इसलिये तो कि यह बेचारे तुमसे कमजोर हैं, विवश हैं। याद रक्खो यदि मांस भोजन की प्रथा संसार से न उठी और इसी प्रकार बढ़ती रही तो एक वह दिन भी आ सकता है कि पशुओं की कमी अथवा अभाव में तुमसे सबल मनुष्य तुमको भी इसी प्रकार काट कर खा जायें और वास्तव में कोई ठीक नहीं कि विविध पशुओं के मांस के प्रति आज जिस

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार मनुष्य भेड़, बकरी, गाय, भैंस, सुअर से बढ़ला-बढ़ता मछली, झींगा, झींगुर, मुर्गा, कबूतर और अनेक दूरस्थ विदेशों में तो चूहा, साँप, छिपकली, मेंढ़क तक आ गया है, शीघ्र ही वह मनुष्य तक आ जाये और तब मांस की तलब बढ़ने, अन्न का अभाव होने, कोई आड़ा वक्त आ जाने पर मनुष्य अपने गोद में बच्चों को भी मारकर खाने लगे। जिस प्रकार काम की पाशविक वृत्ति बढ़ती-बढ़ती मर्यादा का उल्लंघन करके बहिन-भतीजी का नाता तक लाँघ जाती है, उसी प्रकार मांस भोजन की निष्ठुर पैशाचिक वृत्ति बढ़कर बच्चों पर आ पहुँचे। यदि मनुष्य ने मांस भोजन की बढ़ती हुई लत को नहीं रोका तो उसकी निष्ठुरता इस सीमा तक भी बढ़ सकती है। मांस भोजन से बेचारा विवेक तो यों ही निर्बल होकर नष्ट हो जायेगा और तब मनुष्य को शिशु भोजन से कोई रोकने वाला भी नहीं रह जायेगा। इस प्रकार जब मांस भोजी अपनी पराकाष्ठा पर बहुतायत से पहुँच जायेंगे तो बेचारा कानून भी मजबूर होकर अपने बच्चे को मारकर खा जाने को अपराध परिधि से निकाल देगा। जब विरोध न कर सकने वालों को किसी न्याय की आवश्यकता नहीं तो फिर छोटे नर-बालकों को मार खाने से भी कानून किसी को क्यों राकेगा ?

एक मांसाहारी यदि एक पाव भी मांस नित्य खावे तो महीने में साढ़े सात किलो होता है। मामूली बकरे में प्रायः बीस किलो मांस निकलता है। इस प्रकार प्रायः तीन महीने में एक बकरा—साल में चार बकरे खा जाता है। यदि समर्थ जिन्दगी के ४० वर्ष भी माने जायें तो इतनी अवधि में वह १६० बकरे खा जाता है। गाय-बैल खाता हो तो ५० बड़े जानवर खा सकता है। कबूतर, मुर्गी आदि पक्षी खाता हो और आधा पक्षी भी रोज खावे तो एक साल में १८० और ४० साल में ७२०० पक्षी उदरस्थ कर जाता है। यदि उनमें से आधे पशु और आधे पक्षी खायें तो ८० बकरे एवं ३६०० पक्षी खा जायेगा। अपने एक जीव की जिह्वा का मनोरंजन करने के लिये पेट में उतने निरीह जीवों का कब्रिस्तान बनाना कोई निर्दयी ही स्वीकार कर सकता है।

अण्डे भी त्याज्य एवं हेय

बहुत-से लोग अण्डे को मांस भोजन से भिन्न मानकर उसका समर्थन करते हैं। उनका कहना है कि अण्डे में जीव नहीं होता, उसको खाने में किसी प्रकार के हिंसा दोष का आरोप नहीं किया जा सकता। अण्डे में जीव अथवा प्राण न होने का तर्क देकर जो हिंसा के दोष से बचना चाहते हैं, वे यह क्यों नहीं सोचते कि एक बार अण्डे को भले ही पीड़ा न हो तो क्या उस मादा पक्षी को दुःख न होगा, जिसने उसे अपने उदर से बच्चे की आशा से उत्पन्न किया है।

अण्डा यदि किसी पक्षी का बच्चा नहीं है तो उसका भ्रूण अवश्य है। बुद्धि के अभाव में यदि अण्डा हिंसा की परिधि में नहीं लिया जा सकता तो किसी मानवी का 'भ्रूण' खाने में भी कोई पाप नहीं है। अण्डाभोजियों से पूछा जाये कि प्राण प्रतिष्ठा के अभाव में वे किसी मानवी का गर्भ उबालकर खा सकते हैं ? यह तो हो सकता है कि यह प्रश्न सुनकर अण्डा भोजी बिचके, किन्तु वह यह सोचने का कष्ट नहीं करेगा कि एक अण्डे तथा किसी मानवी के भ्रूण में क्या अन्तर है ?

बहुत-से लोग मांस भोजन को खाद्य समस्या के हल के रूप में भी प्रस्तुत करते हैं। इस प्रस्तुति के पीछे भी कोई वास्तविकता नहीं है। इसमें भी मांस भोजन का अनुचित समर्थन ही बोलता है। मनुष्य जिन गाय, भैंस, भेड़, बकरियों को मारकर खा जाता है, यदि उन्हें ठीक से वैज्ञानिक ढंग से पाला जाये तो वे अपने मांस से कहीं अधिक उपयुक्त स्वास्थ्यकर और ज्यादा खाद्य दूध के रूप में दे सकते हैं। इस प्रकार पशुओं की रक्षा से स्थायी रूप से खाद्य समस्या का हल हो सकता है।

यही नहीं पशु धन के नष्ट होने के कारण से खाद्यान्नों के उत्पादन में भी बहुत कुछ कमी हो गई है। खेती के लिये पाले जाने वाले पशुओं के गोबर तथा मूत्र से जितनी खाद मिल सकती है, उतना मूल्य उनके मांस के विक्रय से नही मिल सकता। गो-वध के कारण भारत में बैल जैसे कृषि-पशुओं का बुरी तरह अभाव होता जा रहा है। यदि भारतीय कृषकों को स्वस्थ,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सस्ते और अधिक बैल मिलते रहें तो वह खेती में इतना अधिक उत्पन्न कर सकता है कि देश से खाद्यान्न की समस्या सदा के लिये ही दूर हो जाये। गो-वध के कारण घी-दूध के अभाव में मरियल किसान और कमी हो जाने से महँगे बैल न ले सकने के कारण मरियल और बूढ़े बैलों से जो खेती हो सकती है, हो रही है। इन शिथिल साधनों के आधार पर क्या तो किसान खेती कर सकता है और क्या धरती दे सकती है ? खेती के लिये जिन स्वस्थ बैलों और पुष्ट किसानों की आवश्यकता है, पशु-वध के कारण प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से उनका ह्रास होता जा रहा है।

इसकी पूर्ति के लिये मशीनों तथा ट्रेक्टरों से खेती का प्रस्ताव किया जाता है, किन्तु प्रस्तावक यह नहीं सोचते कि भारत का गरीब किसान ट्रैक्टरों तथा मशीनों का किस प्रकार पा सकता है और किस प्रकार उसके लिये ड्राइवर पैट्रोल तथा अन्य प्रकार के उपकरण उपलब्ध कर सकता है। बैलों की अपेक्षा भारतीय किसान को ट्रेक्टरों की व्यवस्था कहीं अधिक महँगी पड़ती है। पशु-वध रोककर भारतीय कृषिकार को यदि उसके जन्म-जन्म के जाने-पहचाने सजीव ट्रैक्टर बलवान् बैलों की व्यवस्था कर दी जाये तो निश्चित ही वह देश की खाद्य समस्या शीघ्र ही हल करके रख दे।

शाकाहार ही मनुष्य का प्राकृतिक भोजन है और मांसाहार अस्वाभाविक। जहाँ माँस भोजन से तामस, काम, क्रोध, आलस्य, प्रमाद, जड़ता आदि तामसी अवगुण की वृद्धि होती है, वहाँ शुद्ध शाकाहार से स्फूर्ति, पवित्रता, प्रसन्नता शक्ति तथा दीर्घायुता प्राप्त होती है। मन, बुद्धि और विवेक शुद्ध होते हैं, आत्मा में सुख और शान्ति आती है।

मांसाहार के समर्थन में भ्रांत प्रतिपादन

समझदारों की दुनिया में भी ऐसे कितने ही भ्रम प्रचलित हैं, जिन्हें पिछड़े लोगों द्वारा अपनाये गये अन्ध-विश्वासों से भी गया गुजरा कह सकते हैं। मूढ़ मान्यताओं की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वह जिन पर भी हावी होती है, उन्हें यह पता नहीं चलने देती कि वे किसी अनुपयुक्त बहम के शिकार हो रहे हैं। उन्हें अपनाये हुये आग्रह सत्य के निकटवर्ती प्रतीत होते हैं।

ऐसी ही मूढ़ मान्यताओं में एक यह भी है कि मांसाहार मनुष्य के लिये आवश्यक एवं उपयोगी है। इसी मान्यता के कारण मांसाहार का प्रचलन बढ़ता जा रहा है। उसके समर्थन में शरीरशास्त्री और मांसाहारी बहुत कुछ कहते सुने जाते हैं। शरीरशास्त्री मांसाहार में प्रोटीन की बहुलता और उसकी शरीर पोषण में उपयोगिता बताते रहते हैं और इसी आधार पर उसे अपनाने की वकालत करते हैं। किन्तु जब उनसे यह पूछा जाता है कि मांस का प्रोटीन कितना दुष्पाच्य, कितना महँगा और पशु रोगों से प्रभावित होता है तो उन्हें बगलें झाँकनी पड़ती हैं। सच तो यह है कि माँस में प्रोटीन का जितना अनुपात होता है, उससे कहीं अधिक सस्ती दालों में पाया जाता है और वे किसी रुग्ण परम्परा से प्रभावित भी नहीं होतीं। पचती भी जल्दी हैं। ऐसी दशा में माँस प्राप्ति के लिये नृशंस उपाय अपनाने का समर्थन क्यों किया जाय ? उस जिज्ञासा के समाधान में माँसाहारी पक्ष कुछ वजनदार तथ्य प्रस्तुत नहीं कर पाता। फिर कह दिया सो कह दिया "हजरते दाग जहाँ बैठ गये बैठ गये।"

अर्थशास्त्री इसे अन्न की कमी को पूरा करने में सहायक कहते हैं। किन्तु यह भूल जाते हैं कि जितनी भूमि की हरियाली खिलाकर पशु पाला जाता है उतनी भूमि में माँस से कई गुना और कहीं सस्ता शाकाहारी खाद्य उत्पन्न हो सकता है। पशु न मारे जायें तो उनकी वृद्धि संसार में समायेगी कहाँ ? इस प्रतिपादन की अधिक व्याख्या करने के लिये जब यह पूछा जाता है कि कुत्ते जैसे प्राणी बहुत प्रजनन करते हैं, साथ ही उनका मांस भी नहीं खाया जाता फिर वे लाखों वर्षों में भी सारी पृथ्वी पर क्यों नहीं छा सके ? तो अर्थशास्त्री मौन हो जाते हैं। प्रत्येक प्राणी की अनावश्यक संख्या का नियमन करने के लिये प्रकृति के अपने तरीके हैं। उन्हें समझने पर किसी काजी को शहर के अंदेशे दुबले होने की आवश्यकता न पड़ेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वास्तविकता यह है कि मांस न तो पोषक है और न बलवर्धक। इस स्तर की भ्रान्त मान्यतायें ही असंख्यों को उसका समर्थक बनाये हुये हैं। सभी जानते हैं कि प्राणियों में अधिक बलिष्ठ और दीर्घजीवी शाकाहारी ही होते हैं। मांसाहारी नहीं। सिंह की क्रूरता और धूर्तता ही उसे वनराज की पदवी दिला सकी है। अन्यथा नीति युद्ध में कोई गजशावक उसकी धज्जियाँ उड़ा सकता है। घोड़ा, गेंडा, बैल, हिरन जैसे शाकाहारी देर तक कठोर श्रम कर सकते हैं, जबकि चीते जैसे आतुर कुछ क्षण ही चमत्कार दिखाकर हांफते और टाँगें पसारते देखे जाते हैं।

आरोग्य और दीर्घ जीवन का जहाँ तक प्रश्न है, वहाँ तक पशुओं से लेकर मनुष्य तक देखे गये तथ्य यही प्रमाणित करते हैं कि सुदृढ़ स्वास्थ्य के लिये शाकाहार पर निर्भर रहना ही बुद्धिमत्ता है। माँस नशे की तरह तात्कालिक उत्तेजना देने लगे तो भी उसकी तुलना में शाकाहार के दूरगामी परिणामों को ही सराहा जायेगा। उस पर निर्भर रहने वाले आरोग्य का व्यतिक्रम नहीं होने देते और सहज सरलता के सहारे लम्बी अवधि तक जीवित रहने का आनन्द लेते हैं।

शाकाहार के सम्बन्ध में प्रथम विश्वयुद्ध के समय डेनमार्क में किया गया प्रयोग अकथनीय है। उन दिनों युद्धजन्य उत्पन्न हुये खाद्य संकट के समाधान हेतु वहाँ के राष्ट्रीय आहार शोध संस्थान के सुपरिन्टेन्डेण्ट डा. हिन्डहेड ने सरकार को सुझाव दिया कि "जानवरों को खिलाये जाने वाले मोटे अनाज का उपयोग मनुष्यों के लिये किया जाये।" अन्य विभिन्न अन्न एवं आलू जो स्प्रिट और एल्कोहल बनाने में प्रयुक्त होते थे, उनको भी खाद्य के रूप में प्रयोग करने का परामर्श उन्होंने दिया था।

डेनिश सरकार ने डा. हिन्डहेड के परामर्शानुसार भोजन सम्बन्धी निर्णय लेकर अक्टूबर १९१७ से १९१८ के अक्टूबर तक कठोरता से पालन कराया। पूरे देश में शाकाहार का स्वीकार कर लिया गया यद्यपि ऐसा आपत्ति काल वश ही हुआ था। लोगों ने सादा एवं शाकाहार का भोजन उपलब्ध होने के विषय में भयंकर आशंकायें व्यक्त की थीं परन्तु उस वर्ष जो आँकड़े एकत्र हुये उससे सारा विश्व आश्चर्यचकित रह गया। उस अवधि में डेनमार्क विश्व में सबसे कम मृत्यु दर वाला देश रहा, रोगियों की संख्या तो नगण्य हो गई। सार्वजनिक राष्ट्रीय स्वास्थ्य के स्तर में प्रभावी प्रगति देखी गयी।

एक वर्ष बाद पुनः जब वहाँ मांस, शराब आदि युद्धकाल के पहले की भाँति प्रयोग होने लगा तो देश की मृत्यु दर पूर्व की भाँति हो गयी और बीमारों की संख्या में भी वृद्धि हो गई।

मांसाहार द्वारा रक्ताल्पता, प्यास, कोष्ठबद्धता, उच्च रक्तचाप रक्त वाहिनियों में बाधा, मानसिक तनाव, हिस्टीरिया, मृगी, गठिया, हृदय रोग आदि उत्पन्न होते हैं। यूरिक ऐसिड की कमी या अधिकता विशेष रूप से पायी जाती है। मूत्र में यूरिक एसिड की अधिकता दो कारणों से पाई जाती है एक तो नाइट्रोजन युक्त भोजन ग्रहण करने से दूसरे मांसाहार, चाय काफी के सेवन से।

वर्ल्ड वाच इन्स्टीट्यूट नामक संस्था के अनुसंधानकर्त्ताओं का निष्कर्ष है कि मांसाहार के बढ़ने से डायबिटीज, क्षय, हृदयरोग, रक्तचाप, कैन्सर जैसे रोगों की बाढ़-सी आ गई है। संस्था के शोधकर्त्ताओं ने चेतावनी दी है कि मांसाहार मनुष्य के लिये हर दृष्टि से हानिकरक है। प्रकृति एवं मौसम के अनुरूप सरल, सादा शाकाहारी भोजन ही मनुष्य के लिये उपयोगी एवं स्वास्थ्यवर्धक है।

बम्बई के विभिन्न अस्पतालों के मधुमेह रोगियों के पर्यवेक्षण से प्राप्त आँकड़ों के अनुसार मधुमेह रोग के शिकार मांसाहारियों की संख्या शाकाहारियों की तुलना में कई गुना अधिक है। दिल्ली के मौलाना आजाद चिकित्सा महाविद्यालय के डा. एन. पी. एस. वर्मा और उनके सहयोगियों ने मधुमेह पर अनुसंधान किया। उन्होंने घोषणा की कि रेशे एवं तन्तु वाले शाकाहारी भोजन में मधुमेह के नियन्त्रण करने की असाधारण क्षमता है। उन्होंने मधुमेह के अनेकों रोगियों के ऊपर प्रयोग किया। मांसाहार छुड़ाकर सरल सुपाच्य शाक-सब्जियों से युक्त आहार दिया। रोग उपचार में उन्हें अप्रत्याशित सफलता मिली।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मांसाहारियों में सहनशीलता की कमी के कारण आत्महत्या की घटनायें अधिक होती हैं। डा. हेग का कथन है कि स्काटलैण्ड की अपेक्षा इंग्लैण्ड में आत्महत्या की घटनायें अधिक होती हैं क्योंकि वहाँ मांसाहार अधिक किया जाता है और शराब अधिक पी जाती है।

'इंटरनेशनल इंस्टीटयूट ऑफ इंट्रीयल ह्यूमेन साइन्सेज' मान्ट्रियल के अध्यक्ष डा. जोन रोसमर जब भारत आये, तब उन्होंने बताया कि वे स्वयं शाकाहारी हैं। मानव शास्त्र के वे विशेषज्ञ हैं और इस क्षेत्र के शोधकार्य में संलग्न हैं। उन्होंने कहा कि जब बूचड़खाने में पशुओं का वध किया जाता है, तब जीवन और मृत्यु की संघर्ष के बीच वे अपने शरीर में कुछ हार्मोन्स छोड़ जाते हैं, जो पूर्णतः दुःख से भरे होते हैं। इस मांस को जो भी खाता है, उसके शरीर पर इन हारमोनों का अवश्य ही प्रभाव पड़ता है। भले ही वह प्रत्यक्ष रूप से तत्काल न दिखाई दे, समझदारी इसी में है कि ऐसा मांस हम न खायें।

हम मांसाहार की हानियाँ समझें

'दधिष्वा जठरे सुतं सोममिन्द्र वरेण्यम्'
तव द्युक्षास इन्दवः।।

हमारा आहार ऐसा हो जिससे हमारी बुद्धि, अवस्था और बल में निरन्तर वृद्धि होती रहे।

ऋग्वेद की उक्त ऋचा से स्पष्ट प्रकट होता है कि आहार मनुष्य की समताओं एवं विशेषताओं के ह्रास वृद्धि से सम्बन्ध रखता है। पुष्टिकारक आहार समताओं की वृद्धि करेगा और तत्वहीन आहार उनका ह्रास कर देगा ! मनुष्य संसार में सबल, शक्तिवान और योग्य बनकर जीने के लिये है न कि रोग, शोक अथवा दुःख दुरितों का बन्दी बनकर सुखी, शान्त और सन्तुष्ट जीवन बिताने के लिये मनुष्य को अपने खानपान तथा आचार व्यवहार में सावधान रहना होगा। स्वाद, स्वभाव अथवा अनुकरण से प्रेरित होकर अपने खानपान को अयुक्त बना लेने का अर्थ है अपने शारीरिक मानसिक तथा आत्मिक सुख समुन्नति में आग लगा लेना ही बढ़ गया है।

भारत मूल रूप से निरामिष भोजी देश है। इसका जलवायु, इसकी भौगोलिक स्थिति, जीवन दर्शन तथा सामाजिक स्थिति कुछ भी तो मांसाहार के अनुकूल नहीं है। यही कारण है कि अन्य देशों की अपेक्षा भारत में मांसाहार से अधिक हानियाँ हो रही हैं। सम्पूर्ण मानव जाति का कल्याण तो इसमें ही है कि संसार से मांसाहार की विकृति मिटा दी जाये। पर भारत की सभ्यता, संस्कृति, धर्म, दर्शन, शारीरिक, बौद्धिक, मानसिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय पुकार तो यह है कि हम सब मांसाहार के दोषों एवं हानियों को समझें और उसका त्याग कर दें। जिससे कि अर्थ से लेकर परमार्थ तक होता हुआ हमारा पतन किसी सीमा तक रुके और हम सुख समृद्धि की दिशा की और बढ़ सकें। बीज रूप आहार दोष के दूर हो जाने से अन्य प्रकार की विकृतियाँ तो आप से आप मिटने लगेंगी।

मांसाहार अति अमानवीय भोजन है। मनुष्य की न तो शरीर रचना ही इसके अनुकूल है और न प्रकृति ही ! इसीलिये जो मनुष्य मांस का सेवन करते हैं, वे अनेक प्रकार के रोगों से जब-तब घिरे रहा करते हैं। मनुष्य का आमाशय तथा उसकी जठराग्नि इस योग्य नहीं होती कि वह मांस को ठीक तरह से पचा सकें। मनुष्य का प्राकृतिक स्वभाव भी मांस भोजन के अनुकूल नहीं होता। मांस भोजन का स्वभाव कृत्रिम है, जिसे उसने अज्ञान एवं अभ्यासवश विकसित कर लिया है। इसकी परीक्षा के लिये यदि किसी अबोध बालक को, जिसे कि जबरदस्ती मांस भोजी न बनाया गया हो, मांस खिलाया जाय, तब वह तत्काल ही मुँह बिगाड़ कर उसे उगल देगा और रोने लगेगा। उसकी प्राकृतिक वृत्तियाँ तत्काल मुख में आये मांस खण्ड को अस्वीकृत कर देगी। किसी सहज मांसाहारी जीव का बच्चा जन्म से ही मांस भोजन में रुचि लेने लगता है। यदि उसको मांस के अतिरिक्त शाक भोजन दिया जाये तो वह तत्काल सूँघकर मुँह फेर लेगा ! मांस के अतिरिक्त किसी प्रकार का भोजन स्वीकार न करेगा। भोजन की ग्राह्यता-अग्राह्यता किसी के स्वाभाविक भोजन की सरल पहचान है। जिस प्रकार शेर, चीते, भेड़िये आदि मांस भोजी जीवों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में सबके सब मांस खाते हैं, उनमें से एक भी जीव ऐसा नहीं होता, जो कि मांस न खाकर अन्य वनस्पतियाँ खाता हो। उसी प्रकार मांस यदि मनुष्य का स्वाभाविक भोजन होता तो संसार का प्रत्येक मनुष्य समान रूप से मांस भोजी होता। कोई एक भी निरामिष भोजी न होता। किन्तु ऐसा देखने में नहीं आता। संसार में करोड़ों ऐसे स्त्री-पुरुष मौजूद हैं, जो किसी रूप में भी मांसाहारी नहीं हैं। तृण जीवी प्राणी सदा-सर्वदा वनस्पति ही खाते हैं। उसके अभाव में वे प्राण तक दे देते हैं किन्तु मांस भोजन की प्रवृत्ति उनमें नहीं होती। इसलिये कि वनस्पति उनका स्वाभाविक भोजन होता है। इसके विपरीत स्वाभाविक मांस भोजी जीव उसके अभाव में तन त्याग सकते हैं किन्तु वनस्पति खाने की ओर उन्मुख नहीं होंगे, क्योंकि मांस ही उनका प्राकृतिक भोजन होता है। प्रवृत्ति, प्रकृति, शरीर अथवा समाज किसी भी दृष्टि से क्यों न देख लिया जाय, मांस मनुष्य के लिये अस्वाभाविक भोजन है। यह उसका आरोपित स्वभाव है, जिसके कारण वह अपनी अनेक हानियाँ कर रहा है। इस आरोप का परिमार्जन कर देना ही मनुष्य जैसे बुद्धि प्रधान प्राणी के लिये अपेक्षित एवं योग्य है।

किसी का यह विश्वास विवेक सम्मत नहीं है कि मांस भोजन से स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। आज केवल कहने मानने मात्र से ही किसी बात पर विश्वास नहीं किया जा सकता है। वैज्ञानिक आधार पर शरीर एवं चिकित्साशास्त्र बड़ी सीमा तक विकसित हो चुका है। अनेक प्रयोग एवं अन्वेषणों के आधार पर सिद्ध हो चुका है कि मांस भोजन मानव स्वास्थ्य के लिये बहुत हानिकारक है और बुद्धिमान लोग इस वैज्ञानिक सत्य को समझकर मांस भोजन का त्याग करते जा रहे हैं। सदा से मांस भोजी देशों, अमेरिका, इंग्लैण्ड आदि में मांस भोजन के विरुद्ध आवाज उठने लगी है और लोग शुद्ध शाकाहारी संगठन एवं समितियाँ बनाकर मांसाहार की हानियाँ से बचने लगे हैं।

अनेक प्रयोगों, अनुसन्धानों तथा अनुभवों के आधार पर शरीर विज्ञान के विशेषज्ञ इस नतीजे पर पहुँच चुके हैं कि मांस शाकाहार की अपेक्षा कम पौष्टिक है। वह मनुष्य के लिये अनावश्यक ही नहीं हानिकारक भी है। इसके खाने से शरीर आलसी, दाँत कमजोर और आमाशय की क्षमता नष्ट हो जाती है। रक्त विकार, कैंसर, गठिया और उन्माद जैसे रोगों की वृद्धि में मांस भोजन एक बहुत बड़ा कारण है। भोजन सम्बन्धी विशेषज्ञ डा. हेग ने अपनी संसार प्रसिद्ध पुस्तक "डाइट एण्ड फूड" में लिखा है कि शाकाहार से शान्ति उत्पन्न होती है, जबकि मांस भोजन शरीर में अनावश्यक उत्तेजना उत्पन्न कर देता है। अफीम, कोकीन, शराब आदि मादक पदार्थों की तरह मांस भी उत्तेजक पदार्थ हैं। मांसाहारी लोग अपने इस अमानवीय भोजन को अधिकतर शराब आदि हानिकारक द्रव्यों के बल पर खाने और पचाने की कोशिश करते हैं, जिससे उनका स्वास्थ्य दो गुने वेग से नष्ट होता रहता है। इंग्लैण्ड में शराब और माँस का प्रचार बहुत अधिक है इसीलिये शाकाहारी देशों की अपेक्षा वहाँ आत्महत्याओं की घटनायें अधिक होती हैं। यह दोनों अवांछित पदार्थ मनुष्य में स्नायुविक दुर्बलता के यहाँ तक बढ़ा देते हैं कि लोग जरा-जरा से कारण पर ही पराकाष्ठा तक निराश एवं उत्तेजित होकर आत्महत्या कर लिया करते हैं।

अमेरिका के प्रसिद्ध डा. पर्कसने के गहरे अनुसंधानों और अनुभवों के आधार पर लिखा है कि 'जब तक मैं मांसाहार करता रहा, तब तक आलस्य प्रमाद, सिर दर्द, थकान तथा गठिया के रोगों से कभी मुक्त न हो सका, किन्तु जब मैं मांसाहार को छोड़कर निरामिष भोजी बना तब मुझे रोग मुक्त होते देर न लगी। डाक्टर क्लाड सृन, डॉ. हेनरी परेडो, सैल डॉ. लम्स शैप आदि ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तकों में स्पष्ट उल्लेख किया है कि मांस अमानुषी भोजन है, उसके दुष्परिणाम से बच सकना सम्भव नहीं। देर-सबेर मनुष्य को उसका कुफल भोगना ही पड़ता है। जिगर, गुर्दे तथा क्षय, कैंसर आदि के रोग अधिकांश में मांसाहार की ही देन है। अपेन्डी साइटिस जैसे रोगों के अतिरिक्त ऐसे अनेक पाशविक रोग मांस भोजियों को लग जाया करते हैं, अभी तक जिनका निदान नहीं खोजा जा सका है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डाक्टरों का मत है जिन बच्चों को शुरू से मांस खाने की आदत लगा दी जाती है, वे आगे चलकर आलसी, सुस्त, झेंपू, निर्बल तथा धृष्ट हो जाया करते हैं। लन्दन की "वेजीटेरियन एसोसियेशन" ने एक ही स्थिति के हजारों आदमियों का शारीरिक परीक्षण करके रिपोर्ट दी है, मांसाहारियों की अपेक्षा निरामिष भोजी अधिक श्रमिक, निरोगी एवं आयुष्मान होते हैं और यदि उन्हें कोई रोग हो भी जाता है तो शीघ्र ही अच्छे हो जाते हैं। मानसिक यन्त्र में निरामिष भोजी मांसाहारियों की अपेक्षा कहीं कम उद्दण्ड, क्रोधी मन्द बुद्धि तथा अपराध मनोवृत्ति के होते हैं। जापान के प्रसिद्ध वैज्ञानिक प्रोफेसर बेंच ने अनेक अन्वेषणों के आधार पर घोषित किया है कि निरामिष भोजन ही मनुष्य के लिये सबसे उपयुक्त एवं लाभकारी भोजन है। मांसाहार की हानियों को जानते हुये इंग्लैण्ड के विश्वविख्यात विद्वान जार्ज वनार्डशा ने औषधि के रूप में भी मांस का शोरवा लेने से इन्कार करते हुये कह दिया कि मैं मर जाना पसन्द करूँगा किन्तु किसी रूप में मांस का प्रयोग कदापि न करूँगा।

मांसाहार से बलवर्धन की मान्यता सर्वथा भ्रमपूर्ण

समस्त प्राणियों की मुख्य रूप से तीन भागों में बाँटा जा सकता है—कार्निवोरस—जो पूर्णतः मांसाहारी होता है। हर्बिबोरस जिसका आहार हरियाली और घासें हैं। फ्रूगी वोरस—जिनका आहार फल और बीज आदि हैं। शारीरिक विशेषज्ञ एच. एम. सिंक्लेयर के अनुसार मनुष्य फ्रूगी वोरस के अन्तर्गत आते हैं।

कार्निवोरस प्राणियों की शारीरिक बनावट ही कुछ इस तरह की होती है कि वे सिर्फ मांस को ही अपने आहार के रूप में ग्रहण कर सकते हैं। प्राकृतिक आहार उन्हें उपयोगी सिद्ध नहीं होता। इनमें शिकार एवं मांसाहार के लिये पंजा तथा नुकीले दांत पाये जाते हैं। इनकी जीभ मोटी तथा रेती के समान खुरदरी होती है। पीसने की आवश्यकता बहुत कम होती है। इसलिये चवर्यदन्त नहीं होते। नीचे के जबड़े की हड्डी मजबूती से स्थिर बनी रहती है, जो बहुत कम क्रिया कर पाती है। कुछ विशेष अवसरों पर ही यह चबाने के काम में आता है। स्टार्च को सुपाच्य बनाने में उपयोगी लार को अभाव होता है क्योंकि मांस में स्टार्च पाया ही नहीं जाता है। आमाशय द्वारा विसर्जित रस में हाइड्रोक्लोरिक ऐसिड की बहुत अधिक मात्रा उपलब्ध होती है क्योंकि यह माँसल पदार्थों में पाये जाने वाले प्रोटीन और वसा तत्व को पचाने में समर्थ होता है। इन प्राणियों की आहार नली बहुत छोटी-पूरे शरीर की लम्बाई की लगभग चार गुनी होती है। इसमें रेशे नहीं होते तथा मन्द गति से युक्त मांसाहार के लिये बड़ी उपयुक्त होती है।

हर्विबोरस प्राणियों की शारीरिक बनावट कार्निबोरस प्राणियों की बनावट से बहुत भिन्न होती है। इनके पंजे तथा नुकीले दाँत नहीं होते, जो मांसाहारी के लिये ही उपयुक्त होता है। इनकी जीभ रेती जैसी नहीं होती। घास चबाने के लिये विशेष प्रकार चवर्य दन्त नहीं होते। निचला जबड़ा आसानी से ऊपर-नीचे तथा अगल-बगल चलता रहता है। पौधों में पायी जाने वाले स्टार्च को पचाने के लिये इनके लार में पिटयालिन की मात्रा पायी जाती है। आमाशय रस में हाइड्रोक्लोरिक एसिड की बहुत कम मात्रा पायी जाती है, जो पत्तों में पायी जाने वाली प्रोटीन तत्व को पचाने में पूर्ण समर्थ होती है। आहार नली शरीर की लम्बाई से लगभग २२ से २४ गुना लम्बी होती है, जिसमें रेशा युक्त व तीव्र गतिशील घासें आसानी से पच सकें अन्यथा यह बिना पचे ही आहार नली में आगे बढ़ सकता है।

फ्रूगी वोरस प्राणियों में पंजों तथा नुकीले दाँतों का अभाव होता है। दांत रेती सदृश न होकर सपाट होते हैं। पीसने के लिये चवर्य दन्त होते हैं। परन्तु हर्बीबोरस की तरह नहीं। निचला जबड़ा हर दिशा में ऊपर-नीचे दायें-बायें, आगे-पीछे चलाया जा सकता है। लार में पिट्रयालिन की उपस्थिति होती है, जो फल, सब्जी एवं बीजों में पायी जाने वाली शर्करा को पचाती है। आमाशय रस में हाइड्रोक्लोरिक एसिड की बहुत कम मात्रा होती है परन्तु फल तथा बीजों को पचाने के लिये पूरी तरह सक्षम होती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। आहार नली न बहुत लम्बी होती है और न बहुत छोटी। शरीर की लम्बाई की १२ गुनी होती है क्योंकि इनके आहार की गति मांस एवं घास की गति के बीच की होती है। अतः शारीरिक बनावट से यह पूर्णतः सिद्ध हो जाता है कि मनुष्य फ्रूगीबोरस प्राणी है और वह हर्बीवोरस प्राणी की प्रकृति के काफी निकट है न कि कार्निवोरस के।

एक ब्रिटिश सर्जन सर विलियम अरवथ नाट लेन ने यह सिद्धान्त प्रतिपादित किया है कि यदि मनुष्य मांस को खाना ही चाहता है, जबकि उसका शारीरिक ढाँचा इसके उपयुक्त नहीं है, तो उसे अपने शारीरिक रचना को इसके उपयुक्त बनाने हेतु अपनी आँतों के थोड़े से हिस्से को कटवा लेना चाहिये। मध्यवर्ती आहार नली होने के कारण मनुष्य को फल और बीज का आहार ही उपयोगी हो सकता है।

हिटलर की सेना में अधिकतर लोग पेप्टिक अल्सर, आमाशय शोथ के शिकार थे। कुछ अल्सर बटालियनों को समय-समय पर विशेष उपचार हेतु अलग रखा जाता। परन्तु इससे उन्हें कोई लाभ नहीं होता था परन्तु जब वे युद्ध के अन्तर्गत रूस द्वारा बन्दी बना लिये गये और वहाँ उन्हें खाने में माँस, अण्डा, मक्खन और दूध नहीं मिला जिसके कि वे पूर्ण अभ्यस्त थे, तो वे चिन्तित हो उठे। उन्हें प्रतिदिन ५ ग्राम प्रति व्यक्ति शक्कर दी जाती, जबकि वे पूर्व में १२५ ग्राम शक्कर पाते थे। उन्हें वाइट ब्रेड के बदले गेहूँ, राई आदि की बनी रोटी दी जाती थी। बन्दगोभी का सूप, मकई, जई और सोयाबीन का दलिया उन्हें दिया जाता था। परिणाम यह हुआ कि वे लोग कुछ दिनों पश्चात् अपने परम्परागत रोगों से मुक्त हो गये, साथ ही अन्य कई रोगों से उन्हें छुटकारा मिल गया। परन्तु जैसे ही वे अपने देश को लौटकर पूर्ववत् आहार माँस, मैदा, नमक चीनी आदि लेने लगे वैसे ही वे फिर अपने पिछले रोगों से ग्रस्त हो गये।

सर विलियम अरबथनांट लेन ने इंग्लैण्ड की एक 'वैजीटेरियन साइकिलिंग एण्ड एथलेटिक क्लब' का उदाहरण देते हुये कहा है कि शाकाहारी व्यक्ति मांसाहारी व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक स्वस्थ व बलिष्ठ जीवन यापन करने में समर्थ हो सकते हैं। पिछले वर्ष में इस क्लब ने आहार परिवर्तन के प्रयोगों में कई आश्चर्यजनक रेकार्ड कायम करके जन सामान्य को विस्मित कर दिया है।

ज्यूरिख के डा. राल्फ ब्रीजर ने इस मान्यता को भ्रान्तिपूर्ण बतलाया है कि एथलेट्स व खिलाड़ियों के लिये मांस का पकौड़ा आवश्यक है। मैक्सिकन औलम्पिक के पूर्व स्विटजरलैण्ड में एथलेटस खिलाड़ियों को उनके प्रशिक्षण के दौरान प्रति व्यक्ति प्लेट के आकार एक बड़ा पकौड़ा दिया जाने लगा जो अत्यन्त ही खर्चीला और गरिष्ठ था।

वर्ल्ड हेल्थ आरगेनाइजेशन द्वारा प्रकाशित एक पुस्तक "हैण्ड बुक आन ह्यूमन न्यूट्रीशनल रिक्वायरमेंट, १९७४" के अनुसार अधिक परिश्रम करने वाले व्यक्तियों को प्रोटीन की अधिक मात्रा की आवश्यकता होती है, यह एक भ्रम पूर्ण कथन है। खेल प्रतियोगिता में प्रशिक्षित हो रहे व्यक्ति व अन्य कार्यों में परिश्रमरत व्यक्ति दोनों को ही समान रूप से प्रोटीन की मात्रा चाहिये परन्तु वह भी बहुत अधिक मात्रा में आवश्यक नहीं होती है।

१९६४ की एक घटना है जब कलनर से स्टॉक होम तक ५०० कि. मी. की पद यात्रा १९ व्यक्तियों ने बिना किसी आहार के और बिना किसी प्रोटीन तत्व को ग्रहण किये १० दिन में सम्पन्न की और उन सबों में किसी प्रकार की शारीरिक कमजोरी या कार्य-कुशलता में कमी नजर नहीं आयी। वे बहुत अच्छी अवस्था में अपने गन्तव्य स्थान पर पहुँच गये। स्वास्थ्य विभाग ने इन सबका निरीक्षण करके पूर्णतः स्वस्थ घोषित किया। अधिक विस्मय की बात तो यह देखी गई कि इनमें शाकाहारी व्यक्तियों की शारीरिक वजन में बहुत कम हानि हुई।

१७ वर्षीय मर्रे रोज ने १९५६ तथा १९६० के ओलम्पिक खेलों में तीन-तीन स्वर्ण पुरस्कार अर्जित किये। यह पूर्ण शाकाहारी था।

डा. कार्ल इमर ने मरवर्ग स्पोर्टस स्टूडेन्टस के ऊपर अपना प्रयोग किया, जिसमें उन्हें सब्जियों, फलों व बीज फलों के रूप में कच्चा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आहार दिया जाता था जिसके परिणामस्वरूप उन लोगों ने अभूतपूर्व सफलता प्राप्त की।

डा. ए. ई. स्कीमीड जिनका वजन ८० किलो था और जो प्रतिदिन ३ हजार से ३६०० कैलोरी का उपभोग किया करते थे, परन्तु बाद में उन्होंने मांस और अण्डा खाना त्याग दिया और मात्र अन्न आहार को ही एक मात्र प्रोटीन दाता के रूप में ग्रहण करने लगे। परिणामस्वरूप ढाई वर्ष तक निरन्तर पर्वत शिखरों की चढ़ाई करते रहे। इस बीच उन्हें अपने शारीरिक ताकत में वृद्धि का अनुभव हुआ और कम आहार ग्रहण करके भी अपनी क्षमता को स्थिर बनाये रखने में समर्थ हो सके। वे बाद में नित्य २४०० कैलोरी का ही उपयोग करने लगे। अधिक प्यास लगना और बेहद पसीना आना बहुत हद तक कम हो गया था। वे इन परेशानियों से मुक्त हो गये थे। उन्हें पीने के पानी का बोझ ढोने की आवश्यकता नहीं होती थी। इस प्रकार उनके वहन करने वाले भार में कई गुनी कमी आ गई। मांसपेशियों की कार्य क्षमता बीस से तीस प्रतिशत तक बढ़ गई थी और ऑक्सीजन की आश्यकता में दस से बीस प्रतिशत की कमी हो गई थी।

६० वर्षीय फ्रैंज दुमिका और ६३ वर्षीय मैक्स बूलर ये दोनों पूर्ण शाकाहारी थे और जिन्होंने इस अवस्था में ५५१७ किलोमीटर की यात्रा वियना वर्सेलोना कसाबलाकाटुनीस-रोम से पुनः वियना तक साइकिल से पूरी की थी। ये प्रतिदिन तीस किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से नित्य १८० किलोमीटर चलकर यह दूरी तय करने में पूर्ण समर्थ हो सके थे। डाक्टर जोसिया ओल्ड फील्ड ने कहा कि मेरी मान्यता है कि (१) दीर्घ स्थायी रोगों से मुक्त होने के लिये (२) अपनी ताकत व स्वस्थता को बुढ़ापे तक स्थिर बनाये रखने के लिये (३) शरीर को रोगग्रस्त होने से बचाने व रोग शीघ्र मुक्त होने में पूर्ण समर्थ बनाने के लिये तथा (४) स्वच्छ मस्तिष्क और क्रिया-कुशल शरीर की प्राप्ति के लिये लोग मांस को आहार के रूप में लेना बन्द कर दें। इसी में उनकी भलाई है।

विश्व में सबसे कम मांस का उपयोग भारत में होता है। औसतन भारतीय खाद्य सामग्रियों में एक बटे सौवां भाग मांस एक बटे दो सौवां भाग कैलोरी तथा एक बटे पचास वां भाग प्रोटीन होता है। डायर एटलस ऑफ इण्डिया के अनुसार ७१.६ प्रतिशत भारतीय शाकाहारी हैं। वस्तुतः इसमें ६० प्रतिशत व्यक्ति शाकाहारी की श्रेणी में आते हैं क्योंकि मांसाहार यदा-कदा ही लिया जाता है। मध्यम स्तर के लोगों के लिये मांसाहार अत्यन्त खर्चीला होने के कारण आहार में सम्मिलित करना उनकी आर्थिक स्थिति से परे की वस्तु है। मांसाहार शाकाहार की तुलना में बीस गुना अधिक महँगा पड़ता है। वस्तु स्थिति से यदि जन साधारण को परिचित कराया जा सके तो भारत "मांसाहार से शाकाहार की ओर अपना ऐतिहासिक कदम बढ़ा सकता है।

भारत में खाद्य सामग्री से १६६० कैलोरी की कुल प्राप्ति होती है, जिसमें मात्र ५.५ प्रतिशत पशु प्रदत्त सामग्रियों से प्राप्त होती है। यूनाइटेड स्टेट्स में ३३४० कैलोरी के कुल उपभोग में ३६.४० प्रतिशत पशु प्रदत्त सामग्रियों से प्राप्त होती है। यदि भारत में पशु प्रदत्त आहार की मात्रा को कुल कैलोरी की प्राप्त मात्रा (१६६० कैलोरी) का १५ प्रतिशत बढ़ा दिया जाय तो हमें साथ-साथ खाद्यान्न के उत्पादन में २०० प्रतिशत की वृद्धि करनी होगी और मानव मात्र की आहार पूर्ति हेतु खाद्यान्न के वितरण में १०० प्रतिशत की कमी करनी पड़ेगी, अर्थात् हम सबको खाने के लिये कुछ भी न बचा रह सकेगा।

यदि हम चाहते हैं कि भारत में लोगों को प्रतिदिन ३००० कैलोरी की प्राप्ति का प्रबन्ध १५ प्रतिशत पशु प्रदत्त आहार से करें तो हमें यूनाइटेड स्टेट्स के समान दूध, माँस और अण्डे का उत्पादन करना होगा। साथ ही यह भी ध्यान में रखें कि यूनाइटेड स्टेटस में जानवरों और पक्षियों को हमारे यहाँ के कुल खाद्यान्न उत्पादन की वर्तमान मात्रा को खिला दिया जाता है। उदाहरणरस्वरूप १९६४ वर्ष के अन्तर्गत युनाइटेड स्टेट्स में १०० मिलियन टन खाद्यान्न चरागाह के रूप में खिला दिये गये, जबकि उस वर्ष भारत में कुल उत्पादन ६० मिलियन टन ही था। अमेरिका की लगभग आधा भूमि चारा और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाद्यान्न उत्पादन में संलग्न है और २५६ मिलियन हेक्टेयर भूमि मात्र घास उत्पादन हेतु है जबकि भारत में मात्र १३-८ मिलियन हेक्टेयर भूमि इस कार्य हेतु उपलब्ध है। भूमि के इस दुरुपयोग को अमेरिका वहन कर सकता है क्योंकि उसके पास हमारे यहाँ की कुल जनसंख्या का एक तिहाई भाग है, जानवरों की कुल संख्या का ५८ प्रतिशत ही है और साथ ही उन्नत कृषि तकनीकी और विशाल उपजाऊ भूमि उपलब्ध है। परन्तु भारत इन देशों की नकल करने में सक्षम नहीं हो सकता है।

भारत यदि पूर्ण रूप से अन्न, सब्जी फल तथा बच्चों, माताओं व जवानों के लिये २५० ग्राम दूध आदि को ही अपने आहार-सामग्री के रूप में स्वीकार कर ले तथा मांस अण्डे आदि के उत्पादन पर पूर्ण रूप से रोक लगा दे तो वर्तमान जनसंख्या को भरपेट खाना उपलब्ध कराने लायक भूमि पूर्ण रूप से मौजूद है और यदि विकसित कृषि प्रणाली को व्यवहार में लाया जाय तो इतनी ही भूमि से आज की दुगनी जनसंख्या आराम से खा सकती है।

मांसाहार हर दृष्टि से अहितकर

पुष्टाई और अधिक प्रोटीन के भ्रम में प्रायः लोग अण्डा, मांस, मछली खाते हैं, जबकि तथ्य यह है कि मांसाहार में शाकाहार की तुलना में पौष्टिकता बहुत कम होती है। पशुओं के जिन अंगों का मांस खाद्य रूप में प्रयुक्त होता है, उनमें वैज्ञानिकों के अनुसार यूरिक एसिड की मात्रा अधिक होती है। इसके जमा होते रहने से गठिया, मूत्र रोग, रक्त विकास जैसी घातक बीमारियाँ शरीर को जकड़ लेती हैं। अपनी जटिल संरचना के कारण मांस अच्छी तरह पचता भी नहीं, अतः पाचन संस्थान का गड़बड़ा जाना स्वाभाविक ही है। इसके सेवन से बुद्धि भ्रष्टता पनपती है सो अलग। शाकाहारी इन व्यथाओं से बहुत कम ग्रसित पाये जाते हैं। मानवी काय संरचना एवं उसकी क्रिया प्रणाली वनस्पतियों के पूर्णतया अनुकूल है, अन्यथा बीमार पड़ने पर मनुष्य को शाक और फलों पर क्यों रखा जाता है ? स्वाभाविक भोजन को देखते ही उस रूप में खाने की इच्छा सभी की होती है। अन्न, फल, शाक यही मनुष्य का स्वाभाविक एवं मौलिक भोजन है।

शाकाहार और मांसाहार का तुलनात्मक अध्ययन करने के उपरान्त प्रख्यात आहार शास्त्री डॉ. हेग एवं प्रो. वेल्स इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि मांसाहार से पौष्टिकता का जो भ्रम फैला हुआ है, वह निरर्थक प्रोपेगण्डा मात्र है। शाकाहार कहीं अधिक सुपाच्य, सुलभ, सस्ता और पोषक तत्वों से परिपूर्ण है। उनके अनुसार—मांस में प्रोटीन तो है किन्तु सोयाबीन के अनुपात में २५ प्रतिशत कम है। कैलशियम और लोहे की मात्रा और भी न्यूनतम है क्योंकि कैलशियम हड्डियों में रहता है, जो मांस के साथ प्रयुक्त नहीं की जातीं। इसी प्रकार लौहांश रक्त के साथ बह जाता है। दालों में, मूँगफली और मैथी दोनों में प्राटीन की मात्रा मांस से अधिक रहती है। फिर यह दलील थोथी लगती है कि मांस सबसे अधिक पौष्टिक है। दालों में प्रोटीन का अनुपात २२ से २४ प्रतिशत और कार्बोहाइड्रेट ५६ से ६० प्रतिशत तक रहता है, जबकि मांस में प्रोटीन १३ से १८ प्रतिशत और कार्बोहाइड्रेट की मात्रा नगण्य ही रहती है। जहाँ तक चिकनाई का प्रश्न है, मांस से मात्र ४ से १३ प्रतिशत चिकनाई प्राप्त होती है। जबकि गाय, भैंस के घी से ७८ प्रतिशत तक चिकनाई मिलती है। अतः शाकाहारी भोजन पोषक तत्वों की दृष्टि से किसी भी तरह कम नहीं है।

मांस भक्षण से अधिक बलवान बनने की भ्रान्त धारणा को दूर करने की दृष्टि से पिछले दिनों स्वीडन के वैज्ञानिकों ने खिलाड़ियों पर कुछ प्रयोग किये। परीक्षणोपरान्त पाया गया कि सर्व प्रथम तीन दिनों तक पूर्ण मांसाहार पर रखकर जिन २५ नवयुवकों को साइकिल दौड़ में सम्मिलित किया गया था, ६० मिनट बिना थकान के साइकिल चलाते रहे। उसके बाद तीन दिनों तक मांसाहार और शाकाहार के मिश्रित आहार पर रखकर परीक्षण किया गया। देखा गया कि इन युवकों को १०५ मिनट तक थकान नहीं आयी। किन्तु अन्त में पूर्ण शाकाहार खिलाकर जब साइकिल दौड़ में उनका परीक्षण किया गया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तो १५० से १६० मिनट तक बिना थके सभी युवक साइकिल चलाते रहे।

यह मात्र भ्रम है कि शक्ति व ऊर्जा के लिये मांसाहार अनिवार्य है। शुद्ध शाकाहारी भोजन अनाज और आलू जैसे उत्पाद ही अगर सही ढंग से प्रयोग में लाये जायें तो हमारे शरीर में प्रोटीन की मात्रा कम न पड़ेगी। द्वितीय महायुद्ध के बाद यूरोप के प्रसिद्ध शिक्षा शास्त्री डॉ. आग्स्टेड ने जन साधारण के स्वास्थ्य का परीक्षण किया तो पाया कि मोटा अनाज और आलू खाने वालों को औसत ६० प्रतिशत ऊष्मांक प्राप्त हो जाते हैं। यदि यह ठीक ढंग से भरपेट भोजन पायें तो प्रोटीन की पर्याप्त मात्रा इस सस्ते अनाज में ही उपलब्ध हो सकती है। उनके अनुसार औसत पुरुष को ५५ ग्राम तथा औसत महिला को ४६ ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। विशेष परिस्थितियों में ३० ग्राम प्रोटीन से भी काम चलाया जा सकता है। इसके लिये रेशेदार भोजन से प्रोटीन की आवश्यकता पूरी हो सकती है।

यू. एस. ए. के लोमा लिण्डा मेडीकल कॉलेज में चूहों पर आहार सम्बन्धी विभिन्न प्रयोग किये गये। इसमें चूहों को दूध मिश्रित शाकाहारी भोजन, मांसाहारी भोजन तथा बिना दूध का शाकाहारी भोजन दिया गया। एक माह तक उक्त प्रयोग करने पर तीनों प्रकार के चूहों पर स्वास्थ्य सम्बन्धी सभी समानतायें पायी गयीं। अतः प्रोटीन के नाम पर मांसाहार का कोई महत्त्व नहीं। हरी सब्जियों और फलों का प्रयोग बढ़ाकर अच्छा स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है। दूध की कमी सोयाबीन, मूँगफली आदि अनाजों से पर्याप्त मात्रा में पूरी की जा सकती है। मांसाहार खाद्य समस्या का समाधान नहीं हो सकता और न ही उतनी शक्ति प्रदान कर सकता है। इस सन्दर्भ में कितने ही प्रयोग हुये हैं ?

बेल्जियम विश्वविद्यालय के एच. शोरेडन ने शाकाहारी तथा मांसाहारियों के हाथों की ताकत एवं थकान को एक प्रयोग के आधार पर परखा। प्रयोगों की जाँच करके मिशिगन के जे. एच. केलाग ने पुष्टि की कि शाकाहारी इसमें श्रेष्ठ ठहरे। आज भी लम्बी दौड़ के धावकों को शाकाहारी मर्यादा पालन की शिक्षा दी जाती है। उच्चकोटि के पहलवान एवं विभिन्न प्रतियोगिताओं वाले खिलाड़ी शाकाहारी रहे हैं। उच्चस्तरीय गायन तथा नृत्य करने वाली महिलाओं को शाकाहारी भोजन द्वारा डायटिंग करायी जाती है।

जापान के विख्यात चिकित्सक डॉ हाशीमोटो का कहना है कि शाकाहार द्वारा कैन्सर जैसे घातक रोग तक नियन्त्रित किये जा सकते हैं। अपने अध्ययन में उनने बताया कि बृहद् आँतों के कैन्सर रोगियों में अधिकतर वही लोग सम्मिलित रहते हैं, जिन्हें शाकाहार से वंचित रहना पड़ता है। कुछ वर्षों पूर्व ग्लोरिया स्वान्सन नामक महिला को चिकित्सकों ने गर्भ का कैन्सर घोषित कर दिया और आपरेशन द्वारा गर्भाशय को पृथक् करने का परामर्श भी दिया, तब ग्लोरिया एक आहार विशेषज्ञ के पास पहुँची और अपनी रुग्णता से उन्हें अवगत कराया। विशेषज्ञ ने उसे मांसाहार का परित्याग कर शाकाहार लेने की सलाह दी। उसने चिकित्सक की सलाह के मुताविक वैसा ही किया। ठीक ढाई वर्ष बाद पुनः जाँच की गयी तो ट्यूमर पूरी तरह से नष्ट हो चुका था।

अन्तर्राष्ट्रीय शाकाहार संघ के उपाध्यक्ष डॉ. वुडलैण्ड का कथन है कि स्वास्थ्य की दृष्टि से मांसाहार का प्रयोग करने वालों के लिये हाथी से अधिक और प्रमाण की क्या आवश्यकता है, जो शाकाहार जगत का बलिष्ठ और विशालकाय प्राणी है। जबकि समूचे जंगल जगत में मांसहारियों में इतना स्वस्थ और बलिष्ठ प्राणी कोई नहीं है।

जार्ज बर्नार्ड शा एवं डॉ. ओल्ड फील्ड के मतानुसार मांस मनुष्य की प्रकृति के प्रतिकूल है। परीक्षण करने पर पाया गया है कि शाकाहारी की अपेक्षा मांसहारियों में क्रोध, कामुकता, ईर्ष्या, प्रतिरोध की भावना, अमानुषिकता अधिक होती है। अतः इस अभक्ष्य भक्षण को त्याग ही देना उत्तम है। अमेरिका के आहार शास्त्री एल. एच. एण्डरसन के अनुसार बुद्धिमान मनुष्य द्वारा निरीह प्राणियों का वध मांस के लिये न उचित है और न शोभनीय, जबकि संसार में शाकाहार प्रचुर मात्रा में है तथा उसे उगाने में मनुष्य पूर्ण समर्थ है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आखिर क्यों खाते हैं आप माँस ?

प्रोटीन शरीर का मुख्य हिस्सा है। माँसपेशियों के ठोस भाग का पाँचवाँ हिस्सा इसी से भरा हुआ है। इसी कारण शरीर विज्ञानियों ने इस 'बॉडी बिल्डिंग मैटेरियल' कहा है। मस्तिष्क से लेकर गुर्दे, हृदय आदि तक सभी महत्त्वपूर्ण अंग अवयव इसी से भरे हैं। इसका सन्तुलन ठीक रहने पर ही शरीर सही और समर्थ बनता है और कमी पड़ने पर शरीर की बाढ़ रुक जाती है। काया सूखन लगती है और रोगों से लड़ने की ताकत नहीं रह जाती। अधिक मेहनत नहीं हो पाती। जल्दी ही बुढ़ापा आकर मरने का संदेश सुनाने लगता है। हमारी कोशिकाओं का क्षरण लगातार होता रहता है। उनकी नई बढ़ोत्तरी के लिये प्रोटीन की मात्रा हमारे भोजन में बनी रहे, यह जरूरी है।

खाद्यों में प्रोटीन का अंश बना रहे, इसका ध्यान रखा जाना चाहिये। इस दृष्टि से उनका चयन करते हुये सावधानी बरती जानी चाहिये। कई लोग भ्रमवश अण्डा-मांस को ही सर्वोपरि प्रोटीनदायक मानते हैं, परन्तु बात ठीक उल्टी है। वैज्ञानिक बताते हैं कि माँस की अपेक्षा दालों में प्रोटीन कहीं अधिक है। विभाजन के हिसाब से अण्डों में १३ प्रतिशत, मछली में १६ प्रतिशत, मूँग की दाल में २४ प्रतिशत, मसूर की दाल में २५ प्रतिशत, उड़द की दाल में ३० प्रतिशत, मूँगफली में २६ प्रतिशत और सोयाबीन में ४२ प्रतिशत प्रोटीन होता है। इस प्रकार माँस की अपेक्षा दालों में ड्योढ़ा-दूना प्रोटीन पाया जाता है, जो कि सस्ता है और ठीक भी।

प्रोटीन को पूरे और अधूरे दो भागों में विभाजित किया जा सकता है। पूर्ण वह है जिनमें खनिज, लवण, वसा आदि की उपयुक्त मात्रा सम्मिलित रहती है। अधूरे वह जिसमें अपना वर्ग तो पर्याप्त रहता है पर दूसरी उपयोगी वस्तुओं की कमी रहती है। इसी कमी को पूरा करने के लिये दूसरी चीजों का समावेश करना पड़ता है। पौष्टिकता की दृष्टि से इन दिनों अण्डे खाने का रिवाज बढ़ रही है। समझा जाता है कि उसमें प्रोटीन तत्व की अधिकता होने के कारण वह ज्यादा लाभदायक सिद्ध होगा, पर लोग यह भूल जाते हैं कि यह लाभदायक दीखता भर है, वास्तविकता वैसी नहीं है। पाचन की दृष्टि से वह काफी कठिन पड़ता है। भारत जैसे गरम देश में वह और भी दुष्पाच्य बन जाता है। तेल में उबले और भुने अण्डों के समान कठिनाई से पचने वाला दूसरा शायद ही कोई पदार्थ हो। उसमें जितना पीलापन रहता है, वही थोड़ा-बहुत ठीक है। सफेदी वाला अंश तो हानि के अलावा और कुछ नहीं करता।

माँस में पाया जाने वाला प्रोटीन उन खनिज-लवणों से रहित होता है, जिनकी शरीर को नितान्त आवश्यकता रहती है। आमतौर से मांसाहारी लोग माँसपेशियाँ ही पकाकर खाते हैं। उनमें खनिजों और लवणों की उपयुक्त मात्रा होने से उस खाद्य को अपूर्ण एवं निम्न प्रोटीन वर्ग में ही सम्मिलित किया जा सकता है।

जिन अवयवों को पुष्टिकर बताया जाता है। उनमें एक और विपत्ति जुड़ी रहती है—यूरिक एसिड की अधिकता, यह तत्व शरीर के भीतर जमा होकर गठिया, मूत्र रोग, रक्त विकार जैसे अनेक रोग उत्पन्न करता है। माँस अम्लधर्मी पदार्थ हैं। वह आँतों में जाकर सड़न पैदा करता है। कुछ समय पहले माँस का रस (शोरवा) बनाकर रोगियों को दिया जाता था, पर अब खाद्य विशेषज्ञों ने घोषित कर दिया है कि उसमें न तो उपयुक्त मात्रा में पौष्टिक तत्व ही रहते हैं और न वह सुपाच्य ही है। उसे रोगियों को पिलाना उनके दुर्बल पेट के साथ अत्याचार करना है।

बीमारियाँ आदमियों में ही नहीं उन प्राणियों में होती हैं, जिनका माँस खाया जाता है। स्पष्ट है माँस के साथ वे भी खाने वालों के शरीर में प्रवेश करेंगी और देर-सबेर उन्हें रोगी बनाकर छोड़ेंगी।

प्राणियों से मिलने वाले प्रोटीन की प्रशंसा उसमें मिलने वाले विटामिन 'ए' के आधार पर की जाती है, पर वह तत्त्व दूध में कहीं अधिक प्रचुरता से पाया जाता है। माँस की तुलना में छैना, पनीर, दही आदि कहीं ज्यादा लाभकारी हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और तो और माँस में सोयाबीन ही कहीं अधिक बेहतर है। उसमें फास्फोरस, लोहा, विटामिन ए, बी डी ई वसा आदि तत्व इतनी मात्रा मे रहते हैं, जितने कि माँस में नहीं होते। उसे उबालकर या बिना उबाले, पीसकर बहुत बढ़िया दूध बनाया जा सकता है। उसमें नींबू का रस डाला जाय तो छैना भी बन सकता है। चीन ने अपनी पौष्टिक खाद्य समस्या का हल सोयाबीन के सहारे ही किया है। अपने देश के लिये भी उसका प्रचलन हर दृष्टि से उपयोगी है। मांसाहार की जगह सोयाबीन बड़ी आसानी से लिया जा सकता है। एक दिन भिगोकर फुलाया हुआ अथवा अंकुरित किया हुआ सोयाबीन तो और भी अधिक गुणकारी बन जाता है। वरन् कई दृष्टि से वह अधिक उपयुक्त भी है। दूध जन्य पदार्थों का प्रोटीन ६५ प्रतिशत तक पच जाता है, जबकि माँस का प्रोटीन आधा भी नहीं पच पाता।

सामान्य दालें यदि भिगोकर या अंकुरित करके बिना छिलका उतारे भाप के सहारे मंदी आँच पर पकाकर खाई जायें तो वे भी प्रोटीन की कमी पूरी करती हैं। दुष्पाच्य तो उन्हें हमारी त्रुटिपूर्ण पकाने की प्रक्रिया बनाती है। जिसमें छिलका उतारना तथा तेज आग के सहारे पकाने और मसाला, घी आदि के छोंक-बघार देकर स्वादिष्ट बनाने पर अधिक ध्यान दिया जाता है।

जानवरों में सबसे बलवान हाथी है। उससे भी ताकतवर गैण्डे को माना जाता है। यह दोनों ही शाकाहारी हैं। यह जानते हुये भी न जाने क्यों लोग शाकाहार की शक्ति पर सन्देह करते हैं।

कलकत्ता विश्व विद्यालय के एप्लाइड कैमिस्ट्री विभाग ने पेड़ों की पत्तियों तथा हरी घास से प्रोटीन निकालकर दिल्ली के विश्व कृषि मेला में एक बार प्रदर्शित किया था। लोगों को यह जानकारी दी गई कि मनुष्य के खाने का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग-प्रोटीन सामान्य घास और मामूली पत्तियों में भी काफी मात्रा में मिल सकता है। उनके आधार पर मजे में जिन्दा रहा जा सकता है।

हमारे पाचक रसों में वह सामर्थ्य है कि अपने स्वाभाविक खाद्य पदार्थों में से वह तत्व खींच लें, जो उसके लिये आवश्यक हैं। इसके लिये यह जरूरी नहीं कि जिन वस्तुओं की आवश्यकता है, उन्हें ही खाया जाये। जिन जानवरों के शरीर में चर्बी अधिक होती है, वे इसे घी, दूध, मक्खन आदि से नहीं प्राप्त करते हैं। जो जरूरी तत्व हैं उसी को भोजन द्वारा लिये जाने की बात सही नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि सरलता से पचने वाले पदार्थ को लिया जाये, जिससे पाचन संस्थान ठीक-ठीक काम करता रहे।

प्रोटीन हमें पर्याप्त मात्रा में मिले यह तो ठीक है, पर उसके लिये शाकाहारी भोजन ही काफी है। उससे आवश्यक मात्रा में आवश्यक स्तर की प्रोटीन हमें मिल सकती है। बलिष्ठता के लिये जरूरी सारे तत्व मनुष्य के स्वाभाविक आहार शाकाहार में जरूरी मात्रा में हाजिर हैं। उन्हें उसी में पाया जाना चाहिये। इसके लिये माँस जैसे बीमार करने वाले वे तामसी आहार का अवलम्बन लेने की कोई जरूरत नहीं है।

मांसाहार का परित्याग ही उचित है

मनुष्य के लिये मांसाहार का निषेध क्यों किया गया है ? इसका कारण यही है कि मनुष्य के मन, मस्तिष्क तथा आत्मा पर मांस भोजन का प्रभाव सर्वथा प्रतिकूल पड़ता है। मन, मस्तिष्क की अनुकूलता का अर्थ है—प्रसन्न शान्त एवं सन्तुलित रहना। माँस जैसे अवैज्ञानिक आहार से निश्चय ही इस परिभाषा की सिद्धि नहीं होती। माँसाहार इन्द्रियों के विकारों को जाग्रत करता है। शरीर में अपनी ऊष्मा से काम, क्रोध आदि न जाने कितने विकारों की वृद्धि कर दिया करता है।

माँस खाने से स्वभाव में क्रोध की वृद्धि होती है यह एक चिर स्वीकृत सत्य है। क्रोधी मनुष्य की आत्म शान्ति रह सकना सम्भव नहीं। बुद्धि का सन्तुलन उसी अवस्था में सम्भव है, जब वह शान्त एवं स्थिर हो, उसमें उत्तेजना की विकृति न पाई जाती हो अन्यथा जरा-सी प्रतिकूलता अथवा विषम परिस्थिति के उत्पन्न होते ही वह चञ्चल होकर असन्तुलित हो उठेगी। चञ्चल, अस्थिर अथवा असन्तुलित बुद्धि के लोग उचित-अनुचित का ठीक-ठीक निर्णय नहीं कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाते और बहुधा उनकी क्रियायें उल्टी हो जाती है, जिससे अकल्याण पूर्ण परिणाम के सिवाय भौगोलिक अवस्थाओं की आशा नहीं की जा सकती।

माँस भोजन की यह विकृति इतनी सार्वकालिक तथा सार्वभौमिक है कि संसार में कभी किसी धर्म प्रवर्तक ने इसके समर्थन नहीं किया है। संसार के हर कोने में उत्पन्न होने वाले महात्माओं एवं महापुरुषों ने मांसाहार का निषेध किया है। जिनके अनुयायी आज संसार में सबसे ज्यादा माँस का भक्षण करते हैं और जिन्होंने माँस भोजन को अपना प्राकृतिक आहार मान रखा है, उन ईसामसीह एवं मोहम्मद साहब ने कभी माँस भोजन का समर्थन नहीं किया।

बाइबिल में एक क्या अनेक स्थानों पर माँसाहार और उससे होने वाली हिंसा का विरोध पाया जाता है। "तू किसी को मार मत। तू मेरे समीप मनुष्य बनकर रह। प्राणियों की हत्या मत कर उनका माँस मत खा।" "ए देखने वाले, देखता क्यों है ? काटे जाने वाले जानवरों के लिये अपनी जुबान खोल।"—बाइबिल के यह आदेश वाक्य इसका जीता जागता प्रमाण है कि महात्मा ईसा मांसाहार के सर्वथा विरुद्ध थे और अपने अनुयायियों को उसका विरोध करने मारे जाने वाले पशुओं के पक्ष में आवाज उठाने का निर्देश दिया करते थे। आज उनके अनुयायी मांस को अपना स्वाभाविक एवं धर्म सम्मत भोजन मानने की भूल कर रहे हैं। यही भूल तो अधिकांश में वह कारण है कि सर्व साधन सम्पन्न होने पर भी बड़े-बड़े ईसाई देश अशांति एवं असन्तुष्टि का केन्द्र बने हुये हैं। विज्ञान की चमत्कारिक उन्नति कर लेने और धन-धान्य की प्रचुरता होने पर भी उनके जीवन में शान्ति एवं सन्तुलन के चिन्ह दिखाई नहीं देते।

इस्लाम धर्म के प्रवर्तक हजरत मोहम्मद ने मुसलमानों के धर्म ग्रन्थ कुरान में स्थान-स्थान पर माँस न खाने और प्राणियों पर दया करने की हिदायत की है—"हरा पेड़ काटने वाले, मनुष्यों की खरीद फरोख्त करने वाले, जानवरों को मारने वाले और पर नारी गमन करने वाले व्यभिचारी को खुदा कभी माफ नहीं करता। खुदा उसी पर रहम करता है, जो उसके बनाये हुये जानवरों के साथ दया का व्यवहार किया करता है।"

दया धर्म का मूल है। दया रहित मनुष्य धर्म से गिर जाता है। माँसाहारी व्यक्ति में उस धर्म मूलक दया का अभाव ही होता है, जो आध्यात्मिक उन्नति की साधक होती है। कहने के लिये कहा जा सकता है कि यदि माँस भोजी जीवों में दया का सर्वथा अभाव रहता तो वे अपने परिवार तथा अपने बच्चों को क्यों तो प्यार करते और क्यों उनका पालन करते ? परिवार अथवा बच्चों के साथ बरती जाने वाली सहानुभूति वह स्वाभाविक दया नहीं मानी जाती जो कि आध्यात्मिक दृष्टिकोण में वांछित है। यह सहानुभूति रक्त जन्य समता अथवा सम्पर्कजन्य मोह ही है। इसमें आध्यात्मिक करुणा का समावेश नहीं रहता।

वास्तव में वह दया है जो अपने बच्चों के समान ही संसार के सारे प्राणियों के लिये समान रूप से प्रवाहित है। माँस भोजन करना हिंसा का एक स्वरूप है और जो हिंसक है, उससे दया की आशा नहीं की जा सकती। माँसाहारियों में समय-समय पर जिस दया के दर्शन होते रहते हैं, वह उनकी दुर्बलता ही कही जायेगी, जो कोई संयोग आ जाने से प्रकट हो जाती है। यदि उनके हृदय में वास्तविक दया, करुणा, कातरता, क्षमा, सम्वेदना, सहानुभूति अथवा सौहार्द्र का निवास रहे तो यह जानते हुये कि माँस प्राप्त करने के लिये पशुओं को मारा जाता है, वे मांसाहार से दूर करने का प्रयत्न करते।

भोजन का मनुष्य के आन्तरिक जीवन पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। "जैसा खाये अन्न वैसा बने मन।" वाली कहावत मात्र कल्पना अथवा कथन मात्र नहीं है। इसके पीछे सांसारिक तथा मनोवैज्ञानिक तथ्य निहित है। आत्मिक उन्नति के लिये मनुष्य के तन-मन एवं बुद्धि का निर्विकार होना बहुत आवश्यक है। भोजन से मनुष्य के यह तीनों तत्व निश्चित रूप से प्रभावित होते हैं। माँस भोजी जिन पशु-पक्षियों का माँस खाया करते हैं, उनके गुण-अवगुण उनमें भी समाहित हो जाते हैं। यदि मानव प्राणी आहार के माध्यम से पशुओं के दोष अपने में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाहित कर लेगा तो उसके मानवीय गुणों में शैथिल्य आ ही जायेगा। स्वार्थ, असहयोग, अविचार, जड़ता अविवेक, अप्रगति, अदया, असहानुभूति, आदि पशुओं के दुर्गुण हैं। जब मनुष्य उनका मांस खाकर इन दोषों को अपने में समाहित कर लेगा तो निश्चय ही वह इनके विपरीत मानवीय गुणों से दूर हटने लगेगा। अब यदि कोई मानवीय गुणों के अभाव में आत्मिक उन्नति का स्वप्न देखता अथवा सात्विक सुख-शान्ति की आकांक्षा करता है तो वह दिन के स्वप्न देखता है, जो कभी भी साकार नहीं हो सकते।

अनेक माँस भोजियों का तर्क रहा करता है कि वह माँस के लिये किसी पशु की हत्या नहीं करते, बाजार में बिकता है मोल ले आते हैं। इस प्रकार उन पर हिंसा अथवा क्रूरता का आक्षेप किस प्रकार लगाया जा सकता है ? भारतीय धर्मशास्त्र में इसका समाधान पहले ही कर दिया गया है। मनुस्मृति की व्यवस्था है—

"अनुमन्ता विशसिता निहन्ता क्रय विक्रयी।
संस्कर्ती चोपहर्तो च खाद कश्चेति घात का।।"

—मांसाहार का समर्थन करने वाला, मांस भक्षण की अनुमति देने वाला, मांस खरीदने या बेचने वाला, पकाने वाला और खाने वाला—यह सब हत्यारे हैं—समान रूप से हिंसा के दोषी हैं।

महाभारत में अनेक स्थानों पर हिंसा रूप मांसाहार का निषेध करते हुये कहा गया है—"मांस खरीदने वाला धन से पशुओं की हत्या करता है, खाने वाला स्वाद द्वारा हत्या करता है, मारने वाला छुरी से हत्या करता है। यह सब हत्यारे ही हैं, जो दूसरों का मांस खाकर अपना माँस बढ़ाना चाहते हैं, उनसे निकृष्ट और कौन हो सकता है ?

नैतिकता, धार्मिकता, मनुष्यता एवं आध्यात्मिकता सभी दृष्टियों में माँसाहार का निषेध किया गया है। इसका मुख्य कारण यही है कि मनुष्य जीवन का लक्ष्य आध्यात्मिक प्रगति करना ही है। माँसाहार उस प्रगति में हर प्रकार से बाधक होता है। मांसाहार से सबसे बड़ी आध्यात्मिक हानि यह है कि इससे मनुष्य में निर्दयता तथा स्वार्थपरता का भाव बढ़ता है। वह आत्मा की उपेक्षा करके शरीर को ही सब कुछ समझने लगता है, जिसके फलस्वरूप उसमें दैवी भावों के स्थान पर पाशविक भावों एवं संस्कारों की अभिवृद्धि होती हैं। मांसाहार शत-प्रतिशत तामसी भोजन है। इससे किसी प्रकार इनकार नहीं किया जा सकता।

मांसाहार के अनुकूल मानव प्रकृति नहीं

प्राणी विशेष की जीवन यापन की दैनिक आवश्यकतायें एवं भोजन आदि उसकी शारीरिक रचना एवं स्वभाव के अनुसार प्रकृति प्रदत्त है। यह कहने की बात नहीं है कि निम्नतर प्राणी भी अपनी प्रकृति के अनुसार जीवन यापन करते हैं। बुद्धिमान कहाने वाला ईश्वर का प्रतिनिधि मानव प्रकृति का उल्लंघन करता जा रहा है। वैज्ञानिक प्रगति के अन्य आयाम तो उसकी बुद्धिमत्ता एवं क्षमता का परिचय देते हैं किन्तु अपनी शारीरिक रचना के प्रतिकूल मांसाहार करना नहीं। यह बात तब भी मानी जा सकती थी कि इसमें कोई फायदा होता हो किन्तु मांस मानव प्रकृति के नितान्त विरुद्ध और हानिकारक है।

मांसाहारी और शाकाहारी प्राणियों की प्रकृति पृथक्-पृथक् है। इस बात को सिद्ध करते हुये डा. अर्नेस्ट क्रासकी ने बताया है कि "मानव शरीर की रचना मांसाहारी प्राणियों के समान नहीं है। इसकी रचना शाकाहारी प्राणियों के समान है। शाकाहारी प्राणियों की भोजन पचाने वाली अंतड़ियाँ लम्बाई में अधिक और मांसाहारियों की छोटी होती हैं। प्रकृति से इसका सम्बन्ध बताते हुये उन्होंने कहा है कि मांस में कैल्शियम और कार्बोहाइड्रेटस की कमी होती है। इसके कारण मांस में शीघ्र ही सड़न पैदा होने लगती है। यदि वह अधिक समय तक शरीर में ही रुका रहे तो उसमें सड़ाँध पैदा हो जाती है, जबकि साग भाजी में कैल्शियम की मात्रा काफी अधिक होती है। इसलिये उसमें इतनी जल्दी सड़न पैदा नहीं होती जितनी जल्दी मांस में। मांसाहारी प्राणियों की आंतें करीब १० फुट और मनुष्य की आंतें ४८ फुट लम्बी होती हैं। मानव की इन लम्बी आंतों में भोजन पचने से लेकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मल विसर्जन तक का समय करीब २४ घण्टे लग जाता है। इतने लम्बे समय तक साग-सब्जी का आहार बिना किसी हानि के शरीर में रह सकता है। किन्तु मांस प्रायः ८-१० घंटों में ही सड़ने लगता है। मानव की लम्बी आंतों में यह संचित होकर सड़ांध से अनेकों प्रकार के रोगों को पैदा करने का कारण बन जाता है।

मांसाहारी और शाकाहारी प्राणियों की प्रकृति का अध्ययन करते हुये डा. ए. वाचमैन एवं उनके सहयोगी डा. डी. एस. वर्नस्टीन ने बताया है कि मांसाहारियों और शाकाहारियों के दांतों की रचना में काफी भिन्नता है। मांसाहारियों के दांत नुकीले और शाकाहारियों के चौड़े-चपटे होते हैं। इसी बात को अर्नेस्ट क्रासम्बी ने स्पष्ट किया है कि शाकाहारियों के जबड़े सटे हुये रहते हैं तथा दाँत पंक्तिबद्ध एवं चौड़े होते हैं ताकि वे एक-दूसरे के सहयोग से खाये गये आहार को ठीक तरह से पीसकर निगलने योग्य बना सकें। किन्तु मांसाहारियों के जबड़े खड़े और दाँत नुकीले औजार के समान अलग-अलग रहते हैं। इनसे वे मांस का चीर-फाड़ सरलतापूर्वक कर सकते हैं।

भोजन शास्त्र विभाग के प्राध्यापक श्री जेम्स ओल्डफील्ड ने अपने परीक्षणों के आधार पर लिखा है कि माँस भक्षी पशुओं की स्वाभाविक आदत यह है कि वे मल त्याग करने के पहिले भूमि को खोदकर उसमें मल-विसर्जन करते हैं और उसे ढाँक देते हैं। इसका कारण स्पष्ट करते हुये उन्होंने बताया है कि मांस भक्षण करने वाले पशुओं का मल सड़ान्ध युक्त हानिकारक होता है। इनका मल जमीन पर खुला पड़ा रहने से हानि होने की सम्भावना रहती है। किन्तु शाकाहारी प्राणियों का मल वनस्पति के लिये उत्तम खाद्य होता है। इनका मल जमीन पर खुला पड़ा रहने पर कोई हानि नहीं होती। प्रकृति ने इसकी व्यवस्था पहले से कर रखी है कि मांसाहारियों की आदत अपने मल को ढाँकने की हो ताकि सम्भावित हानियों से किसी का कोई नुकसान न होने पाये। इस दृष्टि से भी मानव मांसाहारी प्राणियों की प्रकृति के प्रतिकूल हैं।

मांसाहारियों को अपने शिकार को पकड़ने के लिये पंजों का सहारा लेना पड़ता है। इसके लिये उनके पंजों में लम्बे तथा नुकीले नाखून प्रकृति प्रदत्त हैं। इन नाखूनों से हिंसक प्राणी अपने शिकार पर आक्रमण करता है। नुकीले नाखून पकड़े गये प्राणी के शरीर में बिंध जाते हैं और उनका शिकार काबू में आ जाता है। किन्तु शाकाहारी को ऐसे नाखूनों की आवश्यकता नहीं है। इसलिये प्रकृति के अनुसार उनके नाखून और पंजे मांसाहारियों के नाखूनों की तरह नुकीले नहीं होते। मानव के नाखून भी उसकी शाकाहारी प्रकृति के प्रमाण है, मांसाहारी के नहीं।

मांसाहारियों की आँखों से रात को अन्धेरे में अच्छी तरह दिखाई देता है और इनकी आँखें चमकीली होती हैं। इसका कारण यह है कि रात के अन्धेरे में भी मांसाहारी प्राणी शिकार को सरलतापूर्वक पकड़ सकते हैं। दिन को इनके शिकार उतनी सरलता से पकड़ में नहीं आ पाते। वे अपनी रक्षा के लिये भाग-दौड़ कर सुरक्षित स्थान में जा सकते है। किन्तु रात के अन्धेरे में शाकाहारियों की आँखों से दिखाई न देने के कारण वे रात को भाग-दौड़ नहीं कर सकते। शीघ्र ही पकड़े जा सकते हैं। मानव की आंखों से रात को अन्धेरे में दिखाई नहीं देता। यह बात भी प्रमाणित करती है कि मानव मांसाहारी प्राणी नहीं है। वह विशुद्ध रूप से शाकाहारी है।

कुछ सामान्य-सी भिन्नतायें और भी हैं, जो मांसाहारी और शाकाहारी प्राणियों की प्रकृति में पाई जाती हैं। पानी पीने के तरीके दोनों वर्ग के प्राणियों के भिन्न-भिन्न हैं। मांसाहारी प्राणी जीभ से चाटकर पानी पीते हैं, जबकि शाकाहारी प्राणी मुंह द्वारा घूंट खींचकर पानी पीते हैं। मांसाहारियों को जीभ लम्बी लपलपी और खुरदरी होती है। किन्तु शाकाहारियों की जीभ छोटी होती है। मांसाहारियों की चमड़ी से पसीना नहीं निकलता उनके पंजों की गद्दी से पसीना निकलता है। किन्तु शाकाहारियों की चमड़ी से पसीना निकलता है। मांसाहारी प्राणी नाक से सांस नहीं लेते मुँह द्वारा सांस लेते हैं। शाकाहारी नाक से सांस लेते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मांसाहारी और शाकाहारी प्राणियों की प्रकृति में उक्त भिन्नतायें और विशेषतायें पायी जाती हैं। इनके अनुसार मानव की प्रकृति मांसाहारी नहीं शाकाहारी है। अपनी प्रकृति के विरुद्ध भोजन ग्रहण करना, उसके शरीर के लिये हानिकारक ही है। मांस खाने से अनेकों रोगों उत्पन्न होते हैं। इसका प्रभाव आयु पर पड़ता है एवं आयु कम होती है। डा. जेम्स ओस्टर फील्ड ने भी शाकाहारी और मांसाहारी प्राणियों के पाचन तन्त्र का परीक्षण करते हुये यह पाया है कि प्रकृति ने मानव शरीर में पाचन तन्त्र तथा मल विसर्जन यन्त्र उसके १०० वर्षों तक कार्य करते रहने के लिये बनाया है। किन्तु मांस जैसी अखाद्य चीजों को खाकर उसे इस अवधि के पूर्व ही खराब करके नष्ट कर दिया जाता है। मांस खाने वाले व्यक्ति अपनी प्रकृति को समझें और जितनी जल्दी हो प्रकृति विरुद्ध तथा हानिकारक, आहार माँस भक्षण को त्यागें।

शिकागो अमेरिका का एक बड़ा शहर है। वह अपने बड़े-बड़े कसाईखानों के लिये संसार में सबसे बढ़ा-चढ़ा माना जाता है। यहाँ के बूचड़खानों में प्रतिदिन लगभग पच्चीस-तीस हजार पशुओं का वध किया जाता है। काटने से लेकर खाल उतारने, माँस पहुँचाने, पशुओं को पकड़कर लाने, खत्ते पर लगाने, रक्त समेटने, ढोने और सफाई करने के साथ मांस काटने, बाँटने और उसका हिसाब-किताब रखने के लिये विभिन्न कार्मों में लाखों आदमी नियुक्त रहते हैं। यह सबके-सब समान रूप से अकरुण स्वभाव के हो जाते हैं। पशु-वध का वह नृशंस हत्याकांड करते, देखते और उसकी जीविका खाते-पीते उनका निर्दयी हो जाना कोई विलक्षण बात नहीं है।

शिकागो के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी ने अनेक वर्षों अपराधों एवं अपराधियों की जाँच करने के बाद अपनी रिपोर्ट में लिखा है—"अधिकतर अपराध कसाई घरों के कार्य में लगे व्यक्तियों द्वारा ही किये जाते हैं। इस घृणित पेशे को करते-करते इन लोगों की समस्त सद्वृत्तियाँ कुण्ठित हो जाती हैं और तब वे अक्सर अवसर आने पर मनुष्यों पर छुरी फेरने में नहीं हिचकिचाते।" इस प्रकार मांसाहार के कारण समाज का बड़ा वर्ग हृदयहीन होकर नृशंस बन जाता है, जिससे वह समाज का अहित ही किया करता है। जिसकी सद्वृत्तियाँ नष्ट हो गई हों, जो हृदयहीन होकर दारुण स्वभाव का हो गया हो, वह अशान्ति, अपराध अथवा अपकार करने वाला न हो ऐसी आशा करना मरु-मरीचिका के समान एक विडम्बना होगी।

एक अपराध केवल एक अपराध तक ही सीमित नहीं रहता। वह शाखा, प्रशाखा में फूट फैलकर अनेक हो जाते हैं। इस प्रकार एक के द्वारा अन्य अनेक प्रकार के अपराधों की वृद्धि होते रहने से समाज की शान्ति और व्यवस्था को हानि पहुँचना स्वाभाविक ही है। अशांत एवं अव्यवस्थित समाज न कभी प्रगति कर पाया है और न कभी कर पायेगा। कहना न होगा कि समाज की इस अशांति अव्यवस्था का दोष उन माँसभोजियों पर ही जाता है, जिनके लिये पशु काटे जाते हैं और मनुष्य कसाई का काम करके क्रूर एवं असामाजिक बनता है।

मांसाहार अमानवीय भोजन है। उसके खाने से मनुष्य शरीर में पाशविक विकार आ जाते हैं, विभिन्न प्रकारों के रोगों की वृद्धि होती है। वीर्य दूषित हो जाता है, जिसका प्रभाव भावी सन्तान पर पड़े बिना नहीं रहता। रोगी निर्बल एवं निर्दयी संतानों से राष्ट्र की आगामी पीढ़ियाँ खराब हो सकती हैं। माँस भोजियों के बच्चे प्रारम्भ से ही माँस खाना सीख जाते हैं, जिससे उनमें वे सब विकार बहुतायत से संचय हो जाते है, जो मांसाहार से उत्पन्न होते हैं।

जिन बच्चों को बाल्यकाल से ही दया, प्रेम सहृदययता, सहानुभूति एवं सदाचार की शिक्षा दी जाती है, वे आगे चलकर समाज के हितकारी सदस्य और राष्ट्र के योग्य नागरिक बनते हैं। किन्तु जिनमें माँसाहार जैसे क्रूरतापूर्ण कृत्य के द्वारा अकरुण एवं हृदय हीनता की भावना जगा दी जायेगी, उनका समाज के लिये हितकारी सदस्य बन सकना शत-प्रतिशत सम्भव नहीं। माँसाहार में निरत रखते हुये यदि बच्चों को सुशील नागरिकता की शिक्षा दी भी जाये तो वह उन पर अधिक प्रभाव नहीं डालेगी। उपदेश अथवा शिक्षा के अनुरूप आचार-व्यवहार का निर्माण करने से ही किसी सद्शिक्षा का वांछित

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रभाव हो सकता है। विद्वानों का मत है कि संसार में फैले दुराचार दुर्भाव, स्वार्थ और संघर्ष का अस्सी प्रतिशत उत्तरदायित्व मांसाहार पर ही है, जिसे मनुष्य चाव से ग्रहण कर अपनी नैतिक, सामाजिक और राष्ट्रीय हानि कर रहा है।

मांस-भोजी बहुधा शराब और तम्बाकू भी पीने लगते हैं, जिससे माँस भोजन का विकार और भी बढ़ जाता है। माँस भोजन, शराब और तम्बाकू तीनों मिलकर मनुष्य की प्रवृत्तियाँ किस सीमा तक बिगाड़ सकते हैं, इसके लिये समाजशास्त्रियों का यह कथन ही अनुमान कर सकने के लिये पर्याप्त है—चोरी, डकैती, बलात्कार, व्यभिचार एवं हत्या करने वालों में अधिकतर वे ही लोग होते हैं, जो माँस, शराब और तम्बाकू का सेवन किया करते हैं। संसार के समस्त अपराधियों की नब्बे प्रतिशत संख्या बहुधा इन्हीं व्यसनों की आदी होती है।

सामाजिक सुख-शान्ति और मानवता के मंगल के लिये आवश्यक है कि संसार से माँस भोजन की प्रथा को उठा दिया जाये। इसकी विकृति के कारण मनुष्य क्रूर एवं क्रोधी बनकर असामाजिक बन जाता है। समाज एवं राष्ट्र के उत्थान के लिये जिन सुन्दर गुणों, सुकुमार भावनाओं और सद्भावनाओं और सद्प्रवृत्तियों की आवश्यकता होती है, माँसाहार के कारण उनका स्निग्ध विकास नहीं हो पाता। माँसाहार से मनुष्य में हिंसा की भावना बढ़ती है, जिससे समाज में अशान्ति और अमंगल की परिस्थितियाँ उत्पन्न होती हैं। माँसाहार के कारण समाज में बढ़ने वाली विकृतियों को देखकर अमेरिका के प्रसिद्ध प्रचारक श्री एजल ने जो भाव व्यक्त किया है, वह ध्यान देने योग्य है। उन्होंने कहा—

"गरीब और अनमोल प्राणियों के वकील की हैसियत से मैं आपको बतलाना चाहता हूँ कि जितनी शीघ्र बच्चों को मांस भोजन से विरत कर, उनमें जीव दया और समस्त प्राणियों के प्रति सहानुभूति की भावना जगाने के लिये शिक्षण संस्थाओं में मांगलिक साहित्य का प्रचार किया जायेगा, उतनी शीघ्र नाशकारी हिंसा-भावना की जड़ कटेगी। इतना ही नहीं बल्कि सब प्रकार के अपराधों को मूल नष्ट हो जायेगा। कुकृत्य के बदले दण्ड देने और जेल में बन्द करने से जहाँ एक अपराध को रोका जा सकता है, वहाँ बच्चों को निरामिष भोजी एवं अहिंसक बनाकर आगामी समाज से सारे दुष्ट कार्यों को मिटाया जा सकता है।"

मांस भोजन से होने वाली सामाजिक एवं राष्ट्रीय हानि पर विचार करना और उसे छोड़ देना मनुष्यता का सबसे बड़ा सम्मान है। इस दृष्टि से याज्ञवल्क्य स्मृति का यह वाक्य हृदयंगम करने योग्य है—

"सर्वान्कामानवाप्नोति तपमेध फलं तथा।
गृहेपि निवासत्विन्दो मुनि माँस विवर्जनात्।।"

जो गृहस्थ माँस का त्याग कर देता है, वह मुनि के समान है, उसे अश्वमेध यज्ञ का फल अनायास ही प्राप्त हो जाता है और उसकी मनोकामनायें पूर्ण हो जाती हैं।

मांसाहार : गुनाह बेलज्जत

शरीर को प्रतिदिन जितनी लोहे की आवश्यकता पड़ती है, उसकी पूर्ति के लिये डेढ़ पौंड मांस अथवा साढ़े सात पौंड मछली खानी पड़ेगी। लौह वस्तुतः मांस में नहीं रक्त में होता है। मांस में जितना अंश रक्त का रहा होगा, उसी आधार पर लोहा पाया जायेगा, फिर प्राणियों के रक्त से मिला लौह दुष्पाच्य होता है और आसानी से मानव रक्त में नहीं घुलता, जबकि वनस्पतियों में रहने वाला लोहा बड़ी सरलतापूर्वक हमारे शरीर में घुल जाता है।

कैलशियम मांस में नहीं के बराबर होता है, वह कड़े पुट्ठों में एवं हड्डियों में ही पाया जाता है। कोमल मांस जो आमतौर से पाया जाता है, उसमें एक प्रतिशत भी कम कैलशियम है। मछली में वह कुछ अधिक अवश्य होता है पर रोटी से अधिक नहीं।

मांस में रहने वाली खनिज गैस शरीर में जाकर उचित क्षार तत्व को नष्ट करती है। रक्तचाप की वृद्धि एवं मूत्र में एसिड उत्पन्न करती है।

जीवित पशु के तन्तु अत्यन्त कोमल होते हैं किन्तु इसके मरते ही कड़े हो जाते हैं। यह कड़ापन पकने और पचने में भारी पड़ता है। जब मांस सड़ता है, तभी वे तन्तु कोमल पड़ते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। इसलिये ताजे मांस को कुछ समय हवा में लटकाकर रखा जाता है ताकि वह सड़ने लगे और मुलायम हो जाय, सड़न आरम्भ होने के साथ-साथ ही उसमें कई प्रकार के विष उत्पन्न होने लगते हैं और कई घातक कीटाणुओं का जन्म होता है। यह सड़न शरीर में पहुँचकर न जाने कितने प्रकार के उपद्रव खड़े करती है और खाने वाले के स्वास्थ्य को धीरे-धीरे खोखला ही करती जाती है। रक्तचाप और गुर्दे की बीमारियों में आमतौर से डाक्टर मांस खाने की मनाही करते हैं। वे जानते हैं कि जब भले-चंगे आदमी में माँस इस प्रकार की बीमारियाँ उत्पन्न करता है तो रोगग्रस्तों पर और भी अधिक बुरा प्रभाव डालेगा।

वध किये जाते समय जानवर को जिस भयभीत और चीत्कार भरी स्थिति में होकर गुजरना पड़ता है, उसके कारण उनकी अन्तःस्रावी ग्रन्थियाँ तेजी से विष उगलने लगती हैं। उस स्थिति में तेजी से उभरते हुये हारमोन कुछ ही क्षण में समस्त रक्त में घुल जाते हैं और उसका प्रभाव मांस पर भी पड़ता है। यों पिचकारी से निकला हुआ शुद्ध रक्त उतना विषैला नहीं होता, उसे पिया और पचाया भी जा सकता है, किन्तु यदि वधकाल की कातरता में होकर गुजरे हुये रक्त को पिया जाये तो वह भयंकर विपत्ति खड़ी करेगा। यों वध करने के बाद रक्त का अधिकांश भाग बाहर बह जाता है फिर भी मांस में जो पतली रक्त नलिकायें रहती हैं, उनमें तो खून बना ही रहता है। मांस में लालिमा इसी की रहती है। अधिक त्रास देकर मारे जाने वाले जानवर का मांस अधिक स्वादिष्ट होता है, इस मान्यता में इतना ही तथ्य है कि उसमें एक अतिरिक्त विष भरा होता है, जो अभ्यस्त नशेबाजों को जिस प्रकार कड़ुआपन भी स्वादिष्ट लगता है, उसी प्रकार प्रिय लगने लगता है। यह स्वाद निश्चित रूप से हानि को अधिक गहरी हानि बनाता चला जाता है।

पशुवृत्ति और पशु प्रकृति का प्रभाव मांस में जुड़ा रहना स्वाभाविक है। मांसाहारी हिंस्र पशुओं में जो—क्रूरता पाई जाती है, उसे मांसाहार का प्रत्यक्ष परिणाम कह सकते हैं। मनुष्य भी इस दुष्प्रभाव से बच नहीं सकता। उसके स्वभाव में आसुरी तत्व बढ़ते ही जायेंगे। उनकी प्रतिक्रिया शरीर, मन परिवार और समाज पर अवांछनीय स्तर की ही पड़ेगी।

मांस महँगा है, दुष्पाच्य है, काटे हुये पशुओं में से अधिकांश के रुग्ण होने से उनकी बीमारियाँ खाने वालों में घुस पड़ने का खतरा है। इतने पर भी पौष्टिकता के नाम पर जिस प्रोटीन का मांस में बाहुल्य बताया जाता है, वह भी इतना घटिया है कि उससे सोयाबीन जैसे अन्न कहीं अधिक अच्छे सिद्ध होते हैं। "गुनाह बेलज्जत" इसे कहते हैं। प्राणि वध का क्रूर कर्म साथ ही स्वास्थ्य का विनाश। कई बार लगता है कि कहीं बर्बरता को जीवित रखने के लिये ही तो मांसाहारी प्रवृत्ति को जीवित नहीं रखा जा रहा है।

कलकत्ता स्कूल ऑफ टॉपिकल मेडिसिन्स के डॉ. हर्टर और डॉ. केन्टडेले ने बिल्लियों व वानरों के ऊपर प्रयोग करके पाया कि मांसाहार से उनके शरीर में जहर का समावेश हो गया तथा वे शीघ्र ही मृत्यु के शिकार होने लगे। प्रयोग के अन्तर्गत गंध के मांस से कोढ़ जैसे रोग उत्पन्न होते देखे गये। मांसाहार से कैन्सर की संभावनायें भी अधिक बढ़ जाती हैं। वैस्टर्न आस्ट्रेलिया यूनीवर्सिटी के डॉ. बी. के. आर्मस्ट्रांग ने गहन शोध करने के उपरान्त यह निष्कर्ष निकाला है कि शाकाहारी महिलाओं की तुलना में मांसाहारियों की कैंसर से होने वाली मृत्यु ३० से ४० प्रतिशत अधिक है।

अमेरिका में पिछले दशक से अनुसंधानों से पता चला है कि मांसाहार बड़ी, आँत, स्तन और गर्भाशय के कैन्सर का कारण भी बन सकता है। जापान में मांसाहारी कम होने के कारण, इस तरह के कैंसर बहुत विरल हैं। ऐसा अनुमान है कि अधिक चिकनाई तथा पित्त उकसाने वाले गुण के कारण मांसाहार से आँतों में कैंसरकारी प्राकृतिक रसायन जमा हो जाते हैं तथा इससे आँतों में एवं शरीर की चरबी में ईस्ट्रोजन जैसे हारमोन पैदा करते हैं। स्तन और गर्भाशय के कैन्सर की उत्पत्ति अन्ततः ईस्ट्रोजन जैसे यौन हारमोनों द्वारा संप्रेरित होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमें डॉ. एडवर्ड सौन्डर्स के इस कथन को स्मरण रखना चाहिये कि "आने वाली दुनिया मांसाहार के नाम मात्र से भयभीत हो उठेगी। भावी युग के लोगों को शाकाहार के लिये बाध्य होना पड़ेगा।"

हड्डियाँ कमजोर करनी हों तो, मांस खाइये

हार्वर्ड मेडिकल स्कूल अमेरिका के सुप्रसिद्ध चिकित्सक डा. ए. वाचमैन और डा. डी. एस. बर्नस्टीन को आश्चर्य था कि माँस से स्वास्थ्य में सुधार की मान्यता के बावजूद मांसाहारियों की हड्डियाँ कमजोर क्यों होती हैं ? इस बात का निश्चित पता लगाने के लिये दोनों वैज्ञानिकों ने मांसाहारियों तथा शाकाहारियों की शारीरिक गतिविधियों का लम्बे समय तक अध्ययन किया।

जो निष्कर्ष सामने आये, वह मांसाहारियों को चौंका देने वाले थे। इन वैज्ञानिकों ने एक सम्मिलित रिपोर्ट में बताया। मांसाहारियों के मूत्र की जाँच से पता चला है कि उसमें अधिकांश मात्रा तेजाब और क्षार की होती है। यह तेजाब और क्षार शरीर के शुद्ध रक्त से मांस पचाने के लिये तेज हुई शारीरिक मशीन की गर्मी कारण उसी तरह स्खलित होता है, जिस तरह कामुक चिन्तन से वीर्य। बड़ी मात्रा में पेशाब के साथ रक्त का जो क्षार और तेजाब बाहर निकल जाता है, उसे पूरा करने के लिये शरीर में हड्डियों के अतिरिक्त और कोई दूसरा स्रोत मिलता नहीं। फलस्वरूप रक्त अपना सन्तुलन बनाये रखने के लिये क्षार और तेजाब हड्डियों से चूसने लगता है। इस प्रकार मांसाहारी व्यक्ति की हड्डियाँ कमजोर होती चली जाती हैं।

यह तो शरीर प्रणाली में उत्पन्न हुई पहली अवस्था है। सच बात यह है कि इस अनपेक्षित प्रतिक्रिया का दूषित प्रभाव शरीर और मन सब पर पड़ता है। यह नहीं मानना चाहिये कि रक्त हड्डियों से आवश्यक सामग्री ले लेता है, तो उसकी अपनी तेजस्विता स्थिर हो जाती है। लन्दन के सुप्रसिद्ध डाक्टर अलेक्जेण्डर हेग एम. ए., एम. डी. एफ. आर. सी. पी. (लन्दन) ने एक पौंड मांस के यूरिक एसिड विष का अध्ययन करने के बाद पाया कि—

काड मछली में ४ ग्रेन, पलीस मछली में ५ ग्रेन, सुअर के माँस में ६ ग्रेन, भेड़-बकरी में ६.५ ग्रेन, बछड़े के मांस में ८ ग्रेन, सुअर की कमर और रान के हिस्से वाले माँस में ८.५ ग्रेन, चूजे में ६ ग्रेन, गाय की पीठ और पुट्ठे वाले अंगों के मांस में ६ ग्रेन, बोटी जो भूनकर खाई जाती है, उसमें ५४ ग्रेन, जिगर में ९६ ग्रेन और शोरबे में ५० ग्रेन विष पाया जाता है।

'यह विष जब सामान्य स्थिति में रहता है, तब तक उसके दुष्परिणाम दिखाई नहीं देते। पर कुछ ही दिन के माँसाहार के बाद जब वह विष रक्त में अच्छी तरह मिल जाता है, तब दिल की जलन, जिगर की खराबी, साँस रोग, रक्त अल्पता, टी. बी. गठिया, हिस्टीरिया, आलस्य निद्रा का अधिक आना, अजीर्ण, शरीर में दर्द, मौसम के हल्के परिवर्तन से जुकाम व एन्फ्लूएन्जा हो जाना, निमोनिया व मलेरिया आदि सैकड़ों बीमारियाँ हो जाती हैं।'

इन दुष्परिणामों को देखकर ही उक्त दोनों डाक्टरों ने लोगों से अपील की है कि कमजोर हड्डियों वाले लोगों तथा मांसाहार द्वारा रक्त-दूषण से बचने के लिये अधिकतर फल, सब्जियाँ, सब्जियों के प्रोटीन और दूध का सेवन करना चाहिये। शाकाहार से माँसाहार की अपेक्षा शक्ति और पोषक तत्व भारी मात्रा में मिलते हैं। यह लाभ देखकर आज अमरीका में लाखों लोग माँसाहार त्यागकर शाकाहारी बन रहे हैं। अब वहाँ शाकाहारियों की संख्या ५ करोड़ तक जा पहुँची है। फिर भारत जैसे जीव-दया, अहिंसक तथा शाकाहारी देश में लोग मांस खायें, तो यह निरा पागलपन ही होगा।

मांसाहारी अल्पजीवी होते हैं

मनुष्य को कितने समय तक जीवित रहना चाहिये अथवा उसकी स्वाभाविक आयु क्या है ? इस सम्बन्ध में कोई निश्चित सिद्धान्त अभी तक नहीं बनाया जा सका है क्योंकि कई व्यक्ति सवा सौ-डेढ़ सौ वर्ष की उम्र तक जीवित रहते हैं तो कई पैदा होते ही मर जाते हैं। इस स्थिति में औसत आयु तो निकाली जा सकती है परन्तु मनुष्य की स्वाभाविक आयु ज्ञात करना असम्भव नहीं तो अति दुष्कर अवश्य ही है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विज्ञान ने जहाँ कई दिशाओं में अपनी अन्वेषी दृष्टि दौड़ाई वहीं पिछले दिनों इस दिशा में भी प्रयास हुये। वैज्ञानिकों ने कई प्रयोगों और पर्यवेक्षणों द्वारा यह जानने का प्रयास किया कि मनुष्य को कितने वर्षों तक जीवित रहना चाहिये। उसके भिन्न-भिन्न निष्कर्ष भी प्राप्त हुये। परन्तु सर्वाधिक प्रामाणिक और विश्वसनीय सिद्धान्त समझा जाता है। विख्यात वैज्ञानिक जार्ज फन था। लम्बे समय तक और कई प्रकार से किये गये प्रयोगों के बाद प्राप्त परिणामों के आधार पर जार्ज फन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि जितने काल में किसी प्राणी की हड्डी प्रौढ़ होती है उसमें पाँच गुनी अवधि को उस प्राणी की स्वाभाविक आयु माननी चाहिये। इस हिसाब से मनुष्य की आयु १२५ वर्ष के करीब होती है।

डा. डेविड कपूर ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की है। उन्होंने कई प्राणियों के जीवन-चक्र का अध्ययन किया और बताया कि जितने समय में वह प्रौढ़ता प्राप्त करता है, उससे पाँच गुना स्वाभाविक रूप से जीता है। यथा घोड़ा ५ वर्ष में पूरी ऊँचाई को पहुँचता है अतः २५.३० साल तक जीता है। ऊँट ८ वर्ष में युवा होकर ४० साल तक, कुत्ता २ वर्ष में विकसित होकर १० वर्ष तक हाथी ४० वर्ष में पूर्ण विकसित होकर २०० वर्ष जीता है। यह नियम प्रायः देखा गया है। इसके अपवाद भी मिलते हैं। लेकिन जानवरों में इसी तरह के अपवाद होते हैं कि वे अधिक समय तक जीते हैं। इस हिसाब से मनुष्य की आयु न्यूनतम १००-१२५ वर्ष होनी चाहिये, क्योंकि वह २० से २५ वर्ष तक ही प्रौढ़ होता विकास प्राप्त करता है।

वैदिक ऋषियों ने भी गाया है—"जीवेम शरद शतम्" (हम सौ वर्ष तक जीयें)। सुश्रुत ने पूर्ण आयु, मध्यायु और अल्पायु भेद से तीन मान निर्धारित किये हैं। उन्होंने १६ वर्ष तक बाल्यकाल, ७० वर्ष तक मध्यायु और १०० वर्ष की दीर्घायु कहा है।

चरक ने 'सूत्र स्थान' नामक ग्रन्थ के २७वें अध्याय में ३६०० रात्रि (१०० वर्ष) तक जीवित रहने की मनुष्य की स्वाभाविक आयु बताया है।

प्रश्न उठता है फिर मनुष्य अकाल काल-कवलित क्यों होता है ? इसका एकमात्र उत्तर है अपने अनुपयुक्त आहार-विहार के कारण। खासतौर से मनुष्य की खान-पान सम्बन्धी आदतें इस बुरी तरह बिगड़ी हुई हैं कि वे स्वास्थ्य और यौवन का सफाया करके रख देती हैं। मनुष्य स्वस्थ रहने के लिये, स्वाद के लिये खाता है और स्वाद के पीछे यह भी नहीं देखता कि जो कुछ खाया जा रहा है, उसका हमारे स्वास्थ्य पर हमारे अन्तःकरण पर क्या प्रभाव पड़ेगा। किसी विचारक ने कहा है—"मुझे इस बात का आश्चर्य नहीं है, कि मनुष्य अपने साथ रहने वाले पशु-पक्षियों को जो उसके ही परिवार के सदस्यों की तरह हो जाते हैं मारकर क्यों खा जाता है, बल्कि मुझे तो इस बात का आश्चर्य है कि वह मनुष्य को क्यों नहीं खाता ?"

मांसाहार की प्रवृत्ति पर यह एक करारा व्यंग है, जो केवल स्वादलिप्सा के कारण अपनायी जाती है। यों खोजने वालों ने मांसाहार के कई पौष्टिक लाभ भी खोज लिये हैं, लेकिन यह भी विचार किया जाना चाहिये कि वे लाभ विज्ञान की कसौटी पर कितने खरे उतरते हैं ?

आयरलैण्ड निवासी मिस्टर जैकमैक क्लीलैण्ड अपने बाल्यकाल से ही शाकाहारी हैं। वे प्रायः सूर्य के ताप से पके भोजन पर ही निर्वाह करते हैं। ताजे शाक-सब्जियों के रस की उनके आहार में प्रधानता रहती है।

मिस्टर जैक मैक संसार के माने हुये तैराक थे। इन्होंने अनेकों तैराकी प्रतिद्वन्द्विताओं में सफलतापूर्वक भाग लेकर नये-नये कीर्तिमान स्थापित किये। ब्रिटिश द्वीप समूह के सबसे बड़े जलाशय को भी इन्होंने तैरकर पार किया। स्ट्रेट ऑफ जिब्राल्टर, डोनेगलबे, रथनिल चैनल आदि की अनेक खतरनाक तैराकी प्रतियोगिताओं में भी सफलता अर्जित की थी। सन् १९५६ में उन्होंने इंग्लिश चैनल पार करने में प्रथम पुरस्कार पाया है। साइकिल चलाने में भी इन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार प्राप्त किया है।

जनवरी १९५८ ई में किडिर मिनिस्टर—ब्रिटेन निवासी दो सगी बहनों का देहावसान ११ दिन के अन्तर से हुआ। बड़ी बहन जैन वेडलैंड—१०५ वर्ष एवं छोटी बहन कैरोलीन—१०२ वर्ष की होकर मरी। यह अपने समय में मात्र दोनों बहनें ही ब्रिटेन की शतायु मानव थीं, इन दोनों ने आजीवन शाकाहारी भोजन किया था तथा सभी प्रकार के मादक द्रव्यों के सेवन से दूर रहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"नार्थ चाइना हैरल्ड" ने १९३५ में वानशियन जैच नाम के एक २५५ वर्षीय वृद्धा का विस्तृत वृतान्त प्रकाशित किया था। यह वृद्ध व्यक्ति उत्तर चीन के शांगचुआन नामक गाँव में रहता था। वह दिन में केवल दो बार भोजन करता तथा प्रायः फलाहार व शाकाहार का सेवन किया करता था।

लन्दन का थाम्स कार्न नामक व्यक्ति २०७ वर्ष तक इंग्लैण्ड का थामस पैरी १५२ वर्ष तक, फ्रान्स की कौपटेस डैरमण्ड कैथराइन १४५ वर्ष तक, पेरुविया का कैलियम १४० वर्ष तक, अमेरिका निवासी लूई रस्को १२० वर्ष तक, लैगोस का सवीना १२० वर्ष तक जीवित रहे। वे सभी शाकाहारी थे। मांसाहारियों में इतनी लम्बी आयु के व्यक्ति अभी तक ढूँढ़े नहीं जा सके।

टी. जैन किन्स सन् १५०० में पार्क शायर (इंग्लैण्ड) में पैदा हुआ था और १७० वर्ष की आयु पाकर १६७० में मरा। वह दिन में एक बार एक बजे शाकाहारी भोजन करता था।

टीसमवार के दीर्घजीवी डैसीन १६४ वर्ष की आयु तक जिये। उनका खान-पान और रहन-सहन अत्यन्त सादा था। उन्होंने सम्पूर्ण जीवन में कभी भी माँस मछली नहीं खाया।

बल्गेरिया में आज भी दीर्घ जीवन का मान संसार में सर्वाधिक है। वहाँ के अधिकांश लोग मांसाहारी नहीं हैं। उनका मुख्य आहार दूध, दूध निर्मित वस्तुयें तथा शाक-सब्जियाँ हैं। वहाँ आज भी ऐसे वृद्ध हैं, जिनकी आयु १४० से १६० वर्ष तक है।

जर्मनी की महिला श्रीमती ऑगस्ट पयेड ने ग्लैनहासैन में कुछ दिन पूर्व अपना १००वाँ जन्म दिन बड़े आनन्द, उत्साह एवं उल्लास से मनाया। उक्त अवसर पर उन्होंने यह संदेश प्रस्तुत किया कि सौ वर्ष तक जीने का सबसे आसान उपाय है, किसी भी तरह शराब, माँस केक एवं मिठाइयों को न खायें तथा नित्य प्रातः काल एक गिलास जल अवश्य ग्रहण करें। रोगों के उपचार हेतु उन्होंने केवल शाक रोटी और पानी लेकर संयमित जीवन का परामर्श दिया।

अमेरिका के डा. जॉनग्रेनर ने शाक एवं मांस की प्रतिक्रियाओं को जानने के लिये एक प्रयोग किया। दो खरगोशों में एक को कालेस्टराल एवं प्रोटीन युक्त मांस का रस दिया। दूसरे को शाकाहार पर रखा। कुछ माह पश्चात् उन्होंने देखा पहले खरगोश की धमनियों की दीवारें मोटी हो गई हैं, जबकि दूसरा स्वस्थ बना रहा। 'साइन्स न्यूज' नामक पत्रिका में अपने प्रयोग का प्रकाशन करते हुये उन्होंने लिखा कि मांसाहार हृदय रोग का एक प्रमुख कारण है। हृदय रोगों में धमनियाँ कड़ी हो जाती हैं।

इसके विपरीत डा. एल. मेकडानल्ड 'लेन्टनेट' नामक पत्रिका में लिखते हैं कि मात्र एक माह के शाकाहार से एक मांसाहारी हृदय रोगी की धमनियों के कड़ेपन में परिवर्तन आ जाता है। इसका परीक्षण डा. मेक्डानल्ड ने स्वयं कई हृदय रोगियों पर किया था। अमेरिकन मेडिकल एसोसियेशन द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट के अनुसार ६५ प्रतिशत हार्ट अटैक एवं ब्लड प्रैशर की बीमारियों का उपचार शुद्ध शाकाहारी भोजन प्रणाली अपनाकर किया जा सकता है।

अन्तर्राष्ट्रीय स्वास्थ्य विभाग के एक पर्यवेक्षण में विभिन्न देशों के हृदय रोगियों के आँकड़े एकत्रित किये गये। पर्यवेक्षण में आश्चर्यजनक तथ्य निकले। जिन देशों में मांसाहार की प्रवृत्ति सर्वाधिक है, वहाँ हृदय रोगियों की संख्या भी सबसे अधिक अधिक है, जबकि शाकाहारी देशों में जहाँ मांसाहार की प्रवृत्ति न्यूनतम है, वहाँ हृदय रोगियों की संख्या सबसे कम पायी गई। इस अध्ययन में एक तथ्य और मालूम हुआ कि शाकाहारी व्यक्तियों का जीवन मांसाहारियों की तुलना में अधिक सरल व्याधिरहित प्रसन्नचित्त और दीर्घायु होता है।

लन्दन के राष्ट्रीय हृदय चिकित्सालय के संचालक डा. डोनालरोज ने शाकाहारी एवं मांसाहारी रोगियों का तुलनात्मक अध्ययन किया। परीक्षण के उपरान्त निष्कर्ष निकला कि हृदय रोग की बीमारियाँ शाकाहार करने वालों की तुलना में मांसाहारियों को अधिक होती है।

अमेरिका से प्रकाशित होने वाली पत्रिका पेस्टीसाइड जर्नल नामक पत्रिका के एक लेख में वर्णन है कि पेड़-पौधों एवं परिस्थितियों में बीमारी पैदा करने वाले विषाणु मांस, मछली एवं अण्डे की तुलना में नगण्य मात्रा में पाये जाते हैं, जबकि जानवरों में जिनका कि मांसाहार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिये प्रयोग किया जाता है, मरकरी आर्सेनिक जैसे विषाक्त द्रव्य पाये जाते हैं, जो अनेकानेक बीमारियों को जन्म देते हैं।

कुछ वर्ष पूर्व अफ्रीका के हुन्जा कबीले के लोगों में बीमारियों का नामोनिशान तक न था, जब तक वे शाकाहारी थे। फैन्सी खान-पान का प्रचलन आरम्भ होने के बाद वहाँ भी यह रोग उत्पन्न होने लगे। अन्ततः सर्व सम्मति से उन्होंने शाकाहार पर लौटने का निर्णय लिया। डा. राल्फ विचर ने अपने अनुसंधानों से पता लगाया है कि हड्डी की "आस्टियो पोरोसिस नामक बीमारी अधिकांशतः मांसभोजियों को ही होती है। इससे असमय फ्रैक्चर व सन्धि शोथ होने लगते हैं।

मध्य चिली की ताँबे की खानों में कार्य करने वाले लोग पूर्णतः शाकाहारी हैं। उनके बारे में सर फ्रान्सिस हेड एवं चार्ल्स डर्लिन का कहना है कि ये लोग बड़े बलिष्ठ, कठोर परिश्रम करने वाले हैं। ये २०० पौण्ड वजन अपनी पीठ पर लादकर लगभग १०० मीटर लम्बी सीढ़ी पर आसानी से दस-बारह घन्टे ऊपर-नीचे चक्कर लगा लेते हैं। इनकी तुलना में बाहर से लाये गये मांसाहारी श्रमिक जल्दी थकते देखे गये। हाथी, बैल, गैंडा, आदि शाकाहारी प्राणी बहुत बलिष्ठ होते हैं। "स्पान्सि" जाति के मनुष्य शाकाहारी होते हुये अपनी शक्ति कठोर परिश्रमशीलता एवं सहनशीलता के लिये सम्पूर्ण विश्व में विख्यात रहे हैं। रोम की विश्व विजयी सेना के अधिकांश सैनिक शाकाहारी थे।

डॉ. पाल कार्टेन का कहना है कि "संसार भर के रोगजनक कीटाणुओं से कहीं अधिक मांस तथा मांस से बने हुये अन्य पदार्थ मानव जीवनों को नष्ट करते हैं। दीर्घकाल तक मांसभक्षी बने रहने के लिये निःसन्देह अत्यन्त कठोर हृदय की आवश्यकता है।" एक अन्य आहार विज्ञानी प्रो. हचर्ड ने कहा है—"पशु खाद्य, जिसका दुरुपयोग बहुत बुरी तरह से दिन-प्रतिदिन बढ़ता ही चला जा रहा है कोई खाद्य नहीं है, अपितु एक भयंकर विष है।" नित्य खाते रहने से यह धीमा जहर व्यक्ति को मृत्यु के मुख में शीघ्र तो जाता है। डॉ. ग्रैन्ड का कहना है—"सभी प्रकार से साज-शृंगार करने के पश्चात् भी मांस का मृत्यु उत्पादक भयानक रूप सदा बना ही रहता है।"

डॉक्टर ओ. जेड. होमिश का कहना है—"यह निश्चित ही कितने आश्चर्य की बात है कि अपने पेट में किसी पशु के शव का टुकड़ा रखकर भी आप मनुष्य का शव भक्षण करने वाले पालिनेशियन की चर्चा करते हुये भय से सिहर उठते हैं। यह कितनी विचित्र बात है कि आप अपने पेट को पशुओं का कब्रगाह बनाकर भी विस्मय करते हैं कि आप बीमार क्यों पड़ते हैं और अपने साथ अरुचिकर दुर्गन्ध क्यों लिये फिरते हैं ? क्या आप प्राकृतिक कार्यप्रणाली से इतने अनभिज्ञ हैं। प्रख्यात मनःशास्त्री प्रो. शिराफिएम लिखती हैं कि "मनोविज्ञान का झकझोर देने वाला तथ्य है कि मांसभक्षी भी उसी प्रकार की सड़ांध से भरा रहता है कि जैसे कोई कब्र।"

डॉ. जेन ओल्ड फील्ड ने अपनी "सभ्य लोगों का भोजन" नामक पुस्तक में लिखा है—"मुझे मांस खाये हुये २५ वर्ष से अधिक समय व्यतीत हो गया है। मैंने निरामिष तथा आमिष दोनों प्रकार के भोजनों की भली प्रकार परीक्षा कर ली है। मुझे यह विश्वास हो गया है कि उच्चकोटि का तथा सभ्यतापूर्ण जीवन व्यतीत करने के लिये आमिष भोजन को त्याग कर निरामिष भोजन अर्थात् फलाहार करना चाहिये। वेदों में भी कहा गया है कि—"अविवेकशील और मूढ़ यजमान पशु अंगों से हवन करते हैं, यह निश्चय ही मूर्खतापूर्ण और निन्दनीय है। अपने से आत्मयज्ञ को करने वाले महापुरुष को बतलाइये। वे ही परमात्मा को सत्य स्वरूप का उपदेश करने के योग्य हो सकते हैं।"

यज्ञ विषय का विशेष रूप से विवेचन करने वाले यजुर्वेद में कहा है—

पशुभिः पशुनाप्नोति पुरोडाशैर्हवीष्या।

वन्दोभिः समिधेनोर्या ज्यामिर्वषट् करान्।।

(अध्याय १०-२०)

"पशुओं द्वारा पशुओं (पशुत्व) को प्राप्त होता है। पुराडाशों से हवियों (अन्नादि) को प्राप्त होता है, इसी प्रकार छन्दों (वेदमन्त्रों) से छन्द

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को, सामधेनियों से (समाधि आदि) सामधोनियों को और षट्कारों को प्राप्त होता है।"

इसी प्रकार एक स्थान पर कहा गया है—"पशुओं की रक्षा करो, गाय को मत मारो, बकरी को मत मारो ..... किसी भी प्राणी की हिंसा मत करो।"

धर्म और विज्ञान किसी भी दृष्टि से पशु हिंसा अथवा माँसाहार का औचित्य सिद्ध नहीं किया जा सकता। मनुष्य के लिये शाकाहार ही स्वाभाविक भोजन है और वही किया भी जाना चाहिये। समय की माँग है कि भारत जैसे सात्विक देश में बढ़ रही माँसाहार की प्रवृत्ति पर रोकथाम हेतु व्यापक स्तर पर आन्दोलन चलें।

इस बर्बादी के बिना भी काम चल सकता है

बढ़ते हुये पशु वध के आँकड़ों को देखते हुये मानवी दया धर्म का महत्त्व समझने वाले अर्थशास्त्री एवं कृषि विज्ञानी सभी समान रूप से दुःखी हैं। इन सभी दृष्टिकोणों से पशु धन का अस्वाभाविक ह्रास अन्ततः दूरगामी हानिकारक परिणाम उपस्थित करेगा।

पशु वध के दो बड़े कारण बताये जाते हैं एक मांस दूसरे चमड़े की प्राप्ति। देखना यह है कि इनके दूसरे विकल्प हैं क्या ? मांस प्रोटीन प्रधान होता है। लगभग उतना ही सोयाबीन में होता है। मांस दुष्पाच्य है, जबकि सोयाबीन उसकी तुलना में सस्ता भी और सुपाच्य है। दूसरे चमड़े की आवश्यकता जुटाने का प्रश्न आता है। चमड़े का प्रधान उपयोग जूते के लिये होता रहा है। अब रबड़ और प्लास्टिक का उत्पादन इतनी मात्रा में होता है कि उससे जूते चप्पलों का काम मजे में चल सके। बक्से आदि भी उसी से बन सकते हैं। ऐसी वस्तुयें बहुत कम रह गई हैं, जिनके लिये चमड़े के अतिरिक्त और कोई विकल्प न निकला हो या निकाला न जा सके।

बूढ़ा और निकम्मा पशु भी जो खाता है उसके बदले में इतना मलमूत्र देता रहता है, जिसकी कीमत सही उपयोग करने पर हाथों हाथ मिल जाती है। गोबर का ठीक उपयोग गोबर गैस और खाद के रूप में दुहरा हो सकता है और वह इतने दाम का होता, जिससे उसके लिये रूखा-सूखा चारा जुटाया जा सकता है। जहाँ जंगल है वहाँ तो घास या पेड़ की पत्तियों से अपना निर्वाह करते रहते हैं।

हिन्दुस्तान कृषि प्रधान देश है। जहाँ वनस्पति का अभाव है, वहाँ मांसाहार को विकल्प बनाने की बात सोची भी जा सकती है। फिर यह माना जाय कि कुछ का इसी के लिये आग्रह है तो विदेश को मांस या चमड़ा न भेजने की स्थिति में उनका गुजारा भी बूढ़े निकम्मे पशुओं के मांस से चल सकता है। ऐसी दशा में वर्तमान बूचड़खानों का व्यवसाय प्रायः चौथाई ही रह सकता है। चमड़ा प्रयोग का फैशन और माँस चमड़े का निर्यात यह दो बड़े कारण हैं, जिनके कारण पशु हत्या के आँकड़े बढ़ते जाते हैं। इस प्रसंग में भूमि को बहुमूल्य खाद से वंचित रहना पड़ता है। इसकी आवश्यकता रासायनिक खादों से पूरी करना ऐसा ही है जैसा सोने का अण्डा देने वाली मुर्गी का पेट चीरकर एक दिन में सैकड़ों अण्डे निकाल लेने की कोशिश करना। रासायनिक खाद के तत्काल मिलने वाले लाभों से लालायित होकर अमेरिका जैसे देशों ने अपनी लाखों एकड़ भूमि बाँझ बना ली है और अब लाभ के लालच में उठाई गई हानि के लिये पछताते हैं। भूमि के लिये पशुओं का मल मूत्र, अस्थि एवं मृतक मांस ही सर्वोत्तम खाद है। पशु मरने पर भी जो कुछ छोड़ जाता है, वह इतना कम नहीं होता कि उनके बुढ़ाने के दिनों में घाटा सहना पड़े या उसकी भरपाई न हो सके।

पशु वध हमारी वास्तविक आवश्यकता नहीं। वह सर्वथा कृत्रिम है। चमड़ा नकली बनने लगा है। मांस के प्रोटीन की तुलना में दालों का प्रोटीन कहीं सस्ता और सुपाच्य है। जगह खाली करना हो तो आधे जीवन दूध उत्पन्न करने और आधे जीवन हल या वाहनों के निमित्त उसका उपयोग करने में संख्या वृद्धि होने और जमीन की कमी पड़ने की समस्या भी उत्पन्न न होगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

गोबर की उपयोगिता अब दिन-दिन बढ़ रही है। खाद की दृष्टि में तो वह सर्वोत्तम है अब उसका एक अंश ईंधन के रूप में उपयोग करने का भी नया विकल्प सामने आया है। पत्थर के कोयले का चूरा फेंकना पड़ता है। उसे गोबर में मिलाकर जलने वाली टिकिया बनाई जा सकती है और अँगीठी में उसका अच्छा खासा उपयोग हो सकता है। इसी प्रकार गोबर और कोयले के चूरे के तनिक बड़े उपले बनाकर उनसे देहाती कुम्हारों के काम आने वाले ईंधन की आवश्यकता पूरी हो सकती।

मिट्टी के कुल्हड़ सकोरे घड़े सुराही आदि दैनिक उपयोग की आवश्यक वस्तुयें हैं। इसके अतिरिक्त घरों की सस्ती छतें डालने के लिये सस्ती खपरैल की आवश्यकता पड़ती है। यह भी वस्तुएँ कुम्हार बनाते, पकाते और देहाती जीवन की महत्त्वपूर्ण आवश्यकता पूरी करते हैं। पर अब इस छोटी सामिग्री को पकाने के लिये कोई साधन नहीं मिलते। जो मिलते हैं वे इतने महँगे होते हैं कि उपभोक्ता इनकी बजाय सस्ती धातुओं की प्लास्टिक की चीज खरीदकर निश्चिन्त होने की बात सोचता है। कुम्हार ईंधन के अभाव में अपना परम्परागत व्यवसाय छोड़ने को विवश है। कुछ समय पूर्व गोबर के उपले सर्वत्र बनते और जलते थे। अब समझदारी बढ़ी है तो लोगों ने गोबर का उपयोग खाद के रूप में करना आरम्भ कर दिया है। उपले 'जलावन के रूप में काम में आने का रिवाज चल गया। फिर आवा कैसे पके ? अब नया विकल्प सामने आया है कि गधे की लीद, थोड़ा गोबर और पत्थर का चूरा इन सबको मिलाकर आवा पकाने वाला ईंधन बना लिया जाये। पर यह सम्भव तभी है, जब पशु उतने हों, जिनका गोबर नितान्त आवश्यक खेत की खाद से कुछ अतिरिक्त बच सके। यह थोड़ी कुशलता बरतने पर सम्भव है असम्भव नहीं।

पशु हमारे लिये जीवन प्राण हैं। यों कहने को तो वनस्पति ही मनुष्य का जीवन निर्वाह माना जाता है पर उसके मध्य में पशु को भी गिन लेने में बात पूरी बनती है। घास, घास से पशु, पशु के श्रम से मानवी आहार यों सोचना ही ठीक है। साथ ही यह तथ्य भी है कि वह भूमि से जो चारा अपने लिये प्राप्त करता है, उसे मल मूत्र अस्थि मांस आदि के रूप में उसे वापिस कर देता है। यह समूचा जीवन-चक्र है। इसकी मध्यवर्ती कड़ी पशु को अकारण नष्ट करके हम घाटा उठाते हैं। अपने ही पैरों में आप कुल्हाड़ी मारते हैं। वनस्पति रक्षणीय है। उसकी उत्पत्ति तो भूमि और जल के द्वारा होती है पर उसका भरपूर लाभ मनुष्य उठाता है, इस लाभ में पशु को भी भागीदार बनाये रहने से काम चलेगा। उसे काट-पीट कर बर्बाद कर देने पर हम पशु वध ही नहीं करते, अपनी ही खुशहाली को तोड़-फोड़कर बर्बाद करते हैं। सबसे बड़ा घाटा अपनी सौम्यता, सद्भावना, दयालुता जैसी उत्कृष्टताओं को गँवा बैठने के रूप में उठाते हैं। इसका परिणाम यह होगा कि हम परस्पर भी वैसी ही निष्ठुरता का व्यवहार करने में हिचक-झिझक अनुभव न करेंगे और उस जंगल कानून को अपनाने लगेंगे, जिसका मनुष्य समाज में प्रचलन न चल पड़े इसी की आशा की जाती है। जिसकी लाठी उसकी भैंस के नाते यदि हम निरीह पशुओं का विनाश करते हैं तो स्मरण रखना चाहिये कि हमसे भी बड़ी कोई न्याय सत्ता मौजूद है, जो सबके कृत्यों को जानती, देखती और अनुरूप फैसला करती है।

इतनी सब जानते-समझते हुये भी इन पशुओं पर अत्याचार अब भी जारी है। विशेषकर विज्ञान के क्षेत्र में तो इस नृशंसता का रुकना निकट भविष्य में असम्भव ही लगता है। प्रयोग परीक्षण और सौंदर्य प्रसाधन के नाम पर अब भी प्रतिदिन न जाने कितने पशु विज्ञान की भेंट चढ़ते हैं, कुछ कहा नहीं जा सकता।

वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं में किये जाने वाले क्रूर प्रयोगों के शिकार कई जानवर बनते हैं। एक तरह के प्रयोग में बिजली के हीटर से उबलते हुये पानी में, जब पानी का तापक्रम १६४ डिग्री फारेनहाइट पहुँच जाता है यानी इतना उबल जाता है कि भाप बनने लगे, तब एक साथ आठ-दस बन्दरों को उसमें फेंक दिया जाता है। बेचारे बन्दर बड़ी कातर चीत्कार करते हैं लेकिन उन्हें करीब १५ सैकण्ड तक इस पानी में पड़े रहना पड़ता है। इतने अधिक गरम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पानी के कारण बन्दरों की चमड़ी पर भयानक फफोले पड़ जाते हैं और पूरी चमड़ी क़रीब-करीब जल जाती है।

तुरन्त मृत्यु होने के कारण होने वाली शरीर संरचना पर प्रतिक्रिया का अध्ययन करने के लिये भी बन्दरों का प्रयोग किया जाता है। इसके लिये कई जानवरों को पंक्तिबद्ध खड़ा कर दिया जाता है और इन पर एक साथ गोली चलाई जाती है। इस प्रकार मर जाने वाले बन्दरों पर वहीं खड़े वैज्ञानिकों के दल टूट पड़ते हैं और उनके शरीर की चीर-फाड़ कर जाँच करते हैं। चिकित्सा प्रयोगशालाओं में अनुसंधान के लिये बन्दरों की बड़ी-बड़ी मेजों पर लिटा दिया जाता है तथा नलियों के द्वारा उनके शरीर का सारा रक्त निचोड़ लिया जाता है। इस प्रयोग का उद्देश्य है रक्त निकल जाने के फलस्वरूप शरीर पर होने वाले आघात के असर का अध्ययन और यह देखना कि इस स्थिति में कितनी देर यह निरीह पशु जीवित रह पाता है ?

विशेष केबिनों में बिठाकर बन्दरों का इस ढंग से दुर्घटनाओं का शिकार किया जाता है जिससे उनके सिर पर भयानक चोटें पहुँचे। इस प्रयोग का उद्देश्य सर की चोटों का असर जानना बताया जाता है। इस तरह के प्रयोग एक बार नहीं अनेकों बार दुहराये जाते हैं ताकि नये-नये शिक्षित लोग प्रयोगों को अपनी आँखों से देखकर अपनी शिक्षा पूरी कर सकें।

इस तरह के प्रयोग आमतौर पर शोध छात्रों द्वारा बताये जाते हैं। इसका उद्देश्य किसी नये सिद्धान्त का प्रतिपादन नहीं है। वरन् डिग्री प्राप्त करने के लिये शोध प्रबन्ध लिखने के लिये इस तरह के प्रयोग किये जाते हैं। कई स्थानों पर तो मात्र मनोरंजन के लिये अथवा साधारण-सी उत्सुकता को शान्त करने के लिये इस प्रकार के क्रूर अत्याचार किये जाते हैं, जिनमें जानवर असह्य पीड़ा भोगते हुये अपने प्राणों से हाथ धो बैठते हैं।

दवाओं का परीक्षण करने के लिये किस तरह के प्रयोग किये जाते हैं ? इसका एक छोटा-सा उदाहरण है। त्वचा पर किये जाने वाले दवाओं के परीक्षण के लिये प्रायः इन जानवरों की चमड़ी पर एक तेज टेप चिपका दिया जाता है और फिर एक झटके के साथ उसे उखाड़ा जाता है, जिससे कि टेप के साथ-साथ त्वचा की पहली परत भी उखड़ जाये। फिर इन घावों पर वे रसायन लगाये जाते हैं, जिसका कि परीक्षण होना है।

न्यूट्रॉन बम जो केवल मनुष्यों और प्राणियों को ही मारता है सम्पत्ति और इमारतों को कोई क्षति नहीं पहुँचाता, इनके परीक्षण और विकिरण के प्रभावों को जाँचने के लिये भी बेचारे बन्दरों की ही शामत आती है। "वाशिंगटन पोस्ट" में प्रकाशित एक लेख के अनुसार वैज्ञानिकों द्वारा बन्दरों को न्यूट्रॉन विकिरण की प्रायः १० हजार रोएटजन्स (विकिरण की इकाई) दी जाती है, जबकि ५०० आर. विकिरण एक स्वस्थ मनुष्य को मार देने के लिये पर्याप्त है। उसी अखबार में यह विवरण भी प्रकाशित हुआ कि पांच मिनट की अवधि में ही वे सारे बन्दर जिन पर प्रयोग किये गये थे अपंग हो गये और पहले बन्दर की मृत्यु सात घण्टे बाद हुई।

विकिरण के कारण इन बन्दरों को जो यातनायें हुईं, वह दिल दहला देने वाली ही हैं। विकिरण के तुरन्त बाद बन्दरों की नाक बहने लगी फिर वे लगातार पेशाब करते रहे। उनकी आँखों में धुंधलाहट आ गई और शरीर में अचानक दर्द होने लगा। इस दर्द के बाद उनका दम घुटने लगा और अन्त में वह विकलांग होकर कुछ देर के बाद मर गये।

वैज्ञानिकों को इतने से ही संतोष नहीं हुआ बल्कि उन्हें चलाकर, विकिरण द्वारा अपंग बनाकर लगातार उनसे भारी काम लिया गया ताकि यह देखा जा सके कि विकिरण का क्या कुछ कार्य क्षमता पर भी प्रभाव पड़ता है। यह तो केवल युद्ध और चिकित्सा प्रयोगों के लिये जानवरों पर किये जाने वाले क्रूर अत्याचार का ही आंशिक विवरण है। इसके अलावा सौन्दर्य प्रसाधन, आधुनिक सुविधा सामिग्रियाँ और विलासिता की चीजें तैयार करने में भी इन निरीह पशुओं पर इस प्रकार के अत्याचार किये जाते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

टी. एल. वास्वानी के कथनानुसार—इंग्लैण्ड की एक डिब्बे में बन्द मांस बेचने वाली कम्पनी हर दिन १० हजार गायें, २० हजार भेड़ें, २७ हजार सुअर कत्ल करती हैं। यह संख्या इतनी बड़ी है कि दो-दो की लाइन में पशुओं को चलाया जाय तो १५ मील लम्बी कतार बनेगी।

जेकोस्लोवाक लाइफ पत्रिका में प्रकाशित विवरण के अनुसार योरोप के शिकारी संघों के १,२०००० प्रतिशत सदस्य हैं। वे लाइसेन्स प्राप्त करके जो प्राणि वध करते हैं उसका वार्षिक विवरण इस प्रकार है—७३४२ भूरे हिरन, ८२२ फाखता, ३३४ जंगली भेड़ों, ४६७३४ लाल हिरन, २६८० रीछ, ६६८६३३ खरगोश, २८०७४६ आकर्षक परों वाली चिड़ियाँ, १५०४२२ तीतर जैसे साधारण पक्षी। अनुमान है इस घोषित संख्या के अतिरिक्त दूनी-तिगुनी संख्या अघोषित होती है, जिसके लिये लाइसेन्स फीस जमा नहीं की जाती है।

केनेडिब्न थियोसोफिस्ट ने अपने देश में कछुए की पीठ से बने विभिन्न कलात्मक उपकरणों की वृद्धि की चर्चा करते हुये लिखा है—कछुओं की पीठ काटली जाती है और फिर उन्हें मार्मिक वेदना सहते हुये नई पीठ उत्पन्न करने के लिये जीवित रहने दिया जाता है। इस प्रकार बार-बार उनके साथ नृशंस व्यवहार किया जाता रहता है। प्रायः ७६००० पौंड से अधिक वजन के कच्छप उपकरण तो विदेशों को ही निर्यात किये जाते हैं। इस देश में होने वाली खपत तो और भी अधिक है।

विभिन्न प्रकार के शृंगार साधन बनाने के लिये आये दिन लाखों, करोड़ों प्राणियों को बलिवेदी पर चढ़ना पड़ता है। हाथी दाँत, रोएँदार खाल, मृग मद, लाख के खिलौने, मोम के पदार्थ, रेशम के वस्त्र, मोती आभूषण उपयोग करने वाले यदि यह देख समझ पाते कि उनकी इस विलासिता के लिये कितने प्राणियों को किस प्रकार करुण चीत्कार करते हुये अपने प्राण देने पड़ते हैं तो उन्हें अपने ऊपर घोर घृणा ही आ सकती थी। मछलियों को उबालकर निकाले जाने वाला तेल हजारों टन नित्य इसलिये पिया जाता है कि इससे शरीर पुष्ट होगा, पर साथ ही उसके कारण उत्पन्न होने वाली आन्तरिक निकृष्टता और उसकी हानिकारक प्रतिक्रिया को भी सोचा जाता है तो प्रतीत होता कि यह लाभदायक नहीं हानिकारक प्रयास है। औषधियों के नाम पर अब नये किस्म के बूचड़खाने खड़े हो रहे हैं। परीक्षण और अन्वेषण के नाम पर जिस प्रकार मूक प्राणियों की तिल-तिल करके हत्या की जाती है, उसे मानवता के न्यायालय में कदाचित ही समर्थन मिल सके।

भूतकाल में सौन्दर्य प्रसाधन भी थे और औषधियाँ भी। तब न तो सौन्दर्य का अभाव खलता था और न सफल चिकित्सा क्रम में कोई बाधा पड़ती थी। अब प्राणियों के इस प्रकार उत्पीड़न से जो प्रसाधन उपलब्ध किये गये हैं, उसके निर्माता कहते कुछ भी रहें तथ्य यही कहते रहेंगे कि इससे न तो मानवी स्वास्थ्य की सुरक्षा हुई है और न शोभा, सौन्दर्य का स्तर ऊँचा उठा है। इसके विपरीत हमें मानवी उत्कृष्टता की भयावह क्षति करने वाले गर्त में ही धंसते चले गये हैं और उसके दुष्परिणाम वर्तमान में ही नहीं भविष्य में भी भुगतने के लिये विवश होंगे।

अमेरिका के नेचुरल हाइजिनिक सोसाइटी के डाक्टर शेल्टन ने रहस्योद्घाटन किया है कि पशु अंगों से बनाई जाने वाली दवायें तत्काल भले ही कुछ लाभ करती हों, पर पीछे लकवा, केन्सर, स्नायु, विघटन जैसे भयानक रोग उत्पन्न करने का कारण बनती है। घोड़े से बनाये गये सीरम का उपयोग करने वाले रोगी, बड़ी मात्रा में लकवे के शिकार हुये हैं।

लन्दन की बेजीटैरियन एसोसियेशन ने कुछ समय पूर्व एक हजार लड़कों को शाकाहार पर तथा उसी नगर की काउन्टी कौन्सिल ने एक हजार बच्चों को मांसाहार पर छै महीने तक रखा और यह परीक्षण किया कि इस आहार अन्तर का क्या प्रभाव पड़ता है ? स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने दोनों वर्गों की बारीकी से परीक्षा की और पाया कि मांसाहारियों की तुलना में शाकाहारियों का स्वास्थ्य तथा वजन कहीं अधिक अच्छा रहा।

न्यूयार्क ट्रिब्यून के भूतपूर्व सम्पादक "हैरेस ग्रीरेले" ने अपने लम्बे अनुभव और प्रामाणिक अन्वेषण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला था

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि मांसाहारी की तुलना में शाकाहारी दस वर्ष अधिक ज़ी सकता है।

मौर्स औरेलियस—चार्ल्स ब्रेल्ड, क्लेजियस, एमर्सन, प्लुटार्क प्रभृति विचारकों ने मानव समाज में बढ़ रहे मांसाहार पर भारी चिन्ता व्यक्त की है और आशंका प्रकट की है कि इस प्रचलन का प्रभाव भावनात्मक उत्कृष्टता की जड़ें खोखली कर देगा। मनुष्य क्रमशः अधिक क्रूर, स्वार्थी और पतनोन्मुख होता चला जायेगा। जिसका परिणाम व्यक्ति और समाज दोनों को घातक प्रतिफलों के रूप में भुगतना पड़ेगा।

दार्शनिक कालरिज कहते थे—"जो प्राणियों से प्यार करता है, उसे ही सच्चा प्रभु भक्त कहना चाहिये। भक्ति जिस अन्तःकरण में निवास करेगी वह प्रभु की प्रजा को सताने का क्रूर कर्म कर ही नहीं सकेगा।"

पाइथोगोरस ने लिखा है—लोगों ने तुम्हारे भोजन के लिये बिना रक्त बहाये, उत्तम भोजनों की व्यवस्था मौजूद की है, फिर क्यों पाप पूर्ण अखाद्य मांस के लिये ललचाते हो ? वह मत खाओ जो तुम्हारे लिये सर्वथा अयोग्य है।

जार्ज वनार्डशा का कथन है—"युद्धों की उत्पत्ति, अपराधों की वृद्धि, मनोविकार की बाढ़, आवेश और क्रूरता युक्त प्रकृति का प्रधान कारण बढ़ता हुआ मांसाहार ही है।

जे. जे. औसले लिखित "दी गॉस्पेल ऑफ होली ट्रवैल्व' पुस्तक में यह सिद्ध किया है कि ईसाई धर्म की आत्मा मांसाहार की अनुमति नहीं दे सकती। भले ही प्रचलित प्रथा के अनुसार उसका खण्डन न किया जाता हो।.

सर कालिन कार्वेट की पुस्तक 'दी रिंगिंग रेडियन्स' में मांसाहार से होने वाली भावनात्मक क्षति के अनेक उदाहरण प्रस्तुत करते हुये यह सिद्ध किया है कि मांसाहार की बुरी आदत को प्रश्रय देने वाले के लिये आन्तरिक उत्कृष्टता प्राप्त कर सकना कितना कठिन हो जाता है ?

मारगरेट अस्पताल के वरिष्ठ चिकित्सक डा. ओल्ड फील्ड का कथन है कि—"मांस मनुष्य के लिये अप्राकृतिक खाद्य है। उसका बढ़ता हुआ उपयोग जन-साधारण के लिये स्वास्थ्य संकट उत्पन्न कर रहा है। मांस भक्षण का दुष्परिणाम कालान्तर में सांघातिक रोगों का रूप धारण करता है।"

ऐनी बीसेन्ट ने कहा था—पशु हत्या से मानवी प्रकृति में क्रोध, कामुकता, ईर्ष्या प्रतिशोध जैसे अमानुषी उच्छृंखल तत्व बढ़ते हैं। मांसाहार से शरीर की ही नहीं मन की भी रुग्णता बढ़ती है। काटे गये पशुओं का चीत्कार मनुष्य जाति पर नाना प्रकार की विपत्तियाँ बनकर बरसता है।

चार्ल्स बैन्ड ने संसार के महामानव की एक सूची तैयार की है और बताया है कि वे सभी शाकाहारी थे, मांसाहार को उन्होंने कभी स्वीकार नहीं किया। इन महामानवों में बुद्ध, कनफ्यूसियस, जोरास्टर, मूसा, ईसा, इम्पीडोललस, पाइथागोरस, सुकरात, प्लेटो, होमर, पारफाइरियस, लुक्रेजियस, सिसरो, होरेस, यूरेपीडीज, स्पाइजेसिन, न्यूटन, लोबारडोदा, विन्सी, क्याडानों, सन्तफ्रांसिस, गैसेडी, लिट्टर मिल्टन, फ्रैंकलिन, सन्त पीयरे, वायरन, शैली मिचलेट, दान्ते, बालजर, टालस्टाय, रेक्लूज, फ्रांज, हार्टमान, वनार्डशा, कार्मन साइलावा, जैमेन हाफ, वाल्टेयर, रूसो, वेगनर, शोपेनहार, हुम्बोल्ट, लबेनीज, लिग्ने, क्यूनियर, नित्से, ह्यूफलैण्ड, वेलासी, एडीशन, गोइथे आदि का सप्रमाण उल्लेख है।

मानवी महानता और करुणा का परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध है। महान् व्यक्ति करुणा से ओत-प्रोत होते हैं अथवा कारण की प्रतिक्रिया महानता के रूप में परिणत होती है। जो भी हो करुणा और महानता एक ही तथ्य के दो पक्ष हैं, जहाँ मानव आदर्शों को सामने रखेगा, वहाँ मांसाहार के लिये कोई उत्साह न रह जायेगा।

यदि विष ही खाना है, तो अण्डे खायें

"अण्डे खाने से ब्लड प्रेशर होता है, जो बाद में हृदय रोग बन जाता है। यह दुष्पाच्य होने से पेट में गड़बड़ करता ही है, पथरी भी पैदा करता है। अण्डे खाने वालों की आमाशय की दीवारों तथा आँत व रक्तवाही नलिकाओं में घाव पड़ जाते हैं, जो रोग का कारण बनते हैं। पेचिश भी अण्डे खाने से होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ये विचार हैं कैलीफोर्निया यूनीवर्सिटी के वैज्ञानिक डॉ. कैथेरिन तथा डा. जे. अमेन के। परीक्षणों के बाद वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि अण्डे में "कालेस्ट्राल" का अति सघन अनुपात पाया जाता है। यह विष बनकर रक्तवाही नलिकाओं को घायल करता है, जिन पर गन्दगी जमती तथा मार्ग संकरा हो जाता है। इनमें लचक का अभाव हो जाता है। ये नलिकायें बड़ी कोमल व संवेदनशील रचनायें हैं। इनकी कोमलता व संवेदनशीलता घटने से ही बुढ़ापा आता है। इस कारण अण्डे खाने से व्यक्ति शीघ्र बूढ़ा हो जाता है और उसकी आयु कम हो जाती है।

अण्डे को पाश्चात्य स्वास्थ्य विज्ञान सम्पूर्ण भोजन मानता आया है। नई शोधों ने उन्हें अधिक गहराई तक विचार करने के लिये विवश किया है और इस निष्कर्ष पर पहुँचाया है कि अण्डे की उपयोगिता वैसी नहीं है जैसी कि अब तक प्रतिपादित की जाती रही है।

इंग्लैण्ड के डा. राबर्ट ग्रास, प्रो. ओकाडा, डेविडसन, इरविग आदि वैज्ञानिकों ने भी इस दिशा में परीक्षण-प्रयोग किये हैं। उनके आधार पर उन्होंने स्वीकार किया है कि अण्डे खाने वालों को इसके हानिकारक प्रभाव के कारण पेचिश तथा मन्दाग्नि से पीड़ित होना पड़ता है तथा आगे चलकर आँतों तथा आमाशय की जीर्ण व्याधि, क्षय तथा कैन्सर के रूप में परिणत हो सकता है।

डा. डीन्हा (इंग्लैण्ड) ने अपनी विश्व विख्यात पुस्तकों क्रमशः "पोषण का नवीनतम विज्ञान" व "बीमारियों की प्रकृति" में स्पष्ट स्वीकार किया है कि अण्डे मनुष्य के लिये विष हैं। कैल्शियम व कार्बोहाइड्रेट अण्डे में कम होता है। यह पेट सड़ाता और बीमारियाँ पैदा करता है।

इंग्लैण्ड के डा. आर. जे. विलियम ने कहा है—"हो सकता है, अण्डे खाते-खाते शुरू में लोग अपने को अधिक स्वस्थ अनुभव करें और दूसरों को भी ऐसा लगे पर बाद में कई बीमारियों से ग्रसित हो जाते हैं, जिनमें रक्तचाप एक्जीमा जैसे भयानक रोग भी हैं।

उपरोक्त कथन अण्डा खाने वालों के लिये एक चेतावनी है। वैज्ञानिक निष्कर्षों के आधार पर यह सिद्ध हो चला है कि ऐसे आहार से लाभ की अपेक्षा शरीर को हानि ही अधिक उठानी पड़ती है।

मनुष्य का भोजन वनस्पति, फल-फूल तथा दूध ही है। यही दीर्घजीवी होने का राजमार्ग है। प्रबुद्ध वर्ग के वैज्ञानिक एवं विचारक धीरे-धीरे माँसाहार के कारण होने वाले शारीरिक दुष्प्रभाव को समझने लगे हैं। बौद्धिक, आध्यात्मिक और भावनात्मक हानि तो इतनी अधिक है कि उसकी तुलना में यदि शरीर को कुछ लाभ होता भी है तो त्यागने ही योग्य है।

मौत बुलानी हो, तो रोज अण्डा खायें

पौष्टिकता के सम्बन्ध में किये गये तुलनात्मक वैज्ञानिक अध्ययनों से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि चना, सोयाबीन और मूँगफली की तुलना में प्रोटीन, वसा चिकनाई कार्बोहाइड्रेट, खनिज और ऊर्जा का अनुपात अण्डे में कम है। अण्डे में पाये जाने वाली प्रोटीन का प्रतिशत १२ है जबकि चना में २४ प्रतिशत, सोयाबीन में ४३.२ प्रतिशत तथा मूँगफली में ३१.५ प्रतिशत है। इसी प्रकार अण्डे में चिकनाई का प्रतिशत १२ है, जबकि हरे चने में १३, सोयाबीन में १६.५ तथा मूँगफली में ३६.८ प्रतिशत है। अण्डे, में कार्बोहाइड्रेट की उपस्थिति १ प्रतिशत है जबकि हरे चने में ५६.६ प्रतिशत, सोयाबीन में २२.६ और मूँगफली में १६.३ प्रतिशत है। इसी प्रकार खनिज-लवणों का प्रतिशत अण्डे में १ हरे चने में १६.२२, सोयाबीन में १२.४ तथा मूँगफली में २.०५ प्रतिशत है। पोषक ऊर्जा भी अण्डे से कम मिलती है। अण्डे में १६३, हरे चने में ३३५, सोयाबीन में ४४२, मूँगफली में ५४६ कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

अण्डा मांसाहार की श्रेणी में आता है। यह वैज्ञानिक शोधों से भी स्पष्ट हो चुका है। मुर्गियाँ अधिकांश भोजन ताजा कीड़ों, केंचुओं तथा ग्रामबोन से प्राप्त करती हैं। निषेचित और अनिषेचित दोनों प्रकार के अण्डे जीवन युक्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं। शाकाहार की तुलना में अण्डे से उतनी पुष्टाई भी भी प्राप्त नहीं होती, साथ ही इसके सेवन से कितनी ही हानियाँ होने का भय बना रहता है, क्योंकि अण्डे में ५०० से ६०० मिलीग्राम कोलेस्ट्राल की जहरीली मात्रा रहती है, जिससे उच्च रक्त चाप, गुर्दे की बीमारी होने की सम्भावना बढ़ती है। चिकनाई में तल-भूनकर खाने से कोलेस्ट्रोल की मात्रा और भी बढ़ जाती है और रक्त में गाढ़ापन आने लगता है। फलस्वरूप उच्च रक्तचाप, हृदयघात जैसे रोगों की आशंका बढ़ जाती है। चिकित्सा विज्ञानियों के अनुसार बच्चों को अधिक अण्डे सेवन करने से उनके शरीर की सहज स्वाभाविक प्रतिरोधक क्षमता का ह्रास होता है। भावनाओं का विकास भी रुक जाता है। पथरी, पीलिया और आँतों के रोगों का भय बना रहता है।

प्रख्यात नोबुल पुस्कार विजेता डॉ. माइकेल ब्राउन ने अण्डे से होने वाली विविध हानियों पर गहन अनुसन्धान किया है। उनका अभिमत है कि अण्डे से कोलेस्ट्रॉल की रक्त में अभिवृद्धि होती है, जिससे सेवनकर्त्ता में उच्च रक्तचाप और हृदयरोग उत्पन्न होने की पूरी आशंका बनी रहती है। आरम्भ में इसका सेवन लाभकारी भले ही लगे, किन्तु कालान्तर में इससे गम्भीर रोगों के उत्पन्न होने का भय बना रहता है। अतः विवेकशीलता इसी में है कि अण्डे जैसे मांसाहारी अखाद्य सेवन में स्वयं बचा और अन्यान्यों को बचाया जाये।

मांसाहारी और शाकाहारियों के मध्य का अन्तर समझा जाये

शरीर रचना के आधार पर जाना जा सकता है कि कौन प्राणी शाकाहारी है, कौन मांसाहारी ? यों मांसाहारी प्राणी भी सृष्टि में है और वे उसी आहार पर गुजारा करते हैं पर उनकी शरीर रचना एवं प्रकृति शाकाहारियों से भिन्न होती है।

(१) भोजन करने के प्रधान माध्यम दाँत हैं। उन्हीं से वह कुचले और चबाये जाने के उपरान्त पचने योग्य बनता और पेट में जाता है। प्रकृति ने निर्धारित आहार के अनुरूप दाँतों की संरचना की है। बाघ, चीते, कुत्ते, बिल्ली आदि के दाँत मांस को नोंच-नोंच कर खाने योग्य नुकीले बनाये गये हैं और चीर-फाड़ के लिये दो दांत अधिक बड़े और अधिक मजबूत बनाये गये हैं। इसके विपरीत शाकाहारी गाय, बकरा, घोड़े गधे आदि के समतल और छोटे होते हैं। मनुष्य की दन्त रचना भी शाकाहारी वर्ग की है।

(२) मांसाहारी जानवरों के बच्चे जन्मते समय आँख बन्द किये हुये पैदा होते हैं। कई दिन बाद उनकी आँखें खुलती हैं। शाकाहारियों के बच्चे आँख खोले पैदा होते हैं। मनुष्य ऐसा ही है।

(३) मांसाहारी जीवों के शरीर से पसीना नहीं निकलता इसलिये उससे तेज गन्ध आती रहती है। शाकाहारियों के शरीर से पसीना निकलता है।

(४) मांसाहारी जीभ लपलपाते हुये चप-चप करके पानी पीते हैं। इसके विपरीत शाकाहारी घूँट भरकर पीते हैं।

(५) शाकाहारी रात में सोते और दिन में जागते हैं। इसके विपरीत मांसाहारी सोते बेखबर, प्राणियों को पकड़ने के लिये रात में विचरते हैं अस्तु उनकी आँखें अन्धेरे में देख सकने योग्य चमकीली होती हैं। शाकाहारियों की आँखें दिन में और मांसाहारियों की रात में काम कर सकने योग्य बनी होती हैं। मनुष्य की आँखें दिवाचरों की तरह ही बनी हैं।

(६) मांसाहारी शिकार के शरीर को अपने दाँतों और पंजों से दबोच सकते हैं, फाड़ चीर करके खा सकते हैं और कच्चा मांस पचा सकते हैं। ऊपर से चमड़ी बाल आदि उतारने की जरूरत नहीं पड़ती, भेड़िये तो हड्डी तक पचा जाते हैं। शाकाहारी वैसा नहीं कर सकते। मनुष्य के लिये बिना पका मांस पचाना सम्भव नहीं। हड्डी आँतें, बाल, चमड़ी आदि अनेक भाग हटाकर वह केवल मांसपेशियाँ ही पकाकर खा पाता है, उसकी मूल प्रकृति मांसाहारियों जैसी है ही नहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(७) मांसाहारी जीवों की आँतें छोटी होती हैं और शाकाहारियों की बड़ी। मनुष्य बड़ी आँतें वालों में से है।

(८) मांस में जो प्रोटीन पाया जाता है वह बहुत ही घटिया दर्जे का है। पाचन में जटिल है। उसकी तुलना में मूँग, सोयाबीन आदि के प्रोटीन अधिक उच्च कोटि के तथा पाचन में सरल हैं, पालतू पशुओं के शरीरों में भी अब मनुष्यों की तरह ही कई प्रकार के विषाणुओं की भरमार रहने लगी है। वे मांस के साथ खाने वाले के पेट में पहुँचते हैं और उसे तरह-तरह की बीमारियों का शिकार बनाते हैं।

(९) मांसाहारी प्राणी क्रूर, निष्ठुर और छली प्रकृति के होते हैं। वैसी ही प्रकृति मांस खाने वाले मनुष्यों की बन जाती है। दया करुणा मनुष्य की सर्वोत्कृष्ट प्रवृत्तियाँ हैं। प्राणी का मांस रोमाञ्चकारी पीड़ा देकर ही प्राप्त किया जा सकता है। यह क्रूर कर्म वधिक की ही तरह खाने वाले की आत्मा को भी निर्दय बनाता है और वह अपने स्वजनों सम्बन्धियों से भी वैसा ही व्यवहार करता है। समाज में अनेकानेक दुष्प्रवृत्तियाँ निष्ठुरता से ही जन्मती हैं और उसे मानवी स्वभाव में सम्मिलित करने का बहुत कुछ उत्तरदायित्व मांसाहार का है।

मांसाहार करने वाले यदि उपरोक्त नौ तथ्यों पर विचार करें तो उन्हें इस कुटेव को छोड़ना ही श्रेयस्कर प्रतीत होगा।

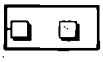

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू : एक भयानक दुर्व्यसन

नशा करने की दूषित प्रवृत्ति

नशा का अर्थ किसी ऐसी वस्तु का सेवन करना माना जाता है, जिससे मनुष्य की स्वाभाविक बुद्धि, स्मृति में अन्तर पड़कर किसी प्रकार की अस्वाभाविक उत्तेजना उत्पन्न हो जाय। मनोवृत्तियाँ अस्त-व्यस्त होने लगें। यह उत्तेजना तीव्र, मध्यम अथवा मन्द कई प्रकार की हो सकती हैं। जब नशे की मात्रा बढ़ जाती है अथवा प्रयोगकर्ता किसी कारणवश उसकी तीव्रता को सहन करने में असमर्थ होता है तो उसका परिणाम बुद्धि और स्मृति का न्यूनाधिक मात्रा में नाश होता है। यह नाश होना आरम्भ में तो अस्थायी अथवा सामयिक होता है, पर जब कोई व्यक्ति लगातार उसमें संलग्न रहता है और आसक्ति अथवा मानसिक हीनतावश उसे अधिकाधिक बढ़ाता जाता है तो उसके दिमाग में स्थायी निर्बलता और अन्य प्रकार के दोष भी उत्पन्न हो जाते हैं और वह अपने नित्य-नैमित्तिक कर्तव्यों के पालन में असावधानी करने लगता है। नशा के प्रभाव से मुनष्य के शरीर, मन तथा बुद्धि-तीनों पर हानिकारक असर पड़ता है और इनका स्तर लगातार घटिया बन जाता है। इस प्रकार नशा मनुष्य के पतन का एक ऐसा मार्ग है, जिसे मनुष्य अपनी मूर्खता अथवा गलती के कारण स्वयं ही ग्रहण करता है और उसके द्वारा अपने पैरों में आप कुल्हाड़ी मारता है।

वास्तव में जितने भी नशे होते हैं वे एक प्रकार के हलके या भारी विष होते हैं। यह दूसरी बात है कि साधारण बोल-चाल में विष का अर्थ उस पदार्थ से समझा जाता है, जिससे मनुष्य की तत्काल मृत्यु हो जाय अथवा उसकी अवस्था सांघातिक बन जाय। पर वैज्ञानिक व्याख्या के अनुसार वह प्रत्येक द्रव्य विष ही है, जो मानव शरीर का स्वाभाविक अंश नहीं बन सकता और उसके भीतर पहुँचकर उसकी क्रिया को दूषित बनाता है। इस दृष्टि से विचार करने पर प्रत्येक नशा के पदार्थ में ऐसे तत्व प्रत्यक्ष रूप में पाये जाते हैं, जिनका यदि 'शुद्ध' रूप में प्रयोग किया जाय तो उससे मनुष्य की तत्काल या शीघ्र ही मृत्यु हो सकती है। उदाहरणार्थ अफीम का सेवन नशा के रूप में आमतौर से किया जाता है, भारत तथा चीन आदि के करोड़ों मनुष्य उसका बड़े शौक से उपयोग करते हैं, पर कितने ही लोग आत्म-हत्या करने के उद्देश्य से उसे कुछ अधिक परिमाण में खाकर मर भी जाते हैं। शराब में 'अल्कोहल' नामक तत्व काफी परिमाण में रहता है, जो शरीर के स्नायुओं और झिल्लियों को गलाकर शरीर को हानि पहुँचाता रहता है और अधिक परिमाण में शीघ्र ही मृत्यु को समीप ला देता है। बिल्कुल साधारण वस्तु समझी जाने वाली तम्बाकू में निकोटीन, प्रूसिक एसिड, कार्बन मोनो ऑक्साइड आदि ऐसे तीव्र विष पाये जाते हैं, जिनको यदि पृथक् करके कुछ रत्ती या माशे की मात्रा में ही मनुष्य अथवा अन्य कुत्ता, बिल्ली, गाय आदि प्राणियों को दिया जाय तो तत्काल उनकी मृत्यु हो सकती है।

मादक द्रव्यों में पाया जाने वाला विषाक्त तत्व

तब करोड़ों मनुष्य जो प्रतिदिन तरह-तरह से तम्बाकू का सेवन करते रहते हैं, मर क्यों नहीं जाते, यह प्रश्न पूछा जा सकता है ? इसका उत्तर यही है कि अन्य तत्वों से मिलकर उनकी मारक शक्ति में अन्तर पड़ जाता है तो भी उन विषों को प्रकृति अथवा क्रिया में सर्वथा परिवर्तन नहीं हो जाता और वे अपना कुप्रभाव शरीर तथा मन पर डालते ही रहते हैं। ऐसे पदार्थों को अंग्रेजी में 'स्लो पॉइजन' (हलका अथवा मन्द विष) कहते हैं और वह मनुष्य को एक दम न मारकर धीरे-धीरे घुलाकर मारता है अथवा हानि पहुँचाता रहता है। इस पुस्तक में आगे चलकर पाठक सैकड़ों बड़े-बड़े डाक्टरों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा सरकारी स्वास्थ्य अधिकारियों के उन अभिमतों को पढ़ेंगे, जिनमें बतलाया है कि संसार में प्रतिवर्ष करोड़ों व्यक्ति तम्बाकू सेवन के कारण उत्पन्न 'कैंसर' (भीतरी अंगों का गलना और क्षय होना) रोग से मरते रहते है।

जैसा हमने बतलाया है, नशेबाजी का मुख्य कारण मूर्खता अथवा पतन की मनोवृत्ति ही है। मनुष्य जहाँ अन्य सब प्राणियों की अपेक्षा 'बुद्धिमान प्राणी' समझा जाता है, वहाँ उसी बुद्धि के अहंकार में आकर वह प्रकृति के विरुद्ध चलकर अपनी हानि भी कम नहीं करता। साथ ही उसमें एक ऐसी प्रवृत्ति भी पाई जाती है, जिससे वह ऊपर उठने के बजाय पतन की ओर बहुत जल्दी आकर्षित होता है। यही कारण है कि प्रकट में पढ़े-लिखे, सभ्य-शिष्ट और बड़े चतुर तथा बुद्धिमान दिखलाई पड़ने वाले व्यक्ति भी सहज में शराब और तम्बाकू जैसे दुर्व्यसनों में ग्रस्त हो जाते हैं। वैसे वे इनको एक फैशन या शौक के रूप में ही करते हैं अथवा इन्हें एक प्रकार का मनोरंजन का साधन बतलाते हैं, पर वास्तव में यह होती उनकी कमजोरी ही है। यह तो निश्चय है कि सिवाय महामूर्ख और जाहिल लोगों के कोई भी समझदार व्यक्ति नशों को लाभदायक, शरीर के लिये पौष्टिक या स्वास्थ्य की उन्नति करने वाला तो बतला नहीं सकता। उनके दोषों को, उनसे होने वाली शारीरिक, मानसिक, आर्थिक हानियों को सभी जानते हैं और स्वीकार करते हैं, तो भी उनकी दृष्टि में यह मनोरंजन या 'गम गलत करने' का एक अच्छा साधन है।

मादक द्रव्यों द्वारा स्फूर्ति बढ़ने का भ्रम

नासमझ लोग नशों से आरम्भ में उत्पन्न होने वाली उत्तेजना या नकली स्फूर्ति को भी लाभ समझ लेते हैं। जैसे शराब पीते ही शरीर में एक सनसनी पैदा हो जाती है और उसके भ्रम में पड़कर मनुष्य अपनी वास्तविक शक्ति को भूलकर बड़ी फुर्ती और तेजी से काम करने लग जाता है। पर वह ऐसा ही होता है जैसा किसी घोड़े को चाबुक मारकर उसकी ताकत से अधिक तेज दौड़ाना। इसका परिणाम यह होता है कि जब नशे का असर मिट जाता है तो मनुष्य को पहले से कहीं अधिक थकावट और कमजोरी मालूम पड़ने लगती है। वास्तव में किसी भी नशे से मनुष्य की शक्ति नहीं बढ़ सकती, केवल शरीर की संचित शक्ति में एक उबाल-सा पैदा होकर वह शीघ्र ही खर्च या बर्बाद हो जाती है और तब मनुष्य खोखला होकर पहले से भी अधिक पस्त और कमजोर होकर पछताने लगता है।

पर धीरे-धीरे नशेबाज को उस पदार्थ का इतना अभ्यास हो जाता है कि वह उसकी आदत का एक अंश ही बन जाता है। इतना ही नहीं कि वह उससे किसी प्रकार की हानि या कुप्रभाव का अनुभव नहीं करता वरन् वह ऐसी स्थिति में पहुँच जाता है कि बिना उस नशे के पदार्थ का सेवन किये उससे काम ही नहीं होता और अधमरा-सा होकर पड़ा रहता है। जैसे ही उसे अपना 'अमल' मिल जाता है कि वह 'चैतन्य' हो जाता है और बड़ी प्रसन्नता तथा दिलचस्पी का भाव प्रकट करने लगता है। तब उसकी दशा ऐसे अड़ियल टट्टुओं की-सी हो जाती है, जो मार खाते-खाते अपनी स्वाभाविक गति और शक्ति को खो बैठते हैं और केवल डण्डा और चाबुक खाकर थोड़ा-बहुत चलते हैं। जो लोग नशे की तारीफ करते हैं और उसे ताकत देने वाला बतलाते हैं, उनको इन्हीं डण्डा खाकर चलने वाले टट्टुओं की श्रेणी में समझना चाहिये।

मादक द्रव्य द्वारा बुद्धि-नाश

नशा कोई भी हो पर वह शरीर को हानि पहुँचाने वाला, मन को खराब करने वाला और धन को बर्वाद करने वाला ही होगा। बुद्धि को खराब करना तो उसका सबसे पहला काम है। भारतवर्ष के सर्वप्रथम आयुर्वेद के ग्रन्थ 'चरक-संहिता' में लिखा है—

"बुद्धि लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते।"

अर्थात् "जो पदार्थ बुद्धि, समझ में बिगाड़ पैदा करता है, उसका लोप कर देता है, वही मदकारी (नशीला) कहा जाता है"। 'शराब, ताड़ी, अफीम, भाँग, चरस, गाँजा, तम्बाकू आदि सब इसी श्रेणी की वस्तुएँ हैं। यह अवश्य है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इनमें से कोई जल्दी अपना घातक प्रभाव प्रकट करती है और किसी का असर धीरे-धीरे पड़ता है। इसी निगाह से लोग शराब को अधिक बुरा और सिगरेट, बीड़ी को साधारण समझते हैं, पर यह मान्यता भी सर्वथा सत्य नहीं है क्योंकि तम्बाकू शराब की अपेक्षा कम खर्च की और सहज में प्राप्त हो सकने वाली जान पड़ती है इसलिये उसका व्यसन लग भी जल्दी जाता है और इसी से उसने आज समाज में—कम से कम भारतीय समाज में बहुत व्यापक रूप धारण कर रखा है। उससे करोड़ों मनुष्यों के शरीर, समय और धन का निरन्तर अपव्यय होता रहता है और लोग अनजाने ही तरह-तरह की पतनकारी प्रवृत्तियों में फँसते चले जाते हैं। इस दृष्टि से तम्बाकू या धूम्रपान एक बहुत बड़ी सामाजिक और व्यक्तिगत बुराई है, जिसके दोषों को समझना और उससे बचने का प्रयत्न करना प्रत्येक समझदार और अपना हित चाहने वाले मनुष्य का कर्तव्य है।

तम्बाकू-सेवन के भयंकर परिणाम

तम्बाकू का भारतवर्ष की साधारण जनता में प्रचार हुये लगभग तीन सौ वर्ष ही हुये हैं, पर इतने समय में वह नगरों और गाँवों में ही नहीं जंगलों तक में भी पहुँच गई है। भील, संथाल, कोल जैसे अर्ध-सभ्य या असभ्य आदिवासी लोग भी इसके चंगुल में पूरी तरह फँसे हुये हैं। उन लोगों को चाहे खाने को भरपेट रोटी न मिले और कपड़े के नाम पर एक फटी लँगोटी ही उनके शरीर पर हो, पर दिन भर में दो-चार पैसे की बीड़ी या सूखी तम्बाकू वे अवश्य पीयेंगे। इस प्रकार इस देश के निवासी तीन सौ वर्षों में न जाने कितने अरब रुपया इस सत्यानाशी कुटेव के कारण फूँक चुकें होंगे और न जाने कितना जहर अपने शरीर में ग्रहण कर चुके होंगे। ये लोग तो तम्बाकू को एक मनोरंजन या तबियत खुश करने की चीज समझते हैं। इनको मालूम नहीं कि तम्बाकू का जहर इतना तेज होता है कि यदि खरगोश की जीभ पर या चूहे के शरीर पर उसकी एक बूँद डाल दी जाय तो तत्काल उनकी मृत्यु हो जायेगी। इस जहर को यदि मनुष्य के शरीर के ऊपर लगा दिया जाय तो सिर का चक्कर खाना, उल्टी होना आदि लक्षण पैदा होकर मनुष्य बीमार हो जायेगा। यदि इसकी तीन-चार बूँदें खा ली जाय तो मनुष्य की मृत्यु भी हो सकती है।

आजकल यह कहा जाता है कि तम्बाकू का धुआँ फेफड़े में जाकर कैंसर पैदा कर देता है, पर वास्तव में वह फेफड़े तक ही सीमित नहीं रहता। जैसा हम सब जानते हैं कि फेफड़ों का मुख्य काम खून को साफ करना है, इसलिये तम्बाकू का असर हमारे खून पर भी पड़ता है और उस विष को समस्त शरीर में फैला देता है। इसके फल से पाचन सम्बन्धी खराबी, अजीर्ण हृदय की दुर्बलता, दिल में दर्द, कँप-कँपी, स्वाभाविक दुर्बलता, पक्षाघात तरह-तरह के भयंकर रोगों के उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। डाक्टरों ने अनेक रोगियों की जाँच करके यह नतीजा निकाला है कि तम्बाकू का सेवन दीर्घ आयु प्राप्त करने में एक बहुत बड़ी बाधा है। जिन लोगों को इसकी लत विशेष रूप से लग गई है, उनका शरीरान्त जल्दी हो जाता है।

तम्बाकू का अन्य प्रकार से सेवन करना, जैसे सुर्ती के रूप में खाना या नास के रूप में सूँघना भी कम हानिकारक नहीं है। चिकित्साशास्त्र के मतानुसार तो इस प्रकार तम्बाकू का कच्चे रूप में सेवन करना धूम्रपान से भी अधिक नुकसान पहुँचाता है, क्योंकि उस दशा में तम्बाकू का विष—निकोटिन ज्यादा मात्रा में शरीर के भीतर प्रविष्ट होता है। इस दृष्टि से इस देश के जो स्त्री-पुरुष पान के साथ जर्दा, सुर्ती खाने के आदी हो जाते हैं, वे अपने स्वास्थ्य को बहुत हानि पहुँचाते हैं और उनकी पाचन-क्रिया खराब होकर शरीर में तरह-तरह की बीमारियाँ और निर्बलता घर कर लेती हैं। तम्बाकू और सुपारी मिलाकर खाने से मुँह का कैन्सर हो जाता है, जिससे स्वास्थ्य नष्ट होकर मृत्यु की सम्भावना बढ़ जाती है। "मैनपुरी तम्बाकू" के नाम से प्रसिद्ध तम्बाकू मिश्रित सुपारी के लच्छों का व्यसन लग जाने से उत्तर प्रदेश के अनेक नगरों में लाखों व्यक्ति अपने धन के साथ शरीर की बलि भी चढ़ा चुके हैं। इसकी भयंकरता के प्रकट होने पर मैनपुरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू के खिलाफ एक बड़ा जनमत उठ खड़ा हुआ था और अब शायद उसके प्रचार में पूर्वापेक्षा कुछ कमी हो गई है।

कुछ समय पूर्व 'भारतीय कैंसर सोसाइटी' के एक प्रसिद्ध चिकित्सक डा. डी. जे. जुस्सावाला ने यह सम्मति प्रकट की थी कि योरोप और अमरीका में सिगरेट अधिक मात्रा में पी जाने से वहाँ पर फेफड़े के कैंसर की अधिकता देखने में आती है। पर भारतवर्ष में पान के साथ जो सुपारी और तम्बाकू चबाने का व्यसन बहुत बड़े रूप में फैला हुआ है, उसके फलस्वरूप गले का कैंसर अधिक होता है। इसका प्रभाव तम्बाकू खाने वालों पर ही नहीं उनकी भावी सन्तान पर भी अनिष्टकारी पड़ता है और प्रतिवर्ष लाखों व्यक्ति इसके कारण बीमारियों में फँसकर मृत्युमुख में चले जाते हैं।

तम्बाकू का दुर्व्यसन और भारत

हमारा भारतवर्ष पहले आर्यावर्त कहलाता था। आर्यावर्त का अर्थ होता है सभ्य आदमियों का देश, सुसंस्कृत, शिष्ट, ईमानदार, सद्विचार वाले, सत् मार्ग पर चलने और संसार को चलाने वाले ऋषि-मुनियों का देश। इसमें दूध, घी की नदियाँ बहती थीं। यहाँ के लोग जीवन जीने की कला का स्वयम् ही नहीं जानते थे वरन् संसार को जीवन जीने की शिक्षा देते थे। यहाँ विदेशों के लोग अध्यात्मवाद सीखने आया करते थे और विद्याध्ययन करके अपने देश में सत्ज्ञान का प्रचार किया करते थे। यह वह देश था, जिसमें साधू-सन्त और ऋषि-मुनि ही नहीं वरन् प्रत्येक गृहस्थ तक नित्य-प्रति यज्ञ किया करते थे, जिससे उनके विचार ही सात्विक बनते थे वरन् यज्ञों से वायुमण्डल शुद्ध पवित्र और सुगन्धित रहता था, जिससे समय पर वर्षा होती थी और समय पर वर्षा होने से खाद्य पदार्थों का सदैव भण्डार इस देश में भरा रहता था। इस देश के निवासियों के आचार, विचार, खान-पान रहन-सहन सभी सात्विक थे। सब लोग परस्पर प्रेम-पूर्वक रहते थे और वेदों में वर्णित जीवन प्रणाली के अनुसार वर्णाश्रम धर्म का पालन किया करते थे। इस देश में न कोई मांसाहारी था न कोई मद्यपान करता था। न कोई किसी प्रकार का धूम्रपान करता था, न कोई चोरी करता इस प्रकार आर्यावर्त के रहने वालों का जीवन सभी दृष्टियों से शुद्ध पवित्र एवम् मितव्ययी होता था। इस देश के निवासियों के जीवन का मूल-मन्त्र था 'सादा जीवन और उच्च विचार' इसी महामन्त्र के आधार पर इस देश के ऋषि-मुनि जीवन के शाश्वत सत्य को वेदों के रूप में संसार को प्रदान कर सके।

विदेशियों की शासन की कुप्रवृत्ति

परन्तु दुर्भाग्य की बात है आज उसी आर्यावर्त के निवासी हम भारतवासी जो आज भी अपने आपको आर्यों की सन्तान और वेदों को भगवान की कृति मानते हैं, उनका जीवन क्रम सभी क्षेत्रों में, सभी दृष्टियों से नीचा गिर गया है। आज न हमारे समाज में जनहित की भावना है और न स्वहित की ही। हमारा जीवन पूर्ण रूप से नहीं तो बहुत कुछ अंश में दूसरों की नकल करने वाला हो गया है।

आज हम खाते हैं तो विदेशियों की तरह, वस्त्र पहनते हैं तो विदेशियों के जैसे—यहाँ तक कि अब हम में बहुत-से लोग चलते-फिरते कारखाने बन गये हैं ! जिस प्रकार कारखाने और फैक्ट्रियों की चिमनियों में हर समय धुआँ निकलता रहता है, उसी प्रकार हमारे हजारों लाखों ही नहीं वरन् करोड़ों की संख्या में भाई-बहिन, युवक-युवतियाँ, बुड्ढे-बुढ़िया यहाँ तक छोटे-छोटे किशोर बालक तक धूम्रपान करने लगे हैं। आप जहाँ चार आदमियों को इकट्ठा बैठा देखेंगे वहाँ ही उनमें किसी न किसी को धुएँ के बादल बनाते देख सकते हैं। 'बस' में बैठे हों, रेल में बैठे हों, पानी के जहाज में अथवा हवाई जहाज में चल रहे हों, सब जगह यदि आप धूम्रपान नहीं करते हैं तो आपका बैठना दूभर हो सकता है। कारण कि आपके पास बैठे लोग बीड़ी सिगरेट का दूषित धुआँ आपके चारों ओर फेंकते रहेगें। पढ़े-लिखे और साफ वस्त्रधारी कागज की सिगरेट फूंकते रहते हैं तो गरीब लोग जिनके तन पर साबुन वस्त्र भी नहीं होते, बीड़ी के कश पर कश खींच-खींच कर 'बस' अथवा रेल के डिब्बे को धुँये से भरते रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कभी-कभी तो यह धुआँ इतना भर जाता है कि धूम्रपानी लोगों को स्वयम् सांस लेना कठिन मालूम होने लगता है। उस व्यक्ति की दशा को अनुभव करना कि जो धूम्रपान नहीं करता, अत्यन्त कठिन है। सच बात तो यह है कि ऐसा व्यक्ति धूम्रपानियों के बीच में फँसकर मरता नहीं है तो दम घुटने से मौत के पास अवश्य पहुँच जाता है।

तम्बाकू की खोज

पुर्तगाल देश में पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में बड़े कुशल नाविक हुए थे, जिन्होंने अपने देश के व्यापार की उन्नति करने के लिए संसार के सभी समुद्रों को पार किया और नये-नये देशों की स्थिति का पता लगाया। सबसे पहला और संसार प्रसिद्ध नाविक कोलम्बस भारत की खोज में पुर्तगाल से चला परन्तु वह भारत न पहुँचकर पहुँचा अमरीका, जहाँ का नाम कालान्तर में वेस्टइन्डीज हुआ। उसने देखा कि वेस्टइन्डीज के निवासी तम्बाकू पीते थे। तम्बाकू की पत्तियों को एक पत्ते में लपेटकर उसे जला-कर उसका धुआँ पीता देखकर स्वभावतः उन्हें आश्चर्य हुआ होगा। स्पेन देश के लोग भी जब अपनी खोजों में दक्षिण-अमरीका पहुँचे तो उन्होंने वहाँ के लोगों को तम्बाकू का धुआँ पीते देखा। मैक्सिको देश में जो खुदाई की गयी है, उसमें चिलमें मिली हैं, जिससे पता चलता है कि वहाँ के लोग प्राचीन काल में भी धूम्रपान करते थे।

वर्जीनिया का तम्बाकू संसार में सिगरेटों के लिए सबसे बढ़िया माना जाता है। वर्जीनिया अमरीका में स्थिति है, इससे भी ज्ञात होता है कि तम्बाकू की खेती व तम्बाकू का प्रयोग संसार में सबसे पहले अमेरिका के महाद्वीपों में ही हुआ होगा, जहाँ से इसका प्रचलन पहले यूरोप में आया और तब फिर संसार के अन्य देशों में तम्बाकू का प्रचार और प्रसार यूरोप निवासियों ने किया।

भारत में तम्बाकू का आगमन कैसे हुआ ?

भारत में अकबर बादशाह से पूर्व तम्बाकू का पता नहीं चलता है। कहा जाता है कि जब अकबर के दरबार में वर्नेल नामक पुर्तगाली आया तो उसने अकबर बादशाह को तम्बाकू और एक जड़ाऊ बहुत सुन्दर बड़ी-सी चिलम भेंट की। बादशाह सलामत को चिलम बड़ी पसन्द आयी और उन्होंने चिलम पीने की तालीम भी उसी पुर्तगाली से ली। अकबर को धूम्रपान करते देखकर उसके दरबारियों को बहुत आश्चर्य हुआ और उनकी इच्छा भी तम्बाकू के धुएँ को गले में भरकर बाहर फेंकने की हुई। इस प्रकार भारत में सन् १६०६ के करीब धूम्रपान का श्रीगणेश अकबर बादशाह के दरबार से प्रारम्भ हुआ। अन्य लेखकों का मत है कि तम्बाकू को सबसे पहले अकबर बादशाह का एक उच्च दरबारी बीजापुर से लाया और उसे सौगात के तौर पर बादशाह को भेंट किया।

हिन्दुस्तान में लोगों ने तम्बाकू को चिलम में रखकर पीया, अमरीका के लोग तम्बाकू को बीड़ी की तरह पत्तों में लपेटकर पीते थे परन्तु यूरोप के लोगों ने तम्बाकू को कागज में लपेट-कर पीया जो सिगरेट कहलायेगी। इस प्रकार तम्बाकू भारतवर्ष की वस्तु नहीं है वरन् इस देश में यूरोप निवासियों द्वारा लायी गयी और प्रचारित की गयी। वे लोग ही तम्बाकू के पौधे भारत में लाये और यहाँ भी तम्बाकू की खेती होने लगी। जब तम्बाकू की यहाँ खेती होने लगी तब फिर यहाँ तम्बाकू खाने-पीने और सूंघने तीनों प्रकार से काम में आने लगी और इसका इतना प्रचार हो गया कि अब गाँव-गाँव और नगर-नगर सर्वत्र यह पिशाचिनी तम्बाकू अनेकों रूपों और भेषों में मौजूद रहती है।

धूम्रपान से होने वाली हानियाँ

जब आप किसी प्रकार का नशा प्रारम्भ करते हैं अथवा आपके मित्र आपको नशा करने के लिए प्रेरित करते हैं तो आप बहुत ही न्यून मात्रा में उस वस्तु को ग्रहण करते हैं और उस न्यूनतम नशीली वस्तु का भी आपको नशा हो जाता है। भंग का नशा भारतवर्ष में बहुत साधारण माना जाता है, यहाँ तक कि लोग शुरू में तो भंग को ठन्डाई ही कहते हैं। जो आदमी भंग नहीं पीता है, उसकी हथेली सीधी कराकर लोग उसके चुल्लू में थोड़ा भांग का पानी डाल देते हैं। न पीने वाला जब प्रथम उन-दो चार बूंदों को पीता है तो बहुत हलका-सा सरुर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी आँखों में खेल जाता है परन्तु कुछ ही दिनों में वह मात्रा उसके लिए अपर्याप्त हो जाती है और वह भांग की मात्रा बढ़ाने लगता है। जैसे-जैसे वह भाँग की मात्रा बढ़ाता है, वैसे ही वैसे उस व्यक्ति पर वह मात्रा बेकार होती जाती है। वह कहने लगता है आज तो कुछ नशा ही नहीं मालूम पड़ता, कुछ मजा ही नहीं आया, कुछ सरूर नहीं आया। इस प्रकार वह पक्का पिवक्कड़ हो जाता है और वह एक छटांक आधपाव तक भाँग को घोंटकर अकेला ही नहीं पीने लगता वरन् उस भाँग में ताँबे के पैसा डालकर ताँबे के बरतन में उसे उबालकर पूर्ण रूप से विषाक्त बनाकर पीता है। इस प्रकार उबली हुई भाँग का एक चुल्लू यदि आप किसी भांग न पीने वाले आदमी को पिलादें तो निश्चित ही उसकी हालत मुर्दे के समान हो जायेगी और आपको उसे डाक्टरों के पास ले जाना पड़ेगा। परन्तु पीने की आदत पड़ जाने पर लोग तामेश्वरी के नशे में मदहोश होकर झूमने में अपनी शान समझने लगते हैं। यद्यपि ऐसे लोग न मस्तिष्क से कुछ काम करने लायक रहते हैं और न शरीर से, क्योंकि वे तो हर समय नशे में धुत रहते हैं अपने शरीर तक का उन्हें होश नहीं रहता।

इसी प्रकार शराब, ताड़ी के नशे की बात है। शुरू में आदमी बहुत थोड़ी-सी मात्रा में लेता है परन्तु जहाँ एक बार शराब मुँह से लगी कि फिर घरवालों के कपड़े-लत्ते और बरतन भांडे भी बिक कर बोतल पर बोतल पी जाने पर भी इस पिशाचिनी से पीछा नहीं छूटता।

तम्बाकू का विष 'निकोटीन'

सिगरेट का नशा इतना तीव्र तो नहीं होता परन्तु निश्चित रूप से तम्बाकू में मिली हुई निकोटीन फेंफड़ों को विदीर्ण करके इतना बेकार, अशक्त बना देती है कि धूम्रपान रात-दिन कलेजे को पकड़कर खुल-खुल ही करता रहता है, और चारों तरफ थूक-थूक अपने आस-पास के स्थान को नरक तुल्य गंदा कर देता है। थूक के छोटे-छोटे कण थूक के संग उसके कपड़ों और शरीर को बराबर गन्दा करते रहते हैं। जिस प्रकार भंग व शराब मुँह को लग जाती है, उसी प्रकार बीड़ी सिगरेट ओठों को लग जाती है, जब तक ओठों में सिगरेट बीड़ी दबी न रहे पीने वाले को चैन ही नहीं पड़ता। अगर कभी सिगरेट नहीं होती तो वह अपने ओठों के बीच अपनी उंगलियाँ को ही दबाये रहता है। सिगरेट पीने वालों के ओठ नीले पड़ जाते हैं, मुखाकृति खराब हो जाती है और नीचे के ओठ लटक पड़ते हैं। शुरू-शुरू में जब कोई आदमी धूम्रपान करता है तो सिगरेट, बीड़ी, के एक-दो कश ही लगाता है परन्तु जब सिगरेट का धुआँ उसके गले के नीचे उतरने लगता है व उसकी श्वांस धमनियाँ शिथिल हो जाती हैं, उनमें धुएँ की घुटन मालूम होना बन्द हो जाता है तो आदमी शराब की भाँति सिगरेट की भी संख्या बढ़ाने लगता है, जो बढ़ते-बढ़ते चौबीस घन्टे में ४०-५० तक पहुँच जाती है। वरन् जब तक आदमी जागता रहता है बराबर उसे सिगरेट जली रखनी पड़ती है।

'निकोटीन' का घातक प्रभाव

सन् १५०३ की बात है। जब स्पेन वाले परागुवे के किनारे उतरे तो वहाँ के मूलवासियों ने उनके ऊपर ढोल बजाकर चढ़ाई कर दी। उन्होंने कोई अस्त्र-शस्त्र नहीं चलाये वरन् एक प्रकार की पत्ती चबाते और उसका रस स्पेन वालों की आँखों में थूक देते थे। ये पत्तियाँ तम्बाकू की थीं। परागुवे निवासियों का मतलब था कि तम्बाकू का रस स्पेन वालों की आँखों में पड़ जाये और वे अन्धे हो जायें।

तम्बाकू को घर में रखने से एक प्रकार की जहरीली गैस बनती है और वह हवा में मिल जाती है तो उससे स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। तम्बाकू का पानी निकालकर दो-चार बूदें बहुत तेज जहरीले साँप के मुँह में डाल दी जायँ तो वह छटा-पटा कर मर जायेगा। तम्बाकू का जहर निकालरकर मकान में छिड़क दिया जाय तो उससे कीड़-मकोड़े मर सकते हैं।

दस फीट लम्बे, दस फीट चौड़े अर्थात् सौ घन फीट मकान के वातावरण को एक ही धूम्रपानी खराब कर देता है। इसी तरह तम्बाकू खाने वाले थूक-थूक कर हुक्का पीने वाले हुक्के के पानी से भी अपने जीवन के सैकड़ों गज जमीन को गन्दा और दूषित बना देते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू की पत्तियों को भट्टी में चढ़कार उनका रस निकाला जाय तो उससे 'निकोटीन' नाम जहर निकलता है। इस तरह आधा सेर तम्बाकू से निकलने वाला जहर ३०० आदमियों की मृत्यु के लिए पर्याप्त है। निकोटिन की एक ही बूँद से घर का वायु मण्डल दूषित हो जाता है।

तम्बाकू खाने वाले, पीने वाले, दुनियाँ के साथ बहुत बड़ा अन्याय करते हैं, चोर डाकू लुटेरों से भी अधिक क्योंकि वे लोग तो अधिकतर धन को छीनते हैं किन्तु तम्बाकू पीने वाले तो मनुष्य के तन मन को बड़ा नुकसान पहुँचाते हैं, जो धन से भी बहुत बड़ा है।

तम्बाकू का वैज्ञानिक विश्लेषण

तम्बाकू में चार प्रकार के पदार्थ होते हैं, जो मानव स्वास्थ्य के लिए विष का काम करते हैं—१. निकोटिन, २. कोलतार, ३. आर्सेनिक और ४. कार्बन मोनाक्साइड अथवा कोयले की गैस।

प्रथम बार जब कोई आदमी सिगरेट का कश लगाकर उसके धुयें को अपने फेफड़ों में भरता है तो उसका दम घुटता है, खाँसी आती है यहाँ तक कि मतली (उल्टी) आती है और कै हो जाती है। कारण यह है कि धुएँ में निकाटीन का विष फेफड़ों में जाते ही फेफड़ों की स्वाभाविक स्थिति पर चोट करता है। फेफड़ों का प्रधान कार्य शुद्ध वायु के द्वारा खून को साफ करते रहने और अशुद्ध वायु को, जिसे हम कार्बन डाईआक्साईड कहते हैं, शरीर के बाहर फेंकने का होता है, जिससे हमारा जीवन चलता है। थोड़ी देर को भी हमारे फेफड़ों का कार्य जब रुका तो कहते हैं कि इसकी सांस निकल गई अर्थात् इसकी मृत्यु हो गई। तो इस प्रकार जीवन रक्षार्थ फेफड़ों का कार्य अपनी स्वाभाविक गति से ऑक्सीजन यानी शुद्ध वायु को अन्दर भरना और कार्बन डाई-ऑक्साइड अर्थात् अशुद्ध वायु को बाहर फेंकते रहना है। हम सिगरेट का धुआँ अपने फेंफड़ों में भरकर फेंफड़ों के प्राकृतिक कार्य में बाधा उत्पन्न करते हैं, निकोटिन नामक विष जो तम्बाकू में प्रधान विष होता है, अपने फेंफड़ों में भरते हैं, इससे हमें मतली आती है। आप कोई चीज, मान लीजिये जैसे मांसाहार नहीं करते हैं और कोई आपका मित्र जबरदस्ती आपको मांसाहार करावे तो स्वभावतः जैसे ही माँस आपके मुँह में जायेगा आपको मतली आवेगी, आपका जी घबरावेगा, आपको परेशानी होगी। निकोटीन तो विष होता है, विष जब धुएँ के साथ आपके शरीर में प्रवेश करेगा तो आपकी क्या गति होगी ?

निकोटीन से मतली ही आकर नहीं रह जाती वरन् सिगरेट पीने से पैरों में लड़खड़ाहट आती है, पैरों की शक्ति क्षीण होती है और कानों में बहरापन पैदा होता है।

निकोटीन से हमारी घ्राण शक्ति (गंध और दुर्गन्ध जानने की शक्ति) कमजोर होती जाती है। सिगरेट के धुएँ के बराबर नाक के द्वारा बाहर निकलने के कारण, नाक के पतले परदों पर बड़ा बुरा प्रभाव पड़ता है, नाक का स्वाभाविक कार्य सुगन्ध-दुर्गन्ध को महसूस करने की शक्ति मन्द पड़ जाती है। आँखों की ज्योति पर भी निकोटीन के विष का अत्यन्त बुरा असर पड़ता है।

धूम्रपान करने वालों की पाचन क्रिया प्रायः बिगड़ जाती है और वह कब्ज एवं अपच की बीमारी का शिकार हो जाते हैं।

निकोटीन से ब्लडप्रेशर (रक्तभार) बढ़ता है, रक्त नालियों में रक्त का स्वाभाविक संचार मन्द पड़ जाता है और त्वचा सुन्न जैसी होने लगती है, जिससे तरह-तरह की त्वचा की बीमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। धूम्रपान करने वालों को आपने बहुधा रात-दिन खांसते और हर जगह थूक-खखार गिराते देखा होगा। इसका अर्थ यह हुआ कि निकोटीन का धुआँ जीर्ण-खाँसी का रोग पैदा कर देता है। खाँसी का रोग बढ़ता-बढ़ता दमा, श्वाँस और तपैदिक का रूप धारण कर लेता है।

वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध कर दिया है कि जो व्यक्ति १० सिगरेट प्रतिदिन पीता है, वह आठ क्वार्ट वर्कस्फोट का कोलटार अपने पेट में पहुँचा लेता है, जो स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त हानिकारक द्रव्य होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू से भीतरी अंगों में खराबी

जो नारियाँ धूम्रपान करती हैं, वे न केवल अपने स्वास्थ्य को ही नष्ट करती हैं वरन् अपनी सन्तानों के भविष्य और स्वास्थ्य को नष्ट कर देती हैं। गर्भवती स्त्री यदि धूम्रपान करती है तो उसके गर्भ के बालक की नलियों में भी सिगरेट के धुएँ का निकोटीन, कोलटार, आर्सेनिक और कोयले की गैस पहुँचती है, जिससे बालक के जन्म के समय प्रसूता को तो अधिक कष्ट होता ही है नवजात शिशु भी अस्वस्थ पैदा होता है और अल्पायु में ही उसकी मृत्यु का भय रहता है। यदि वह जीवित भी रहता है तो पेट की अनेक बीमारियों में जकड़ा रहता है।

वैज्ञानिकों ने चूहों को सिगरेट के धुएँ के पास रखकर अनुसंधान किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि उन चूहों की प्रजनन शक्ति क्षीण हो गई, उनकी मादाओं में बाँझपन पैदा हुआ, गर्भपात हुए और उनके आँख फेफड़े कमजोर हो गये और कई तो इनमें से अंधे होकर थोड़े ही दिनों में मर गये। इसके विपरीत कुछ चूहों को जैसे ही सिगरेट के धुएँ के प्रभाव से दूर करके स्वस्थ आवहवा में रखा गया वे पुनः स्वस्थ्य हो गये। जब चूहों पर तम्बाकू के धुएँ के सम्पर्क का ऐसा बुरा प्रभाव पड़ा तो तब आसानी से सोचा जा सकता है कि उस मनुष्य के स्वास्थ्य पर कितना कुप्रभाव न पड़ता होगा, जो दिन भर सिगरेट के धुएँ के द्वारा निकोटीन आदि के विष को अपने फेफड़ों में भरते रहते हैं।

अक्सर लोग कहा करते हैं—हमें चाहे भोजन न दो केवल चाय और सिगरेट दे दो हम बराबर काम करते रहेंगे। हमने कुछ बौद्धिक काम करने वालों को देखा है कि वे गहन अध्ययन में तल्लीन होते हुए भी अपने सामने चाय का प्याला और सिगरेट का पैकिट रखते हैं। वे लोग अपने लिखने-पढ़ने के कार्य में लगे रहते हुए भी बराबर गरम चाय की चुस्की लेते रहते हैं और सिगरेट का धुआँ अपने फेफड़ों में भरते रहते हैं। देखने वाले सोचते हैं कि यह व्यक्ति कितनी लगन वाला है कि चाय और सिगरेट के सहारे कितने सुन्दर-सुन्दर लेख आदि लिख लेता है, इसे अपने भोजन की भी चिन्ता नहीं है। परन्तु वास्तविक बात यह है कि चाय के घूँट और सिगरेट का धुआँ उसके शरीर में पहुँचकर उसकी क्षुधा को मारते रहते हैं। थोड़े ही दिनों में ऐसे लोगों का पेट खराब हो जाता है और वे कब्ज के शिकार हो जाते हैं। कब्ज मनुष्य के स्वास्थ्य का सबसे बड़ा दुश्मन है। कब्ज हुआ कि मनुष्य के शरीर में अनेकों प्रकार के रोग उत्पन्न हुए। ये ही रोग कालान्तर में जीण-रोग जैसे तपैदिक, श्वांस, कैंसर निमोनिया, इन्फ्लूएंजा आदि भयंकर रोगों का रूप धारण कर लेते हैं, जो मनुष्य को पीड़ा देने वाले ही नहीं वरन् मृत्यु लाने वाले भी होते हैं।

तम्बाकू से होने वाली लाखों मौतें

अमरीका के प्रसिद्ध डा. एडवर्ड कुइलर हेमन्ड ने सिगरेट का धूम्रपान करने वाले कुछ लोगों का अध्ययन किया। वे अमरीका के कैंसर संस्थान में काम करते हैं और अध्ययन किया करते हैं कि कैंसर किन-किन लोगों को होता है, उसके क्या-क्या कारण हैं और कैंसर को रोकने के लिए क्या उपाय किये जायें ? उन्होंने सन् १९५१ में लगभग ५० वर्ष की आयु वाले बीस हजार व्यक्तियों का तीन साल तक अध्ययन किया और देखा कि इन व्यक्तियों में से जो नियमित रूप से सिगरेट का धूम्रपान करते थे, उनमें ७३१६ लोगों की मृत्यु हो गई। इन मरने वाले लोगों को कैंसर हुआ अथवा रक्त की नालियों में विकार उत्पन्न हुए और उनकी उन्हीं बीमारियों से मृत्यु हो गई। उन्हीं डाक्टर साहब ने सन् १९५६ में पुनः लगभग दस लाख व्यक्तियों का अध्ययन किया और वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि इन व्यक्तियों में मरने वालों की संख्या उन लोगों की ही अधिक थी, जो 'चेन स्मोकर' (बराबर सिगरेट पीते रहने वाले) थे। इनमें भी जो लोग सिगार या चुरट पीते थे, उनकी मृत्यु का प्रतिशत सिगरेट पीने वालों से अधिक था। अधिक अनुसंधान करने पर अमरीकी डाक्टरों का यह निश्चित मत था कि सिगरेट पीने वाला व्यक्ति सिगरेट के धुएँ को जो अपने फेफड़ों में भरकर आनन्द लेता है, वही उसके प्राणों का घातक होता है। गले में होने वाली बीमारियाँ प्रायः धूम्रपान के धुएँ के कारण ही होती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लन्दन के चीफ हैल्थ आफीसर ने जो, एक बड़े प्रसिद्ध और माने हुए डाक्टर हैं, लन्दन की दीवालों पर इस प्रकार के पोस्टर लगवाये हैं कि धूम्रपान करना विषपान करना है। धूम्रपान से कैंसर की भयंकर और पीड़ादायक बीमारी बढ़ती जा रही है अतः लोगों को धम्रपान की आदत छोड़ देनी चाहिए।

केन्या के तम्बाकू धूम्रपान अनुसंधानशाला के अध्यक्ष डा. जे. बेलफिंगर ने बताया है कि २५ वर्ष तक धूम्रपान करने वालों का अध्ययन करने से यह निष्कर्ष निकला है कि फेफड़ों का कैंसर का रोग प्रायः धूम्रपान करने वालों को ही होता है क्योंकि सिगरेट की तम्बाकू में तेजाबी तत्व होता है जो बहुत हानिकारक होता है। डा. बेलफिंगर का कहना है कि धूम्रपान का बुरा प्रभाव शरीर पर बराबर पड़ता रहता है, जो कालान्तर में फेफड़ों के कैंसर का रूप भी धारण कर सकता है।

सन् १९५६ के 'ब्रिटिश जर्नल' धूम्रपान के सम्बन्ध में जो रिपोर्ट छापी, उससे प्रकट होता है कि सिगरेट की खपत ब्रिटेन, फिनलैंड और अफ्रीका के देशों में नार्वे, स्वीडन और जापान की अपेक्षा अधिक है।

धूम्रपान के अन्य कुपरिणाम

तम्बाकू में निकोटीन नामक जहर होता है, जो सिगरेट पीने वालों को नशे का हल्का-सा सरूर प्रदान करता है। वैज्ञानिक अन्वेषणों से ज्ञात हुआ है कि तम्बाकू के पौधों में कई प्रकार के विष होते हैं, जो सब मिलकर 'निकोटीन' कहलाते हैं। यह निकोटीन इतना विषैला होता है कि यदि किसी स्वस्थ कुत्ते को एक ग्रेन का दसवां भाग खिला दिया जाय तो वह कुत्ता कुछ ही क्षणों में मर जायेगा। इस प्रकार के प्रयोग वैज्ञानिक विशेषज्ञों ने बहुत-से जानवरों पर किये हैं और शुद्ध निकोटीन जिन भी जानवरों को बहुत थोड़ी-सी मात्रा में दिया गया वे सब मर गये हाँ, जिसमें जितनी जीवनी शक्ति अधिक थी, वह कुछ अधिक क्षण जीवित छटपटाया, मगर मर सब गये। जब एक ग्रेन का दसवां-बीसवाँ भाग ही इतना तेज और प्राणघातक विष होता है, तब जो लोग बराबर किसी भी प्रकार से तम्बाकू खा, सूँघकर अथवा सिगरेट-बीड़ी के धुएँ के माध्यम से इस विष को अपने अंगों में भरते रहते हैं, उनके स्वास्थ्य की रक्षा भगवान ही करता है। एक पौंड तम्बाकू में ३३७ ग्रेन निकोटीन का जहर होता है।

धूम्रपान की निरर्थकता

हमें प्यास लगती है तो हम पानी पीते हैं, हमें भूख लगती है तो हम भोजन करते हैं परन्तु क्या कभी कोई व्यक्ति बता पाया है कि धूम्रपान करने के लिए उसे भूख लगी थी या प्यास ? सही बात यह है कि धूम्रपान न प्यास की पूर्ति करता है और न भूख की वह तो केवल मन की भड़ास मिटाता है, जो धूम्रपान की लत लग जाती है उस लत की पूर्ति मात्र करता है। जैसे किसी-किसी व्यक्तियों को साधारण बोल-चाल में गाली के शब्दों का उच्चारण करने की आदत पड़ जाती है। कुछ लोग बैठे-बैठे पैर हिलाते रहते हैं, आँख मटकाते हैं, किसी चीज को अपनी उंगलियों में नचाते रहते हैं। छोटे बालक बैठे-बैठे अपने पास की वस्तुओं पर खिलौनों को तोड़ने अथवा किताबों और अखबारों को फाड़ने में आनन्द लेते हैं। इसी प्रकार केवल एक आदत के कारण एक के बाद दूसरी बीड़ी, सिगरेट लोग बराबर फूँकते रहते और धुएँ के बादल पर बादल छोड़ते रहते हैं।

धूम्रपान से वायु में खराबी

जहाँ धूम्रपान किया जाता है, उन कमरों में अक्सर घुटन पैदा हो जाती है, वहाँ ऑक्सीजन की बजाए धुएँ का कार्बन भर जाता है और कभी जली सिगरेट के शौले गिर जाने पर समस्त दफ्तर के कागज पत्र ही आग की भेंट हो जाते हैं। यही कारण है कि सेना के किसी दफ्तर में कोई भी व्यक्ति सिगरेट बीड़ी नहीं पी सकता और न तम्बाकू आदि खा ही सकता है। यह नियम सिविल ऑफिसों के लिए भी है परन्तु इनमें इनका पालन कराने वाले आफीसर लोग प्रायः कर्तव्य का पालन नहीं करते हैं। यहाँ तक कि बैंकों के खजानों और सरकारी खजानों में लोग नोट गिनते हुए भी सिगरेट पीते रहते हैं। कई बार खजानों में जली सिगरेट किसी प्रकार गिर जाने से नोट तक जल चुके हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परन्तु धूम्रपान करने वाले व्यक्ति शिष्टाचार का तो क्या सरकारी नियमों का भी अपनी लत के सामने आदर नहीं करते। सरकारी अफसरों का कर्तव्य है कि वे कार्यालयों में धूम्रपान न होने दें और इस नियम को तोड़ने वालों के विरुद्ध कड़ी कार्यवाही करें।

तम्बाकू का शौक लगाने वाले

जहाँ चार धूम्रपानी इकट्ठे हों और उनके साथ कोई न कोई पीने वाला भी साथ पड़ जाय तो फिर देखिये वे धूम्रपान के सम्बन्ध में कैसे-कैसे लैक्चर झाड़ते हैं। कोई कहता है कि मुझे कब्ज रहता था, जब से सिगरेट शुरू की है कब्ज भाग गया है, कोई कहता है मेरे दाँतों में पायरिया था, दोढ़ों में कीड़ा लग गया था जब से सिगरेट पीना शुरू किया है दाँतों की सब पीड़ा दूर हो गयी है। इसी प्रकार की मनगढ़न्त झूँठी कहानियाँ गढ़कर न पीने वाले को भी धूम्रपानी बनाने की लोग चेष्टा करते हैं। धूम्रपान न करने वाले को 'बुद्धू, डरपोक, लोभी, कन्जूस, असभ्य आदि शब्दों से तो प्रायः ये धूम्रपान करने वाले मनचले लोग सम्बोधित किया ही करते हैं। परन्तु वास्तव में बात उल्टी होती है। धूम्रपान करने वाला व्यक्ति ही मूर्ख, बुद्धू, फिजूलखर्ची करने वाला होता है, जो धूम्रपान करके अपने स्वास्थ्य और पैसे की हर समय होली जलाता रहता है।

करीब तीस-चालीस साल पहले चाय पीने का शौक हमारी तरफ न था। चाय कम्पनी वालों के नौकर चाय का प्रचार करने के लिये चौराहों पर बनी हुई गरम चाय को लोगों को मुफ्त पिलाया करते थे और टूटे कनस्तरों अथवा फटे बाँसों को बजा-बजा कर मुफ्त चाय पीने के लिए लोगों को आग्रहपूर्वक बुलाते थे। फल यह हुआ कि आज चाय का इतना प्रचार हो गया है कि कोई घर से चाय से अछूता नहीं बचा होगा। जहाँ जायें वहाँ आपको चाहे पानी पीने के न दिया जाय, पाँच मिनट में ही चाय का प्याला आपके सामने आ जायेगा। गर्मी के दिन हों चाहे सर्दी के चाय की दुकानों पर 'क्यू' ही लगा मिलता है। छोटे से छोटे गाँव में, वियावांन जंगलों में भी सड़कों के सहारे चाय की दुकानें आये दिन लगी मिलती हैं। चाय, वनस्पति (घी), बीड़ी, सिगरेट का धूम्रपान आज हमारे स्वास्थ्य को चौपट कर रहे हैं परन्तु हम इतने मूर्ख हो गये हैं कि इन वस्तुओं के बिना हमारा काम चलता ही नहीं।

बीड़ी और सिगरेट की कम्पनियाँ आज भी लाखों, करोड़ों रुपया प्रति वर्ष अपनी-अपनी बीड़ी सिगरेटों के विज्ञापन पर व्यय करती हैं। लोगों को तरह-तरह से अपनी बीड़ी-सिगरेट की तम्बाकू की तारीफ करके फुसलाते हैं। अखबारों में, पत्रिकाओं में, हलकी कहानी उपन्यासों की पुस्तकों तक में बीड़ी-सिगरेट के विज्ञापन भरे पड़े रहते हैं। बड़ी दीवारों पर जगह-जगह बीड़ी-सिगरेट के विज्ञापन लिखाये जाते हैं। बड़े-बड़े साइन बोर्ड चौराहों पर गाढ़े जाते हैं, जिन पर बीड़ी-सिगरेटों के विज्ञापन होते हैं। बस स्टैंडों, रेलवे स्टेशनों, होटलों, सिनेमा और नाच घरों तक में हर जगह बीड़ी-सिगरेटों के विज्ञापन लगे रहते है। इतना ही नहीं अब तो विज्ञापन का एक नया तरीका और निकला है। हर बीड़ी, सिगरेट कम्पनी अपनी मोटरों पर विज्ञापन लिखाकर उन्हें नगर-नगर, गाँव-गाँव घुमाती है और उनके नौकर मुफ्त में लोगों को बीड़ी सिगरेट पिलाते ही नहीं हैं वरन् धूम्रपान करने वालों को दो-दो चार-चार मुफ्त में दे भी जाते हैं। आजकल मुफ्त में तो लोग मौत को भी नहीं छोड़ना चाहते तो फिर भला बीड़ी-सिगरेट के विष को ही क्यों छोड़ें, चाहे पीते हों या नहीं। न पीने वाले जिनमें अधिक संख्या गरीब मजदूर व किसानों की होती है तथा छोटे लड़कों की होती है, वे मुफ्त में बीड़ी-सिगरेट लेने के लिए मक्खियों की तरह बीड़ी, सिगरेट बाँटने वालों पर टूटते हैं और जो नहीं पीते हैं वे भी मुफ्त की बीड़ी-सिगरेट पाकर उसके धुएँ के कश खींचने का प्रयास करते हैं और इस प्रकार धूम्रपान की सत्यानाशी आदत के शिकार होकर अपने प्यारे स्वास्थ्य और खून-पसीने की कमाई के पैसे की बरबादी करते हैं।

आज तक जितने भी संत-महात्मा और समाज-सुधारक हुए हैं। सभी ने एक स्वर से धूम्रपान की भर्त्सना की है और लोगों को धूम्रपान न करने की प्रेरणा दी है। आज भी विनोबा भावें, जैन मुनि आचार्य तुलसी, गुरु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गोलवलकर, करपात्री जी आदि सहस्त्रों सत् पुरुष एक स्वर से नशों के विशेषकर धूम्रपान की हानियों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करते रहते हैं परन्तु विज्ञापनबाजी के इस युग में लोग अपनी मौत अपने हाथ से खरीदते फिरते हैं और संतों के प्रवचन और उपदेश भी उन पर नाकामयाब हो रहे हैं। सरकार चाहे तो बहुत कुछ काम हो सकता है, परन्तु जब सरकार को संचालन करने वाले धूम्रपानी हों तो फिर इस काम को वे सरकार से क्यों कराने लगे ? फिर भी जो लोग धूम्रपान की बुराइयों से परिचित हैं, उन्हें चाहिए कि वे निराश न हों वरन् अपना आन्दोलन तीव्र करके सरकार को मजबूर करें कि वह बीड़ी, सिगरेटों के विज्ञापनों पर रोक लगाये और कम से कम विद्यालयों और सरकारी कार्यालयों में किसी भी प्रकार धूम्रपान करना जुर्म घोषित करें। जो लोग विद्यालयों अथवा सरकारी दफ्तरों में बैठकर धूम्रपान करते पाये जायँ, उनके विरुद्ध अनुशासन भंग करने की कार्यवाही की जाय।

तम्बाकू से स्वास्थ्य की खराबी

जो लोग पाइप पीते हैं आप उनका पाईप तोड़कर देखेंगे तो पता चलेगा कि उनके पाइप की नली में निकोटीन का मैल कितना जमा है ? आपने चिलम पीने वालों को देखा होगा वे लोग चिलम की नली के मुँह पर एक छोटा-सा कंकड़ या ठीकरा रखकर तम्बाकू रखते हैं फिर उसके ऊपर जलते कोयले रख कर चिलम के कश खींचते हैं। फिर भी जब वे चिलम की आग व तम्बाकू को उड़ेलते हैं, तभी चिलम की नली को भी ठोकते हैं, जिससे तम्बाकू का मैल (निकोटीन) जो धुँए के साथ नली में जमा हो गया हो वह निकल जाय और नली का मार्ग अवरुद्ध न हो। ठीक इसी तरह फेफड़े और श्वांस नली में तम्बाकू का विष निरन्तर जमा होता रहता है और श्वांस लेते समय जो वायु शरीर में जाती है, वह इस विष से विषैली होकर ही प्रवेश करती है। फलस्वरूप चुपके-चुपके शरीर में अनेक प्रकार के रोगों का सृजन होता रहता है और समय आने पर वह किन्हीं भयंकर बीमारियों के रूप में फूट पड़ता है।

इस पिशाचिनी तम्बाकू पीने की आदत ने हमारे देश के छोटे-छोटे नंगे, भूखे गरीब किसानों और मजदूरों, सबको बर्बाद कर दिया है। गरीब से गरीब आदमी भी जो शायद दोनों समय भर पेट भोजन भी नहीं कमा पाता है, एक सैम्पिल वाला बंडल बीड़ी अवश्य फूँक देता है यानी उसका भी बीड़ी का खर्च २-३ रुपया मासिक से से कम नहीं होता है। ये गरीब और मूर्ख लोग अपने नन्हे-नन्हे बालकों तक को कभी एक छटाँक दूध न पिलाकर स्वयं बीड़ी फूँकने में २-३ रुपया या इससे अधिक पैसा बर्बाद करते रहते हैं। मजदूर, किसान ही क्यों मन्दिरों के पंडे, पुजारी, कथावाचक, धर्मोपदेशक, स्कूलों के अध्यापक तक बीड़ी, सिगरेट का शौक करते देखे जा सकते हैं। छोटी जातियों की गरीब महिलाएँ, जो सदैव फटे हाल रहती हैं हर समय अपना और अपने बालकों का पेट पालन के लिए दूसरों की टहल-चाकरी करती-फिरती हैं, दूसरों के झूँठे बरतन मांजती फिरती हैं, वे भी बीड़ी पीकर अपने बच्चों का पेट काटा करती हैं।

सिगरेट के लिए कागज अभी बाहर के देशों से आयात करना पड़ता है, जो कागज हमारे देश में बनता है, वह उतनी अच्छी क्वालिटी का नहीं होता। इस प्रकार सिगरेट की तम्बाकू और कागज पर हमारे देश का लाखों, करोड़ों रुपया हर साल विदेशों को चला जाता है। इतना ही नहीं अभी तक कुछ किस्म के सिगरेट व सिगार हमें विदेशों से आयात करने पड़ते हैं, जिससे हमारी विदेशी मुद्रा का व्यय होता है।

भयंकर अग्नि-कांडों का जनक धूम्रपान

सिगरेट बीड़ी पीने वाले व्यक्ति प्रायः बचे हुए हिस्से को लापरवाही से जहाँ-तहाँ फैंक देते हैं, जिससे अनेक बार भीषण अग्निकांड हो जाते हैं और जान माल की बड़ी क्षति उठानी पड़ती है। ऐसी घटनाओं के समाचार प्रायः समाचार-पत्रों में पढ़ने में आया करते हैं, जिनमें से नमूने के तौर पर दो-चार यहाँ उदधृत किये जाते हैं—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

१—१८ मार्च सन् १९५८ के दिन इसनटोला लखनी नामक गाँव में किसी ने अधजली बीड़ी फैंक दी थी, जो सुलगकर भीषण अग्निकांड का कारण बन गयी और उससे किसानों के २० मकान जलकर खाक हो गये। लगभग २० हजार रुपये की सम्पत्ति जल गयी।

२—उससे एक दिन पहले फतेहपुर जिले के भटौरा ग्राम में किसी नें जली हुई बीड़ी के टुकड़े कूड़े पर डाल दिये, जो हवा चलने के कारण भयंकर अग्निकांड का कारण बने, जिसमें २७ घर जलकर खाक हो गये। एक महिला और १४ जानवर जिन्दा जल गये और लगभग ३ लाख रुपये की सम्पत्ति स्वाहा हो गयी। कानपुर से गये दमकलों को आग बुझाने में १४ घंटे लगे तब बाकी के १७३ मकान अग्नि के मुँह में जाने से बचाये जा सके।

३—एक अधजली बीड़ी लापरवाही से फेंक देने के कारण देवरिया जिले के लखुई ग्राम में भीषण आग लग गयी, जिसमें गाँव के अधिकांश घर जलकर नष्ट हो गये। बड़ी कठिनाई से जलते मकानों में से एक लड़का, एक स्त्री और ३ पशु निकाले जा सके, जो बुरी तरह झुलस चुके थे।

४—झाँसी जिले के ललितपुर नगर में एक व्यक्ति आतिशबाजी खरीदने आया और सामान देखते-देखते उसे बीड़ी पीने की तलब लगी। उसने जैसे ही बीड़ी जलाने के लिए दियासलाई जलायी कि उसका जला भाग किसी प्रकार टूट कर किसी सामान पर जा गिरा और कुछ मिनटों में ही भयंकर अग्निकांड हो गया, जिसमें एक व्यक्ति वहीं जलकर मर गया, दो सख्त घायल हो गये और आतिशबाज की दुकान जलकर भस्म हो गई, जिसमें हजारों रुपये की आतिशबाजी रखी थी।

इस बीड़ी और सिगरेट पीने वालों की असावधानी से प्रतिवर्ष पचासों भंयकर अग्निकांड होते रहते हैं, जिनमें लाखों की सम्पत्ति ही नष्ट नहीं होती वरन् कितने ही व्यक्तियों तथा पशुओं की प्राण-हानि भी हुआ करती है।

धूम्रपान का प्रचार

सिगरेट पीना जब कोई आरम्भ करता है तो दो परिस्थितियाँ होती हैं— १. मित्रों के आग्रह पर, २. मित्रों अथवा दूसरों की देखा-देखी शौकिया। आप चार मित्रों के साथ किसी पार्टी में बैठे हैं, वे सब धूम्रपान करते हैं, उन चारों ने सिगरेट जोड़ी और आपसे आग्रह किया कि आप भी एकबार सिगरेट का कश खींचकर मजा तो लें। उन्होंने आपसे आग्रह किया, मिन्नतें कीं और दबाब भी डाला। आपने भी सोचा कि जब ये सब मित्र इतना आग्रह कर रहे हैं और इतने चाव से सिगरेट पीते हैं तो अवश्य इसमें कोई गुण होगा, मजा आता होगा। आपने भी संकोच करते-करते अपने चार मित्रों के आग्रह पर सिगरेट जलायी और उसका कश खींचकर धुआँ गले के नीचे उतारा। बस इसी प्रकार दो-चार बार जहाँ आपने मित्रों के आग्रह पर धूम्रपान किया कि फिर आप स्वयम् उनको आग्रह करके सिगरेट पिलाने लगे और स्वयम् भी पीने लगे। अब सिगरेट पीने की आपकी आदत बन गयी। पहले आप कभी-कभी दिन में एक-दो बार सिगरेट पीने लगे फिर बिना सिगरेट आपको बेचैनी मालूम होने लगेगी और आप बन गये उसके अभ्यस्ती प्रेमी।

कुछ लोग जब दूसरों को सिगरेट पीते देखते हैं, चाहे वे घर वाले हों, मित्र हों नाते रिश्तेदार हों अथवा साथ काम करने वाले हों, इन लोगों को देख मन में एक भाव उत्पन्न होता है कि सिगरेट पीने से अवश्य ही कोई लाभ होता होगा तभी तो ये लोग सिगरेट पीते हैं। बस इस भावना के हृदय में बार-बार जाने से आदमी पहले अपने घर के किसी कौने में अथवा कहीं एकान्त के स्थान में सिगरेट पीना प्रारम्भ करता है, जो कालान्तर में खुलकर सबके सामने निःसंकोच धूम्रपान करने की आदत में परिणित हो जाता है।

धूम्रपान से आर्थिक संकट

भारत अभी गरीब देश है, इस देश के निवासियों की औसत दैनिक आय अभी आठ आना प्रतिदिन से अधिक की नहीं है, महँगाई इतनी बढ़ गयी है, दैनिक आवश्यकताओं की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वस्तुयें इतनी महँगी हो गयी कि लोग प्रायः अपनी गरीबी और महँगाई का रोना रोते रहते हैं। फिर भी सिगरेट और धूम्रपान पर वे अपनी कमाई का अच्छा खासा भाग खर्च करने में संकोच नहीं करते। अकेली बीड़ी-सिगरेट पीने का खर्च अपनी आमदनी का दो से दस फीसदी तक हो जाता है। कम आमदनी होने की शिकायत, महँगाई की शिकायत करते जाते हैं, रात-दिन खर्चों में कमी करने की बात सोचते रहते हैं, समझते हैं कि सिगरेट का उनका खर्च बहुत अधिक है परन्तु अपनी आदत के वशीभूत होने के कारण उसे छोड़ नहीं पाते। यदि दिन भर में दस सिगरेट पीते हैं तो नौ नहीं कर पाते, ग्यारह चाहे हो जायँ। इस प्रकार सिगरेट पीने वाले अपने ऊपर आर्थिक संकट बढ़ाते रहते हैं।

स्त्रियाँ और धूम्रपान

आजकल की सभ्य की जाने वाली सोसाइटी, होटल, नाचघर और क्लबों की सदस्यता का प्रभाव भारत की नारियों पर भी दिखाई पड़ने लगा है और पुरुषों के साथ वे भी सिगरेट का धूम्रपान करने लगी हैं। नारियों में भी अब सिगरेट पीने का शौक यूरोपीय देशों की भाँति इस देश में बढ़ने लगा है। कॉलेजों में, रेस्टोरेंटों में नाचघरों में पुरुषों के साथ लड़कियाँ भी सिगरेट पीने लगी हैं। न जाने यह दूसरों की नकल करने की प्रवृत्ति भारतवासियों को कहाँ ले जायेगी ? हमने विदेशियों की देखा-देखी चाय शुरू की और उसका प्रचलन इस देश में अत्यधिक हो गया। इसी प्रकार सिगरेट पीने की नकल भी हमने विदेशियों की देखा-देखी शुरू की और संक्रामक रोग की भाँति सिगरेट का प्रचलन हमारे देश के नर-नारियों, बालक-बालिकाओं और वृद्धों तक में बढ़ता जा रहा है। यूरोप और अमरीका आदि देशों के लोग सिगरेट की खराबियों, इसके दुष्परिणामों का अनुभव करके, इसे छोड़ने लगे हैं, वहाँ वैज्ञानिक लोग सिगरेट के कुप्रभावों व कुप्ररिणामों पर अनुसंधान कर रहे हैं परन्तु हमारे देशवासी सिगरेट के ऐसे भक्त होते जा रहे हैं कि अपने स्वास्थ्य और पैसा दोनों की तीव्र गति से बर्बादी कर रहे हैं।

धूम्रपान के व्यसन का भावी पीढ़ी पर कुप्रभाव

प्रायः जो लोग धूम्रपान करते हैं, वे यह नहीं चाहते कि उनकी सन्तान भी धूम्रपान करे परन्तु होता उल्टा ही है। माता-पिता को देखकर बालकों को भी लगता है कि सिगरेट-बीड़ी पीने में अवश्य कोई मजा आता होगा तभी तो डैडी-मम्मी सिगरेट पीते हैं और प्रायः बालक छिपकर चोरी से धूम्रपान करने लगते हैं। अपने माँ-बाप की सिगरेट चुराकर अथवा उनकी फेंकी हुई सिगरेटों को पुनः जलाकर बच्चे माँ-बाप की नकल किया करते हैं। इस प्रकार धूम्रपान की बुरी लत प्रायः बालकों में माता-पिता आदि बड़ों को देखकर पड़ती है।

इस प्रकार एक दिलचस्प क़िस्सा श्री वीरेन्द्रकुमार जैन का है। वे 'चेन स्मोकर' थे, बहुत सिगरेट पीते थे परन्तु नहीं चाहते थे कि उनका पुत्र यह बुरी आदत सीखे। परन्तु एक दिन देखते क्या हैं कि उनका चार साल का पुत्र शीशे के सामने खड़ा होकर सिगरेट अपने पिता की तरह मुँह में लगाकर दियासलाई से उसे जलाने ही वाला है। वे अपने छोटे-से पुत्र को देखकर स्तम्भित रह गये, उन्हें अपने आप पर बड़ा क्रोध आया और बड़ी आत्मग्लानि हुई। फिर क्या था जैन साहब ने उसी क्षण अपने घर से समस्त सिगरेट नष्ट करके प्रतिज्ञा की कि वे जीवन भर धूम्रपान नहीं करेंगे। इस प्रकार श्री जैन ने ही अपनी बुरी आदत नहीं छोड़ी वरन् अपने पुत्र का जीवन बर्बाद होने से बचा लिया।

× × ×

दिल्ली के एक सज्जन तुफैल अहमद अपने संस्मरण लिखते हुए लिखते हैं कि कभी जब घर में सिगरेट बीत जाते थे तो वे कभी-कभी अपने दस वर्षीय पुत्र से सिगरेट बाजार से मँगवाया करते थे। इससे उनके पुत्र के भी मन में सिगरेट पीने का चाव पैदा हुआ और वह घर से पैसे चुराकर गली में छिपकर सिगरेट पीने लगा। एक दिन तुफैल अहमद साहब के कई मित्र आ गये, उन्होंने अपने पुत्र को उनके लिये कुछ सामान लेने बाजार भेजा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जब लड़का काफी देर तक न लौटा तो वे स्वयम् उसे देखने घर से निकले। देखते क्या हैं, उनका लड़का सब सामान को एक पड़ौसी के दरवाजे पर रखकर सिगरेट के कश ले रहा है। उन्हें लड़के पर बड़ा क्रोध आया और उन्होंने उसकी मरम्मत की व उससे पूछा कि वह कब से सिगरेट पीने लगा है, तो उन्हें उनके पुत्र ने बताया कि वह लगभग ३ साल से घर से पैसे चुराकर सिगरेट पीता है। इस पर तुफैल अहमद साहब ने अपने लड़के की चोरी करने और सिगरेट पीने की आदत छुड़ाने के लिए फौरन स्वयम् सिगरेट न पीने की कसम खायी और एकबार में ही इस सत्यानाशी आदत से स्वयम् ही मुक्ति नहीं पायी वरन् अपने पुत्र को भी दो बुरी आदतों को छुड़ा दिया। यदि उन्होंने ऐसा न किया होता तो हो सकता है सिगरेट के लिए पैसा चुराने वाला उनका पुत्र कुछ ही दिनों में पक्का चोर बन जाता और तरह-तरह से अन्य व्यसनों में फँसकर बाहर भी लोगों की चोरी करने लगता अथवा जेब काटने लगता और इस प्रकार कभी जेलखाने का भी मुँह देखना पड़ सकता था।

× × ×

मेरे पड़ौस में एक निर्धन पंजाबी परिवार रहता है, परिवार में पिता-माता, दो पुत्री और एक पुत्र हैं। पिता का कोई व्यापार नहीं चलता, नौकरी उनसे होती नहीं। तीनों बच्चे छोटे हैं। अकेली माता है, जो घरों से कुछ सिलाई का काम ले आती है और उससे जो थोड़ी बहुत आय हो जाती है, उससे परिवार का काम चलाने की कोशिश होती है। कोई महीना ऐसा नहीं जाता, जबकि एक-दो दिन उन लोगों को निराहार न रहना पड़े।

परिवार में गरीबी तो थी ही, एक दिन उनके लड़के को पुलिस पकड़कर ले गयी, विचारे माता-पिता मेरे पास रोते हुए आये। उन्हें पता नहीं था कि उनका पुत्र क्यों पकड़ा गया है ? उनका कहना था कि पुलिस यों ही लड़के को पकड़कर ले गयी है और कोतवाली में उसे बुरी तरह मार पीट रही है। उनके कहने पर मैं कोतवाली गया और लड़के के पकड़े जाने का कारण मालूम किया तो पता चला कि लड़का सड़कों की सरकारी बत्तियों के बल्ब उतारकर बाजार में बेचा करता था। पुलिस काफी समय से बल्ब के चोरों की तलाश में थी, आखिर एक दिन वह लड़का दुकानदार को बल्ब बेचता हुआ पकड़ा गया। लड़के से चोरी करने का कारण पूछा तो ज्ञात हुआ कि वह कुछ समय से सिगरेट पीने लगा था। पहले तो वह लोगों की फैंकी हुई जूँठी सिगरेट के टुकड़े बटोरकर पीया करता था। जब उनसे काम न चला तो वह चोरी करने लगा। यहाँ तक कि बिजली के बल्बों को चुराकर बेचता था और इस प्रकार सिनेमा देखने लगा और सिगरेट पीने लगा। खैर समझाने पर लड़के ने प्रतिज्ञा की कि वह भविष्य में सिनेमा नहीं जायेगा और सिगरेट भी नहीं पीयेगा, तब पुलिस ने उसे छोड़ दिया।

धूम्रपान के लाभों का झूँठा भ्रम

प्रायः प्रत्येक नशा करने वाला व्यक्ति यह दलील देता है कि नशा कर लेने पर उसकी दिल और दिमाग की थकावट दूर हो जाती है और वह एक अपूर्व ताजगी का अनुभव करने लगता है। जो शराब पीते हैं वे यही कहते हैं, जो चाय काफी पीते हैं, वे भी यही कहते हैं और जो धूम्रपान करते हैं, वे तो इस उक्ति को देते थकते नहीं, वे कहते हैं कि सिगरेट के धुएँ के एक कश से दिमाग के दरवाजे खुल जाते हैं, थकान दूर भाग जाती है और नवीन विचार मस्तिष्क में चक्कर काटने लगते हैं। सिगरेट तथा अन्य नशीली वस्तुओं की विक्रेता और निर्माता कम्पनियाँ भी इसी प्रकार के गुमराह करने वाले विज्ञापन जोर-शोर से करती हैं।

लेकिन सच बात यह नहीं है। सच बात यह है कि आप किसी नये आदमी को सिगरेट का कश खींच कर उसके धुएँ को अपने फेंफड़ों में भरने को कहिये और फिर उसके अनुभव सुनिये। जैसे ही जरा-सा भी धुआँ उसके गले के नीचे पहुँचेगा, वह खांसता-खांसता पागल हो जायेगा, उसे कैसे हो जायेगी, उसकी आँखें लाल हो जायेंगी और वह अर्धमूर्छा की अवस्था को प्राप्त हो जायेगा। परन्तु वही व्यक्ति यदि बराबर धूम्रपान करता रहेगा तो फिर मजबूरन उसके फेंफड़े उस धुएँ के अभ्यस्त हो जायँगे और वह अपना पूर्व जैसा विद्रोह करना बन्द कर देंगे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथवा आप इतने बहरे हो जायेंगे कि अपने फेफड़ों के विद्रोह को न सुन सकेंगे, चाहे सिगरेट के प्रत्येक कश पर आपको कितनी भी खाँसी क्यों न आती रहे। जिस प्रकार बेहोशी की दवा खाने से अथवा दर्द बन्द करने वाली दवा खाने से दर्द का मर्मस्थल कुछ समय के लिए सुन्न पड़ जाता है और हम समझते हैं कि दर्द बन्द हो गया, वही हालत धूम्रपान नशे की है। जब हम सिगरेट पीते हैं तो हमारे नाड़ी मंडल के संवेदनहीन हो जाने के कारण थकावट विस्मृत हो जाती है। हम समझते हैं कि हमारी थकावट दूर हो गयी परन्तु जैसे ही सिगरेट के धुएँ का असर कम हुआ कि पुरानी थकावट महसूस होने लगती है। ऐसी सूरत में आदमी सिगरेट इत्यादि के धूम्रपान का इतना आदी हो जाता है कि अपनी थकावट की विस्मृति के लिए थोड़ी-थोड़ी देर में सिगरेट फूँकने लगता है। इससे थकावट तो दूर नहीं होती अलबत्ता शरीर का समस्त नाड़ी मंडल संवेदनहीन बन जाता है और इसका स्वास्थ्य पर प्रभाव यह पड़ता है कि हमारे नाड़ी मंडल की बीमारियों से लड़ने की प्रकृति और शक्ति समाप्त हो जाती है, तब मनुष्य अनेकों भयंकर प्राणलेवा बीमारियों का शिकार हो जाता है।

धूम्रपान पर सरकारी रोक

धूम्रपान से होने वाली इन हानियों की ओर सरकार का ध्यान बड़ी तेजी से आकर्षित हो रहा है अतः सरकार चाहती है कि कम से कम सार्वजनिक स्थानों पर धूम्रपान न हो। इसी हेतु यह नियम बनाया है कि सिनेमाघरों में भीतर बैठकर कोई भी व्यक्ति धूम्रपान न करें। कारण कि जब खेल चल रहा होता है तो सिनेमा घर के समस्त द्वारा बन्द कर दिये जाते हैं, उस समय सिगरेट बीड़ी का धुआँ बाहर नहीं निकल सकता अतः वह धुआँ इतना अधिक सिनेमा हाल में भर जाता है कि सिनेमा देखने वालों का दम घुटने लगता है। एक-दो बार तो सिगरेट बीड़ी के धुआँ घुटने के कारण सिनेमा हाल में लोगों को कै हो गयी है यहाँ तक कि लोग बेहोश तक हो जाते हैं। इसी प्रकार रेल के डिब्बों में, बसों आदि में बैठकर धूम्रपान करने की मनाही कर दी गयी है और जगह-जगह लिख दिया गया है कि धूम्रपान तभी किया जा सकता जबकि अन्य साथी यात्रियों को किसी प्रकार का कोई आपत्ति न हो। आये दिन चलती बसों और रेल के कई डिब्बों में जलती बीड़ी-सिगरेट के गिर जाने से तथा दियासलाई के गिर जाने से आग लगने की भयंकर घटनाएँ होती रहती हैं। परन्तु दुःख है कि फिर भी धूम्रपान करने वाले लोग अपनी तलब की संतुष्टि को सार्वजनिक खतरे से भी बड़ा और आवश्यक समझकर हठपूर्वक बीड़ी-सिगरेट उड़ाते चलते हैं।

तम्बाकू के भारतीय परिप्रेक्ष्य में एक दृष्टि

दुर्व्यसनों में यों तो कहने को कई ऐसे हैं जो छिटपुट रूप में विभिन्न वर्गों में प्रचलित हैं, पर जन साधारण तक दो ही प्रमुखतः पहुँच पाए हैं। ये हैं, तम्बाकू एवं शराब ! छिटपुट में अफीम, गाँजा, चरस, हशीश, कोकीन, एल. एस. डी. एवं अन्य मादक औषधियों का दुरुपयोग—आता है। जितना अधिक विरोधी प्रचार एवं हानियों का वर्णन तम्बाकू सेवन का किया गया है, सम्भवतः किसी अच्छी लाभदायक वस्तु का विधेयात्मक रूप में भी न किया गया होगा। फिर भी जन मानस में इसकी जड़ें कितनी गहरी हैं ? इसका एक अनुमान कुछ आँकड़े देते हैं।

भारत में कुल ४ लाख १ हजार हैक्टेयर भूमि में तम्बाकू की खेती होती है एवं सरकारी आँकड़ों के अनुसार हमारे यहाँ प्रति वर्ष साढ़े पाँच लाख टन तम्बाकू पैदा की जाती है। ८ लाख व्यक्ति उत्पादन में सक्रिय रूप से लगे हैं एवं २० लाख अन्य इस उद्योग के माध्यम से रोजी कमाते हैं। भारत की तम्बाकू की पैदावार सारे विश्व की तम्बाकू की कुल ८ प्रतिशत है। भारत में १७ करोड़ सिगरेटों एवम् ४.४ करोड़ बीड़ियों का उत्पादन प्रतिदिन होता है। सारे विश्व में २३ खरब ८२ अरब सिगरेट प्रतिवर्ष एवं भारत में ७० अरब सिगरेट प्रतिवर्ष तैयार की जाती है। इनकी खपत भी इतनी तेजी से होती है कि फैक्ट्री में इनकी माँग सतत् बनी रहती है। जब एक "सैम्पल सर्वे" विश्व स्वास्थ्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संगठन को एक टीम द्वारा किया गया तो पता चला कि एक दो लाख की आबादी वाले भारतीय शहर में २ करोड़ ७० लाख सिगरेटों एवं ५ करोड़ १२ लाख बीड़ियों की खपत प्रतिदिन विक्रेताओं के माध्यम से होती है। यह सब उस वैधानिक चेतावनी के बावजूद हैं, जो हर सिगरेट के पैकट पर अंकित रहती है कि यह स्वास्थ्य के लिए हानिकारक है।

एक पौण्ड तम्बाकू में निकोटिन नामक जहर (एक प्रकार का अल्केलॉइड) की मात्रा लगभग २२.८ ग्राम होती है। इसकी मात्र १/३८०० गुनी मात्रा (करीब ६ मिलीग्राम) एक कुत्ते को तीन मिनट में मार देती है। 'प्रेक्टिशनर' पत्रिका के अनुसार कैंसर (श्वाँस संस्थान का) से मरने वालों की संख्या ११२ प्रति लाख उनकी है, जो धूम्रपान करते हैं। जो इस दुर्व्यसन के आदी नहीं है, इनमें से कैंसर से मरने वालों की संख्या प्रति लाख मात्र १२ है। आई. सी. एम. आर. की एक सर्वे रिपोर्ट के अनुसार मुँह एवं गले के कैंसर के रोगी भारत में अन्य देशों की अपेक्षा ५० गुना अधिक है। इसका कारण है—तम्बाकू का विभिन्न रूपों में प्रयोग। ज्ञातव्य है कि भारत में तम्बाकू न केवल बीड़ी-सिगरेट के रूप में अपितु सुरती, नसवार, हुक्का आदि अनेकानेक रूपों में प्रचलित है। एक अनुमान है कि भारत की शहरी आबादी (करीब १३.५ करोड़) में से करीब ३ करोड़ विभिन्न रूपों में पान में तम्बाकू, जर्दा, चुरुट, सिगरेट, बीड़ी एवं ग्रामीण आबादी (करीब ५४.५ करोड़) में से करीब १५ करोड़ व्यक्ति, जिनमें खेत पर काम करने वाली मजूर स्त्रियाँ व १२ वर्ष से छोटे बच्चे शामिल हैं—बीड़ी सुरती, खैनी, हुक्का आदि के रूप में तम्बाकू से जुड़े हुए हैं। आश्चर्य इस बात का है कि इतनी बड़ी संख्या जो कि भारत की जनसंख्या का करीब एक तिहाई है, एक ऐसे नशे के चंगुल में है, जो धीरे-धीरे उनकी सम्पत्ति, तन्दुरस्ती एवं खुशहाली को अपने चंगुल में लेता चला जा रहा है, फिर भी किसी के कान पर जूँ तक नहीं रेंगती।

राष्ट्रीय अर्थ नीति ने भी तम्बाकू को एक "कैश क्राप" माना है। विश्व स्वास्थ्य संगठन की राय के विरुद्ध अमेरिका के खाद्य संगठन ने तम्बाकू की खेती को काफी बढ़ावा दिया है। अकेले विकासशील राष्ट्रों में १९७९-८० वर्ष में इससे होने वाली आय ८ अरब ६४ करोड़ रुपये थी।

ब्रिटिश अमेरिकी टोबेको कम्पनी की रिपोर्ट के अनुसार तम्बाकू की खपत प्रतिवर्ष आठ प्रतिशत बढ़ रही है। गत वर्ष का एक रोचक आँकड़ा है कि सिगरेट कम्पनियाँ ने विज्ञापन पर ४२ करोड़ २० लाख डालर खर्च किये, जबकि कैंसर सोसायटी को शोध कार्य के लिए एक सिगरेट विरोधी अभियान के लिए मात्र १ करोड़ डालर का अनुदान मिला। चूँकि सिगरेट नाम काफी बदनाम हो गया है, इस कारण पाश्चात्य जगत में 'स्मोक लेस टोबेको' को हानिरहित का जामा पहनाकर नसवार एवं सुरती की खपत काफी हो रही है।

यह सभी भलीभाँति जानते हैं कि नशे न किसी प्रकार के पोषक टानिक हैं एवं न मानसिक क्षमता बढ़ाने वाले। ये तो एक प्रकार के हलके विष हैं, जो तात्कालिक स्फूर्ति एवं क्षणिक मानिसक उत्तेजना मात्र देते हैं। इसी को आधार मानकर व इसी लाभ के गुण गाकर 'थकान मिटाने', 'बोरियत भगाने' के नाम पर इनका सेवन किया जाता है। यहाँ तक कि इसे प्रगतिशीलता का चिन्ह मान लिया गया है। जहाँ-जहाँ सम्पत्ति बढ़ी है एवं औद्योगीकरण-शहरी करण बढ़ता चला गया, ये दुर्गुण कई गुने बढ़े हैं। नशेबाज धन खोता है, जीवनी शक्ति खोता है। दरिद्रता उससे आ लिपटती है एवं बीमारियाँ पीछा नहीं छोड़तीं। मनोबल, दूरदर्शिता बुद्धि कौशल, धैर्य साहस जैसी मानसिक विशेषताएँ बेतरह नष्ट होती चली जाती हैं। परिवार अस्त-व्यस्त हो जाते हैं एवं इसका प्रभाव पूरे समाज राष्ट्र पर पड़ता है। विकृत एवं गई-गुजरी परिस्थितियों में पड़े व्यक्ति समाज में जो विग्रह उत्पन्न करते हैं, उससे अपराध अनाचारों की वृद्धि होती है। इसीलिये नशेबाजी जैसी समस्या से इस राष्ट्र का हर व्यक्ति जुड़ा हुआ है क्योंकि वह भी समाज का एक अंग है।

यदि वैयक्तिक एवं राष्ट्रीय हानियों के आर्थिक एवं स्वास्थ्यपरक पक्ष को ही फैलाया जाए तो मात्र तम्बाकू जैसे दुर्व्यसन से ही होने वाली हानि को देखकर आँखें चकाचौंध हो जाती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हैं। सर्वेक्षण बताते हैं कि भारत में धूम्रपान करने वालों से ७२ प्रतिशत बीस वर्ष की अवस्था से पूर्व ही धूम्रपान शुरू कर देते हैं, जिस पर न्यूनतम २० रुपये से लेकर अधिकतम १००) मासिक खर्च होता है। यदि भारत की कुल जनसंख्या में से करीब २५ प्रतिशत को तम्बाकू का किसी रूप में सेवन करते मान लिया जाय, जैसा कि पूर्व वर्णित आँकड़ों में उद्धृत है, तो करीब १७ करोड़ व्यक्ति औसतन ६० रुपया प्रतिमाह मात्र विभिन्न रूपों में तम्बाकू खरीदने में खर्च करते हैं। यह राशि कुल मिलाकर १ खरब २ अरब रुपये प्रति माह आती है। इस राशि को उस राशि से अलग माना जाना चाहिये, जो कि इस उद्योग में पूर्व से ही लगी हुई है। प्रतिवर्ष इस प्रकार करीब सवा बारह खरब रुपया नशे की होली में फूँक दिया जाता है। इस राशि को यदि उपयोगी उद्योगों में लगा दिया गया होता तो देश में चारों ओर खुशहाली दिखाई देती। इस राशि से यदि भारत के पौने दो करोड़ बेरोजगारों के लिए काम के अवसर निकाल लिए गये होते तो इतनी बड़ी जन शक्ति का अपव्यय न हुआ होता।

तम्बाकू सेवन का स्वास्थ्य सम्बन्धी एक पक्ष ऐसा भी है, जो अपनी स्थूल प्रतिक्रियाओं के रूप में प्रत्यक्ष सामने दिखाई देता है। करीब डेढ़ लाख व्यक्ति प्रतिवर्ष धूम्रपान जन्य रोगों से ग्रसित हो जाते हैं। इनकी बीमारी पर यदि प्रति व्यक्ति चिकित्सा, आहार, सेवा शुश्रूषा का अन्दाज लगाया जाए तो करीब १५ करोड़ रुपया राष्ट्र का प्रति वर्ष इसी में नष्ट हो जाता है। इन बीमारियों के कारण १०,००० पलंग अस्पतालों में हमेशा घिरे रहते हैं एवं सैकड़ों मजदूरों को व्याधि के कारण काम तथा कल-कारखानों पर अनुपस्थिति से देश को २७० करोड़ रुपये प्रतिवर्ष हानि उठानी पड़तीं है।

भारत की एक सिगरेट, पीने वाले की आयु ५ मिनट कम कर देती है। २० सिगरेट अथवा १५ बीड़ी प्रतिदिन पीने वाला एवं करीब ५ ग्राम सुरती, खैनी आदि के रूप में तम्बाकू खाने वाला व्यक्ति अपनी आयु में से १० वर्ष कम कर लेता है। जितने भी वर्ष वह जीता है असंख्य व्याधियों से ग्रस्त होकर समाज के लिए एक भार बनकर ही जीता है। एक माह में यदि वह औसतन पचास रुपये इस व्यसन के लिए खर्च करता है तो उसकी शेष आयु में से उसकी व्याधि चिकित्सा पर होना वाला खर्च अनुमानतः १०० रुपये प्रति माह आता है, जो उसको, समाज को एवं राष्ट्र को वहन करना पड़ता है।

सिगरेट-बीड़ी पीने से मृत्यु संख्या न पीने वालों की अपेक्षा ५० से ६० वर्ष की आयु वाले व्यक्तियों में ६५ प्रतिशत अधिक होती है। यही संख्या ६० से ७० वर्ष की आयु में बढ़कर १०२ प्रतिशत हो जाती है। सिगरेट-बीड़ी पीने वालों को हानि होने वाली मुख्य व्याधियाँ जिनके कारण या तो वे शीघ्र ही मृत्यु की गोद में जाते हैं अथवा धीमी मौत मरते हुए लाश जैसा जीवन जीते हैं—इस प्रकार है—जीव मुँह श्वांस नली, फेफड़ों का कैंसर, क्रानिक बोंकाईटिस एवं दमा, फेफड़ों की टी. बी. (क्षय रोग), रक्तकोशिकावरोध (बर्जरडीसिज) जिसके कारण १० प्रतिशत रोगियों की प्रारम्भ में अथवा आगे पैरों को कटवाना पड़ता है, दृष्टि सम्बन्धी दोष हृदयरोग एवं जल्दी ही आ जाने वाला बुढ़ापा।

भारत में मुँह का, जीभ का एवं ऊपरी श्वांस तथा भोजन नली (नेजोरिंक्स) का कैंसर सारे विश्व की तुलना में अधिक पाया जाता है। इसका कारण बताते हुए एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका लिखता है कि यहाँ तम्बाकू चबाना, पान में जर्दा, बीड़ी अथवा सिगरेट को उल्टी दिशा से पीना (रिवर्स स्मोकिंग) एक सामान्य बात है। तम्बाकू में विद्यमान कार्सिनोर्जिनिक्र १ दर्जन से भी अधिक हाइड्रोकार्बन्स जीवकोषों की सामान्य क्षमता को नष्ट कर उन्हें गलत दिशा, में बढ़ने के विवश कर देते हैं, जिसकी परिणति कैंसर की गाँठ के रूप में होती है।

जिस समय तक ऐसा रोगी विशेष कर ग्रामीण जनसंख्या का, जो करीब ५४ करोड़ है, का एक अंग चिकित्सक के पास तब पहुँचता है, जब स्थिति काबू के बाहर हो जाती है। प्रतिवर्ष कैंसर निदान केन्द्रों में ऐसे २ लाख ७० हजार रोगियों का निदान किया जाता है, जिनमें से २ लाख पता लगने के १ वर्ष के भीतर ही मृत्यु की गोद में चले जाते हैं। इसके अतिरिक्त तम्बाकू के धुएँ से निकोटिन जहर के कारण होने वाली व्याधि जब फेफड़ों के कैंसर को जन्म देती है तो निदान के ६ माह के भीतर ही व्यक्ति मौत की गोद में चला जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फेफड़ों के कैंसर में पिछले ५५ वर्षों में ११३ प्रतिशत वृद्धि आँकी गई है।

कैंसर के बाद दूसरा मुख्य रोग है क्रानिक बोंकाइटिस, एम्फीजिमा एवम् दमा। तीनों ही परस्पर सम्बन्धित हैं। इस रोग का बाहुल्य विशेषकर पिछले वर्षों में देखने में आया है। ४५ वर्ष से ६५ वर्ष की उम्र की वयसीमा वाले व्यक्तियों में इस एक शताब्दी में ही दमे की ४०० प्रतिशत वृद्धि हुई है। इस रोग से मरने वाले धूम्रपान से मरने वालों की तुलना में ६ गुने अधिक हैं। जब ऐसे व्यक्तियों के फेफड़ों की कार्य क्षमता का अध्ययन किया गया तो ज्ञात हुआ कि इन सभी मानकों का अनुपात काफी कम होता है।

धूम्रपान छोड़ने से प्रतिमाह औसतन १००) से ३००) की अतिरिक्त बचत के अलावा खोये स्वास्थ्य की प्राप्ति, मानसिक प्रसन्नता कुछ ऐसे अनुदान हैं, जिनकी जानकारी हर धूम्रपान प्रेमी को करानी चाहिये। नित्य-प्रतिक्षण होने वाली हानि की जानकारी एवं इसके निवारण हेतु उठाये गये कदम व्यक्ति को किस प्रकार लाभ पहुँचा सकते हैं ? यह जानना बहुत जरूरी है।

इसी प्रकार टी. बी. (क्षयरोग), बर्जरडीसिज, दृष्टिदोष, हृदय रोग ऐसी व्याधियाँ हैं, जो अन्ततः मारक ही सिद्ध होती हैं अथवा ऐसा अपंग, पराश्रित बनाकर छोड़ती हैं कि उसे प्रत्यक्ष नारकीय जीवन ही कहा जाना चाहिये।

मात्र यही पक्ष नहीं, कुछ तथ्य और भी ऐसे हैं, जो समाज को सीधे प्रभावित करते हैं। खेत से काटी गई तम्बाकू की कच्ची पत्तियाँ पहले आग में सुखाकर कड़क बनाई जाती हैं। हर ३०० सिगरेटों की तम्बाकू को पकाने के लिये एक भरापूरा पेड़ जलाकर राख कर दिया जाता है। १ एकड़ की तम्बाकू की फसल को पकाने के लिए प्रतिवर्ष एक एकड़ का हरा-भरा जंगल जलाकर धुआँ कर दिया जाता है। एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका के अनुसार ३,६३,६०० टन प्रतिवर्ष तम्बाकू उत्पादन हेतु १२ लाख ८६ हजार एकड़ भूमि में विद्यमान जंगलों को मात्र भारत में वृक्ष विहीन कर दिया गया। जैसे-जैसे सिगरेटों की खपत बढ़ी वैसे जंगल नष्ट किये जा रहे हैं, जिसका पर्यावरण पर बहुत ही प्रतिकूल प्रभाव पड़ रहा है। इस प्रकार तम्बाकू वर्तमान ऊर्जा संकट के समय में न केवल एक गरीब के चूल्हे की लकड़ी को चुराती है अपितु प्रदूषण वृद्धि पर्यावरण असन्तुलन में योगदान देकर उसके स्वास्थ्य, धन एवं परिवार की प्रसन्नता को भी चौपट कर देती है।

जब तक इस प्रचलन के विरोध में एक व्यापक आन्दोलन खड़ा न किया जायेगा, इसके प्रति लोगों के मन में घृणा उत्पन्न करना दुष्कर ही लगता है। बीड़ी विरोधी जुलूस प्रदर्शन के साथ धूमधाम से उसकी होली जलाना—व्यक्ति से जन समूह के समक्ष प्रतिज्ञा करवाना—बुराइयों की जानकारी हेतु व्यापक प्रचार करना—जैसे कुछ ऐसे माध्यम हैं, जिनका उपयोग समाज सेवी संगठन इस कार्य में निश्चित ही सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

सिगरेट कम्पनियों के एकमत विरोध व सरकार को तम्बाकू व टैक्स से प्राप्त असीम आमदनी के बावजूद एक विशाल जनमत पिछले दिनों अमेरिका में तैयार किया गया। समाज सेवी संगठनों द्वारा संचालित इस आन्दोलन ने ऐसा व्यापक स्वरूप लिया कि अन्ततः सरकार को झुकना पड़ा। वहाँ उत्पादन पर नियन्त्रण लगा दिया गया है एवं इनके किसी भी प्रकार से विज्ञापन पर (टी. बी. सिनेमा, समाचार पत्र आदि) प्रतिबन्ध भी है। यह तो सरकार द्वारा लिये गये कदमों का एक सशक्त स्वरूप हुआ। पर इसके लिये जनशक्ति को भी आगे आना होगा। मनुष्य को यह जानना होगा कि अर्थ, श्रम, कौशल, शिक्षा, स्वास्थ्य का एक समग्र स्वरूप ही वयक्ति की आन्तरिक एवं वाह्य सम्पन्नता का निर्धारण करता है। यदि दुर्व्यसनों से मुक्ति न पाई गई तो ये सभी छिनते चले जायेंगे एवं अन्त बुरा ही होगा।

मानसिक गिरावट स्वास्थ्य के लिये हानि, आर्थिक घाटा, सन्तान पर घातक प्रभाव, परिवार एवं समाज पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव तथा पर्यावरण में असन्तुलन—ये सभी पक्ष आँकड़ों के साथ इसी तथ्य का समर्थ प्रतिपादन करते हैं कि तम्बाकू सेवन जैसे व्यसन से समाज को निश्चित ही मुक्त किया जाना चाहिए। इसके लिए लोक शिक्षण, जन प्रचार प्रदर्शनी आदि जो भी माध्यम बनाये जायें, प्रयुक्त होना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विश्व में तम्बाकू विरोधी अभियान

अमरीका में सन् ९६६२ में प्रो. लूयर एल. टेरी की अध्यक्षता में नौ डाक्टरों व एक प्रोफेसर सहित ११ व्यक्तियों की एक कमेटी इस लिए बनायी गयी कि वह इस बात का अध्ययन करे कि धूम्रपान विशेषतः सिगरेट के धूम्रपान से वहाँ के निवासियों के स्वास्थ्य पर क्या प्रभाव पड़ रहा है ? उस कमेटी ने १४ महीने तक बराबर नित्य प्रति लगकर खोजबीन की। सहस्त्रों धूम्रपानियों से उन्होंने साक्षात्कार किया, उनके स्वास्थ्य की परीक्षा की, वे लोग अस्पतालों में गये और भिन्न-भिन्न प्रकार के रोगियों से बातें कीं व उनके रोगों के कारणों की जाँच-पड़ताल करके, उन्होंने अपनी रिपोर्ट प्रकाशित की जो काफी लम्बी है और उसमें धूम्रपान के सम्बन्ध में व उसका मानव स्वास्थ्य पर पड़ने वाले प्रभावों का विस्तार से वर्णन किया गया है। इस कमेटी के प्रमुख निष्कर्ष इस प्रकार हैं—सिगरेट पीने वाले पुरुषों की मृत्यु की संख्या ७० प्रतिशत बढ़ गयी है, जबकि स्त्रियों की मृत्यु संख्या में सिगरेट पीने वाली नारियों की संख्या में प्रतिशत मृत्यु संख्या कम बढ़ी है। कारण स्पष्ट है कि स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा धूम्रपान कम संख्या में करती हैं।

तम्बाकू से कैंसर-रोग की वृद्धि

सन् ९६६२ में अमरीका में फेफड़े के कैन्सर से ही ४१ हजार लोग मरे। प्राप्त प्रमाणों के आधार पर विश्वास और जिम्मेदारी के साथ कहा जा सकता है कि तम्बाकू प्रयोग का गले की नली के कैन्सर के सम्बन्ध है। कमेटी का मत है कि सिगरेट पीने का पुरुषों में मूत्राशय के कैन्सर से भी सम्बन्ध है।

इस कमेटी का मत है कि धूम्रपान से हृदय की कौरोनरी धमनी की बीमारी से भी मृत्यु होती है।

व्यापक अध्ययन करने पर कमेटी के सदस्यों को यह भी ज्ञात हुआ कि धूम्रपान करने से पुरानी खाँसी, दम घुटना, छाती की बीमारियाँ तथा फेफड़ों की कमजोरी ये सब रोग भी धूम्रपान न करने वालों की अपेक्षा अधिक संख्या में पैदा होते है। जो लोग पाइप पीते हैं कमेटी का निष्कर्ष है कि उनको ओठों का कैन्सर हो जाता है।

अतः कमेटी के अध्यक्ष प्रो. लूथर एल. टेरी ने अपनी रिपोर्ट में लिखा है कि "मैं विश्वासपूर्वक कह सकता हूँ कि धूम्रपान से मनुष्यों की मृत्यु का संकट बढ़ता जा रहा है, इसलिए धूम्रपान को रोकने के लिए सरकारी स्वास्थ्य सेवा विभाग को निश्चय ही ठोस कदम उठाने चाहिए।"

इंग्लैण्ड में तम्बाकू विरोधी अभियान

सिगरेट पीने से होने वाली हानियों के सम्बन्ध में रायल कालेज के चिकित्सकों की विशेष समिति द्वारा तैयार की गयी एक रिपोर्ट लन्दन के प्रमुख चिकित्सकों में बाँटी जा रही है। इस रिपोर्ट में डाक्टरों ने अनेक आँकड़े एकत्र करके यह प्रतिपादन किया है कि सिगरेट पीने से फेफड़ों का तपेदिक, श्वांस नली की ब्रान्काइटिस, पेट में पीड़ा, फेफड़ों के घाव और हृदय की धड़कन आदि के बहुत-से रोग हो जाते हैं। रिपोर्ट में यह भी कहा गया है कि ब्रिटेन में फेफड़ों के कैन्सर तथा हृदय रोग से मरने वालों की संख्या प्रति वर्ष बढ़ रही है। ब्रिटेन के बहुसंख्यक डाक्टरों का दृढ़ मत है कि सिगरेट पीने के खिलाफ देश भर में प्रबल आन्दोलन करना आवश्यक है। बच्चों को सिगरेट पीने से सर्वथा रोक देना चाहिए।

इंग्लैण्ड के एक प्रसिद्ध डाक्टर ने यह घोषणा की है कि जो लोग पच्चीस से पचास वर्ष की उम्र तक लगातार सिगरेट पिया करते हैं, उनमें से दस में से एक के लिये इस बात की पूर्ण संभावना है कि उन्हें कैन्सर का रोग हो जाय।" कुछ वर्ष पहले अमेरिका के एक डाक्टर ने भी जाँच-पड़ताल करके यह निष्कर्ष निकाला था कि "कैन्सर से मरने वालों में सिगरेट पीने वालों की संख्या सिगरेट न पीने वालों से २७ गुनी अधिक होती है।" यह निश्चय है कि यदि आप अन्धाधुन्ध सिगरेट पियेंगे तो आपकी जिन्दगी में जरूर ऐसा कोई खतरा आयेगा जो आपको बीमार बना देगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिकों और विद्वानों की उपर्युक्त रिपोर्टों से भारत भी धूम्रपान करने वालों की आँखें खुल जानी चाहिये और उन्हें यह तय कर लेना चाहिये कि उन्हें अपनी जान और अपना स्वास्थ्य प्यारा है अथवा धूम्रपान करके अपने स्वास्थ्य और पैसे की बर्बादी करनी है और धूम्रपान से होने वाली भयंकर बीमारियों का शिकार होकर मुत्यु को निमंत्रण देना है।

प्रसिद्ध वैज्ञानिकों और चिकित्सकों की सम्मतियाँ

नोबुल पुरस्कार विजेता डा. पौलिंग का कहना है कि मनुष्य जितना समय धूम्रपान में लगाता है, उस समय से तिगुना समय उसके जीवन का कम हो जाता है।

एक अन्य प्रसिद्ध वैज्ञानिक का मत है कि जो व्यक्ति एक पैकिट प्रतिदिन सिगरेट पीता है, उसकी आयु ८ वर्ष कम हो जाती है तथा दो पैकट प्रतिदिन पीने वाले की १८ वर्ष कम हो ज़ाती है।

अमरीका के एक प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक डा. एच. एस. हैं, जिन्होंने एक पत्रिका में लिखा है कि अधिक धूम्रपान करने से आँखें कमजोर हो जाती हैं, उनकी आँखों के आगे अँधेरा-सा छाया रहता है और धूम्रपान करने वाले लाल व हरे रंग की पहिचान नहीं कर पाते हैं। अतः धूम्रपान करना तुरन्त त्याग देना चाहिये।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के प्रसिद्ध विद्वान डा. रोजर लार्सन ने बहुत खोज के बाद यह निष्कर्ष निकाला है कि धूम्रपान करने वाला व्यक्ति अपने जीवन के २० साल कम कर लेता है। धूम्रपान करने वाले के फेफड़े धूम्रपान न करने वाले के फेफड़ों से २० साल बूढ़े पाये जाते हैं और ४० वर्ष की आयु के बाद धूम्रपान करने वाले के शरीर में कमजोरी तेजी से बढ़ती जाती है।

आस्ट्रेलिया की वायु सेना के अनुसंधान विभाग ने अपनी परीक्षाओं के पश्चात् यह रिपोर्ट प्रकाशित की है, जो लोग २० या इससे अधिक संख्या में सिगरेट पीते हैं, उनकी आँखों की ज्योति २० प्रतिशत खतम हो जाती है और वायु सेना में काम करने वालों को अपनी आँखों की ज्योति को कायम रखना अपने कर्तव्य पालन के लिए अत्यंत आवश्यक है अतः वहाँ की वायुसेना के अधिकारियों ने वायु सेना के कर्मचारियों को सलाह दी है कि वे धूम्रपान न करें।

तम्बाकू से उत्पन्न होने वाले पचीसों रोग

अमरीका में आजकल एक तरफ धूम्रपान का प्रचार हो रहा है, दूसरी तरफ वहाँ के चिकित्सक और वैज्ञानिक लोग धूम्रपान से होने वाली खराबियों की ओर जनता का ध्यान आकर्षित कर रहे हैं। एक प्रसिद्ध अमरीकी वैज्ञानिक ने अपने अनुभव के आधार पर यह कहा है कि सिगरेट का एक पैकिट नित्य पीने वाला अपनी आयु के अनेक वर्ष कम कर लेता है और २ पैकिट रोज पीने वाला उससे भी अधिक। तब उन लोगों की कौन कहे जो हर समय अपने मुँह में सिगरेट जलाये ही रहते हैं?

डा. लिनस बालिग ने एक विश्वविद्यालय में भाषण देते हुए कहा कि एक आदमी जो सिगरेट पीने में जितना समय लगाता है, उसकी आयु में उससे तिगुना समय कम हो जाता है। जितना खतरनाक जैट हवाई जहाज से यात्रा करना, उससे कहीं अधिक खतरा धूम्रपान करने से है।

न्यूयार्क सायकोलाजिकल सर्विस सैंटर नामक संस्था के डाईरेक्टर डा. हैनरी सी. लिन्क पी. एच. डी. ने लिखा है—"जल्दी या देर से लगभग हर तम्बाकू पीने वाले को यह पता चल जाता है कि वह अपनी मर्जी से नहीं बल्कि आदत के कारण तम्बाकू पीता है और यही आदत हानिकारक है। इसलिए वह इस आदत से अपना पिंड छुड़ाना चाहता है, लेकिन उसे इसका रास्ता नहीं मालूम होता। कभी-कभी आधे मन से कभी पूरे मन से वह इस आदत से झगड़ता है लेकिन इन अधूरे प्रयत्नों का सन्तोषप्रद नतीजा नहीं निकलता।"

डा. रिचर्डसन, धूम्रपान करने का जो असर मानव शरीर और मन पर पड़ता है, उस सम्बन्ध में लिखते हैं—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"धूम्रपानी का दिमाग सुस्त पड़ जाता है, उसमें रक्त संचार पूर्णरूप से नहीं हो पाता। खून पतला पड़ जाता है, फेफड़े निर्जीव और कमजोर हो जाते हैं, फेफड़ों में शुद्ध वायु न पहुँचने के कारण उनकी रक्त शुद्ध करने की शक्ति कम हो जाती है, जिससे शरीर तरह-तरह के रोगों का शिकार हो बन जाता है।

प्रसिद्ध चिकित्सक डा. फूट कहते हैं—"जिसे नपुसंक बनना हो वह तम्बाकू का इस्तेमाल करे।"

डा. रश का मत है कि "तम्बाकू के प्रयोग से दाँत कमजोर पड़ जाते हैं, दाँत असमय में ही गिर जाते हैं और अनेक दन्त-रोग तम्बाकू प्रयोग करने वाले को होते हैं जो बड़े कष्टकारक होते हैं।

डा. हासेक का कहना है, "धूम्रपान करने से मन्दाग्नि रोग हो जाते हैं।"

डा. अलकार—"तम्बाकू खाने, पीने अथवा सूँघने से आँखों की ज्योति कम हो जाती है।"

डा. सीली—तम्बाकू के धुएँ को फेफड़ों में भरने से फेफड़े सड़ जाते हैं और फेफड़ों की तपैदिक हो जाती है, जो मनुष्य को सब प्रकार से बर्बाद कर देती है और मृत्यु को निकट ला देती है।

डा. एलिन्सन का मत है—"तम्बाकू आदमी को बहरा व अन्धा बना देती है। आदमी की जिव्हा इतनी खराब हो जाती है कि उसे किसी चीज के खाने में स्वाद नहीं आता और उसकी नाक किसी वस्तु में सुगन्ध का अनुभव नहीं करती।"

अमरीका के आदिवासी भी सजग हो गये

अमरीका में धूम्रपान का सर्वाधिक रिवाज है अतः वहाँ के लोग ही धूम्रपान से होने वाली बीमारियों के सबसे अधिक शिकार हो रहे हैं। वहाँ के आदिवासियों के एक कबीले के सरदार ने अपने साथियों को तम्बाकू पीने की हानियों को व्यंग में इस तरह समझाया है—

१. तम्बाकू पीने वालों को इतनी खाँसी रहती है कि वह रातभर खांसता ही रहता है, इस कारण चोर-घर में नहीं घुस सकते, क्योंकि खाँसने वाले व्यक्ति को नींद कहाँ ?

२. अधिक तम्बाकू पीने अथवा खाने से शरीर में इतनी तेज दुर्गन्ध जम जाती है कि कुत्ता जैसी गंदी चीजें खाने वाला जानवर भी धूम्रपान करने वाले के पास नहीं आ पाता।

३. अधिक सिगरेट पीने से जवानी में ही मनुष्य भंयकर रोगों का शिकार बनकर मर जाता है। अतः उसे बुढ़ापे के कष्टों से छुटकारा मिल जाता है।

डा. आल्टन ओशनर 'अमरीकन कैन्सर सोसाइटी' और 'अमरीकन कालेज ऑफ सर्जन्स' के अध्यक्ष हैं। धूम्रपान के सम्बन्ध उनके विचार विशेष धूम्रपान करने वाले पाठकों की जानकारी के लिए उदधृत कर रहे हैं।

सिगरेट और तम्बाकू पीने से हानि होने के निम्नलिखित कारण हैं—

१. निकोटीन की उपस्थिति, यह बहुत भयानक विष है।

२. सिगरेट के तम्बाकू और उसके ऊपर जो कागज लपेटा जाता है—उसमें ऐसे कई विष पाये जाते हैं जो कैन्सर पैदा करते हैं।

३. तम्बाकू को कीड़ों से सुरक्षित रखने के लिए उस पर जो रासायनिक पदार्थ छिड़के जाते हैं—उनमें संखिया भी होता है। इस तरह तम्बाकू में संखिया विष का असर भी आ जाता है।

४. इसमें कार्बन मोनोक्साइड या कोयला-गैस पायी जाती है।

तम्बाकू की मानव अंगों पर प्रतिक्रिया

जो कोई सिगरेट पीना शुरू करता है, तो उसे उल्टी आने लगती है और सिर दर्द होने लगता है। निकोटिन आमाशय और दिमाग को उत्तेजित करता है और उसी के फलस्वरूप ये उपद्रव आते हैं। धीरे-धीरे दोनों अंग निकोटिन के विष से प्रभावित हो जाते हैं और फिर प्रतिवाद करना छोड़ देते हैं। आगे चलकर यही दशा प्रतिक्रिया स्वरूप होती है—अर्थात् सिगरेट न पीने से उल्टी आती है और सिरदर्द होता है।

१. इस तरह सिगरेट पीने वालों में चिड़चिड़ाहट आ जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२. सिगरेट पीने से आँखों में रक्तश्राव घट जाता है, इससे निगाह कमजोर हो जाती है।

३. निकोटिन धड़कन और रक्त चाप को बढ़ाता है। सिगरेट पीने से गर्भस्थ बालक के दिल की धड़कन भी बढ़ जाती है। गर्भिणी के दूध में भी निकोटिन का असर आ जाता है—अतः बालक प्रभावित हुए बिना नहीं रहता।

४. निकोटिन त्वचा तक रक्त-स्राव को कम करता है। अधिक सिगरेट पीने वालों की त्वचा का तापमान ४ अंश फारेनहाइट तक घट जाता है।

५. निकोटिन के कारण शिराओं में संकोचन आता है—अतः दिल में आने वाले खून की मात्रा घट जाती है। सिगरेट पीने वालों को शिरा संकोच और हृदय का दर्द आदि हो जाते हैं।

६. तम्बाकू पीने से मुँह, गले, आवाज की नाड़ियों, सांस की बड़ी और छोटी नालियों की श्लैष्मिक झिल्लियों में उत्तेजना आती है, अतः वहाँ कैन्सर हो जाता है।

७. निकोटिन भूख मिटाता है। यह आमाशय और १२ अंगुल आँत में उत्तेजना पैदा करता है।

८. निकोटिन आमाशय और १२ अंगुल आँत में खून के दौरे को घटाता है।

९. निकोटिन छोटी आँत की ग्रन्थियों के स्राव को घटाता है।

१०. सिगरेट पीने से मलतन्त्र में सुकड़ाव आता है, परिणामस्वरूप प्रदाह तथा श्लैष्मिक झिल्लियों में प्रदाह होता है और वहाँ घाव बन जाते हैं।

११. सिगरेट पीने से रक्त के लाल कर्णों की ओषजान वहनशक्ति घट जाती है। फलस्वरूप सांस फूलने की शिकायत हो जाती है।

रूस के महान् विचारक और ऋषितुल्य टालस्टाय ने लिखा है

तम्बाकू का स्तैमाल शराब से भी बुरा है क्योंकि धूम्रपान अन्तरात्मा की आवाज को धुँधली कर व्यक्ति को दुष्कर्मों को करने के लिए प्रोत्साहित करता है। धूम्रपान करने वाले सैनिकों की लड़ने की शक्ति कमजोर पड़ जाती है, जिससे देश की सुरक्षा भी खतरे में पड़ जाती है। तम्बाकू इतनी विषैली होती है कि जिस जमीन में एक बार तम्बाकू की खेती कर ली जाती है, उसमें कोई और चीज नहीं उगाई जा सकती, क्योंकि तम्बाकू जमीन की बहुत बड़ी उदासीन शक्ति को नष्ट कर देती है। प्रसिद्ध रूसी चिकित्सक डा० आई० टी० शेवर्चे, जो अपनी नयी-नयी खोजों के लिए संसार में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके हैं। सन् १९६३ में भारत पधारे। उन्होंने दिल्ली में पत्रकारों को वक्तव्य देते हुए कहा धूम्रपान १०० फीसदी हानिकारक है। इसीलिए मैं सब लोगों को धूम्रपान करने की आदत से दूर रहने की सलाह देता हूँ। विशेष कर उन्होंने डॉक्टरों को सलाह दी कि वे धूम्रपान न करें और करते हों तो छोड़ दें, जिससे उनके रोगियों पर अच्छा असर पड़े और वे शीघ्र उनके इलाज में स्वास्थ्य लाभ प्राप्त कर सकें।"

पश्चिमी जर्मन के प्रसिद्ध डा० एच० ट्रकरी कटक में हुए भारतीय विज्ञान कांग्रेस में भाग लेने के लिए आये थे। उन्होंने अपने भाषण में बताया कि भारत में सुपारी के साथ तम्बाकू चबाने की आदत है, इससे मुँह का कैन्सर हो जाता है। उन्होंने कहा था कि जिस प्रकार आत्महत्या करना बुरा है, उसी प्रकार धूम्रपान करना अथवा तम्बाकू मुँह में रखकर उसका रस चूसना भी आत्महत्या करने के समान बुरा है और आत्महत्या के समान तम्बाकू का किसी प्रकार से स्तैमाल करना सामाजिक अपराध समझा जाना चाहिए।

पिछले पाँच साल में ब्रिटेन में सिगरेट की दैनिक खपत ८००००० लाख से बढ़कर ६५००००० तक हो गयी है। आँकड़े बताते हैं कि ७० प्रतिशत पुरुष और लगभग ४७ प्रतिशत महिलाएँ इंग्लैण्ड में धूम्रपान करती हैं। औसतन पुरुष १५-२० सिगरेट और महिलाएँ ८-१० सिगरेट प्रतिदिन पीती हैं, अतः वहाँ के विचारक और नेता परेशान हैं कि किस प्रकार लोगों की धूम्रपान करने की आदत छुड़ायी जाय। वैज्ञानिक लोग बराबर धूम्रपान के बुरे नतीजों को लोगों को बताकर कोशिश कर रहे हैं कि लोग धूम्रपान की आदत छोड़ दें। लेकिन कोई भी व्यसन एक बार लग जाने के बाद फिर छूटने का नाम नहीं लेता जब तक कि आदमी बहुत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बड़े आत्मविश्वास और दृढ़ इच्छाशक्ति वाला ही न हो।

धूम्रपान छोड़ने का परीक्षण

यह सभी धूम्रपान करने वाले स्वीकार करते हैं कि धूम्रपान से कोई लाभ नहीं होता उल्टी स्वास्थ्य और धन की बरबादी ही होती है परन्तु आदत की लाचारी से वे धूम्रपान छोड़ नहीं पाते। अभी इंग्लैण्ड में लगभग एक हजार व्यक्तियों ने यह प्रयास किया कि वे धूम्रपान छोड़ दें। उनका अध्ययन वहाँ के धूम्रपान अनुसंधान विभाग ने किया। लोगों ने धूम्रपान छोड़ने का प्रयास इस प्रकार किया कि कुछ ने तुरन्त उसी क्षण धूम्रपान बन्द किया, कुछ लोगों ने अपनी इस आदत से धीरे-धीरे छुटकारा पाने का प्रयास इस प्रकार किया जा हर पन्द्रह मिनट के बाद सिगरेट पीता था, उसने उसके बजाय आध घण्टे के बाद सिगरेट, फिर एक घन्टा बाद फिर दो घंटा बाद इसी प्रकार समय बढ़ा-बढ़ा कर उन्होंने सिगरेट पीने की आदत से छुटकारा पाने का प्रयत्न किया। बहुत प्रयत्न करने पर भी केवल ५५० व्यक्ति धूम्रपान से पूर्ण रूप से छुटकारा पा सके, बाकी कुछ लोग नित्य प्रति संख्या में कमी कर सके, बाकी आदत के इतने गुलाम रहे कि धूम्रपान छोड़ने का उनका विचार केवल विचार ही रह गया और वे अपनी आदत पर काबू न पा सके। जिन ५५० व्यक्तियों ने धूम्रपान कतई बन्द कर दिया उनके अनुभव इस प्रकार हैं—

१. रात में खूब गहरी नींद आयी और खाँसी भी नहीं आयी।

२. मुँह का स्वाद बदल गया। धूम्रपान की आदत से जो सब चीज बेस्वाद लगती थीं वे अब स्वादिष्ट लगने लगीं और इस प्रकार भोजन में रुचि बढ़ गयी।

३. घ्राण शक्ति बढ़ गयी। पहले जो किसी वस्तु की सुगंध व दुर्गन्ध मालूम नहीं पड़ती थी, धूम्रपान छोड़नें के पश्चात् उन्हें हर वस्तु की गंध स्पष्ट रूप से मालूम पड़ने लगी।

४. धूम्रपान बन्द करने के बाद भूख बढ़ गयी और खाया हुआ भोजन अच्छी प्रकार पचने लगा।

५. जब भोजन पचने लगा, दस्त साफ आने लगा तो शरीर भी खूब हल्का रहने लगा, जिससे काम करने में मन लगने लगा और काम करने की शक्ति बढ़ गयी। जब धूम्रपान करते थे तो शरीर शिथिल रहता था, मन मरा-मरा सा रहता था, किसी काम में उस समय तक मन नहीं लगता था, जब तक कि सिगरेट के कश पर कश नहीं लगाये जाते थे।

६. धूम्रपान छोड़ने से सबसे बड़ा और अंतिम लाभ यह हुआ कि उन लोगों का आत्म-विश्वास बढ़ गया।

इन अनुभवों के विपरीत जो लोग धूम्रपान करना न छोड़ सके उनका कहना था—

१. धूम्रपान करने की आदत के कारण इच्छा शक्ति कमजोर पड़ गयी।

२. धूम्रपान किये बिना काम नहीं चलता, किसी काम में मन नहीं लगता। सिगरेट पीने की भड़भड़ी भीतर से आती रहती है।

३. मैं इतना कमजोर हो गया हूँ कि बिना धूम्रपान किये शरीर की गाड़ी चलती ही नहीं।

४. कुछ सज्जनों का कहना था कि हमने सिगरेट पीना बन्द कर दिया परन्तु मित्रों ने फिर पिलाना शुरू कर दिया और अब यह आदत छूटती ही नहीं।

इस प्रकार जो लोग धूम्रपान नहीं छोड़ पाते हैं, उनमें दृढ़ता इच्छा शक्ति की कमी ही विशेष रूप से रहती है, अन्यथा दृढ़ इच्छा शक्ति के आधार पर तो मनुष्य, धूम्रपान ही क्या अपने जीवन की सभी कमजोरियों को दूर करके संत बन सकता है। इसीलिए आर्य ग्रन्थों में इन्द्रिय दमन की शिक्षाएँ भरी पड़ी हैं।

धूम्रपान की कुटेव से छुटकारा पाने के लिए प्रसिद्ध विद्वान जेम्स का निम्न मत है—

१. धूम्रपान एक बार ही छोड़ दो।

२. धूम्रपान सदैव के लिए प्रतिज्ञा करके छोड़ दो।

३. अपने इस निश्चय में एक भी अपवाद मत होने दो चाहे कितनी ही भड़भड़ी धूम्रपान करने के लिए मन में क्यों न उठे ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धीरे-धीरे योजना बनाकर भी लोग धूम्रपान से छुटकारा पाने का प्रयास करते हैं परन्तु ऐसे लोग अपनी आदत को पूर्ण रूप से छोड़ने में प्रायः सफल नहीं होते, क्योंकि वे अपनी निश्चित संख्या में व्यक्तिगत प्रयासों से कमी कर लेते हैं परन्तु जब वे मित्रों के साथ बैठते-उठते हैं तो वे उनके आग्रह को टाल नहीं पाते और इस प्रकार कम किया गया सिलसिला टूट जाता है और फिर अबाध रूप से धूम्रपान का सिलसिला चल पड़ता है।

रूस में धूम्रपान के विरुद्ध आन्दोलन

हमारे देश की तरह रूस के समाचार-पत्रों में धूम्रपान को प्रोत्साहित करने वाले विज्ञापन नहीं छप सकते हैं, न वहाँ फिल्मों द्वारा ही धूम्रपान अथवा तरह-तरह की सिगरेटों के प्रचार के विज्ञापन ही दिखाये जा सकते हैं। वरन् रूस के सिनेमाघरों में "धूम्रपान न कीजिये" प्रदर्शित किये जाते हैं व लिखे रहते हैं। रूस में कानूनन १६ वर्ष से कम उम्र के बच्चों को सिगरेट या दियासलाई बेचना मना है, जिससे कि कहीं छोटे बच्चों को धूम्रपान करने की आदत न पड़ जाय। इतना ही नहीं रूस में माध्यमिक शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को धूम्रपान करने की आज्ञा नहीं है यदि माध्यमिक शिक्षा पाने वाला कोई विद्यार्थी सिगरेट पीता देखा जाता है, तो उसे दण्ड दिया जाता है। रूस में सिनेमा-घरों में इस प्रकार के डौकूमेंटरी फिल्म दिखाये जाते हैं, जिनसे धूम्रपान से होने वाली हानियों को प्रदर्शित किया जाता है। रूस में यूरोप के अन्य देशों के मुकाबिले में बहुत कम स्त्रियाँ धूम्रपान करती हैं।

भारतीय विचारकों का तम्बाकू-निषेध

भारत में बम्बई के टाटा मैमोरियल अस्पताल में पिछले १६ सालों में करीब ३६ हजार कैन्सर के रोगी आये, जिनमें ५५ हजार को मुँह कैन्सर था और यह रोग उन्हें तम्बाकू खाने से हुआ था। जैसे कुछ लोग हर समय सिगरेट पीते रहते हैं, उसी प्रकार कुछ लोग हर समय तम्बाकू अपने मुँह में रखे रहते है और हर समय उसका रस पान करते रहते है। कुछ अपने नीचे के दाँतों और औंठों के बीच में तम्बाकू को दबाये रखते हैं। उनके नीचे के दाँत शीघ्र कमजोर होकर गिर जाते हैं और नीचे का ओठ बड़ा होकर लटक पड़ता है, जो देखने में बहुत ही बुरा प्रतीत होता है।

तम्बाकू खाने से कैन्सर पैदा होता है

७ दिसम्बर १९५७ के 'स्टेट्समैन' में निम्नलिखित समाचार प्रकाशित हुआ था—

"भारत में किए गए अनुसंधानों से पता चला है कि गालों में होने वाले कैन्सर का प्रधान कारण खैनी अथवा जीभ के नीचे रखी जाकर चबाने वाली तम्बाकू है। इसी प्रकार गले के ऊपरी भाग में जीभ में और पीठ में होने वाला कैन्सर बीड़ी के पीने से होता है। सिगरेट से गले के निचले भाग में कैन्सर होता पाया जाता है, इसी से अन्तड़ियों का भी कैन्सर सम्भव हो जाता है।

१९५० के आँकड़ों से पता चला है कि बम्बई में मुँह का कैन्सर न्यूयार्क या लन्दन से अधिक होता है। (कारण स्पष्ट है कि भारत की जलवायु गरम है)।

भारत की स्वास्थ्य मन्त्राणी डा. सुशीला नायर ने ता. २१ अप्रैल १९६२ को लोकसभा में बयान दिया कि—"भारत में की गयी जाँच-पड़तालों से पता चला है कि अधिक बड़ी सिगरेट पीने से मुँह, गला और फेफड़े का कैन्सर होता है।"

एक प्रसंग में उन्होंने यह भी कहा

"एक डाक्टर की हैसियत से मैं कह सकती हूँ कि तमाम तरह के कैन्सर तम्बाकू की बजह से ही होते हैं। सामाजिक, आर्थिक और आध्यात्मिक सभी दृष्टियों से तम्बाकू घातक और हानिकर है। तम्बाकू दाहक बम की तरह है अतः यह सबके लिए हानिकारक है।"

"धूम्रपान की आदत कैसे छूट सकती है ?" इस सम्बन्ध में डा. सुशीला नायर जी का मत है कि धूम्रपान केवल दृढ़ निश्चय द्वारा ही छोड़ा जा सकता है। इसे एकदम छोड़ना चाहिये। धीरे-धीरे यह आदत छूटने की नहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारत के भूतपूर्व स्वास्थ्य मन्त्री श्री करमरकर ने ३० नवम्बर १९५९ को भारत की लोक सभा में एक बयान देते हुए कहा था कि, "भारत के लोगों को धूम्रपान करने और तम्बाकू चबाने की आदत छोड़नी चाहिए क्योंकि तम्बाकू के जहर और कैन्सर की बीमारी में गहरा सम्बन्ध है।"

महात्मा गान्धी ने कहा है—अब तक मैं यह न समझ पाया कि तम्बाकू पीने का इतना जबरदस्त शौक लोगों को क्यों है ? नशे हमारे धन को ही नष्ट नहीं करते वरन् स्वास्थ्य और परलोक को भी बिगाड़ते हैं।

श्री पूर्णचन्द्र एडवोकेट, मन्त्री आर्य केन्द्रीय सभा, आगरा—धूम्रपान करने से फेफड़ों के तथा तम्बाकू खाने से मुँह के कैन्सर हो जाते हैं। धूम्रपान एक बहुत बड़ा व्यसन है, इससे वायु दूषित होती है, इसमें व्यर्थ धन बर्बाद होता है। अतएव प्रतिज्ञा कीजिये कि सिगरेट, बीड़ी तथा तम्बाकू का सेवन कभी नहीं करेंगे।

धूम्रपान के विरोध में विद्वानों की सम्मितियाँ

तम्बाकू के सम्बन्ध में प्रसिद्ध विचारक **डा. रामचरण जी महेन्द्र** लिखते हैं—

"तम्बाकू में महा भयंकर विष है, जिसे निकोटिन कहते हैं। सौ औंस सूखी तम्बाकू की पत्तियों में दो औंस निकोटिन पाया जाता है। निकोटिन संखिये से भी तीव्र विष है, जो मनुष्य पर धीरे-धीरे प्रभाव डालकर प्राणान्त करता है। निकोटिन की एक बूँद खरगोश की त्वचा पर डालने से उसकी मृत्यु हो जाती है। चीन में आत्महत्या करने का यह एक सुगम साधन बन गया था कि वहाँ लोग जीवन से तंग आकर हुक्के का सड़ा पानी पीकर जीवन-लीला समाप्त कर लेते हैं। आरम्भ में तम्बाकू पीने से कै, दस्त और चक्कर आने शुरू हो जाते हैं।"

तम्बाकू के नशे में जन-साधारण की बचाने की आज भारी आवश्यकता है। एक तो वैसे ही निर्धनता तथा अज्ञान के कारण हमारा सार्वजनिक स्वास्थ्य बहुत दुर्बल है, उस पर भी यदि तम्बाकू की घातक कुल्हाड़ी इस तेजी से चलती रही तो हमारे स्वास्थ्य का भगवान ही रक्षक है, इस खतरे से राष्ट्र को बचाने के लिए हमें नशा विरोधी—विशेषतया तम्बाकू विरोधी आन्दोलन तेजी से चलाने की आवश्यकता है। तम्बाकू वह छुरी है, जिसे हम पैसा देकर खरीदते हैं और उसके द्वारा अपने आपको अपने हाथों से बर्बाद करते हैं। इस सामूहिक आत्म-हत्या को रोका जाय, उसकी बुराइयाँ समझा कर जन-जन को वस्तु-स्थिति समझायी जाय तो यह एक बड़ी ही उत्तम सेवा है। जिस प्रकार किसी को अपना गला काटने की तैयारी में लगे हुये व्यक्ति को समझा बुझाकर या लड़-झगड़कर उस काम से रोक देना एक पुण्य है उसी प्रकार नशेबाजी की विशेषतया किसी से तम्बाकू की आदत छुड़ा देना या उससे बचे रहने के लिए सावधान कर देना एक श्रेष्ठ परमार्थ है।

श्री मोहनलाल वर्मा का कथन है—"सिगरेट और बीड़ी का अधिकाधिक सेवन ही, हमारी अस्वस्थता, अल्पायु एवं सदा रोगी बने रहने का एक विशेष कारण है। राष्ट्र के व्यक्तियों एवं नवयुवक विद्यार्थियों में बढ़ती अनैतिकता व विभिन्न आचरण सम्बन्धी दोषों का कारण भी यही है। वास्तव में सिगरेट अपराधों की जननी है और अपराधों के मूल की उपेक्षा करना अदूरदर्शिता एवं राष्ट्र के लिए घातक है।"

श्री महावीरप्रसाद पोद्दार ने लिखा है—"इस बात में अब कोई शक नहीं रहा है कि बीड़ी सिगरेट से कैन्सर नाम का भयंकर रोग होता है, जिसकी अब तक कोई दवा नहीं मिल सकी है। मौत ही उसकी दवा है। रोगी बड़ी तकलीफ से घुल-मिल कर मरता है, इस रोग से। जब हम किसी के मुँह पर बीड़ी सिगरेट देखते हैं तो ऐसा लगता है जैसे उसके अधरों पर ही साक्षात् श्मसान सुलग उठता है।"

गोपालकृष्ण मल्लिक का कथन है—मालगाड़ी के डिब्बों ने जिन चीजों को अधिक ढोया है, उनमें कोयला और लोहे के बाद तम्बाकू और उससे बनी बीड़ी-सिगरेट का ही आँकड़ा अब्बल है। यह स्थिति हमारे गरीब देश के लिए कितनी दयनीय है ?

डा. जयनारायण जायसवाल ने 'स्वस्थ जीवन' पत्रिका में धूम्रपान के सम्बन्ध में लिखा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है—"मेरे ख्याल से आज धूम्रपान से अधिक व्यापक और घातक नशा दूसरा नहीं हो सकता।" धूम्रपान के कारण एक तरफ रक्त में गन्दगी का प्रमाण बढ़ता रहता है दूसरी तरफ श्लैष्मिक कलाओं में भयंकर बीमारियों का घर जमता रहता है। यानी अन्तर्वाह्य शरीर रोगों के चक्र में फँस जाता है।

डा. चुन्नीलाल का कहना है कि धूम्रपान से मानसिक कार्य करने की शक्ति क्षीण हो जाती है, स्मरण शक्ति नष्ट हो जाती है और मनुष्य आलसी हो जाता है।

पं. ठाकुरदत्त शर्मा तम्बाकू को समस्त हृदय के रोग, फेफड़ों और त्वचा के रोगों, नेत्र-रोग, मस्तिष्क की निर्बलता और उन्माद रोगों की जननी बताते हैं।

धूम्रपान पर भारी व्यय

मान लीजिये हमारे देश में दो करोड़ व्यक्ति सिगरेट पीते हैं और उनका सिगरेट पीने का व्यय १० नया पैसा प्रतिदिन है, तो इसका व्यय प्रति व्यक्ति औसतन ३६ रुपया वार्षिक हुआ। इस प्रकार दो करोड़ धूम्रपानी लोग ७२ करोड़ रुपया सिगरेट जैसे हानिकर और निरर्थक शौक करने पर व्यय कर देते हैं। इसी प्रकार बीड़ी पीने वालों की संख्या यदि हम पाँच करोड़ मान लें, जो सम्भवतः कम ही है और बीड़ी पीने वालों का औसतन व्यय ५ नया पैसा प्रतिदिन मान लिया जाय तो बीड़ी पीकर हमारे देशवासी ६० करोड़ रुपया की हर साल होली जला देते हैं। फिर यदि अन्य प्रकार के सभी धूम्रपान जैसे हुक्का, सुलफा, भाँग, गाँजा व चरस पर भी कम से कम २५ करोड़ रुपया प्रति वर्ष अवश्य व्यय हो जाता होगा। इस प्रकार लगभग डेढ़ अरब रुपया प्रतिवर्ष भारतवासी अपनी नासमझी, तलब और शौक की खातिर धूम्रपान करके फूँक देते हैं। डेढ़ अरब की राशि कोई मामूली रकम नहीं होती। यदि प्रति वर्ष धूम्रपान पर खर्च होने वाला इतना रुपया देश निर्माण के कार्यों पर व्यय हो तो पाँच साल में ही देश की काया पलट हो सकती है।

भारत कृषि प्रधान देश रहा है, जो कभी अपने अन्न से संसार का पेट भरता था परन्तु खेद का विषय है कि आज हमको अपने देशवासियों का पेट भरने के लिए विदेशों से अन्न का भारी मात्रा में आयात करना पड़ता है। हमारे देश की भूमि भी वही है, इसके पहाड़ व नदियाँ वहीं है परन्तु पैदावार हमारे देश की बहुत-से देशों से पिछड़ गयी है। उसका कारण स्पष्ट है कि हमारे यहाँ सिंचाई के साधन पश्चिमी देशों के समान समुन्नत नहीं हैं। यदि धूम्रपान पर होने वाली धन राशि बाँधों के निर्माण और सिंचाई के साधनों के विकास में लगाई जाय तो अन्न की समस्या बहुत कुछ हल हो सकती है।

दस करोड़ रुपया की लागत से लगी हुई एक कपड़े की मिल से लाखों आदमियों का तन ढका जा सकता है और हर कपड़े की मिल में कम से कम सूत कताई से कपड़े की बुनायी, रंगाई और कपड़ा मिल के अन्य कामों में, दो हजार व्यक्तियों को काम दिया जा सकता है अर्थात् दो हजार परिवारों को भरण-पोषण का साधन एक कपड़ा मिल से मिल सकता है। वहाँ अन्य व्यवसायी भी बस सकते हैं, जिनकी संख्या भी एक हजार परिवारों से कम की नहीं हो सकती है इस प्रकार दस करोड़ की लागत की एक कपड़ा मिल से अथवा किसी और कारखाने से हम तीन हजार परिवारों को रोटी दे सकते हैं। अतः डेढ़ अरब की राशि से दस-पन्द्रह मिल अथवा बड़ी-बड़ी फैक्टरी चलायी जा सकती है, जिनमें लाखों व्यक्तियों के लिये रोजी और रोटी की व्यवस्था की जा सकती है।

अभी हमारे देश में हजारों गाँव ऐसे हैं, जहाँ पक्की सड़कें तो क्या कच्ची सड़कें भी नहीं हैं। उन्हें सड़कों वाले गाँवों तक पहुँचाने के लिए मीलों चलना पड़ता है। रेलवे स्टेशन तक पहुँचने के लिए तो प्रायः १०-२० मील चलना मामूली बात है। अतः देश की सर्वोन्मुखी उन्नति के लिए यह परमावश्यक है कि हमारे देश के सभी गाँवों तक डामर की सड़कें न हों तो कम से कम कंकड़ की पक्की सड़कें तो अवश्य हों जिनसे गाँवों के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निवासियों के लिए जीवन-यापन का आवश्यक सामान उन सड़कों द्वारा उनके पास तक पहुँच सके और गाँवों के निवासी अपने गाँवों से नगरों और दूसरे अन्य गावों तक वर्ष के हर मौसम में पहुँच सकें। यदि हमारे देशवासी धूम्रपान पर व्यय होने वाली प्रतिवर्ष की धनराशि को बचाकर सड़क-निर्माण पर व्यय कर सकें तो गाँवों की शकल बदल सकती है।

पिछले पृष्ठों में हमने इस बात पर विचार किया कि धूम्रपान पर व्यय होने वाली एक अरब रुपये की धन-राशि से राष्ट्रनिर्माण की कितनी योजनाएँ चल सकती हैं और उनसे किस प्रकार हम अपने देश में फैली गरीबी और बेरोजगारी को दूर कर सकते हैं ? हम अपने देश में फैली गरीबी और बेरोजगारी को दूर करने के लिए अनेकों योजनाएँ राष्ट्रीय स्तर पर चला रहे हैं और उन्हें चलाने के लिए अरबों रुपयों का कर्ज़ विदेशों से लेना पड़ रहा है। परन्तु यदि हम अपने जीवन को मितव्ययी बनावें और धूम्रपान सदृश अपनी आदतों को छोड़ सकें तो निश्चय है कि हम अपने ही साधनों के सहारे अपने देश से गरीबी और बेकारी दोनों को दूर कर सकते हैं। परन्तु दुःख की बात यह है कि जहाँ हम अन्य देशों की भाँति अपने देश की उन्नति करना चाहते हैं, वहाँ हम राष्ट्रीय स्तर पर बचत की मदों पर समुचित ध्यान नहीं देते।

राष्ट्रीय स्तर की बात हम छोड़ भी दें और अपने व्यक्तिगत और गृहस्थी के हितों की दृष्टि से ही सोंचें तो भी यह बड़ा आवश्यक है कि हम अपनी आदतों और अपने दैनिक खर्चों को कम करें और जिन खर्चों को हम रोक सकें उन्हें तुरन्त रोक दें। इस प्रकार खर्चों में धूम्रपान का खर्चा ऐसा खर्चा है, जिसे आदमी यदि चाहे तो आसानी से रोक सकता है और धूम्रपान पर होने वाले खर्च के पैसे से दैनिक जीवन की अपनी अन्य आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकता है।

धूम्रपान का व्यसन और सदाचार तथा नैतिकता

रूस के ऋषि टाल्सटाय ने, जिनका महात्मा गाँधी भी गुरु के तुल्य आदर करते थे, अपने एक कथानक में एक ऐसे आदमी का चित्रण किया है, जो अपनी पत्नी की हत्या करना चाहता था। इसके लिये उसने शराब पीकर उसे मारने का प्रयत्न किया पर उसका हाथ छुरा चलाने में असमर्थ रहा। तब उसने दो-एक सिगरेट पीकर अपने विचारों और मन को दृढ़ किया और हत्या का कार्य पूरा कर डाला।

उक्त कथानक में टाल्सटाय का उद्देश्य यह बतलाने का है कि मनुष्य के विवेक और सद्ज्ञान को नष्ट करने के लिए तम्बाकू एक बहुत प्रबल साधन है। यह केवल मनुष्य के शारीरिक स्वास्थ्य को ही नष्ट नहीं करती, वरन् उसके मानसिक बल, नैतिकता तथा सच्चरित्रता पर भी बुरी तरह आघात करती है। यह केवल कथा-कहानियों की ही कल्पना नहीं है वरन् अनेक हत्या तथा अन्य दुष्कर्मों के मुकदमों में पुलिस ने यह पता लगाया है कि ऐसे अवसरों पर अपराधी प्रायः धूम्रपान करके उस कार्य के लिये तैयार होते हैं। इसका कारण यही है कि जो लोग अभी पक्के अपराधी नहीं बन गये हैं, उनकी विवेक बुद्धि अथवा अन्तरात्मा कोई भी पाप कर्म करते समय टोकती है कि यह कार्य अनुचित है, घृणित है, बुरा परिणाम उत्पन्न करने वाला है, इससे बचकर रहो। अन्तरात्मा की इस प्रकार की आवाज से नये अपराधी का साहस कमजोर पड़ जाता है और पाप-मार्ग में अग्रसर होने में हिचकिचाहट उत्पन्न होने लगती है। तब वह तम्बाकू, शराब आदि किसी नशे का प्रयोग करके, अपनी विवेकबुद्धि को कुण्ठित कर डालता है और उस कुकर्म को नशे के प्रभाव में पूरा कर लेता है। जैसे-जैसे उसकी अपराधी प्रवृत्ति बढ़ती जाती है और वह नशे की सहायता से अपनी अन्तरात्मा के आदेश की उपेक्षा करता रहता है, वैसे ही अन्तरात्मा की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवाज भी कमजोर पड़ती जाती है और अन्त में ऐसा समय आता है, जब पाप करना उसके लिये स्वाभाविक बन जाता है।

मनुष्य का सबसे बड़ा लक्षण 'धर्म' माना गया है। पर धर्म का अर्थ केवल हिन्दू, मुसलमान या ईसाई धर्म के अनुसार ईश्वर-प्रार्थना कर लेना और उनकी विभिन्न रस्मों को पूरा कर लेना ही नहीं है। धर्म का वास्तविक आशय है इस बात का ज्ञान रखना कि कौन-सा काम किया जाय और कौन-सा न किया जाय ? दूसरे शब्दों में कौन आचरण विहित है और कौन अविहित अथवा अनुचित है ? इसका निर्णय करने के लिये मनीषी व्यक्तियों ने सदाचार के कुछ नियम स्थिर कर दिये हैं, जिससे सामान्य व्यक्ति भी दुराचारों से बचकर ऐसे मार्गों पर चल सके, जो उसके लिये तथा समाज के लिये भी हितकारी सिद्ध हों।

धूम्रपान से विवेक की हानि

जब तक मनुष्य का विवेक जागृत रहता है, उसकी बुद्धि ठीक मार्ग पर चलती रहती है, तब तक इसके विपरीत मार्ग पर चलने का साहस नहीं करता। ऐसा अवसर आते ही उसका मन उसे चेतावनी देता है कि यह रास्ता गलत है। यदि मनुष्य का दिमाक ठीक हालत में होता है तो वह अपनी आन्तरिक शक्ति के इस आदेश की उपयुक्तता को समझ जाता है और अपनी भूल का सुधार कर लेता है। पर जब कुसंगत या निकृष्ट स्वार्थ के प्रभाव से मनुष्य का झुकाव कुमार्ग की तरफ जाता है, तब उसके लिये यह आवश्यक हो जाता है कि अपने अन्तरंग, विवेक तथा दिमाग की प्रेरणा को दबा दे। यदि वह ऐसा न करे तो वह बुराई-भलाई के मानसिक द्वन्द्व में फँस जाता है। दिमाग कहता है कि यह कार्य बुरा है, इसका परिणाम मंगलकारी नहीं हो सकता, पर निकृष्ट स्वार्थ और हीन भावनाएँ समझाते हैं कि इस उपाय से खूब लाभ होगा, मौज, मजा से दिन कटेंगे। ऐसी परिस्थिति में इस मानसिक द्वन्द्व से छुटकारा पाने के लिये मनुष्य प्रायः नशे का ही सहारा लेता है, जिससे उच्च विचार और सद्भावनाओं को दबा दिया जाता है और पाप मूलक विचारों को अग्रसर होने का मार्ग खोल दिया जाता है। इसीलिये महात्मा गाँधी कहा करते थे कि "सब प्रकार के नशे शैतान के बड़े हथियार हैं। इनके द्वारा वह अपने गुलामों को हर तरह से पस्त कर देता है और उनसे अपनी बुरी से बुरी आज्ञाओं का पालन करता है।"

चरित्रहीनता की वृद्धि

तम्बाकू का सेवन अपराधी-मनोवृत्ति का उत्पादक और सहायक ही नहीं है, उससे चरित्रहीनता की उत्पत्ति और वृद्धि भी होती है। यह एक कामोद्दीपक पदार्थ है, जिसके प्रभाव से मनुष्य की पाशविक वृत्तियाँ भड़कती हैं और यौन-दुष्कर्मों की प्रवृत्ति को बढ़ावा मिलता है। विवेकशक्ति का ह्रास हो जाने के कारण वह उचित-अनुचित का ध्यान भी नहीं रखता और कामुक तथा निर्लज्ज बनकर अपनी वासनाओं की पूर्ति का प्रयत्न करने लगता हैं। ऐसे व्यक्ति नीति-अनीति, सभ्यता-असभ्यता, मान-अपमान का ध्यान भुलाकर निन्दनीय आचरण अपनाने लग जाते हैं और संसार में निन्दा, घृणा, भर्त्सना के पात्र बनते हैं। ऐसे व्यक्ति विषय सुख को ही कुछ समझने लगते हैं और उनकी निगाह में नीति, सदाचार धर्म का कोई मूल्य नहीं रह जाता। वे ऐसे स्थानों पर भी कुदृष्टि डालने लगते हैं, जहाँ ऐसा दुष्कर्म, लोक और परलोक को नष्ट करने वाला माना जाता है।

यद्यपि ऐसे लोग विषय-सुख के लालच से पतन और अप्रतिष्ठा के मार्ग को अपनाते हैं, पर वह भी उनको अधिक समय तक प्राप्त नहीं होता। तम्बाकू के दूषित प्रभाव से काम-शक्ति और वीर्यवाहिनी नाड़ियों पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है और कुछ दिनों के पश्चात् वे इस दृष्टि से सर्वथा निर्बल और अयोग्य हो जाते हैं। एक प्रसिद्ध डाक्टर के कथनानुसार तम्बाकू से वीर्य पतला पड़कर शीघ्र पतन की व्याधि पैदा हो जाती है और अंत में नपुंसकता भोगनी पड़ती है। उक्त डाक्टर लिखते हैं कि "जब मेरे पास कोई व्यक्ति ऐसे यौन-रोगों का इलाज कराने आता है तो मैं उससे कह देता हूँ कि तुम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू और विषय-सुख—इन दोनों में से एक बात को पसन्द कर लो। यदि तम्बाकू का सेवन बन्द न करोगे तो तुम्हारा वीर्य-भण्डार दिन पर दिन खाली होता जायेगा और कुछ दिनों में तुम्हारा शरीर बिल्कुल खोखला, निस्तेज और अशक्त हो जायेगा।" इसका कारण यही है कि तम्बाकू सेवन से अस्वाभाविक रूप से कामोत्तेजना पैदा होती है, जिससे वीर्य बहुत अधिक मात्रा में नष्ट होने लगता है और ओज, शक्ति का नाश होकर मनुष्य निकम्मा हो जाता है। फिर चाहे उसकी वासना कितनी भी भड़कती रहे और वह अपने नीच प्रयत्नों में कहीं सफलता भी प्राप्त कर ले पर उसकी आकांक्षा अपूर्ण ही बनी रहती है। इस प्रकार ऐसे व्यक्ति दुहरा संताप सहन करते हैं। वासना को जागृत करना और फिर उसका अपूर्ण रहना ही तो दुःख का वास्तविक हेतु होता है।

एक तम्बाकू ही नहीं जितने भी नशे हैं वे सब मनुष्य को इसी प्रकार मानसिक पतन करके उसे कुमार्ग में ले जाते हैं और अन्त में उसे हर तरह से अपमानित, लांछितहीन, पतित, उपेक्षणीय बनाकर छोड़ते हैं। नशे के पंजे में फँसकर आज तक किसी ने लाभ उठाया हो या किसी प्रकार के श्रेय, अभ्युदय, कल्याण का भागी बना हो, इसका उदाहरण एक भी नहीं मिलता। संसार में उन्नति और लाभ का मूल विवेक तथा बुद्धि को ही माना गया है। जब तक मनुष्य भले-बुरे, उचित-अनुचित का भेद नहीं कर सकता, तब तक वह साधन और अवसर पाने पर भी किसी प्रकार का लाभ नहीं उठा सकता। सुख और सफलता का आधार बुद्धिमत्ता, समयानुकूल निर्णय और मुस्तैदी से कर्तव्य पालन पर ही निर्भर है। पर तम्बाकू तथा अन्य नशे इन सब गुणों का नाश करने वाले हैं। ये पुरुषार्थ, कार्यक्षमता, सहिष्णुता और संलग्नता जैसी सद्वृत्तियों को, जिनका होना प्रत्येक प्रकार की सफलता में आवश्यक माना जाता है क्षीण करते चले जाते हैं। ऐसी अवस्था में यदि नशों के चंगुल में फँसे हुये व्यक्ति अपने मनोरथों की पूर्ति में असफल रहें, लाभ के स्थान में हानि उठावें और दिन पर दिन, हीन और दुर्दशायुक्त हालत में पहुँचते जायें तो इसमें आश्चर्य की क्या बात है ?

मनोबल का नाशकर्ता

तम्बाकू का नशा मनोबल को बहुत अधिक क्षति पहुँचाता है। इसका सम्बन्ध अधिकांश में स्नायु-मण्डल और मस्तिष्क के ज्ञान-तन्तुओं से है। ये सब अत्यन्त सूक्ष्म और कोमल होते हैं और जब तक उनकी यह कोमलता-स्थिति- स्थापकता का गुण कायम रहता है, तभी तक वे अपना काम सुचारु रूप से कर सकते हैं। धूम्रपान के रूप में हम जो जहर का घूँट पीकर शरीर के भीतर ले जाते हैं, उस विषाक्त गर्मी से ये कोमल अंग तपने लगते हैं और कुछ ही समय में कड़े पड़कर अपनी संवेदनशीलता को खो बैठते हैं। जब स्नायुओं में इस प्रकार का दोष पैदा हो जाता है तो मेधा प्रज्ञा, बुद्धि आदि सभी शक्तियाँ कम होने लगती हैं क्योंकि मानव-मस्तिष्क इन सबका प्रयोग ज्ञान-तन्तुओं और स्नायुओं के माध्यम से ही करता है। इस प्रकार तम्बाकू सेवन करने वाला व्यक्ति दिन पर दिन अपने दिमाग को केन्द्र बनाता जाता है और अपने स्वाभाविक ज्ञान-भण्डार को दूषित करता रहता है। पर जैसा प्रत्यक्ष है मानव-जीवन की सफलता का प्रमुख आधार निर्मल ज्ञान ही है। ज्ञान के द्वारा ही हम पतनकारी पाप कर्मों से बचकर कल्याणकारी पुण्य कर्मों का आयोजन कर सकते हैं। ज्ञान की सहायता से ही हम भले-बुरे का विवेक करके उन्नति तथा प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो सकते हैं। संसार की उलझनों और हानिकारक परिस्थितियों में ज्ञान ही हमारा उचित मार्गदर्शन करता है। तम्बाकू का काला धुआँ हमारे इसी शुभ ज्ञान-पट को मलिन और निकम्मा बनाता है, इससे बढ़कर अहितकर बात और क्या हो सकती है ? संसार के समस्त विद्वानों और शास्त्रों ने ज्ञान को सबसे बड़ा श्रेष्ठ तत्व और कल्याण का मुख्य साधन बतलाया है। यदि हम उसे तम्बाकू के तुच्छ व्यसन के लिये नष्ट-भ्रष्ट कर दें तो हमारे समान मूर्ख और कौन हो सकता है ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू से तमोगुण की उत्पत्ति

तम्बाकू से चरित्र और सदाचार की हानि होने का एक मुख्य कारण यह है कि तम्बाकू तामसी पदार्थ है, जिसका सेवन शरीर और मन को अनिवार्य रूप से तामसिक भावों से भर देता है। तमोगुण के दोष प्रत्यक्ष और सर्वविदित हैं तथा समस्त शास्त्रों ने एक स्वर से उसे निन्दनीय ठहराया है। तमोगुण मनुष्य को देवत्व से असुरत्व की ओर ले जाने वाला साधन है और उसके प्रभाव से मनुष्य के सद्गुण क्षीण होकर उसमें दुर्गुणों अथवा दुष्प्रवृत्तियों की बढ़ोतरी होने लगती है। भगवान कृष्ण ने 'गीता' में कहा है—

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्य निद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत।।
अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन।।
उर्द्ध गच्छन्ति सत्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्य गुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः।।

अर्थात्—"सब प्राणियों को हानिकारक मोह के गर्त में डालने वाला यह तमोगुण अज्ञान से उत्पन्न होता है। उसके कारण यह जीवात्मा प्रमाद, आलस्य और ऊँघते रहना जैसे दुर्गणों में लिप्त होने लगता है। तमोगुण की वृद्धि होने से इन्द्रियाँ और मन दूषित होने लगते हैं, कर्तव्य पालन में अरुचि बढ़ने लगती है, व्यर्थ के हानिकारक कार्यों में प्रवृत्ति होती है और अनुचित मोह उत्पन्न हो जाता है। सत्त्वगुण की वृद्धि से मनुष्य उच्च गति (देवत्त्व) को प्राप्त करता है, रजोगुण के फल से सामान्य स्थिति में बना रहता है और तमोगुण की अधिकता से तरह-तरह के दुर्गुणों में ग्रस्त होकर अधोगति को प्राप्त होकर कीड़े-मकोड़े और पशुओं की श्रेणी में पहुँचता है।"

तमोगुण का मुख्य लक्षण आलस, प्रमाद और निकम्मापन बतलाया गया है। तम्बाकू आदि नशों से आरम्भ में तो कुछ उत्तेजना उत्पन्न होती है, जिससे मनुष्य थोड़ी देर के लिये उल्टे, सीधे काम अधिक मात्रा में करने लगता है, पर थोड़ी देर में इस प्रकार निरर्थक श्रम के कारण अवसाद का भाव उत्पन्न हो जाता है और आलस्य में पड़कर ऊँघने लगता है या निकम्मा बनकर समय को बर्बाद करने लगता है। जिन लोगों को सिगरेट, बीड़ी आदि की लत होती है उनसे लगातार किसी एक काम में लगे रहना कठिन होता है और वह काम को छोड़कर बीच-बीच में धूम्रपान अवश्य करते रहते हैं, जिसमें बहुत-सा समय नष्ट हो जाता है। जब ऐसे कई धूम्रपान वाले मिल जाते हैं तो वे उसी अवसर पर तरह-तरह की गपशप भी आरम्भ कर देते हैं और अपने कर्तव्य पालन की तरफ से लापरवाही बरतने लगते हैं।

संयम का अभाव

इन नशों को लगातार अधिक सयम तक सेवन करते रहने से मनुष्य एक प्रकार से उनका गुलाम बन जाता है। इससे उसके अन्तःकरण और मन की शक्तियों की अवनति हो जाती है, इन्द्रियों की स्वाभाविक कार्य-क्षमता में कमी पड़ जाती है, तरह-तरह के दुर्व्यसन और हानिकारक शौक पैदा होने लग जाते हैं और इन सबका परिणाम यह निकलता है कि उसकी कार्य-शक्ति तथा योग्यता में निरन्तर कमी होने लगती है। कोई उल्लेखनीय कार्य करके यश और उन्नति की ओर प्रगति करने की सम्भावना घट जाती है और जहाँ के तहाँ पड़े रहकर दिन गुजारने की स्थिति ही उत्पन्न हो जाती है। यह बात दूसरी है कि वर्तमान समय में इसके विपरीत दृश्य भी दिखालाई पड़ रहे हैं और बड़े-बड़े सरकारी अफसर तम्बाकू और शराब जैसे व्यसनों में संलग्न रहकर भी ऊँचे ओहदों पर पहुँचते जाते हैं तथा धन और मान प्राप्त करते रहते हैं। पर यह दोष वर्तमान पाप की प्रधानता वाले युग का है, उसे प्रकृति का स्वाभाविक नियम नहीं माना जा सकता है। इसका प्रत्यक्ष प्रमाण यह है कि इस समय प्रकट रूप से बहुत कुछ उन्नति और वैज्ञानिक आविष्कारों की भरमार दिखाई पड़ने पर भी सुख और शान्ति का लोप होता जाता है और चारों ओर हाय-हाय मची हुई है। सच बात वह है कि इस प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के नशा आदि में ग्रस्त व्यक्तियों को इस जमाने में ही इस प्रकार के उच्च पद और मान मिल सकना सम्भव है। प्राचीन भारतीय संस्कृति के युग में ऐसे दुर्व्यसनी व्यक्ति समाज में तिरस्कार के पात्र माने जाते थे और भविष्य में भी जब मानव-जाति इस तामसी-सभ्यता से अपना पीछा छुड़ा लेगी तो इस प्रकार के व्यक्ति हीन श्रेणी में ही पहुँच जायेंगे।

परलोक भी नष्ट होता है

इन नशा के पदार्थों का उपयोग लौकिक दृष्टि से ही हानिकारक और दुर्दशा करने वाला नहीं वरन् गीता के अनुसार मनुष्य का परलोक भी इनके कारण नष्ट हो जाता है। शास्त्रों में सब प्रकार की वास्तविक उन्नति और कल्याण का मूल सात्विक प्रवृत्तियों को ही बतलाया गया है। उन्हीं का अनुगमन करने से मनुष्य यहाँ श्रेष्ठ बनता है और आगामी जीवन भी उच्च गति को प्राप्त करने में समर्थ होता है। सत्कर्मों द्वारा जो स्वर्ग-सुख प्राप्त होने की बात संसार के सभी धर्म-ग्रन्थों में कही गई है, उसका आशय ही है कि मनुष्य की वास्तविक उन्नति सद्गुणों, सदाचार और पुण्य प्रवृत्तियों का पालन करने से ही सम्भव है। इसके विपरीत तामसी प्रवृत्तियों पर आचरण करने से, चाहे क्षणिक सफलता अथवा वैभव भले ही मिल जाय, अन्त में उसका पतन अवश्यम्भावी है।

दुर्व्यसनी मनुष्यों का पतन और दुर्गति अनेक बार तो इस संसार में ही प्रत्यक्ष दिखलाई दे जाते हैं, जब करोड़पति लोग मुहताज हो जाते हैं और बड़े-बड़े शासनकर्ता जेलों के सींखचे में बन्द कर दिये जाते हैं। फिर परलोक में तो, जहाँ दैवी-न्याय का नियम करता रहता है, ऐसे लोगों के लिये किसी भी प्रकार की भलाई या कल्याण की आशा करना ही व्यर्थ है। नशों के प्रभाव से उनकी मनोभूमि नीची हो जाती है, उसका झुकाव सद्गुणों के बजाय दुर्गुणों की ओर होने लगता है। प्रायः नशेबाज लोग अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिये दुष्कर्मों का सहारा लेते हैं और अनेक प्रकार के गुप्त तथा प्रकट पाप करने लग जाते हैं। ये सब बातें आत्मा का पतन करने वाली है, जिसका परिणाम उसे जन्म-जन्मान्तर तक भोगना पड़ता है। दुर्व्यसनी व्यक्ति चाहे वे अमीर हों या गरीब यहाँ भी पतित अवस्था में रहते हैं और भावी जीवन में भी उन्हें नारकीय परिस्थितियाँ भी प्राप्त होनी सम्भव होती हैं। नशा के दुर्व्यसन की बुराई समझकर वेदों में भी उसको निन्दनीय और त्याज्य बतलाया है। ऋग्वेद मे एक स्थान पर कहा है—

सप्त मर्यादाः कवयस्ततक्षुस्तासामेकामिदभ्वं हुरोऽगात्।

(ऋ. १-५-६)

"सातों मर्यादा—अर्थात् चोरी, व्यभिचार, हत्या गर्भपात, असत्य निन्दनीय कर्म और नशा में एक का भी उल्लंघन करने वाला पापी होता है।"

एक अन्य स्थान पर नशा करने वालों की उपमा देते हुये लिखा है—

ह्वत्सु पीतासो युद्धयन्ते दुर्मदासो न सुरायाम।

(ऋ. ८-२-१२)

"मादक पदार्थों का सेवन करने वाले निर्लज्ज होकर बकते,-झकते, लड़ते-झगड़ते और अशिष्ट आचरण करते हैं।"

इसका भी आशय यही है कि वैदिक ऋषि मादक द्रव्यों का सेवन करने को पाप का एक मुख्य कारण मानते हैं, क्योंकि ऐसे पदार्थों से बुद्धि भ्रष्ट होती है और बुद्धि के दूषित होने पर पतन-मार्ग पर चलना स्वाभाविक ही है। शराब, भंग, तम्बाकू आदि किसी भी नशे में जो व्यक्ति पूर्ण रूप से लिप्त हो चुका है फिर उसका कल्याण हो सकना असम्भव ही है। उसकी गिनती किसी सभ्य समाज में नहीं हो सकती और न वह सामाजिक आदर-सम्मान का अधिकारी हो सकता है। ऐसा व्यक्ति एक प्रकार से अपनी इज्जत को बेचकर खा जाता है, क्योंकि जब उसको नशे की तलब लगती है तो उसकी पूर्ति के लिये किसी भी तरह का हीन, जघन्य कार्य करने वाला कहना किसी दृष्टि से अनुचित नहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अन्य दुर्व्यसनों की उत्पत्ति

एक दुर्व्यसन अनेक प्रकार की बुरी बातों के पैदा होने में सहायक होता है। चोरी, जुआ, मद्यपान, व्यभिचार आदि सभी कर्म बुरे हैं। यदि इनमें से किसी में कम बुराई समझकर उसे ग्रहण कर लिया जाय तो भी अन्य दुर्गुणों के धीरे-धीरे उसमें सम्मिलित होने की सम्भावना रहती है। जैसे अनेक हिन्दू धर्मावलम्बी मद्य-माँस को बुरा समझते हैं क्योंकि वे शरीर के भीतर जाकर उसका अंश बन जाते हैं। पर वेश्या अथवा जुआ उनको बाह्य विषय जान पड़ते हैं, इससे वे उसमें अधिक दोष न समझकर लिप्त हो जाते हैं। पर इन व्यसनों का कुप्रभाव मन पर पड़ता है, उसकी दृढ़ता जाती रहती है। जब मन निर्बल हो गया और विवेक-शक्ति धुँधली पड़ गई तो संगति और संसर्ग के प्रभाव से अन्य दुर्गुण भी धीरे-धीरे भीतर घुस जाते हैं। यही कारण है कि जो लोग पहले मद्य-माँस से घृणा करने वाले होते हैं, वे वेश्यागमन के प्रभाव से इन कुटेवों में भी फँस जाते हैं। इसी प्रकार जुआ खेलते हुये अन्य जुआरियों की सोहवत में बैठकर बहुत-सी खराब बातें सीख लेते हैं। जब कभी जुआ खेलने वालों को अनायास बहुत-सा धन मिल जाता है तो स्वयं ही या मित्रों के आग्रह से शराब, सिगरेट, सिनेमा या वेश्या आदि जैसे कुकर्मों में सहज ही ग्रस्त हो जाते हैं।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि ये सब दुर्व्यसन बाहर-भीतर सब तरह से हेय और कलुषित होते हैं और आरम्भ में उनमें किसी तरह के सुख या आनन्द के बजाय कष्ट और कठिनाई का ही सामना करना पड़ता है। उदाहरण के लिये धूम्रपान को ही ले लीजिए। एक सिगरेट पीने वाले के स्वानुभव के आधार पर "शुरू में कड़वे टसके लगते हैं, मुँह में दुर्गन्ध आती है, होंठ और जीभ में जलन तथा दाँतों में दर्द होने लगता है तथा अनेक बार मुँह में फफोले भी पड़ जाते हैं। धूम्रपान सहन नहीं हुआ तो कय (वमन) हो जाने की भी सम्भावना रहती है। मुँह का स्वाद नष्ट, होंठ काले, दाँत पीले और जीभ कड़वी हो जाती है।" इस प्रकार प्रकृति शारीरिक और मानसिक शक्तियों के माध्यम से इस हानिकारक लत को न अपनाने की हर तरह से चेतावनी देती है, प्रतिरोध करती है किन्तु कुसंग का—खोटे मित्रों का दिन-रात का साथ और तरह-तरह की बातें बनाकर बहकाना, क्रमशः अपना असर डालता ही है और अन्त में प्रकृति की आवाज अत्यन्त क्षीण होकर यह दुर्व्यसन आदत में शामिल हो जाती है। तब ऐसी स्थिति उत्पन्न हो जाती है कि इसकी पूर्ति हुये बिना चैन नहीं और चाहे जैसा भला-बुरा काम क्यों न करना पड़े, कैसी भी बदनामी क्यों न उठानी पड़े उसके चंगुल से सहज में छुटकारा नहीं हो सकता।

धूम्रपान—एक दूषित मनोवृत्ति

सच पूछा जाय तो आजकल सिगरेट का प्रचार अत्यधिक बढ़ जाने का कारण यह शौकीनी और दिखावा ही है। आजकल के सूट-बूटधारी जैंटिल-मैंनों का एक चिन्ह मुँह में सिगरेट दबाकर धुआँ उड़ाते रहना भी है। जिस प्रकार अनेक लोग दूसरों को चश्मा लगाये देखकर उसे एक प्रकार का बढ़िया फैशन मान लेते हैं और अपनी दृष्टि में किसी प्रकार का खास दोष न होने पर भी शौक के मारे चश्मा धारण कर लेते हैं, वही बात सिगरेट के व्यसन में भी काम करती है। नये फैशन के युवकों तथा बाबुओं को प्रायः सिगरेट पीते देखकर और 'ऊँची' सोसाइटी के व्यक्तियों में भी इसका प्रचलन होने से सामान्य मनुष्य की यह धारणा हो जाती है कि यह भी कोई बड़ा शौक और बड़प्पन का लक्षण है। बस, वह भी दूसरों की नकल करने लग जाता है और हर तरह की असुविधाओं को सहकर भी इस सत्यानाशी कुटेब को गले बाँध लेता है।

इस प्रकार किसी दुर्व्यसन में फँस जाना निश्चित रूप से पतनकारी ही सिद्ध होता है। चाहे व्यक्ति हो और चाहे राष्ट्र, जो कोई भी इस निषिद्ध मार्ग पर चलेगा अवश्य हानि उठायेगा और ऊँचे स्थान से गिरकर अवनति, हीनता के गर्त में पहुँच जायेगा। इतिहास पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दृष्टि डालने से विदित होता है कि प्राचीनकाल में मिश्र, यूनान, रोम जैसे प्रतापशाली राष्ट्र नशे के पंजे में फँसकर नष्ट-भ्रष्ट हो चुके हैं। दूर जाने से क्या प्रयोजन भारतवर्ष में ही भगवान कृष्ण का यादव वंश, जो उस समय अत्यन्त प्रबल और प्रभावशाली बन गया था नशे के कारण जड़मूल से नष्ट हो गया। पिछले दिनों भारत के मुगल-साम्राज्य के भंग होने का कारण भी ऐश, आराम और नशाखोरी में अधिक फँस जाना ही हुआ था। अफीम के नशे के कारण चीन की दुर्गति को हम अपनी आँखों से देख चुके हैं। संसार का सबसे बड़ा देश होने पर भी वह छोटे-छोटे राज्यों से परास्त और अपमानित होता रहता था। अब, जब उसने इस दुर्व्यसन से छुटकारा पा लिया तो सब तरह प्रबल और पराक्रमी बनकर संसार-भर को चुनौती देने लगा।

सामाजिक और राष्ट्रीय क्षति

इस प्रकार हमको स्पष्ट रूप से विदित हो जाता है कि जिस व्यक्ति या राष्ट्र को किसी प्रकार के नशे का व्यसन लग जायेगा, उसका अधःपतन होना निश्चित है। कारण यही है कि नशा स्वास्थ्य और धन दोनों को बर्बाद करता है। एक तरफ तो नशे के असर से हमारा रक्त अशुद्ध होकर शारीरिक निर्बलता तथा तरह-तरह की अन्य खराबियाँ पैदा होती हैं और दूसरी तरफ हम जो पैसा स्वास्थ्यवर्धक पदार्थों में खर्च करते उसे नशे में फूँकने लगते हैं। यह दुहरी किसी भी व्यक्ति अथवा समाज की कमर तोड़ देने के लिए काफी है। शरीर का प्रभाव मन पर भी पड़ता है और फिर उससे बुद्धि भी विकृत होती है। मन और बुद्धि के दूषित होने पर चरित्र तथा नैतिकता का ध्यान कब तक रह सकता है ? नतीजा यही होता है कि ऐसा व्यक्ति परिश्रम तथा ईमानदारी से जीवन-निर्वाह करने में असमर्थ होकर हर तरह की बेईमानी, अनैतिकता और निन्दनीय आचरणों पर उतर आता है। विशेषतया नशे की तलब तो ऐसी भयंकर होती है कि उसमें नीति-अनीति किसी बात का ध्यान नहीं रहता, बस यही लौ लगी रहती है कि किसी प्रकार उसकी पूर्ति हो।

अन्य नशों से बढ़कर, बीड़ी सिगरेट के नशे में एक खराबी यह है कि जहाँ दूसरे नशे दिन-रात किसी विशेष अवसर पर एक-दो बार ही किये जाते हैं, बीड़ी, सिगरेट चौबीस घण्टा मुँह से लगी रहती है। ऐसे लोगों की संख्या कम नहीं है, जो प्रायः शौच जाने से पूर्व बीड़ी, सिगरेट पीना आरम्भ करते हैं और सोने से पहले तक हर घण्टे या आधे घण्टे में एक बार धूम्रपान कर ही लेते हैं। अनेक व्यक्ति रात में जब-जब जगते हैं, तब भी एक बार बीड़ी पी लेते हैं। ऐसे ही लोगों के बिस्तरों में कभी-कभी आग लग जाती है, क्योंकि व जलती दियासलाई या बीड़ी के बचे टुकड़े को लापरवाही से आस-पास ही डाल देते हैं। इस प्रकार धूम्रपान की आदत बढ़ती रहती है और इसका आर्थिक अवस्था पर बहुत बुरा प्रभाव पड़ता है। जिस पैसे को अनेक प्रकार के सत्कर्मों, परोपकार के कार्यों, अपनी उन्नति करने में लगाया जा सकता था, उससे उलटा अपने अधःपतन का मार्ग तैयार किया जाता है। ऐसे लोगों की दुर्गति होना अनिवार्य ही है। पर खेद इस बात का है कि वे अपने साथ दूसरों को भी हानि पहुँचाने का कारण बनते हैं और एक दृष्टि से अपने आस-पास के अनेक लोगों के सामने एक बुरा आदर्श उपस्थिति करके, समस्त समाज को नीचे गिराने वाले सिद्ध होते हैं।

नैतिकता का पतन

निस्सन्देह तम्बाकू और अन्य सभी नशों का सेवन नैतिकता और सदाचार का परमशत्रु हैं। ऐसे व्यक्तियों में से सद्गुणों का लोप होता जाता है और उनका स्थान क्रमशः तरह-तरह की हीन भावनायें तथा दोष दुर्गुण ग्रहण कर लेते हैं। इस पर अधिक विस्तार से विचार करते हुए एक विचारशील लेखक ने लिखा है—

"नशा का शिकार होने के बाद जो दुर्गुण मनुष्य में आते हैं, उनमें नैतिकता का नाश सबसे अधिक और खेदजनक है। जब मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नशे में पड़ जाता है तो उसे पाप-पुण्य का कोई लिहाज नहीं रहता। अपनी राक्षसी तृष्णा के मिटाने के लिये वह झूठ बोलता है, चोरी करता है, दूसरों को धोखा देता है और न जाने किस-किस प्रकार के कुकर्म करने लग जाता है। जब मनुष्य की बुद्धि भ्रष्ट हो गई तो उसके लिए कुछ भी करनी कुकर्म नहीं रह जाती और वही दशा किसी नशा के चक्कर में पड़ने वालों की होती हैं। उनके सामने नैतिकता, धर्म, पुण्य नाम की कोई चीज नहीं रह जाती। उनका पतन जो शुरू होता है, किस हद तक नीचे जाता है, इसका कोई हिसाब नहीं रहता।"

बौद्ध युग में नशा का उन्मूलन

नशा के पदार्थों का प्रयोग करने से मनुष्य का किस हद तक पतन होता है, इसका भयंकर चित्र भगवान बुद्ध के जीवन-काल की एक घटना से मिलता है। बुद्धदेव मानव-जाति के सबसे बड़े हितैषी थे, जिन्होंने अपना सर्वस्व संसार निवासी मनुष्यों के दोष-दुर्गुणों को दूर करके मुक्ति-मार्ग दर्शन कराने के लिये अर्पण कर दिया था। वे ऐसी समस्त बातों का निषेध करते थे, जिनसे मनुष्य उच्च मार्ग से पतित होकर निम्न स्तर का जीवन बिताने लगता है। मादक पदार्थों के सम्बन्ध में भी उनके विचार बहुत अग्रगामी थे और वे प्रायः अपने उपदेशों में कहा करते थे कि ' हे मनुष्यो ! तुम सिंह के सामने जाते कभी भयभीत न होना क्योंकि वह तुम्हारे पराक्रम की परीक्षा है। तुम तलवार के नीचे सर झुकाने से भयभीत न होना—वह बलिदान की कसौटी है। तुम पर्वत शिखर से पाताल में कूदने से भयभीत न होना—वह तप की साधना है। तुम दहकती ज्वालाओं से कभी विचलित न होना—वह तुम्हारे खरा स्वर्ण होने की परीक्षा है। पर सुरा देवी से—मादक पदार्थों से सदैव भयभीत होना, क्योंकि वह पाप और अनाचार की जननी है।"

एक बार भगवान बुद्ध को विदित हुआ कि सर्वमित्र नाम का एक राजा मद्य-पान में विशेष आसक्त है और उसके साथ उसके मन्त्री, राज्याधिकारी तथा प्रजा-जन भी इस पाप कर्म में लिप्त होकर अपना पतन कर रहे हैं। बुद्धजी को यह जानकर बहुत खेद हुआ और उन्होंने निश्चय किया कि यदि इस राजा का मद्यपान छुड़ा दिया जाय तो हजारों प्राणियों का एक महापातक से उद्धार हो जाय। इस प्रकार का विचार मन में आने से उन्होंने बल्कल और मृगछाला पहिनकर ब्राह्मण मुनि का रूप धारण किया और एक सुराही में मद्य भरकर कन्धे पर लटका ली। इस भेष में जिस समय वे राजा सर्वमित्र के दरबार में पहुँचे, उस समय राजा अपने पार्षदों सहित मद्य-सेवन में लगा था। बुद्धदेव ने उन सब पर करुणा की एक दृष्टि डाली और गम्भीर स्वर में कहने लगे—'देखो, पुष्पों से आच्छादित इस सुराही में सुगन्धित, मधुर सुरा भरी है। तुम में से कौन इसे खरीदने को राजी है ? यह सुराही कण्ठहार की तरह सुसज्जित है। तुम में से कौन इसे मूल्य देकर प्राप्त करने का अभिलाषी है ?"

राजा ने सुराही को देखा और बुद्ध देव के वचनों का ठीक आशय न समझ सकने पर कहने लगा—"आप प्रातःकालीन सूर्य की भाँति तेजस्वी दिखाई पड़ते हैं। पूर्ण चन्द्रमा की-सी आपकी शोभा है और आपका दिव्य वेष मुनियों का-सा है। आपको हम किस नाम से सम्बोधित करें ?"

बुद्ध देव ने उत्तर दिया—"थोड़ी देर बाद तुम जान जाओगे कि मैं कौन हूँ, परन्तु पहले इस सुराही को खरीदने की बात करो। मैं समझता हूँ कि तुम परलोक की व्याधियों और कष्टों से डरते होंगे।"

राजा ने हाथ जोड़कर कहा—"आपकी बातें अद्भुत हैं। मैने आज से पहले कभी ऐसा कोई व्यक्ति नहीं देखा जो अपनी बेचने की वस्तु के दोषों को प्रकट करता हो। इसलिये हे देव ! आप स्पष्ट बतलाइये कि सुराही में क्या पदार्थ है और आप उसे बेचने का नाट्य क्यों कर रहे हैं ?"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बुद्धदेव उस दरबार में उपस्थित समस्त लोगों को सुनाकर गम्भीर वाणी में कहने लगे—"सुनो राजन् इसमें न जल है और न इसमें मेघों की अमृत बूँदें हैं, न यह किसी पवित्र स्रोत की पवित्र की पवित्र धारा है, न इसमें सुगन्धित पुष्पों का सार मधु है, न पारदर्शी घृत है, न दूध है, जो शरद चन्द्र की किरणों की मधुरिमा से युक्त होता है। नहीं, नहीं इस सुराही में पिशाचिनी सुरा है। इसके गुण सुनो जो इसका पान करेगा जो अपनी सुध-बुध नहीं रहेगी और वह नशे मतवाला होकर भोजन के बदले गन्दगी भी खा सकेगा, ऐसी यह सुरा है।

"इस पदार्थ में समस्त ज्ञान और विवेक नष्ट कर देने की शक्ति है, जिससे मनुष्य अपनी विचारधारा पर काबू न रखकर एक वन-पशु की तरह व्यवहार कर सकता है। तुम इसे पीकर खूब नाच सकते हो, गा भी सकते हो। यह अवश्य तुम्हारे खरीदने योग्य है। यद्यपि इसमें एक भी गुण नहीं है।"

"इसके पीने से तुम्हारी लाज-भावना जाती रहेगी। तुम नंगे भी रह सकते हो। लोगों की भीड़ तुम पर थूकेगी, तब भी तुम्हें कुछ बुरा प्रतीत न होगा। तुम पर गोबर, कंकड़ पत्थर तथा कीचड़ भी उछाले तब भी तुम जान न सकोगे, ऐसी मद्य को बेचने मैं तुम्हारे पास आया हूँ।"

"जो स्त्री इसका सेवन करे वह मदान्ध होकर अपने माता-पिता को रस्सियों से बाँधकर और कुबेर सदृश्य पति को भी ठुकराकर, पतन के गड्ढे में प्रसन्नता से जा गिरेगी ऐसी यह मदिरा है।"

"इसने अनेकों सुप्रसन्न परिवारों को नष्ट किया है, सुन्दर, स्वर्ण सदृश्य शरीर को चिन्ताओं पर चढ़ाकर भस्म किया है। राजमहलों में रहने वाले सम्राटों को धूल में मिलाकर श्वान समान पद-दलित किया है। फिर भी इसकी तृष्णा नहीं बुझती ऐसी प्रलयकारी यह मद्य है।"

"इसे जिह्वा पर रखते ही मन मलीन हो जाता है, ग्रीवा ऐंठ जाती है, खूब हँसो, खूब नाचो, कुछ नहीं रहता। इससे असत्य भाषण का साहस आ जाता है। वह सत्य को असत्य और असत्य को सत्य समझने लगता है। इस मदान्ध करने वाली वस्तु के स्पर्श करने मात्र से पाप लगता है। यह समस्त अपराधों की जननी है, यह उज्जवल मन का भयानक अन्धकार है। इसकी तीक्ष्ण-ज्वाला शीतल हृदय पर सदैव धदक-धदक कर दहकती है। लोग इसके प्रभाव में आकर माता, पिता, भगिनी, भ्राता और बच्चों का नृशंसतापूर्वक वध कर सकते हैं—ऐसी है यह मदिरा। हे प्रतापी राजा, यह पेय तुम्हारे कण्ठ से नीचे उतरने योग्य है, इसे शीघ्र से पान करो। इसका माणिक्य की भाँति लाल रंग है। सुन्दरियों की उंगलियों का स्पर्श पाते ही इसकी मादकता और भी तीव्र हो उठती है। इसे पीकर मनुष्य पशु से भी अधिक स्वच्छन्द बन जाता है, यही मद्य है।"

भगवान बुद्ध ने इस प्रकार निर्भयतापूर्वक मद्य का बखान करके चारों तरफ दृष्टिपात किया। समस्त दरबार स्तब्ध था, चारों ओर सन्नाटा छाया था। एकाएक गर्जन का शब्द सुनाई पड़ा, राजा उठे और उन्होंने अपने मद्य पात्र को बड़े वेग से दीवार से टकराकर चूर-चूर कर डाला और फिर कहने लगे—

"हाय पिशाचिनी, मायावी मद्य ! तू जा, तू जा ! छोड़ मुझे।" यह कहते वे भगवान बुद्ध के चरणों में गिर पड़े।

X X X

बौद्ध-युग की यह घटना मद्य और सब प्रकार के नशों की बुराइयों का विशद् रूप में चित्रण करती है। सभी नशे विवेक-बुद्धि को कुण्ठित तथा नष्ट करते हैं इसलिये उनके प्रभाव से मानसिक तथा नैतिक पतन अवश्यम्भावी है। इस दृष्टि से किसी नशे को छोटा या बड़ा नहीं समझना चाहिये। मनुष्य जिस किसी नशे में पूर्णतया निमग्न हो जायेगा, उसीसे उसकी दुर्गति हो जायेगी। वैसे तो इंगलैण्ड और योरोप के अधिकांश निवासी नियमित रूप से मद्य का सेवन करते हैं, पर एक नियत सीमा में रहने और अन्य आहार-विहार संतुलित रखने के कारण उनको उससे कोई अधिक हानि दिखलाई नहीं पड़ती। वरन् उन देशों के निवासी, विद्या, विज्ञान, उद्योग-धन्धों में संसार भर में अग्रगामी माने जाते हैं। पर इससे नशा के दोषों में किसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकार का अन्तर नहीं पड़ सकता और न उसे किसी दृष्टि से मनुष्य के लिये उपकारी माना जा सकता है। योरोप के देशों में जो व्यक्ति इन नशों से परहेज करते हैं, वे अधिक स्वस्थ और समुन्नत रहते हैं और जो नशों के पंजे में पूर्णतया फँस जाते हैं, वे बर्बाद और चौपट हो जाते हैं। फिर गर्म वातावरण होने से हमारे देश की स्थिति में उनसे कुछ अन्तर भी है। वहाँ नशे के पदार्थों का असर देर से और कम मात्रा में जान पड़ता है और हमारे यहाँ वे तुरन्त ही अपना दुष्परिणाम दिखाने लगते हैं।

मानसिक शक्तियों का ह्रास

तम्बाकू से होने वाला शारीरिक हानियों और भयंकर रोगों का वर्णन तो आजकल सभी डाक्टर कर रहे हैं, पर कितने ही डाक्टरों ने तम्बाकू से उत्पन्न होने वाली मानसिक दुर्बलता तथा अन्य दोषों का भी निरीक्षण किया और यह सम्मति दी है कि जो व्यक्ति अपने मतिस्ष्क और मनोवृत्तियों को उत्तम दशा में रखना चाहता है उसे, इस दुर्व्यसन से सर्वथा बचकर रहना चाहिये।

डा. इस्टवेन्स ने लिखा है कि "तम्बाकू सेवन से धारणा, ध्यान और स्मरण शक्ति दुर्बल हो जाती है।" डा. केलन का कथन है कि मेरे अनुभव में कई ऐसे उदाहरण हैं कि तम्बाकू का प्रयोग करने के फलस्वरूप वृद्धावस्था से पूर्व ही मनुष्य स्मरण शक्ति और ज्ञान से शून्य हो गये। तम्बाकू के दुर्व्यसन के साथ संसार में पागलों की संख्या भी बढ़ रही है।" प्रो. हिचकान की सम्मति है कि शराब या अन्य मादक द्रव्यों की अपेक्षा तम्बाकू से बुद्धि की अधिक हानि होती है। इसके समान इन्द्रिय दौर्बल्य बुद्धि तथा स्मरण शक्ति की हानि, चित्त की चंचलता और मस्तिष्क के रोग पैदा करने वाली दूसरी वस्तु नहीं है। मादक पदार्थ बृहस्पति के समान असाधारण बुद्धिमान मनुष्य की बुद्धि को भी भ्रष्ट करके उसे अपना दास बनाकर नचाते हैं।"

तम्बाकू से बुद्धि को हानि पहुँचाना एक ऐसा सुनिश्चत तथ्य है कि उस दृष्टि से प्रत्येक चिकित्सा विज्ञान इसका निषेध करता है। डा. फोर्वसविन्सला पागलपन सम्बन्धी रोगों के विशेषज्ञ माने गये हैं। उन्होंने हजारों पागलों का निरीक्षण और इलाज के बाद जो निष्कर्ष निकाला था उसमें उन्होंने बतलाया था कि "यदि मुझ से पूछा जाय तो मैं पागलपन के कारणों को इस क्रम से रखूँगा—मद्य, तम्बाकू और परम्परागत। अमरीका के वनस्पति-विज्ञान ज्ञाता लूथरवैंक जड़ी-बूटियों के सम्बन्ध में संसार भर में प्रमाणिक माने जाते थे। उन्होंने एक लेख में लिखा है कि "मैं यह सिद्ध कर सकता हूँ कि जिन कार्यों में एकाग्रता की आवश्यकता होती है, उनमें नशा के पदार्थों का व्यवहार अवश्य ही हानिकारक सिद्ध होता है।" गवर्नर सैलिवान ने अपना व्यक्तिगत अनुभव बतलाते हुए कहा है कि तमाखू मुझे कभी जड़ और सुस्त बनाये बिना न रही। इससे मेरी विषयों के पृथक्करण और सुविचारों के प्रकट करने की शक्ति लुप्त हो जाती थी।

इन सब विद्वानों के कथन का सार यही है कि तमाखू हर तरह से बुद्धि को कुण्ठित करती और उसे मन्द बनाती है। मन्द बुद्धि होना कितना बड़ा अभिशाप है, यह साधारण मनुष्य भी सहज में अनुभव कर सकता है। ऐसे बुद्धिनाशक पदार्थ से बचे रहना प्रत्येक समझदार का कर्तव्य है।

धूम्रपान और आध्यात्मिकता

हमारे देश में इस समय एक विचित्र बात यह देखने में आ रही है कि धूम्रपान जैसे नशे का सम्बन्ध आध्यात्मिकता से जोड़ दिया जाता है। भारत के ५६ लाख साधू नामधारियों में से पाँच या दस प्रतिशत ही कदाचित् ऐसे निकलेंगे जो किसी न किसी रूप में धूम्रपान न करते हों। अन्यथा जहाँ देखो वहाँ ही इन 'महात्माओं' को तम्बाकू, गाँजा और सुलफा की दम लगाते देखा जा सकता है। ये स्वयं तो इस नशे में लिप्त रहते ही हैं अन्य दस-बीस गृहस्थों को भी इसकी 'शिक्षा' देते रहते हैं। उनका उद्देश्य यही होता है कि जब उनका धूम्रपान-मण्डली पर्याप्त बड़ी हो जायेगी तभी उनको उनमें से किसी न किसी के द्वारा नशे का साधन प्राप्त होता रहेगा। इन साधू नामधारियों ने सर्व-साधारण में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह भी धारण फैला रखी है कि यह तो 'शिवजी का प्रसाद' है। शिवजी स्वयं भाँग, धतूरा, गाँजा का सेवन करते हैं और जो कोई उनके प्रसाद को ग्रहण करता है, उससे परम प्रसन्न रहते हैं।

जब हम विचार करते हैं कि हिन्दू धर्म जैसे उच्च दार्शनिक तथा ज्ञान, कर्म, भक्ति के आधार पर सुप्रतिष्ठित धर्म को इन ढोंगी तथा हराम का माल खाने वालों ने किस दर्जे पर पहुँचा दिया है तो हमारा हृदय ग्लानि और विरक्तता से भर जाता है। कहाँ तो साधुओं का कर्तव्य लोगों की नीति, चरित्र, सदाचार और त्याग का उपदेश देना और अपना आदर्श उपस्थित करके अविश्वासी लोगों को भी धर्म-मार्ग पर चलाना बताया गया था और कहाँ ये नीच तरह-तरह की धूर्तता करके जनता की परिश्रम की कमाई के आधार पर मौज करते हैं और बदले में उसे दोष और दुर्गुणों की ओर प्रेरित करते हैं। कोई धर्म-ग्रन्थ या धार्मिक नेता नशे जैसे हानिकारक व्यसन कर समर्थन नहीं कर सकता। यह तो इन नशेबाज "बाबाजीओं' की ही करतूत है कि खुद डूबते हैं और दूसरों को भी डुबाते हैं। नशे का व्यवहार कभी किसी धर्म का अंग नहीं हो सकता। जो लोग मदिरा, भाँग, गाँजा, तम्बाकू आदि पदार्थों को धार्मिक क्रियाओं में सम्मिलित करते हैं, वे 'वाममार्गी' हैं जो अधर्म का धर्म के नाम पर प्रचार करते हैं और दुनियाँ को अपने ही जैसा पतित और भ्रष्ट बनाना चाहते हैं। अन्यथा धर्म-शास्त्रों में तो स्थान-स्थान पर धूम्रपान तथा अन्य प्रकार के नशों को महापातक बतलाकर उनकी घोर निन्दा की है। 'पद्मपुराण' में कहा गया है—

धूम्रपानरतं विप्रं दानं कुर्वन्ति ये नराः।

दातारो नरकं यान्ति ब्रह्मणो ग्राम शूकरः।।

अर्थात्—"जो व्यक्ति धूम्रपान करने वाले ब्राह्मण को दान देता है तो वह देने वाला नर्क को जाता है और ब्राह्मण ग्राम शूकर बनता है।" मनुस्मृति में लिखा है—

सुरावै मलमन्नानां पाप्मा च मलमुच्यते।

तस्मात् ब्राह्मण राजन्यौ वैश्यश्च न सुरां पिवेत्।।

अर्थात्—"मदिरा अन्न का मल है। पाप को भी मल कहा जाता है। इसलिये ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य आदि सभी भले लोगों को इसका व्यवहार न करना चाहिए।" आगे चलकर फिर कहा है—

अज्ञानाद् वारुणीं पीत्वा संस्कारेणैव शुद्ध्यति।

यतिपूर्वमनिर्देश्यं प्राणान्तिकमिति स्थितिः।।

अर्थात्—"यदि भूले से, धोखे से मदिरा पी ली जाय तो उसका प्रायश्चित करने से शुद्ध हो सकती है। पर जो जान-बूझ कर उसका प्रयोग करता है, उसका प्रायश्चित तो प्राण-त्याग कर देना ही है।"

शुक्राचार्य के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि उनको दैत्यों ने मदिरा पिलाकर उनके प्रिय शिष्य का ही माँस खिला दिया। इस पर अत्यन्त क्रोधित होकर उन्होंने शाप दिया—

यो ब्राह्मणोऽद्य प्रभृ कटिकाश्चेता।

मोहात् सुरां पास्पति मन्द बुद्धि।।

अर्थात्—"जो ब्राह्मण (ज्ञान सम्पन्न व्यक्ति) मदिरा पियेगा उसकी इस संसार में कोई गति नहीं होगी, वह नष्ट हो जायेगा।"

इन शास्त्र वचनों को पढ़कर किसी भी पाठक को आजकल के "बाबाजी' और 'साधू' नामधारी व्यक्तियों के आचरण तथा मान्यता पर अवश्य बड़ा आश्चर्य होगा, जो नशे को धर्म का एक अंग बतलाकर स्वयं सेवन करते हैं और दूसरों में भी उसका प्रचार करते हैं। ऐसे पण्डा-पुजारी जब शिवजी का नाम लेकर भांग का लोटा चढ़ाते हैं या कोई जटाधारी बाबाजी गाँजा की चिलम फूँकता है तो उसके मन में इस बात का ख्याल भी नहीं आता कि वह कोई पाप कर्म कर रहा है, जिसका परिणाम अधःपतन और आत्मा को दूषित होना होगा। उन्होंने धीरे-धीरे अपनी मनोभूमि को ऐसा बना लिया है कि वे नशे को एक स्वाभाविक कार्य ही नहीं वरन् लाभदायक और हितकारी भी मानते हैं। उनकी इस मान्यता ने अब तक न जाने कितने करोड़ सुखी और सन्तुष्ट गृहस्थों को कुमार्गगामी बनाकर चौपट किया होगा। सच पूछा जाय तो हिन्दू-समाज की दुर्दशा के एक बड़े कारण ये निठल्ले और नशेबाज 'बाबाजी'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी हैं, जो लोगों की श्रद्धा और सेवा का प्रतिफल ऐसे विपरीत रूप में चुकाया करते हैं।

आज तक संसार के किसी महापुरुष ने नशे का समर्थन नहीं किया और न उसके उपयोग की सम्मति दी है। कोई भी धर्म-शास्त्र अथवा मजहब ऐसा नहीं जिसने नशा—मादक द्रव्यों का निषेध न किया हो। इसका स्पष्ट कारण यही है कि नशा एक अस्वाभाविक और मनुष्य की वृत्तियों को सब प्रकार से हीन बनाने वाला कार्य है। इससे मनुष्य के हृदय की उद्दात दबती तथा लोप होती है और वह तरह-तरह के दोष तथा दुर्गुणों को ग्रहण करने लगता है। आध्यात्मिकता की दृष्टि से तो यह घोर पाप रूप में प्रवृत्ति है और हम नहीं समझते कि कोई भी आध्यात्मवादी कभी इसका समर्थन कर सकता है। अध्यात्म की ओर अग्रसर होने का साधन तो निर्मल बुद्धि और विवेक ही है, जो नशे के प्रभाव से मलिन होती है और बुराई में भी अच्छाई का अनुभव करने लगती है। इस दृष्टि से नशा सब प्रकार से आत्मा को गिराने वाला तथा त्याज्य है।

धूम्रपान कैसे त्यागा जाय ?

तम्बाकू के दोष अब अच्छी तरह प्रकट हो चुके हैं। वर्तमान समय में समस्त संसार में रोगों की जो वृद्धि हुई है और नई-नई तरह की बीमारियाँ फैलती रहती हैं, उसका कारण नशों के व्यवहार में वृद्धि होना भी है। क्षय, तपैदिक और कैंसर जैसे रोगों का मूल डाक्टर लोग धूम्रपान को बतलाने लगे हैं। तम्बाकू के विष 'निकोटिन' के घातक प्रभाव की बातें भी लोग प्रायः पढ़ते रहते हैं कि समय-समय पर अनेक व्यक्ति इसके प्रभाव से तुरन्त मर जाते हैं। पर इतना होने पर भी अभी तम्बाकू का प्रचार घटने के बजाय बढ़ता ही जाता है और रोज नई-नई तरह की चमक-दमक वाली सिगरेटों के दर्शन बाजार में हुआ करते हैं। इसका कारण यही है कि यह एक बहुत बुरी लत है, जो मनुष्य को अपना गुलाम बना लेती है, जिससे वह इसके दोषों और हानियों को देखता, समझता हुआ भी इसके फन्दे से नहीं निकल पाता।

यह बात नहीं कि तम्बाकू पीने वाले उसके दोषों को नहीं समझते। समय-समय पर कोई हितैषी या मित्र इस सम्बन्ध में समझाया करते हैं और इससे होने वाले आर्थिक, शारीरिक और मानसिक हानियों की ओर संकेत किया करते हैं। जो मनुष्य स्वयं भी धूम्रपान का अधिक आदी बन जाता है तो उसके कारण तरह-तरह के शारीरिक कष्टों का अनुभव करने लगता है। उदाहरणार्थ तम्बाकू पीने वालों को आमतौर पर खाँसी की शिकायत हो जाती है, जो बहुत दवा करने पर भी ठीक नहीं होती। कारण स्पष्ट है कि जब तक रोग की जड़ जमी हुई है और उसे प्रतिदिन सींचा जाता है, तब तक पत्तों के सींचने से कैसे पेड़ नष्ट हो सकता है ? इसलिये यदि इस प्रकार के दुर्व्यसन-बुरीलत से पीछा छुड़ाना हो तो उसका उपाय यह है कि उसके उन्मूलन का विधिवत् प्रयत्न किया जाय और एक निश्चित कार्यक्रम बनाकर उसको क्रमशः घटाया और समाप्त किया जाय।

सिगरेट पीना छोड़ना

दृढ़ निश्चयी व्यक्ति संसार में सब कुछ कर सकता है, जबकि अपनी आदतों व मन का गुलाम व्यक्ति अपने जीवनक्रम अथवा अपनी आदतों, स्वभाव अपनी दिनचर्या में तनिक भी अन्तर नहीं कर पाता। मैं कई ऐसे कर्मठ व्यक्तियों को जानता हूँ, जिन्होंने अपने को कभी भी मन की कैद में नहीं रखा। वे किसी भी काम को करने से पूर्व अपनी विवेकशक्ति से प्रत्येक कार्य के शुभाशुभ परिणाम पर विचार करते हैं और जब उन्हें अपना कार्य फलदायक प्रतीत होता है, तब उसे करते हैं अथवा यदि कभी कोई गलत काम करना शुरू भी कर देते हैं तो अपनी भूल ज्ञात होते ही फौरन उस काम को बन्द कर देते हैं। ऐसे कर्मठ लोगों को क्या करना असंभव हो सकता है। एक बार दृढ़ निश्चय किया और फिर उस पर फौरन अमल करना आरम्भ कर देते हैं। मेरे एक परिचित हैं, जो कभी २०-२५ सिगरेट प्रतिदिन फूँका करते थे परन्तु अब वे सिगरेट पीना कतई छोड़ चुके हैं। मैंने जब यह सुना कि उन्होंने धूम्रपान कतई बन्द कर दिया है तो मैंने उनसे पूछा कि लोग तो कहते हैं कि सिगरेट

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीना छोड़ना संभव ही नहीं है, तब आप अपनी इस आदत को कैसे छोड़ पाये और सिगरेट पीना छोड़ने से आपको क्या लाभ प्रतीत होते हैं। मेरे परिचित हँसे और कहा कि यदि आदमी दृढ़ निश्चय करले तो फिर धूम्रपान की आदत आसानी से छोड़ी जा सकती है। उन्होंने बताया कि एक ओर मेरा सिगरेट का खर्च बहुत अधिक बढ़ गया था उधर हर चीज महँगी होती जा रही है, मेरे बच्चों की पढ़ाई का व्यय भी बहुत बढ़ गया है इसलिये खर्चा चलता ही न था। मैंने बहुत सोचा परन्तु कोई खर्चा कम करना संभव और उचित प्रतीत नहीं हुआ। तब मैंने एक दिन सोचा कि क्यों न मैं सिगरेट पीना छोड़ दूँ, इससे मेरा कम से कम ३० रु. माहवार का खर्च कम हो जायेगा। यह विचार आते ही मैंने अपनी पत्नी को अपना सिगरेट छोड़ने का विचार व्यक्त किया। उन्होंने कहा अगर आप छोड़ सकें तो इससे अच्छी बात क्या होगी, स्वास्थ्य और पैसा दोनों बचेंगे लेकिन प्रायः सिगरेट पीने वाले अपनी इस आदत को छोड़ नहीं पाते हैं। मेरी पत्नी ने बताया कि उनके पिताजी खुल-खुल खाँसते-खाँसते मर गये परन्तु सिगरेट पीना न छोड़ सके यद्यपि उन्होंने सिगरेट छोड़ने की कई बार चेष्टा की। फिर क्या था पत्नी का समर्थन मिलते ही सिगरेट छोड़ने का निश्चय पक्का कर लिया और १५ दिन की अवधि निश्चय की गयी कि आप से पन्द्रहवें दिन धूम्रपान कतई बन्द।

अब सिगरेट छोड़ने की तरकीब सोची गयी। पहला निश्चय यह किया कि किसी अन्य व्यक्ति से आतिथ्य स्वीकार करने में सिगरेट नहीं पी जायेगी। जब कोई मित्र सिगरेट आफर करता तो उससे क्षमा याचना करते समय मेरे मित्र कह देते कि भाई ! अब मैं सिगरेट पीने से तंग आ गया हूँ अतः धूम्रपान बन्द करने वाला हूँ और अपनी सिगरेट नहीं पीऊँगा आज मुझे क्षमा करें।

मेरे परिचित ने मुझे बताया कि दूसरा काम यह किया कि सिगरेटों की संख्या नित्य प्रति कम की और कभी पूरी सिगरेट नहीं पी। वरन् काफी बड़ी सिगरेट जली हुई एक दो कश लेकर बुझाकर फेंक दी। इस प्रकार १४वें दिन सिगरेट का अन्तिम कश लेकर उसे सदैव के लिये नमस्कार कर दिया और उसके बाद फिर कभी किसी प्रकार का धूम्रपान नहीं किया और अब मुझे यह याद भी नहीं आता कि कभी मैं सिगरेट पीता भी था।

सिगरेट से उत्पन्न होने वाले कुछ दोष

सिगरेट छोड़ देने पर उनके शरीर व मन पर क्या प्रभाव पड़ा ? इस सम्बन्ध में मेरे परिचित ने मुझे इस प्रकार बताया—

१. जब मैं धूम्रपान किया करता था तो शरीर में सुस्ती रहती थी, थोड़ी-थोड़ी देर में ताजगी लाने के लिये सिगरेट पीनी पड़ती थी परन्तु जब से धूम्रपान बन्द किया है, तब से शरीर में बराबर स्फूर्ति रहती है। हर समय मन काम करने में लगा रहता है।

२. धूम्रपान करने के काल में जो ओठ काले पड़ गये थे, अब वे धीरे-धीरे अपने प्राकृतिक रंग पर आते जा रहे हैं और नाखूनों का रंग भी गुलाबी हो चुका है। इसका अर्थ यह है कि खून का संचालन धूम्रपान छोड़ने से ठीक होने लगा है।

३. हर समय दिमाग में सिगरेट की जो भड़भड़ाहट रहती थी, मन तब तक किसी काम में नहीं लगता था, जब तक कि सिगरेट का धुआँ गले में न उतरने लगता था। अब मन शांत रहता है और काम पहले से अधिक कर पाता हूँ, अर्थात् धूम्रपान करने का जो बन्धन था उस से मुक्ति मिल गई।

४. सबसे बड़ी बात जो धूम्रपान छोड़ने से हुई है वह यह है कि मेरा सिगरेट का खर्चा लगभग एक रुपया प्रतिदिन का था, वह समाप्त हो गया। अब में सोचता हूँ कि मैंने ३५०) रुपया वार्षिक का अपना व्यर्थ में होने वाला खर्च बचा लिया है और अब मुझे बड़ा दुःख होता है जब मैं यह सोचता हूँ कि अगर मैंने धूम्रपान की आदत न डाली होती तो बीस-साल में ७०००) रुपया बचाया होता जो मेरी एक थाती होती और जिससे न मालूम मैंने कितने अन्य उपयोगी कार्य कर लिये होते इस प्रकार प्रत्येक धूम्रपान करने वाला व्यक्ति यदि हिसाब लगावे कि वह धूम्रपान अथवा अन्य इसी प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की अपनी फिजूलखर्ची की आदतों के कारण कितना धन बर्बाद करता रहता है तो उसे स्वयम् आश्चर्य होगा और अपनी फिजूल खर्च करने की आदत पर क्रोध आवेगा। अतः भारत जैसे निर्धन देश के निवासियों को आत्मनिरीक्षण करके अपने खर्चों को कम करके अपनी आर्थिक स्थिति को सुधारना चाहिए। एक-एक पैसे के व्यर्थ और अनावश्यक व्यय का यदि आदमी हिसाब लगावे तो इतनी बड़ी धनराशि होती है कि जिसका उसने कभी स्वप्न में भी ध्यान नहीं किया होता है।

सिगरेट को त्यागने का एक और उदाहरण

ऐसे एक व्यक्ति ने जो लगातार २० वर्ष से सिगरेट पीता रहा था, एक मित्र के समझाने और निरन्तर प्रयत्न करने से धूम्रपान किस तरह छोड़ा इसका वर्णन अधिकांश धूम्रपान करने वालों को अवश्य रोचक तथा शिक्षाप्रद सिद्ध होगा।

इस व्यक्ति के मित्र ने जब देखा कि धूम्रपान के प्रभाव से उसका स्वास्थ्य निरन्तर गिरता जाता है तो उसने उसे इस सम्बन्ध में चेतावनी दी और उससे छः प्रश्न किये—

१. क्या तुम्हारे सभी दाँत सुरक्षित हैं ?

२. क्या तुम्हें हृदय की धड़कन होती है ?

३. क्या तुम्हारी पाचन-क्रिया बराबर ठीक रहती है ?

४. क्या तुम्हारे गले और जीभ में जलन होती है ?

५. क्या तुम्हें कभी-कभी अच्छी नींद नहीं आती ?

६. क्या तुम्हारी नाड़ी निश्चित गति से चलती है ?

७. क्या तुम्हारी दृष्टि ठीक है ?

इन प्रश्नों के उत्तर में उसे स्वीकार करना पड़ा कि निस्संदेह दाँतों में खराबी पैदा हो गई है, जिससे दो दाँत खोखले हो गये हैं और पायरिया की शिकायत रहती है। दिल के धड़कने का ठीक-ठीक जबाब नहीं दिया जा सका, पर जब उसने मित्र के साथ दस बार बैठक की तो मालूम हुआ कि उसका हृदय मित्र की अपेक्षा अधिक तेजी से धड़क रहा है। पाचनक्रिया की खराबी तो स्पष्ट थी, क्योंकि प्रायः वैद्यों के चूर्ण और अन्य औषधियों का प्रयोग करना पड़ता था। गले और जीभ में जलन होने की बात तो प्रत्येक सिगरेट पीने वाले पर लागू होती है और उसका अनुभव सदैव हुआ करता है। उसकी नींद बीच-बीच में टूट जाती थी, वह इसका कारण तरह-तरह की चिन्ताओं को समझता था। नाड़ी की परीक्षा करने पर उसमें भी विकार जान पड़ा। नेत्रों की शक्ति भी पहले की अपेक्षा बहुत घटी प्रतीत होती थी।

इसके पश्चात् मित्र ने एक साफ कपड़े का टुकड़ा सिगरेट के ऊपर लगा दिया और उससे कहा कि कपड़े में होकर धुआँ खीचो। थोड़ी देर ऐसा करने के बाद जो कपड़े को हटाकर देखा गया तो उसके ऊपर कुछ मैलापन दिखाई पड़ने लगा। मित्र ने उसे समझाया कि जिस प्रकार धुएँ के असर से कपड़ा मैला हो गया और अगर उसका बीस-तीस बार ऐसा ही प्रयोग किया जाय तो वह अवश्य कमजोर पड़ जायेगा, ठीक ऐसा ही असर हृदय पर पड़ता है। वह भी धीरे-धीरे मैला पड़ता रहता है, अर्थात् उसमें गन्दगी इकट्ठी होने लगती है। अगर हम किसी तम्बाकू पीने के पाई की नली को तोड़कर देखें तो उसमें ऐसा ही 'कीट' जमा हुआ दिखाई देगा। हुक्के की नली में कीट जमा करता है, जिसे हुक्का पीने वाले कभी-कभी लोहे का तार डालकर साफ करते हैं। इसी प्रकार धूम्रपान के फल से हृदय में भी मैल का अंश बढ़ने लगता है और इसका प्रभाव रक्तप्रवाह के द्वारा मस्तिष्क के द्वारा समस्त शरीर पर पड़ता है। शुद्ध रक्त ही मनुष्य के उत्तम स्वास्थ्य का प्रधान आधार है। यदि रक्त गन्दा होता रहेगा तो उससे शरीर के विभिन्न भागों में तरह-तरह रोगों की सृष्टि अवश्य होगी।

जब मनुष्य के मन में यह बात जम जाती है कि धूम्रपान अनेक शारीरिक रोगों और दोषों का कारण है और उससे सिवाय हानि के किसी प्रकार का लाभ होना असम्भव है, तो स्वभावतः वह उससे विरक्त होने लगता है। वह यह भी जान सकता है कि धूम्रपान के छूट जाने पर स्वास्थ्य पहलें से उत्तम हो जायेगा और शरीर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में फुर्ती रहने लगेगी। नशे का बन्धन जो सदैव तंग करता रहता है और जिसके कारण कभी-कभी किसी अनजान व्यक्ति से माँगकर भी काम चलाना पड़ता है, खत्म हो जायेगा। मानसिक स्थिति सुधर जायेगी और जो तरह-तरह की दुश्चिन्ताएँ मन में आती रहती हैं वे मिट जायेंगी। कार्य-क्षमता भी बढ़ेगी, क्योंकि तम्बाकू के विष से शरीर में आलस्य की वृद्धि होती है और वह प्रायः टूटा-सा जान पड़ता है। पैसे की बचत तो स्पष्ट ही है। एक मध्यम श्रेणी का व्यक्ति भी चार-आठ आने की सिगरेट प्रतिदिन पी डालता है और गरीब भी दो-चार पैसे तो अवश्य ही बीड़ी में खर्च करता है। इसका हिसाब यदि वर्ष भर लगाया जाय तो सैकड़ों रुपये की बचत हो सकती है, जिससे कितने ही उपयोगी कार्य पूर्ण हो सकते हैं।

हाँ, तो मित्र महोदय ने इन सिगरेट पीने वाले बाबू साहब को पहले धूम्रपान से होने वाली हानियों का निश्चय डाक्टरों तथा वैज्ञानिकों के कथन से कराया और स्वयं उनके शरीर की परीक्षा करके प्रत्यक्ष प्रमाण भी दिया। इसके पश्चात् उन्होंने कहा कि यदि तुम इन हानियों से बचकर स्वस्थ और सुखी जीवन का लाभ प्राप्त करना चाहते हो तो पहले अपने मन में धूम्रपान त्याग करने का दृढ़ संकल्प कर लो और फिर इस संकल्प को अपने सब मित्रों, सम्बन्धियों और परिचितों पर प्रकट कर दो। साथ ही सिगरेट को छोड़ देने का एक दिन भी निश्चित कर लो। दृढ़ मानिसक बल वाले व्यक्ति तो एक दिन में भी इसे त्याग सकते हैं, पर साधारण व्यक्तियों से इसकी आशा करनी अनुचित है। उनको अपनी शक्ति के अनुसार महीना, पन्द्रह दिन का समय निश्चित कर लेना चाहिए और उस बीच में सिगरेटों या बीड़ियों की संख्या क्रमशः घटाते जाना चाहिए। जैसे यदि आप दस सिगरेट रोज पीते हैं, तो आठ पीना आरंम्भ कीजिए और प्रति तीसरे दिन एक कम करते जाइये। इससे बिना किसी कष्ट के आप महीने भर में एक सिगरेट पर आ जायेंगे और फिर मन को पक्का करके उसे भी छोड़ सकेंगे।

सिगरेटों की संख्या कम करने की एक तरकीब यह भी बताई जाती है कि बनी हुई सिगरेट पीने के बजाय अपने हाथ से बनाकर पीना आरम्भ कर दिया जाय। इससे तुरन्त डिब्बी निकालकर सिगरेट फूँक सकने की सुविधा जाती रहती है और सिगरेट बनाने में जो थोड़ा झंझट होता है उससे उनकी तादाद स्वयमेव कुछ घट जाती है।

धूम्रपान त्यागने के शुभ संकल्प को स्थिर रखने का एक उपाय यह भी है कि स्वयम् बीड़ी-सिगरेट का प्रयोग छोड़कर दूसरों से भी उसे छुड़ाने का प्रयत्न किया जाय। यह निश्चय है कि जो व्यक्ति दूसरों से इसे छोड़ने को कहता रहेगा वह फिर स्वयं नहीं पी सकेगा, क्योंकि ऐसा करना तो अपनी हँसी कराने का कारण होता है। साथ ही यह भी ठीक है कि जो स्वयं किसी दुर्व्यसन को त्यागकर उसका उपदेश दूसरों को देता है, उसी का कुछ प्रभाव भी पड़ता है। इस प्रकार धूम्रपान छोड़ने के लिए अपने इरादे को सब पर प्रकट कर देना, उसकी घोषणा कर देना भी पर्याप्त प्रभावशाली सिद्ध होता है। अपना दृढ़ संकल्प तो मुख्य है ही, पर दूसरों के सामने झूँठा सिद्ध न हो, इस संकोच से भी दोषों को छोड़ने में बहुत सहायता मिलती है।

संकल्प-बल के अभाव में कठिनाई होती है

जिन लोगों का मानसिक संकल्प बल कम होता है, उनको इसे छोड़ने में विशेष कठिनाई का सामना भी करना पड़ता है। 'स्वस्थ जीवन' के सहकारी संपादक श्री जैमिनी बरुआ अपने अनुभव लिखते हुए बतलाते हैं कि "जब से मैं 'स्वस्थ जीवन' का सम्पादन कार्य करने लगा, तब से मेरे प्रिय मित्र और हितैषी बराबर आग्रह करते रहे कि अब तो प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तानुसार आपको चाय, सिगरेट छोड़ देनी चाहिए। मैं भी प्राकृतिक चिकित्सा साहित्य का निकट से अध्ययन करके अपने ज्ञानान्धकार को दूर कर चुका था, पर फिर भी मैं इससे अपना पिण्ड न छुड़ा सका। हैदराबाद के प्राकृतिक चिकित्सा-सम्मेलन में मुझे एकान्त में सिगरेट पीते देखकर श्रीमती धर्मचन्द सारवगी ने टोक दिया कि "आपको यह सिगरेट छोड़ देनी चाहिए।' उस दिन जीवन में पहली बार में अपनी सिगरेट की लत पर लज्जित हुआ और मेरे मन ने भी मुझे धिक्कारा। उस दिन से मैंने सिगरेटों की संख्या घटाना आरम्भ कर दिया और फिर २४ घण्टे में एक-दो सिगरेट ही पीने लगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

"अब जब कभी मैं मित्रों के बीच बैठकर सिगरेट पीता तो मेरा मन, मेरा मानस और मेरा हृदय मौन से धिक्कारता। तब मैं बुरी तरह विचलित हो जाता और नये रूप से संकल्प करता कि अब सिगरेट कभी नहीं पीऊँगा। अनेक बार तो ऐसा भी हुआ कि पूरी सिगरेट मैंने नहीं पी और उसी के पहले अन्दर से एक भर्त्सना मेरे ही खिलाफ मुझे कुरेदने लगती। वह भर्त्सना मुझे सहन न होती और मैं वह सिगरेट फैंक देता। इस तरह आन्तरिक संघर्ष चलता रहा। मैंने लाख कोशिश की कि सिगरेट का व्यामोह मेरा पिण्ड छोड़े, मैं पूरी तरह व्यसन-शुद्ध मनुष्य बनूँ, फिर भी संगत का कुप्रभाव इस मार्ग में बड़ा रोड़ा बना रहा। भूल-भटके व पकड़ लेते और तब तीन-चार सिगरेट पीने में मैं पीछे भी न रहता। हाँ अनेक बार दो-दो, तीन-तीन महीने इस तरह से डट-कर मैंने जरूर निकाले, जिस बीच में मैंने कभी सिगरेट नहीं पी। एक विचित्र मनःस्थिति थी। व्यसन मुझ पर हावी था और मैं उसके आकर्षण केन्द्र से बाहर निकलने के लिए तड़प रहा था।"

अन्त में लेखक ने वातावरण के प्रभाव से सिगरेट छोड़ दी, पर इसके लिए उनको न जाने कितना संघर्ष करना पड़ा। पर दूसरी ओर हमने ऐसे भी व्यक्ति देखे हैं, जिन्होंने कई वर्ष तक बीड़ी या सिगरेट पीने के पश्चात् उसे किसी भी समय इच्छा होते ही सदा के लिए त्याग दिया। इससे यही मालूम होता है कि दुर्व्यसनों का बहुत कुछ आधार मनोबल की दृढ़ता या निर्बलता पर रहता है। संसार में आज कल जैसा वातावरण छाया हुआ है और मनुष्यों का जीवन जिस प्रकार कृत्रिम बन गया है, उससे दृढ़ मानसिक संकल्प वाले व्यक्तियों की संख्या नगण्य रह गई है। अतः जो लोग अपना कल्याण चाहते हैं, उनको आरम्भ से ही ऐसे दुर्व्यसनों से बचना चाहिए। ऐसी संगत से दूर रहना चाहिए जो स्वयं इन दोषों में लिप्त हो और दूसरों को भी उनकी प्रेरणा देती हो। फिर यदि भूल या असावधानी से उसमें फँस जाये तो भी उसके कुपरिणामों को देखकर यथा संभव शीघ्र उससे छुटकारा पाने का प्रयत्न करना चाहिए।

धूम्रपान त्यागने का अन्य उपाय

ऊपर जो दो-तीन उदाहरण धूम्रपान को छोड़ने के दिए गये हैं, वे शिक्षित तथा कुछ ऊँची सोसाइटी में रहने वाले के हैं। पर छोटी श्रेणी के लोग अथवा देहात के किसान मजदूर जो केवल, बीड़ी या चिलम पीकर काम चलाते हैं और जिनको उसकी आदत बाल्यावस्था से पड़ी हुई है, उनकी समस्या कुछ भिन्न है। उनके लिए इस प्रकार तम्बाकू त्याग की घोषणा अथवा सप्ताह, दो सप्ताह तक सिगरेटों की संख्या घटाते रहने का कोई प्रश्न नहीं है। ऐसे लोग तो रास्ता चलते हुए भी किसी से बीड़ी या चिलम माँगकर दो-चार फूँक लगा लेते हैं और अपने को कुछ ताजा अनुभव करने लगते हैं। ऐसे बहु-संख्यक लोग सुबह शौच जाने से पूर्व एक बार चिलम या बीड़ी पी लेना आवश्यक समझते हैं। वे कहते हैं कि इसके बिना हमें शौच ही नहीं होता। इसी प्रकार भोजन के उपरान्त भी ऐसे व्यक्ति एक बार लेटकर थोड़ी देर बीड़ी या हुक्का पी लेते हैं और कहते हैं कि इससे आहार के पचने में सहायता मिलती है। ऐसे लोगों के विचारानुसार धूम्रपान के निम्न उपयोग बतलाये जा सकते हैं—

(१) शौच जाने के लिए इसका सेवन करना आवश्यक है।

(२) अगर भोजन के पश्चात् धूम्रपान न करें तो पेट फूलने लगेगा और भारीपन बना रहेगा।

(३) धूम्रपान का एक बहुत बड़ा उपयोग आलस्य को दूर करना माना जाता है। चौकीदार, खेतों की रखवाली करने वाले किसान, यात्रा की मोटर बसों के ड्राइवर, रेल कर्मचारी और रात्रि में ही दूर से दूध आदि लाने वाले आदि कितने ही ऐसे पेशे वाले होते हैं, जिनको दिन के बजाय रात में काम करना पड़ता है और घण्टों जागते हुए बैठना या खड़े रहना पड़ता है। ऐसे लोग बहुत अधिक संख्या में धूम्रपान करते हैं। वे कहते हैं कि हम अगर बीड़ी, सिगरेट न पियें तो आलस्य धर दबाता है और हम अपनी ड्यूटी पूरी नहीं कर सकते।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ये तीनों ही बातें ऐसी हैं, जिनकी हम सर्वथा उपेक्षा नहीं कर सकते और ऐसे लोगों से तम्बाकू छुड़ाने के पूर्व हमको इन आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए कोई व्यवस्था करनी होगी। इस सम्बन्ध में खोज-बीन करने वाले एक सज्जन ने, जिनका इस श्रेणी वालों से काफी परिचय रहा है, एक ऐसी विधि बतलाई है, जिसमें बहुत थोड़े खर्च से तम्बाकू की जगह अन्य वस्तु का प्रयोग किया जा सकता है और क्रमशः कम करके थोड़ी ही अर्से में उससे पिण्ड छुड़ाया जा सकता है। उनका नुस्खा इस प्रकार है—

सौंफ पावभर, अजवाइन पावभर, काला नमक तीन छटांक और बड़े नीबू चार। पहले काले नामक को बारीक पीसकर उसमें नीबूओं का रस मिला दिया जाय फिर इसको साफ की हुई सौंफ तथा अजबायन में डालकर एक कलईदार बर्तन में थोड़ी देर तक दोनों हाथों से खूब अच्छी तरह मिलाने पर उसी बर्तन को आग पर रखकर धीरे-धीरे अच्छी तरह भून डाले। यह एक प्रकार चूरन-सा, जो दूर से बनी हुई सुरती-सा ही लगेगा, बन जायेगा। इसको थोड़ा-सा डिबिया में भरकर पास में रखले और समय-समय पर तम्बाकू की तरह सेवन करता रहे। इसके लाभ इस प्रकार होंगे—

(१) ये चारों चीजें भोजन का पचाने वाली, पेट को साफ करने वाली व वायु को बाहर निकालने वाली हैं। इसलिए तम्बाकू की जगह इसका सेवन करने से सुबह शौच आने में अवश्य सहायता मिलेगी।

(२) भोजन के बाद अब भी बहुत लोग सौंफ खाया करते हैं। यह मुँह को साफ करने वाली तथा भोजन को पचाने में सहायक मानी गई है। अजवायन भी मशहूर पाचक और बादी मिटाने वाली बताई गई है। काला नमक तो अफरा, वायु शूल आदि के लिए दैनिक उपयोग की वस्तु है, जो समस्त चूर्णों में काम में लाया जाता है। इसलिए भोजन के उपरान्त उक्त चूर्ण को खा लेने पर पाचन-क्रिया में तम्बाकू द्वारा सहायता पहुँचाने की आवश्यकता नहीं रहती।

(३) तीसरी बात आलस्य की है। तम्बाकू पीने से मुँह का स्वाद बदल जाता है तथा कुछ उत्तेजना हो जाती है। इस चूरण का स्वाद भी कुछ कड़वाहट लिए होने से दो-एक चुटकी मुँह में डाल लेने पर स्वाद बदल जाता है और आलस्य मिट जाता है।

इस प्रकार इस मिश्रण की सहायता से मनुष्य सहज में अपनी तम्बाकू की आदत और धूम्रपान की हुड़क की पूर्ति कर सकता है और बिना किसी विशेष असुविधा या खतरे को दो-चार सप्ताह में धूम्रपान और तम्बाकू खाने की आदत से छुटकारा पा सकता है।

धार्मिक और सामाजिक दृष्टि में धर्मशास्त्रों में निषेध

संसार के सारे धर्मों तथा धर्म-प्रवर्त्तकों ने हर प्रकार की नशेबाजी को अधर्म बतलाया है, और उसकी निन्दा की है, धर्म-ग्रन्थों में स्थान-स्थान पर कहा गया है—

जो व्यक्ति धूम्रपान करने वाले ब्राह्मण को दान देता है तो वह देने वाला नरक को जाता है और ब्राह्मण ग्राम में शूकर बनता है।

"मदिरा अन्न का मल है। पाप को भी मल, कहा जाता है। इसलिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सभी को भले लोगों को इसका व्यवहार न करना चाहिये।"

"यदि भूल से, धोखे से मदिरा पी ली जाये तो उसका प्रायश्चित करने से शुद्धि हो सकती है। पर जो जानबूझ कर प्रयोग करता है उसका प्रायश्चित तो प्राण त्याग कर देना ही है।"

शुक्राचार्य के सम्बन्ध में प्रसिद्ध है कि उनको दैत्यों ने मदिरा पिलाकर उनके शिष्य का माँस खिला दिया। इस पर अत्यन्त क्रोधित होकर उन्होंने शाप दिया—

"जो ब्राह्मण (ज्ञान सम्पन्न व्यक्ति) मदिरा पियेगा उसकी इस संसार में कोई गति नहीं होगी, वह नष्ट हो जायेगा।"

शास्त्रों के इस प्रकार प्रमाण वचनों के होते हुए भी जो व्यक्ति तम्बाकू शराब आदि नशों का सेवन किया करते हैं और उस कुकर्म को संगति प्रदान करने के लिये धर्म की आड़ लेते हैं वे अपने इहलोक तथा परलोक दोनों को बिगाड़ते हैं।"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नशे का प्रभाव शरीर और मस्तिष्क तक ही रहता हो सो बात नहीं। इसके अन्दर जो तमोगुणी सूक्ष्म तत्व रहते हैं, उनके कारण मनुष्य की आध्यात्मिक और आन्तरिक स्थिति दिन-दिन शौचनीय होती जाती है। नशेबाजों में से बहुत कम लोग धर्मपरायण होते हैं, उनकी काम वासना कुमार्ग की ओर खींचती रहती है। क्रोध अधिक आता है। दया की भावना घटती और क्रूरता बढ़ती है। उन्हें अधीरता, कायरता, निराशा, दुश्चिन्ता और दीनता की प्रवृत्तियाँ घेरे रहते हैं। वे अपने आपको दीन दुःखी, अभागा और तुच्छ मानते हैं। कई बार क्रूरता की मान्यता इतनी बढ़ जाती है कि मामूली कारण अपने स्त्री-बच्चों तक की हत्या करने पर उतारू हो जाते हैं। तामसी भोजनों के लिये उनका जी हमेशा चलता रहता है। ऐसे लोगों का मन न तो भगवान में लगता है और न वे अपने जीवन में कोई कहने लायक बड़ा काम कर पाते हैं। नशेबाजी को इस संसार का एक दुर्दशाग्रस्त दुर्बल प्राणी कहा जा सकता है।

इन्हीं बुराइयों को देखते हुए न केवल डाक्टरों ने वरन् संसारभर के श्रेष्ठ पुरुषों ने नैतिक एवं सामाजिक दृष्टि से भी नशेबाजी को हानिकर बताया है और उससे बचने की जन-साधारण को चेतावनी दी है। धर्म ग्रन्थों ने सर्वत्र दुष्प्रवृत्ति की निन्दा की है और उसे एक पाप बताया है।

वेद में नशेबाजी को एक महापातक बताया है। मनुस्मृति में इस कुकर्म में लगे हुए लोगों को एक वर्ष तक कठोर प्रायश्चित करके इस पाप से अलग होने की सलाह दी है। बौद्ध धर्म में गिनाये गये चार महापापों में नशेबाजी भी एक है। कुरान के पारा ७ सूरत मायदा रुक १ में कहा गया है—ऐ ईमान वालो, शराब तथा दूसरी नशीली चीजें हराम हैं। इन शैतानी चीजों से कतई बचे रहो। बाईबिल का कथन है—अन्त में नशेबाजों की शैतान की तरह दुर्गति होगी। जो नशा पीयेगा वह खुशहाल न रहेगा। महात्मा गाँधी ने लिखा है—

"स्वास्थ्य की रक्षा और दीर्घजीवी बनने के लिये नशेबाजी छोड़ना आवश्यक है। नशीली चीजें हमारे धन को नहीं नष्ट ही नहीं करती वरन् लोक और परलोक को भी बिगाड़ती हैं" नेपोलियन बोनापोर्ट अपने सैनिकों को कहा करता था—दोस्तो ! दुश्मन की अपेक्षा शराब से अधिक सावधान रहो। याद रखो सिर्फ संयमी सेना की ही विजय हो सकती है।

पुराणों की एक प्रसिद्ध कथा कि एक बार दुर्भिक्ष पड़ने पर आपद् धर्म-मानकर विश्वामित्र ने कुत्ते के माँस का भोजन बनाया, जब वे उसे खाने से पूर्व सूर्य भगवान् की उसकी बलि देने लगे तो सूर्य देवता ने उस प्रसाद को स्वीकार नहीं किया। इस पर विश्वामित्र बहुत दुःखी हुये और सूर्य देव से प्रार्थना की—"देव, यह स्वपाक आपद् धर्म है। जीवन रक्षा के बाद मैं इसका प्रायश्चित कर लूँगा। मैंने कोई नशेबाजी थोड़े ही की है जिसका प्रायश्चित ही न हो सके तथा जीवन अत्यन्त गहरे गड्ढे, गिर जाय।" ऋषि के अनुसार सबसे बड़ा पाप नशेबाजी थी न कि कुत्ते का माँस खाना। अन्य ऋषियों का दृष्टिकोण भी इस प्रकार का रहा है। उन्होंने न केवल स्वास्थ्य की दृष्टि से वरन् आध्यात्मिक दृष्टि से भी इसको हेय एवं त्याज्य माना है।

एक बार जब समुद्र मंथन के समय कालकूट विष निकला तो उसके दुष्प्रभाव से संसार को बचाने के लिये शंकर जी ने गले में धारण कर लिया और स्वयं नीलकंठ बन गये। इसी प्रकार उस कालकूट से कुछ ही हल्के दर्जे के विष-नशे से संसार को बचाने के लिये उसे भी स्वयं ही ग्रहण किया। चाहिये यह था कि जिस प्रकार कालकूट को कोई नहीं पीता, उसी प्रकार नशों को भी शंकर तक ही सीमित रखा जाता, पर खेद है कि लोग उलटी समझ के कारण शंकर का नाम लेकर स्वयं ही भाँग, तम्बाकू, गाँजा आदि पीते हैं। समझते हैं कि उससे शंकर जी प्रसन्न होते हैं यदि ऐसी ही बात है तो कालकूट विष पीकर भी शंकर जी को प्रसन्न क्यों न किया जाय ?

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धार्मिक दृष्टिकोण से भी तम्बाकू त्याज्य है

वैसे तो यह बात सर्वविदित है कि तम्बाकू का संसार में प्रचार हुए पाँच-छः सौ वर्ष ही हुए हैं। कोलम्बस की अमरीका-खोज के पहले एशिया, योरोप, अफ्रीका आदि अन्य महाद्वीप वालों को इनके सम्बन्ध में कोई ज्ञान न था। पर धूम्रपान भारतवर्ष के लिये सर्वथा नई चीज नहीं है। वैद्यक के चरक तथा सुश्रुत जैसे हजारों वर्ष पूर्व रचे गये ग्रन्थों में 'धूम्रपान' का विधान है। वहाँ पर उसका वर्णन औषधि के रूप में हुआ है। जैसे कहा गया है कि आम के सूखे पत्ते को चिलम जैसे किसी उपकरण में रखकर धुआँ खींचने से गले के रोगों में आराम होता है। दमा तथा श्वाँस सम्बन्धी रोगों में वासा अथवा अडूसे के सूखे पत्तों को चिलम में रखकर पीना एक प्रभावशाली उपाय माना गया है।

यह भी असम्भव नहीं है जिस प्रकार हमारे देश में भंग या 'विजया' का प्रचार काफी पुराने जमाने से है, उसी प्रकार साधू कहलाने वाले वर्ग में भंग के सहकारी गाँजे का प्रचार भी उसी समय से हो गया हो क्योंकि पुराण और स्मृतियों में कहीं-कहीं धूम्रपान का निषेध और उसके प्रयोग करने वाले के लिए लौकिक या पारलौकिक दण्ड मिलने का उल्लेख है। उदाहरणार्थ—"स्कन्द पुराण" में एक स्थान पर कहा है—

यत्स्वधर्मार्जितं पुण्यं तन्नष्टं धूम्रपानतः।
तस्मात्सर्वद्विजातीनां न हि सेव्यं कदाचन।।

अर्थात्—"स्वधर्म का आचरण करके जो पुण्य प्राप्त किया जाता है, वह धूम्रपान से नष्ट हो जाता है। इस कारण समस्त ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि को इसका सेवन कदापि नहीं करना चाहिए।"

स्नान दानानि तीर्थेषु प्रयागादिषु कोटयः।
वृथैव तानि सर्वाणि धूम्रपानाच्च नारद।।

अर्थात्—"अनेक तीर्थों में स्नान-दान कर लेना और प्रयाग आदि में अनेकों बार स्नान करना भी धूम्रपान के कारण वृथा हो जाता है।" क्योंकि इस कुटेव के कारण मनुष्य के हृदय में दूषित वृत्तियों का उत्थान होता है और उसके विचार अशुद्ध हो जाते हैं।

दत्तानि येन दानानि सुवर्णा दीन्य नेकशः।
निष्फलं तानि सर्वाणि धूम्रपानाच्च नारद।।

अर्थात्—"इसी प्रकार सुवर्ण, गौ, अन्न, वस्त्र आदि का बहुत-सा दान भी धूम्रपान रूपी पाप के फल से निष्फल हो जाता है।"

इन कथनों से प्रतीत होता है कि नशे के रूप में धूम्रपान के दोषों से प्राचीन समय के विचारक भी परिचित थे और इसलिए वे धार्मिक दृष्टि से इसको हेय और त्याज्य बतला चुके हैं। तीर्थ-स्थानों पर लगने वाले बड़े मेलों में धूनी पर बैठकर सुलफा, गाँजा अथवा तम्बाकू की दम लगाने वाले 'बाबाजीओं' से पूछना चाहिए कि वे इस प्रकार का कुकर्म करके क्यों अपने और अन्य लोगों के तीर्थ-स्नान के पुण्य को नष्ट करते हैं ?

पद्मपुराण का उपाख्यान

पद्मपुराण के एक उपाख्यान में, जिसमें श्रीकृष्ण के इन्द्र के साथ लड़कर कल्पवृक्ष को भूमि पर लाने की कथा कही गई है। तमाल पत्र (तम्बाकू) को गौ के कटे हुए कान से उत्पन्न बतलाया गया है। इसका आशय यही है कि जिस प्रकार हिन्दू मात्र के लिये गौ का एक रोआँ उखाड़ना भी महापातक कहा जाता है, उसी प्रकार गौ के कान की आकृति वाली तम्बाकू के पत्तों का किसी भी रूप में सेवन करना भी घोर पाप है। पर हम देखते हैं कि परम्परा से चमार, कोरी आदि 'नीच' कहलाने वाली जातियों में ही नहीं, वरन् ब्राह्मणों की अनेकों उपजातियों तथा ठाकुर, बनियों में भी हुक्के को एक जातीय पदार्थ मान लिया गया है। यदि किसी व्यक्ति को किसी प्रकार के अपराध में जाति से पृथक् करना हो तो उसके लिये कहा जाता है कि "उसका हुक्का-पानी" बन्द कर दिया गया और वास्तव में माँवों, कस्बों और छोटे नगरों की जातीय पंचायतों में धूम्रपान के लिए हुक्का या बीड़ी-सिगरेट की व्यवस्था करना एक आवश्यक कृत्य माना जाता है। देहातों में तो आमतौर से किसी मेहमान के आने पर उसके सामने हुक्का भरकर रख देना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी 'खातिरदारी' का एक अंग माना जाता है। ये सब प्रथायें और रूढ़ियाँ धर्मशास्त्र की निगाह से अवश्य ही अनुचित तथा दुष्कर्म हैं और बात-बात में धर्म की दुहाई देने वाले सज्जनों को तो उसे अवश्य ही छोड़ देना चाहिए।

इसमें कुछ भी सन्देह नहीं कि चाहे तम्बाकू का प्रचार वर्तमान रूप में चार-पाँच सौ वर्ष पहले ही हुआ हो, पर नशे के रूप में धूम्रपान सदा से हानिकर दूषित और एक पाप कर्म माना गया है। इसीलिए इन दिनों भी जितने सन्त-मत तथा धार्मिक सम्प्रदाय चले हैं, सबमें इसका निषेध किया गया है। किसी भी धर्मप्रिय सज्जन ने आज तक इसका समर्थन नहीं किया। तो भी हम अत्यन्त खेदपूर्वक देखते हैं कि मन्दिरों के पुजारी तथा अन्य कार्यकर्ता तथा तीर्थों के पण्डे दिनभर बैठे-बैठे बीड़ी फूँकते रहते हैं। जिन धर्म-स्थानों से तम्बाकू के त्याग का उपदेश और प्रचार होना चाहिए था, स्वयं उन्हीं के भीतर उनका इतना अधिक प्रचार कितना निन्दनीय कृत्य है, यह कहने की आवश्यकता नहीं।

धूम्रपान त्यागने के लिये जहाँ अन्य अनेकों शारीरिक, मानसिक, स्वास्थ्य सम्बन्धी कारण, बतलाये गये हैं, वहाँ यह धर्म सम्बन्धी कारण भी कम महत्वपूर्ण नहीं है। जो लोग चौका की लकीर के पास भी किसी अजनबी के आ जाने पर कई हाथ की दूरी पर रखे भोजन को अशुद्ध बतला देते हैं, विधर्मी के हाथ के दूध, घी, बतासा, कटे फल आदि को अशुद्ध समझते हैं, वे ही लोग उन्हीं की बनाई तम्बाकू या बीड़ी को मुँह में रखने में किसी तरह का संकोच न करें, यह एक आक्षेप की बात है। बीड़ी को जिस प्रकार की नीच कौमों के गन्दे लड़के बनाया करते हैं, उसे यदि आँखों से देखा जाय तो मालूम होगा कि रंग-बिरेंगे कागजों के बण्डलों में लिपटी हुई बीड़ियाँ वास्तव में कितनी अशुद्ध होती हैं ? जो लोग बाजार के दाल-चावल, अनाज तथा अनेक अन्य खाद्य वस्तुओं को बिना धोये कभी प्रयोग में नहीं लाते वे भी बीड़ी के बण्डल को खोलकर तुरन्त बीड़ी को होठों से लगा देते हैं तो उनकी 'धार्मिकता' और रूढ़ि-पालन पर सन्देह होने लगता है। तम्बाकू एक तो स्वयं ही दूषित और गन्दी चीज है फिर शास्त्रों ने भी उसका निषेध किया है, इस दृष्टि से भी विचार करके, इसे जहाँ तक संभव हो शीघ्र छोड़ना ही उचित है।

तम्बाकू और भूमि की बर्बादी

तम्बाकू के प्रचार के कारण भूमि की कैसी बर्बादी हो रही है और उसका कुपरिणाम खाद्यान्नों के अभाव के रूप में किस प्रकार समस्त जनता को भोगना पड़ रहा है ? यह ऐसा विषय है, जिस पर लोगों का ध्यान नहीं जाता। देश में तम्बाकू की कितनी खपत होती है ? इसके विश्वस्त और पूरे आँकड़े तो अभी हमारे सामने नहीं हैं, पर बीड़ी, सिगरेट, हुक्का, खाने की तम्बाकू और सूँघने की तम्बाकू में कुल मिलाकर जितना व्यय होता है, उसका अनुमान कोई लेखक दो अरब, कोई दस अरब और कोई पन्द्रह अरब लगाता है। कुछ भी हो, भारत की जनसंख्या और उसमें तम्बाकू का व्यवहार करने वालों के अनुपात को देखते हुए इस रकम को दो-ढाई अरब माना जा सकता है। आजकल बाहर से तम्बाकू थोड़ी ही आती है, इसलिए इतनी तम्बाकू को देश में पैदा करने के लिए एकाध लाख एकड़ जमीन का प्रयोग होना स्वाभाविक ही है। तम्बाकू के विषय में यह प्रसिद्ध है कि वह भूमि के सार-तत्व को इतनी अधिक मात्रा में खीचती है कि फिर उस भूमि में और किसी वस्तु की खेती असंभव हो जाती है। इसलिये सरकारी रिपोर्टों के अनुसार तम्बाकू की खेती में काम आने वाली जमीन में से ६० प्रतिशत में और कोई फसल नहीं होती। केवल दस प्रतिशत थोड़ा-सा अन्न उपजता है। पर उसमें भी तम्बाकू का दोष आ जाता है।

किसान लोग तो तम्बाकू की अच्छी नकद कीमत मिलने के लालच से इस कार्य को बन्द नहीं कर सकते, पर सरकार और जनता को यह सोचना चाहिए कि जब देश में अन्न की बहुत अधिक तंगी हो गई है और करोड़ों नहीं, अरबों रुपये का अन्न विदेशों से खरीदकर मँगाना पड़ता है, तो यहाँ की भूमि में तम्बाकू जैसी निरर्थक और हानिकारक वस्तु की खेती क्यों कराई जाय ? इस खेती के फल से एक तरफ लाखों मन अन्न का घाटा होता है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरी तरफ एक ऐसी वस्तु की वृद्धि जो लोगों का स्वास्थ्य नष्ट करती है, उनको रोगी बनाती है और तरह-तरह के नैतिक चारित्रिक दोष पैदा करती है। लोग पूछते हैं कि जब अन्न की कमी से करोड़ों मनुष्यों को पूरा भोजन नहीं मिल रहा है, पशुओं के चारे का भी अभाव हो गया है, जिससे लाखों उपयोगी पशु, गाय, भैंस आदि कसाईखानों में भेजे जाते हैं, तो इस पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध लगाने की व्यवस्था क्यों नहीं की जाती ? यदि तम्बाकू से खराब होने वाली लाखों एकड़ जमीन अन्न, कपास, चारा आदि उपजाने के काम में लायी जाय, तो उससे कितने लोगों और गौओं की प्राण रक्षा हो सकती है ? तम्बाकू मानव जीवन की रक्षा के लिये कतई आवश्यक नहीं है, उसमें कोई ऐसा गुण या ऐसा तत्व नहीं है, जिससे मनुष्य को किसी प्रकार का हित हो। उससे जनता का धन, शरीर और समय नष्ट ही होता है और अप्रत्यक्ष रूप से सैकड़ों प्रकार के दुर्गुणों को पोषण मिल रहा है। ऐसी वस्तु को रोकने का प्रयत्न करना प्रत्येक जन-हितकारी शासन का प्रथम कर्तव्य है। रह गई यह बात कि लोगों को इसकी आदत पड़ गई है और बहुत-से लोगों को यह आवश्यक जान पड़ती है, कुछ भी महत्व नहीं रखती। तम्बाकू का सेवन करने वाले भी जानते हैं कि इससे उनको कोई वास्तविक लाभ नहीं होता, उल्टा तरह-तरह के शारीरिक रोग या शिकायतें ही पैदा होती रहती हैं। इसलिए इसको एकदम या धीर-धीरे रोकने का प्रयत्न करना शासन का परम कर्तव्य है।

भूमि की समस्या बड़ी महत्वपूर्ण है और समस्त समाज तथा देश भर से उसका सम्बन्ध है। आजकल किसान अनाज की खेती की तरफ कम ध्यान देकर ऐसी फसलों की तरफ ज्यादा ध्यान दे रहे हैं, जिनसे नकद रुपया अधिक मिलता है। उदाहरण के लिए आजकल चीनी के कारखानों के लिए गन्ना, वनस्पति घी के लिए मूँगफली, बीड़ी सिगरेटों के लिए तम्बाकू की खेती पहले की अपेक्षा दस-बीस गुनी अधिक बढ़ गई है। इसके फल से करोड़ों एकड़ उपजाऊ जमीन जो पहले अन्न पैदा करने के काम आती थी, अब इन कामों में प्रयुक्त होने लगी है और परिणाम यह हुआ कि हमको प्रतिवर्ष पूर्वापेक्षा गम्भीर अन्न-संकट का सामना करना पड़ता है। वह तो अपना मेल-मिलाप और सद्व्यवहार की नीति के कारण संसार के अनेक देशों से हमें सहायता प्राप्त हो रही है और गाड़ी किसी प्रकार खिंची जाती है, पर यह स्थिति न तो सन्तोषजनक है और न इसे सुरक्षित समझा जा सकता है। यदि किसी भी कारणवश दो-चार महीनों को भी यह बाहरी अनाज की 'सप्लाई' रुक जाय तो देश की क्या दशा हो जाय ? उसकी कल्पना करने से भी रोमाञ्च हो जाता है। झूँठे शौकों या व्यसनों के लिए अपनी स्थिति को ऐसी अनिश्चित् और परावलम्बी बना लेना कदापि बुद्धिमानी नहीं माना जा सकता।

मर्यादा और शिष्टाचार का पतन

सामाजिक मर्यादा और कौटुम्बिक शील सदाचार की दृष्टि से भी धूम्रपान एक बहुत अनिष्टकारी प्रवृत्ति है। गाँवों में तो अनेक जातियों के लड़के आठ-दस वर्ष की अवस्था से ही घर के बड़े लोगों के सम्मुख हुक्का पीने लग जाते हैं। इस उम्र में धूम्रपान अधिक हानिकारक और अनावश्यक है, यह सोचकर कभी-कभी उनको रोका भी जाता है, पर जब वे जानते हैं कि यह हमारी जातीय-पञ्चायत का एक प्रधान उपकरण है और आगे चलकर हमको भी इसका प्रयोग करना ही है, तो वे इस निषेध करने पर ध्यान नहीं देते। छोटी उम्र में ही बड़े-बूढ़ों के सम्मुख इस तरह धूम्रपान करने का प्रभाव अन्य बातों पर भी पड़ता है और ऐसे लोगों में गुरुजनों के प्रति सम्मान का अभाव अवज्ञा की भावना बढ़ जाती है। इससे नियन्त्रण और आज्ञा पालन के गुण में भी कम पड़ जाती है और सामाजिक प्रगति में अवरोध होता है।

शहरों में तथा सभ्य और ऊँची कहलाने वाली जातियों में इस समस्या ने और भी गम्भीर तथा घातक रूप ग्रहण किया है। यद्यपि अब इन बीस-पच्चीस वर्षों में धूम्रपान या सिगरेटबाजी की पहले की अपेक्षा बहुत अधिक वृद्धि हो गई है और नव-युवक प्रकट में, खुले आम सिगरेट पीने की आदत अपनाते जाते हैं, तो भी अभी बहु-संख्यक पुराने विचारों के परिवारों तथा अनेक जातियों में भी इस प्रकार की प्रवृत्ति को मर्यादा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के विरुद्ध माना जाता है और यदि उनके जवान लड़के ऐसा आचरण करें तो घर के अन्य सभी सम्बन्धी उनकी आलोचना करते हैं। ऐसे लड़के अशिष्ट, दुर्गुणी और नीचे दर्जे के ही माने जाते हैं। पास-पड़ौस के लोग भी उन पर उँगली उठाते हैं और उनके सामने तथा पीठ-पीछे भी उनको खानदान की इज्जत को घटाने वाला बतलाते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि ऐसी परिस्थिति के युवक आरम्भ में बहुत समय तक खुलकर इस व्यसन को नहीं अपना सकते और कुछ अंशों में इससे बच भी जाते हैं।

इस दृष्टि से विचार करने पर हम धूम्रपान को निश्चित रूप से सामाजिक मर्यादा का विघांतक मानते हैं। जो लड़के या युवक दुर्व्यसन में फँस जाते हैं, वे धीरे-धीरे निर्लज्ज और ढीठ बन जाते हैं और अपने बुजर्गों के प्रति उनका आदर-भाव घट जाता है क्योंकि यह दुर्व्यसन चाहे आरम्भ में दुबका-चोरी ही क्यों न ग्रहण किया जाय, थोड़े समय बाद खुल ही जाता है। तब तक वे इसके आदी बन जाते हैं और छोड़ सकना कठिन हो जाता है। अतः वे घर के बड़े लोगों के आदेश का उल्लंघन करके इसे जारी रखते हैं। अगर ज्यादा कड़ाई की जाती है तो वे और उच्छृंखलता का भाव प्रकट करते हैं, जिससे घर में अशान्ति बढ़ती है और बदनामी होने का भी डर पैदा हो जाता है। तब बड़े लोग उनको तरह देने लगते हैं, पर उनकी निगाह में वे 'नालायक' अवश्य बन जाते हैं। ऐसे लड़के प्रायः होते भी वही हैं, जिनमें विद्या, प्रतिभा, कार्य-क्षमता आदि गुणों की कमी होती है और वे सिगरेटों में अपना नाम करना चाहते हैं।

राष्ट्र की प्रगति उसके सुयोग्य और कर्मठ नागरिकों पर ही आधारित है। जो युवक आरम्भिक जीवन से ही सद्गुणों और योग्यता के कार्यों में कुछ करने के बजाय इस प्रकार की दूषित प्रवृत्तियों में फँसकर अपनी हीनता का परिचय देते हैं, उनसे भविष्य के लिये क्या आशा की जा सकती है ? इस दुर्व्यसन में फँस जाने से उनके बहुत-से साधन नष्ट हो जाते हैं। सिगरेटों में काफी पैसा खर्च होने के कारण उनको खर्च की तंगी बनी रहती है और इस सम्बन्ध में भी उनकी घर वालों से कहा-सुनी होती रहती है। इस कार्य में बहुत-सा समय खर्च हो जाने और अन्य सिगरेटबाजों के साथ तरह-तरह की अन्य बुरी आदतों का भी रंग चढ़ते जाने से उनकी पढ़ाई-लिखाई भी खराब होने लगती है। इस प्रकार घर और बाहर की बदनामी प्राप्त करने के साथ ही उनकी भावी सफलता की सम्भावना भी घटने लग जाती है। इस प्रकार यह एक छोटा-सा दिखलाई पड़ने वाला दुर्गुण लाखों युवकों के लिए तथा उनके समस्त समाज के लिए बहुत हानिकारक सिद्ध होता है।

धूम्रपान के अन्य दूषित तरीके

१. चरस का वृक्ष होता है उसके पत्तों का मैल उतारकर उसको संखिया का पुट देकर गरम करना पड़ता है, जब वह गरम हो जाता है, तब उस तरल पदार्थ को जमा लेते हैं फिर उसके टुकड़े करके चरस के रूप में पिया जाता है।

२. गाँजा का भी पेड़ अधिकतर बिहार में होता है, सूखे हुए पत्तों को लोग पीते हैं।

३. चण्डू--अफीम को गरम करके उसका मैल अलग कर लिया जाता है और अफीम का असली तत्व-माल अलग निकाल लिया जाता है। असली तत्व को फिर से गरम किया जाता है जब गरम होने में उसका गुब्बारा-सा उठने लगता है, तब उस फेन को सलाई पर लपेटा जाता है, तब वह लपेटकर हुक्की (एक प्रकार की चिलम) पर जमाकर दीपक के सहारे पिया जाता है। उसका केवल एक कश खींचा जाता है, इसी कश में उस बपूरे की अफीम का तत्व खिंचकर धुएँ के रूप में पीने वाले के गले में चला जाता है। यह चण्डू कहलाता है।

४. मदक--जौ की भुसी बीनकर धोकर और साफ करके सुखाई जाती है फिर उस सूखी भुसी को जलाया जाता है। उसकी राख को अफीम के तत्व के गुब्बार में धीरे-धीरे मिलाया जाता है। जब उसकी तरल गोली बन जाती है, उस गोली में से थोड़ा-थोड़ा भाग हुक्की (एक प्रकार की लम्बी चिलम) पर रखकर दीपक की लौ के सहारे एक कश खींचकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिया जाता है। इस प्रकार से मदक पिया जाता है।

ये चारों नशे करीब-करीब एक से ही हैं और इन नशों को करके आदमी धुत्त हो जाता है और शान्ति चाहता है। चरस व गाँजे का नशा थोड़ी देर ही रहता है करीब एक घण्टा परन्तु चण्डू व मदक का नशा काफी देर तक यानी ४ घण्टे तक रहता है। तब वह उतरना शुरू होता है और ४ घण्टे में बिल्कुल उतर जाता है, तभी आदमी को दुबारा उसकी तलब लगने लगती है। यदि उसे समय पर यह नशा नही मिलता है तो उसको अजीब-सी थकान महसूस होने लगती है और उसके सब अंग शिथिल पड़ जाते हैं। वह आदमी ऐसा दिखाई पड़ने लगता है, मानों महीनों का बीमार हो अथवा हफ्तों से खाना न मिला हो। चण्डू, मदक पीने वाला व्यक्ति बड़ा आलसी हो जाता है, वह सिर्फ एकान्त में रहकर शान्तिपूर्वक पड़ा रहना पसन्द करता है तथा उसकी भूख भी कम होती चली जाती है। पानी को छूना तक वह व्यक्ति पसन्द नहीं करता जो कि चण्डू अथवा मदक पीता है। चण्डू व मदक पीने वाले के स्वास्थ्य पर इन नशों का इतना भयंकर असर पड़ता है कि वे जवानी में बूढ़े दिखाई पड़ने लगते हैं, नार्मद हो जाते हैं, वे कम से कम २ वर्ष में ही मर जाते हैं।

चरस पीने वाले को दमा बड़ी जल्दी हो जाता है, जो कि उनका प्राण-लेवा साबित होता है। चरस पीने वाले को १० साल में दमा हो जाता है।

गाँजा पीने वाले को साँस का रोग होता है। इसे पीने वाले को ५ साल में साँस की बीमारी हो जाती है।

इन सब नशों के लिए बड़ी पौष्टिक खुराक की आवश्यकता पड़ती है, अगर कोई निर्धन व्यक्ति ये नशे करने लगे तो बहुत शीघ्र ही उसको रोग घेर लेते हैं। ये शोक करने वाले अधिक अनपढ़ और निर्धन लोग जैसे—ताँगे वाले, रिक्शा वाले, ढकेल चलाने वाले होते हैं या शायरों को भी यह शौक लग जाते हैं।

सुलफा, गाँजा व चरस अक्सर पीते हैं—दुश्चरित्र स्त्रियाँ, जिन्हें समाज में वेश्या कहा जाता है, कुटनियाँ व इसी प्रकार की पतित नारियाँ भी ये धूम्रपान करती हैं।

एक तो तम्बाकू में ही निकोटीन नामक जहर काफी बड़ी मात्रा में होता है, इस पर भी सिगरेट के कागज को फाड़कर उसकी तम्बाकू निकालकर उसे अपनी बाँयी हथेली पर रखकर उसमें अफीम की डेली रखकर दो बूँद पानी डालकर सीधे हाथ के अँगूठे से हथेली की तम्बाकू का खूब देर तक मलकर तम्बाकू व अफीम को एक रस कर लिया जाता है। जब तम्बाकू व अफीम बिल्कुल मिल जाती है तो उसकी गोली बनाकर चिलम में रखी जाती है। पीने वाला दोनों हाथों से चिलम पकड़ लेता है और चिलम के नीचे के भाग को अपने मुँह से लगा देता है, एक दूसरा आदमी दियासलाई की सींक जलाकर चिलम की गोली को जलाता है, तब पीने वाला उसके धुएँ के कश अपने गले में पूरी ताकत से खींचता है। इस प्रकार दो-चार कश खींचने से उसका चेहरा आँखें लाल हो जाती हैं और वह व्यक्ति अफीम व निकोटिन के नशे में धुत्त हो जाता है। गाँजे का धुआँ बहुत तीव्र होता है और गले व फेफड़ों को एकदम जला देता है। इस नशे को करने वाले के पास जब तक माल-मलाई खाने को रहता है, तब तक वह कुछ स्वस्थ रहता है, परन्तु जैसे ही उसकी उम्र कुछ बढ़ती है और आर्थिक हालत बिगड़ती है, तो वह अस्सी साल का बुड्ढा प्रतीत होने लगता है, उसकी कमर झुक जाती है, आँखों में गड्ढे पड़ जाते हैं, चौबीस घण्टे खाँसी बड़ी जोर से आने लगती है और वह किसी न किसी भयंकर रोग का शिकार हो जाता है। एक बार जिसे सुलफा-गाँजा पीने का शौक लग जाता है, वह फिर उसके जीवन में उससे नहीं छूटता। उधर घर वाले उससे तंग आ जाते हैं, तब वह सिर धुन-धुन कर अपनी भूल का पश्चाताप करता है, परन्तु फिर हो कुछ नहीं पाता।

धूम्रपान सम्बन्धी कुछ ज्ञातव्य बातें

तम्बाकू में रोगों के दबाने की शक्ति होती है, ऐसा सोचकर फ्रांस के राजदूत श्री जीन निकोटीन ने लोगों को तम्बाकू के प्रयोग की सिफारिश की थी और उन्हीं के नाम पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तम्बाकू में पाये जाने वाले मादक द्रव्य का नाम निकोटीन पड़ा। बाद में वैज्ञानिकों और चिकित्सकों ने पता लगाया तो मालूम हुआ कि यह निकोटीन एक बहुत प्रभावशाली जहर है, जो तम्बाकू का किसी भी प्रकार स्तैमाल करने वाले को तरह-तरह की कैन्सर और हृदय रोग जैसी भयंकर बीमारियों का शिकार बना देता है।

जहाँ लोगों ने तम्बाकू का तरह-तरह से स्तैमाल करना शुरू किया और जैसे-जैसे इसका प्रचार और प्रसार हुआ चिकित्सकों और विद्वानों का ध्यान तम्बाकू के प्रयोग से होने वाले दुष्परिणामों की ओर गया। चिकित्सकों ने सरकारों व जनता को बताया कि तम्बाकू मनुष्य के स्वास्थ्य, मस्तिष्क और धन को किस प्रकार बर्बाद करती है। फलतः विभिन्न शासकों ने समय-समय पर तम्बाकू के प्रयोग को दण्डनीय ठहराया और तम्बाकू प्रयोग करने वालों को भिन्न-भिन्न प्रकार की सजाएँ भी रखी गई हैं। जैसे—

१. तुर्की में जो लोग धूम्रपान करते थे, उनके ओठ काट दिये जाते थे। जो तम्बाकू सूँघते थे, उनकी नाक काट दी जाती थी।

२. जहाँगीर बादशाह ने तम्बाकू का प्रयोग करने वालों को यह सजा रखी थी कि उस आदमी का काला मुँह करके गधे पर बिठाकर नगर में निकाला जाता था।

३. ईरान में भी तम्बाकू प्रयोग करने वालों के लिए कड़े शारीरिक दण्ड की व्यवस्था थी।

× × ×

"इन्साइक्लोपीडिया ऑफ मैडीसिन" (औषधिशास्त्र का विश्व कोष) में लिखा है कि इस आदत से पहले तो कुछ गिल्टियों और अंगों को आराम-सा जान पड़ता है, पर कुछ समय बाद इसकी विपरीत प्रतिक्रिया आरम्भ होती है। कुछ व्यक्ति कहते हैं कि थकान के समय सिगरेट पीने से एक प्रकार का आराम मिलता है, किन्तु वास्तव में इसके फलस्वरूप हम पहले से अधिक थक जाते हैं। यह प्रभाव तम्बाकू के भीतर पाये जाने वाले 'निकोटीन' से होता है, जो थके हुए अंगों को बेजान बना देता है। धूम्रपान करने वालों पर जो भिन्न-भिन्न प्रभाव पड़ते हैं, उसका वास्तविक कारण यही है। इसका सबसे खराब प्रभाव रक्त-संचार पर पड़ता है और रक्त बहाने वाली नाड़ियों में दोष उत्पन्न हो जाते हैं।

× × ×

१९५७-५८ के साल में इम्पीरियल टौवेको कम्पनी ऑफ इण्डिया ने अपनी रिपोर्ट में बताया कि उसने १३२,१२,५८६ रुपये का लाभ कमाया और १६६१६६४० रु० आयकर व सुपरटैक्स एक वर्ष में सरकार को दिया।

× × ×

सरकारी रिपोर्ट में बताया गया है कि पाकिस्तान में सन् १९५७ में ६ अरब ४० करोड़ सिगरेटें बिकीं, जबकि सन् १९५३ में वहाँ ३ अरब ६६ लाख सिगरेटों की ही खपत हुई थी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

समाज में उगे कैंसर के फोड़े

अपने समाज में जागरूकों, मार्गदर्शकों की कमी हो जाने से, सत्प्रवृत्ति संवर्धन के जरूरी प्रयास न चलने के कारण अनेकानेक कुरीतियाँ, दुष्प्रवृत्तियाँ, घुस पड़ी हैं। इनको शरीर रूपी समाज में उगे हुए कैंसर के फोड़े वे समान ही समझना चाहिए। इनके रहते शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक सभी क्षेत्रों में विकृतियाँ ही भरती चली जायेंगी और गई-गुजरी, दीन-हीन दयनीय स्थिति में ही पड़े रहना पड़ेगा। अस्तु जिस प्रकार बीमारियों का प्रकोप होते ही उसके उपचार के लिए तैयार होना पड़ता है, उसी प्रकार समाजगत इन कुरीतियों का उन्मूलन करने के लिए भी हमें मिल-जुलकर प्रबल प्रयास करना चाहिए।

इन दिनों नशेबाजी का प्रचलन दिनों-दिन बढ़ता जाता है। नशे अनेक प्रकार के हैं– भाँग, अफीम, चरस, शराब तो बहुत दिनों से प्रचलित हैं ही, अब हेंरोइन, भारीजुआना, स्मैक नाम से जाने जाने वाले अनेक प्रकार के नए रासायनिक नशे चल पड़े हैं जो अभ्यासी को कुछ ही दिनों में विक्षिप्त स्तर का बनाकर मौत के मुँह में धकेल देते हैं। बीड़ी, सिगरेट, चाय, काफी जैसे नशे तो अब दैनिक व्यवहार में सम्मिलित हो गये हैं। इनके कारण जन-समाज दिनों-दिन अधिक दुर्बल, रुग्ण, सनकी एवं अनगढ़ बनता चला जाता है। स्थिति धीरे-धीरे यहाँ तक पहुँच जाती है कि नशे-बाजों के लिए कोई महत्वपूर्ण कार्य कर सकना तो दूर अपनी निज की गाड़ी खींचते रहना तक कठिन हो जाता है। वे भार-भूत जीवन जीते हुए दिन किसी प्रकार गुजारते हैं। जिस समाज में अधिकांश ऐसे दुर्व्यसनी भरे पड़े हों उसका ईश्वर ही रक्षक है। किसी महत्वपूर्ण दिशा में कुछ कहने लायक प्रगति कर सकना तो उनके लिए सम्भव हो ही नहीं सकता।

नशेबाजी का प्रारम्भ दूसरों की देखा-देखी चस्का चखने की दृष्टि से होता है। कुछ दिनों यार-दोस्तों के साथ चल पड़ता व बढ़ने लगता है। कुछ फुर्ती-चुस्ती जैसी भी लगती है। किन्तु वे अनुभव वैसे ही होते हैं जैसे कि चिड़िया या मछली को जाल में फँसाने के लिए कुछ लालच दिखाया जाता है और बाद में उनका कचूमर निकाल दिया जाता है। चूहे इसी प्रकार से लालच में पिंजड़े में फँसते हैं और दुर्गति कराते हैं।

नशे कुछ ही समय में आदत बन जाते हैं। नशे की वांछित मात्रा न मिलने पर बार-बार नशे की तलब उठती रहती है। न मिलने पर बेचैनी होती है। आदत सुधारने का मनोबल नहीं रहता। आदी कुछ भी उपाय करके अपना व्यसन पूरा करने का प्रयत्न करता है। एक ओर जीवनी शक्ति घटती जाने से काम-धन्धा पूरी मात्रा में ठीक तरह नहीं हो पाता। अतएव आमदनी घटना स्वाभाविक ही है। दूसरी ओर नशे खरीदने के लिए अधिकाधिक पैसों की माँग बढ़ती जाती है। नशे भी बेशर्म होते हैं। नियत सीमा में रहकर सन्तुष्ट नहीं होते। उन्हें और अधिक मात्रा में लेने की आवश्यकता अनुभव होती है। यह अधिकता बर्बादी के और भी निकट घसीट लाती है।

नशेबाजों का स्वास्थ्य खराब होता है। बौद्धिक क्षमता घटती जाती है। काम करने की शक्ति कम होती जाती है। फलतः कर्ज लेने से लेकर घर का सामान और चोरी, उठाईगीरी, जालसाजी जैसे तरीके अपनाकर किसी प्रकार काम चलाते हैं और अपनी प्रतिष्ठा हर किसी की दृष्टि में गिरा लेते हैं। उनका न कोई सम्मान करता है न कोई उन्हें सहयोग देता है। परिवार अस्त-व्यस्त हो जाता है और बच्चे पिता के कुसंस्कारों से प्रभावित होकर अपने लिए कोई गलत तरीका चुन लेते हैं। घर का वातावरण ही ऐसा नहीं रहता जिससे वे सुशिक्षित और सभ्य बन सकें। ऐसी देशा में नशेबाजों की सन्तानें भी चौपट हो जाती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अस्त-व्यस्त, निकम्मे और दुर्व्यसनी लोगों से भरा हुआ समाज न तो स्वावलम्बी रह सकता है और न प्रगति के मार्ग पर अग्रसर हो सकता है।

यह हानियाँ ऐसी हैं जिन्हें सर्वनाशी ही कह सकते हैं। इनमें सबका सब प्रकार से अहित ही है। लाभ तो किसी का कुछ है ही नहीं। इस विनाश विभीषिका में फँसे हुए लोगों को छुड़ाने के लिए और जो अभी बचे हैं, उन्हें सावधान करने के लिए हमें अथक् प्रयत्न करना चाहिए।

नशों के उत्पादन में जितनी जमीन घिरती है, जितनी श्रम शक्ति लगती, जितनी पूँजी लगती है उससे हानिकर विषमता पैदा होती है। फिर इन साधनों में उपयोगी उत्पादन किया जाय तो उससे कितनों के ही कितने ही अभाव दूर किए जा सकते हैं। वैयक्तिक एवं सामूहिक प्रगति का यही मार्ग है कि अवांछनीयताओं से पीछा छूटे और उपयोगी उत्पादनों में अभिवृद्धि हो। इस प्रयास में नशेबाजी बहुत बड़ी बाधा है। आश्चर्य यह है कि यह दुर्व्यसन क्रमशः बढ़ता ही जाता है और हम सब धीमी आत्महत्या का मार्ग अपनाते चले जाते हैं।

नशेबाजी के दुर्व्यसन की जड़ें जितनी गहरी जम गई हैं, उसे देखते हुए वैयक्तिक और सामूहिक आन्दोलनपरक कार्य ही करने पड़ेंगे। विज्ञजनों का जिनसे भी सम्पर्क हो उन्हें इस दुर्व्यसन से हानियाँ समझाने और उनसे विरत होने या बचे रहने का परामर्श दें। टूटे हुए मनोबल वालों को नए सिरे से हिम्मत बँधाएँ और सामूहिक प्रयत्न से इसके लिए समर्थ प्रचार आन्दोलन चलायें। सामूहिक आयोजनों में इसका पूर्ण बहिष्कार होना चाहिए। जिन्होंने नशे का व्यवसाय कर रखा है वे अपने लिए कोई दूसरा धन्धा ढूँढ़ लें अथवा विवश कर दिए जायँ।

नशेबाजी की तरह ही एक और दुर्व्यसन है ठाठ-बाट का। अपने आपको असाधारण सिद्ध करने के लिए कितने ही लोग अमीरी का ढोंग बनाते हैं। इस पर वे ढेरों पैसा खर्च करते हैं। तरह-तरह की डिजाइन के बहुमूल्य कपड़े, कीमती जेवर, सौन्दर्य प्रसाधन तो इसी उद्देश्य के लिए अपनाये जाते हैं कि लोग उन्हें बड़ा अमीर मानें और समझें कि इनके पास इतना अन्धा-धुन्ध पैसा है कि निरर्थक कार्यों में भी उसे आँखें मूँदकर उड़ा सकते हैं। विवाह-शादियों में लोग अपनी नाक ऊँची रखने के लिए ही अन्धा-धुन्ध खर्च करते हैं। इन लोगों का मन दूसरों से अपने को बड़ा सिद्ध करने का होता है। उसी निमित्त फिजूलखर्ची उनका एक व्यसन बन जाता है। सस्ती वाहवाही लूटने के लिए वे ऐसे प्रपंच रचते और सरंजाम जुटाते हैं। इसमें ढेरों पैसा खर्च होता हैं, समय लगता है। इतने पर भी वह उद्देश्य पूरा नहीं होता जिसके लिए यह प्रपंच रचा गया था। लोग वास्तविकता समझ जाते हैं। जो प्रदर्शन में पैसा उड़ाते हैं वे वस्तुतः अमीर नहीं होते। मात्र लबादा ओढ़ते हैं एवं मुखौटा लगाते हैं, जो समझदारों की दृष्टि में छिपा नहीं रहता। खर्चीले व्यक्ति को मूर्ख या बेईमान समझा जाता है। जिस पैसे के अनेकों सदुपयोग हो सकते हैं उसे जो इस प्रकार प्रदर्शनों में उड़ाता है, उसे अहंकारी, नासमझ या बेईमान स्तर का गिना जाता है। साम्यवादी हवा ने अब वास्तविक अमीरों के प्रति भी विरोध का वातावरण बना दिया है। फिर जो नकली अमीर हैं वे तो उपहासास्पद ही बनते हैं।

अच्छा हो 'सादा जीवन-उच्च विचार' की नीति अपनाई जाये। औसत नागरिक स्तर का निर्वाह स्वीकार किया जाय। बचत बैंक में भी जमा की जा सकती है जिसमें अपने को ब्याज मिले और पैसा देश के विकास कार्यों में लगकर सार्वजनिक समृद्धि बढ़ाये।

अपने देश की कुरीतियों में दो और ऐसी हैं जिनने अपना सामाजिक ढाँचा बुरी तरह अस्त-व्यस्त करके रख दिया है। इसमें से एक है जातिवाद के आधार पर ऊँच-नीच की मान्यता, दूसरे नर और नारी के बीच असमानता का व्यवहार। इन्हें नैतिक एवं सामाजिक न्याय के सर्वथा प्रतिकूल ही कह सकते हैं।

मनुष्य मात्र की एक जाति है, इनके बीच भेद-भाव मानने का काई कारण नहीं। वंश, गोत्र की अपनी पहचान किसी को रखनी हो तो उसे रखा भी जा सकता है। पर इस कारण किसी को ऊँचा बनने का अहंकार करने या दूसरे को नीचा ठहरानें, अपमानित करने का कोई कारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं। कर्मों के आधार पर ही किसी को ऊँच-नीच ठहराया जा सकता है। पर जो एक साथ एक पड़ोस में रहते हैं जिनका आचार व्यवहार एक जैसा है, उनके लिए ऐसे भेद-भाव करना सर्वथा अनुचित है, जिसमें वे अपनी एक विशिष्ट श्रेणी ही मानने लगें। इस प्रकार तो समाज टुकड़े-टुकड़े हो जाएगा और उस भेद-भाव के कारण राष्ट्रीयता, मानवता के बीच अनेकों दीवारें खड़ी हो जायेंगी। ऊँच-नीच की प्रचलित मान्यता ने अनेकों को दूसरे धर्म अपनाने, विद्रोह पर उतारू होने के लिए विवश कर दिया है।

स्त्री-पुरुष के, लड़की-लड़के के बीच भेद-भाव बरतने का दुष्परिणाम यह हुआ कि आधी जनसंख्या घरों में कैद होकर रह गई। नारी स्वावलम्बन गँवा बैठी और नर के गले का पत्थर बनकर भार रूप रहने लगी। उसकी स्वावलम्बन क्षमता चली जाने से आड़े समय में उसे दुर्गति का शिकार बनकर रहना पड़ता है। परावलम्बी अपने और दूसरों के लिए भार-भूत होकर रहते हैं। इस विभेद के कारण राष्ट्रीय प्रगति में भारी बाधा पड़ती है। घूँघट में बन्द रहने वाला प्राणी एक प्रकार से पशु-पक्षियों से गया-बीता बन जाता है। पशु-पक्षी कम से कम निर्बाध रूप से कहीं भी जा तो सकते हैं। उनके मुँह पर ढक्कन तो नहीं लगता। यों कानून में, संविधान में नर और नारी की समता स्वीकार कर ली गयी है, पर व्यवहार में तो मध्य काल की दासी प्रथा ही चल रही है। इसी प्रकार न्याय की तराजू में मनुष्य मात्र को मानवी मौलिक अधिकार सभी को समान रूप से दिए हैं पर व्यवहार में ऊँच-नीच का भेदभाव अभी भी चलता है। रोटी-बेटी के व्यवहार में यह प्राथमिकता स्थान-स्थान पर उजागर होती है। आधी जनसंख्या नारी के रूप में अपंग बन गई। पुरुषों की आधी जनसंख्या में भी प्रायः आधे अछूत समझे जाते हैं। इस प्रकार अपने को सवर्ण कहने वाले हिन्दू मात्र चौथाई संख्या में रह जाते हैं। इनके बीच में परस्पर उपजातियों के अनेक भेद हैं। सभी अपने को छोटे दायरे में आबद्ध अनुभव करते हैं। अपने वर्ग का पक्षपात करते हैं। फलतः विलगाव की भावना जड़ पकड़ती जाती है। इसे राष्ट्रीय दुर्बलता का एक भयानक पक्ष समझा जा सकता है। इन भेद-भावों को दूर करने का प्रयत्न होना चाहिए। मनुष्य मात्र को मानवी मौलिक अधिकारों का अवसर मिलना चाहिए। किसी को भी अन्याय का शिकार नहीं होने देना चाहिए।

अन्ध विश्वासों ने चिन्तन की विशुद्धता को विकृत करके रख दिया है। भाग्यवाद की समर्थक अनेकों धाराएँ फैली दीख पड़ती हैं। विदेशी हम पर हँसते हैं और वह 'देवताओं के गुलाम' कहते हैं। ग्रह, दशा के फेर में अनेकों लोग डरे-सहमे रहते हैं। विवाह-शादियों में आये दिन अड़ंगे लगते हैं। मुहुर्तों की अनुकूलता, प्रतिकूलता देखते रहने में ढेरों उपयोगी समय निरर्थक चला जाता है। टोने-टोटकों की मान्यता से अनेकों में परस्पर द्वेष, अन्धविश्वास पनपता है। यह अन्ध विश्वास चित्र-विचित्र रूप में अपने-अपने क्षेत्र और वर्ग में जड़ जमाये हुए देखे जाते हैं। यह अन्ध-विश्वास किसी विषय पर सही रीति से चिन्तन कर सकना कठिन बना देते है। देवी-देवताओं का प्रकोप होने, उन्हें मनाने के लिए चित्र-विचित्र कर्म-काण्डों का सिलसिला चलते रहने से मनुष्यों का ढेरों श्रम और धन बर्बाद होता रहता है। आशंकायें पनपती रहती हैं। नर बलि जैसे वीभत्स काण्ड तक होते रहते हैं।

आवश्यकता इस बात की है कि चिन्तन क्षेत्र में घुसी हुई मूढ़ मान्यताओं और लोक व्यवहार में गहरी जड़ जमाई हुई इन कुरीतियों का पूरी तरह उन्मूलन किया जाय। इसी आधार पर सही चिन्तन और सही व्यवहार का पथ प्रशस्त होगा। व्यक्ति और समाज का सही मार्ग-दर्शन करना भी एक बढ़ी-चढ़ी लोकसेवा है। विचारशीलों को इसके लिए उत्साहपूर्वक कटिबद्ध होना चाहिए। विचार-क्रान्ति की बागडोर आज उन्हीं के हाथ है।

नशेबाजी का आत्मघाती शिकंजा

दुर्व्यसनों में नशेबाजी का शौक ऐसा है जिसका न उपयोगिता से कोई सम्बन्ध है और न किसी आवश्यकता की पूर्ति होती है। छूत की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बीमारियाँ ही नहीं, आदतें भी होती हैं। एक को देखकर दूसरा सीखता है। यह आहार-विहार रहने-सहने के सम्बन्ध में ही नहीं, आदतों और व्यसनों में भी यह नकल करने की प्रथा पूरे जोरों पर है। तोता बोली सीख लेता है और सिखाये हुए शब्द रटने लगता है। बन्दर सामने होने वाली हरकतों की नकल उतारने लगता है। बच्चे भी प्रायः वैसा ही कुछ करते रहते हैं। आश्चर्य इस बात का है कि समझदार लोग भी इस छूत की बीमारी से अपनी आदतें बिगाड़ते और असीम हानि उठाते देखे जाते हैं।

नशेबाजी ऐसी ही आदत है जिसका किसी प्रकार समर्थन नहीं किया जा सकता है। उसे अपनाने में बड़े आदमियों द्वारा अपनायी गई शान-शौकत का अनुकरण ही मूल कारण होता है। स्वाद जैसी कोई बात भी उसमें नहीं होती है। समझने-समझाने का प्रयत्न किया जाय तो इन दिनों बहुप्रचलित मद्यपान की अनेकानेक हानियाँ गिनाई जा सकती हैं। पाचन तंत्र उनके कारण बुरी तरह क्षतिग्रस्त होता है। मानसिक कुशलता घटती है और कुकल्पनाएँ उस क्षेत्र में डेरा डालती-बुद्धिमत्ता का अपहरण करती हैं। पैसे की बर्बादी प्रत्यक्ष है। कार्यक्षमता में कमी होती जाती है। नशेबाजों का सम्मान चला जाता है। उनकी प्रामाणिकता पर विश्वास नहीं रहता। दरिद्रता बढ़ती है और पारिवारिक कलह, असन्तोष उत्पन्न करती है। बच्चे जो देखते हैं सो सीखते हैं। नशेबाज आमतौर से दुर्गुणी और आदतों के आदी देखे गये हैं। आयुष्य घटता है। दुर्बलता और रुग्णता का शिकार रहना पड़ता है। ऐसी-ऐसी अनेकों हानियाँ गिनाई जा सकती हैं। इतने पर भी लोग इस दुर्व्यसन को अपनाते और बढ़ाते ही जाते हैं।

इन हानियों को समझने-समझाने का प्रयास भी प्रायः निष्फल ही रहता है क्योंकि प्रचलन का अनुकरण करने में जो कौतुक-कौतूहल का मजा आता है। वह मूर्खतापूर्ण होते हुए भी रुचिकर लगता है। तथाकथित बड़े लोगों में कुछ न कुछ अच्छाइयाँ भी होती हैं उन्हें कोई नहीं सीखता किन्तु बुराइयों की नकल करते हुए समझा जाता है इस आधार पर हम भी बड़ों की बिरादरी में सम्मिलित हो सकेंगे।

शालीनता की मर्यादाओं को तोड़ना भी इन दिनों एक प्रकार की प्रगतिशीलता मानी जाने लगी है। और ऐसा करने वाले मूँछ ऐंठते, अपने को साहसी बताते और औचित्य के प्रतिपादकों को चुनौती देने में अपनी शान समझते हैं। उच्छृंखलतायें ऐसे ही मानसिक धरातल पर उपजती हैं। नशेबाजी के दुर्व्यसन को अपनाये जाने में भी ऐसी ही दुष्प्रवृत्ति चरितार्थ होती देखी जाती है। इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि नशेबाजी बढ़ती ही जाती है और धीमी आत्महत्या जैसी इस दुष्प्रवृत्ति के सहारे मनुष्य जाति आये दिन अनेकानेक हानियाँ सहती हैं। इसे कहते हैं कि अदूरदर्शिता, विवेकहीनता लाभ की बात सोचकर ऐसा बर्ताव करने वालों की बात तो एक सीमा तक समझ में आती है पर जिसमें झूठी शान दिखाने, क्षणिक उत्तेजना के आकर्षण में अपने को एक बुरी आदत का गुलाम बना लेने के अतिरिक्त और कुछ भी सार नहीं दीखता, उसे लेकर क्यों अपनाते चले जाते हैं, समझना कठिन है।

नशों में सर्वाधिक हानिकारक एवं प्रचलित शराब है। उसकी संसार भर में कितनी खपत है इसके भयानक आँकड़ों पर दृष्टिपात करने से पूर्व अपने गरीब देश की स्थिति का पर्यवेक्षक किया जाय तो भी रोमांच खड़े हो जाते हैं।

भारत में प्रतिवर्ष पौने सात करोड़ लीटर वैध शराब बनाई जा रही है। इसके लिए अतिरिक्त ६७ लाख रुपये की शराब आयात की जाती है। औसतन ६४ करोड़ रुपये वैध शराब पर एवं ५२ करोड़ रुपये अवैध शराब के नियन्त्रण पर शासकीय खजाने से खर्च होते हैं। अवैध उत्पादन के आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं जो इससे करोड़ों लीटर अधिक है।

मात्र हमारे राष्ट्र में इस मद्य पदार्थ के सेवन से गतवर्ष लगभग १० करोड़, ६० लाख श्रमिक घण्टों की हानि हुई। इसके अतिरिक्त दुर्घटनाओं व मरने वाले शराबी परिवारों की सहायतार्थ खर्च धनराशि से राष्ट्र की हानि १ अरब ४० करोड़ रुपये होती है। देश की जनसंख्या के केवल १०-१५ प्रतिशत भाग द्वारा शराब पीने से जहाँ सरकार को लगभग ५०० करोड़ रुपये की राशि राजस्व रूप में प्राप्त होती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है वहाँ पीने वालों के लगभग २५ करोड़ रुपये नष्ट हो जाते हैं। हमारे देश में ५५ प्रतिशत व्यक्ति इसके चंगुल में हैं। इनमें से २३ प्रतिशत नित्य बेहोश कर देने वाली मात्रा में पी जाते हैं। इस प्रकार मात्र भारत में ही करीब दस करोड़ व्यक्ति दस अरब रुपये राशि की वैध-अवैध शराब को नित्य पीते हैं।

शराब के बाद तम्बाकू का नम्बर आता है। वह बेहोश तो नहीं करती पर अन्य प्रकार की हानियों में वह पीछे नहीं वरन् आगे है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद् द्वारा एकत्रित किये गये आँकड़ों के अनुसार धूम्रपान के कारण देश में प्रतिवर्ष डेढ़ लाख व्यक्ति अकाल मृत्यु के ग्रास बन जाते हैं। इन डेढ़ लाख लोगों की कष्टदायक बीमारियों पर प्रतिवर्ष सत्तर करोड़ रूपये परोक्ष रूप में खर्च हो जाते हैं। इन बीमारियों के कारण अस्पतालों में दस हजार पलंग घिरे रहते हैं तथा धूम्रपान से होने वाले रोगों के कारण सैकड़ों मजदूर कारखानों में अनुपस्थित रहते हैं जिससे प्रतिवर्ष देश को २६० करोड़ रुपये की हानि उठानी पड़ती है। व्यक्तिगत रोजगार का नुकसान अतिरिक्त है।

भाँग अफीम, गाँजा, चरस आदि पुराने और चित्र-विचित्र रसायनों के बनाने और कैमिस्टों की दुकान पर बिकने वाले नशों की हानियाँ शराब और तम्बाकू के अतिरिक्त हैं। उन सब को जोड़ा और हानियों का अनुमान लगाया जाय तो प्रतीत होता है कि समझदार कहलाने वाला मनुष्य नासमझ उन्मत्तों की तरह धीमी आत्महत्या पर उतारू है।

अफीम की हानियाँ भी न्यूनाधिक मात्रा में अन्य नशों की तरह ही हैं। वह भी थके और निराश व्यक्ति को तात्कालिक उत्तेजना देती है। उसकी एक विशेषता संज्ञा-शून्य कर देने की भी है। तनावग्रस्त इसके लिए लालायित रहते हैं, पीछे उन्हें कितनी ही हानि क्यों न उठानी पड़े। नींद लाने और दर्द की अनुभूति कम करने में यह संज्ञाशून्यता किसी कदर राहत पहुँचाती है। कामुक प्रसगों में उसकी उत्तेजना कुछ सुखद लगती है। यही कारण है कि अफीम का प्रचलन तो गुप-चुप कहीं दवाओं के नाम पर चलता रहता है। शराब और तम्बाकू की तरह उसका प्रयोग खुलेआम नहीं होता इसके लिए सर्वसाधारण की निगाह में उसकी हानि उतनी अधिक नहीं आती तो भी विघातक परिणामों से मनुष्य समाज को आहत करने में वह अन्य नशों में से किसी के पीछे नहीं।

बुद्धिमान, सम्पन्न, पदासीन, प्रतिभावान, प्रतिष्ठित लोग समझदार ही होते हों, यह आवश्यक नहीं। नशेबाजी का दुर्व्यसन जितना पिछड़े स्तर के नासमझ कहलाने वाले लोगों में है उससे कहीं अधिक मात्रा में यह कुटेव उन लोगों पर सवार है जो अपने को प्रगतिशील कहने की डींग हाँकते हैं। आत्मघाती अवांछनीयताओं का क्षेत्र कितना व्यापक है, इसका एक उदाहरण नशेबाजी के रूप में सामने है। नासमझी के सुविस्तृत क्षेत्र का अनुमान लगाने पर यह आवश्यकता और भी अधिक बढ़ी-चढ़ी दीखती है कि लोक मान्यताओं के परिशोधन के लिए इन दिनों कितना अधिक प्रयास किया जाना चाहिए।

धीमी आत्महत्या : नशेबाजी

आत्महत्या का एक बहुप्रचलित तरीका नशेबाजी है। इसे देखा-देखी यारबाशी में आरंभ किया जाता है। उस समय वह एक फैशन भर मालूम पड़ता है और प्रतीत होता है कि जो दूसरे लोग नहीं कर पा रहे, वह हम करते हैं। इसमें उन दिनों शान-शेखी भी मालूम पड़ती है और साहसिकता चरितार्थ करने जैसा अनुभव भी होता है। इसके अतिरिक्त एक और भी बहुचर्चित लाभ प्रतीत होता है कि नशा पीने से तत्काल कुछ फुर्ती जैसी मालूम भी होती है और अपने को धनवान होने जैसा आभास भी मिलता है। फिजूलखर्ची इन दिनों अमीरी की एक निशानी जो है और साथ ही यह मान्यता भी बनने लगी है कि फिजूलखर्ची अमीरी की ही नहीं, बड़प्पन की निशानी भी है। यही हैं वे लाभ जो नशेबाजी का चस्का लगाते हैं। किन्तु यह अपनाया गया फैशन थोड़े ही दिनों में भूत-पिशाच जैसा बनकर उसे बेतरह अपने चंगुल में जकड़ लेता है, जिसने उसे खेल-खेल में फैशन समझकर अपनाया और मुँह लगाया था।

पुराने, हल्के नशेबाज चिलम, तम्बाकू पीकर अपना काम चला लेते थे। पर वह बात अब पुरानी पड़ गई। बीड़ी भी सस्ते मोल का होने के कारण गरीबों की बनकर रह गई। तम्बाकू ही पीनी हो तो उसे सिगरेट के रूप में पिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

बिना शान नहीं बनती। जवानी ढलते-ढलते वह बढ़ी हुई आदत सिगार माँगती है और अपेक्षाकृत अधिक गहरे और अधिक देर तक टिकने वाले नशों की माँग करती है।

धूम्रपान को उद्धत बिरादरी में गाँजा, चरस आदि की गणना होती है। मदिरा भी इसी विरादरी का है। पेय नशे में भाँग की गणना होती है और इससे कुछ कदम आगे बढ़कर अफीम की बारी आती है। यह खर्चीली और हानिकारक होते हुए भी पुरानी फैशन की चीज हो चली। हर एक में नई फैशन की माँग। कपड़ों की डिजाइनें हर साल बदलती हैं। जेबर भी पुराने ढंग के और नये ढंग के होते और बदले जाते रहते हैं। नशों में जो पुराने ढर्रे के हो गये, जिसकी जानकारी या पीने की आदत बहुतों को है, उसे नये फैशन की—नयी शान-शौकत की वस्तु कैसे माना जाये ? फिर भी वे सभी हल्की आत्महत्या की चीज हैं। अन्तर तलवार छुरी, उस्तरे, कैंची जैसा ही है। इनमें से भी जान ली या गँवाई जा सकती है नये नशों में अब हैरोइन एवं नींद लाने वाली, मस्ती चढ़ाने वाली अँग्रेजी फैशन की दवाओं का प्रचलन हुआ है। वे अधिक महँगी भी हैं और अधिक घातक भी।

सभी नशे न्यूनाधिक मात्रा में जीवनी शक्ति का क्षरण करते और मनुष्य की श्रमशीलता एवं बौद्धिक कुशाग्रता पर सीधा आघात करते हैं। भीतर ही भीतर वे मनुष्य को खोखला करते हैं। निष्क्रिय, निस्तेज बनाते हैं। स्थिति ऐसी बन जाती है कि नशा लिए बिना साधारण नित्यकर्म करना भी कठिन हो जाता है। यहाँ तक कि प्रातःकाल सिगरेट, बीड़ी पीये बिना मल त्याग जैसा नित्यकर्म भी नहीं बन पड़ता। नशा उतरते ही मनुष्य गोबर के लौंदे जैसा निष्क्रिय हो जाता है। उसे पिये बिना एक प्रकार की बेचैनी उठती है। उसे दबाने के लिए नया डोज चाहिए।

शरीरशास्त्रियों ने बहुप्रचलित धूम्रपान जैसे नशे को फेफड़े, आमाशय, यकृत, गुर्दे, मस्तिष्क आदि महत्त्वपूर्ण अवयवों में विषाक्तता भर देने वाला और उनमें अनेक प्रकार के रोग भर देने वाला बतलाया है। समुन्नत देशों की सिगरेटों पर छपा रहता है कि वह स्वास्थ्य के लिये घातक है पर जिन्हें जल्दी मरने की उतावली है, जिन्हें बीमारियाँ निमन्त्रण किए बिना चैन नहीं, उनके लिए किसी की भी सिखावन क्या काम आ सकती है। कैंसर की बढ़ोत्तरी में धूम्रपान को निमित्त कारण बताया गया है। पर कैंसर का कष्ट आश्रितों को बिलखता छोड़ मरने की अपेक्षा जिन्हें अपना शौक पूरा करना अधिक महत्त्वपूर्ण प्रतीत होता है; उनके लिए किसी तथ्य या तर्क के सहारे लत छोड़ने के लिए सहमत करना कठिन है।

जब चीन पर अँग्रेजों का शासन था तब उस देश की जनता को येन-केन प्रकारेण अफीम की लत लगाई गई थी। फलतः उस देश के नागरिक निष्क्रिय और दरिद्र हो गये थे। नशे के लिए पैसा न मिलने पर वे अपराधी दुष्प्रवृत्तियाँ अपनाने लगे थे। चीन ने स्वतन्त्र होते ही सर्वप्रथम उस लत पर अंकुश लगाकर देश की इस महामारी पर नियन्त्रण किया था। भारत जैसे गरीब देश को हर प्रकार के नशे पर ऐसा ही कठोरतापूर्वक अंकुश लगाना चाहिए। स्वतन्त्रता आन्दोलन के समय गाँधीजी के नेतृत्व में नशेबंदी को भी एक प्रधान कार्यक्रम बनाया गया था। वह आवश्यकता अब भी यथावत् बनी हुई है।

परिस्थितियों पर दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि शराब धूम्रपान की जगह लेती जा रही है। गरीबों से लेकर अमीरों तक सभी अपने-अपने स्तर की शराब पीते हैं। आदिवासियों को तो कच्ची शराब बनाने की छूट तक मिली हुई है। अफीम की तो खेती होती है और उसकी खपत भी राजस्थान, मध्य प्रदेश आदि से घटने का नाम नहीं ले रही है। यह कुटेब इस बात का प्रमाण है कि हम अपने देश की जनता को शारीरिक, मानसिक दुष्टि से समर्थ, सक्षम बनाने में कोई रुचि नहीं ले रहे हैं।

हैरोइन, पीली शक्कर तथा ऐसे ही अन्य महँगे नशे अपने दुष्परिणाम और भी अधिक तेजी से चमत्कार दिखा रहे हैं। आदत लगने के बाद कुटेब छूटने का नाम नहीं लेती और मनुष्य की स्वाभाविक क्षमताओं को बुरी तरह तोड़-मरोड़ कर रख देती है। युवावस्था में ही बुढ़ापा घेर लेता है और विक्षिप्तता के लक्षण फूट पड़ते हैं। ऐसे व्यक्ति जीवन के किसी भी क्षेत्र में सफल बन सकेंगे, इसकी आशा नहीं की जा सकती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तस्करी के लिए कुछ समय पहले सोना, चाँदी ही प्रधान रूप से चलते थे। अब नशों के बादल देश में अन्धाधुन्ध प्रवेश करते जा रहे हैं। नेपाली गाँजे का शोर अभी कम नहीं हुआ था कि पाकिस्तान के रास्ते योरोप और मध्य एशिया के देशों से हैरोइन जैसे अधिक मँहगे और घातक नशे दौड़ते चले आ रहे हैं। यह हमारे दुर्भाग्य और अन्धकारपूर्ण मस्तिष्क की निशानियाँ हैं। अच्छा हो, इस धीमी आत्महत्या से हम अपने देश को बचाने का प्रयत्न करें।

नशेबाजी जैसे दुर्व्यसन कड़ाई से रोकें

देश के भविष्य का—भावी पीढ़ी के उत्कर्ष अभ्युदय का विचार करते हुए मूर्धन्य लोग मात्र इतना सोचते हैं कि अधिक सुविधा-साधन किस प्रकार बढ़ाये जायँ। जिससे अभाव, दरिद्रता की कठिनाई से पार हुआ जा सके। आर्थिक सुविधा साधनों की अभिवृद्धि होनी ही चाहिए क्योंकि दरिद्रता के रहते उन कठिनाइयों से उबरा नहीं जा सकता जो इन दिनों वैयक्तिक एवं सामूहिक जीवन में अभिशाप बनकर रह रही हैं।

उपरोक्त प्रयासों के अतिरिक्त कुछ ऐसे छिद्र भी हैं, जिनमें होकर प्रस्तुत उपलब्धियों का एक बड़ा भाग निरर्थक चला जाता है। होता यह भी है कि निरर्थक कामों में फँस जाने के कारण वर्तमान संसाधनों का उपयोग आवश्यक कार्यों में नहीं हो पाता फलतः दरिद्रता अपना स्थान छोड़ने में टस से मस नहीं होती।

कहावत है अन्धी पीसें कुत्ता खाय। इसी में मिलती-जुलती एक उक्ति और भी है। अन्धा रस्सी बटता जाय, बछड़ा उसको खाता जाय। छलनी में दुहे, करम को रोवै, वाली कहावत भी इसी भूल की ओर संकेत करती है। यह सरकारी वृक्षारोपण जैसा प्रयोग हुआ। जिसमें हर साल लाखों, करोड़ों पेड़-पौधे बड़े उत्साह के साथ लगाये जाते हैं। पर उनकी सिचाई-रखवाली न होने के कारण उनमें से अधिकांश नष्ट हो जाते हैं। रखवाली की दिशा में ध्यान न देने वाले किसान या माली भी खाली हाथों रहते हैं। उसका खाद, पानी लगाने का परिश्रम भी प्रायः निरर्थक चला जाता है।

आजीविका अभिवर्धन के साथ-साथ हमें यह भी देखना होगा कि जो किसी प्रकार कमाया जाता है उसका सदुपयोग ठीक प्रकार बन पड़ता है या नहीं। यदि उपार्जन, अपव्यय के छिद्रों में होकर बह रहा होगा तो उत्पादन अभिवृद्धि के प्रयासों से वह लाभ न मिल सकेगा जो आसानी से मिल सकता है।

व्यापक दुष्प्रवृत्तियों में से एक है—नशेबाज़ी। इसका प्रचलन घट नहीं बढ़ रहा है। धर्मोपदेशकों की तरह हम उसे पाप तो बताते हैं और छोड़ने के लिए कहते भी हैं। पर यह नहीं सोचते कि यह अभिशाप जिन स्रोतों से उभरता है उनकी रोकथाम के लिए कुछ किया जाय। होता यह है कि किसी अजनबी अजूबे को अपनाते हुए दूसरों को देखकर साधारण लोगों का भी मन चलने लगता है। देखा-देखी के शौक में नये लोगों को भी नशा पीने की आदत पड़ती है। पीछे वह कुछ ही समय में अपनी जड़ें इतनी गहरी जमा लेती है कि स्वभाव का अंग बनी उस कुटेब से पीछा छुड़ाना कठिन हो जाता है।

नशों की चरम अभिवृद्धि तो हैरोइन, हशीस से भी आगे बढ़ गई है और अपने पैने पंजों में कसकर मनुष्य को बेतरह चूस रही है। पर इसके अतिरिक्त साधारण प्रचलन में तम्बाकू और शराब के दो नशे ऐसे हैं जो दिन-दूनी रात चौगुनी गति से बढ़ रहे हैं। इनकी हानियाँ ऐसी हैं जो आँखों से हाथी की तरह तो नहीं दीखतीं। पर क्षय, कैन्सर के विषाणुओं की तरह भीतर ही भीतर खोखला करती रहती हैं और जोंक की तरह तब छूटती हैं जब अपना पेट पूरी तरह भर लेती हैं।

मनुष्य नशा पीता रहता है और मनुष्य का इस कुटेब से शरीर खोखला होता है। जीवनी शक्ति चूक जाती है। ढाँचा तो खड़ा रहता है पर उसके भीतर जो सार तत्व था। वह सभी समाप्त हो जाता है। जीर्ण-शीर्ण वयोवृद्ध की तरह-विक्षिप्त अर्ध पगले की तरह किसी प्रकार मौत के दिन पूरे करता है किन्तु ऐसा कोई पुरूषार्थ नहीं कर पाता जिससे खुशहाली बनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहे और प्रगति के लिए कोई बढ़-चढ़कर काम किया जा सके।

ज्यों-ज्यों समय बीतता जाता है, नशा अपनी मात्रा बढ़ाने की माँग करता है। यह आदत भी तृष्णा की तरह बढ़ती ही जाती है। कम पीने से नशा नहीं होता। अधिक मात्रा के लिए अधिक पैसा चाहिए। इतना ही नहीं उसका हानिकार प्रभाव भी बढ़ता ही जाता है। शरीर की जीवनी शक्ति समाप्त करने में बढ़ी हुई मात्रा अपना विनाश क्रम अधिक तेजी से चलाती है। इस प्रभाव से यदि आदी जहर पीने की तरह मर जाया करे तो कई व्यथाओं से बच जाया करे। एक तो अशक्त शरीर को टूटी गाड़ी की तरह घसीटना पड़ता है। आये दिन बीमारियों का प्रकोप होता रहता है, जिसमें घर वालों को परचिर्या में घिरना पड़ता है। अपना काम छूटता है। कुटुम्बियों में से किसी को उसकी देखभाल करनी पड़ती है। इसके अतिरक्त बीमार को स्वयं कष्ट-पीड़ाओं में कराहना पड़ता है। नशा तो भी नहीं छूटता। उसके लिए अलग और दवादारू के लिए अलग पैसा चाहिए। दोनों ओर से दुहरी मार पड़ती है। इसमें रोगी ही नहीं उसका परिवार भी तिलमिला जाता है। जीवित मृतक की तरह नशेबाज अपने मौत के दिन तो पूरे करता है और स्वाभाविक आयुष्य में भारी कटौती हो जाती है।

नशेबाजी की आर्थिक स्थिति सदा खराब रहती है। शरीर और मस्तिष्क पूरी तरह काम नहीं करता। इसलिए कमाई उतनी हो नहीं सकती जितनी कि होनी चाहिए। नशे खरीदने का खर्च, बीमार रहने पर दवादारू का खर्च, यह दोनों ही मिलकर इतने हो जाते हैं कि जो कमाते हैं वह इसी निमित्त ही लग जाता है। परिवार के लिए उतना बचता ही नहीं जिसमें वे अपनी अभीष्ट आवश्यकताऐं पूरी कर सकें। ऐसी दशा में परिवार के सभी सदस्यों का विशेषतया बाल-बच्चों का भविष्य अन्धकारमय बन जाता है। उन्हें न समुचित संरक्षण मिल पाता है और न नितान्त आवश्यक वस्तुओं को जुटा पाता है। कई बार अभिभावकों की देखा-देखी बच्चे भी नशेबाज हो जाते हैं या दूसरी कुटेबों में फँस जाते हैं।

नशेबाज व्यक्तित्व की दृष्टि से अप्रामाणिक माना जाता है। जिसे अपनी प्रतिष्ठा, अर्थ-व्यवस्था, स्वस्थता, परिवार गत भविष्य की कोई चिन्ता नहीं उसे गैर जिम्मेदार ही कहना चाहिए। पूरा परिवार उन्हें उपेक्षा एवं आक्रोश की दृष्टि से देखता है। समझदार मित्रों में उनकी निन्दा-भर्त्सना होती है। बाहर के जिन लोगों को पता चलता है वे पास बैठने या बिठाने से भी कतराने लगते हैं। उन्हें भय रहता है कि छूत की बीमारी की तरह इनका प्रभाव अपने ऊपर या अपने परिवार के ऊपर न पड़ने लगे, साथ रहने से अपना स्वभाव भी ऐसा ही न बनने लगे और अप्रतिष्ठा न होने लगे। नशेबाज अक्सर मित्र परिचितों से कर्ज माँगते रहते हैं। कहने को तो कर्ज भले ही कहा जाय पर वे वस्तुतः दान माँगते हैं। क्योंकि वापिस लौटने को तो कोई व्यवस्था ही उनके पास नहीं होती नशे उत्पादन में जो पूँजी या जमीन घिरती है उससे उपयोगी उत्पादन में रुकावट ही पड़ती है।

देश की समृद्धि यदि बढ़ानी है और भविष्य को उज्ज्वल बनाना है तो उतना ही पर्याप्त नहीं कि सुविधा, साधन बढ़ाये जायँ वरन् यह भी आवश्यक है कि जिन कारणों से व्यक्तित्वों और साधनों का अपव्यय होता है उन नशेबाजी जैसे दुर्व्यसनों को कड़ाई के साथ रोका भी जाय।

प्रत्यक्ष पिशाचिनी—नशेबाजी

आश्चर्य इस बात का है कि बहुत से लोग इस दुर्भाग्य को जान-बूझकर ओढ़ते हैं। इतना ही नहीं उसके लिए पैसा भी खर्चते हैं। इस दुर्भाग्यपूर्ण कदम का नाम है—नशेबाजी।

नशेबाजी एक बुरे किस्म का दुर्व्यसन है जो आता तो बुलाने पर ही है, किन्तु जब उससे मैत्री जुड़ जाती है तो फिर छुड़ाये नहीं छूटती। यहाँ तक कि दिन-दिन अपना स्वास्थ्य, धन और समझ तीनों का ही निरन्तर अपहरण करती रहती है। काटने वाले शत्रुओं से आमतौर से लोग पीछा छुड़ाने का प्रयत्न करते हैं। सिर में जुएँ, चारपाई में खटमल, नाली में मक्खी-मच्छर, घर में साँप-बिच्छू जब डेरा डाल लेते हैं तो मनुष्य चौकन्ना हो जाता है और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उनसे पीछा छुड़ाने के लिये हर सम्भव उपाय करता है। किन्तु नशेबाजी का दुर्व्यसन ऐसा है जो मित्र की तरह बुलाया जाता है किन्तु बदले में वह जैसा करता है वैसा बुरे से बुरा शत्रु ही इस प्रकार का छल करते नहीं देखा जाता है।

नशों में कभी बहुप्रचलित तम्बाकू थी, पर अब उसका स्थान चाय-कॉफी ने ले लिया है। इन्हें लोग चावपूर्वक पीते और सत्कारपूर्वक पिलाते हैं। यह तो हुई आवभगत की बात । बाद में इनका अड्डा ऐसा जम जाता है कि उनके बिना प्रातःकाल का शौच तक नहीं होता। पेट इतना दुर्बल हो जाता है कि इन नित्य क्रियाओं को भी चाबुक खाये बिना करने को तैयार नहीं होता। पाचन तंत्र शिथिल होता जाता है खुश्की बढ़ती जाती है और आदत इस कदर हावी हो जाती है कि उनका हण्टर खाये बिना शरीर और मस्तिष्क अपने दैनिक कृत्य निपटाने में भी समर्थ नहीं होता।

यह सिपाही प्यादे हैं तो भी व्यक्ति को कैन्सर जैसे रोगों के शिकंजे में कस देते हैं। खाँसी, दमा, अनिद्रा, रक्तचाप इनकी अधिकता में होने लगते हैं। जीवनी शक्ति इस कदर चुक जाती है कि दवादारू भी काम नहीं करती। अभ्यस्त स्वेच्छापूर्वक अकाल मृत्यु के मुँह में घुसता जाता है।

इनसे ऊँचे दर्जे के अफसर हैं—अफीम, गाँजा, चरस आदि। उनका पद और रौबदाब इतना बड़ा है कि जिन्हें यह पकड़ लेते हैं, उसमें इतनी हिम्मत भी नहीं रहती कि हुकम या परवाना पाये बिना दैनिक क्रिया-कृत्य भी निपटा सके। पान भी ऐसा ही व्यसन है जिसे जब तक बकरी की तरह मुँह में घासपात की तरह भरे न रहा जाय तब तक यह सूझ नहीं पड़ता कि कहाँ जाना चाहिए और क्या करना चाहिये ?

बड़े अफसरों का वेतन भी अधिक होता है और उनका रौबदाब भी बढ़ा-चढ़ा रहता है अफीमची का शरीर उसके काबू में नहीं रहता, वह सनकता और पिनकता रहता है। चरस, गाँजा एक प्रकार का उन्माद है जो मनुष्य को उन्मादियों की स्थिति में पहुँचा देता है।

यह सब पुराने प्रचलित नशे हैं। गरीब लोग ताड़ी उतार लेते हैं या जौ, चावल, महुआ, गुड़ आदि को सड़ाकर शराब बना लेते हैं। शराबी के क्रियाकलाप देखते ही बनते हैं। आदमी की शक्ल, सूरत तो रहती है, पर लगता है कोई भूत-पलीत इसे जकड़े हुए है। नीति-अनीति का कुछ भी ज्ञान नहीं रहता। जो चाहे कहना और जो चाहे करने लगता है। यह अपना और दूसरों का न जाने क्या अहित कब किस रूप में कर बैठे ? इसका कोई ठिकाना नहीं। नाली में मुँह रगड़ने से लेकर हत्या या आत्महत्या कर बैठना शराबी के बाँये हाथ का खेल है। हाथ, पैर और मस्तिष्क की स्थिति ऐसी हो जाती है कि नशा न मिलने पर उसे अपंग और मिलने पर उन्मादी कहा जा सकता है।

जीवनी शक्ति धीर-धीरे घटती जाती है और स्थिति ऐसी हो जाती है कि कभी भी शरीर में कोई रोग उठ खड़ा हो तो उसे हटाने में दवादारू का कोई असर न पड़े।

अब हेरोइन और स्मैक स्तर की सबसे मँहगी और तेज नशीली दवायें भी चलने लगी हैं। उनका सेवन कृत्य इतना सरल है कि साथी को भी पता नहीं चलता कि यह क्या कर रहा है। किन्तु आवेश चढ़ते ही स्थिति ऐसी हो जाती है मानो इस लोक के क्रिया-कृत्य, रीति-रिवाज और शिष्टाचार सभी भुला दिये गये और किसी स्वप्न लोक में यक्ष-गन्धर्वों के लोक में निवास किया जा रहा है।

नशे शरीर को गलाते और मस्तिष्क को घुलाते हैं। साथ ही उस विवेक का भी समापन कर देते हैं जिनके सहारे जीवन का तारतम्य जुड़ता और निभता है। यह सभी नशे क्रमशः एक से एक मँहगे हैं। आदत पड़ जाने पर वे इस प्रकार जकड़ लेते हैं कि उनके बन्दोबस्त का प्रबन्ध किसी भी कीमत पर किया जाना होता है। जीवनक्रम डगमगा जाने और स्थिति अर्ध-विक्षिप्तों जैसी हो जाने के कारण सही तरीके से आजीविका कठिन हो जाती है और परिवार का निर्वाह क्रम कठिनाई से पूरा हो पाता है। ऐसी दशा में इन मँहगे नशों को खरीदने के लिये जो पैसा चाहिये वह कहाँ से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आये ? इसके लिये बुरे से बुरे कृत्य करने की नौबत आ जाती है। चाहे उनके कारण कितनी ही बदनामी या बेइज्जती क्यों न होती रहे ? ऐसे व्यक्ति अपने आपके लिये समस्या बन जाते हैं। न शरीर काम देता है, न मस्तिष्क । न मान मिलता है, न उधार । जीवनी शक्ति चुकते जाने के कारण शरीर सूखकर काँटा हो जाता है। छोटे-बड़े अनेकों रोग साथ लग लेते हैं। उनका इलाज करने लायक न समझ रहती है और न पैसा।

नशों की यह प्रवृत्ति है कि अपनी मात्रा दिन-दिन बढ़ाना चाहते हैं। आरम्भ में थोड़ी मात्रा में भी काम चल जाता है, पर ज्यों-ज्यों आद्रत पुरानी होती जाती है, लत पकती जाती है, त्यों-त्यों एक ही हविश बढ़ाती है कि अभ्यस्त नशे की बढ़ी हुई मात्रा कहाँ से हाथ लगे और इसके लिये अधिक पैसे की व्यवस्था कहाँ से हो ? कर्ज मिलना या किसी को ठग लेना अपिरिचितों तक ही सीमित रहता है, पर जब सभी आदत से परिचित हो जाते हैं तो कहीं भी दाल नहीं गलती। ऐसे लोग बेमौत मरते हैं। स्वयं तो चले जाते हैं, पर आश्रितों को अनाथ स्थिति में बिलखता छोड़ जाते हैं। ऐसी है यह नशेबाजी, जिसे धरती पर रहने वाली अकाल मृत्यु या पिशाचिनी ही कहा जा सकता है। उसके चंगुल में जो जान-बूझकर फँसते हैं, उनके दुर्भाग्य को जितना कोसा जाय उतना ही कम है।

नशेबाजी सबके लिए सब प्रकार अहितकर

आरम्भ में नशा केवल कौतूहलवश दूसरों की देखा-देखी अपनाया जाता है। उसे सब तो पीते नहीं, कोई-कोई ही पीते हैं और लगातार पीते है। यह देखकर अपरिपक्व बुद्धि वाले सोचते है कि इसका स्वाद, परिणाम कुछ अतिरिक्त होता होगा अन्यथा पीने वाले साधारण लोगों की तरह न रहकर इसको क्यों अपनाते ? क्यों उसके अभ्यस्त बनते ? क्यों उस पर पैसा खर्च करते ?

अनभ्यस्तों को लगता है कि इसमें कोई बड़ी बात है ? इसमें कोई बड़ा लाभ है। इस कौतूहल से ही नशेबाज साथियों के साथ संगति जुड़ जाती है। वे तो पहले से ही साथियों की तलाश में रहते हैं, ताकि अभ्यस्त बनाकर अपनी कौम में शामिल किया जा सके। इससे उनका प्रत्यक्ष लाभ यह होता है कि नये नशेबाज के घर की जमा पूँजी उनके साथ लगने लगती है। अपनी पूँजी चुक जाने पर दूसरे के अछूते साधनों का उपयोग करते का अवसर मिलता है। "कोढ़ी मरै—संघाती चाहे" वाली उक्ति ऐसे अवसरों पर चरितार्थ होती है, जब कोई पुराना चंडूल नये नौसिखिए को अपने जाल में फँसाता और उसे इस कुटेब का आदी बनाता है।

नशों की एक बिरादरी है। उनमें कोई छोटा भी होता है और कोई बड़ा भी । पर सभी में न्यूनाधिक मात्रा में यह प्रभाव रहता है कि पीते ही शरीर में चुस्ती-फुर्ती जैसी आई प्रतीत होती है। इससे लगता है शक्ति बढ़ी काम करने के लिये नयी शक्ति मिली। प्रसन्नता बढ़ी, इस तात्कालिक लाभ को नौसिखिया स्थायी लाभ मान बैठता है। उसे शक्तिदायक समझता है और उत्साहपूर्वक सेवन करना आरम्भ कर देता है। थोड़े दिन तक तो यह सब खेल-खिलवाड़ की तरह चलता है पर बाद में स्थिति बदल जाती है। आदत में सम्मिलित हो जाने के उपरान्त नशा एक आवश्यकता बन जाता है। उसके बिना काम ही नहीं चलता। न पीने पर थकान चढ़ दौड़ती है और फिर ऐसा लगता है मानो कुछ करते-धरते ही न बन पड़ेगा। जिन्दगी नशे पर आधारित हो जाती है। न पीने पर ऐसा लगता है मानो कुछ कर सकना तो दूर उसके बिना चैन से बैठ सकना भी सम्भव न हो सकेगा।

बात यह है कि जिस प्रकार थके घोड़े को चाबुक मारकर कुछ देर तक तेजी से दौड़ा लिया जाता है, उसी प्रकार शरीर की सामान्य शक्ति भी नशे का चाबुक खाकर भड़क उठती है और सरपट दौड़ती जैसी दिखाई पड़ती है। इस मारधाड़ में घोड़ा अपनी स्वाभाविक शक्ति भी गँवा बैठता है। स्थिति ऐसी हो जाती है कि किसी दिन घोड़ा बुरी तरह पाँव पसार देता है। तब उसके लिए दौड़ना तो दूर, उठकर खड़ा होना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी कठिन होता है। अधिक चाबुक मारकर ही उसे किसी प्रकार खड़ा किया जा सकता है और थोड़ा बहुत चलाया जा सकता है। यह स्थिति बहुत दिनों तक बनी नहीं रह सकती। घोड़ा आखिर जर्जर होकर दम तोड़ देता है।

नशे को मात्र चाबुक माना जाना चाहिए। उसमें शक्ति दे सकने जैसी निजी क्षमता बिल्कुल भी नहीं है। वह जमा पूँजी को भड़काते-उभारते भर हैं। यह कुछ ही दिन चल पाता है कि स्थिति सर्वथा बदल जाती है। नौबत यहाँ तक पहुँच जाती है कि जीवनी शक्ति का भण्डार चुक जाने पर केवल चाबुक ही सहारा रह जाता है। उसे यदि सड़ासड़ न जमाया जाय, तो शरीर रूपी घोड़ा कुछ भी कर सकने की स्थिति में नहीं रहता। उत्तेजना की आवश्यकता दिनों-दिन बढ़ती जाती है। नशे के सम्बन्ध में भी यही बात है। आरम्भ में उसकी थोड़ी-सी खुराक भी फुर्ती लाती थी पर बाद में इसके लिए उसकी मात्रा दिनोंदिन बढ़ानी पड़ती है। छोटी खुराक से काम ही नहीं चलता। पहले एक बार का सेवन काफी देर तक असर बनाये रहता था, पर जब आदत पड़ जाती है, तो उतने से काम नहीं चलता। मात्रा दिन-दिन बढ़ानी पड़ती है। साथ ही उसका असर जल्दी-जल्दी समाप्त होने के कारण नशेबाजों को उसे ज्यादा मात्रा में और जल्दी-जल्दी लेना पड़ता है। एक ओर शक्ति घटती जाती है, दूसरी ओर अधिक और नशा पिये बिना सामान्य दिनचर्या तक का निर्वाह नहीं होता। ऐसी स्थिति में पुरुषार्थ तो कुछ बन ही कैसे पड़ेगा ? आजीविका उपार्जन के स्रोत बन्द हो जाने, शरीर निर्बल हो जाने से नया उपार्जन तक बन नहीं पड़ता। संचित संपदा समाप्त हो जाने पर चोरी-ठगी जैसे नीच कर्मों पर उतारू होना पड़ता है।

यह स्थिति बहुत ही दयनीय होती है। नशेबाज अपनी कुमार्गगामिता के कारण हर किसी की नजर में गिर जाता है। उसकी ईमानदारी और जिम्मेदारी पर संदेह किया जाने लगता है। इसलिए न तो कोई उसे अपने साथ लेता है और न उसका साथ देता है। उपेक्षित, तिरस्कृत, बहिष्कृत जैसी स्थिति में पड़ा हुआ व्यक्ति अपने को सर्वथा एकाकी समझता है और उस स्थिति में चूहे की तरह लुक-छिपकर अपना समय गुजारता है। परिवार के बीच कोई भी इज्जत की निगाह से नहीं देखता। नशेबाजों का निर्धन हो जाना निश्चित है। जिसकी कमाने की क्षमता घटती जाती है, जो अधिक नशे के लिए अधिक खर्च करने के लिए विवश रहता है, उसका पुराना संचय कितने दिन काम दे सकता है।

नशे का सबसे बुरा प्रभाव परिवार के वातावरण पर पड़ता है। पत्नी, भाई, चाचा, ताई, चाची, बुआ आदि सभी का मन उसकी ओर से खट्टा हो जाता है। वे सब न तो उसका सम्मान करते हैं और न सहयोग देते हैं। दुःख-दर्द में भी विशेष सहानुभूति प्रकट नहीं करते। ऐसी दशा में वह परिवार के लिए भारभूत होकर ही रहता है।

सबसे बुरा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है। वे भी दूसरों की देखा-देखी घृणा-उपेक्षा करने लगते हैं, कहना नहीं मानते। किसी सिखावन पर भी ध्यान नहीं देते, आवारागर्दी अपना लेते हैं और नियन्त्रण टूट जाने से कुसंग में फिरते हैं। गृह कार्यों पर, पढ़ाई-लिखाई पर ध्यान नहीं देते हैं। बाप की तरह वे भी नशेबाजी अपनाने लगते हैं। परिवार का वातावरण उन्हें प्रभावित करता है। पिता की उपेक्षा और माता की खीझ का कारण जो भी हो, उसका दुष्प्रभाव बालकों पर तो पड़ता ही है। कच्ची आयु में वे जिस ढाँचे में ढलना आरम्भ कर देते हैं, बड़े होने पर भी वही आदतें जड़ पकड़ लेती हैं और उन्हें भी लगभग वैसा ही बना देती हैं, जैसा कि पिता हेय जीवन जी रहा है।

इस प्रकार नशेबाज की शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, पारिवारिक सभी क्षेत्रों में दुर्गति होती है। व्यक्ति का सहज पर प्रभाव पड़ना स्वाभाविक है। हेय व्यक्तियों का भी प्रभाव उनके सम्पर्क क्षेत्र पर पड़ता है और वे अपने जैसे अनेक तैयार करते हैं। धीरे-धीरे उनकी एक बिरादरी ही बन जाती है। रचनात्मक कार्यों में लगे हुए लोग राष्ट्र की समृद्धि सुख-शान्ति बढ़ाते हैं, पर जो ध्वंशात्मक कार्यों में लगे हुए हैं वे अपनी गतिविधियों से तथा अपनी करतूतों से अनेक प्रकार के उपद्रव खड़े करते हैं और सामाजिक प्रगति में, राष्ट्रीय सुख-शान्ति में बाधक बनकर खड़े होते हैं। इस प्रकार नशेबाज सामाजिक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और राष्ट्रीय उत्कर्ष में अवरोध ही उत्पन्न करते हैं।

छात्र वर्ग में पनपती नशेबाजी की कुटेब

नशा सभी के लिए बुरा है। उसका दुष्प्रभाव सभी जानते हैं। यहाँ तक कि उसके शिकंजे में फँसे हुए भुक्तभोगी भी, जिनने वह दुर्व्यसन किसी प्रकार अपना तो लिया है पर अब छुड़ाये छूटता नहीं। उसकी तलब भूत-पलीत की तरह सवार होती है और तब चैन लेने देती है, जब अपनी पूजा करा लेती है।

नशेबाज स्वयं भी अनुभव करते हैं और उनके हितैषी-सम्बन्धी भी समझते हैं कि इस कुटेब से शरीर खोखला होता है, बुद्धि का स्तर पागलों जैसा बनता है, पैसे की भी बर्बादी होती है। परिवार में कलह मचता है, बच्चों का भविष्य बिगड़ता है और परिचित, अपरिचितों में बदनामी फैलती है, कोई विश्वास नहीं करता और ओछा आदमी समझकर समय पड़ने पर साथ नहीं देता।

लाभ इतना ही है कि पीते समय खुमारी जैसी मस्ती चढ़ती है। अधपगला बना देती है। किसी काम का नहीं रहने देती और जब वह उतरती है तो शरीर को लुटा-पिटा, हारा-थका, बीमार-कमजोर जैसा बनाकर छोड़ जाती है। इस कुचक्र में आदमी अपनी जीवनी शक्ति गँवा बैठता है। मस्तिष्क का तीखापन चला जाता है। बीमारियाँ घेरे रहती हैं। सम्पर्क क्षेत्र की भर्त्सना और भीतर की आत्म-प्रताड़ना अपराधी जैसा व्यक्तित्व बना देती है। पैसा पास में न रहने पर घर में या बाहर चोरी-उठाईगीरी करनी पड़ती है। स्पष्ट है कि नशेबाज पूरी आयु नहीं भोग पाते। उन्हें आधा-अधूरा जीवन जीकर ही बिस्तर समेटना पड़ता है।

समझदारों में से हर एक को नशेबाजी के दोष बखानते और उस कुटेब से लोगों को छुड़ाने का प्रयत्न करते पाया जायेगा। ऐसा अर्ध-विक्षिप्तों से देश और समाज के सामने समस्यायें ही उत्पन्न होती हैं। उससे सार्वजनिक हानि ही होती है। ऐसे समाज और देश असमर्थ-अव्यवस्थित ही रहते हैं, जिनमें नशेबाजों की संख्या बढ़ी-चढ़ी होती है।

इस सन्दर्भ में नयी व्याधि कोढ़ में खाज की तरह और जुड़ गयी है कि स्कूल-कालेजों के नवयुवक चुपके-चुपके इस कुटेब को अपनाने लगे हैं। साधारण नशेबाजों की हरकतें तो प्रकाश में आती रहती हैं, पर इन किशोरों का सम्बन्ध परिवार-समाज से भी घनिष्ठ नहीं रहता। वे स्कूल के बाद भी खेलने-पढ़ने के बहाने घर से बाहर रहते हैं और उस समय में कुसंग में पड़कर इस कुटेब को पालते, अपनाते रहते हैं। पढ़ाई, जेब खर्च, ट्यूशन आदि के बहाने घर वालों से पैसा भी प्राप्त कर लेते हैं। जब इस प्रकार काम नहीं चलता, तो दूसरे अपराध स्तर के काम सीखने और करने लगते हैं।

सर्वेक्षणों से पता चला है कि यह व्याधि स्कूलों की बड़ी कक्षाओं में विशेषतया कालेजों में विशेष रूप से फैलने लगी है, नशे भी ऐसे चले हैं जिन्हें दवा की गोली की तरह मुँह में डाल लेने से उसका शराब, चरस जैसा प्रदर्शन भी नहीं होता।

सर्वेक्षणों के अनुसार दिल्ली विश्वविद्यालय में ३ प्रतिशत, इलाहाबाद विश्वविद्यालय में २५ प्रतिशत छात्र मादक द्रव्यों का सेवन करते हैं। न्यूनाधिक मात्रा में यही स्थिति अन्य कालेजों व विश्वविद्यालयों की है। लड़कियाँ इस दिशा में और भी तेजी से अग्रसर हो रही हैं। वे आधे से कम नहीं, अधिक अनुपात में ही हैं।

उदीयमान वर्ग शिक्षार्थी ही है। वे यदि अपने को आरम्भ में ही निकम्मा बना लेंगे तो बड़े होने पर क्या तो अपना भला कर सकेंगे और क्या समाज के काम आ सकेंगे ?

नशेबाजी की मूर्खता अत्यधिक विनाशकारी

मूर्खता अवास्तविकता के वातावरण में जिया करती है। उसे यथार्थता से डर लगता है; क्योंकि वह न केवल दूरदर्शिता की माँग करती है, वरन् यह भी चाहती है कि व्यक्ति में तथ्य को समझने, स्वीकार करने और धारण करने की क्षमता भी हो।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मनुष्य स्वभाव में बड़प्पन और सुविधा सम्पादन की जन्मजात ललक है। उसे पूरा करने के लिए समझदारी भी चाहिए और पुरुषार्थ परायणता भी। यह न हो, तो सम्पदायें कहाँ से मिलें ? उपभोग के साधन कैसे जुटें। प्रगति के लिए अनुकूलता देने वाली परिस्थितियाँ कैसे हाथ लगें ? इतने पर भी व्यक्ति राजमार्ग पर चलने और पगडण्डी तलाशने का प्रयास करता है। उसमें उसे उलझन और असफलता का ही सामना करना पड़ता है।

इसी अवास्तविकता को अपनाने के लिए आतुर मनुष्य ऐसा अवलम्बन पकड़ लेता है, जो तात्कालिक भ्रम उत्पन्न करके ऐसा ढाँढ़स बँधाता है कि वह जो चाहता है, सहज ही सस्ते मोल में पाया जा सकता है। नशेबाजी इसी विडम्बना का नाम है, उसे अपनाकर कल्पना लोक की रंगीन उड़ानें उड़ना आरम्भ हो जाता है और समझा जाता है कि मानो किला जीत लिया, मोर्चा मार लिया।

नशे में अनेक चीजें आती हैं। तम्बाकू, गाँजा, अफीम, शराब से लेकर हैरोइन, एल. एस. डी. तक के अनेकों भेद-उपभेद हैं, जिनके अपने-अपने प्रभाव और स्वाद हैं। इन सबकी न्यूनाधिक मात्रा में एक ही प्रतिक्रिया होती है कि सेवनकर्त्ता अपने आप को तत्काल बलिष्ठ अनुभव करता है। कुछ फुर्ती-सी भी प्रतीत होती है और दिमाग जमीन से उड़कर आसमान छूने लगता है। इस स्थिति में कई रंगीले सपने आते हैं और कई ऐसे अनुभव होते हैं, जिनसे प्रतीत होता है कि वह अधिक बुद्धिमान और अधिक बलवान हो गया। ऐसा अवलम्बन हाथ आ गया, जिसके सहारे कल्पना को यथार्थता की अनुभूति में पलक झपकते ढाला जा सकता है।

नशा पीते ही चुस्ती-फुर्ती और मस्ती आती है। पर वह नितान्त क्षणिक और अवास्तविक होती है। उसके सहारे कोई ठोस कार्य नहीं किया जा सकता और न उस दिशा में बढ़ा जा सकता है, जिसे अपनाने पर अभीष्ट उपलब्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं। सपना तो सपना ठहरा । वह यदि यथार्थता में परिणित हो सका होता; तो उतने भर से लोग न जाने कहाँ से कहाँ पहुँचे होते ?

नशा एक प्रकार का उबाल उत्पन्न करता है, जिससे छोटी वस्तु बड़ी के रूप में विकसित हुई प्रतीत होती है। दूध उबलने पर वह पतीली की तली में से उछलकर ऊपर की सतह तक आ जाता है। इतना ही नहीं कई बार तो वह बर्तन में समाता तक नहीं और बाहर निकलकर फैलने, चूल्हे में गिरने तक लगता है। मोटी बुद्धि चकित होती है कि उबाल लाने की कला कितनी विलक्षण है, जिससे तनिक-सा दूध क्षण भर में इतना बढ़ गया। उसके विस्तार ने कई गुनी अधिक वृद्धि कर ली। नशेबाज भी प्रायः ऐसा ही अनुभव करता है। स्नायुतन्तु उत्तेजित हो उठते हैं। क्रोधी आवेशग्रस्त-उन्मादी की तरह जमीन पर कंस फटकारने और गाली-गलौज के साथ कई प्रकार की अंट-शंट चुनौतियाँ देने लगते हैं। पिनक चढ़ने पर यही स्थिति छा जाती है। खुमारी में अवास्तविकता का पूरी तरह साम्राज्य छा जाता है। उस उन्माद का पहला लक्षण है, शरीर में शक्ति बढ़ने की अनुभूति, इसके साथ ही मस्तिष्क की दशा भी विचित्र हो जाती है। कल्पनायें ऐसी लगने लगती हैं, मानो वे वास्तविकता बनकर फलित हुई हों। जो चाहा गया था, वह मिल गया हो।

पर यह होता अवास्तविक ही है। घोड़े पर सड़ासड़ चाबुक चलाकर उसके दुर्बल और थके होने पर भी कुछ समय के लिए बेतहाशा भी दौड़ाया जा सकता है। देखने वाले अचम्भा कर सकते हैं कि चाबुक में कैसी जादुई शक्ति है, जिसके सहारे दुर्बल घोड़ा सरपट दौड़ने लगा, पर यह स्थिति देर तक नहीं रहती। रही-सही सामर्थ्य चुक जाने पर घोड़ा पछाड़ खाकर गिर पड़ता है। तब वह या तो प्राण छोड़ता है, या उसे उठाने के लिए किन्ही दूसरों की सहायता लेनी पड़ती है। दूध के उफान का भी यही हाल होता है। चूल्हे की तेज आग से उसका बहुत-सा अंश भाप बनकर उड़ जाता है। बहुत-सा उसकी दीवारों पर चिपक जाता है। कुछ बाहर निकलकर बर्बाद हो जाता है। तेज उबाल हुआ, तो बेकाबू हुआ अंश चूल्हे में भी जा गिरता है और उबाल लाने वाली आग को बुझा देता है। उसमें दरारें डाल देता है। जब आवेश शान्त होता है, तब परिणाम सामने आता है और प्रतीत होता है कि बर्तन में जितना दूध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

डाला गया था, उसका बड़ा अंश बर्बाद हो गया। दुर्बल घोड़े को दौड़ाकर चमत्कार उत्पन्न करने वाले भी या तो टट्टू से हाथ धो बैठते हैं या फिर उसे मुद्दतों तक विश्राम और खुराक देकर पिछली साधारण स्थिति तक पहुँचने की प्रतीक्षा करते हैं।

नशे की खुमारी एक प्रकार का उन्माद है, जिसमें सफलतासूचक दिवा स्वप्न आने लगते हैं। लगता है मनोवांछा पूरी होने की स्थिति आ गई। पर यह पिनक देर तक नहीं टिकती। रंगीले सपने खुमारी हल्की होते ही उड़छू हो जाते हैं। पहले से भी गयी-बीती स्थिति का प्रत्यक्ष अनुभव होता है।

नशेबाज निरर्थक सपने गढ़ने के बदले भारी कीमत चुकाते हैं। उनका शरीर गलता जाता है। जीवनी शक्ति का भण्डार चुकता जाता है और साधारण रोगों का सामना करने की भी क्षमता नहीं रहती। बीमार पड़ते हैं, तो इलाज कारगर नहीं होते और मुद्दतों कष्ट सहन करते हैं। बीमारी लम्बी पड़ जाय, तो समझना चाहिए कि अब बिस्तर से उठकर मरघट में ही लटने को स्थान मिलेगा।

खुमारी का मस्तिष्क पर असाधारण दबाव पड़ता है, वह मूढ़ता और जड़ता पकड़ने लगता है। स्वभाव में अप्रमाणिकता भर जाती है। आचरण बेतुके, बेढंगे होने लगते हैं। ऐसी दशा में कोई विश्वासपात्र नहीं रह सकता है। उपेक्षित, तिरष्कृत व्यक्ति दूसरों के सहयोग से वंचित होता जाता है। उसका गला नीरसता और उपेक्षा ही दबोचती रहती है।

नशेबाजी का घातक दौर

नशीले पदार्थों में से किसी में भी ऐसी विशेषता नहीं है कि सेवनकर्त्ता के लिए किसी भी दृष्टि से लाभप्रद या आनन्ददायक सिद्ध होता हो। दूसरों की देखा-देखी उठती उम्र में कई इसे एक शौक समझकर अपना लेते हैं पर जब वह आदत बन जाता है तो छोड़े नहीं छूटता।

नशे क्षणिक उत्तेजना प्रदान करते हैं। वैसे ही जैसे थके घोड़े पर हंटर बरसाने से उसकी चाल तेज होती है दीखती है। हंटर में अपनी कोई शक्ति नहीं। उसके आघात से जो छटपटाहट होती उसी आवेश को नशे का प्रभाव समझ सकते हैं। यह एक प्रकार का आवेश है, जो गहरा होने पर उन्माद की स्थिति तक पहुँच जाता है। सिगरेट, चाय जैसे हलके नशे तो चाबुक की तरह अपने देह में थोड़ी उत्तेजना देते रहते हैं पर शराब जैसी अधिक नशीली चीज उन्माद पैदा करती है। सेवनकर्त्ता की विचार शक्ति को लड़खड़ा देती है और वह ऐसा आचरण करने लगता है जिसे असामाजिक एवं अनुचित की संज्ञा दी जा सके। नशे की अधिक मात्रा के लिए ललक उठती रहती है उसकी अभ्यस्त मात्रा कम पड़ने लगती है। उतने से तो आदत भर की पूर्ति होती है। उत्तेजना प्राप्त करने के लिए अधिक मात्रा-अधिक बार-लने की इच्छा उमंगती है।

नशे शरीर को सुखाते और बुद्धि को गड़बड़ाते हैं। इस बेकार मद में इतना धन खर्च हो जाता है जिससे परिवार के आवश्यक काम रुक सकते हैं। प्रगति के लिए साधन प्राप्त करने की स्थिति नहीं रहती। जिस-तिस से बहाने बनाकर कर्ज लेना पड़ता है। उसे चुकाने के लिए सुविधा नहीं बन पड़ती। निर्धनता और ऋणग्रस्तता दोनों ही ऐसी हैं जो मनुष्य का सम्मान गिराती हैं। उसे अप्रमाणिक और अविश्वस्त समझा जाता है। फलतः सहयोग और सम्मान प्राप्त करने के स्रोत अवरुद्ध हो जाते हैं।

नशेबाज अपनी मौत जल्दी बुला लेते हैं। बीमारियों से ग्रस्त रहते हैं। जीवनी शक्ति का सार भाग इस कुटेब द्वारा चूस लिया जाता है फलतः उसे शारीरिक, मानसिक, आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में पिछड़ा हुआ समझा जाता है। व्यक्तित्व को इतना दुर्दशाग्रस्त बना लेने पर कोई भी व्यक्ति श्रद्धा सम्मान का पात्र नहीं रह जाता। जो जिस सीमा तक नशेबाजी की कुटेब से ग्रस्त है वह उतना ही अपनी तथा दूसरों की नजर में गिरता जाता है। शिक्षा, सम्पन्नता और पद प्रतिष्ठा होते हुए भी व्यक्ति नशेबाजी के कारण हर किसी की आँखों में गिर जाता है।

दुर्भाग्य इस बात का है कि नशेबाजी की बुराइयाँ अब पहले की अपेक्षा अधिक अच्छी लत

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

समझी जाने लगी हैं। सिगरेट पर छपा रहता है कि इसका सेवन हानिकारक है। फिर भी लोग न तो उस तथ्य को गम्भीरतापूर्वक समझने का प्रयत्न करते हैं और न उस लगी हुई लत को छोड़ते ही हैं।

पिछली शताब्दियों में लोगों के शरीर अपेक्षाकृत अधिक जीवनी शक्ति सम्पन्न थे। इसलिए वे दबाव को आसानी से सह जाते थे। चिलम-तम्बाकू-हुक्का पीते हुए भी किसी प्रकार गाड़ी खीचते जाते थे और बीमार नहीं पड़ते थे। किन्तु अब लोगों ने अपने शरीर खोखले बना लिये हैं। उनमें इतनी क्षमता नहीं रही कि इन विषों को पचा सकें। उनकी प्रतिक्रिया कुछ ही समय में दीख पड़ती है और प्रतीत होता है कि मनुष्य जर्जर, दीन-हीन हो चला। कहने को अपना समय शिक्षितों और समझदारों की बहुलता का माना जाता है पर जब यह दीख पड़ता है कि छोटों की अपेक्षा बड़ों में यह कुटेब अधिक मात्रा में अधिक तेजी से फैल रही है तब प्रतीत होता है कि हम प्रगति की ऊँचाई में उठने की अपेक्षा अवनति के गर्त में गिरते चले जा रहे हैं।

पुराने नशों में भाँग, चरस, गाँजा, अफीम आदि का ही प्रचलन था। सो भी बड़े लोगों में, वयोवृद्धों में। पर अब तो इनके स्थान पर अत्यन्त महँगे और अत्यन्त हानिकारक नशों की भरमार है। शराब का जमाना भी अब पीछे रह गया। वह मजदूर वर्ग के लिए निर्धन आदि वासियों तक ही अपने शिकंजे सीमित किये हुए है। बड़े कहलाने वाले बड़प्पन की डींग हाँकने वाले उन नशों का प्रयोग करते हैं जो अत्यन्त मँहगे और असाधारण रुप से हानिकारक हैं। हैरोइन, स्मैक, कैक, चरस आदि इसी श्रेणी के नशे हैं। उनका खुलेआम बिकने का तो रिवाज नहीं है पर तस्करों से इसका व्यवसाय करोड़ों अरबों रुपयों का होता है। बनाने वाले, बेचने वाले इधर से उधर ले जाने वाले इस धन्धे में इतनी कमाई करते हैं कि कुछ ही दिनों में प्रचुर धन कमा लेते हैं और गरीब से अमीर बन जाते हैं।

पिछले दिनों अमीर बूढ़े ही यह व्यसन पालते थे। अफीम या शराब को अपनी सम्पन्नता दिखाने और मस्ती अनुभव करने के लिए नशों को अपनाते थे। जो मरने के नजदीक पहुँच चुके उन्हें कुछ और जल्दी मर जाने में कोई विशेष हर्ज नहीं पड़ता। पर अब की बार ऐसा हुआ है कि यह विषबेल नीचे से ऊपर को चढ़ रही है। कालेजों के छात्र-छात्राएँ इन नव आविष्कृत नशों के आदी हो रहे हैं। सर्वेक्षणों से पता चला है कि यह कुटेव लगभग चालीस प्रतिशत से भी अधिक छात्रों को अपनी चपेट में ले चुकी है।

यह नशे ऐसे हैं कि कुछ ही दिनों में अपने शिकार को पूरी तरह चूस लेते हैं और फिर कुछ ही वर्षों में उसे मौत के मुँह में घसीट ले जाते हैं। इनकी आदत ऐसी हो जाती है कि इन नशों को सेवन किये बिना वे नहीं रह सकते। कहते हैं उनके अंग-अवयव टूटने लगते हैं, ऐंठन होती है और ऐसा लगता है कि प्राण गया। तब उन्हें पैसा जुटाने और उन वस्तुओं को खरीदने के लिए अपराधों के क्षेत्र में प्रवेश करना पड़ता है।

पूर्वजों की कमाई को चोरी-छिपे समाप्त करने में देर नहीं लगती क्योंकि इनका मूल्य इतना अधिक है कि एक-एक खुराक बीस से लेकर पचास रुपये तक की पड़ती है। छात्र-छात्रायें पढ़ाई खर्च के अतिरिक्त इतना धन घर से किस बहाने प्राप्त करें। अन्त यह होता है कि दिमाग साथ न देने से पढ़ाई भी छूट जाती है और उतना धन जुटाने के लिए ऐसे काम करने पड़ते हैं जो उनका स्तर और भविष्य ही खराब कर देते हैं। एक प्रकार से समझा जाना चाहिए कि उनकी जिन्दगी ही बर्बाद हुई।

यह कुटेब छात्रों तक ही सीमित नहीं है। शौकीनी और फैशन का मनचलापन जिस प्रकार अनेक प्रकार के अपव्यय कराता और दुर्व्यसन लगाता है, उसी प्रकार यह भी देखा गया है कि सम्पन्न और शिक्षित वर्ग के लोग उसी प्रकार इस कुटेब के शिकार होते जाते हैं जिस प्रकार कि अनगढ़ लोग गाँजा, चरस, देशी शराब आदि के आदी होते हैं। इस दल-दल में फँस जाने के उपरान्त उनका व्यक्तित्व प्रतिभारहित हो जाता

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है और जीवित होते हुए भी मृतक स्तर का जीवन घसीटना पड़ता है।

नशेबाजी का यह दुर्व्यसन था तो पहले भी चिन्ताजनक, पर अब उसमें जो नये तत्व मिले हैं उसने तो इस व्यसन को विष तुल्य बना दिया है। इनके विरुद्ध संघर्ष अब और भी तीव्र होना चाहिए। न केवल विरोध अपितु आदती नशेबाजों के लिए कोई ऐसे समाधान औषधि, परामर्श, मनश्चिकित्सा के रूप में खोजे जायें जो इन्हें इन अन्धी गलियों से मुक्ति दिला सके।

घातक नशेबाजी से सावधान

कुछ समय पहले तक नशा अमीरों का शुगल था। बड़े आदमी उसे अपनी मौज-मस्ती के लिए पीते थे। राजस्थान के सामन्त, जागीरदारों में अफीम चलती थी और वनवासी स्तर के पिछड़े वर्ग ताड़ी, ठर्रा आदि पीकर अपने खाली समय को काटते थे। अंग्रेजों को दावत देने वाले रईस व्यापारी उसके साथ बढ़िया शराब भी भेंट करते थे। जमींदारों को चौपालों पर चिलम-हुक्का गरम रहता था। सर्व-साधारण में यह लत कम ही थी। भाँग और गाँजा पीने वाले लोग हजारों, लाखों में से कोई एकाध निकलता था। साधू बाबा गाँजा, चरस फीकर अपना खाली समय मौज-मस्ती में गुजारते थे और उनके पास सट्टा पूछने जाने वालों को आग्रहपूर्वक वह आदत लगाते थे ताकि जब वे आवें तब साथ में भेंट स्वरूप गाँजा, भाँग भी, लेते आवें।

किन्तु इन चार दशकों में उनकी वृद्धि असाधारण रूप से हुई है। बीड़ी और चाय का प्रचलन कुछ पहले धीर-धीरे हुआ। बाद में तो यह शुगल आँधी, तूफान की तरह बढ़ा और कुहासे की तरह इस कदर छाया कि रास्ता दीखना तक बन्द हो गया।

इन दिनों अफीम स्तर की हेरोइनें विभिन्न नाम-रूप से बिक रही हैं और उनकी लत लोगों को संक्रामक बीमारियों की तरह लग रही हैं एक की देखा-देखी दूसरा सीखता है, दूसरे से तीसरा, चौथा, पाँचवाँ। इसी प्रकार बेल आगे-आगे बढ़ती जाती है और लगता है कि वह अमरबेल की तरह समूचे समाज वृक्ष को चूसकर रहेगी।

सबसे बड़े दुःख और आश्चर्य की बात यह है कि इस कुटेव ने नवयुवकों और नवयुवतियों को अपने शिकंजे में बुरी तरह कसना आरम्भ कर दिया है और वे इस सत्यानाशी-सर्वभक्षी दुर्व्यसन के सम्मुख अपनी जीवनी शक्ति को समाप्त करते चले जा रहे हैं।

यह लत कॉलेजों में बुरी तरह फल-फूल रही है। छोटे स्कूलों के बच्चों में तो इतनी समझ नहीं होती और घर से अधिक पैसा भी हाथ नहीं लगता। पर जो कॉलेजों में पढ़ते हैं उनमें से अधिकांश सम्पन्न घरों के होते हैं। फिर कॉलेज के चित्र-विचित्र खर्चों में कुछ और बढ़ोत्तरी करके घर वालों से अधिक पैसा दुह लेना उनके लिए कठिन नहीं पड़ता। माँ से अलग, बाप से अलग मिल जाता है। समीपवर्ती रिश्तेदारों से भी जिस-तिस बहाने उधार के रूप में प्राप्त कर लेते हैं और नशेबाजी के मँहगे व्यसन के लिए पैसे का जुगाड़ किसी न किसी रूप में जुटा ही लेते हैं।

कॉलेजों में प्रचलित इस दुर्व्यसन के विस्तार के जो आँकड़े सामने आये हैं वे बहुत ही डरावने हैं। कलकत्ता विश्वविद्यालय के सौ के पीछे अड़तालीस और दिल्ली विश्वविद्यालय के ३३ प्रतिशत छात्र इस दुर्व्यसन के शिकार पाये गये हैं। इंजीनियरिंग शिक्षण संस्थाओं में तो यह संख्या और भी अधिक है। वहाँ वह पचास प्रतिशत छात्रों पर सवारी गाँठ चुकी है। इनमें लड़के ही नहीं लड़कियाँ भी शामिल हैं। लगता है कालेज क्षेत्र में यह देश-व्यापी दुर्व्यसन डेढ़ करोड़ से अधिक युवकों को अपने जाल में अब-तब में कसने ही वाला है।

स्पष्ट है कि ऊँचे दर्जे के नशों की आदत सेवनकर्त्ता के मस्तिष्क और स्वभाव को ऐसा वशवर्ती बना लेती हैं कि बाद में उनका उससे छूटना कठिन ही नहीं असम्भव जैसा होता है। दिन-दिन सामर्थ्य और कुशलता घटती जाती है। पौरुष और उत्साह को भारी आघात पहुँचता है। आदी मनुष्य एक प्रकार से निकम्मा और विक्षिप्त स्तर का बनकर रहता है। उससे अपने हाथ के नीचे के काम सँभलते नहीं। अस्त-व्यस्तता और गड़बड़ी की मात्रा बढ़ते जाने से अन्ततः वे सभी काम छिन जाते हैं। भले ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने हों या पराये। हर काम सूक्ष्म बुद्धि और तन्मयता चाहता है। इसके बिना वह सही स्तर का हो ही नहीं सकता है। समझा जाता है कि अस्त-व्यस्त काम की अपेक्षा उसे न कराया जाना अच्छा। नशेबाज का स्वभाव और व्यक्तित्व ऐसा बनता जाता है जिससे घृणा बरतें और उसकी संगति से बचने बचाने का प्रयत्न करें। इन परिस्थितियों में भविष्य का अन्धकारमय होना निश्चित है।

यह छूत का रोग देश, देशान्तरों की सीमाएँ लाँघता हुआ विश्वव्यापी बनता जा रहा है। नई पीढ़ी पर किसी भी देश का भविष्य निर्भर रहता है। जिस देश में इस वर्ग के बहुसंख्यक लोग दुर्व्यसनों के शिकार हैं, उसकी प्रगति संदिग्ध है। इस प्रकार के दुर्दशाग्रस्त समुदाय का भविष्य अन्धकारमय ही समझा जा सकता है। जिनकी प्रतिभा बर्बाद हो गई उन्हें अर्धमृतक या अर्ध-विक्षिप्त स्तर का निकम्मा ही कहा जा सकता है।

हैरोइनों की किस्में अमेरिका में अपने देश की अपेक्षा कुछ पहले ही पहुँच चुकी हैं। धनियों पर दुर्व्यसनों का आक्रमण पहले होने की बात में कुछ आश्चर्य की बात भी नहीं है। वह देश समय रहते चौकन्ना हो गया और रोकथाम के लिए कड़ कानून बनाये। वहाँ इस स्तर के नशों का व्यापार करने वालों के विरुद्ध बने कानून में जेल जुर्माने के अतिरिक्त यह प्रावधान भी है कि उनकी सारी सम्पत्ति जब्त कर ली जाय। इतना ही नहीं उनके मुकद्दमों की पैरवी करने वालों की फीस जब्त करने तक की व्यवस्था है। इतने पर भी देशों में लुक-छिपकर यह विनाश क्रम चलता ही रहता है। अंकुश एक सीमा तक ही कारगर हुआ है।

अपने देश में इन वस्तुओं की तस्करी करने वालों की पकड़-धकड़ और लाखों के माल की जब्ती के समाचार मिलते रहते हैं। इससे प्रतीत होता है कि जो पकड़ में नहीं आता वह व्यवसाय कितना बड़ा होना चाहिए और उसके सेवन से कितने लोगों की प्रतिभा, तन्दुरुस्ती, समझदारी तथा दक्षता नष्ट होनी चाहिए। यह घाटा इतना बड़ा है जिसे दुर्भिक्षों एवं दुर्घटनाओं, दैवी प्रकोप के कारण होने वाले विनाश की तुलना में कम नहीं अधिक ही भयंकर समझता जा सकता है। अपनी ही युवा पीढ़ी को बर्बादी के गर्त्त में धकेलने वाले मौत और पागलपन के सौदागर अब अबोध बच्चों को भी अपने घेरे में लेने की कोशिश कर रहे हैं।

बीड़ी, सिगरेट, पान, तम्बाकू बेचने वाले तक इन वस्तुओं को अपने यहाँ रखने लगे हैं और ग्राहक का इशारा पाते ही तत्काल इन वस्तुओं को प्रस्तुत कर देते हैं। यहाँ तक कि चुस्की की बर्फ तक में मिश्रण माँगने वालों की जरूरत पूरी करता रहता है।

यह बढ़ता हुआ दुर्व्यसन किस प्रकार रुके, इस सन्दर्भ में मूर्धन्य लोगों को रोकथाम के कारगर उपाय सोचने चाहिए। मात्र कानून बना देने या दण्ड का अनुपात बढ़ा देने से काम नहीं चलेगा वरन् इसकी घेराबन्दी चारों ओर से होनी चाहिए। स्कूलों, कालेजों में निरन्तर डॉक्टरी जाँच होती रहे और जो ऐसी लतों के शिकार पाये जायें उन्हें विद्यालय से निष्कासित कर दिया जाये। सरकारी नौकरी में जो इस अनर्थ में फँसे पाये जायँ उनकी नौकरी छुड़ा ली जाय और सामान्य नागरिक जो धुत्त पाये जायें उन्हें अविश्वस्त घोषित करके किसी महत्त्वपूर्ण लेने-देने या उत्तरदायित्व सौंपने पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाय। इस प्रकार की कड़ाई से सेवनकर्त्ताओं के होश ठिकाने आयेंगे और वे जीवित रहने के लिए इस कुटेब से बचने की कोशिश करेंगे।

नशों की उपलब्धि सर्वसुलभ न रहने दी जाय, खुले बाजार में बिकने वाले मादक द्रव्यों के मूल्य बढ़ा दिये जायें और लुक-छिपकर कानून तोड़ने वालों के लिए सम्पत्ति जब्ती जैसा प्रावधान हो। इससे अधिक आवश्यक है कि इन्हें बनाने के काम आने वाली वस्तुओं का उत्पादन ही अवरुद्ध कर दिया जाय। शराब, अफीम, भाँग, गाँजा, चरस जैसी वस्तुएँ जो भी उत्पादन करे वह भी विक्रेताओं और सेवनकर्त्ताओं की तरह अपराधी माना जाय।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

थकान, नशे से कैसे दूर हो ?

शरीर को पोषण और विश्राम न मिलने, अधिक खाने, अतिशय व्यस्त रहने या तालमेल न बिठा पाने की स्थिति में सिरदर्द, पेटदर्द, अनिद्रा, तनाव आदि कोई न कोई रोग घेरे ही रहता है, टॉनिकों से कोई विशेष लाभ न होने की दशा में लोग संज्ञाशून्य करने वाली औषधियाँ पीते हैं या किन्हीं नशों की शरण में जाते हैं। इनसे तात्कालिक लाभ तो दिखता है, पर नशा उतरने पर व्यथा और भी दूनी हो जाती है। ऐसे लोग कई प्रकार के शारीरिक-मानसिक रोगों से ग्रसित पाये जाते हैं।

सामान्तया लोग थकान उतारने के लिये अथवा दर्द से छुटकारा पाने के लिये 'एस्पिरिन' जैसी दवाओं का प्रयोग करते हैं, किन्तु इसकी अधिकता अनेकानेक रोगों का कारण बनती है। न्यू साउथ वेल्स के रॉयल न्यू कैसिल अस्पताल के सुप्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. जोन डूगन ने इस सम्बन्ध में गहन अनुसंधान किया है। उन्होंने पेट के फोड़े के ३५० रोगियों का अध्ययन करने पर निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुए बताया है कि इनमें से ३४९ लोगों के रोग का कारण एस्पिरिन का अति सेवन करना था। इसी तरह एक-दूसरे अध्ययन में आमाशय ग्रहणी के रक्तस्राव से पीड़ित ५६८ रोगियों में से २६ प्रतिशत भी एस्पिरिन जैसी दवाओं के नियमित प्रयोगकर्त्ता पाये गये। अन्यान्य शोधकर्त्ताओं के अनुसार भी ऐस्प्रिन जैसी दर्दनाशक दवाओं का अधिक प्रयोग गैस्ट्रिक अल्सर का कारण बनता है।

अमेरिका एवं योरोप में एस्पिरिन दवा का अब इतना अधिक प्रचलन हो गया है कि वह गाँव-गाँव और घर-घर जा पहुँची है। सिरदर्द या दूसरे दर्द अनुभव में न आयें, इसके लिये इसका प्रयोग होता है। अकेले अमेरिका में उसकी वार्षिक खपत २ करोड़ ८० लाख पौण्ड के लगभग है। मानसिक उद्वेगों के कारण धीरे-धीरे उस देश में सिरदर्द ने एक चिरस्थाई मर्ज के रूप में अपने पैर जमा लिये हैं। नींद लाने की गोलियाँ भी उस देश में अब एक दैनिक आवश्यकता की वस्तु बन गयी हैं।

वस्तुतः एस्पिरिन की गणना प्रसिद्ध दर्द निवारक औषधियों में होती है जो सिर-दर्द में राहत पहुँचाती हैं। इसी तरह अफीम के सत्व की-पैथीडीन आदि की सुइयाँ लगाकर भी वेदना की अनुभूति को रोक दिया जाता है। निद्रा लाने वाले रसायन भी लगभग यही करते हैं। इस उपचार से रोगी का चिल्लाना तो दूर हो जाता है, पर रोग की विनाशलीला में कोई अन्तर नहीं पड़ता। पीड़ा में जहाँ कष्ट होता है, वहाँ एक लाभ भी है कि उससे निवारक संघर्ष तीव्र होता है और रोग की निवृत्ति में भारी सहायता मिलती है। कष्ट की अनुभूति घट जाने से उस मोर्चे पर युद्ध सैनिक भेजने और विकृति को परास्त करने की चिन्ता से मस्तिष्क को छुट्टी मिल जाती है। फलतः रोगों को अपनी जड़ जमाने का अधिक अच्छा अवसर मिल जाता है।

इसी प्रकार चाय, कॉफी, सिगरेट, अफीम, कोकीन, स्मैक, हैरोइन आदि को तनाव या थकान मिटाने के लिये प्रयुक्त किया जाता है, पर देखा यह गया है कि यह नशीले पदार्थ मात्र उत्तेजना भर प्रदान करते हैं और थके घोड़े में चाबुक लगाकर दौड़ाने जैसा काम करते हैं। पीछे जैसे ही यह उत्तेजक पदार्थ आदत में सम्मिलित हो जाते हैं, तब वे छोड़े नहीं छूटते और कालान्तर में उनका प्रभाव भी कुछ कम प्राणघातक नहीं होता।

सर्वेक्षणकर्त्ता वैज्ञानिकों के अनुसार इन दिनों व्यापक स्तर पर लोग इस तरह के नशीले पदार्थों का सेवन करने लगे हैं। आँकड़े बताते हैं कि शराब, सिगरेट के अतिरिक्त विश्व में लगभग ७ लाख ५० हजार व्यक्ति हैरोइन के, १७ लाख लोग अफीम के, ४८ लाख कोकीन के तथा २६० लाख व्यक्ति कैनाविस जैसे खतरनाक किस्म के नशीले पदार्थों का सेवन करते हैं।

'इण्डियन कौन्सिल ऑफ मेडिकल रिसर्च' के पर्यवेक्षकों ने पाया है कि अपने देश में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

युवा पीढ़ी विभिन्न कारणों से नशीली दवाओं की ओर सर्वाधिक आकर्षित होती जा रही है। इसके शिकार लड़के-लड़कियाँ विशेष रूप से शहरों में पाये जाते हैं; जबकि छोटे शहरों, कस्बों में लोग सिगरेट, चरस, गाँजा, भाँग जैसे पदार्थों का सेवन करते हैं। देखा गया है कि नशे के अभ्यस्त छात्रों में अधिकतर लड़कियाँ इस व्यसन में जकड़ती जा रही हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय में ३३ प्रतिशत छात्र-छात्रायें नशीली दवाओं का सेवन करते हैं। जबकि बम्बई में ५२ प्रतिशत।

नशीली दवाओं का बढ़ता प्रयोग

अमेरिका में मादक दवाओं के आदी हिप्पी और हिप्पियों से प्रभावित मादक दवाओं के आदी युवक-युवतियों से पूछे गये प्रश्नों के उत्तर ऐसे होते हैं जिन्हें सुनकर हँसी छूटती है। यह वर्ग ऐसी हरकतें करता है जिन हर हँसी आने के साथ सहानुभूति भी पैदा होती है। सड़क पर चलते-चलते नाचने लगना, कक्षाओं में पढ़ते-पढ़ते कपड़े उतारकर नंगे हो जाना, नंग-धड़ंग कालेज के बरामदों और शहर-गाँव की सड़कों पर दौड़ लगाना, ऐसा कौन-सा काम बचा है जो उनकी विक्षिप्त मन-स्थिति और पागलपन का परिचय नहीं देता है।

पश्चिम की उभरती हुई यह नयी पीढ़ी एकांगी भौतिक सम्पन्नता और संत्रस्त व्यस्त वातावरण की ही प्रतिक्रिया है। उसकी सम्पन्नता और समृद्धि उस शिखर तक पहुँच गयी है कि उसके निवासी 'थोड़ा और' कहने की प्रवृत्ति को खो देना चाहते हैं। उनकी इच्छायें भौतिक आधार छोड़कर एक आध्यात्मिक आधार प्राप्त करना चाहती हैं। इस क्षुधा की पूर्ति के लिए जहाँ कहीं भी उपयुक्तता दिखायी देती है वह उसी ओर आकृष्ट होने लगता है। हिप्पी आंदोलन इसी क्षुधा पूर्ति की एक तीव्र शोध वृत्ति का प्रतीक है। चूँकि क्षुधापूर्ति का स्थायी आधार पश्चिम को अभी तक उपलब्ध नहीं हो सका—इसलिए व्यग्रता चरम परेशानी में परिणत हुई।

युवा वर्ग ने स्वयं को भुलाने के लिए, अपना आपा खो देने के लिए कुछ ऐसी प्रवृत्तियाँ अपनायीं, जिन्हें दिग्भ्रान्त और विक्षिप्त मना कहना अनुपयुक्त नहीं होगा। नित नये बदलते फैशन, धड़ाधड़ बनते सामाजिक मूल्य और उनके अनुसार प्राप्तव्य का अप्राप्य ही रहना वातावरण में उदासीनता व स्वयं से वितृष्णा की सृष्टि करता है। पश्चिम के युवा समाज ने इसी कुण्ठा का शिकार होकर मादक द्रव्यों का उपयोग आरम्भ किया। हिप्पियों के अतिरिक्त भी वहाँ एक ऐसे वर्ग का विकास बड़े जोरों से हो रहा है जो इन दवाओं का आदी बन चुका है।

एक सर्वेक्षण के अनुसार अमेरिका का हर दसवाँ व्यक्ति इन दवाइयों का प्रयोग करता है। हैरोइन, अफीम और मारी जुआना का प्रयोग करने वाले इसी प्रतिशत में आते हैं। हशीश, कोकीन, कीफ, एम्फेरामाईन आदि मादक दवाओं का प्रयोग करने वालों की संख्या तो इससे अलग ही है। अमेरिका में अफीम और हैरोइन का आयात बड़े पैमाने पर होने लगा है। विश्व का सबसे बड़ा अफीम उत्पादक देश चीन पश्चिम को युद्ध स्तर पर यह नशीला पदार्थ भेज रहा है। वहाँ बढ़ती हुई मादक द्रव्यों की प्रवृत्ति का अंदाज इसी से लगाया जा सकता है कि कुछ ही समय में अमेरिका को अफीम आयात की मात्रा दो हजार टन से लगभग ढाई हजार टन कर देनी पड़ी।

इधर हम भारतीय किसी भी विदेशी चीज, आन्दोलन प्रवृत्ति और विचार को आँख मूँदकर अपनाने के आदी से बन गये हैं। पिछले कई वर्षों से स्थायी शान्ति की तलाश में भटकते हिप्पियों के झुण्ड भारत आये। उनके साथ मादक द्रव्यों ने भी प्रवेश किया। भारत का युवक समाज पाश्चात्य प्रवृत्तियों को ग्रहण करने में ही अपनी शान समझता है। इसलिए वह भी इन द्रव्यों को स्वागतपूर्वक अपनाने लगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पिछले दिनों देश के एक बड़े विश्व-विद्यालय में धूम्रपान की लत का सर्वेक्षण किया गया तो बड़े चौंका देने वाले तथ्य सामने आये। सर्वेक्षण करने वालों को तथा आँकड़ों से परिचित होने वालों को तब और भी आश्चर्य हुआ जब उन्हें यह पता चला कि सिगरेट के साथ-साथ गाँजा, चरस, अफीम आदि मादक वस्तुओं का प्रयोग भी होता है। सबसे बड़ा आश्चर्य तो यह कि छात्रायें भी इनका प्रयोग करती हैं। इसी बात से अंदाजा लगाया जा सकता है कि छात्रों में यह प्रवृत्ति कहाँ तक पहुँच चुकी है।

यह किसी एक विश्वविद्यालय या नगर की दशा नहीं है वरन् देश के बड़े नगरों और शहरों की भी वस्तुस्थिति उजागर करती है। दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, कानपुर, जयपुर, भटिण्डा और अन्य शहरों में मादक द्रव्यों का प्रयोग बढ़ता ही जा रहा है, कुछ समय पूर्व दिल्ली प्रशासन के स्वास्थ्य निर्देशक ने नींद की गोलियों का उत्पादन घटा देने की माँग की थी। क्योंकि बहुत से युवक इनका उपयोग गहरी नींद के लिए शौकिया तौर पर करने लगे हैं। इसका प्रयोग करने की प्रवृत्ति इतनी बढ़ गयी है कि कुछ समय पूर्व जहाँ एक गोली का मूल्य ३५ पैसे था वहाँ तब लगभग दो रुपये हो गया है।

कहना नहीं होगा नींद की गोलियों का निर्माण प्रायः अफीम और अन्य मादक दवाओं के सम्मिश्रण से ही किया जाता है। गोलियों के रूप में नशे का आनंद लेने के साथ-साथ उसे मूल रूप में खाने वालों की संख्या भी बढ़ती जा रही है। शराब, सिगरेट, अफीम, गाँजे का स्वाद विश्वविद्यालयों के नब्बे प्रतिशत छात्रों ने चखा है और अनुमान है कि ७५ प्रतिशत तथा २६ प्रतिशत छात्रायें शौकिया तौर पर यदा-कदा इनका प्रयोग करते हैं।

इस विषय में यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि भारतीय समाज का भौतिक स्तर इतना पश्चिमी देशों की बराबरी तो क्या उसके एक अंश समान भी ऊँचा नहीं है। अमीरी और सफलता का बोध भी किसी के पागलपन का कारण नहीं है। फिर आखिर कौन-सी बात है जो भारतीय युवकों को मादक वस्तुओं की ओर आकृष्ट करती है। उन्हें पश्चिमी सभ्यता का अंधानुकरण करने के लिए प्रेरित करती है।

महज आधुनिकता का नशा और फैशन का शौक—ही भारतीय युवकों में बढ़ती मादक दवाओं के सेवन की प्रवृत्ति का कारण है। अल्ट्रा मॉडर्न कहलाने की भूख और उसका मानदंड पश्चिम यही वह विचार है जिसकी वजह से जीवन के कठोर उत्तरदायित्वों से मुक्त, निश्चित और लापरवाह युवक समाज को पश्चिम की यह गंदगी ओढ़ने के लिए विवश करती है। जो कुछ पाश्चात्य देशों में होता है वह सब उपयुक्त है। भले ही भारतीयता का संस्कार, वातावरण और हमारे समाज के लिए वह संगत या असंगत इस प्रवृत्ति के लिए कुछ ऐसे कारणों और तत्वों को पूर्णरूप से दोषी ठहराया जाता है जो केवल मादक दवाओं के सेवन की बढ़ती आय से अपना स्वार्थ सिद्ध करने में लगे हैं। बेशक वे दोषी हैं परन्तु उतने नहीं जितने कि हम।

इस रोग को फैलाने में कुछ विदेशी घृणित स्वार्थों का हाथ ही कहा जाता है भारतीय युवकों के गले में यह आफत बाँधकर वे लोग हमारी युवाशक्ति को कापुरुष और कायर बनाना चाहते हैं। लाखों रुपये की मारफी, एल० एस० डी० और अन्य घातक दवाइयाँ सुनियोजित ढंग से विश्वविद्यालय के युवक-युवतियों तक पहुँचती है। विदेशी षड़यंत्र बड़ी सावधानी और व्यवस्थित पद्धति से युवकों तक ये दवायें और नशीले पदार्थ पहुँचाते हैं। पिछले दिनों दिल्ली विश्वविद्यालय कैम्पस में एक विद्यार्थी के पास से लगभग दस हजार रुपये की अफीम का यह बण्डल कोई अज्ञात और अपरिचित व्यक्ति छात्रों में बाँटने के लिए दे गया था। अफीम देने वाले व्यक्ति ने युवक को छूट इस बात की दे रखी थी कि किसी से प्राप्त होने वाली राशि को वह अपने पास रख सकता है।

विदेशी कुचक्रों का यह एक खतरनाक पहलू है, परंतु इसे चलने के लिए हम एकदम निर्दोष नहीं हैं। फैशन और अल्ट्रा मॉडर्न की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अंधी दौड़ युवकों को कहाँ ले जाकर फेंकेगी, कुछ कहा नहीं जा सकता। यह प्रवृत्ति इसी प्रकार बढ़ती रही तो आश्चर्य नहीं करना चाहिए जबकि भारत का युवा छात्र भी पश्चिमी देशों के समान सड़कों पर नंगे नाच, कपड़े उतारने और अश्लील उद्दाम क्रियाओं को सार्वजनिक स्थानों पर करते देखे जायँ।

विचारपूर्वक स्थिति का विश्लेषण करने पर पता चलेगा कि यह रोग समाज के तथाकथित समृद्ध और सम्पन्न परिवारों के युवकों से मध्यम वर्गीय और सामान्य स्तर के लोगों की ओर रिसता चला आ रहा है। सर्वप्रथम जिन लोगों ने मादक दवाइयों के सेवन का अभ्यास डाला वे स्वयं को विशिष्ट और सभ्य सिद्ध करने के लिए आतुर रहे हैं। वैशिष्ट्य और सभ्यता के सम्बन्ध में उनकी धारणा पश्चिमी प्रवृत्तियों को अधांधुन्ध अपनाये जाना ही है।

सार्वजनिक रूप से कोई काम या परस्पर खुलेआम करने चलाने पर अन्य लोग भी स्वाभाविक उसका अनुकरण करते हैं। सम्पन्न और श्रेष्ठ परिवारों से यह छूत का रोग मध्यम वर्ग के युवकों में भी फैलता गया है। स्थिति न होते हुए भी बाह्य जीवन में स्वयं को प्रतिष्ठित जाहिर करने का मिथ्या-अहं तो जनजीवन में घुसा हुआ है न।

अल्ट्रा मॉडर्निज्म और पश्चिमी आधुनिकता बनाम तथाकथित सभ्यता का बुखार जितनी शीघ्र हो सके, तोड़ा जाना चाहिए। इसके लिए शासकीय स्तर पर क्या प्रयत्न चलें यह बात अलग है। व्यक्तिगत और जन स्तर पर तो यह भ्रम तोड़ने की कोशिश होनी ही चाहिए। फैशन या अन्धानुकरण प्रधान आधुनिकता हमारी शान और गौरव की वस्तु नहीं है। गुड्डे-गुड़ियाओं की तरह जानवर-वानर की तरह साज-सज्जा और नकल अनुकरण मनुष्य की शोभा और गरिमा के किसी भी तरह अनुकूल नहीं हो सकती।

परिवार के युवकों में मर्यादा, निष्ठा और भारतीय संस्कृति के प्रति गौरव का भाव जागना तो हर किसी के बस की बात है। समय रहते इस समस्या को नहीं सुलझाया गया तो आज से २०-२५ वर्ष के बाद का समूचा भारतीय युवा वर्ग शारीरिक और मानसिक रुप से क्लीव हो चुकेगा। समय बीत जाने के बाद पछताने से क्या होगा तब तो पानी सर से ऊपर गुजर चुकेगा और डूबने, आत्मघात करने जैसी ही स्थिति हमारे सामने खड़ी होगी।

स्वयं अपनाया गया पागलपन

नशेबाजों को प्रताड़ित करने एवं उनको इन दुर्गुणों से छुड़ाने की परम्परा प्राचीनकाल से चली आ रही है। अरस्तू एवं हिप्पोक्रेट्स ने इसे स्वयं अपनाये गये पागलपन की संज्ञा दी है। प्लूटार्क ने इसके प्रभाव के बारे में बताया कि इसका सूक्ष्म असर आने वाली पीढ़ी पर पड़ता है और शराबी का बेटा शराबी होने वाली उक्ति चरितार्थ करता है। इस कारण नैतिक एवं सामाजिक चरित्र को नियंत्रित रखने एवं समाज में अव्यवस्था न फैले इस दृष्टिकोण से नशापान करने वाले लोगों के लिए प्राचीनकाल से विभिन्न देशों में दण्ड विधान की व्यवस्था रही है। एथेन्स के इतिहास से पता चलता है कि एक व्यक्ति को फाँसी की सजा इसलिए दी गई थी क्योंकि वह शराब पीकर काम पर आया था। स्पार्टा में नशापान करने वाल नवयुवकों के साथ दास-दासी जैसा व्यवहार किया जाता था, चाहे वे कितने ही ऊँचे खानदान के हों। स्पार्टा में ही नशाविरोधी आन्दोलन के तहत सभी अंगूर की लताओं को काट ड़ाला गया था, क्योंकि उस समय मात्र अंगूर से ही शराब बनायी जाती थी। रोम में ३० वर्ष की उम्र तक के लोगों को शराब पीने का निषेध था। चीन में नशेबाजों को पकड़ में आने पर मृत्यु की सजा सुनाई जाती थी एवं प्राचीन भारत में शराबी के मुँह पर उबलती शराब डालकर दण्डित करने की परम्परा थी।

उपरोक्त वर्णन से स्पष्ट है कि आखिर क्यों नशेबाजों को दण्डित करने एवं नशाविरोधी आन्दोलन चलाने का प्रचलन प्राचीनकाल में था। नशा पीने वाला मात्र व्यक्तिगत हानि पहुँचाता तो बात अलग होती, वह सार्वभौमिक व्यवस्था में हस्तक्षेप करता है। आँकड़े बताते हैं कि सम्पूर्ण विश्व में नशेबाजी में प्रवृत्त लोगों की संख्या तेजी से बढ़ती जा रही है जिसमें महिलायें भी सम्मिलित हैं। नशेबाजी के क्षेत्र में अग्रणी देशों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

में फ्रांस का नम्बर आता है जहाँ औसतन प्रति माह हर व्यक्ति १८ लिटर शराब पीता है इसी कारण फ्रांस कुकर्मों को प्रोत्साहन देने में भी पहले नम्बर पर आता है।

स्वास्थ्य विज्ञानियों के अनुसार शराब पीना जहर पीने के समान है जो मस्तिष्क में हलचल उत्पन्न कर देता है। यह शारीरिक एवं मानसिक व्यवस्था को तो नष्ट करता ही है, साथ ही नैतिक एवं सामाजिक व्यवहार में भी व्यवधान उत्पन्न करता है। उनका कहना है कि असाध्य रोगों की जननी शराब है, जिसका विपरीत प्रभाव शरीर के प्रत्येक अंग-अवयव पर पड़ता है, विशेषकर मस्तिष्क पर। शराब का प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ने-की क्रिया से पता चलता है कि मस्तिष्क के कोशिका एवं स्नायु तन्त्र उतने ही प्रभावित होते हैं जितना कि दूसरे जहर का पान करने से। इसको पीने से भले ही मृत्यु न हो किन्तु मस्तिष्क और स्नायु तन्त्र में असाधारण परिवर्तन आ जाता है और मस्तिष्क की क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है, जिसका प्रभाव स्वयं के व्यक्तित्व में पड़ता है। लम्बे समय तक शराब पीने वाले लोगों का रक्त दूषित हो जाता है और लाल रक्त कणिकाओं की संख्या कम हो जाती है। ये कण ही ऑक्सीजन शोषित करते हैं एवं रक्त को शुद्ध होने के लिए हृदय तक पहुँचाते हैं।

शराब का सीधा प्रभाव मस्तिष्क में पड़ने के कारण ज्ञान तन्तु की शक्ति कम हो जाती है और स्मरण शक्ति स्वयं सोचने-विचारने एवं कुछ करने की क्षमता भी धीरे-धीरे नष्ट हो जाती है। प्रयोग परीक्षण के दौरान पाया गया कि ५० से १०० ग्राम नित्य शराब पीने वाले लोगों की संवेदनशीलता नष्ट हो जाती है एवं धीरे धीरे व्यक्तित्व में कठोरता, निष्ठुरता का समावेश होने लगता है।

यह सर्वविदित तथ्य है कि शराब पीकर कोई न तो बुद्धिमान एवं होशियार बना रह सकता है न सही ढंग से कार्य ही सम्पादित कर सकता है। मानसिक लकवे का प्रारम्भ शुरू में सोचने-समझने की क्षमता में कमी से होता है। धीरे-धीरे यह मनुष्य की उच्च क्रियाशीलता एवं रचनात्मक प्रवृत्ति को नष्ट कर डालता है। दैहिक एवं मानसिक शक्ति शिथिल पड़ जाती है। अंग अवयवों में चैतन्यता एवं स्फूर्ति का अभाव दीखने लगता है और अल्पायु में ही बुढ़ापे के चिन्ह परिलक्षित होने लगते हैं। दाँत टूटने, बाल झड़ने, शरीर पर झुर्रियाँ पड़ने तथा शरीर से ओजस, तेजस के लुप्त होने की प्रतिक्रिया क्रमशः दिखाई देने लगती है।

नशेबाजी एवं अपराधिक प्रवृत्ति एक-दूसरे से घनिष्ठता के साथ जुड़े हुए हैं। नशेबाजी की आड़ में ही आपराधिक प्रवृत्तियाँ बढ़ती एवं पनपती हैं। इन दिनों यह विश्वव्यापी संकट बनी हुई हैं। यह किसी कानून एवं थोपे गये अनुशासन से नियंत्रित नहीं हो सकता, क्योंकि जहाँ भी नशे के प्रति गहरा लगाव होगा, वहाँ अपराध होंगे। इसके लिए आवश्यक है, व्यक्तिगत स्तर पर प्रयास किये जायँ एवं छोटे रूप में अपने परिवार से इसको मिटाने एवं हटाने का अभियान चलाया जाय।

नैतिक एवं सामाजिक मर्यादा अनुशासन स्थापित करने के लिए आवश्यक है कि मनुष्य को इस आत्मघाती प्रवृत्ति से छुड़ाकर सृजन-प्रयोजन की ओर आगे बढ़ाया जाय तभी समाज से आपराधिक प्रवृत्तियाँ नष्ट होंगी एवं नैतिक मर्यादाओं एवं अनुशासन में बँधे श्रेष्ठ समाज की स्थापना हो पायेगी।

जान-बूझ-कर क्यों पीता है आदमी जहर

सिगरेट शब्द की परिभाषा करते हुए डा० जानसन ने अपने शब्दकोष में लिखा है- "सिगरेट कागज में लिपटे हुए तम्बाकू की एक नली आकार की ढाई या तीन इंच लम्बी एक वस्तु है जिसके एक सिरे पर धुँआ होता है तथा दूसरे सिरे पर होता है एक बेवकूफ आदमी।"

न केवल सैद्धान्तिकता और नैतिकता की दृष्टि से ही वरन् आधुनिक वैज्ञानिक शोधों के आधार पर अब तो यह और भी दृढ़तापूर्वक सिद्ध हो चुका है कि डॉ० जानसन की उक्त परिभाषा अक्षरशः सार्थकता की कसौटी पर खरी सिद्ध हुई हैं। मजे की बात तो यह है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धूम्रपान से शरीर पर होने वाले कुप्रभावों का अध्ययन और उनकी शोध जिस गति से चल रही है और उसके जो परिणाम सामने आते जा रहे हैं, वे जन-सामान्य तक पहुँचते हैं तो सिगरेट के धुओं में धुँधला देने का प्रयत्न और तेजी से चल पड़ता है। बड़ी हैरानी है कि आज के युग में हर मान्यता और सिद्धान्त को विज्ञान की कसौटी पर कसकर ही ग्राह्य करने वाली सभ्य पीढ़ी स्वास्थ्य के लिये सिगरेट के हानिकारक परिणाम को जानकर भी इसे छोड़ती नहीं। दो-चार व्यक्ति ही ऐसा कर रहे हों, यह बात नहीं है वरन् सिगरेट-धूम्रपान जिस गति से आधुनिक सभ्यता का प्रतीक चिन्ह बनता जा रहा है उसे देखते हुए कहना पड़ता है कि आज के बौद्धिक युग में भी धूम्रपान को सभ्यता का अंग मानकर अपनाने वाले लोग जो पूरी बौद्धिकता का दारोमदार अपने कंधों पर मानते हैं, कहीं बौद्धिक दृष्टि से दिवालिया तो नहीं हो गये ?

"न्यूजबीक" पत्रिका के अनुसार सिगरेट के दुष्परिणामों के विज्ञापनों से लड़ने के लिए एक समानान्तर विज्ञापन युद्ध अमेरिकन उद्योगपतियों ने छेड़ा है जिसमें वे "धूम्रपान" को समृद्धि का प्रतीक बताते हैं। बौद्धिक दिवालियेपन की यह चरम सीमा है।"

सिगरेट या धूम्रपान के कुप्रभावों पर आधुनिक विज्ञान की शोधों का उल्लेख करना यहाँ अप्रासंगिक न होगा। इस तथ्य से सभी भली-भाँति अवगत हैं कि सिगरेट में निकोटीन नामक विषैला पदार्थ होता है जो सर्वाधिक नशा उत्पन्न करता है। इसकी तीव्र मारक शक्ति का परिचय डा० कोलाग के शब्दों में इस प्रकार है—एक पौण्ड तम्बाकू में औसतन स्तर पर ३८० ग्रेन (लगभग २.२५ ग्राम) निकोटीन होता है। इतने निकोटीन से ३०० आदमी मर सकते हैं। एक मामूली सिगरेट में जितना तम्बाकू होता है उसके विष से दो आदमियों की जान ली जा सकती है।

जिस निकोटीन विष की ऊपर चर्चा की गयी वह एक रंगहीन और वाष्पशील तरल पदार्थ है जो गरम होने पर भाप के रूप में बदल जाता है। सिगरेट लगभग ८८४ डिग्री सेण्टीग्रेट तापक्रम पर जलती है। इतने तापमान पर जो रासायनिक प्रक्रियायें होती हैं उनके कारण सिगरेट का धुँआ विभिन्न पदार्थों का मिश्रण बनकर उड़ता है। जो आदमी के पेट में भी जाता है और संसार के वायुमंडल में भी। वैज्ञानिकों ने इस धुँए का विश्लेषण किया तो ३०० से भी ज्यादा रसायन विश्लेषित हुए। इन रसायनों में सर्वाधिक विषैले—डी० टी० आई०, एसोटीन, मिथेनाल, फार्मल, एसिटल्डिहाइड, एक्रोलिन, ग्लिसराल ग्लाइकॉल, एलिफेटिक और एरोमेटिक हाइड्रोकार्बन मुख्य हैं। ये रसायन तम्बाकू की पत्ती में नहीं होते। परन्तु उसके जलने से बन जाती है जो मनुष्य के शरीर में कई प्रकार के विषैले पदार्थ उत्पन्न करते हैं। अकेला निकोटीन ही ०.५ मिलीग्राम तक मुँह से प्रवेश करता है और मात्र वही कई रोगों का कारण बन जाता है।

अर्थात् एक बार में जितना निकोटीन शरीर के अंदर वाष्परूप में पहुँचता है वह यदि बाहर इकट्ठा किया जाता रहे तो उसकी पचीस सौवीं आवृत्ति में इतना निकोटीन इकट्ठा हो जाता है कि एक मनुष्य के मरने की संभावना उत्पन्न हो जाय। अर्थात् सात-आठ सिगरेट पीने वाला व्यक्ति इतने ही वर्षों में मृत्यु के लिये पर्याप्त निकोटीन पी लेता है। अन्य विषैले रस रसायन जो इकट्ठे होते हैं वे तो अलग ही ठहरे। शरीर के वे अवयव जो अनावश्यक तत्वों का निष्कासन करते हैं इतना ही दबाव झेल पाते हैं जितना कि स्वाभाविक और प्रकृति के संसर्ग में रहने से होता है। वह प्रभाव जो मनुष्य के अपने अभ्यासों से हानिकारक रूप में उत्पन्न होता है—शरीर के अवयवों की क्षमता से परे है। वे अवयव उन विजातीय द्रव्यों को भी बाहर को अधिक देर तक न झेल पाने के कारण कमजोर और जीर्ण भी होने लगते हैं। यही कारण है कि कालान्तर में कैंसर, हृदयरोग, अल्सर, श्वाँस, दमा, अन्धता आदि जैसे भयानक रोगों से लेकर अन्य कई छोटे-मोटे रोग भी आ घेरते हैं। घातक रोगों का जब तक पता चलता है तब तक काफी देर हो चुकी होती है और मनुष्य के आगे तड़प-तड़पकर मर जाने के अतिरिक्त कोई मार्ग ही नहीं बचा रहता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिक शोधों से यहाँ तक पता लगाया जा चुका है कि धूम्रपान करना तो दूर रहा, धूम्रपान न करने वाले पर साथ में रहने वाले व्यक्ति भी सिगरेट, बीड़ी के धुँए से होने वाले हानिकारक प्रभावों को नहीं झेल पाते हैं। हाल ही में लंदन के तीन डाक्टरों ने इस सम्बन्ध में अनेक परीक्षण किये हैं। इसके लिये उन्होंने बीस ऐसे व्यक्तियों को लिया जिनमें से दस तो सिगरेट पीते थे और दस नहीं पीते थे। उन्हें एक ऐसे कमरे में रखा गया था जहाँ काफी मात्रा में सिगरेट का धुँआ भरा हुआ था। दोनों तरह के लोगों का रक्त परीक्षण तुलनात्मक अध्ययन प्रयोग के पहले और प्रयोग के बाद किया गया। प्रयोग के बाद वाले परीक्षण में यह पाया गया है कि बीसों ही व्यक्तियों के रक्त में कार्बन-मोनोक्साइड की मात्रा बढ़ गई थी और धूम्रपान करने वालों की तुलना में धूम्रपान न करने वालों को सिगरेट के धुँए ने अधिक प्रभावित किया था।

धूम्रपान के कारण अनिवार्य रूप से खून में कार्बन मोनोक्साइड की मात्रा बढ़ जाती है। रक्तचाप सम्बन्धी रोग भी धूम्रपान के कारण होते हों तो कोई आश्चर्य नहीं है। यह बात अलग है कि स्वस्थ व्यक्ति का रक्त संस्थान बढ़े हुए कार्बनमोनोक्साइड का विषैला प्रभाव नष्ट करता रहे पर अतिरिक्त भार वाली बात यहाँ भी लागू होती है और स्वच्छता अवयव वहाँ भी अपना काम करने में अशक्य होते जाते हैं। फलतः देर-सबेर रक्त में कार्बनमोनोक्साइड की मात्रा बढ़ ही जाती है। स्मरणीय है कि रक्त में इस तत्व की मात्रा तीन प्रतिशत से जैसे ही अधिक हुई, शरीर में जड़ता आने लगती है।

कैंसर और क्षय रोग की संभावना धूम्रपान करने वालों में अधिक रहती है। कारण कि सिगरेट का धुँआ फेफड़ों को प्रभावित करता है। फेफड़ों पर जैसे ही कोई विषैला प्रभाव हुआ, क्षय रोग घेर लेता है और इधर रक्त में कार्बन मोनोक्साइड का बढ़ना, कैंसर का डर पैदा करता है, क्योंकि अधिक प्रतिशत में बढ़ा वह तत्व रक्त की ऑक्सीजन धारण करने की क्षमता कम कर देता है। इससे हृदय और श्वसन तंत्र पर भी काफी दबाव पड़ता है। हृदय को फेफड़े तक रक्त पहुँचाने के लिए अधिक कार्य करना पड़ता है। फलस्वरूप हृदय दौर्बल्य, फेफड़ों में कैंसर और अन्यान्य इसी प्रकार के असाध्य रोग उत्पन्न होते हैं।

धूम्रपान की अधिकता अल्सर रोग का भी कारण बनती है। इस संबंध में नयी खोजें हो रही हैं और अभी परिणाम आने शेष हैं। अब तक के परीक्षणों से यह तो सिद्ध हो ही चुका है कि धूम्रपान अल्सर को बढ़ाने का भी कारण बनता है। कुछ नयी खोजों के अनुसार धूम्रपान अन्धत्व का कारण भी बन सकता है। अधिक मात्रा में बीड़ी, सिगरेट का सेवन करने वालों में आँखों के लैंस में निकोटीन जमा होने लगती है और धीर-धीरे खराबी आने लगती है जो अंततः अंधत्व के रूप में फलती है।

समझदारी का तकाजा है कि जानते-बूझते आँखों देखे इस विष को अपने भीतर न उतारा जाय। असावधानीवश कोई जहरीली चीज अपने शरीर में पहुँच जाय तो भी उसे तुरन्त निकालने की व्यवस्था करते हैं। फिर जान-बूझकर यह विष अपने अंदर जाने देने में कौन सी समझदारी है, क्या कहा जाय ?

बढ़ती नशेबाजी के दुष्परिणाम

मानवी सुविधाओं और आदतों में वैज्ञानिक और बौद्धिक विकास ने भारी हेर-फेर किया है। लोग लम्बे जीवन की अपेक्षा मस्ती की स्थिति अधिक पसंद करने लगे हैं। दूसरे को मौत के घाट उतारने के मनोरंजन की तरह लोगों को यह अधिक पसंद आने लगा है कि मरने तक बुढ़ापे का इन्तजार न किया जाय। भरी जवानी में ही दम तोड़ दिया जाय।

इसी प्रकार जल्दी ही, बिना परिश्रम की अधिक कमाई करने के लिए सस्ता तरीका यह है कि दूसरे का खून कर दिया जाय। ठगने में बड़ा सा प्रपंच करना पड़ता है और उसमें यह आवश्यक नहीं कि जाल में शिकार फँस ही जाय। ऐसी दशा में यह जल्दी का काम है कि आदमी को मौत के घाट उतार दिया जाय। उसे किसी प्रकार के विषैले रसायन में लपेटकर अर्धविक्षिप्त कर दिया जाय। लूट का यह तरीका भी कारगर है। हत्या के लिये नितान्त एकान्त की जरूरत पड़ती है या फिर अपने को मौके से हटाने वाले द्रुतगामी वाहन या अदृश्य होने जैसे भीड़ भरे घमासान की।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्नति के क्षेत्र में पाश्चात्य देशों में बहुत बेचैनी है। वहाँ उन्नति की परिभाषा है कि जितनी जल्दी हो सके, जितनी अधिक हो सके मौज-मजा लूटने में कोताही न की जाय।

उपरोक्त दानवी उद्देश्य की पूर्ति के लिये कितने ही तरीके खोज निकाले गये हैं। जिसमें सर्वसुलभ है—ऊँचे दर्जे की नशेबाजी। यों नशों में चाय, कॉफी और सिगरेट की भी गणना की जाती है पर उन्हें गरीबों, प्रतिगामियों और मन्दगति से संतोष करने वालों के लिये छोड़ दिया गया है। अधिक उत्तेजक नशों में पिछले दिनों अफीम और शराब ही का दौर था। इनमें भी अफीम घटिया समझी गयी, क्योंकि वह सुस्ती लाती है। धुंआधार स्फूर्ति की जिन्हें आवश्यकता है, उन्हें शराब का गहरा नशा चाहिये।

प्रगति के लिये यह आवश्यक नहीं कि वह श्रेष्ठता की दिशा में ही हो, वह नृशंसता और निकृष्टता की दिशा में भी हो सकती है। मारक उपकरणों की दिशा में प्रगति करते-करते धरती को धृति बनाकर उजाड़ने की क्षमता वाले परमाणु आयुध तैयार कर लिये गये हैं। अपराधों के इतने विचित्र तरीके आविष्कृत कर लिये गये हैं कि पुलिस और प्रशासन को उनकी चतुरता के सामने अपने को असमर्थ ही घोषित करना पड़ता है। अपराधियों में कुछ को ही पकड़ना और सुधारना बन पड़ता है।

असाधारण प्रगति का क्षेत्र नशेबाजी की दिशा में भी बढ़ा है और जो व्यक्ति या समाज अपने को जितना अधिक कुशल मानता है वह अपना बढ़ा-चढ़ा हौसला दूसरे उपयोग में दिखाता है।

वैज्ञानिक प्रयोगशालायें आये दिन कुछ न कुछ अजूबे विनिर्मित करती रहती हैं। उसी प्रकार तस्करों ने हैरोइन स्तर के अनेक नाम रुप वाले मादक द्रव्य बनाये हैं। इनका नशा जितनी मस्ती लाता है उतना ही घातक भी होता है, साथ ही महँगा भी। पर अब वह इतने बड़े पैमाने पर कानून को अँगूठा दिखाते हुए बनता है कि उसका मूल्य संसार भर के खाद्य के समतुल्य माना जा सकता है। जलयानों, वायुयानों, डोंगियों, पैदलों, गधों, ऊँटों आदि के माध्यम से इनकी तस्करी चलती है। करोड़ों रुपया रोज का यह माल पकड़ा भी जाता है पर जो नहीं पकड़ा जाता वह अपेक्षाकृत सैकड़ों गुना अधिक होता है। यही कारण है कि पकड़े जाने के घाटे को ऐसे ही बट्टे खाते में डालकर अपना कारोबार धड़ल्ले से चलाते रहते हैं।

कुछ समय पूर्व हैरोइन की १/२ चम्मच मात्रा २०० डालर में आती थी, पर अब ३५ डालर में ही आने लगी है। इतना मँहगा नशा साधारण कमाई वाला आदमी नहीं कर सकता। इसके लिए वह उठाईगीरी, जेबकतरे जैसे काम, धन्धे नहीं चलाना चाहता। इसके लिये अधिक पैसे वालों पर हाथ साफ करना पड़ता है। वे हत्या के ही जुर्म हो सकते हैं। ये नशे ऐसे हैं जो एक बार आदत में शामिल हो जाने पर फिर किसी प्रकार पीछा नहीं छोड़ते। अपनी जान गँवाना या दूसरे की जान लेना जहाँ यही दो विकल्प हों, वहाँ मनुष्य दूसरे की जान लेना पसन्द करेगा।

नशेबाजी के साथ अपराध जुड़े हुए हैं। इसलिये पकड़े हुए अपराधियों में प्रायः ८५ प्रतिशत नशेबाज होते हैं। उनका विवेक और मानवता की मात्रा बहुत पहले ही विदा ले चुके होते हैं। साधारण धन्धे करने की स्थिति उनकी रहती नहीं। रहे भी तो उससे इतनी आमदनी नहीं होती, जिससे बढ़ी हुई नशे की आवश्यकता पूरी हो सके।

यही बात मध्यम श्रेणी ने नशे के संबंध में बहुत हद तक लागू होती है। शराब का चस्का भी ऐसा है जो सामान्य बुद्धि को गुजारा चलाने लायक नहीं रहने देता। इसके लिये दान या भिक्षा का सहारा भी नहीं लिया जा सकता। यही कारण है कि बड़ी आयु के नशेबाज तो पेशेवर अपराधी बन जाते हैं। किशोर लड़के भी जिस-तिस प्रकार छोटे-बड़े नशे की कुटेब से ग्रसित हो जाते हैं और पढ़ना या कमाना छोड़कर अपराधों के तरीके सीख लेते हैं। इसके परिणामस्वरूप वे अपराधों में ही तल्लीन नहीं होते, अपना अच्छा-खासा स्वास्थ्य भी गँवा बैठते हैं। मनोबल भी ऐसा नहीं रहता कि अपनी कुटेबों से छुटकारा पाने का साहस दिखा सकें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पाश्चात्य देशों में सहशिक्षा का प्रचलन होने से लड़कों के सम्पर्क में लड़कियाँ भी यह आदत सीख लेती हैं। दुस्साहस भरे आक्रामक अपराध करने योग्य तो उनका शरीर होता नहीं। पैसे की बढ़ी हुई आवश्यकता घर से भी पूरी नहीं होती। इसलिये वे छोटी उम्र से ही व्यभिचार का आश्रय लेती हैं और वयस्क होने से पूर्व ही अवैध संतान की जन्मदात्री बन चुकी होती हैं या गर्भपात करा चुकी होती हैं। स्कूली सर्वेक्षण से इस तथ्य पर पहुँचा गया है कि कॉलेज में प्रवेश करने से पूर्व ही अधिकांश छात्रायें यौनाचार का रसास्वादन कर चुकी होती हैं।

शारीरिक-मानसिक खोखलापन, अधूरी शिक्षा, उपार्जन के साधनों का अभाव नशेबाजी की देन है। ऐसे युवक अवारागर्दी का ही शिकार बनते हैं। धनी देशों और तथाकथित प्रगतिशीलता के फलस्वरूप वहाँ ऐसी स्थिति बनती जाती है जो गरीब देशों की अभावग्रस्तता से भी अधिक दुखदायी है। अमेरिका के भूतपूर्व राष्ट्रपति निक्सन ने हैरोइन स्तर के ऊँचे नशों को "पब्लिक एनिमी नम्बर वन" बताया था और उसकी रोकथाम के लिये निषेधात्मक, दण्डात्मक, प्रचारात्मक कितने ही कड़े तथा खर्चीले कदम उठाये थे। वे कहते थे कि प्रजाजनों का स्वास्थ्य, मनोबल, चरित्र गँवा बैठने के उपरान्त देश की आर्थिक एवं सैद्धान्तिक प्रगति का कोई महत्त्व नहीं रह जाता। इसलिये बाहरी खतरों की तुलना में इन भीतरी खतरों को भी चिन्ताजनक ही मानना चाहिये।

दुर्भाग्य यह है कि धनी देशों में जहाँ हैरोइन स्तर के न छूटने वाले एवं प्राणघातक नशों की आदत पड़ी है वहाँ गरीब देशों ने शोधित एवं अशोधित शराब तथा भाँग, गाँजा, चरस, अफीम आदि नशों को अपनाने में अपनी बहादुरी दिखाना आरभ किया है। यह आत्महत्या का आरम्भिक चरण है। इसी कुटेब के परिपक्व हो जाने पर मनुष्य अपने व्यक्तित्व को ही गँवा बैठता है और शारीरिक, मानसिक, नैतिक एवं आत्मिक स्तर पर जीर्ण-शीर्ण होकर अकाल मृत्यु मरता है। अपराधी प्रवृत्तियाँ बढ़ जाने पर उसका सामाजिक स्तर भी कुछ नहीं रह जाता। यह प्रकारान्तर से समाज की मृत्यु है, जिसे रोकने के लिये यथासम्भव प्रयास किये जाने चाहिये।

नशेबाजी में हानि ही हानि है

प्रगतिशीलता किसी के शौर्य पराक्रम का चिन्ह माना जाती रही है। सामान्य मनुष्य में जो गुण पराक्रम होने चाहिए उससे एक कदम आगे बढ़कर जो अपनी विशेषता प्रदर्शित कर सके उसे पराक्रमशाली प्रगतिशाली कहा जाता है। किन्तु वे पुरातन परिभाषायें उल्टी हो गई हैं। जो वर्जनाओं की अवज्ञा करे-उनका उल्लंघन करे, उन्हें प्रगतिशील कहा जाने लगा। सही परिभाषा के अनुसार गुण, कर्म स्वभाव में जो अनुकरणीय विशेषता प्रदर्शित करे, अपने बल पराक्रम का, शौर्य, साहस का प्रदर्शन जिन कामों में हो उन्हें विशिष्ट माना जाता है और प्रशंसनीय भी।

इन दिनों बात उल्टी हो गयी है। जो अनुशासन तोड़े—नीति-नियमों का उल्लंघन करे, वह अपने को प्रगतिशील एवं विशिष्ट कहता है। ऐसे ही दुष्कृतों में लड़कियों की छेड़-छाड़, गुरुजनों के साथ उद्दंड व्यवहार, और नग्न स्तर के वस्त्र पहनना जैसी उद्धत क्रियायें करने वाले मूँछें ऐठते और अपनी शौहरत का प्रदर्शन करते पाये जाते हैं।

इसी संदर्भ में एक नशेबाजी का भी प्रचलन हो गया है। नशा पीकर अपने को उद्धत स्थिति में ले पहुँचना असभ्यता का एक अंग है और उसे करते हुए किसी को भी लज्जा आनी चाहिए। सज्जनों के सम्मुख इस स्थिति में पहुँचते हुए किसी को भी अपने लिए बुरी बात अनुभव करनी चाहिए पर इन दिनों इस उल्टे प्रचलन में नशेबाजी को भी बड़प्पन में गिने जाने का प्रचलन चल पड़ा है। नशा निषिद्ध वस्तुओं में है। उसे पीकर व्यक्ति अपनी शारीरिक मानसिक, परिवारिक, सामाजिक, आर्थिक हानि करता है। होश-हवाश खो बैठने की स्थिति अपना लेना असभ्यता का चिन्ह है। पर लोग उसे अपनाने में शान समझने लगे हैं।

कुछ समय पहले अनेक प्रकार के चित्र-विचित्र नशों का रिवाज था। भाँग, अफीम, गाँजा, सुलफा, मादक आदि कई प्रकार के बनते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और कई प्रकार से प्रयोग होते थे। उनके स्वाद और नशे भी कई प्रकार के होते थे। अब वे दो में केन्द्रित हो गये हैं—एक सिगरेट दूसरे शराब। आरंभ करते समय इनके लिए पैसा खर्च करने वाला किसी लाभ की आशा नहीं करता। उसके दिमाग में एक ही बात रहती है कि तथाकथित बड़े आदमी इनका सेवन करते हैं। इसलिए उनकी नकल करते हुए खुद भी बड़ा आदमी बना जाय। स्वाद के लिए भी इन्हें नहीं पिया जाता है क्योंकि आमतौर से वे कड़ु और दुर्गन्धयुक्त होते हैं। गुणों की ढूँढ़-खोज करने पर जैसे-तैसे बात कही जाती है कि उनके सेवन से फुर्ती आती है। थका हुआ शरीर जब अधिक काम करने से इन्कार करता है तब इनके द्वारा उसी स्तर का प्रभाव उत्पन्न किया जाता है जैसे थके हुए घोड़े पर हंटर का प्रभाव होता है। हंटर में कोई निजी शक्ति नहीं है। वह थके हुए शरीर को उत्तेजित और मजबूर करता है कि वह विश्राम की आशा न रखे प्रताड़ना का आघात पाकर जैसे भी बने जीते-मरते दौड़ लगानी चाहिए। बास यही है नशे के आधार पर फुर्ती मिलने का कारण। पर थके लोग ही नशा पीते हों ऐसी बात नहीं। उसे फैशन के लिए, बड़प्पन की शान के लिए भी पिया जाता है।

लोग सिगरेट को मुँह में लगाये ही रहते हैं। एक ठंडी नहीं हो पाती कि दूसरी सुलगा ली जाती है। आरम्भ में फिजूलखर्ची को बड़प्पन की निशानी समझकर ठाठ-बाठ प्रदर्शन के लिए उसे पिया जाता है। पीछे वह एक लत बन जाती है। छोड़ते बनती नहीं। बहुत-सी कुटेवें ऐसी हैं जो आरम्भ में शेखी-खोरी की दृष्टि से अपनाई जाती हैं किन्तु बाद में वे ऐसी मुँह लगती हैं कि छुड़ाये नहीं छूटतीं। सिगरेट का भी वही हाल है। अब सस्ते दाम की बीड़ी पीने में बेइज्जती समझी जाती है। सिगरेटों में भी जितने ऊँचे दाम की खरीदी जाय उतनी ही शान बनती है। लत वालों के लिए एक-दो रुपये रोज की सिगरेट पी जाना मामूली बात है। पहले गुरुजनों के सामने मुँह छिपाकर पीते थे। माता-पिता के सामने पीना उनकी बेइज्जती मानी जाती थी पर अब ऐसी बात नहीं रही।

भाँग, अफीम, गाँजा, सुलफा नशे कहे जाते हैं। शान ने सीधी छलाँग सिगरेट के बाद शराब पर लगाई है। यार-दोस्तों का सम्मान शराब से होता है। जो नहीं पीते वे छोटे आदमी माने जाते और असभ्य समझे जाते हैं। रिश्वत के रूप में शराब पेश की जाती है। नकद पैसा देने में हिचक भी होती है पर शराब पेश करने में वैसी कोई बात नहीं है। यह इज्जत बढ़ाने वाली रिश्वत तो सरकारी अफसरों के बीच खुलेआम चलती है। साथ में खुद को भी पीना पड़ता है। घर-दफ्तर में इसे पेश करने में कुछ हिचक लगती हो तो होटल में इशारा करते ही काम चल जाता है। इसके लिए आग्रह भी नहीं करना पड़ता। फिर अकेली शराब भी नहीं पीय जाती, माँस से बनी दूसरी चीजें भी होती हैं।

शराब और भी जल्दी पियक्कड़ को अपना आश्रित बना लेती है। आरंभ में शौक-मौज की दृष्टि से यदा-कदा पी जाती है। दोस्ती में, दावत में पीछे वह इस तरह गरदन पकड़ती है कि छुड़ाये नहीं छूटती। बार-बार उसे पीने को मन चलता रहता है। न पीने पर मन में व्याकुलता होती है। कुछ कदम और आगे बढ़ने पर, स्थिति ऐसी हो जाती है कि शराब पिये बिना शरीर काम ही नहीं करता। ऐसा लगता है कि लंघन में से उठे है। या बुखार से उठकर लड़खड़ाते हुए खड़े हो रहे हैं।

सिगरेट या शराब के नशों से हानि लाभ न समझते हों सो बात नहीं है। आये दिन पत्र-पत्रिकाओं में ऐसे लेख छपते रहते हैं जिनमें इनकी हानि पर प्रकाश डाला जाता रहता है। सिगरेट का कैंसर से सीधा सम्बन्ध है। वह श्वाँस नलिका को, फेफड़े को, आमाशय को, मस्तिष्क को सीधी हानि पहुँचाती है और इन अवयवों से संबंधित अनेकों बीमारियाँ सामने ला खड़ी करती है। अलग पैसा तो खर्च होता ही है।

शराब एक प्रकार का जहर है। वह पाचनतंत्र को बुरी तरह जला देता है। जिगर गुर्दे, आँतें, आमाशय सभी बुरी तरह प्रभावित होती हैं, वे अपना काम ठीक तरह कर सकने योग्य नहीं रहते हैं। आरंभिक दिनों में वह नुकसान प्रत्यक्ष दिखाई नहीं पड़ता पर कुछ ही

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दिनों में इन अवयवों से सबन्धित बीमारियाँ प्रत्यक्ष प्रकट होने लगती हैं। शराब पीने पर भी व्यक्ति अच्छे आदमी की तरह काम करने योग्य नहीं रहता।

सबसे अधिक प्रभाव दिमाग पर पड़ता है। पीते ही नशा आता है और आदमी पागल जैसा हो जाता है। नशा उतरने पर भी मस्तिष्क की कुशाग्रता चली जाती है। हर समय क्रोध और आवेश छाया रहता है। बुद्धि सही निर्णय नहीं कर पाती। अर्ध-पागल जैसी स्थिति सदा बनी रहती है। अधिक पी जाने पर तो और भी बुरा हाल हो जाता है। घर में मारपीट, गाली-गलौज का दुर्व्यवहार होता रहता है। पैसे के प्रश्न को लेकर पत्नी, भाई, माता, पिता आदि से कलह होती है। अपनी कमाई कम पड़ती है। इसलिए दूसरों से अनुचित काम के लिए छीन-झपट करने पर कलह होना ही चाहिए। ऐसी दशा में जहाँ दरिद्रता छाई रहती है वहाँ कलह भी कम नहीं होती।

शराबी अप्रमाणिक माना जाता है। उसकी इज्जत नहीं रहती, कोई भरोसा नहीं करता। मूर्ख और निर्लज्ज समझा जाता है। इन परिस्थितियों में हर आदमी उससे बचने की कोशिश करता है। किसी प्रकार की सहायता करना तो दूर, अप्रामाणिक व्यक्ति अपराधियों की गणना में गिना जाता है। चोर-उचक्के चाहे अपने यहाँ सीधा आक्रमण न करें तो भी हर आदमी उनसे घृणा करता है और चौकसा रहता है।

शराबी के घर में सदा तंगी छाई रहेगी। ऐसी दशा में जरूरी कामों के लिए भी वह पैसा जुटा नहीं पाता। हारी-बीमारी, बच्चों की शिक्षा, सामाजिक मान मर्यादा जैसे कार्यों में उसे पग-पग पर अपमानित होना पड़ता है। अभावग्रस्त स्थिति हर समय उसे नीचा दिखाती है।

शराबी की औलाद भी बाप के दुर्गुण सहज ही सीख जाती है। वंश परम्परा साथ चलती है। गरीबी, घर के वातावरण की विपन्नता घृणा, मारपीट जैसे कारणों से संतान पर हर घड़ी आक्रोश छाया रहता है। उनमें भी कई प्रकार के दीर्घ दुर्गुण आरंभ से ही पलने और बढ़ने लगते हैं। बच्चे आज्ञाकारी तो जाते हैं और थोड़े समर्थ होते ही बाप से बदला चुकाने के लिये तनकर खड़े हो जाते हैं और मारपीट तक करने से नहीं चूकते। शिक्षा और संस्कृति के अभाव में बच्चे अपने निज के जीवन में भी किसी दिशा में उन्नति करने योग्य नहीं रह जाते, आवारागर्दी में घूमते हैं। फलतः बाप की तरह बेटे भी समाज में पग-पग पर अपमानित होते हैं। उनके विवाह-शादी का प्रश्न आता है तो भी लोग विचर जाते हैं। लड़के-लड़की दोनों को ही कुसंस्कारी मान लेते हैं और उनके साथ संबंध जोड़ने में हिचकिचाते हैं।

जिस प्रकार दाद, खाज, तपैदिक आदि शारीरिक क्षेत्र में छूत के रोग माने जाते हैं उसी प्रकार शराबी भी एक प्रकार का नैतिक रोगी है उससे लोग स्वयं बचते हैं और अपनों को बचाने की कोशिश करते हैं उन्हें भय रहता है कि ऐसे व्यक्ति के पास बैठने से वे दुर्गण अपने को भी लग सकते हैं और सर्वनाश कर सकते हैं।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नशेबाजी की आत्मघाती लत

चाय-कॉफी तो अब दैनिक मजेदारी की चीज हो गई है। बीड़ी-सिगरेट बड़प्पन की निशानी है। पीने वाले कहते हैं, इससे फुर्ती आती है और काम अधिक होता है। दूसरे, लोगों पर मालदार और खर्चीले, बड़े आदमी होने की छाप पड़ती है। पैसे की बात ध्यान में आती है तो अकेले-दुकेले होने पर राह चलते बीड़ी से भी काम चला लेते हैं पर जब यार-दोस्तों का साथ हो, फिर सिगरेट बिना काम नहीं चलता। इनमें भी अधिक महँगाई वाली के इस्तेमाल करने से शान बनती है। इससे आगे का सबसे ऊँचा दर्जा शराब का है। उसे हर वक्त सिगरेट की तरह नहीं पिया जाता, जरुरत पर पार्टी जैसा माहौल बना होता है या बनाया जाता है, तब तो शराब ही चाहिए। अभ्यासी नशेबाज तो रात को अकेले में पीते हैं, किन्तु जिन्हें शान जतानी है, उन्हें खुद पीनी चाहिए और दूसरों को पिलानी चाहिए, यह फैशन बन गया है। अभ्यासियों को तो नींद आ जाती है पर खुराफाती दंगा मचाते, जो चाहे सो बकते, मार-पीट करते देखे गये हैं। गहरा नशा चढ़ गया तो घर और गली कूचों में अन्तर दिखाई नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पड़ता। ढूँढ़-खोज होती है तो घर वाले जहाँ-तहाँ से पकड़कर ले जाते हैं। सस्ती में नशा ज्यादा होता है और मौत का दिन भी जल्दी नजदीक आता है। मँहगी में पैसा अधिक लगता है, सो मरने से पहले घर को इस तरह खोखला बना देती है कि काठी-कफन के लिए पड़ोसियों से माँगना पड़े। घर के जेवर आदि तो पहले ही बिक चुके होते हैं।

पूछने पर नशेबाज कहते हैं कि पीने में बड़ा मजा आता है। इस मजे की परिभाषा भी वे स्वयं ही कर सकते हैं। जायके में सभी कड़ुवे होते हैं। अफीम, शराब, सभी कड़वे। गाँजा, चरस, हैरोइन, स्मैक पीते ही सिर घूमता है और लगता है, यहाँ गिरे वहाँ उड़े। फिर पीने वाले यही कहते हैं कि बड़ा मजा आया। यह शौक संगति से लगता और लगाता है। जो इनके अभ्यस्त होते हैं वे दोस्ती में, स्वागत-सत्कार में पीने का आग्रह करते हैं। कहना न मानने पर नाराज होने की धमकी देते हैं। कुछ ही दिन यह हाँ, ना चलती है। आदत पड़ जाने पर तो खुद ही बेचैनी उठती है और जरूरी काम छोड़-कर भी लगी लगन को शान्त करने की ठेलाठेली मचती है।

नशों का कया प्रभाव होता है यह किसी से छिपा नहीं है। करने वालों से भी नहीं, क्योंकि वे बिरादरी वालों की दुर्गति अपनी आँखों देख चुके होते हैं। उन्हें किसी ने समझाया न हो तो बात भी नहीं। हितू-सम्बन्धी दबी जबान से या कड़ककर इसका परिणाम अनेकों बार बता चुके होते हैं। कहना न मानने का नतीजा क्या होगा, यह समझाने में भी वे चूके न होंगे। उनके सामने कहना मानने, वैसा ही करने का वचन भी देते हैं। पर आदत तो आदत, छूटने का नाम नहीं लेती।

नशा पीते समय में फुर्ती की मस्ती भी लाते दिखाई पड़ते हैं पर धीमी आत्महत्या की तरह शरीर के महत्त्वपूर्ण अवयवों को नष्ट करने में क्रमबद्ध रूप में जुटे रहते हैं। पाचन तन्त्र, फेफड़े, हृदय, मस्तिष्क, जिगर, गुर्दे, आँतें यही शरीर के प्रमुख अंग हैं। नशा एक भी ऐसा नहीं होता जो इनमें से किसी न किसी को अथवा कइयों को नष्ट-भ्रष्ट न करे। आरम्भ में पता नहीं चलता, जब अवयवों की खराबी कष्ट देती है तभी नया नशा पीकर गम गलत कर लिया जाता है। पर वह धीमी आग सुलगती ही रहती है और शरीर को विषैला करके इस स्थिति में कई प्रकार की बीमारियाँ प्रत्यक्ष प्रकट होने लगतीं और इलाज करने पर भी किसी तरह काबू में नहीं आती हैं।

नशों का तत्काल एवं सबसे अधिक प्रभाव मस्तिष्क पर पड़ता है। मजा, मस्ती, फुर्ती आदि जो कुछ दीखता है उसका केन्द्र मस्तिष्क है। यह सबसे अधिक संवेदनशील तन्त्र है। इसी पर नशे का दुष्प्रभाव सबसे अधिक छाया रहता है। फलतः कल्पना शक्ति, स्मरण शक्ति, विवेक शक्ति आदि जो कुछ मानसिक विशेषतायें हैं, वे पहले झीनी पड़ती हैं, अन्ततः उल्टी हो जाती हैं जिससे सामने प्रस्तुत समस्याओं में से किसी का भी समाधान उसके लिये संभव नहीं रहता। वह उल्टा सोचता और उल्टा करता है, फलतः उलझनों में निरन्तर फँसता जाता है। इससे दूसरों के सामने वह मूर्ख, नासमझ, बुद्धू, जिद्दी आदि विशेषताओं वाला गया-बीता आदमी बनता जाता है।

नशे सस्ते नहीं हैं। उनकी कीमतें बढ़ी-चढ़ी होती हैं। आज जब कि कोरा खर्च जुटाना महँगाई के कारण बोझिल बन गया है तब नशेबाजी का निरन्तर बढ़ता खर्च कहाँ से जुटे। स्पष्ट है कि उसके लिए उसे बेईमानी-बदमाशी करनी पड़ेगी अथवा जमा पूँजी का सफाया होता जायगा और कर्ज लेकर काम चलाने की स्थिति आ जायेगी। ऐसे आदमी लिया हुआ कर्ज वापिस तो कभी कर ही नहीं सकते। अन्य बदमाशियाँ भी खुलती जाती हैं। अतएव नशेबाज पूरी तरह अप्रामाणिक बन जाता है। कोई उसकी बात का भरोसा नहीं करता। अपने परिवार से घनिष्टता नहीं बनने देता, सहायता का अवसर आने पर स्पष्ट शब्दों में अथवा जिस-तिस बहाने इन्कार ही कर देता है। एक बार सहायता कर देने पर बार-बार वह पीछे लगा रहता है इसलिए समझदार सहायता के नाम पर पहली बार में ही स्पष्ट इन्कार कर देते हैं और अन्य परिचितों को भी सावधान कर देते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नशेबाजों की सन्तानें हर दृष्टि से बर्बाद हो जाती हैं। यदि आदत पड़ने के बाद सन्तान जन्मी है तो जन्म के साथ ही वह दुर्बुद्धि वंश-परम्परा के रूप में साथ आती है। यदि बाद की बात है तो भी बच्चे आये दिन जो दुर्मति दुर्गति देखते हैं उसका कुप्रभाव धीरे-धीरे एकत्रित करते जाते हैं। ऐसे पिताओं के प्रति किसी प्रकार का मान-सम्मान तो रहता ही नहीं। पति-पत्नी में आये दिन कलह होते हैं। इसे बच्चे देखते हैं और मन में घृणा-तिरस्कार एकत्रित करते हैं। कुछ समर्थ होने पर सीधे सामना करते हैं और बदला चुकाते हुए उसकी भरपाई कर लेते हैं जो उनने पत्नी तथा बच्चों की जिन्दगी बरबाद करते हुए किया था। घर में घुसते ही जिसे कंगाली, दुर्गति, तिरस्कार और दुर्व्यवहार का सामना करना पड़े, उसे जीवित रहते हुए भी नरक भुगतने वाला कहा जाये तो इसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं है। नशेबाज न केवल अपना वरन् सन्तान का भी विश्वास और सम्मान गँवा बैठता है।

जिसने स्वास्थ्य, मानसिक संतुलन, सम्मान, पैसा सब कुछ गँवा दिया, उसके पास बचा क्या ? जिसके प्रति बच्चों के सम्बन्धी-कुटुम्बियों के मन में गहरा तिरस्कार भरा है उसकी इज्जत और सहायता कौन करेगा। आड़े समय में कोई उसके काम क्यों आयेगा ? ऐसे लोगों की सन्तानें किसी सम्मानास्पद स्थिति तक नहीं पहुँच सकतीं।

सभी डरते रहते हैं कि इनका बाप जब ऐसा था तो यही क्यों कर भला आदमी हो सकता है और किसी सौंपी हुई जिम्मेदारी को वह कैसे ईमानदारी के साथ निभा सकता है ? उसके चरित्र में प्रामाणिकता का समावेश कैसे हो सकता है ?

नशेबाज समय से पहले मरते हैं। बीमारियाँ उन्हें पहले ही आ घेरती है और अन्त में अकाल मृत्यु के मुँह में असमय ही जाने के लिए विवश होना पड़ता है। इतनी हानियाँ समझने पर भी यदि कोई आत्मघात पर उतारू हो तो इसे विडम्बना ही कहा जा सकता है।

नशेबाजी—भोंड़ी आत्महत्या !

भगवान बुद्ध ने एक बार कहा था, मनुष्यो ! तुम सिंह के सामने जाते समय भयभीत न होना, वह पराक्रम की परीक्षा है। तुम तलदार के नीचे सिर झुकाने में न डरना, वह बलिदान की कसौटी है। तुम पर्वत शिखर से पाताल में कूद पड़ना, वह तप की साधना है। तुम बढ़ती हुई ज्वालाओं से विचलित न होना, वह स्वर्ग परीक्षा है। किन्तु शराब से सदा भयभीत रहना क्योंकि वह पाप और अनाचार की जननी है।"

नशे समस्त बुराईयों की जड़ हैं। संसार में हुए हिंसात्मक घटनाओं एवं नैतिक अपराधों का सर्वेक्षण किया तथा उन अपराधियों का निरीक्षण किया जाय जो उनके कारण रहे तो स्पष्ट होगा कि अधिकांश अपराधियों में नशेबाजी की विशेषतया मद्यपान की प्रवृत्ति रही है। जिन राष्ट्रों में मद्यपान की प्रवृत्ति अधिक है वहाँ अपराध भी उतने ही अधिक होते हैं। अमेरिका, इंग्लैण्ड, सम्पन्न राष्ट्र हैं। किन्तु शराब की खपत इन राष्ट्रों में सर्वाधिक है। अपराध की घटनाएँ भी वहाँ सबसे अधिक होती हैं। शारीरिक एवं मानसिक रोगों की बहुलता यहाँ देखी जाती है। पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन वहाँ इतना अशान्त, विग्रहों से भरा हुआ है जितना संसार भर में कहीं नहीं है। एक सर्वेक्षण के अनुसार अमेरिका में मद्यपान करने वालों की संख्या ६० प्रतिशत है जिसमें युवकों की संख्या सबसे अधिक है। किशोर होते-होते बच्चे पीना आरम्भ कर देते हैं। इंग्लैंड की भी लगभग यही स्थिति है। भौतिक दृष्टि से जो राष्ट्र जितना सम्पन्न है, वहाँ के मनुष्यों में मद्यपान की प्रवृत्ति उतनी ही अधिक है।

मद्यपान की अनेकों हानियाँ हैं। शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक हानियों का लेखा-जोखा लिया जाय तो मालूम होगा इस दुष्प्रवृत्ति के कारण असाधारण क्षति हुई। यह अपूर्तिनीय है। मानव जीवन की सबसे बड़ी सम्पदा है विवेक, सबसे बड़ी क्षति यही है कि मनुष्य का विवेक कुण्ठित हो जाय। विवेकरहित जीवन पशुतुल्य है। नीति-अनीति, भला-बुरा, पाप-पुण्य का निर्धारण कर सकना विवेक के अभाव में सम्भव नहीं है। विवेक का अंकुश हट जाने से पाशविक प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलता तथा मनुष्य पतन के गर्त में गिरता जाता है। विवेक को मानवी जीवन से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अलग कर दिया जाय तो बचता ही क्या है—पशु तुल्य जीवन। जिसका एकमात्र लक्ष्य होता है—पेट और प्रजनन। इन दो उदाहरणों की पूर्ति जैसे भी बन पड़े वह करने का भले-बुरे प्रयास करता है। वह अनीति का मार्ग अपनाने तथा हिंसात्मक कार्य करने में भी नहीं चूकता है। भगवान् बुद्ध ने शराब को इसी कारण समस्त पापों की जननी कहा था। इसके ही गर्भ में अन्यान्य बुराइयाँ पैदा होती तथा पोषण पाती हैं और पुष्ट होकर व्यक्तिगत, पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन की जड़ काटती रहती हैं।

मद्यपान से सामाजिक वं परिवारिक जीवन पर प्रभाव पड़ता है। दुष्प्रवृत्तियों को बढ़ावा मिलता है साथ ही शराबी को व्यक्तिगत क्षति भी कम नहीं उठानी पड़ती है। शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक क्षति का उल्लेख यहाँ न भी किया जाय तो भी अपने प्रति जन विश्वास का समाप्त हो जाना एक इतनी बड़ी क्षति है जिसकी पूर्ति नहीं हो सकती। प्रतिभावान एवं शक्ति सम्पन्न होते हुए भी उसका चरित्र संदिग्ध बना रहता है। कोई भी नेक व्यक्ति उस पर विश्वास नहीं करता। चरित्र की संदिग्धता मनुष्य की सबसे बड़ी पराजय है। ढूँढ़ा जाय तो प्रतिभा की, सम्पन्नता की दृष्टि से अनेकों शराबी मिल जायेंगे जिनकी विशिष्टता को देखकर सभी आश्चर्यचकित रह जायेंगे। किन्तु उनकी उस दुष्प्रवृत्ति के कारण लोगों के मन में सदा उनके प्रति अविश्वास और तिरस्कार ही बना रहता है।

पारिवारिक एवं सामाजिक जीवन पर मद्यपान का घातक प्रभाव पड़ता है। परिवार की आर्थिक-व्यवस्था लड़खड़ा जाती है। एक शराबी बच्चों के प्रति अपने दायित्वों को पूरा नहीं कर पाता। फलस्वरूप वह सन्तान के भविष्य के साथ खिलवाड़ करता है। समुचित देख-रेख, प्यार, दुलार के अभाव में बच्चे कुसंस्कारी एवं उच्छृंखल बनते हैं। आगे चलकर यही बच्चे अपराधी बन जाते हैं। परोक्ष रूप से बच्चों के भविष्य को अंधकारपूर्ण बनाने का कारण वह शराबी पिता ही होते हैं। यह एक बहुत बड़ा नैतिक एवं सामाजिक अपराध है।

नशेबाजी में एक ही गुण बताया जाता है—उत्तेजना या स्फूर्ति। किन्तु नशे पीकर उत्पन्न की गई उत्तेजना तो एक प्रकार की मनोव्याधि है। जो मानसिक सन्तुलन नष्ट कर देती है। असन्तुलित मन शरीर पर भी नियंत्रण नहीं रह पाता। मानसिक रूप से उत्तेजित असन्तुलित व्यक्ति युद्ध में कौशल दिखा पाना तो दूर रहा, स्वयं पर नियंत्रण रख पाने में भी असमर्थ होता है। मदहोशी का नाम यदि साहस है तो इतिहास के परदे पर साहसियों की श्रेणी में शराबियों का नाम सबसे आगे होता। युद्धों के इतिहास बताते हैं कि यदि मद्यपान न किया गया होता तो युद्धों के परिणाम कुछ और ही होते। पराजय का कारण शराब बनी।

प्रथम विश्वयुद्ध की घटना है। जर्मन सेनाएँ फ्रान्स में तेजी से घुसती जा रही थीं। पेरिस के निकट के गाँवों पर जर्मन सैनिकों का अधिकार हो चुका था। कुछ ही घण्टों में पेरिस नगर भी जर्मन सेना के अधिकार में आने वाला था। स्थिति की प्रतिकूलता को देखकर फ्रांसीसी सेना में भगदड़ मच गई। सेना के कमान्डर ने पेरिस नगर छोड़ देने की बात कहते हुए सेना के कर्मचारियों को आदेश दिया कि शराब के जितने भी गोदाम हैं उन्हें खुला छोड़ दिया जाय। इसके पीछे उसकी बुद्धिमत्ता छिपी थी। जर्मन सैनिकों ने पेरिस नगर में प्रवेश किया। गोदामों में भरी शराब को देखकर सेवन करने का लोभ नहीं रोक सके। सबने भरपूर शराब पी। परिणम यह हुआ कि सैनिकों की शारीरिक एवं मानसिक स्थिति ऐसी नहीं रही कि वे युद्ध कर सकें। तीन डिवीजन जर्मन सैनिकों को मद्यपान के कारण फ्रांसीसी सैनिकों की गोलियों का लक्ष्य बनना पड़ा। फील्ड मार्शल 'क्राउन प्रिंस' ने जर्मनी की उस हार का कारण सैनिकों द्वारा अधिक मद्यपान को बताया।

नैपोलियन के विषय में कहा जाता है कि जिस समय वह वाटर लू के मैदान में दुश्मनों से घिरा था उस समय उसका सेनापति शराब के नशे में धुत्त पड़ा था। नैपोलियन की सहायता के लिए वह नहीं पहुँच सका। जिसके फलस्वरूप वह पकड़ा गया। उसकी पराजय का कारण शराब बनी। द्वितीय महायुद्ध में फ्रांसीसी फील्ड मार्शल 'पेतें' ने अपनी सेना की हार का कारण बताते हुए एक प्रसारण में कहा कि 'हमारी हार का कारण सैनिकों का अधिक मद्यपान करना है।'

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मद्यपान से शारीरिक एवं आर्थिक क्षति हो होती है। मानसिक सन्तुलन और आत्म संयम समाप्त हो जाता है। संयम के अभाव में मन की लगाम ढीली पड़ जाती है। वह दुष्प्रवृत्तियों की ओर बढ़ता जाता है। प्रत्येक दृष्टि से सैनिकों का मद्यपान करना हानिकारक ही है। देश की सुरक्षा जैसा महत्वपूर्ण दायित्व सैनिकों के ऊपर होता है। यह वहन कर सकना तभी सम्भव है जब उन्हें उस दुष्प्रवृत्ति की बुराइयों से अवगत कराया जाय तथा शान्ति का निवारण किया जाय जिसमें उन्हें सशक्त एवं साहसी होने की आशा दिखाई जाती है।

विश्व के सभी मूर्धन्य विचारकों, मनीषियों एवं आप्त वचनों ने मद्यपान को समस्य बुराइयों की जड़ माना है। महात्मा गाँधी ने कहा था "यदि मुझे एक घण्टे के लिए सम्पूर्ण भारत का अधिनायक बना दिया जाय तो सर्वप्रथम शराब की जितनी दुकानें हैं उन्हें बिना कोई मुआवजा दिय बन्द करा दूँ। 'बाईबिल' कहती है। तू यह जान ले कि मद्यपान नहीं करेगा तो इस प्रकार परम पिता परमात्मा के गुणों को अपने में अवतरित करेगा। हजरत मुहम्मद का अभिवचन है—

'अल्लाह ने लानत फरमायी है शराब पर। पीने और पिलाने वाले पर, बेचने और खरीदने वाले पर और किसी भी प्रकार के सहयोग देने वाले पर।

पान से हानियाँ

नित्यप्रति बाजारों, गलियों तथा रेलवे स्टेशन पर बढ़ती हुई पान की आदत देखी जा सकती है। आधुनिक युग में पान का व्यसन उत्तरोत्तर वृद्धि पर है। इसका प्रयोग प्रायः हानिकर है। यह लोग जानते ही नहीं। आधुनिक सभ्यता ने इसे कुछ ऐसा अपना लिया है कि इसमें अशिष्टता, हानि, या अश्लीलता नहीं समझी जाती।

पान वासना प्रदीप्त करता है

पान वासना उद्दीप्त करने वाला उत्तेजक मिश्रण है। मध्य युग में वेश्याएँ विशेष रूप से पान का उपयोग करती रही थीं। आज भी अधिकतर निम्न कोटि के मिरासी, भिश्ती, मजदूर, छैल-छबीले, कामुक व्यक्ति इसका प्रयोग करते हैं। वेश्या, मदिरा और पान, इन तीनों का संग है। मुगल युग में वेश्याओं और कामुकता को विशेष प्रोत्साहन मिलने से पान की लोकप्रियता बढ़ी। मुसलमानों में इसका विशेष प्रचार देखा जाता है। माँस, मदिरा, प्याज, लहसुन इत्यादि के साथ पान भी विलास की एक चीज है। मुगल राजा और नवाब पान के आदी ही नहीं बन गये थे, वरन् यह व्यसन इतनी बढ़ती पर था कि उसके बिना उनका जीवन दूभर हो गया था। पानदान और वेश्याएँ उनके साथ युद्ध में भी रहती थीं।

आजकल पान का प्रचार इतना बढ़ गया हे कि साधारण व्यक्ति भी दो-चार खा ही लेना है। अभ्यस्त व्यक्ति ५० से १०० तक पान चबा जाते हैं। सुपारी को रंगीन काटकर खुशबूदार चीजें मिलाकर ऐसा आकर्षक बनाया जाता है कि उसे खाना फैशन सा हो गया है। जर्दा, अधिक चूना तथा अनेक कृत्रिम पदार्थ डालकर उसे ऐसा बना दिया जाता है कि उससे हानि होने की अधिक सम्भावना है।

पान का रासायनिक विश्लेषण

पान का रासायनिक विश्लेषण करने पर इसमें पियोरीन, पियोरिडीन, ऐरेकोलीन, एमीलीन, मरक्यूरिक एलमोन, पियेरोवेटीन इत्यादि विषतत्व विद्यमान रहते हैं। स्थान के वैभिन्य के साथ साथ पान के रासायनिक तत्व भी परिवर्तित होते रहते हैं। जैसे—मद्रासी पान में पियरोवेटीन नामक विष की मात्रा अधिक है। बंगला पान सब से अधिक विषयुक्त समझा जाता है।

एक विशेषज्ञ का कथन है कि यदि सादे २८५ पानों का विष निकालकर २ कुत्तों को खिला दिया जाए, तो वे पाँच मिनट के अन्दर समाप्त हो जाएँगे, परन्तु चूने और कत्थे से लगे साढ़े चार × ३ वर्ग इञ्च क्षेत्रफल वाले ५८ पान ही विष की उक्त मात्रा देने में समर्थ हो जाएँगे। इसलिए कत्थे, चूने लगे पान सादे पान से अधिक विषैले प्रमाणित हुए।

पियरोवेटीन नामक विष हृदय गति को शिथिल तथा निष्क्रिय बनाने वाला होता है। अन्य विषों के कीटाणु मस्तिष्क पर आक्रमण करते हैं और उसकी सूक्ष्मता नष्ट कर देते हैं। इन विषों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के अभाव में मस्तिष्क अशान्त रहने लगता है। नींद का लोप हो जाता है। पान से कामेन्द्रियाँ उत्तेजित रहती हैं तथा मन विषय-वासनामय गन्दे विचारों से परिपूर्ण रहता है। कामवासना को बढ़ाने के कारण यह आध्यात्मिक, सात्विक प्रवृत्ति के व्यक्तियों के लिए विष तुल्य है। कहा जाता है कि एरकोलिन विष चूने तथा कत्थे से संयुक्त होकर, अन्यन्त कामोद्दीपक हो जाता हैं। यह पुरूष, स्त्री के शुक्र तथा रज कीटों का नाश कर देता है।

अधिक पान खाने से भूख कम हो जाती है। पान खा पानी पीकर ही तृप्ति हो जाती है। बम्बई, बनारस, कलकत्ता दिल्ली आदि नगरों में जनता पान अधिक खाकर पाचन-प्रणाली को बिगाड़ लेती है। ऐसे व्यक्तियों को मंदाग्नि तथा कभी-कभी अतिसार हो जाता है।

पान का दाँतों पर विषैला प्रभाव

पान का सबसे घातक प्रभाव दाँतों पर होता है। सुपारी, चूना, कत्था, जर्दा इत्यादि के सूक्ष्म कण यत्र-तत्र मसूड़ों या कटे हुए दाँतों के छिद्रों में एकत्रित हो जाते हैं। ये मसूड़ों को काला तथा दाँतों की जड़ों को खोखला बना देते हैं। दाँतों में कीड़े लग जाते हैं और प्रायः पायरिया नामक घातक रोग उत्पन्न हो जाता है। दाँतों के इतने अस्पताल देखने से ज्ञात होता है कि तीस-चालीस वर्ष की अवस्था में ही आधुनिक बाबुओं के दाँत गिर जाते या खोखले होकर अनेक बीमारियों की सृष्टि करते हैं।

सौ में से नब्बे या इससे भी अधिक लोगों के दाँत गिरने का कारण उनका पान का बहुत अधिक व्यवहार ही है। पान के रेशे, सुपाड़ी के बारीक टुकड़े और चूना जाकर दाँतों के बीच में फँस जाते हैं। समय पाकर ये इतने अधिक हो जाते हैं कि दाँतों पर जोर डालकर उनके बीच की संधि को बढ़ा देते हैं और उनको हटाने के लिए जीभ सदा दाँतों के बीच में लगी रहती है। कुछ समय पश्चात् मसूढ़ों में सूजन हो जाती है और उनके भीतर पीव उत्पन्न हो जाती है। दाँतों में असह्य पीड़ा होती है, और कुछ समय पश्चात् जब उनकी जड़ की नसें आदि भली-भाँति नष्ट हो जाती हैं, तो वे गिर पड़ते हैं। पान का व्यसन दाँतों का अन्त कर देता है। लोग बिना दाँत के भोजन को भली-भाँति न कुचल सकने के कारण उसे वैसे ही निगल जाते हैं। अन्त में दाँतों का कार्य उदर को करना पड़ता है और वह भी कुछ समय पश्चात् निर्बल हो जाता है। भोजन भली-भाँति नहीं पचता और मनुष्य निर्बल होते-होते अन्त में पान के व्यसन के कारण काल के गाल में पहुँचता है।

पान खाना ओछेपन का प्रतीक है

पान खाना अशिष्टता, ओछापन तथा कमोत्तेजक स्वभाव का द्योतक है। पान की दुकान पर खड़े होकर पान खाना असभ्य, वासना प्रिय, दिखावटी, अस्थिर लोलुपता को स्पष्ट करता है। मनुष्य का पतन प्रायः पान से ही प्रारम्भ होता है। वह इसे साधारण सा व्यसन मानकर हँसी-हँसी में आरम्भ करता है किन्तु धीरे-धीरे यह आदत का एक अंग बनता है, तम्बाकू खाने को तबियत करती है, फिर सिगरेट प्रारम्भ होती है, अन्त में मदिरा और व्यभिचार तक हद पहुँच जाती है। अतः चतुर व्यक्ति को इस व्यसन से दूर ही रहना उत्तम है। सुपारी का भी शौक बुरा है। इससे खुश्की रहती है, दाँतों पर अनावश्यक बोझ पड़ता है, कुछ चबाये बिना मन नहीं मानता, मन एकाग्र नहीं हो पाता और चञ्चलता बढ़ती रहती है।

हत्यारी अफीम

शराब, तम्बाकू, पान आदि की भाँति अफीम भी प्रचलित है। इसका नशा घातक है और तनिक सी अधिक मात्रा में लेने से मृत्यु का भय है। श्रीयुत पैटन ने "भारत में अफीम" नामक पुस्तक में इस प्रकार लिखा है—

"भारत में बच्चों तक को अफीम दी जाती है, थकावट तथा जाड़े को भगाने के लिए भी उसका उपयोग किया जाता है, किसी बीमारी को रोकने या भगाने के लिए लोग अफीम का सेवन करते हैं और अनेक केवल व्यसन के लिए खाया करते हैं। ये सभी सेवन के तरीके कृत्रिम और अनुचित हैं, बच्चों को देने से वे नशे में पड़े तो रहते हैं किन्तु उनका स्वास्थ्य नष्ट हो

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाता है, भूख मारी जाती है, स्वाभाविक चेतन्य शक्ति, उल्लास, उत्साह, प्रसन्नता मारी जाती है। शरीर कृश, दिमाग निर्बल एवं रक्तहीनता हो जाती है। उनकी जीवनशक्ति क्षीण हो जाने से वे जल्दी ही बीमारियों के शिकार बनते जाते हैं। दवाइयों तक का उन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। ऐसे बच्चे जब अध्ययन में पड़ते हैं, तो उनमें एकाग्रता और कुशाग्रता का अभाव होता है।"

थकावट और जाड़े से मुक्ति के लिए इसका प्रयोग करना मूर्खता है, क्योंकि इससे कहीं स्वास्थ्यकर वस्तुएँ इसके लिए उपलब्ध हो सकती हैं। क्षण भर नशे में हम यह भूले रह सकते हैं कि हम थके हुए नहीं हैं, किन्तु अफीम का नशा उतरने पर और भी निर्बलता एवं आलस्य धर दबाता है। न दर्द, न थकान न जाड़ा कोई भी हटते नहीं, वरन् नशा लाकर रोगों या थकान के वास्तविक लक्षणों को ढक देती है।

श्री पैटन के अनुसार अफीमची को (१) कब्ज (२) रक्त की न्यूनता (३) भूख का कम लगना (४) हृदय, फेफड़ों, एवं गुर्दों के रोग (५) स्नायुजन्य कमजोरी (६) फुर्तीलेपन का अभाव (७) आलस्य, निद्रा में कमी, चित्त भ्रम, दिवास्वप्न (८) नैतिक भावना की कमजोरी (९) कठोर कार्य से भागना (१०) अविश्वास और शारीरिक निर्बलता उत्पन्न होते हैं। इनके अतिरिक्त जीवन तत्वों को क्षीण करने और शरीर को निस्तेज बनाने में अफीम का प्रमुख हाथ है। पाकाशय निर्बल हो जाने के कारण अफीमची सूखता जाता है।

मानसिक क्षेत्र में, अफीम के प्रयोग से ज्ञानात्मक शक्तियाँ निर्बल होती हैं। विशेषतः स्मरण शक्ति बिगड़ जाती है। स्नायु और ज्ञान तन्तुओं में रोग लग जाते हैं। कुटेब पड़ जाने से, यदि नियमित समय पर अफीम प्राप्त न हो, तो किसी भी कार्य में तबियत नहीं लगती, हाथ-पाँव बेजान से पड़े रहते हैं, क्योंकि अफीम उनकी स्वाभाविक शक्ति को पहले ही नष्ट कर डालती है।

भारत में यह बुराई चीनियों के अनुकरण पर आरम्भ हुई। अँग्रेज सरकार ने हमें अफीम के नशे में रखकर हमें समुन्नत होने, स्वयं अपना भला-बुरा सोचने का अवसर न दिया। इस अन्यायपूर्ण एवं दुष्ट नीति के कारण हम गुलामी के अन्धकार में वर्षों सोते रहे। तब हमें इस व्यसन का परित्याग कर देना चाहिए। देशभक्त एन्ड्रूज ने लिखा है—

"अफीम की आदत धीर-धीरे मनुष्य के शरीर और आत्मा को भी खा जाती है। जिन जिलों में अफीम खाने या पीने की आदत है वहाँ का सम्पूर्ण पुरुष वर्ग निकम्मा हो जाता है। उससे कोई परिश्रम का कार्य नहीं हो पाता, अन्त में निराश जीवन व्यतीत करते हुए यमलोक को सिधारता है, पर इससे अंग्रेज व्यापारी, पूँजीपति और राजपुरुषों को क्या ?"

अतः इस घृणित व्यसन का परित्याग तुरन्त करना उत्तम है। डॉक्टरी और वैज्ञानिक उपयोग को छोड़कर अफीम का अन्य प्रकार से उपयोग करना अनुचित है।

घातक कोकेन

कोकेन में अन्य घातक पदार्थों के साथ साथ ऐसे भयंकर विष होते हैं, जो डॉ० बेनेट के मतानुसार अंतड़ियों, श्वाँस-प्रणाली, गन्थि-प्रणाली और रक्त-प्रवाह प्रणाली पर घातक प्रभाव डालते हैं। इसका ही उपयोग प्रायः उच्च वर्ग के व्यक्ति करते हैं, जो सामाजिक बन्धनों के कारण शराब या अफीम का खुला उपयोग नहीं कर पाते। भारत में वेश्याओं के यहाँ इसकी अधिक खपत है। व्यभिचारी व्यक्ति प्रायः इसका प्रयोजन क्षणिक उत्तेजना के लिए किया करते हैं। इसके नशे में वे सत-असत, विवेक-बुद्धि को भूल जाते है।

कोकेन की हानियाँ

कोकेन के दुष्परिणाम बड़े भयंकर हैं। इससे पाकाशय के स्नायुओं तथा ज्ञान तन्तुएँ अकर्मण्य हो जाती हैं। फलतः दो-दो क्षुधा प्रतीत नहीं होती। शरीर कृष हो जाता है। आरम्भ में कोकेन के प्रयोग से ज्ञान तन्तु और और स्नायु के उद्गम स्थान पर कुछ झञ्झनाहट और वेग प्रतीत होता है, परन्तु यह आवेग आध घण्टे से अधिक शेष नहीं रहता। उतार प्रारम्भ होने पर हृदय डूबता सा मालूम होता है। सम्पूर्ण शरीर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पर आलस्य एवं नैराश्य की भावना छा जाती है। एक प्रकार का शैथिल्य एवं शारीरिक निर्बलता सर्वत्र छा जाती है।

श्री मेवाराम लिखते हैं, "कोकेन खाने वालों की दशा अफीमचियों से भी अधिक गई-बीती है। इस नशे के अन्त में वे किसी काम के न रह-कर अपने को बुरा समझते हैं और उनका जीवन भार-स्वरूप हो जाता है।"

डॉक्टर ब्रेंडेज, जो बुल्किन के अस्पताल में मादक द्रव्यों के परीक्षक हैं, लिखते हैं कि "कोकेन खाने की आदत अन्य मादक वस्तुओं की अपेक्षा अधिक लुभावनी है, परन्तु बड़ी भयानक भी है। इससे शारीरिक-मानसिक और आचारिक निर्बलता उत्पन्न हो जाती है। आरम्भ में इसके प्रयोग से थकावट दूर होती हुई प्रतीत होती है, चित्त की खिन्नता भी दूर होती सी लगती है और एक प्रकार की क्षणित कृत्रिम स्फूर्ति भी आ जाती है, जो लोक और परलोक दोनों को विस्मृत कर देती है। यद्यपि यह दशा क्षणिक है परन्तु अन्तिम फल उस समय कुछ भी विचार में नहीं आता। थोड़े समय तक इसका अभ्यास करने से इसके खाने और प्रभाव देखने की एक अनियन्त्रित इच्छा प्रकट होने लगती है, जो किसी प्रकार तृप्त नहीं हो पाती और बिना जान लिए नहीं शान्त होती।"

इसकी आदत इच्छाशक्ति को विवश करती है कि इसकी मात्रा उत्तरोत्तर बढ़ाई जाय। इसके प्रयोग से निद्रा कम आती है। इसका एक दुष्परिणाम यह होता है कि दस्त प्रारम्भ हो जाते हैं। ये दस्त पेचिश में परिवर्तित हो सकते हैं और फिर कभी नहीं रुकते। सुनने की शक्ति क्रमशः क्षीण होने लगती है और कुछ-कुछ उन्माद सा हो जाता है।

एक डॉक्टर का कथन है कि "मदिरा तथा अफीम से भी बढ़कर कोकेन ईश्वर का कोप है क्योंकि इसके व्यवहार का जो दुष्परिणाम शरीर और मस्तिष्क को उठाना पड़ता है उतना मदिरा एवं अफीम से नहीं। प्रयोगकर्त्ता निरन्तर दुर्बल और अविश्वासी बनता जाता है। शरीर का वजन कम होता जाता है। केवल कुछ सप्ताह में शरीर का चौथाई भाग क्षीण होते हुए देखा गया है। इसकी गिरफ्त में एक बार आने पर यह कुटिल आदत छूट नहीं पाती। कोकेन के दूषित प्रभाव से युवकों की मौतें होती देखी गई हैं।"

उत्तेजक और पाशविक जीवन की जननी कोकेन का परित्याग तुरन्त कर देना चाहिए।

नशेबाजी के दुष्परिणाम समझें और समझायें

इनके कारण समाज को भारी हानि सहनी पड़ती है

कोई अपने चाकू से अपनी गरदन काट रहा है अपने पैसे से जहर खरीदकर आत्म-हत्या कर रहा हो तो यह कहकर घर वाले उपेक्षा नहीं कर सकते कि हमारा क्या हर्ज है ? चूँकि सारा मनुष्य एक ही जंजीर से बँधा है, समुद्र की हर लहर दूसरों से जुड़ी है, एक का प्रभाव दूसरे पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में पड़ता ही है। इसलिए हर किसी का यह कर्त्तव्य है कि अपनी ही तरह अपने आसपास का, समाज का भी ध्यान रखे। अन्यथा उनकी छूत उलट-पुलटकर अपने को, अपने परिवार को भी लग सकती है। यह कहना गलत है कि किसी के व्यक्तिगत जीवन में किसी को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। समाज में पृथक् किसी का कोई व्यक्तिगत जीवन नहीं हो सकता। इसलिए समाज के हर घटक का कर्त्तव्य है कि दूसरों के सामान्य जीवनक्रम में हस्तक्षेप न करते हुए भी यह ध्यान रखें कि यदि वह ऐसी गलत गतिविधियाँ अपना रहा है जो अवांछनीय परम्परा स्थापित करती हैं, तो आत्महत्या करने वाले को किस प्रकार रोका जाता है उसी प्रकार अवांछनीय गतिविधियाँ अपनाने वाले को भी रोकें।

नशेबाजी का व्यवसन ऐसा ही है जो देखने में व्यक्तिगत रुचि एवं खानपान का विषय लगता है। नशेबाज अक्सर यही दलील देते हैं कि यह उनकी व्यक्तिगत रुचि है इसमें दूसरों को क्यों हस्तक्षेप करना चाहिए। सरकारी कानून भले ही इस दलील को ठीक मान ले पर नैतिक कानून के अन्तर्गत यह व्यसन एक सामाजिक अपराध है। उसे रोकने के लिए ही प्रयत्न करना हर व्यक्ति का कर्त्तव्य है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नशों में न शारीरिक पोषण की कोई शक्ति है न मानसिक पोषण की। ये एक प्रकार के हल्के विष हैं, जो तात्कालिक स्फूर्ति देने या मानसिक तनाव हल्का करने के लाभ बताकर पिये जाते हैं। पर सच बात यह है कि उनसे दोनों में से कोई भी प्रयोजन सिद्ध नहीं होते। संकट सामने उपस्थित देखकर कोई तेज दौड़ भी सकता है, पर इसका अर्थ यह तो नहीं है कि यह 'दौड़ाक' बन गया। चाबुक मारकर घोड़ा भगाया जा सकता है, पर चाबुक में घोड़े को शक्ति देने की क्षमता कहाँ है ? उसमें केवल संग्रहीत पूँजी को क्रमबद्ध रूप में खर्च करने की अपेक्षा एक बार खर्च करके अमीरी का प्रदर्शन करने जैसी बात है। पर उसके चुकते ही जिस भयंकर दरिद्रता का सामना करना पड़ेगा उसे देखते हुए वह संचय की होली फूँकना बुद्धिमत्ता कहाँ रही ?

नशे केवल संग्रहीत जीवनी शक्ति को भड़काकर एक बार ही उसकी फुलझड़ी जला भर सकते हैं। कढ़ाई में रखा हुआ थोड़ा-सा दूध तेज आग पर रखने से उबाल के समय ऐसा लगता है मानो सारी कढ़ाई भर गई पर जब यह उफनकर चूल्हे में चला जाता है तब कढ़ाई खाली हो जाती है। नशों के द्वारा मिलने वाली स्फूर्ति इसी स्तर की है।

नशे द्वारा मानसिक तनाव से भी छुटकारा कहाँ मिलता है। घर में आग लग जाने से, प्रियजन की मृत्यु हो जाने से दुःखी व्यक्ति को क्लोरोफार्म सुँघाकर कुछ समय के लिए मूर्छित कर दिया जाय तो यह कैसे कहा जा सकता है कि उस शोक का समाधान हो गया। कारण जब तक विद्यमान है तब कि उसकी प्रतिक्रिया होगी। चिन्तन की दुर्बलता दूर करने-मनोबल बढ़ाने और समस्याओं का हल ढूँढ़ने से मानसिक तनाव दूर होता है—नशे पीने से नहीं। उनसे तो सोचने की क्षमता दूरदर्शिता एवं साहसिकता घटती ही चली जाती है। जिसके कारण भविष्य में छोटे-छोटे कारण भी अधिक उद्विग्न करने लगते हैं।

नशे के पक्ष में दी जाने वाली दोनों दलीलें बे बुनियाद हैं। हानि इतनी अधिक है, जिनकी कोई शुमार नहीं। पैसा और समय अन्धाधुन्ध खर्च होता है। इतना धन और समय यदि अपना, अपने परिवार का स्वास्थ्य सुधारने तथा दूसरे उपयोगी कार्यों में लगाया जाय तो कितना काम चले। एक व्यक्ति आठ आना रोज की सिगरेट या अन्य रशा पिये तो महीने में ९५ रु., वर्ष में १८० रु. होते हैं। यह लत यदि २० से लेकर ६० वर्ष की आयु तक ४० वर्ष रही तो ७२०० रु. हुए। इस पैसे पर बैंक ब्याज भी फैलाया जाय तो मूल पूँजी से दूना ब्याज और और हो जाता है। इस प्रकार लगभग बीस हजार की रकम बनती है। इसी प्रकार बचाये जाने वाले समय का भी हिसाब लगाया जा सकता है। यदि वह बचत की जाती तो बुढ़ापे में इतनी बड़ी रकम शेष दिन शान्तिपूर्वक काटने या कुछ बड़ा काम करने के लिए उपयोगी सिद्ध होती। पर वह तो बूँद-बूँद करके घड़ा खाली हो जाने की तरह टपकता और नष्ट होतां चला गया।

नशे सीमित नहीं रहते, उनकी प्यास बढ़ती ही जाती है और फिर उनके लिए अन्धाधुन्ध खर्च करना पड़ता है। इस खर्च की पूर्ति के लिए दूसरे उपयोगी काम रोकने पड़ते हैं और सारे परिवार को जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं से वंचित रहकर दयनीय स्थिति में निर्वाह करना पड़ता है।

नशेबाज की जीवनी शक्ति चुकती चली जाती है और यह आये दिन बीमार पड़ता है। कोई बीमारी पीछे पड़ जाती है तो टूटने का नाम नहीं लेती। अकाल मौत मरना पड़ता है। मनोबल, दूरदर्शी चिन्तन और धैर्य, साहस जैसी मानसिक विशेषताएँ बेतरह नष्ट होती चली जाती हैं। नशा उतरने पर भी उसका चिन्तन अर्धविक्षित जैसा बना रहता है। ऐसे लोगों की प्रगति के द्वार तो बन्द हो ही जाते हैं, जिन्दगी के दिन भी शान्ति से पूरे कर सकना कठिन हो जाता है। इस दुर्दशा का प्रभाव उसके परिवार पर पड़ता है। तरह-तरह की बुराइयाँ घुस पड़ती हैं, उन्नति के द्वारा बन्द हो जाने से वे पतन की ओर मुड़ते हैं। नशेबाजों का परिवार ऐसे ही अस्त-व्यस्त होते देखा गया है। इसका प्रभाव समस्त समाज पर पड़ता है। विकृत परिस्थितियों में पड़े हुए व्यक्ति या परिवार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समाज में विग्रह एवं व्यतिक्रम ही उत्पन्न करते हैं और उससे अपराधों, अनाचारों की ही वृद्धि होती है।

नशे राष्ट्रीय सम्पदा और समृद्धि में भारी क्षति पहुँचाते हैं। अकेली तम्बाकू की ही खपत अपने देश में दो करोड़ रुपया प्रतिदिन है। अर्थात् वर्ष में ७२० करोड़। शराब की खपत इससे भी कहीं अधिक है। गाँजा, अफीम, चरस, भाँग आदि को भी जोड़ें तो पता लगेगा कि शासन तन्त्र चलाने में जितना खर्च जनता को उठाना पड़ता है उससे भी अधिक नशेबाजी में खर्च हो जाता है। तम्बाकू, अफीम जैसे उत्पादनों में घिरने वाली जमीन में यदि अन्न उपजायें तो देश में अन्न की कोई कमी न रहे। जितने लोग बीड़ी, सिगरेट बनाने, तम्बाकू उगाने तथा दूसरे नशे बनाने में लगे हैं, यदि उस जनशक्ति को, श्रम को रचनात्मक कार्यों में लगा दिया जाय तो आज उपयोगी वस्तुयों का जो अभाव दिखाई पड़ता है वह सहज ही हल हो जाये। जितनी पूँजी नशे उत्पादन में लगी है यदि वह उपयोगी उद्योगों में लगे तो देश में खुशहाली बिखरी दिखाई पड़ने लगे।

व्यक्ति को शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, आर्थिक दृष्टि से दुर्बल बनाने वाले नशेबाजी के व्यसन का स्वच्छन्द रूप से बढ़ते रहना जनता का स्तर गिराने और नागरिक जीवन में संकट उत्पन्न करने के समान है। समाज को उसका घातक दुष्परिणाम भुगतना पड़ता है। शारीरिक, मानसिक दृष्टि से दुर्बल मनुष्य उत्पादन क्या करेगा ? पूँजी को दुष्प्रवृत्ति में खर्च करके राष्ट्रीय सम्पदा को क्षति ही पहुँचायेगा। नशेबाजी के साथ-साथ अपराधों और समाचारों का बढ़ना नितान्त स्वभाविक है। शारीरिक और मानसिक रोगों की वृद्धि—नशेबाजी के साथ अविछन्न रूप से जुड़ी हुई है।

लोग एक दूसरों की देखा-देखी इस दुर्व्यसन में लिप्त होते हैं और उसे शान, बड़प्पन या अमीरी या सभ्यता का चिन्ह मानकर पीते हैं। इस भ्रान्त धारण का उन्मूलन किया जाना चाहिए। कुमार्गगामिता शान की नहीं, निन्दा की चीज हैं। ओछे लोगों ने उसे शान का चिन्ह मान भी लिया हो तो भी हर विचारशील व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि गुण-अवगुण की कसौटी पर परखकर ही किसी प्रचलन का अनुगमन करें। नशेबाजी हर दृष्टि से हानिकारक सिद्ध होती है, उसके सेवन में मूर्खता के अतिरिक्त और कुछ भी सार नहीं है। अपने पैरों कुल्हाड़ी मारने की उक्ति नशेबाजी के ऊपर शत प्रतिशत घटती है।

इस स्थिति से सर्व-साधारण को परिचित कराया जाना चाहिए। अन्य अन्धविश्वासों की तरह नशे पीने में शान समझने की बात को निरस्त किया जाना चाहिए। भावनात्मक नव-निर्माण के प्रसंग में जिन मूढ़ मान्यताओं का उन्मूलन करता है उनमें नशेबाजी के प्रति लोगों की रुचि बदलना भी प्रमुख रूप से सम्मिलित रखना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

मद्यपान : एक घातक कुटेब

समाज का पतन करने वाली शराबखोरी की दुष्प्रवृत्ति

स्वतन्त्र भारत के संविधान में सैंतालीसवें अनुच्छेद में राज्य के नीति-निर्देशक सिद्धान्तों में कहा गया है कि "राज्य अपनी जनता का पोषण स्तर और जीवन-स्तर ऊँचा उठाना और जन स्वास्थ्य सुधारना अपना एक प्राथमिक कर्त्तव्य मानेगा और विशेषतः स्वास्थ्य के लिये औषधीय प्रयोजनों के अतिरिक्त नशीले पेयों को रोकने का प्रयास करेगा।" इस लिखित आज्ञा एवं कई प्रदेशों में मद्यनिषेध कानून के प्रभावशाली होते हुये भी शराब का प्रचलन जिस तेजी से बढ़ा है एवं बढ़ता ही चला जा रहा है, यह वस्तुतः एक चिन्ता का विषय है।

तम्बाकू जैसी व्यापक प्रचलित दुष्प्रवृत्ति के बाद शराब का सेवन ही एक ऐसा नशा है जो सारे विश्व के बहुसंख्यवर्ग में जिसमें तथाकथित प्रगतिशील व्यक्ति भी आते हैं एवं गन्दी बस्ती में रहने वाले मजदूर भी—भली-भाँति प्रचलित है। क्षणिक उत्तेजना, शौक, आनन्द प्राप्ति के लिये आरम्भ किया गया इसका सेवन शनैः-शनैः व्यक्ति को अपने चंगुल में लेता चला जाता है। आँकड़े बताते हैं कि भारत में औसतन प्रतिवर्ष पौने सात करोड़ लीटर वैध शराब बनाई जा रही है, इनमें से २५ लाख रु. की विदेशी शराब निर्यात की जाती है एवं यहाँ के नागरिकों की आवश्यकता पूर्ति हेतु ६७ लाख रु. की शराब आयात की जाती है। औसतन ६४ करोड़ रु. वैध शराब पर एवं ५२ करोड़ रु. अवैध शराब के नियन्त्रण, पर शासकीय खजाने से खर्च होते हैं। ये तो वे आँकड़े हैं जो मात्र वैध शराब के सेवन-उत्पादन के आधार पर शासकीय स्रोतों द्वारा एकत्र किये गये हैं। इनके अतिरिक्त इनसे कई गुना अधिक राशि करोड़ों लीटर अधिक अवैध शराब पर नित्य असामाजिक तत्वों द्वारा खर्च कर दी जाती है, जिसके कोई आँकड़े उपलब्ध नहीं हैं।

मात्र हमारे राष्ट्र में इस मद्य पदार्थ के सेवन से औसतन प्रतिवर्ष लगभग १० करोड़ ६० लाख श्रमिक घण्टों की हानि हुई। इसके अतिरिक्त दुर्घटनाओं व मरने वाले शराबी परिवारों की सहायतार्थ खर्च धनराशि से राष्ट्र की हानि १ अरब ४० करोड़ रुपये प्रतिवर्ष होती है। देश की जनसंख्या के केवल १०.५ प्रतिशत भाग द्वारा शराब पीने से जहाँ सरकार को लगभग ५०० करोड़ रुपये की राशि राजस्व रूप में प्राप्त होती है वहाँ पीने वालों के लगभग २५०० करोड़ रुपये नष्ट हो जाते हैं। शराब पीने वाले भारत में कितने हैं, इस पर मात्र एक मोटा अनुमान ही लगाया जाये, तो ज्ञात होता है कि हमारे देश में ३० प्रतिशत व्यक्ति इसके चंगुल में हैं। इनमें से २३ प्रतिशत नित्य बेहोश कर देने वाली मात्रा पी जाते हैं जो उन्हें असामाजिक गतिविधियों, अपराध या फिर जेल तक की हवा भी खिला देती है।

करीब दस करोड़ व्यक्ति इस वैध-अवैध शराब को नित्य पीते हैं, एवं उसमें से भी करीब सवा दो करोड़ "हैवी ड्रिंकर" हों तो इस प्रगतिशील राष्ट्र के भविष्य की मात्र एक निराशाजनक झलक ही दिखाई देती है। इन व्यक्तियों का यदि औसतन १०० रु. भी प्रतिमाह इस व्यसन पर खर्च होता हो तो करीब दस अरब रुपये की राशि प्रतिमाह राष्ट्र की सम्पदा में से चुरा ली जाती है। इसके अतिरिक्त वह राशि बिल्कुल ही अलग है जो सरकार द्वारा शराब उत्पादन पर रोकथाम हेतु, कर्मचारियों, व्यवस्था तंत्र हेतु, अपराध आदि के नियन्त्रण पर एवं इन शराबियों की बीमारियों व इनके परिवार के पालन-पोषण पर खर्च की जाती है। इसकी गिनती खरबों में होगी।

वैज्ञानिक दृष्टि से इस व्यसन का यदि विवेचन किया जाय तो कई रोंगटे खड़े कर देने

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वाले तथ्य सामने आते हैं। आयुर्वेद के मतानुसार मादक अर्थात् नशीली चीजों की व्याख्या में कहा गया है—

"बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारि तदुच्यते।" अर्थात् जो वस्तु बुद्धि का नाश कर दे, वही मदकारी कही जाती है।

शराब पीने के प्रभावों का मूल्यांकन करने वाली विश्व-स्वास्थ्य-संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार यदि शराब की बोतल में एक माँस का टुकड़ा डाल दिया जाय तो वह गलकर कुछ देर में रेशे-रेशे हो जाता है। इसी प्रकार अल्कोहल का जमाव जब रक्त में ०.२ प्रतिशत से ०.५ प्रतिशत तक पहुँच जाता है तो तेज नशे की हालत में शराब पीने वाले व्यक्ति की तुरन्त मृत्यु हो जाती है। कुछ लोग कहते हैं कि शराब से प्रति औंस २०० कैलोरी ऊर्जा मिलती है, भूख बढ़ती है एवं स्फूर्ति बढ़ती है। पर ये मात्र मन बहलाने के कुतर्क हैं।

शरीर में प्रवेशित शराब में से मात्र २ से लेकर १० प्रतिशत पसीने, फेफड़ों अथवा पेशाब के मार्ग से बाहर जाती है। शेष ६० प्रतिशत के बोझ को लीवर झेलता है। सबसे ज्यादा हानि इसी अंग को होती है जो सारे शरीर की विभिन्न चयापचयिक क्रियाओं के लिये उत्तरदायी है। रक्त में ०.०३ प्रतिशत शराब मनुष्य की कार्य-क्षमता गड़बड़ा देती है, ०.०५ शराब उन्हें उच्छृंखल व्यवहार करने को विवश कर देती है एवं ०.१५ प्रतिशत शराब टाक्सिक रेंज में आती है। शराब से २ प्रकार के प्रभाव हो सकते हैं। एक-एक्यूट अर्थात् अधिक मात्रा एक साथ पीने से तुरन्त होने वाली हानियाँ, दूसरे—क्रॉनिक अर्थात् थोड़ी मात्रा धीरे-धीरे लगातार नित्य पीते रहने से सम्भावित हानियाँ। अधिक मात्रा में एक साथ शराब पीने से एक्सीडेण्ट के अवसर ७ गुने, हमारे शरीर में जहर फैलने (पाइजनिंग) के अवसर ३० गुने, मृत्यु हो जाने के अवसर १६ गुने बढ़ जाते हैं। (एनसाइक्लोपीडिया ब्रिटानिका १६८०-मेक्रोपीडिया १-६४४)। मस्तिष्क में न्यूरॉन्स को चोट पहुँचने के कारण वर्नीक्स एनसेफेलोपैथी, आप्टिकपैल्सी, एक्यूट कार्सेकॉफ साइकोसिस, पालीन्यूरोपैथी एवं एक्यूट हिपेटाइटिज—ये कुछ प्रमुख व्याधियाँ हैं जो शराब अत्यधिक मात्रा में ग्रहण करन के कारण होती हैं। ऐसा कहा जाता है कि शराब से जो कैलोरी प्राप्त होती हैं—वे "एम्पटी" अर्थात् खाली होती हैं। क्योंकि ऐसा व्यक्ति समुचित आहार कैलोरी के अनुपात में नहीं लेता। सफाई के अभाव एवं पोषण के फलस्वरूप शरीर धीरे-धीरे खोखला होता चला जाता है। सबसे अधिक हानि होती है—लीवर को—जिसमें थोड़ी मात्रा में नित्य शराब लेते रहने व आहार के अभाव से चर्बी के कण जमा होते चले जाते हैं एवं 'पोर्टल सिरोसिस' नामक रोग हो जाता है। यह या तो कैन्सर में बदल जाता है अथवा धीरे-धीरे शिकार को अपने शिकंजे में कसता हुआ मौत के मुँह में ले जाता है।

क्रॉनिक अल्कोहलिज्म में औसत जीवन आयु १२ से २० वर्ष कम हो जाती है, बेरी-बेरी, पेलेग्रा, स्कर्वी, एनीमिया उसे सतत घेरे रहते हैं। मानसिक क्षमताओं की दृष्टि से वह विपन्न एवं शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से निरन्तर दुबला होता चला जाता है।

शराब पीने वालों में आत्महत्या की दर ढाई गुनी अधिक एवं दुर्घटनाओं के अवसर आठ गुना अधिक होते हैं। १३ से २६ प्रतिशत शराबी पागलों की भाँति व्यवहार करने के कारण २ माह से अधिक समय पागलखानों में बन्द रखे जाते हैं। अपराध की दर ऐसे समुदाय में ४३ प्रतिशत बढ़ जाती है एवं ऐसे परिवारों में तलाक भी ८ गुना अधिक होते हैं।

अस्तु, ऐसा वातावरण बनाये जाने की आवश्यकता है जो नशे द्वारा होने वाली धन, स्वास्थ्य, जीवनीशक्ति, मानसिक शांति एवं सामाजिक जीवन को हानि एवं इस दुष्प्रवृत्ति से छुटकारा पाने पर समृद्धि एवं उल्लास दोनों ही पक्षों से जुड़े लाभों की जनमानस को जानकारी करा सके। जो धन परिवार के पालन, जीवनोपयोगी पदार्थों की उपलब्धि तथा मानसिक स्तर को ऊँचा उठाने वाली प्रवृत्ति में लगना चाहिये, वह इन अभागों के कारण शरीर को निर्बल, मन को कलुषित एवं समाज को विक्षुब्ध बनाने में खर्च हो जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मद्यपान और शास्त्रीय दृष्टिकोण

आधुनिक सभ्यता के पक्षपाती और मद्यपान का समर्थन करने वाले लोगों का कहना है कि—शराब पीना मनुष्य ने प्राचीनकाल से ही सीखा है। जब से उसने सभ्यता का विकास किया और उस कारण जीवन में जटिलतायें बढ़ीं तथा उन्हें हल करने के लिये उपाय खोजा जाने लगा तभी से आत्म-विस्मरण के लिये मद्य, सुरा या उस जैसी ही किसी दूसरी मादक वस्तु का सेवन करने की प्रवृत्ति भी बढ़ी। इसलिये शराब पीना बुरा नहीं कहा जा सकता और न ही अस्वाभाविक।

यदि इस प्रतिपादन को उचित मान लिया जाय तो यह मानना पड़ेगा कि चोरी करना बुरा नहीं है, डाके डालना अपराध नहीं है और अनीतिपूर्वक किसी दूसरे व्यक्ति का धन हरण कर लेना भी अनुचित नहीं है क्योंकि पुराने समय में भी यह सब होता था। परन्तु मनुष्य की प्रारम्भिक स्थिति को ही उसका नैसर्गिक स्वभाव नहीं कहा जा सकता है। अच्छे व्यक्ति पहले भी होते थे और बुरे व्यक्ति भी। अपने काल की झाँकी का दर्शन कराने वाले ग्रन्थों में उनका उल्लेख मिलना स्वाभाविक है। पर दृष्टव्य तो यह है कि लोगों की उन व्यक्तियों के सम्बन्ध में क्या सम्मति रही है। उनकी प्रवृत्तियों स्वभावों आदतों और क्रिया-कलापों को किन रूपों में ग्रहण किया गया है। मादक वस्तुओं के सम्बन्ध में शास्त्रकारों ने बड़ी स्पष्टता से काम लिया है तथा उनके प्रयोग वर्जना और प्रयोग करने वालों की निन्दा की है। शारंगधर संहिता में मादक वस्तुओं की परिभाषा करते हुये कहा है—

बुद्धि विलुम्पति यत् द्रव्यं मदकारी तदुच्यते।

अर्थात्—जिन वस्तुओं के सेवन से मनुष्य की बुद्धि लुप्त हो जाती हो, वे मादक हैं।

स्पष्ट है कि सद्बुद्धि को ईश्वर का सर्वोपरि वरदान मानने वाला ऋषि, उसकी याचना करने वाला साधक, किसी भी प्रकार बुद्धि को लुप्त नहीं होने दे। संकल्प इतना ही नहीं, शराब के दुष्प्रभाव और मद्य सेवियों की दुर्दशा का उल्लेख करते हुये वेद में कहा है—

द्रुत्सु पीतासु युध्यन्ते दुर्यदासौ न सुरायाम्।
उधर्न नग्ना जरन्ते।।

ऋ. ८-२-१२

मद्यपान कर लोग खूब लड़ते हैं। उनके शरीर की शक्ति क्षीण होने लगती है और वे समय से पूर्व ही वृद्ध होने लगते हैं। अतः मद्य का सेवन न करना चाहिये।

मनुस्मृति में उल्लेख आता है—

सुरा वै मलभन्नां पाप्मा च मलमुच्यते।
तस्माद् ब्राह्मण राजन्यौ वैश्यच न सुरा पिवेत्।।

(मनु. ९६६३)

—सुरा को अन्न का मल कहा गया है। मल को पाप माना जाता है। मल-मूत्र जैसे पदार्थ जिस तरह अभक्ष्य हैं उसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य आदि सुरारूपी मल का भी सेवन न करें।

प्राचीनकाल में लोगों ने कई प्रकार की मदिरादि बनाने की विधियाँ खोज निकाली थीं। उनमें तीन मुख्य थीं जिन्हें गौड़ी, पेष्टी और माहवी कहा जाता था। तीनों मदिरायें क्रमशः गुड़, पेठे और महुए से बनायी जाती थीं। इन तीनों सहित मनुस्मृति में सब तरह की मदिरा के सेवन का निषेध किया गया है—

गौड़ पैष्ठी च माधवी विशेया। त्रिविधा सुरा।
यर्थवाला तथा सर्वा न पातव्या द्विजोत्तम।।

(११.६६)

स्त्रियों को भी मादक द्रव्यों के सेवन हेतु सख्ती से मना किया गया है और उसके भयंकर परिणामों से सचेत किया गया है—

पति लोकं न सा याति ब्राह्मण या सुरा पिवेत्।
श्वै साशुनी गृधी शूकरी योयजायते।

(याज्ञ ५-१०६)

जो स्त्री शराब पीती है, वह सुखी गृहस्थ जीवन व्यतीत नहीं कर सकती और न ही घर बसाने तथा गृहस्थी संचालन के योग्य रह जाती है। क्योंकि जिसकी वृत्ति कुत्ते, गृद्ध और शूकर के समान जूठन, उच्छिष्ठ और मल खाने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाति है, वह परिवार-निर्माण कार्य को कुशलता-पूर्वक किस प्रकार सम्पन्न करेगी ?

साथ ही मद्य को यक्ष, राक्षस, पिशाच और कुकर्मी लोगों का पेय भी कहा है—

यक्षरक्षः पिशाचान्तं मद्यं मांस सुराआसवम्।
यद ब्राह्मणेननात्तव्य देवानामश्नतः हवि।।

(मनु. १०-५)

अन्य कई स्थानों पर मद्य और माँस दोनों का ही भक्षण वर्जित किया गया है और आज्ञा दी गयी है वे देवोचित्त आहार करें और पेय पीयें। देव का अर्थ—अमृत धर्मा किया गया है। अमृतमेव अन्धः अन्नंयेषांते''—अर्थात् मानव को दीर्घायु बनाने वाला भोजन ही देवताओं का आहार है।

व्यक्ति ही नहीं, समाज में भी इस प्रकार की दुष्प्रवृत्तियों को न पनपने देने के लिये सचेत किया गया है। वैद्यकशास्त्र सुश्रुत' के प्रसिद्ध टीकाकार आचार्य उल्हाचार्य का कथन है।

मांस कायाः सुराकामाः स्त्रीकामः साहसेरताः।
मागयस्ताने भूमिष्ठ दृश्यन्ते राजयक्षिणः।।

अर्थात्—मगध देश के निवासी माँसाहारी, मद्यपी, शराबी, व्यभिचारी और कामुक होते हैं इसी कारण वे राजयक्ष्मा से पीड़ित हैं। न अपने देश की कोई उन्नति कर पाते हैं न सुख-शान्ति से रह सकते हैं।

अपराध, व्यभिचार व मद्य अनैतिकता का अभक्ष्य भक्षण पान से गहरा सम्बन्ध है। शराबी व्यक्ति को न अपराध करने में कोई झिझक होती है और न अनैतिक कार्यों में कोई अरुचि। इसी से उन लोगों में अव्यवस्था, अंशान्ति और कलहपूर्ण परिस्थितियाँ बनी रहती हैं जिन्हें दूर कर पाना लगभग असम्भव ही है। शास्त्रों में कहा गया है कि दूषित आहार करने से बुद्धि भी दूषित हो जाती है और दूषित बुद्धि का व्यक्ति कभी कोई अच्छा काम ढंग से कर ही नहीं सकता। इसीलिये भारतीय मनीषियों ने नीति की कमाई से अर्जित अनाज के साथ आहार के गुण-दोषों का भी ध्यान रखने का निर्देश दिया है और ऐसे लोगों के यहाँ भोजन करने का भी निषेध किया गया है जो मद्य-माँस जैसे अभक्ष्य भक्षण पान का सेवन करते हों। छान्दोग्य उपनिषद में एक आख्यायिका आती है जिसमें उपमन्यु का पुत्र प्राचीनशाल, सत्ययज्ञ माल्लवी, इन्द्रद्युम्न, जन, बुडिल आदि महर्षि आत्म-ज्ञान का उपदेश प्राप्त करने के लिये अश्वपति के पास जाते हैं।

अश्वपति ने उनको उपदेश देने से पूर्व भोजन के लिये आमन्त्रित किया तो ऋषि संकोच करने लगे। उनके संकोच को समझकर अश्वपति ने स्पष्ट किया मेरे देश में न चोर है न कोई कृपण, न व्यभिचारी है न कामुक, न कोई अनपढ़ है और न अशिक्षित। इससे भी बढ़कर कोई व्यक्ति अभक्ष्य वस्तुओं का सेवन करने वाला नहीं है। पाँचवें प्रपाढक के बारहवें खण्ड में बड़े रोचक ढंग से आती है।

भागवत में भी यदुकुल के लोगों के शक्ति और अधिकार के मद में भूलकर अभक्ष्य भक्षण की प्रवृत्ति बढ़ने लगी और तज्जनित विकारों के कारण उनकी उद्दण्डता के शमन हेतु कृष्ण को यदुकुल के विनाश की योजना करनी पड़ी। शास्त्रों में शराब पीने वालों को नराधम कहा गया है और उसे ऐसा पाप कहा गया है कि जिसका कोई प्रायश्चित ही नहीं है। मनुस्मृति में शराब का प्रायश्चित सुझाते हुये कहा गया है—

गोमूत्रभग्निवर्शा व पिबेदुदकमेव या।
पयो घृत वामरणाद् गोशककृद् रसमेववात।।
कणानवा भक्षयेदब्दं पिण्याक या सकृन्निशि।
सुरापानापनुत्पथं वालवसा जटी ध्वजी।।

(मनु ११-६२)

अर्थात्—शराब पीने वाले को मद्यपान के पाप का प्रायश्चित करने के लिये गोमूत्र, जल, दुग्ध या गोमय रस को अग्नि में गर्म कर मरने तक आजीवन पीये या बाल से बने घने कम्बल को पहनता हुआ जटाविधि बनकर रहे अथवा एक वर्ष तक चावल की खल रात को एक समय खाकर रहे। तब वह मदिरापान के दोष से मुक्त हो सकता है।

प्राचीन भारतीय संस्कृति में मद्यपान के समर्थन की ऊलजलूल बातें खोजना और न मिलने पर अर्थ की खींचतान करना अपराधपूर्ण है। धर्मशास्त्रों को जानने और मानने वाले लोगों को अपनी दुष्प्रवृत्ति के समर्थन हेतु कोई आधार प्राप्त करने की कुचेष्टा की अपेक्षा इस पाप से मुक्त होना ही अच्छा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शैतान की लकड़ी जो समझदारों को भी मूर्ख बनाती है

मादक द्रव्यों में शराब का प्रयोग सारे विश्व में सबसे अधिक किया जाता है। अमीर लोग जहाँ महँगी शराब पीते हैं वहाँ गरीब तथा पिछड़े लोग विशेषकर भारत में घरेलू भट्टियों से तैयार गेहूँ, जौ, मक्का, ताड़ी, महुवे, गन्ने के रस आदि को सड़ाने से बनी सस्ती किस्म की शराबों का उपयोग करते हैं। परन्तु इसकी भयावह व्यापकता सभी स्तर तथा सभी वर्गों के लोगों तक फैली हुई है। शराब का सबसे अधिक दुष्प्रभाव मस्तिष्क तथा स्नायु तन्त्र पर पड़ता है। वैज्ञानिक परीक्षणों से प्राप्त तथ्यों से यह स्पष्ट हो गया है कि शराब से मस्तिष्क की कोषाओं की झिल्लियाँ क्षतिग्रस्त होती हैं जिससे मस्तिष्क की कार्यक्षमता पर प्रभाव पड़ता है। यही कारण है कि शराब के नशे की स्थिति में उत्तेजित व्यक्ति नशा समाप्त होने पर अवसादग्रस्त स्थिति में पहुँच जाता है। उस समय उसे यह भी भान नहीं रह जाता कि वह किस स्थिति में कहाँ है? अधिक मात्रा में शराब के निरन्तर सेवन से यह अवसादपूर्ण स्थिति स्थायी रूप से जीवन का अंग बन जाती है।

विटामिन बी काम्प्लेक्स स्नायु तन्त्र को सक्रिय बनाये रहने के लिये आवश्यक तत्व है, शरीर में जिसका उत्पादन शराब के सेवन से कम हो जाता है। स्नायु तन्त्र को सीधे भी यह क्षति पहुँचाती है। दोहरी मार से वह अपनी क्षमता खो बैठता है जो समस्त शारीरिक ऐच्छिक एवं अनैच्छिक क्रियाओं के लिये उत्तरदायी है। पक्षाघात जैसी बीमारियाँ इसी यन्त्र की दुर्बलता के कारण हो जाती हैं।

शरीर के लिये शराब विजातीय द्रव्य है। जीवनी शक्ति जिसे तुरन्त बाहर निकालने का प्रयास करती है। फिर भी उल्टी, पेशाब तथा पाखाने के द्वारा निकल जाने के बाद भी बची शराब का २० प्रतिशत भाग इसी बीच रक्त में सीधे ही मिल जाता है तथा ८० प्रतिशत भाग पाचक रसों के साथ घुलता हुआ कुछ देर में ही रक्त के साथ सारे शरीर में परिभ्रमण करने लगता है। रक्त में मिलते ही रक्त के आक्सीजन तथा पानी द्वारा सोख लेने के कारण प्रोटीन तथा एल्यूमिन गाढ़ा होकर रक्त प्रवाह में अवरोध उत्पन्न करने लगता है। जिससे हर कोष तक पोषक तत्व पहुँचाने तथा वहाँ से ऊर्जा उत्पन्न करन के कारण बचे विजातीय द्रव्यों की शरीर से बाहर निकालने की प्रक्रिया धीमी पड़ जाती है। शरीर जहाँ एक ओर पोषक तत्व कम मिलने से कमजोर होता है। वहीं विकार एकत्रित होते रहने के कारण समय-समय पर भयंकर रोगों से आक्रांत होता है।

शराब के द्वारा स्नायुतन्त्र तथा मस्तिष्क के अतिरिक्त सबसे अधिक प्रभाव पाचन तन्त्र पर पड़ता है। शराब-अलकोहल के पेट में पहुँचते ही पाचक रसों का स्राव होना कुंठित हो जाता है। जिसके कारण पाचन क्रिया धीमी पड़ने के साथ साथ वायुविकार बढ़ता तथा खून बनने की क्षमता घट जाती है।

शराब से जिगर भी कम प्रभावित नहीं होता। एक ओर जहाँ शराबी मानसिक दृष्टि से सनकी, विक्षिप्त एवं जीवन-संघर्षों में असन्तुलित मनःस्थिति वाला सिद्ध होता है वहीं शारीरिक दृष्टि से कमजोर रहने लगता है, वजन घटने, भूख मर जाने, सुबह-सुबह उल्टियाँ होने जैसे कष्ट उत्पन्न हो जाते हैं। लीवर खराब रहने के कारण पीलिया होने की आशंका हर समय बनी रहती है। कभी-कभी उल्टी पर उल्टियाँ आना प्रारम्भ होती हैं और उस समय शरीर में पानी की मात्रा एक दमकम हो जाने से मृत्यु भी हो सकती है।

शराब जैसे मादक द्रव्यों का प्रयोग मानव जाति के लिये हर प्रकार से समस्यायें ही उत्पन्न करने वाला है। दैनिक जीवन की कठिनाइयों तथा तनावों से मुक्ति पाने के लिये इसका प्रयोग तो मृगमरीचिका ही सिद्ध होता है। इतना जानते-समझते हुये भी नित्य अनेकों व्यक्ति शराब के चंगुल में फँसते, कमाई खोते और व्याधिग्रस्त होते देखे जाते हैं। यह एक प्रकार का ऐसा मायापाश है जो बरबस व्यक्ति को शराबखाने खींच ले जाता है और उसके स्वतन्त्र चिन्तन को कुंठित कर देता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शराब वस्तुतः एक भयंकर अभिशाप है। फिर भी लोग चोरी छिपे बनाते और सरकारी ठेकों से खरीदकर पीते और अपना शौक पूरा करते हैं। शराब से कितने लोग बेमौत मरे, बरबाद हुये, कितने परिवारों का अमन चैन चला गया, इसके आँकड़े तो नहीं हैं किन्तु अनुमान है कि प्रत्येक १०० व्यक्तियों के पीछे ५ व्यक्ति शराब पीते हैं अर्थात् सात करोड़ भारतवासी शराब पीते हैं और उसमें से लगभग २० हजार व्यक्ति प्रतिवर्ष असाध्य रोगों से ग्रसित और इतन ही मौत के मुँह में चले जाते हैं और लगभग एक लाख व्यक्ति शराब पीकर जघन्य अपराध, हत्या, डकैती, चोरी, जुआ, व्यभिचार आदि में संलग्न रहते हैं। लगभग ५ या ७ हजार व्यक्ति प्रतिदिन अपनी कमाई गई पूँजी शराब में फूँककर घर लौटते हैं और घर पर आकर बीबी की पिटाई करते हैं अथवा बच्चों को फुटबाल बनाकर उनकी हड्डी-पसली तोड़ देते हैं। लगभग २०-२५ हजार व्यक्ति अवैध शराब के धन्धे में लगे हैं। येन-केन प्रकारेण ये लोग सरकार, पुलिस की आँखों में धूल झोंककर शराब बनाते और बेचते हैं। इतना ही नहीं भारत का प्रत्येक राज्य (केवल गुजरात को छोड़कर), शराब बेचने और बनाने का धन्धा करता है और दूसरी ओर शराब को विष से भी भयंकर बताकर न पीने के लिये प्रचार भी राज्य सरकार का मद्यनिषेध विभाग करता है। कैसा विरोधाभास है यह ?

अवैध शराब गुड़ व शीरे से बनाई जाती है। जिसमें मिथाइल अल्कोहल, इथाइल अल्कोहल, (शुद्ध स्प्रिट), फ्रेंच पालिश, क्लोरल हाइड्रेट, सल्फेट, नाइट्रेट आफ इमोनिया, कापर (ताँबा) सल्फेट, जिंक, कम्पाउण्ड (जस्ते का लवण) आदि पदार्थ मिलाये जाते हैं। इन सब को घड़ों में भरकर शीघ्रता से सड़ने के लिये सड़े अण्डे, सड़ी गली सब्जियाँ, मेढ़क, तिलचट्टे आदि डाल दिये जाते हैं। जिससे शीघ्रता से लाहन उठे। इसमें बदबूदार कीड़े बुजबुजाते रहते हैं और मिथाइल एल्कोहल (तेज जहर) पैदा हो जाता है। जिसके कारण नौसिखिये शराब बनाने वाले अनेकों मौतों का कारण बनते हैं।

सस्तेपन के प्रलोभन से गरीब लोग प्रायः रंग वार्निस या स्टोव जलाते समय काम आने वाली स्प्रिट पीकर शराब का आनन्द लेते हैं। तात्कालिक नशा होने की बात तो उससे बन जाती है पर यह भुला दिया जाता है कि यह जहर है। अन्य जहरों की तरह उसका सेवन भी आंशिक या पूर्ण मृत्यु का कारण बनता है। ऐसे समाचार आये दिन अखबारों में छपते रहते हैं जिनसे प्रतीत होता है कि इस जहरीली शराब के पीने से एक ही समय में एक ही स्थान पर किस प्रकार सैंकड़ों मौतें हो गईं। संख्या अधिक होने के कारण वे अस्पतालों में भर्ती होते तथा मरते हैं तब पता चलता है अन्यथा एक-एक, दो-दो करके तो इस आधार पर कितनी ही मौतें होती रहती हैं।

स्प्रिट पीने पर नशा तो साधारण शराब जैसा ही होता है परन्तु धीरे-धीरे इसकी विषाक्तता का कुप्रभाव पीने वाले के केन्द्रीय स्नायु तन्त्र पर होने लगता है और दृष्टि स्नायु भी नष्ट होने लगते हैं। इससे पेट में ऐंठन, चक्कर आना, शरीर नीला पड़ना, आँतों में खराबी का होना, फेफड़ों में रक्तस्राव, स्नायु सम्बन्धी विकार आदि घातक परिणाम धीरे-धीरे सामने आने लगते हैं।

रक्त में कार्बनिक अम्लों के इस प्रकार इकट्ठे होने से रक्त की अम्लीयता बढ़ जाती है और यही मृत्यु अथा अन्धेपन का मुख्य कारण है।

टालस्टाय ने शराब को शैतान की लकड़ी कहा है जिसे सिर पर घुमाकर वह भले-चंगे दीखने वालों को भी मूर्ख बनाती और धन, स्वास्थ्य, परिवार, इज्जत तथा भविष्य को बर्बादी वाले गड्ढे में ढकेल देती है। आश्चर्य होता है कि यह हल्के विषपान की आदत दिन-दिन क्यों बढ़ती जा रही है ? लोग धीमी आत्महत्या में क्यों मजा लेते हैं और अपने मित्रों को उसी कुमार्ग पर चलने का परामर्श देते, आग्रह करते रहते हैं ?

इसका उत्तर अब ढूँढ़ लिया गया है। शोधविज्ञानियों का कहना है कि शराब पीने के बाद जिस सुखानुभूति का अनुभव शराबी करते हैं, वह वस्तुतः शरीर की एक अत्यन्त साधारण

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सी प्रतिक्रिया है। जब इस शारीरिक क्रिया में उसे आनन्द जैसा प्रतीत होने लगता है, तो वह बार-बार इसकी पुनरावृत्ति करना चाहता है। इस क्रम में उसे मद्य सेवन की नियमित आवश्यकता महसूस होने लगती है और वह उसका अभ्यासी बनने लगता है।

अल्कोहल पेट में जाते ही आमाशय की दीवारों से पानी सोखता है, इस प्रक्रिया से जलन की जो अनुभूति होती है, उससे पियक्कड़ अपने शरीर में गरमी बढ़ने जैसा मिथ्या सुख अनुभव करने लगता है। ठण्डे देशों तथा गर्म देशों में भी सर्दी के मौसम में नशेबाजों का शराब पीने का एक बहाना यह भी होता है, परन्तु यह नितान्त भ्रम है। अल्कोहल को पचाने का काम यकृत में होता है। अक्सर जब शराब तेज होती है, तो अल्कोहल पेट की दीवारों से इस तेजी से पानी खींचता है कि वहाँ रक्तस्राव होने लगता है। यदि ऐसा रक्तस्राव बार-बार होता रहे, तो वहाँ अल्सर हो जाने का भय रहता है।

माउण्ट सिनाई स्कूल ऑफ मेडिसिन के प्रमुख चिकित्सक—इमैन्युएल रूविन ने एक सर्वेक्षण के आधार पर यह तथ्य स्पष्ट किया है कि २५ से ४५ वर्ष के पुरुषों में हर चौथी मौत अर्थात् २५ प्रतिशत व्यक्तियों की मृत्यु यकृत की बीमारी "सिरोसिस" से हो रही है। न्यूयार्क में किये गये सर्वेक्षणों में २५ से ६५ वर्ष के पुरुषों में हर तीसरी मृत्यु अर्थात् ३३ प्रतिशत व्यक्तियों की मृत्यु हृदय रोग और कैंसर के कारण हो रही है। इस सबका कारण प्रायः मद्यपान ही है।

अल्कोहल का यकृत पर प्रभाव एकदम सीधा पड़ता है, जबकि यकृत का काम है चर्बी का पाचन करना, किन्तु जब यही यकृत चर्बी के बजाय अल्कोहल का पाचन करने के लिये मजबूर हो जाता है, तो इसका परिणाम यह होता है कि वहाँ पर चर्बी का जमाव हो जाता है और अन्त में सिरोसिस की बीमारी का दौर चल पड़ता है।

मैसाचुसेट्स जनरल हॉस्पीटल में किये गये एक सर्वेक्षण से यह निष्कर्ष निकला है कि शराब पीने वाले प्रायः सभी लोगों के शरीर में ट्राइग्लिसराइड का स्तर बढ़ा हुआ होता है। यदि किसी भी व्यक्ति का ट्राइग्लिसराइड बढ़ा हुआ हो तो उसे हृदय रोग का दौरा कभी भी, किसी भी क्षण पड़ सकता है।

पिछले दिनों स्वीडन के तीन चिकित्सा विशेषज्ञों का एक लेख लन्दन की सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक पत्रिका 'द लांसेट' में प्रकाशित हुआ है। इसमें चिकित्सकों ने दुर्घटनाग्रस्त व्यक्तियों के परीक्षण के उपरान्त अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत करते हुये बताया है कि सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा मद्यपान करने वाले लोगों के घाव से रक्तस्राव अधिक होता है। उनका कहना है कि शरीर में घाव से प्रवाहित रक्त को रोकने के लिये रक्त कण (ब्लड-प्लेटलेट्स) उपस्थिति रहते हैं। शराब पीने वाले लोगों के शरीर में इन विषाणुओं की सामूहिकता तथा आसंजनशीलता (परस्पर चिपकने के गुण) प्रायः नष्ट हो जाती है, जिससे व्यक्ति का प्राणान्त तक हो जाता है।

शराब को सुरा, वारुणी, मद्य, मदिरा आदि नामों से पुकारा जाता है। इसे विष से भयंकर क्यों कहा जाता है, इस पर गम्भीरता से विचार करने वाले एवं विश्लेषण करने वाले वैज्ञानिकों का कहना है कि यह एक अल्कोहल है जो एक प्रकार का तीव्र विष है। शराब की कितनी ही किस्में हैं—वाइन, वीयर, ब्राण्डी, व्हिस्की, वोदका, शेम्पेन, शैरी, पोर्टवाइन, कन्ट्रीलिकर आदि। वाइन में अल्कोहल की १० प्रतिशत, बीयर में ५ से २० प्रतिशत मात्रा पाई जाती है। अल्कोहल जितना अधिक होता है, शराब उतनी ही नशीली, जहरीली, विषैली होती है। इसके सेवन से प्रमाद, आलस्य, क्रोध, व्यभिचार, अनाचार व जुआ जैसे कृत्यों की आदत पड़ जाती है।

महर्षि चरक के अनुसार शराब की प्रकृति लघु उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, अम्लकारक, व्यावयिक, रुक्ष, विकाशी एवं विशद होती है। उष्णता के कारण मद्य पित्त को बढ़ाने वाला, तीक्ष्णता से मन की स्फूर्ति नष्ट करने वाला, विशद होने के कारण वात का प्रकोप करने वाला तथा कफ शुक्र को नष्ट करने वाला होता है। रुक्षता के कारण वायु का प्रकोप करने वाला तथा व्यावयिक होने से मानसिक उत्फुल्लता एवं कामोत्तेजना कारक गुणों वाला होता है। विकाशी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होने के कारण सम्पूर्ण शरीर में फैलकर ओज नष्ट करने वाला तथा अम्ल गुण के कारण अजीर्ण उत्पन्न करने वाला होता है। इसका प्रभाव मन, बुद्धि और इन्द्रियों पर पड़ता है और वे सन्तुलन खो बैठती हैं। इसलिये मनुष्य हिंसक, क्रूर, अपराधी और कलही, विग्रही, उत्पाती बन जाता है।

कैलीफोर्निया विश्वविद्यालय के मनःचिकित्सक गेलार्ड एलीसन ने शराब का प्राणियों पर पड़ने वाले प्रभाव का गहराई से अध्ययन किया है। उनका कहना है कि व्यक्ति में नशेबाजी की प्रवृत्ति आनुवांशिक नहीं अपितु सामाजिक कुप्रचलनों से प्रभावित होकर वह इसका शिकार बन जाता है। सर्वप्रथम उन्होने यह प्रयोग चूहों पर किये। चूहों के सामने पानी और शराब दोनों ही पृथक-पृथक रखे गये। कुछ दिन पश्चात् पता चला कि चूहों ने पानी की अपेक्षा शराब पीना अधिक पसन्द किया। शराबी चूहों को अनेक प्रकार दुराचरण करते हुये देखा गया। चिड़चिड़े तो बने, ही साथ ही साथ अनिद्रा की व्याधि से भी ग्रसित होते गये। फलतः शराब न पीने वाले चूहों की बिरादरी उन शराबियों को अपमानजनक एवं घृणास्पद दृष्टि से देखने लगी और उनका सामाजिक बहिष्कार तक कर दिया।

मद्रास विश्वविद्यालय के सुप्रसिद्ध चिकित्सा विज्ञानी एवं जैव रसायनज्ञ दम्पत्ति डा. ए. लक्ष्मण स्वामी मुदालियर ने सफेद चूहों पर शराब के प्रभाव का अध्ययन किया। उन्होंने चूहों के एक दल को ५५ प्रतिशत अल्कोहल दिया जिसे आरम्भ में चूहों ने नहीं पिया इस पर चूहों को कई घण्टे तक प्यासा रखा गया और दुबारा-पीने को स्प्रिट दी गयी। इस बार भी उन्होंने उसे मुँह नहीं लगाया। तब उन्हें जबरन ड्रापर की सहायता से स्प्रिट पिलाई गयी। अब तो चूहे उसका आनन्द लेने लगे। जब उन्हें स्वतन्त्र छोड़ा गया तो पानी पीने के स्थान पर वे अल्कोहल ढूँढ-ढूँढ़कर पीने लगे।

डा. मुदालियर ने एक महीने बाद इन चूहों का परीक्षण किया और पाया कि तीस दिन में उनका वजन दूना हो गया। उनके संवेदन तन्तु, मानसिक सन्तुलन सब कुछ गड़बड़ा गया। पंजों में पिन चुभोने तक की तत्काल कोई प्रतिक्रिया नहीं होती थी। उल्टा कर देने पर सीधा होने में उन्हें काफी देर लगती थी। ई. ई. जी., ई. सी. जी. आदि में बहुत अधिक परिवर्तन आ गया था। किडनी, यकृत आदि का अध्ययन करने पर पाया गया कि अल्कोहल के प्रभाव से ये अवयव काफी क्षतिग्रस्त हो चुके थे।

मद्यपान की आदत पड़ जाने और उसका अत्यधिक सेवन करने से मनुष्य का मस्तिष्क विकृत हो जाता है। मस्तिष्कीय कोशिकायें—न्यूरान शिथिल और निष्क्रिय हो जाती हैं। शराबी व्यक्ति को जब तक पीने को नहीं मिलता उसका मस्तिष्क काम नहीं करता। इसका प्रामाणिक विवेचन अमेरिका के फिलाडेल्फिया के तीन मूर्धन्य वैज्ञानिकों—जीव रसायन शास्त्री हेगई रोटन वर्ग और ऐलेन वेरिंग तथा रोगाणु विशेषज्ञ इम्मेनुअल रूविन ने प्रस्तुत किया है।

इन वैज्ञानिकों ने अपने अनुसंधान में पाया है कि शराबियों के मस्तिष्क की कोशिकाओं—न्यूरान का बाहरी आवरण कठोर हो जाता है। उनके मस्तिष्कीय न्यूरान केवल तभी सक्रिय होते हैं जब वे दुबारा शराब ग्रहण करते हैं अन्यथा इससे पहले ये न्यरान किसी प्रकार का संकेत ग्रहण करने, उनका विश्लेषण करने और पढ़ने में असफल रहते हैं। आरम्भ में व्यक्ति शराब कम मात्रा में पीता है, पर जैसे-जैसे मात्रा बढ़ती जाती है, मस्तिष्कीय कोशिकायें इस जहर से अपनी रक्षा करने के लिये मजबूत कवच का निर्माण कर लेती हैं। शराब में मिली अल्कोहल न्यूरान के बाहरी खोल पर चिपककर क्रमशः उसे कठोर बना देती है। इस बाहरी कठोर आवरण को नरम बनाये बनाये बिना न्यूरान के बीच आपसी संचार सम्बन्ध कायम नहीं हो पाता। अतः शराब पीना आवश्यक हो जाता है। शराबियों पर नशीली दवाओं की हल्की खुराक का भी कोई असर नहीं पड़ता क्योंकि नशीली दवा के अणु रक्त संचार के माध्यम से मस्तिष्कीय न्यूरानों तक पहुँचकर उनकी सतह पर जा चिपकते हैं और उनके आपसी संचार माध्यम को भंग कर देते हैं। ऐसी स्थिति में जब तक शराब नहीं पी जाती, मस्तिष्कीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोशिकायें आपस में संकेतों का आदान-प्रदान नहीं कर सकतीं।

चिकित्सा विज्ञानियों का कहना है कि कोई भी मादक नशीला पदार्थ मानवी काया में पहुँचकर उसके अंग अवयवों की क्रियाशीलता एवं ढाँचे में परिवर्तन कर देता है। आदत बन जाने, लत पड़ जाने पर नशेड़ी की मनोदशा, चेतना, अनुभूति, शारीरिक-मानसिक क्रियायें सभी परिवर्तित हो जाती हैं। विभिन्न सर्वेक्षणों से पता चला है कि मादक पदार्थों के निरन्तर सेवन से व्यक्ति में पलायन एवं निष्क्रियता की वृत्ति उभरती है। उनमें निर्णय लेने की क्षमता का अभाव हो जाता है। व्यसनी व्यक्ति अन्ततः शारीरिक रूप से असमर्थ, मानसिक रूप से अक्षम तथा भावनात्मक रूप से असन्तुलित होकर सामाजिक एवं व्यावसायिक दृष्टि से समाज के लिये अनुपयोगी हो जाता है। निराशा और कुण्ठा उसके जीवन का अंग बन जाते हैं। उसका आचरण उग्र और अपराधी बन जाता है तथा समाज और राष्ट्र के लिये वह एक समस्या बन जाता है।

एक मेडीकल सर्वेक्षण के अनुसार पुरुष दस वर्ष में पूर्ण नशेड़ी बनता है जबकि महिलायें ६ वर्ष में ही नशे की पूर्ण शिकार हो जाती हैं। बचपन से ही शराब का सेवन करने पर महिलायें कद में छोटी हो जाती हैं। उनकी यौन ग्रन्थियाँ उम्र से पहले ही विकसित हो जाती हैं और वे बुरी आदतों का शिकार बन जाती हैं। उनका नैतिक पतन हो जाता है।

भारत जैसा गरीब देश भी मद्यपान एवं नशेबाजी में अब किसी देश से पीछे नहीं रहा। भारत में प्रतिवर्ष २० करोड़ बोतल शराब और ढाई अरब बोतल बीयर का उत्पादन होता है। अवैध व कच्ची शराब का उत्पादन इसके अतिरिक्त है। शराब के धन्धे में बेचने और बनाने में ५५ लाख लोग लगे हुये हैं। इस देश में ३० प्रतिशत लोग नियमित शराब पीते हैं, अनियमित अलग हैं। कालेज के अतिरिक्त स्कूली छात्र-छात्रायें भी इसके शिकार बनते जा रहे हैं। मद्यपान के कारण भारत में प्रतिवर्ष ५० हजार लोग सड़क दुर्घटनाओं में अपनी जान गँवाते और ८ लाख घायल होते हैं।

वक्त का तकाजा है कि समय रहते विश्व भर में शराब के बढ़ते उत्पादन और उसे फैलते जहर पर अंकुश लगाया जाय तथा मद्यपान की हानियों से जन-जन को अवगत कराया जाय तथा उसके विरुद्ध वातावरण तैयार किया जाय।

दयनीय दुर्दशा की जननी शराब

प्राचीनकाल में हमारे देश में शराबी लोगों को दण्डित करने का नियम था। समाज उनका तिरस्कार करता था और उन्हें जाति से बहिष्कृत भी कर दिया जाता था। परन्तु अब ऐसे लोगों की एक बड़ी संख्या है जो पश्चिमी सभ्यता से प्रभावित होकर मद्यपान को एक अनुकरणीय आदत समझते हैं। यह स्थिति बड़ी भयावह है।

शराब की आलोचना करने से पहले उसे पीने के कारणों को समझ लेना अच्छा होगा। कई लोग यह मानते हैं कि शराब दवा का काम करती है और उसमें कई औषधियाँ मिली रहती हैं जो स्वास्थ्य को लाभ पहुँचाती हैं। यह नितान्त भ्रामक धारणा है। शराब न तो कोई औषधि है और न ही कोई शक्तिवर्धक पेय। दवाओं में जिस वस्तु के प्रयोग को शराब के रूप में प्रयोग किया जाता है वह एक अलग चीज है, जिसे विभिन्न चिकित्सा प्रणालियों द्वारा हानिरहित बनाकर शुद्ध किया जाता है। यह बात और है कि उन्हीं वस्तुओं से शराब भी बनायी जाती हो। यों तो ताड़ का गुड़ भी बनता है और ताड़ की शराब भी। दोनों के गुणों और विशेषताओं में आकाश-पाताल का अन्तर है। इस सम्बन्ध में अमेरिकन मेडिकल एसोसिएशन का यह वक्तव्य दृष्टव्य है—चिकित्सा विज्ञान में शराब का पुष्टिकरण औषधि या खाद्य के रूप में कोई वैज्ञानिक आधार नहीं है। इसके विपरीत शराब मस्तिष्क तन्तुओं और शरीर के भीतरी कोमल अंगों को हानि पहुँचाती है। साथ ही यह पागलपन मृगी, मनकी दुर्बलता और अन्य शारीरिक, मानसिक बीमारियों की भी जननी है।"

इण्टरनेशनल फिजियोलोजिकल कांग्रेस के सदस्य प्रोफेसर डा. आण्टेरो श्मेईदर वर्ग का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निष्कर्ष है कि "शराब क्लोरोफॉर्म और ईथर की तरह अवसादक है। इसके प्रयोग से जीव-जन्तु निर्बल हो जाते हैं।"

माना जाय कि यह दवा के रूप में हो भी सकती है, तो भी दवाओं का नित्य सेवन या अकारण सेवन भी तो कोई लाभदायक नहीं होता। उल्टे उससे नुकसान ही ज्यादा होता है। पीने वाला इसे दवा की तरह नहीं आदत की तरह पीता है, जो निर्मल स्वास्थ्य को कलुषित और विकारी बना देता है। जिस कारण से शराब को स्फूर्ति और बलदायी समझा जाता है यह भी एक भ्रान्ति है। शराब पीने के बाद व्यक्ति अपने आपको थोड़ा स्फूर्त और चैतन्य भले ही अनुभव करने लगे पर वह स्फूर्ति तथा चुस्ती शराब से तो आती नहीं। शरीर में छुपी पड़ी स्फूर्ति को ही वह बाहर निकालती है। यह ठीक इसी प्रकार है जिस प्रकार कि किसी घोड़े को चाबुक मानकर भगाया जाये। चाबुक लगाने से घोड़ा सरपट दौड़ने तो लगता है पर इसका अर्थ यह नहीं है कि चाबुक के कारण उस में ताकत आ गयी हो। चाबुक मार-मारकर दौड़ाने से ऐसी स्थिति भी आ जाती है जिसमें घोड़ा थककर गिर पड़ता है और फिर उसमें चलने की शक्ति भी नहीं रह जाती। शराब पीने या मादक द्रव्यों का सेवन करने से शरीर की चेतना चाबुक खाकर बाहर आती है लेकिन बार-बार इस चोट से अन्ततः वह निष्क्रिय हो जाती है। इन्हीं तथ्यों को उजागर करते हुये हार्टफोर्ड के इनविएट्स अस्पताल के सुपरिण्टेण्डेन्ट डा. टी. डी. ग्रोथर्स ने कहा—पिछले दस वर्षों के निरन्तर प्रयोगों और अनुसन्धानों द्वारा मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचा हूँ कि शराब शरीर के लिये पीड़ाहारक का काम करती है पर वह काम बहुत दिखावटी होता है, जिसमें शरीर की चेतना नष्ट हो जाती है।"

स्फूर्ति और चुस्ती के सम्बन्ध में तो यह हुआ, अब उसके शरीर और मन-मस्तिष्क पर पड़ने वाले कुप्रभावों की सूची भी बहुत बड़ी है। शराब रक्त को सर्वाधिक हानि पहुँचाती है जो मनुष्य शरीर की जीवनी शक्ति का प्रमुख आधार है तथा जिसकी शुद्धता पर ही मनुष्य का स्वास्थ्य निर्भर करता है। सर विक्टर होर्सले और डा. स्टर्ज का मत है कि शराब श्वेत कोशिकाओं को सर्वाधिक हानि पहुँचाती है। स्मरणीय है कि श्वेत रक्त कोशिकायें मनुष्य शरीर पर होने वाले रोगाणुओं के आक्रमण का सामना तथा चोट और विजातीय द्रव्यों को नष्ट करने का काम करती हैं।

पेट में पहुँचते ही शराब अपना घातक प्रभाव दिखाने लगती है। डा. स्टर्ज का कथन है कि पेट की आन्तरिक सूजन और आन्तरिक अंगों की खराबी का सबसे बड़ा कारण शराब या उस जैसे ही मादक द्रव्यों का सेवन है। उसका विषैला प्रवाह जिगर, दिल और गुर्दे तक भी पहुँचता है तथा वहाँ भी अपना कुप्रभाव डालता है। "फार्माकोलीन एण्ड थेरापियुट्स के लेखक डा. ग्राथमान के अनुसार शराब हृदय रोगों की भी जननी है। इंग्लैण्ड में पागलपन के कारणों की जाँच करने के लिये नियुक्त कमीशन ने अपनी रिपोर्ट में शराब को पागलपन के जन्म का मुख्य कारण बताया है। डा. थोमस पारिन ने भी इस मत का समर्थन ही किया है।

शरीर सम्बन्धी इन क्षतियों के साथ-साथ शराब व्यक्ति को मानसिक और नैतिक दृष्टि से भी खोखला बनाती है। डा. डब्ल्यू. जी. जी. अर्स के अनुसार पेट में पहुँचने के बाद शराब सर्वप्रथम मस्तिष्क को अपना शिकार बनाती है। ठीक निर्णय और ठीक समझ के लिये आवश्यक बौद्धिक चेतना शराब पीते ही छूमन्तर होने लगती है। यही कारण है कि शराब पीने वाले अपने होशो-हवाश खो बैठते हैं यद्यपि पीने के तुरन्त बाद व्यक्ति का मानसिक सन्तुलन अस्थायी रूप से ही अस्त-व्यस्त होता है। नशा उतरने के बाद शराबी सामान्य दिखने लगता है। लेकिन उसकी मानसिक शक्ति की जड़ें तो खोखली हो जाती हैं। एक बार किसी पेड़ की जड़ें हिला देने पर दुबारा उसी दशा में मजबूती के साथ खड़ा नहीं किया जा सकता। भूकम्प के बाद सामान्य सी आँधी में भी बड़ी-बड़ी इमारतों के गिरने का खतरा बना रहता है क्योंकि भूचाल उसकी नींव को ही झकझोर डालता है। मनुष्य की मानसिक शक्ति भी जब एक बार जड़ से हिल जाती है तो दुबारा सामान्य परिस्थितियों में भी वह उसी प्रकार डगमगाने लगती है। शराबियों के साथ स्थायी पागलपन का खतरा भी इसी कारण जुड़ा रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

शराब का सबसे मुख्य प्रभाव स्नायुओं पर होता है जो कोमल अनुभूतियों और संवेदनाओं के केन्द्र रहते हैं। आदतन मद्यसेवियों को इसी कारण निष्ठुर और क्रूर होते देखा जाता है, क्योंकि उनकी कोमल अनुभूतियाँ निर्बल स्नायु-तन्त्रों को छू ही नहीं पातीं। पीये हुये में शराबी को शरीर पर पड़ने वाली चोट, ठोकर और लड़खड़ाने का इसी कारध ध्यान नहीं रहता है कि स्नायु उसकी सूचना मस्तिष्क तक पहुँचा ही नहीं पाते।

नैतिक दृष्टि से भी शराब ने व्यक्ति को दयनीय और पथभ्रष्ट बना दिया है। देखा गया है कि अधिकांश अपराधी शराबी होते हैं। मानवीय मर्यादाओं के विरुद्ध खूँखार निर्णय लेने और उन्हें क्रियान्वित करने के लिये सर्वप्रथम व्यक्ति साहस कर ही नहीं पाता क्योंकि उसकी अन्तरात्मा बड़ी प्रबलता से इसका विरोध करती है और ऐसा न करने के लिये उस पर दबाव डालती है। लेकिन जब व्यक्ति अपनी आत्मा को एक बार कुचलने में सफल हो जाता है तो उसे दुबारा वैसा साहस करने में आत्मा का इतना विरोध नहीं सहना पड़ता, क्योंकि तब वह अपनी आत्मा की उपेक्षा करने का रास्ता पा चुका होता है और वह निस्सन्देह मादक बेहोशी ही है। अन्तरात्मा की पुकार को समाजशास्त्रीय भाषा में व्यक्ति की नैतिक चेतना भी कहा जा सकता है, जिसके अनुसार व्यक्ति समाज के अन्य सदस्यों को किसी प्रकार की हानि या क्षति पहुँचाये बिना अपना हित साधते रह सकता है। लेकिन मद्य का सेवन करते ही व्यक्ति की यह चेतना भी लुप्त हो जाती है।

इसके साथ ही व्यक्ति अपने आस-पास के वातावरण से बेखबर और बेहोश हो जाता है। तब किसी अन्य की उपस्थिति का आभास भी उसे नहीं रहता और न ही आवश्यक सावधानियाँ तथा सतर्कतायें बरतने का होश। यही कारण है कि शराबी ड्राइवर और चालक अक्सर दुर्घटनायें कर बैठते हैं। अपना सर्वनाश करने के साथ दूसरे निर्दोष प्राणियों और जन्तुओं का भी नाश कर देते हैं।

शारीरिक, मानसिक और नैतिक दृष्टि से अधःपतन के बाद सबसे बड़ी हानि है व्यक्ति की आर्थिक हानि जिससे शराबी को सबसे पहले पाला पड़ता है। शराब पीने के लिये कम से कम पाँच रुपये रोज का खर्च करने वाला व्यक्ति भी महीने में डेढ़ सौ, वर्ष में अठारह सौ रुपये खर्च कर डालता है। यदि ऐसा व्यक्ति बीस वर्ष तक भी शराब पीता रहे तो उसे छत्तीस हजार रुपये शराब की बोतल के पेट में डालना पड़ता है। इतना अधिक खर्च करने की नौबत ही नहीं आती क्योंकि सामान्य व्यक्ति की इतनी अच्छी आर्थिक हालत नहीं रहती और न ही इतने लम्बे समय तक व्यक्ति शराब पीने के लिये बचा रहता है। शराब उस व्यक्ति को ही जल्दी से जल्दी पी डालती है।

फिर भी कोई व्यक्ति शराब पीना आरम्भ करता है और पीना उसकी आदत में शुमार हो जाता है तो शीघ्र ही आर्थिक तंगियाँ उसे आ घेरती हैं। इधर स्वास्थ्य लड़खड़ाने लगता है—उधर पारिवारिक स्थिति डगमगाने लगती है। रोग, बीमारी, जर्जरता, दुर्बलता, गरीबी के साथ परिवार के अन्य लोगों की उपेक्षा और तिरस्कार भी उसे मिलने लगते हैं। उसका अन्त बड़ी ही दयनीय परिस्थितियों में होता है। न पत्नी का प्यार, न बच्चों का सम्मान, न स्वजनों का स्नेह, न मित्रों का प्रेम। कुछ भी उसे उपलब्ध नहीं होता और न ही वह इन लोगों के सम्बन्ध में कुछ सोचने की स्थिति में रहता है। परिवार में उसके आश्रित लोग-इसलिये उससे खिंचे-खिंचे रहते हैं कि वह अपने आश्रित जनों की अनिवार्य आवश्यकताओं की भी उपेक्षा कर अपनी शराब में झोंकता रहता है। बाजेवक्त तो लोगों को अपने घरों के बर्तन भी बेचते देखा जाता है। कई इतनी शर्मनाक घटनायें समाचार पत्रों के माध्यम से प्रकाश में आती हैं, जिन्हें पढ़कर द्रौपदी के चीरहरण वाली बात याद आ जाती है। लोग शराब की झोंक में अपनी पत्नी के शरीर को भी दाँव पर लगा जाते हैं। जहाँ शराबी अपनी उन्मत्तता से घर के लोगों को इतना पीड़ित करता है वहाँ घरेलू सुख-शान्ति स्थिर कैसे बनी रह सकती है।

रोमन साम्राज्य का पतन शराब के कारण हुआ। रोमन साम्राज्य के दो-तिहाई शासक शराब की बुरी लत के कारण ही मरे। शराब में शीशे

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की अधिक मात्रा होने से ही उनके गुर्दे खराब होते थे और वे लोग अधिकतर हिंसक प्रवृत्ति के हो उठते और अपने ही साथियों के प्राणों के प्यासे बन जाते थे। एन्टोनी नाम का शासक तो इतना क्रूर और नृशंस था कि शराब के नशे में धुत होकर उसने संसद के अधिकांश लोगों का कत्लेआम कर दिया। इसी तरह शराब पीने के पश्चात् सेण्टीमियस सेरेवस मृत सीनेटरों की लाशें उनके घरों में टँगवाकर जश्न मनाया करता था। सम्राट नीरो को जलते रोम को देखकर इतनी प्रसन्नता हुई कि वारुणी के नशे में वंशी से राग अलापने लगा था। मद्यपान से उत्पन्न बुद्धिभ्रष्टता के ये कुछ इतिहास-प्रसिद्ध उदाहरण हैं।

यूनाइटेड स्टेट्स में उपलब्ध आँकड़ों के अनुसार, लगभग एक करोड़ व्यक्ति शराब पर आश्रित हैं। निकट वर्षों में इस संख्या में और भी अभिवृद्धि होने की संभावना स्वास्थ्य विशेषज्ञों ने व्यक्त की है। इसके अतिरिक्त अनेकों ऐसे हैं, जो अन्य नशीले पदार्थों की आदत बना रहे हैं तथा शीघ्र ही मदिरा सेवकों की श्रेणी में शामिल होने वाले हैं। अपने देश में वैज्ञानिकों द्वारा किये गये एक पर्यवेक्षण के अनुसार प्रत्येक दस श्रमिकों के पीछे एक श्रमिक शराब का व्यसनी है। परिणामस्वरूप देश को प्रतिवर्ष उनकी बीमारी, अनुपस्थिति, अकुशलता व दुर्घटना से अरबों-खरबों रुपये की क्षति होती है। आठ हजार प्रशासकों के ऊपर जब अध्ययन किया गया, तो उनमें से २७ प्रतिशत अत्यधिक पीने वाले पाये गये, जो प्रतिदिन औसतन ६ औंस या उससे भी अधिक शराब का सेवन करते थे।

न्यूयार्क टाइम्स में चिकित्सकों के एक दल ने अध्ययन के उपरान्त बताया है कि इस युग की सबसे बड़ी समस्या युवकों में बढ़ती मद्यपान की लत है। पर्यवेक्षण रिपोर्ट के अनुसार अमेरिका में लगभग एक-तिहाई उच्च विद्यालय के विद्यार्थी शराब का सेवन करते हैं। अब तो आरम्भिक विद्यालय के विद्यार्थियों में भी यह दुर्व्यसन बढ़ता जा रहा है।

जर्मनी में केवल विश्वविद्यालय के वैज्ञानिकों ने यह रिपोर्ट प्रस्तुत की है कि जर्मनी के प्रत्येक १० से १८ वर्ष के बीच की आयु के युवकों को शराब की आदत है। अन्य देशों के नवयुवकों में भी इसके प्रति रुझान बढ़ा है।

जापान के सर्वेक्षणकर्त्ताओं के अनुसार वहाँ उच्च पदों पर आसीन व्यक्तियों में से लगभग ६० प्रतिशत शराब के व्यसनी पाये गये हैं।

अधिकांश धनी देशों की महिलायें भी शराब की आदत से ग्रस्त पाई गई हैं। इसके कारण अकेले उत्तरी अमेरिका में ४५०० लोग जीभ के कैंसर से मरते हैं। सर्वेक्षकों के अनुसार विश्व में सबसे अधिक शराब फ्रांस में पी जाती है। वहाँ प्रतिवर्ष ३५ से ४० हजार लोगों की मृत्यु होती है। ब्रिटेन में ७० से ७५ प्रतिशत लोग शराब पीते हैं। भारत में प्रायः ३० प्रतिशत व्यक्ति नित्य वैध-अवैध शराब पीते हैं। बिशेषज्ञों के अनुसार मद्यपान का सबसे अधिक कुप्रभाव मनुष्य के अनुमस्तिष्क (सेरेव्रम) पर पड़ता है। शारीरिक संतुलन में मस्तिष्क के इस भाग का महत्त्वपूर्ण योगदान होता है। शराब पीने पर पेट में पहुँचकर पाचन रस के लिये वह बहुत ही घातक सिद्ध होती है। इसमें पेप्सीन नामक रस का स्राव गड़बड़ा जाता है, जो पाचन क्रिया को सुसंचालित करने में सहायक समझा जाता है। शराब की अत्यधिक मात्रा प्रयोग करने से आमाशय में अवस्थित श्लेष्मा ग्रन्थियाँ काफी बड़ी मात्रा में क्षारीय द्रव उड़ेलने लगती हैं, जिसके फलस्वरूप पाचन तन्त्र में व्यतिरेक उत्पन्न होने लगता है।

स्वास्थ्य विशेषज्ञों का कहना है कि अल्कोहल के शिकार कई मृत व्यक्तियों के जब शव-परीक्षण किये गये, तो उनकी डिम्ब ग्रन्थियों के सभी ऊतक पूर्णतः नष्ट पाये गये। इसी तरह शराब पीने से व्यक्ति की प्रोस्टेट ग्रन्थि में सूजन आ जाती है, जिसके कारण व्यक्ति नपुंसकता का शिकार बनता चला जाता है। जिन गर्भवती माताओं ने अल्कोहल का सेवन किया, उनके बच्चों को विकलांगता का शिकार बनना पड़ा है। मद्यपान से व्यक्ति के गुर्दे शीघ्र नष्ट होने लगते हैं।

मद्यपान की लत किसी भी कारण क्यों न पड़ी हो, पर उसके सेवन से मानव जीवन तथा समाज व्यवस्था अत्यन्त दुष्प्रभावित हुई है। शराब पीने वाले व्यक्ति का स्वयं का जीवन तो खतरे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में रहता ही है, साथ ही अन्यों के लिये भी वह खतरनाक सिद्ध होता है। वैज्ञानिक खोजों में पाया गया है कि शराब के दीर्घ सेवन से शरीर में कई हानिप्रद रासायनिक परिवर्तन हो जाते हैं। शरीर के कोष व ऊतक भी धीरे-धीरे शराब पर आश्रित होने लगते हैं तथा इसके अभाव में ठीक तरह से कार्य करना बन्द कर देते हैं। जब व्यक्ति शराब पीकर अपने को विश्रामपूर्ण अनुभव करता है, तो वह वस्तुतः अपने शरीर की क्षति करता रहता है और अन्ततः अपने शरीर के महत्त्वपूर्ण अंगों को विनष्ट करके शीघ्र ही मृत्यु का ग्रास बन जाता है।

शराब एलर्जी, असामान्य सुगर मेटाबॉलिज्म, चीनी चयापचय, थाइरॉयड-पिट्यूटरी अथवा एड्रीनल ग्रन्थि के हारमोन में क्षति, विटामिन्स, खनिज लवणों, एन्जाइमों अथवा अन्य पोषक तत्वों की दैनिक आहार अथवा चयापचय में अपूर्णता को बढ़ावा देती है। यकृत की निष्क्रियता तथा हाइपोथैलमस की क्रिया-पद्धति का लड़खड़ाना मद्यपान के प्रत्यक्ष दुष्प्रभाव हैं जो अधिकाधिक शराब पीने के लिये अनियन्त्रित प्यास को जगाते रहते हैं।

शराब में विटामिन, खनिज और प्रोटीन का अभाव होता है। इसमें मात्र कैलोरी होती है। अतः इसका अत्यधिक प्रयोग करने वाले अपने शरीर की वजन-वृद्धि तो अनुभव करते हैं, परन्तु पोषण की दृष्टि से हीन होते जाते हैं, साथ ही आहार की ओर रुचि मिट जाती है। अतः कुपोषण के कारण वे शीघ्र ही रोगग्रस्त हो जाते हैं। इससे उदर व छोटी आँत की ऊपरी पर्त क्षतिग्रस्त हो जाती है, जिससे शोथ व अल्सर रोग उत्पन्न होते हैं। साथ ही उदर पेशियाँ अपनी शक्ति खो देती हैं। फलतः पाचन की क्रिया गड़बड़ा जाती है तथा मिचली रोग उत्पन्न होता है।

शराब सेवन की अंतिम परिणति कम्पोन्माद के रूप में प्रकट होती है। जब शराब उपलब्ध नहीं हो पाती अथवा अत्यल्प मात्रा में ही उपलब्ध होती है तो इस रोग में समस्त शरीर में कम्पन शुरू होता है, भूख मिट जाती है, मिचली आने लगती हैं, दृष्टिभ्रम जैसे लक्षण प्रकट होने लगते हैं। अन्ततः व्यक्ति पागलपन का शिकार होकर आत्महत्या करने से भी नहीं चूकता। आँकड़े बताते हैं कि आज २० प्रतिशत मृत्यु प्रायः इसी के कारण घटित हो रही हैं। समय रहते यदि इस ओर ध्यान नहीं दिया गया और रोकथाम के उपाय नहीं किये गये तो मद्यपान का पिशाच एक दिन दुनियाँ की अधिकांश आबादी को अपने गाल में समेट लेगा।

मनुष्यता की शत्रु है—यह शराब

शराब से होने वाली नैतिक और आध्यात्मिक हानियों के सम्बन्ध में खलील जिब्रान ने लिखा है—"शराब शैतान की ईजाद कही जाती है।" इस्लाम की किताबों में कहा गया है कि जब शैतान ने पुरुषों और स्त्रियों को ललचाना शुरू किया तो उसने उन्हें शराब दिखाई थी। कितने ही मामलों में ये देखा जा सकता है कि शराब आदमियों से न सिर्फ उनका पैसा छीन लेती है, बल्कि उनकी बुद्धि भी हर लेती है। उसके नशे में वे कुछ क्षणों के लिये उचित और अनुचित का, पुण्य और पाप का, यहाँ तक कि बहन और स्त्री तक का भेद भूल जाते हैं। माँसाहार और शराब दोनों के बारे में यह सोचकर निर्णय लिया जाना चाहिये कि हमें खाने-पीने और आमोद-प्रमोद के लिये नहीं जीना है, बल्कि हमारा शरीर ईश्वर का पवित्र मन्दिर बन जाये और हम उसका उपयोग मनुष्य की सेवा में कर सकें।

खलील जिब्रान के उपरोक्त कथन में सन्त और मनीषी की अन्तर्दृष्टि समाई है और यह सही भी है कि मनुष्य शराब पीकर पशु से भी नीचे गिर जाता है। न उसकी बुद्धि काम कर पाती है, न विवेक। मनुष्य की दृष्टि से विचार करना तो दूर रहा उसके लिये स्वयं के प्रति मनुष्य होने का बोध तक नष्ट हो जाता है। राष्ट्रपिता गाँधी भारत को समृद्ध और सम्पन्न बनाने से पहले भारतवासियों को नैतिक और मानवीय दृष्टि से इतना ऊँचा उठा हुआ देखना चाहते थे कि वह अपनी समृद्धि और सम्पन्नता का सदुपयोग सारी मानव जाति के हित में कर सकें। जिस स्वराज्य को प्राप्त करने के लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उन्होंने जीवन भर लड़ाई लड़ी, उस स्वराज्य का अर्थ स्पष्ट करते हुये उन्होंने "हरिजन" पत्र के २ जनवरी, १६३७ के अंक में लिखा था "स्वराज्य की मेरी कल्पना के विषय में किसी को कोई गलतफहमी नहीं होनी चाहिये। उसका अर्थ विदेशी नियन्त्रण से पूरी मुक्ति और पूर्ण आर्थिक स्वतन्त्रता हैं। उसके दो दूसरे उद्देश्य भी हैं—एक छोर पर है—नैतिक और सामाजिक उद्देश्य तथा दूसरे छोर पर इस पक्ष का दूसरा उद्देश्य है—"धर्म"। यहाँ धर्म शब्द का सर्वोच्च अर्थ अभीष्ट है। उसमें सभी धर्मों का समावेश हो जाता है। उनकी स्वराज्य की जो कल्पना थी उसमें स्वतन्त्रता, समृद्धि, सामाजिक उत्कर्ष और नैतिक आदर्शों के प्रति आस्था, इन चार विशेषताओं का समावेश है। यह चारों विशेषतायें अन्योन्याश्रित हैं। एक के बिना बाकी सबका मेल फीका और अधूरा रह जाता है। इनमें भी नैतिक आदर्शों का सर्वोच्च स्थान है, क्योंकि इसके अभाव में स्वतन्त्रता, समृद्धि, उन्नत समाज अन्ततः हानिकारक ही सिद्ध होते हैं। मनुष्य का नैतिक उत्थान करने के लिये और भी बातें आवश्यक हैं। जहाँ तक उस लक्ष्य को पूरा करने में आने वाली बाधाओं को निरस्त करने का प्रश्न है—गाँधी जी ने सर्वप्रथम शराब को बन्द करना आवश्यक समझा था। उन्होंने अपने इसी मन्तव्य को स्पष्ट करते हुये यंग इण्डिया के २५ जून, १६३१ के अंक में लिखा था—"यदि मुझे एक घण्टे के लिये भारत का डिक्टेटर बना दिया जाय तो मेरा पहला काम यह होगा कि शराब की दुकानों को बिना मुआवजा दिये ही बन्द करा दिया जायेगा और कारखानों के मालिकों को अपने मजदूरों के लिये मनुष्योचित परिस्थितियाँ निर्माण करने तथा उनके हित में ऐसे उपहारगृह और मनोरंजन-गृह खोलने के लिये मजबूर किया जायेगा जहाँ मजदूरों को ताजगी देने वाले निर्दोष पेय और उतना ही निर्दोष मनोरंजन प्राप्त हो सके।

मनुष्यता की शत्रु शराब का प्रचलन बन्द करने के लिये महात्मा गाँधी तो यहाँ तक तैयार थे कि "मैं भारत का गरीब होना पसन्द करूँगा लेकिन मेरे लिये यह सहन करना सम्भव नहीं है कि हमारे हजारों लोग शराबी हो जायें। अगर भारत में शराबबन्दी जारी करने के लिये लोगों को शिक्षा देना बन्द करना पड़े तो कोई परवाह नहीं। मैं यह कीमत चुकाकर भी शराबखोरी रोकना पसन्द करूँगा।

उनके इन विचारों में मद्यपान के विरुद्ध कोई आत्यंतिक पूर्वाग्रह नहीं समझना चाहिये। उन्होंने समाज को दिशा देने वाले मनीषी की दृष्टि से मद्यपान के कारण होने वाले मनुष्यों के नैतिक और चारित्रिक पतन को देखा तथा मानवीय आदर्शों की स्थापना के लिये अपनी व्यग्रता और व्यथा को इन शब्दों में व्यक्त किया। नशा कोई भी हो, मनुष्य के स्वास्थ्य, शक्ति एवं चरित्र को हानि पहुँचाता है, उसके मस्तिष्क और बौद्धिक गुणों को कुन्द बनाता है। शराब पीने के बाद उसका प्रभाव सर्वप्रथम मनुष्य के मस्तिष्क पर पड़ता है। उसमें रहने वाला विषैला तत्व शरीर के अन्य क्रियाकलापों को तो गड़बड़ाता ही है, लेकिन सर्वप्रथम मस्तिष्क के उन केन्द्रों को प्रभावित करता है जो शरीर के विभिन्न अंगों पर नियन्त्रण करते हैं। फलस्वरूप शरीर के विभिन्न अंगों पर से मस्तिस्क का नियन्त्रण हट जाता है। यही कारण है कि शराब पीने वालों की जबान लड़खड़ाने लगती है, हाथ-पैर जवाब देने लगते हैं। चलने-फिरने में भी वह ठीक से समर्थ नहीं रह जाता और जहाँ-तहाँ गिरने पड़ने लगता है।

इसके अतिरिक्त मद्यपान के कारण मनुष्य के सोचने-समझने की शक्ति भी नष्ट प्रायः हो जाती है और सोचने, विचारने की क्षमता से रहित होकर अपने आपको मुक्त समझने लगता है। इस स्थिति में मद्यप को थोड़ी-सी उत्तेजना का आभास भी होता है। इस दशा में दो तरह के परिवर्तन हो सकते हैं। एक तो यह कि व्यक्ति यदि खुशमिजाज है, तो शराब पीने के बाद जरूरत से ज्यादा हँसी-मजाक और बकवास करने के साथ झगड़ालू भी हो उठता है। जरा-सी बात पर गाली-गलौज, मारपीट करने पर उतारू हो जाता है। दूसरी स्थिति में व्यक्ति यदि एकान्तप्रिय है तो वह खामोश, सुस्त और उदास होकर बैठ जाता है। यह उदासी भी कम हानिकारक नहीं होती। उदास रहने वाले व्यक्ति अपने आप को इस नशे के कारण कई बार इतने अकेले, दुःखी और क्लान्त अनुभव करने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लगते हैं कि उन्हें आत्महत्या का रास्ता ही सूझता है। ऐसे कई व्यक्ति हैं जिन्होंने शराब पीकर केवल नशे में ही अपने दुःखों को बढ़ा-चढ़ाकर देखा और अपने हाथों अपने जीवन को समाप्त कर दिया।

मद्यपान चूँकि मनुष्य के सोचने-विचारने की, समझने-बूझने की विवेक शक्ति को विदा कर देता है, इसलिये शराब को मनुष्यता का शत्रु कहा गया है। मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति और विशेषता यही तो है कि सोचने-विचारने और समझने-बूझने में सक्षम है। मस्तिष्कीय विशेषता ही एकमात्र वह विशेषता है, जो मनुष्य को अन्य प्राणियों से अलग करती और विशिष्ट बनाती है। जब यही शक्ति नष्ट हो जाय या निष्क्रिय पड़ जायें, तो मनुष्य-मनुष्य भी नहीं रह जाता और पशु भी नहीं बन पाता। इसीलिये कहा गया है कि शराब जब मनुष्य के भीतर प्रवेश करती है, तो वह सबसे पहले आदमी को बाहर निकाल देती है। यह कथन अक्षरशः सही है। क्योंकि जब मनुष्य की सोचने-विचारने की शक्ति को ही निष्क्रिय कर देती है, तो उसमें भला-बुरा सोचने-समझने की शक्ति कहाँ से आयेगी। यही कारण है कि संसार में जितने भी अपराध होते हैं, उनमें से अधिकांश शराब पीने के बाद ही किये जाते हैं।

कुल मिलाकर शराब के कारण मनुष्य के स्वास्थ्य, धन, समय और मान-मर्यादा तो नष्ट होते ही हैं। उस सबको परे छोड़ दिया जाये तो भी चारित्रिक एवं मानवीय दृष्टि से मनुष्य का जो अधःपतन हो जाता है, वही एक इतना बड़ा कारण है कि मद्यपान अनुचित, अवांछनीय, घृणित और त्याज्य ठहरता है।

इतने पर भी विश्व के प्रायः प्रत्येक देश में नशाखोरी महामारी की तरह फैलती चली जा रही है। इस कुटेव में प्रायः सभी वर्ग के स्त्री-पुरुष संलग्न पाये जाते हैं। सर्वेक्षणकर्त्ताओं के अनुसार विकसित देशों में प्रति ३ पुरुषों के पीछे एक महिला शराब पीने की अभ्यस्त है। भारत में यह अनुपात प्रति १० पुरुषों के पीछे एक महिला का है। विश्व में सर्वाधिक नशे की शिकार फ्रांस की महिलायें हैं। प्रति १२ महिलाओं में से एक महिला मद्यपान करती है। अमेरिका एवं इक्वेडोर की कुल आबादी का १२.५ प्रतिशत भाग इस बुराई से त्रस्त है।

दिल्ली स्थित सामाजिक विकास परिषद् द्वारा किये गये सर्वेक्षण के अनुसार अपने देश के विश्वविद्यालयों में भी नशेबाजी का अनुपात दिनोंदिन बढ़ता जा रहा है। इन संस्थाओं में मद्यपान करने वाले छात्र-छात्राओं की संख्या ११.६ प्रतिशत तक पायी गयी है। चार महानगरों में यह अनुपात २१.२ प्रतिशत तक है। पाया गया है कि शराब पीने के मामलों में वाणिज्य के छात्रों की संख्या विज्ञान के छात्रों से दुगुनी से भी अधिक है। वाणिज्य संकाय में ५०.६ प्रतिशत छात्रों ने शराब पीना स्वीकार किया जबकि कला संकाय में केवल ३०.६ प्रतिशत तथा विज्ञान में २२.४ प्रतिशत विद्यार्थियों ने मद्यपायी होना स्वीकार किया। इससे न केवल शक्ति की बर्बादी होती है वरन् पीने वाले अपना शारीरिक, मानसिक स्वास्थ्य गँवाते और भविष्य अन्धकारमय बनाते हैं।

शराबी व्यक्ति अपना मानसिक सन्तुलन ही नहीं गड़बड़ाता वरन् अपने परिवार को, पड़ोस एवं परिकर को भी नरकमय बना देता है। इससे जहाँ सम्पत्ति की बर्बादी होती है, वहीं व्यक्ति अपनी प्रामाणिकता खो बैठता है और एक दिन नकारा होकर स्वयं भी मानसिक व्यथा का शिकार बन जाता है। इस लत से कितने ही परिवार उजड़ जाते हैं। अमेरिका, रूस, ब्रिटेन एवं जापान में एक सबसे बड़ा कारण पुरुषों का शराबी होना है।

इस सन्दर्भ में सोवियत वैज्ञानिकों ने गम्भीरतापूर्वक अध्ययन किया है और कहा है कि जो दम्पत्ति शराब के नशे में धुत्त होकर सन्तोनोत्पादन में संलग्न होते हैं, वे कभी भी स्वस्थ शिशु को जन्म नहीं दे सकते। शराब के दुष्प्रभाव के कारण अनेकों विकृतियाँ उत्पन्न हो जाती हैं। ऐसे दम्पत्तियों से जन्मे शिशुओं का आई. क्यू. अर्थात् बुद्धि लब्ध ८० से भी कम होता है, जबकि सामान्य दम्पत्ति के शिशु का आई. क्यू. १०० होता है। इन शिशुओं में और भी कई प्रकार के जन्मजात रोग पाये जाते हैं, जिनके जन्मदाताओं में से एक भी शराब पीता है।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वैज्ञानिकों ने गहन शोध-अध्ययन के उपरान्त निष्कर्ष प्रस्तुत करते हुये बताया है कि प्रतिदिन दो से अधिक बार मदिरापान करने वाले व्यक्तियों के हृदय का बायाँ वेन्ट्रीकुलरमास अधिक बढ़ जाता है। इससे हृदय की गति तीव्र और लय अनियमित हो जाती है। परिणाम हार्ट अटैक के रूप में सामने आता है। उनके अनुसार शराब की कुछ ही बूँदें लेते रहने पर भी हृदय कोशिकायें प्रभावित होने लगती हैं, अधिक पीने पर तो मरण ही शेष रह जाता है। विशेषज्ञों एवं समाजसेवियों को उनकी सलाह है कि तमाम प्रचलित एवं परोक्ष उपायों से जितनी जल्दी हो सके, इस लत को छोड़ने के लिये मद्यपियों को विवश किया जाय। नशेबाजी के विरुद्ध जनमत तैयार किया जाय, अन्यथा भावी पीढ़ी को विरासत के रूप में इसका अभिशाप अनेकानेक प्रकार की शारीरिक, मानसिक रुग्णता के रूप में भुगतना पड़ेगा।

एक मिनट में औसत ७० बार धड़कने वाला संवेदनशील हृदय हर धड़कन के साथ २ औंस रक्त निकालकर शरीर को सींचता है। इससे अधिक रक्त निकालने के लिये पम्पिंग क्रिया का बहुत तेज होना आवयश्यक है पर उस स्थिति में शुद्ध और अशुद्ध रक्त वाले कोठों को पृथक रखने वाली झिल्ली (क्यूकस मेम्ब्रेन) में सूजन आ जाती है। शराब पीने की स्थिति में हृदय के अन्य अवयव इस झिल्ली को भारी आघात से बचाने के लिये शक्तिभर चेष्टा करते हैं इसलिये शरीर की क्रियायें अस्त-व्यस्त हो जाती हैं और यदि हृदय कमजोर हुआ तो झिल्ली भी सँभल नहीं पाती। हार्ट फेल हो जाता है और मनुष्य मर जाता है। जो लोग पहली बार शराब पीने से मरते नहीं उनका हृदय कमजोर होता चला जाता है और वे भी एक दिन अकाल में ही काल-कवलित हो जाते हैं।

हृदय शरीर का सर्वाधिक संवेदनशील भाग है, इसलिये उसकी रक्षा पर अधिक ध्यान देना आवश्यक है। वैसे उसका असर शरीर के प्रत्येक अंग पर दूषित ही पड़ता है। पेट को ही लिया जाये जहाँ शराब का सबसे सीधा और पहला आक्रमण होता है। अन्न जहाँ पहुँचता है, पेट के उस भीतरी भाग पर आँतों में कुछ ग्रन्थियाँ होती हैं जिनसे एक प्रकार का रस निकलता है। इसे "गैस्ट्रिक जूस" कहते हैं। यही रस पाचन क्रिया में सहायक होता है। शराब इन ग्रन्थियों में सूजन पैदा कर देती है। फलस्वरूप पेट की पाचनशक्ति जाती रहती है और पेट हमेशा के लिये खराब हो जाता है। कई बार तो आँतों में बार-बार धक्के लगने के कारण घाव (गैस्टिक अल्सर्स) भी हो जाते हैं, जिनका ठीक होना कठिन होता है। नशेबाज प्रायः सभी पेट के बीमार होते हैं। वह बीमारी आँतों की अग्नि मन्द पड़ जाने के कारण ही होती है।

शराब पीने वाले लोगों के फेफड़े यदि कुछ बोल पायें तो यह कहने से न चूकें—भगवन ! हमें दूसरा जन्म इस शराबी के पेट में मत देना। फेफड़ों का शरीर में महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनमें करोड़ों की संख्या में छोटे-छोटे छिद्र होते हैं। इनमें रक्त भरता है ताकि जब श्वाँस ली जाये तो वह इस अशुद्ध रक्त की कार्बन डाईऑक्साइड बाहर निकल जाये और ऑक्सीजन भीतर आ जाये। शरीर में समस्त शक्ति, प्राण ओज का आधार यह ऑक्सीजन ही होती है। सामान्यतः १ मिनट में १७ बार फेफड़े श्वाँस खींचते और ऑक्सीजन शरीर में पहुँचाते हैं। किन्तु शराब पीने से आधा घण्टे तक श्वाँस-प्रश्वाँस क्रिया बहुत अधिक तेज हो उठती है और नशा कम होते ही वह गति सामान्य से भी नीचे चली जाती है। उस समय फेफड़ों का काम शरीर को ऑक्सीजन देना नहीं रह जाता वरन् जिस प्रकार किसी आग लग गये मकान के सदस्य खाने-पीने का काम छोड़कर जले हुये टुकड़ों को निकालने, मलवा समेटने आदि अनावश्यक कार्यों में लग जाते हैं उसी प्रकार शराब की स्थिति में फेफड़े उल्टी क्रिया शुरू कर देते हैं। लेना चाहिये था उन्हें ऑक्सीजन और देना चाहिये था कार्बन डाईऑक्साइड पर लेने लगते हैं कार्बन डाई ऑक्साइड (जिसके कारण मूर्छा आती है) और छोड़ने लगते हैं ऑक्सीजन। प्रश्वाँस क्रिया (रेस्पिरेटरी कोशेट) नीचा हो जाने पर फेफड़ों को शराब और कार्बन डाई-ऑक्साइड की सफाई में लगना पड़ता है। इस प्रकार शराबी व्यक्ति के फेफड़ों का अधिकांश काम सुरक्षात्मक हो जाता है,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पोषक नहीं। शराबी के मुख और देह का पीलापन उसी का परिणाम होता है।

इसी प्रकार शराबी के गुर्दों में भी खराबी आ जाती है, जिसके कारण शराबी लोगों को पुंसत्व से वंचित होते तक पाया गया है। गुर्दों (किडनीज) का काम है शरीर की रासायनिक प्रक्रिया को संतुलित रखना। शरीर के सभी कोष जहाँ आवश्यक पोषण तत्व ग्रहण करते रहते हैं, वहाँ उनसे नष्ट हुये पदार्थ भी निकलते हैं, जिन्हें गुर्दे यूरिया तथा यूरिक एसिड बनाकर पेशाब के रूप में निकालते रहते हैं। आहार-विहार में असन्तुलन के कारण कई बार शरीर में फॉस्फेट, सल्फेट तथा पोटेशियम क्लोराइड की मात्रा बढ़ जाती है। उस बढ़े हुये अनावश्यक द्रव्य को मूत्र बनाकर निकाल न दिया जाये तो शरीर में अनेक प्रकार की विकृतियाँ और बीमारियाँ उठ खड़ी हो सकती हैं। सामान्य अवस्था में गुर्दे यह काम करते रहते हैं और मूत्र के द्वारा शरीर की गन्दगी बाहर निकालते रहते हैं। इससे शरीर स्वस्थ बना रहता है। गुर्दे के पास एक गुच्छे (ग्लोमेरुलस) के रूप में छोटी-छोटी रक्त कोशिकायें (कैपिलरीज) पाई जाती हैं। यहाँ गुर्दे रक्त में आई हुई गन्दगी को भी रोकते हैं। पर जब शराब पी जाती है तो रक्त के साथ शराब भी यहाँ आ धमकती है जिसके फलस्वरूप गुर्दे स्वाभाविक गति से अधिक काम करने लगते हैं। उसका एक-दुष्परिणाम तो यौन उत्तेजना के रूप में आता है। नशेबाज प्रायः सभी कामुक होते हैं वह इसी कारण होते हैं। दूसरा गुर्दे पूरी तरह मूत्र छान नहीं पाते जिससे रक्त की सारी अशुद्धियाँ फिर से लौट जाती हैं और अपने साथ मूत्राशय की गन्दगी भी ले जाती है जिससे बुद्धि में दूषण उत्पन्न हो जाता हैं। शराबी आदमी की बुद्धि कुण्ठित होने लगती है। उसकी विवेक शक्ति इस गन्दगी के कारण ही जाती रहती है।

यह सारी बातें बताती हैं कि शराब कोई अच्छा पेय नहीं वरन् यह स्वास्थ्य की दुश्मन है। जो भी उससे बच जाये वह बुद्धिमान और जो उसमें फँस जाये उसे अभागा ही कहा जा सकता है।

यूनाइटेड स्टेट्स में शराबी और उनके परिवार पर स्वास्थ्य एवं कल्याण हेतु लगभग २ अरब डालर खर्च किये जाते हैं। राष्ट्रीय अर्थ-व्यवस्था में परियोजना के अन्तर्गत मद्यव्यय के ऊपर वार्षिक खर्च ७ अरब से १० अरब तक माना जाता है। २२ से ४३ प्रतिशत भ्रष्टाचार शराबियों द्वारा किया जाता है। यहाँ ५० हजार वार्षिक सड़क-यातायात दुर्घटनाओं में से एक तिहाई दुर्घटनायें शराबियों द्वारा की जाती हैं। आत्महत्या करने वालों में ऐसे ही लोगों की संख्या अधिक पाई गई है। जिससे ५ लाख व्यक्ति घायल होते हैं और लगभग चौदह अरब रुपये की सम्पत्ति की हानि होती है।

अस्पतालों में भरती हुये कुल रोगियों में से १३ से २६ प्र. श. मद्यसार से उत्पन्न रोगों से ग्रस्त लोगों की संख्या थी। इसमें मद्यसार से उत्पन्न मनोविक्षिप्त पुरुष रोगियों की संख्या ५ प्रतिशत व महिलाओं की ३ से ४ प्रतिशत थी। ४० प्रतिशत पुरुष और १३ प्रतिशत महिला निजी अस्पतालों में ऐसे रोगी भरती हुये जो मनोविक्षिप्त तो नहीं थे, पर वे मद्यपान के शिकार थे।

फ्रान्स में प्रौढ़-जनसंख्या का ५ प्रतिशत इसके रोग से ग्रस्त पाये गये हैं। कनाडा में यह दर २.४ प्रतिशत (५ पुरुष : १ महिला का अनुपात), स्वीडेन में ३.५ प्रतिशत। ०.४१ प्रतिशत इटली में, इंग्लैण्ड में १.१ प्रतिशत से ८.८ या ११ प्रतिशत तक, स्वीजरलैण्ड में २.२ से १३ प्रतिशत तक है।

मद्यपान यों अब विश्वव्यापी रोग बनता जा रहा है। पर धनी देश उस हानि को किस प्रकार सहन भी कर सकते हैं किन्तु भारत जैसे निर्धन देश के लिये तो उन हानियों से बचने पर सहन करने तक का कोई उपाय नहीं है। इसलिये इसे भारतवासियों के लिये तो सर्वनाश की निशानी ही समझा जाना चाहिये।

नशों में शराब प्रमुख है। यों सिगरेट और चाय भी हल्के नशे की श्रेणी में आते हैं। पर उनने अब नमक-चीनी की तरह स्वास्थ्य के लिये अहितकर होते हुये भी दैनिक प्रयोग में स्थान प्राप्त कर लिया है। इन नशों की हानि धीमी है और कालान्तर में ही उनके दुष्परिणाम

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रकट होते हैं पर शराब तो हाथों-हाथ अपनी विनाशलीला का परिचय देती है। स्वास्थ्य की बर्बादी, मानसिक सन्तुलन में बेतरह विक्षेप, पैसे का अपव्यय, परिवार तथा सन्तान पर दुष्प्रभाव, सम्मान और विश्वास में कमी जैसी हानियाँ ऐसी हैं जिनके कारण मनुष्य धीरे धीरे पतन के गर्त में गिरता जाता है और न केवल स्वयं बेमौत मरता है वरन् अपने समूचे परिवार को साथ ले डूबता है।

शराब के कारण मनुष्य की जीवनी शक्ति निरन्तर घटती जाती है, फलतः वह साधारण रोगों तक का प्रतिकार नहीं कर पाता। इलाज करते रहने पर भी मुद्दतों तक बीमारी का त्रास भुगतता है। श्रम करने की शक्ति के क्षीण हो जाने से महत्त्वपूर्ण समस्याओं पर सही निर्णय ले सकना तो दूर, दैनिक काम-काज में ही उपयुक्त व्यवस्था बनाने में असमर्थ हो जाता है। ऐसे लोग प्रायः अर्ध-विक्षिप्तों और अर्ध-मृतकों की श्रेणी में सम्मिलित होते और पिछड़े स्तर का जीवन जीते देखे गये हैं।

ऐसा मद भूल न पीवई जे बहुरि पछताय

कुछ वर्षों पूर्व अमेरिका में सम्पन्न हुये एलाईनिस्ट्रस एण्ड न्यू रोला निस्ट्स के नेशनल कन्वेशन (राष्ट्रीय-सम्मेलन) में सम्मिलित चिकित्सकों ने इस विषय में एक राय व्यक्त की कि किसी भी रूप में ली गई शराब शरीर और मस्तिष्क तक के लिये विष का काम करती है। चिकित्सा-विज्ञान में, पुष्टिकारक औषधि अथवा खाद्य के रूप में इसकी उपयोगिता किसी भी प्रकार सिद्ध नहीं हुई है, बल्कि इसके कारण पागलपन, मृगी, मानसिक-दुर्बलता जैसे विकार उत्पन्न होते हैं, इसमें कोई सन्देह नहीं है।

शराब का घूँट हलक से नीचे उतरते ही आमाशय की श्लेष्मा-झिल्ली से छेड़छाड़ करती है और खून में मिलकर मस्तिष्क तक पहुँच जाती है। मस्तिष्क में पहुँचने के लिये पाँच मिनट से भी कम समय लगता है और वहाँ पहुँचते ही वह मस्तिष्क के उन भावों को निष्क्रिय कर देती है, जो विचार, विश्लेषण और निर्णय करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निबाहते हैं। मदिरा का जो अंश मस्तिष्क को चेतना-शून्य बनाता और नशा देता है, उसे इथाइल अल्कोहल कहते हैं। यह विशुद्ध रूप से बेहोश करने वाला तत्व है। जब शराब के माध्यम से अल्कोहल मस्तिष्क में पहुँचता है और उसे विचार तथा विवेकशून्य बना दैता है तो मस्तिष्क का शरीर और उमंग पर नियन्त्रण घटने लगता है तथा धीरे-धीरे समाप्त हो जाता है। यही कारण है जो मद्यपान के बाद लोग मस्ती में झूमने लगते हैं। चूँकि उनकी समीक्षा-शक्ति दुर्बल या निष्क्रिय पड़ जाती है तो वह अपने और दूसरों के बारे में न जाने क्या-क्या सोचने लगता है। दुबला-पतला और कृशकाय व्यक्ति भी पीने के बाद अपने को किसी पहलवान से कम नहीं समझता। निरक्षर भट्ट होने पर भी व्यक्ति अपने को दुनियाँ का सबसे अधिक समझदार व्यक्ति समझने लगता है, उसे अपनी शक्तियों और स्थितियों के बारे में इतना अधिक भ्रम होने लगता है कि पीया हुआ व्यक्ति यदि कार चला रहा हो और उसे किसी स्थान पर कार पास करनी हो तो वह दो कारों के बीच तीसरी कार खड़ी करने जितनी जगह न होने पर भी अपनी ड्रायवरी का घमण्ड करता हुआ उस जगह में अपनी कार घुसा ही देता है, भले ही कार में टक्कर लग जाय या मोच आ जाय।

शराब पीने पर व्यक्ति थोड़ी स्फूर्ति और उत्साह का अनुभव करता है। इस कारण यह मान लिया गया है कि शराब उत्तेजक है। किन्तु सच्चाई यह है कि शराब से मस्तिष्क उत्तेजित नहीं होता, बल्कि दमित होता है। चूँकि मस्तिष्क का दमन होने के कारण व्यक्ति की चिन्ता, पीड़ा अनुभव करने की क्षमता भी दमित होने लगती है। इसलिये यह भ्रम होने लगता है कि पीने के बाद अपनी मानसिक एवं शारीरिक क्षमतायें सहसा बढ़ गई हैं। शराब जैसे-जैसे आदतन मजबूरी बनने लगती है वैसे-वैसे उसकी मात्रा भी बढ़ानी पड़ती है और यह बढ़ी हुई मात्रा व्यक्ति के विवेक तथा संयम को नष्ट करने लगती है। धीरे-धीरे स्थिति यहाँ तक जा पहुँचती है कि न पिये होने पर भी व्यक्ति अपना मानसिक सन्तुलन स्थिर नहीं रख पाता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सहनशक्ति से थोड़ी अधिक मात्रा होने पर व्यक्ति का अपने शरीर पर भी नियन्त्रण नहीं रह पाता, उसकी जबान लड़खड़ाने लगती है, कदम डगमगाने लगते हैं, कोई वस्तु अपने हाथों से उठाना चाहता है तो उठा नहीं पाता। इससे भी आगे घबराहट होने लगती है, पसीना छूटता है, मितली आने लगती है। शरीर के विभिन्न अंगों की माँसपेशियों पर से नियन्त्रण और सन्तुलन हट जाता है। ऐसी स्थिति में आँखों से कोई चीज एक की दो दिखाई देने लगती हैं। कई बार इस स्थिति में टट्टी पेशाब भी छूट जाता है और धीरे धीरे आदमी बेहोशी की ओर बढ़ने लगता है। कुछ और पी लेने पर साँस तथा हृदय की धड़कन भी रुकने एवं बन्द होने लगती है। इस दशा में यदि तुरन्त उपचार न किया जाये तो मृत्यु तक हो जाती है।

फ्रेंच अकादमी ऑफ मेड़ीकल के डा. पैरिर्सन ने सन् १९४५ में यह बताया कि शराब मस्तिष्क के अतिरिक्त हृदय और रक्तवाहिनियों को भी प्रभावित करती है। उसके कारण रक्तवाहिनी नलिकायें फूल जाती हैं, जिससे पीने वाला गर्मी अनुभव करता है और उसका रक्त-संचार बढ़ जाता है। रक्त-संचार बढ़ जाने से पीने वाले का चेहरा भी लाल दिखाई पड़ने लगता है।

यह लालिमा इसलिये भी दिखाई देती है कि रक्त शरीर के भीतरी अवयवों से चमड़ी की ओर अधिक आ जाता है। इस कारण चमड़ी तपने लगती है और उसकी तपिश बाहर हवा में चली जाती है। इस प्रकार शराब पीने के कारण गर्मी प्राप्त नहीं होती, बल्कि खोती अधिक है। रक्त-नलिकाओं में फैलाव आ जाने के कारण शराब प्रायः हृदय रोगों को भी जन्म देती है।

शरीर पर पड़ने वाले प्रभावों में एक तथ्य यह भी है कि उसे पचाने में पेट की उपेक्षा जिगर को अधिक मेहनत करनी पड़ती है। कुछ एञ्जाइमों की सहायता से जिगर इथाइल अल्कोहल को ऑक्सीजन देकर उसे कार्बन डाइऑक्साइड तथा पानी में बदलता है। इस प्रक्रिया में काफी समय लगता है और शरीर का पोषण करने वाले कुछ बहुमूल्य विटामिन तथा एञ्जाइम भी इस प्रक्रिया में नष्ट होते हैं। दूसरे इस प्रकार शराब को पचाने में जिगर को अधिक समय भी लगता है। जितनी मात्रा में एक बार पी ली जाती है, वही काफी देर में रच-पच पाती है। निरन्तर या अधिक समय तक पीते रहा जाय तो उतने ही समय में पच पाने के कारण नशा चढ़ा का चढ़ा ही रहता है। कहना नहीं होगा कि इस स्थिति में जिगर पर बहुत अधिक मात्रा में अतिरिक्त भार पड़ता है और उस पर चर्बी चढ़ने लगती है।

इस प्रकार शराब कई प्रकार से मानसिक शक्तियों और शारीरिक क्षमताओं को नष्ट करती है। इसके कारण सर्वप्रथम मस्तिष्क बुरी तरह आक्रान्त होता है। अधिक समय तक पीते रहने के कारण दिमाग इतना कमजोर हो जाता है कि दैनिक क्रिया-कलाप भी ठीक से सम्पन्न नहीं हो पाते। कई बार तो स्थिति यहाँ तक पहुँच जाती है कि मद्यपान करने वाले स्थायी रूप से पागल हो जाते हैं। शारीरिक दृष्टि से शरीर का सन्तुलन नियमन करने वाले सैरे-बेलम कोश क्षतिग्रस्त होते हैं। फलतः वह पिये हुये हों अथवा न पिये हुये हों, कोई काम स्थिरता से कर नहीं सकते। हमेशा डगमगाते ही रहते हैं। दूसरे मद्यपान के कारण स्नायु-तन्तुओं को क्षति पहुँचती है। हाथ-पैरों की पेशियाँ दुखने लगती हैं। उनमें ऐंठन और झनझनाहट बनी रहने लगती है। कभी-कभी वे सुन्न भी पड़ जाती हैं। इस कारण तथा शराब के कारण शरीर में विटामिन बी. वन की कमी के कारण लकवा जैसे रोग तक होते देखे गये हैं।

मद्यपान के कारण 'कोसीकोफ' नामक मानसिक रोग होने की अधिक सम्भावना रहती है। इस रोग के शिकार व्यक्ति की स्मरण शक्ति कमजोर पड़ते-पड़ते वस्तुतः क्षीण हो जाती है। एक और रोग 'बर्नेकी' होने का भी भय रहता है, जिसमें एक वस्तु की दो वस्तुयें दिखाई देने लगती हैं। प्रसिद्ध हृदय-रोग विशेषज्ञ डी. डब्लू. जी. सी. अस के अनुसार प्रायः सभी शराबियों का हृदय अपने सामान्य आकार से कुछ बड़ा हो जाता है और इस कारण उसे साँस लेने में तकलीफ होने लगती है। मद्यपान पेट और आँत की झिल्लियों को भी सीधा नुकसान पहुँचाता है। तेजाब की मात्रा बढ़ जाने से अल्सर की शिकायत होने का डर रहता है। बहुत अधिक पी लेने के कारण कभी-कभी खून की उल्टियाँ भी होने लगती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बदहजमी और अपच की शिकायत बने रहना तो जैसे शराबियों के लिये आम बात है और इस कारण उसका वजन तेजी से घटने लगता है। मद्यपान के कारण पैंक्रियाज ग्रन्थि और पेट को जोड़ने वाली नलिका कभी-कभी सूजन के कारण बन्द हो जाती है। एसी स्थिति में भयंकर उदर-शूल उठता है। रक्तचाप तेजी से गिरने लगता है। अगर तुरन्त उपचार न हो तो यह स्थिति जीवन-संकट भी उपस्थित कर देती है। पैंक्रियाज-ग्रन्थि का यह रोग बराबर बना रहता है और शराब के कारण खराब हो जाने से वह बहुत कम मात्रा में इन्सुलिन बनाती है। इस कारण मधुमेह रोग होने की सम्भावना भी रहती है।

मद्यपान के कारण जिगर को होने वाली सिरोसिस बीमारी इतनी भयंकर है कि वह छह महीने तक रोगी को बुरी तरह तड़पा-तड़पाकर उसका प्राण-हरण कर लेती है। इसके अतिरिक्त हृदय की भाँति ही जिगर का आकार भी फैलने लगता है। मरने वाले शराबियों में ६० प्रतिशत प्रायः जिगर के रोगों से ही मरते हैं, क्योंकि इस विषैले तत्व को परास्त करने और उससे संघर्ष करने में शराब को ही अधिक मेहनत करनी पड़ती है।

ये प्रभाव प्रायः प्रत्यक्ष नहीं दिखाई देते और न ही ऐसा लगता है कि इनका कारण मद्यपान है। शराब की हानियों को देखने के लिये दैनिक जीवन में मद्यपान करने वालों की दुर्दशा देखना ही पर्याप्त होता है। जब कोई व्यक्ति शराब पीता है तो उसी बुद्धि और समृति अस्त-व्यस्त हो जाती है। कहावत भी है कि "शराब अन्दर तो अक्ल बाहर।" शरीर और मस्तिष्क का नियन्त्रण खोकर शराबी जिस तरह कहीं भी सड़क पर, नालियों में, कूड़े के ढेर पर—जिस बुरी स्थिति में पड़े पाये जाते हैं, उन्हें देखकर ही किसी समझदार व्यक्ति को घृणा होने के साथ पीने वाले के प्रति दया का भाव भी उत्पन्न होने लगता है। इस स्थिति को लक्ष्य बनाकर ही किसी सन्त-कवि ने गाया है कि "ऐसा मद भूल न पीवई, जो बहुरि पछिताय" वस्तुतः शराब पीने के बाद इस तरह की दुर्दशाग्रस्त स्थिति में पड़े व्यक्ति को होश आने पर अपनी स्थिति का पता चले तो वह शर्मिन्दा हुये बिना नहीं रह सकता। स्वाभाविक ही उसे पश्चाताप भी होता है।

मदिरा चाहे जिस ढंग से बनी हो, वह देशी हो या विलायती, जिस वस्तु के कारण उसमें मादकता आती है उसका नाम है 'इथाइल अल्कोहल'। आम बोलचाल की भाषा में इसे अल्कोहल भी कहा जाता है। विभिन्न प्रकार की शराबों में यह १ प्रतिशत से लेकर ५६ प्रतिशत तक मिला रहता है। इसके कारण ही शराब नशा लाती है और व्यक्ति पर अपने आप का नियन्त्रण समाप्त करने से लेकर उसके स्वास्थ्य को भी क्षति पहुँचाती है।

मुँह से घुटकने के बाद शराब का यह तत्व आहारनली द्वारा सोख लिया जाता है और वहाँ से रक्त में मिल जाता है। रक्त में पहले से ही लगभग ४ मिली ग्राम अल्कोहल मिला रहता है। शरीर के लिये इतनी मात्रा ही पर्याप्त है लेकिन शराब पीने से यह मात्रा और बढ़ जाती है। यह बढ़ी हुई मात्रा शरीर के विभिन्न अंगों में पहुँचती है। सामान्यतः शरीर में जो अल्कोहल प्राकृत रूप में विद्यमान रहता है वह कोशिकाओं द्वारा शक्ति के रूप में परिवर्तित कर लिया जाता है। यह शक्ति प्रतिदिन के कार्यकलापों में काम आती है। यही कारण है कि थोड़ी मात्रा में मदिरा का सेवन करने के बाद मनुष्य अपने को अतिरिक्त रूप से स्फूर्तिवान अनुभव करने लगता है क्योंकि मदिरा के माध्यम से जो अल्कोहल रक्त में पहुँचता है, कोशिकार्ये उसे शक्ति के रूप में बदलने के लिये सक्रिय हो जाती हैं। किन्तु कोशिकाओं पर पड़ने वाला यह अतिरिक्त भार उनकी शक्ति को क्षीण ही बनाता है। क्योंकि सामान्य स्थिति में करीब १ ग्राम एल्कोहल के सात कैलोरी ऊष्मा प्राप्त होती है। सामान्य स्वास्थ्य वाले व्यक्ति को एक घण्टे तक परिश्रम करने के लिये प्रायः ८५ कैलोरी ऊष्मा आवश्यक होती है और यह ऊष्मा मनुष्य को सामान्य आहार से ही प्राप्त हो जाती है।

अल्कोहल को कोशिकाओं द्वारा ही शक्ति के रूप में परिवर्तित किया जाता है। किन्तु शराब के माध्यम से जो अल्कोहल शरीर में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

पहुँचता है एक तो वह अप्राकृतिक होता है तथा दूसरे मात्रा में इतना अधिक होता है कि उसे शक्ति रूप में बदलने का श्रम करते-करते कोशिकाओं की कार्यप्रणाली, प्रकारान्तर से शरीर की शक्ति क्षीण और नष्ट होने लगती है। यही कारण है कि मद्यपान करने वाले व्यक्ति कई प्रकार के रोगों से ग्रस्त होने लगते हैं। क्योंकि उनकी जीवनी शक्ति, जो शरीर के क्रियाकलापों का संचालन और नियमन करती है, वह शराब के माध्यम से आये अतिरिक्त अल्कोहल को पचाने में नष्ट हो जाती है और सामान्य से सामान्य रोगों का आक्रमण रोकने की शक्ति भी शरीर में नहीं रह जाती।

शराब और उसके कारण शरीर तथा मस्तिष्क पर होने वाले दुष्प्रभावों का विश्लेषण करते हुये विज्ञानियों का कहना है कि ३० से ४० मिली लीटर तक अल्कोहल शरीर में पहुँच जाने के बाद मस्तिष्क के वे केन्द्र कार्य करना बन्द कर देते हैं जो शरीर के विभिन्न कार्यों पर नियन्त्रण रखते हैं। ६० से ६० मिली लीटर अल्कोहल पहुँच जाने के बाद तो प्रायः मस्तिष्क के सारे केन्द्र शिथिल पड़ने लगते हैं। परिणामस्वरूप व्यक्ति का दिमाग काम करना बन्द कर देता है। वह भ्रम की स्थिति में पहुँच जाता है, वस्तुयें उस रूप में दिखाई नहीं देतीं जिस रूप में होती हैं और न ही वह साधारण से साधारण बातों को समझ पाता है। जो कुछ वह कहना चाहता है, वह ठीक से कह नहीं सकता और जिस दिशा में वह चलना चाहता है, उस दिशा में चल नहीं पाता। उसकी चाल लड़खड़ाने लगती है।

१५० से ३०० मिली लीटर शराब की मात्रा शरीर में पहुँच जाने पर मनुष्य पूरी तरह बेहोश हो जाता है और श्वाँस की गति भी इतनी धीमी पड़ जाती है कि उसकी मृत्यु की सम्भावना उत्पन्न हो जाती है। ऐसी बेहोशी के बाद शराब पीने वाले जब होश में आते हैं तो उनके सिर में दर्द होने लगता है, मितलाहट और उल्टी भी होने लगती है। यह तो हुई मस्तिष्कीय प्रभावों की बात। मस्तिष्क के अतिरिक्त मदिरा शरीर के अन्य महत्त्वपूर्ण अंगों पर भी अपना दुष्प्रभाव डालती है। उदाहरण के लिये शराब पीने के बाद हृदय को दस प्रतिशत अधिक काम करना पड़ता है। मनुष्य के रक्तचाप में भी वृद्धि हो जाती है तथा धमनियाँ फैल जाती हैं जिससे रक्त-संचार की गति बढ़ जाती है और गरमी महसूस होने लगती है।

डाक्टरों के अनुसार शराब के माध्यम से शरीर में पाँच औंस अल्कोहल की मात्रा पहुँच जाने पर मनुष्य के लिये प्राणसंकट खड़ा हो जाता है और मृत्यु लगभग निश्चित हो जाती है। २ औंस अल्कोहल १२ वर्ष के बच्चे को मारने के लिये पर्याप्त है। यह मात्रा पीने वालों की आदत और सामर्थ्य पर भी निर्भर करती है। फिर भी दस औंस से अधिक अल्कोहल सहन कर पाना किसी के लिये भी सम्भव नहीं है।

इस प्रकार स्पष्ट हो जाता है कि मद्यपान से लाभ कुछ नहीं, हानि ही हानि है। उससे थकान मिटने और स्फूर्ति मिलने की बात में सारतथ्य कुछ भी नहीं है। इसकी आदत भले ही शौकिया तौर पर डाली जाय पर बाद में वह मजबूरी बन जाती है। इसलिये किसी को भी फैशन में आकर, थकान मिटाने के लिये, सोहबत में पड़कर अथवा किन्हीं अन्य परिस्थितियों में इसको छूना भी नहीं चाहिये। जो लोग शराब के आदी हैं, उन्हें भी मद्यपान से होने वाली हानियों के बारे में समझाया जाना चाहिये। यह ठीक है कि लम्बे समय की आदत को छोड़ पाना सरलता से सम्भव नहीं होता। किन्तु स्मरण रखा जान चाहिये कि मनुष्य के पास संकल्प के रूप में एक ऐसी शक्ति विद्यमान है, जिसका प्रयोग कर वह असाध्य लगने वाले कार्य भी आनन-फानन में सम्पन्न कर डालता है। समझदार और विचारशील व्यक्तियों को चाहिये कि वे उन व्यक्तियों में यह संकल्पशक्ति जगायें जो मद्यपान के दुर्व्यसन से छुटकारा तो पाना चाहते हैं किन्तु आदतन, मजबूरी के कारण छोड़ नहीं पाते। इस पुण्य प्रयास को हाथ में लेकर अकाल मृत्यु का ग्रास बनने वाले असंख्यों के जीवन में नई खुशहाली पैदा करने का श्रेय सहज ही प्राप्त किया जा सकता है। इस उच्चस्तरीय परमार्थ प्रयोजन में हममें से प्रत्येक को बढ़-चढ़ कर अपना हाथ बढ़ाने का प्रयास करना ही चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विदेशों में मद्य निषेध के प्रयास

अमेरिका के एक प्रसिद्ध लेखक एफ. पी. एडम्स ने १८८१ में ऐसे लोगों पर कटाक्ष किया था जो काफी धनी हैं व जिन्हें समाजशास्त्री अपने अध्ययन के क्षेत्र में इसलिये सम्मिलित नहीं करते कि वे समाज में अपने धन एवं अपार साधनों के कारण सामान्यजन की परिधि में न आकर "अपवाद" माने जाते हैं। ऐसे लोगों के बारे में श्री एडम्स का कहना है कि जो धनी आदमी हैं, उनके पास अपनी कार है, अपनी जमींदारी है और उनके पास अपनी एक बड़ी सम्पदा है, वह कीमती शराब पीता है व ठठाकर हँसता है। यह स्थिति अमेरिकी जीवन व सामाजिक दशा की ही नहीं वरन् अधिकांश देशों की है। मद्य निषेध का विरोध केवल वे कुछ ही लोग करते हैं जो बहुत अधिक सम्पत्ति के स्वामी बने बैठे हैं, जिन्होंने बिना इस बात का विचार किये कि अनीति की कमाई अच्छी नहीं होती, अन्धाधुन्ध कमाई की है व जो कम श्रम कर अधिक धनोत्पादन करते रहते हैं तथा गरीबी की ही चिता पर रोटी सेककर खाने के आदी हैं। देखा जाये तो मद्यपान का इतना विस्तार आज इसीलिये हुआ है कि समाज के इस सर्वहारा वर्ग ने शराब को न केवल अपने आमोद-प्रमोद व विलासिता को ही अपने जीवन-यापन का मुख्य ध्येय बना लिया वरन् इसे अपने रहन सहन के उच्चस्तर का मापदण्ड भी बना लिया है।

भारतवर्ष में भी, ऐसा नहीं कि मद्यपान की प्रवृत्ति कोई आदिकाल से चली आ रही है। तथ्य यह है कि मद्यपान की यह प्रवृत्ति अंग्रेजों के राज्य के माध्यम से पाश्चात्य सभ्यता के कारण पनपी है। भारत की देशी रियासतों के राजे-महाराजे, जागीरदार, जमीदार, रईस-धनी अंग्रेजों के साथ मिल-बैठकर शराब पीने-पिलाने की बात को अपनी प्रतिष्ठा समझते थे। इस कारण इन दिनों ऐसी हवा बनी कि समाज के इस श्रेष्ठ वर्ग का अनुसरण क्रमशः मध्यम वर्ग व निम्न वर्ग के लोग भी उसी अनुपात में व उसी उद्देश्य से करने लगे तथा भारत में यह बीमारी एक महामारी के रूप में फैल गई व तभी से इसने देश को ऐसा जकड़ रखा है कि आज तक देश इसकी पकड़ से छूट नहीं पा रहा है।

मद्यपान की बुराई की बात तथा मद्यनिषेध के प्रयासों की चर्चा केवल भारत में ही नहीं होती। यह मानना निराधार होगा कि विश्व के अन्यान्य देश जब मद्यपान को एक सामाजिक मान्यता दे चुके हैं तो भारत का मद्यनिषेध का अपना अलग राग अलापते रहना उचित नहीं होगा। ऐसी स्थिति नहीं है कि मद्य-निषेध के प्रयास भारत में ही किये जा रहे हों। मद्य-निषेध का औचित्य बहुत पूर्व से ही विश्व के धनी राष्ट्रों के साहित्यिक व दार्शनिक मानते रहे हैं।

प्रसिद्ध दार्शनिक प्लेटो ने एक बार यह तथ्य उद्घाटित किया था कि कोरथेजिनियनों को इस बात की मनाही थी कि वे जब सैनिक मार्च पर हों, तब मद्यपान न करें। चीन के विषय में भी यह बात कही जाती है। ११ वीं सदी में उनके एक राजा ने अपने साम्राज्य से अंगूर की सारी बेलें उखाड़ देने की आज्ञा दी थी ताकि उसको सड़ाकर लोग शराब न बना सकें। रोमन सभ्यता के आगमन के पूर्व भी हेब्रिय जाति के निवासियों ने भी मद्यनिषेध हेतु अनेकों प्रयास किये थे।

आज अमेरिका को विश्व का सबसे बड़ा पूँजीवादी राष्ट्र माना जाता है तथा भौतिकवादी जीवनयापन की दृष्टि से अमेरिका के लोग सबसे अधिक विलासिता का जीवन जीते हैं। यहाँ पर शराब का प्रचार भी है परन्तु इस देश में प्रबुद्ध वर्ग शराबखोरी की प्रवृत्ति के विरुद्ध ही रहा है तथा यहाँ अनेकानेक ऐसे सामाजिक संगठन हैं जो शासन पर बराबर ऐसा प्रभाव डालते रहते हैं जिनके परिणामस्वरूप यहाँ के शासन द्वारा कई संवैधानिक प्रयास मद्य प्रसार पर अंकुश लगाने के लिये किये हैं। अमेरिका में भी शराब का प्रचार ब्रिटेन की ही देन है। प्रारम्भ में ब्रिटेनवासी तीर्थयात्री के रूप में अमेरिका आये थे और ये यहीं उपनिवेश बनाकर रहने लगे। मद्यपान का रोग इस कारण एक छूत के रोग की तरह यहाँ फैलने लगा व इतना विकराल रूप लेने लगा कि प्रबुद्ध वर्ग में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एक सामाजिक चेतना जागी कि शराब-खोरी के इस बड़वानल को रोकने के लिये कुछ ठोस व सक्रिय प्रयास किये जाने चाहिये। अमेरिका में मद्य-निषेध की दिशा में समाज व राज्य द्वारा किये जाने वाले कार्यों का इतिहास अठारहवीं शताब्दी से प्रारम्भ होता है। प्रारम्भ में यहाँ शराब की दुकानों के लिये लाइसेंस लेना अनिवार्य बनाया गया था। यहाँ शराब की दुकानों की संख्या में भी कमी की जाने लगी थी तथा जो लोग बाजार में व सार्वजनिक रूप से शराब पीकर आते थे, उन्हें दण्ड देने का प्रावधान भी किया गया।

१८१३ में अमेरिका में "टेम्परेंसमूवमेंट" नाम से ऐसी कई संस्थायें बनीं जो नागरिकों को कम शराब पीने के लिये प्रेरित करती थीं। इस पृष्ठ-भूमि में यहाँ के लोगों का यह चिन्तन था कि मद्यपान है तो एक बुराई परन्तु इसे शनैः-शनैः क्रमशः कम किया जाये। अतः इस दृष्टि से ये संस्थायें कार्य करने लगीं। मद्यपान में मितव्ययिता बरतने के कार्य की अमेरिकी नागरिकों पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा जिसके फलस्वरूप १८१३ से १८३३ तक के बीस वर्षों में इस तरह की करीब ६००० संस्थायें सारे अमेरिका में हो गईं। मद्यपान के विरुद्ध यह विचार क्रान्ति इतनी प्रभावकारी व लोकप्रिय अमेरिका में हुई कि यहाँ 'चर्च' भी इस विषय पर चिन्तन करने लगे व इस बात को अनुपयुक्त मानने लगे कि लोग शराब पीकर या शराब की बोतल लेकर चर्च आवें तथा धर्म को तथा धार्मिक अनुशासन को चोट पहुँचावें। अतः "चर्च" ने भी इस आन्दोलन में अपना सहयोग दिया तथा अमेरिकी शासन पर प्रभाव डाला कि शासकीय स्तर पर भी मद्य निषेध के कार्य किये जायँ। शनैः-शनैः कई "चर्च" इस दिशा में सक्रिय हुये तथा १८६५ तक स्थिति यह हो गई थी कि अमेरिका में करीब ३० हजार चर्च मद्य-निषेध की दिशा में सक्रिय हो उठे थे।

मद्य-निषेध के लिये सामूहिक चेतना जाग्रत करने के लिये अमेरिका की महिलायें भी पीछे न रहीं। १८७४ ई. में अमेरिकी स्त्रियों ने इस आन्दोलन में सक्रिय भाग लेना प्रारम्भ किया। इस वर्ष ओहियो में "नेशनल वीमेन्स क्रिश्चियन टेंपरेंस यूनियन" प्रारम्भ की गई तथा यह कार्य शीघ्र ही इतनी गति पकड़ गया कि कम समय में ही विश्व के ५० देशों में इस संस्था की शाखायें फैल गईं व इन शाखाओं के माध्यम से इन ५० देशों में शराब के विरुद्ध आन्दोलन चलने लगा। मद्यपान के विरुद्ध अमेरिका में पनपे दृढ़ जन-जागरण का इतना प्रभावोत्पादक परिणाम हुआ कि अमेरिकी शासन अपनी राष्ट्र नीति में मद्यनिषेध को प्रमुख प्रश्न बनाने को विवश हो गया तथा १९०६ से अमेरिका में शराबखानों पर अनेकों प्रतिबन्ध लगाये जाने लगे तथा इस वर्ष के आस-पास सारे अमेरिका में यह राष्ट्रीय नीति घोषित कर दी गई कि मद्य-निषेध किया जाना जनहित में उपयोगी है।

मद्यनिषेध की बढ़ती प्रवृत्ति के प्रयास अमेरिका तक ही सीमित न रह सके। वरन् उन्नसवीं सदी के अन्त तक यह विचारधारा १८५१ में न्यूयार्क में "इंडिपेडेंट आर्डर ऑफ गुड टैम्पलस" के नाम से बनी। संस्था के माध्यम से कनाडा इंग्लैण्ड, स्केडीनेविया, पश्चिमी अमेरिका, दक्षिणी अमेरिका, भारत, आस्ट्रेलिया आदि देशों में भी फैलने लगी।

विश्व के अकेले पूँजीवादी देश अमेरिका में ही मद्यपान के विरुद्ध विचारधारा प्रवाहित नहीं हुई है वरन् साम्यवादी देशों में भी इस तरह की हवा के बहने का संकेत मिलता है। साम्यवादी देशों के बारे में आम मान्यता यह है कि वहाँ जो चल रहा है, ठीक है। वहाँ के सभी व्यक्ति आदर्श हैं ऐसी बात भी नहीं है। इन देशों के कड़े प्रतिबन्धात्मक प्रावधानों के कारण यद्यपि शेष दुनियाँ को अधिक जानकारी नहीं हो पाती तथा जो कुछ भनक पड़ती है उससे यह आभास होता है कि प्रमुख साम्यवादी देश रूस में भी शराबखोरी को जनमानस हेय दृष्टि से देखन लगा है तथा वहाँ भी शराबखोरी की आदतों पर अंकुश लगाने की बात सोची जाने लगी है। अब रूस में भी यह माना जाने लगा है कि न केवल पूँजीवादी देशों का ही वरन् साम्यवादी देशों का वातावरण भी सामाजिक दोषों को जन्म देता है व इन सामाजिक बुराइयों पर अंकुश लगाया जाना चाहिये। प्राप्त जानकारियों के अनुसार रूस में ऐसे अनेकों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपराधियों को अब दण्ड दिया जाने लगा है जो शराब पीकर सामाजिक अव्यवस्था लाने के दोषी हैं। यहाँ एक ही वर्ष में ६ लाख से अधिक व्यक्तियों को शराब पीकर वाहन चलाने के अपराध में दंडित किया गया। अस्तव्यस्त दाम्पत्य जीवन की संख्या में निरन्तर वृद्धि का कारण भी रूस में अधिकाधिक मद्यपान माना गया है। इसी प्रकार की समस्यायें समाज के गम्भीर चिन्तन का विषय बनती जा रही हैं व इसी से हाल ही में यहाँ के उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों का एक सम्मेलन इस प्रवृत्ति को रोककर मद्यपान की प्रवृत्ति को हतोत्साहित करने के लिये साभाजिक चेतना जागृत करने एवं संवैधानिक व्यवस्था बनाने के लिये हुआ था। इसमें अन्य बातों के अतिरिक्त महत्त्वपूर्ण निर्णय यह हुआ कि अधीनस्थ न्यायालय अन्य बातों के अलावा बच्चों को मद्यपान में प्रोत्साहित करने के अपराधों में कड़े से कड़े दण्ड दे। रूस में इस प्रकार के चिन्तन एवं सक्रिय प्रयासों का प्रारम्भ इस बात का स्पष्ट संकेत है कि मद्यपान का 'मद' साम्यवादी लौह अनुशासन को भी तोड़कर अपना असर दिखाने लगा है जो वहाँ किसी को पसन्द नहीं।

विश्व के इन दो मुख्य समूहों के प्रमुख देशों के अतिरिक्त एक अन्य महत्त्वपूर्ण पाश्चात्य देश इंग्लैण्ड में भी इस दिशा में काफी कार्य हुआ है। इंग्लैण्ड में भी मद्यपान की आदत प्रारम्भ में जन-साधारण में नहीं चली थी वरन् यह सम्पन्न घरानों, राज-परिवारों तक ही सीमित थी परन्तु शनैः-शनैः यह अन्य वर्गों तक फैली।

इंग्लैण्ड में फैल रही अधिकाधिक सुरापान की प्रवृत्ति व इससे होने वाले दोषों से अपने राष्ट्र को दूर रखने के लिये यहाँ के समाज सेवकों, साहित्यिकों एवं विचारकों ने मद्यपान के विरुद्ध प्रचार प्रारम्भ किया तथा ऐसा जनमानस बनाया कि शासन ने एक के बाद एक कानून मद्यपान को रोकने के लिये पास किये। इस दिशा में सर्वप्रथम १६६० में मद्यपान नियन्त्रण हेतु लगाये जाने वाले करों में भारी वृद्धि की गई ताकि जन-साधारण के लिये मद्य का क्रय उनकी क्रय शक्ति के बाहर हो जाये व मद्य उपभोग में कमी हो। इसके बाद १८३६ में मेट्रोपोलिटन एक्ट बनाया गया। फिर १८८६ में वेल्ज संडे क्लोजिंग एक्ट तथा सन् १६०१ में दि इन्टोगरिकोटिका लोकर्स एक्ट बनाया गया। इस सारे संवैधानिक प्रावधानों से समूचे इंग्लैण्ड में एक नई विचार क्रान्ति फैली जिससे एक उपयुक्त वातावरण मद्य-निषेध के पक्ष में बना। इसका परिणाम यह हुआ कि समाज के प्रबुद्ध वर्ग का एक हिस्सा अनवरत रूप से शासन पर यह प्रभाव डालता रहा कि अधिकाधिक संवैधानिक प्रावधान होने चाहिये। अतः १६१६ में पुनः एक "टेटेम्पीरेस" एक्ट पास किया गया जिससे मद्यनिषेध के कानूनों को क्रियान्वित करने के कार्य में और गति आई। इंग्लैण्ड में गत पाँच शताब्दियों में कुल ४०० एक्ट पास किये गये हैं जो इस बात का द्योतक है कि यहाँ की जनता मद्यपान की प्रवृत्ति को नियन्त्रित व कम करते रहने के लिये कितनी उत्सुक, जागरूक व सक्रिय थी। इंग्लैण्ड में राज्य द्वारा ही प्रयास सीमित नहीं रहे वरन् सामाजिक संगठन भी मद्यनिषेध के लिये काम करने के लिये बने। यही बीसवीं सदी के प्रारम्भ में एक "नेशनल प्रोहिबिशन पार्टी" के नाम से संगठन बनाया गया जिसने इंग्लैण्ड में मद्यपान के विरोध में सामाजिक चेतना जागृत करने का बड़ा अच्छा कार्य किया।

विश्व के इन प्रमुख देशों में स्वयं राज्य एवं यहाँ के प्रबुद्ध वर्ग द्वारा अशासकीय क्षेत्रों में मद्यनिषेध हेतु किये जा रहे इन प्रयासों पर दृष्टिपात करने से एक बात स्पष्ट हो जाती है कि भारत में जो इन दिनों मद्यनिषेध के लिये वातावरण बनाया जा रहा है वह अपनी ढपली-अपना राग जैसी बात नहीं है वरन् यह एक विश्वव्यापी समस्या का विश्वमान्य सिद्धान्त है तथा सामाजिक चेतना एवं राज्य के संवैधानिक प्रावधानों के सन्तुलित प्रयासों से सम्भव व व्यवहार्य हो सकता है।

समाज के चिन्तन, समाज के आचार-विचार तथा परम्परागत मान्यता को बदलने के लिये अशासकीय क्षेत्रों के प्रयास ही उपयुक्त रहते हैं—इसमें संवैधानिक प्रावधान विशेष उपयोगी नहीं रहते। देश में इस तरह के संगठनों की आवश्यकता है। यदि हमारे समाज का प्रबुद्ध वर्ग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तैयार हो जाये व "धनवान लोग अपना आर्थिक सहयोग प्रदान करें तो इस तरह के अधिकाधिक संगठन बनाये जाने चाहिये। ये संगठन मद्यपान के विरोध में एक विचारधारा का निर्माण करें। आन्दोलन चलावें, मद्यपान करने वाले परिवारों को मद्यपान की बुराइयों से अवगत करावें तथा समाज व सरकार के बीच की कड़ी बनकर कार्य करें व आवश्यकता पड़ने पर सरकारी क्षेत्रों को प्रभावित कर संवैधानिक प्रावधानों की मदद भी लें।

गांधीजी के अन्य निर्माणात्मक कार्यक्रमों यथा-खादी ग्रामोद्योग, अस्पृश्यता आदि के लिये अखिल भारतीय संगठन बने व उन्होंने पूरे देश में संगठनात्मक ढंग से इन क्षेत्रों में काम किया उसी तरह आज देश की यह महत्त्वपूर्ण आवश्यकता है कि 'मद्यनिषेध' के कार्यक्रम क्रियान्वयन के लिये भी अखिल भारतीय स्तर के संगठनात्मक प्रयास होने चाहिये। परन्तु अखिल भारतीय स्तर के संगठन के विचार को मूर्त रूप देने की प्रतीक्षा किये बिना भी यदि सामर्थ्यवान, साधन-सम्पन्न व समाज-निर्माण के इच्छुक व्यक्ति साहस कर आगे आयें तो उनके प्रयास भी मद्यनिषेध की दिशा में वैचारिक क्रान्ति फैलाने में बड़े सहायक होंगे।

सत्यानाशी शराब से आत्मरक्षा करें

भगवान् बुद्ध ने समस्त शासकों को चेतावनी देते हुये कहा था "जिस राज्य में मदिरा आदर प्राप्त करेगी वह महाकाल के अभिशाप से नष्ट होता चला जायेगा।' वहाँ दुर्भिक्ष पड़ेंगे, औषधियाँ निष्फल होंगी और विपत्तियाँ मँडरायेंगी। मदिरापान महा हिंसा है।"

महात्मा गांधी कहते थे—अगर मैं एक घण्टे के लिये भी सारे हिन्दुस्तान का सर्व-शक्ति-सम्पन्न शासक बना दिया जाऊँ तो पहला काम जो मैं करूँगा—वह यह होगा कि तुरन्त तमाम मदिरालयों को बिना किसी का मुआवजा दिये बन्द करा दूँगा।

नेपोलियन कहते थे—हमें शत्रु की अपेक्षा मदिरा से अधिक डरना चाहिये।

अलाउद्दीन खिलजी की क्रूरताओं और खून-खराबियों से इतिहास के पन्ने रँगे पड़े हैं। वह पहले दरजे का शराबी था।

एक बार ऐसा योग बना कि उसे शराब उपलब्ध न हो सकी। इस पर उसका अन्तःकरण जगा और अपने दुष्ट जीवन के लिये पूर्णतया उत्तरादायी शराब को माना।

जीवन के अन्तिम दिनों वह शराब का घोर शत्रु हो गया था। उसने सदा साथ रहने वाली शराब की सुराही जमीन पर दे मारी। महल के सारे मद्यपात्र उसने अपने हाथों चूर्ण किये। संग्रहीत शराब सारे आँगन में ऐसे फैली पड़ी थी मानो भारी वर्षा हुई हो। इतना ही नहीं उसने शराब के विरुद्ध कड़े फरमान निकाले और शराब बनाने, बेचने और पीने वालों को कड़े दण्ड दिये।

शराबखोरी सारे संसार में अपने पैर फैला रही है। अमरीका, ब्रिटेन, फ्रांस, बेलजियम, इटली और अफ्रीका के कुछ नवोदित धनी देशों में उसका विस्तार आश्चर्यजनक रूप से हुआ है। ४।। करोड़ की आबादी वाले फ्रांस में हर ६८ मनुष्यों के पीछे एक शराबघर है। लगभग दो तिहाई आदी पियक्कड़ हैं। हर फ्रांसीसी पुरुष ५४ लीटर और हर महिला १८ लीटर के अनुपात से शराब पीते हैं। ब्रिटेन की दशा इस क्षेत्र में दयनीय है। वहाँ ३ वर्ष के बच्चों से लेकर ७० वर्ष के बूढ़ों तक शराब के आदी हैं। औसत अंग्रेज को अपनी कमाई का २० प्रतिशत शराब तथा सिगरेट में खर्च करना पड़ता है। बेलजियम में १०२ व्यक्तियों के पीछे और पश्चिमी जर्मनी में ६६ व्यक्तियों के पीछे एक शराबघर है। बीयर बेलजियम में हर व्यक्ति के पीछे १३० लीटर और जर्मनी में २१२ लीटर खपती है। जर्मनी के आँकड़े बताते हैं कि वह १२२० कराड़ रुपये की बिकी।

अमेरिका में ३० प्रतिशत दुर्घटनायें, ४२ प्रतिशत हत्यायें, २८ प्रतिशत आत्म-हत्यायें, ३७ प्रतिशत असावधानी जन्य मृत्युयें, ३५ प्रतिशत तलाकें शराब के फलस्वरूप होती हैं। अपराधों में से कुल मिलाकर ५६ प्रतिशत के लिये वहाँ शराबखोरी ही जिम्मेदार पाई गई है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अपने को प्रगतिशील और सुधारवादी कहने वाले रूस की भी इस क्षेत्र में स्थिति दयनीय है। वहाँ हत्याओं और बलात्कार के अपराधियों में ६० प्रतिशत और सड़कों तथा कारखानों में दुर्घटना करने वालों में ६० प्रतिशत शराबी होते हैं। तलाकों के मुकद्दमे जिनके आये उनमें ४० प्रतिशत शराबी थे, उनकी पत्नियों ने ऐसे साथी को छोड़ देना ही उचित समझा। कुल मिलाकर विविध प्रकार से कानून तोड़ने वाले और दंड पाने वालों में ६६ प्रतिशत शराबी ही होते हैं।

फ्रांस में हिंसा और दुर्घटनाओं का अधिकांश श्रेय शराब को था। ६३ प्रतिशत दुर्घटनायें, ३६ प्रतिशत हत्यायें शराब के नशे में हुईं। अपनी असावधानी से अपने आप मरने वालों में आधे लोग शराब पिये हुये पाये गये।

क्या शीत प्रधान देशों के लिये शराब उपयोगी है ? इस सम्बन्ध में नशा विशेषज्ञ श्री जी. ई. गोलिन का एक लेख 'लिकर कन्ट्रोलो' में छपा है। उसमें लिखा है—"ठण्ड से बचाव करन के लिये शराब न केवल व्यर्थ है वरन् खतरनाक भी है। अनुनठी प्रिट्जोफ की तरह मैं भी ठण्ड से बचाव के लिये शराब पीने के पक्ष में दी जाने वाली दलीलों के बिलकुल खिलाफ हूँ और शराब के दुष्परिणामों को देखते हुये यहाँ तक कहने को तैयार हूँ कि शराब पीकर ठंड बचाने से बेमौत मरने तक का खतरा है।"

डा. ट्राले ने अपने ग्रन्थ 'दि टू टेम्परन्स प्लेटफार्म" और अलकोलिक कन्ट्रोवर्सीज ग्रन्थों में उन मिथ्या मान्यताओं का सप्रमाण खण्डन किया है, जिसके अनुसार शराब जैसे नशों को गर्मी, स्फूर्ति एवं शक्तिदायक कहा, माना जाता है। उसने सिद्ध किया है कि मद्यपान के उपरान्त जो थोड़ी-सी उत्तेजना दिखाई पड़ती है वस्तुतः वह जीवनी शक्ति जैसे बहुमूल्य तत्व को जलाकर चमकाई गई फुलझड़ी मात्र ही होती है। वस्तुतः मनुष्य नशे पीकर अधिक थकता और अधिक निर्बल होता चला जाता है।

दिल्ली की १९७० की रिपोर्ट में २५१९ प्राणघातक सड़क दुर्घटनायें हुईं, जिनमें १७५० चालक पाये गये। इनमें से ६७२ ड्राइवर शराब पिये हुये थे। उत्तर प्रदेश के जेल सर्वेक्षण में पाया गया कि कारागार भुगतने वालों में से ७० प्रतिशत ने शराब के नशे में धुत्त होकर अपराध किये थे।

भारत में बढ़ता हुआ शराब का प्रचलन बहुत ही चिन्ताजनक है। शहरों में वह २३४ प्रतिशत और गाँवों में ११७ प्रतिशत की दर से हर वर्ष बढ़ जाती है। दिल्ली जैसे बड़े शहरों में तो उसकी वृद्धि गगनचुम्बी गति से बढ़ रही है। उपलब्ध सूचना के अनुसार दिल्ली में पिछले चार वर्षों की स्वल्प अवधि में विदेशी शराब की खपत ३०० प्रतिशत बढ़ गई। बहुत महँगी शराब २०० प्रतिशत और देशी शराब ४६५ प्रतिशत बढी। बीयर ने भी १६० प्रतिशत बढ़ोत्तरी कर ली। यह तो कानूनी बिक्री की रिपोर्ट है। गैर-कानूनी शराब बनाने और बेचने का धन्धा जिस जोर-शोर से चल रहा है उसे देखते हुये यह अनुमान लगाना गलत नहीं है कि जितनी शराब कानूनी बिकती है उससे कम गैर-कानूनी की भी खपत नहीं है।

शराब मनुष्य के शरीर को तो गलाती, घुलाती ही है, उसका प्रभाव बुद्धि की तीक्ष्णता और मस्तिष्क की संवेदना शक्ति पर भी कम नहीं पड़ता। शरीर और मस्तिष्क की बर्बादी—धन की अन्धाधुन्ध तबाही और उसके दूरगामी सामाजिक परिणाम ऐसे हैं जिनसे सब प्रकार विनाश ही विनाश प्रस्तुत होता है।

समझदार का तकाजा इसी में है कि इस सर्वभक्षी असुर से हम अपने समय की बर्बादी को बचाने के लिये कुछ कारगर प्रयत्न करें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

परिधान सभ्यता और संस्कृति के अनुरूप हो

हमारा स्वास्थ्य जिस प्रकार आहार पर निर्भर है, उसी प्रकार वस्त्रों-पोशाक का भी उस पर काफी प्रभाव पड़ता है। पर लोगों ने इस समय इस दृष्टिकोण को बिल्कुल भुला रखा है। वे पोशाक का उद्देश्य लज्जा निवारण या शान-शौकत मात्र समझते हैं। अब तो धीरे-धीरे यह मानव-जीवन का ऐसा अविच्छेद्य अंग बन गयी है कि हम वस्त्रहीन मनुष्य की कल्पना भी नहीं कर सकते। अधिकांश लोग तो इसको इतना ज्यादा महत्त्व देते हैं और ऐसा अनिवार्य समझते हैं मानो मनुष्य वस्त्रों सहित ही पैदा हुआ है और उनके बिना उसका अस्तित्व ही नहीं रह सकता।

पर सच तो यह है कि मनुष्य नंगा ही पैदा हुआ है और हजारों वर्ष तक यह उसी दशा में प्रकृति-माता की गोद में निवास कर चुका है। उस समय उसका चमड़ा भी कुछ कड़ा था, जिससे वह सर्दी-गर्मी के प्रभाव को बिना किसी आवरण के सहन कर लेता था। बहुत अधिक ठण्डे स्थानों के निवासी चाहे शीत के प्रकोप से बचने के लिये भालू आदि जैसे किसी पशु के चर्म का उपयोग भले ही कर लेते हों, अन्यथा उस युग में सभी मनुष्य दिगम्बर अवस्था में ही जीवन-यापन करते थे। फिर जैसे-जैसे रहन-सहन के परिवर्तन से शारीरिक अवस्था में अन्तर पड़ता गया और लिंग-भेद (सेक्स) सम्बन्धित मनोवृत्तियाँ वृद्धि पाती गयीं, मनुष्य लँगोटी, कटि-वस्त्र आदि पहनने लग गये।

जब जीवन-निर्वाह के साधन बढ़ गये और अनेक लोग अपेक्षाकृत आलस्य का जीवन व्यतीत करने लगे तो ठण्डे देशों में उनको देह की रक्षा के लिये किसी प्रकार के वस्त्र पहिनने की आवश्यकता जान पड़ने लगी। धीरे-धीरे यह प्रवृत्ति बढ़ती गई और आज पोशाक ने सजावट और शौक का ही नहीं, मान-मर्यादा का रूप भी ग्रहण कर लिया है। वस्त्रों से मनुष्य के छोटे, बड़े, गरीब-अमीर होने का पता लगता है। इतना ही नहीं मनुष्य के धर्म, देश तथा जाति की बहुत कुछ जानकारी पोशाक द्वारा हो जाती है। मजदूर, दफ्तरों के क्लर्क, व्यापारी आदि की पहचान भी प्रायः उनके कपड़ों से की जा सकती है। इस समय एक दृष्टि से पोशाक का यह रिवाज मनुष्य के जीवन में ऐसा घुल-मिल गया है कि आरोग्य की दृष्टि से उस पर निरपेक्ष भाव से विचार कर सकना बड़ा कठिन है।

योरोप का नग्न संप्रदाय

इस समय भी दुनियाँ में ऐसे लोग हैं, जो हर प्रकार के वस्त्रों का प्रयोग अनावश्यक और हानिकारक समझते हैं और सर्वथा नग्न रहना ही सर्वोत्कृष्ट बतलाते हैं। कौतूहल की बात यह है कि यह जंगली या अर्द्धसभ्य जातियों के लोग नहीं है, वरन् योरोप-अमरीका के ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा प्राप्त तथा पूर्ण विचारशील व्यक्ति हैं। उनका कथन है कि प्रकृति ने मनुष्य को नंगा ही पैदा किया है और उसका शारीरिक तथा मानसिक विकास सदैव इसी व्यवस्था में रहने से जितनी अधिक हो सकता है उतना वस्त्रों में ढके-दबे रहने में कभी नहीं हो सकता। जर्मनी में तो सौ वर्ष पूर्व ऐसे विचार वालों की संख्या इतनी बढ़ गई थी कि उन्होंने अपनी अलग बस्तियाँ बना ली थी जिनमें सैकड़ों या हजारों स्त्री-पुरुष बिल्कुल नग्न अवस्था में रहते थे। जब वे लोग कार्यवश उस बस्ती से बाहर शहर या कस्बों में जाते थे तो शरीर पर एक लम्बा-सा कुरता या चोगा पहन लेते थे पर भीतर नंगे ही रहते थे।

इन लोगों ने अपना एक पृथक् सिद्धान्त ही चला दिया था, जिसका नाम 'न्यूडिज्म' था। पिछले सौ वर्षों में इसका प्रचार अनेक छोटे-बड़े देशों में न्यूनाधिक परिणाम में हो गया था और अनेक लोग निजी वास-स्थानों के भीतर काफी समय तक नंगे रहते थे। योरोपीय देशों में

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नग्नता सभ्यता के विरुद्ध मानी जाती है और वहाँ यदि कोई सार्वजनिक स्थानों में नग्न होकर निकले तो वह राजकीय कानून से दण्डित होता है। इसलिये यह सम्प्रदाय सामान्य जनता में अधिक प्रगति न कर सका और जर्मनी के सिवा अन्य देशों में विचार-क्षेत्र के अतिरिक्त व्यावहारिक रूप में उसका बहुत ही कम प्रचार हो सका।

दर्शकों ने ऐसे लोगों की बस्तियों के जो वर्णन लिखे हैं, उससे ऐसा प्रतीत होता है कि ये लोग प्रायः उच्चकोटि के विद्वान या विचारक नहीं होते थे वरन् सामान्य कोटि के व्यक्ति ही होते थे, जो नग्नवाद के तर्कों से प्रेरित होकर भावुकता या सनक के वशीभूत होकर, उनमें सम्मिलित हो जाते थे। इन लोगों में एक बड़ा भाग ऐसे व्यक्तियों का भी होता था, जो बीच-बीच में कुछ दिनों के लिये उन बस्तियों में जाकर नग्नावस्था में रहते थे और फिर नगरों में लौटकर सामान्य अवस्था में रहकर अपना धन्धा, रोजगार करते थे। जहाँ तक विदित हुआ है इस सम्प्रदाय का उद्देश्य परोक्ष रूप से व्यभिचार या दुराचार को उत्तेजन देना नहीं था, जैसा हमारे देश में "वाममार्ग", 'भैरवीचक्र' आदि के लिये प्रसिद्ध है। वे लोग मुख्यतः स्वास्थ्य-सम्वर्धन की दृष्टि से ही इस प्रकार का आचरण करते थे।

प्राकृतिक चिकित्सा के अनुयायियों की सम्मति

प्राकृतिक चिकित्सा के ग्रन्थों में वस्त्रों की पूर्ण सादगी पर बल दिया है और कहा है कि वस्त्र यथासम्भव कम और हल्के होने चाहिये, जिससे बदन को वायु और प्रकाश मिलता रहे, क्योंकि मनुष्य का चर्म भी प्राणप्रद वायु को भीतर खींचता है और दूषित तत्वों को बाहर निकालता रहता है। इससे शारीरिक विकारों की बहुत कुछ शुद्धि हो जाती है और शारीरिक अंगों की कार्यक्षमता में वृद्धि होती है। पर जो लोग फैशन के ख्याल से एक के ऊपर एक कई कपड़े पहिनते हैं अथवा ठण्ड से डरकर मोटे-मोटे, ऊनी-सूती बनियान, जर्सी, कमीज, कोट, ओवरकोट आदि लादे रहते हैं, वे वायुमंडल की इस प्राण-शक्ति से बहुत कुछ वंचित ही रह जाते हैं। जो लोग शौक या दिखावे के लिए बहुत चिकने, चमकीले कपड़े पहिनने की हिर्स करते हैं, उनके बदन में बाहर की हवा बिल्कुल नहीं लग पाती और शरीर के भीतर से जो विकार निकलते हैं, वे चर्म पर ही सूखकर तरह-तरह के दोष उत्पन्न करते हैं। इस दृष्टि से विचार करते हुये एक लेखक ने उपयोगी ढंग से वस्त्रों का विवेचन करते हुये कहा है—

'यह बात बड़े महत्त्व की है कि हम ऐसे कपड़े पहिनें और उन्हें इस तरह में बनवायें कि जहाँ तक हो सके अधिक हवा और रोशनी शरीर तक पहुँचती रहे। खाल में होकर जो दूषित पदार्थ शरीर से बाहर निकलते रहते हैं और शुद्ध वायु छिद्रों द्वारा शरीर में प्रवेश करती है, उस क्रिया में बाधा न पड़े। अतएव हमारे वस्त्र ढीले, पतले व जालीदार होने चाहिये। आजकल बाजार में बहुत-से इस प्रकार के कपड़े बिकते हैं, जो जालीदार व पतले होते हैं। जैसे डोरियाँ, तनजेब, मलमल, खादी आदि। इनमें से हर मनुष्य अपनी परिस्थिति के अनुसार कम या ज्यादा कीमत के वस्त्र खरीद सकता है। ध्यान यह रहना चाहिये कि ऐसे कपड़े न खरीदे जायें, जिनसे प्रकृति के उद्देश्य को हानि हो या परिवार पर बुरा असर पड़े। पोशाक न केवल जालीदार और पतली हो बल्कि ढीली भी होनी चाहिये। ऐसी पोशाक हरगिज न पहिनी जाये जो बहुत चुस्त और कसी हुई हो जैसे- चूड़ीदार पाजामा या बिरजिस या तंग बनियान आदि। ये शरीर को अपार हानि पहुँचाते हैं। हमको झूठे फैशन या रूढ़ियों का गुलाम न बन जाना चाहिये और न बहुत अधिक मूल्य वाले वस्त्रों में धन नष्ट करना चाहिये। हमको अपनी स्थिति के अनुसार प्रकृति के उद्देश्यों के अनुकूल वस्त्रों का उपयोग करना चाहिये।

बहुत-से लोग कहते हैं कि बारीक कपड़े पहिनने वाले नाजुक हो जाते हैं, यह बड़ी भूल है। मोटे कपड़े पहिनने से कोई बलवान् नहीं बन सकता। बात यह है कि कुछ लोग मोटे और भारी वस्त्र बर्दाश्त कर सकते हैं और कुछ नहीं कर सकते। यह बात अपनी-अपनी इच्छा और आदत पर निर्भर है, आजकल अनेक प्रकार

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के कपड़े चल रहे हैं, जिनमें बहुत-सी त्रुटियाँ हैं। हमारी सम्मति में ऊनी बनियान और बुशशर्ट या रुई की बण्डी आदि बहुत हानिकारक हैं क्योंकि ठीक खाल के पास ऊन या रुई का रहना बुरा असर डालता है। इससे खाल नाजुक व कमजोर हो जाती है।

तंग और कसे हुये वस्त्र पहिनने से दो प्रकार की हानियाँ विशेष रूप से होती हैं। एक तो उनके कारण त्वचा का मैल बाहर निकलने में बाधा पड़ती है और चर्म रोगों की वृद्धि होती है और दूसरे रक्त-संचार में विकृति उत्पन्न होती है। रक्त-वाहिनी नालियाँ त्वचा के पास तक आई हुई हैं और उनमें अबाध गति से शुद्ध रक्त संचारित होने से ही हमारा स्वास्थ्य सुदृढ़ रहता है, पर अनुपयुक्त वस्त्रों से दबाव पड़कर खून का दौरा उचित वेग के साथ नहीं हो पाता, जिससे शरीर में जड़ता, शिथिलता, कार्यक्षमता की कमी आदि दोष उत्पन्न होते हैं।

कृत्रिम वस्त्रों के दोष

आजकल (नकली रेशम), प्लास्टिक आदि रासायनिक पदार्थों के द्वारा जो वस्त्र बनाये जा रहे हैं, वे इस दृष्टि से और भी आपत्तिजनक हैं। उनमें वायु जाने का गुण बिल्कुल ही नहीं होता या नाममात्र को होता है। ऐसे वस्त्रों में गर्मियों में प्रायः इतना पसीना आ जाता है कि तबियत परेशान हो जाती है। कितने ही तरह के कपड़ों का मसाला भी ऐसा दोषपूर्ण होता है कि उससे अनेक प्रकार के चर्मरोग उत्पन्न हो जाते हैं और स्वास्थ्य पर. कुप्रभाव पड़ता है। प्लास्टिक के बने कलाई घड़ियों के स्ट्रैप के प्रयोग करने से कितने ही लोगों के हाथ में सफेद दाग पड़ जाता है। जब इस तरह की बहुत शिकायतें हुईं तो अब उनका प्रचार कुछ कम हो गया है और धातु के बने 'स्ट्रैप' काम में लाये जाने लगे हैं।

रासायनिक प्रक्रियाओं से बने कपड़े बहुत ज्वलनशील होते हैं। वे जरा-सी अग्नि की लौ का स्पर्श पाते ही भक से ही जल उठते हैं और फिर किसी तरह जल्दी नहीं बुझाये जा सकते। मशाले के पिघल जाने से वे जलने के साथ ही शरीर से चिपट जाते हैं, जिससे मनुष्य की प्राणरक्षा असम्भव हो जाती है। आज-कल इस प्रकार की दुर्घटनाओं में स्त्रियों के जलकर मरने की खबरें बहुत अधिक आने लगी हैं, क्योंकि ऊपरी चमक-दमक के कारण इन वस्त्रों का प्रचार दिन-दूना बढ़ता जाता है और बड़े घरों की महिलायें ही नहीं साधारण श्रेणी की स्त्रियाँ भी बड़ों का अनुकरण करने के लालच में इसी तरह के अधिक मूल्य वाले कपड़ों का प्रयोग करने लगी हैं। अभी कुछ ही समय पहले का समाचार है कि एक नव विवाहिता वधू ने चाय के लिये स्टोव जलाया। स्टोव में भटाका हो जाने के कारण नाइलोन की साड़ी ने तुरन्त आग पकड़ ली और बहू जलने लगी। जिसकी चीख-पुकार सुनकर पति आग बुझाने लगे। अभाग्यवश वह भी वैसे ही कपड़े पहिने था और उनमें भी तुरन्त आग लग गई। दोनों बुरी तरह जल गये और दो दिन के भीतर दोनों का अस्पताल में देहावसान हो गया।

पश्चिमी फैशन की नकल

हमारा देश डेढ़ सौ वर्ष तक अंग्रेजों की अधीनता में रहा है और उस बीच में उनकी श्रेष्ठता की छाप हमारे मन पर इतनी अधिक पड़ गई कि यहाँ के लाखों-करोड़ों व्यक्ति अंग्रेजी पोशाक का पहिनना बड़प्पन, सौभाग्य का चिन्ह समझने लग गये। एक समय था कि हर एक कोट-पैण्टधारी को बहुत पढ़ा-लिखा, कोई उच्च अधिकारी और प्रभावशाली समझा जाता था और छोटे-मोटे लोग उसे दूर से ही सलाम करते थे। इस परिस्थिति में अयोग्य लोगों में भी उनकी नकल करने की इच्छा होती थी ताकि पोशाक के जोर से वे भी थोड़े-बहुत अंशों में अनजान व्यक्तियों की निगाह में प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकें।

धीरे-धीरे यह मनोवृत्ति सर्व-साधारण में जड़ जमाती गई और आज यह स्थिति आ गई है कि अंग्रेजों का राज्य खत्म हो जाने पर भी उनकी पोशाक का प्रचार घटने के बजाय बढ़ता ही जाता है। हम ठीक हिसाब तो नहीं बतला सकते, पर इतना अनुमान अवश्य है कि अंग्रेजी राज्य के समय जितने भारतवासी विदेशी पोशाक पहनते थे, आज उनकी संख्या दुगुनी अवश्य हो गई है। पहले कुछ ज्यादा पढ़े-लिखे लोग, अधिक वेतन वाले सरकारी कर्मचारी या सरकारी कार्यों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से निजी सम्बन्ध रखने वाले ठेकेदार आदि कोट-पैण्ट का ज्यादा उपयोग करते थे। पर अब सामान्य वेतन पाने वाले कर्मचारी, दफ्तरों के क्लर्क और हल्के काम करने वाले मजदूर तक पेण्ट-बुशर्ट का खुलकर प्रयोग करने लग गये हैं। यद्यपि कपड़ा और सिलाई की दृष्टि से पैण्ट का खर्च धोती अथवा पाजामा की अपेक्षा बहुत अधिक बैठता है और उसमें उठने-बैठने की भी असुविधा रहती है। पर लोगों पर फैशन का भूत ऐसा सवार हुआ है कि वे खर्च, कठिनाई और विदेशीपन का कुछ भी विचार न करके उसी के पीछे लगे हुये हैं।

इस प्रकार की फैशन-प्रियता का एक नमूना कुछ वर्ष पहले देखने में आया था, जब कम उम्र के लड़के ही नहीं बड़ी आयु के जवान और शिक्षित लोग भी सिनेमा के दृश्यों अथवा अभिनेता और अभिनेत्रियों के चित्रों वाले कपड़े पहिनने लग गये थे। कपड़ों के कारखाने वाले तो लोगों की रुचि और धुन को परखा करते हैं और अपना व्यापार बढ़ाने के लिये नये-नये फैशन के वस्त्र निकाला ही करते हैं। उन्होंने लोगों की इस मूर्खतापूर्ण सनक का खूब लाभ उठाया और दो-चार वर्ष बाजारों में ऐसे चित्रदार कपड़े खूब बिकते रहे और लोग इस उपहासास्पद पोशाक को बड़ी शान और शौकत समझकर काम में लाते रहे।

हमको यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिये कि पोशाक का राष्ट्रीयता से भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। वस्त्रों से मनुष्य की जाति और देश का प्रकटीकरण होता है और जिन लोगों को अपनी जातीयता का अभिमान होता है, वे पोशाक की रक्षा प्राणपण से करते हैं। हमारे तो देशवासी इस तथ्य को भूलकर अंग्रेजी फैशन का अन्धानुकरण करते हैं, उनको यह पता नहीं कि स्वयं अंग्रेज अपनी राष्ट्रीय पोशाक के विषय में कितने सुदृढ़ हैं ? यह सभी जानते हैं कि भारतवर्ष इंग्लैण्ड की अपेक्षा बहुत अधिक गर्म देश है और इसलिये यहाँ की संस्कृति में वस्त्रों का प्रयोग कम ही करने को अच्छा बतलाया गया है। यहाँ शरीर पर केवल एक दुपट्टा (उत्तरीय वस्त्र) डालकर बड़े-बड़े उत्सवों-समारोहों में भाग लेना भी हीनता का चिन्ह नहीं माता जाता। धर्मोत्सवों में तो आचार्य, पुरोहित आदि पूजनीय व्यक्ति अनिवार्य रूप से केवल दो वस्त्र खण्डों का ही उपयोग करते हैं। इसका एक बड़ा कारण यही है कि इस देश की गर्म जलवायु में अधिक वस्त्रों का पहिनना अनुपयोगी और असुविधाजनक ही सिद्ध होता है।

पर इंग्लैण्ड की दशा बिल्कुल भिन्न है। वह शीत प्रधान देश है और वहाँ वर्ष के अधिकांश महीनों में ठण्ड से बचने के लिये कई ऊनी कपड़े एक के ऊपर एक पहिनने पड़ते हैं। सबसे नीचे बनियान, फिर कमीज, बास्कट (वेस्टकोट) और कोट की वहाँ सामान्य पोशाक है। जब बहुत अधिक ठण्ड पड़ती है तो ऊपर से ओवरकोट और पहिन लेते हैं। इंग्लैण्ड में तो यह सब आवश्यक और उपयोगी ही है, पर भारतवर्ष की आव-हवा में, खासकर गर्मी की ऋतु में, इतने वस्त्रों की कदापि आवश्यकता नहीं वरन् उनसे बड़ी परेशानी होती है। पर अंग्रेज लोग अपनी राष्ट्रीयता के ख्याल से इस देश में रहते हुये भी गर्मी का कष्ट सह लेते थे, जब बहुत अधिक असुविधा होती थी तो ठण्डे पहाड़ी स्थानों में चले जाते थे, पर कभी यह नहीं सोचते थे कि यहाँ की आव-हवा के अनुकूल भारतीय पोशाक को काम में लाने लगें।

इस सम्बन्ध में हमको एक घटना का स्मरण हो आता है। बंगाल में जिन दिनों राजनीतिक आन्दोलन तेजी से फैला हुआ था लार्ड कारमाइकेल वहाँ के गवर्नर होकर आये। वे स्वभाव से ही बड़े सज्जन और मिलनसार थे और बंगाल के राजनीतिक असन्तोष को कम करने के लिये उन्होंने भारतवासियों के साथ खूब मिल-जुलकर रहना और प्रेमयुक्त व्यवहार करना आरम्भ किया। इसके फलस्वरूप उनकी अनेक उच्च श्रेणी के भारतीयों से घनिष्ठ सम्बन्ध और मित्रता भी हो गई। एक बार जब गर्मी बहुत अधिक पड़ रही थी, एक भारतीय सज्जन उनसे मिलने गये। उन्होंने देखा कि गर्मी की अधिकता से वे बहुत परेशान थे और खस की टट्टी, पंखा आदि की व्यवस्था होने पर भी कलकत्ते की गर्मी में व्याकुलता अनुभव कर रहे थे। उन भारतीय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सज्जन ने इस विषय की चर्चा छिड़ने पर कहा कि—आप लोग इतनी गर्मी में अधिक कपड़े क्यों पहिने रहते हैं ? अगर आप भारतवासियों की तरह धोती-कुरता जैसी हल्की पोशाक पहिन लेते तो गर्मी का इतने कष्ट न सहना पड़ता।" लार्ड कारमाईकेल ने इस बात पर कुछ असन्तुष्ट होने का भाव प्रकट करते हुये कहा—"क्या करें हम मूर्ख हैं, जो इतनी गर्मी में भी इतने वस्त्र पहिने रहते हैं।" उनका आशय यही था कि यह हमारी जातीय पोशाक है। इसी को देखकर लोग हमको अंग्रेज जान लेते हैं। अगर हम दूसरे देश की पोशाक धारण करने लगें तो हमारी जातीयता की पहिचान और रक्षा कैसे हो सकेगी ? इसीलिये हम गर्मी का कष्ट सहन कर लेते हैं, पर अपनी पोशाक को नहीं त्यागते। इसके विपरीत हमारे देशवासी क्या देश और क्या विदेश, हर जगह कोट-पैंट की विदेशी पोशाक में रहना ही शान समझते हैं। इन नकलचीपन के लिये एकाध बार उनको राष्ट्र-संघ की बैठकों में भी टोका गया है कि क्या आपकी अपनी राष्ट्रीय पोशाक और राष्ट्रीय भाषा नहीं है ?

हमारे देश में भी जो ऊँचे दर्जे के विद्वान और विचारक हुये हैं, वे भारतीय परिधान की महत्ता को समझने वाले और उसकी रक्षा करने वाले हुये हैं। इस विषय में पं. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर का उदाहरण बड़ा अनुकरणीय है। वे बंगाल में शिक्षा विभाग में एक उच्च पद पर नियुक्त कर दिये गये थे, जिसके कारण उनको प्रायः बड़े अंग्रेज अधिकारियों से मिलना-जुलना पड़ता था। बंगाल के गवर्नर के पास भी वे प्रायः जाया करते थे और गवर्नर साहब, गुणों के कारण उनका बड़ा सम्मान भी करते थे। पर एक बड़े अफसर होते हुये भी वे सदा अपनी ठेठ देशी पोशाक में बगलबन्दी और धोती पहनकर रहते थे। एक बार यह कायदा बना दिया गया कि गवर्नर के पास कोई देशी पोशाक में न जाय, वहाँ कोट-पेण्ट पहिनकर जाना ही आवश्यक है। जब विद्यासागर जी को इस नियम की सूचना मिली तो वे गवर्नर साहब के पास पहुँचे और उनसे कहा कि—"मैं आज अन्तिम बार आपके पास आया हूँ। अब मैं सरकारी नौकरी नहीं कर सकूँगा।" गवर्नर साहब ने कुछ आश्चर्य प्रकट करते हुये इसका कारण पूछा तो उन्होंने स्पष्ट कह दिया कि "किसी दशा में अपनी स्वदेशी पोशाक को नहीं छोड़ सकता और आपके यहाँ कोट-पेन्ट पहिनकर आने का नियम बना दिया गया है। इसलिये आपके यहाँ मेरा आ सकना और अपने कर्त्तव्यों को पूरा करते रह सकना असम्भव हो जायेगा।" लार्ड साहब उनके जातीय अभिमान के भाव को देखकर बहुत प्रसन्न हुये और आज्ञा दे दी कि उक्त नियम आप पर लागू नहीं होगा, आप पूर्ववत् देशी पोशाक में ही आते रहें।

इसी प्रकार लोकमान्य तिलक चोटी के विद्वान और भारत के सर्वमान्य नेता होते हुये भी महाराष्ट्रीय पोशाक में रहते थे और सदा धोती, पगड़ी आदि ही पहिना करते थे। जब उनको अपने मुकदमे के सम्बन्ध में विलायत जाना पड़ा तब भी उन्होंने इस नियम को नहीं छोड़ा। इसी प्रकार मालवीयजी भारतीय पोशाक के परम भक्त थे और लम्बा अंगरखा तथा सफेद पगड़ी एक प्रकार से उनकी प्रतीक बन गई थी। वे सदा बड़ी-बड़ी सरकारी कौन्सिलों और कमेटियों में बुलाये जाते थे, सदस्य बनाये जाते थे, अंग्रेज अधिकारियों से विशेष सम्बन्ध भी रहता था, पर उन्होंने एक दिन के लिये भी अपने नियत वस्त्रों के बजाय अंग्रेजी ढंग के कपड़े नहीं पहिने। गाँधीजी की विशेषता तो जगत् प्रसिद्ध है। उन्होंने भारतीय आदर्श का पालन करने के लिये लंगोटी और ओढ़ने के एक वस्त्र के अतिरिक्त सब कपड़ों का त्याग कर दिया था और विलायत में ब्रिटिश सम्राट् के महल में निमन्त्रित किये जाने पर भी उसी वेष में वहाँ गये। बादशाही महलों में पूरी पोशाक में ही जाने का नियम है और खुले पाँव रखकर वहाँ किसी भी व्यक्ति के प्रवेश करने का निषेध है, पर गाँधीजी के लिये इस नियम को एक विशेष आज्ञा द्वारा हटा दिया गया और वे लंगोटी पहिनकर ही सम्राट से मिले।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारतीय परिधान की महत्ता

अगर प्राकृतिक जीवन के सिद्धान्तानुसार देखा जाये तो पोशाक के सम्बन्ध में भारतीय मनीषियों की मान्यता बहुत प्रशंसनीय और हितकारी है। वे प्रकृति के इस नियम को जानते थे कि शारीरिक तथा मानसिक स्वास्थ्य-रक्षा की दृष्टि से वायु तथा सूर्य-प्रकाश का हमारी देह से जितना सम्पर्क होता रहे उतना ही लाभजनक है। इसीलिये वे जो वस्त्र धारण करते थे वे केवल लज्जा निवारण के लिये होते थे। प्राचीन काल में तो एक वस्त्र कमर के गुल्फ (टखनों) तक पहिन लेना और दूसरा उतना ही बड़ा ऊपर के अंग पर ओढ़ लेना पर्याप्त समझा जाता था। बड़े-बड़े ऋषि-मुनि ही नहीं, राजा-महाराजा तक भी अधिकांश समय इसी वेष में रहते थे। केवल दरबार अथवा युद्ध आदि के अवसर पर अन्य प्रकार की पोशाक धारण की जाती थी, जो थोड़े समय बाद कार्य पूरा हो जाने पर उतार दी जाती थी। मध्यकाल में लोग अँगरखा आदि पहिनने लग गये थे। पर वे भी प्रायः ढीले-ढीले और ऐसे होते थे, जिनमें होकर वायु और प्रकाश शरीर को मिलते रहें।

इस पोशाक में और भी कई विशेषतायें हैं। प्रथम तो यह सस्ती और सुलभ है। आजकल यह दशा है कि जितना दाम कपड़े का लगता है लगभग उतना ही या थोड़ा कम उसकी सिलाई का लग जाता है। अच्छे सूती सूटों की सिलाई १००-१२५ रुपया या इससे भी अधिक लग जाती है। मुझे वह समय याद है जब कमीज का अच्छा सफेद कपड़ा (ट्विल) ५-६ आने गज आता था, पर एक नामी दर्जी उसकी सिलाई सवा रुपया माँगता था। इस प्रकार शौकीन ग्राहकों को अठारह आने के कपड़े की सिलाई बीस आना देनी पड़ती थी।

दूसरी सुविधा सफाई की है। धोती, कुर्ता या दुपट्टा आदि को चाहे जब धोया और सुखाकर काम में लाया जा सकता है। हमारे यहाँ धार्मिक दृष्टिकोण से भी स्नान को अनिवार्य माना है और किसी तरह की अशुद्धि होते ही तुरन्त वस्त्रों सहित स्नान करना पड़ता है और धुला हुआ दूसरा वस्त्र पहिनना होता है। यह कार्य धोती आदि से ही सम्भव है। कोट-पतलून आदि को तो स्वयं धोया ही नहीं जा सकता और उसके सिवा उनमें कलप, इस्तरी आदि की भी सदैव आवश्यकता होती है, जो धोबी द्वारा ही हो सकता है। इस प्रकार कोट-पतलून के धुलने का अवसर कई सप्ताह या महीनों बाद ही आता है। वे रंग के कारण चाहे गन्दे दिखाई न पड़ते हों, पर जो स्वच्छता और शुद्धता नित्य धोये कपड़ों में प्राप्त होती है, वह उनमें कभी नहीं मिल सकती।

अधिक कपड़े एक भार की तरह हैं

चाहे हम दुनियाँ को दिखावें और शान के विचार से बहुत-से वस्त्र पहिने रहें, पर वे वास्तव में एक भार के समान होते हैं। गर्मियों के मौसम में तो प्रायः यह होता है कि हम फैशन के नियमानुसार पूरी 'ड्रेस' पहिनकर बाहर जाते हैं पर उसके भार से प्रायः पसीने से तरबतर हो जाते और घर लौटते ही जल्दी से जल्दी कपड़ों को उतारकर सन्तोष की साँस लेते हैं। ऐसे लोगों से पूछा जाये कि फैशन की ऐसी गुलामी (अथवा फार्मेलिटी) किस काम की जिसके लिये इस प्रकार अनावश्यक कष्ट और स्वास्थ्य की हानि सहन करनी पड़े। सच्ची बात यह है कि इस प्रकार शरीर पर कपड़ों को लादना सर्वथा अस्वाभाविक है और इसे एक प्रकार से 'सभ्यता का अभिशाप' ही कहा जा सकता है। जो आनन्द और लाभ हमको प्रकृति के साहचर्य में मिल सकता है, वह इस प्रकार दिखावटी कार्यों में हरगिज प्राप्त नहीं हो सकता। कपड़ों की अधिकता और उनसे होने वाले कुपरिणामों का वर्णन करते हुये एक लेखक ने ठीक ही कहा है—

"वास्तव में कपड़ों की जरूरत हमको इसलिये पड़ती है कि हजारों वर्षों से प्रकृति विरुद्ध आहार-विहार करते रहने के कारण हमारा शरीर बिल्कुल दुर्बल व शक्तिहीन हो गया है और रिवाज भी कपड़ों का इतना पुराना हो गया है कि हम समाज में कपड़ों के बिना जी ही नहीं सकते। बिना वस्त्रों के समाज में हमारी बड़ी हँसी होगी और निन्दा भी। लोग बेशरम कहेंगे। इसलिये हमको कपड़े पहिनने पड़ते हैं और जरूरी भी हैं। अन्यथा कपड़ों से कोई लाभ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नहीं, उल्टा वे हमारे स्वास्थ्य और आयु को क्षीण ही करते हैं।

सिवाय खास-खास मौकों के अतिरिक्त अपने शरीर को सजाने की भी कोई जरूरत नहीं है और न यह सोचना चाहिये कि इससे हमारा शरीर सुन्दर मालूम देगा। सौन्दर्य तो और ही चीज है, जो स्वाभाविक जीवन के सिवाय और किसी उपाय से प्राप्त नहीं हो सकता। क्या आकर्षक हिरन, मोर, तोता आदि प्राणी कपड़ों द्वारा सुन्दर लगते हैं ? यदि हम भी प्राकृतिक जीवन व्यतीत करें तो धीरे-धीरे वस्त्रों की आवश्यकता कम होती जायेगी और हमारा जीवन अब की अपेक्षा अधिक सुखी प्रतीत होगा। जरा सोचिये, आज कपड़ों की संख्या कितनी अधिक बढ़ गई है। सिर पर टोपा, टोपी, साफा या पगड़ी चाहिये। गले में नेकटाई, कालर, गुलूबन्द आदि। फिर नीचे बनियान, बण्डी और ऊपर कमीज, कुरता, बास्कट, कोट, शेरवानी आदि इनके अतिरिक्त लंगोट, धोती, पजामा, बिरजिस, पेण्ट, हाफ पेण्ट, सलवार आदि भी बराबर काम में लाये जाते हैं। पाँवों में मोजे, जूते चाहिये। जितना बड़ा आदमी होगा उतनी ही अधिक संख्या कपड़ों की होगी। यही हाल स्त्रियों का है। लहँगा, धोतियाँ, चोली, जम्फर, ब्लाउज, फ्राक, साड़ियाँ, शाल, दुशाले आदि कितनी ही तरह के कपड़े चल रहे हैं। यदि मानव जाति अपनी इन कृत्रिम आवश्यकताओं को धीरे-धीरे कम कर दे तो इतने रोग व कष्ट संसार में नहीं रहेंगे। जो धन व समय इनमें खर्च होता है, वह शरीर-सुधार व लोक-कल्याण में व्यय किया जाय तो दुनियाँ का रंग ही बदल जाय।"

वास्तव में यह मनुष्य जाति का अभाग्य ही है कि उन्होंने वस्त्रों को एक अनिवार्य आवश्यकता मानकर इतना बढ़ा-चढ़ा दिया है कि उनका दर्जा भोजन के बाद ही माना जा रहा है। इतना ही नहीं, ऐसे लोगों की भी कमी नहीं, जो कपड़ों की शान-शौकत के लिये भोजन की उत्तमता को गौण समझ लेते हैं। ऐसे लोग प्रायः यह कहा करते हैं कि "पेट के खाये को कौन देखता है ? अगर पोशाक, आभूषण आदि ठीक नहीं हुये तो चार भले आदमियों में इज्जत कैसे रह सकेगी ?" इस प्रकार के उद्‌गारों का स्पष्ट आशय यह है कि मनुष्य आन्तरिक स्थिति की अपेक्षा बाहरी टीपटाप को अधिक महत्त्व देते हैं। इसलिये भीतर चाहे खोखलापन ही क्यों न रहे, ऊपरी चमक-दमक को बनाये रखना चाहिये, जिससे अनजान देखने वाले भ्रम में पड़ जायें और आपको कोई 'बड़ा' आदमी समझ सकें।

पर ये सब बाल-बुद्धि की बातें हैं। अगर नकली मुलम्मे की चीजें असली के समान कीमती बन जाया करतीं तो समाज-संगठन कभी का तीन-तेरह हो गया होता। इस तरह की ओछी चालों में दस-बीस मूर्ख ही फँस सकते हैं, वह भी दो-चार दिन के लिये। वास्तविक काम तो अपनी आन्तरिक सुदृढ़ स्थिति और शक्ति से ही चलता है। बढ़िया से बढ़िया, चमकीले-भड़कीले वस्त्र तो सभी राजा, नबाव, तालुकेदार आदि पहिन लेते हैं और तो क्या वे हीरे-मोतियों के आभूषण, मुकुट आदि भी धारण कर लेते हैं, तो क्या वे विद्वानों, देशभक्तों, समाजसेवियों से अधिक सम्माननीय हो जाते हैं ? कभी नहीं, जहाँ मामूली पोशाकधारी देशभक्तों का दर्शन करने को लोग घण्टों खड़े-खड़े प्रतीक्षा करते रहते हैं, ऐसे सजे-सजाये राजा-महाराजाओं को देखकर लोग उपहास ही करते रहते हैं और सजे हुये 'गुड्डे' के नाम से ही पुकारते हैं। जो महत्त्व और शालीनता सादा और स्वच्छ धोती, कुरते या बगलबन्दी आदि में है वह चमक-दमक की या बड़े मूल्य की या लम्बी-चौड़ी पोशाकों में कदापि प्राप्त नहीं हो सकती। वे तो वास्तव में शरीर के लिये एक भार ही हैं, जिनका सम्मान बुद्धिहीन व्यक्ति ही कर सकते हैं।

गहने पहिनने का जंगली रिवाज

ऐसे बुद्धिहीन लोग केवल चमक-दमक के या नये-नये फैशनों के कपड़े पहिनकर ही सन्तोष नहीं करते, वे अपने महत्त्व को साधारण लोगों की निगाह में और अधिक बढ़ाने के ख्याल से तरह-तरह के आभूषण धारण कर लेते हैं। वे इसको अमीरी या ऐश्वर्य का चिन्ह समझते हैं और ख्याल करते हैं कि हम जितने अधिक और बहुमूल्य अलंकार धारण करेंगे उतना ही लोगों की निगाह में प्रतिष्ठित और 'बड़े' समझे जायेंगे। सम्भव है कोई जमाना ऐसा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहा हो, जब साधारण प्रजाजनों पर अपना रौब, प्रभाव जमाने के लिये राजा, महाराजा रत्न जटित मुकुट, सुवर्ण सिंहासन तथा हीरे-मोतियों के आभूषणों का व्यवहार करना आवश्यक समझते होंगे, पर अब तो ये चीजें नुमायशी ही समझी जाती हैं और उनका किसी पर अच्छा प्रभाव नहीं पड़ता। इसके विपरीत गहने या आभूषण धारण करने की प्रथा सब तरह से हानिकारक मानी जाने लगी है। महात्मा गांधी ने इस प्रवृत्ति की आलोचना करते हुये एक स्थान पर लिखा था—

"शायद केवल कपड़ों से सन्तोष न होने पर स्त्री-पुरुषों ने गहने पहनने शुरू कर दिये। बहुतेरे मर्द भी पैरों में कड़े पहनते हैं, कानों में बालियाँ लटकाते हैं और हाथ में अँगूठी पहिनते हैं। ये सब गन्दगी के घर हैं। यह समझना बहुत ही कठिन है कि इन सबके पहिनने में कौन-सी शोभा फटी पड़ती है। इस विषय में औरतों ने तो हद कर दी है। वे पैरों में ऐसे भारी-भारी कड़े, पाजेब पहनती हैं कि पैर उठाना भी कठिन हो जाता है। बालियों से कान गुँथे रहते हैं। नाक में भारी नथ लटका करती है और हाथों में तो जितने गहने हों उतने ही थोड़े। इस पहिनावे से शरीर पर बड़ा मैल जमा हो जाता है। कान और नाक में तो मैल की हद ही नहीं रहती। इस मैली दशा को श्रृंगार समझकर खूब पैसे फूँकते हैं। चोरों के भय से जान जोखिम में डालते हुये भी नहीं डरते। किसी ने बहुत ठीक कहा है कि "अभिमान से पैदा हुई मूर्खता को हम तकलीफ सहते हुये जो नजराना देते हैं, वह बहुत ही अधिक होता है।" ऐसे उदाहरण बहुत लोगों न अपनी आँखों से देखे होंगे कि कान में फोड़ा होने पर भी औरतों ने अपनी बालियाँ नहीं उतारने दीं। हाथ में फोड़ा होकर पक गया फिर भी पहुँची नहीं उतरी। अँगुली पक़कर सूज आई तब भी मर्द-औरत अपनी अँगूठी उतारना नहीं चाहते क्योंकि वे समझते हैं कि इससे उनके रूप में फर्क पड़ जायेगा।"

दुनियाँ में मनुष्य के लिये बहुत-से दुःख, आपत्तियों, भय परिस्थितियों के कारण उत्पन्न होते रहते हैं, पर जो कष्ट स्वयं खर्च करके पैदा किया जाय उसके लिये क्या कहें ? गहनों के पहिनने की प्रथा ऐसी ही मूर्खतापूर्ण होती है। इनके व्यवहार करने से किसी प्रकार का शारीरिक, मानसिक लाभ होता नहीं दिखाई देता और आध्यात्मिक दृष्टि से तो यह अहंकार का उत्पादक, अतएव आत्मा का पतन करने वाला है। हमारे देश के समाज हितचिन्तक व्यक्ति वर्षों से यह शिकायत करते आये हैं कि भारतवर्ष की पूँजी का एक बड़ा भाग गहनां के रूप में निष्क्रिय पड़ा रहता है। यदि इस अरबों रुपये के धन को उद्योग-धन्धों में लगाया जाता तो लाखों व्यक्तियों को जीवन-निर्वाह का रोजगार मिलता और करोड़ों रुपये की सामग्री तैयार होकर देश की समृद्धि बढ़ती, पर जेवरों के रूप में उल्टा उसमें टूट-फूट, घिसाई, बार-बार बनवाना, खोना, चोरी जाना आदि कारणों से घटी ही होती रहती है और हजार रुपये की रकम दस-बीस वर्ष में पाँच, सौ की रह जाती है। मनुष्य की उन्नति या कल्याण में आभूषण जैसे पदार्थों से किसी प्रकार का सहयोग मिल सके, यह असम्भव है। फिर क्यों ऐसी हानिकारक और अनावश्यक प्रवृत्ति को पाला-पोसा जाय ? इन कृत्रिम आभूषणों के स्थान पर हमको सद्गुण रूपी आभूषण धारण करने चाहिये, जिससे लोक और परलोक दोनों जगह हमारा हित हो सके।

जूतों और मोजों की अधिकता

यदि यह कहा जाये कि जूते और मोजों के पहिनने वाले भी पैरों के आराम और सुरक्षा के बजाय फैशन का ही अधिक ध्यान रखते हैं तो इसमें कोई अत्युक्ति नहीं है। चमड़े के कसे हुये बूट जूता, जिनमें पैर बन्द होकर बिल्कुल पसीज जाता है, किसी दृष्टि से हमारे देश के उपयुक्त नहीं हैं। हमारे यहाँ तो प्राचीन समय में खड़ाऊँ जैसी चीजों का प्रचार था, जिनमें पैर खुला रहता है, उसे हवा लगती रहती है और केवल काँटों, कंकड़, पत्थर तथा धूप से बचाव हो जाता है। कुछ स्थानों में चप्पल जैसी चीजों का प्रचार था जिनको पहिनकर आसानी से दूर चला जा सकता है। इनमें भी पंजों को पूरी तरह से हवा लगती रहती है और किसी तरह की गन्दगी तुरन्त दिखाई पड़ जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारे समस्त अंगों में पैर ऐसे हैं जो शरीर के भीतरी मैल को सबमें अधिक बाहर निकालते हैं उनका धूल, मिट्टी आदि से सम्पर्क भी अधिक होता है। इसलिये आवश्यकता है कि उनकी सफाई का विशेष ध्यान रखा जाये। प्राचीन भारतीय सभ्यता में किसी अतिथि के बाहर से आने पर सबसे पहले उसके चरण धुलाने की प्रथा थी। इसका उद्देश्य पैरों की स्वच्छता का विशेष ध्यान रखना ही था। आजकल के फैशनपरस्त जूते को ऊपर से पालिश लगाकर चमकाने का तो बड़ा ध्यान रखते हैं, पर उसके भीतर किस प्रकार पसीना और मैल जमा हो जाता है इस तरफ कभी ध्यान नहीं देते। यह गन्दगी कैसी हानिकारक होती है इस सम्बन्ध में गाँधी जी ने लिखा है—

"पैरों के द्वारा भी हम बहुतेरे रोगों के पंजे में फँस जाते हैं। बूट इत्यादि पहनने वालों के पैर नाजुक हो जाते हैं। उनसे पसीना निकलता है और वह बहुत ही बदबू पैदा करता है। जिस मनुष्य को वास की परख है, वह मोजे और बूट पहिनने वाले मनुष्य के पास उस समय खड़ा नहीं रह सकता जब वह उनको उतार रहा हो। हम जूतों को 'पादत्राण' या 'कण्टकारि' कहते हैं। इससे सिद्ध होता है कि जब हमको काँटों में, ठण्डक में या धूप में चलना पड़े तभी जूता पहिनने चाहिये, सो भी इस प्रकार के जिनसे केवल तलुये ढकें, सारा पैर न ढक जाय। इस कार्य का चप्पल या सैंडिल के ढंग के जूते भली-भाँति पूरा कर सकते हैं। जिनका सिर दुःखता हो, जिनका शरीर कमजोर हो, जिनके पैरों में दर्द होता हो और जिन्हें जूता पहिनने की आदत है, उनके लिये तो हमारी यह सलाह है कि वे नंगे पैर चलने का प्रयोग करके देखें। इससे उन्हें तुरन्त मालूम होगा कि पैर खुले रखने, जमीन पर नंगे पैर चलने और उन्हें पसीना रहित रखने से हम तत्काल कितना लाभ उठा सकते हैं ?"

पर आजकल यह देखने में आता है कि जो लोग चमड़े का फीतादार जूता पहिनते हैं उनका पैर सदा भीगा-भीगा-सा बना रहता है और जूते, मोजों में सदा गन्दगी बढ़ती रहती है। इससे पैरों की ऐसी बीमारियाँ पैदा हो जाती हैं, जो बहुत खर्च और परिश्रम करने पर भी शीघ्र ठीक नहीं हो पातीं। इतने पर भी फैशनपरस्त लोगों में जूतों का शौक बढ़ता जा रहा है। कालेज में पढ़ने वाले नये लड़के तो खाते समय भी जूता नहीं उतारते और अनेक बार तो वे पहिने ही सोने लग जाते हैं। इस तरह की गन्दी आदत और लापरवाही स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत हानिकारक है।

यदि जाड़े आदि में मौसम के कारण जूता पहिनना भी पड़े तो चमड़े के बजाय कपड़े का जूता काम में लाना अधिक ठीक रहता है। इनमें एक तो हवा जाने की कुछ गंजायश रहती है, पैर दबकर घायल नहीं होते और एक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि जीव-रक्षा, अहिंसा की दृष्टि से भी चमड़े के जूतों से बचना और कैनवास आदि के जूतों का प्रयोग करना उचित है। जो लोग गोरक्षा के पक्षपाती हैं, उनको तो चमड़े का जूता कदापि व्यवहार में नहीं लाना चाहिये क्योंकि गोवध का मुख्य तथा बहुत बड़ा कारण चमड़े के लिये उनका मारा जाना ही है। जूता अधिक कसा कभी नहीं होना चाहिये और पसीना आने पर उसे तुरन्त उतार देना चाहिये। समय-समय पर जूतों तथा मोजों को भी, यदि उनका व्यवहार परिस्थितिवश करना पड़े तो धोकर साफ करते रहना चाहिये, क्योंकि चलने-फिरने में उन पर धूल गर्दा पड़ना तथा गन्दा होना स्वाभाविक ही है।

छोटे बच्चों के वस्त्र

हमारी वस्त्र-सम्बन्धी धारणा जिस प्रकार अपने विषय में भ्रान्त हो गयी है, उसी का प्रयोग हम छोटे बालकों पर करते हैं। हम छोटे बच्चों की शारीरिक स्थिति और स्वास्थ्य पर ध्यान न देकर उसे सजाना और तरह-तरह के बहुत-से वस्त्र पहिनाना आवश्यक समझते हैं। बहुत-से लोग तो परिवार की प्रतिष्ठा के ख्याल से बच्चों को बढ़िया पोशाक और आभूषण आदि पहिनाना आवश्यक समझते हैं, चाहे बालक असुविधा अनुभव करके पहिनने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के कैसे भी अनिच्छुक क्यों न हों ? इस सम्बन्ध में एक अनुभवी लेखक की निम्न सम्मति विचारणीय है—

"बच्चों के वस्त्रों के सम्बन्ध में तो हम इतनी भयंकर भूल कर रहे हैं कि जिसका कोई ठिकाना नहीं। जन्म से ही विचारे बच्चों को भारी गरम कपड़े पहना दिये जाते हैं ताकि हवा न लगे। कपड़े पहिनाकर ही हम सन्तुष्ट नहीं होते बल्कि अबोध बच्चों को कपड़े से इतना ढक भी देते हैं कि वे अन्दर घुटकर रोते रहते हैं। इस प्रकार हम अपने हाथों से अपने बच्चों का स्वास्थ्य व जीवन नष्ट कर देते हैं। जितना अधिक बच्चों को कपड़े से ढका जायेगा उतना ही अधिक कमजोर और बीमार वह होगा। बच्चे वस्त्रों का विरोध करते हैं और माता-पिता बलपूर्वक उन्हें पहिना देते हैं। वास्तव में बच्चों में स्वाभाविक गर्मी अधिक होती है, इसलिये बड़े-बूढ़ों की अपेक्षा वे अधिक देर नंगे रह सकते हैं। बहुधा देखा गया है कि बच्चे अवसर पाते ही अपने सारे वस्त्र उतारकर फेंक देते हैं। उनका अन्तःकरण उन्हें ऐसा ही करने की आज्ञा देता है। कपड़ों को उतार करके बच्चे बड़े प्रसन्न होते हैं मानो उनके सिर से बोझ हट गया।

"जब जरूरत हो तो भी बच्चों को हल्के कपड़े पहिनाने चाहिये। जब तक बच्चे पाँच वर्ष के न हों उनको यथासम्भव अधिक समय तक नंगे रखना चाहिये। फिर आप देखेंगे कि वे कैसे प्रसन्नचित्त, नीरोग व बलवान् होते हैं। मगर आज मातायें बच्चों को सिर से पाँव तक इस प्रकार ढक देती हैं कि बदन का कोई हिस्सा खुला न रहे। सिर पर टोपा या टोपी होती है। गले में गुलूबन्द, बनियान, कमीज, कोट बदन पर होते हैं। फिर पेंट, जूते, मोजे भी साल भर की आयु में ही पहिना दिये जाते हैं। इस प्रकार अनावश्यक वस्त्रों से सदा ढके-दबे रहने वाले बच्चे कभी पूर्ण स्वस्थ और शक्तिशाली नहीं हो सकते।

यह एक सुनिश्चित तथ्य है कि अभ्यास में बहुत बड़ी शक्ति है। हम अभ्यास करते-करते ऐसे कामों को पूरा करके दिखा सकते हैं, जो सामान्यतः असम्भव समझे जाते हैं। कुछ सर्कस आदि में काम करने वाले पहलवान तो चलती मोटर को रोक लेते हैं, पचास मन का पत्थर छाती पर रख लेते हैं अथवा हाथी को भी अपने ऊपर खड़ा करा लेते हैं, यह सब अभ्यास का ही फल है। स्वर्गीय पहलवान राममूर्ति ने सर्वप्रथम इन कार्यों का प्रदर्शन करके बड़ा यश और धन कमाया था। वे बतलाते थे कि मैं बचपन में बहुत कमजोर था और प्रायः बीमार होता रहता था। किसी से प्रेरणा पाकर उन्होंने अपनी निर्बलता को दूर करने का निश्चय किया और व्यायाम करके आठ-दस वर्ष में अपने को इतना शक्तिशाली बना लिया कि उस समय के बहुत बड़े पहलवानों में उनकी गिनती की जाने लगी थी।

जिस प्रकार कमजोर आदमी-बालक स्वास्थ्य के नियमों का पालन करके और व्यायाम की मात्रा बढ़ाकर बहुत बल और सुदृढ़ स्वास्थ्य को प्राप्त कर सकते हैं, उसी प्रकार यदि उनको छुई-मुई के पौधे की तरह सदा ढक-दाबकर रखा जाये और प्रकृति के सामान्य परिवर्तनों से भी बचाया जाय तो आगामी जीवन में उनका सशक्त और कर्मठ होना किसी प्रकार सम्भव नहीं हो सकता। ऐसे बालक जरा-सी सर्दी-गर्मी के असर से बीमार होते रहते हैं। उनको सदा खाँसी, सर्दी और निमोनिया बने ही रहते हैं। ऐसे ही बालकों को शीघ्र लू लग जाती है और बार-बार ज्वर आदि का आक्रमण होता रहता है। अगर उसको छोटी अवस्था से ही विधिपूर्वक प्रकृति के साहचर्य में रखकर वस्त्रों का कम उपयोग किया जाता तो वे क्रमशः सहनशील बन जाते और आगे चलकर जीवन-संघर्ष में अधिक समर्थ और सफल सिद्ध हो सकते। इसका यह भी आशय नहीं कि दो चार-महीने के बच्चों को लापरवाही से रखा जाय और कठोर शीत अथवा गर्मी में उनकी रक्षा न की जाये। पर सामान्य मौसम में उनको अवश्य मामूली कपड़ा पहनाकर या नंगा ही रखकर खुले वातावरण में खेलने-कूदने का अवसर दिया जाये, जिससे उनकी शारीरिक शक्तियों का ढंग से विकास हो सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कृत्रिम-जीवन को त्याग दीजिये

खेद का विषय है कि वर्तमान समय में मनुष्य प्राकृतिक जीवन को त्यागकर अधिकाधिक कृत्रिमता की तरफ झुक रहा है। हमारा खान-पान, रहन-सहन, आचार-विचार सब कृत्रिमता से प्रभावित हो रहे हैं। इसका परिणाम भी आँखों के सामने है। मनुष्य की शारीरिक शक्तियाँ दिन पर दिन क्षीण होती जाती हैं और वह यन्त्रों अथवा बाह्य उपकरणों की सहायता से जीवन-निर्वाह कर रहा है। आज के लाखों युवक पच्चीस-तीस वर्ष की आयु में ही चश्मा लगाकर देख सकते हैं और हजारों ४० वर्ष की आयु में ही नकली दाँत लगाकर खाना खा पाते हैं, अधेड़ आयु में ही चलने के लिये भी सवारी की आवश्यकता पड़ती है। यह सब किन कर्मों का प्रतिफल है ?

यह सब प्रकृति से दूर हटकर सीधे, सरल, स्वाभाविक जीवन मार्ग को त्यागकर हर बात में बाहरी टीपटाप, परिश्रम से बचने, बड़प्पन की झूठी शान दिखलाने का ही नतीजा है। हम जानते हैं कि वर्तमान समय में वस्त्रों का पहिनना आवश्यक है, अब सामान्य मनुष्यों को नंगे रहने या केवल लंगोटी लगाकर रहने की सलाह कोई सनकी ही दे सकता है, फिर भी वस्त्रों की जैसी अधिकता और कृत्रिमता आजकल देखने में आ रही है, उसका समर्थन कभी नहीं किया जा सकता। गर्म देशों में या गर्मी की ऋतु में सूती वस्त्र और ठण्ड में ऊनी वस्त्र पहिनना बुरा नहीं है। इस प्रकार अधिक ठण्ड पड़ने पर शारीरिक स्थिति के निर्बल होने पर एक से अधिक वस्त्रों का प्रयोग भी अनुचित नहीं है। पर ऐतराज तो तब किया जाता है जब वस्त्रों को शरीर की रक्षा के बजाय शान या शौक का साधन मानकर उनकी भरमार कर दी जाती है।

शरीर को इस प्रकार अनावश्यक वस्त्रों से जकड़ लेने से नतीजा यह होता है कि हम सूर्य के स्वास्थ्यदायक प्रकाश और वायु की जीवनी शक्ति से वंचित रह जाते हैं। प्रकाश और शुद्ध वायु स्वास्थ्य के ही नहीं, जीवन के आधार हैं। हमारी जो आदत या शौक उनके प्राप्त करने में बाधक होती है, वह निस्सन्देह निन्दा के योग्य त्याज्य है। आजकल करोड़ों लोग जिस प्रकार केवल दिखाने के लिये तरह-तरह के कई-कई कसे हुये वस्त्र पहिने रहते हैं, वह निश्चय ही स्वास्थ्य की दृष्टि से घातक हैं। फिर किसी बीमारी आदि में किसी खास परिस्थिति को छोड़कर हमेशा वस्त्र पहिने रहना और इसे ही सभ्यता का चिन्ह मान लेना भी गलती है।

हमारे देश में तो ऋषि, मुनि, ब्रह्मचारी, वानप्रस्थी सदा कम से कम वस्त्र पहिनने वाले हुये हैं और वे सर्वसाधारण द्वारा पूज्य माने गये हैं। वे जीवन के सभी क्षेत्रों में ऐसे काम कर गये हैं, जो आज तक स्मरण किये जाते हैं। इसलिये वस्त्रों का सम्बन्ध सभ्यता या आदर-सम्मान से जोड़ना एक भ्रामक विचार है, जिसको अब जितना हो सके शीघ्र छोड़ देना चाहिये।

हम लोगों के लिये वस्त्रों का सबसे बढ़िया आदर्श महात्मा गांधी बतला गये हैं। उन्होंने जिस हाथ की बनी खादी का प्रचार किया था निस्सन्देह उससे बढ़कर स्वास्थ्यरक्षक दूसरा वस्त्र नहीं हो सकता। आवश्यकता हो तो ऐसी खादी यन्त्रों से भी बनाई जा सकती है और बनाई भी जाती है। यदि हम अपनी आर्थिक और सामाजिक स्थिति के अनुसार ऐसे कपड़े के धोती, कुर्ता, टोपी आदि का प्रयोग करें तो वह निस्सन्देह सादगी, स्वच्छता, सुलभता की दृष्टि से आदर्श पोशाक हो सकती है। इससे हम अपने स्वास्थ्य और धन की ही रक्षा नहीं करेंगे, वरन् इससे हमारे विचारों में भी शुद्धता आयेगी और हम झूँठे अहंकार से बचकर अपने सामान्य देश भाइयों के साथ प्रेम और सहानुभूति का व्यवहार कर सकेंगे।

वस्त्रों में बहुत अधिक भिन्नता रखना, सबसे निराली, बहुत कीमती पोशाक पहिनना समाज में वैषम्य का कारण भी बनता है। ऐसे व्यक्ति व्यर्थ में अपने को दूसरों लोगों से बड़ा या विशेष मानने लगते हैं और इस प्रकार एक निरर्थक भेदभाव को जन्म देते हैं, जो अन्त में राष्ट्रहित की दृष्टि से भी हानिकारक सिद्ध होता है। इसलिये हमको वस्त्रों के सम्बन्ध में अपना दृष्टिकोण अवश्य बदलना चाहिये और जीवन-रक्षा के वास्तविक उद्देश्य के अतिरिक्त उनको वह अनुपयुक्त स्थान कदापि न देना चाहिये, जिससे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वे हमारे लिये उपयोगी होने के बजाय हानिकारक अथवा पतन करने वाले सिद्ध हो सकें।

कपड़े पहनने का सऊर-सलीका

कपड़ों की उपयोगिता इस दृष्टि से है कि वे कड़ी सर्दी के प्रभाव से त्वचा को बचाते हैं। प्रचलित सभ्यता के अनुसार अंगों का जो खुला प्रदर्शन, गँवारूपन माना जाता है, उस मान्यता के लिये अनुकूलता उत्पन्न करते हैं। यह दोनों ही बातें एक सीमा तक ही उचित हैं। अनावश्यक और अवांछनीय कपड़े अनुपयोगी सिद्ध होते हैं और स्वास्थ्य की दृष्टि से हानि पहुँचाते हैं। अस्तु कपड़ों के सम्बन्ध में इतना ही सोचना काफी नहीं कि वे शरीर को सुन्दर, सुसज्जित दिखायें वरन् यह भी सोचा जाना चाहिये कि वे स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव तो नहीं डालते।

वर्तमान प्रचलन में वस्त्र धारण में भी भोजन सम्बन्धी हानिकर आदतें अपनाये जाने की ही तरह अनेकों भ्रान्त धारणायें घुस पड़ी हैं, फलतः वे न केवल खर्चीले और साज-सँभाल में झंझट भरे बन गये हैं वरन् स्वास्थ्य की दृष्टि से लाभकर सिद्ध होने के स्थान पर उल्टी हानि पहुँचाते हैं। धन और समय की बर्बादी तो उनके कारण होती ही है।

प्रकृति ने सभी प्राणियों को शरीर रक्षा के लिये बहुत ही उत्तम कपड़ा-त्वचा के रूप में आरम्भ से ही पहना रखा है—वह सर्दी-गर्मी तथा घिसट-रगड़ आदि से बचाने के लिये पर्याप्त है। सृष्टि का कोई भी प्राणी इस उपहार से वंचित नहीं है। त्वचा का कवच धारण करके समस्त जीवधारी बिना किसी कठिनाई के अपना गुजारा करते हैं। जिन्हें जिस क्षेत्र में रहना पड़ता है, उनकी त्वचा में उसी स्तर की विशेषतायें उत्पन्न हो जाती हैं और बिना किसी प्रकार का बाहरी परिधान पहने उनका मजे में गुजारा होता रहता है। मछली, मेंढ़क, साँप, कछुआ, भेड़, रीछ आदि की त्वचा अपने कार्य क्षेत्र की दृष्टि से पूर्ण है। जिन्हें ठण्डक में रहना पड़ता है, उन्हें ऐसे ऊनी गरम ओवरकोट पहना दिये गये हैं जो फटने, पुराने होने का नाम नहीं लेते। भेड़, रीछ आदि को बड़े-बड़े बाल इसी दृष्टि से मिले हैं। आवश्यकतानुसार यह चमड़ी मोटी भी दी गई और पतली भी। गर्मी में फैलकर पसाड़ा और भाप बाहर निकाल देने की—सर्दी में सिकुड़कर छेद बन्द कर लेने और ठण्डक से बच निकलने की विशेषता भी चमड़ी में रहती है। यदि कोई वस्त्र न पहना जाय तो भी मजे में गुजारा हो सकता है। ठंडक एवं गर्मी के क्षेत्र में रहने वालों की त्वचा शरीर के बचाव के लिये आवश्यक अनुकूलतायें स्वयमेव उत्पन्न कर लेगी। वस्त्र पहनने की वैज्ञानिक दृष्टि से कोई विशेष आवश्यकता नहीं है, पर प्रचलन में तो उन्हें रोटी के बाद दूसरे नम्बर की जरूरत बनाकर रख दिया है। अब उससे पूरी तरह छुटकारा पाना तो कठिन है, पर ध्यान इतना ही रखा जाय कि प्रकृति की व्यवस्था में कम से कम हस्तक्षेप करने में ही बुद्धिमानी है।

वस्त्रों के प्रचलन में सुविधा का कम और सुसज्जा का—सभ्यता का भाग अधिक रहा है। शरीर को खुला रखने की असभ्यता का चिन्ह कब से माना गया और उसमें किस क्रम से विकास हुआ ? यह खोज का एक दिलचस्प विषय है। इतना स्पष्ट है कि भारत जैसे गरम देश में एक कटि वस्त्र धोती आदि और दूसरा उत्तरीय अर्थात् दुपट्टा यह दो ही कपड़े पहने जाते थे, इनमें से सिला हुआ कोई भी नहीं होता था, उन्हें ऐसे ही लपेट, बाँध लिया जाता था। पुरुषों के लिये कटि प्रदेश जंघायें ढकना आवश्यक था और स्त्रियों के लिये इनके अतिरिक्त वक्षस्थल भी ढकने की प्रथा थी। इसके अतिरिक्त अन्य अंग खुले भी रहते थे। राजा लोग अथवा बड़े अधिकारी ही सुसज्जित पोशाकें पहनते थे। आज की अपेक्षा वह रिवाज कहीं अधिक अच्छा था। त्वचा को खुली हवा और खुली धूप के स्पर्श का अवसर मिलता था। पेड़-पौधों की तरह मनुष्य का शरीर भी हवा और रोशनी के जीवन तत्वों से पोषण प्राप्त करता है। ऋतु प्रभाव सहन करने की क्षमता बनी रहती है। कपड़ों से लिपटे, जकड़े रहने पर शरीर अपनी सहनशक्ति खो बैठता है, चमड़ी निस्तेज बन जाती है। जरा-सी सर्दी लगने पर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जुकाम, खाँसी और जरा-सी गर्मी लगने पर बुखार, सिरदर्द, बेचैनी जैसी शिकायतें खड़ी हो जाती हैं। खुले खेतों पर कम कपड़े पहनकर काम करने वाले किसान, मजदूर कदाचित ही इन आये दिन की बीमारियों से परिचित होते हैं। सहनशक्ति बनी रहने से ऋतु प्रभावों का कोई विशेष असर उन पर नहीं होता।

हममें से हर किसी को यही सोचना चाहिये कि कपड़ों की भरमार का रिवाज भले ही हो, पर उससे काल कोठरी के कैदी की तरह शरीर को स्वच्छ हवा, रोशनी की खुराक पाने से वंचित रहना पड़ता है—सहन शक्ति घटती है और अंगों के स्वाभाविक विकास में बाधा पड़ती है। फैशन के नाम पर चित्र-विचित्र पोशाकें बनवाने और उनके किस्म-किस्म के सैट रखने, सँभालने में जितना धन, स्थान और समय नष्ट होता है, इसे उपयोगिता की कसौटी पर कसें तो इसे बुद्धिमत्ता के नाम पर की जाने वाली मूर्खतापूर्ण बर्बादी ही कहना चाहिये।

आज की स्थिति में तथाकथित सभ्यता की जकड़-पकड़ इतनी हो गई है कि कपड़ों का पूर्ण बहिष्कार करने की बात तो सोची भी नहीं जा सकती, पर इतना तो दृढ़तापूर्वक निश्चय कर ही लेना चाहिये कि उन्हें कम से कम मात्रा में पहनेंगे, ढीले-ढाले रखेंगे और जब भी अवसर मिलेगा शरीर का जितना अधिक भाग सम्भव हो निर्वस्त्र ही रखेंगे। कुछ अवसर तो हर किसी को एकाकी रहने का मिलता है। रात्रि को और स्नान के समय तो प्रायः सभी अकेले रहते हैं। जितने अंगों पर दूसरों की दृष्टि में न पड़े उतने समय तक उन्हें खुला रखा जा सकता है। स्नान निर्वस्त्र होकर करने में सभी अंगों को रगड़कर धोना और तौलिये से अच्छी तरह घिसकर मैल, पसीना भली प्रकार निकाल सकना जितनी अच्छी तरह हो सकता है, उतना कपड़े लपेटे हुये नहाने से सम्भव नहीं है।

रात को सोते समय योरोप के घोर ठण्डे देशों में भी नाइट सूट पहनकर सोते हैं, उसे पतला एवं ढीला कुर्ता, पजामा भर कह सकते हैं। वे जानते हैं कि त्वचा के छिद्रों से भी साँस ली जाती है, वहाँ से भी वायु का भीतर जाना और बाहर निकलना होता है। यदि हर घड़ी कसे कपड़े पहने जायेंगे तो इससे साँस बन्द कर देने पर दम घुटने जैसी स्थिति बन जायेगी। योरोपवासी कान नहीं बाँधते और कोट को सीने पर से खुले कालर का रखते हैं ताकि उस द्वार से वायु का आवागमन होता रहे। एक हम गर्म देशवासी हैं, जो रात को भी पूरे कपड़े नहीं उतारते। रात में तो गर्म स्वेटर कसे रहते हैं। ठंड से बचने की बात तो ध्यान में रहती है, पर खुली हवा का महत्त्व भुला ही दिया जाता है। असल में ठंड उतनी हानिकारक नहीं है जितनी हवा के अभाव में उत्पन्न होने वाली घुटन।

दिन हो या रात, सदा यही सोचना चाहिये कि जितने कम कपड़े पहने जायें उतना ही उत्तम है। उन्हें अधिक से अधिक ढीला रखना चाहिये ताकि त्वचा को प्राकृतिक पोषण मिल सके। पुरुष कड़ा लँगोट, कसा अण्डरवियर, मोजे पहनते देखे जाते हैं और स्त्रियाँ चोली, जाँघिया पजामे, कुर्ते आदि कसे पहनती हैं। जिन स्थानों को यह कपड़े जितना जकड़ेंगे उतनी ही उन्हें हानि होगी। अपने देश में इतनी ठंड कहीं भी नहीं पड़ती कि योरोप के बर्फीले क्षेत्रों के लिये आवश्यक मोजे, दस्ताने और कसे हुये ऊनी स्वेटर पहने जायँ। अंग्रेजी फैशन की पोशाक पहनने, बाल रखाने आदि का कुछ तुक भी है, पर घोर शीत के उपयुक्त घोर गर्मी वाले स्थानों में नकल बनाई जाये तो यह बहुत ही बचकानापन होगा। हमें अपने देश की जलवायु को ध्यान में रखते हुये ढीले कपड़े ही पहनने चाहिये।

लाड़-प्यार या सजावट के नाम पर छोटे बच्चों के शरीर को स्वेटर, मोजे, टोपे आदि से कस नहीं डालना चाहिये। इससे उनकी शोभा सजावट में कुछ वृद्धि हो भी सकती है, पर स्वास्थ्य को तो निश्चित रूप से हानि ही होगी, कड़ी ठंड हो तो उससे बचाने के लिये परिधान लपेटे जा सकते हैं, पर हर हालत में वे ढीले ही होने चाहिये।

फैशन के नाम पर बैठने, उठने, झुकने खड़े होने में कठिनाई उत्पन्न करने वाली सिलाई कराना व्यर्थ है। चूड़ीदार पजामे ऐड़ी पर से उतरने-चढ़ने में कितनी अड़चन उत्पन्न करते हैं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

और पिंडली पर किस तरह चिपके रहते हैं, इसे हर कोई जानता है। पेण्ट घुटने पर से पैर मोड़ने में कितना तंग करता है यह किसे नहीं मालूम ? योरोप में भोजन, शौच, अध्ययन, पूजा, प्रवचन सब कुछ मेज, कुर्सी पर बैठकर ही होता है, खड़े होकर पेशाब करने का रिवाज है, वहाँ के लिये पेन्ट ठीक है। पर अपने देश में तो सब कुछ बैठकर ही करना पड़ता है, तब पैर मोड़ना और पालथी मारना, देर तक उकड़ू बैठना कष्टकारक ही होता है। लड़कियाँ इन दिनों विचित्र 'चुश्त पोशाक' पहनने लगी हैं, जिनका कुर्त्ता झुकने में और पजामा पैर मोड़ने में परेशानी खड़ी कर देता है। कमर को पतली रखने के लिये कई तरह के कमरबन्द और पेटियाँ चली हैं। वक्षस्थल को अमुक स्थिति में रखने के लिये भी ऐसे ही कठोर बन्धनों में जकड़ने का रिवाज चल पड़ा है। फैशन को उसी सीमा तक सहन किया जाना चाहिये, जहाँ तक कि वह स्वास्थ्य पर दबाव न डाले, जब वह प्रत्यक्ष रूप से हानिकारक सिद्ध होने लगे तो उसे साहसपूर्वक छोड़ ही देना चाहिये।

त्वचा में छिद्र होते हैं और उसे भीतर की चीजों को बाहर निकालते और बाहर की चीजों को भीतर पहुँचाते हैं। यही गुण कपड़ों में भी होना चाहिये। उनके ताने-बाने के बीच अन्तर रहना चाहिये, जिनमें होकर शरीर का बाहरी हवा से सम्पर्क बना रहे। बिल्कुल छेद बन्द कपड़े बर्फीली हवा में अथवा ओढ़ने के लिये प्रयुक्त होने वाले कम्बल के रूप में ही प्रयुक्त होने चाहिये। वे भी बहुत भारे या बहुत मोटे नहीं होने चाहिये। अभ्यास से कम कपड़ों से भी ठंड दूर हो सकती है। बहुत ठंड होने पर भी दो तीन से अधिक नहीं पहनने चाहिये। कई लोग ठंडक के भय से बनियान, स्वेटर, कुर्त्ता, जाकेट, कोट, ओवरकोट जैसे छः-छः कपड़े लादकर अपनी अमीरी या कमजोरी का परिचय देते हैं। ऐसे लोगों की सहनशक्ति घट जाती है, जरा-सी सर्दी से जुकाम, खाँसी और जरा-सी गर्मी से लू लगना, बेचैनी, हड़फूटन, सिरदर्द जैसी शिकायतें आये दिन खड़ी रहने लगती हैं।

बहुत ही अधिक कमजोरी या ठंडक हो तो बात दूसरी है अन्यथा ऊनी कपड़ों की अपेक्षा सूती और भारी की अपने हल्के पहनकर ही काम चलाना चाहिये। थोड़ी ठंडक लगे भी तो हर्ज नहीं। सर्दी हमारी शत्रु नहीं, मित्र है, वह थोड़ी मात्रा में लगती रहे तो उसका प्रभाव बुरा नहीं अच्छा ही पड़ेगा। सर्दी के प्रभाव से स्वास्थ्य बनता और गर्मी से बिगड़ता है, सर्द और गर्म देशों में रहने वाले लोगों के स्वास्थ्य को देखकर यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है। आमतौर से सर्दी में भूख बढ़ती है और स्वास्थ्य बनता है। इस दैवी उपहार का तिरस्कार नहीं करना चाहिये। यह कुछ ही समय के लिये आता और चला जाता है। उसका प्रभाव शरीर तक पहुँचने की गुंजायश छोड़नी चाहिये। पूरी तरह बहिष्कार नहीं करना चाहिये।

रात को मुँह ढककर नहीं सोना चाहिये। इससे नाक की साँस बन्द लिहाफ में ही घुटती रहती है और वही बार-बार नाक से ग्रहण की जाती रहती है। सर्वविदित है कि शरीर को ऑक्सीजन मिश्रित शुद्ध साँस की जरूरत पड़ती है। जब साँस छोड़ी जाती है तो भीतर की अनेकों खराबियाँ उसके साथ बाहर निकलती हैं इसलिये उसे गन्दा माना जाता है। मरीजों की साँस से दूर रहने का ध्यान रखा जाता है। अपनी साँस को भी यदि बन्द करके रखा जाये और बार-बार उसी में साँस लेते रहा जाय तो हर साँस के बाद वह अधिक विषैली होती जायेगी। इससे जिन्दा भर रहा जा सकता है, पर विषैले पदार्थ जो नाक द्वारा बाहर निकाले गये थे वे हर बार अधिक वृद्धि के साथ फेफड़ों में पहुँचेंगे और हानि ही पहुँचायेंगे। कोयले की अँगीठी जलाकर कमरा बन्द कर लिया जाये तो ठंडक तो जरूर दूर हो जायेगी, पर विषैली गैस भर जाने से उसमें सोने वालों का दम घुटने से मृत्यु भी हो जायेगी। बन्द कमरे में जलती अँगीठी से विषाक्तता पैदा करने का छोटा रूप ही मुँह ढककर सोना है। उससे शरीर को हानि ही होती है। ठंड से बचने के लिये धड़ एवं हाथ-पैर ढक लेना पर्याप्त है। दिन में भी कड़ी सर्दी और बर्फीली हवा के बीच भी मुँह और नाक खुले रहते हैं, तब जागते हुये उन्हें नुकसान नहीं पहुँचता तो रात को सोते समय ही ऐसा क्या अनहोनी बात होती है, जिसके कारण मुँह ढककर सोना जरूरी हो जाये। साँस की घुटन से गर्मी कुछ जल्दी जरूर बढ़ जाती है, पर यह कार्य तो कुछ ही मिनट की देर-सबेर में शरीर भी पूरा कर लेता है। नाक से ही नहीं पूरे शरीर से गर्मी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

निकलती है और वह बिस्तर को गरम कर देती है।

रंगीन कपड़े भड़कीली चमक-दमक के लिये और जल्दी मैले न होने की दृष्टि से पहने जाते हैं, पर वह दोनों ही बातें हानिकारक हैं। पोशाक रंग-बिरंगी, भड़कीली बनाकर लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित करना छछोरापन है। इस भौंड़े प्रदर्शन और ध्यान आकर्षण के पीछे आत्म-विज्ञापन की उथली-ओछी मनोवृत्ति का परिचय मिलता है। शालीनता की पोशाक सफेद या बहुत ही हल्के रंग की हो सकती है। उससे बड़प्पन, गौरव और भारी-भरकम व्यक्तित्व का परिचय मिलता है। साथ ही स्वच्छता की बात स्पष्ट होती रहती है। शरीर की तरह कपड़ा भी धुला और साफ-सुथरा रहना चाहिये। देह पर मैल की पर्त जमना और कपड़े में मैल, पसीना भरना लगभग एक ही जैसा है। हर दिन नहाते हैं तो कपड़े भी रोज ही धुलने चाहिये। रंगीन कपड़े भी मैले तो होते ही हैं रंग के कारण वह दिखाई नहीं पड़ता। यह तो और भी गलती हुई। इससे तो धोने में आलस होने लगेगा और गन्दगी शरीर से चिपकी रहकर हानि पहुँचाती रहेगी। धुला कपड़ा पहनने वाले की सुरुचि का प्रत्यक्ष परिचय देता है, जबकि उसके रंगीन होने पर ऐसा कुछ पता ही नहीं चलता और देखने वाले को उसकी स्वच्छ रहने की सम्मानजनक आदत का पता ही नहीं चलता। स्वच्छता और स्वास्थ्य का घना सम्बन्ध है। उसी में सुरुचि, सतर्कता और सौन्दर्य की झाँकी होती है। रंगीन कपड़े बाहर वालों पर उस प्रकार की छाप पड़ने का रास्ता ही बन्द कर देते हैं और अपनी आदत को गन्दगी छिपाने की बनाते हैं। गन्दगी कपड़ों में या जहाँ कहीं भी रहेगी हानि तो पहुँचावेगी ही।

नित्य सारे कपड़े न धोये जा सकें तो कम से कम शरीर को छूने वालों को तो नित्य ही धो लेना चाहिये। बनियान, जाँघिया, धोती, पेटीकोट, चोली आदि को भी स्नान के समय प्रयुक्त होने वाले तौलिये की तरह ही नित्य धोना चाहिये और उन्हें धूप में सुखाया जाना चाहिये। तकिये में सिर के तेल, नाक और मुँह की हवा का सबसे अधिक स्पर्श होता है इसलिये उनके खोल तो नित्य ही धोये जाने चाहिये। लोग उन्हीं की सबसे अधिक उपेक्षा करते हैं, मैले तकिये सोते समय अपनी गन्दगी साँस के साथ शरीर के भीतर पहुँचाते रहते हैं और अनजाने ही हम उसकी हानि सहते रहते हैं। छाया में सुखाने से न तो कपड़े सफेद होते हैं और न कीटाणु नाश गन्दगी निवारण का उद्देश्य पूरा होता है। जो कपड़े धोये न जा सकें उन्हें भी नित्य धूप में तो सुखा ही लिया जाना चाहिये। कोट, कुर्ता, जाकिट, शाल ही नहीं बिछाने, ओढ़ने के गद्दे, चादरें, कम्बल, लिहाफ, तकिये आदि भी याद करके धूप में सुखाने चाहिये। अन्यथा शरीर की तथा बाहर की गन्दगी जमती ही रहेगी और उनका स्पर्श हानिकारक बन जायेगा।

बक्सों में रखे और बिस्तरों में रखे कपड़ों में बारीक कीड़े लग जाते हैं और उन्हें नष्ट कर देते हैं। इसलिये जल्दी-जल्दी उन्हें खोलकर हवा और धूप लगाते रहना चाहिये। वर्षा के दिनों में और भी अधिक सतर्कता बरतने की जरूरत है, उनकी पर्तों में नीम के पत्ते या फिनायल की गोलियाँ डाल देनी चाहिये ताकि उनकी गन्ध से कीड़े कम पड़ने पावें।

कपड़ों की सलवट, सिकुड़न छुड़ाने के लिये आमतौर से गरम इस्त्री का उपयोग किया जाता है। यह कार्य उनकी ठीक तह करके किसी वजनदार चीज से दबा देने पर भी हो सकता है। तकिये के नीचे तह किया हुआ कपड़ा रखकर सो जाने से भी उनकी सलवटें छूट जाती हैं।

बटन टूट जाने, कहीं फट जाने पर उनकी तुरन्त मरम्मत करनी चाहिये। बिना बटन के—फटे छेद वाले कपड़े पहनने वाले की लापरवाह का परिचय देते हैं। असावधानी एक चारित्रिक दुर्गुण है। इसका परिचय छेद वाले, बटन टूटे, बिखरे, उधड़े कपड़ों के सहारे दूसरे लोग सहज ही प्राप्त कर लेते हैं। कपड़े ऐसी चुगली न करने पायें इसलिये उनकी मरम्मत, सफाई, धुलाई ही नहीं, सलीके करीने से पहनने के साथ जुड़ी हुई सुरुचि का भी परिचय देना चाहिये। भले ही सस्ते मूल्य के हों, पर यदि कपड़ों का सम्मान करते हुये उन्हें सही रूप में रखा जाना होगा तो वे बदले में अपना सम्मान बढ़ाने में भी सहायक ही होंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वेशभूषा का आधार देशीय सभ्यता-संस्कृति रहे

वस्त्रों की उपयोगिता मनुष्य को शील युक्त, सभ्य और शालीन दिखने के लिये है। आतप शीत से बचाव की दृष्टि से भी इनका प्रयोग मनुष्य सदियों से करता आ रहा है। किन्तु वस्त्रों का चयन स्थान की जलवायु और पारिवारिक परिस्थितियों के देखते हुये करना ही ठीक रहता है नहीं तो ये ही वस्त्र फैशन और अंधानुकरण के शिकार बनकर स्वास्थ्य के लिये हानिकारक भी बन सकते हैं।

हर देश की अपनी एक प्रचलित वेशभूषा होती है, जो वहाँ की जलवायु और भौगोलिक परिस्थितियों के अनुसार निर्धारित होती है। हमारे देश की भी अपनी प्रचलित वेशभूषा है। परिधान विशेष पर न जायें तो सामान्य तौर पर हमारे देश में पहने जाने वाले वस्त्र ढीले-ढाले होते थे, जिनमें हवा आसानी से प्रविष्ट हो सकती थीं। धोती, कुर्त्ता, साड़ी, लहँगा आदि ऐसे ही परिधान हैं जो हमारे देश में प्रयुक्त किये जाते रहे हैं और किये जा रहे हैं। इस वेशभूषा को आज के आधुनिक कहे जाने वाले व्यक्ति चाहे दकियानूसी कहें पर वैज्ञानिक दृष्टि से भारतवासियों के लिये ऐसी ही ढीली-ढाली वेशभूषा उपयुक्त ठहरती है न कि पेंट-कोट आदि। कोट, ओवर-कोट और चमड़े आदि के कोट तो हमारे यहाँ की जलवायु के लिये सर्वथा अनुपयुक्त हैं।

पेन्ट की संगति हमारे देश से सामान्य नागरिक की आर्थिक स्थिति और काम करने के तरीकों के साथ भी बिल्कुल नहीं बैठती है। घर, दुकान, व्यापार, व्यवसाय और कर्मशाला में सभी स्थानों पर पेन्ट का व्यवहार असुविधाजनक और अनुपयुक्त ही है। हमारे देश में मुश्किल से एक प्रतिशत परिवार ऐसे होंगे, जहाँ भोजन के समय टेबल कुर्सी का प्रयोग किया जाता होगा। बुहारी, सुधारी मोची का काम, मकान चिनाई, सड़क निर्माण, मजदूरी आदि सभी कामों के हमारे तरीके ऐसे हैं, जिनमें पेन्ट का उपयोग असुविधाजनक होता है। यहाँ तक कि हमारी प्राथमिक पाठशालाओं में भी बच्चों को नीचे ही बैठना पड़ता है। दुकानों में भी अधिकांश दुकानदार तख्ते पर ही बैठकर दुकानदारी करते हैं। ऐसे कार्यों के लिये पेन्ट का प्रयोग सर्वथा अव्यावहारिक ही होता है।

पेन्ट से मिलता-जुलता एक परिधान पाजामा इन दिनों काफी प्रचलन में आया है। यह चौड़ा होने से सुविधाजनक होता है इसलिये कई लोग इसका प्रयोग करते हैं। वैसे यह न धोती में मिलता है न पेन्ट का स्थान ही ले सकता है अतः पजामा सुविधाजनक होते हुये भी समुचित वेशभूषा नहीं माना जा सका है। धोती, कुर्त्ते और जाकेट को मिलाकर एक प्रोपर ड्रेस बन जाती है, उसी प्रकार पेन्ट, कमीज और कोट को प्रोपर ड्रेस माना जाता है पर इनमें से धोती या पेन्ट के स्थान पर पजामे का प्रयोग करने पर वह बात नहीं बनती। हाँ, घरेलू उपयोग के लिये पजामा व्यवहार्य है पर जहाँ तक बाहर पहनने का सवाल है यह उचित परिधान में नहीं माना जाता है।

हमारे यहाँ पहले सुविधा और उपयोगिता की दृष्टि से पुरुष वर्ग दो ही वस्त्र काम में लाते थे, जो उतरिया और उद्योवस्त्र के नाम से जाने जाते थे। इन्हें हम धोती और दुपट्टा कह सकते थे। महिलाओं के लिये भी साड़ी और कंचुकी का प्रयोग होता था। कहने का तात्पर्य यह है कि पुरुषों के वस्त्रों में सिलाई नाममात्र को भी नहीं होती थी। महिलाओं के लिये भले ही थोड़ी सिलाई की आवश्यकता होती थी। इन वस्त्रों को व्यक्ति मनचाहे ढंग से पहन सकता था मौसम के अनुरूप। आज भी धर्म कृत्यों में भाग लेते समय उत्तरीय और अधोवस्त्र ही पहना जाता है।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि आरम्भ में वस्त्र पहनने के पीछे लोगों का क्या दृष्टिकोण था। वे केवल लज्जा ढकने के लिये वस्त्र पहनते थे। पर आज तो फैशन के नाम पर जाने कितने प्रकार के परिधानों का प्रचलन हो गया है, जिनका अनुकरण भी आँख मीचकर हो रहा है। भारतवासियों के लिये टाई बाँधने की न तो कोई उपयोगिता है और न कोई आवश्यकता ही है। टाई का प्रयोग पाश्चात्य देशों में धर्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चिन्ह के रूप में तथा सर्दी से बचाव के लिये किया जाता था। यह दोनों ही परिस्थितियाँ यहाँ के निवासियों के सामने नहीं हैं फिर भी अनुकरण है सो चल ही रहा है।

पेन्ट पहनने वालों को खड़-खड़े पेशाब करना पड़ता है, जो हमारे देश में एक बेशर्मी समझी जाती है। पश्चिमी देशों में सब जगह खड़े-खड़े पेशाब करने के लिये पेशाब-घर बने हुये हैं। वे लोग खड़े-खड़े पेशाब ही नहीं करते उनके शौच जाने का ढंग भी हमारे से भिन्न है। उनके शौच पात्र इस ढंग से बने होते हैं कि वे कुर्सी पर बैठने की तरह उन पर बैठकर मल त्याग करते हैं। जलवायु का अन्तर तो है ही, हमारी आदतों और आर्थिक स्थितियों का अन्तर भी कम नहीं है। इसलिये पाश्चात्य वेशभूषा के अनुकरण का कोई औचित्य हमारी समझ में नहीं आता।

जब तक भारत पराधीन था, तब तक तो यह बात भी हो सकती थी कि अंग्रेजी सरकार की नौकरी करने वाले लोगों को उनके ढंग के कपड़े पहनना पड़ता हो पर अब तो ऐसा कोई बन्धन नहीं है।

सौम्यता और शालीनता की दृष्टि से साड़ी, ब्लाउज, भारत में ही नहीं विदेशों में भी बहुत लोकप्रिय हुआ है। महिलाओं के लिये यह बहुत ही उपयुक्त और गरिमायुक्त परिधान है। विदेशी फ्रॉक, स्कर्ट और अन्य कपड़े इनका मुकाबला नहीं कर सकते।

यह ध्यान में रखने की बात है कि जो कपड़ा जितना तंग होगा वह उतना ही जल्दी फटेगा। इससे आर्थिक हानि होगी। इस आर्थिक हानि के साथ स्वास्थ्य हानि भी कम नहीं होगी। शरीर के साथ बँधा रहने वाला कपड़ा रक्त प्रवाह में अवरोध पैदा करता है। इलास्टिक युक्त मोजों का व्यवहार हानिकारक होता है। मोजे और जुराबों की सर्दी में तो कुछ उपयोगिता भी मानी जा सकती है पर गर्मी में भी मोजे पहने रहना एक प्रकार से फैशन-परस्ती ही मानी जायेगी उसकी उपयोगिता कुछ भी नहीं है।

काम करते समय और घूमने जाने के लिये हाफपेन्ट का प्रयोग करना सुविधाजनक है। वेशभूषा के सम्बन्ध में जो बात कही जा रही है, वह किसी दुराग्रह से प्रेरित होकर नहीं कही जा रही है। हाफपेन्ट यद्यपि विदेशी पोशाक है किन्तु उसकी उपयोगिता इन प्रयोजनों के लिये सिद्ध होती है। बच्चों के लिये भी हाफपेन्ट सुविधाजनक और उपयोगी है।

बच्चों के कपड़े हल्के-फुल्के और साधारण हों। बच्चों को लाड़-प्यार से तड़क-भड़क वाले रंग-बिरंगे या फैशनदार कपड़े पहनाना उनके मन में फैशन के प्रति रुचि जगाना ही होता है। जो माता-पिता बचपन में तो बच्चों को खूब सजा सँवारकर रखते हैं, उन्हें रंग-बिरंगे कपड़े पहनाते हैं और अपनी उसी आदत के अनुसार जब वही बालक वयस्क होकर नये-नये फैशन के कपड़े पहनता है तो उसे टोकते हैं, जबकि यह सब उन्हीं के द्वारा ही आरम्भ किया हुआ काम है।

आजकल कपड़े पहनने का ढंग कुछ इस प्रकार विकृत होता जा रहा है कि कपड़े पहनने का अर्थ अपनी लज्जा को ढाँपने की बजाय अनावृत करना हो गया है। महिलायें भी फैशन परस्ती और आकर्षक बनने की इस होड़ में पुरुषों से पीछे नहीं रही हैं। यह बात दूसरी है कि उन्हें इसके लिये प्रेरणा उनके पतियों द्वारा ही मिली हो।

युवक-युवतियाँ इस फैशन की दौड़ में सबसे आगे हैं। सिनेमा में काम करने वाले अभिनेता और अभिनेत्रियाँ जिस ढंग के कपड़े पहनते हैं, वे उसी ढंग के कपड़े बनवाकर पहनते हैं। अनुकरण बुरा नहीं अन्धानुकरण तो बुरा ही होता है। व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाने के लिये व्यक्ति के गुण, क्षमताएँ, शक्तियाँ और योग्यतायें काम में आती हैं न कि उसके वस्त्र।

हेनरी फोर्ड अमेरिका के चोटी के धनपतियों और उद्योगपतियों में से एक थे किन्तु उनके वस्त्र साधारण ही होते थे। एक बार तो वे कई दिनों तक ऐसा कोट पहनते रहे थे, जो एक स्थान पर थोड़ा-सा फटा हुआ था। उनके सेकेट्री ने उनका ध्यान कोट की ओर दिलाया तो वे बोले—"अमेरिका के ज्यादातर लोग मुझे जानते हैं। यदि मैं पुराना कोट भी पहने रहा तो भी वे पहचान लेंगे कि मैं ही हेनरी फोर्ड हूँ।" यह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कहकर उन्होंने बात टाल दी। कोट की मरम्मत अवश्य करवा ली।

कुछ दिन बाद किसी कार्यवश उनका इंग्लैण्ड जाने का कार्यक्रम बना, तब भी वे वही कोट पहने थे। उनके सेकेट्री ने उनसे फिर कहा—"अब तो यह कोट बदल लीजिये।" इस पर वे हँसते हुये बोले—"वहाँ मुझे कोई जानता तो है नहीं फिर मुझे कुछ और भी समझ सकता है।" साधारण कोट पहने हुये भी वे असाधारण व्यक्ति बने रह सके थे।

हेनरी फोर्ड के इस उदाहरण से स्पष्ट हो जाता है कि व्यक्तित्व वस्त्रों से नहीं व्यक्ति के गुणों से मुखरित होता है। अनुकरण करना ही है तो गुणों का किया जाये। अपने असाधारण व्यक्तित्व और कर्तृत्व से सारे विश्व को प्रभावित करने वाले महात्मा गाँधी आधी धोती पहनते और आधी ओढ़ते थे। वस्त्रों से वे विश्वबंद्य नहीं बने थे।

आजकल कई युवक सँकरी मोहरी के पेंट और छींटदार प्रिन्ट के कमीज पहनकर अपने आप को आधुनिक समझ बैठते हैं, जबकि वस्त्र पहनने से ही कोई आधुनिक और परम्परावादी नहीं हो जाता है। आधुनिकता तो समय के साथ का चलने नाम है। समाज को युगानुरूप परिष्कृति का अधिष्टान देकर चलने का नाम आधुनिकता है, जो उनके निकट होकर भी नहीं निकली है।

वस्त्र सादे हों, स्वच्छ हों, शालीन हों जिन्हें देखकर किसी के मन में किसी प्रकार की दुर्भावना उत्पन्न न हो, वस्त्र ढीले-ढाले हों जिससे रोमकूपों को ताजी हवा मिलती रहे, पसीना सूखता रहे, सूर्य की धूप का प्रवेश उनमें होता रहे। सूती कपड़े स्वास्थ्य के लिये बहुत उपयोगी हैं। पसीना सोखने की क्षमता इनमें पर्याप्त मात्रा में होती है। इससे शरीर पर मैल व गन्दगी जमने नहीं पाती।

आजकल फैशन के नाम पर जो नंगापन चला है, उससे समाज की जो हानि हो रही है उससे कोई अनभिज्ञ नहीं है। कसेकसाये और शरीर के उतार-चढ़ाव को दिखाने वाले कपड़े दर्शकों के मन में विकार भी उत्पन्न नहीं करते वरन् स्वास्थ्य के लिये भी हानिकारक होते हैं। भड़कीले, वस्त्रों से, विशेषकर लाल रंग के वस्त्रों से आँखों पर बुरा असर पड़ता है।

कपड़ों के रंग हल्के चुने जायें। गहरे रंग के कपड़े मैले नहीं दिखते, उससे गन्दे कपड़े ही पहनने में आते रहते हैं। सफेद रंग सबसे अच्छा रहता है। यह रंग ऐसा है जो सभी रंग में व्यक्तियों को फब जाता है। दिखने में भी सभ्य और शालीन लगता है श्वेत वस्त्रों में आवृत्त व्यक्ति। वस्त्रों को प्रदर्शन के लिये पहनना हमारी बौद्धिक अक्षमता का ही परिचायक बनता है।

केश, वस्त्र और वेष सभ्यों जैसे रखिये

बाल-बुद्धि के लोग शारीरिक सौन्दर्य और रूप का आकर्षण बढ़ाने के लिये तरह-तरह से वेष-विन्यास और रूप-सज्जा किया करते हैं। सम्भव है, इससे उन्हें कुछ क्षणिक सफलता मिलती हो, किन्तु इस प्रकार का भड़कीला वेष-विन्यास और बाहरी चमक बढ़ाने से मनुष्य के चरित्र का पतन ही हुआ है। विचित्र प्रकार की वेष-भूषा, विदेशियों की नकल अच्छे व्यक्तित्व का प्रतीक नहीं हो सकती। प्रत्येक देश काल और परिस्थिति के अनुसार जहाँ संस्कृति, रीति-रिवाज और सामाजिक आचार-संहिता में एकता नहीं होती वैसे ही अपने धर्म, अपनी संस्कृति के अनुरूप केश, वस्त्र और वेष-भूषा से मनुष्य के चरित्र और आत्मिक बल का अनुमान किया जाता है। इस दृष्टि से अपनी भी एक प्रणाली है, उसी में सीमित रहने में हमारा बड़प्पन, सादगी, शालीनता तथा सांस्कृतिक गौरव माना जा सकता है।

बालों से मनुष्य का व्यक्तित्व समझ में आता है। मनुष्य की उजड्डता, ओछापन और चारित्रिकहीनता की झलक भी बालों से मिलती है। छोटे-छोटे कटाये हुये बाल मनुष्य की योग्यता प्रकट करते हैं। सुव्यवस्थित ढंग से रखाये गये बाल यह व्यक्त करते हैं कि व्यक्ति का स्वभाव, आचरण सामान्य व्यक्तियों की अपेक्षा कुछ अधिक सुन्दर होना चाहिये किन्तु बड़े-बड़े बाल, अस्तव्यस्त और बिखरे हुये बालों से मनुष्य

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का ओछापन जाहिर होता है। इससे मस्तिष्क के ज्ञान तन्तु दुर्बल पड़ जाते हैं। लम्बे बाल यदि ठीक प्रकार तेल डालकर और सँवारकर न रखे जायँ तो सिर में मैल जमा हो जाता है और फोड़े-फुन्सियाँ तथा गंजापन का रोग उत्पन्न हो सकता है। इस तरह केश केवल व्यक्तित्व की दृष्टि से ही महत्त्वपूर्ण नहीं हैं, बल्कि उनका स्वास्थ्य के साथ भी अटूट सम्बन्ध है।

कुछ लोगों को यह भ्रम होता है कि धार्मिक दृष्टि से लम्बी जटायें रखना बड़प्पन का चिन्ह है। यह आदर्श वे साधु-सन्तों और साधकों से अनुकरण करते हैं। सम्भव है जब केशकर्त्तन प्रारम्भ न हुआ तो लोग ऐसा करते हों या साधनाओं की शोध में इन छोटी-छोटी बातों से समय बचाकर अधिक समय आध्यात्मिक शोधों में लगाने की आवश्यकता रही हो—तब लम्बी जटाओं को कुछ महत्व दिया जाता रहा हो। पर अब जब न तो ऐसे साधु सन्त और महात्मा रहे और न ही उनके कटाने में किसी परेशानी का सामना करना पड़ता हो तो लम्बे बाल रखने की कोई उपयोगिता समझ में नहीं आती। सिर पर व्यर्थ का बोझ बनाये रखना बुद्धिमानी की बात नहीं हो सकती। हल्के छोटे बालों से सिर साफ और ज्ञान तन्तु ताजे बने रहते हैं। इससे सात्विकता बनी रहती है। बड़े बाल तमोगुण का प्रतीक होते हैं। इसी प्रकार बालों को तरह-तरह से स्त्रियों के समान काढ़ना और विचित्र तरह की आकृति बनाना भी बुरा है।

वस्त्रों के बारे में भी ठीक ऐसी ही बात है। भारतीय संस्कृति की सर्वोपरि विशेषता यही रही है कि यहाँ जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में सादगी को ही अधिक महत्त्व दिया गया है। यह विशेषता वस्त्राभूषण के साथ भी जुड़ी हुई है पिछले दिनों हमें जो यवनों और अंग्रेजी की दासता भुगतनी पड़ी, उससे हमारे सम्पूर्ण आचार-विचार ही परिवर्तित हो गये हैं। यह परिवर्तन खान-पान, रहन-सहन, बोल-चाल आदि सभी में समा गया है। वस्त्र भी आज हमारी सांस्कृतिक विशेषता, गौरव, जलवायु आदि के अनुरूप नहीं हैं।

भारत उष्ण प्रकृति का देश है अतएव वस्त्रों की अधिकता की यहाँ कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। पूर्व पुरुषों के चित्रों से यह विदित होता है कि ऋषि-मुनि, सन्त, गृह-त्यागी, गृहस्थ व राजा लोग भी प्रायः उतने वस्त्र धारण करते थे, जो सदाचार और शील संरक्षण के लिये आवश्यक होते थे। विशेष अवसरों पर विशेष प्रकार के वस्त्र पहिनने की परम्परा थी। अधिकांश लोग अपने शरीर का अधिक से हिस्सा खुला रखते थे ताकि वे ऋतुओं के प्रभाव को आसानी से बर्दाश्त कर लें।

वस्त्र पहनने की जो परम्परा पूर्व पुरुषों की थी वह बड़ी सरल और उपयोगी रही है। धोती, कुर्त्ता आदि का चयन सादगी और सरलता की दृष्टि से भी श्रेष्ठ रहा है और इसका सम्बन्ध स्वास्थ्य की स्थिरता से भी रहा है। किन्तु खेद की बात है कि अब वस्त्रों की दृष्टि से हमारी सांस्कृतिक श्रेष्ठता प्रायः लुप्त हो चुकी है। पूर्णतया विदेशियों का अनुकरण हो रहा है।

पैन्ट और चूड़ीदार पायजामा, टोप, टाई आदि का प्रचलन सर्वथा अभारतीय है। ये यहाँ की जलवायु के अनुरूप भी नहीं हैं और इससे भद्रता भी प्रकट नहीं होती है। अब लोग समझने लगे हैं कि पैण्ट के साथ वे हर घड़ी कितनी गन्दगी साथ लिये घूमते हैं? इसका स्वास्थ्य पर कितना बुरा असर पड़ता है? दूसरे जो वस्त्र चुस्त होते हैं और जिनसे शरीर का उभार ज्यों का त्यों दिखाई देता है वे अधिकांश वासना और कामुकता भड़काने वाले होते हैं। बनियाइन, कमीज, सूटर और कोट—एक के ऊपर एक—अनेक कपड़े पहन लेने से बेचारे शरीर की दुर्दशा होती है। चुस्त कपड़े स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छे नहीं माने जाते। नैसर्गिक रूप से शरीर को हर क्षण शुद्ध हवा मिलती रहनी चाहिये। यदि ऐसा न हुआ तो रोमकूप गन्दगी से भर जाते हैं और कोमल स्थानों में हर घड़ी सीलन बनी रहने के कारण दाद, खाज, अकौता, फोड़ा और फुन्सियाँ बनी रहती हैं। किसी भी अवस्था में देशकाल की परिस्थितियों के प्रतिकूल वस्त्र नुकसानदेह ही हो सकते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अब यह बुराई स्त्रियों के जीवन में प्रवेश करती जा रही है, यह एक-चिन्तनीय विषय है। स्त्रियों का आधुनिक पहनावा इतना फूहड़ और भड़कीला हो रहा है कि हर शर्मदार की आँखें नीची हो जाती हैं। दुराचार का प्रोत्साहन देने में सिनेमा, नाच, अश्लील गाने जितने सहायक हो रहे हैं—वस्त्र-सज्जा, उससे कहीं अधिक ही है। हमारी बच्चियाँ अब उन वस्त्रों की ओर अधिक आकर्षित होती हैं, जो विचित्र प्रकार के रंग-रंगीले तथा आधे छोटे होते हैं। स्त्रियों के वस्त्र ऐसे होने चाहिये, जिनसे उनका अधिकांश शरीर ढका रहे किन्तु वस्तुस्थिति इससे सर्वथा विपरीत है। यह बड़ी चिन्ता की बात है। अब इसमें तीव्रता से परिवर्तन की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

स्त्रियों की भारतीय भेषभूषा को अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिष्ठा प्राप्त है। अतः यह नहीं कहा जा सकता कि उनकी पोशाक किसी देश की महिलाओं से निकृष्ट है। आज जहाँ साड़ी और पूरी बाँह के सलूके का प्रचलन दूसरे देशों में बढ़ रहा है, वहाँ यह सबसे अधिक आवश्यक है कि अपनी परम्पराओं का अनुशीलन पहले अपने घर में ही हो। हमारी बहिनों और बेटियों को इस बात पर अधिक ध्यान देना चाहिये और वस्त्रों की सादगी अपनाने का प्रयत्न करना चाहिये। यह संयम उन बालिकाओं को अधिक सिखाने की आवश्यकता है, जो इस समय शिक्षा के क्षेत्र में बढ़ रही हैं क्योंकि महिलाओं के निर्माण की भावी बागडोर उन्हीं के हाथों आने वाली है।

स्नो आदि के उत्पादन में तेजी से जो वृद्धि हो रही है, उससे और भी चिन्ता हो रही है स्नो का १९५६ में ६१४४५० पौण्ड उत्पादन हुआ जो दूसरे वर्ष १०८१८८६ पौण्ड हो गया। इससे यह पता चलता है कि मनुष्य अपने वेष विन्यास में किस तेजी के साथ अप्राकृतिक साधनों को बढ़ा रहा है। नैतिक दृष्टि से यह सचमुच चिन्ता की बात है कि मनुष्य की आदतों में छिछोरेपन की बढ़ोत्तरी अधिक हो रही है। एड़ी से लेकर चोटी तक जिस प्रकार से आज लोग शरीर को अप्राकृतिक ढंग से सजाते हैं, उससे समाज का नैतिक पतन ही हुआ है।

मानवीय स्वभाव की यह छोटी-छोटी बातें भी सामूहिक तौर पर बड़ी प्रभावशील होती हैं इसलिये यह आवश्यकता अब प्रत्येक विचारवान के समक्ष समस्या बनकर खड़ी है। इसमें परिवर्तन किये बिना हमारे जातीय-जीवन संस्कृति का विकास होना-सम्भव नहीं है। राष्ट्र का नैतिक बल जागृत करने के लिये भी केश, वस्त्र और वेश-विन्यास आदि में क्रान्तिकारी परिवर्तन लाने पड़ेंगे। आत्म-गौरव भी इसी में है कि अपनी सांस्कृतिक चेतना को समझें और उसे अपने जीवन में धारण करें।

यौन—उन्माद भड़काये, ऐसे लिबास न पहनें

वस्त्रों को व्यक्तित्व का दर्पण कहा जा सकता है। व्यक्ति कैसा है ? इसका एक मोटा अनुमान सामने वाले के वस्त्र-विन्यास के आधार पर लगाया जा सकता है। फटे-पुराने, मैले-कुचैले, कपड़ों से व्यक्ति के गँवारूपन का अन्दाज लगता है, धुले-धुलाये सादे वस्त्रों से व्यक्तित्व की शालीनता टपकती है, जबकि तड़क-भड़क युक्त पश्चिमी लिबास यह तो बताता है कि व्यक्ति सभ्य है, पर वह सुसंस्कृत ही होगा, ऐसा दावे के साथ नहीं कहा जा सकता।

यों तो परिधान को व्यक्ति की मौलिक आवश्यकताओं में से एक प्रमुख आवश्यकता माना गया है और सर्दी, गर्मी तथा बरसात से शरीर की रक्षा के लिये उपयोगी बताया गया है, पर आज लज्जा निवारण एवं प्रतिकूल मौसम से शरीर रक्षा की तुलना में इसका उपयोग इस दृष्टि से कहीं अधिक होने लगा है कि पश्चिम की अत्याधुनिक सभ्यता के अनुरूप पोशाक के सम्बन्ध में फिट बैठते हैं या नहीं। तात्पर्य यह है कि इसकी मौलिक आवश्यकता तो गौण हो गयी है और गौण बात प्रमुख।

आरम्भ काल में जब कपड़े का विकास नहीं हुआ था, तो मनुष्य शीत और लज्जा निवारण के लिये वल्कल अथवा जन्तु-चर्म धारण करते थे। तब इनके उद्देश्य बस दो ही थे। व्यक्तित्व की पहचान का आधार यह नहीं था, क्योंकि उस समय प्रायः सभी के वस्त्र छाल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

अथवा चर्म के रूप में हुआ करते थे। फिर इनके आधार पर व्यक्तित्व की पहचान कैसे हो ? तब इस समस्या के निवारण के लिये चरित्र, चिन्तन, व्यवहार को मूल्यांकन का आधार माना गया, जो सही था, किन्तु समय के साथ-साथ मूल्यांकन की कसौटी बदली और अब सभ्य-असभ्य में विभेद का एक मोटा आधार पोशाक को माना जाने लगा। इसमें संदेह नहीं कि इसके द्वारा भी कुछ हद तक अंदाज लगाया जा सकता है, पर जब इसे ही सब कुछ मान लिया जाय, तो इसे अतिवाद ही कहना चाहिये।

देखा गया है कि कई सादे-सामान्य लिबास वाले व्यक्ति भी उच्च आदर्श का प्रमाण-परिचय प्रस्तुत करते हैं, जबकि कई बार पहनावे की दृष्टि से तथाकथित अत्याधुनिक भी ओछे और बचकाने साबित होते हैं। इस विरोधाभास की स्थिति में परिधान को व्यक्तित्व की पहचान का सर्वोत्तम व एकमेव आधार कैसे मान लिया जाय ? गांधी जी एक ही धोती में से आधी को पहनने और शेष को शरीर पर लपेटकर कुर्त्ते का काम लेते थे। पहनावे-ओढ़ावे की दृष्टि से वे बिल्कुल ही सामान्य थे, पर उनका व्यक्तित्व असामान्य व उच्च था। लाल बहादुर शास्त्री अपने प्रधानमन्त्रित्व काल में भी पुराने वस्त्रों को बार-बार मरम्मत कर उपयोग करते थे। गैरीबाल्डी के बारे में भी ऐसा ही कहा जाता है। एक बार उनको इटली के स्वाधीनता संग्राम के दिनों में एक सभा में आमन्त्रित किया गया। गैरीबाल्डी बड़ी सादगी से रहते थे। जब वे जाने के लिये तैयार हुये, तो वहाँ के एक अन्य नेता कैहूर ने सलाह दी कि आप इतने बड़े नेता हैं, आपको इस लिबास में वहाँ जाना शोभा नहीं देता। उन्होंनें पलटकर कहा—"यदि जनता को गैरीबाल्डी चाहिये, तो मैं जिस पोशाक में हूँ, उन्हें स्वीकार करना पड़ेगा, पर यदि वे कोट, पेन्ट और टाई में लिपटे नेता को देखना चाहते हैं, तो मेरे विचार में आपको जाना चाहिये। कैहूर निरुत्तर हो गये। बाद में वे उसी सामान्य वेश-भूषा में गये और अन्त तक उसी सादगी को अपनाये रहे। सभी जानते हैं कि इटली की स्वतन्त्रता की लड़ाई में उनने जो भूमिका निभायी वह कितनी असाधारण थी ?

यहाँ कहा यह नहीं जा रहा है कि नवीन अथवा अच्छे वस्त्र नहीं पहनने चाहिये अथवा उसमें कोई बुराई है वरन् उस मानसिकता की ओर इंगित किया जा रहा है, जिसमें लोग तड़क-भड़क वाले कपड़े पहनकर स्वयं को सभ्य-सुसंस्कृत साबित करने की असफल कोशिश करते हैं। सच्चाई तो यह है कि व्यक्तित्व यदि प्रखर व प्रामाणिक हो, तो जीर्ण-शीर्ण स्थिति में भी व्यक्ति की प्रतिभा कीचड़ में कमल की भाँति सुस्पष्ट झलकती-झाँकती है। उसकी दयनीय स्थिति उसमें तनिक भी बाधक नहीं बनती, पर जब यह तथ्य लोगों की समझ में नहीं आता, तो औंधे-सीधे प्रचलनों की भरमार बढ़ती है और कौवे मोर के पंख लगाकर मोर बनने का कौतुक रचते देखे जाते हैं। आज यही हो रहा है।

बात पुरुषों तक सीमित होती, तो कुछ हद तक सन्तोष किया जा सकता था, किन्तु जब पवित्रता एवं शालीनता की प्रतिमूर्ति समझी जाने वाली नारी जाति की मान्यता भी ऐसी ही बनने लगे तो इसे गम्भीर मामला माना जाना चाहिये। आज सभ्य और आधुनिक कहलाने वाली स्त्रियाँ अपने शरीर के वस्त्र सिकोड़ती और तंग करती जा रही हैं, जिसका बुरा प्रभाव न सिर्फ उनके स्वास्थ्य पर पड़ता है वरन् समस्त समाज इस दुष्प्रभाव से संक्रमित होता है। तंग कपड़ों से जहाँ तक एक ओर शरीर के विभिन्न भागों में रक्त प्रवाह अवरुद्ध होता है, वहीं दूसरी ओर अत्यन्त छोटे और कसे हुये परिधान कुत्सा भड़काने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यही बात पुरुषों के साथ भी लागू होती है। उनके पतलून और कमीज शरीर से इतने चिपके होते हैं कि विपरीत सैक्स पर उसका प्रतिकूल असर पड़ता है। इन दिनों सामाजिक व्यभिचार में बढ़ोत्तरी का एक कारण यह भी है कि युवा सीधी-सादी वेश-भूषा न पहनकर अत्याधुनिक बनने के चक्कर में ऐसे लिबास का चयन कर लेते हैं, जो भारतीय मर्यादा के अनुरूप नहीं होता। उल्टे सिरफिरा, उथला, कहलाने लफंगा-मनचला होने का आक्षेप सिर पर लदता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रवीन्द्र नाथ टैगोर ने कहा है कि जब तक समाज आधुनिकता के सन्दर्भ में वेश-विन्यास को महत्त्व देता रहेगा, तब तक वह न तो सही अर्थों में आधुनिक बन पायेगा, न सभ्य कहलाने क अधिकारी होगा। उनके अनुसार आधुनिकता आज के परिप्रेक्ष में वर्तमान वर्जनाओं और मूढ़ मान्यताओं के प्रति चिन्तन और व्यवहार में आनी चाहिये, न कि पहनावे, ओढ़ावे में। हम प्रगतिशील हैं इसका मापदण्ड समय के हिसाब से व्यक्तित्व में आयी जागरूकता और सुसंस्कारिता होनी चाहिये, न कि फैशन के नाम पर चलने वाले चित्र-विचित्र लिबासों का प्रदर्शन। यदि प्रगतिशीलता का प्रतीक अंग-प्रदर्शन करने वाले छोटे और तंग वस्त्रों को मान लिया जाय तो फिर यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि हम प्रतिगामिता के उस आदिम युग की ओर खिसकते चले जा रहे हैं, जहाँ से सर्वथा वस्त्रहीन स्थिति में मनुष्य का विकास हुआ था।

अच्छा हो, फैशन के नाम पर भौंड़े कपड़े पहनकर आदिकाल के पिछड़े युग की ओर वापिस लौटने की बजाय हम पोशाक के नाम पर सादगी अपनायें, ताकि हमारी शालीनता अक्षुण्ण रहे और यौन-उन्माद भड़काने का कलंक भी सिर पर न लदे। इस दृष्टि से भारतीय सभ्यता के प्रतीक के रूप में धोती-कुर्ता सर्वोत्तम हैं। इससे अंग-अवयवों पर अनावश्यक दबाव भी नहीं पड़ता और उन्हें पर्याप्त धूप-हवा भी मिलती रहती है। उठने-बैठने व काम करने में भी किसी प्रकार की बाधा नहीं पड़ती, अपितु आसानी ही रहती है। धोती-कुर्ता पहनने में यदि किसी प्रकार का शर्म-संकोच आड़े आये, तो कम से कम इतना तो किया ही जा सकता है कि वेश-भूषा का चयन ऐसा हो जो चलने-फिरने और काम करने में बाधा उत्पन्न न करे और सादगी एवं शालीनता की मर्यादा की रक्षा भी होती रहे।

आखिर आप भड़कीले कपड़े क्यों पहनते हैं ?

केलीफोर्नियाँ (अमेरिका) के फार्म ब्यूरो संघ की एक जाँच विज्ञप्ति के अनुसार जो तथ्य सामने आये हैं, वे भड़कीले वस्त्र पहनने वालों को एक चेतावनी देते हैं कि सीधे-सादे शालीन वस्त्र ही मनुष्य के स्वास्थ्य के लिये हितकर हैं।

व्यापक अनुसंधान के पश्चात् इस संघ के शोधकर्त्ताओं ने यह निष्कर्ष निकाला कि भड़कीले तथा चमकदार कपड़े मच्छरों तथा हानिकारक रोगजनक कीड़े-मकोड़ों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। सूर्य की किरणें जब इन वस्त्रों पर पड़ती हैं तो वे प्रतिक्षिप्त होती हैं। उनसे आकर्षित होकर ये मच्छर तथा कीड़े-मकोड़े इस प्रकार के वस्त्र पहनकर घूमने वाले मनुष्यों की ओर दौड़ पड़ते हैं। आकर्षित होकर आने वाले ये मक्खी, मच्छर तथा कीट-पतंग उन वस्त्रों को तो हानि पहुँचाते ही हैं, उस व्यक्ति के स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचाते हैं। मच्छरों के द्वारा उत्पन्न होने वाले रोगों का आक्रमण उन पर सहज ही हो जाता है। कई कीड़े-मकोड़े जहरीले होते हैं, इनके काटने से शारीरिक व्याधियाँ होती हैं।

इस अनुसंधान से इस बात का स्पष्टीकरण भी हुआ है कि श्वेत तथा गेरुए वस्त्र इन कीड़े-मकोड़ों तथा मच्छरों को आकर्षित नहीं करते। इन रंगों के प्रति वे उदासीन होते हैं। फलतः न तो वे कपड़ों को क्षति पहुँचाते हैं न पहनने वालों के स्वास्थ्य को। भारतीय संस्कृति में श्वेत तथा पीत वस्त्रों को प्रमुखता दी है तथा शोभाजनक माना है। इनके पीछे ये वैज्ञानिक तथ्य जुड़े हुये थे। इनकी पुष्टि इस ब्यूरो के अनुसंधानों से हो जाती है।

भड़कीले वस्त्र पहनने से शारीरिक शोभा बढ़ती हो ऐसी कोई बात नहीं है। जो शालीनता श्वेत तथा सादे रंग के वस्त्रों में दृष्टिगोचर होती है, वह चमकीले-भड़कीले वस्त्रों में कदापि नहीं होती। इस प्रकार के चमकदार कपड़े पहनने से मनुष्य की राजसिकता बढ़ती है। प्रदर्शन, कामुकता तथा पशु-प्रवृत्तियों को प्रश्रय देता है। भड़कीले वस्त्र पहनना एक प्रदर्शन ही तो है। ऐसे वस्त्र मानसिक तथा आत्मिक स्वास्थ्य का ह्रास करते हैं। यह तथ्य तो सर्वविदित था ही, इस अनुसंधान ने इन्हें शारीरिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी हानिकारक सिद्ध कर दिया है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारतीय संस्कृति का आधार जो वैज्ञानिक तथ्य रहे हैं, उन्हें आज विस्मृत ही किया जा चुका है पर उनकी महत्ता को अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। गृहत्यागी, संन्यासियों द्वारा गेरुए वस्त्र धारण करने के पीछे यही वैज्ञानिक तथ्य था कि इस रंग के वस्त्र मच्छरों तथा कीट-पतंगों को आकर्षित नहीं करने के कारण इन संन्यासियों को इनके आक्रमण से बचाते रहते थे।

हजारों-लाखों वर्ष पूर्व इस प्रकार के सत्यों का अनुसन्धान करने वाले ये ऋषि मनीषी ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में कितने बढ़े-चढ़े थे, इसका सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है। ऐसे कितने ही महामानवों द्वारा सँवारी गई संस्कृति की ओर आज विश्व की निगाहें टिक रही हैं। वैज्ञानिक शोध अनुसंधान इसकी उपयोगिता तथा सत्यता का प्रतिपादन कर रहे हैं।

खेद का विषय है कि भारतवासी उसी की महत्ता को भुला रहे हैं। फैशन की डायन हमारे नवयुवकों व नवयुवतियों को खा चली। वे आज जाने कैसे-कैसे चटकीले-मटकीले वस्त्रों से अपने आपको चित्र-विचित्र बनाये दे रहे हैं। जिन वस्त्रों में व्यक्तित्व की झलक नहीं मिलती—जिनके पीछे कोई कारण तथा वैज्ञानिक आधार नहीं, उन्हें यों ही फैशन के नाम पर अपना लेना दिमागी दिवालियापन दिखाने के अतिरिक्त और क्या हो सकता है ?

वैज्ञानिक तथ्यों द्वारा जिस वेश-भूषा तथा रंगों की उपयोगिता की पुष्टि की जा रही है, उनका प्रचलन हजारों-लाखों वर्षों से यहाँ होता आ रहा है। हमें उनके लाभ से वंचित नहीं रहना चाहिये।

फैशन का उन्माद-यूनीसैक्स फैशन

फैशन एक अंग्रेजी शब्द है, जिसका हिन्दी अर्थ सभ्य और शालीन वेशभूषा तथा रहन-सहन होता है। परन्तु इस शब्द की जन्मभूमि इंग्लैण्ड में इसका प्रयोग कुछ सौ वर्ष पहले विचित्र अर्थों में किया जाता था। विचित्र अर्थों में इसलिये कि उस समय यदि कोई व्यक्ति दूसरे को फैशनेबल कहता तो वह चिढ़ जाता क्योंकि यह शब्द नाटक या रंगमंच पर काम करने वाले उन कलाकारों के लिये प्रयुक्त किया जाता था जो नाटक में मसखरे का काम किया करते थे। उनकी वेशभूषा और विचित्र शृंगार तथा रूप ग्रहण करने की कला को फैशन समझा जाता था।

बाद में इसका प्रयोग केवल शृंगार और साज-सज्जा के लिये ही किया जाने लगा। इस प्रकार एक के बाद मंजिल तय करता हुआ यह शब्द अब शरीर को सजाने, आकर्षक दिखने की चेष्टा करने और केवल रूपहले वस्त्र पहनने तक ही संकेत करता है। परन्तु फैशन के रूप में शृंगार की जो विधा चल पड़ी है वह इस शब्द के जन्मवृत्त की ओर अनायास ही ध्यान आकर्षित करती है और विचारशील व्यक्तियों को यह सोचने के लिये बाध्य करती है कि फैशन का अर्थ कहीं व्यक्ति को सचमुच नाटक का विचित्र पात्र बना देना ही तो नहीं है। यों फैशन ने पिछले बीस-पच्चीस वर्षों में अपने रूप बदले हैं और पहनावे तथा रहन-सहन के तौर-तरीके में भी परिवर्तन आया है। लेकिन आजकल "यूनीसैक्स" नामक एक नया फैशन चल पड़ा है। इसे नया भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि जितनी तेजी से यह शहरों और महानगरों से लेकर गाँवों और कस्बों तक फैला है इतनी जल्दी कोई भी चीज लोकप्रिय होना कठिन लगता है। लेकिन आज के युग का सर्वाधिक लोकप्रिय प्रचार साधन सिनेमा इस कठिन कार्य को भी आसान बनाने में सफल हुआ है।

क्या शिक्षित और क्या अशिक्षित क्या बच्चे, किशोर और क्या वयस्क प्रौढ़, सभी लोगों में तेजी के साथ यूनीसैक्स की "समयौन फैशन की कला फैली है और लोगों ने इसे अपनाया है। यूनीसैक्स फैशन की परिभाषा इस प्रकार की जा सकती है कि जिस तरह की वेशभूषा अपनाकर आदमी और औरत में खासतौर से युवक और युवतियों में अन्तर कर पाना मुश्किल है, यह पहचानकर सकना कठिन हो जाय कि कौन युवक है और कौन युवती ? वृन्दावन और गोकुल जैसे पौराणिक और प्राचीन सभ्यता के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

केन्द्र से लेकर बम्बई और दिल्ली जैसी आधुनिक सभ्यता के केन्द्रों तक यूनिसैक्स फैशन ने जोर पकड़ा है और युवा-वर्ग ने बड़ी तेजी से अपनाया है।

इस फैशन के अनुयायी युवकों की जो तस्वीर उभरती है, वह कुछ इस प्रकार है—बड़े-बड़े बाल, कपड़ों के तौर पर बैल बॉटम यानी कि पेण्ट-बुशर्ट का नया रूप, सफाचट दाढ़ी, मूँछ और आँखों पर नये-नये किस्म का बड़े शीशों वाला एक चश्मा। चश्मा नहीं भी हो सकता है। युवतियाँ भी यही वेश-विन्यास बेझिझक अपनाती हैं। नैसर्गिक रूप से उन्हें दाढ़ी, मूँछ तो होती नहीं अतः जब लड़के भी उसी वेश-विन्यास को अपनाते हैं तो यह फर्क करना कठिन ही हो जाता है कि इस प्रकार का व्यक्ति युवक है या युवती।

कठिनाई इतनी होती तो इसे अपरिपक्व चपलता मानकर क्षमा किया जा सकता था। परन्तु इस फैशनोन्माद ने कितनी ही समस्याओं को जन्म दिया है। न पहचान पाने के सम्बन्ध में यह चुटकुला बड़ा विख्यात है कि किसी व्यक्ति ने पास बैठे युवक का परिचय जानने के लिये उसके अधेड़ अभिभावक से पूछा कि भाई यह युवक आपके कौन होते हैं ? अधेड़ शख्स का उत्तर था—"पहले आप अपनी गल्ती सुधारें, आपने मुझे भाई साहब कहा सो मैं तो हूँ इसकी मम्मी, और रहा सवाल इसका तो यह मेरी बेटी है।"

है तो चुटकुला, पर पहचान का फर्क जताने के लिये यह काफी है और सवाल उठता है अन्य समस्याओं का तो सबसे व्यवहार में ही कठिनाई होती है कि फैशनेबुल युवक-युवतियों से बातचीत करते समय उन्हें सम्बोधित करने के लिये उपयुक्त संज्ञायें कैसे चुनी जायें ? इन छोटी-छोटी समस्याओं के साथ-साथ प्राकृतिक रूप से उठने वाली समस्याओं के स्वरूप अधिक विकट है। प्रकृति ने पुरुष और नारी को समर्थ और सशक्त शरीर देने के साथ-साथ उनकी शरीर रचना में मौलिक अन्तर बनाया है। पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों के लिये अधिक ढीले-ढाले वस्त्र पहिनने जरूरी हो जाते हैं। चलने-फिरने से लेकर नित्यकर्मों से निवृत्त होने तक का तरीका दोनों के लिये एक ही तरह से कम-ज्यादा सुविधापूर्ण है। भारत ही नहीं विदेशों में भी इसीलिये स्त्रियों के लिये अलग वेश-भूषायें प्रचलित हैं और उनका आधार अपनी-अपनी सुविधायें ही हैं। अब यदि पुरुष का ही वेश लड़कियाँ भी पहनें तो उनके लिये अस्वाभाविक रूप से कठिनाई उत्पन्न करने वाला होगा।

स्त्रियों के लिये अधिक ढीले कपड़े रखने का एक कारण यह भी है कि वे पुरुषों की अपेक्षा ज्यादा कोमल होती हैं। पुरुषों की वेषभूषा ज्यादा कसी हुई हो तो भी ज्यादा कठिनाई नहीं होती। हालांकि हमारे देश की जलवायु को दृष्टिगत रखते हुये वह भी अनुपयुक्त है परन्तु पश्चिमी देशों के सन्दर्भ में भी देखें तो वहाँ की स्त्रियों के लिये भी वही बात लागू होती है और इस अस्वाभाविकता के कारण उनके शरीर का विकास अवरुद्ध होने लगता है।

मनावैज्ञानिक भी इस बात का समर्थन करने लगे हैं कि पुरुष वेशधारी महिलाओं में स्त्रियोचित गुण लुप्त होने का भय ज्यादा रहता है। इसका कारण है कि पुरुष वेश धारण करने वाली महिलाओं में नारी की मानसिक स्थिति भी कुछ इस प्रकार की बनने लगती है कि वह अपने मूल स्वभाव, गुणों और क्षमताओं को भूलने लगती है। यह भी एक तथ्य है कि यूनीसैक्स फैशन पश्चिम में उठे नारी समानता की अन्धमान्यताओं से जन्मा है। नर और नारी की समानता एक मानने योग्य सिद्धान्त है। सभ्यता ने इस दिशा में जो भूलें की हैं उन्हें सुधारने की भी आवश्यकता है। परन्तु वह अविवेकपूर्ण न होना चाहिये। समानता की बात जहाँ तक बिवेक-सम्मत हो, वहाँ तक तो मान्य है। बन जाये तो केवल प्रतिक्रिया और प्रति स्पर्धा मात्र ही बन जाय तो औचित्य और अनौचित्य का अन्तर भूल जाता है।

यूनीसैक्स फैशन के अभिभावक बीटल्स और हिप्पी कहे जाते हैं। आधुनिक सभ्यता की जटिलताओं से सन्त्रस्त होकर जिन युवकों ने विद्रोह का प्रतिक्रियापरक रवैया अपनाया है, उन्हें भी विचारशील वर्ग की ओर से निन्दित ही कहा गया है। कुछ कुटिल और उच्छृंखल प्रवृत्ति के युवकों को छोड़कर इस प्रवृत्ति को कोई पसन्द

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भी नहीं करता। बडे-बड़े बाल और अजीब ढंग की वेशभूषा हिप्पियों का ही पर्याय समझा जाता है। पश्चिम से इस फैशन का आयात हमारे देश में उसी प्रकार हुआ जैसे कि हमने वहाँ की दूसरी फैशनों को अपनाया। भले ही हमारे युवकों में पश्चिमी युवकों की तरह कुण्ठाएँ और उच्छृंखलतायें न हों परन्तु अन्धानुकरण की प्रवृत्ति तो है।

यहाँ यह कहा जाता है कि पुराने-जमाने के लोग भी कुछ इसी तरह का वेश-विन्यास अपनाते थे। जैसे—बड़े-बड़े बाल रखते थे, कान छिदाते और आभूषण पहनते थे। स्त्री-पुरुषों के वस्त्रों में भी समानता थी। सिन्ध और पंजाब के पुरुष अभी तक सलवार पहनते हैं, जो कि स्त्रियों की ही पोशाक है। इसी तरह उत्तर भारत के कई राज्यों में स्त्रियाँ लुंगी और कमीज पहनती हैं। महाराष्ट्र में स्त्रियाँ जिस प्रकार लाँग लगाकर धोती पहनती हैं, वह बहुत कुछ पुरुषों के ढंग से मिलती हैं। सिन्ध की स्त्रियाँ भी कमीज और पाजामा पहनती हैं और पुरुषों जैसी ही दीखती हैं। केवल उनकी चोटी में ही अन्तर दिखाई देता है यूनिसैक्स के प्रचारक इन वेश-विन्यासों को भी अपनी विचारधारा को पुष्ट करने वाला बताते हैं।

यहाँ थोड़ी गम्भीरता से इन प्रतिपादनों पर विचार कर लेना चाहिये। हमारे यहाँ परम्परा से चली आ रही वेशभूषा का हवाला देते हुये यूनीसैक्स का जो समर्थन किया जाता है, वह विचार-पूर्वक देखने पर असंगत ही लगेगा। उत्तर भारत के कुछ ग्रामीण इलाके और महाराष्ट्र में स्त्रियों की वेशभूषा का पुरुष वेश से साम्य का कारण यह है कि इन क्षेत्रों में औरतों को भी मेहनत-मजदूरी के काम में लगना पड़ता है। इस कारण उन्हें अपनी वेशभूषा को कुछ इस प्रकार का रखना पड़ता है, जिससे मेहनत के कामों में कोई अड़चन न पड़े और फिर वह फैशन के तौर पर होता भी नहीं है। इसलिये उनमें फूहड़ता या बेढंगापन नहीं आता।

स्त्री-पुरुष की वेशभूषा को निर्धारण करते समय मुख्य ध्यान इस बात पर रखा गया है कि स्त्रियों की वेशभूषा पुरुषों से कुछ ढीली रहे ताकि उन्हें अपनी दिनचर्या में अड़चन न हो और ऐसी स्थिति में सभ्यता तथा रहन-सहन के तौर पर वस्त्र विशेष के प्रति आग्रह नहीं किया जा सकता। ठण्डी जलवायु के क्षेत्रों की अपेक्षा गर्म जलवायु के क्षेत्रों में अधिक खुली और ढीली वेशभूषा का कारण जलवायु-विशेष में मनुष्य की सुविधा और स्वास्थ्य का ही अधिक ध्यान रखा गया है न कि एकरूपता और साम्य पर। ठण्डे देशों में जिस प्रकार कोट-पेन्ट और नेकटाई का प्रचलन समझ में आता है, वही वेश-विन्यास गर्म देशों में अनुपयुक्त हो जाता है।

बाल बड़े या छोटे रखने के पीछे भी आग्रह विशेष को महत्त्व नहीं दिया जाना चाहिये। वे छोटे हों या बड़े इस प्रश्न के निर्णय में उलझने से पूर्व महत्त्व उनके पीछे रहने वाली परिष्कृत रुचि या अनुकरणवृत्ति का है। पिछले जमाने में जब कभी बाल बड़े रखे जाते थे तो उनके रख-रखाव और सुरुचि-सम्पन्नता पर भी ध्यान दिया जाता था जबकि अब केवल बड़े बाल, रूखे-सूखे बिना कंघा किये, बिखरे-बिखरे या उलझे हों तो भी फैशन में आ जाते हैं।

यूनीसैक्स फैशन का चित्र खींचते हुये किसी लेखक ने लिखा है—अक्सर लोग जिसे बाबूजी समझते हैं, वह बबुआइन निकल आती है और बड़े बड़े बालों वाली लड़की समझकर जिसे कण्डक्टर टिकट पेश करता है, वह कालिज का छात्र निकल आता है। बाल बढ़ाना आजकल लड़कों में एक फैशन बन गया है। दूसरी ओर लड़कियाँ बाल रखते-रखते तंग आ गई हैं। चिकन के कुर्ते, जर्सियाँ, कमीजें, पैण्ट और बेलबॉटम उन्हें ज्यादा रुचिकर लगने लगा है। उन्होंने हाथों से चूड़ियाँ निकाल दी हैं। कोल्हापुरी चप्पल और जूते पहनने लगी हैं। जो संस्कृति आ रही है स्पष्ट है कि अन्य बातों की तरह यह संस्कृति भी पश्चिम से ही आयात होने के कारण लोकप्रिय हो रही है। तो फूहड़ता, उच्छृंखल रुचि और बेतुके प्रदर्शन की भाँति यह भी अन्धानुकरण की मानसिक दासता की ही परिचायक है। जहाँ तक पिछले दिनों या अब भी किन्हीं-किन्हीं स्थानों पर प्रचलित स्त्री-पुरुष की वेशभूषा में साम्य का सवाल है, न तो उन परिस्थितियों की तरह अनुकूल है और न उन विशेषताओं से सम्पन्न ही है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ लोग स्त्री-पुरुष के बीच की खायी को कम करने का प्रतीक भी इसे समझते हैं। यहाँ प्रश्न उठता है कि लड़कियों को लड़कों के समान वस्त्र पहनाकर ही क्या हम स्त्री-पुरुष में समानता की स्थापना का दम भर सकते हैं ? क्या दूसरे क्षेत्रों में नारी को हमने बराबर अवसर दिये हैं या देने की बात सोचते हैं ? यदि नहीं, तो वेशभूषा को समान रखने का क्या अर्थ हो सकता है।

यूनीसैक्स फैशन का उन्माद ही कहा जा सकता है, जो स्वच्छन्दता, उच्छृंखलता और अनुत्तरदायित्व पूर्ण प्रवृत्ति का प्रतीक है, समाज के मार्गदर्शकों द्वारा इस पर अंकुश लगाया जाना चाहिये, नियन्त्रण किया जाना चाहिये।

वैज्ञानिक कसौटी पर फेल—आधुनिक फैशन

साइन्स डाइजेस्ट के पिछले एक लेख में अमेरिकन मेडिकल एसोसियेशन के डा. लिंडा एलेन लिखते हैं—मुझे बड़ा कौतूहल उत्पन्न हुआ जब मैंने त्वचा रोग की चिकित्सा के आँकड़ों पर दृष्टि दौड़ाते हुये पाया कि वह अधिकांश किशोरों तथा युवा-युवतियों को ही अधिक मात्रा में हो रहे हैं। यह बिल्कुल उलटी बात थी। इस विस्मय ने मुझे इस पर गम्भीरता से जाँच करने की प्रेरणा थी।

डा. एलेन की जाँच के निष्कर्ष फैशन की अन्धी दौड़ दौड़ने वालों को चौंका देने वाले हैं। उनका कहना है कि शरीर को छूती तंग पोशाकें पहनने के कारण किशोरों तथा युवक-युवतियों के शरीर में रक्त त्वचा, पपड़ीदार-त्वचा शोथ, विन्टर इच तथा खुजली जैसे त्वचा रोग तेजी से बढ़ रहे हैं, उन्होंने यह भी चेतावनी दी है कि यदि युवक-युवतियों ने तंग पोशाकें पहननी न छोड़ी, तो आगे त्वचा रोग एक भीषण समस्या बन सकती है, कुछ रोग तो असाध्य और वंशानुगत तक हो सकते हैं।

वस्त्र पहनने में स्वच्छता, सफाई और कला का ध्यान रखा जाये इसमें कुछ हानि नहीं, वरन् यह एक प्रकार से आवश्यक है पर उसके साथ ही स्वास्थ्य सामाजिकता के विवेकपूर्ण पहलू भी उपेक्षित नहीं किये जाने चाहिये। वस्त्र पहनने का उद्देश्य जहाँ शरीर के उन अंगों को ढकना है, जो लोगों की मनोवृत्ति दूषित कर सकते हैं, वहाँ यह भी ध्यान रखा जाना चाहिये कि स्वास्थ्य के नियमों का उल्लंघन न हो अर्थात् मौसम का प्रभाव सारे शरीर पर पड़ता रहना चाहिये। जिन शरीरों में ताजी हवा का स्पर्श नहीं बना रहता वे मौसम के थोड़े-से भी परिवर्तन सहन नहीं कर पाते। थोड़े-ही परिवर्तन से शरीर गड़बड़ करने लगता है। भारतीय वेष-भूषा का निर्धारण इन बातों को ध्यान में रखने के साथ-साथ कला की दृष्टि से भी उच्चकोटि का है किन्तु आज का फैशन उसे नष्ट कर देने पर तुल गया है। अब जो तंग कपड़े पहने जाते हैं, वह शरीर में इस तरह मढ़े होते हैं कि उनसे काम-अंगों के प्रति लोगों का आकर्षण बढ़ता है, लोगों में मनोविकार उत्पन्न होते हैं साथ ही उनसे स्वास्थ्य पर भी बुरा असर पड़ता है। डा. एलेन का कहना है कि इन तंग कपड़ों के यान्त्रिक दबाव और शरीर की रगड़ से ही त्वचा रोग पैदा होते हैं। यह पहलू ही कम चिन्ताजनक नहीं है।

इन दिनों आस्ट्रेलिया में प्रैक्टिस कर रहे अंगरेज डा. लैंडन कोर्टिने ने भी फैशन शास्त्र पर खोज की और बताया कि मिनी स्कर्ट तथा दूसरे अस्वाभाविक वस्त्र पहनना न केवल शारीरिक विकास में बाधा उत्पन्न करता है वरन् उसके कारण मस्तिष्क में घबराहट और स्नायुविक तनाव बढ़ता है, जो उभरती पीढ़ी के लिये एक प्रकार का अभिशाप है, इससे किशोरों का बौद्धिक तथा भाव विकास रुकता है।

उन्होंने बताया कि मिनीस्कर्ट पहनने वाली लड़कियों को सार्वजनिक स्थानों ट्रेनों, बसों में एक टाँग के ऊपर दूसरी टाँग चढ़ाकर बैठना पड़ता है। अधिक क्रासिंग के कारण एबडक्टर पेशियाँ सिकुड़ जाती हैं, जिससे कद छोटा हो जाने की सम्भावनायें बढ़ जाती हैं साथ ही इस तरह की अस्वाभाविक पोशाक पहनने वालों का अपने ही ऊपर ध्यान बना रहता है। हर आगन्तुक के प्रति उनमें घबराहट-सी होती है जो उनमें स्नायुविक दुर्बलता पैदा करती है। यदि नई पीढ़ी को इन दोषों से बचाना है तो फैशन की बाढ़ को रोकना ही पड़ेगा। उसकी आज्ञा संस्कृति ही नहीं, विज्ञान भी नहीं देता।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

फैशन का वर्तमान उथला प्रचलन अब बन्द हो

वस्तु प्रेम एक ऐसी सनक है, जो जब सवार होती है तो भूत की तरह व्यक्ति को पागल बना देती है। इन दिनों यह भूत पुरुषों और महिलाओं में समान रूप से सवार है। स्वयं को सजाने, सँवारने और आकर्षक वेश-विन्यास बनाने के लिये वे इतने चिन्तित दिखाई पड़ते हैं, मानो उनके लिये जीवन की सर्वोपरि आवश्यकता यही है और शेष प्रमुख आवश्यकतायें गौण हैं।

वर्तमान की यह मानसिकता कई सन्दर्भों में उचित नहीं कही जा सकती और समझदारी का चिन्ह तो इसे राई-रत्ती नहीं माना जा सकता। घर में आग लगी हो और कोई निश्चिन्त बैठा रहे, तो उसे क्या कहा जाय ? इतना तो निश्चित है कि कोई विचारवान् उसे बुद्धिमान नहीं ही मानेगा। बुद्धिमान समय के अनुरूप अपनी रीति-नीति निर्धारित करते और उसे क्रियान्वित करने के लिये प्राणपण से जुट जाते हैं। समय की बर्बादी वे तनिक भी बर्दाश्त नहीं कर पाते, जबकि आज सिर-फरे स्तर के लोग अपना अधिकांश समय ऐसे ही औंधे-सीधे कृत्यों में गँवाते देखे जाते हैं। बनाव-शृंगार ऐसी ही एक दुष्प्रवृत्ति है, जो इन दिनों बड़ी जोर-शोर से चल पड़ी है। इससे एक साथ कितनी ही हानियाँ होती हैं। समय की बर्बादी, स्वास्थ्य सम्बन्धी क्षति, भौंड़े प्रदर्शन से सामने वाले पर प्रतिकूल प्रभाव एवं अपने उथले आन्तरिक स्तर को स्वयं उजागर करना व अपनी क्षुद्र मनोवृत्ति का प्रमाण-परिचय देना, पर इन सबसे भी अधिक महत्त्वपूर्ण और ज्यादा बड़ी गलती है, समय की महती माँग अनदेखी करना।

डेविड कुंमले ने एक पुस्तक लिखी है—"फैशन एण्ड फीटिशिज्म।" अपनी शोधपूर्ण पुस्तक में वे लिखते हैं कि फैशन की शुरूआत जब से हुई, तब से आज के इतिहास का यदि अवलोकन करें तो पता चलेगा कि स्वयं को सुन्दर और सुगढ़ बनाने व दिखाने के लिये मनुष्य ने न जाने कितने एवं कैसे अनगढ़ कार्य किये हैं, स्वयं को खुद ही कितनी यन्त्रणायें दी हैं। यह बात और है कि ऐसी यातना किसी अन्य द्वारा अन्य को दी जाती, तो समाज इसे अमानवीय कहता है, पर मानवीय भी इसे कैसे माना जाय कि मनुष्य लिबास के नाम पर, साज-सज्जा के नाम पर खुद ही खुद को प्रताड़ित करे, सन्त्रास दे, अपनी और समाज की प्रगति को अवरुद्ध करे। वे कहते हैं कि व्यक्ति इस प्रकार अपना और समाज का कितना अहित करता है, शायद वह नहीं जानता। कई जानते हैं, तो भी उसकी उपेक्षा कर जाते हैं। यही उनकी सबसे बड़ी भूल है।

इसी आशय का मन्तव्य प्रकट करते हुये लियोनार्ड एस. गोर्डन ने अपनी रचना "कस्ट्यूम एण्ड कस्टम" में कहा है कि विश्व में जितना समय व साधन आत्म-प्रदर्शन एवं प्रथा-परम्पराओं के आयोजन में खर्च किया जाता है, यदि उसका पाँचवाँ हिस्सा भी समाजोत्थान में लगा दिया जाये, तो शायद आज संसार कई दशक आगे पहुँच जाता, पर अब तक ऐसा नहीं हो सका। सम्भवतः आगामी समय में यह समझदारी आ जाये, तो इसे सम्पूर्ण समाज और संसार का सौभाग्य ही कहना चाहिये। उनके अनुसार वर्तमान में इस रूप-सज्जा ने समाज में जितनी कुत्सा भड़कायी है, सम्भवतः उतना दोष इसके सहयोगी तत्वों का नहीं है, पर उस अपराध से वे बिल्कुल बच भी कैसे सकते हैं, जिसका दुष्परिणाम इन दिनों विघातक विष-वृक्ष की तरह अपनी मजबूत जड़ें जमाये दिखाई पड़ता है। चोर के साथ रहने वाला व्यक्ति चोर न भी हो तो भी उस आकर्षण से दूसरों के मनों में अश्लीलता उभारने और उसको उसी मार्ग पर घसीट ले चलने का प्रच्छन्न अपराधी तो प्रत्यक्ष रूप में वह बन ही जाता है।

इस देहाकर्षण के इतिहास का उल्लेख करते हुये उनने विभिन्न देशों में प्रचलित भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों का बड़ा मार्मिक चित्र प्रस्तुत किया है। चीनी महिलाओं का वर्णन करते हुये वे लिखते हैं कि जितना आगे इस क्षेत्र में यहाँ की नारियाँ हैं, उतना शायद विश्व के अन्य देशों की स्त्रियाँ नहीं। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि एक फैशन के कुछ पुराना पड़ते ही वे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसे त्यागकर कोई अन्य आकर्षक और आधुनिक पोशाक अपना लेती हैं। यह सिलसिला शुरू से अब तक चला ही आ रहा है। जब पहले-पहल चीन में इसकी शुरूआत हुई, तो वहाँ की महिलाओं ने चलने का ढंग आकर्षक बनाने व दूसरों का ध्यान अपनी ओर खींचने व लुभाने के लिये पैरों में रस्सी कसना आरम्भ किया। जब इतने से भी उन्हें सन्तोष नहीं मिला तो शरीर के अन्य अवयवों पर भी इसी प्रकार के प्रयोग आरम्भ किये जैसे उरोजों को उभारना, ऊँची ऐड़ी की तंग जूतियाँ पहनना, बालों को चित्र-विचित्र ढंग से सँवारना आदि। उनके अनुसार जब स्त्रियों ने तरह-तरह की लुभावनी वेश-भूषा बनानी आरम्भ की, तो पुरुषों ने स्वयं को अपमानित महसूस किया और उनने भी इस क्षेत्र में कदम बढ़ाया और आज स्थिति यह है कि दोनों ही इस क्षेत्र में एक-दूसरे से आगे निकल जाने की प्रतियोगिता करते देखे जा सकते हैं।

यह प्रतिस्पर्द्धा अब मात्र चीन तक ही सीमित होकर नहीं रह गई है, वरन् पूरे विश्व में फैल चुकी है। पिछले दिनों तक भारत में "ब्यूटी पार्लर" शब्द से सिर्फ महिलाओं के साज-शृंगार वाली दुकान का बोध होता था, पर अब ऐसी बात नहीं रही। देश के बड़े-बड़े शहरों में इन दिनों कई एक "पुरुष ब्यूटी पार्लर" की दुकानें भी खुल चुकी हैं, जिनमें पुरुषों की साज-सज्जा की पूरी व्यवस्था है। उच्च वर्गीय एवं उच्च मध्यम वर्गीय श्रेणी के युवक इन प्रसाधन कक्षों में जाकर प्रायः प्रतिदिन ढेरों पैसा और समय गँवा आते हैं। इसका प्रभाव निम्न वर्गीय युवकों पर पड़ना स्वाभाविक है। वे भी इनकी नकल उतारते हैं। भले ही यह नकल असल जैसी न हो, किन्तु फिर भी इसमें धन व समय का व्यय तो होता ही है। परिणाम कुछ ही समय में उनके सामने आने लगता है। वे दरिद्रता के बोझ तले और भी दबने लगते हैं। ऐसी स्थिति में उनसे कुछ करते-धरते बन नहीं पड़ता और जल्द ही हाथ-पाँव फूलने लगते हैं। यहीं से उनके भटकाव का सिलसिला शुरू होता है। फैशन को वे छोड़ नहीं पाते और उसमें आने वाले खर्च को बर्दाश्त कर पाना उनकी सामर्थ्य के बाहर की बात होती है। ऐसे में उपाय एक ही शेष रह जाता है—कोई अनुचित तरीका अपनाया जाये। यहीं से अपराधी वृत्तियाँ पनपतीं और समाज में अपनी जड़ें जमानी आरम्भ करती हैं। यह फैशन का सबसे बड़ा अभिशाप है, जो नई पीढ़ी को पतन की ओर धकेलता है।

अमेरिका में प्रतिवर्ष १७ जुलाई को "फादर्स डे" मनाया जाता है। इस अवसर पर वहाँ पुत्र, पुत्रियाँ, मातायें एवं पत्नियाँ अपने परिवार के सबसे बुजुर्ग अभिभावक एवं पिता को उपहार स्वरूप रंग-बिरंगे नेक-टाई भेंट करते हैं। नेक-टाई ही क्यों ? इस सम्बन्ध में वहाँ के स्त्री समाज का विचार है कि इससे पुरुषों को समाज में ऊँचा स्थान मिलता और गर्व गौरव बढ़ता है, किन्तु जहाँ तक इसकी उपयोगिता का सवाल है, वह नगण्य जितनी ही है। उल्टे उससे स्वास्थ्य सम्बन्धी हानि ही होती है। गर्दन में कसी रहने के कारण रक्त प्रवाह में अवरोध उत्पन्न होता है और उस भाग को धूप-हवा से वंचित रहना पड़ता है। कई अवसरों पर तो यह जान की आफत बन जाती है। यदि किसी शत्रु से कहा-सुनी हो जाय तो उनके प्रसंगों में इसके कारण जान जाने का खतरा भी बना रहता है और प्रतिपक्षी सरलतापूर्वक सामने वाले पर हावी हो सकता है। फिर भी नेकटाई और फादर्स-डे का अमरिका में परस्पर गहरा लगाव है और हर वर्ष इसे धूम-धाम से मनाया जाता है।

किन्तु पुरुष प्रधान समाज में "फादर्स-डे" के दिन अब लदने वाले हैं और आगे ऐसा समय आ रहा है, जिसमें "मदर्स-डे" (मातृ दिवस) ही मनाया जाने वाला है, पर उक्त मदर्स-डे का स्वरूप वर्तमान के फादर्स-डे जैसा नहीं होगा। इसमें भेंट देने-न-देने की शर्त तो स्वैच्छिक होगी, पर इस एक अनुबन्ध को पूरा करने पर विशेष बल दिया जायेगा कि उस दिन नारी का सम्मान किया जाय, उसे प्रोत्साहन और प्रश्रय दिया जाय, ताकि आज की पद-दलित नारी तब उत्कर्ष की उच्च भूमिका में पहुँच सके और और वह सब कर दिखा सके, जो इन दिनों पुरुषों के पराक्रम और पुरुषार्थ का हिस्सा बना हुआ है। तब फैशन के बहुमूल्य रत्न के रूप में "यही" समाज को अमूल्य उपहार होगा,

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जिसे उसे हर प्रकार स्वीकारना और अपनाना ही पड़ेगा। फैशन का यही स्वरूप मानवी समाज के लिये सर्वोत्कृष्ट है। अंगीकार भी इसे ही किया जाना चाहिये।

स्वास्थ्य पर कपड़ों का प्रभाव

यों तो मनुष्य का प्रत्येक कार्य इसलिये होता है कि वह स्वस्थ रहे और सुखी रहे और रात-दिन अपने उस लक्ष्य पर बढ़ता रहे जिसे उसने निश्चित कर रखा है।

स्वास्थ्य और सुख दोनों एक-दूसरे पर निर्भर हैं। स्वास्थ्य के बिना सुख नहीं मिलता और सुख के बिना स्वास्थ्य कैसा ?

स्वास्थ्य के लिये खाना-पहनना एक आवश्यक बात मानी जाती है। अन्न और वस्त्र का प्रभाव सिर्फ शरीर पर ही पड़ता हो ऐसा नहीं, मन पर भी पड़ता है और वास्तविक सुख और स्वास्थ्य का सम्बन्ध शरीर की अपेक्षा मन से अधिक है। मन स्वस्थ हो तो शरीर भी स्वस्थ रहता है और सुख तो शरीर को नहीं, मन को ही होता है लेकिन मन को स्वस्थ रखने के लिये शरीर को स्वस्थ रखना भी आवश्यक हो जाता है।

स्वास्थ्य का सम्बन्ध प्रकृति से है। जो व्यक्ति जितना अधिक प्रकृति के सम्पर्क में रहता है, अपने आपको प्राकृतिक बनाता है उतना अधिक स्वस्थ रहता है।

प्रकृति ने शरीर को जिस रूप में बनाया है, उसी रूप में यदि उसे रखा जावे तो वह प्रकृति के अनुरूप होने के कारण अधिक स्वस्थ रहता है, लेकिन यदि उसे पहना-ओढ़ाकर प्रकृति की गर्मी सर्दी की मात्रा से उसकी गर्मी-सर्दी की मात्रा घटा-बढ़ा दें तो शरीर में अनेकों विकार समा जाते हैं। विकार का सबसे बड़ा लक्षण तो यही है कि शरीर प्रकृतिदत्त शीत, ऊष्ण को सहन न कर सके।

गर्मी-सर्दी का अनुभव त्वक् इन्द्रिय से होता है। त्वक् इन्द्रिय-चमड़ा-वायु के आघातों से गर्मी तथा सर्दी का अनुभव करता है। अनुभव की मात्रा का सम्बन्ध शरीर की भीतरी गर्मी व सर्दी से होता है। शरीर की भीतरी गर्मी से यदि बाहर की गर्मी अधिक होती है तो वह गर्मी का अनुभव करता है और यदि बाहर की गर्मी कम होती है तो ठण्डक का अनुभव करता है। गर्मी और सर्दी का यही रहस्य है। शरीर के अन्दर की गर्मी का सम्बन्ध रक्त से है और रक्त का सम्बन्ध खाद्य पदार्थों से है। इसलिये जो अब मानव के लिये जितने अधिक प्राकृतिक एवं स्वाभाविक होते हैं, वे गर्मी को उसी अनुपात से प्रकृति के उपयुक्त बनाये रखते हैं। अप्राकृतिक खाद्य पदार्थ प्रकृति के अनुकूल रखने में समर्थ नहीं होते। प्रकृति के विरुद्ध चलना ही तो विकारों को निमन्त्रण देना है। इसलिये स्वाभाविक खाद्य का ही उपयोग करना चाहिये।

जब स्वाभाविक खाद्य की कमी हो जाती है, तब शरीर भी स्वाभाविक शक्ति सम्पन्न नहीं होता, अशक्ति बढ़ने लगती है और अपनी उस शान्ति के लिये जिसे प्राकृतिक ढंग से रहने पर अक्षुण्ण रखा जा सकता था, मनुष्य अप्राकृतिक बन्धन में पड़ जाता है। ठण्ड और गरमी के नाम पर कपड़ों के भार को शरीर पर लादना आरम्भ कर देता है।

यह बोझ तब और बढ़ जाता है जब मनुष्य शरीर और ऋतुचर्या को भूलकर दिखावे की दुनियां में पैर रखता है क्योंकि मनुष्य अपनी सम्पत्ति और अपने गौरव का प्रदर्शन कभी-कभी क्या, प्रायः खाने और पहनने से ही करता है। यह सारी चीजें फैशन या प्रदर्शन का रूप धारण करके मनुष्य को प्रकृति से एकदम अलग कर देती हैं। एक-दो उदाहरण लीजिये। तेज गरमी पड़ रही है, शरीर को कपड़े सुहाते नहीं हैं फिर भी चूड़ीदार पाजामा, बनियान, कुरता, जाकट और कोट पहनकर बाबू साहब चले जा रहे हैं। पसीना चौधारा बह रहा है। जब लौटकर वापस आते हैं, सारे कपड़े उतार फेंकते हैं, गर्मी जो लग रही है। अब बताइये कि यदि ये सब न पहने जाते तो क्या बिगड़ जाता। परन्तु नहीं फैशन जो है। नाम जो धरा जायेगा, लोग उँगलियाँ जो उठावेंगे। ये सब क्या है आत्मा की कमजोरी का चिन्ह। तो प्रकृति से अलग होने पर शरीर और मन ही कमज़ोर होता है ऐसा नहीं है, आत्मा भी कमजोर हो जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कपड़े का एकमात्र उद्देश्य शरीर रक्षा है, प्राचीन भारत के भारतीय इस बात को समझते थे। हमें भारत के प्राचीन इतिहास में कहीं सिले हुये कपड़ों का विवरण नहीं मिलता है। गृहस्थ या राजपरिवार के लोग धोती, दुपट्टा का उपयोग करते थे। ब्रह्मचारी वस्त्र पहनते थे इसका कोई उल्लेख नहीं। उनकी मौंजी और मेखला का ही वर्णन मिलता है। यह तो लँगोटी हुई। पेड़ की छाल भोजपत्र जैसी या मूँज का कोई वस्त्र पर सारा शरीर वस्त्र विहीन। वानप्रस्थी और संन्यासी भी लँगोटी के अतिरिक्त और कुछ नहीं रखते थे। वे सबके सब ही स्वस्थ, सहिष्णु और सुखी होते थे। मन बड़े विशाल, आत्मा पूर्ण उन्नत। और आज भोजन वस्त्र के, फैशन और स्वाद के दास हम भारतवासी। एक बार मुकाबला तो कीजिये।

आज इस सबको छोड़ने की सिफारिश तो नहीं की जा सकती लेकिन खाने और कपड़े का लक्ष्य शरीर रक्षा है, इसलिये खाते और पहनते समय लक्ष्य की सामने रखने की बात तो कही ही जा सकती है। शरीर रक्षा के लिये जितने कपड़े चाहिये, जैसे चाहिये उतने और वैसे ही पहनने चाहिये और फैशन को तिलांजलि दे देनी चाहिये।

कपड़े हों तो ढीले जिसमें शरीर को सूर्य का ताप, वायु भली-भाँति मिल सके। कपड़ों से शरीर को कैद करने की आवश्यकता नहीं है। शरीर जब गर्मी सरदी सहने के योग्य हो जावे और उसे उनसे बचाने की आवश्यकता अनुभव न हो तभी समझना चाहिये कि मनुष्य प्रकृति के अत्यन्त समीप है और अब उसने विकारों पर विजय प्राप्त कर ली है।

बस, प्रकृति का सामीप्य लाभ यदि करना है तो यह कभी न भूलना चाहिये कि मनुष्य जीवन कपड़े के लिये नहीं है किन्तु कपड़े मनुष्य के लिये हैं।

वस्त्रों की स्वच्छता व रख—रखाव !

वस्त्रों के रख-रखाव का ध्यान सभ्यता की आवश्यक निशानी है। कपड़ें के टिकाऊपन की जाँच-परख तो कपड़ा खरीदते समय हीं की जा सकती है, पर बाद में भी खरीदे कपड़े की समुचित देखभाल उनके टिकाऊपन को बढ़ाती है।

बनियान, चड्डी, पेटीकोट, ब्लाउज जैसे कपड़ों को और बच्चों की चड्डी-बनियान आदि को साफ रखने का ध्यान कम गृहिणियाँ ही देती है जबकि स्वास्थ्य-रक्षा के लिये यह अत्यावश्यक है। जिन कपड़ों का शरीर से सीधा स्पर्श होता है, उनकी स्वच्छता और उनके गुण-दोषों का शरीर पर अधिक प्रभाव पड़ता है। खादी के या सूती कपड़े इस उपयोग हेतु अधिक लाभकारी होते हैं, उनसे मन में सौम्यता रहती है।

स्वच्छ कपड़े शरीर और मन में आह्लादकारी स्फूर्ति उत्पन्न करते हैं, अतः कपड़ों को कभी भी गन्दा नहीं होने देना चाहिये। अपने नित्य के उपयोग के कपड़े तो स्वयं ही साफ कर लेने चाहिये। इससे गृहिणी का कार्यभार भी कुछ हल्का हो जाता है और गृहिणी को समय न मिल पाया, तो कपड़े गन्दे ही रहे आयें—यह स्थिति भी नहीं आ पाती। अन्यथा उस स्थिति में व्यर्थ की झल्लाहट व खीझ मनःस्थिति को कुछ देर के लिये हिलाकर रख देती है।

सदा आवश्यकता भर के कपड़े ही बाहर निकालने चाहिये। अधिक कपड़े सन्दूक में ठीक से तह करके रख देने चाहिये।

नित्यप्रति पहने जाने वाले कपड़े भी धुलाई के बाद सूख जाने पर अच्छी तरह तह करके निश्चित स्थान में रखना चाहिये, ताकि आवश्यकता के समय वे सरलता से उपलब्ध हो सकें। धुलाई के पूर्व ही फटे कपड़ों की मरम्मत कर लेनी चाहिये तथा धुलाई के समय दाग-धब्बे भली-भाँति छुड़ा देना चाहिये। यों, उत्तम यह है कि कपड़े पर धब्बा पड़ते ही उसे तत्काल छुड़ाने की व्यवस्था की जाये। बटन भी टूटने के बाद शीघ्र ही टाँक लिये जायें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऊनी और रेशमी कपड़े, प्रयोग का समय बीतने के बाद, स्वच्छ कर नीम की पत्ती या फिनायल की गोलियों के साथ रख देना चाहिये।

सूती तथा ऊनी कपड़े अलग-अलग ही धोये जाते हैं। उनके धोने की विधियाँ भी भिन्न होती हैं। ऊनी कपड़े सर्फ आदि से धोने में सहूलियत रहती है। उन्हें अधिक ताकत लगाकर नहीं धोते-निचोड़ते, अन्यथा रेशे फैलकर ढीले हो जाते हैं। ऊनी कपड़े, अधिक निचोड़ते भी नहीं। पानी निथारकर सूखने को टाँग देते हैं। उन पर अधिक चटकीली धूप भी हानिकर प्रभाव डालती है। अतः छाया में ही सुखाते हैं।

सफेद तथा रंगीन कपड़े एक साथ नहीं धोये जाते अन्यथा रंगीन कपड़ों के रंग छूटकर सफेद कपड़ों में दाग के रूप में जहाँ-तहाँ फैल जाते हैं।

सूती कपड़ों को पछाटकर धोने की पुरानी प्रथा अब वैसे भी समाप्त हो चली है क्योंकि उससे कपड़ों की उमर तेजी से घटती हैं। धोबी को दिये जाने वाले कपड़े भी इसीलिये शीघ्र जीर्ण-शीर्ण हो जाते हैं, क्योंकि एक तो धोबी सोड़ा आदि तेज क्षार मिले जल में कपड़ों को खूब खौलाते हैं। दूसरे उन्हें पटक-पटक कर उनका कचूमर निकाल डालते हैं। ऐसे में कपड़ों का दो-चार बार में दम तोड़ देना स्वाभाविक ही है।

इसीलिये कपड़े स्वयं ही घर पर धोना, हर तरह से लाभकारी रहता है। घर पर धुलने वाले कपड़े सदा अधिक दिनों चलते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से विचार करें तो धोबी से कपड़े कभी धुलवाने ही नहीं चाहिये। धोबी के पास तमाम लोगों के कपड़े आते हैं। इनमें तरह-तरह के रोगाणुओं का भी सूक्ष्म अस्तित्व रह सकता है, जो दूसरे कपड़ों में भी अपना प्रभाव फैला सकता है। किन्तु इससे भी भयानक बात है—वह पानी, जिसमें अक्सर धोबी कपड़े धोते हैं। शहरों में विशेषकर धोबी ऐसे स्थानों में कपड़े धोते हैं, जहाँ का जल अत्यन्त दूषित व हानिकारक होता है। उस रोगाणु-पूरित गन्दे पानी से धुले कपड़ों को पहनना प्रच्छन्न गन्दगी धारण करना ही कहा जायेगा। स्वयं के द्वारा कपड़े धोने की प्रवृत्ति होने पर ऐसी स्थितियों से सहज ही मुक्त रहा जा सकता है। इसके लिये आवश्यक मात्र इतना ही है कि घर के प्रत्येक समर्थ सदस्य को अपने कपड़े स्वयं धोने में रुचि हो और भारी वजनदार कपड़ों को किसी निर्धारित दिन को मिल-जुलकर धो लिया जाये। घरेलू नौकर से यदि कपड़े धुलवाये जायें तो ऐसा अपनी देखरेख में ही किया जाये।

धोबी को कपड़े धोने हेतु देने में शहरों में एक और खतरा है। कई धोबी अपने लड़के-भतीजों या दूसरे लोगों को धुले कपड़े उधार भी देते रहते हैं, जिन्हें वे लोग पहनकर सैर-सपाटा करते, घूमते-टहलते हैं। ऐसा क्रम से क्रिया जाता रहता है और जिसके कपड़े हैं, उसे पता भी नहीं चल पाता क्योंकि वह तो अपने कपड़े धोबी के पास धुलने को पड़े हुये समझता है। चालाक धोबी थोड़े पैसों के लोभ में यह धन्धा चलाते रहते हैं। ऐसी स्थिति में उन उधारी कपड़ा पहनने वालों के शारीरिक संसर्ग में कपड़ों पर पड़ने वाले दूषित प्रभाव—रोगाणुओं आदि से कपड़े के वास्तविक स्वामी को हानि पहुँचने का खतरा बना रहता है।

घर में कपड़े धोने में एक कठिनाई यह आ सकती है कि दाग-धब्बों को कैसे छुड़ाया जाये इस हेतु ये जानकारियाँ उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं—

चाय के दाग मिटाने हेतु पहले पोटेशियम परमेगनेट लगायें, बाद में आक्जेलिक एसिड। सूती कपड़ों के चाय के दाग सुहागा मिले पानी से भी छूट जाते हैं। २०० ग्राम पानी में १ ग्राम सुहागा होना चाहिये अर्थात् २ किलो में १० ग्राम। घोल गरम हो।

यदि कम्बल पर चाय या काफी के दाग पड़ जायें तो दाग के स्थान के नीचे एक चपटी कटोरी या प्लेट रखकर ऊपरी भाग से ग्लिसरीन डालें और उँगली से धब्बे को रगड़ें। रगड़ते-रगड़ते ग्लिसरीन सूख जाये तो थोड़ी और डाल लें। फिर कम्बल उस दिन वैसे ही कहीं टाँग दें। दूसरे दिन धब्बे वाले भोग को धो डालें।

सूती वस्त्र में हल्दी के धब्बे लग जायें तो उन्हें साबुन मिले पानी में धोकर खुली धूप में डाल दें। सिल्क तथा ऊनी वस्त्रों में लगे हल्दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

के दाग छुड़ाने हेतु उन्हें पहले पोटेशियम परमेगनेट तथा अमोनिया के घोल में डुबोकर धोना होता है।

चाय, काफी, चाकलेट आदि के दाग नीबे और नमक रगड़ने से छूट जाते हैं। चिकनाई का दाग पेट्रोल से छूट जाता है या फिर कार्बन टेट्राक्लोराइड का प्रयोग कर फिर साबुन मिले गरम पानी से धोयें अथवा अमोनिया-मिश्रित पानी में दाग वाला हिस्सा भिगोकर उस पर कागज रखकर इस्त्री कर लें। ग्रीस, तेल आदि के दाग मैग्नेशियम कार्बोनेट से भी छूट सकते हैं। उसे डालकर रगड़ें। दो-चार बार ऐसा कर फिर ब्रुश से कार्बोनेट को झाड़कर साफ कर दें। रेशमी कपड़ों से चिकनाई के धब्बे छुड़ाने हों तो दाग वाले स्थान के नीचे ऊनी कपड़ा या कई तह वाला सूती कपड़ा रखकर पैट्रोल या बैंजीनी दाग पर लगायें। सूखने पर ब्रुश से झाड़ लें। रेशमी साड़ी हो तो उसे मेज पर फैलाकर टेलकम पाउडर अच्छी तरह छिड़क देवें। १५-२० मिनट बाद किसी साफ कपड़े से पाउडर हटा दें। यह क्रिया कई बार करें, जब तक कि चिकनाई का दाग हट न जाये। इस क्रिया से मशीनी-तेल की चिकनाई भी छूट सकती है। नीलगिरि का तेल भी चिकनाई के दाग छुड़ा देता है। पान का धब्बा—कच्चे दूध में फुलाने से छूट जाता है।

पसीने के धब्बे छुड़ाने के लिये उसे एक घण्टे तक स्प्रिट में भिगोये रखें, फिर साबुन मिले गरम पानी में थोड़ा अमोनिया मिलाकर कपड़ा रगड़ दें। पसीने के दाग पोटेशियम-परमेंगनेट अथवा हाइड्रोजन पैराक्साइड के घोल में डालने से भी छूट जाते हैं। वस्त्र को धूप में पड़े रहने देने के बाद भी साबुन से धोने पर पसीने के दाग छूट जाते हैं।

स्याही के दाग दही या ब्लीचिंग पाउडर से छूट जाते हैं। आमचूर घोलकर दाग में लगाने से या आलू, अमरूद, टमाटर काटकर मलने से और बाद में साबुन से धो लेने से भी स्याही के दाग छूट जाते हैं। स्प्रिट से डुबोने से या अमोनिया के ठण्डे घोल में डुबोने से लाल स्याही के दाग छूट जाते हैं। रेशमी कपड़े में स्याही का दाग लग जाये, तो पहले उसे कुछ देर तारपीन के तेल में डुबो रखें, फिर साबुन से धो लें।

फलों के दाग सुहागे का चूर्ण मलकर ऊपर से गरम पानी डालकर धोये जा सकते हैं अथवा पहले गरम पानी से धोकर फिर उसमें ग्लिसरीन की दो-चार बूँद डालकर मलें और ठण्डे पानी से धो डालें। तीन घण्टे बाद सिरके से या आक्जेलिक एसिड से धो डालें।

जंग लगे दाग-धब्बे छुड़ाने के लिये नीबू थोड़ा गरम कर रगड़ें, फिर नमक फैला दें। इसके बाद कपड़ा देर तक धूप में पड़ा रहने दें। ऐसा दो-तीन बार करें। या फिर आक्जेलिक एसिड के दानों की पोटली बनाकर पानी में डुबो-डुबोकर धब्बे पर रगड़ें। फिर थोड़ी देर धूप लगने दें। ऐसा कई बार करने पर दाग छूट जायेगा। तब वस्त्र को पानी में अच्छी तरह धोलें, उस पर से एसिड का असर खत्म हो जाये।

मेंहदी के दाग छुड़ाने के लिये उबले दूध में दाग वाला हिस्सा आधा घण्टे डुबोये रखें। बाद में साफ पानी से धो डालें या फिर कच्चे आलू के टुकड़े दाग वाले हिस्से पर रगड़ें, फिर साफ पानी से धो डालें।

तारकोल का दाग छुड़ाने के लिये पेट्रोल, तारपीन का तेल आदि से रगड़कर बाद में कपड़ा साबुन से धो डालें। कपड़ा रेशमी हो तो पैट्रोल या बेन्जीन का प्रयोग करें। सूती कपड़े का दाग छुड़ाने के लिये दाग वाले हिस्से के नीचे सोख्ता कागज रखें और ऊपर से तारपीन का तेल रुई में लगाकर रगड़ें। तत्पश्चात् स्प्रिट से धो डालें। मिट्टी के तेल या नीलगिरि तेल के प्रयोग से भी तारकोल का दाग छूट जाता है।

काजल का दाग छुड़ाने के लिय दाग वाले भाग को मिट्टी के तेल में भिगोकर कुछ देर बाद साबुन और गरम पानी से धो डालें।

पक्के रंगों का दाग छुड़ाना कठिन होता है। अच्छा यह होता है कि उसी रंग से पूरा कपड़ा ही रंग दिया जाये। यों, ब्लीचिंग पाउडर का घोल प्रयोग में लाया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अमोनिया तथा आक्जेलिक एसिड के हल्के घोल से धोने पर भी लाभ सम्भव है।

वार्निश के दाग छुड़ाने के लिये अमोनिया और तारपीन बराबर मात्रा में लें। दाग वाला हिस्सा उसमें भिगोयें। थोड़ी देर बाद साबुन से धो डालें। इन दागों को छुड़ाने के लिये अल्कोहल तथा मैथिलेटेड स्प्रिट का भी प्रयोग किया जाता है।

खून के धब्बे छुड़ाने के लिये उस हिस्से को कुछ घण्टे दूध में डुबो रखें, फिर धो लें। कपड़ा धोने लायक न हो तो खून लगते ही ठण्डे पानी में रुई भिगोकर स्पंज कर दें। या फिर दाग वाले हिस्से में स्टार्च का पेस्ट फैलाकर सुखाकर ब्रुश से रगड़ लें।

धोने योग्य कपड़ा हो तो आधा किलो पानी में एक चम्मच नमक मिलाकर कपड़ा धोने से रक्त के दाग छूट जाते हैं या गुनगुने पानी में अमोनिया की कुछ बूँदें डालकर कपड़ा थोड़ी देर डुबो रखें, फिर साफ पानी से धो लें। जैतून का तेल दाग पर मलकर फिर पानी से धोने से रक्त के दाग छूट जाते हैं। यदि इस पर भी शेष रह जाये तो तीन-चार बूँद अमोनिया पानी में घोलकर दाग वाले हिस्से को उसमें डुबो रखें, फिर धूप में सुखा लें।

इन बातों का ध्यान रखकर कपड़े के दाग छुड़ाये जा सकते हैं। दाग छुड़ाना भी कपड़ों के रख-रखाव का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।

कपड़ों की धुलाई करने से पहले आवश्यक मात्रा में नील, टिनोपाल, कलफ जैसी वस्तुओं की व्यवस्था करने पर धुलाई का कार्य प्रारम्भ करना चाहिये। सभी कपड़ों को पानी में भिगोने के पूर्व उनका वर्गीकरण किया जाना आवश्यक है ताकि अलग-अलग कपड़ों की आवश्यकता के अनुरूप धुलाई कर सकें। यह विभाजन कुछ इस तरह करना अच्छा होता है। रंगों के आधार पर कच्चे और पक्के रंग के कपड़े अलग रख लें क्योंकि कच्चे रंग दूसरे कपड़ों को भी खराबकर देंगे। सफेद कपड़ों में भी कोमल और पतले कपड़ों का अलग और साधारण तथा मोटे कपड़ों को अलग-अलग धोयें। अधिक मैले तथा कम मैले कपड़ों को भी एक साथ धोना उचित नहीं होता। जहाँ कोमल तथा महीन कपड़ों को सर्फ जैसे पाउडर से धो सकते है, वहीं मोटे कपड़ों को साबुन अथवा सोड़ा से धोना अच्छा होता है। अधिक मैले कपड़े खौला लेना उत्तम होता है।

धुलाई से पूर्व एक निगाह कपड़ों के ऊपर डाल लेना चाहिये कि उनके भीतर कोई ऐसी वस्तु न रह जाये जो खराब होने लायक हो। इसके पश्चात् सभी कपड़ों को पानी में डुबा देना चाहिये। नायलोन तथा रेशम के कपड़ों को धोने के लिये हल्का गर्म पानी में वाशिंग पाउडर या अच्छा साबुन का घोल बना लें। इन्हें खींचकर अथवा रगड़कर धोना हानिकारक होता है। इन्हें निचोड़ने की आवश्यकता नहीं है, वैसे ही तार अथवा हैंगर पर लटका दें। एक बात ध्यान देने की यह है कि सभी कपड़ों को धोने के बाद साफ पानी में अच्छी तरह धोकर साबुन, पाउडर अथवा सोड़ा का अंश निकाल दें। ऐसे कपड़ों को जिनमें नील, टिनोपाल अथवा कलफ लगाना हो, साधारण निचोड़कर उनको घोल में डालना चाहिये। नील का घोल बनाते समय यह ध्यान दें कि उसे पानी में न डालें। ऐसा करने से कपड़ों में धब्बे पड़ सकते हैं। एक कपड़ा लेकर नील की पोटली बनावें तथा धीरे-धीरे पानी भर बर्तन में हिलायें। जब आवश्यक नीलापन आ जाये तब हिलाना बन्द कर अलग कर लें। ऐसे घोल में कपड़ों पर समान नील लगता है तथा धब्बे भी नहीं पड़ते। टिनोपाल में डालने वाले कपड़ों को साधारण निचोड़कर उसके घोल में १५ मिनट तक पड़े रहने दें। बाद में निकालकर बिना निचोड़े ही सूखने डाल दें। ऐसे कपड़ों को जो हैंगर अथवा तार में सूखने डालने पर लटककर फैल सकते हों, किसी खाट, तखत अथवा मेज पर दूसरे कपड़े बिछाकर सूखने दें। कपड़ों को खुली धूप में सुखाना अच्छा होता है। इससे उसमें छिपे छोटे-छोटे कीटाणु तक मर जाते हैं। परन्तु रंगीन कपड़ों को छाया में ही सुखावें अन्यथा रंग फीका पड़ सकता है। कपड़ों को ऐसी सुरक्षित जगह में सुखायें जहाँ किसी जानवर की पहुँच न हो। यह भी ध्यान रखें कि चिड़ियाँ उस पर बीट न करने पायें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सूखे हुये कपड़ों को निकालते समय थोड़ी सावधानी रखनी चाहिये। अपितु जल्दी-जल्दी निकालने में तार में चिपका हुआ अंश फट भी सकता है। निकालने के बाद कपड़ों को इस्त्री करने के लिये एक जगह एकत्र कर लें।

इस्त्री किये गये कपड़ों को तुरन्त भीतर न रखकर कुछ देर के लिये बाहर ही रखे रहने दें। इससे एक लाभ यह होगा कि बची हुई नमी निकल जायेगी। तत्पश्चात् कपड़ों को संम्भालकर यथास्थान रख दें।

इन छोटी-छोटी बातों पर ध्यान रखने से कपड़े हमारी शान में चार-चाँद लगा देते हैं। अधिक दिन चलते तथा नये बने रहते हैं।

वस्त्रों की धुलाई क्यों, किससे और कैसे ?

स्वास्थ्य ठीक रखने के लिये वस्त्रों की सफाई आवश्यक है। सामान्यतः प्रत्येक व्यक्ति को कपड़ों की धुलाई करनी पड़ती है। कपड़े धोने के लिये साबुन, सर्फ आदि काम में लाते हैं। निर्धन व्यक्ति रेह मिट्टी (सोडियम कार्बोनेट मिली हुई मिट्टी) का भी उपयोग कर सकते हैं। अगर कुछ भी न मिले तो लकड़ी की राख छानकर पानी में घोलकर प्रयोग करने से भी कुछ सफाई हो जाती है। सामान्यतः कपड़ों को चार भागों में बाँट सकते हैं—(१) सूती कपड़े (२) रेशमी कपड़े (३) ऊनी कपड़े (४) टेरीलीन, टेरीकोट के कपड़े। कपड़ों को धोते समय निम्न बातें ध्यान में रखनी चाहिये—

(१) दाग वाले कपड़ों को अलग कर दें।

(२) रंगीन कपड़ों को अलग कर देना चाहिये।

(३) कपड़ों में आलपीन, बकुआ या सुई आदि लगी हो उसे निकाल देना चाहिये।

(४) कपड़ों की जेबों को भली-भाँति देख लेना चाहिये।

सूती कपड़ों की धुलाई

कपड़ों को धोने से पहले कपड़े को झाड़कर पानी में भिगो देना चाहिये, इससे कपड़ों का मैल फूल जाता है। फिर साबुन या धोने वाले सोड़ा या रेह लगाकर थोड़े समय के लिये रख दें। यदि गुनगुना पानी रहे तो अधिक अच्छा रहता है। इसमें कपड़ा ज्यादा भी नहीं रगड़ना पड़ता है। साबुन लगे हुये कपड़ों को खूब रगड़कर धोना चाहिये। कालर, आस्तीन, पाजामा के पायचे या जहाँ गन्दा अधिक हो वहाँ सर्फ, साबुन या रेह जिससे धोया जाय उसे लगाकर फिर रगड़ें और साफ पानी से कई बार धोने चाहिये। धुले कपड़ों को एक बार फिर सर्फ पानी से धोकर साफ करना चाहिये। धोते समय उल्टी तरफ साबन लगाकर धोयें तो अधिक उपयुक्त रहता है।

भट्टी तैयार करना

कपड़ों को भिगोकर उसमें साबुन, रेह या सोड़ा आदि लगाकर एक बर्तन में रखकर बर्तन में रखकर बर्तन पानी डालते हैं। बर्तन में इतना पानी होना चाहिये, जिससे कपड़े भीगे रहें, या धोने वाला सोड़ा मिलाते हैं। लगभग २० मिनट खौलाने के बाद बर्तन को उतार लेते हैं। अधिक गर्म करने पर कपड़ों का रंग पीला हो जाता है। इसलिये अधिक देर तक गर्म नहीं करना चाहिये, कपड़ों को बीच में चलाते रहना चाहिये।

कपड़ों को गर्म पानी से निकालकर साफ पानी में कई बार धोना चाहिये। यदि जाड़े का मौसम है तो पानी को थोड़ा गुनगुना कर लें। कपड़ों को कई बार पानी से धोयें, जिससे कपड़े स्वच्छ हो जायें।

नील लगाना

नील प्रायः सफेद कपड़ों में लगाया जाता है इससे कपड़ों में चमक आ जाती है। एक बाल्टी में पानी ले लेते हैं। पानी की इतनी मात्रा लेनी चाहिये जिसमें कपड़े आसानी से डूब जायँ। अब नील की थोड़ी मात्रा (१०-१२ कपड़ों के लिये) आधी चम्मच कपड़े की पोटली बाँध कर धीरे-धीरे पानी चलाना चाहिये। जब पानी का रंग हल्का नीला हो जाय तब कपड़ों को बाल्टी में डुबो दें और इन्हें कई बार उल्टे-पुलटे तथा कुछ समय के लिये रख दें। कपड़ों को निकाल कर निचोड़ें और सूखने के लिये फैला दें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कलफ लगाना

मैदा-महीन कपड़े से छना हुआ आटा, अरारोट आदि का कलफ में प्रयोग किया जाता है।

लगभग ३० ग्राम उपरोक्त वस्तु में से लेकर पानी में भली प्रकार घोल लें, उसे पतला कर आग पर चढ़ाते हैं और लेई को पकाते समय थोड़ी-सी पकी हुई फिटकरी डाल देते हैं, जिससे कपड़ों में चमक आ जाती है और रंगीन वस्तुओं का रंग भी नहीं छूटता है।

चावलों द्वारा

चावलों का माँड़ कलफ के लिये प्रयोग करते हैं। चावलों को पानी में पकाकर चावल का पानी निकाल लेते हैं, इसे चावल का माड़ कहते हैं।

नील लगाते समय कलफ को पानी में अच्छी तरह से घोल लेते हैं, कपड़ों को अच्छी तरह डुबोते हैं। कपड़ों को निचोड़कर सुखा लेते हैं।

रंगीन वस्त्रों को धोने की विधि

इस प्रकार के वस्त्रों को धोने के लिये कपड़ों को पानी में भिगो देना चाहिये फिर साबुन आदि लगाकर गुनगुने पानी से धोना चाहिये। कपड़ों को कलफ लगाकर छाया में सुखाना चाहिये।

कच्चे रंग के कपड़ों को धोने के लिये साबुन लगा हुआ पानी तैयार रखना चाहिये। इस पानी में थोड़ा सिरका डाल देते हैं। कपड़ों को निचोड़कर उस साबुन युक्त पानी में डाल दें और ठण्डे पानी से कई बार धो लें। कपड़ों को धोकर छाया में सुखायें। सुखाते समय पत्तों में कागज लगा देना चाहिये।

छींट के कपड़ों को चोकर से धोने की विधि

चोकर से कपड़ों को धोने से कलफ अलग से लगाने की आवश्यकता नहीं पड़ती है। पानी और चोकर को ४ : १ में लेते हैं चोकर को एक महीन कपड़े की पोटली में बाँधकर ५ या २० मिनट उबालना चाहिये। पोटली को निकाल कर साफ पानी में धोना चाहिये। पहले बार का पानी कलफ लगाने के काम आता है तथा दूसरा पानी कपड़े को साफ करने के लिये काम आता है।

इस पानी में अधिक पानी मिलाने से झाग उत्पन्न हो जाते हैं। इसमें कपड़े डुबोकर स्वच्छ पानी से कई बार धोकर छाया में सुखाना चाहिये।

रेशमी कपड़ों को धोने की विधि

एक बर्तन में गर्म पानी लेकर साबुन या चूरा या सर्फ-पाउडर डालकर उसमें झाग उत्पन्न करना चाहिये। रेशमी कपड़ों को उल्टा करके उस बर्तन में डुबो देते हैं। जहाँ पर कपड़ा अधिक गन्दा होता है, उसे हथेली द्वारा रगड़ते हैं। कपड़ों को कई बार पानी से धोना चाहिये। रेशमी कपड़ों को निचोड़ना नहीं चाहिये बल्कि हाथों से दबाकर पानी निकाल देना चाहिये और छाया में सुखाना चाहिये। चमक लाने के लिये पानी में थोड़ा सिरका डालकर कपड़ों को डुबो देना चाहिये। रेशमी कपड़ों को छाया में सुखाना चाहिये।

रेशमी कपड़ों को रीठा से भी धोते हैं परन्तु सफेद रेशमी कपड़ों को रीठा से धोने पर पीला रंग हो जाता है। अतः सफेद रेशमी कपड़ों को रीठा से नहीं धोना चाहिये।

ऊनी कपड़ों को धोना

एक बर्तन में गुनगुना पानी लेकर उसमें साबुन का चूरा या सर्फ-पाउडर डालकर उसे हिलाना चाहिये। पानी को हिलाते रहना चाहिये, जिससे पर्याप्त मात्रा में झाग उत्पन्न हो जायँ। इस बर्तन में ऊनी कपड़े डालकर भिगोयें फिर उनको उलट दें। इस प्रकार थोड़ी देर उलटने-पुलटने के बाद कुछ समय के लिये रख दें। फिर दो बर्तनों में गुनगुना पानी लेकर उन्हें धोना चाहिये। पानी अधिक गर्म नहीं होना चाहिये। ऊनी कपड़ों को निचोड़ना नहीं चाहिये। कई बार कपड़ों को रगड़ने से उनमें रोयें निकल आते हैं इसलिये कपड़ों को रगड़ना नहीं चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कपड़ों को साफ करके उनका आकार देने के लिये फैला लेते हैं। यदि शाल है तो बिछाकर उसकी सिकुड़न निकाल देना चाहिये।

टेरीकॉट के कपड़ों की धुलाई ऊनी और रेशमी कपड़ों की ही भाँति होती है। इनकी प्रेस करने की आवश्यकता नहीं रहती है।

ऊनी कपड़ों को रीठा से भी धोते हैं, रीठों को फोड़कर उनकी गुठली बाहर निकाल देते हैं। छिलकों को पानी के साथ उबालते हैं। फिर पानी में रगड़कर झाग उत्पन्न कर लेते हैं। इसके बाद गन्दा कपड़ा इस झाग में डाल देते हैं। आधा घण्टा कपड़ा पड़ा रहना चाहिये। इसके बाद साफ पानी से धोकर साफ कर देना चाहिये। कपड़ों को निचोड़ना नहीं चाहिये। छाया में सुखा लेना चाहिये। सुखाने से पहले वस्त्र को ठीक प्रकार पूर्ववत् आकार ले लेना चाहिये।

प्रेस करना

किसी कपड़े को मेज या जमीन पर बिछा लेते हैं। जिस कपड़े पर प्रेस करना है तो उस पर पानी की हल्की छींटें लगा देते हैं या कम सूखा कपड़े ही ले लेते हैं। सर्वप्रथम प्रेस कढ़ाई वाले भाग की इसके बाद में कालर, आस्तीन, बाहों पर कस्ते हैं। तत्पश्चात् पूरे कपड़े पर प्रेस करके अच्छी तरह तह बना लेते हैं।

कपड़े रंगने हों तो इस तरह रंगें

घर के कई कामों के लिये या पुराने को नया रूप देकर घर के काम में लाने के लिये कपड़े रंगने की जरूरत पड़ती है। इस आवश्यकता को ध्यान में रखते हुये कपड़े रंगने की विधियाँ नीचे दी जा रही हैं—

१. पीला बसन्ती

एक छटाँक हल्दी को पहले अच्छी तरह पीसकर पानी में छान लें। इसके बाद थोड़ा सा फिटकरी का पानी मिलावें। फिर उसमें कपड़े को अच्छी तरह भिगोकर निचोड़ डालें। कपड़ा जितना अधिक भीगेगा उतना ही गाढ़ा रंग होगा।

२. हरा रंग

नीले और पीले रंग के संयोग से हरा रंग होता है। इसलिये पहले कपड़े को गहरे नीले रंग में रंग लें। फिर दूसरे दिन हल्दी के औटाये हुये पानी में रंगकर छाया में सुखा लें।

३. बैंगनी रंग पक्का

पतंग का चूर्ण आध पाव, फिटकरी चौथाई छटाँक, पाँच सेर पानी में पन्द्रह मिनट उबालकर छान लें। इसके बाद इस गर्म सत में पन्द्रह मिनट तक कपड़ा भिगोकर निचोड़ लें। चौथाई छटाँक सोड़े को पाँच सेर पानी में घोलकर उसमें दस मिनट तक कपड़े भिगोवें। इसके बाद कपड़े को निचोड़कर छाया में सुखा लें।

४. बादामी पक्का

आधी छटांक हरा कसीस को पाँच सेर गर्म पानी में घोलकर पन्द्रह मिनट तक कपड़े को भिगोवें फिर उसको निचोड़ लें। इसके बाद छटाँक भर चूने को पाँच सेर पानी में घोलकर दूध की तरह बना देवें। फिर उस कपड़े को खोलकर इस चूने के पानी में अच्छी तरह भिगो लें। तत्पश्चात् उसको निचोड़कर सुखा लें। जब कपड़ा अच्छी तरह सूख जाये और उस पर बादामी रंग चमकने लगे, तब फिर उसको सादे पानी से धोकर सुखा लें।

५. सुआपंखी

पहले कपड़े को हल्के नीले से रंगें फिर टेसू के फूलों का रंग निकालकर उसमें रंगें। कपड़ा सूख जाने पर फिटकरी के पानी में धो डालें।

६. कासनी

आधी छटाँक नील को ढाई सेर पानी में डालकर कपड़े को रंगकर सुखा लें। फिर कुसुम के फूलों का रंग निकालकर उसमें कपड़े को रंगिये। इसके बाद खटाई या फिटकरी के पानी में धोकर सुखा लें।

७. नारंगी

हरसिंगार के फूलों को पानी में औटाकर उसमें कपड़ा रंग लीजिये। इसके बाद कुसुम के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पानी में रंगकर सुखा लेना चाहिये। फिर खटाई के पानी में धोकर छाया में सुखा लें।

८. कत्थई रंग पक्का

आध पाव कत्थे का चूर्ण पाँच सेर पानी में आध घंटे तक उबालकर सत तैयार करें। फिर उसी में आध घंटे तक कपड़े को भिगोकर निचोड़ डालें। इसके बाद आधी छटांक कसीस पाँच सेर पानी में घोलकर उसी में आध घंटे तक कपड़े को को भिगोवें। इसके बांद साफ पानी में धोकर कपड़े को सुखा लें।

९. खाकी रंग पक्का

आध पाव हर्रे के चूर्ण को पाँच सेर पानी में आध घण्टे तक खौलाकर सत बनावें और उस सत में आध घण्टे तक कपड़े को डुबोकर रखें। इसके बाद छटाँक भर लाल कसीस पाँच सेर पानी में घोलकर उसी में आध घण्टे तक कपड़े को भिगोकर साफ पानी से धोवें।

१०. गेरुआ रंग पक्का

पाँच सेर पानी में आध सेर गरान की छाल आध घण्टे तक उबालकर इसका सत बना लें। इस गरम सत में आध घण्टे तक कपड़े को भिगोकर निचोड़ डालें। इसके बाद आध पाव फिटकरी पाँच सेर गर्म पानी में घोलकर पन्द्रह मिनट तक कपड़े को भिगोवें और फिर उसमें निचोड़कर पाँच सेर गर्म पानी में आध पाव सोड़ा घोलकर उसमें आध घंटे तक कपड़े को रखें और फिर उसको निचोड़कर साफ पानी में धो डालें।

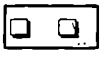

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

रहन-सहन में दूरदर्शी विवेकशीलता का समावेश आवश्यक है

स्वास्थ्य गँवा बैठने में कोई समझदारी नहीं

स्वस्थ रहने पर ही कोई अपना और दूसरों का भला कर सकता है। जिसे दुर्बलता और रुग्णता घेरे हुये होगी वह निर्वाह के योग्य भी उत्पादन न कर सकेगा, दूसरों पर आश्रित रहेगा। परावलम्बन एक प्रकार से अपमानजनक स्थिति है। भार-भूत होकर जीने वाले न कहीं सम्मान पाते हैं और न किसी की सहायता कर सकने में समर्थ होते हैं। जिससे अपना बोझ ही सही प्रकार उठ नहीं पाता वह दूसरों के लिये किस प्रकार कितना उपयोगी हो सकता है ?

मनुष्य जन्म अगणित विशेषताओं और विभूतियों से भरा-पूरा है। किसी को भी यह छूट है कि उतना ऊँचा उठे जितना कि अब तक कोई महामानव उत्कर्ष कर सका है। पर यह सम्भव तभी है, जबकि शरीर और मन पूर्णतया स्वस्थ हों। जो जितनों के लिये जितना उपयोगी और सहायक सिद्ध होता है, उसे उसी अनुपात में सम्मान और सहयोग मिलता है। अपने और दूसरों के अभ्युदय में योगदान करते उसी से बन पड़ता है जो स्वस्थ, समर्थ रहने की स्थिति बनाये रहता है।

अपंग-अविकसित तो असहाय दीन-दरिद्र दिखते ही हैं। पर साथ ही इस पंक्ति में वे लोग भी सम्मिलित होते हैं, जो दुर्बलता या रुग्णता से ग्रस्त हैं। इसलिये अनेक दुखद दुर्भाग्यों और अभिशापों में प्रथम अस्वस्थता को ही माना गया है। प्रयत्न यह होना चाहिये कि वैसी स्थिति उत्पन्न न होने पाये। यदि किसी कारण इस चपेट में आना भी पड़े तो वह दुर्दिन अधिक समय ठहरने न पायें। सच्चे अर्थों में जीवन उतने ही समय का माना जाता है जितना कि स्वस्थतापूर्वक जिया जा सकें।

कुछ अपवादों को छोड़कर अस्वस्थता अपना निज का उपार्जन है, भले ही वह अनजाने में, भ्रमवश या दूसरों की देखा-देखी उसे न्योत बुलाया गया हो। सृष्टि के सभी प्राणी जीवन भर निरोग रहते हैं। मरण काल आने पर जाना तो सभी को पड़ता है। यह नियति की व्यवस्था है। इसमें किसी का चारा नहीं। पर निरोग रहना हर जीवधारी का जन्मसिद्ध अधिकार है। जिन प्राणियों को किसी के बन्धनों में बँधे रहने की विवशता नहीं होती है, वे सभी जन्म से लेकर मरण पर्यन्त निरोग रहते हैं। स्वच्छन्द जीवन जीने वाले पशु-पक्षियों में कभी किसी को बीमार नहीं पाया जाता। कोई दुर्घटनाग्रस्त हो जाये तो दूसरी बात है।

मनुष्य की उच्छृंखल आदत ही उसे बीमार बनाती है। जीभ का चटोरापन अतिशय मात्रा में अखाद्य खाने के लिये बाधित करती रहती है। जितना भार उठ नहीं सकता उतना लादने पर किसी का भी कचूमर निकल सकता है। पेट पर अपच भी इसी कारण चढ़ दौड़ता है। बिना पचा सड़ता है और सड़न रक्त प्रवाह में मिल जाने से जहाँ भी अवसर मिलता है, रोग का लक्षण उभर पड़ता है। कामुकता की कुटेब जीवनी शक्ति का बुरी तरह क्षरण करती है और मस्तिष्क की तीक्ष्णता का हरण कर लेती है। अस्वच्छता, पूरी नींद न लेना, कड़े परिश्रम से जी चुराना, नशेबाजी जैसे कुटेब भी स्वास्थ्य को जर्जर बनाने का निमित्त कारण बनते हैं। खुली हवा और रोशनी से बचना, घुटन भरे वातावरण में रहना भी रुग्णता का एक बड़ा कारण है। भय या आक्रोश जैसे उतार-चढ़ाव भरे ज्वार-भाटे भी मनोविकार बनते और व्यक्ति को सनकी, कमजोर एवं बीमार बनाकर रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हँसती-हँसाती जिन्दगी जीने वाले प्रायः स्वस्थ ही रहते हैं और लम्बी जिन्दगी जीते हैं।

अपने ऊपर औचित्य का अंकुश लगाये रहा जाय तो दुर्बल पड़ने या बीमार रहने का अवसर ही न आये। उच्छृंखलता सर्वत्र अराजकता स्तर की अवस्था को जन्म देती है। इसी कुमार्ग पर चलने वाले ही रोगग्रस्त बनते या रहते देखे गये हैं। इस अनाचार का परित्याग कर देने पर कोई भी अपने खोये स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर सकता है। प्रकृति उद्दण्ड को दण्ड भी हाथोंहाथ देने में निष्पक्ष न्यायाधीश की तरह न्याय करती है, किन्तु साथ ही इतनी दयालु भी है कि गलती मान लेने, आदत सुधार लेने और रास्ता बदल लेने पर क्षमा भी कर देती है। कितने ही स्वास्थ्य गँवा बैठने वाले लोग अपनी आदतें सुधार लेने के उपरान्त पुनः स्वस्थ और समर्थ बनते देखे गये हैं। यह रास्ता सभी के लिये खुला रहता है।

दण्ड के प्रतिफल की उपेक्षा करते रहने वाले ही बहुधा कुमार्ग पर चलने और कुकर्म करने पर उतारू होते हैं। यदि यह समय रहते समझा जा सके कि अस्वस्थता अपने लिये, अपने साथियों के लिये कितनी कष्टकर होती है, तो सम्भव है कि लोग आग में हाथ डालकर उस महत्त्वपूर्ण अंग को जला बैठने जैसी भूल न करें। दुर्बल शरीर इतना परिश्रम, पुरुषार्थ भी नहीं कर सकता कि निर्वाह की आवश्यकताओं को अपने बलबूते कमा सके। बीमारी का कष्ट चाबुक से पिटने या हथौड़े से कुटने के समान कष्टकर होता है। परिचर्या में जिन साथियों को लगना पड़ता है, उनका समय नष्ट होता है। इलाज का खर्च भी कम महँगा नहीं पड़ता। घर में पूर्व संचय न होने पर कर्ज लेने से लेकर कपड़े बेचने तक की नौबत आ जाती है। कितनों को ही खर्चीला उपचार न करा पाने पर अकाल मृत्यु का ग्रास बनना पड़ता है। सहानुभूति का शिष्टाचार तो स्वजन सम्बन्धी निभाते ही हैं, पर मन से उन्हें भी रोगी भार-भूत लगता और अच्छा न हो सके तो बुरा हो जाने की कामना सदा मन ही मन करने लगते हैं। स्वयं को भी ऐसे जीवन में कोई रस नहीं रह जाता। ज्यों-त्यों करके ही मौत के दिन पूरे करने पड़ते हैं। प्रगति की बात तो सोचते भी नहीं बनती। जब जीवित लाश की तरह जिन्दगी ढोई जा रही हो, तो फिर अभ्युदय की योजना किस बलबूते बने ? उज्ज्वल भविष्य के सपने देखते हों तो किस आधार पर देखे जायें ? यह सब दुखद सम्भावनायें मात्र एक ही कारण से अवरोध बनकर खड़ी होती हैं कि शरीर के साथ मन भी स्वस्थ रहने लगता है। दोनों एक साथ जुड़े जो हैं।

मन को ग्यारहवीं इन्द्रिय कहा गया है। जिस प्रकार बीमार व्यक्ति की सभी इन्द्रियाँ असमर्थता अनुभव करती हैं, उसी प्रकार शारीरिक अस्वस्थता की स्थिति में मन भी अस्वस्थ, अस्त-व्यस्त एवं विकृत होने लगता है। बीमारों में प्रायः चिड़चिड़ापन देखा जाता है। वे आक्रमण करने की स्थिति में भी तो नहीं होते, अपना क्रोध, आवेश खिन्न, उद्विग्न रहकर ही व्यक्त करते हैं। शरीर और मन के सहयोग से ही हमारे समस्त क्रियाकलाप सही रूप से चल सकने की स्थिति में रहते हैं। शरीर गड़बड़ाता है तो मन को भी अपनी चपेट में ले लेता है। चिन्तन गड़बड़ाने लगता है। फलतः रोगी व्यक्ति किसी प्रकार शान्त बने रहने की स्थिति में भी नहीं रहता। दूसरों के सत्परामर्श न उसे सुहाते हैं और न अपना मानसिक स्तर इस योग्य रहता है कि किसी को कोई उपयुक्त एवं व्यावहारिक परामर्श दे सके। यह दुहरी हानि है। शरीरगत अशक्तता, रुग्णता, पीड़ा, बेचैनी तो स्वयं ही सहन करनी पड़ती है, पर मानसिक अस्त-व्यस्तता का नया दौर चल पड़ने पर एक नया उपद्रव सामने आता है और स्थिति अर्द्ध-विक्षिप्त जैसी बन जाती है। शरीर रोगी मानसिक रोगी और रहने लगता है। इसके कारण उन्हें दुहरा दबाव सहना पड़ता है।

सही चिन्तन के अभाव में इर्द-गिर्द के व्यक्ति और वातावरण पर ही सारे दोष थोपने का प्रवाह चलता है। अपनी गलतियाँ समझने और सुधारने का तो मानस ही नहीं रहता है। फलतः अपने को खिन्नता का और दूसरों को निराशा का सामना करना पड़ता है। रुग्णता के कष्ट में इस अतिरिक्त भार से त्रास और भी अधिक बढ़ता है। साथियों की हैरानी बढ़ जाती है सो अलग।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पीड़ित स्थिति में कुछ महत्त्वपूर्ण कार्य एवं उपार्जन तो बन नहीं पड़ता, साथ ही चिकित्सा, पथ्य आदि का अतिरिक्त व्यय-भार और बढ़ जाने पर सामान्य स्तर के लोगों के सामने आर्थिक कठिनाई भी दिन-दिन बढ़ती जाती है। जमा पूँजी चुक जाने पर चिकित्सा के अतिरिक्त पारिवारिक निर्वाह में भी अड़चन खड़ी हो जाती है। इससे न केवल रोगी वरन् उसका परिवार परिकर भी एक नई विपत्ति में फँस जाता है। सहानुभूति दिखाने वाले, पूछ-ताछ करने वाले आते हैं तो उनका अतिथि सत्कार भी करना पड़ता है। इस मँहगाई के दिनों में वह भी कम वजन नहीं डालता। बीमारी से छुटकारा पाने के बाद भी इतनी शक्ति बहुत दिनों में आ पाती है कि परिश्रमपूर्वक उपार्जन करके पहले की तरह फिर अपना साधारण क्रम चलाया जा सके, बीमारी के दिनों में हुई आर्थिक क्षति एवं अस्तव्यस्तता के कारण उत्पन्न हुई गड़बड़ियों की क्षतिपूर्ति की जा सके।

सामाजिक या राष्ट्रीय दृष्टि से हर रोगी समुदाय को क्षति पहुँचाने वाला अपराधी है। भले ही उसे दण्ड देने का कोई प्रावधान भले ही न हो। भले ही निर्दोष, दया, सहानुभूति या सेवा का पात्र समझा जाता हो। कारण कि रुग्णता प्रकारान्तर से समूचे समाज पर अनावश्यक भार डालती है। चिकित्सकों का प्रशिक्षण, अस्पताल का भारी भरकम ढाँचा, औषधियों की शोध, उनका निर्माण, वितरण यह सब मिलाकर इतना बोझिल होता है कि उसमें ढेरों धनशक्ति और जनशक्ति खपती है। यदि इसे सरकार जुटाती है, तो भी उसे उसका सन्तुलन जनता पर टैक्स लगाकर ही पूरा करना पड़ता है। यह राशि यदि बच सकी होती तो शिक्षा सम्वर्धन, उद्योगों के सम्वर्धन जैसे उपयोगी कामों में लगती और सार्वजनिक प्रगति में सहायक होती। उन सब में कटौती करके ही रोगियों के लिये उपचार के साधन जुटाये जाते हैं। यदि कोई व्यक्ति निजी साधनों से चिकित्सा करता है तो भी चिकित्सकों के प्रशिक्षण और औषधि निर्माण का जो ढाँचा खड़ा किया गया है उसमें प्रकारान्तर से जन साधनों का नियोजन हुआ तो देखा ही जा सकता है। यह प्रत्यक्ष न सही, परोक्ष रूप से राष्ट्रीय हित में कटौती हुई ही समझी जा सकती है। काम में, उत्पादन में कमी पड़ना जहाँ व्यक्ति की निजी हानि है, वहाँ उसके कारण राष्ट्र की समृद्धि एवं प्रगति को भी हानि पहुँचती है। रोगी की छूत दूसरों को भी लगती है। उसके श्वाँस में मल-मूत्र, पसीने में जो अतिरिक्त गन्दगी-विषाक्तता रहती है वह घूम-फिरकर अन्य अनेक लोगों को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित करती है। इस प्रकार उस चपेंट में सूखे के साथ गीला भी जलता है। जो लोग अपने स्वास्थ्य को साज-सम्भाल कर रखे हुये थे, वे इस रोग प्रदूषण से कहीं न कहीं जरूर प्रभावित हो सकते हैं। इसे जन साधारण की, समाज या राष्ट्र की होने वाली असाधारण क्षति ही मानना पड़ेगा, भले ही वह साधारण जैसी दीख पड़ती क्यों न हो।

समर्थ स्वास्थ्य के आधार पर समस्त राष्ट्र समर्थ बनता है, प्रगति करता है, वहीं रोगियों की संख्या बढ़ने से अवनति का प्रवाह चल पड़ता है। जो शक्ति दीवार उठाने में लगनी चाहिये थी, वह खाई पाटने में खप जाती है। इस घाटे से देश का हर नागरिक न्यूनाधिक मात्रा में प्रभावित ही होता है। इसलिये वैयक्तिक रुग्णता भी सामाजिक क्षति के रूप में फलित होती है। सामुदायिक प्रगति में जो जितनी बाधायें डालता है, जो जितनी उपेक्षा, असमर्थता प्रकट करता है, उसके असहयोग से समस्त समाज को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से हानि ही हानि उठानी पड़ती है। ऐसी दशा में यदि उसे अपराधी स्तर का माना जाय तो इसमें कुछ भी अनुचित न होगा। राजदण्ड भले ही न मिले पर प्रकृति उस भूल का दण्ड देने में कोई कोर-कसर नहीं छोड़ती। रुग्णता आखिर कोई दैवी विपत्ति या आकस्मिक दुर्घटना तो है नहीं। उन्हें मनुष्य ही प्रकृतिगत मर्यादाओं का उल्लंघन करके स्वयं ही न्यौत बुलाता है। ऐसी दशा में कोई रोगी अपने को निर्दोष नहीं कह सकता है। भले ही उसे अपनी भूल के बदले भी साथी, सहयोगियों की सेवा सहानुभूति मिलती रहे पर इतने भर से उसकी निर्दोषता तो सिद्ध नहीं हो जाती है।

रुग्णता की बहुमुखी हानियों पर यदि गम्भीरतापूर्वक विचार किया जा सके तो यह सहज ही समझा जा सकता है कि इस विपत्ति से बचना-बचाना ही उपयुक्त प्रतीत होगा। इस प्रयोजन की पूर्ति के लिये जिस आहार-विहार के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

संयम को अपनाने भर से काम चल सकता है, उसकी उपेक्षा करना किसी भी बुद्धिमान के लिये उचित नहीं कहा जा सकता।

संयमित जीवन में हर दृष्टि से लाभ ही लाभ है। हानि केवल इतनी है कि उच्छृंखलता, अव्यवस्था, चटोरापन की ललक जैसी अवांछनीयताओं पर अंकुश लगाने का साहस करना पड़ता है। रोग से लड़ने में जितनी शक्ति खर्च होती है इतनी यदि संयम बरतने, जीवनचर्या में सुव्यवस्था का समावेश करने में लगायी जा सके, तो इतने भर से समग्र स्वास्थ्य रक्षा की गारण्टी मिल सकती है। उस आधार पर उस शास्त्र वचन के अनुरूप लाभ उठाया जा सकता है, जिसमें 'आरोग्य' को धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष का मूल साधन माना गया है।

शाकाहार और निद्रा का पारस्परिक सम्बन्ध

मसाचुसेट्स इन्स्टीट्यूट ऑफ टेक्नोलॉजी, के 'सेन्टर फॉर ब्रेन साइन्सेज एण्ड मेटाबालिज्म' प्रभाग द्वारा शाकाहार और माँसाहार पर किये गये अध्ययनों से ज्ञात होता है, कि मांसाहार हमारे शरीर फिजियोलॉजी के अनुकुल नहीं है, यह शरीर को बुरी तरह अस्त-व्यस्त व सुस्त बना देता है। शरीर के अन्तर्गत स्रावित होने वाले विभिन्न प्रकार के हारमोनों तथा एन्जाइमों पर यह प्रतिकूल प्रभाव डालता एवं उनकी मात्रा को असामान्य बना देता है, जिससे तरह-तरह की गड़बड़ियाँ फैलने लगती हैं, जो अन्ततः रोग का निमित्त कारण साबित होती हैं।

प्रयोगों के दौरान पाया गया है कि मांस-भक्षण से हमारे शरीर में कोलेस्टोरॉल की मात्रा असामान्य रूप से बढ़ जाती है, जो अन्ततोगत्वा हृदयरोग का कारण बनती है।

अध्ययनों में देखा गया है कि आहार न सिर्फ शरीर को प्रभावित करता है वरन् मस्तिष्क से स्रावित होने वाले हारमोनों की मात्रा को प्रभावित कर शरीर के अन्दर चलने वाली विभिन्न प्रकार की फिजियोलॉजिकल गतिविधियों को भी प्रभावित करता है। इस सन्दर्भ में अध्ययन फिलाडेल्फिया विश्वविद्यालय के डॉ. बर्टमन व उनके साथियों ने आज से दस वर्ष पूर्व आरम्भ किया था। पशुओं पर किये गये प्रयोगों में उनने पाया कि आहार की प्रकृति मस्तिष्क के जैव रासायनिक तत्वों यथा—सेरोटोनिन, डोपामिन, नारएपिनेफ्रिन, एसिटाइलकोलिन, हिस्टामिन तथा ग्लाइसिन के संश्लेषण को बड़े पैमाने पर प्रभावित करता है। प्रयोगों में देखा गया है कि विभिन्न शरीर-क्रिया प्रणाली के अतिरिक्त मांसाहार निद्रातन्त्र को भी प्रभावित करता है तथा व्यक्ति में उनींदापन लाता है।

हार्वर्ड विश्वविद्यालय के बोनीस्प्रिंग एवं उनके सहयोगियों ने एक प्रयोग के दौरान १८४ व्यक्तियों में से आधे को उच्च कार्बोहाइड्रेट युक्त पदार्थ का शाकाहार तथा शेष आधे को मांसाहार दिया। भोजन के कुछ काल पश्चात् सभी व्यक्तियों को कुछ विशेष निर्देष दिये गये और उन्हें पालन करने का उनको आदेश दिया गया। प्रयोग के मध्य पाया गया कि जिन व्यक्तियों ने उच्च कार्बोहाइड्रेट युक्त आहार ग्रहण किया था, उनमें से ८५ प्रतिशत लोग निर्देश परिपालन में असफल रहे, जबकि मांसाहार लेने वाले शत-प्रतिशत व्यक्तियों को प्रयोग में सफलता मिली। प्रयोग के उपरान्त जब उनसे असफलता का कारण पूछा गया, तो उनने एक स्वर से कहा कि भोजनोपरान्त उन्हें अत्यन्त शान्ति का आभास हुआ, जम्हाई आने लगी और तदुपरान्त निद्रा ने धर दबोचा। इसी कारण वे निर्देश का पालन नहीं कर सके। इसके विपरीत जब मांसाहारियों से तत्सम्बन्धी पूछताछ की गयी, तो उनका कथन इसके ठीक विपरीत पाया गया। सभी ने उनींदेपन व थकावट की शिकायत की। इस पर वैज्ञानिकों ने जब मांस पर परीक्षण किया, तो पाया कि मांस में पायी जाने वाली प्रोटीन की उच्च मात्रा ही इसके लिये जिम्मेदार है।

ज्ञातव्य है, कि मांस में विद्यमान प्रोटीन दाल में पाये जाने वाले प्रोटीन से कुछ भिन्न होता है, जिससे इसका पाचन भली-भाँति नहीं हो पाता। साथ ही मांस में प्रोटीन की अति उच्च मात्रा के कारण रक्त व मस्तिष्क में एक विशेष रसायन की अभिवृद्धि होने लगती है। 'टायरोसिन' नामक यह रसायन मस्तिष्क की क्रियाशीलता को बढ़ा देता है, अस्तु नींद में बाधा उत्पन्न होती है और व्यक्ति उनींदापन महसूस करता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सन् १९७० में कैलीफोर्निया यूनिवर्सिटी के शोध विज्ञानी हर्टमन ने इस तथ्य को परखने के लिये एक प्रयोग किया। सन्ध्याकाल में स्वस्थ व्यक्तियों के दो दलों पर प्रयोग किया। कार्बोहाइड्रेट युक्त आहार सेवन करने वाले व्यक्ति मांसाहारियों की तुलना में दो घण्टे अधिक व गहरी नींद सोये। उठने के बाद वे तरोताजा थे।

हावर्ड मैडीकल स्कूल के माइकल योगमन महिलाओं के दूध पर शोध कार्य कर इस निष्कर्ष पर पहुँचे हैं कि भिन्न-भिन्न महिलाओं के दूध में विद्यमान कार्बोहाइड्रेट की भिन्न-भिन्न मात्रा शिशुओं की निद्रावधि को उसी अनुपात में प्रभावित करती है।

एल-ट्रिप्टोफैन के माध्यम से शरीर तन्त्रिका कोशाओं में एक अन्य रसायन का निर्माण करता है। यह 'सेरोटोनिन' कहलाता है। सेरोटोनिन तन्त्रिका-तन्त्र के सम्पूर्ण क्रिया-कलापों को नियन्त्रित करने के साथ-साथ मानसिक क्षमताओं को भी प्रभावित करता है। चूँकि न्यूरॉन सेल्स ही नींद नियन्त्रक रसायन सेरोटोनिन स्रावित करते हैं, इसलिये नींद नहीं आने की बीमारी न्यूरॉन सेलों की क्षति से सीधे सम्बद्ध है। इसकी क्षतिपूर्ति सेरोटोनिन की अतिरिक्त मात्रा लेकर की जा सकती है, जो दूध एवं शाकाहार से पूरी हो सकती है।

एक प्रयोग के दौरान शोधकर्मी वैज्ञानिकों ने जब पशुओं के मिडब्रेन रेफ की न्यूरॉन कोशिकाओं को नष्ट कर दिया, तो उनकी निद्रावधि में काफी कमी पायी गई। जब वैज्ञानिकों ने पशुओं को एक ऐसे रसायन का इन्जेक्शन दिया, जो सेरोटोनिन संश्लेषण को अवरुद्ध करता था तो निद्राकाल और भी कम होता देखा गया।

इस प्रकार अब यह निर्विवाद रूप से साबित हो चुका है कि नींद को नियन्त्रित करने वाला पदार्थ मस्तिष्क में स्रावित होने वाला सेरोटोनिन ही है। अध्ययनों से यह भी ज्ञात हुआ है कि सेरोटोनिन एक अच्छा दर्द-निरोधक रसायन भी है। यह एनकेफेलीन समूह के तनाव शामक एन्जाइमों का सहयोगी है। टेम्पल विश्वविद्यालय के डोरोथी डीवर्ट व उनके सहयोगियों ने सिर व गर्दन के चिरकालिक दर्द से पीड़ित रोगियों को जब टिप्टोफैन प्रदान किया तो दर्द में आश्चर्यजनक कमी पायी गयी।'

इस तरह सेरोटोनिन नींद व दर्द नियन्त्रण की दोहरी भूमिका सम्पादित करता है। प्रयोग-परीक्षणों में देखा गया है कि मांसाहार में विद्यमान प्रोटीन की अति उच्च मात्रा इस रसायन को उद्दीप्त नहीं कर पाती। जबकि चावल, रोटी, आलू एवं विभिन्न प्रकार की हरी शाक-सब्जियों का कार्बोहाइड्रेट, सेल्यूलोज युक्त आहार इस कमी की भली-भाँति पूर्ति करता है और शरीर के लिये आवश्यक परिणाम में सेरोटोनिन संश्लेषित करता है।

शाकाहार का दूसरा लाभ यह है कि इससे पाचन संस्थान पर अनावश्यक दबाव नहीं पड़ता और विभिन्न प्रकार के तत्वों का सरलतापूर्वक पाचन हो जाता है। इससे शरीर को सभी आवश्यक तत्व भी मिल जाते हैं और सभी शरीर तन्त्र सन्तुलित, नियन्त्रित बने रहते हैं। इसी कारण आहारशास्त्री निरामिष आहार पर जोर देते देखे जाते हैं। इसी कारण हमारे प्राचीन ऋषियों ने इसका अवलम्बन लिया और उनके सुखी-स्वस्थ जीवन का यही राज था। आज के बढ़ते मांसाहार प्रचलन एवं मनोरोगों का उपचार एक ही हो सकता है कि शाकाहार के समर्थन में जनमत जुटाया जाये।

भोजन रेशेदार होना चाहिये

हमारे स्वास्थ्य का मूलभूत आधार भोजन है। इसी के आधार पर हमारे शरीर के सारे अवयव ठीक तरह से काम करते हैं। इसके विपरीत यदि हम अखाद्य का प्रयोग करते हैं, तो उसी के अनुरूप स्वास्थ्य भी ढलता चला जाता है। भोजन में स्वाद को महत्त्व देकर प्रायः उसका सार तत्व हम नष्ट ही कर डालते हैं। फलस्वरूप वही आहार जो हमें स्वस्थ रखता, तरह-तरह की बीमारियों का कारण बन जाता है।

आहार में रेशेदार भोजन का विशेष महत्त्व है जो सब्जी, फल, अनाज आदि में पाया जाता है। यह स्वयं पचता तो नहीं है और न ही सोखा जाता है पर इसकी सहायता से पाचन के विभिन्न भागों से निकलने वाले एन्जाइम्स अपना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कार्य ठीक प्रकार कर पाते हैं। इसकी कमी हमारे शरीर के लिये अति हानिकारक है। शरीर विज्ञानियों का कहना है कि रेशेदार भोजन के बिना हमारा स्वस्थ रहना दुर्लभ है। इसकी कमी से रक्त की अपर्याप्त संचार वाली दिल की बीमारी कोलन, मलद्वार का कैन्सर अपेंडिसाइटिस, पित्ताअश्मरी तथा हार्निया आदि भयंकर से भयंकर रोग हो जाते हैं।

खाद्य पदार्थों का ठीक प्रकार से प्रयोग न करने से तमाम सारा रेशा बाहर फेंक दिया जाता है। सफेद मैंदे में से यह सार तत्व निकाल दिया जाता है, प्रयोग के समय उसमें रेशे की मात्रा ढाई प्रतिशत ही रह जाती है। जबकि सूखे साबुत अनाज में यह १० से १२ प्रतिशत तक होती है।

कई प्रकार के रोग ऐसे होते हैं जो मांसाहारियों में विशेष रूप से पाये जाते हैं इसका मूल कारण मांस में रेशे का अभाव ही है। अपने देश में हृदय रोगों से प्रायः तीस लाख आदमियों की मृत्यु होती है जिनमें अधिकतर मांसाहारी होते हैं। इन रोगों के होने का मुख्य कारण सीरम कोलेस्ट्रॉल में बढ़ोत्तरी ही है।

जरूरत से ज्यादा कोलेस्ट्रॉल रक्त की धमनियों की दीवारों में जमा हो जाता है और धीरे-धीरे यह उस रक्त मार्ग को अत्यन्त सँकरा कर देता है। प्रायः अन्त में यह मार्ग बन्द हो जाता है जिससे दिल के दौरे पड़ते हैं।

पाचन में भी रेशेदार भोजन का बड़ा अधिक महत्त्व है। विटामिनों और आवश्यक लवणों की आवश्यकता हरे शाक-भाजी तथा मौसमी फलों से पूरी होती है। वे अपने साथ मल बाहर घसीट ले जाते हैं और पेट साफ करने में बुहारी का काम देते हैं। इस प्रकार शरीर में अधिक मात्रा में आये कोलेस्ट्रॉल की भी सफाई हो जाती है और एक खतरनाक संकट से बच जाने का सुअवसर मिलता रहता है।

मधुमेह रोग के भय से बचने के लिये भी रेशेदार भोजन को अत्यावश्यक बताया गया है। अपेंडिसाइटिस, उत्तेजित आमाशय, वृहदान्त्र व मलद्वार के कैन्सर आदि में भी रेशेदार भोजन से विशेष लाभ होता है। वृहदान्त्रशोथ आदि रोगों में डाक्टर प्रायः रेशेदार भोजन करने की सलाह देते हैं।

प्रकृति प्रदत्त छिलके समेत अनाज, फल, पत्तीदार शाक आदि में रेशे की पर्याप्त मात्रा पायी जाती है, जिसकी कि हमारे शरीर के लिये आवश्यकता है। यह तो मानव की नासमझी ही है कि वह इस प्राकृतिक स्वरूप को अपने हाथों स्वाद की खातिर तोड़-मरोड़ देता है। कुस्वास्थ्य की समस्या अधिकाधिक अनुपात में इसलिये नहीं है कि भोज्य पदार्थ की कमी थी। वस्तुतः उसे विकृत बना दिया गया था। इस सम्बन्ध में 'हेल्थ एजुकेशन' की आवश्यकता है। यदि एक आन्दोलन पोषण की समस्याओं के निवारण के साथ-साथ इसका भी चल पड़े कि भोज्य पदार्थों को किस प्रकार ग्रहण किया जाना चाहिये तो देखते-देखते सारे राष्ट्र का स्वास्थ्य सुधारा जा सकता है। इसका प्रारम्भ तो परिवारों से भोजन के तत्वों का चयन करने वाली व पकाने वाली गृहिणियों से ही हो सकेगा।

फलाहार तथा शाकाहार

प्राचीन समय में हमारे पूर्वज फल तथा शाकों का अधिक प्रयोग करके स्वस्थ और दीर्घायु होते थे। आजकल भी योगी और महात्मा पर्वत की कन्दराओं में निवास करके फल, कंद-मूल तथा शाक-भाजी पर ही निर्वाह करके दीर्घायु तथा स्वस्थ रहते हुये आध्यात्मिक उन्नति करते हैं। साधारण गृहस्थ भी फलों का प्रयोग करके स्वस्थ निरोग और दीर्घायु हो सकते हैं। क्योंकि फल पेट को साफ करते, खून को साफ करते तथा शरीर बनाने का काम करते हैं। यह खाने में स्वादिष्ट तथा शीघ्र पचने वाले होते हैं। विटामिन और प्राकृतिक लवणों की तो यह खान हैं। यों तो अनाज वर्ग, दूध वर्ग आदि में भी विटामिन और लवण होते हैं पर फलों में यह प्रचुर परिमाण में होते हैं। यह अमाशय की बढ़ी हुई खटाई को मारते, गुर्दे के मल को साफ करते तथा जिगर को शुद्ध करते हैं। फलों के फुजले से कब्ज दूर होता है। प्रतिदिन एक नियमित मात्रा में फल खाने से बड़ा लाभ होता है। नारंगी, नीबू, टमाटर आदि खट्टे फल अमाशय में पहुँचते ही क्षार बन जाते हैं। मुँह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में जाते ही बहुत कुछ पच जाते हैं और लार में मिलते ही इन के रस की शर्करा बन जाती है।

फलों के सम्बन्ध में कुछ जानने योग्य बातें यह हैं कि फलों के रस को यदि रखा जाय तो शीघ्र खराब होगा, या फल काटकर रखा जाये ता खराब होगा, अतः रस तुरन्त खा लेना चाहिये। फल नये कोषाणु बनाते तथा एकत्रित खनिज पदार्थों को, जो रोगों तथा वृद्धावस्था के कारण हो जाते हैं, उसे धो डालते हैं। हो सके तो एक दिन एक ही फल खायें और दूसरे दिन दूसरा फल। भोजन के एक-दो घंटे पहले भी फल खायें और भोजन के साथ भी। मौसमी फल अवश्य खायें, क्योंकि इसमें उस ऋतु में उत्पन्न होने वाले रोगों को शमन करने की शक्ति होती है। फलाहार से आयु बढ़ती तथा चरबी छँटती और मोटापा कम होता है। यदि रक्त शोधन कराना हो तो अकेले फल खायें—भोजन के साथ न खायें। जैसे प्रातः केवल फल खायें। केवल फलाहार ही, बिना किसी विशेषज्ञ की सलाह के न करें क्योंकि प्रायः आजकल के मनुष्यों का रुधिर और शरीर अशुद्ध और मल-भार से पूर्ण होता है और फल रुधिर की सफाई बहुत शीघ्रता से करते हैं। अतः प्रत्येक पर इसकी प्रतिक्रिया भिन्न-भिन्न रूप में होती है।

फलों में निर्वाह के लिये सब आवश्यक तत्व हैं। जो फल कृत्रिम रूप से पकाये या सुखाये जाते हैं, उनके उपयोग से अनेक दोष उत्पन्न हो जाते हैं। स्वाभाविक रूप से प्रकृति द्वारा पकाये फलों का उपयोग ही लाभदायक होता है। अच्छा हो चाकू का प्रयोग न हो। फल दाँतों से ही काटे जायें। गद्दर, कच्चे, सड़े हुये, वासी फल हानिप्रद होते हैं। बहुत दिन के रखे हुये फल भी अपना प्रभाव खो बैठते हैं। फल स्नायु-रोगियों तथा चर्म-रोगियों को तो विशेष हितकर होता है। यह विष बाहर निकाल देते हैं। नासूर, कैन्सर, मूत्राशय सम्बन्धी रोग, अम्लपित्त, सिर-दर्द के दौरे, टाइफाइड, कीटाणुओं द्वारा उत्पन्न रोग आदि में फल बड़े लाभप्रद हैं। फलों के रस की ६ से ८ छटांक तक की मात्रा जिसमें जल न मिला हो, प्रत्येक मनुष्य के लिये पर्याप्त है। वैसे ही आध-पाव सूखी मेवा ३ छटाँक सूखे फल, एक या डेढ़ सेर मौसमी ताजे फल एक मनुष्य के लिये बिल्कुल पर्याप्त होते हैं। ग्रीष्म ऋतु में ताजे फल अधिक बढ़ावें और शरद ऋतु में सूखी मेवा अधिक और ताजे फल कम किये जा सकते हैं। फलों में पानी बहुत मात्रा में होता है। केवल फलाहार करने वाले को या तो पानी की आवश्यकता ही नहीं पड़ती और या बहुत कम प्यास लगती है। मनुष्य यदि पका भोजन और नमक छोड़ दे तो उसे प्रायः प्यास लगे ही नहीं। प्यास तो अप्राकृतिक भोजनों तथा मसालेदार भोजनों से ही लगती है।

यदि पाचन खराब हो तो भोजन के साथ फल न खाकर कुछ समय पूर्व ही खाना चाहिये। एक विशेष याद रखने की बात यह है कि फलों में ठीक छिलके के नीचे, या ठीक बीजों के पास फलों का सत्व रहता है, अतः फल छिलके समेत खायें। दूसरी बात यह है कि प्रायः फलों के बीजों में फलों के विपरीत गुण होते हैं। उदाहरण के लिये, यदि किसी पदार्थ के उपभोग से अजीर्ण हो गया हो या हानि हुई हो तो उसके विपरीत वाला अवयव यदि दिया जाये तो अजीर्ण नष्ट हो जायेगा। जैसे—खरबूज का अजीर्ण खरबूजे के बीज, और खरबूजे के बीज का अजीर्ण, खरबूजे से दूर होता है। इस प्रकार प्रकृति ने प्रत्येक पदार्थ की दवा भी उसके पास ही रख दी है। तीसरे यह कि उबालने से फलों के रासायनिक गुण कम तो अवश्य हो जाते हैं पर उनमें विपरीत गुण नहीं आते।

कुछ फुटकर बातें

१-केला खाली पेट कभी न खायें। अधिक न खायें। भारी होता है।

२-खीरे दो से अधिक न खायें। यह पुरुषत्व नाशक होता है तथा पथरी हो सकती है। खीरा, ककड़ी पर पानी पीने से हैजा तक हो सकता है।

३-वासी पेट नीबू का रस पीने से पेट, नेत्र, पथरी और निर्बलता में बड़ा लाभ होता है। अधिक प्रयोग से दिल कमजोर होता है तथा दाँतों की चमक जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

४-आम के ऊपर दूध पीयें तो वीर्य-वर्धक है। आम का कल्प होता है।

५-निराहार अमरूद खायें। अजीर्ण का रोगी भोजन उपरान्त खाये। साबुत बीज पेट में जाने से एपेनडीसाइटिस का डर रहता है।

६-कच्चे बेर खाने से हैजा होता है। बेर भी अधिक न खायें। पके बेर यदि १२ घंटे पानी में भिगोकर उसका पानी पियें और बेर खायें तो दूध सा लाभ हो।

७-मूली पर गुड़ खाने से लाभ होता है।

८-खरबूजे के ऊपर दूध पीने से हैजा हो सकता है पर शरबत पीने से उसके दोष नाश होते हैं।

९-पके कटहल के कोए के ऊपर पान खाने से विष का प्रभाव होता है और पका कटहल क्षय नाशक है।

१०-चिलगोजा अत्यन्त कफ वर्धक होता है।

११-कच्चा सिंघाड़ा पसीने के सब रोग नष्ट करता है।

१२-कमरख को दूध, अंगूर, मुनक्का, गूलर आदि के साथ नहीं खाना चाहिये।

१३-कसेरू रक्त पित्त नाशक है, रक्त के विकारों को दूर करता है।

१४—पान का डंठल तथा बीच की नस विष तुल्य होती है।

१५-खजूर के ऊपर मठा पीने से उसकी गर्मी का शमन होता है।

शाकाहार

जो कुछ फलों के विषय में कहा जा चुका है, बहुत कुछ वह शाकों के बारे में भी लागू होता है। खीरा, ककड़ी, गाजर, मूली, पालक, गोभी, करमकल्ला, सलाद आदि अनेक शाक, तरकारियाँ कच्ची भी खाई जाती हैं। इन्हें कच्ची ही खाना चाहिये। पकाने से इनके विटामिन नष्ट हो जाते हैं या बहुत कम हो जाते हैं। अर्थात् अपनी बहुत कुछ शक्ति खो बैठते हैं। प्राकृतिक लवण भी इनके या तो उड़ जाते हैं या पानी में आ जाते हैं। यदि तरकारियाँ पकाई ही जायँ तो यह भूनी और तली न जाँय। उन्हें केवल उबाल लें। एक बात का विशेष ध्यान रखें और वह यह कि तरकारियाँ हल्की आँच में और भाप में उबालें। चूल्हे पर चढ़ाकर बर्तन इस प्रकार तश्तरी-कटोरी आदि से ढक दिया जाये कि उसकी भाप न निकलने पावे, अन्यथा भाप के साथ लवण भी बहुत कुछ उड़ जायेंगे। शाक-तरकारियों में बहुत मसाला आदि न डाला जाय अन्यथा उसका प्राकृतिक स्वाद नष्ट हो जाता है। शाक या तरकारी जिस पानी में उबाली जाय वह पानी फेंक न दिया जाय, क्योंकि प्राकृतिक लवण तो उसी में आ जाते हैं और वह पानी ही तो मुख्य और महत्त्वपूर्ण वस्तु है। जिन तरकारियों के छिलके मोटे न हों तथा जो प्राकृतिक रूप में चिपके हों जैसे—परवल, तोरई, बैंगन आदि, उनके छिलके न काटे जायें। जिन तरकारियों के छिलके अलग किये ही जाय वह बहुत ही सँभाल कर अलग किये जायँ, क्योंकि बताया जा चुका है कि छिलके के ठीक नीचे ही उनका प्रमुख तत्व होता है। उदाहरणार्थ—यदि आलू उबाला ही जाय तो हल्के से उसका छिलका अलग करके फेंक दिया जाय। यदि कच्चे आलू ही का छिलका चाकू से छीला जायेगा तो छिलके के नीचे वाले लवण और विटामिन बहुत कुछ व्यर्थ फिक जायेंगे।

कुछ तरकारियाँ जैसे—लौकी, तोरई आदि कच्ची भी खाई जा सकती हैं किन्तु जिनके मेवे कमजोर हैं उन्हें कच्ची तरकारियाँ हजम करना सम्भव नहीं अतः उबाली हुई तरकारियाँ खाना ही उचित है। कुछ तरकारियाँ तो कच्ची खानी ही नहीं चाहिये। उनको हजम करना आजकल के मनुष्य का काम नहीं। जैसे—आलू में स्टार्च इतना अधिक होता है जितने की आवश्यकता मनुष्य को नहीं। आलू उबालने से बहुत कुछ उसका स्टार्च जल जाता है और जितना शेष रहता है उतना मनुष्य के लिये आवश्यक और उपयोगी है।

अच्छा हो तरकारियों में नमक डालें ही नहीं और यदि डालें भी तो बहुत हल्का। तरकारियाँ और शाक बहुत शीघ्र पच तो जाते ही हैं, विटामिन और प्राकृतिक लवणों की खान भी हैं, उनके फुजले भी बड़े लाभ के होते हैं। आँतों की सफाई करने, मल बाँधकर पैखाना निकालने में वह बड़े सहायक सिद्ध होते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ भारी बादी तरकारियाँ जैसे—हरा कद्दू, घुइयाँ आदि का नित्य प्रयोग अस्वस्थ तथा निर्बल मनुष्य के लिये उचित नहीं। इनका प्रयोग न करें या नहीं के बराबर करे।

भोजन में तरकारी-शाक का प्रयोग प्रचुर मात्रा में करना चाहिये। तरकारी-शाक का उपयोग केवल इसी दृष्टिकोण से नहीं करना चाहिये कि उनके साथ से भोजन स्वादिष्ट और रुचिकर हो जाता है वरन् इस दृष्टिकोण से भी करना चाहिये कि स्वास्थ्य-रक्षा के लिये उनकी अवहेलना असम्भव है। उनका कम मात्रा में प्रयोग हानिप्रद सिद्ध हो सकता है।

हो सकता है, निर्धन मनुष्य फल न खा सकें। किन्तु मौसमी सस्ते फल बेर, रसभरी, जामुन, आम, खरबूजा, अमरूद, फालसा, शहतूत आदि तो अंगूर, सेब, संतरा, मौसमी आदि की अपेक्षा सस्ते भी होते हैं। अतः इनका प्रयोग सर्वसाधारण कर सकते हैं। जिनको अर्थाभाव के कारण यह भी सम्भव न हो वह शाक-तरकारी का तो प्रयोग कर ही सकते हैं। मौसमी शाक-तरकारियाँ तो काफी सस्ती हो जाती हैं। यदि मनुष्य यह भी न कर सके या न करना चाहे तो उसका केवल ईश्वर ही रक्षक है।

मनुष्य के शरीर में अप्राकृतिक जीवन बिताने, जीभ के बस में होने, गलत रहन-सहन, अनुचित आहार-विहार आदि के कारण विजातीय पदार्थों, मलों तथा एक प्रकार के श्लेष्मा का जमाव हो जाता है और इस श्लेष्मा का अस्तित्व और अधिकता ही रोगों की जड़ होती है। फल और शाक-तरकारियों के खाने से यह श्लेष्मा (म्यूकस) बनना ही बन्द नहीं हो जाता, वरन् पहले के एकत्रित विष म्यूकस और शरीर के अन्दर मौजूद अवांछनीय पदार्थ भी निकलने लगते हैं। अतः फलों और शाक भाजी के महत्त्व और उपयोग पर जितना अधिक जोर दिया जाय, कम है। यदि हम अनुचित समय में भोजन, अनुचित मात्रा में भोजन, अनुचित भोजनों के संमिश्रण और अवांछनीय खाद्य पदार्थों से अपने को नहीं रोक सकते तो फल और शाक-तरकारियों का भी साथ-साथ उपयोग जारी रखने पर बहुत कुछ अपनी गलतियों और उसके परिणामों में कमी कर सकते हैं

जितना कम पके—उतना अच्छा

आहार जितना प्राकृतिक रूप में लिया जायेगा, उसके जीवन-तत्त्व उतने ही सुरक्षित रहेंगे। उसके साथ मनुष्य जितनी अपनी स्वाद की दृष्टि जोड़कर उसे विकृत करेगा, उसके तत्त्व उतने ही नष्ट होते जायेंगे। केवल मनुष्य ही एक ऐसा प्राणी है, जो अपना खाना पकाकर खाता है, अन्य सब प्राणी—प्रकृति जिस रूप में उन्हें भोजन देती है, उसी रूप में ग्रहण कर लेते हैं। होना तो यह चाहिये कि मनुष्य भी स्वास्थ्य शक्ति और दीर्घायु प्राप्त करने के लिये वैसा ही आहार-क्रम अपनाये। किन्तु हजारों-वर्षों से पकाकर खाते चले आने के कारण अब सबके लिये वैसा कर पाना भी सम्भव नहीं, फिर भी इतना तो किया जा सकता है कि भोजन का अधिक भाग प्राकृतिक हो और कम भाग पकाया हुआ हो। भोजन में दूध, दही, फल, सलाद, अंकुरित अन्न को अधिकाधिक स्थान दिया जाये। पकाने में इस बात का ध्यान रखा जाये कि उसके तत्त्व कम से कम नष्ट हों और उसकी सुपाच्यता बनी रहे।

पकाने का ढंग भी बदलें

भोजन पकाने के चार तरीके प्रचलित हैं—(१) भाप द्वारा पकाना, (२) उबालना, (३) भूनना, बघारना, छौंकना, (४) तलना।

भाप द्वारा पकाने की पद्धति सबसे अच्छी है। इसमें बहुत कम तत्त्व नष्ट होते हैं। उबालने की पद्धति भी भाप द्वारा पकाने जितनी उत्तम नहीं, पर उससे कुछ उतनी ही अच्छी है। भूनने, बघारने, छौंकने का तरीका भोज्य-पदार्थों के तत्त्वों को अधिक नष्ट करने वाला और दुष्पाच्य बनाने वाला है। तलना तो सबसे निकृष्ट है। जलते हुये से घी तेल में तली हुई चीजें दुष्पाच्य और तत्त्वरहित हो जाती हैं। भोज्य-पदार्थों को इस प्रकार तलना—खाद्य पदार्थों को विकृत करना है।

दुर्भाग्य से हमारे देश में तली, भुनी, छौंकी, बघारी चीजें ही अच्छी मानी जाती हैं। जब तक दाल और सब्जी पर घी-तेल और रंगदार मसाला तैरता हुआ नहीं मिले, तब तक हमें वे अच्छी नहीं लगतीं। सूखी रोटी की अपेक्षा चुपड़ी रोटी, चुपड़ी रोटी से पराँठा और पराठे से पूड़ी को हम अच्छा मानते हैं और फिर खस्ता कचौड़ी और समौसे हों तो उनका तो कहना ही क्या। किन्तु हमारी यह पसन्दगी और स्वाद परक-दृष्टि ही हमारे स्वास्थ्य का नाश करने का कारण होती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छौंकने, बघारने, भूनने और तलने का रिवाज हमारे देश में ही है। मिर्च-मसालों का प्रयोग भी यहीं पर सबसे अधिक होता है। दूसरे देशों में भोजन पकाने की एक ही विधि प्रचलित है और वह है—उबालने की। अब उसका स्थान भाप द्वारा पकाने का तरीका लेता जा रहा है।

जितनी तरह के तले हुये नमकीन, मिठाइयाँ, तरह-तरह के पकवान, दाल, सब्जी, बनाने के हजारों तरीके, अचार, चटनी और जाने क्या-क्या हमारे देश में बनता है, (उन पर पूरी एक विश्व-कोश जितनी विशाल पुस्तक तैयार हो सकती है।) जबकि विदेशों में ऐसा नहीं है। वहाँ गिनी-चुनी थोड़ी-सी वैरायटीज हैं। पकाने का ढंग बस, उबालने और भाप से पकाने का ही प्रयुक्त किया जाता है। हमारे ये सब लम्बे-चौड़े भोज्य-विधान हमें हानि पहुँचाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं कर रहे हैं। साथ ही जीभ को स्वाद की दासी बनाकर उसे अपने स्वाभाविक स्वाद ग्रहण करने की क्षमता से भी शून्य बनाते जा रहे हैं।

तेज आँच पर तलने और भूनने से पदार्थों के तत्त्व तो प्रायः जल जाते हैं। तली हुई चीजों में चिकनाई की अधिकता होती है, जो पाचन में बाधक बनती है। अतः इन दोनों ढंगों से भोजन पकाने से बचना ही चाहिये। स्वाद तो भूख में है, पदार्थों में नहीं। कड़ी भूख लगने पर तो कच्चे दाने भी स्वादयुक्त लगते हैं। ऊपरी स्वाद बढ़ाने का अर्थ पेट को खराब करना ही है।

उबाल कर पकाना, सर्वसाधारण के लिये उत्तम और उपयोगी तरीका है। जितनी मन्द आँच पर किसी भी वस्तु को पकाया जायेगा, उसके तत्त्वों के नष्ट होने की आशंका उतनी ही कम रहेगी। उबालने में वस्तु को पकने, गलने के लिये पूरा-पूरा पानी मिलता है। इस कारण उसमें रस रूप में जो तत्त्व होते हैं, वे जलने नहीं पाते। यहाँ किसी को शंका हो सकती है कि प्रत्येक पदार्थ में रस कहाँ से होगा। जल ही रस का वाहक है। प्रत्येक पदार्थ में न्यूनाधिक मात्रा में रस होता है, जल होता है। यह जल उसका महत्त्वपूर्ण तत्व है। जिस वस्तु में यह रस जितना अधिक होगा, वह उतनी ही सुपाच्य होगी। रसदार फल इसी कारण हर किसी को माफिक आ जाते हैं, इसका कारण उनमें तत्त्वों का द्रव रूप में, रस रूप में, जल के आकार में होना है। बीमार व्यक्तियों को इसी कारण मौसमी, अंगूर आदि का रस दिया जाता है।

दूध में जल-अंश कोई नब्बे फीसदी होता है, इसी कारण यह अन्नादिक से अधिक सुपाच्य और पुष्टिकारक होता है। इसी दूध से घी और खोआ बनता है, पर उनमें जल अंश बहुत कम होने से वे पचने में भारी होते हैं। घी हर कोई थोड़ी मात्रा में ही पचा सकता है। कमजोर पाचन वालों के लिये तो इसे पचाना प्रायः कठिन होता है।

सूखे अन्नों में जल-अंश बहुत कम मात्रा में होता है—कोई चार-पाँच फीसदी। यही कारण है कि उनकी रोटी बनाने, दलिया बनाने, भात बनाने, दाल बनाने आदि के लिये ऊपर से पानी मिलाना पड़ता है। तभी उन्हें पकाया जाता है। रोटी बनाने के लिये आटे में पानी डालकर गूँथा जाता है। दाल को भी पानी में उबाला जाता है। यह ऊपर से मिलाया हुआ पानी, उस स्वाभाविक प्राकृत पानी से भिन्न होता है। सूखे चने और हरे चने, सूखे गेहूँ और हरे गेहूँ में यह अन्तर स्पष्ट देखा जा सकता है।

यदि रोटियाँ बनाने के चार घण्टे पहले आटे को गलाकर रख दिया जाय तो भीतर जो जल-अंश है, वह बाहरी पानी के साथ बहुत कुछ मेल कर लेता है। अतः तुरन्त आटा गीला करके रोटियाँ बनाने की अपेक्षा तीन चार घण्टे पहले आटा गीला कर लेना ठीक रहता है। दालों को भी बारह घण्टे पहले गलाकर रखा जाये तो उनके प्राकृतिक जलांश में भी वृद्धि हो जाती है।

फलों, तरकारियों, हरे पत्ते वाले शाकों व कन्द-मूल में जल-अंश अधिक होता है। उन्हें तेज आँच पर पकाने या तलने-भूनने से उनका वह जल-अंश जलता है, उसके साथ ही उसके तत्त्व भी जलते हैं। उबालने में ऐसा नहीं होता। कुछ विटामिनों को छोड़कर शेष तत्त्व बहुत कम क्षतिग्रस्त होते हैं।

कई गृहिणियाँ शाक-सब्जी बनाते समय ऐसा करती हैं कि पहले तो उन्हें पर्याप्त पानी में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उबालती हैं और फिर उस शाक-सब्जी, आलू, अरबी आदि को निकालकर उस बचे हुये पानी को, जिसमें उन्हें उबाला गया है—फैंक दिया करती हैं। यह बहुत ही अवैज्ञानिक है। उबालने से उनके तत्त्व घुलकर पानी में चले आते हैं। ऐसे पानी को फैंक देना कितनी बड़ी नासमझी है। यही भूल चावल के साथ भी की जाती है। चावल का भात पकाते समय उसका माँड फैंक देना, उसके अधिकांश तत्वों से वंचित रहना है।

आलू थोड़ी-सी आँच में ही अपने भीतरी तत्त्वों को पानी में घुला देता है। जो गृहिणियाँ छिले हुए आलुओं का साग पसन्द करती हैं, वे ऐसा करती हैं कि उन्हें पहले उबालती हैं फिर उन्हें छीलती हैं और फिर भूनकर, छौंककर सब्जी बनाती हैं। ऐसी सब्जी देखने में अच्छी और खाने में स्वादिष्ट भले ही लगे, पर तत्वों की दृष्टि से छूँछ होती है। आलू के अधिकांश तत्त्व तो उबालते समय उस पानी में आ जाते हैं, जिसे कि बेकार समझकर फैंक दिया गया है। ऐसी ही भूल मैंथी, पालक, अरबी, बथुआ, लौकी आदि के शाकों के साथ भी की जाती है।

आँवले में सबसे अधिक विटामिन 'सी' होता है। पर उसका मुरब्बा बनाते समय उन्हें उबालकर बचा हुआ पूरा पानी फैंक दिया जाता है, जिसमें यह तत्त्व सबसे अधिक होता है। वह मुरब्बा मीठा तो लगता है, पर उसके अधिकांश तत्त्व तो फैंके जा चुके होते हैं।

थोड़ा विचार करें तो हमें पता लग जायेगा कि भोज्य पदार्थों के तत्त्व पानी में कैसे घुलते हैं। दाल पकाने के पहले उस पानी को चखें—जिसमें उसे पकाना है। उस समय पानी में कोई स्वाद नहीं होता, किन्तु दाल गल जाने पर बिना कोई मिर्च-मसाला डाले उस पानी को चखें तो उसमें स्वाद लगेगा। यह स्वाद तत्वों के घुलने के कारण ही है। अतः यह मानना कि तत्त्व आलू के टुकड़ों में ही हैं, उसे पकाये जाने वाले पानी में नहीं हैं—यह मानना भ्रामक है। टाइफाइड से उठे मरीज को कई डाक्टर, अन्न मूँग की दाल के पानी से आरम्भ करवाते हैं। इस पानी में दाल के नहीं रहने पर भी कई तत्त्व होते हैं, जो शरीर को शक्ति देते हैं।

सब्जियों को अधिक पकाना भी ठीक नहीं रहता। आलू को तो बहुत कम पकाना चाहिये। सब्जियों व शाकों के छोटे-छोटे टुकड़े करने की अपेक्षा बड़े-बड़े टुकड़े करना ठीक रहता है। आँच जितनी तेज होगी, उतने ही आहार के तत्त्व जलेंगे।

दूध गर्म करने में भी यही सावधानी रखना अच्छा रहता है। एक-दो उबाल आ जाने के बाद उसे उतार लेना चाहिये। बाजार में बड़े कढ़ाहों में जो दूध घण्टों उबलता रहता है, उस दूध की पाचन-शीलता और तत्त्व कम हो जाते हैं। मलाई अधिक आयेगी, यह सोचकर दूध को खूब उबालने वाले उसके जल-अंश को कम करके उसे दुष्पाच्य बना देते हैं।

भाड़ में तेज आँच में भुने हुये चने आदि भी प्रायः छूँछ रह जाते हैं। क्योंकि तेज आँच में उनके तत्त्व तो अधिकांश जल जाते हैं। इसके स्थान पर अंकुरित चनों का प्रयोग करना लाभकारी होता है। अंकुरित चनों में कई जीवन-तत्त्व बढ़ जाते हैं।

रोटी पकाते समय भी इस बात का ध्यान रखना बहुत आवश्यक है कि वह मन्द और एक-सी आँच पर पकायी जाय। कुछ प्रदेशों में लोहे के तवे के स्थान पर मिट्टी के तवे का प्रयोग किया जाता है। यह तरीका अच्छा है। किन्तु उसकी सफाई करते रहना भी आवश्यक है। मिट्टी के तवे की रोटी स्वाद में भी और तत्त्वों के लिहाज से भी अच्छी रहती है। तवा पतला नहीं हो—मोटा हो, जिससे वह एकदम गर्म न हो जाय। जहाँ तक हो—रोटी अधिक अधिक पतली न बनाई जाये। करारी बनाने के लिये उसका सीधा आग से सम्पर्क करके जलाया जाना भी ठीक नहीं।

रोटी के स्थान पर दलिये का प्रयोग भी अच्छा रहता है। कण मोटा होने और पर्याप्त पानी में उबलने के कारण वह सामान्य पाचन-शक्ति वाले व्यक्ति के लिये भी अच्छा रहता है। लेकिन दलिया खाने वालों को एक सावधानी रखनी बहुत आवश्यक है, नहीं तो उनके लिये दलिया—सुपाच्य नहीं, दुष्पाच्य बन जायेगा। समझदार लोग कहा करते हैं—"अन्न का पाचन दाढ़ों में होता है।" इसका अभिप्राय

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यह है कि अन्न को जितना चबाया जायेगा, उसमें उतने ही पाचक-रस मिलेंगे—लार के रूप में और वह उतना ही सुगमता से पच जायेगा। रोटी कड़ी होती है। अतः उसे चबाना बहुत जरूरी होता है। पर दलिया पतला होता है, सो उसे आसानी से निगला जा सकता है। यदि उसे दो चार दाँत लगाकर यों ही पेट में उतार दिया गया तो यह होगा कि पाचक-रसों के न मिलने से वह शीघ्र नहीं पचेगा।

दलिया और चावल पकाने में यह ध्यान रखा जाना आवश्यक है कि वे आवश्यकता से अधिक गल न जायें। चावल अधिक पक जाने पर गलकर अपना आकार ही छोड़ देते हैं और लगता है कि उन्हें अधिक चबाकर क्या करें। इस प्रकार ठीक तरह नहीं चबाने से उनके साथ लार अधिक नहीं मिल पाती, जो पाचन के लिये बहुत आवश्यक है। अतः चावल और दलिया इतना ही पकाया जाना ठीक रहता है कि वे अपना आकार नहीं छोड़ें। उनमें हल्का-सा, कन रहना बहुत आवश्यक है, ताकि उन्हें चबाना पड़े। दलिये में अधिक पानी रखने से भी वह शीघ्रतापूर्वक उतरता है। दलिये को भूनकर बनाने का तरीका भी ठीक नहीं। इससे तो अच्छा यह रहता है कि ऊपर से घी मिला दिया जाये। घी, तेल आदि चिकनाई का भोजन के साथ अधिक प्रयोग करना, अपने पाचन-संस्थान के साथ असहयोग करना है, क्योंकि पचते समय ये एक साथ नहीं पचते चिकनाई वहाँ पाचन के कार्य में बाधा उपस्थित करती है।

भोज्य-पदार्थों का चयन जितना महत्त्वपूर्ण है, उतना ही उन्हें पकाने का ढंग भी। वह अवैज्ञानिक हो तो पुष्टिकारक और रक्षात्मक आहार भी उतना लाभ नहीं दे सकता—जितना देना चाहिये।

आहार पद्धति में भारी परिवर्तन की आवश्यकता

शरीर की वृद्धि और उसके कार्य संचालन में खर्च होने वाली शक्ति को पूरा करने के लिये अभीष्ट तत्त्व आहार द्वारा प्राप्त किये जाते हैं। भूख लगने का उद्देश्य पेट पर भार लादना नहीं, वरन् उन्हीं तत्वों की पूर्ति करना है, जो शरीर पोषण का प्रयोजन पूरा कर सकें।

क्या भोजन अपने शरीर के लिये उपयुक्त और क्या अनुपयुक्त है, इसकी परीक्षा जिह्वा रूपी डाक्टर स्वाद के आधार पर परखता है। जो पदार्थ अनुकूल होते हैं उन्हें प्रसन्नतापूर्वक भीतर जाने देता है और जो प्रतिकूल पड़ते हैं उन्हें अस्वादिष्ट बताकर ग्रहण करने से रोकता है। दुःख इस बात का है कि हम इस डाक्टर को एक प्रकार का नशेबाज और रिश्वतखोर बनाकर उसकी प्रकृति प्रदत्त परीक्षा शक्ति को विकृत कर देते हैं। नमक और शक्कर की भरमार आरम्भ से ही करते रहने से जीभ चटोरी हो जाती है, उसे मिष्ठान्नों, पकवानों और व्यंजनों की आदत पड़ जाती है। मसाले सुहाने लगते हैं। जबकि इनमें से एक भी वस्तु हमारा प्राकृतिक खाद्य नहीं है। नमक, शक्कर, मसाले यदि मूल रूप से खाये जायें तो उनकी तनिक सी मात्रा भी कष्टकर लगेगी। मिर्च, हींग, लौंग जैसी वस्तुयें मुँह में डालते ही प्रतिरोधी क्रिया होती है। तेल-घी अपने असली रूप में कठिनाई से ही खाये जा सकते हैं। इन्हें उलट-पुलटकर रासायनिक सम्मिश्रणों से पेट में जाने लायक बनाया जाता है। उसमें भी सफलता तब मिलती है जब बचपन से ही स्वादेन्द्रिय को विकृत करने के प्रयत्न चलते रहते हैं। यह बहुत समय पीछे अभ्यास में आते हैं। बड़ी आयु का मनुष्य तेज मिर्च पड़ी वस्तुयें खा सकता है, पर जिसकी जीभ विकृत नहीं हुई है, वह मिर्च का एक टुकड़ा मुँह में डालते ही बेचैन हो जाता है। उसे जल्दी ही मुँह से निकाल बाहर करने के लिये जीभ से पानी बहने लगता है।

प्रकृति का प्रत्येक प्राणी अपने उपयुक्त आहार की परीक्षा उसके मूल रूप को चखकर ही करता है। घास, वनस्पतियों में से कौन सी खाद्य है, कौन सी अखाद्य है इसका निर्णय पशुओं की जिह्वा तभी कर पाती है, जब वे मूल रूप में मुँह में प्रवेश करें। ऊँट नीम के पत्ते स्वादपूर्वक खा सकता है। इसका अर्थ है कि इसके शरीर में वे तत्त्व उपयोगी पड़ते हैं, जो नीम के पत्तों में होते हैं। पक्षी केवल अपने उपयोगी अन्न और कीड़े ही खाते हैं। मांसाहारी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जीव, अपने शिकार के रक्त, मांस को कच्चा ही खा जाते हैं। भेड़िया तो शिकार की हड्डियाँ तक खा जाता है और मजे में पचा लेता है। प्रकृति ने प्राणी का शरीर जिस स्तर का बनाया है और उसके लिये जिस प्रकार की आवश्यकता समझी है, उसे उसकी परख करने के लिये जिह्वा को स्वाद परीक्षण की क्षमता दी है। पर यह तभी सही हो सकती है, जब पदार्थ अपने मूल रूप में खाया जाये। भूनने, तलने, पकाने, मसाले, शक्कर, सुगन्ध आदि मिलाने से तो जीभ की परीक्षा शक्ति को ही गड़बड़ा दिया जाता है और वह अपना काम ठीक तरह पूरा करने में असमर्थ हो जाती है। ऐसी दशा में अखाद्य भी खाया जा सकता है।

जीभ को चटोरापन का अभ्यस्त बना लेना ऐसा ही है जैसा डाक्टर को नशेबाजी की लत लगाकर उसकी बेहोशी में किसी भी प्रकार का प्रमाण-पत्र लिखा लेना। ऐसे तो किसी न्यायाधीश को भी रिश्वत आदि के प्रलोभन देकर गलत फैसले लिखवाये जा सकते हैं। स्वादेन्द्रिय अपनी सही फैसला तभी कर सकती है जब पदार्थ उसके सामने असली रूप में लाया जाये। मिलावट कर देने पर तो उसे पहचानना समझदार मनुष्यों के लिये भी कठिन हो जाता है। खाद्य पदार्थों में मिलावट की जाती है और ग्राहक उसे असली समझकर खरीदते और खाते रहते हैं। नकली और असली रेशम का पहचानना कठिन पड़ता है। इसी प्रकार अन्य क्षेत्रों में मिलावट चलती है और उनकी परख विशेषज्ञ ही कर पाते हैं। मिलावटी आहार सामने आने पर जीभ की परीक्षा पद्धति भी लड़खड़ा जाती है। चटोरेपन के लोभ में अखाद्य बना हुआ आहार पेट में चला जाता है। पोषक तत्त्व न होने पर वह भार मात्र रह जाता है और उसे बाहर खदेड़ने तक जो दुलाई करनी पड़ती है, उससे संचित शक्ति का भण्डार ही धीरे-धीरे चुकता जाता है, जबकि भोजन तो शक्ति प्रदान करने वाला होना चाहिये था।

'जीवो जीवस्य भोजनम्' सूत्र का अक्सर यह अर्थ किया जाता है कि जीवधारी दूसरे जीवधारी का भोजन है। यह उक्ति मांसाहार के समर्थन में प्रस्तुत की जाती है। वस्तुतः इसका अर्थ है जीवित पदार्थ, जीवन बनाये रखने के लिये आवश्यक है। यहाँ जीवित पदार्थ से तात्पर्य हरी वनस्पतियों से है। उनके पत्ते, जड़ें, फूल-फल खाकर शरीर पोषण की आवश्यकता पूरी करनी चाहिये। मनुष्य की शरीर रचना पूर्णतया शाकाहारी प्राणियों जैसी है। उसके दाँत, नाखून, आमाशय, आँतें, स्रावित होने वाले पाचक रस, स्वादानुभूति आदि का पूरा संस्थान विशुद्ध रूप से शाकाहारी वर्ग का है।

शाकाहारी प्राणी हरी वनस्पतियाँ खाकर गुजारा करते हैं। हरापन, गीलापन जब तक रहता है, तब तक उसके सभी जीवन तत्त्व बने रहते हैं। सूखने पर उसका अधिक उपयोगी अंश चला जाता है और ठोस रूप में कम महत्त्व के पदार्थ शेष रह जाते हैं। न मिलने पर तो पशु भी सूखी घास, भूसा खाकर गुजर करते हैं, पर यदि हरी और सूखी घास दोनों सामने रखी जायें तो पशु हरी को ही खायेगा और सूखी की ओर मुँह उठाकर भी नहीं देखेगा। पक्षी भी ऐसा ही करते हैं। जहाँ तक उन्हें कीड़े-मकोड़े तथा हरे कच्चे बीज मिलते हैं, वहाँ वे उन्हें ही पसन्द करते हैं। सूखे बीज तभी खाते हैं, जब कोई और चारा नहीं रहता। बगुला मछली खाता है पर वह जीवित होनी चाहिये। सूखी मछलियाँ उसे दी जायें तो वह उन्हें भूखा मरने का अवसर आने पर अरुचिपूर्वक ही खायेगा। उसकी रुचि तो जीवित मछलियों में रहती है। यही बात माँसाहारी सिंह आदि के बारे में है। सूखे मांस का चूर्ण उसे परोसा जाय तो असमर्थता समझ कर ही थोड़ी मात्रा में गले उतारेगा। इन प्राणियों की विवेक बुद्धि कहती है कि सूखे खाद्य पदार्थों में से उनके जीवन तत्व बहुत बड़ी मात्रा में नष्ट हो गये हाते हैं। इसलिए वे अनुपयोगी होने के कारण अरुचिपूर्ण ही थोड़ी मात्रा में तभी लिये जा सकते हैं जब जीवन युक्त हरे खाद्य मिलने की सम्भावना न रहे और भूखा मरने का प्राण संकट सामने आ खड़ा हो।

नारी को गृह-लक्ष्मी ही नहीं, अन्नपूर्णा भी कहा गया है। उसे मात्र रसोइदारिन नहीं रहना चाहिये। मालिकों की मर्जी के मुताबिक स्वाद प्रधान भोजन बनाने की कला रसोइदारिन को

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आनी चाहिये, अन्यथा उसके मालिक नाराज होंगे और नौकरी से हटा देंगे। किसको क्या जायका पसन्द है ? जिसे जो पसन्द है, उसे वह खिलाया जाये। यदि यही दृष्टिकोण रहा तो नारी अपने अन्नपूर्णा पद को गौरवान्वित करने वाली न मानी जायेगी। उसे नये सिरे से विचार करना चाहिये और सोचना चाहिये कि वह अन्नपूर्णा और अन्नदाता ही नहीं, जीवनदात्री भी है। आहार का उद्देश्य जीवनी शक्ति प्राप्त करना है ताकि दुर्बलता, रुग्णता और अकाल मृत्यु से बचा जा सके। पाक विद्या का उद्देश्य स्वाद को प्रधानता देना नहीं है। इस दृष्टि से विविध प्रकार के व्यंजन, मिष्ठान्न, पकवान, अचार, मुरब्बे आदि बना-बनाकर खिलाने से परिवार के लोग न तो प्रसन्न हो सकते हैं और न प्रशंसा कर सकते हैं। पर स्वाद के नाम पर यदि अखाद्य खिलाये गये हैं तो इससे खाने वालों का अहित ही होगा। क्या चाहा जा रहा है ? इसे महत्त्व नहीं मिलना चाहिये वरन् दूरदर्शितापूर्वक यह देखा जाना चाहिये कि हित किसमें है। हित की दृष्टि से जो उचित है, उसी को करने में दूरदर्शिता है। प्रसन्न करने की ही दृष्टि रखी जाये और हित को आँख से ओझल कर दिया जाय तो इसे कुशलता नहीं, अबुद्धिमत्ता ही ठहराया जायेगा।

छोटे बच्चे प्रायः बार-बार मिठाई का आग्रह करते हैं। यदि उन्हें प्रसन्न करने के लिये वही दिया, खिलाया जाय तो फिर दाँत खराब हो जायेंगे, जिगर बढ़ जायेगा और पेट में कीड़े पड़ जायेंगे। बच्चा उस अदूरदर्शिता के कारण दुर्बल, रुग्ण बनकर अकाल मृत्यु का ग्रास बनेगा, जो माता ने उसे प्रसन्न रखने की दृष्टि से अपनाई थी। समझदार महिलाओं को पाकशाला का उत्तरदायित्व सँभालते हुये, यह अनुभव करना चाहिये कि वे किसी होटल की वह 'कुक' नहीं हैं, जिसे ग्राहकों की रुचि की चीजें बनाते रहने के लिये नियुक्त किया गया है। उन्हें अनुभव करना चाहिये कि परिवार के सदस्यों की स्वास्थ्यरक्षा का उत्तरदायित्व उनके कन्धों पर आया है। यों आरोग्य बनाये रहने के लिये विश्राम, संयम, परिश्रम, मानसिक सन्तुलन आदि और भी कई आधार हैं, फिर भी सबसे प्रमुख भोजन को ही माना गया है, क्योंकि जीवनी शक्ति उसी से मिलती है। यदि आहार के स्थान पर अखाद्य उनके पेट पर लादा गया है तो पोषण प्राप्त होने के स्थान पर प्रकृति प्रदत्त शक्ति भण्डार दिनों-दिन क्षीण होता जायेगा और घर के लोग धीमी आत्म-हत्या की ओर बढ़ेंगे, वे कमजोर होंगे, बीमार पड़ेंगे और अन्ततः समय से पहले मौत के मुँह में चले जायेंगे। नारी को फैसला करना है कि वह चटोरापन भड़काने वाले व्यंजन परोसकर घर वालों को प्रसन्न करना चाहती है अथवा हितकर भोजन में थोड़ा कम स्वाद रहते हुये भी जीवनदायक अमृत आहार देना चाहती है। दोनों में से एक पक्ष ही चुना जा सकता है। दृष्टिकोण में प्रधानता ऐक ही तथ्य की रहेगी। एक सीमा तक ऐसा तालमेल तो बिठाया जा सकता है कि भोजन से पोषण की प्रधानता तो रहे, पर वह अरुचिकर भी न होने पावे। इतना होते हुये भी वह उतना उत्तेजक तो नहीं ही बन पड़ेगा जिसकी चटोरे लोग प्रशंसा कर सकें। किसी कदर तो उन्हें भी संयम बरतने और सात्विकता अपनाने के लिये सहमत करना ही होगा। यह जिन्दगी और मौत में से एक को चुनने का अति महत्त्वपूर्ण प्रश्न है। इसमें से एक को ही प्रधानता दी जा सकती है। दूसरा पक्ष गौण होकर ही रहेगा। जिन्दगी प्रिय है तो चटोरेपन पर लगाम लगानी होगी और जो हितकर है, उसी को औषधि रूप में ग्रहण करने के लिये सहमत होना पड़ेगा। नारी की दूरदर्शिता इसमें है कि वह धीरे-धीरे अपना प्रभाव पूरे परिवार पर डालें और स्वादिष्टता का नशा उतारें। यदि एकदम उतरता नहीं दीखे तो भी क्रमशः हलका करते चलने का निश्चय तो कर ही लेना चाहिये। कम से कम इस दुर्व्यसन को भड़काने में योगदान तो नहीं ही देना चाहिये।

भोजन पकाने से पूर्व सामने प्रस्तुत खाद्य पदार्थों पर बारीकी से यह नजर डाली जानी चाहिये कि इनमें निर्जीव सामग्री कितनी है और सजीव कितनी ? बढ़ती हुई कुरुचि ने ठोस पदार्थों को अपनाने और उसे चिकनाई, शक्कर तथा मसालों की भरमार करके जायकेदार बनाने की प्रथा चल पड़ी है। सब्जियाँ शौक के लिये, ठोस-ठोस पदार्थों को गले से नीचे उतारने के लिये काम में लाई जाती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आमतौर से यह काम भी पतली दालों से चला लिया जाता है। इस ढर्रे को भी अन्याय, कुरीतियों, अन्धविश्वासों और अवांछनीयताओं की तरह ही निरस्त करने योग्य माना जाना चाहिये। जिस प्रकार अनेकों दोष-दुर्गुणों के प्रति विरोध, प्रतिरोध जगाना है, उसी प्रकार खाने की आदत में जो अनुपयुक्तता घुस पड़ी है। उसे भी बहिष्कृत करने के लिये साहसपूर्वक कटिबद्ध होना चाहिये।

इस प्रयोजन के लिये कुछ सिद्धान्त निर्धारित करने होंगे, जिनमें पहला यह होना चाहिये कि भोजन को सजीव स्थिति में ग्रहण किया जाये। उसके मूल स्वरूप को कम से कम विकृत किया जाय। दूसरा यह कि चटोरेपन के कारण आवश्यकता से अधिक भोजन किसी के भी पेट पर न लदने पाये। अधिक खिलाने का आग्रह इसलिये किया जाता है कि अधिक खाने से अधिक रक्त बनेगा, अधिक पोषण मिलेगा। स्वादिष्ट पदार्थ इसलिये बनाये जाते हैं कि उन्हें स्वाद-स्वाद में अधिक खाया जा सकता है, प्रचलित मान्यता न केवल भ्रमपूर्ण है वरन् तथ्यों से सर्वथा विपरीत भी है। भोजन पचाने वाले रस मुख, आमाशय, आँतें और पित्ताशय आदि संस्थानों से सीमित मात्रा में निकलते हैं। वे थोड़े आहार को ठीक प्रकार से पचा सकते हैं। यदि अधिक मात्रा होगी तो थोड़ी आग पर बड़ी पतीली दाल चढ़ा देने से जिस प्रकार वह कच्ची रह जाती है, उसी तरह अधिक मात्रा में खाया हुआ भोजन भी बिना पचा रह जाता है और पेट में सड़न पैदा करता है। सड़न से उत्पन्न हुआ विष रक्त में मिलकर शरीर भर में घूमता है और जहाँ भी अवसर पाता है, वहीं बीमारी उत्पन्न करता है। सड़न से उत्पन्न गैसें अनेक प्रकार के वायु विकार पैदा करती हैं। पेट का दर्द, वायुगोला, पेट फूलना, गैस्टिक अल्सर, हृदय की धड़कन, घबराहट, सिरदर्द, गठिया, कम्ह जैसे अनेक रोग इन्हीं सड़ी गैसों के परिणाम हैं।

लुकमान सही ही कहते थे कि मनुष्य अपनी कब्र जीभ की नोंक से खोदता है। स्वाद को विकृत और उच्छृंखल बना देना, शरीर और मन दोनों के लिये संकट खड़ा कर देना है। चीजों को जायकेदार बनाने में उन्हें इतना अधिक उबालना, तलना, भूनना पड़ता है कि उसका अधिकांश सार तत्त्व आग की गर्मी में जलकर नष्ट हो जाता है। लकड़ी जलाने पर तेज आग जलती है और लौ उठती है। लकड़ी का कोयला जलाने पर न लौ उठती है और न उतनी गर्मी मिलती है। जिस वस्तु का जितना अग्नि संस्कार किया जायेगा, उसके जीवन तत्व उतने ही नष्ट हो जायेंगे।

उचित तो यह है कि भोजन विशुद्ध रूप से स्वास्थ्य के दृष्टिकोण से ही चुना और तैयार किया जाये। किन्तु यदि जीभ के स्वाद को भी ध्यान में रखना है, तो उसे इतना महत्त्व तो नहीं ही दिया जाये कि भोजन का मुख्य उद्देश्य ही समाप्त हो जाय। स्वास्थ्यप्रद भोजन करने के विपक्ष में दलील दी जाती है कि "जीभ के स्वाद की भी तो बिल्कुल उपेक्षा नहीं की जा सकती।" ऐसी ही दलील भोजन को स्वादिष्ट बनाने के समय दी जा सकती है कि "स्वाद के लिये स्वास्थ्य की एकदम उपेक्षा तो नहीं की जा सकती।" तर्क दिया जाता है कि कैसा भी आहार किया जाय, उससे कुछ न कुछ पोषण तो मिल ही जाता है। दूसरे पक्ष से भी ऐसा ही तर्क प्रस्तुत किया जा सकता है कि हर पदार्थ में कुछ न कुछ स्वाद तो होता ही है। इस प्रकार स्वाद के पक्ष में दी गई दलीलों की अपेक्षा पोषण के पक्ष में अधिक सबल दलीलें मिलती हैं। विवेक दोनों के बीच का रास्ता निकाल सकता है। गृहिणी की कुशलता इसी प्रकार का ताल-मेल बिठाने में है।

पाक विद्या की कुशलता के नाम पर अग्नि संस्कार की अति की जाती है और हरे शाक भी निस्सार बना दिये जाते हैं। एक तो वैसे ही हमारा आहार अन्न, चावल, दाल, जैसे सूखे पदार्थों से बनता है, उनका प्राकृतिक हरापन पहले से ही सूख गया होता है। शाक तो थोड़े से ही लिये जाते हैं, वे भी अधिक उबालने, अधिक तलने से निर्जीव हो जाते हैं। ऐसा निस्सार आहार दुष्पाच्य होता है। उसे थोड़ी मात्रा में खाया जाना चाहिये था ताकि किसी प्रकार पेट के सीमित पाचक रस उसे पचा पाते। किन्तु मिर्च, मसाले, घी, तेल, शक्कर सुगन्ध आदि के सम्मिश्रण से उसे ऐसा बना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिया जाता है कि चटोरी जीभ पेट की सामर्थ्य का अनुमान लगाये बिना अन्धाधुन्ध खाती चली जाती है। उस भार को ठीक तरह पच न सकने के कारण शक्ति तो मिलती नहीं, उल्टे उस अपाच्य को ढोने में पाचक यन्त्रों को थका देने वाला निरर्थक श्रम करना पड़ता है।

यही है आज की हमारी आहार सम्बन्धी रीति-नीति। खाने पर जितना पैसा और समय खर्च होता है, उसका बहुत कम अंश ही पोषण दे पाता है। शेष तो खाद्य पदार्थों का चयन, पकाने की अवैज्ञानिकता एवं अधिक मात्रा में खा जाने के कारण एक प्रकार से निरर्थक ही चला जाता है। आहार का उद्देश्य शरीर को पोषण प्रदान होना चाहिये, पर आज तो वह भूख बुझाने और जायका चखाने भर का प्रयोजन पूरा करता है। शक्ति मिलने के स्थान पर उससे संचित भण्डार घटता है। निस्सार कचरा आवश्यकता से अधिक उदरस्थ किया जाता रहता है, फलतः शरीर अभीष्ट पोषण से वंचित रहकर स्वाभाविक विकास का अवसर प्राप्त नहीं कर पाता। वह दुर्बल बना रहता है और पेट की खराबी उत्पन्न होती रहने वाली अनेकानेक बीमारियों का शिकार बनता रहता है।

इस सारी स्थिति पर गम्भीरतापूर्वक विचार किया जाना चाहिये और भोजन के प्रश्न पर नये सिरे से विचार किया जाना चाहिये। नारी का दृष्टिकोण इस सम्बन्ध में साफ हो, उसे अपने परिवार की प्रसन्नता से भी अधिक हित साधन का ध्यान हो। परिवर्तन लाने में जिस धैर्य और साहस की जरूरत पड़ती है, वह मौजूद हो तो वर्तमान आहार पद्धति में क्रान्तिकारी परिवर्तन किया जा सकता है। जहाँ वैसा करना सम्भव होगा, वहाँ घर के हर व्यक्ति के स्वास्थ्य में आश्चर्यजनक सुधार अवश्य दृष्टिगोचर होगा।

खाद्य को अखाद्य बनाकर न खायें

अपने देश में गरीबी के कारण पौष्टिक खाद्य-पदार्थ समुचित मात्रा में प्राप्त कर सकना अपने देशवासियों के लिये बहुत कठिन पड़ता है। इससे भी बड़ी कठिनाई यह है कि जो कुछ उपलब्ध है उसे भी ठीक तरह पकाने और खाने की विधि से हम अपरिचित हैं। फलस्वरूप जो सामने है उसका भी पूरा लाभ उठा नहीं पाते। पोषक तत्व को निकाल डालते हैं और उसके सारहीन भाग को ग्रहण करते हैं। पकाने और खाने की बुरी आदतें गरीबी से अधिक महँगी पड़ती हैं और भोजन करने के उद्देश्य को ही समाप्त कर देती हैं।

इन्टरनेशनल क्लब लखनऊ द्वारा आयोजित एक विचार गोष्ठी में हाइजीन इन्स्टीट्यूट के संचालक डॉ. के. गोविल ने बताया कि भारत में शाक-भाजी और फलों का उत्पादन कम होने से जन-साधारण को उपयुक्त पौष्टिक आहार की तो कमी पड़ती ही थी। अब भूमि की उर्वरा शक्ति घट जाने से एक नया संकट और उसमें जुड़ गया है। अब फल और शाकों में पोषक तत्व उससे कहीं कम रहते हैं जितने कि अब से पचास वर्ष पूर्व रहते थे।

स्वास्थ्य संरक्षण के लिये कैल्शियम, फास्फोरस, लौह, पोटाश आदि जिन रसायनों की जरूरत पड़ती है उन्हें प्राकृतिक रूप से फलों और शाकों में ही पाया जाता है। औषध रूप में इन्हें लिया जाये तो वे रक्त में उस तरह नहीं घुल पाते जैसे कि फलों के द्वारा ग्रहण करने पर शरीर के अंग बनते हैं। आँवला, टमाटर, मौसमी जैसे फलों में विटामिन सी की समुचित मात्रा रहती है। गाजर, चुकन्दर, बन्दगोभी जैसे सामान्य एवं सस्ते शाकों से विटामिन 'ए' की पूर्ति सहज ही हो जाती है। सस्ता और प्रचुर परिमाण में कहीं भी उगाया जा सकने वाला केला तक विटामिन ए, बी, सी, डी और ई से भरा-पूरा होता है।

भारत में संसार के अन्य सभी देशों की तुलना में फल और शाकों की भारी कमी है। फलों की वार्षिक उपज ६० लाख टन और तरकारियों की ४० लाख टन है। इसका अर्थ हुआ हर व्यक्ति पीछे १.६ औंस फल और १.३ औंस तरकारी। जबकि स्वास्थ्य विशेषज्ञों के अनुसार हर व्यक्ति को कम से कम ३ औंस फल और १० औंस तरकारी स्वास्थ्य संरक्षण की दृष्टि से आवश्यक है।

फल महँगे पड़ें तो मौससी सस्ते फलों से भी काम चल सकता है। अमरूद, आम, बेर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जामुन आदि फल अपनी ऋतुओं पर प्रायः सस्ते ही बिकते हैं। खरबूजा, तरबूजा, ककड़ी, खीरा जैसे बेलों पर लगने वाले फल भी गरीबों के लिये कीमती फलों की आवश्यकता पूरी कर सकते हैं। गाजर, टमाटर, मूली, भिंडी आदि शाक ऐसे हैं जो कच्चे खाये जा सकते हैं। पालक, सलाद आदि की पत्तियाँ बहुत उपयोगी होती हैं। नींबू और आँवला अधिक मँहगे नहीं होते, पर उपयोगिता की दृष्टि से उनकी गिनती किसी कीमती फल से कम नहीं।

शाकों को पकाने में हम बहुत भूल करते हैं। यह नहीं सोचते कि अधिक जलाने-भूनने से उनके पोषक तत्व नष्ट हो जायेंगे और फिर उस निर्जीव भोजन से पेट भरने के अतिरिक्त और कोई प्रयोजन सिद्ध न होगा। शाकों को पकाने में यदि थोड़ी सावधानी बरती जाय तो उनकी उपयोगिता अक्षुण्ण रह सकती है।

केवल ताजी और अच्छी तरकारियाँ छाँटिये, सस्तेपन के लोभ में सड़ी-गली और बासी-बुसी मत खरीदिये। चूँकि वे खरीदी जा चुकीं इसलिये अब तो उनको पेट में डाल ही लिया जाय, इस तरह मत सोचिये। खराब चीजें खरीदने में पैसा चला गया तो अब उसके साथ ही स्वास्थ्य भी नहीं गँवा देना चाहिये।

पकाने से पूर्व उन्हें अच्छी तरह धो लीजिये ताकि उनके ऊपर चिपकी हुई अदृश्य गन्दगी से ठीक तरह छुटकारा पाया जा सके।

उतनी पकाइये जितने से वे खाने योग्य थोड़ी मुलायम हो जायँ। देर तक इतना मत पकाइये जिससे वे बुरी तरह घुल जायँ। स्मरण रखिये उन्हें जितना अधिक पकाया जायेगा उतना ही उनका पोषक तत्व नष्ट होता चला जायेगा।

जहाँ तक हो सके पानी में उबालने की अपेक्षा भाप से उबालिये। तेज आग की अपेक्षा मन्दी आग का उपयोग कीजिये, भले ही पकाने में कुछ देर लग जाये। जब पानी खौलने लगे तब उसमें सब्जियाँ डालिये, आरम्भ में ही डाल देने पर अधिक देर अग्नि संस्कार के कारण वे अपना गुण खो बैठती हैं। प्रेसर कुकर या कोयले से प्रयुक्त होने वाले भाप कुकर सब्जियाँ पकाने की दृष्टि से सर्वोत्तम हैं।

पकाने में पानी उतना ही डालिये जो उन्हीं में खप जाये, फैंकना न पड़े। इस पानी में सब्जियों का बहुत सा सार तत्व रहता है। फैंकने की अपेक्षा तो उसे सूप बनाकर पी लेना अच्छा है।

जहाँ तक सम्भव हो, छिलके समेत सब्जियाँ पकाइये। बहुत कड़े या अत्यन्त अस्वाद छिलके ही हटाने चाहिये। बहुत छोटे टुकड़े काटने की अपेक्षा बड़े टुकड़े रहने दीजिये।

सन्तरे का रस निकालकर यदि उसे आधा घण्टा पड़ा रहने दिया जाय तो उसमें रहने वाला विटामिन 'सी' नष्ट हो जायेगा। काटकर खुले पटक देने पर अन्य फल भी अपनी विशेषता खो देते हैं। शाक-सब्जियों में रहने वाले विटामिनों का भी यही हाल है। उन्हें यदि तेज आग पर पकाया जायेगा तो बहुमूल्य तत्व नष्ट हो जायेंगे और शाक की छूँछ भर खाने के लिये शेष रह जायेगी। घी, तेल आदि में भून डालने पर तो उनका रहा-सहा कचूमर भी निकल जाता है और वे शाक-भाजियाँ की कोयला भर बनकर शेष रह जाती हैं। स्वाद का उद्देश्य भले ही पूरा हो जाये, पर वह प्रयोजन तो कोसों पीछे रह जायेगा, जिसमें स्वास्थ्य संवर्धन के लिये शाक-भाजियों की आवश्यकता का प्रतिपादन किया गया है।

बर्तनों में सबसे हानिकारक और कुरूप है कढ़ाई। उसका पेंदा ही सदा काला नहीं रहता, हर खाद्य-पदार्थ का प्राकृतिक सौन्दर्य नष्ट करके उसे भी वह काला, कलूटा, कलुषित और कुपाच्य बना देती है। तलने और भूनने के बराबर खाद्य-पदार्थों के साथ दूसरा अत्याचार नहीं है। पूड़ी पकवान, मिठाई तथा तले-भुने शाक, पकौड़े, नमकीन आदि भी उसी में पकते हैं। यह सारी चीजें सर्वथा हानिकारक ही हैं। जीभ का क्षणिक-सा स्वाद उससे पूरा हो जाता है, पर उनसे धन तथा समय की बर्बादी, पेट की तबाही और स्वास्थ्य की गड़बड़ी जैसी अनेकों हानियाँ उत्पन्न होती हैं। इन हानियों के साधन जुटाना ही जिसका एकमात्र काम है, उस कढ़ाई को कलमुँही कहें तो उचित है। उसे देश-निकाला न दिया जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सके तो क़म से कम चौके से बाहर तो रखना ही चाहिये।

फसल पर कच्चे अन्न मिलते हैं, वे सूखे और पिसे अनाज की तुलना में कहीं अधिक पोषक होते हैं। मक्का, ज्वार, बाजरा, गेहूँ, मटर आदि को थोड़ा-सा भून लेने पर वे और भी अधिक स्वादिष्ट हो जाते हैं, वैसे उन्हें कच्चा भी खाया जा सकता है। सूखे अन्न को भी पानी में भिगोकर अंकुरित किया जा सकता है और उन्हें कच्चा अथवा उबालकर खाया जा सकता है। रोटी की अपेक्षा तो कम पिसा, कम जलाया-तपाया दलिया भी अधिक लाभदायक होता है।

सूखे बीजों में जीवन तत्व बहुत स्वल्प मात्रा में होता है। उन्हें अंकुरित कर लेने पर पोषक तत्व कई गुने बढ़ जाते हैं। उनमें ऐसे रासायनिक परिवर्तन हो जाते हैं जिससे पाचन अधिक सरल हो जाय। अंकुरित बीजों के अणु अमिनोएसिड के रूप में बदल जाते हैं और उनकी पौष्टिकता तथा पाचन क्षमता में आशाजनक वृद्धि हो जाती है। अंकुरित बीज, फल, सब्जी और मांसाहार की आवश्यकता पूरी कर सकते हैं। गेहूँ, जौ, चना, सोयाबीन, मूंग मसूर, मटर, मूँगफली जैसे बीजों को अंकुरित करके खाया जाये तो वे साधारण आटे या दाल के रूप में खाने की अपेक्षा कहीं अधिक गुणकारक सिद्ध होंगे।

कूड़ा-करकट बीने हुये अनाज को स्वच्छ जल में धोकर किसी कांच या चीनी के बर्तन में रखकर उस पर इतना पानी डालें जिसमें कि वह डूब जाय। इसे २४ घण्टे पानी में डूबा रहने दें। इसके बाद पानी निकालकर उसे किसी मोटे कपड़े में लपेटकर लटका दें। २४ घण्टे इसी तरह टंगी रहने दें। बीच-बीच में पोटली पर पानी के छींटे देते रहें ताकि कपड़ा सूखने न पावे। अनाज अंकुरित हो जायेगा। स्थान एवं ऋतु के अनुरूप अंकुरित होने में थोड़ा न्यूनाधिक समय भी लग सकता है।

बिना पकाये अन्नों के प्रयोग में गेहूँ की घास बनाकर खाने की एक नई कड़ी और जुड़ी है और उस विधि को प्रयोगकर्त्ताओं एवं उपभोगकर्त्ताओं द्वारा अतीव उपयोगी बताया गया है।

अमेरिका की एक महिला डॉक्टर एन. विरोमोर ने अंग्रेजी भाषा में एक ३० रु. मूल्य का ग्रन्थ प्रकाशित किया है—"व्हीट ग्रास मैनुअल"। इस पुस्तक में उनके उन अनुभवों और प्रयोगों का उल्लेख है, उन्हें गेहूँ की घास का सेवन कराकर अनेक रोगियों को चंगा करने का विस्तृत विवरण लिपिबद्ध किया है। वे गेहूँ की घास के रस को हरा रक्त कहती हैं और बताती हैं कि यह रस मनुष्य के रक्त से ४० फीसदी मेल खाता है। वे कहती हैं कि इसके सेवन से रोग निरोधक शक्ति आश्चर्यजनक रीति से बढ़ती है और पोषण के लिये उपयुक्त इतने बहुमूल्य तत्त्व उपलब्ध होते हैं, जितने अच्छी से अच्छी खुराक से भी प्राप्त नहीं होते। इसे किसी भी रोग में दवा के रूप में दिया जा सकता है और कोई भी इसे श्रेष्ठतम पोषक आहार के रूप में सेवन कर सकता है।

इस हरित रक्त को बनाने की विधि बहुत सरल है। १०-१२ टूटे-फूटे टोकरे या लकड़ी की रद्दी पेटियाँ ले लीजिये, उनमें खाद मिली मिट्टी भर दीजिये। इनमें बारी-बारी गेहूँ के अच्छे बीज बोइये। इन्हें छाया में रखिये और पानी देते रहिये। तीन-चार दिन में वे उग आवेंगे और आठ-दस दिन में एक बालिश्त (७-८ इन्च) ऊँचे हो जायेंगे। इनमें से पहले दिन बोये हुये गेहूँ के ३०-४० पेड़ उखाड़ लीजिये। जड़ें काटकर हटा दीजिये। अंकुरों को धोकर थोड़े पानी के साथ सिल पर पीसकर कपड़े में छान लीजिये। बस हो गया "हरित रक्त" तैयार। इसका एक गिलास नित्य पिया जाये।

दूसरे दिन, दूसरे दिन के बोये अंकुर लिये जायें। जिस टोकरे में से उखाड़ लिये गये हैं, उनमें फिर बो दिया जाय ताकि क्रम बराबर बना रहे। एक ओर से समाप्त होते जायें तो दूसरी ओर से वे बोये और उगाये जाते रहें। इस प्रकार सिलसिला टूटने न पावेगा और सदा ही यह गेहूँ की घास मिलती रहेगी। यह ध्यान रखने की बात है कि अंकुर उखड़ने के बाद यथासम्भव जल्दी ही उन्हें पीसने, रस निकालने और पीने का कार्य पूरा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कर लिया जाये। रस को देर तक नहीं रखा जा सकता। एक घंटे में ही वह गुणहीन होने लगता है और तीन-चार घंटे रखा रहने पर तो वह बिल्कुल बेकार हो जाता है। हाँ, पौधों को उखाड़कर आवश्यकतानुसार ४-६ घंटे रखा भी जा सकता है। वैसे उनका भी ताजा सेवन ही अधिक लाभदायक है।

उपरोक्त महिला डाक्टर ने रोगी और नीरोगी सभी पर इस गेहूँ घास रस के चमत्कारी सत्परिणामों का वर्णन किया है और कहा है कि वह रस दवा और टॉनिक दोनों का ही काम करता है।

एक और प्रयोग भी उनने लिखा है—जो गेहूँ घास रस की बराबर तो नहीं फिर भी बहुत कुछ लाभदायक है। वह विधि यह है कि आधा कप धुले-बिने गेहूँ किसी काँच या चीनी के बर्तन में डालिये और उन पर दो कप पानी डालकर ढक दीजिये। १२ घंटे बाद गेहूँ को मसलकर अलग कर दीजिये और पानी को छानकर पीजिये। यह पानी भी बहुत गुणकारी है। भीगे हुये गेहूँ दलिया आदि में काम लिये जा सकते हैं या उबालकर—अंकुरित कर काम में लाये जा सकते हैं।

सारांश यह है कि खाद्य-पदार्थों को यथासम्भव उनके प्राकृतिक रूप में लिया जाये। कम से कम भूना पकाया जाये और उनके उपयोगी अंश को नष्ट न होने दिया जाय। इतनी मामूली-सी सावधानी बरती जा सके तो अपना गरीबी जैसा उपलब्ध आहार भी अपनी पोषक विशेषताओं को बनाये रह सकता है और उससे भी स्वास्थ्यरक्षा का प्रयोजन पूरा होता रह सकता है।

स्वस्थ रहना हो तो खाने-पकाने के ढर्रे को बदलें

स्वस्थ एवं निरोग रहने के लिये पोषक आहार की महत्ता बतायी जाती है। यह उचित भी है। पर इससे भी महत्त्वपूर्ण बात यह है कि मनुष्य के खाने एवं पकाने की शैली क्या हो। पोषक आहार जुटाने के लिये अधिकांश व्यक्ति अपनी-अपनी स्थिति के अनुरूप प्रयत्न करते हैं। पर अधिकांश उस तथ्य की उपेक्षा कर जाते हैं कि स्वास्थ्य एवं आरोग्य का सीधा सम्बन्ध मनुष्य के खाने एवं पकाने की विधि से है। यह सामान्य किन्तु अति महत्त्वपूर्ण एक ऐसा सिद्धान्त है जिस पर स्वास्थ्य की जड़ें अवलम्बित हैं। इस पक्ष की जितनी ही उपेक्षा होगी, उतनी ही रुग्णता और दुर्बलता बढ़ेगी।

स्वस्थ एवं निरोग रहने के लिये सामान्य परन्तु अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात ध्यान में रखने की यह है कि कड़ी भूख लगने पर ही खायें तथा अन्न को खूब चबा-चबाकर खाया जाय। इस बहुमूल्य शर्त का नियमित पालन करने से ही पाचन ठीक तरह से होता चलता है तथा पेट में किसी तरह की शिकायत होने की सम्भावना नहीं रहती है। इसके लिये प्रायः यह निर्देश दिया जाता है कि दो ही समय-प्रातः तथा संध्या, खाने के लिये निर्धारित कर लें तथा जब चाहें तब खाने से बचें। बार-बार मुँह चलाने तथा पेट में खाद्य पदार्थों को अनियन्त्रित रूप से पहुँचाते रहने से भोजन ठीक तरह से कभी पच नहीं पाता। इसका वही हाल होता है जैसे चूल्हे पर आप किसी पदार्थ को पकाने लगें तथा थोड़े-थोड़े देर पर उसमें विभिन्न तरह के पदार्थ डालते जायें। स्पष्ट है कि कोई भी पदार्थ ठीक तरह से पच नहीं पायेगा तथा सब गुड़-गोबर हो जायेगा। साथ ही भोज्य पदार्थ को सही रूप में चबाने तथा उसमें पाचन रस की उपयुक्त मात्रा समाविष्ट करने का काम दाँतों का ही है। यदि उसका उपयोग न किया गया और जल्दी-जल्दी में भोजन को पेट की भट्टी में झोंक दिया तो इसका परिणाम अपच, दस्त तथा गैस उत्पत्ति के रूप में अनुभव किया जा सकता है।

खाने के साथ-साथ पकाने की गलत विधि से भी खाद्य-पदार्थों के अधिकांश पोषक तत्त्व नष्ट हो जाते हैं। तलने-भूनने व मिर्च, मसाले के समावेश के कारण वह जायकेदार तो अवश्य बन जाता है परन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से वह निरुपयोगी व बेकार ही साबित होता है। बन्दगोभी पर किये गये अध्ययन के अनुसार उसे अत्यधिक उबालने से ६७ प्रतिशत एसकार्बिक एसिड तथा २० प्रतिशत कैल्शियम नष्ट हो जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

इसके अतिरिक्त सब्जियों व फलादि को प्रायः छिलके उतारकर ही खाने के काम में लाया जाता है। इससे उसके अधिकांश पोषक तत्त्व हमारे किसी काम नहीं आ पाते। आहार विज्ञान की वर्तमान खोजों से यह तथ्य प्रमाणित हुआ है कि आलू के छिलके में एसकार्बिक एसिड (विटामिन सी) की अधिकांश मात्रा उपलब्ध होती है। उसे हटा देने पर १२ से ३५ प्रतिशत विटामिन सी नष्ट हो जाता है। इसी तरह गाजर के छिलकों में ही विटामिन बी कम्प्लेक्स, थियामिन, रिबोफ्लेविन की पर्याप्त मात्रा पायी जाती है। सेब के छिलकों में एसकार्बिक एसिड की मात्रा उसके गूदे की तुलना में १० गुना अधिक होती है, तथा निआसिन व रिब्रोफ्लेविन भी अपेक्षाकृत अधिक मात्रा में उपलब्ध होता है।

अनाजों में भी पोषक तत्त्वों की अधिकांश मात्रा उसके बाह्य परतों व शीर्ष भाग में विद्यमान होती है। परन्तु वर्तमान फैशनपरस्ती का शिकार अनाजों को भी होना पड़ा है। देखने में वह स्वच्छ व चमकीले तारे सदृश लगें, इसके लिये उसकी मिलों में घिसाई-पिसाई की जाती है। चावल, दाल आदि की स्थिति वही है। गेहूँ को भी चक्की में पीसने तथा घर में उसके आटे से चोकर को पृथक् कर डालने की प्रक्रिया अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है। चावल को खाना बनाने से पूर्व बार-बार धोया जाता है तथा पका लेने के उपरान्त उसके अतिरिक्त जल को फेंक दिया जाता है। इन सब प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप सच कहा जाय तो हम पोषक-तत्त्वों से हीन छूँछ का ही भक्षण करते हैं।

प्रायः सब्जियों को काट व छीलकर जल में काफी देर तक डुबोया जाता है, इससे उसके पोषक तत्व काफी मात्रा में जल में घुल जाते हैं। उदाहरणस्वरूप, बन्दगोभी को काटकर धोने से उसका ६ से ५५ प्रतिशत एसकार्बिक एसिड १ से ५ प्रतिशत थियामिन और ३ प्रतिशत तक रिबोफ्लेविन नष्ट हो जाते हैं। खीरे व ककड़ी को सलाद बनाने की प्रक्रिया में दो प्रतिशत एसकार्बिक एसिड नष्ट हो जाते हैं। यदि उन्हें १ से ३ घण्टे तक उसी तरह रहने दिया जाये तो क्रमशः ८ प्रतिशत व ११ प्रतिशत एसकार्बिक एसिड नष्ट हो जाते हैं। मूली को छीलकर २४ घण्टे तक उसी स्थिति में छोड़ देने से २७ प्रतिशत विटामिन नष्ट हो जाते हैं। कटे हुए सेव में भी १ से २ घंटे में २० प्रतिशत और ३ घण्टे में ३५ प्रतिशत एसकार्बिक एसिड नष्ट हो जाता है। अभिज्ञात है कि एसकार्बिक एसिड (विटामिन सी) स्कर्वी रोग—त्वचा व ऊतकों के अन्तराल में रक्तस्राव तथा एनिमिया, दन्तपात आदि को रोकने की भूमिका निभाता है। यह प्रायः ताजे फल व सब्जियों में उपलब्ध होता है तथा प्रत्येक व्यक्ति के लिये ७० मिलीग्राम प्रति दिन की मात्रा में आवश्यक होता है। यह खुली हवा में ऑक्सीजन से प्रतिक्रिया करके नष्ट हो जाता है। वैसे पूर्ण रूप में चयापचय प्रक्रिया को सुव्यवस्थित करने कॉलेजन-स्वस्थ त्वचा, अस्थि, सहायक ऊतक के निर्माण तथा जख्म उपचार में सहायक, प्रोटीन को संश्लेषित करने, रक्त नलिका की संरचनात्मक सामर्थ्य को कायम रखने, कुछेक एमिनो एसिड्स के चयापचय तथा संक्रमण से रक्षा करने का कार्य सम्पादित करता है।

खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों को बचाने के लिये उसे अधिक उबालने-तलने, भूनने के बजाय प्रेशर कुकर अथवा भाप से खाना पकाने की विधि अपनानी चाहिये। देखा गया है कि बन्दगोभी को प्रेशर कुकर में पकाने पर उसमें ६१ प्रतिशत एसकार्बिक एसिड बची रह जाती है। इसी प्रकार भाप से पकाई हुई बन्दगोभी में ६७ प्रतिशत एसकार्बिक एसिड, ८८ प्रतिशत थियामिन और १०० प्रतिशत रिबोफ्लेविन पाया जाता है। जबकि सामान्य रूप में उबाली गई बन्दगोभी में यह मात्रा क्रमशः ४३ प्रतिशत तथा ५० प्रतिशत ही होती है। ध्यान यह भी रखना चाहिये कि खाना कम तापमान पर पकाया जाय, कम समय में उसे तैयार किया जाय तथा कम चौड़े बर्तन में उसे पकाया जाये।

प्राचीन समय में व्यंजनों को रंगयुक्त बनाने के लिये केसर, धनिया व अन्य वनस्पतियों को प्रयुक्त किया जाता था। परन्तु आज इसका स्थान कृत्रिम रंगों ने ले लिया है। इस समय विश्व में ६५ कृत्रिम रंगों का प्रयोग हो रहा है।

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भारत में ही १३ कृत्रिम रंगों का आम प्रचलन है। आश्चर्य तो इस बात का है कि इन रंगों के खतरनाक साबित हो जाने के बावजूद इसका प्रयोग बढ़ता जा रहा है। परिणामस्वरूप अनेकानेक रोग उत्पन्न होते पाये जा रहे हैं, जैसे—प्रजनन अंग, पेट व जिगर का क्षतिग्रस्त होना, शरीर का विकास रुकना, खून में लाल कणों की कमी, जिगर पर छाले पड़ना आदि। बुद्धिमानी इसी में है कि हम इन अनुपयुक्त व अप्राकृतिक पदार्थों का सेवन न करें।

खाने के साथ-साथ उपवास का भी विशेष महत्त्व है। इससे शरीर रूपी मशीन को थोड़ा विश्राम करने का अवसर मिलता है तथा उसी अवधि में उसकी धुलाई-सफाई भी हो जाती है। उपवास के विषय में आयुर्वेद कहता है—**"लंघनम परमौषधम्"** अर्थात् "उपवास सर्वश्रेष्ठ औषधि है।" उसी के शब्दों में पुनः यह कहा गया है कि "अग्नि आहार को पचाती है और उपवास मलों व विकारों को पचाता है अर्थात् नष्ट करता है।" डॉ. डेवी भी इस कथन की सत्यता प्रकट करते हुये कहते हैं—"रोगी को भूखा रखकर आप रोग को भूखा मार सकते हैं।" पिछले बीस वर्षों में उपवास चिकित्सा पर काफी प्रयोग हुआ है। इससे ८० प्रतिशत बीमारियाँ अपने आप ठीक होते पायी गई हैं। केवल दो या तीन के उपवास से दैनन्दिन रोग तथा दीर्घ उपवास से चिरकालिक रोग में सुधार होता है।

सचमुच ही जो स्वस्थ और निरोग रहना चाहते हैं तथा दीर्घजीवन के इच्छुक हैं, उन्हें चाहिये कि सर्वप्रथम अपनी खानपान की आदतों में परिवर्तन करें। खाद्य पदार्थों के पकाने की प्रचलित अनुपयोगी तथा हानिकर शैली को बदलें। यह सम्भव हो सके तो स्वास्थ्य आरोग्य तथा दीर्घ जीवन का लाभ प्राप्त कर सकना किसी के लिये कठिन न होगा।

खाने की आदतें एवं विधियाँ बदली जायें

हरे और सूखे का अन्तर लगभग वैसा ही है, जैसा जीवित और मृतक का। खाद्य-पदार्थों में हरेपन का, गीलेपन का होना उनकी रसता का, जीवित होने का चिन्ह है। पानी सूखने के साथ-साथ उनकी कोमलता, स्वादिष्टता ही नष्ट होगी, अनेक उपयोगी तत्व भी चले जाते हैं। हरी घास और सूखे भूसे के अन्तर को पशु भी समझते हैं। घास खाने वाले पशु मोटे तगड़े रहते हैं और भूसों पर गुजारा करने वाले थक जाते हैं, कम परिश्रम कर पाते हैं और कम दूध देते हैं। आहार के बारे में भी यही बात है। जड़ों द्वारा भूमि से निकाला हुआ और पेड़ों की नस-नाड़ियों में घूमता हुआ रस अनेक उपयोगी रासायनिक पदार्थों से युक्त होता है, सूखने के बाद उनकी यह उपयोगिता चली जाती है और जो कुछ शेष रहता है, वह कामचलाऊ भर होता है।

आहार स्वाद तृप्ति और पेट की जलन मिटाने के लिये नहीं है वरन् उसका वास्तविक उद्देश्य शरीर की क्षति को पूरा करना और उसके विकास में योग देना है। यदि यह बात समझ ली जाय तो आहार के गुणों पर ध्यान देना होगा। मनुष्य शाकाहारी है। वनस्पतियों की जड़ें, पत्ते, फूल, फल खाकर ही वह गुजारा करता है। स्पष्ट है कि वनस्पतियाँ तभी तक अपने गुणों से भरपूर रहती हैं जब तक वे हरी रहती हैं। अस्तु प्रयत्न यह करना चाहिये कि उन्हें हरे रूप में ही कच्ची खाया जा सके। यदि पाचन की सुविधा और स्वाद परिवर्तन की दृष्टि से पकाना, उबालना ही पड़े तो उसे मन्द आग पर कम से कम मात्रा में ही अग्नि सम्पर्क करना चाहिये। वस्तुयें जितनी अधिक सूखी, पुरानी, भुनी, तली होंगी, उतना ही उनका गुण घटता जायगा और उनसे पोषण भी उसी अनुपात से कम मिलेगा।

आज के प्रचलन में अन्न को प्रधानता मिली है। वही सुलभ है और सस्ता पड़ता है। फल उत्पादन में भूमि बहुत घिरती है और शाक देर तक सुरक्षित नहीं रह सकते। फिर स्वाद की दृष्टि से दूसरी चीजें बाज़ी मारने लगी हैं, ऐसी दशा में फल, शाकों की ओर से उपभोक्ता और उत्पादनकर्त्ता दोनों की ही उपेक्षा होगी। वह घटेगा ही। यही हुआ भी है। हमें अन्न पर निर्भर रहना पड़ता है। प्रयत्न यह करना चाहिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कि उसमें जितना कुछ पोषण है कम से कम उसका उपयोग तो पूरी तरह कर लिया जाये।

इन दिनों होता यह है कि हरे अनाज का छिलका फेंक दिया जाता है और उसका सूखा हुआ गूदा आटे के रूप में काम आता है। छिलकों में कसैलापन होता है और वे कड़े होने के कारण पकाने-चबाने में उतने सरल नहीं होते, इसी कमी के कारण वे हटा दिये जाते हैं और पशुओं के काम आते हैं। रासायनिक दृष्टि से देखा जाय तो बीजों का सबसे महत्त्वपूर्ण और उपयोगी अंश इस छिलके में ही होता है, जीवन और शक्ति का सबसे बड़ा भाग इन्हीं में होता है किन्तु अज्ञानवश उन्हें निर्दयतापूर्वक फेंक दिया जाता है।

सूर्य की किरणों से ही प्रत्येक प्राणी एवं वनस्पति को जीवन मिलता है। किरणें बीज, फलों के ऊपरी हिस्से से टकराती हैं और सबसे अधिक पोषक तत्व जमा होते रहते हैं। विटामिन बी, विटामिन डी जैसे जीवन तत्व आमतौर से अनाज के छिलके में ही पाये जाते हैं। कमजोर व्यक्तियों को शक्तिदायक औषधियों के रूप में डॉक्टर लोग अक्सर विटामिन बी का सेवन कराते हैं। औषधि रूप में उसका बहुत थोड़ा अंश पच पाता है, शेष पीला पेशाब बन कर बाहर निकल जाता है। गेहूँ के छिलके में विटामिन बी की उतनी ही मात्रा रहती है जितनी कि मनुष्य का पेट आसानी से पचा सके। साथ ही दूसरे तत्व भी उसे पचाने में मदद करते हैं। गूदे में रहने वाले कैल्शियम आदि पदार्थ उसके शकर भाग को पचा देते हैं किन्तु अकेली चीनी उतनी सफलता से नहीं पचती। यही अन्तर गेहूँ के छिलके में रहने वाले विटामिन बी और बाहर से खाये कैपसूल में रहता है। छिलकायुक्त गेहूँ खाया जाय तो डॉक्टरों द्वारा सुझाये हुये कीमती टॉनिकों से अधिक लाभ हो सकता है। पर हम हैं जो भूसी छानकर फेंक देते हैं और उसका गूदा भर काम में लेते हैं। यह तो ऐसा ही हुआ जैसे कोई चाय का रस निकाल कर फेंक दे और जो लुगदी बचती है, उसी को सब कुछ समझकर काम में लाये। हीरे की अँगूठी का नग निरर्थक समझ कर फेंक देना और शेष खोखले को ही सब कुछ मानना अनाड़ीपन है। ठीक इसी प्रकार अन्न के छिलके उतारकर गूदा आटा भर खाने की बात को भी मूर्खतापूर्ण समझा जाना चाहिये।

जिन अन्नों के छिलके आसानी से खाये जा सकते हैं उन्हें बिना छाने ही खाना चाहिये। जौ जैसे कुछ ही अनाज ऐसे होते हैं जिनका छिलका कड़ा और दुष्पाच्य होता है, उसे निकालना पड़ता है। शेष सभी अनाज आसानी से छिलके सहित खाये जा सकते हैं। दाल छिलके समेत ही खानी चाहिये। दो दल वाले अनाजों को दालों की संज्ञा में गिना जाता है उनके जोड़ने पर एक निशान चोंच जैसा उभार होता है, तोड़ने पर उस जगह एक गाँठ मिलती है। इसी केन्द्र को उनका सार भाग समझना चाहिये। चना, मूँग आदि पूरे घुनकर खोखले हो जायें पर उनका यह जोड़ चोंच वाला भाग ठीक रहे तो बोने पर अंकुर अवश्य उगेगा। इसके विपरीत यदि यह केन्द्र नष्ट हो जाय और पूरा दाना यथावत् बना रहे तो उसके उगने की कोई सम्भावना नहीं है। इससे स्पष्ट है कि यह चोंच जोड़ वाला केन्द्र कितना महत्त्वपूर्ण है। इसे अलग कर देने पर आधे से अधिक सार तत्व गँवा दिया जाता है। दालें दो टुकड़े करके पकाने की अपेक्षा यदि साबुत ही खाई जायँ तो वे कहीं अधिक पोषक सिद्ध होंगी। यदि दलकर दो टुकड़े ही करने हों तो इतना तो करना ही चाहिये कि उन्हें छिलके समेत पकाया जाता। छिलका कुछ कसैला होता है और देखने में काला लगता है इससे उसे फेंक दिया जाता है और यह नहीं सोचा जाता हैं कि पदार्थ के कितने कीमती भाग को हटा दिया गया और कम महत्त्व वाले को ही सब कुछ मान लिया गया है। इस भूल के कारण हम भोजन के नाम पर तो बहुत ढोते हैं किन्तु परसी थाली में छूँछ ही शेष रहने देते हैं।

चावल का प्रचलन बहुत है पर दुर्भाग्य से उसके ऊपर की कीमती परत जो भूरे रंग की होती है, हटाकर अलग कर दी जाती है। मिल का पालिश किया हुआ चावल आमतौर से ऐसा ही होता है। धान का छिलका तो चावल का डिब्बा भर है, उसे तो नारियल के खोखले की तरह हटाना ही पड़ेगा पर चावल की ऊपरी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भूरी पर्त अलग नहीं की जानी चाहिये। देखने में भले हीं भात उतना सफेद सुन्दर न लगे तो भी वह परत वाला चावल बहुत गुणकारक होगा। बाजार में ऐसा चावल न मिले तो धान समेत खरीदकर उसे घर में ओखली में कूट लेना चाहिये और छिलका हटाने के बाद परत समेत चावल पकाना चाहिये।

दालों के बारे में यही आदत डाली जाय कि वे साबुत पकाया करें। कम से कम उनका छिलका तो हर हालत में बना ही रहे।

यहाँ एक बात और स्मरण रखने की है कि आटा पीसने की चक्की को स्वास्थ्यदायिनी देवी की तरह घर-घर में प्रतिष्ठित रखा जाये। हृदय, फेफड़ा, जिगर, पेट पेड़ू, कंधे, हाथ आदि अति महत्त्वपूर्ण अवयवों का संतुलित, व्यायाम चक्की पीसने के अतिरिक्त और किसी प्रकार नहीं हो सकता। आहार की तरह ही व्यायाम का भी स्वास्थ्य-रक्षा से घनिष्ठ सम्बन्ध है। स्त्रियों को भोजन बनाने, झाड़ू लगाने जैसे काम तो ढेरों करने पड़ते हैं पर उनसे बड़े व्यायाम की आवश्यकता पूरी नहीं हो पाती। इस कमी के कारण धड़ के भीतर रखा हुआ इंजन खराब होने लगता है, अपच रहता है और गर्भाशय जैसे कोमल अंगों को पुष्टि नहीं हो पाती। धड़ के भीतर वाले अंगों की मजबूती के लिये उनका व्यायाम भी आवश्यक है। इसकी पूर्ति जितनी अच्छी तरह चक्की पीसने से हो सकती है उतनी और किसी उपाय से नहीं। यों कपड़े धोना, दही मथना भी पुराने जमाने में कई व्यायाम थे पर उनका प्रचलन भी घट गया है और कम परिश्रम में इन कामों को कर देने वाले उपकरण निकल आये हैं। मशीन की चक्कियों ने हाथ चक्की का भी पत्ता काट दिया है। यह कम से कम स्वास्थ्य की दृष्टि से तो बुरा ही हुआ है।

जहाँ स्वास्थ्य का महत्त्व समझा जा रहा हो वहाँ हाथ चक्की का प्रचलन करने पर भी ध्यान दिया जाना चाहिये। आजकल शारीरिक श्रम करने वालों को छोटा और आरामतलब लोगों को बड़ा माना जाता है। परिश्रम में बेइज्जती और आराम में खुशहाली समझी जाती है। यह मान्यता दरिद्रता की निशानी और स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत ही अहितकर है। यह मान्यता बदली जानी चाहिये और पैसा बचाने की दृष्टि से न सही, स्त्रियों के लिये सर्वोत्तम व्यायाम मानकर ही पीसने का कम से कम थोड़ा-बहुत अभ्यास तो जारी रखना ही चाहिये। घर की सभी महिलायें यदि इस दिशा में उत्साह दिखायें तो फिर नववधुओं को भी इसमें अपमान और दबाव अनुभव न होगा।

हल्का, संतुलित एवं उत्पादक व्यायाम चक्की पीसने से बढ़कर दूसरा कोई कदाचित ही हो सके। इसमें पैसे को बचत प्रत्यक्ष है। मशीन की चक्की पर अनाज पहुँचाना, वापिस लाना, पिसाई का पैसा देना, छीजन के नाम पर कटौती का आटा कम मिलना आदि काफी महँगा पड़ता है। महँगे अनाज में सस्ता मिला देने और तराजू में हेरा-फेरी करके कम तौलने में कोई-कोई चक्की वाले अपनी उस्तादी दिखाते हैं। उस समय और पैसे की बर्बादी से हाथ की चक्की सहज ही बचा सकती है। मशीन की चक्कियाँ तेजी से पीसती हैं और आटा आग जैसा गरम हो जाता है। इस अनावश्यक गर्मी से आटे के बहुत सारे गुण नष्ट हो जाते हैं। हाथ की चक्की धीरे-धीरे पीसती है और उसका ठण्डा आटा गुणों की दृष्टि से कहीं अधिक अच्छा रहता है। इन सब बातों पर जहाँ ध्यान दिया जायगा वहाँ चक्की को बेइज्जती की नहीं, समझदारी की निशानी माना जायेगा और यदि वह बेकार पड़ी है तो सम्भालने का और यदि नहीं है तो मँगाने का प्रयत्न किया जायेगा।

सूखे अनाजों को पुनः हरा करने का अच्छा तरीका यह है कि उन्हें अंकुरित कर लिया जाय। पानी में एक दिन भिगोये रखा जाय, दूसरे दिन भीगे तौलिये में उन्हें बाँधकर हवा में लटका दिया जाये और पानी के छींटे लगाते रहने की व्यवस्था बनाकर उन्हें सूखने न दिया जाय, तो एक-दो दिन में उनमें से अंकुर फूट जाता है। इस स्थिति में अनाज भी हरे अन्न की तरह ही हो जाता है और उसे कच्चा अथवा उबालकर खाया जा सकता है। जिनके पेट कमजोर हैं वे प्रायः कच्चे अन्न ठीक से पचा नहीं पाते, उन्हें उबालकर दिया जा सकता है अथवा तवे पर हलकी आग से गरम किया

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जा सकता है। स्वादप्रिय न हो तो नमक, नीबू, जीरा, धनिया जैसी चीजें भी डाली जा सकती हैं। इन प्रकार गेहूँ, चना, मूँग आदि उगाकर खाये जायें तो उनसे अच्छे खासे पोषक तत्व मिल सकते हैं।

सूखने से पूर्व अन्न जब तक हरे रहते हैं तब तक उनकी उपयोगिता और भी अधिक बढ़ी-चढ़ी होती है। मक्का, ज्वार, बाजरा, चना, मटर, गेहूँ की बालों तथा भुट्टे भूनकर किसान लोग बड़ी रुचिपूर्वक खाते हैं। इनमें से कुछ चीजें बाजार में भी बिकने आ जाती हैं। मक्के के भुट्टे और मटर के दाने तो फसल पर अक्सर सब्जीवालों की दुकान पर मिलते हैं। जिन्हें इस प्रकार का अन्न मिल सके, उपभोग में लाने का प्रयत्न करना चाहिये। इनमें से हरे चना-मटर तो शाक-भाजी के काम भी आ सकते हैं।

सूखे फलों में छुहारे की अपेक्षा खजूर—किशमिश की अपेक्षा अंगूर—सूखी नारियल गिरी से उसका पानी और कच्चा गूदा, सूखे अंजीर से हरे अंजीर इसीलिये अच्छे माने जाते हैं कि उनमें समूचे पेड़ का प्राकृतिक रस विद्यमान रहता है। सूखे आमचूर की अपेक्षा कच्ची आमी की चटनी में अधिक जान रहती है। यही बात सूखे आंवले, पुदीना, धनियाँ, मिर्च, अदरक आदि पर भी लागू होती है। यह चीजें सुखाई हुई भी बाजार में बिकती हैं, पर हरी के जितने गुण उनमें शेष नहीं रहते।

हमारा आहार—समय और धन तो काफी खर्च करा लेता है, पर उसमें पोषक तत्व नहीं रहते, फलतः कुपोषण के कारण जन साधारण का स्वास्थ्य गिरा हुआ रहता है, दुर्बलता और उदासी छाई रहती है। तनिक भी सर्दी-गर्मी या प्रतिकूलता उत्पन्न होते ही बीमारियाँ धर दबोचती हैं। बच्चों के शरीर की वृद्धि तेजी से होती है और पेट कमजोर होते हैं, अस्तु उन्हें अधिक संतुलित एवं पोषक तत्वों से युक्त आहार की आवश्यकता पड़ती है। हम लोग इस सम्बन्ध में न तो आवश्यक जानकारी ही रखते हैं और न जानकार लोग ध्यान देते हैं। फलतः बच्चों का विकास आरम्भ से ही रुक जाता है। दुर्बलता एवं रुग्णता बचपन से ही उनके साथ हो लेती हैं और जिन्दगी भर तंग करती हैं।

यदि हमारी स्वाद, रुचि एवं निर्माण-विधि में थोड़ा परिवर्तन किया जा सके, तो उतने भर से कुपोषण से उत्पन्न स्वास्थ्य संकट का समाधान निकल सकता है। आवश्यक नहीं कि बहुत कीमती खाद्य-पदार्थ ही खरीदे जायें। जो खाते हैं उसी को सऊर-सलीके से, थोड़े हेरफेर के साथ पकाने-खाने लगें तो उतने भर से जमीन-आसमान जितना अन्तर हो सकता है, हमारी गिरती हुई तन्दुरुस्ती सँभल सकती है और बलिष्ठता की दिशा में बढ़ सकती है।

चटोरेपन पर अंकुश लग सके—मिर्च, मसाले, मिठाई, खटाई की भरमार रुक सके और खाद्य पदार्थों के स्वाभाविक स्वाद में रुचि एवं सन्तोष का समावेश हो सके, तो पेट पर अनावश्यक भार लदना बन्द हो जायगा और स्वाद में ठूँस-ठूँस कर खाने के कारण जो अपच उत्पन्न होती है, उसके कहीं दर्शन भी न होंगे। अपच पर काबू पाया जा सके, तो तीन-चौथाई बीमारियों का अन्त हुआ ही समझना चाहिये।

पाक-शाला में से भूनने-तलने की विधि बहिष्कृत कर दी जाय, कढ़ाई को उठाकर एक कोने में पटक दिया जाय, मसाले नाममात्र को प्रयोग हों तो समझना चाहिये कि स्वास्थ्य संरक्षण मार्ग में खड़ा हुआ एक बहुत बड़ा अवरोध हट गया।

पकाने की विधि में तेज आग का प्रयोग बन्द किया जाय और भाप से हल्की आग पर पकाने की प्रक्रिया अपनाई जाय। भाप से पकाने वाले स्टीम कुकर किसी भी नगर में मिल सकते हैं। यह प्रायः तीन-चार डिब्बे के होते हैं, नीचे छोटी सी अँगीठी रहती है। इन डिब्बों में दाल, चावल, शाक थोड़ा पानी डालकर पकने रख दिये जाते हैं और वे धीमे-धीमे हल्की आग पर दो तीन घण्टे में पककर तैयार हो जाते हैं। ये वस्तुयें स्वादिष्ट भी होती हैं और उनके जीवन तत्व भी नष्ट नहीं होने पाते, अब प्रेशर कुकर भी चल पड़े हैं। इनमें दबाव और गर्मी अधिक रहने से भोजन जल्दी पक जाता है, स्वादिष्ट भी रहता है, किन्तु दबाव तथा गर्मी की अधिकता के कारण उतनी सरसता सुरक्षित नहीं रह पाती जितनी भाप की मन्द - गति से मन्दी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आग पर पकाने वाले पुराने ढंग से स्टीम कुकरों में बनी रहती है। बनाने की दृष्टि से भी वह सुविधाजनक रहते हैं। प्रेशर कुकर में पकने का समय पूरा हो जाने पर भी यदि उसे आग पर रखा रहने दिया जाये तो जलने-फूटने का खतरा है, किन्तु स्टीम कुकर में थोड़े से कोयले डाल देने और वस्तुयें चढ़ा देने के बाद निश्चिन्त रहा जा सकता है। वह पक तो दो-तीन घण्टे में ही जायेगा, पर उसे वैसे ही चार छः घण्टे के लिये बिना देख-भाल के छोड़ा जा सकता है। इतनी देर बाद भी भोजन गरम स्वादिष्ट और यथावत् निकलेगा।

बड़े स्टीम कुकर अपने हाथों थोड़ी सी लुहार की मदद लेकर आसानी से बनाये जा सकते हैं। मिट्टी के तेंल वाले कनस्तर में कड़ा ढक्कन बनवा लिया जाये। इसके पैंदे में थोड़ा पानी भरकर उसमें एक के ऊपर एक कई भगौने रख दिये जायँ, ऊपर वाले को ढक दिया जाय। कनस्तर के पेंदे से भगौने का पेंदा चिपकने न पाये, इसके लिये लोहे या मिट्टी का घेरा रख दिया जाता है। बस स्टीम कुकर तैयार है। चूल्हे पर चढ़ा दिया जाय और भाप कम ही बाहर निकले, इसका ध्यान रखा जाय तो बड़ी मात्रा में भी भोजन पक सकता है। रोटी तो इसमें नहीं पक सकती पर डबल रोटी, बाटी किस्म की कुछ चीजें पकाने की तरकीबें निकाल ली गयी हैं। सब मिलाकर रसोईघर का एक अनिवार्य उपकरण यह 'भाप कुकर' बनना चाहिये और इसका प्रचलन, प्रशिक्षण सर्वत्र होना चाहिये। इसके सहारे पकाते समय भोजन का सार तत्व जो बहुत बड़ी मात्रा में नष्ट होता रहता है, सरलतापूर्वक बचाया जा सकता है।

क्या खायें ? कैसे खायें ?

मनुष्य की संरचना बन्दर बिरादरी की है। डार्विन तो यहाँ तक कहते थे कि मनुष्य बन्दर की औलाद है। इतना न भी हो, तो वह अन्य प्राणियों की अपेक्षा बन्दर का सबसे अधिक निकटवर्ती है। दोनों के लिये आहार भी एक ही तरह का सुपाच्य बैठता है।

बन्दर की भाँति मनुष्य भी शाकाहारी है। दोनों के लिये अधिक प्रिय और पौष्टिक फल बैठते हैं। कभी इस धरती पर वन अधिक थे, उनमें ऊँचे दर्जे के फल भी बहुत होते थे, पर अब वैसी स्थिति नहीं रही। अँगूर, अनार, सेव, सन्तरा, चीकू, अनन्नास आदि सबके लिये सुलभ नहीं हैं। उनके दाम बहुत महँगे हैं। बड़े लोग तो आसानी से उन्हें प्राप्त कर सकते हैं, पर मध्यवर्ती लोग सस्ते ऋतुफल प्राप्त कर सकें, तो भी अच्छा है। आम, जामुन, शहतूत, कठहल, बेर, अमरूद, पपीता, केला जैसे फल अधिक महँगे नहीं होते और अपने-अपने मौसम पर बड़ी मात्रा में मिल जाते हैं। खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, खीरा टमाटर, गाजर और भी सस्ते होते हैं। इसमें मनुष्य की प्रकृति के अनुकूल जिन तत्वों की आवश्यकता है, वे भी इनमें सन्तुलित मात्रा में मिल जाते हैं। ये सुपाच्य हैं, इन्हें भूनने-उबालने की आवश्यकता नहीं पड़ती। इसके अतिरिक्त बहुत सी शाक-भाजी ऐसी हैं, जो मनुष्य के लिये उपयोगी तो हैं, पर पचने में तथा स्वाद में ऐसी हैं कि उबाले बिना काम नहीं चलता। पुराने जमाने के कड़ी-मेहनत करने वाले लोग ऐसे थे, जो अनेक चीजें कच्ची ही खा जाते थे और पचा लेते थे, पर अब पाचन शक्ति शिथिल हो जाने पर उबली हुई वस्तुयें पेट की पाचन क्रिया का काम हलका कर देती हैं।

फलों के बाद शाकों का नम्बर आता है। न्यूनाधिक मात्रा में सभी शाक हल्के होते हैं। बैंगन, लौकी, तोरई, टिन्डे, भिन्डी, चुकन्दर, शलजम आदि जिनमें पानी का अंश अधिक होता है, हल्के माने जाते हैं। आलू, अरबी रतालू, जमीकन्द, मूली, प्याज जमीन में भीतर से निकलते हैं, वे कन्द कहलाते हैं। उनमें पानी का अंश कम होता है। इसलिये उन्हें उबालने की आवश्यकता पड़ती है। इनका स्वाद भी ऐसा है, जिसके कारण उन्हें कच्चा नहीं खाया जा सकता है। उबालने पर वे सुपाच्य और स्वादिष्ट खाने योग्य बन जाते हैं।

शाकों को स्वादिष्ट बनाने के लिये उनमें मसालों की भरमार की जाती है, इससे वे जायकेदार तो बन जाते हैं, भूनने-तलने का भी रिवाज है, पर मसालों की गर्मी के कारण पेट पर अनावश्यक दबाव डालते हैं।

साथ ही उसके कारण रक्त भी उत्तेजित स्तर का बनता है। काम न चले तो हल्का सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

नमक डाला जा सकता है। मसालों की बहुत इच्छा हो तो हरी मिर्च, अदरक, पोदीना, धनियाँ, प्याज, आँवला, नीबू जैसी वस्तुयें हर परिस्थिति में मिलाकर जायका बढ़ाने का काम लिया जा सकता है। सूखी मिर्च, हींग, दालचीनी, तेजपात, आमचूर जैसी वस्तुयें विशेष रूप से उत्तेजक और हानिकारक मानी गई हैं। अचार तो किसी का भी नहीं बनाना या खाना चाहिये। तेल में बहुत दिन तक पड़ी रहने के कारण वस्तुयें अपना स्वाभाविक गुण खो बैठती हैं। कई वस्तुयें तो अखाद्य होते हुये भी अचार के नाम पर खाए जाने की प्रथा है, जैसे—टेंटी, बाँस, नीम, कालीमिर्च आदि के अचार लोग बना लेते हैं। वे अपनी मूल प्रकृति में मनुष्य के लिये उपयोगी न होने के कारण परिणाम में भी हितकर नहीं पड़ते।

अन्न बिरादरी की हर चीज उबालकर ही लेनी चाहिये। किसी भी अन्न को अपनी रुचि के अनुरूप चुना और खाया जा सकता है। दालें सभी अच्छी हैं, उनमें प्रोटीन की मात्रा अधिक होती है। मूँग, मसूर, मोंठ, उड़द, अरहर, लबिया आदि में उपयोगी प्रोटीन होती है। सोयाबीन में प्रोटीन की मात्रा तो अधिक है, पर उसमें तेल की मात्रा भी अधिक रहती है। इसलिये पचने में भारी पड़ता है तो भी इसमें दूसरे अन्न या दालें मिलाकर हल्का किया जा सकता है। रोटी के साथ दाल खाने का रिवाज है, सो ठीक है, पर साथ में शाक की मात्रा भी रहनी चाहिये। अन्न को पानी में भिगोकर अंकुरित कर लिया जाय, तो उसमें जीवन तत्व बहुत अधिक बढ़ जाता है। दालों में सेम, मटर, चना, आदि का भी उपयोग होता है। कच्ची स्थिति में उनमें बीज निकालकर दाल अधिक स्वादिष्ट और सुपाच्य होती हैं।

जहाँ तक हो सके, वहाँ तक अनाजों, दालों, शाकों और फलों का छिलका फेंकना नहीं चाहिये, क्योंकि इन सभी छिलकों में जीवन तत्व अधिक मात्रा में होते हैं। छिलके कई बार कड़े होते हैं और स्वाद में कसैले जैसे लगते हैं, इतने पर भी गुण उन्हीं में अधिक होते हैं। दालें साबुत ही पकाई जायँ, तो अधिक उपयोगी रहती हैं। छिलका ही नहीं उसका मध्य भाग, जिसमें से अंकुर उगता है, स्वाद में कुछ कसैला होने के कारण आमतौर से फेंक दिया जाता है या जानवरों को खिला देते हैं, यह भूल है, पौष्टिक अंश को फेंक दिया जाय और जो कमजोर अंश रह जाता है, उसे खाया जाय, तो यह घाटे का सौदा है।

शाकों में तो विटामिन होते हैं, वे इतने हल्के किस्म के होते हैं कि खुले बर्तन में पकाने पर भाप के साथ ही उड़ जाते हैं। इसलिये उन्हें पकाते समय भाप को बन्द रखने वाला ढक्कन अवश्य रखे रहना चाहिये। इस दृष्टि से प्रेसर कुकर सर्वोत्तम है। उसमें शाक-दाल के उपयोगी अंश भीतर ही बन्द रहते हैं। मन्दी आग में भाप द्वारा ही पक जाता है, सीधी आग पर पकाने की अपेक्षा भाप से पकाना उत्तम है। उससे जीवन तत्व नष्ट नहीं हो पाते। तेल, घी, मसालों में, खुली कढ़ाई में तलने पर तो खाद्य-पदार्थों का जीवन तत्व तेज आग की गर्मी से खुली स्थिति में पकाने पर वे एक प्रकार से स्वत्व रहित-कोयला जैसा रह जाता है।

रोटी बनाने का तरीका अपने यहाँ प्रचलित है और ईंधन भी अधिक खर्च करता है। अच्छा है, हाथ से बनाई हुई मोटी रोटी बनायी जाय। रोटियों के लिये आटा गूँथते समय उसमें पालक, बथुआ, बैंगन आदि मिला लिए जायँ। बीच में आलू, सलाद आदि भर लिये जायँ, तो रोटी भी बनेगी और शाक की मात्रा सम्मिलित हो जाने के कारण सस्ती भी पड़ेगी।

अगले दिनों जनसंख्या वृद्धि के कारण न केवल अनाज कम पड़ेगा, वरन् महँगा भी होगा। इसलिये भोजन में शाक की मात्रा बढ़ानी चाहिये। ये सस्ते होते हैं और सुपाच्य भी। किसान को भी उसके उत्पादन में लाभ रहता है।

यदि थोड़ी दिलचस्पी ली जाय, तो घरों में शाक उगाये जा सकते हैं। घरेलू शाक-वाटिका बड़ी आसानी से लग सकती है। आँगनबाड़ी, छप्परबाड़ी, छतबाड़ी पर शाक और बेलें आसानी से लगाई जा सकती हैं। जिनके पास जगह कम हो या व्यस्तता हो, वे भी चटनी के लिये पोदीना, धनियाँ, हरी मिर्च, अदरक आदि बड़ी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आसानी से हर महीने उगा सकते हैं। मैंथी, पालक, जैसी पत्तेदार भाजियाँ ऐसी होती हैं कि उनके पत्ते तोड़ते रहने पर नये आते रहते हैं और घरों में उगाई हुई मुफ्त की नितान्त भाजी हमेशा खाने को मिलती रह सकती है।

अनाजों को पीसने के बाद उनमें कचरा हटाने की दृष्टि से छान लेने में हर्ज नहीं पर भूसी फेंकनी नहीं चाहिये। आटे में मिला देना चाहिये और चोकर समेत रोटी बनानी चाहिये। यदि पीसने का प्रबन्ध घर पर ही हो सके, तो बहुत-अच्छी बात है। मशीन पर पिसाई कराने में आटा बहुत गरम हो जाता है और उस कारण उसकी पौष्टिकता घट जाती है। बाजार में बहुत दिनों का रखा आटा लेने पर भी उसके गुणों में अपेक्षाकृत कमी आ जाती है।

घरों में चक्की चलाना महिलाओं के लिये स्वास्थ्यवर्धक है। उससे पेट, सीने और हाथों का अच्छा-खासा व्यायाम हो जाता है। इसलिये प्रयत्न यह करना चाहिये कि अपने घरों में चक्की रहे और उसका उपयोग स्त्री-पुरुष मिलकर सामूहिक खेल खिलवाड़ एवम् स्वास्थ्य संवर्धन की दृष्टि से किया करें।

चावल का हम लोग मात्र सफेद भाग इस्तेमाल करते हैं, उसके ऊपर रहने वाली लाल परत को कूटकर हटा देते हैं, जबकि इस लाल परत में ही जीवन तत्व अधिक मात्रा में रहते हैं। ऊपर का धान का छिलका उतार दिया, उतना ही पर्याप्त है। उसकी लाल परत नहीं उतारनी चाहिये। चावल उबालकर उसका माँड वाला पतला अंश फेंकना नहीं चाहिये। चावल पकाते समय डाला गया पानी, उनमें ही रहने देना चाहिये इसमें चावल बिखरे हुये जैसे खूबसूरत तो नहीं दिखते, पर गुणकारक वे ही होते हैं, जिनका पानी न फेंका गया हो।

फल, शाक और अनाजों में उपयोगी नमक और शक्कर की पर्याप्त मात्रा होती है। उसमें अधिक खारीपन और मिठास तो नहीं होती, पर शरीर को जितनी आवश्यकता है, जितना पच सकता है वह अंश प्रकृतितः हमें उन्हीं से प्राप्त हो जाता है। ऊपर से डाला गया नमक और शक्कर अनावश्यक ही नहीं, हानिकारक भी होते हैं। प्रकृति उन्हें मेहनत करके बाहर निकाल फेंकती है। इन्हें मिलाने से स्वाद भले ही बढ़ जाय, पर लाभ कुछ नहीं होता। नमक लेना है, तो साँभर के स्थान पर सेंधा नमक लेना चाहिये और सफेद चीनी के स्थान पर गुड़ का इस्तेमाल करना चाहिये। गुड़ में कैल्शियम का पाचक अंश बना रहने से वह हानि नहीं उठानी पड़ती, जो सफेद चीनी हड्डियों को कमजोर करके पहुँचाती है।

पकवान-मिष्ठान्न तो हानि ही हानि पहुँचाते हैं। उनका पोषक अंश पहले ही निकल चुका होता है। भूनने-तलने पर वे कोयले जैसे हो जाते हैं और पेट पर अनावश्यक दबाव डालते हैं। महँगे भी हो जाते हैं। मिठाई के स्थान पर मूँगफली गुड़ की चासनी में मिलाकर चकती जैसी वस्तुयें बनायी जा सकती हैं। रामदाने या तिल गुड़ से कूटकर वैसी मिठाई बन सकती है, जैसी कि बाजार में गजक बिकती है। गाजर का हलुआ-पेठा जैसी बिना चिकनाई की बिना भुनी-जलाई गई वस्तुयें ही उपयोगी होती हैं। पूड़ी-कचौड़ी के स्थान पर गुजराती ढोकला, दक्षिण का डोसा, यू. पी. का चीला जैसी वस्तुयें हल्की, सस्ती और सुपाच्य रहती हैं। पकवानों को इसलिये हटाना चाहिये कि उनमें जिस चिकनाई की जरूरत पड़ती है, उनमें मिलावट की भरमार पाई जाती है। वे स्वास्थ्य के लिये हानिकर होती हैं, और लागत की दृष्टि से भी महँगी पड़ती हैं। कुशल महिला अकल दौड़ाकर ऐसे शाकाहार व्यंजन बना सकती हैं जो गरिष्ठ और महँगे न होने पायें, जिनमें मावे (खोया) इस्तेमाल न होता हो। अपने देश में दूध की भारी कमी है, वह बच्चों और बीमारों के लिये भी कम पड़ता है। दिन-दिन महँगा होता जा रहा है। इस कमी का एक बड़ा कारण खोये का उपयोग मिठाइयों के लिये बड़ी तादाद में होना ही है। यदि उसका उपयोग रोका जा सके, तो दूध उन्हें मिल सकता है जो वस्तुतः उसके अधिकारी हैं। खोये का उपयोग उस जमाने की प्रथा है, जिन दिनों इस देश में दूध की नदियाँ बहती थीं, आज तो उसकी अशुद्धता और महँगाई निरन्तर बढ़ती जा रही है। ऐसी दशा में हमें समय को देखते हुये अपनी आदतें भी बदलनी चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देश में दुधारू पशुओं की भारी कमी हो रही है। यह निश्चित है कि मनुष्य बढ़ेंगे तो पशुओं का इस धरती पर रहना कठिन है। एक पशु नौ आदमियों के बराबर स्थान घेरता है और उतनी ही जगह उसे दाने-चारे के लिये चाहिये। बढ़ती आबादी का सीधा प्रभाव जंगल कटने पर ही नहीं—पशुओं का सफाया होने पर भी पड़ेगा। इसलिये आज नहीं तो कल-पशुओं से प्राप्त होने वाली वस्तुओं के दूसरे विकल्प अभी से खोजने चाहिये।

अस्तु, नकली दाँतों, नकली आँखों, नकली सोना, नकली घी की तरह नकली दूध के लिये हमें भी तैयार होना चाहिये, अन्यथा असली का पैसा देकर भी नकली घटिया, हानिकर वस्तुयें ही खरीदना पड़ेंगी। दूध में अरारोट, ब्लॉटिंग पेपर, तालाबों का पानी आदि न जाने क्या-क्या मिलावटें अभी भी हो रही हैं।

सस्ता और साफ-सुथरा नकली दूध मूँगफली, सोयाबीन एवम् तिल का, पीस-छानकर बन सकता है। यह तीनों वस्तुयें ऐसी हैं, जो सिल पर पीसी जा सकती हैं, इनमें इच्छानुसार पानी मिला लिया जाय। यह हानिरहित हैं, इसकी चाय बन सकती है अथवा दूध की जगह अन्य कामों में आ सकता है। कोई बुरा न मानें, तौहीनी न समझें। इन दिनों जब वेजीटेविल सर्वप्रचलित है और घी देवताओं के लिये दुर्लभ हो रहा है, उसी प्रकार अगले दिनों दूध भी न मिलेगा, तो उपरोक्त विकल्प ही काम में लाना होगा। अच्छा हो, मजबूरी से पूर्व उसकी तैयारी कर लें।

अनाज को शाक में मिलाकर इस्तेमाल करें। इसके विकल्प में आलू काम दे सकता है, उसकी मिली हुई रोटियाँ बन सकती हैं और मिष्ठान्न-पकवानों के कई विकल्प निकल सकते हैं। जो फलाहारी वस्तुयें बनाते रहते हैं, उन्हें ऐसी सस्ती और अपेक्षाकृत कम जायके वाली वस्तुयें बनाने में अपना दिमाग लगाना चाहिये। शकरकन्द की मिठाइयाँ और आलू के नमकीन पदार्थ बनाने की बात वर्तमान खाद्य संकट, महँगाई और मिलावट की भरमार को देखते हुये नये सिरे से सोचने और नये आविष्कार करने के लिये बुद्धि दौड़नी चाहिये।

माँसाहारी समय रहते चेतें। अभी भी वह अन्न की तुलना में बहुत महँगा है। पीछे जब पशुओं की कमी पड़ती जायेगी, तो वह और भी महँगा होता जायेगा। माँसाहार के विरोध में उसका दुष्पाच्य होना और पशुओं की बीमारियों का—आदतों का मनुष्य के शरीर में समावेश होना, जैसी अनेकों नैतिक और वैज्ञानिक दलीलें दी जाती रही हैं। उसका असर जिन पर कम पड़ा हो, उन्हें नोट करना चाहिये कि अगले बीस वर्षों में मनुष्य की प्रमुख प्रतिद्वन्दिता पशुओं के साथ होगी और पशुओं का अस्तित्व मिटता जायेगा। ऐसी दशा में जिनकी जीभ को मांस का चस्का लगा है, उन्हें अपनी आदत बदलने के लिये मजबूर होना पड़ेगा। अच्छा हो, वे समय को पहचानें और जो बदलना पड़ेगा, उसे कुछ पहले ही बदल लें। विदेशों में सोयाबीन का बना सस्ता नकली मांस बनने-बिकने लगा है। हिन्दुस्तान के मांसाहारियों को भी समय के दबाव से ऐसा ही, किसी प्रकार मन बहलाना पड़ेगा।

संसार के खाद्य पर्यवेक्षक इस बात पर एक मत हैं कि मनुष्य को जितना खाना चाहिये, उससे बहुत अधिक खाया जाता है। जितने लोग भुखमरी से मरते हैं, उससे कई गुने अधिक खाकर मरते हैं। अच्छा हो, पेट से पूछकर अपने भोजन की मात्रा निश्चित करें। यदि इतनी बुद्धिमत्ता अपनाई जा सके, तो सबेरे का नाश्ता तो एकदम बन्द करना पड़ेगा। गाँधी जी ने इस सम्बन्ध में बहुत कुछ लिखा है। इस कुटेब को उन्होंने स्वयं छोड़ा और बहुतों से छुड़वाया। पाश्चात्य देशों में तो इस सन्दर्भ में एक सशक्त आन्दोलन ही चल पड़ा है, जिसमें सबरे का नाश्ता बिल्कुल बन्द करने और दो बार से अधिक न खाने के लिये कहा जाता है। जिस प्रकार नशेबाजी आदत की बुराई समझ लेने पर एक दम न सही थोड़ा-थोड़ा घटाते हुये नशा छोड़ते हैं, उसी प्रकार आहार की मात्रा घटाने के लिये प्रयत्न करना चाहिये। बन्दर, कुत्ते आदि को बहुत थोड़ा आहार मिलता है, वे उतने से ही पर्याप्त स्फूर्ति प्राप्त कर लेते हैं। मनुष्य की खुराक की प्रचलित आदत की तुलना में आधी या कम से कम तिहाई तो घटायी ही जा सकती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लोग आवश्यकता से बहुत कम पानी पीते हैं। शरीर विज्ञान के अनुसार २४ घंटे में प्रायः १० गिलास पानी पीया जाना चाहिये। इस सम्बन्ध में बरती जाने वाली कंजूसी में भी सुधार करना चाहिये। जल्दी-जल्दी ग्रास निगलने की आदत को भी छोड़ना चाहिये और उसको इतना चबाया जाना चाहिये कि गले से नीचे बिना प्रयास के सहज उतर जाय।

थाली में एक समय में बहुत सी चीजें नहीं होनी चाहिये। अधिक से अधिक शाक-रोटी, दाल-चावल जैसे दो का मिश्रण कर सकते हैं। अच्छा यह है कि एक समय में एक ही चीज खाई जाये। उससे पेट के, मुँह के, आँतों के पाचक रस ठीक प्रकार पचा लेंगे, अन्यथा एक ही समय में अनेक वस्तुयें खाने से पाचक रस एक को भी ठीक तरह न पचा सकेंगे।

पानी में एक साथ अनेक चीजें पकने डाल दी जायँ, तो उनमें से कड़ी देर में और मुलायम जल्दी पक जाने से समूची पकाई प्रक्रिया बेकार हो जायेगी। यही बात एक साथ बहुत चीजें खाने की है। हर पदार्थ में जीवनोपयोगी सभी रासायनिक तत्व रहते हैं, सन्तुलित भोजन के नाम पर थाली में अनेक प्रकार की अनेक वस्तुयें रखना भूल है। गैंडा, सूअर आदि एक ही वस्तु खाते हैं और उनके शरीर में ढेरों चर्बी बन जाती है। इस मान्यता को हमें छोड़ देना चाहिये कि थाली में अनेक वस्तुएँ हों। स्वाद बदल देना हो, तो अलग-अलग दिनों में अलग-अलग वस्तुयें हो सकती हैं, पर एक साथ अनेक वस्तुओं की नुमाइश नहीं लगानी चाहिये।

पाचन-प्रणाली का असाधारण महत्त्व

शरीर के द्वारा निरन्तर जो मानसिक एवं शारीरिक श्रम होता रहता है उसके कारण खर्च होने वाली शक्ति की क्षतिपूर्ति आहार द्वारा होती है। आहार ही पचकर रस, रक्त, माँस, मज्जा, अस्थि, मेद, वीर्य बनाता हुआ शक्ति के रूप में परिणत होता है। आहार को मुख में ठूँसते ही वह न तो शरीर का भाग बन जाता है और न शक्ति के रूप में परिणत होता है। वरन् यह कार्य पाचन-तन्त्रों को करना पड़ता है। मुँह से स्रावित होने वाले रस, आमाशय की ग्रन्थियों से निकलने वाला पाचक रस, जिगर से निकलने वाला पित्त, आँतों से निकलने वाला रस अपने अन्दर एक ऐसा जादू भरा रहस्य छिपाये हुये हैं कि उनके संयोग से अन्न आदि से बने आहार का एक अद्भुत प्रकार का रूपान्तर होता है। अन्न, शाक, दूध आदि वनस्पति जाति की वस्तुओं का परिवर्तन रक्त और माँस जैसे प्राणी-जाति के तत्वों में हो जाना सचमुच एक जादू है। इसीलिये पाचन क्रिया को एक जादू की पिटारी कहा जा सकता है। ईश्वर की इस अद्भुत क्रिया-प्रणाली पर जितना आश्चर्य प्रकट किया जाये, कम है।

यह पाचन-प्रणाली ही हमारे जीवन की आधारशिला है। जिस शरीर में यह प्रक्रिया ठीक प्रकार चल रही है वह आरोग्य के मार्ग में आने वाली सभी बाधाओं पर विजय प्राप्त कर सकता है। इसके विपरीत जिनका पाचन संस्थान बिगड़ गया उनके लिये अन्य सब सुविधायें रहते हुये भी विपत्ति का पहाड़ सामने खड़ा दिखाई देता रहता है। लोग ऐसा सोचते रहते हैं कि हम दूध, घी, मेवा, फल आदि कीमती चीजें खावेंगे, पौष्टिक पकवान मिष्ठान सेवन करेंगे तो हृष्ट-पुष्ट एवम् बलवान बन जावेंगे। इसी दृष्टिकोण से लोग बहुमूल्य भोजनों की व्यवस्था जुटाते हैं। स्वाद की तृप्ति के साथ बलवृद्धि की अभिलाषा भी कीमती भोजन बनाते समय रहा करती है। इस प्रकार की मान्यता बनाते समय लोग भूल जाते हैं कि भोजन को शक्ति के रूप में परिणत करने का सारा श्रेय पाचन प्रणाली को है। यदि वह ठीक नहीं है तो आहार पचेगा नहीं और यदि पचा नहीं तो रक्त के रूप में परिणत न होकर मल मार्ग से ज्यों का त्यों निकल जायेगा। यहाँ यह बात जान लेने की है कि जिस प्रकार ठीक तरह से पचा हुआ आहार शरीर का अंग बनकर शक्ति की वृद्धि करता है उसी प्रकार अनपचा भोजन व्यर्थ ही बर्बाद होकर मल ही नहीं बन जाता वरन् अनेक प्रकार की गड़बड़ी उत्पन्न करके शरीर को भारी हानि पहुँचाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

खिचड़ी पकाने के लिये चूल्हे पर पतीली चढ़ाई जाय तो वह तभी पकेगी जब उचित मात्रा में ईंधन हो। यदि ईंधन के नाम पर दो-चार छोटी लकड़ी ही पास में हों तो पतीली का पानी भी ठीक तरह गरम न हो पावेगा लकड़ी भी हाथ से चली जायेंगी और चूल्हा भी काला हो जावेगा। खिचड़ी कच्ची की कच्ची रहेगी। इसी प्रकार जब पाचन यन्त्र दुर्बल हो जाते हैं और उनमें से पचाने वाले रस पर्याप्त मात्रा में नहीं निकलते तो आहार पचने का लाभ तो मिलता नहीं। जो थोड़ा बहुत पाचक रस शरीर में पड़ा था वह भी निरर्थक बर्बाद होता है। इस प्रकार देह का महत्त्वपूर्ण रस दिन-दिन नष्ट होता चलता है पर पचे अन्न से रक्त बनने पर वह पाचक रस भी पुनः बनते, सो कार्य हो नहीं पाता। इस प्रकार संचित खजाना दिन-दिन खाली होता जाता है और नया रक्त न बनने पर शरीर में दुर्बलता और जीर्णता बढ़ती जाती है। प्रकृति माता को धन्यवाद है कि वह साँस द्वारा, जल द्वारा, निद्रा द्वारा और न जाने कैस-कैसे अपच के कारण शुद्ध रक्त न बनने पर कोई ऐसे प्रबन्ध करती रहती है कि हम जीवित बने रहें। यदि यह उदारता न मिली होती तो अपच के भयंकर रोग के रोगी को कुछ ही दिन में मर-खपकर समाप्त हो जाना चाहिये था।

अन्न एक सजीव पदार्थ है। यदि पेट की रासायनिक क्रियाओं द्वारा उसे पचाकर शरीर ने आत्मसात नहीं कर लिया है और मल मार्ग से बाहर निकलने तक उसे न सड़ने देने योग्य पाचक रस पर्याप्त मात्रा में उसमें मिले नहीं रहें तो यह सजीव अपच की स्थिति में वायु और जल का सम्पर्क मिलने से पेट में सड़ना आरम्भ कर देता है। सड़ने से खमीर, विष, खटिक गैस एवं तेजाब जैसी हानिकर वस्तुयें पैदा होती हैं, जिनका कार्य शरीर को जलाना, गड़बड़ाना एवं नष्ट करना होता है। जिस प्रकार बिगड़ा हुआ हाथी अपने महावत, मालिक एवं समीपवर्ती लोगों के लिये उपयोगी न रहकर प्राणघातक बन जाता है, उसी प्रकार पेट में अनपचा सड़ता हुआ आहार नाना प्रकार के उपद्रव खड़े करता है। मुँह से डकारें आते समय और मलद्वार से अपान वायु निकलते समय वह अपच के कारण उत्पन्न हुई सड़न ही वायु रूप होकर बाहर निकलती है। यह सड़ी वायु यदि मस्तिष्क की ओर चलने लगे तो सिरदर्द, जुकाम, आधाशीशी, मृगी, मूर्छा, अनिद्रा, पागलपन जैसे रोग उत्पन्न करती है। मुख की ओर इसकी गति विधि रहे तो मुँह में छाले, दाँतदर्द, पायरिया, मसूड़े फूलना, लार बहना, कंठ बैठना, आदि बीमारियाँ उठ खड़ी होती हैं। पेट में यही विष घुमड़ने लगे तो वायु गोला, अफरा, पेट फूलना, डकारें, हिचकी, संग्रहिणी, अतिसार, जलोदर, तिल्ली, जिगर की सूजन, बवासीर आदि रोग उठ खड़े हो जाते हैं। थोड़ा-बहुत जो पाचन होता है उसमें भी विष सम्मिलित हो जाते हैं। फलस्वरूप रक्त में विषैलापन बढ़ने लगता है। रक्तचाप, हृदय की धड़कन, पक्षाघात, गठिया, मधुमेह, पथरी, कोढ़, कैन्सर, फोड़े-चकत्ते जैसे रोग तभी होते हैं जब रक्त में विषैले तत्व अधिक मात्रा में बढ़ जाते हैं।

आयुर्वेद शास्त्र में सब रोगों का एकमात्र कारण मलावरोध को माना गया है। जिसकी पाचन क्रिया ठीक नहीं है, छूत के रोग भी उन्हीं पर आक्रमण करते हैं। छूत के रोगों से पूरा बचाव हो सकना किसी भी प्रकार सम्भव नहीं क्योंकि हवा में असंख्य प्रकार के रोग कीटाणु उड़ते रहते हैं। साँस के साथ वे निर्बाध गति से देह में भीतर प्रवेश करते ही रहते हैं। उनका बचाव केवल उन्हीं के लिये सम्भव है जिनका रक्त शुद्ध है। निर्दोष रक्त में ऐसी तेजस्विता होती है कि भयंकर से भयंकर रोगों के कीटाणु उसके सम्पर्क में आते-आते नष्ट हो जाते हैं। महामारी फैलने के दिनों में कितने ही स्वयंसेवक रोगियों की सेवा तथा मृतकों की अन्त्येष्टि क्रिया करने में तत्परतापूर्वक लगे रहते हैं, उनका कुछ भी नहीं बिगड़ता। इसके विपरीत अपनी सुरक्षा का बहुत ध्यान रखने वाले लोग बचाव का हर सम्भव उपाय करने पर भी रोगी होकर मर जाते हैं। इस अन्तर का कारण रक्त की शुद्धता और अशुद्धता पर ही रहता है।

मलावरोध—अपच यों तो साधारण-सा रोग मालूम पड़ता है पर लगभग समस्त बीमारियों की जड़ उसी में सन्निहित रहती है। लोग विभिन्न बीमारियों का इलाज करते हैं पर जड़ को भूल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही जाते हैं। किसी विष-वृक्ष के पत्ते तोड़ते रहने पर भी तब तक उससे छुटकारा न मिलेगा जब तक कि जड़ को न काटा जाये। लोग आये दिन नाना प्रकार के रोगों से ग्रसित रहते हैं और उनकी विविध-विधि चिकित्सा करने के लिये नई-नई औषधियाँ और नये-नये डॉक्टर ढूँढ़ते रहते हैं। यह जड़ को छोड़कर पत्ते-पत्ते पर भटकने के समान है। यदि कब्ज का इलाज करके पाचन प्रणाली को ठीक कर लिया जाय तो पेट में गैस और विष उत्पन्न होना बन्द हो जाने पर सब रोगों की जड़ ही कट जायेंगी। जब शुद्ध रक्त समुचित मात्रा में बनने लगेगा तो उसकी तेजस्विता से जहाँ-तहाँ पिछले जमे हुये विकार भी बाहर निकल जायेंगे।

बहुमूल्य कहे जाने वाले भोजन का लाभ तभी है जब पाचन क्रिया उसे ठीक तरह पचा सकने की स्थिति में हो अन्यथा भारी भोजन सस्ते साधारण भोजन की अपेक्षा लाभदायक नहीं, हानिकारक ही सिद्ध होगा। इसलिये हमारी दृष्टि खाद्य पदार्थों के महँगे और बहुमूल्य होने की ओर नहीं, पाचन संस्थान को ठीक करने की ओर होनी चाहिये। आरोग्य शास्त्र के वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि रुग्ण पाचन-प्रणाली के द्वारा कई बार अधपका आहार भी रक्त की ओर बढ़ने लगता है। चूँकि वह ठीक प्रकार पचा नहीं होता इसलिये उसे रक्त अपने में आत्मसात नहीं कर पाता और वह कच्चा रक्त इधर-उधर मारा-मारा फिरने के बाद शरीर से किसी कष्टकर प्रक्रिया द्वारा बाहर निकलने का प्रयत्न करता है। बलगम प्रायः ऐसे ही अधपके रक्त का एक रूप है। मुख के द्वारा तथा नाक के द्वारा कफ जिन्हें गिरता रहता है उनमें से अधिकांश अपच के रोगी हैं। मुँहासे एवं फोड़ा फुन्सी के रूप में भी यही कफ त्वचा फोड़कर बाहर निकलता है। छाजन और दाद का रोग इस अधपके रक्त के किसी एक स्थान पर गौंद की तरह जम जाने के कारण उत्पन्न होता है।

सौन्दर्य सभी को प्रिय है। उसके लिये अनेकों नर-नारी लालायित रहते हैं। चेहरे को सजाने के लिये वे कई प्रकार के रंग-रोगन भी लगाते हैं। फिर भी नकली चीज नकली ही रहती है। वह बाहर से किया हुआ रंग रोगन थोड़ी देर में मिट जाता है और अस्वस्थता की कुरूपता सामने आ खड़ी होती है। शरीर की जिस चमक को, अंगों की सुडौलता को, कोमलता को, लालिमा को, उभार को सौन्दर्य कहा जाता है वह शुद्ध रक्त के प्रचुर परिमाण में उत्पन्न होने पर ही उपलब्ध होनी सम्भव है। देर तक काम करने की शक्ति, उत्साह, स्फूर्ति, मस्तिष्क की प्रखरता, गहरी नींद, आँख, कान, दाँत आदि की सामर्थ्य, अवयवों की सुदृढ़ता को निरोग शरीर का अंश माना जाता है। इन विशेषताओं से युक्त शरीर सौन्दर्यवान कहे जाते हैं। सुन्दरता को देखकर स्वयं को नहीं, दूसरों को भी प्रसन्नता होती है। लोग उससे प्रभावित भी होते हैं और आकर्षित भी। सौन्दर्य के उपासकों और इच्छुकों को यह जान लेना चाहिये कि यह सब प्रताप पेट की शुद्ध पाचन क्रिया का है। जिसके अन्दर शक्ति के उत्पादन का कार्यक्रम ठीक प्रकार चल रहा है और जो उस उत्पादित शक्ति को अनावश्यक रूप से दुरुपयोग नहीं करता, उसके अंग-प्रत्यंगों में सदृढ़ता और शोभा उत्पन्न करने वाले तत्व बढ़ेंगे ही और वह सुन्दर लगेगा ही। गोरे वर्ण का, अच्छी बनावट का व्यक्ति भी यदि रक्ताल्पता और अपच का रोगी हो तो पके हुये पीले आम की तरह वह निर्जीव दिखाई देगा, उसकी आँखों पर, होठों पर चेहरे पर, उदासी और मुर्दनी छाई हुई होगी। ऐसा व्यक्ति रंग या बनावट अच्छी होते हुये भी कुरूप ही लगेगा। इसके विपरीत जिसके अंग-प्रत्यंगों से रक्त की परिपूर्णता छलकती रहती है वह काला-कुरूप होने पर भी असाधारण सुन्दर और तेजस्वी प्रतीत होता है। उत्साह और चैतन्यता की किरणें उसके प्रत्येक अंग से बिखरती रहती हैं। ऐसे लोगों को सुन्दर नहीं तो क्या कहा जायेगा ? सौन्दर्य कोई वस्तु नहीं, आरोग्य का ही नाम सुन्दरता है और आरोग्य क्या है ? इसका संक्षिप्त उत्तर—पेट की पाचन क्रिया का ठीक होना ही कहा जा सकता है।

दीर्घ-जीवन, सुन्दरता, कार्यक्षमता, तेजस्विता, उत्साह, स्फूर्ति, साहस, पुरुषार्थ, पराक्रम, योगशक्ति आदि शरीर से सम्बन्धित विभूतियाँ निश्चय ही मानव जीवन को धन्य बनाती हैं। इनके बलबूते पर मनुष्य एक से एक बढ़कर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सांसारिक सफलतायें प्राप्त कर सकता है। इन्हीं के बल पर परमार्थ, धैय- धारण, आत्म-कल्याण और जीवन-मुक्ति जैसे आध्यात्मिक लाभों को प्राप्त कर सकना सम्भव होता है। इहलौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार की विभूतियाँ केवल उन्हीं के लिये सम्भव हैं जो शारीरिक दृष्टि से स्वस्थ और सुदृढ़ हैं। इसलिये इन लाभों के लिये हम सबका लालायित होना स्वाभाविक ही है। पर कितने खेद की बात है कि हम जानते हुये भी अनजान बने हुये हैं। समुद्र को रत्नों का भण्डागार कहा जाता है। जीवन का रत्न-भण्डागार हमारा पेट है। यदि पेट को सक्षम रखा जा सके तो वह निरन्तर हमें एक से एक बढ़कर रत्न देता रह सकता है। समुद्र मन्थन से केवल १४ रत्न निकले थे पर हम चाहें तो अपने उदर-उदधि की आराधना करके उसके द्वारा जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में प्रगति करने का वरदान माँग सकते हैं, अगणित प्रकार के रत्न प्राप्त कर सकते हैं। अपनी पाचन प्रणाली को यदि हम ठीक कर सके तो समझना चाहिये कि जीवन-विकास की आधी समस्या का हल करने में हम सफल हो गये।

डबल रोटी—डबल खोटी

सभ्य कहलाने वाली दुनियाँ में अब घर में चौका-चूल्हा जलाने, रोटी बेलने, सेकने का झंझट उठाने की प्रथा बन्द हो चली है और उसके स्थान पर फैक्टरी की बनी डबल रोटी का प्रचलन बढ़ रहा है। गनीमत इतनी ही है कि गरीब घरों अथवा पुराने ढर्रे के लोगों में ताजी रोटी बनाने की प्रथा अभी भी विद्यमान है।

खाद्य-पदार्थों के पीछे सभ्यता का—वैज्ञानीकरण का—आधुनिकता का जो समावेश हुआ है उसमें फैशन, शोभा और स्वाद का आकर्षक समन्वय जरूर है, पर परिणाम में उसने ऐसी विकृतियाँ उत्पन्न की हैं जो उस स्वस्थ संरक्षण के उद्देश्य को नष्ट ही करती चली जा रही हैं जिनके लिये कि इन खाद्य-पदार्थों का प्रादुर्भाव किया गया है।

बात वहाँ से शुरू होती है जहाँ खेत में गेहूँ बोया जाता है। पशुओं की दिन-दिन कमी पड़ती जा रही है। माँसाहार और चमड़े के उपयोग में जिस गति से बढ़ोत्तरी हो रही है उसके फलस्वरूप पशुधन का विनाश होता चला जा रहा है। उनके गोबर और मूत्र से जमीन को जो पौष्टिक खाद मिलता है वह अब कहाँ मिल पाता है। फलतः रासायनिक खादों का उपयोग बढ़ रहा है। गोबर के सड़े खाद को ढोना आज के फैशनेबुल मनुष्य के लिये भारी भी पड़ता है। रासायनिक खाद पैक बन्द थैलों में साफ सुथरा आता है और तुर्त-फुर्त खेत में फैला दिया जाता है। फसल भी ज्यादा उगती है। इस वैज्ञानिक उपहार का लाभ कैसे छोड़ा जाये। रासायनिक खाद के कारखाने धड़ाधड़ खुल रहे हैं और उनका उपयोग भी खूब हो रहा है। लोग प्रसन्न है कि बेवकूफ पूर्वजों की तुलना में कैसी अच्छी तरकीब अधिक अनाज उपजाने की ढूँढ़ निकाली गई है।

किन्तु इसका इनामी परिणाम बहुत ही हानिकारक सामने आ रहा है। भूमि में कुछ ऐसे कीटाणु होते हैं, जो न केवल पौधों को पुष्ट करते हैं वरन् उनके भीतर रहने वाले उपयोगी रासायनिक पदार्थों की भी वृद्धि करते हैं, जिससे उगा हुआ अनाज, खाने वालों के लिये बलवर्धक होता है। रासायनिक खादों से वे कीटाणु मर जाते हैं। मिली हुई उत्तेजना से फसल जल्दी तो उग आती है, पर वैज्ञानिक खादों की विषाक्तता भी पौधों में घुल जाती है और जो अनाज उगता है उसमें भी ऐसे हानिकारक तत्व रहते हैं जो खाने वाले के स्वास्थ्य को बिगाड़ें। दूसरी क्षति यह होती है कि इन खादों की विषाक्तता से भूमि के उर्वरता सहायक कीटाणु मर जाने से उनकी स्वाभाविक उत्पादन शक्ति घटती चली जाती है और पीछे इन खादों की भरमार करते रहने पर भी उत्पादन घटता ही चला जाता है।

एक तो ऐसे ही बाढ़-वर्षा की अधिकता से भूमि की ऊपरी उपजाऊ परत पानी के साथ बहकर नदी, नालों में चली जा रही है और निचली कम उपजाऊ जमीन ऊपरी सतह पर आ रही है इससे उर्वरता तो घट रही है। इसके उपरान्त रासायनिक खाद रहा-सहा सर्वनाश पूरा कर रहा है।

इन सब कारणों के मिलने से न केवल अन्न का उत्पादन घट रहा है वरन् उसका

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पोषण-स्तर भी गिर रहा है। अमेरिका के कृषि विशेषज्ञों का कहना है कि पिछले एक सौ वर्षों में उस देश की उपजाऊ ऊपरी सतह का ४० प्रतिशत भाग बाढ़ और वर्षा में बह गया। मिसोरी विश्वविद्यालय के कृषि विशेषज्ञ विलियम अलब्रेश ने हिसाब लगाकर बताया है कि पिछले दस वर्षों में गेहूँ में रहने वाले प्रोटीन की मात्रा ६ प्रतिशत घट गई है। इसका कारण बताते हुये वे कहते हैं "रासायनिक खादों में रहने वाले पोटाश के कारण अन्न अधिक तो उपजता है पर उसमें प्रोटीन घटता है और कार्बोहाइड्रेट बढ़ता है। इस प्रकार उपजे हुये अन्न में पौष्टिकता का अंश कम पड़ जाता है। न केवल प्रोटीन वरन् २० प्रकार के 'अमीनो एसिड' भी अन्न तथा चारे में रहते हैं जिसके कारण खाने वाल पशुओं तथा मनुष्यों भी रोग-निरोधक शक्ति उचित मात्रा में बनी रहती है। रासायनिक खाद फसल में प्रोटीन ही नहीं इन उपयोगी अमीनो एसिडों की मात्रा भी घटाकर कमजोर बना देते हैं।

बीज को सुरक्षित रखने के लिये उन्हें कीटाणुनाशक औषधियाँ छिड़ककर गोदामों में रखा जाता है। इसका भी एक अंश पौधों पर जाता है। फसल पैदा होने के बाद उसे गोदामों में भरते समय कीटाणुनाशक घोलों से छिड़का जाता है। आटा पीसने वाली बड़ी मिलें गेहूँ को नरम बनाने के लिये नमी पहुँचाती हैं और इस क्रिया में भी रसायनों का प्रयोग होता है। आटा अधिक सफेद निकले इसके लिये गेहूँ को धोया जाता है। इस धुलाई में भी साबुन जैसे—तीव्र रसायन रहते हैं। बड़ी आटा मिलों के पीसने वाले पाट पत्थर के नहीं लोहे के होते हैं, रगड़ से उनकी गर्मी बढ़ी-चढ़ी रहती है और उसके कारण गेहूँ में पाया जाने वाले विटामिन बी-१ लगभग १० प्रतिशत ही शेष रह जाता है शेष शेष ६० प्रतिशत को पिसाई के समय की तेज गर्मी जलाकर समाप्त कर देती है। इस कमी का दुष्परिणाम खाने वालों को दाँतों की खराबी, कब्ज तथा स्नायविक रोगों के रूप में भुगतना पड़ता है।

अधिक सफेद आटा प्राप्त करने के लिये गेहूँ को धोया जाता है। उस धुलाई में नाइट्रोजन ट्राईक्लोराइड या एजीन जैसे रसायन डाले जाते हैं। यह रसायन एक प्रकार के विष हैं। इसे खाने से मनुष्य या पशुओं के शरीर में ऐंठन शुरू हो जाती हैं। लन्दन के सेन्ट्रल मिडिल्सैक्स अस्पताल के निर्देशक डॉ. पोलक ने बताया कि उसके अस्पताल में ऐसे मरीज आते रहते हैं जो आटे के साथ रहने वाले एजीन के कारण बीमार पड़े। सर एवर्ड एलनवे ने भी एजीन के कारण जनसाधारण के स्वास्थ्य पर पड़ने वाले बुरे प्रभाव की बात सर्वसाधारण के तथा सरकार के सामने रखी। फलतः एजीन का उपयोग तो रुक गया पर न्यूनाधिक उसी स्तर के अन्य रसायन उस प्रयोजन के लिये प्रयुक्त होते रहते हैं।

इतने कुकर्मों से गेहूँ की दुर्गति करने के उपरान्त उसका जो मैदा बनकर सामने आता है उसमें जीवन तत्व नहीं के बराबर रह जाता है। एक प्रकार से वह अखाद्य ही बन जाता है। केवल मैदे के खाद्यों पर रखे गये कुत्ते और चूहे कुछ ही दिन में बीमार पड़ गये। यह देखकर बिकने वाले मैदा में उसके प्रस्तुतकर्त्ताओं ने सस्ते विटामिन मिलाने प्रारम्भ किये और उनके आकर्षक विज्ञापन छपाये। किन्तु यह सर्वविदित है कि अलग से मिलाये हुए या खिलाये हुये विटामिन वह कार्य नहीं कर सकते जो उनके स्वाभाविक रूप में लिये जाने से होता हैं। स्वाभाविक मात्रा से अधिक मात्रा में लेने पर भी विटामिन हानिकारक बन जाते हैं। उन्हें देर तक खुला हुआ रखा नहीं जा सकता। इस प्रकार वह आँसू पौंछने के लिये की गई विटामिनों की मिलावट भी कुछ उपयोगी सिद्ध नहीं होती। मैदा अपौष्टिक स्तर का ही बना रहता है।

डबल रोटी बनाने वाले नानबाई उसे क्रिमिविहीन और कई दिन तक नरम बनी रहने योग्य बनाने के लिये तथा खमीर उठाने के लिये उसमें फिर रासायनिक सम्मिश्रण करते हैं। अंडा पड़ा होने का भ्रम उत्पन्न करने के लिये भी कुछ रसायन ही मिला दिये जाते हैं, जिससे डबल रोटी पर चमक, चिकनाई और जर्दी दिखाई पड़ने लगे। इन प्रयोजनों के लिये पोलो ओक्सीइथीलीन, मोनोस्वीट जैसे रसायन प्रयुक्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होते हैं। इन रसायनों का प्रयोग करने के कारण उन कारखानों के मजदूरों में से कितने ही खाज, खुजली या दमा जैसे रोगों के शिकार हो जाते हैं। इस तथ्य का रहस्योद्घाटन स्वास्थ्य पत्रिका 'इन्डस्ट्रियल मेडीसन एण्ड सर्जरी' पत्रिका ने अपने एक विस्तृत लेख में किया था।

हर क्षेत्र में बढ़ती हुई कृत्रिमता, फैशनपरस्ती तथाकथित सभ्यता का अंग बनती जा रही है। इस अत्युत्साह ने भोजन को भी नहीं बख्शा है। अब पुराने जमाने की हाथ से बनी ताजी रोटियाँ, पुराने जमाने की प्रतिगामी रिवाजें कहकर उपेक्षित कर दी गई हैं। उनका स्थान डबल रोटियाँ ग्रहण करती चली जा रही हैं। सभ्यताभिमानी उत्साहपूर्वक उनका स्वागत कर रहे हैं। इसका परिणाम क्या निकलेगा यह धीरे-धीरे सामने आता जा रहा है। इस घुड़दौड़ में अगले दिनों हम इतने आगे निकल चुके होंगे कि गँवाये हुए स्वास्थ्य की क्षतिपूर्ति भी न हो सकेगी। तब अपनी मूर्खता पर आँसू बहाने से भी कुछ काम न चलेगा।

तुरन्त मरने के लिये जन्मने वाले बच्चे

विश्व स्वास्थ्य संघ ने पिछड़े क्षेत्रों को तीसरी दुनिया का नाम दिया है। इसकी परिधि में प्रायः एक-तिहाई आबादी आती है। इस तीसरी दुनिया के ६ वर्ष की आयु के १० बच्चों में से केवल ६ बच्चे विद्यालय में प्रवेश पाने का सौभाग्य प्राप्त कर पाते हैं। प्रवेश पाने वाले १० बच्चों में से मात्र ४ ही प्राथमिक शिक्षण पूरा कर पाते हैं। इस संसार के १ करोड़ बच्चों को प्रोटीन की गम्भीर कमी के कारण कुपोषण का शिकार होना पड़ता है। १० करोड़ बच्चों को अपर्याप्त पोषण मिलता है। डेढ़ करोड़ बच्चे ५ वर्ष से कम आयु के हैं जिनमें ५० प्रतिशत से अधिक बच्चों की मृत्यु कुपोषण अथवा कुपोषण-जन्य व्याधियों से होती है।

इस दृष्टि से पिछड़े देशों की स्थिति बहुत ही दयनीय है। ऐसे क्षेत्रों में ६० प्रतिशत बच्चों की मृत्यु इसलिये होती है कि उन्हें पोषण का अभाव है। पीने को स्वच्छ पानी नहीं मिलता। सार्वजनिक स्वच्छता का अभाव, अनपढ़, अशिक्षित अभिभावक और रोग-प्रतिरोधक दवाइयों की कमी उनको है। मात्र १० प्रतिशत जीवित रहने वाले बच्चों को आधुनिक चिकित्सा का लाभ मिल पाता है। ऐसे जीवित बच्चों में से २५ प्रतिशत दूध छुड़ाये जाने पर कुपोषण के शिकार बनते हैं। यूरोप, अमेरिका की तुलना में इन बच्चों की मृत्यु-दर ३० से ४० गुनी अधिक है। चेचक आदि रोग होने पर तो इनकी मृत्यु-दर ४०० गुनी अधिक हो जाती है।

अविकसित देशों में प्रति वर्ष ८ करोड़ बच्चे पैदा होते हैं और प्रति वर्ष ५० लाख बच्चे टिटनेस, कुक्कुर खाँसी, डिप्थीरिया एवं पोलियो से ग्रस्त होकर मर जाते हैं। इनमें से १० प्रतिशत से भी कम को उक्त रोगों के प्रतिरोधी टीके लग पाते हैं। इसके अतिरिक्त ५० लाख बच्चे प्रतिवर्ष इन रोगों के कारण अपंग, बहरे, गूँगे, अन्धे और मानसिक रूप से विक्षिप्त हो जाते हैं।

स्वास्थ्य सम्बन्धी आँकड़ों के अनुसार शिशुओं की मृत्यु दर में कमी तो हुई है, परन्तु रोग की स्थिति में कोई सुधार दृष्टिगोचर नहीं होता है। प्रति १००० नवजात शिशुओं में से एक वर्ष की आयु पूरी करने से पूर्व ही १५० से अधिक बच्चों की मृत्यु हो जाती है। प्रतिवर्ष होने वाली कुल मृत्यु में ३० प्रतिशत से अधिक तो ५ वर्ष से कम उम्र के बच्चों की होती है। विकसित देशों में यह दर केवल ३ से ८ प्रतिशत तक है। यदि भारत की शिशु मृत्यु दर में यथावत् सुधार क्रम बना रहा तो २००० ई. तक वह स्थिति आ सकेगी जो विकसित देशों में ३० वर्ष पूर्व थी। ऐसे बच्चों को समुचित आहार उपलब्ध कराने के लिये प्रतिवर्ष प्रति बच्चे के लिये मात्र १२०० रुपया पर्याप्त है अकेले अमेरिका में विभिन्न वस्तुओं के विज्ञापनों पर ही प्रति वर्ष २००० करोड़ डॉलर व्यय होते हैं जबकि संसार के १० करोड़ कुपोषण के शिकार बच्चों को इस राशि का दशांश भी प्रदान किया जाय तो वे अकाल मृत्यु से बच सकते हैं।

विश्व स्वास्थ्य संगठन का कहना है कि इस दुनिया के १२० करोड़ लोगों को पीने का स्वच्छ पानी उपलब्ध नहीं होता। १४० करोड़

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आबादी के लिये मल-मूत्र, कूड़ा-करकट से मुक्त रहने की स्वास्थ्यकर व्यवस्था नहीं है। यदि स्वच्छ पानी और सफाई की समुचित व्यवस्था हो सके तो इन लोगों को ८० प्रतिशत छूत की बीमारियों से छुटकारा मिल सकता है।

अपने में प्रति हजार जन्म लेने वाले बच्चों में से १२० तो अपना अगला जन्मदिन भी नहीं देख पाते हैं। मृत्युग्रस्त कुल व्यक्तियों में से ५० प्रतिशत संख्या एक वर्ष से कम उम्र बच्चों की होती है इन ५० प्रतिशत बच्चों में आधे की मृत्यु जन्मोपरान्त एक माह के अन्दर अथवा कुछ की तो एक सप्ताह के अन्दर हो जाती है।

प्राप्त आँकड़ों के अनुसार अस्पतालों में बच्चा जनने वाली प्रति सत्रह माताओं में से एक का बच्चा अवश्य मर जाता है। विकसित देशों में यह मृत्यु-दर बहुत कम है। १९७५ के प्राप्त आँकड़े के अनुसार इंग्लैण्ड में १८, स्विजरलैण्ड में १३, फ्रान्स में तथा न्यूजीलैण्ड में १६ बच्चे ही हजार पीछे मरते हैं।

विश्व संघ सर्वेक्षण के अनुसार भारत में जन्म लेने वाले ५० प्रतिशत बच्चे वंशानुगत क्रम से कुपोषण एवं छूत रोगों से ग्रसित होते हैं। घर की अस्वास्थ्यकर परिस्थितियाँ एवं कुशल संरक्षण का अभाव भारत में अधिक शिशु-मृत्यु के लिये उत्तरदायी है। इसका एक और बड़ा कारण, बच्चों के नाल काटने का उपकरण गन्दा होना तथा उनका जीवाणु-रहित नहीं होना है।

बाल विवाह भी बच्चों की अत्यधिक मृत्यु का एक महत्त्वपूर्ण कारण है। पर्यवेक्षण से यह ज्ञात हुआ है कि कम उम्र की माताओं के बच्चों की मृत्यु अधिक हुआ करती है। दरिद्रता के कारण प्रसूति के पश्चात् मातायें उपयुक्त पोषण प्राप्त नहीं कर पातीं, जिसके फलस्वरूप बच्चे भी कुपोषण के शिकार होकर मर जाया करते हैं। बाल मृत्यु की संख्या कम करने के लिये प्रसूता के चारों ओर पाये जाने वाले वातावरण में स्वास्थ्य रक्षा का प्रबन्ध होना चाहिये और गर्भ काल से ही माताओं को उचित पोषक-आहार उपलब्ध किया जाना चाहिये।

राष्ट्र की सामान्य स्वास्थ्य स्थिति एवं जनसंख्या के परिणाम की दृष्टि से स्वास्थ्य सेवाओं को ग्राम केन्द्रित होना चाहिये। तब प्रश्न यह उठता है कि आज की मेडीकल शिक्षा प्रत्येक स्तर पर ग्राम्योपयोगी है या नहीं। यदि नहीं तो उसमें आवश्यक सुधार परिवर्तन होने चाहिय। देश के १५ लाख विद्यालयों के माध्यम से सामान्य स्वास्थ्य शिक्षा एवं सामूहिक स्वच्छता का शिक्षण चलाया जाना चाहिये। इसके लिये तहसील एवं जिला चिकित्सालयों को अनुसंधान केन्द्र के रूप में विकसित करना चाहिये और प्रत्येक विद्यालय व शिक्षण केन्द्रों के साथ उसका सम्बन्ध रहना चाहिये। यहाँ के अध्यापकों को कुछ प्रशिक्षण एवं प्रोत्साहन भी दिया जाना चाहिये।

विश्व के विकसित देशों में सभी जगह यह प्रचलन है कि विद्यालयों में स्वास्थ्य—पोस्टर प्रदर्शित किये जाते हैं। भारत के कितने ग्रामीण विद्यालयों में स्वास्थ्य सम्बन्धी पोस्टर मिलेंगे ? इसका घिसा-पिटा एक ही जवाब मिलता है कि कागज की कमी के कारण पोस्टर नहीं छप पाते। परन्तु दूसरी तरफ शहरों में दीवारों पर अनेक प्रकार के फिल्मी व विज्ञापनों से सम्बन्धित पोस्टरों की भरमार लगी रहती है। इन पोस्टरों को कूड़े के ढेर के रूप में पड़े देखकर कागज की बरबादी देखते ही बनती है। कागज इनसे बचाया और स्वास्थ्य शिक्षा की सामग्री प्रकाशित करने में लगाया जाय तो स्थिति में उत्साहवर्धक मोड़ आ सकता है।

शिशु स्वास्थ्य सुधार पर थोड़ा सा ध्यान देने से कुछ कहने लायक सुधार हो सकता है। इस दृष्टि से भारत के एक छोटे प्रान्त केरल का उदाहरण सामने है। शिक्षा और स्वास्थ्य और सुव्यवस्था पर ध्यान देने के कारण यह प्रान्त देश के अन्य प्रान्तों की तुलना में अधिक प्रशंसनीय है।

नेशनल इन्स्टीट्यूट ऑफ न्यूट्रीशन के अनुसार केरल में साक्षरता का अनुपात बढ़ने तथा भोजन में आवश्यक सुधार के लिए वहाँ की जागरूकता को ही श्रेय दिया जा सकता है। आर्थिक दृष्टि से वहाँ भी अन्य क्षेत्रों से मिलती-जुलती ही गरीबी है। फिर भी वहाँ न केवल सार्वजनिक स्वास्थ्य वरन् शिशु विकास की दृष्टि से भी स्थिति अपेक्षाकृत कहीं अच्छी है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यूनीसेफ प्रकाशन के अनुसार केरल के बच्चे देश के अन्य भागों की अपेक्षा बाल रोगों से बचने में दुगुनी क्षमता वाले हैं। केरल में स्त्रियों की साक्षरता ६० प्रतिशत से अधिक है। वहाँ ग्रामीण क्षेत्रों में भी छोटे बच्चों की देखभाल के लिये 'महिला मंडल' बने हुये हैं। कुछ मातायें भेड़-बकरियाँ पालकर उससे प्राप्त आय को बच्चों के ऊपर ही खर्च करती हैं। ऐसी ही जागरूकता अन्यत्र भी बरती जा सके तो इस गई-गुजरी स्थिति में भी उत्साहवर्धक परिणाम सामने आ सकते हैं।

गरीबी और अशिक्षा के साथ शिशुओं की बढ़ती हुई मृत्यु दर का सीधा सम्बन्ध है। बहु-प्रजनन भी इसके लिये उत्तरदायी है। सरकार समेत समाज के मूर्धन्य जनों को इस देश में बहुत कुछ सोचना और करना हैं। इसके लिये ठीक यही समय है जिसमें कुछ न कुछ किया ही जाना चाहिये।

उपवास शरीर शोधन की महत्त्वपूर्ण प्रक्रिया

स्वर्णिम अतीत से ही उपवास भारतीय संस्कृति का अभिन्न अंग रहा है। विदेशों में भी विद्वानों ने इसे जाना और माना है तथा इसके महत्त्व को समझकर समुचित आदर दिया है। यूरोप में ईसा से ५५०० वर्ष पूर्व ल्यूगीकोरनारो द्वारा आयु बढ़ाने के लिय उपवास किया गया। अरब में हकीम एबीसीना उपवास द्वारा चिकित्सा करता था। वर्तमान काल में सारे विश्व ने उपवास को न केवल चिकित्सा के रूप में स्वीकार कर लिया है, वरन् सभी धर्मों की धार्मिक पुस्तकों, वेदों, स्मृतियों, बाईबिल, कुरान, महावीर चरितम्, धम्मपद में उपवास रखना मनुष्य का धार्मिक कर्त्तव्य बताया गया है।

उपवास की कोई संक्षिप्त परिभाषा दे सकना कठिन है क्योंकि भिन्न-भिन्न विद्वानों ने इसे भिन्न-भिन्न दृष्टिकोणों से देखा है और इस पुनीत पद्धति का प्रयोग विभिन्न प्रयोजनों के लिये किया है। बर्नार्ड मेकफेडन का कहना है, "उपवास का अर्थ ठोस और तरल प्रत्येक प्रकार के भोजन का पूर्णतया त्याग करना है।" चार्ल्स एननडेल के अनुसार भोजन की सामान्य मात्रा को बन्द कर देना ही उपवास है। चरक ने कहा है—"किसी भी प्रकार के भोजन का किंचित मात्र अंश शरीर में न पहुँचना लंघन है। उपवास उसी की उपशाखा है।" इस प्रकार लगभग सभी विचारकों ने भोजन के त्याग को ही उपवास माना है।

जीवविज्ञान का विद्यार्थी जानता है कि मानव शरीर अत्यन्त सूक्ष्म कोषों से मिलकर बना है। परिश्रम से ये कोष टूटते हैं। इसीलिये व्यायाम से थकान मालूम होती है और भोजन के रस से आराम, निद्रा या उपवास के समय नये कोषों का निर्माण होता है। इसीलिये आराम के पश्चात् स्फूर्ति का अनुभव होता है।

शरीर में दो प्रकार की क्रियायें होती हैं। पाचन और निष्कासन। पाचन द्वारा रस बनता है जिससे नये कोष बनते हैं और शरीर का निर्माण होता है। पसीना, कफ, मल और मूत्र द्वारा टूटे हुए कोष निष्कासित किये जाते हैं। यह विजातीय द्रव्य है जिसका शरीर से बाहर निकल जाना स्वास्थ्य के लिये अत्यन्त आवश्यक है, नहीं तो शरीर के अन्दर यह विष क्षुधा नाश, अजीर्ण, भारीपन मलबन्ध, ज्वर, यकृत वृद्धि, अम्ल पित्त, आमवात, गठिया तथा नाना प्रकार के त्वचा रोग पैदा कर देता है। यदि हम निरन्तर खाते ही रहें और शरीर से पाचन का काम लेते रहें तो दिन भर कोष टूटते ही रहेंगे, उनके द्वारा विजातीय द्रव्य बनता रहेगा जिसको निस्सारक अंग बाहर नहीं निकाल सकेंगे और हम रोगी हो जायेंगे। इसीलिये भोजन से अवकाश या उपवास स्वास्थ्य के लिये आवश्यक है। एक बात और है कि सृष्टि के सहयोग के नियम के अनुसार जब शरीर का एक अंग रोगी हो जाता है तो शेष अंग उसकी सहायता में जुट जाते हैं। इसलिये जब पाचन में गड़बड़ी होती है तो निष्कासन में बाधा पड़ती है और जब निस्सारक अंग रोगी हो जाते हैं तो पाचक अंग भी अपना कार्य ठीक से नहीं कर पाते। दोनों क्रियाओं में सन्तुलन के लिये उपवास आवश्यक है।

इस प्रकार उपवास के तीन आधारभूत सिद्धान्त हैं—

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

१-बाह्य शक्तियों, साधनों और औषधियों की सहायता के बिना भी मानव शरीर स्वचिकित्स्य है।

२-तीव्र रोग में भोजन न लेना और पाचन के श्रम द्वारा कोषों को न टूटने देना बुद्धिमत्ता है।

३-किसी अंग विशेष की रोगावस्था में दूसरे अंगों को उसकी सहायता का अवसर देना चाहिये।

इतिहास बताता है कि केवल रोग निवारण और स्वास्थ्य रक्षण के लिये ही उपवास की आवश्यकता अनुभव नहीं की जाती रही है। वैदिक काल में व्रत के पूर्व और ब्रह्मचर्य आश्रम में प्रवेश के पूर्व संकल्प और संयम में दृढ़ता लाने के लिये उपवास को आवश्यक माना गया था। स्मृतियों में पापों के प्रायश्चित के लिये उपवास करना बताया गया है। चरक और वाग्भट्ट ने रोगों की निवृत्ति के लिये और शल्य के पूर्व उपवास को आवश्यक बताया है। डॉ. डेवी इन्हीं का समर्थन करते हुये कहते हैं कि—"रोगी को भूखा रखकर आप रोग को भूखा मार सकते हैं।"

सातवलेकर ने भारतीय दृष्टिकोण का प्रतिनिधित्व करते हुये कहा है—"पेट को आराम देने के लिये विजातीय द्रव्य शरीर से बाहर निकालने के लिये विषय-विकारों की निवृत्ति के लिये, नैतिक और आध्यात्मिक प्रगति के लिये, नैसर्गिक बुद्धि के उदय के लिये रोग निवारण के लिये, प्रेम की विशालता की दिव्य अनुभूति के लिये, विराट के साथ आत्म-सामंजस्य आदि के लिये महत्त्वपूर्ण साधन उपवास ही है।"

वर्तमान समय में जबकि लोग खाने के रोग से पीड़ित हैं, सभ्यता और मलबन्ध का साथ हो गया है असंयम का बोलबाला है, दिन में कई बार खाना एक फैशन बन गया है, अप्राकृतिक, अखाद्य और गरिष्ठ वस्तुओं का प्रयोग बढ़ गया है। पाचन-क्रिया अत्यधिक पाचन श्रम के कारण निर्बल हो गई है और मशीनों ने मानसिक श्रम बढ़ाकर स्वाभाविक शारीरिक श्रम बहुत कम करके सन्तुलन बिगाड़ दिया है, रोग पीड़ित मानवता के लिये उपवास एक आवश्यक आवश्यकता बन गया है।

इतना ही नहीं, महात्मा गाँधी ने उपवास का एक नवीन और अद्भुत प्रयोजन बताया है। वे कहते हैं—"अपने निकट के आत्मीय को सुधारने, उसे गलत काम करने से रोकने और उसमें पश्चाताप जागृत करने के लिये सत्याग्रही के अन्तिम अस्त्र के रूप में उपवास अचूक है क्योंकि उपवासकर्त्ता की आत्म पीड़ा अत्याचारी के अन्तर को स्पर्श करके उसका हृदय परिवर्तन कर देती है।"

इस प्रकार उपवास का उपयोग रोग निवारण से लेकर नैतिक, भौतिक, आध्यात्मिक और संघर्षात्मक सिद्धियों तक के लिये किया जाता रहा है। परन्तु यह स्पष्ट रूप से जान लेना चाहिये कि उपवास स्वयं में कोई शारीरिक शक्ति बढ़ाने वाली क्रिया नहीं है। निम्नलिखित दशाओं में उपवास का निषेध भी किया गया है—

१. यदि पाचकाग्नि ठीक हो और यकृत, फेंफड़े आदि ठीक काम कर रहे हों।

२. यदि रोगी क्षय या अन्य किसी ऐसे रोग से पीड़ित हो जिस में शरीर के कोष बड़ी मात्रा में नष्ट हो गये हों और जीवन शक्ति का ह्रास इस सीमा तक हो गया हो कि वह पुनर्निर्माण करने में असमर्थ हो।

३. शरीर की प्रकृति को बिना समझे नासमझी से उपवास करना खतरनाक हो जाता है।

उपवास एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है जिसे सावधानी से करने से लाभ होता है और असावधानी से करने से इसके घातक परिणाम हो सकते हैं। इसकी विधि को चार अंशों में वर्णन किया जा सकता है—

(१) उपवास के पूर्व (२) उपवास के दिनों में (३) उपवास की समाप्ति—कब और कैसे (४) उपवास के पश्चात् सावधानियाँ।

बहुत से लोग यह समझते हैं कि उपवास के दिन खाने की छुट्टी रहेगी। सम्भव है इस से शरीर कमजोर पड़ जाये। इसलिये उपवास के पूर्व वे ठूँस-ठूँस कर भोजन करते हैं, ऐसा विचार भ्रमात्मक और हानिकारक है। एक दो दिन के उपवास के पूर्व कोई विशेष सावधानी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

की आवश्यकता नहीं है। केवल हल्का और सुपाच्य भोजन ही ठीक है। परन्तु यदि लम्बा उपवास रखना हो, तो उपवास के पूर्व दो या तीन दिन तक केवल फलों के रस पर रहना चाहिये, ताकि शरीर में मल न रहे। उपवास शरीर का नवीनीकरण कर सके। जिस प्रकार बर्तन का मैल साफ करके उस पर कलई अच्छी-तरह होती है और बर्तन चमकदार और नया जैसा हो जाता है। पेट सम्बन्धी तथा समविकार सम्बन्धी पुरानी बीमारियों से लम्बे उपवास विशिष्ट रूप से आवश्यक होते हैं। एक सप्ताह का—दस दिन का उपवास आसानी से किया जा सकता है।

उपवास के दिनों में रोगी को बन्द कमरे में लेटा नहीं रहना चाहिये। एनीमा से आँतों को और जल तथा धूप स्नान से त्वचा को साफ रखना चाहिये ताकि विजातीय और विषैला द्रव्य निस्सारक अंगों और त्वचा से बाहर निकल जाये। इसके अतिरिक्त भोजन के स्थान पर शुद्ध वायु, शुद्ध जल और सूरज की रोशनी से शरीर को शक्ति देनी चाहिये।

परन्तु उपवास की अवधि समाप्त होने का सबसे बड़ा और सबसे महत्त्वपूर्ण लक्षण सच्ची भूख का लगना है जबकि रोगी अपने को नियन्त्रण में रखना कठिन समझता है और कुछ भी खाने को अपनी प्रबल इच्छा प्रकट करता है।

इस प्रकार उपवास की अवधि समाप्त होने पर शरीर हल्का और फुर्तीला मालूम होता है। यही समय है जब रोगी के लिये उचित भोजन की व्यवस्था करनी चाहिये।

उपवास का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग उपवास के पश्चात् उचित भोजन की व्यवस्था करना है। इसमें थोड़ी-सी असावधानी भी रोगी के लिये घातक हो सकती है। इस सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध सूत्र है, जो तीन-तीन दिन करके दस दिन के लिये है। रस—दूध + पानी—दूध—हल्का भोजन अर्थात् पहले तीन दिन सन्तरा, अँगूर या सेव का रस, चौथे, पाँचवे और छठे दिन हल्का भोजन जैसे—दूध और डबल रोटी या सब्जी और रोटी का छिलका देना चाहिये और फिर क्रमशः सामान्य भोजन पर ले आना चाहिये। भोजन देने का यह क्रम निरापद है।

कुछ लोग पहले दिन तीन-चार बार रस, दूसरे दिन सन्तरा, अंगूर या अनार और तीसरे दिन हल्का भोजन देने लगते हैं।

वास्तव में भोजन देने का कोई भी क्रम पहले से निश्चित करना उचित नहीं है। भोजन की वस्तु, मात्रा और समय खाने वाले के स्वास्थ्य और पाचक शक्ति पर निर्भर करता है। देखना केवल यह होगा कि भोजन व्यक्ति के लिये हो, व्यक्ति भोजन के लिये न हो जाय, क्योंकि डॉ. डेवी के मतानुसार अधिक भोजन करने से मरने वालों की संख्या, भूख से मरने वालों की संख्या की अपेक्षा बहुत अधिक होती है।

कुछ भी हो, उपवास का हमारे जीवन में निश्चित रूप से बड़ा महत्त्व है। सभी महापुरुषों ने इसे अपनाया है, सभी धर्मों ने इसकी प्रेरणा दी है, पशु-पक्षी भी रोग की दशा में इसे अपनाते हैं और सभी अच्छे चिकित्सक इसके गुण गाते हैं। सात्विक भोजन का उपवास के साथ समावेश उपवास की उपयोगिता में वृद्धि निश्चित रूप से करेगा।

उपवास कब और कैसे ?

साधारणतया उपवास सभी कर सकते हैं और सबको ही उपवास लाभप्रद हो सकता है किन्तु कुछ रोगों में तो उपवास ही राम-बाण है।

यदि किसी अंग-विशेष से हम बहुत दिनों तक काम न लें तो वह निर्बल या बेकार हो जाता है। बहुत से साधु जो सदा अपना हाथ उठाये रहते हैं बहुत दिनों के बाद उनका वह हाथ बेकार हो जाता है। वैसे ही जब कोई अंग ठीक-ठीक काम नहीं करता तो स्वयं उस अंग में कोई दोष न होते हुये भी वह रोगाक्रान्त हो जाता है। ऐसे रोग प्रक्रियात्मक कहलाते हैं। वे निश्चित रूप से उपवास से ठीक हो जाते हैं।

अर्बुद (कैन्सर) में उपवास राम-बाण है। रोग की आरम्भ अवस्था में तो कैन्सर बिल्कुल ही ठीक हो सकता है। किन्तु बढ़ी हुई अवस्था में भी उपवास के अतिरिक्त और किसी चीज से आरोग्य की आशा की ही नहीं जा सकती।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐसी दशा में उपवास शीघ्रता से रोगी के कष्ट को रोकता और कम करता है और अपेक्षाकृत अधिक कष्टरहित तथा लम्बा जीवन दे सकता है।

यदि चोट आ जाने के कारण मस्तिष्क में चोट आ गई हो तो उपवास से अवश्य लाभ होगा। जिस समय तक मस्तिष्क के गूदे में तह पड़ने के कारण उत्पन्न हुआ पागलपन, होश-हवाश का दुरुस्त न रहना तथा अन्य भयंकर लक्षण समाप्त न हो जाये, उपवास जारी रखना चाहिये। वैसे ही विषों के प्रभाव से जो एक नशा सा रह कर मन की बीमारी हो जाती है, उसमें भी उपवास लाभप्रद है।

लाल बुखार, साधारण ज्वर तथा सब प्रकार के ज्वरों में, गले की सूजन, कुकर खाँसी, जुकाम, सर्दी, खाँसी, पायेरिया, छोटी माता या खसरा, बच्चों के अर्धांगवात रोग की प्रारम्भिक दशा में हिस्टीरिया (अपतन्त्र वायु), मानसिक वायु रोग तथा आधा-शीशी, सिर-दर्द, दस्त, जी मिचलाना आदि में भी उपवास तथा हल्के उपवास बहुत लाभप्रद होते हैं।

गर्मी या उपदंश की प्रारम्भिक अवस्था में उपवास विशेष लाभप्रद होता है।

महात्मा गाँधी ने भी लिखा है—"डॉक्टर मित्रों से माँफी माँगते हुये किन्तु अपने सम्पूर्ण अनुभवों के और अपने जैसे दूसरों के अनुभवों के आधार पर मैं बिना किसी हिचकिचाहट के यह कहूँगा कि यदि निम्नलिखित शिकायत हों तो अवश्य ही उपवास किया जाये—

१—कब्ज में २—रक्त की कमी में ३—बुखार आने पर ३—बदहजमी में ४—सिर दर्द में ५—वायु के दर्द में ६—जोड़ों के दर्द में ७—भारीपन मालूम होने पर ८—उदासी और चिन्ता में ९—बेहद खुशी में। यदि इन अवसरों पर उपवास किया जाय तो डा. के नुस्खों और पेटेन्ट दवाओं से बचत हो जायगी।"

बादी, मोटापा कम करने की इच्छा वालों के लिये उपवास से बढ़कर कोई सरल और उत्तम उपाय है ही नहीं। बादी को दूर करने में भी उपवास रामबाण है।

लकुवा, कण्ठमाली, तापतिल्ली, बवासीर आदि में भी उपवास बहुत लाभ करता है। मन्दाग्नि, पेट के दर्द, अतिसार, पेचिश, आंतों, पेट तथा प्रदर के अन्य सभी रोगों में उपवास करना चाहिये। जीर्ण रोगों में भी उपवास लाभप्रद है। आंव-अन्तर प्रदाह, भीतरी सूजन, पित्त सम्बन्धी रोगों में, दमा, गठिया, मधुमेह, जिगर के रोग, जुकाम, गले में खरास, खांसी, चिड़चिड़ापन, क्रोध तथा मानसिक विकारों को दूर करने के लिये बाई, वायुगोला, शूल-दर्द आदि में उपवास करें।

आत्मिक शान्ति तथा मानसिक आवेगों को दबाने में भी उपवास बड़ा सहायक सिद्ध होता है। क्रोध, शोक, घृणा आदि भी उपवास द्वारा दबाये जा सकते हैं। इससे कुत्सित विचार तथा बुरी भावनाओं आदि का शमन हो जाता है।

गठियाबाय, मूत्राशय सम्बन्धी रोगों (जैसे—गर्मी, सुजाक, सूजन, मधुमेह) दमा, लकुवा, यकृत में रक्त का जमा होना, बादी, मोटापा, मस्तिष्क में खून का जमा होना, पेट तथा सीने की जलन, नसों के कड़े होने या अन्य विकारों में, कैन्सर, मोतीझरा, अपेंडीसाइटिस आदि में लम्बे उपवास करना चाहिये।

कब्ज, पेचिस, मन्दाग्नि, अतिसार, शूल, दर्द, खांसी, जुकाम, सर्दी, फोड़े-फुन्सी, खुजली तथा अन्य चर्म रोगों में, दांत आंख, नाक, आदि में दर्द, छूत के रोगों जैसे शीतला, खसरा आदि में पेट में कृमि पड़ जाने या चुन्ने होने पर, सिर-दर्द, पेट-दर्द, साधारण बुखार, डिफ्थीरिया आंतों या पेट के अन्य यन्त्रों के स्थानापन्न होने आदि रोगों में छोटे उपवास करना चाहिये।

लम्बे उपवासों की पहले से कोई निश्चित दिनों की संख्या निर्धारित नहीं की जा सकती। यह तो मनुष्य की शारीरिक दशा, स्थिति आदि के ऊपर निर्भर है। साधारणतया जब तक स्वाभाविक भूख न लगे तब तक उपवास जारी रखना चाहिये। साधारण रोगों में भी जब तक रोग का तीव्रता न समाप्त हो जाये तब तक उपवास करें। छोटे-छोटे उपवास करके अच्छा होने में समय अधिक लगता है और लम्बे उपवास में रोग से मुक्ति शीघ्र ही होती है। अप्टन सिंक्लेयर का मत है—"मेरी समझ में पाचन शक्ति के मन्द पड़ने, आँतों में मल जमा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होने, सिर में दर्द रहने, कब्जियत होने तथा इसी प्रकार की और दूसरी साधारण छोटी-मोटी शिकायतों के लिये—दस-बारह दिनों का उपवास बहुत ठीक होता है। पर जिन लोगों को नासूर, गर्मी, बवासीर, गठिया आदि भारी और भयंकर रोग हों, उन्हें अधिक दिनों तक उपवास करना चाहिये।" दुबले-पतले आदमियों को लम्बे उपवास नहीं करना चाहिये पर मोटे आदमी लम्बा उपवास कर सक्ते हैं क्योंकि उनके शरीर में फालतू द्रव्य बहुत होता है।

छोटे बच्चे को लम्बे उपवास न कराइये। पाँच छः दिन से अधिक लम्बे उपवास उन्हें बिना किसी विशेषज्ञ की देखरेख और सलाह से कभी न करावें, १४ वर्ष तक के बच्चों को छोटे उपवासों से जितना लाभ होता है उतना बड़ों को कभी नहीं होता। जुकाम, खांसी, हर प्रकार के ज्वर उपवास करते ही भाग जायेंगे। बच्चों के शरीर का संगठन ही प्रकृति की ओर से ऐसा होता है कि वे शीघ्र ही उपवास द्वारा आरोग्य हो जाते हैं।

एक सप्ताह से अधिक दिनों तक का महीना-दो या तीन महीने का उपवास लम्बा और एक सप्ताह तक का छोटा उपवास कहलाता है। १० दिन के उपवास से पूरा विष शरीर से बाहर नहीं निकल सकता। जीभ पर पड़ी हुई पपड़ी और मैल, दुर्गन्धितवास, बेजायका जीभ तथा खुलकर स्वाभाविक भूख लगना आदि लक्षण जब तक फिर प्रकट न हो जायँ तब तक अपूर्ण तथा अधूरा रहता है। ८-१० दिन के उपवास अधूरे ही होते हैं। ऐसा उपवास तो प्रत्येक दशा और प्रत्येक अवसर पर बिना किसी हानि अथवा कष्ट के कोई मनुष्य कर सकता है। लम्बे उपवासों में भी जब भूख लौट आवे तभी उपवास तोड़ा जाय, यह आवश्यक नहीं है। कई ऐसी दुर्घटनायें हुई हैं कि भूख नहीं लगती पर अन्य चिन्ह उपवास तोड़ने लायक प्रकट हो गये, पर उपवासकर्त्ता जिद्द पकड़े रहा और अन्त में उसने भारी हानि उठाई।

रस में विष मिलाने का कुटिल प्रचलन

इस शताब्दी के प्रारम्भिक दशकों में अमेरिका के कारखानों में गर्मी पैदा करने वाले बॉयलरों को टिकाऊ बनाये रखने और जल्दी खराब न होने देने के लिये 'साइक्लेमेट्स' नामक एक रसायन पोता जाता था। यह पदार्थ इतना गन्दा और बदबूदार होता था कि लोग इसे हाथ लगाना तो दूर रहा, इसके पास फटकना तक पसन्द नहीं करते थे। सन् १९३७ की बात है, शिकागो विश्वविद्यालय के एक छात्र ने इसे न जाने किस कौतूहल में आकार चख लिया। यह पदार्थ जरा से छुआ था कि मुँह में मिठास भर गई। इतना ही नहीं, उसके मुँह में दिन भर मिठास बनी भी रही। उस छात्र ने यह बात अपने सहयोगियों को बताई और बात होते-होते इंजीनियरों, मालिकों, विशेषज्ञों और वैज्ञानिकों तक जा पहुँची।

यह घटना विज्ञान जगत् में एक ऐसे पदार्थ की जननी सिद्ध हुई, जिसकी थोड़ी सी मात्रा भी चीनी से सैंकड़ों गुना मीठी सिद्ध हो रही थी। आजकल लोग जिस पदार्थ को सैक्रिन के नाम से जानते हैं वह और कुछ नहीं इसी 'साइक्लेमेट्स' का परिशोधित रूप है।

"साइक्लेमेट्स" का यह रूप सामने आने के बाद तो लगभग सभी देशों में इसका व्यापक प्रयोग होने लगा। आजकल अनेक खाद्य पदार्थ पैकबन्द डिब्बों और टिन्ड फूड्स के रूप में मिलते हैं। अमेरिका में तो अधिकांशतः ऐसा होता है। ज्यादा समय तक खराब न होने और धूल आदि के असर से बचाये रखने और लाने-ले जाने की सुविधा की दृष्टि से ऐसा किया जाता है। इन पदार्थों में बहुत से मिठाई से मिश्रित हो जाते हैं। यह मिठास उत्पन्न करने के लिये प्रायः सैक्रीन का उपयोग ही किया जाता है।

सैक्रिन के सम्बन्ध में प्रचारित और विज्ञापित तो यही किया जाता है कि यह चीनी का सत् है परन्तु वस्तुतः वह विषैले "साइक्लेमेट्स" से ही तैयार किया जाता है। रसायन विशेषज्ञों की भाषा में भी इसे विषैला पदार्थ कोलयर से मिलता जुलता "साइक्लेमेट्स"

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ही कहते हैं। जन-साधारण भले ही इसे चीनी का एक स्वरूप समझें, परन्तु वस्तुतः वह एक ऐसा विषैला पदार्थ होता है, जिसकी थोड़ी सी मात्रा भी पेट में पहुँचते-पहुँचते रहने के कारण स्वास्थ्य संकट उत्पन्न कर देती है।

इस नकली मिठास के जब गम्भीर परिणाम सामने आने लगे तो अमेरिकी सरकार ने १७२ प्रकार के ऐसे खाद्य पदार्थों पर प्रतिबन्ध लगा दिया, जिनमें इस पदार्थ का उपयोग किया जाता था। इन प्रतिबन्धित खाद्य पदार्थों में दो करोड़ पौंड मीठा विष मिलाया जाता था और इन्हें लगभग ९५ करोड़ व्यक्ति उपयोग में लाते थे। इन खाद्य पदार्थों को बनाने वाली कम्पनियाँ प्रतिवर्ष सात अरब डालर का मुनाफा कमाती थीं। इतनी बड़ी कमाई के कारण कम्पनियाँ इस नकली मिठास का गुणगान भी खूब करती थीं और इसे असली चीनी से भी बेहतर बताती थीं। बेचारा ग्राहक विज्ञापनबाजी के जाल में ऐसा फँसता था कि वह इन विज्ञापित विशेषताओं को वरदान ही समझता था और उस कृत्रिम मिठास के स्थान पर चीनी का प्रयोग करना शान के खिलाफ समझता था। जब सात अरब डालर प्रतिवर्ष का मुनाफा होता हो तो जनता को भ्रम जंजाल में उलझाये रहने और विज्ञापन द्वारा चिराग को चाँद सिद्ध करने का प्रयास किया जाय तो इसमें आश्चर्य ही क्या होना चाहिये।

कानूनी प्रतिबन्ध तब लगाना पड़ा जब डॉक्टरों का ध्यान इससे उत्पन्न होने वाली शारीरिक शिकायतों की ओर आकर्षित हुआ। जब ऐसी शिकायतें बढ़ने लगीं तो जाँच-पड़ताल आरम्भ हुई और जो निष्कर्ष सामने आये उनमें से कुछ तो बहुत ही चौंकाने वाले सिद्ध हुये। इस सम्बन्ध में 'साइन्स न्यूज' नामक पत्रिका में एक शोधपूर्ण लेख भी प्रकाशित हुआ, जिसमें बताया गया था कि इस मीठे जहर से पेट और पाचन शक्ति का सत्यानाश ही हो जाता है और रक्त इतना विषैला हो जाता है, कि उस पर तेज 'एंटीबायोटिक' औषधियों का भी कोई असर नहीं होता। 'साइक्लेमेट्स' पदार्थ की यह विशेषता भी प्रकाश में आई कि शरीर में इसकी एक प्रतिशत उपस्थिति भी कैंसर उत्पन्न होने की सम्भावना खड़ी कर देती है। चूहे, मुर्गी, खरगोश और बन्दर आदि प्राणियों पर साइक्लोमेट्स का प्रभाव जाँचने के लिये जो प्रयोग किये गये और उनके जो निष्कर्ष सामने आये उन्हें देखते हुये स्वास्थ्य विज्ञानियों ने अमेरिकी प्रशासन से सिफारिश की कि इसे अखाद्य घोषित किया जाय और इससे बने पदार्थों पर पाबन्दी लगाई जाय। परिणामतः अब अमेरिका में ऐसे पदार्थों पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

साइक्लेमेट्स अथवा सैक्रीन संयोगवश पकड़ में आ गया और उसके दुष्परिणामों का पता भी लग सका। किन्तु ऐसे कई एक पदार्थ हैं जो साइक्लेमेट्स से कम हानिकारक नहीं हैं। दुर्भाग्य कहें या विडम्बना मजे की बात तो यह कि इन पदार्थों का सेवन सभ्यता के नाम पर, भोजन को सुन्दर, स्वादिष्ट और मजेदार बनाने के लिये किया जाता है। डबल रोटी, बिस्कुट, केक आदि का प्रचलन दिनों-दिन बढ़ता जा रहा है और चौके-चूल्हे के झंझट से बचने के लिये लोग बढ़िया पैकिंग में मिलने वाले इन्हीं पदार्थों पर ज्यादातर निर्भर होते जा रहे हैं। बिस्कुट, डबल रोटी, ब्रेड आदि बनाते समय उनमें खमीर पैदा करने के लिये 'सोडा बाई कार्व' सरीखे रासायनिक तत्व मिलाये जाते हैं।

पिछले दिनों एक डबल रोटी बनाने वाली अमेरिकन कम्पनी की निर्माण विधि की जाँच की गई तो पता चला कि वह कम्पनी पौष्टिक खाद्य डालने के स्थान पर एक ऐसा विषैला रसायन मिलाती है, जिसके उपयोग से निर्मित पदार्थ देखने, खाने में तो बढ़िया लगता है लेकिन उसके गुण सर्वथा भिन्न रहते हैं। अमेरिका में खाद्य पदार्थों में मिलाये जाने वाले पदार्थों की जाँच करने के लिये गठित की गई 'हाउस 'सेप्रोप्रियेशन कमेटी' ने व्यापक जाँच-पड़ताल के बाद अपनी रिपोर्ट में कहा कि खाद्य पदर्थों में इन दिनों लगभग ५०० रासायनिक तत्व मिलाये जाते हैं। इन तमाम प्रकार के रासायनिक पदार्थों में अधिकांश ऐसे होते हैं जिनकी प्रतिक्रिया को भली-भाँति जाँचा नहीं गया है। इन रसायनों को खाद्य-पदार्थों में जिस बेहिसाब ढंग से मिलाया जा रहा है, उसे देखते हुये लगता है कि यह मिलावट सार्वजनिक स्वास्थ्य के लिये चुनौती बनती जा रही है और मानवी स्वास्थ्य के लिये खतरा उत्पन्न किये बिना नहीं रहेगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बच्चों के लिये पौष्टिक खुराकों के रूप में विज्ञापित खाद्य पदार्थों में प्रायः 'मोनो सोडियम ग्लायकोनेट' मिलाया जाता रहा है। इस पदार्थ को आरम्भ में हानिरहित समझा जाता था किन्तु इस दिशा में किये गये परीक्षणों से अब सिद्ध हो गया है कि इस पदार्थ से मानसिक सन्तुलन को बड़ी हानि होती है। जिन २ जानवरों पर इनका प्रयोग किया गया उनमें से कितने ही पागल हो गये। अब इस सम्मिश्रण को तैयार करने वाली कम्पनियों को अपना यह उत्पादन बन्द कर देना पड़ा है। इसी प्रकार पेय पदार्थों में मिलाया जाने वाला नारंगी रंग का सत (एसेन्स) भी हानिकारक ठहराया गया और उसे बन्द कर देना पड़ा जबकि पहले उसे आकर्षक, सुगन्धित, पौष्टिक और मजेदार आदि न जाने क्या-क्या विशेषताओं के साथ प्रकाशित और विज्ञापित किया जाता था।

इन दिनों खाद्य पदार्थों को डिब्बों और बन्द बातलों में सुरक्षित रखने के लिये 'नाइट्रेट्स' नामक रसायनों को प्रयुक्त किया जाता है। इनके घातक प्रभाव तब सामने आये जब नार्वे के डाक्टर स्लैन ने जिगर की खराबी से बीमारी हुई भेड़ों की जाँच की। उन्होंने पाया कि यह रोग शरीर में 'नाइट्रेट्स' की मात्रा बढ़ जाने से उत्पन्न हुआ है। इसी खोजबीन के दौरान यह भी पता चला कि सामान्य भोजन में रहने वाले साइक्लामीन तत्व जब 'नाइट्रेट्स' से मिल जाते हैं तो एक नया तत्व पैदा होता है जो मनुष्य शरीर पर बुरी प्रतिक्रिया उत्पन्न करता है और इससे कई रोग पैदा हो सकते हैं।

अनाज को सुरक्षित रखने और उसे कीड़ों से बचाने के लिये खेतों तथा गोदामों में बेंजोल, निकिल, डी. डी. टी. हाइक्लीसीकिनीलोन कार्बोक्सी मीथाइल आदि रसायन इस्तेमाल किये जाते हैं। यह रसायन न केवल कीड़ों को नष्ट करते हैं वरन् अनाज के साथ भोजन के रूप में पेट के भीतर पहुँचकर मनुष्य को भी हानि पहुँचाते हैं। डॉ. बूथमूनी ने सभ्यता के नाम पर सुरक्षा के लिये प्रयुक्त किये जाने वाले इन रसायनों को छिपे बधिक की संज्ञा दी है। इसी शीर्षक से लिखी पुस्तक में उन्होंने कहा है कि ये रसायन मानवीय स्वास्थ्य के लिये गम्भीर संकट प्रस्तुत कर रहे हैं। यदि समय रहते इन खतरों की ओर ध्यान नहीं दिया गया तो सभ्यता और आधुनिकता की चकाचौंध के पीछे अंधी दौड़ लगाने वाला मनुष्य अपने हाथों विषपान करने की मूर्खता अपनाने का दण्ड स्वयं भोगेगा और तब स्वास्थ्य रक्षा के कोई भी उपाय उसे नहीं बचा सकेंगे।

सभ्यता और आधुनिकता की फैशनेबुल चकाचौंध केवल वस्त्र विन्यास और रहन-सहन में ठाठ-बाट तक ही सीमित रहे तो यह सहन की जा सकती है, किन्तु जब वह खानपान की आदतों और भोजन तक भी पहुँच जाय तो परमात्मा ही रक्षक हो सकता है। वैज्ञानिकों ने इस भूल को पहचानने और उसे सुधारने की दिशा में लौटने की ओर ध्यान दिया है, इस दिशा में अभी तक जो प्रयोग-परीक्षण हुये हैं, उनसे इसी निष्कर्ष पर पहुँचा गया है कि जिस अन्धाधुन्ध ढंग से खाद्य पदार्थों में रसायनों का उपयोग होने लगा है उससे मनुष्य के शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य के लिये संकट भरी विभीषिका उत्पन्न होती और बढ़ती ही चली जा रही है।

अपने देश में खाद्य पदार्थों में थोड़ी मिलावटों को आसानी से अब पकड़ा भी जाने लगा है और रस में विष घोलने वाले अर्थ लोभियों को दण्डित भी किया जाने लगा है। इस दिशा में जनता का आक्रोश भी उभरा है और शासकों का रुख भी कठोर हुआ है। इस पर सन्तोष की साँस ली जा सकती है और आशा की जा सकती है कि पिसी मिर्ची में गेरू, हल्दी में पीली मिट्टी, पिसे धनिये में धान का, छिलका, चीनी में आटा, सरसों के तेल में कटेली का तेल, जैसी अखाद्यों की मिलावट में आवश्यक रोकथाम होने लगेगी। किन्तु उन सुशिक्षितों और सुसम्पन्नों को क्या कहा जाय जो चीनी के स्थान पर 'सेक्रीन' के प्रचलन का द्वार खोलते और उसे हानिरहित बताते हुये मोटे मुनाफे का व्यवसाय खुलेआम करते हैं। खाद्य पदार्थों में होने वाली साफ-सुथरी मिलावटें उससे कम हानि नहीं पहुँचातीं जितनी कि फूहड़ लोगों द्वारा किये जाने पर पकड़ी और रोकी जाती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विषाक्तता के दलदल से आत्मरक्षा की बात सोचें

मनुष्य आहार पर जीवित है, उसमें हानिकर पदार्थ मिले हों तो सेवनकर्त्ता का नीरोग रहना असम्भव है, भले ही वह संयम से रहता हो या व्यायाम आदि नियमों का पालन करता हो।

वैज्ञानिक प्रगति का सर्वप्रथम कदम विशालकाय औद्योगिक कारखाने खड़े करने, द्रुतगामी वाहन बनाने में हुआ है। इनके कारण जो भी लाभ-हानि हुई हो, उन्हें एक कौने पर रखकर आहार के सम्बन्ध में विचार करने पर प्रतीत होता है कि उनके कारण अन्न, जल, वायु तीनों में विषाक्तता का समावेश हुआ। नदियों का दूषित जल शहरी आबादी को प्रत्यक्षतः पीना पड़ता है। इसकी जो सफाई की जाती है वह नाममात्र की होती है। देहातों में खुले तालाब भी गंदगी का भण्डार भरे रहते हैं। कुँओं की तह तक जो पानी पहुँचता है, वह भी नदी, सरोवरों से ही रिस-रिसकर नीचे पहुँचता है। वर्षा तक तेजाब मिश्रित पदार्थों की होने लगी है। इसके कारण मरते-मरते जो जलजीव रह जाते हैं, उनमें भी वे हानिकारक तत्व पाये जाते हैं, जो खाने पर मनुष्य का अहित कर सकें। कृषि उत्पादन बढ़ाने, फसल के कीड़े मारने तथा भण्डारण की सुरक्षा के लिये जिन रासायनिक पदार्थों का उपयोग होता है, वे भी एक सीमा तक आहार का अंग बन जाते हैं। और शरीर को विषाक्तता से मारते हैं। कारखानों की अणु आयुधों से दूषित वायु में ही हमें सांस लेनी पड़ती है। इस प्रकार हम एक प्रकार से विषधारी जन्तु बनते जा रहे हैं।

इससे एक कदम आगे बढ़कर खाद्य पदार्थ विक्रेताओं का नम्बर आता है। उनमें अधिकांश का व्यापार उस मिलावट से भरा होता है, जो प्रत्यक्ष स्वाद या स्वरूप में अन्तर न दीख पड़ने पर भी एक प्रकार से अखाद्य ही होते हैं। मिलावट बचाने, बढ़ाने या देखने में आकर्षक बनाने के लिये की जाती है, पर यह अर्थोपार्जन कर्त्ता के लिये ही लाभदायक होता है। उपभोक्ता तो अनजाने ही इन्हें खाकर बेमौत मरता है।

कानूनन मिलावटों पर रोक है। खासतौर से ऐसे रंग जो खाद्य पदार्थ रंगने के लिये निषिद्ध हैं। फिर भी वह मिलावट धड़ल्ले के साथ होती है। शहरों में चिन्ह पूजा के लिये नमूना भरने वाले और मुकद्दमा चला देने वालों की नियुक्ति तो है। पर वह भी मिलीभगत के कारण अपराधियों को समुचित दंड दे नहीं पाते, यह यदाकदा ही होती है। देहातों में तो जाँच पड़ताल का वह जो थोड़ा-बहुत डर होना चाहिये सो भी नहीं होता, क्योंकि जाँच-पड़ताल की उस क्षेत्र में कोई व्यवस्था नहीं है। यदि है, तो नहीं के बराबर। इसलिये उस क्षेत्र में इस अनाचार का प्रचलन धड़ल्ले के साथ होता रहता है।

सॉफ्ट स्टोन का पाउडर आटे, मैदा, सूजी में मिलाया जाता है। रासायनिक नकली चावल, साबूदाना, वंशलोचन आदि बनने लगे हैं। उबली हुई चाय पर दुबारा रंग चढ़ा दिया जाता है। चमड़े के चूरे की भी मिलावट होती है। धान की भूसी, घोड़े-गधों की लीद, पिसे मसालों में इस प्रकार साथ ही पीस दी जाती है, कि उनको पहचान पाना कठिन है। बेसन में चने के स्थान पर मक्का या मटर का बेसन चलता है। दालों के साथ वह खेसरी दाल मिला दी जाती है, वो लकवा जैसी बीमारियाँ उत्पन्न करने के लिये प्रसिद्ध है। दूध में शकरकंद का पाउडर या ब्लॉटिंग पेपर, अरारोट जैसी चीजें मलाई के नाम पर घुली रहती हैं। काली मिर्च में पपीते के बीज जैसी वस्तुयें मिली रहती हैं। वनस्पति तेलों में चर्बी मिलने के स्कैण्डल कुछ दिन पूर्व ही पकड़े गये हैं।

हल्दी को अधिक पीली और चमकदार बनाने के उन्हें आमतौर से पीले रंग से रंगा जाता है। मिठाइयों में आमतौर से रंगों की भरमार होती है। सरकार की ओर से कुछ रंगों की मिलावट में छूट है और उन्हें हानिरहित बताया गया है, किन्तु रंगने वाले उन आदेशों की परवाह नहीं करते और सस्ते दाम पर मिलने वाले हानिकारक रंग मिलाकर आकर्षक बनाते और अधिक नफा कमाते रहते हैं।

अन्न, दाल, शाक, फल आदि के छिलके हटाकर एक तो हमारी आदत ही उसकी समर्थता का आधा अपहरण कर लेती है। फिर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जो कुछ मिलता है, वह भी ऐसा होता है जिसे शुद्ध कहना कठिन है। जाँच-पड़ताल का चलता हुआ ढर्रा भी भ्रष्ट अफसरों से मुक्त नहीं है। रिश्वत देने और लेने के विरुद्ध कड़े कानून पड़े हुये हैं, पर वह नीचे से ऊपर तक धड़ल्ले से चलती है। दहेज विरोधी कानून बना हुआ है, पर उसकी रोकथाम भी मिलीभगत के कारण कहाँ हो पाती है। यही बात खाद्य पदार्थों की मिलावट के सम्बन्ध में है। गीली वस्तुयें तो आमतौर से खुली बिकती हैं। सड़कों के किनारे घूमने वाले चाट, पकौड़ी, छोले, बर्फ आदि में उड़ती हुई धूल की परतें जमा होती रहती हैं और उसमें किसी भी रोग के भयानक विषाणु हो सकते हैं।

इस मिलावट की विपत्ति ने औषधियों तक का क्षेत्र खाली नहीं छोड़ा है। आयुर्वेद तो इसीलिये बदनाम हुआ कि वर्षों पुरानी, सड़ी-गली शक्ल में मिलने पर कुछ के स्थान पर कुछ थमा देने का धंधा पसारियों के यहाँ चलता है। इनसे विनिर्मित औषधियों से भला किसका क्या हित साधन होता है।

मशीनों के नकली पुर्जे असली की तुलना में कहीं अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं। इसी प्रकार अंग्रेजी दवाओं के सम्बन्ध में भी यह व्यथा आसानी से दृष्टिगोचर होती है। नकली लेबल लगाकर कुछ की जगह कुछ बेचने वालों ने औषधि क्षेत्र को भी अछूता नहीं छोड़ा है। यह धंधा प्रत्यक्ष ही मौत के सौदागरों का है।

इस व्यथा से कैसे छूट पाया जाय, इसके लिये खाद्य पदार्थों के व्यापारियों में यह नैतिक भावना जगाई जानी चाहिये कि वे अपने थोड़े से लाभ के लिये दूसरों की जान से खिलवाड़ न करें। यदि वे लोभ संवरण नहीं कर पाते, तो फिर सरकारी तन्त्र को स्वच्छ बनाया जाय, जो मिलीभगत के आधार पर अपनी आमदनी अनेक गुनी न बनायें। स्वयंसेवी संस्थाओं, पंचायतों आदि के जिम्मे भी इस जाँच-पड़ताल का काम सौंपा जा सकता है। सुपर मार्केट की तरह जगह-जगह ऐसी संस्थायें बन सकती हैं, जिनकी प्रामाणिकता के सम्बन्ध में गारंटी हो।

खाद्य पदार्थों को तलने, भूनने, चिकनाई और मसालों से भरने के रूप में जायका बढ़ाकर उनकी पोषण क्षमता को नष्ट कर देना यह हमारी आदतों में सम्मिलित हो गया है। हर तीज-त्यौहार पर आतिथ्य विशेष पर ऐसे ही खाद्य पदार्थ परोसे जाते हैं। यह रस के नाम पर विष खाने के सदृश हैं। जो पाचन में व्यवधान उत्पन्न करें, उन्हें हर दृष्टि से त्याज्य ही माना जाना चाहिये।

जिन्हें जीवन का महत्त्व विदित है, उसके कुछ प्यार भी है और उस ईश्वरीय वरदान का उपयोग किसी महत्त्वपूर्ण कार्य में करना चाहते हैं, रोते-कराहते, दीन-दुर्बलों जैसा रोगी और अकाल मृत्यु का ग्रास जिन्हें नहीं बनना है, उन्हें कम-से-कम अपने आहार को—अन्न, जल, वायु के शुद्ध रखने की तो चिन्ता-व्यवस्था करनी ही चाहिये।

अच्छा हो हम देहात की ओर वापिस चलें और खाद्य पदार्थों के सम्बन्ध में स्वावलम्बी बनें। हो सकता है, देहाती जीवन अधिक झंझट भरा, कम मनोरंजक और आर्थिक दृष्टि से कम लाभदायक प्रतीत हो। इतने पर भी यह निश्चित है कि वहाँ शुद्ध आहार प्राप्त करना तथा श्रमशील जीवन जीने की अधिक गुंजायश है। धूप का लाभ भी हम उसी क्षेत्र में पा सकते हैं। कृषि, पशुपालन और भोजन निर्माण में अपना निजी श्रम लगने से भले ही शान में कुछ बट्टा लगे पर उसे अपनाकर हम आरोग्य का लाभ निःसन्देह अर्जित कर सकते हैं। इसके लिये चक्की मात्र को पुनर्जीवित करना पड़ेगा। गाँधी जी ने स्वतन्त्रता के हथियार के रूप में चरखे को चक्र-सुदर्शन की समता दी थी। चक्की का प्रचलन दिनों-दिन हमारे घरों में चलता रहे और झोंपड़ों का रहना स्वीकार करें तो जीवन सरस, लम्बा और स्वस्थ भी हो सकता है और शहरी प्रदूषणों से बहुत हद तक जान बचाने का अवसर पा सकते हैं।

वायु संशोधन के लिये हरितिमा से बढ़कर और कोई उपचार नहीं। जिसके पास थोड़ी सी जमीन है और पानी का प्रबन्ध है, वे फल और शाक का ऐसा प्रबन्ध कर सकते हैं जिसमें थोड़ा सा अन्न मिलाने भर से सात्विक आहार मिल सकता है। शारीरिक श्रम की उपेक्षा ने भारी और अति मात्रा में आहार ग्रहण करने की

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तरह ही अपच का संकट उत्पन्न किया है। निर्वाह, उपयोगी, जीवन-साधन आदि अपने हाथ से जुटायें तो सहज ही उतने श्रम का ढर्रा चल सकता है जो आहार के पचाने में ही नहीं—रक्त संचार और श्वाँस-प्रश्वाँस जैसे शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी कर सकती है। इस प्रकार इस विषाक्त वातावरण में आत्म रक्षा के लिये एक ही उपाय है कि हम देहातों की ओर वापिस लौटें, श्रमजीवी, संतोषी जीवन जियें और खाद्य पदार्थों को उगाने से लेकर पकाने तक का दायित्व अपने कंधों पर उठायें।

पेड़ बुरी तरह कट गये हैं। बैठने और विश्राम करने के लिये छाया तक का प्रबन्ध नहीं है। जिनके पास जमीन की थोड़ी भी गुंजायश है, उन्हें मौसमी फल उगाने वाले उद्यानों को लगाने की कलाकारिता का भी परिचय देना चाहिये। इसमें जितनी सुरुचि का संवर्धन है उतनी ही प्राणवायु के रूप में नीरोग दीर्घ जीवन का वरदान भी है।

विषाक्तता से आत्मरक्षा के लिये हमें उतनी ही चिन्ता तथा व्यवस्था करनी चाहिये, जितनी साँप, बिच्छू, सिंह, व्याघ्र, चोर, डाकू से प्राण बचाने के लिये सोचने तथा कुछ करने की आवश्यकता होती है।

जल का महत्त्व भी समझें

पानी हमारा जीवनाधार है। हवा हमारे जीवन के लिये जितनी महत्त्वपूर्ण है, पानी उससे किसी भी प्रकार कम नहीं। भोजन के बिना तो जीव-जन्तु, वृक्ष वनस्पति कुछ दिनों तक जीवित रह सकते हैं, पर पानी के बिना नहीं, क्योंकि जीवधारियों के शरीर का अधिकांश भाग पानी का बना होता है। कोशायें इसी के कारण निश्चित आकार-प्रकार गहण किये रहती हैं। यदि इस पानी में जरा भी कमी आयी तो कोशायें अपना आकार खो देंगी और अव्यवस्था उत्पन्न हो जायेगी।

यह बिना मूल्य मिलता है। संसार में प्रचुर मात्रा में विद्यमान भी है। इसलिये कोई उसका महत्त्व नहीं समझता और उसकी स्वच्छता का तथा शरीर में पर्याप्त मात्रा पहुँचाने का भी ध्यान नहीं रखता, जबकि भोजन से भी अधिक जल द्वारा शरीर के पोषण का ध्यान रखा जाना चाहिये।

हमारे शरीर में अधिकतम् भाग जल है। प्रौढ़ शरीर में ६७ प्रतिशत, नवजात शिशु में ७७ प्रतिशत तथा भ्रूण में ६७ प्रतिशत जल होता है। हड्डियों का २२ प्रतिशत और दाँतों का २ प्रतिशत भाग जल है।

हमारे शरीर के कुल जल का ५ प्रतिशत भाग रक्त में सम्मिलित है, ३५ प्रतिशत भाग शरीर के अन्य अवयवों में संव्याप्त है, ५ प्रतिशत शरीर की दस लाख करोड़ जीव कोशिकाओं में, ५ प्रतिशत भाग शरीर संरचना की गुहाओं में स्थित है। इस प्रकार "नूह की नाव" के सदृश्य हम पानी से पूर्ण रूप से ओत-प्रोत हैं।

पानी का एक महत्त्वपूर्ण गुण यह है कि यह ताप सोखता है और विसर्जित भी करता है। गर्मी के दिनों में वातावरण का तापमान जब अति उच्च हो जाता है तो समुद्र-सागर ताप को सोखते और ठण्ड में जब तापमान काफी गिर जाता है, तो ऊष्मा छोड़ते हैं। इस प्रकार इसमें वातावरण को समशीतोष्ण बनाये रखने का अनूठा गुण है। समुद्रतटीय क्षेत्रों का तापक्रम इसी कारण पूरे वर्ष एक-सा बना रहता है। यही भूमिका शरीर-जल शारीरिक तापमान को नियन्त्रित रखने में निभाता है।

जिस प्रकार सागर-महासागर, झील-तालाबों का जल स्थाई नहीं होता और एक चक्रीय प्रवाह में गतिमान होता है वैसी ही स्थिति शरीर—जल की भी होती है। वह विभिन्न माध्यमों से, विभिन्न समय में निकलता रहता है। एक दिन में इस निष्कासित जल की मात्रा तीन-चौथाई होती है। इसकी पूर्ति हम पीने से, साँस से तथा भोजन में रहने वाले गीलेपन से करते हैं। इनमें भी तरल खाद्य और पेय के रूप में पानी का प्रयोग ही शरीर के लिये सर्वाधिक जल—आवश्यकता की पूर्ति कर पाते हैं। इस दिशा में यदि उपेक्षा बरती जाय अथवा उसे अभीष्ट से कम परिणाम में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लिया गया तो अपच-अजीर्ण जैसे तरह-तरह के शरीर-संकट उपस्थित होते दिखाई पड़ते हैं।

कुछ विशेष प्रकार के रोगों की स्थिति में जल की कमी उसे और गम्भीर बना देती है। यथा—जलन, वमन, अतिसार में यदि इसका उपयोग तुरन्त ही न किया गया तो रोगी का जीवन-मरण का प्रश्न उपस्थित होता है। इन मामलों में जल अथवा जलीय खाद्य पदार्थों के प्रयोग से संकट को गम्भीर बनने से रोका जा सकता है। रक्तस्राव अथवा जलन की स्थिति में सादे जल को रक्त में पहुँचाया जाता है, जबकि अतिसार में नमक युक्त जल अथवा अन्य तरल पदार्थ का प्रयोग किया जाता है।

पानी शरीर में भीतर पहुँचकर उसकी समस्त गतिविधियों को सुचारू रूप से चलने में सहायता करता है। पानी में मिले हुय अनावश्यक तत्वों को गुर्दे निकाल बाहर करते हैं। उसकी मात्रा में शरीर में नहीं बढ़ने देते, पर यदि उन पर अनावश्यक दबाव पड़ता है, तो फिर स्वयं रोगी हो जाते हैं और पथरी जैसे रोगों का सृजन करते हैं। इसलिये पानी की मात्रा संतुलित रखनी चाहिये। उसकी स्वच्छता पर भी अधिक ध्यान दिया जाना चाहिये जितना कि भोजन पर दिया जाता है। कारण कि भोजन में सम्मिलित अनुपयुक्तता तो आग पर पकने से किसी क़दर ठीक हो जाती है, पर पानी को तो वह अवसर भी नहीं मिलता।

पानी कम पीने से अपच रहने लगता है। इसलिये उसकी औसत मात्रा दिन-रात में पाँच किलो के लगभग पहुँचनी चाहिये; किन्तु भोजन के साथ उसे कम ही लेना चाहिये। इसके एक-डेढ़ घंटे बाद एक गिलास पानी पीना चाहिये और बाद में हर घंटे एक कप पानी पीते रहने का सिलसिला जारी रखना चाहिये प्रातःकाल सोकर उठने के बाद एक बड़ा गिलास पानी पी लेने से पेट की सफाई होने में सहायता मिलती है पर पानी का उपयोग करते समय उसकी स्वच्छता-सफाई पर सदा ध्यान रखना चाहिये, अन्यथा पानी आरोग्यवर्धक न होकर रोगोत्पादक बन जाता है और तरह-तरह की शिकायतें उत्पन्न होने लगती हैं।

यदि समुद्र में जल की मात्रा कम होती, तो थल भाग अधिक होता, फलतः वातावरण का सारा संतुलन बिगड़ जाता और ऋतु चक्र वैसा न रहता, जैसा अब है। इस प्रकार यह शरीर के साथ-साथ मौसम को भी प्रभावित, परिवर्तित करने की क्षमता रखता है।

वाष्प एवं बादल के रूप में रहकर जल हमारे लिये एक प्रकार के कवच का काम करता है। इसी से हम सूर्य की प्रखरता तथा शीत की प्रचण्डता से बच पाते हैं। चन्द्रमा में इस प्रकार के बादलों का सर्वथा अभाव है, फलतः वहाँ का तापमान दिन में—२१२ डिग्री फारेनहाइट व रात्रि में—२६४ डिग्री फारेनहाइट तक पहुँच जाता है। इस भीषण आतप एवं शीत के कारण ही वहाँ कोई जीवन सम्भव नहीं है।

जल सिर्फ मनुष्य एवं पशु-पक्षियों के लिये आवश्यक नहीं है, पेड़-पौधों और वृक्ष-वनस्पतियों के लिये भी अनिवार्य है। इनकी जड़ों द्वारा अवशोषित होकर यह टहनियों और फुनगियों तक पहुँचकर उन्हें पोषण प्रदान करता है। यदि जल नहीं होता, तो प्राकृतिक सुन्दरता हमें नहीं देखने को मिलती और सर्वत्र रेगिस्तान ही दिखाई पड़ते एवं उनमें भी कैक्टस स्तर के रेगिस्तानी पौधे ही उगते।

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि जल प्राणियों एवं वनस्पतियों का जीवन है। उसके सहारे उनका क्रिया-व्यापार चलता है। शान्ति और शीतलता ही नहीं, पवित्रता और सजीवता भी उसके गुण हैं। विकासवादियों के अनुसार सर्वप्रथम जल में ही जीवों की उत्पत्ति हुई। एककोशिक रूप में विकसित होकर ये बहुकोशिक बने, फिर स्थल में इनका स्थानान्तरण हुआ। इस प्रकार जीवन विकास के लिये यह जितना महत्त्वपूर्ण है, आगे के अस्तित्व को बनाये रखने के लिये भी उतना ही अनिवार्य है। इससे मनुष्य समेत अन्य प्राणियों का स्वास्थ्य संतुलित-नियन्त्रित बना रहता है—इस तथ्य को समझते हुये उसके आवश्यक परिमाण का उपयोग दैनिक जीवन में प्रत्येक को करते रहना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

।। पानीयं प्राणिनां प्राणाः।।

जल को अमृत कहा गया है। जीवनरक्षक तत्वों में वायु के बाद जल का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण तत्व है। भोजन के बिना मनुष्य कई दिनों तक जीवित रह सकता है, परन्तु इस जीवनदाता के अभाव में वह ६० से ८० घंटे के मध्य में ही दम तोड़ने लग जाता है। इसीलिये जल के सम्बन्ध में शास्त्रकार ने कहा है—

"पानीयं प्राणिनां प्राणाः विश्वमेव च तन्मयम्।
नहि तोयाद्विना वृत्तिः, स्वस्थस्य व्याधितस्य का।"

अर्थात्, जल जीव-सृष्टि का प्राण है। विश्व ही जलमय है। क्या स्वस्थ, क्या रोगी किसी का भी जीवन जल के बिना सम्भव नहीं है।

जीवित रहने और कोशिकाओं की वृद्धि के लिये शारीरिक संरचना में जल से अधिक महत्त्वपूर्ण कोई यौगिक नहीं है। शारीरिक वजन का लगभग तीन-चौथाई भाग पानी होता है, जो कोशिकाओं के अन्दर रहता है और शेष २० प्रतिशत पानी उनको घेरे हुये द्रवीय वातावरण में उपस्थित रहता है। मनुष्य शरीर के रक्त में ६० प्रतिशत जल की मात्रा होती है। मस्तिष्क में जल की उपस्थिति ८४ प्रतिशत, मांसपेशियों में ७७ प्रतिशत, यकृत में ७३ प्रतिशत, कार्टिलेज में ६७ प्रतिशत, हड्डी में २२ प्रतिशत और वसा में १५ प्रतिशत जल होता है। इसके अतिरिक्त लार ग्रन्थियों से स्रवित रस में ९९.९ प्रतिशत पानी होता है। पाचन संस्थान के पाचक अम्ल रस में ९७.५ प्रतिशत, मूत्र में ९९.३ प्रतिशत, पित्त में ८८ प्रतिशत और पसीने में ५९.८ प्रतिशत जल होता है।

शरीर का प्रत्येक क्षुद्रतम् कोश पानी से सदैव तर रहता है और पानी से धुलते रहने के कारण ही शरीर को स्वस्थ रखता है। शारीरिक द्रव में से कुछ की संरचना में स्थायित्व होता है, जैसे—रक्तप्लाज्मा, लिम्फ, सेरिब्रोस्पाइनल फ्लूड। परन्तु स्वेद, लार, पाचक रस और मूत्र जैसे द्रवीय यौगिकों की संरचना बदलती रहती है। इस परिवर्तन में जल की कमीवेशी का प्रमुख योगदान होता है। हमारे शरीर का यह जलीय अंश मल-मूत्र, पसीना और निःश्वास वायु के साथ बाहर निकलता रहता है। पसीने के रूप में यह रोमकूपों के माध्यम से ५०० सी० सी०, मूत्राशय से २५०० सी० सी० और निःश्वास मार्ग से ३५० सी० सी० पानी प्रतिदिन शरीर से बाहर निकलता है। प्रबल परिश्रम करने वालों के शरीर से १० प्वाइण्ट तक पानी पसीने के रूप में निकल जाता है। इस प्रकार शरीर में संचित विजातीय तत्व जल के साथ बाहर निकल जाते हैं। हर समय शरीर में अनेकों कोशिकायें नष्ट होती रहती हैं जो रक्त में धकेल दी जाती हैं, जहाँ से उन्हें शरीर से बाहर निकाल दिया जाता है। पेशाब में चार प्रतिशत यूरिया और यूरिक एसिड होते हैं। यदि ये विष शरीर में दो दिन तक ठहर जायें तो यूरैनिया नामक बीमारी हो जाती है। पर्याप्त मात्रा में पानी पीने से ही ये विषाक्त द्रव शरीर से बाहर निकल पाते हैं, अन्यथा शारीरिक क्षमता घटने लगती है और अनेक बीमारियाँ धर दबोचती हैं। पानी पीने से अन्तःस्रावी ग्रन्थियों का स्राव भी पर्याप्त मात्रा में होता रहता है, जो शरीर को स्वस्थ बनाये रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। पानी की कमी से शरीर में अम्ल और क्षार का अनुपात गड़बड़ा जाता है। जलीय माध्यम होने के कारण शरीर के अन्दर के अन्तः वातावरण की समरूपता स्थिर रह पाती है। शरीर का होमियोस्टैसिस-तापमान, नमक सान्द्रण भोज्य पदार्थों और ऑक्सीजन का स्थायित्व आदि जलीय अंश की उपस्थिति में ही स्थिर रहा सकता है।

आयुर्वेद में जल को एक विश्वसनीय औषधि कहा गया है। जल रोगनाशक है, विश्व भैषज है और जल जीवन को बनाये रखने के लिये एक आवश्यक तत्व है। इसकी महत्ता को समझा जाना चाहिये।

जल के उपयोग में कंजूसी न करें

प्रकृति को सफाई पसन्द है। उसे गन्दगी सहन नहीं। जहाँ भी जब भी, गन्दगी उत्पन्न होती है वहाँ तुरन्त उसके निवारण-निराकरण के लिय अपने सफाई कर्मचारी भेजती है जिससे उस उत्पन्न हुई गन्दगी को तत्काल समाप्त किया जा सके।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कोई पशु मर जाय तो उसका शरीर थोड़े समय में सड़ने और बदबू फैलाने लग जायगा। पर प्रकृति ने ऐसी व्यवस्था की है कि वह अवांछनीय स्थिति आने से पूर्व ही सफाई की समुचित व्यवस्था बन जाय। आकाश में मँडराते हुये—गिद्ध, चील, कौए और जमीन पर भ्रमण करते हुये सियार, कुत्ते उस मृत शरीर की गन्ध पाते ही दौड़ पड़ते हैं और सभी उसे खाकर साफ कर देते हैं। सड़ने का समय आने के पूर्व ही सब कुछ साफ कर दिया जाता है। यदि ऐसा न भी हो सके तो उस मृत माँस में कीड़े पड़ जाते हैं और वे उसे खा-पीकर कुछ ही समय में समाप्त कर देते हैं।

हवा चलने का एक प्रयोजन यह भी है कि सड़न कहीं भी जमा न होने पावे। बदबू को उड़ाकर अन्यत्र ले जाया जाय और उस विकृति उत्पन्न करने वाले स्थान को भी शुद्ध प्राणवायु की आवश्यक मात्रा मिल जाये।

भूमि पर रहने वाले अपने मल-मूत्र से गन्दगी उत्पन्न करते रहते हैं। इसे धोना और बहाया जाना आवश्यक है। इस प्रयोजन के लिये प्रकृति ने पर्याप्त मात्रा में जल उत्पन्न किया है। धरती पर एक-तिहाई जल, दो-तिहाई वर्षा बार-बार होती रहती है। जिसका एक प्रयोजन गंदगी को धोकर साफ करते रहना भी है। अग्नि भी यही करती है। सूर्य पिण्ड से अजस्र ऊष्मा का वर्षण अपनी पृथ्वी पर उत्पन्न रहने वाले विकृत कीटाणुओं का शमन करता रहता है। अग्नि की गर्मी से सीलन और सड़न के वातावरण का किस प्रकार परिशोधन होता रहता है, यह सर्वविदित है।

पीने का पानी हमें छना हुआ शुद्ध मिले। इसलिये जमीन की छलनी में छनकर हमें कुओं से शुद्ध जल मिलता है। नदियों का प्रवाह उसमें सम्मिलित गन्दगी को मिटा देता है। भाप बनकर बादलों में शुद्ध जल पहुँचता है और उससे जल-शोधन का अति महत्त्वपूर्ण कार्य अनायास ही होता रहता है। वृक्ष और वनस्पतियों के अनेकानेक प्रयोजनों में एक अति महत्त्वपूर्ण कार्य यह भी है कि वे प्राणियों द्वारा छोड़ी गई कार्बन गैस को अपने में सोखें और बदले में स्वच्छ ऑक्सीजन प्रदान करें।

शरीर का निर्माण इस ढंग से हुआ है कि उसमें प्रतिक्षण उत्पन्न होती रहने वाली गन्दगी का यथासमय, तत्काल निवारण होता रहे। फेफड़े श्वाँस छोड़ते हैं—गुदा मार्ग से मल विसर्जन होता है। गुर्दे, मूत्राशय मिलकर गन्दे जल को निकालते हैं, त्वचा मार्ग के अगणित छिद्र पसीने द्वारा अपना सफाई कार्य निरन्तर करते रहते हैं। इस खर्च होने वाले जल की पूर्ति पिये हुये जल तथा भोजन में रहने वाले जलांश के द्वारा होती रहती है। स्नान भी बढ़ी हुई शरीर की ऊष्मा को शान्त करने में बहुत सहायक होता है।

बच्चों के शरीर इसलिये अधिक कोमल और सुन्दर प्रतीत होते हैं, कि उनमें ८२.२ प्रतिशत जल रहता है। कोमलता, लचीलापन, फुर्ती, सजीवता, सुन्दरता को इस बढ़े हुये जलांश के साथ जोड़ा जा सकता है। किशोर अवस्था पार करके जब प्रौढ़ावस्था एवं वृद्धावस्था आती है तो यह जलांश घटने लगता है परन्तु कठोरता एवं रूखापन भी उसी क्रम में बढ़ने लगता है।

पानी में दो भाग हाइड्रोजन और एक भाग ऑक्सीजन का सम्मिश्रण होता है। यह दोनों ही गैसें मानव-जीवन के लिये अतीव आवश्यक हैं। ऑक्सीजन की प्राणप्रद शक्ति सर्वविदित है। उसके बिना हमारी थोड़ी ही देर में दम घुट-कर मृत्यु हो सकती है। ऐसे बहुमूल्य जीवन तत्व को हम न केवल सांस से वरन् जल के माध्यम से भी प्रचुर परिमाण में ग्रहण करते हैं।

हम प्रायः ऐसा भोजन करते हैं जिसे पचाने के लिये अधिक पानी की जरूरत पड़ती है। प्रोटीन एवं चिकनाई प्रधान भोजन की तुलना में श्वेतसार एवं शर्करा प्रधान भोजन के लिये अधिक पानी चाहिये, १ औंस श्वेतसार को ग्लाइकोजिन में बदलने के लिये चार औंस पानी चाहिये। नमक एक औंस खाया जाय तो वह आठ पौंड पानी से पचेगा। मिर्च, मसाले एवं शक्कर तो और भी अधिक पानी चाहते हैं।

पानी शरीर में पहुँचकर अपनी विशिष्ट रासायनिक संरचना के अनुरूप पोषण प्रदान करता है। मलों की धुलाई करता है और देह की नमी का आवश्यक सन्तुलन रखता है; ताजगी देता है और विभिन्न कारणों से उत्पन्न होती रहने वाली गर्मी को ठंडा करता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

भोजन यदि रसीला होगा और अच्छी तरह चबाकर खाया जायेगा तो बीच में पानी पीने की जरूरत नहीं पड़ेगी। पर यदि खाद्य पदार्थ सूखे हैं और उन्हें पूरी तरह चबाया नहीं गया है तो गले से नीचे उतारने के लिये पानी कीं जरूरत पड़ेगी। ऐसी दशा में एक-एक, दो-दो घूँट चार-पाँच बार तक पानी पिया जा सकता है। साधारणतया भोजन के बीच में पानी कम से कम ही पीना चाहिये। रात्रि को सोते समय दूध, छाछ अथवा पानी एक गिलास पीकर ही सोना चाहिये।

कुछ विशेष परिस्थितियों में अधिक पानी पीना चाहिए। बुखार में, लू लगने पर, सुजाक जैसी पेशाब सम्बन्धी बीमारियाँ होने पर—रक्तचाप, हृदय की धड़कन, कब्ज, पेट में जलन जैसी शिकायतें होने पर सामान्य स्थिति की अपेक्षा अधिक जल पीना उचित है।

पानी एकदम पेट में नहीं उड़ेल देना चाहिये वरन् उसे घूँट-घूँटकर इस तरह पीना चाहिये कि मुँह में वह कुछ क्षण रुका रहे उसका तापमान मुँह जितना बन जाये और जीभ आदि की ग्रन्थियों से निकलने वाले स्रावों का उसमें समावेश हो जाय। शरीर भीतरी तापमान से अधिक गर्म या ठण्डा पानी होगा तो भीतर जाकर गड़बड़ी उत्पन्न करेगा। मुँह में कुछ समय रहने पर जल का तापमान सह्य हो जाता है, इसी प्रकार मुख के स्रावों का समावेश हो जाने से उसकी उपयागिता कहीं अधिक बढ़ जाती है। एकदम गटककर बहुत सा पानी एक ही बार में पी जाने की अपेक्षा यह कहीं अधिक उत्तम है कि उसे धीरे-धीरे, घूँट-घूँटकर पिया जाये। इस प्रकार पीना अपेक्षाकृत कहीं अधिक लाभदायक है।

पानी की अपनी निज की विशेषतायें हैं जिसकी पूर्ति चाय, कॉफी, शरबत, कोकाकोला, सोडावाटर, दूध, फलों के रस आदि से नहीं हो सकती। उपयोगी पेय पदार्थ लिये जायँ वह ठीक है, पर उन्हें पानी का स्थानापन्न नहीं बना लेना चाहिये। दूध एवं फलों का रस पीते रहने की बात लाभदायक है, पर इनका प्रयोग करने के कारण जल को सर्वथा नहीं छोड़ देना चाहिये, निस्सन्देह पानी में अपने किस्म के रसायन और गुण हैं। शरीर पोषण की दृष्टि से उनकी उपयोगिता एवं आवश्यकता है।

पानी कब पीना चाहिये ?

पानी कब पीना चाहिये ? कब नहीं ? इस सम्बन्ध में भी अक्सर लोग गलती करते हैं। यहाँ पहले हम इस बात की चर्चा करेंगे कि जल हमें कब व कितना पीना चाहिये।

(१) साधारणतया, जब भी प्यास लगे, तभी पानी पीना चाहिये—रात हो या दिन। ४-५ किलो से कम पानी पीने वाले (२४ घंटे में) अवश्य कब्ज, बदहजमी तथा खुश्की आदि रोगों से पीड़ित होंगे। पानी कम पीने से शरीर के अन्दर के अनेक विष पानी में घुलकर पेशाब या पसीने के रूप में बाहर नहीं निकल पाते। पानी अधिक पीने से त्वचा साफ रहती है, रोम-कूप खुलते हैं, मूत्र तथा पसीने द्वारा शरीर की सफाई होती है, चेहरा दमकने लगता है। मल ढीला होता है, कब्ज दूर होता है। पाचन क्रिया ठीक होती है तथा अनेक छोटी-मोटी बीमारियाँ दूर होती हैं। चित्त हल्का होता है, खून पतला रहता है, भोजन हजम होता है।

(२) मनुष्य को ऊषःपान अवश्य करना चाहिये। सोकर उठते ही कुल्ला आदि करके ५ मिनट रुककर रात का ओस में (ताँबे के बर्तन में) रखा आधा किलो से किलो भर तक पानी पियें (यदि एक नीबू का रस मिला लें तो और भी अच्छा)। ३-४ मिनट बाईं करवट तथा ३-४ मिनट दाहिनी करवट और फिर ३-४ मिनट बाई करवट लेटकर तुरन्त शौच को जांय—चाहे शौच लगे या न लगे। कुछ लोग ३-४ मिनट टहलकर फिर शौच जाना उचित समझते हैं। इससे मल-निष्कासन में सुविधा और आराम होता है। बवासीर जैसे कठिन रोग दूर होते हैं।

(३) भोजन के आध घंटे पूर्व आधा किलो जल का पीना भी गुणकारी है। जल को दूध की भाँति घूँट-घूँटकर पियें ताकि लार मिल जाये—गट-गट करके न पी जायँ। जल पीते समय यह भावना करें कि प्राण-तत्व जल के द्वारा मेरे अन्दर प्रवेश करके मुझे स्वास्थ्य, शक्ति और स्फूर्ति दे रहे हैं, मेरा रक्त, लाल, पतला तथा शुद्ध हो रहा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(४) भोजन के साथ जल न पियें अन्यथा भोजन के पाचन में गड़बड़ी होती है। भोजन के १-२ घंटे बाद जल पियें। तब प्यास भी खूब लगती है और पाचन अंगों में भोजन पचने में सहायता मिलती है क्योंकि पाचक-रस अमाशय आदि में भोजन में ठीक से मिल चुकते हैं।

(५) सोने के पूर्व एक गिलास जल पियें। इससे स्वप्नदोष का भय नहीं रहता, नींद अच्छी आती है, भोजन ठीक से पचता है।

(६) उपवास काल में जल का प्रयोग अधिक करना चाहिये—प्यास लगे या न लगे। उपवास काल में पाचन अंगों को, भोज्य-पदार्थों को पचाने के काम से छुट्टी मिल जाती है, तो वह शरीर के संचित विष तथा विकारों को पचाने लगते हैं; निकालना आरम्भ कर देते हैं। जल पीने से, शरीर भर के रुधिर से विष एकत्रित होकर जल में घुलकर पेशाब के रूप में निकल जाते हैं। उपवास-काल में जल में यदि नीबू का रस डालकर पियें तो विष आदि तेजी से दूर होते हैं पर साथ ही साथ उनकी तेज प्रतिक्रिया नहीं होने पाती।

हमारे लिये यह जानना भी आवश्यक है कि जल कब नहीं पीना चाहिये।

(१) भोजन के तुरन्त पहले या तुरन्त बाद न पीना चाहिये। इससे पाचक-रस ठीक से भोजन में नहीं मिल पाते।

(२) पानी पीकर तुरन्त पेशाब नहीं करना चाहिये। वैसे ही पेशाब करके तुरन्त पानी नहीं पीना चाहिये। इससे पाचन-यन्त्र तथा गुर्दे कमजोर पड़ जाते हैं अतः १०-५ मिनट आगे पीछे जल पियें। यदि सोकर उठते ही पेशाब लगती है और उषःपान भी करना है तो पेशाब करके ४-५ मिनट कुल्ला आदि करने में लगा दें और तब जल पियें।

(३) ऐनिमा लेने के १५ मिनट पहले या १५ मिनट बाद जल न पियें।

(४० चिकनी चीजें-दूध, मलाई, मक्खन घी तथा मेवा, भुने चने-फल, मिठाई आदि के बाद जल न पियें। चिकनी चीजों के ऊपर जल से खाँसी होने का डर रहता है। खीरा-ककड़ी खरबूजा आदि के ऊपर जल पीने से हैजा का डर हो सकता है। फल आदि के ऊपर जल पीने से सर्दी, नजला, जुकाम आदि हो सकता है। भुने चने के ऊपर जल पीने से पाचन क्रिया को कमजोरी हो सकती है।

(५) सोकर उठने पर, चाहे दिन हो या रात, तुरन्त पानी पीने से जुकाम, सिरदर्द तथा तबियत भारी हो जाने का भय होता है।

(६) गर्म चीजों—चाय, दूध आदि के ऊपर पानी न पियें। वैसे ही तुरन्त पानी पीकर यह चीजें न पियें।

(७) रति-क्रिया के बाद तुरन्त जल न पियें। क्योंकि बदन यकायक गर्म और सनसनाहट के बाद स्तब्ध सा हो चुकता है, अतः तुरन्त ठंडक पहुँचाना ठीक नहीं।

(८) व्यायाम या कठिन परिश्रम या कड़ी धूप और लू से आने के बाद या नमी के बाद तुरन्त जल न पियें। गर्मी-सर्दी एक साथ पहुँचाना ठीक नहीं।

कोमल जल ही पीना चाहिये। बर्फ का ठंडा पानी भले ही तुरन्त प्यास बुझा दे, पर असर अस्थायी होता है। स्वास्थ्य के लिये बर्फ का प्रयोग वर्जित है। सबसे अच्छा ताजा कुँओं का मीठा जल पीना उत्तम है। बहती नदी की बीच धारा का जल शुद्ध होता है। बालू-कोयला-चूना द्वारा साफ किया या उबालकर ठण्डा किया हुआ जल पीना चाहिये। ट्यूब-वैल्स (ट्यूब के कुएँ) न हों तो ऐसे कुओं का जल तो कभी न पियें जिनमें गर्द-गुबार, पत्तियाँ पड़ती हों, जिसकी जगत ऊँची न हो और नहाने, धोने आदि का पानी भीतर चला जाता हो, जिनमें अपवित्र और गन्दे डोल या गगरे आदि पानी भरने के प्रयोग में लाये जायँ, जिस कुएँ के जल में ब्लीचिंग पाउडर या पोटेशियम परमैंगनेट आदि दवायें डालकर उसके कीड़े न मार दिये गये हों। जल को निथारकर, छानकर, गर्म करके, पीना ही अच्छा होता है। पहाड़ी झरनों के पानी में मिले मिट्टी और बालू के सूक्ष्म कण निथारने से नीचे बैठ जाते हैं। इसके बाद ही इनका उपयोग करना चाहिये।

कहीं-कहीं के पानी में तेल तथा भारीपन अधिक होता है। इसको शुद्ध बालू और कपड़े से छान लेना चाहिये। कपड़ा हानिकारक

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कीटाणुओं को अपने में रोक लेता है। तेल तथा रसायनों को बालू सोख लेती है। एक घड़े में बालू भर दी जाय, उसके ऊपर पानी भरा घड़ा हो, दोनों के तले में इतना पतला छेद हो कि पानी धार बाँधकर नहीं, बूँद-बूँद करके टपकता रहे। पानी को कपड़े में छानकर ऊपर के घड़े में भर दिया जाय। उसकी बूँद बालू वाले घड़े में गिरे। इसके बाद उसकी तली के छेद में नीचे घड़े के में पानी गिरे। इस प्रकार दस-बारह घण्टे में एक घड़ा पानी छन जाता है। इससे खारेपन को छोड़कर अन्य बहुत सी खराबियाँ दूर हो जाती हैं। सम्भव हो तो पानी खौला लिया जाय और फिर कपड़े से छानकर बालू से छाना जाय। जहाँ पानी खारा हो वहाँ अर्क निकालने की विधि की तरह एक घड़े को भट्टी पर रखकर बन्द मुँह करके नली द्वारा दूसरे घड़े में भाप पहुँचा दी जाय तो इस प्रकार खारा पानी भी मीठा और पीने योग्य बन जाता है। वर्षा का पानी इसीलिए अच्छा माना जाता है। खारी समुद्र की भाप बादल बनकर बरसती है तो वह खारी नहीं होती। समुद्र में पाई जाने वाली अन्य खराबियाँ भी वर्षा जल में नहीं होतीं। यह तरीका जहाँ ईंधन की सुविधा हो, दो घड़ों के मुँह बन्द करके उनके बीच नली लगा देने पर भी आसानी से बन जाता है।

इस प्रकार जल पीने और उसको स्वच्छ बनाने में, इन छोटी-छोटी सावधानियों को यदि ध्यान में रखा जा सके, तो हर किसी के लिये छोटी-मोटी बीमारियों को दूर भगा सकना और स्वस्थ रह सकना सम्भव है।

पेय जल की पूर्ति एक अनिवार्य आवश्यकता

पेय जल की उपलब्धि जन-साधारण की एक प्रमुख समस्या है। मात्र भारत ही नहीं, सारे विश्व में इसे एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता मानते हुए संयुक्त राष्ट्र संघ ने (१९८१-१९९०) के दशक को "अन्तर्राष्ट्रीय जल संभरण और स्वच्छता दशक" घोषित किया था। लक्ष्य यह है कि इस सदी के अन्त तक विश्व के एक-एक नागरिक को स्वच्छ पेय जल प्राप्त हो सके।

विश्व बैंक की एक सर्वेक्षण रिपोर्ट के अनुसार, एशिया और प्रशान्त महासागर के राष्ट्रों की कुल आबादी के ३२ प्रतिशत भाग को शुद्ध जल (सेकण्ड स्ट्रेटा का पेय जल) प्राप्त हो पाता है। सहारा से दक्षिण के अफ्रीकी देशों के मात्र १६ प्रतिशत भाग को शुद्ध जल प्राप्त हो पाता है। इसी प्रकार दक्षिणी अमेरिका के ५३ प्रतिशत से भी अधिक लोग नित्य ऐसा पानी पीते हैं, जिसे स्वास्थ्य मानदण्डों के आधार पर अशुद्ध ठहराया गया है। अधिकांश महामारियों एवं असमय की मौतों का कारण भी यही अशुद्ध जल है। यूरोप, पश्चिम एशिया एवं उत्तरी अफ्रीका के भी ३८ प्रतिशत से अधिक लोग शुद्ध जल से वंचित—रोगग्रस्त बने हुये हैं।

यों तो संयुक्त राष्ट्र संघ ने २००० के अन्त तक विकासशील देशों की दो अरब जनसंख्या के लिये पीने का शुद्ध जल पहुँचाने का एक व्यापक कार्यक्रम तैयार किया है, जिस पर २०० अरब डॉलर तक की राशि व्यय होगी लेकिन यह एक असम्भव सा दीख पड़ने वाला लक्ष्य प्रतीत होता है। मात्र हम भारत के परिप्रेक्ष्य में हीं विचार करें तो ज्ञात होता है कि अधिक विपन्नता, अशिक्षा, रुग्णता से ग्रस्त यहाँ के ग्रामीण क्षेत्रों में चालीस प्रतिशत से भी अधिक स्थानों पर पीने के शुद्ध जल की कोई व्यवस्था नहीं है। ७ लाख गाँवों में से लगभग २ लाख गाँवों के वासियों को जल जुटाने १ मील या अधिक दूरी तक जाना पड़ता है और यह भी अशुद्ध होता है।

यह कार्य नितान्त आवश्यक होने पर भी वस्तुतः सरल नहीं है। कारण कि भारत का भूभाग न एक जैसा समतल है, न जल-स्तर एक जैसा है। कहीं अति ऊबड़- खाबड़ भूमि है तो कहीं पठारी व पहाड़ी, चट्टानें, कहीं मीठा पानी है तो कहीं खारा। इस तरह अनियन्त्रित बसे देहातों को एक ग्राम समूह में बसाना भी अति कठिन कार्य है और बसे स्थानों पर शुद्ध मीठे-जल की व्यवस्था करना भी कठिन कार्य है।

भारत की इतनी बड़ी जनसंख्या को अशुद्ध जल मिलने से सदैव स्वास्थ्य संकट का सामना करना पड़ता है। लाखों कामकाजी व्यक्ति अशुद्ध जल मिलने से रोग-ग्रसित हो जाते हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कितने ही स्थायी घातक रोगों की जानकारी है कि अशुद्ध वायु और जल से ही अधिकतर रोग पनपते और फैलते हैं। अशुद्ध जल से होने वाले रोगों में हैजा, पेचिस, आन्त्रशोथ, रक्त विकार और अनेकों रोग हैं।

हमारे देश में जल वृष्टि का औसत ६ करोड़ हेक्टेयर मीटर प्रतिदिन है। इसका आधा हिस्सा वाष्प बन जाता है और दूसरा आधा हिस्सा विभिन्न रूपों में प्रवाहित होता है। प्रवाहित होने वाले कुल नदी जल का मुश्किल से १० प्रतिशत हिस्सा ही हमारी पकड़ में आ पाता है, अर्थात् ६० प्रतिशत प्रवाहित जल व्यर्थ समुद्र में समा जाता है। एक तरफ पानी की आपूर्ति में दिन-प्रतिदिन कमी अनुभव की जा रही है, तो दूसरी तरफ जनसंख्या वृद्धि के कारण इसकी माँग बढ़ ही रही है। स्थिति का पर्यवेक्षण करने से ज्ञात हुआ है कि सन् २००० तक जब देश की जनसंख्या सौ करोड़ को छूती नजर आयेगी तो उस समय जल की माँग में तीन गुनी वृद्धि होगी। भारत में घरेलू जल की प्रतिदिन माँग मौजूदा १०० लीटर से बढ़कर सन् २००१ में औसतन ३०० लीटर होगी। अभी मात्र १० प्रतिशत आबादी के लिये स्वच्छ, सुरक्षित जल की व्यवस्था है। यह सुविधा मात्र ५ प्रतिशत गाँवों को प्राप्त है। ६५ प्रतिशत ग्रामीण कुँओं से जल प्राप्त करते हैं, १५ प्रतिशत नदी, झील व झरनों से, आठ प्रतिशत ट्यूबवेल से व शेष तालाबों व फालतू स्रोतों से पानी इकट्ठा करते हैं। आठ करोड़ की जनसंख्या वाले एक लाख गाँवों में कुँओं का जल ५५ मीटर से भी ज्यादा गहराई से निकाला जाता है या एक किलोमीटर से ज्यादा दूरी के स्रोत से ढोकर लाया जाता है। डेढ़ लाख गाँवों में पेय जल की समस्या गम्भीर है; जबकि २५००० गाँवों में पानी की गुणवत्ता खतरनाक स्तर पर पायी गयी है।

शहरी क्षेत्रों में उपलब्ध स्रोत अपर्याप्त होने के साथ-साथ प्रदूषित भी हैं। भारत के केवल ४३ प्रतिशत शहरों में गन्दे जल की निकासी व सफाई की उचित व्यवस्था है।

खारा पानी तो समुद्र में भी भरा पड़ा है, पर वह पीने, नहाने-धोने, सींचने आदि के किसी भी काम में न आने के कारण एक प्रकार से निरर्थक है। उससे मानवी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं होती। पर पेय जल के लिये वर्षा के माध्यम से धरती पर पहुँचने वाले जल पर ही निर्भर रहना पड़ता है। वही नमी, दल-दल, नदी, तालाब, कुँओं, बाँधों में जमा होती रहती है। इस शुद्ध जल की आवश्यकता न केवल पीने, नहाने-धोने, पकाने आदि के लिये पड़ती है वरन् कृषि-उद्यानों से लेकर कारखाने चलाने तक में उसी से काम चलता है।

यह एक तथ्य है कि एक टन गेहूँ या एक टन चावल पैदा करने में क्रमशः १००० व २००० टन जल का उपयोग होता है। एक टन इस्पात उत्पादन में २५० टन जल व एक टन टेरीलीन वस्त्र निर्माण में २०००० टन जल की आपूर्ति अपेक्षित होती है।

गेहूँ के पौधों से इतना जल वाष्पीकृत होता है कि उससे एक खेत ३० सेंटीमीटर की गहराई तक डूब सकता है नहरों से ३० प्रतिशत जल गायब हो जाता है, ८० प्रतिशत जल वृष्टि व्यर्थ जाती है। जबकि ८० प्रतिशत जनसंख्या को यथेष्ट जल प्राप्त नहीं होता।

कुल भूमण्डलीय जलराशि यानि १५० करोड़ घनमीटर ६७ प्रतिशत हिस्सा खारे जल का है और बाकी ३ प्रतिशत स्वच्छ जल का, ७७ प्रतिशत भाग स्थाई बर्फ के रूप में पड़ा है। अतः ३ प्रतिशत स्वच्छ जल की २३ प्रतिशत उपलब्ध जलराशि पर ही मानवी क्रियाओं का अस्तित्व आधारित है। इसमें से मात्र १ प्रतिशत ही सब है, शेष २२ प्रतिशत तो भूमिगत जल है।

ये सारे आँकड़े यही बताते हैं कि पेय जल जीवन के लिये जितना अनिवार्य है, उतना ही इसे उपेक्षित भी किया गया है। अब अन्न उगाने की और वस्त्र बनाने की तरह हमारा ध्यान पेय जल की आवश्यकता पूरी करने की ओर भी जाना चाहिये, उपलब्ध साधन कम पड़ते जा रहे हैं। जनसंख्या वृद्धि और प्रगति के साथ-साथ सुविधा संवर्धन की प्रक्रिया ने हर व्यक्ति के पीछे जल की खपत पहले की अपेक्षा कहीं बढ़ा दी है। इन कारणों को ध्यान में रखते हुये नये सिरे से, नये उपाय सोचने की आवश्यकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरा प्रयत्न यह होना चाहिए कि हर गाँव में बड़े सामूहिक तालाब बनें और बड़े किसान अपनी थोड़ी-सी जमीन में तालाब बनायें। वर्षा का जो जल नदी-नालों के रास्ते समुद्र में चला जाता है, उसे इस प्रकार रोका जा सकेगा और इमारती कामों में, पशुओं के लिये, कपड़े धोने तथ अन्य कार्यों में उसे काम में लाया जा सकेगा। राजस्थान में पानी की कमी वाले इलाकों में अभी भी वर्षा का जल आँगन में पक्का हौज बनाकर जमा किया जाता है और उसी से साल भर तक पीने का काम चलाया जाता है। यह प्रबन्ध बड़े रूप में सर्वत्र हो सकता है और गाँव की वर्षा का पानी छोटे-छोटे तालाबों में रोक कर उससे हरियाली उगाने से लेकर अन्यान्य प्रयोजनों में पड़ने वाली जल आवश्यकता का इस आधार पर सन्तुलन बिठाया जा सकता है।

नदी-नाले के बाँध बाँधना भी एक बड़ा काम है; पर वह सरकारी या सहकारी प्रयत्नों से बड़ी पूँजी लगाकर तथा उपयुक्त तकनीकी ज्ञान के आधार पर ही किया जा सकता है। हर हालत में वर्षा के जल को समुद्र में पहुँचने से पूर्व मनुष्य की आवश्यकतायें पूर्ति करने के लिये प्रयुक्त किया जाना चाहिए। इसी आधार पर छोटी-बड़ी योजनायें बनाने और उपलब्धि एवं उपयोग का सही प्रबन्ध करने से ही प्रस्तुत अभाव को पूरा कर सकना सम्भव हो सकता है।

चाय एक हानिकारक व्यसन है

चाय का प्रचार हमारे देश में निरन्तर बढ़ता जा रहा है। पचास वर्ष पहले इसके प्रयोग करने वाले शहरों तक में इने-गिन थे और वे लोगों की आलोचना के विषय माने जाते थे। अन्य लोग कभी-कभी साधारण ज्वर आदि की अवस्था में दवा के तौर पर नमक की चाय या साधारण ढंग से बनी चाय का काढ़ा पी लेते थे। उस समय कोई यह ख्याल भी नहीं करता था कि दस-बीस वर्ष के भीतर ही चाय हमारे घरों में खान-पान का, दैनिक व्यवहार में आने वाली खाद्य सामग्री का एक आवश्यक अंग बन जायेगी। सबेरा होते ही घर-घर में चाय के प्याले और रकाबी की खनखनाहट सुनाई पड़ने लगेगी और हमारे प्रत्येक उत्सवों और जलपान गोष्ठियों में चाय की केटली ही आकर्षण का प्रमुख विषय बन जायगी।

उस समय अधिकांश चाय के बगीचे आसाम और दार्जिलिंग में थे और उनके मालिक १०० नहीं तो ६५ प्रतिशत अँग्रेज ही थे। वे लोग विशेष रूप से इंग्लैण्ड और अन्य कई देशों को चाय भेजा करते थे। पर स्वयं भारत में, देश के विस्तार को देखते हुये इसकी खपत नाम मात्र को थी। बम्बई, कलकत्ता जैसे नगरों में और गुजरात आदि कुछ प्रदेशों में उनका प्रचार अवश्य बढ़ गया था, पर देश के मध्य भाग में नियमित चाय पीने वालों की संख्या बहुत कम थी और गाँवों तथा कस्बों में तो उसके दर्शन भी नहीं होते थे। चाय कम्पनी वालों ने देखा कि भारतवर्ष में चाय का प्रचार किया जाय तो उनको अपनी वस्तु की बिक्री का एक बहुत बड़ा बाजार प्राप्त हो सकता है। बस, उन्होंने अपना एक संगठन 'टी सेल बोर्ड' बनाया और उसके द्वारा नगरों और कस्बों में चाय का प्रचार करने लगे। चाय वालों के वेतन भोगी कर्मचारी अँगीठी, एक बड़ा भगौना और चाय बनाने का सरंजाम लेकर मोहल्लों में जाते थे और वहाँ सब लोगों के सामने चाय बनाने का प्रदर्शन करते थे। बनी हुई चाय कुल्लड़ों में लोगों को मुफ्त पिलाई जाती थी और कितने ही लोग तो अपने घर भर के प्रयोग के लिये लोटों में भरकर ले जाते थे।

उस समय में बुद्धिहीन लोग समझते थे कि चलो मुफ्त में चाय मिल रही है, पीने में हमारा क्या जाता है। पर वे नहीं जानते थे कि चाय वाले इतना खर्च उनको फँसाने के लिये ही कर रहे हैं। कुछ समय बाद चाय पिलाने वाले नित्य-प्रति आने की वजाय हफ्ते में दो दिन आने लगे और एक-एक पैसे चाय के छोटे पैकेट बेचने लगे, जिनको लोग शेष दिनों में स्वयं बनाकर पी सकें। अब लोगों को चाय की लत लग चुकी थी, यह भी कहा जाता था कि चाय की पत्तियों में अफीम का बहुत हल्का सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुट दिया जाता है, जिससे उसके नशे की आदत लोगों को लग जाती है। कुछ भी हो दस-पाँच वर्ष में ही काफी लोग चाय के आदी बन गये और बाजारों में आमतौर से चाय की दुकानें खुल गईं। मुफ्त में चाय पिलाने वाले प्रचारक लोग दो-चार महीने में एक मोहल्ले को चाय का शौकीन बनाकर दूसरे मोहल्ले में चले जाते थे और वहाँ पर वही मुफ्त पिलाने का तरीका अखत्यार करते थे। इस प्रकार देखते-देखते देश के करोड़ों व्यक्ति चाय के नियमित पीने वाले बन गये, जिनका काम अब बिना चाय के चल नहीं सकता। यह देखकर चाय वालों ने चाय के दाम बढ़ाना शुरू किया और कुछ ही वर्षों में वह सारी रकम वसूल करली, जो उन्होंने मुफ्त चाय पिलाने में खर्च की थी।

चाय वालों ने फिर देखा कि इस देश के जो लोग चाय पीने लगे हैं, वे जाड़ों की ऋतु में तो चाय का सेवन अच्छी तरह करते हैं, पर गर्मी की ऋतु में चाय को हानिकारक समझकर बन्द कर देते हैं। तब उन्होंने यह प्रचार किया कि चाय ऐसी अद्‌भुत वस्तु है, कि जो जाड़ों में तो गर्मी देती है और गर्मियों में ठंडक पहुँचाती है। उस समय केवल अखबारों के विज्ञापन द्वारा ही इसका प्रचार नहीं किया गया था, वरन् देश भर में मकानों की दीवारों पर स्टैन्सिल द्वारा यह लिख दिया गया था—

"गर्मियों में गर्म चाय ठंडक पहुँचाती है"

इस प्रकार विदेशी व्यापारियों ने अपने बहुत बड़े साधनों तथा सरकारी सत्ता का भी सहारा लेकर चाय के प्रचार में सफलता प्राप्त कर ली। चाय भारतीय गृहों की एक आवश्यक वस्तु बन गई और आज करोड़ों व्यक्ति चाय का नियमित सेवन ही नहीं करते वरन् उसका समर्थन और प्रशंसा भी करते हैं। जहाँ तक हमारा अनुमान है, तम्बाकू के बाद अगर यहाँ की जनता को किसी चीज का व्यसन है तो वह 'चाय' ही है। इतना ही नहीं तम्बाकू को अब भी समझदार लोग निन्दा के योग्य समझते हैं और बहुसंख्यक लोग उसका सेवन करते हुए भी उसे प्रकट नहीं करना चाहते, पर चाय के सम्बन्ध में ऐसी कोई बात नहीं है। बड़े-बड़े सभ्य और सुसंस्कृत व्यक्ति भी निःसंकोच भाव से चाय का सेवन करते हैं और अपने घरों में छोटे से छोटे बच्चों को भी दो-चार चम्मच देने में कोई बुराई नहीं समझते। इस प्रकार चाय ने हमारी मनोवृत्ति पर विजय प्राप्त कर ली है और अब उसका पूर्ण रूप से बहिष्कार अथवा त्याग कठिन ही जान पड़ता है। दूसरे शब्दों में, हम इसे सभ्यता का नशा कह सकते हैं।

तो भी हम चाय को न तो लाभकारी कह सकते हैं और न उसकी हानियों से इन्कार ही कर सकते हैं। सब कुछ होने पर भी उसकी गणना एक प्रकार के मादक पदार्थ में ही की जायगी, क्योंकि मनुष्य को कुछ समय व्यवहार करने के उपरान्त उसकी लत लग जाती है और अगर वह न मिले तो तबियत व्याकुल होती है, थकावट, उदासीनता, सिरदर्द आदि की शिकायतें पैदा होती हैं।

वैज्ञानिक विश्लेषण द्वारा चाय में दो प्रकार के विषैले तत्व पाये जाते हैं—एक 'टेनिन' और दूसरा 'कैफिन'। चाय में जो कसैलेपन का स्वाद आता है वही 'टेनिन' का है। यह आमाशय की झिल्ली को हानिकारक तनाव की स्थिति में ला देता है, जिससे हमारी पाचन क्रिया में बाधा पड़ती है। चाय पीने वालों की भूख मन्द हो जाती है। उनको अपच की शिकायत प्रायः रहने लगती है। इस सम्बन्ध में एक प्रसिद्ध चिकित्सक ने बतलाया है कि "थोड़ी मात्रा में भी चाय और कॉफी का सेवन करने से हमारे शरीर के पाचक-रस कमजोर हो जाते हैं जिससे अन्न के पौष्टिक तत्वों के सत्व को हमारा शरीर नहीं खींच सकता, दूसरे शब्दों में, यही अग्निमांद्य अथवा अजीर्ण होता है।" चाय के प्रभाव से दाँतों की खराबी भी उत्पन्न होती है। अनेक व्यक्तियों के दाँत जो काले-मैले से दिखाई पड़ते हैं, उसका कारण चाय की आदत ही होती है।

वास्तव में चाय में कोई लाभकारी तत्व नहीं है। उसमें दूध, चीनी आदि अवश्य मिलाये जाते हैं, पर पानी की अधिक मात्रा में शामिल हो जाने से ये भी व्यर्थ हो जाते हैं। बहुत वर्ष पहले महात्मा गाँधी ने गुजरात में चाय के विरुद्ध बड़ा आन्दोलन छेड़ा था, क्योंकि उनका कहना था कि हमारे नगरों में अधिकांश दूध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चाय में ही खत्म हो जाता है और बच्चों को भी साधारण अच्छा दूध मिलना असम्भव हो गया है, जिससे हमारी भावी सन्तान निर्बल, निसत्व बनती चली जाती है। गाँधी जी के आन्दोलन के फलस्वरूप कुछ लोगों ने चाय को छोड़ दिया था और दूध या छाछ के जलपान गृह खुले थे, पर वह प्रभाव थोड़े ही समय तक रहा, बाद में फिर सब लोग इसे भूलकर पुनः चाय के चक्कर में फँस गये।

वास्तव में चाय एक प्रकार की उत्तेजना देती है जिससे मनुष्य को थोड़ी देर के लिये स्फूर्ति सी जान पड़ती है और उसकी सुस्ती दूर हो जाती है। इसी को चाय का गुण मानकर अनेक लोग इसका सेवन करते हैं। पर जैसा समस्त नशीली चीजों का नियम है, यह मनुष्य की शक्ति को बढ़ाती नहीं है, वरन् उसकी पुरानी शक्ति को ही क्षणिक रूप में उत्तेजित कर देती है। इससे मस्तिष्क में रक्त का संचालन अधिक होने लगता है, थोड़ी देर के लिये ताजगी सी जान पड़ती है पर इससे मनुष्य उसके आदी बन जाते हैं और फिर उनको किसी प्रकार की उत्तेजना का होना आवश्यक हो जाता है। यह एक प्रकार से अपनी आदत को खराब करना है। जहाँ चाय न मिली या उसके मिलने में देर हुई कि मन किसी काम में भी नहीं लगता और एक तरह की उदासीनता सी उत्पन्न हो जाती है। इस प्रकार हम अपने दूध-शक्कर जैसे उत्तम पदार्थों को बर्बाद करके अपने लिये एक हानिकारक आदत उत्पन्न कर लेते हैं। इस दृष्टि से चाय भी शराब और सिगरेट जैसी हानिकारक तथा त्याज्य वस्तु है, वरन् सस्ती और स्वादिष्ट होने से इसकी आदत सहज में बहुसंख्यक लोगों को लगती जाती है। यह आदत हमने विदेशियों का अन्धानुकरण करके उत्पन्न की है और इसलिये हमारे लिये अस्वाभाविक है। ठंडे देशों में स्फूर्ति लाने में यह सहायक भी हो सकती है और वहाँ की आवोहवा में इससे हानि भी कम होती है पर भारत जैसे गर्म देश में यह वास्तव में बहुत हानि करती है। इसलिये जहाँ तक संभव हो हमें इसका त्याग करना चाहिये।

रसायनज्ञों ने चाय में जिन तत्वों की उपस्थिति बतायी है, वे निम्न हैं—

(१) टैनीन (*Tannin*) १६-४० प्र० श० से २७-१४ प्र० श० तक। (२) दाइन (*Thine*) २-२४ प्र० श. से ३-४२ प्रतिशत। (३) सुगन्धित तेल (*Essential-oil*) ०-७६ से २-० प्रतिशत तक।

प्रथम तथा द्वितीय पदार्थ एक प्रकार के विष और तृतीय पदार्थ एक प्रकार का सुगन्धित तेल जो नींद को उड़ा देने का कार्य करता है; इसमें पाये जाते हैं। इसके बाद भी वैज्ञानिकों ने इसकी अधिक खोज की है और बतलाया है, कि चाय की पत्ती हरी या सूखी लेकर एक प्लेटिनम तार में लपेटकर बूनसन फ्लेम में जलाया जाय तो उसमें से पीली लपटें निकलेंगी उसे नीले रंग के चश्मे (शीशे) से देखने से बैगनी (Violet) रंग की लपटें दिखाई देंगी। वे पोटैशियम साल्ट के लक्षण हैं। थोड़ी सी बनी हुई चाय (बिना दूध शक्कर के) लेकर उसमें फैरिक क्लोराइड ५ ग्रेन मिलाने से काली स्याही की भाँति रंग हो जायगा। जिससे ज्ञात होता है कि इसमें टेनिक एसिड विष है। इसी प्रकार बनी हुई चाय में तनु हाइड्रोक्लोरिक एसिड़ चन्द बिन्दु तथा एक टुकड़ा पोटैशियम क्लोरेट का मिलायें, उसमें से क्लोरीन गैस की गन्ध निकलेगी जो इसमें कैफीन विष का भी होना सिद्ध करता है। यह है संक्षेप में इसका रासायनिक विश्लेषण।

डॉक्टरों की सम्मति है कि चाय के सेवन करने से एक नवीन रोग उत्पन्न हुआ है। इसमें पहले मस्तिष्क में एक प्रकार का वेग उठता है चेहरे का रंग पीत-वर्ण होता चला जाता है किन्तु चाय का पीने वाला उसकी चिन्ता नहीं करता है। कुछ समय के पश्चात् आन्तरिक तथा बाह्य कष्ट प्रकट होने लग जाते हैं। चित्त (मिजाज) शुष्क और मुखाकृति अधिक पीत-वर्ण हो जाती है। एक अन्य रोग जिसे 'चाहरम' कहते हैं, जिसमें एक प्रकार की कठिन मूर्छा आन्तरिक इन्द्रियों के कार्य शिथिल, हाथ में कम्पन और पाचन यन्त्र में पीड़ा हो जाती है। जिसका फल यह होता है कि स्वाभाविक शिथिलता प्रकट होने लगती है। चाय का विष मूत्राशय (Bladder) पर अप्राकृतिक प्रभाव डालकर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उसकी मूत्र रोक रखने की शक्ति कम कर देता है। जिससे उन्हें अधिक काम करते हुये बार-बार मूत्र त्याग करना पड़ता है और आगे चलकर मूत्र में मूत्राम्ल (Uric Acid) कैल्शियम आरजैलेट तथा अंडलाल (Albumen) आदि जाने लग जाते हैं जिसमें अनेक मूत्र-सम्बन्धी पीडायें उत्पन्न हो जाती हैं।

मद सेवियों की भाँति चाय पीने वाले अपने कष्ट की चिकित्सा चाय को ही समझा करते हैं। परिणाम यह होता है कि रोग वृद्धि होती जाती है। डॉ. वेप्रार्ड ने बहुत से रोगियों की परीक्षा करके ये बातें सिद्ध की हैं कि चाय का विष शरीर में एकत्रित होता रहता है और नवयुवकों तथा दुर्बल शरीर वालों पर इसका बहुत हानिकारक प्रभाव होता है। इसके सेवन से इसके विषयुक्त प्रभाव के अनेक लक्षण—जैसे क्षुधा का नष्ट होना, पाचन-विकार, कोष्ठबद्धता, हृदय धड़कन, हृदय स्थान पर पीड़ा, जी मिचलाना, कै, मुर्छा, दर्द, गठिया, वाय आदि रोग हो जाते हैं। चाय का जो प्रचार भारत में हुआ है, यह उसी प्रकार है, जैसे चीन में अफीम का किया गया है। स्वास्थ्य का महत्त्व समझने वाले हर एक विचारशील व्यक्ति को इस हानिकारक पेय से बचने के लिये सावधान होना चाहिए। जिन्हें आदत पड़ गई है और नहीं छोड़ सकते वे तुलसी, बनफसा, अदरख, मुनक्का, ब्राह्मी, चकन, जैसी लाभदायक औषधियों को पानी में उबालकर चाय का काम ले सकते हैं।

स्वास्थ्य का एक शत्रु—चाय

चाय पीने से स्फूर्ति आती है, सुस्ती दूर होती है और काम करने की शक्ति बढ़ जाती है; चाय पीने वालों का ऐसा अनुभव है। लेकिन इसके अलावा एक अनुभव और है वह है, वक्त पर चाय न मिले तो शरीर की सारी मशीनरी ढीली पड़कर काम करना बन्द कर देती हैं। फिर तो आगे बढ़ने के लिये चाय के प्याले को पीने की इच्छा तीव्र रहती है और जब तक चाय का प्याला न मिल जाय कोई भी काम किया ही नहीं जाता।

आमतौर से देखा जाता है, कि मनुष्य को जो समय कि उसके भोजन का होता है, भूख लग आती है। उस समय कुछ भी खा लेने से आदमी फिर अपना काम पूर्ववत् ही करने लग जाता है लेकिन चाय पर यह बात नहीं लगती। चाय पीने के समय पर जब मनुष्य में शिथिलता आ जाती है, तो चाय के सिवाय अन्य किसी चीज का उपयोग करने पर वह शिथिलता दूर नहीं होती। उसके लिये तो चाय पीना ही आवश्यक हो जाता है।

इन सारी बातों को देखने से पता चलता है कि चाय में ऐसे पदार्थों का मिश्रण है जो कि शरीर के मज्जा तन्तुओं, ज्ञान तन्तुओं पर तुरन्त प्रभाव डालकर मनुष्य को उसकी वास्तविक स्थिति से भुला देते हैं।

जो विज्ञानवेत्ता हैं उन्होंने चाय के सम्बन्ध में अपनी-अपनी प्रयोगशालाओं में खोज की है। उनका कहना है कि चाय में मादक द्रव्यों का समावेश है, साथ ही धीरे-धीरे प्रभाव डालने वाले विष भी इसमें मिले हुये हैं। ये विष शरीर पर अपना प्रभाव एक-एक नहीं करते बल्कि धीरे-धीरे शरीर के भीतरी अवयवों को घेर लेते हैं। जिनके कारण उसके विषाक्त होने का हाल तुरन्त नहीं मालूम होता।

हम जो कुछ खाते हैं वह भोजन पाचन-प्रणाली द्वारा शरीर में पहुँचता है। पाचन-प्रणाली में जगह-जगह छोटी-छोटी ग्रन्थियाँ होती हैं और खुरदरापन होता है, जिसके द्वारा अन्न रस सोख लिया जाता है और जो रक्तादि उपयोगी धातु तैयार करने के स्थान पर भेज दिया जाता है। चाय का सबसे पहला कार्य रक्त प्रणाली पर होता है। अन्न प्रणाली की ग्रन्थियाँ और खुरदुरा भाग अन्न रस को चूसने में शिथिल हो जाता है। आमाशय से लेकर अंतड़ियाँ तक इसके कारण बेकार हो जाती हैं, यह काम चाय में रहने वाला टैनिन या टैनिन एसिड नामक विष करता है। चाय का कैफीन नामक विष भी टैनिन जैसा ही असरकारक होता है।

एक दूसरा विष चाय में कैफीन नाम का रहता है, जो कोष्ठबद्धता को उत्पन्न करता है। अक्सर देखा जाता है कि चाय के पीने वालों को तब तक टट्टी नहीं होती जब तक कि वे चाय न पी लें। वास्तव में चाय टट्टी नहीं

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

करती। गरम-गरम पानी जो चाय में मिला होता है, शरीर की अपान वायु को हल्का करता है और उसके कारण मल का निस्सरण होता है, चाय पीने वाले उसे चाय का गुण समझते हैं, जोकि मात्र खयाल है। कैफीन का जहर दिल की धड़कन को बढ़ा देता है; कभी-कभी तो दिल की धड़कन अधिक बढ़कर आदमी मर तक जाता है। इस जहर से गठिया आदि वात रोग भी उत्पन्न हो जाते हैं। किन्हीं-किन्हीं डॉक्टरों का कहना है कि गुर्दे पर इस विष का प्रभाव पड़ता है जिसके कारण पेशाब की मात्रा बढ़ जाती है। पेशाब की मात्रा में तीन गुनी तक़ वृद्धि हो जाने का लोगों को अनुभव मिला है। चाय के अन्दर रहने वाला यह विष ही मनुष्य को चाय के लिये छटपटाते रहने के लिये बाध्य करता है। यहाँ तक कि चाय के अतिरिक्त अन्य किसी चीज द्वारा इस छटपटाहट को शान्त नहीं किया जा सकता।

चाय पीने से शरीर में स्फूर्ति का जो भान होता है, उसका कारण उसमें रहने वाला थीन नामक विष है। यह पहले-पहले शरीर में स्फूर्ति और ताजगी लाता है, पर चूँकि वह स्वाभाविक नहीं होता, उसे तो वात से स्थान को मूर्छित करके प्राप्त किया जाता है इसलिये उसका प्रभाव कम होते ही क्लान्ति बढ़ जाती है और खुश्की पैदा हो जाना आरम्भ हो जाता है।

चक्कर आना, आवाज बदल जाना, रक्त विकार उत्पन्न हो जाना, लकवा लग जाना, वीर्य के अनेक विकार, मूर्छा आ जाना, नींद कम हो जाना आदि ऐसे रोग हैं जो चाय के अन्दर रहने वाले साइनाजेन, स्ट्रिक नाइन, साइनाइड आदि विषों के कारण उत्पन्न होते हैं।

चाय जैसी विषैली और उत्तेजक वस्तु चीन के पड़ोसी होने और अंग्रेज व्यापारियों के भारत पर शासन करने के कारण इस देश को मिली है। लॉर्ड कर्जन ने इसके प्रचार में काफी मदद दी है। अन्य रोगों की तरह भारत इस रोग से भी पीड़ित है। जो रोग से मुक्त होना चाहते हैं, उन्हें इस रोग से मुक्त होने का प्रयत्न करना चाहिये।

चाय के अन्य विकल्प

सर्वोत्तम पौष्टिक पेय गाय का धारोष्ण दूध ही हो सकता है। किन्तु आज-कल उसका मिल सकना सर्वसाधारण के लिये सुलभ नहीं है, अतएव उसके बदले यदि मैंस का दूध भी काम में लाया जाय तो चल सकता है। दूध को अच्छी तरह गर्म कर शक्कर मिलाने के बाद कुछ ठण्डा कर लिया जाय, जिन्हें खालिश दूध पचता न हो, वे उसमें चुटकी भर सोंठ का चूर्ण मिलाकर चाय की तरह घूँट-घूँट पी सकते हैं, जिससे कि वह लार के साथ मिलकर भली-भाँति पच सके।

जिन्हें दूध बिल्कुल ही नहीं पचता हो, वे कप भर गर्म पानी में आधा कागजी नीबू का रस निचोड़ कर उसमें छोटे दो चम्मच भर शहद मिलाकर सबेरे ६ बजे या शाम को ६ बजे प्रतिदिन नियम से पी सकते हैं। केवल नीबू कभी न चूसा जाय। ग्रीष्म ऋतु में ठण्डा और शीतकाल में गर्म पानी लेना चाहिये। इस पेय से पेट के रोग-जन्तु नष्ट हो जाते हैं और दस्त साफ होता है।

(१) नावणी (नागली)

एक प्रकार का जंगली अनाज होता है। उसका सत् निकालकर प्रतिदिन सबेरे आधा पाव पानी में एक चम्मच भर सत्व मिलाकर पकाया जाये इसके बाद उसमें आधा पाव दूध और शक्कर मिलाकर लपसी तैयार कर ली जाय यह पेय भी दूध के समान पौष्टिक एवं छोटे से लेकर बड़े तक सबके लिये उपयोगी है। इसमें चाय, कॉफी, कोको, ओव्हलटीन आदि की अपेक्षा बहुत ही कम खर्च पड़ता है। मैं प्रतिदिन अपने बच्चों के साथ सवेरे यही पेय सेवन करता हूँ।

(२) चणक रस

अंजली भर अच्छे चने, आध सेर पानी में रात को भिगो दिये जायँ और सबेरे उसी पानी के साथ उन्हें पकाया जाय। इसके बाद जब पाव भर पानी रह जाय तब उसमें जीरा, पिसी हुई कालीमिर्च, नमक, हल्दी; डालकर फिर थोड़ी देर उबालकर घी से छोंक दो। इसके बाद छान कर उस पानी को पियो। यह चणक रस गर्म या ठण्डा जैसी इच्छा हो, पिया जा सकता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

एकदम न पीकर थोड़ा-थोड़ा पीना चाहिये। बीमार आदमी आधी कटोरी तथा अन्य व्यक्ति जितना भी पचा सकें, उतने परिणाम में पी सकते हैं। यह रस पौष्टिक, स्वादिष्ट, पाचक और कब्जियत दूर करता है। शक्ति बढ़ाकर स्नायुओं को बलवान बनाता है। इसमें खर्च भी बहुत कम होता है, इसलिये गरीब तो अवश्य ही इसका उपयोग करें।

(३) यवरस

गर्मी के दिनों में जौ (यव) का रस बहुत उत्तम होता है। रात को अंजली भर अच्छे साफ किये हुये जौ तीन पाव पानी में भिगोकर ऊपर से ढक दिये जायँ। सवेरे उसी पानी में उन्हें उबाला जाय। जब डेढ़ पाव पानी रह जाय, तो वह उत्तम गुलाबी रंग का पेय छानकर ठण्डा करके पिया जाय। उसमें स्वाद के लिये थोड़ी शक्कर या नमक मिलाकर चणक रस की तरह थोड़ा-थोड़ा पीना चाहिये। यह रस भी सबके लिये उपयोग किया जा सकता है। कम खर्च भी है।

(४) छाछ या मट्ठा

गैस उत्पन्न करने वाले जन्तुओं पर छाछ या दही बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। ताजी छाछ केवल बीस मिनट में पच जाती है। इतनी शीघ्रता से पचने वाला दूसरा पदार्थ नहीं हो सकता। दूध के पचने में बहुत देर लगती है। छाछ से रुधिराभिसरण (खून का दौरा) अच्छा होने लगता है। छाछ में सादे नमक के बदले सैंधा नमक मिलाना चाहिये। छाछ ताजी और मीठी होनी चाहिये। यह कब्जियत पर बहुत ही उपयोगी सिद्ध हुई है। भैंस की छाछ कुछ भारी होती है। इसलिये उसमें सोंठ, कालीमिर्च, पीपल का चूर्ण तथा सैंधा नमक मिलाना चाहिये केवल दही को विलोकर नहीं पीना चाहिये, वरन् उसमें पर्याप्त पानी मिलाना चाहिये और प्याले भर छाछ में चुटकी भर जीरे का चूर्ण तथा थोड़ा सा सैंधा नमक मिलाना चाहिये। यह शक्ति-वर्धक पेय है। छाछ पीने के बाद पानी से कुल्ला करना चाहिये जिससे दाँतों को हानि न पहुँच सके। व्यायाम करने वाले लड़कों के लिये दूध के बदले छाछ पिलाते हैं। भोजन के अन्त में भी कटोरी भर छाछ अवश्य पीनी चाहिये, जिससे भली-भाँति अन्न का पाचन हो सके।

(५) गन्ने का रस

गन्ने या ईख के ताजे रस में लौह, ताम्र, फॉस्फोरस रहने के कारण वह एक उत्तम पौष्टिक पेय है। इससे रक्तवृद्धि होती है और इसकी बिना दाने की राव (काकब) भी शक्कर से अधिक उपयोगी है। उसमें भी लौह है।

(६) धान की खीलें

बीमार आदमी के लिये अदहन के (उबलते हुए) पानी में अंजली भर धान की बढ़िया खीलें (लाई या धानी) डालकर १५ मिनट के बाद उस पानी को छान लिया जाय। वही थोड़ा-थोड़ा करके बीमार आदमी को देना चाहिये। इसका उपयोग पाचक एवं हल्के अन्न के रूप में हो सकता है।

(७) ठण्डाई

१० बादाम, २ छोटी इलायची, ५ कालीमिर्च, ३ माशे धनियाँ; इन सब चीजों को रात को भिगो दिया जाय, सवेरे बादाम छीलकर सब बीजों को पत्थर पर पीसकर उसमें पाव भर पानी मिलाकर कपड़े से उस ठण्डाई को छान लिया जाय। उसमें ढ़ाई तोला मिश्री मिलाकर व्यायाम के घण्टे भर बाद पीना चाहिये। गर्मी के मौसम में यह ठण्डाई रोज पी सकते हैं।

(८) बड़ी सौंफ का पेय

बड़ी सौंफ पाचक, अग्निदीपक और कफ, वायु, ज्वर, शूल, दाह, तृषा, उल्टी (वमन), अतिसार आदि का नाश करती है। इसलिये घी में भूनकर थोड़ा सा कूट लेने के बाद वह सौंफ का काढ़ा दूध व शक्कर मिलाकर पीने से भी कोई हानि नहीं होती। यह लाभप्रद एवं चाय की तलव को मिटाने वाला है।

(९) स्वादिष्ट पेय

जो कि एक प्रकार की कॉफी ही कही जा सकती है। अर्थात् अच्छे गेहूँ तवे पर लाल सुर्ख होने तक घी में भूने जायँ, इसके बाद उन्हें कूटकर डिब्बा भर रख लिया जाय। इसकी कॉफी बनाकर पीने से वह स्वादिष्ट होने के साथ-साथ पौष्टिक भी होगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हम स्वच्छता की प्रवृत्ति पनपायें

मानव के गुणों में स्वच्छता का अपना प्रमुख स्थान है। पारिवारिक, सुव्यवस्था का तो वह मूल ही है, स्वच्छता का गुण केवल मनुष्य में ही होता है, पशु-पक्षियों में नहीं होता। मनुष्य की यह स्वाभाविक प्रवृत्ति है, कि वह गन्दगी से घृणा तथा स्वच्छता से प्रेम करता है। मनुष्य को गन्दगी का ज्ञान—आँख और नाक से होता है। वह गन्दगी को दूर करने को तैयार रहता है। यह उसका स्वभाव बन जाता है। इस गुण को बढ़ाना ही मनुष्य का गौरव है। हमें इसके विकास में रुचि लेनी चाहिये। स्वच्छता में जितना कष्ट होता है, आत्म-तुष्टि उससे अधिक होती है।

'स्वच्छता स्वास्थ्य का आधार है।' मनुष्य की आरोग्यता को समाप्त करने का सबसे बड़ा कारण गन्दगी है। गन्दगी कीटाणुओं का जन्म-स्थान है। इसमें विभिन्न प्रकार के कीटाणु-मक्खी, मच्छर, खटमल और पिस्सू आदि पनपते हैं, इन कीटाणुओं को मारते रहने से लाभ विशेष नहीं होता, क्योंकि गन्दगी के रहने से ये फिर पैदा हो जायेंगे। गन्दगी को हटाना इनको समाप्त करने का उपाय है। ये कीड़े रोग फैलाकर हमें कष्ट देते हैं तथा असुविधा उत्पन्न करते हैं। गन्दगी जितनी पास रहेगी, उतनी ही हानिकारक होगी। गन्दे कपड़े सबको बुरे लगते हैं। फटे और सस्ते कपड़े बुरे नहीं लगते। गन्दे कपड़ें स्वयं बोलते हैं कि धारण करने वाला कितना गन्दा और आलसी है। इससे अच्छे व्यवहार और कार्यों की आशा कैसे की जा सकती है। ऐसा व्यक्ति तो अविश्वास और बुरे विचारों का आधार है। शरीर की गन्दगी कपड़ों से भी बढ़कर होती है। गन्दे शरीर वाले से बात करना अच्छा नहीं लगता। उसकी अमूल्य बातें भी बुरी लगती हैं। आँखों, दाँतों तथा होठों की गन्दगी अरुचि उत्पन्न करती है।

स्नान में भी सावधानी तथा धैर्य का प्रयोग करना चाहिये। शरीर से मैल निकलता है। इसको निकालने के मार्ग खुले रहने पर ही यह साफ रहता है, वरना उससे विभिन्न प्रकार के रोग खाज, खुजली, स्वप्नदोष, सिर की फुंसी आदि हो जाते हैं। पेट का कब्ज ही सब बीमारियों का घर है। पेट में इकट्ठा मल सड़ जाता है, उससे उत्पन्न विष सारे शरीर में फैल जाता है। भिन्न-भिन्न स्थानों पर भिन्न-भिन्न नाम की बीमारी फैलाता है। पेट की सफाई रोगों से बचने के लिये परम आवश्यक है। इससे रक्त शुद्ध होता है। शुद्ध रक्त में रोगों के कीटाणु नहीं पनपते। बीमारी गन्दगी की बहिन है। अपने परिचितों में घृणा उत्पन्न करने का साधन गन्दगी है। बूढ़े और बीमार से घरवाले परेशान हो जाते हैं। वे गन्दगी का कारण बन जाते हैं। इनकी गन्दगी को देखकर घरवालों को मानसिक कष्ट होता है।

मनुष्य को गन्दा रहने का मुख्य कारण उसका ओछा व्यक्तित्व है। स्वच्छता का महत्त्व न समझने पर ही मनुष्य इसकी उपेक्षा करेगा। मनुष्य इसे श्रम-साध्य समझता है। वास्तव में इसमें श्रम से अधिक सतर्कता की आवश्यकता है। छोटी-छोटी बातें जो गन्दगी का कारण बनती हैं, हमें सूझती नहीं। चोरों से असावधानी जिस प्रकार हानि कराती है वैसे ही गन्दगी से असावधानी भी रोग का कारण बन जाती है। शरीर में श्वेत रक्त कण बीमारी के कीटाणुओं को रोकते हैं। गन्दगी को हटाना भी हमारा स्वभाव बन जाय तो कीटाणुओं का साधन समाप्त हो जायेगा। गुण्डों से आत्म-रक्षा साहस से ही हो सकती है। इसी प्रकार गन्दगी से भी बचने की तत्परता रखनी पड़ेगी। उत्साही और सक्रिय मनुष्य ही स्वच्छता के आनन्द को प्राप्त कर सकते हैं। जो गन्दगी से घृणा तो करता है, परन्तु उससे बचने का प्रयत्न नहीं करता, वह व्यक्ति वास्तव में गन्दगी पसन्द करता है।

गाँधी जी ने साबरमती आश्रम में शौचालय की सफाई का नियम लोगों की अभिरुचि को सुधारने और मानवता की परीक्षा का साधन बनाया था। वे कहते थे—शौचालय को साफ रखने वाला ही दफ्तर को साफ रखेगा। गन्दगी से केवल भौतिक हानि ही नहीं होती, बल्कि स्वभाव बिगड़ने की हानि भी होती है। इसका दोषी अपना कोई कार्य ठीक से नहीं कर सकता। एक काम अधूरा छोड़कर दूसरे पर लग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

जाना उसकी आदत बन जाती है। ऐसे व्यक्ति को असफलता ही प्राप्त होती है।

अधूरे काम छोड़ना भी गन्दगी का रूप होता है। वस्तुओं को यथा स्थान रखना भी कार्यों को पूरा करना है। इससे ढील देने की आदत समाप्त हो जाती है। घर का प्रमुख व्यक्ति यदि इस प्रकार आचरण करे तो अन्य सब सदस्य अनुकरण करेंगे। आदत बन जायगी। कार्य और विचार से संस्कार बनते हैं। यही स्वभाव है। संकल्प, दृढ़ता, निष्ठा तथा तत्परता से सात्विकता आयेगी। जीवन सफल होगा तथा आत्म-गौरव, आत्म-सन्तोष और आत्म-विकास होगा।

सामान की सुव्यवस्था करने से कई लाभ होते हैं। मन प्रसन्न होता है। सामान समय पर प्राप्त होगा तथा समय की बचत होगी। इससे **'सत्यं शिवं सुन्दरम्'** का आदर्श पुष्ट होगा।

हमारा जीवन विकासशील होना चाहिए। प्रगतिहीन जीवन भी दूषित हो जाता है। जीवन का एक निश्चित क्रम जीवन को आगे बढ़ाना है। बाहुबल से कमाया धन अन्य साधनों तथा विधियों से कमाये धन की अपेक्षा अधिक व्यवस्थित तथा उचित दृष्टिकोण का साधन बनता है। अव्यवस्था से हम अपनी क्षमता का पूरी तरह से प्रयोग नहीं कर सकते। व्यवस्थित कार्य ही सफाई है। यह एक शुद्ध दृष्टिकोण है। यह आध्यात्मिकता का गुण है। सफाई से रुचि परिष्कृत होती है। वह व्यक्ति सतर्क सैनिक की तरह कार्य करता है, जो व्यवस्थित जीवन बिताता है। मनुष्य को अपने विचारों और कार्यों में अस्त-व्यस्तता नहीं होने देनी चाहिये। अस्वस्थ आदमी भार बन जाता है, चाहे वह मानसिक रूप से अस्वस्थ हो या शारीरिक-अस्वस्थता का शिकार हो। मानसिक रोगी के कार्यों से उसकी अस्वस्थता का प्रकटीकरण उसके कार्य करने के ढंग से प्रकट हो जाता है। ऐसा व्यक्ति अपने जीवन में असफल रहता है और उसके पश्चात्ताप से दुखी रहता है।

प्रकृति के नियमों से कोई नहीं बचता। वह सन्त-महात्माओं तथा चोर में कोई अन्तर नहीं करती। आलस्य, असावधानी के रोगी अपने भविष्य को अन्धकारमय बनाते हैं। गन्दगी केवल फूहड़पन नहीं, वह अन्तःचेतना की कमी है, जो मनुष्य को सावधान नहीं रहने देती। गन्दगी से सामान्य हानि नहीं है, वह मनुष्य के आन्तरिक खोखलेपन को प्रकट करती है। इसका परिणाम असफलता और मानसिक कष्ट होता है। स्वच्छता से आन्तरिक वृत्तियों का व्यायाम होता है, इससे सतर्कता, सुव्यवस्था, उत्कृष्टता और जागृति के गुणों का विकास होता है। व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास होता है, इससे मानसिक व्यायाम होता है।

सुकरात ने आत्मिक उन्नति के इच्छुक व्यक्ति को अपनी बाहरी व्यवस्था—कपड़े साफ रखना, बटन लगाना आदि को ठीक करने का उपदेश दिया था। यह उपदेश हर एक के लिये आवश्यक है। यह आध्यात्मिकता की सीढ़ी है, जिस मार्ग से होकर आदमी आगे बढ़ सकता है। अपने व्यक्तित्व को ऊँचा उठाने के लिए किये जाने योग्य गुणों में स्वच्छता का समावेश प्रथम है। इससे सुरुचि जागृत होगी। यह कार्य भोजन आदि स्वयं करने की तरह का कार्य है। तभी यह स्वभाव का अंग बनेगा। स्वच्छता हर पग पर आवश्यक है। अव्यवस्था श्रम और समय का अपव्यय कराती है।

अस्वच्छता जीवन को गुणहीन बना देती है। जीवन में रस नहीं रहता। गन्दे आदमी जीते हैं, परन्तु वे पृथ्वी पर भार हैं। वे अपने और समाज के लिए लाभदायक नहीं होते। ऐसे व्यक्ति बीमार पड़कर अपनी और समाज की हर प्रकार से हानि करेंगे। सबसे श्रेष्ठ आध्यात्मिक उन्नति है। आत्मबल हीन कोई अच्छा काम नहीं कर सकता। योग में यम-नियम को सिखलाया जाता है, नियम में शौच का प्रथम स्थान है। योग शरीर के अन्दर के भाग को धोता है, अतः आवश्यक है कि अन्दर-बाहर से शरीर को धोयें।

गरीबी अस्वच्छता का कारण नहीं है। यह मनोवृत्ति है। जिसके मन और आचरण में भिन्नता होती है, वह शक्ति और समय का अपव्यय करते हैं और जीवन भर परेशान रहते हैं। मानसिक स्वच्छता का प्रमाण उसका आचरण है। इसलिये स्वच्छता एक साधना है। मनोवृत्ति का परिष्कार है। जो इसे प्राप्त करेगा, वह सुखी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रहेगा। अपने जीवन को सार्थक बनाने के लिये इसका पालन करना परम आवश्यक है।

गन्दगी की आदत छूटे तो कृमि-कीटकों से जान बचे

कृमि-कीटकों द्वारा पहुँचाई जाने वाली विविध-विधि हानियों को देखकर मनुष्य को क्रोध आना स्वाभाविक है। वह उनसे पीछा छुड़ाना चाहता है सो भी उचित है, पर भूल यहाँ होती है कि वह आवेश कृमि नाशक दवाओं के निर्माण तक सीमित होकर रह जाता है। इन दिनों अगणित कृमि नाशक दवायें विनिर्मित हो रही हैं और उन्हें बनाने, खरीदने में धन पानी की तरह बहाया जा रहा है पर उनसे क्षणिक लाभ होता है। तत्काल तो कुछ कीड़े मर जाते हैं, पर जो बच जातें हैं वे अपनी तेजी से वंश वृद्धि करके अपने पूर्वजों का स्थान ग्रहण कर लेते हैं और मारने वालों से कस-कस कर बदला चुकाते हैं।

विविध प्रकार से क्षति पहुँचाने वाले कीटकों के सम्बन्ध में इन दिनों बहुत शोध हो रही है और मारक रसायनों का भी आविष्कार हो रहा है। यह उत्साह देखने-समझने ही योग्य है।

कपड़े नष्ट करने वाले कीड़ों की चार जातियाँ भारत में पाई जाती हैं (१) टीनिया पेलिओनेला, (२) टीनिओला विसेलिएला (३) ट्राइर्कफेगा एब्रप्लेटा, (४) वारखौसिनिया स्यूडोम्प्रटैला।

इन चारों के अण्डे, बच्चे ही कपड़ों को अधिक नष्ट करते हैं, बड़े होने पर वे उतनी अधिक हानि नहीं पहुँचाते।

यह कीड़े सीलन और गन्दगी के उन स्थानों में पनपते हैं जहाँ स्वच्छ हवा का प्रवेश भली प्रकार नहीं होता है, गन्दगी और सीलन के संयोग से अनेकों स्तर के कीड़े पनपते हैं और घर में जैसी वस्तुएँ अथवा परिस्थितियाँ पनपने के लिये मिलती हैं उसी के अनुकूल वे अपना आकार-प्रकार, रहन-सहन एवं क्रियाकलाप विनिर्मित कर लेते हैं। अन्न, कपड़ा, पानी, दूध, लकड़ी, जो कुछ उनके सामने आता है, उसी से निर्वाह करने की उनकी आकृति और प्रवृत्ति बन जाती है। इस मूल उद्गम कारण पर यदि ध्यान न दिया जाय और केवल कीटनाशक दवाओं पर ही निर्भर रहा जाय, तो काम चलने वाला नहीं है। उन्हें जहाँ भी अवसर मिलेगा, जो भी वस्तु कीट नाशक दवा के बिना मिलेगी, उसी पर कब्जा करेंगे और एक न सही दूसरी तरह नुकसान पहुँचावेंगे। यही खाद्य-पदार्थों के सहारे पेट में आ पहुँचते हैं और तरह-तरह के रोगों के कारण बनते हैं।

हानिकारक घरेलू कीड़ों में से ऊपर कपड़े काटने वालों की चर्चा की गई है, पर यह न समझना चाहिये कि उनकी हानि का क्षेत्र इतना ही सीमित है। जुएँ, चीलर, खटमल, पिसू, मक्खी, मच्छर आदि के रूप में वे जन्मते और बढ़ते हैं। उनकी असंख्यों जातियाँ ऐसी हैं जो आँख से दिखाई नहीं पड़तीं पर हानि उतनी ही करती हैं जितनी कि मक्खी-मच्छर आदि।

डी. डी. टी. सिलकोफ्लूराइड--क्लोरोडेन जैसे कीट नाशक रसायनों के छिड़काव से यह कीड़े या तो भाग जाते हैं, या नष्ट हो जाते हैं। किन्तु यह असर तभी तक रहता है जब तक उन उपचारित कपड़ों को धोया न जाय। धूप और हवा का प्रभाव भी इन रसायनों का असर घटा देता है, ऐसी दशा में छिड़काव बार-बार करने की जरूरत पड़ती है। ऐसी खोज की जा रही है, जिससे कपड़ा गोदामों में कई वर्ष तक इन कीड़ों से बचाव की निश्चन्तता हो सके। मैग्नेशिप फ्लूओसिलीकेट-फ्लूओसिलीकेट, सोड़ियम ऐलुमिनियम जैसे रसायनों से ऐसे घोल एवं चूर्ण बनाये जा रहे हैं जिनका प्रभाव पाँच वर्ष तक बना रह सके।

रसायन शास्त्री हेरिक और डॉ. फ्रे ने इस प्रयोजन के लिये कितने ही रसायन तैयार किये हैं और उनमें से किसकी उपयोगिता कितनी है इसका प्रयोग, परीक्षण चल रहा है। अब तक के निष्कर्षों से इस कार्य के लिये चिर-परिचित नेफ्थलीन की अपेक्षा नई औषधि पैराडाइक्लोरो-बेंजीन अधिक उपयोगी सिद्ध हो रही है।

इतनी खोजबीन और मारकाट की विद्या अपनाने पर भी कीट विशेषज्ञ यही कर रहे हैं कि सील, सड़न, और गन्दगी, पैदा न होने देने की प्रवृत्ति जब तक लोगों में पैदा न होगी तब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तक कीटकों से पीछा छुड़ाने का कोई उपाय अधिक कारगर सिद्ध न हो सकेगा।

स्वच्छ जलवायु के बिना स्वास्थ्य रक्षा सम्भव नहीं

परिपुष्ट शरीर और दीर्घजीवन की आकांक्षा करने वालों को अपना आहार-विहार प्रकृति की प्रेरणा के अनुरूप बनाना चाहिये। विलासी और कृत्रिम जीवन सरल भले ही लगता हो, पर उसके साथ परोक्ष रूप से अनेकानेक दुष्परिणाम जुड़े हुये हैं। प्रकृति से प्रतिरोध करके विकृत जीवन पद्धति अपनाकर हम अपने चातुर्य का परिचय देते तो हैं, पर यह भूल जाते हैं कि अप्राकृतिक रीति-नीति अपनाकर अन्ततः हम अपने ही पैरों पर कुल्हाड़ी मारते हैं। प्रकृति की नियम श्रृंखला को झुठलाकर मनमर्जी का रहन-सहन अपनाने की उच्छृंखलता बरतना अन्ततः मूर्खतापूर्ण ही सिद्ध होती है। हम प्रकृति को परास्त नहीं कर सकते।

सुकरात को ६५ वर्ष की आयु में विष दिया गया, तब उनका स्वास्थ्य पूर्णतया सुगठित था। उनका विद्यालय खुले मैदान में चलता था। ढलती आयु में भी वे नित्य नृत्य करते और अपने शिष्यों को पढ़ने के अतिरिक्त विनोदी और श्रमनिष्ठ दिनचर्या बनाने की प्रेरणा देते थे ताकि वे न केवल विद्वान वरन् सुदृढ़ और समर्थ भी बन सकें।

आहार-विहार के साथ-साथ हमें उपयुक्त वातावरण में रहने का प्रयत्न करना चाहिये। शहरी जीवन का दूषित वातावरण, धन उपार्जन तथा दूसरे लाभों की दृष्टि से भले ही अच्छा लगे पर स्वास्थ्य-संरक्षण की दृष्टि से ही हमें स्वच्छ जलवायु का, सह्य तापमान का वातावरण ही चाहिए। अवांछनीय वातावरण में रहकर हम अपनी स्वास्थ्य-सम्पदा को सुरक्षित नहीं रख सकते।

भारत के महान वैज्ञानिक डॉ० सी० वी० रमन ने जल की जीवनदायिनी शक्ति का वर्णन करते हुये लिखा है—आरोग्य के लिये लोग तरह-तरह की दवायें तो खोजते हैं, पर यह भूल जाते हैं कि उनके निकट ही वास्तविक जीवनदाता "जल" प्रचुर परिमाण में भरा पड़ा है।

शरीर का तापमान ६८ डिग्री होता है। डॉक्टर वाल्डविन के अनुसार उसे ६८ डिग्री तापमान सह्य पड़ता है। इससे ऊँचे एवं नीचे में उसके निर्वाह में कठिनाई पड़ती है और विकृति उत्पन्न होती है।

डॉ. ल्यूसीन ब्रूहा के नेतृत्व में तापमान के मानव शरीर पर पड़ने वाले प्रभाव के सम्बन्ध में जो अनुसन्धान किया गया, उसमें विभिन्न कारखानों में ४० से लेकर ८२ डिग्री तक तापमान रखकर श्रमिकों की कार्य शक्ति के बारे में पता लगाया गया तो निष्कर्ष यह निकला कि अधिक ताप ने सामान्य श्रम का औसत ११ के अंक से घटाकर ८ पर पहुँचा दिया। अर्थात् लगभग एक-चौथाई क्षमता कम हो गई।

वस्तुएँ अपने आप नहीं सड़तीं। वायुमण्डल का प्रभाव उन्हें सड़ाता है। जहाँ की जलवायु सड़न उत्पन्न करने में सहायता नहीं करती, वहाँ चीजें मुद्दतों तक यथावत् सुरक्षित बनी रहती हैं। दक्षिण अफ्रीका के समीप एक छोटा द्वीप है—"इचामोई" यहाँ पहुँचने पर प्रायः ५५० वर्ष पूर्व मरे मुर्दे ऐसी स्थिति में पाये गये, मानो वे अभी-अभी मरे हों। इस द्वीप की मिट्टी में मरी मछलियाँ भरी पडी हैं, उनके द्वारा उठने वाली गैसें सड़न को रोकती हैं। मैक्सिको का एक पर्वतीय क्षेत्र 'नोयान जुमाटो' इस विशेषता के लिए प्रसिद्ध है कि वहाँ की विचित्र हवा के कारण न तो कोई वस्तु सूखती है और न सड़ती है। इस क्षेत्र के रहने वाले अपने मृतकों को कपड़े पहनाकर पहाड़ी गुफाओं में बिठा देते हैं और वे मुद्दतों तो ऐसे ही समाधि लगाये सन्तों की तरह बैठे रहते हैं।

अफ्रीका के 'अंकोला' क्षेत्र का एक भाग ऐसा है जहाँ बनाया हुआ भोजन बहुत समय तक खराब नहीं होता। वहाँ के लोग एक बार भोजन बनाकर रख लेते हैं और उससे महीनों काम चलाते हैं।

ध्रुव प्रदेश इस दृष्टि से और भी अधिक आश्चर्यजनक है। इंग्लैण्ड का एक अन्वेषक दल दक्षिणी ध्रुव सम्बन्धी शोध करने के लिये सन् १८४२ में कैप्टन कौस के नेतृत्व में गया था। मौसम की प्रतिकूलता के कारण उसे वापिस लौटना पड़ा। इस दल का एक तम्बू और उसमें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कुछ खाद्य पदार्थ वहाँ छूट गये। सन् १९११ में नार्वे के अन्वेषी रोल्ड एमण्डसन जब वहाँ गये तो ७० वर्ष बाद भी वे वस्तुएँ पूर्णतया सुरक्षित और उपयोग के लायक पाई गईं।

अमेरिका का एक पर्वतारोही विल्सन ऐवरेस्ट की चोटी पर चढ़ाई करने सन् १९३४ में आया था। लक्ष्य तक पहुँचने से पूर्व ही वह रास्ते में ठण्ड से अकड़ कर मर गया। दूसरे साल एक दूसरा अन्वेषक दल एरिक सिम्पटन के नेतृत्व में उधर पहुँचा तो उसे पूर्ववर्ती यात्री का शव पूर्णतया सुरक्षित मिल गया।

आर्कटिक हिम क्षेत्र में प्रागैतिहासिक काल के कितने दुर्लभ प्राणी गढ़े हुये पाये गये हैं। इनमें दो हजार वर्ष पूर्व मरे एक वेरेसोविका जाति का यहाँ गज भी था, जिसका माँस इस स्थिति में बना हुआ था कि उसे खाया जा सके। रूस के शोधकर्त्ताओं ने पाँच हजार वर्ष पुराना एक सरीसृप हिम प्रदेश में इस स्थिति में पाया कि उसका शवच्छेद करके उस प्राणी की शरीर रचना को भली प्रकार जाना जा सका।

सह्य, सुखद एवं उपयुक्त वातावरण में न केवल शरीर ही स्वस्थ रहता है वरन् पेड़-पौधे तक अधिक विकसित होते और फलते-फूलते हैं।

उत्तर प्रदेश में पंतनगर स्थित कृषि विश्वविद्यालय से प्रकाशित "फारमर्स डाइजेस्ट" पत्र में प्रकाशित एक रिपोर्ट में कहा गया है कि वहाँ की खोजों से यह सफलता मिल गई है कि हवा में ऑक्सीजन की मात्रा घटाकर पौधों को दुगनी तेजी से उगाया जा सकता है। यह महत्त्वपूर्ण खोज स्टेनफोर्ड कैलीफोर्नियां की कारोनगी संस्था के सहयोग से सफल हो सकी है।

सामान्यतया वातावरण में ऑक्सीजन की मात्रा २१ प्रतिशत होती है। उसे घटाकर ५ से ६ प्रतिशत कर दिया गया, तो पौधे दूनी तेजी से उगे और फल-फूल देने में आश्चर्यजनक जल्दी सम्भव हो सकी।

यों अधिक ठण्ड भी उपयोगी नहीं, पर अधिक गर्मी का वातावरण भी स्वास्थ्य की दृष्टि से अनुकूल नहीं पड़ता! बड़े आदमी हीटर, कूलर और एयर-कंडीशन यन्त्रों का उपयोग करके कृत्रिम रूप से सह्य वातावरण बनाने का प्रयत्न करते हैं, फिर भी उसमें प्रकृति-प्रदत्त, समस्वरता और जीवनदायिनी शक्ति कहाँ रहती है ?

यदि हम सचमुच जिन्दगी से प्यार करते हों और स्वास्थ्य-सम्पदा के मूल्य से परिचित हों तो धनी या बड़े आदमी बनने का लोभ छोड़कर हमें सह्य और स्वच्छ जलवायु का देहाती जीवन अपनाना चाहिये।

घर बनाते समय यह भी ध्यान रखें

हनुमान जी जब सीता जी का पता लगाने लंका गये तो वहाँ विभीषण का घर देखकर ही वे जान गये कि यहाँ कोई सज्जन पुरुष रहते हैं। इससे स्पष्ट है कि घर और रहन-सहन का ढंग भी व्यक्ति की प्रकृति एवं रुचि का परिचायक होता है। अतः घर बनाते समय भी सजगता, सूझबूझ और आवश्यक व्यवस्था को ध्यान में रखा जाना चाहिये। यद्यपि मकान के स्वरूप का निर्धारण मुख्यतः आर्थिक परिस्थितियों पर निर्भर करता है, तो भी चाहे जैसी भी हैसियत हो, यदि घर बना रहे हैं, तो कुछ बातों का ध्यान तो रखा ही जा सकता है।

सर्वप्रथम तो जहाँ तक हो सके, मकान के लिये जमीन खरीदते समय आसपास के वातावरण का ध्यान रखना चाहिये। स्वच्छता, खुलापन, सुन्दर परिवेश, आसपास पेड़-पौधे और उत्तम प्राकृतिक पर्यावरण तथा समीपवर्ती लोगों का विकसित स्तर ये सात चीजें जहाँ जितनी अधिक सम्भव हों वहाँ उतना ही अच्छा।

मकान बनाते समय इस बात का ध्यान तो अवश्य ही रखना चाहिये कि उसे हवा और धूप के आने-जाने की पूरी सुविधा रहे। जंगले और खिड़कियाँ अवश्य ही उचित ढंग की हों। प्रायः लोग बीच शहर में मकान बनवाते या खरीदते हैं। उद्देश्य यह रहता है कि हाट-बाजार पास होती हैं, सवारियाँ मिलने और सुरक्षा की सुविधा होती है। पर ऐसे इलाकों में प्रायः सघन बस्तियाँ होती हैं, जहाँ सभी मकान ऊँचे-ऊँचे और परस्पर पूरी तरह सटे हुये होते हैं। साथ ही प्रायः कई-कई

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मंजिले ऊँचे मकान भी होते हैं ऐसे इलाकों में। फिर, सरकारी कानून यह है कि आप दूसरे की जमीन की तरफ या घर की ओर रोशनदान नहीं खोल सकते। हाँ, अपनी खुद की जमीन पीछे छोड़कर खुली हवा का बन्दोबस्त किया जा सकता है। तो, उतनी जमीन प्रायः लोग छोड़ना ही नहीं चाहते। वह तो मात्र बड़े सरकारी बंगलों में ऐसी जमीन छोड़ी जाती है। ऐसी स्थिति में सघन आबादी वाले, इन शहरी इलाकों के मकानों में, प्रायः एक ही ओर दरवाजा और उसी ओर जंगले होते हैं। इस प्रकार 'वेन्टिलेशन' यानी हवा के आर-पार जा सकने की सुविधा नहीं बन पाती और स्वच्छ वायु के लाभ से वंचित ही रहना पडता है।

किन्तु मात्र बड़े शहरों के सघन इलाकों में ही नहीं, ऐसे क्षेत्रों तथा ग्रामों में भी जहाँ पर्याप्त भूमि सुलभ होती है, लोग या तो प्रचलन के कारण अथवा चोरों के भय से सटे हुये मकान ही बनाते हैं और खिड़कियों, जंगलों की समुचित व्यवस्था भी नहीं करते। यह उचित प्रवृत्ति नहीं है। अपना मकान बनाते समय सदैव कम से कम तीन ओर बड़े-बड़े जंगलों खिड़कियों की व्यवस्था अवश्य रखनी चाहिये और यह सतर्कता बरतनी चाहिये कि मकान में सूर्य की धूप पर्याप्त मात्रा में प्रविष्ट हो सकने की व्यवस्था हो। क्योंकि घुटन भरे बन्द मकानों में रहने वाले लोग अपने स्वास्थ्य को देर तक सुरक्षित नहीं रख सकते। चोरों के डर से अपनी बहुमूल्य स्वास्थ्य-सम्पदा गँवाते रहना बुद्धिमत्ता नहीं है। वैसे भी इस तरह के बन्द मकानों का प्रचलन उस समय हुआ था, जब घर में ही छिपाकर गहने-जेवर, स्वर्ण भंडार आदि रखे जाते थे। अब तो ऐसे कीमती सामानों को बैंक लॉकरों में रखना तथा धन भी बैंक-डाकघरों आदि में जमा रखना ही उचित है। थोड़े से रुपये भी अब बैंक-डाकघरों में विभिन्न बचत खातों आदि में जमाकर रखे जाते हैं। वह अधिक निश्चिन्ततादायक स्थिति होती है। घर में थोड़ा और सस्ता सामान ही रखना सुरक्षा की दृष्टि से सर्वोत्तम मार्ग है। जिनके पास घर में भी रखने को आवश्यक बहुमूल्य सामान हो, उन्हें लोहे की तिजोरी खरीद लेनी चाहिये।

बन्द घरों में सीलन, सड़न-घुटन और कमरे के भीतर के सामान की गन्ध का अजीब सा मिश्रित प्रभाव व्याप्त रहता है। हवा, धूप जहाँ मुद्दतों तक आ-जा न सके, वहाँ भीतर हल्की विषैली गैस भी भरी रहती है। इसका स्वास्थ्य पर हानिकारक प्रभाव आवश्यम्भावी है। अन्न और जल ही नहीं, हवा भी मनुष्य का अत्यावश्यक आहार है और उस-आहार का दूषित होना स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है।

मकान में नालियों की भी व्यवस्था रखनी ही चाहिये। गन्दे पानी के निकास की समुचित व्यवस्था न होने पर गन्दा पानी जमा होकर दुर्गन्ध तथा दूषित गैस उत्पन्न करता है और अशुद्ध वातावरण का हानिकारक प्रभाव यहाँ रहने वालों को भोगना होता है। घर में कुँए, नल अथवा, हैण्डपम्प की व्यवस्था पाखाना घर से दूर ही रहे। उसी प्रकार कुंए की जगत ऊँची हो और उसके पास बड़े वृक्ष न हों, ताकि कूड़े-कचरे और पत्तियों से कुँए की सुरक्षा हो सके।

जहाँ तक सम्भव हो, मकान में आंगन अवश्य रखा जाय। यदि आंगन न हो सके तो छत से भी काम चल सकता है। किन्तु छत पर मुड़ेर अवश्य बनी हो; ताकि बच्चे वहाँ सुरक्षित रूप से खेलकूद सकें। गर्मी में सोने, जाड़ों में धूप सेवन, कपड़े सुखाने तथा खाद्य पदार्थों को धूप दिखाने के लिये छत-आंगन उत्तम होता है।

मकान बनाते समय अपनी आर्थिक स्थिति तथा क्रिया-कृत्यों की सुव्यवस्था का विचार करके योजना बनानी चाहिये। स्नानघर, पाखाना, पेशाब घर आदि की स्थिति सोच-विचार कर निश्चित करनी चाहिये। शौचालय मकान के एक किनारे ही रखा जाता है और वह अत्यावश्यक है। जहाँ तक सम्भव हो फ्लश-संडाश बनवा लेना चाहिये। जहाँ ऐसी व्यवस्था न हों सके, वहाँ शौचालय के पीछे गड्ढे बना देने चाहिये, जहाँ मल एकत्र हो सके। ऐसे शौचालय मकान से बाहर की ओर हो सकें तो अत्युत्तम।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शौचालय के पास ही स्नान-घर होना चाहिये। जहाँ अच्छे-पक्के स्नान घर बना सकने की व्यवस्था हो सकती है, वहाँ स्नान करते समय पड़ने वाले पानी की छींटें दीवाल और फर्श को खराब नहीं कर पाते। पक्के स्नानघरों में कपड़े टाँगने, साबुन, तेल, कंघा आदि रखने के लिये उचित स्थान बनाया जाता है। जो सुविधाप्रद होता है। जहाँ पक्के स्नानघर नहीं हो सकते, वहाँ भी भले ही चटाई बगैरह से घेरकर बनाना पड़े, स्नानघर बना जरूर लेना चाहिए और फर्श पर लकड़ी की चौकी या पत्थर डाल देना चाहिये।

प्रत्येक मकान में रसोईघर और भण्डार घर का अपना विशेष महत्त्व होता है। यह कमरा शौचगृह से दूर होना चाहिये तथा अन्य कमरों को सभी अलग-थलग होना चाहिये। पक्के घरों से धुआँ निकलने के लिये चिमनी का प्रबन्ध आवश्यक है। बर्तन, पके हुये खाद्य पदार्थ, मसाले, सब्जी आदि रखने के लिये आलमारी जरूर बनवा लेनी चाहिये। पाकशाला की व्यवस्था की शैली कैसी हो—यह उनमें काम करने वाले व्यक्तियों की इच्छा तथा अभ्यास के अनुरूप तय किया जाना चाहिये। यदि हो सके तो एक नल रसोई के कमरे में ही चूल्हे के पास लगवा रखना चाहिये। साथ ही रसोई में प्रयुक्त पानी व गन्दगी को बाहर निकालने के लिये नाली की भी व्यवस्था रखनी चाहिये। रसोईघर की स्वच्छता का भी भरपूर ध्यान रखा जाना चाहिये।

रसोईघर के ही समीप भंडार घर होना चाहिये। जहाँ अधिक मात्रा में खाद्य-सामग्री व अन्य उपयोगी वस्तुएँ रखी रहें। इस भण्डार ग्रह में रोशनदान अवश्य हों और सीलन से उसे बचाया जायं। अन्यथा असावधानी के कारण अनाज में कीड़े लग जाते हैं और वह सड़ने लगता है। इस प्रकार मकान बनाते समय न्यूनतम आवश्यक व्यवस्थाओं का ध्यान रखा जा सके, तो छोटे-छोटे मकान भी आकर्षक दिखते हैं और साथ ही स्वास्थ्यप्रद एवं सुविधाप्रद भी होते हैं। अतः ये बातें ध्यान में अवश्य रखी जानी चाहिये।

मकान सीलन-सड़न वाले न हों

काया पर त्वचा इसके उपरान्त वस्त्र, वस्त्रों के बाद मकान आच्छादन का नम्बर आता है। मौसम के बदलते हुये प्रभाव ऐसे हैं जो मानवी काया को विशेष रूप से प्रभावित करते हैं। जिस प्रकार पशु-पक्षी ऋतुओं को सहन करने के लिये थोड़े से साधनों में काम चला लेते हैं—वैसे मनुष्य नहीं चला सकता। अस्तु, उसे वस्त्र और मकान दोनों का प्रबन्ध करना पड़ता है। पशुओं की चमड़ी बहुत मोटी होती है। बाल भी घने होते हैं। इसके बाद कोई झाड़ी-झुरमुटों में रह लेते हैं, कोई माँद बना लेते हैं। पक्षियों के शरीर पर छोटे-छोटे परों का खोल चढ़ा होता है। वे पेड़ों की टहनियों के नीचे अपने उपयुक्त घोंसले भी बना लेते हैं। इस प्रकार ऋतु प्रभाव का दबाव सहन करने की स्थिति बना लेते हैं।

मनुष्य की चमड़ी बहुत पतली होती है, फिर चिरकाल से बड़ों से वस्त्र आच्छादन की सुविधा बनाने के कारण शरीर पर से बाल भी गायब हो गये। सिर के बाल समूचे शरीर की रक्षा नहीं कर सकते। इसलिये त्वचा ढकने के लिये कपड़े बनाने पड़ते हैं। इतने पर भी मकान की आवश्यकता शेष रह जाती है। वर्षा में खुले शरीर रहना उसके लिये कठिन है। इसी प्रकार कड़ी धूप और कंपाने वाली ठंडक में भी पेड़ों के नीचे रह लेने की स्थिति अब नहीं रही। अन्न, वस्त्र की तरह अब मकान की अनिवार्य आवश्यकता बन गयी है। अस्तु, निजी या किराये के मकानों में रहने का प्रचलन है। देहातों में आमतौर से जमीन की उतनी असुविधा नहीं होती और झोंपड़ा बनाने लायक साधन निजी परिश्रम के अतिरिक्त थोड़ी लागत के साधनों में बन जाता है। शहरों की समस्या दूसरी है, वहाँ जमीन का अभाव रहने से कई मंजिल के पक्के और छोटे कमरों वाले मकान बनाने पड़ते हैं। जो एक-दूसरे से सटे हुये होते हैं।

दोनों ही प्रकार के मकानों की बनावट में धूप और हवा पहुँचने की गुंजायश रखा जाना

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

आवश्यक है अन्यथा फर्श से लेकर ऊपर की तरफ सीलन चढ़ने लगेगी। सीलन जमीन की सड़न का ही नाम है। वह जहाँ भी होगी वहाँ बदबू रहेगी। बदबू का अर्थ है, ऐसे कृमि-कीटकों की भरमार जो खुली आँखों से दीखते तो नहीं पर रेंगते रहते और कई प्रकार की बीमारियों की भूमिका बनाते हैं। मकान कच्चे हों या पक्के सीलन-सड़न और बदबू के रहने पर वह अस्वास्थ्यकर हो जायेगें। मौसम के दबाव से बचना ही काफी नहीं। होना यह भी चाहिए कि जिसमें रहा, सोया जाता है, जहाँ भोजन पकाते खाते हैं, जहाँ पर कपड़े रखे रहते हैं उस स्थान में रोग और कीटाणुओं का निवास बनी हुई सीलन न हो। सीलन कहीं घास, गेहूँ की तरह नहीं उपजती वह हवा और धूप न पहुँचने की प्रक्रिया है। अस्तु, जिस मकान में रहा जाय उसमें खिड़कियों का ऐसा और इतना प्रबन्ध होना चाहिये जिसमें होकर धूप और हवा का आवागमन बराबर बना रहे। इसके बिना उस हानिकारक अवांछनीयता से बचा नहीं जा सकता।

देहात में एक अपडर मुद्दतों से यह चला आ रहा है कि खिड़की तोड़कर चोर घुस आवेंगे और घर का सामान उठा ले जायेंगे। वे यह भूल जाते हैं कि खिड़की उखाड़कर चोरों के लिये घर में घुसना जितना सरल है, उतना ही दीवार में वहीं खंदक करके भीतर घुस आना और उसमें होकर सामान निकाल ले जाना भी कठिन नहीं है। सटाकर दीवारें बनाने का रिवाज शहरों में इसलिये है कि वहाँ जमीन कम पड़ती है और महँगी मिलती है पर गाँव में वैसी कठिनाई नहीं है। वहाँ तो चोर ही सिर पर छाये रहते हैं। जबकि गाय, बैल बाँधने के लिये अक्सर बाहर छप्पर से ही काम चलाया जाता है। चोर घर में घुसकर बर्तन, कपड़े आदि ही ले जा सकते हैं पर एक-दो बैल भी बाहर से खोल ले जायें तो हजारों का नुकसान हो जाता है।

कोई जमाना था, जब घर की संचित पूँजी स्त्रियों के जेवर के रूप में रहती थी और अनाज, कपास आदि की बिक्री का पैसा टीन के बक्सों में रहता था। चौकीदारी उसी की करनी पड़ती थी। पर अब जमाना बदल गया। जेवर में पैसा फँसाकर उसे जाम कर देना, ब्याज का सरासर नुकसान उठाना और चोरों से रखवाली का जोखिम उठाना किसी भी समझदार को पसन्द नहीं। अब गाँवों में आस-पास बैंकों का जाल-सा बिछ गया है। उनमें जमा-पूँजी रखी जा सकती है। जेवर लॉकरों में रखे जा सकते हैं। कीमती कपड़े, बर्तनों के लिये एक टीन की तिजोरी रखी जा सकती है अथवा घर के किसी सुरक्षित कौने में एक छोटा स्टोर बनाया जा सकता है। इतना भर उलट-पुलट, भाग-दौड़ करने से चोरों का अपडर जो दिन-रात हैरान करता है, उससे छुटकारा पाया जा सकता है। इसके बाद समझदारी वह उपाय खोज सकती है जिसमें आर-पार हवा ले जाने वाली खिड़कियाँ लगाई जा सकें, सूरज भी घूमता रहता है। एक ओर खिड़की हो तो थोड़ी देर के लिये धूप घर में प्रवेश कर पावेगी पर यदि कई तरफ हों तो कई बार धूप के आने की गुंजायश रहेगी। इसमें घर में रखे हुये अनाज, मसाले, कपड़े, पानी आदि को भी धूप, हवा, लगती रहेगी और सीलन का खतरा न रहेगा। घर को सीलन से बचा लेना, बीमारियों से बचने का एक छत्र लाभ लेना है।

एक-दो आदमियों को रहना हो तो बात दूसरी है, अन्यथा बाल-बच्चों, भाई-बहिनों, चाचा-ताऊ वाली गृहस्थी के लिये बड़ा घर चाहिये और वह इस प्रकार विभाजित रहना चाहिये जिसमें प्रत्येक के पति-पत्नी को दो-एक कमरा मिल सके। देहात में यह बहुत कठिन नहीं होना चाहिये। पुराना घर बहुत घिचा-पिचा बना हो तो गाँव के बाहर जमीन प्राप्त करके अथवा खेतों में नये घर बनाये जा सकते हैं। उन्हें दुमंजिले बनाने की बात सोची जा सकती है। शहरों में लागत अधिक आती है, पर गाँव में कच्ची मिट्टी की दीवारें बन सकती हैं और खपरैलों की छाया से काम चल सकता है। यदि दुमंजिल पर बहुत वजन न लादना हो तो मजबूत बाँसों की छत भी बैठने, उठने या सोने के काम आ सकती है।

मकान की समस्यायें हवा और धूप के लिये खिड़की छोड़ने की एक समस्या ही नहीं वरन् और भी कई हैं। फूंस के छप्परों में आग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगने का डर रहता है। इसलिये छत खपरैल या टिन शेड की बननी चाहिये। पीने के लिये स्वच्छ पानी मिले इसके लिये कुँआ या हैण्डपम्प जैसा कुछ प्रबन्ध समीप में ही होना चाहिये। नित्य निकलने वाले कूड़े का ढेर लगाकर घूरा बनाने की अपेक्षा गड्ढा खोद कर उसमें सड़ाने का तरीका अच्छा है उससे खाद मिलता है और गन्दगी बचती है। मलमूत्र त्यागने के लिये गड्ढे वाले पाखाने या खुरपी लोटा लेकर चलने की आदत डालनी चाहिये। छप्पर या खपरैल पर शाक-भाजी की बेलें चढ़ाई जा सकती है। आंगन में या घर से बाहर शाक-वाटिका लगाने से शोभा बढ़ती है। स्वच्छ हवा मिलती है और बिना पैसा खर्च किये हर मौसम में शाक-भाजी मिलती रहती है। सभ्य देशों में इसी प्रकार के घर बनते हैं, जिन्हें देखने भर से हृदय की कली खिलने लगे।

शहरों में कुशल इंजीनियरों को यह काम सोंपा जाना चाहिये कि कुछ मकान नष्ट करके शेष मकानों को हवादार बनाने का कोई उपाय निकालें। म्युनिसपैलिटियों को चाहिये कि घिच-पिच वाले मुहल्लों के इर्द-गिर्द जमीन प्राप्त करके वहाँ उन्हें बसाया जाय। इसमें पैसा लगने की समस्या जरूर सामने आयेगी किन्तु बीमारी से कुसमय मरने वालों की संख्या निश्चित रूप से घटेगी। आदमी की जिन्दगी बचाने के लिये कुछ उल्ट-पुलट करनी हो तो करनी ही चाहिये। मेहतरों द्वारा साफ किये जाने वाले पुराने ढंग के पैंखाने समाप्त होने चाहिये, उनके स्थान पर सैप्टिक टैंक वाले एवं सीवर लाइन वाले बनाने चाहिये। इसके लिये बैंकों से कर्ज लेना पड़े अथवा हाउस टैक्स बढ़ाना पड़े तो उसे बढ़ाना चाहिये।

चिकित्सा के लिये सरकार को अथवा व्यक्तियों को निजी रूप से पैसा खर्च करना पड़ता है। स्वच्छ हवादार मकान बनाकर उस पैसे को आसानी से बचाया जा सकता है। साथ ही अपनी सुरुचि, स्वच्छता और सुझ-बूझ का परिचय भी दिया जा सकता है।

हमें धूप और हवा भी चाहिये

भोजन के बाद परिश्रम का नम्बर तो आता है पर वस्तुतः आवश्यकता प्रकाश की रहती है। सूर्य को जीवन कहा गया है। उसमें प्रकाश भी होता है और ऊर्जा भी। यह दोनों ही वस्तुयें रोशनी में दीख पड़ने और गर्मी में फुर्ती देने का ही काम नहीं करतीं, वरन् वह जीवनी-शक्ति भी प्रदान करती हैं जो प्राण धारण करने के लिये आवश्यक है। पेड़-पौधे सूर्य के प्रकाश में बढ़ते और फलते-फूलते हैं। इसके अभाव में वे अविकसित ही रह जाते हैं।

यही बात मनुष्यों के सम्बन्ध में है। घिच-पिच कई मंजिले मकान बनने और उनके आगे-पीछे हवा और धूप के आने-जाने की गुंजायश न रहने के कारण, खिड़कियों की कोताही रहने के कारण वे एक प्रकार से पशुओं की मांद जैसे बन जाते हैं। उनमें इतनी गुंजायश नहीं रहती कि धूप-प्रकाश का सीधा प्रवेश हो सके। बड़े शहरों में विशेष रूप से ऐसा है। गाँवों में चोर, उठाईगीरों के डर से यही तरीका अपनाते हैं। वहीं जमीन कच्ची होने के कारण सीलन का एक और भय रहता है।

सूर्य प्रकाश की आवश्यकता पूरी करने के लिये हर जगह बिजली, दीपक आदि का प्रयोग होता है। यह सभी वस्तुयें हैं जो ठण्डक में तो किसी प्रकार आवश्यक होती हैं और अंधेरे के कारण जो रुकावट पड़ती है, उसका भी आंशिक हल निकल आता है पर यह सम्भव नहीं होता कि सूर्य द्वारा जो जीवनी शक्ति मिलती है, उसका भी लाभ मिल सके। अन्य रोशनी या आग इसकी पूर्ति नहीं कर पातीं।

लालटेन या बिजली के प्रकाश में आँखें देखने-पढ़ने भर में तो समर्थ हो जाती हैं, पर उन पर ऐसा दबाव पड़ता है जिससे हर प्रकार से उनकी स्वाभाविक क्षमता का ह्रास ही होता है। जिन्हें ऐसे दफ्तरों में काम करना पड़ता है कि बिजली के अतिरिक्त भी देखभाल का, पढ़ने-लिखने का और कोई चारा नहीं। उनकी आँखें तो कमजोर होती ही हैं, साथ ही स्वास्थ्य भी पोला-पिल-पिला हो जाता है। मनुष्य शरीर की प्रकृति भी पेड़-पौधों जैसी ही है। वह भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धूप और हवा माँगता है। न मिलने पर कुछ समय जीवित भले ही बना रहे, किन्तु उसका कोई पौरुष निखरता नहीं है। दृढ़ता का अभाव ही बना रहता है।

जिस प्रकार अन्न-जल की शुद्धता का हम सदा ध्यान रखते हैं तथा दूषित होने पर उनका परित्याग कर देते हैं। उसी प्रकार वायु का ही नहीं रोशनी का भी पर्याप्त और शुद्ध होने का भी ध्यान रखना चाहिऐ। प्रज्ज्वलित की हुई आग ऑक्सीजन खाती और कार्बन उगलती है। इस कारण मनुष्य घाटे ही घाटे में रहता है। उसके सहारे दिन तो कट सकते हैं, पर जीवनी-शक्ति को सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है। यह घाटा ऐसा है कि जिसकी पूर्ति रुग्णता भुगतते हुये या अकाल मृत्यु को ही अपनाने से हो सकती है।

अच्छा हो हम अपने काम करने का—सोने का ऐसा स्थान चयन करें जहाँ खुली हवा आती हो और किसी न किसी समय सूर्य किरणों का भी आवागमन होता हो। बन्द कोठरों जैसे महलों में रहने की अपेक्षा ऐसे झोंपड़ों में रहना अच्छा जहाँ अन्न-जल की तरह हवा और प्रकाश का भी समुचित प्रबन्ध हो। इतना भी न बन पड़े तो धूप, हवा में एक घण्टे के लिये टहलने तो नित्य ही जाना चाहिये।

घरेलू प्रदूषण से उबरना अधिक जरूरी

अब तक कोयला, खनिज तेल और गैस को मुख्य प्रदूषक माना जाता था; पर लकड़ी के धुएँ को देखते हुए उसे छोटे स्तर का प्रदूषणकारक नहीं माना जा सकता। अधिक धुआँ देने वाली लकड़ी अथवा गीली लकड़ी के धुएँ में कुछ ऐसे विषैले तत्व होते हैं, जो स्वास्थ्य के लिये गम्भीर खतरा उत्पन्न करते हैं, इसका शिकार प्रायः उन महिलाओं को होना पड़ता है, जो रसोईघर में लकड़ी से भोजन पकाती हैं।

विशेषज्ञों का कहना है कि लकड़ी के धुएँ में चार मुख्य प्रकार के प्रदूषक तत्व होते हैं। ये हैं— कार्बन मोनोक्साइड, फार्मेल्डिहाइड, बेंजोपाइरीन और तैरते कजली कण। इन चारों से ही स्वास्थ्य को हानि पहुँचती है। कार्बन मोनोक्साइड जब श्वाँस के साथ फेफड़ों में पहुँचती है, तो वहाँ रक्त में ऑक्सीजन का संचार करने वाले हीमोग्लोबिन कणों के साथ मिलकर कार्बोक्सीहीमोग्लोबिन नामक स्थायी मिश्रण का निर्माण करती है। इस प्रकार ऑक्सीजन संचार के लिये अभीष्ट हीमोग्लोबिन की मात्रा में कमी आ जाती है और रसोईघर के संपर्क में रहने वाली महिला रक्ताल्पता ग्रस्त बन जाती है। अपने देश में इस रोग की मरीज अधिकांशतः महिलायें ही होती हैं, क्योंकि चूल्हे-चौके के सम्पर्क में अधिकतर उन्हें ही रहना पड़ता है। ग्रामीण महिलाएँ शहरी महिलाओं की तुलना में इस रोग का शिकार अधिक होती देखी गई हैं; क्योंकि गाँवों में ईंधन के रूप में लकड़ी का प्रयोग अधिक होता है। एक अनुमान के अनुसार अपने देश में अल्प वयस्क लड़कियों में ४०-४५ प्रतिशत एवं वयस्क महिलाओं में ३०-३५ प्रतिशत रक्ताल्पता की रोगी हैं। गर्भवती महिलाओं में कार्बन मोनोक्साइड का प्रभाव अत्यन्त दुखदायी होता है। गर्भ की स्थिति में हीमोग्लोबिन की माँग बढ़ जाना और शरीर में उसकी अपेक्षाकृत कमी पड़ जाना स्वयं में एक अच्छी स्थिति नहीं मानी जाती। फिर इस दशा में धुएँ के सम्पर्क में आना ऐसी महिलाओं को कार्बन मोनोक्साइड के प्रति अत्यन्त संवेदनशील बना देता है। उन्हें इस अवस्था में दोहरी मार झेलनी पड़ती है। प्रथम, गर्भस्थ भ्रूण को हो रही रक्त की आपूर्ति के कारण आने वाली हीमोग्लोबिन की मात्रा में कमी और दूसरा धुएँ के संसर्ग में आने से हीमोग्लोबिन का कार्बोक्सीहीमोग्लोबिन में परिवर्तित हो जाना। इस परिस्थिति में पलने वाला भ्रूण जब पूर्ण विकसित होकर बाहर आता है, तो उसका वजन सामान्य बच्चों से काफी कम होता है, फलतः जन्मते ही अथवा जन्म के एक या दो सप्ताह के उपरान्त उसकी मृत्यु हो जाती है।

लकड़ी के धुएँ में पाया जाने वाला दूसरा दुष्प्रभावकारी तत्व 'फार्मेल्डीहाइड' है। इसके कारण आँख, नाक, गले और त्वचा में जलन होने लगती है और प्रायः आँख-नाक से पानी आने लगता है। इससे फेफड़ों के दमा, ब्रोंकाइट्स, एम्फीजिमा तथा त्वचा सम्बन्धी रोग हो जाते हैं। अध्ययनों से पता चला है कि

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

धूम्रपान करने और धुएँ के सम्पर्क में रहने वाले लोगों के बीच रोगों में कोई विशेष अन्तर नहीं होता। विशेषज्ञों के अनुसार दोनों से पहुँचने वाली हानि लगभग एक जैसी होती है।

यह जानने के लिये कि धूम्रयुक्त वातावरण में रहकर हम किस परिमाण में विषैले तत्व निगलते हैं, गुजरात के खेड़ा जिले के आणंद शहर में सन् १९८१ में एक विशेष परीक्षण किया गया। इसके लिये वहाँ के ४० ऐसे घरों को चुना गया, जहाँ भोजन लकड़ी के माध्यम से पकाया जाता था। परीक्षण के दौरान रसोई पकाने वाली महिलाओं के मुँह व नाक में प्रदूषक तत्वों को छानने वाली एक विशेष प्रकार की छन्नी लगा दी गई। प्रयोग के अन्त में छन्नी में दो प्रकार के तत्व पाये—कजली और बेंजोपाइरीन कण (कार्बनिक यौगिक)। जब इन्हें नापा गया तो इनका परिमाण विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मात्रा से अनेक गुना अधिक पाया गया। उस वातावरण में कजली की मात्रा प्रति घनमीटर एक हजार माइक्रोग्राम थी, जबकि विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा निर्धारित मात्रा १५० माइक्रोग्राम प्रति घनमीटर है। इस प्रकार बेंजोपाइरीन की मात्रा भी खतरनाक स्तर की देखी गई। सिगरेट में भी यह विष पाया जाता है। चिकित्सा विशेषज्ञों के अनुसार यह तत्व कैंसरजन्य होता है। यदि सिगरेट के हिसाब से बेंजोपाइरीन का अनुमान लगाया जाय, तो गुजरात के ग्रामीण घरों में करीब २२ पैकेट सिगरेट के बराबर इसकी मात्रा होती है। लकडी के धुएँ में विद्यमान बेंजोपाइरीन की न्यूनाधिकता इस बात पर निर्भर करती है कि जलावन के रूप में प्रयुक्त की जाने वाली लकड़ी गीली है अथवा सूखी। गीली लकड़ी की स्थिति में इसकी मात्रा अप्रत्याशित रूप से बढ़ जाती है।

अध्ययनों के दौरान ज्ञात हुआ कि अत्यधिक धुएँ के सम्पर्क में रहने वाली महिलाओं में हृदय तथा फेफड़े सम्बन्धी शिकायतें बढ़ जाती हैं और कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। पुरुषों में ऐसी शिकायतें धूम्रपान के कारण होती हैं; पर अधिकांश महिलाओं में इसका कारण चौके-चूल्हे का अनियन्त्रित धुआँ है। धुएँ से उत्पन्न महिलाओं का स्वास्थ्य सम्बन्धी संकट सिर्फ गुजरात ही की समस्या नहीं है; न्यूनाधिक रूप से यह सम्पूर्ण देश में देखा जाता है।

इस घरेलू प्रदूषण और उसके दुष्प्रभाव से बचा कैसे जाय ? इस बारे में पर्यावरण विशेषज्ञ कई विकल्प सुझाते हैं। उनका कहना है कि यदि ईंधन के रूप में प्रयुक्त की जाने वाली लकड़ी का चयन सुझबूझ के साथ किया जाय, तो धुएँ के अत्यधिक परिमाण के सम्पर्क में आने से बचा जा सकता है। वे कहते हैं कि लकड़ियाँ अधिक धुआँ छोड़ती हैं और कुछ कम। बबूल, कैंथा आदि लकड़ियों से कम धुआँ निकलता है, जबकि नीम से बहुत ही अधिक। यदि भोजन पकाते समय लकड़ियों के चयन के सम्बन्ध में इस बात का ध्यान रखा जा सके, तो धुएँ के सम्पर्क से जो क्षति पहुँचती है, उससे बचा जा सकता है। कई लोग इस सम्बन्ध में चिमनीदार चूल्हे का सुझाव देते हैं; किन्तु इससे आँच में कमी पड़ सकती है। इसके दो अन्य विकल्प भी हैं—प्रथम रसोईघर को हवादार बनाया जाय अथवा चूल्हे को ऐसा बनाया जाय, जो कम-से-कम धुआँ दे। हवादार घर में धुएँ का प्रभाव कम-से-कम होता है। पहले गाँवों में अधिकांश घर खपरैल के होते थे, अतः धुआँ निकलने की कोई समस्या नहीं रहती थी, किन्तु अब धीरे-धीरे उनकी जगह पक्के मकानों ने लेना आरम्भ कर दिया है, फलतः स्वास्थ्य समस्या भी बढ़ी है।

इस समस्या का सबसे उत्तम विकल्प निर्धूम चूल्हा हो सकता है। इस प्रकार के चूल्हे का विकास सर्वप्रथम हैदराबाद इंजीनियरिंग रिसर्च लैबोरेटरी ने सन् १९४० में किया था। बाद में इसी चूल्हे के आधार पर अखिल भारतीय खादी ग्रामोद्योग संघ एवं गाँधी निकेतन आश्रम ने 'मगन चूल्हा' बनाया। इस चूल्हे में तीन मुँह होते हैं, धुआँ कम निकलता और ईंधन भी कम लगता है, अस्तु यह हर दृष्टि से वर्तमान समय के लिये उपयोगी सिद्ध हो सकता है। इससे स्वास्थ्य रक्षा भी हो सकती है और ईंधन में बचत भी। यह चूल्हा और भी सुगम रूप में घर में ही बनाया जा सकता है। इसका विधिवत् शिक्षण वैकल्पिक ऊर्जा विभाग तथा आँगनबाड़ियाँ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सतत् देती रहती हैं। ऐसा ही शिक्षण शान्तिकुंज में भी चलाया जाता रहता है। निश्चित ही निर्धूम चूल्हे का प्रयोग करके धुएँ से होने वाली हानि से बचाव ईंधन की पूरी "कैलोरीफिक वेल्यू" का उपयोग हो सकता है।

घर की स्वच्छता और सजावट

साफ-सुथरे मकानों का वातावरण गन्दे-गलीज मकानों की अपेक्षा सभी को प्रिय लगता है। सफाई के साथ ही सजावट द्वारा भी घर के वातावरण में मधुरता घोली जा सकती है। स्वच्छता और सजावट के सम्बन्ध में पहला प्रश्न आर्थिक स्थिति को लेकर उठता है। कहा जाता है कि साफ-सुथरे और सजे-संवरे मकानों के लिये आर्थिक स्थिति भी उस स्तर की होनी चाहिए। परन्तु गहराई से विचार करने पर यह बात आसानी से समझी जा सकती है कि सस्ते और कच्चे मकानों में बिना कुछ अतिरिक्त खर्च किये सफाई रखी जा सकती है तथा दैन दिन उपयोगी वस्तुओं को यथास्थान ढंग से रखकर घर को सुरुचिपूर्ण रखा जा सकता है। बड़े, पक्के और महँगे मकानों में भी न सफाई का ध्यान रखा जाय और न ही वस्तुओं को ठीक तरीके से रखने की बात सोची जाय तो इस कारण वहाँ जो फूहड़ता और बेढंगेपन की सृष्टि होती है वह कीमती सामानों को भी कूड़े-करकट की श्रेणी में ला खड़ा कर देती है।

आर्थिक स्थिति स्वच्छता और सजावट के लिये उतनी बाधक नहीं बनती जितना कि समझा जाता है। बाधक बनता है आलस्य ही जिसके कारण प्रयोजनीय वस्तुओं की भी अच्छी तरह सफाई नहीं हो पाती। अधिकांश घरों के बर्तन, कपड़ों से लेकर मकान की दीवारें, फर्श और छत प्रायः गन्दे-गलीज रहते हैं। जिनकी सफाई के लिये तो आर्थिक स्थिति का कोई सम्बन्ध ही नहीं जुड़ता। खाना बनाने और चौका-बर्तन कर लेने के बाद का समय गृहिणियों के पास प्रायः खाली ही रहता है। मजदूरी करने या नौकरी पर जाने का तकाजा जिनके पीछे रहता है वैसी स्त्रियाँ बहुत कम हैं। बहुसंख्यक मध्यम वर्ग ही है, जिनके परिवारों में गृहिणी के लिये केवल घर का काम-काज ही रहता है। बड़े घर की स्त्रियों के पास तो प्रायः पूरा समय ही खाली बचता है। जब इतना अधिक समय खाली बचता है तो समय के अभाव का कारण भी बहाना मात्र ही लगता है।

बचे हुये समय का उपयोग थोड़ी सूझ-बूझ से किया जाय तो उपलब्ध साधनों से ही घर को स्वच्छ, सुन्दर और सुसज्जित बनाया जा सकता है। समय का उपयोग करने के साथ सूझ-बूझ इसलिये आवश्यक है कि स्वच्छता और गृहसज्जा एक कला है। घर में दो स्थानों पर ज्यादा गन्दगी होती है—जिनका उपयोग कि परिवार का प्रत्येक सदस्य कम से कम दो बार तो करता ही है—रसोईघर और स्नानागार। इन दो स्थानों पर इसलिये भी अधिक गन्दगी होती है कि उन पर उपयोग के साथ-साथ बिखराव भी होता है। अन्यथा घर की प्रत्येक वस्तु और प्रत्येक जगह उपयोग में आती है। रसोईघर में काम करने और भोजन करने के बाद तुरन्त सफाई कर लेनी चाहिये तथा उपयोग में आई वस्तुओं-बर्तनों को भी तुरन्त साफ कर यथा-स्थान रख देना चाहिये। अधिक देर तक ज्यों का त्यों पड़े रहने पर बचा हुआ भोजन चावल, दाल के कण और रोटी के टुकड़े समय बीत जाने से सूख जाते हैं तथा आसानी से उन्हें छुड़ाया नहीं जा सकता। कुछ चीजें तो ऐसी भी होती हैं जो अधिक देर तक बर्तन से लगी रहने के कारण बर्तन पर दाग छोड़ जाती हैं।

प्रायः घरों में रसोईघर छोटे होते हैं। वहाँ अधिक सामान भी रखा होता है। यदि उसे करीने से थोड़ी सूझ-बूझ का उपयोग कर ढंग से रखा जाय तो थोड़े स्थान में ही अधिक सामान रखा जा सकता है। दीवार में तख्ते लगाकर बर्तन, डिब्बे, शीशियाँ रखने की जगह बनायी जा सकती है। क्रमबद्ध रूप से चीजें रखी जायँ तो एक को निकालने के लिये दूसरी चीजों को हटाना नहीं पड़ता। चलनी, तराजू, झरी आदि टाँगने के लिये आवश्यकतानुसार दीवारों पर कीलें गाढ़ी जा सकती हैं। ईंधन के डिब्बों से ईंधन निकाल लेने के बाद उस स्थान की सफाई कर देनी चाहिये। अन्यथा कोयले का चूरा आसपास बिखरकर गन्दगी भी बढ़ाता है और कपड़े खराब होने का भी डर रहता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसी प्रकार वस्तुओं का उपयोग हो जाने के बाद उन्हें यथास्थान रखना चाहिये। इधर-उधर जहाँ जी चाहे फेंकते रहने से दुबारा समय पड़ने पर परेशान होना पड़ता है और समय नष्ट होता है सो अलग। घर के बच्चों में भी इसकी आदत डाल देनी चाहिये कि वे वस्तुओं का उपयोग करने के बाद यथास्थान रख दें।

स्नानगृह में भी गन्दगी होती है। घर के सभी सदस्य नहाते हैं, नहाने के बाद फैला हुआ पानी, साबुन के झाग और मैल आदि थोड़ा सा पानी उड़ेल कर बहा देने से गन्दगी वहाँ नहीं जमती। प्रत्येक सदस्य यदि स्नानगृह की सफाई का ध्यान रखे तो बाद में नहाने वाले सदस्य गन्दगी के कारण होने वाली जुगुप्सा से बच जाते हैं। यही बात वस्त्रों की धुलाई के सम्बन्ध में भी ध्यान रखनी चाहिये। स्नान से सभी सदस्यों के निवृत्त हो जाने पर स्नानगृह की पूरी तरह सफाई करनी चाहिये।

घर में ऐसी बहुत सी चीजें रहती हैं जिनकी रोज-रोज सफाई करने की बारी नहीं आती। दीवारें, छत आदि में थोड़े दिनों के बाद जाले पड़ते रहते हैं और धूल जम जाती है। सप्ताह में एक दिन पूरे घर की अच्छी तरह सफाई की जा सकती है। मेज, कुरसी, पलंग फर्नीचर आदि की झाड़-पोंछ तो रोज हो जाती है पर उनकी टूटफूट, साज-सम्हाल के लिये भी महीने में कम से कम एक दिन नियत रखा जा सकता है। कालीन, दरी, फर्श और चटाइयाँ जैसी वस्तुओं के लिये भी साज-सम्हाल का यह क्रम बनाये रहना चाहिये।

घर के सब सदस्यों में साफ कपड़े पहनने, नित्य स्नान करने की आदत हो तो उनमें स्वच्छता की रुचि का विकास होता है। परिवार का प्रत्येक सदस्य इस बात की बहुत अच्छी तरह गाँठ बाँध ले कि चाहे जहाँ न तो थूकना है और न हर कहीं नाक साफ करनी है। बच्चे दिन में कई बार शौच करते हैं। उन्हें शौच जाने के लिये एक नियत स्थान पर ही बैठने की आदत डाली जा सकती है जिससे हर कहीं गन्दगी न फैले।

स्वच्छता का ध्यान प्रत्येक सदस्य रखे और कागज के टुकड़े, खाने-पीने की चीजों के छिलके, फलों के बीज हर कहीं न डालता फिरे। अच्छा तो यही है कि घर में सब लोग, कोई वस्तु खानी है तो एक साथ मिल कर खा लें और बाद में बचे कचरे को तत्काल साफ कर लिया जाय। इस प्रकार गन्दगी से बचाव तो हो ही जाता है, परिवार में आत्मीयता और प्रेम सम्बन्धों की सुदृढ़ता विकसित होती है सो अलग। यदि ऐसा न भी हो, बच्चों को बार-बार कुछ न कुछ खाते रहने की आदत होती है, तो भी उन्हें एक स्थान पर बैठाकर खाने की आदत सिखाई जा सकती है। घूमते-फिरते खाने की आदत भले ही बच्चों में क्यों न हो, स्वभाव का दोष बन जाती है, जो स्वच्छता की अवहेलना करने के रूप में सामने आती है। उन्हें बैठकर खाने और कूड़ा नियत जगह पर डालने की बात बताते रहना चाहिये।

छोटी-छोटी बातों में इस प्रकार सावधानी भर रखने से स्वच्छता की समस्या हल हो जाती है। आवश्यक केवल रुचि का विकास भर है। यदि रुचि को स्वच्छताप्रिय बना लिया जाय तो गन्दगी स्वभाव को ही खलने लगती है और कहीं भी उसके दिखाई देने पर उसे हटाने को जी करता है। स्वच्छता की रुचि के साथ सौन्दर्य प्रिय भी बना जा सके तो घर में उपलब्ध साधनों से ही सुसज्जा की जा सकती है और उसे सजा-सँवरा रूप दिया जा सकता है। कहा जा चुका है कि स्वच्छता और सजावट एक कला है। कला की सुघड़ता का ध्येय ही आनन्द की सृष्टि करता है। सुरुचि का कलात्मक विकास किसी भी घर को आनन्दपूर्ण बना देता है।

स्वच्छता की ही तरह सजावट के लिये भी न तो बजट में अतिरिक्त व्यवस्था रखने की आवश्यकता पड़ती है और न ही बहुमूल्य सामग्री की। थोड़ा-बहुत फर्नीचर और तस्वीरें तो प्रायः सभी घरों में मिलती हैं। यदि उन्हें उपयुक्त स्थान पर रखने और समुचित क्रम से सजाने भर का ध्यान रखा जाय तो थोड़ी सी चीजें भी व्यक्ति के कलात्मक दृष्टिकोण को उजागर कर देती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

घर की साधारण से साधारण सामिग्री को भी उचित क्रम से—ठीक ढंग से रखने मात्र से घर में चमत्कार पैदा हो जाता है। तेल, घी के डिब्बे और वैसलीन, क्रीम की शीशियाँ सभी घरों में रहती हैं। उन्हें रंगों के क्रम से इस प्रकार रखा जा सकता है कि दीखने लगें। यदि उन्हें ही थोड़ा-बहुत हेर-फेर कर बास्केट, डस्टविन, साग, फल रखने के डिब्बे बनाया जा सके तो सुन्दर रंगों से चित्रांकित किया जा सकता है। अनाज व मसाले के कनस्तर, डिब्बे, थोड़े-थोड़े दिनों के बाद धोये, साफ किये जाते रहें तो उनमें टिकाऊपन भी आता है और वे गृहिणी की सुघड़ता का परिचय देते हैं सो अलग।

परम्परानिष्ठ परिवारों में अल्पना और माण्डबे बनाने की रिवाज है। इस प्रकार गृहस्थी बसाने से पूर्व ही लड़कियाँ चित्रकारी का थोड़ा-बहुत परिचय प्राप्त कर लेती हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में तो आज भी इनका प्रचलन है। पर्व-त्यौहारों और विशिष्ट अवसरों के लिये यह बिना पैसे की सजावट है, जिसे समय-समय पर अन्य अवसरों पर भी किया जा सकता है।

दरी, चटाइयाँ बार-बार उपयोग में आने से घिसती व फटती रहती हैं। घर में कपड़े भी फटे-पुराने हो जाने पर बदले जाते रहते हैं। उनका कोई उपयोग नहीं होता। यदि उन्हीं कपड़ों से रंगीन धज्जियाँ निकाल कर फटी दरी और चटाइयों में जोड़ी जा सकें तो इसमें थोड़ा सा ही समय लगता है, खर्च तो कुछ होता ही नहीं।

उपयोग में न आ सकने जैसी बहुत सी चीजें घरों में यों ही फूहड़पन से या कबाड़खाने में फेंक दी जाती हैं। इन बरबाद होती हुई चीजों का उपयोग भी सजावट के लिये किया जा सकता है। लकड़ी की पेटियों, या मिट्टी के फूटे घड़ों को थोड़ा करीने से रखकर फूलों के पौधे लगाये जा सकते हैं। उनमें सब्जी भी लगायी जा सकती है, जो घर की सुन्दरता बढ़ाने के साथ हरियाली का भी आनन्द देती है। घर में हरियाली बड़ा आनन्द पूर्ण वातावरण बनाती है। जिन घरों में उद्यान लगाने की जगह न हो वहाँ तार के छीकों पर लटकने वाले डिब्बे तैयार कर उनमें मिट्टी आदि डालकर घर के बाहर ही निराली छटा बनाई जा सकती है।

कागज के फूल और गुलदस्ते तैयार करना तो हर किसी के लिये सम्भव हो सकता है। बेकार छोटे-छोटे डिब्बों या मिट्टी के बर्तनों में रंग-बिरंगे कागज के फूल लगाकर सदाबहार गुलदस्ते लगाये जा सकते हैं, जिन्हें न तो पानी देने की आवश्यकता रहती है और न ही पैसा खर्च करने की। काँच के टूटे गिलासों का भी जिन्हें बेकार समझकर फेंक दिया जाता है इसमें उपयोग किया जा सकता है।

घर की सजावट के लिये वस्तुओं का क्रम से और यथास्थान रखना सर्वाधिक ध्यान देने योग्य है। कपड़े उतार कर चाहे जहाँ डाल देना, पानी पीने के बाद जहाँ खड़े हों वहीं गिलास रख देना बुरी आदत भी है और घर के प्रति लापरवाही के दृष्टिकोण का भी परिचय देता है। जिसकी किसी भी आधार पर प्रशंसा नहीं की जा सकती और न ही उचित बताया जा सकता। कपड़े टाँगने के लिये दीवारों पर खूँटियाँ लगायी जा सकती हैं। उन खूँटियों पर ही कपड़े रखने का नियम हर सदस्य को पालना चाहिये। इसी प्रकार उपयोग में आ जाने के बाद वस्तुओं को यथास्थान रखने का भी नियम प्रत्येक सदस्य के लिये अनिवार्य रखा जा सकता है।

अच्छी तस्वीरें या चित्र भी घर की शोभा बढ़ाते हैं, जो एक रुपया महीना खर्च कर भी घर में लाये जा सकते हैं। सुन्दर और सुरुचिपूर्ण अच्छे चित्र घर का वातावरण निर्मित करने में महत्त्वपूर्ण सहायता करते हैं। उन्हें कहाँ लगाया जाय, कहाँ नहीं आदि का निर्णय घर की स्थिति के अनुसार ही किया जाना चाहिये। साथ ही उन्हें भी साफ करने, झाड़-पोंछ करते रहने का ध्यान रखना चाहिये। समय-समय पर सफाई से चित्रों की सुन्दरता बनी रहती है और उन पर चमक भी आती है। घर की सजावट में चित्रों का बहुत महत्त्व है, उनके चुनाव में भी पर्याप्त सूझ-बूझ का उपयोग करना चाहिये।

घर पर ही कलई चढ़ाइये

स्टेनलेस स्टील के बर्तनों का उपयोग प्रायः सभी गृहिणियाँ नहीं कर सकतीं, कुछ धनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परिवारों को छोड़कर सामान्य तथा सभी परिवारों में ताँबा, पीतल के बर्तन ही उपयोग में लाये जाते हैं। इन बर्तनों के प्रयोग में सबसे बड़ी दिक्कत आती है, उनमें कलई करवाने की और यदि कलई न कराई जाय तो उनमें रखी हुई खाद्य-सामग्री, सब्जी बगैरह खराब हो जाती है, उनका स्वाद बिगड़ जाता है, बर्तनों में पट (निशान) लग जाते हैं। कभी-कभी तो यहाँ तक देखा गया है कि इनमें अधिक देर तक रखी हुई सब्जियाँ खा लेने से उल्टी भी हो जाती हैं। अतः इन बर्तनों पर कलई करवाना आवश्यक हो जाता है।

यदि एक बार कलई करा लेने पर वर्षों के लिये छुट्टी मिल जाय तो अच्छी बात है, किन्तु बात वैसी नहीं है। एक बार कराई हुई कलई कुछ ही महीनों में साफ हो जाती है और पुनः कलई वाले को खोजना पड़ता है। इस प्रकार बार-बार कलई वाले को ढूँढ़ने की परेशानी व धन की बरबादी होती है। इन परेशानियों से बचने के लिये घर पर ही अधिक मात्रा में कलई करने की विधि यहाँ प्रस्तुत की जा रही है, जिसे अपनाकर इन सभी परेशानियों से मुक्ति पाई जा सकती है।

आवश्यक उपकरण

एक पत्थर के कोयले की अँगीठी, एक लकड़ी के कोयले की अँगीठी, एक बड़ी नाँद (जिसमें इतना पानी भरा जा सके कि कलई किये गये गरम बर्तन ठण्डे किये जा सकें) एक लोहे की जाली, (जिसे लकड़ी के कोयले की अँगीठी पर रखकर, उस पर बर्तन गरम करने होंगे) एक बड़ा भगौना या तपेला, (जिसमें कलई घोलनी होगी) आवश्यकतानुसार बर्तनों के अन्दाज से कलई तथा नौसादर ले लें और उन सभी बर्तनों को इकट्ठा करके अपने पास रख लें, जिन पर कलई चढ़ाना है।

सर्वप्रथम पत्थर की अँगीठी तैयार करके उस पर बड़ा बर्तन (भगौना या तपेला) चढ़ा कर कलई को खूब गरम कर लें। कलई जब अच्छी तरह पिघल जाय तो उसमें कलई की मात्रा का ०.६० भाग नौसादर डाल दें।

अब लकड़ी के कोयले की अँगीठी पर वह लोहे की जाली रख दें। उस पर एक-एक करके वे बर्तन गरम करें जिन पर कलई चढ़ाना है। जाली का उपयोग इसलिये आवश्यक है कि बर्तनों को राख तथा धुआँ लगने से बचाया जा सके। बर्तन जब अच्छी तरह गर्म हो जायँ तो पत्थर की अँगीठी पर रखे हुये कलई के घोल वाले भगौने में डाल दें। उसमें भरी तथा पिघली हुई कलई बर्तन के चारों ओर अन्दर-बाहर अच्छी तरह चढ़ जायगी। अब उस बर्तन को संडासी से पकड़कर तुरन्त बड़े नाद के ठण्डे पानी में डाल दें। इसी प्रकार एक-एक कर सभी बर्तनों पर आसानी से कलई चढ़ाई जा सकती है।

सावधानियाँ

पत्थर के कोयले की अँगीठी पर रखे भगौने में जब कलई अच्छी प्रकार घुल जाय, तभी नौसादर मिलाना चाहिये।

जिन बर्तनों को कलई चढ़ाना हो वे लकड़ी के कोयले की सिगड़ी तथा हीटर पर ही गर्म करने चाहिये, क्योंकि उन्हें अधिक गर्मी की आवश्यकता नहीं होती है तथा धुँए आदि से काले होने का भय नहीं रहता है।

कलई चढ़े बर्तन को तुरन्त बाद ही पानी, गोबर मिश्रित पानी या हल्के तेजाब (अम्ल) में डाल देना चाहिये। ऐसा करने से धब्बे नहीं पड़ते हैं।

सभी बर्तनों पर कलई कर चुकने के बाद भी यदि कलई बच जाती है तो उसे सँभाल कर रख लें। पुनः उपयोग में ले सकती हैं।

यह विधि बड़ी मात्रा में बर्तनों पर कलई करने से सुविधाजनक और सस्ती पड़ती है। एक ही परिवार में अधिक बर्तन न हो सकें तो आस-पास के तीन-चार परिवार मिलकर इस विधि को उपयोग में ला सकते हैं।

पुराने को नया रूप दें

घर-परिवार में काम आने वाला सामान पुराना हो जाने पर प्रायः गृहिणियाँ उस सामान को कूड़े के ढेर में डाल देती हैं और उसकी स्थान पूर्ति के लिये नया खरीद लाती हैं। किन्तु

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

यदि थोड़ी-सी जानकारी पुराने सामानों को नया रूप देने की हो तो उन्हीं कूड़े में फेंके जाने वाले सामानों को उपयोगी बनाया जा सकता है। पैसों की बचत भी हो जाती है और सामान भी नया हो जाता है। नीचे कुछ ऐसे ही सुझाव दिये जा रहे हैं। जिन्हें उपयोग में लाकर महिलायें घर में बचत कर सकती हैं।

ढीले हुये फर्नीचरों की मरम्मत

जिन फर्नीचरों के जोड़ ढीले हो गये हों, उन्हें ठीक करने के पूर्व उनमें लगी कीलों को भली-भाँति सावधानी से निकाल लेना चाहिये। उसके बाद ही उन जोड़ों को अलग करना चाहिये। अब जोड़ के स्थान पर जो पुराना मसाला लगा हो उसे अच्छी प्रकार खुरचकर साफ कर लें। गोल फर्नीचर जो लकड़ी को मोड़ कर बनाये गये हैं, उनकी मरम्मत कुछ कठिन अवश्य है, किन्तु असम्भव नहीं। जरा-सी सावधानी की आवश्यकता रहती है।

यदि लकड़ी का जोड़ खुल गया है तो उसे गरम करके नरम कर लें। अब उसे अच्छा कसकर रस्सी से बाँध लें और सूखने रख दें। खूब सूख जाने पर रस्सी को सावधानी से खोल दें। अब उनमें जोड़ के स्थान पर जो दरारें हैं, उनमें चाकू या अन्य इसी प्रकार की वस्तु से लकड़ी जोड़ने वाला मसाला अच्छी तरह भर दें। तब पुनः रस्सी से खूब कसकर बाँध दें। जब मसाला सूख जाय और चिपक जाय तब फ्रेम में जोड़ के स्थान पर गढ़ारीदार वरमा से छेद करके उसके मरम्मत किये हुये अंग को उचित नाप से स्क्रू से कस दें। सीट तथा फ्रेम के जोड़ों को मसाले से अच्छी तरह चिपका दें।

फर्नीचर पर पालिश

फर्नीचर की पालिश यदि खराब हो गई है या धब्बे पड़े गये हों तो उसके स्थान पर नयी पालिश कर देना ही ठीक रहता है। किन्तु यह ध्यान रखें कि पुराने पालिश पर ही नया पालिश चढ़ाना प्रारम्भ न कर दें। नया पालिश करने के पूर्व पुराने पालिश को भली प्रकार साफ कर लें। पुरानी पालिश मिटाने के बाजार में कई रासायनिक घोल मिलते हैं। ये घोल विषैले तथा त्वचा को हानि पहुँचाने वाले होते हैं। अतः जहाँ तक सम्भव हो इसके छींटे लगने से बचना चाहिये या हाथों की सुरक्षा के लिये रबड़ के दस्ताने पहनकर इनका प्रयोग करना चाहिये। रासायनिक घोल को दो बार सामान पर लगा कर पुराने पालिश को अच्छी तरह निकाल लें। अब पानी तथा स्प्रिट से हाथों को अच्छी तरह साफ कर लें। खूब सूख जाने पर मध्यम दर्जे के सैंडपेपर से अच्छी प्रकार रगड़ें, फिर बारीक सैंडपेपर से रगड़ें। अब फर्नीचरों को पोंछ कर एक कोट हल्का वार्निश चढ़ा दें। तब जरूरत के अनुसार एक या दो अतिरिक्त कोट वार्निश और लगा दें ताकि अच्छी चमक आ जाय।

पुराने फर्नीचर का नया रूप

कभी-कभी बाजार में ऐसे फर्नीचर देखने को मिलते हैं जो दीखने में पुराने, किन्तु सुन्दर डिजायनों में बने होने के कारण सुन्दर लगते हैं। ऐसे पुराने फर्नीचर कभी-कभी कम दाम में मिल जाते हैं, किन्तु उन्हें लाकर घर में रखने का अर्थ होगा—घर की शोभा घटाना। किन्तु उन्हीं को नये में बदल दिया जाय तो घर की शोभा बढ़ जाती है।

बहुधा ऐसा होता है कि पालिश पर मैल की परतें चढ़ती रहती हैं और जिनकी सफाई न होने से उनकी आभा नष्ट हो जाती है। यदि उन मैल की परतों की अच्छी तरह सफाई कर दी जाय तो उनमें पुनः चमक आ जाती है। पुराने मैल की सफाई के लिये पाउडर का साबुन, गरम पानी तथा गरम कपड़े की गद्दी द्वारा साफ करें। फिर ठण्डे पानी से धोकर अच्छी प्रकार सुखा लें। अधिक देर तक इस फर्नीचरों को पानी के सम्पर्क में न रखें अन्यथा लकड़ी के फूल जाने का भय रहता है तथा मसाला गीला हो जाने से जोड़ भी ढीले होने का डर रहता है।

जब फर्नीचर अच्छी तरह सूख जाय तो नरम साफ कपड़े की बड़ी गद्दी बना लें जो पूरी हथेली में आसानी से आ सके। इस गद्दी के एक भाग को अलसी के तेल और दो भाग तारपीन के तेल के घोल में भिगोकर लकड़ी के रेशों को समानान्तर गति से खूब मलें। मलते

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समय इस बात का ध्यान अवश्य रखें कि फर्नीचर पर अधिक दबाव न पड़े।

इतना कर चुकने के बाद भी यदि चिकनाई अच्छी तरह न आये तो गद्दी पर और घोल लगाकर चुटकी भर पालिश पाउडर छिड़क दें और तब तक रगड़ें जब तक उसकी सतह साफ़ चिकनी न हो जाय। बाद में एक साफ कपड़े से पोंछ लें।

आराम कुर्सी के कैनवेस को बदलना

कुर्सी की लकड़ियाँ ज्यों की त्यों मजबूत हैं किन्तु कैनवेस के फट जाने से कुर्सी को ही बेकार नहीं मान लें। उसे नया रूप दें पुनः सुन्दर बना लें।

आवश्यक सामग्री

कुर्सी के नाप के अनुसार अनुमानित डेढ़ गज लम्बा तथा १७-१८ इंच चौड़ा कैनवेस या प्लास्टिक शीट का टुकड़ा, घुन्डीदार कीलें, लकड़ी का वह मसाला जिस पर पानी का असर न हो तथा पालिश।

पिलास से पुरानी कीलों को सावधानी से निकाल लें, पुराना कैनवेस भी निकाल लें, अब फ्रेम को साबुन और पानी के घोल में अच्छी तरह धो लें। छेदों में लकड़ी का मसाला भर दें। अब सैंडपेपर से खूब रगड़ें। देख लें जब सतह अच्छी चिकनी हो जाय तो फ्रेम को साफ कपड़े से पोंछ लें और एक हल्का कोट पालिश चढ़ा दें।

जब पालिश सूख जाय तो बारीक सैंडपेपर से रगड़ें, फिर हल्के हाथ से ही रगड़ें। बाद में दो कोट पालिश और कर दें। पुराने कैनवेस के नाप का नया टुकड़ा काट लें। फ्रेम के ऊपर और नीचे लगे डण्डे में कैनवेस एक या दो इंच अन्दर डालकर उल्टा एक या दो लपेट देकर सी लें। अब कुर्सी को फैलाकर जमीन पर लिटा दें। ऊपर और नीचे के जोड़ पर सावधानी से कीलें लगा दें।

ध्यान रखें, नीचे के डण्डे की चौड़ाई ऊपर के डण्डे से थोड़ी कम होती है। अतः कैनवेस को सही ढंग से फिट करने के लिये एक या दो इंच दोनों तरफ नीचे वाले डण्डे में अन्दर की ओर मोड़ना पड़ेगा।

बगीचों में उपयोग किये जाने वाले फर्नीचर टेबुल, बैंच आदि कुछ ही समय में मैले दीखने लगते हैं। यदि इनकी नियमित रूप से सफाई करते रहा जाय तो ये सदैव नये ही बनें रहेंगे। ऐसा करने पर ये अधिक समय तक सुरक्षित रह सकते हैं।

प्लास्टिक के तारों से बुनी कुर्सी की मरम्मत

ऐसी कुर्सियाँ जो प्लास्टिक के तारों से गूँथी हुई हैं, किसी एक स्थान से जरा-सा भी तार कट जाय, जल जाय तो वह कुछ ही दिनों में फेंकने लायक हो जाती हैं और प्रायः इन कुर्सियों के साथ ऐसी ही घटना घटित होती है। बच्चे अनजान तो होते हैं। वे ब्लेड से पेन्सिल छीलते-छीलते या और कुछ काम करते-करते कुर्सी पर रखकर काटने लगते हैं। फलस्वरूप तार एक स्थान से कट जाता है या माचिस की तीली, मोमबत्ती, इत्यादि से कहीं जरा-सा जल जाता है तो पूरी कुर्सी उधेड़ते ज्यादा दिन नहीं लगते।

यदि जरा-सा कटने अथवा जल जाने पर उसी रंग का प्लास्टिक का तार लाकर मजबूती से उसकी बुनाई कर देनी चाहिये ताकि छेद बढ़ न सके। यदि किसी कारणवश ज्यादा उधर ही गयी है तो अधिक तार लाकर उसकी बुनाई कर सकती हैं। थोड़ी सी सावधानी बरतने पर वैसी ही बुनाई की जा सकती है।

गहरी साँसें लें, ताकि मन विकसित हो

अन्न के बिना कोई सशक्त मनुष्य दो महीने जी सकता है। पानी के बिना एक सप्ताह गुजर सकता है पर साँस के बिना पाँच मिनट जीवित रह सकना कठिन है। कारण कि इन तीनों के द्वारा जो पोषण मिलता है, उसमें वायु का स्तर कहीं ऊँचा है। उसमें प्राण-ऑक्सीजन भरा होता है जो जीवन-संचार का अनिवार्य एवं सर्वोच्च स्तर का पदार्थ है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर-संचालन में ऊर्जा की प्रमुख भूमिका है। तापमान बढ़ने पर शरीर स्टोव की तरह फट पड़ता है। पर यह भी सच है कि चूल्हा बुझ जाने पर पकाने की प्रक्रिया भी समाप्त हो जाती है। इंजन ठण्डा हो जाय तो रेल कैसे आगे बढ़े ? ऊष्मा के बिना शरीर किस प्रकार जीवित रहे ? रक्त-संचालन, पाचन, मल-निष्कासन आदि सभी यन्त्र, अवयव जिस गर्मी के कारण अपना काम ठीक तरह करते रहते हैं। वे सभी जिस ऊर्जा के सहारे गतिशील रहते हैं, वह साँस के द्वारा शरीर के समस्त अवयवों में पहुँचने वाली प्राण-वायु का ही अनुदान है। यदि साँस रुक जाय तो शरीर में निरन्तर उत्पन्न होती रहने वाली विषाक्तता को बाहर निकालने का अवसर ही न मिले। नया ईंधन हस्तगत ही न हो। इस प्रकार क्षण भर में जीवन-संकट उत्पन्न होना सुनिश्चित है। साँस इतनी गहरी ली जानी चाहिये कि उसका दबाव समस्त शरीर का प्रत्येक अवयव अनुभव कर सके।

कई निठल्ले, आलसी लोग बैठे-ठाले समय गुजारते हैं। बड़प्पन भी इस बात में अनुभव किया जाने लगा है कि शारीरिक श्रम हल्के लोग करें। मेहनत का काम नौकर-चाकरों से कराया जाय और सम्पन्न लोग पंखे के नीचे आराम कुर्सी या पलंग पर समय गुजारें। इस प्रचलन का फल यह होता है कि तथाकथित बड़े आदमी या बुद्धिजीवी शरीर पर बोझ नहीं पड़ने देते, फलतः गहरी साँस लेने का जो क्रम चलना चाहिये वह चल नहीं पाता। उथली साँस समस्त शरीर में तो क्या पहुँचने वाली है। फेफड़ों तक को पूरी तरह फुलाने और सिकोड़ने का काम नहीं कर पाती।

उथली साँस से फेफड़ों के मध्यवर्ती भाग को ही काम करना पड़ता है। उसके सुविस्तृत कोष्ठक ऐसे ही निष्क्रिय पड़े रहते हैं। इस खाली जगह में कई प्रकार के रोग-कीट जमा हो जाते हैं और वहाँ कोई हलचल न मचने से निश्चिन्त बैठे रहते हैं। काटने का—अपना मजबूत घर बनाने का काम करते रहते हैं। उनके पैर जमने पर क्षय, दमा, ब्रांकाइटिस, दम फूलने जैसे रोग खड़े हो जाते हैं और वहाँ तक कोई खदेड़ने वाली शक्ति न पहुँच पाने पर फलते-फूलते रहते हैं और तब तक बने रहते हैं जब तक शरीर सर्वथा निष्प्राण नहीं होता।

प्राण-वायु का समुचित दबाव न पहुँचने पर रक्त की लालिमा घट जाती है और उसके पोषक-तत्व रक्त रोग-निरोधक श्वेत कण भी मात्रा में कम और क्षमता में दुर्बल होते जाते हैं। हृदय का संचालन भी धीमा पड़ जाता है। पाचक रसों में भी कमी पड़ने लगती है और वे पूरी तरह रिसते नहीं। जहाँ-तहाँ जमकर पथरी स्तर की गाँठें बना लेते हैं। ये गाँठें विभिन्न प्रकार के अर्बुद बनकर पकने-फूटने लगती हैं। प्राण-वायु की समुचित मात्रा उपलब्ध न होना, समूचे शरीर-संचालन तन्त्र को प्रभावित करता है और व्यक्ति धीरे-धीरे कमजोर होता चला जाता है। यह कमजोरी ही कालान्तर में चित्र-विचित्र रोगों का सृजन करती है।

उथली साँस लेना ऐसा ही है जैसे उतावली में आधे पेट ही खाकर उठ बैठना या मल-मूत्र त्याग की क्रिया पूरी तरह सम्पन्न होने से पूर्व ही उठ बैठना। यह अधूरापन बाद में कई प्रकार की विपत्ति खड़ी करता है।

इस अधूरेपन के कारण ही चेहरे की लालिमा उड़ जाती है, पीलापन छाता है और त्वचा पर झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं। लगता है, असमय में ही बुढ़ापे के लक्षण घेरने लगे, इसका प्रमुख कारण वायु द्वारा मिलने वाले—ऑक्सीजन प्राण में कमी पड़ जाना है। उथली साँस लेने की बुरी आदत आलस्य या उपेक्षा के कारण पड़ती है। शरीर-श्रम करने से यह कार्य अनायास ही होता रहता है, किन्तु कठिनाई उनके सामने आती है जो बड़प्पन की ऐंठ में आरामतलबी अपनाने के साथ दुहरी भूल यह करते हैं कि गहरी साँस लेने की आदत भी भुला बैठते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होना यह चाहिये कि साँस की उपेक्षा न करें, वरन् यह देखें कि उससे फेफड़े पूरी तरह भरे या नहीं। हवा का दबाव पेट फूलने-सिकुड़ने जैसा बना या नहीं। फेफड़े पसलियों में जकड़े हैं इसलिये उनका फैलना-सिकुड़ना छाती के फूलने-सिकुड़ने में ही प्रतीत हो पाता है पर पेट के ऊपर कोई दबाव न होने से वहाँ सहज ही यह पता चल जाता है कि साँस लेने का क्रम पूरा चल रहा है या अधूरा। कुछ दिन गहरी साँस लेते रहने का अभ्यास डालने पर पीछे वह बात स्वभाव का एक अंग बन जाती है और उसके लिये अतिरिक्त रूप से कोई विशेष प्रयत्न करने व सावधानी बरतने की आवश्यकता नहीं है।

उथली साँस लेने की कुटेब को छुड़ाने के लिये कुछ-कुछ देर बाद प्राणायाम करते रहा जा सकता है। प्राणायाम की विधा है, पूरी साँस खींचना और तनिक देर भीतर रोककर उसे बाहर इस प्रकार निकालना कि फेफड़े पूरी तरह सिकुड़ जायें और पेट फूलता-सिकुड़ता मालूम पड़ने लगे।

अध्यात्म साधना के प्रयोगों में इस दृष्टि से "सोहम्" साधना का विशेष महत्त्व है। धीमे-धीमे पूरी सांस खींचना और अनुभव करना कि उस वायु प्रवेश के साथ 'सो' की सीटी बजने जैसी ध्वनि हो रही है और साँस को उसी क्रम में छोड़ते हुये यह अनुभव करना कि साँप की फुँसकार जैसी 'हम्' स्तर की ध्वनि निकल रही है। 'सो' का अर्थ—वह परमात्मा और 'हम्' का तात्पर्य मैं से है। हम और परमात्मा एक हैं। इस आत्मानुभूति की—प्राण और परमेश्वर के मिलन की भावना के अर्थ मैं 'सोहम्' साधना की जाती है। उसका आध्यामिक महत्त्व भी है। पर प्रत्यक्ष परिणाम तो गहरी साँस लेने का अभ्यास पूरा करना है ही। प्राणायाम में भी विश्वव्यापी प्राणतत्व को अधिकाधिक मात्रा में अवधारण करना और भीतर प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कषाय-कल्मषों को निकाल बाहर करने का संकल्प करना है। इससे मनोबल की वृद्धि होती है और आन्तरिक पवित्रता-प्रखरता में अभिवृद्धि होती है। इन आधार-अवलम्बनों के सहारे गहरी साँस लेने का अभ्यास होना तो प्रत्यक्ष लाभ है ही।

मनुष्य गहरी नींद सो जाता है, तब उसकी लम्बी और गहरी साँसें अनायास ही चलने लगती हैं। यह प्रकृति द्वारा उस दोष का निराकरण करने का प्रयास है जो दिन में उथली साँस लेकर किया गया है।

पाश्चात्य वैज्ञानिक अब साँस की महत्ता समझने और उसका सदुपयोग रोग-निवारण में करने लगे हैं। बिस्तर पर पड़े रोगी को वे परामर्श देते हैं कि गहरी साँस लेने और छोड़ने का अभ्यास किया करें। जिन रोगियों ने इस निर्देश का पालन ठीक तरह किया है, उनके स्वास्थ्य में सुधार अपेक्षाकृत अधिक तेजी से होते देखा गया है। फेफड़े सम्बन्धी रोगों के रोगी तो इस अभ्यास से विशेष रूप से लाभान्वित हुये हैं।

जिन्हें अनिद्रा की शिकायत है, उनके लिये नशीली गोलियाँ खाने की अपेक्षा यह कहीं अच्छा नुस्खा है कि मनःक्षेत्र में निस्तब्धता छाई होने की मान्यता के साथ गहरी श्वाँस-प्रश्वाँस क्रिया आरम्भ कर दें और देखें कि निद्रा लाने के लिये कितना रामबाण उपचार है। इसी प्रकार जिन्हें किसी प्रकार की बेचैनी अनुभव हो रही हो वे भी इसी अनुशासन का प्रयोग कर सकते हैं पर ध्यान इतना ही रखा जाय कि साँस मुँह से नहीं नाक से ही लीजिये। प्रकृति ने मुँह खाने के लिये और नथुने साँस लेने के लिये बनाये हैं।

गहरी साँस लेने-छोड़ने के साथ-साथ इस बात का भी ध्यान रखना चाहिये कि जिस वायु में साँस ली जा रही है वह स्वच्छ हो, हरितिमा और सूर्य प्रकाश को छूकर आ रही हो। बन्द कमरों की सीलन और सड़न भरी हवा जिस-तिस प्रकार से शरीर यात्रा का काम तो चलाती रहती है, पर उससे शक्ति और ताजगी उपलब्ध नहीं होती।

अस्तु, अन्न के सन्तुलन और जल के स्वच्छ होने की तरह शरीर में प्रवेश करने वाली वायु की स्वच्छता और पूर्णता पर भी समुचित ध्यान दिये जाने की आवश्यकता है। आमतौर से इस ओर ध्यान नहीं दिया जाता। साँस अपनी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मर्जी से भीतर आती-जाती रहती है। वह कैसी है ? कितनी है ? इसका ध्यान न दिये जाने पर भी शरीर को ऐसी क्षति पहुँचती है जिसकी क्षति-पूर्ति मात्र दवा-दारू से नहीं हो सकती।

उपयोगी घर वे हैं, जिनमें सूर्य की धूप और स्वच्छ हवा का प्रवेश निरन्तर होता रहता है। कमरों की खिड़कियाँ बड़ी और खुली रहनी चाहिये जिसमें होकर हवा का आवागमन ठीक होता रहे। सड़े, सीलन भरे बन्द हवा के मकानों में रहने की अपेक्षा तो यह अच्छा है कि फूँस के झोंपड़े या पेड़ों की छाया में गुजर कर ली जाय।

जीवन में यों शरीर के सभी अंग-अवयवों का अपना-अपना महत्त्व है, पर उन सब में मस्तिष्क की अपनी महत्ता है। विचार-तन्त्र ही जीवन की दिशाधारा विनिर्मित करता है। गुण, कर्म, स्वभाव के केन्द्र उसी क्षेत्र में हैं। इसलिये मानसिक क्रियाकलापों को सही और समुचित रखने के लिये मस्तिष्क में साँस की सप्लाई समुचित मात्रा में होनी चाहिये। उसमें ऑक्सीजन की उतनी मात्रा घुली रहती है। साँस उथली लेने पर ऑक्सीजन की मात्रा कम पड़ जाती है और एक महत्त्वपूर्ण पोषक तत्व से वंचित रहना पड़ता है।

ऑक्सीजन हृदय से भी अधिक मात्रा में मस्तिष्क में खर्च होती है क्योंकि उसे काम भी सबसे अधिक अनुपात में और स्तर की दृष्टि से अधिक महत्त्वपूर्ण करना पड़ता है। उसे रक्त से भी अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता पड़ती है। हृदय की धड़कन घट जाय तो रक्तचाप घट जाता है, जो दुर्बलता का, अशक्ति का चिन्ह है। इसी प्रकार ऑक्सीजन युक्त साँस में जितनी कमी पड़े उतना ही घाटा जीवन-तन्त्र को उठाना पड़ेगा। विशेषतया तब जब वह मस्तिष्क को कम मात्रा में मिले और अस्वच्छ स्तर की हो। इससे मस्तिष्कीय क्षमता घटती है। चिन्तन भौंड़ा और भौंथरा हो जाता है। दिनचर्या के ढर्रे वाले कामों में ही समझ काम देती है। सूक्ष्म चिन्तन, समझदारी, दूरदर्शिता, सूझबूझ जैसी विशेषतायें कम पड़ जाती हैं। नई बात समझने और समझाने में देर लगती है और कठिनाई पड़ती है। इसका कारण वही है जो कुपोषण के कारण शरीर का ढाँचा छितराने लगने की स्थिति में होता है।

शरीर के अवयवों पर नियन्त्रण करने वाले अचेतन मन की दक्षता और व्यावहारिक जीवन की समस्यायें सुलझाने वाले चेतन मस्तिष्क का समुचित परिपोषण प्रधानतया साँस पर निर्भर रहता है, उसकी उपेक्षा करके मानसिक विकास की समग्रता सम्भव नहीं हो सकती। अस्तु, जितना प्रयास अध्ययन, अनुभव, सम्पर्क द्वारा ज्ञान अर्जन के लिये किया जाता है उतना ही इस बात के लिये भी किया जाना चाहिये कि शरीर और मन की समर्थता, स्वच्छता बनाये रखने की पृष्ठभूमि के प्रति आवश्यक सतर्कता बरती जाती रहे। यह कार्य स्वच्छ वातावरण में रहने और गहरी साँस लेने का अभ्यास डालने पर ही हो सकता है। गहरी साँसों का अभ्यास बहुत दिनों में हो पाता है इसलिये उस ओर समुचित ध्यान रखना और प्रयत्नशील रहना हमारी दिनचर्या का आवश्यक अंग होना चाहिये।

सिद्धे बिन्दु महायत्ने, किं न सिद्धयति भूतले

अपने पिता आशुतोष शिवजी को प्रसन्नचित्त जानकर कुमारसम्भव ने उनके पास जाकर पूछा—तात ! आपने जिस प्रकार दुर्लभ साधनायें की वैसा साहस किसी में न हो और वह सिद्धियों का स्वामित्व तथा ब्रह्म को प्राप्त करना चाहता हो तो उसे क्या करना चाहिये वह सरल उपाय आप हमें बताने की कृपा करें। लोक कल्याण की इच्छा रखने वाले भगवान् शंकर ने बताया—

सिद्धे बिन्दु महायत्ने किं न सिद्धयति भूतले।
यस्य प्रसादान्महिमा, समाप्येतादृशो भवेत।।

वत्स ! उसका एक उपाय है, अखण्ड ब्रह्मचर्य अर्थात् "जिसने यत्नपूर्वक अपने वीर्य को सिद्ध कर लिया है उसके लिये इस पृथ्वी में कुछ भी दुर्लभ नहीं रह जाता। सिद्ध वीर्य पुरुष तो मेरे समान समर्थ हो सकता है।

वीर्य तत्व के बारे में इन पंक्तियों में जो कुछ कहा गया है उसकी यथार्थता का अनुमान तो ब्रह्मचर्य-व्रती जीवन बिताकर ही किया जा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सकता है पर अब उसकी यथार्थता वैज्ञानिक भी मानने लगे हैं और कहते हैं कि वीर्य-कीट जिस सुरक्षित घोल में रखे जाते हैं उसी से अनुमान किया जा सकता है कि सृष्टि का कितना महत्त्वपूर्ण तत्व है। वीर्य एक प्रकार का रसायन है। वीर्य कीट उसमें रहने वाले जीवाणु होते हैं। तरल पदार्थ ७५ प्रतिशत, जल ५ प्रतिशत, फॉस्फेट ऑफ लाइम ४ प्रतिशत, चिकनाई ३ प्रतिशत, प्रोटीन—आक्साइड शेष भाग फास्फेट, फास्फोरस, सोडियम क्लोराइड आदि पदार्थ होते हैं। पुरुष के शुक्र कीट (स्पर्म) तथा स्त्री के डिम्ब (ओवम) का उत्पादन पुरुष के अण्ड तथा स्त्री अण्डाशय में होता है। यहाँ से एक प्रकार का रस जो कि वीर्य रसायन का एक प्रकार का "प्लाज्मा" होता है जो सारे शरीर में ओज और तेजस् की भाँति छाया रहता है। यह तेजस् ही आकर्षण का कारण होता है। जिस शरीर में वीर्य की प्रचुर मात्रा होती है वह काले—कूबड़े होने पर भी आकर्षक लगते हैं। कहते हैं—अष्टावक्र जो शरीर में आठ स्थानों से टेढ़ा था ने अपनी संयम शक्ति द्वारा मुख मण्डल पर वह तेजस्विता अर्जित कर ली थी कि महाराज जनक भी उसकी ओर देखकर हतप्रभ हो उठते थे।

पुरुषों के शरीर में पौरुष और स्त्रियों के शरीर में स्त्रीत्व के लक्षणों का कारण यह वीर्य ही होता है। जिसे आयुर्वेद की भाषा में अन्तवीर्य की संज्ञा दी है।

आधुनिक विज्ञान इतना विकसित हो जाने पर भी वीर्य की उत्पत्ति का कोई सिद्धान्त निश्चित नहीं कर पाया। सामान्य रासायनिक रचना के अतिरिक्त उन्हें इतना ही पता है कि वीर्य का एक कोश (स्पर्म) स्त्री के डिम्ब (ओवम) से मिल जाता है। यही वीर्य कोश पुनरुत्पादन प्रारम्भ कर देता है और अपनी तरह के तमाम कोश माँ के आहार से प्राप्त आहार द्वारा कोश विभाजन प्रक्रिया (एक से दो, दो से चार, चार से आठ) के अनुसार विभक्त होता चला जाता है। कहना न होगा कि बिन्द (वीर्य का परमाणु) चेतना का सर्वाधिक सूक्ष्म अंश है। इनकी लम्बाई १/१६०० से १/१७०० इंच तक होती है जिसमें न केवल मनुष्य शरीर वरन् विराट् विश्व के शक्ति बीज छिपे होते हैं। सृष्टि की परम्परा की क्षमता भी इन्हीं बीजों में होती है। उसकी शक्ति का अनुमान किया जाना कठिन है।

प्राचीन काल के योगियों ने अपनी सूक्ष्म दृष्टि से बिना किसी वैज्ञानिक यन्त्र के महत्त्वपूर्ण जानकारियाँ प्राप्त की थीं। आज वह विज्ञान द्वारा सही सिद्ध होती हैं। उदाहरण के लिये, वही वीर्य-कोश जो स्त्री के अण्ड में पहुँचा था गर्भधारण के बाद जब विकसित होना प्रारम्भ करता है तब वह बीज कोश मस्तिष्क में ही संचय होते हैं क्योंकि गर्भ में सन्तान का सिर नीचे की ओर होता है। जन्म के समय १० रत्ती वीर्य बालक के ललाट में होता है, ऐसा भारतीय तत्वदर्शियों का मत है। यही कारण है कि बच्चा विशुद्ध परमहंस जैसी प्रकृति का, विशुद्ध आनन्दवादी, निश्चिन्त और केवलोऽहं होता है। यह वीर्य शक्ति और दृढ़ता प्राप्त करे इसके लिये बालक को नितान्त शुद्ध, सात्विक और भाव भरे आहार की आवश्यकता होती है, ऐसा दूध माता के दूध के अतिरिक्त दूसरा नहीं होता पर कदाचित् आयु बढ़ने के साथ माँ उतना दूध न पिला सके तो दूध की आवश्यकता गौ दुग्ध, बकरी अथवा भैंस के दूध को हल्का करके पूरा करनी चाहिये। इसके बाद जैसे-जैसे शरीर में शक्ति का संचार होता है क्रमशः आहार पद्धति में सावधानी बरतने की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। १० वर्ष की आयु तक वीर्य दोनों भौंहों के बीच वाले स्थान में आ जाता है। इस समय बच्चे को अधिकांश अलोना आहार, फल, फूल, दूध आदि ही देना चाहिये। गुरुकुल में ४ वर्ष की आयु में ही बालक पहुँचा देने का प्राचीन उद्देश्य बच्चे को गृहस्थों के अनुचित आहार से बचाये रखना ही होता था। इस आयु में बच्चे में अनुकरण की प्रवृत्ति रहती है। तीखा, कडुवा भोजन वह यह समझते हुये भी इसलिये करने का इच्छुक रहने लगता है क्योंकि घर के सदस्य उसका उपभोग करते हैं।

नौ से १२ वर्ष तक वीर्य शक्ति भौंहों से उतरकर कण्ठ में आ जाती है, प्रायः इसी समय बच्चे के स्वर में भारीपन और कन्याओं के स्वर

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में सुरीलापन आता है। अभी तक लगभग दोनों की ही ध्वनि एक जैसी होती थी अब बच्चे के स्वर में पुरुषोचित लक्षण झलकने लगते हैं। इस आयु में वीर्य में विपरीत लिंग का आकर्षण पैदा होने लगता है अतएव बालक-बालिकाओं का सम्पर्क अलग-अलग कर दिया जाना चाहिये। आज की सहशिक्षा तो इस दृष्टि से बच्चों के जीवन में कुठाराघात जैसा है। परस्पर समीपता से कच्चा वीर्य मंथन प्रारम्भ कर सकता है जिसके कारण युवकों को जीवन भर स्वप्नदोष, वीर्यपात और शीघ्र-स्खलन की बीमारियाँ लद जाती हैं जो न केवल उसे स्वास्थ्य की दृष्टि से वरन् मानसिक दृष्टि से भी हीन बना देती हैं। ऐसे बच्चे बौद्धिक दृष्टि से बिल्कुल कमजोर होते हैं। नास्तिकता कोई सिद्धान्त नहीं एक प्रकार का रोग है, जो मानसिक कमजोरी के कारण होता है। प्राचीन काल में बालक की वीर्य रक्षा पर ध्यान रखा जाता था। इससे उसकी विचारक्षमता उर्ध्वमुखी बनी रहती थी। उर्ध्वरेता चिन्तन ही जीवन के यथार्थ लक्ष्य और बृह्म की विराटता की अनुभूति कर सकता है।

११ से १६ वर्ष तक की आयु में वीर्य मेरुदण्ड से होता हुआ उपस्थ की ओर बढ़ता है और धीरे-धीरे मूलाधार चक्र में अपना स्थान बना लेता है। काम विकार पहले मन में आता है उसके बाद तुरन्त ही मूलाधार चक्र उत्तेजित हो उठता है उसके उत्तेजित होने से वह सारा ही क्षेत्र जिसमें कि कामेन्द्रिय भी सम्मिलित होती हैं उत्तेजित हो उठती हैं। ऐसी स्थिति में ब्रह्मचर्य को सम्भालना कठिन हो जाता है। २४ वर्ष तक की आयु में यह वीर्य मूलाधार चक्र में से सारे शरीर में इस प्रकार व्याप्त हो जाता है जैसे—

यथा पयसि सर्पिस्तु, गूढश्चेक्षौ रसो यथा।
एवं हि सकले काले शुक्रं तिष्ठति देहिनाम।।

अर्थात् जिस प्रकार दुग्ध में घी, तिल में तेल, ईख में मीठापन तथा काष्ठ में अग्नि तत्व सर्वत्र विद्यमान रहता है, उसी प्रकार वीर्य सारे शरीर में व्याप्त हो जाता है।

यदि २५ वर्ष की आयु तक आहार-विहार को दूषित नहीं होने दिया गया और ब्रह्मचर्य खंडित न हुआ तो इस आयु में शक्ति की मस्ती और विचारों की प्रफुल्लता देखते ही बनती है। ऐसे बच्चे प्रायः जीवन भर स्वस्थ रहते हैं। काम-विकार से घिरे बच्चों को दमित वासना का संकट हो सकता है। जिस बालक के मस्तिष्क में मातृभाव रहा, काम-वासना प्रदीप्त नहीं होने पाई, उसे दमित वासना की तो कल्पना भी नहीं आयेगी वरन् ऐसा सोचने वाले उसके सम्मुख कीट-तत्व जैसे हीनबुद्धि लगेंगे। प्रफुल्लता, मानसिक उन्मुक्तता, साहस, निर्भयता, वाक् विनोद अपने आप में उतना आनन्द है जितना संभोग में। सम्भोग का आनन्द तो थोड़ी देर का है पर यदि वीर्य अच्छी तरह शरीर में पच गया है तो वह आनन्द जीवन के हर क्षेत्र में उत्साह और सफलता के रूप में सर्वत्र लिया जा सकता है।

उपस्थ में आये स्थूल वीर्य को उर्ध्वरेता बनाकर पुनः उसी ललाट में लाना जहाँ से वह मूलाधार तक आया था, ले जाना योग विद्या का काम है। कुण्डलिनी साधना में विभिन्न प्राणायाम साधनाओं द्वारा सूर्य चक्र की ऊष्मा को प्रज्वलित कर (ईंधन बनाकर) इस वीर्य को पकाया जाता और उसे सूक्ष्म शक्ति का रूप दिया जाता है तब यह फिर उसकी प्रवृत्ति ऊर्ध्वगामी होकर मेरुदण्ड से ऊपर चढ़ने लगती है। साधक उसे क्रमशः अन्य चक्रों में ले जाता हुआ फिर से ललाट में पहुँचाता है। शक्ति-बीज का मस्तिष्क में पहुँच जाना और सहस्रार चक्र की अनुभूति कर लेना ही ब्रह्म निर्वाण है। ऐसे व्यक्ति के लिये ही भगवान् शिव ने अपने समान सिद्ध और पूर्ण योगी बताया है।

कठिन योग साधनायें न करने पर भी जो लोग वीर्य को अखण्ड रख लेते हैं वे अपने अन्दर शक्ति का अक्षय भण्डार अनुभव करते हैं और कुछ भी कर सकने की क्षमता रखते हैं। प्रज्ञावान् आत्मायें उसके लिये गर्भधारण के समय से ही सचेष्ट रहती हैं और वीर्य को अधोमुखी नहीं होने देकर उसे ऊर्ध्वगामी बनाने का प्रयत्न करती रहती हैं। सामाजिक कर्त्तव्यों के पालन द्वारा भी ऐसा सम्भव है पर उसके लिये आज की पारिवारिक परिस्थितियों से लेकर शिक्षा पद्धति तक में परिवर्तन करना पड़ेगा। वीर्य सृष्टि का मूल उपादान है। उसकी सामर्थ्य को समझा जाना चाहिये, उसकी रक्षा की जानी चाहिये तथा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उर्ध्वरेता के लाभों से लाभान्वित होकर मनुष्य जीवन की यथार्थता को समझना और पाना चाहिये। जो अपने वीर्य की रक्षा कर लेते हैं, एक बूँद बरबाद नहीं होने देते, वे कोई भी इच्छा करें; कभी अधूरी नहीं रह सकती। भले ही उसे लोग योग सिद्धि समझें, पर है यह सब सिद्ध बिन्दु का ही चमत्कार। यह शक्ति और सिद्धि ही हमें समर्थ और अपराजेय बना सकती है और कोई दूसरी शक्ति नहीं।

उपयोग बनाम उपभोग

"धनी के घर उसके लिये अनावश्यक चीजें पड़ी रहती हैं। मारी-मारी फिरती हैं, खराब होती हैं, दूसरी ओर उनके अभाव में करोड़ों मनुष्य भटकते फिरते है, भूखों मरते हैं, जाड़े से ठिठुरते हैं। यदि सब लोग अपनी आवश्यकता भर के लिये ही संग्रह करें तो किसी को तंगी न हो और सबको सन्तोष रहे।" —गांधीजी

गरीब देशों की तो बात ही क्या अक्सर धनी देशों के भी बहुत से आदमियों को बहुधा अनेक आवश्यक वस्तुओं का अभाव रहता है। यह कोई रहस्य नहीं है। सब इसे स्वीकार करते हैं और प्रायः इसका प्रत्यक्ष अनुभव करते हैं। विचार करने पर मालूम होता है कि इस स्थिति के मूल में या तो कोई उत्पादन सम्बन्धी दोष होता है या उपयोगी सम्बन्धी। उत्पादन का विचार छोड़कर यहाँ उपयोग की बात लें। उपयोग दो रूपों में सामने आता है—उपयोग और उपभोग।

उपभोग का अर्थ समझने के लिये, उसमें और उपयोग में क्या अन्तर है यह जान लेना जरूरी है। जब आदमी किसी वस्तु का सेवन इसलिये करता है कि उससे उसका जीवन-निर्वाह होता है, या उसके विकास और उन्नति में सहायता मिलती है तो इसे उपयोग कहा जाता है। उदाहरण के लिये, मनुष्य अच्छा, ताजा, पौष्टिक भोजन करता है, सर्दी-गर्मी के कष्टों को दूर करने के लिये आवश्यक कपड़ा पहनता है, धूप, वर्षा, ओलों आदि से बचने के लिये मकान में रहता है और ऐसी शिक्षा, साहित्य या मनोरंजन के कार्यक्रम में भाग लेता है, जिससे उसका मानसिक और सांस्कृतिक उत्थान हो, तो वह उपयोग है। गांधीजी ने कहा है—"उपयोगी वह है, जिससे मानव-जाति का भरण-पोषण हो, भरण-पोषण वह है, जिससे मनुष्य को यथेष्ट भोजन वस्त्र मिल सके या जिससे वह नीति के मार्ग पर स्थित होकर आजीवन परिश्रम करता रहे।"

इसके विपरीत आदमी यदि किसी वस्तु के सेवन में मुख्य लक्ष्य अपना भरण-पोषण या विकास न रखकर इन्द्रिय सुख या शौकीनी और भोगविलास रखता है, तो वह उपयोग नहीं, उपभोग करता है।

आजकल, खासकर पश्चिमी देशों में और उनकी देखादेखी भारतीयों में भी उपभोग की भावना बेहद बढ़ी हुई है। भोजन की बात लीजिये। हम खाना खाने में उसके उद्देश्य का ध्यान ही नहीं करते। मुख्य विचार यह रहता है, खाना खूब स्वादिष्ट हो और देखने वालों को वह बढ़िया मालूम हो, चाहे वह कुछ अंश में हमारे स्वास्थ्य के लिये हानिकर भी क्यों न हो। साधारणतया दो बार भोजन काफी है, पर हम तो दिन में पाँच-पाँच बार कुछ न कुछ खाते रहते हैं। सवेरे का नाश्ता, दोपहर का भोजन, तीसरे पहर का फलाहार, शाम का खाना और सोते समय दूध आदि। इसके अतिरिक्त चाय, कॉफी, सोडा, लेमन, शर्बत, ठण्डाई, लस्सी आदि अन्य पेय भी चलते ही रहते हैं।

कई-कई बार खाने-पीने से तथा भोजन में एक साथ बहुत सी—प्रायः पाँच, सात और दावतों या प्रीतिभोजों में तो दर्जनों चीजें खाने से बहुधा हम कुल मिलाकर इतना अधिक खा जाते हैं कि वह हमारी वास्तविक आवश्यकता से कहीं अधिक होता है, जिससे हम बीमार पड़ जाते हैं। सुप्रसिद्ध डॉक्टर लिंडरहल ने कहा है, कि हम जो खाते हैं उसका एक-तिहाई हमें जिन्दा रखता है और दो-तिहाई डॉक्टरों को। सम्भव है कि यह बात कुछ खास लोगों को लक्ष्य में रखकर कही गई हो और साधारण लोगों के लिये वह पूरी तरह लागू न होती हो तथापि इस कथन में जो मूलभूत सच्चाई है, उस ओर सबको ध्यान देना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

भोजन की तरह कपड़े का उपभोग भी बहुत बढ़ा हुआ है। यह ठीक है कि मनुष्य का जीवन अब ऐसा हो गया है कि उसे लज्जा-निवारण तथा सर्दी-गर्मी से बचने के लिये कपड़े की आवश्यकता होती है। साधारण व्यक्ति एक मामूली धोती या पाजामे, एक कुर्ते या कमीज तथा जाकिट और कुछ दशाओं में एक चद्दर तथा एक जोड़ी चप्पल या जूते से काम चला सकता है पर अनेक भारतीय यूरोप—अमरीका वालों की नकल कर कितने कपड़े जरूरी मानते हैं ? बनियान, बुशर्ट, कमीज, कोट, कालर, नेकटाई, टोप, जॉघिया (अण्डरवियर) पतलून और उसके साथ बेल्ट और जूते तथा मोजे आदि। फिर पोशाक के हर हिस्से के बहुत बढ़िया होने का भी ध्यान रखा जाता है। मामूली जूता न पहनकर तीन-तीन सौ, चार-चार सौ रुपये के 'शू' पहने जाते हैं और उनके साथ चप्पल, सेंडिल आदि भी अलग से रखी जाती हैं। कितने ही आदमियों के पास चार-चार, पाँच-पाँच जोड़े जूते होते हैं, जिन्हें वे अलग-अलग समय में काम में लाते हैं। कितना अधिक है यह पहनावा या कपड़े का उपयोग। यह तो उपयोग नहीं, उपभोग ही है।

प्रायः मनुष्य में भोजन की अपेक्षा कपड़े के उपभोग की लालसा अधिक रहती है। वह सोचता है कि भोजन तो हमें अकेले में करना है, दूसरे आदमियों को उसे देखने का अवसर कम ही आता है, पर कपड़े पहनकर तो हम बाहर जाते हैं और घर पर भी यदा-कदा बाहर वालों से मिलते हैं। इस प्रकार कपड़ों को दूसरे आदमी देखते हैं और देखकर हमारी हैसियत का अनुमान करते हैं। यदि कपड़े बढ़िया न हों तो समाज में या सभा-सोसायटी में हमें अच्छा स्थान नहीं मिलेगा, हमारा यथेष्ट सम्मान नहीं होगा इसलिये भोजन में चाहे किफायत की जाय पर कपड़े तो ऐसे होने चाहिये, जिससे दूसरों की निगाह में हम अच्छे, सभ्य एवं सम्पन्न जँचें। इस प्रकार हम बहुधा घर पर भी आवश्यकता से अधिक कपड़े पहनते हैं और जब बाहर जाते हैं, तब तो पहनते ही हैं, यहाँ तक कि शरीर को सजाकर और उसे अपने ढंग की एक प्रदर्शनी बनाकर रखते हैं। यह प्रवृत्ति पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में अधिक पाई जाती है। कपड़े के इस उपयोग की अर्थात् उपभोग की बहुत अधिक वृद्धि का फल यह है कि शरीर को यथेष्ट धूप और हवा नहीं मिल पाती। रोग बढ़ रहे हैं। क्षय आदि बीमारियाँ फैलती जा रही हैं और लोगों का स्वास्थ्य उत्तरोत्तर बिगड़ता जा रहा है।

आजकल लोगों पर अपना रहन-सहन का दर्जा ऊँचा करने की बेढब सनक सवार है। इससे लोगों का स्वास्थ्य बिगड़ता है और उनके घर का खर्च बढ़ जाने से उन्हें आर्थिक चिन्ता सताती रहती है। इसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त सामूहिक दृष्टि से भी लोगों पर इसका बहुत अनिष्टकारी प्रभाव पड़ता है। बहुत से आदमियों की खासी शक्ति अनावश्यक या कम आवश्यक वस्तुओं की उत्पत्ति में लग जाती है, दूसरी ओर समाज की मूल आवश्यकताओं की पूर्ति में बाधा उपस्थित होती है। एक ओर कुछ थोड़े से धनीमानी व्यक्ति शृंगार, सजावट, फैशन, शौकीनी, भोग-विलास के पदार्थों का उपभोग करते हैं, दूसरी ओर साधारण और गरीब स्थिति के असंख्य आदमी अपनी भूख-प्यास मिटाने की भी सामग्री नहीं जुटा पाते और बहुत कष्टमय जीवन बिताने को मजबूर हो जाते हैं। समाज में ईर्ष्या-द्वेष, वर्ग-भेद, ऊँच-नीच की भावना तथा संघर्ष और कलह के वातावरण की वृद्धि होती है। इससे स्पष्ट है कि लोगों में उपभोग की भावना बढ़ने का परिणाम कितना अनिष्टकारी है।

यह ठीक है कि उपभोग अधिकतर धनवान ही किया करते हैं परन्तु दूसरे लोग भी इससे सर्वथा मुक्त नहीं होते। उनकी भी प्रायः इच्छा तो रहती ही है कि किसी तरह हम कुछ मौज-शौक करें, हमारे रहन-सहन का दर्जा बहुत ऊँचा हो और उससे हमारी समाज में प्रतिष्ठा बढ़े। इन लोगों में से कुछ की इच्छा कभी-कभी पूरी भी हो जाती है। इस प्रकार इनके द्वारा भी एक हद तक पदार्थों का उपभोग होने का अवसर आ जाता है। अतएव आवश्यकता है कि धनी-निर्धन सभी को इस बात की ओर विशेष ध्यान देना चाहिये और वस्तुओं का उचित और आवश्यक उपयोग कर उपभोग की लालसा से बचने का सतत् प्रयत्न करना चाहिये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐण्टीबायोटिक्स का अन्धाधुन्ध प्रयोग बन्द हो

एलोपैथी पर आक्षेप करने वाले संक्रामक रोगों की चिकित्सा को अविवेकपूर्ण बताते हैं। इस आरोप का प्रत्युत्तर मिलना तो दूर प्रचलन और बढ़ता चला जाता है। जनमानस में भी एक भ्रान्ति यह जड़ जमाये बैठी है कि इनके बिना कोई भी चिकित्सा अपूर्ण है। छोटी-छोटी तकलीफों, जुकाम, फोड़े-फुन्सी जैसे सामयिक व्यतिक्रमों के लिये भी सल्फा, पेन्टिड्स, सेप्ट्रान, टेट्रासायक्लीन आदि तेज दवायें तुरन्त लेना आरम्भ कर दिया जाता है। कभी-कभी तो यह परामर्श भी नहीं लिया जाता व सुनी-सुनायी पुराने अनुभवों को आधार बनायी मान्यताओं के आधार पर स्वयं अपनी चिकित्सा आरम्भ कर दी जाती है। इसे भी एक प्रकार की आत्म प्रवंचना कहा जा सकता है। औषधि लेने वाले उसके दुष्परिणामों की तरफ से आँखें मूँदकर निरासक्त व्यक्ति की तरह इस साधना में लगे रहते हैं। इसे भी एक प्रकार की अवांछनीयता मानते हुये प्रतिरोध किया जाना चाहिये।

संक्रामक रोगों की ऐण्टीबायोटिक दवाओं द्वारा चिकित्सा को त्रुटिपूर्ण प्रचलन कहने से तात्पर्य यह नहीं है कि इनसे मानवता को कोई लाभ नहीं हुआ। यह कहने में दोराय नहीं कि अकेली पेनसिलीन ने ही लाखों-करोड़ों रोगियों की जान बचाई है। लेकिन यह किसी तथ्य का एक पक्ष हुआ। दूसरा पक्ष भी देखा जाना चाहिये। वह है इनका अदूरदर्शितापूर्ण प्रयोग हर किसी के द्वारा हर रोग में बिना किसी आवश्यकता के मात्रा, निषेध आदि अनुशासन जाने बिना ग्रहण किया जाना।

यदि यह कहा जाता है कि इन औषधियों से संक्रामक रोगों की चिकित्सा में एक क्रान्ति आई तो इस प्रत्यक्ष लाभ का अर्थ यह भी नहीं लिया जाना चाहिय कि इन दवाओं का प्रयोग किसी भी स्थिति में अनुचित नहीं कहा जाना चाहिये। लाभ होना एक बात है और उचित, अनुचित होना दूसरी।

यदि पूर्णतः पक्षपातरहित दृष्टिकोण से मूल्यांकन किया जाये तो इसमें कोई सन्देह नहीं रह जाता कि उनका गुणगान करके एक गलत रास्ता बताया गया और लोक स्वास्थ्य को अपरिमित हानि पहुँचाई गयी।

ऐन्टीबायोटिक्स का ही कमाल हैं कि आज जीवाणु इतने सुदृढ़ व प्रतिरोधी रेसिस्टेन्ट हो गये हैं कि वे मनुष्य की सामान्य रोग-निरोधक क्षमता से नहीं मरते।

उनसे निबटने के लिये मनुष्य एन्टीबायोटिक दवाओं का गुलाम विवशतः बन गया है। ऐन्टीबायोटिक दवाओं के द्वारा जीवाणुओं के मार दिये जाने तथा बार-बार कल्चर करने पर भी जीवाणुओं का शरीर में न पाया जाना रोग-मुक्ति का लक्षण नहीं है। रोग-मुक्ति तब मानी जा सकती है जब जीवाणु संक्रमण न कर रहें हों, भले ही वे शरीर की श्लेष्मा पर विद्यमान हों। भले जीवाणु भी तो शरीर में हर कण में विद्यमान हैं। मूत्र-संस्थान के संक्रमणों में यह स्थिति बहुधा देखी जाती है। ऐन्टीबायोटिक दवाओं के दिये जाने पर कुछ समय के लिये मूत्र निर्जीवाणुक (स्टरलाइज्ड) हो जाता है और इसे रोगमुक्ति मान लिया जाता है पर दवाओं के बन्द करने के बाद जो कहीं ऊतकों के कचरे में दब गये थे तथा जहाँ ऐन्टीबायोटिक दवा के न पहुँच पाने से जीवित बच गये थे अब पुनः सक्रिय होकर संक्रमण कर देते हैं।

यही दशा टायफायड, बुखार, बैक्टीरियल एन्डोकार्डाइटिस आदि अनेक घातक संक्रामक रोगों में होती है। इस पर भी चिकित्साशास्त्र यह मानता है कि ऐन्टीबायोटिक दवायें संक्रामक रोगों से मुक्ति दिला सकती हैं वस्तुस्थिति यह है कि ऐसे इलाज को अधिकतम सामयिक राहत (पौलिऐशन) मात्र माना जा सकता है।

जीवाणु नाश की विभिन्न विधियाँ रोग निवारण में लाठी का काम तो कर सकती हैं जिसकी सहायता से ऊपर चढ़ने में सुविधा मिल सकती है पर यदि जीवाणु नाश को ही लाठी की जगह पर टाँगें समझकर उन पर निर्भर रहा जायेगा तो असफलता ही हाथ लगेगी। तीव्र संक्रमण रोगों के उपचार में जीवाणुनाशक सौम्य विधियाँ रोगी के शरीर से जीवाणु मार उसे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हल्का करके रोगमुक्ति की ओर ले चलने में सहायता कर सकती हैं। पर ये विधियाँ ऐन्टीबायोटिक प्रक्रिया जैसी उग्र नहीं होनी चाहिये जो शरीर के सामान्य जीवाणु फ्लोरा का नाश करके रोग के बदलने में मदद दें तथा उस सौम्य फ्लोरा के स्थान पर एन्टीबायोटिक प्रतिरोधी जीवाणुओं के जड़ जमाने को प्रोत्साहन दें। ऐन्टीबायोटिक दवाओं के प्रयोग के तीन प्रमुख प्रभाव हैं और ये तीनों ही हानिकारक हैं।

ये हैं—(१) रोगकारी जीवाणुओं का अतिशीघ्र मारा जाना (२) शरीर के रक्षक सामान्य जीवाणुओं की मृत्यु (३) ऐन्टीबायोटिक प्रतिरोधी तथा कम उग्रता के जीवाणुओं का जड़ जमाना।

रोग के जीवाणुओं का अतिशीघ्र मारा जाना तुरंन्त की दृष्टि से तो लाभप्रद दिखाई पड़ता है पर होता वह हानिकारक ही है। टायफाइड बुखार के जिन रोगियों का ऐन्टीबायोटिकों द्वारा उपचार किया जाता है उनके रोग की आवृत्ति (रिलेप्स) होने की दर उन रोगियों से अधिक है जिनका उपचार ऐन्टीबायोटिक औषधियों से नहीं किया गया। इस तथ्य को "हैरीसन्स प्रिन्सीपल ऑफ इन्टरनल मेडिसिन" (१९८३) पुस्तक में विद्वान् लेखक डॉ० एडवर्ड० डब्ल्यू० हुक ने स्पष्ट प्रतिपादित किया। यही लेखक इस प्रकरण में आगे लिखते हैं कि 'टाइफाइड बुखार में ऐन्टीबायोटिक्स रोग के दौरान जल्दी शुरू कर देने से रोगी में रोग जीवाणु के विरुद्ध होने वाले इम्यून रिसपांन्स का विकास रुक जाता है। यही रोगमुक्ति में बाधक बनता है।'

यही स्थिति दूसरे जीवाणुज रोगों में कहाँ तक सही उतरेगी इस पर चिकित्सा विज्ञान में पर्याप्त जानकारी उपलब्ध नहीं है पर सैद्धान्तिक रूप से यह निश्चित है कि संक्रमण की अवस्था में जीवाणुओं का अतिशीघ्र नाश कर देना इस सुरक्षात्मक प्रक्रिया का दमन अवश्य कर देता है जो रोगी को उस रोग से आगे लड़ने की क्षमता प्रदान करता तथा भविष्य में उस तथा उससे मिलते-जुलते संक्रमणों को रोकता है।

ऐन्टीबायोटिक दवाओं द्वारा शीघ्रातिशीघ्र जीवाणुओं को मारकर यह मान लेना कि रोगी रोगमुक्त हो गया, अविवेक की निशानी है क्योंकि इससे रोगी की रोग-निरोधक क्षमता में प्रखरता उत्पन्न नहीं हो पाई। इसी कारण जीवाणुनाशक चिकित्सा द्वारा जीवाणुज रोगों से मरने वालों की संख्या में तो कमी हो गयी है पर उनकी संख्या में कमी नहीं हो पायी जो प्रतिवर्ष इन रोगों से ग्रस्त होते हैं। मानवता के शत्रु जीवाणुज रोगों के भार को यह चिकित्सा लेशमात्र ही कम कर पाई है।

ऐन्टीबायोटिक्स का दूसरा प्रभाव शरीर के रक्षक सामान्य जीवाणुओं का मारा जाना है। रक्षक और भक्षक दोनों को एक ही लाठी से हाँकने की गलती ऐन्टीबायोटिक चिकित्सा के अविवेक का दूसरा प्रमाण है। जिस प्रकार अन्धेरे में चलाई गयी बन्दूक मित्र व शत्रु दोनों को हानि पहुँचा सकती है। इसी प्रकार ऐन्टीबायोटिक दवाओं द्वारा मित्र जीवाणुओं का मारा जाना दीर्घकालीन दृष्टि से इस तुरन्त लाभ की तुलना में जो कि संक्रामक जीवाणुओं के मारे जाने से होता है, कम हानिकारक नहीं है। कारण यह है कि जीवाणुओं की आपसी इकालाजी अत्यन्त जटिल है। जीवाणु ही जीवाणुओं के प्रति इस प्रकार की ऐन्टीबायोटिक बनाते हैं तथा कुछ ऐसे पदार्थ भी बनाते हैं जो अन्य जीवाणुओं को लाभ पहुँचाते हैं। अस्तु, इस सन्तुलन से छेड़छाड़ करना जोखिम का काम है।

यह लेखा-जोखा लेना मात्र तर्कवादी दुराग्रह नहीं है, जीवाणुओं का आँत में फैलाव एकदम वर्गीकृत व सन्तुलित है। कुछ वैज्ञानिकों का ऐसा विश्वास है कि प्रत्येक जीवाणु स्पेसीस का आँत में स्थान नियत है। सामान्यतः आँत में मात्र ऐनऐरोबिक जीवाणु ही पाये जाने चाहिये तथा ऐरोविक जीवाणु 'सेकन्ड्री इनवेडर्स' (बाहर से आने वाले हमलावर) हैं। ऐन्टीबायोटिक चिकित्सा से यह सन्तुलन एकदम अस्तव्यस्त हो जाता है। (सन्दर्भ : हार्वे व अन्यों द्वारा सम्पादित "दी प्रिन्सीपल्स एण्ड प्रैक्टिस ऑफ मेडीसिन") इस जीवाणु फ्लोरा की अव्यवस्था से स्वास्थ्य पर पड़ने वाले दीर्घकालीन प्रभावों की चिकित्सा विज्ञान जानते हुये भी उपेक्षा करता है।

यही फ्लोरा की अस्त-व्यस्तता अन्यत्र भी दीख पड़ती है। पेन्सिलिन के प्रयोग से गले में स्ट्रेप्टोकोक्काई, न्यूमोकोक्काई आदि जीवाणु मर जाते हैं तथा "कैन्डीडा" आदि थ्रश को जन्म

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

देने वाले रोगाणु बढ़ जाते हैं। "मोनोलियेसिस" एक प्रकार के फंगस संक्रमण को जन्म दे देते हैं।

इतना ही नहीं सारा जैवजगत एक इकॉलाजिकल सन्तुलन (होमियोस्टोसिस) की दशा में है। एक अमुक नाम के जीवाणु को समाप्त कर देने पर उससे भिन्न नाम का दूसरा सम्भवतः अधिक उग्रता वाला जीवाणु उसी अनुपात में बीमारी पैदा करेगा। पहले जीवाणु के मरने से उत्पन्न हुये इकॉलाजिकल असन्तुलन को दूसरा उससे अगला जीवाणु पूर्ण करेगा।

एक दिन जीवाणु इतने प्रतिरोधी हो जायेंगे कि उन्हें मारने वाली दवायें अपनी विषाक्तता से मानव को मार देंगी। यह कोई अतिशयोक्ति नहीं है। मलेरिया फैलाने वाले मच्छर को ही लें। यह जीवाणु तो नहीं है पर इसे मारने की विधि ऐन्टीबायोटिक्स द्वारा जीवाणु नाश की विधि से भिन्न नहीं है। बड़े पैमाने पर डी० डी० टी० के प्रयोग से अब मच्छर इतना प्रतिरोधी हो गया है कि उसे मारने के लिये अब शेष उपलब्ध कीटनाशकों के प्रयोग पर सर्वत्र रोक की माँग है क्योंकि वे अति विषैले हैं। इसी प्रकार नव निर्मित जेन्टामायसिन, इथैमब्यूटौल, पाइराजिनामाईड, क्लोक्सासिलीन आदि जीवाणुनाशी दवायें इतनी विषैली हैं कि उनका प्रयोग करने से सभी डरते हैं और कोई भी हँसते-हँसते इन्हें औषधि के रूप में नहीं लेता। सभी इनका प्रयोग विषाक्त रसायन के रूप में लाचारी वश ही करते हैं।

संक्षेप में यों कह सकते हैं कि शुरू-शुरू में लाभ का प्रलोभन देकर ऐन्टीबायोटिकों ने चिकित्सकों व रोगियों को ऐसे दल-दल में फँसा दिया है जिससे निकलना कठिन है।

यदि द्वितीय विश्वयुद्ध के समय से पल रहे इस पूर्वाग्रह को कि ऐन्टीबायोटिकों ने मानव जाति का असाधारण भला किया है, कुछ समय के लिये मस्तिष्क से निकालकर उनके कुल लाभों और हानियों का निष्पक्ष मूल्यांकन करें तो कोई सन्देह नहीं रह जायेगा कि ऐन्टीबायोटिक्स से लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक हुई है। जीवाणु इतनी संख्या में हैं कि उन्हें मारा नहीं जा सकता। यदि मारा भी जा सके तो उनके प्रभाव में मानव जी न सकेगा। इनके स्थान पर वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति के रूप में वनौषधियों के निरापद प्रयोग को प्रोत्साहन देना चाहिये। ये सभी काष्ठ औषधियाँ माता के दूध के समान हैं और जीवनी शक्ति बढ़ाकर लाभ ही पहुँचाती हैं। लाभ देरी से हो तो उसे स्वीकार कर लेना चाहिये पर तुरन्त फायदा हो जाने के माया जाल में उलझाने से तो बचना ही चाहिये।

औषधि चमत्कारों का घातक अन्धविश्वास

तात्कालिक लाभ कितना ही क्यों न हो मनुष्य की समझदारी यह कहती है कि पीछे के परिणाम को भी ध्यान में रखा जाये। हो सकता है कि जो कार्य तुरन्त लाभप्रद दीखता है, बाद में हानिकारक प्रतिफल उत्पन्न करे। हो सकता है जिसमें तुरन्त हानि प्रतीत होती है वह कुछ समय उपरान्त उत्तम प्रतिक्रिया उत्पन्न करे। यह बात औषधियों के सम्बन्ध में भी लागू होती है।

इन दिनों मनुष्य आतुर-उतावला बनकर रह रहा है उसे तत्काल लाभ चाहिये। काम में कितना समय लगना चाहिये और उसे नियोजित रीति से सम्पन्न करने के लिये कितना श्रम करना और कितना धैर्य रखना चाहिये, इसकी गुंजायश नहीं रखी जाती है। परिणाम यह होता है कि बारूद का खेल मनोरंजन करने पर हाथ और कपड़े जला लेने जैसी स्थिति बनती है।

रोगों के साथ कष्ट जुड़ा हुआ है। प्रकृति संचित विषों को बुहारने के लिये अन्तःक्षेत्र में जो क्रान्तिकारी उपाय अपनाती है उस उथल-पुथल से भीतर के विजातीय तत्वों को खदेड़ना प्रमुख उद्देश्य है। इस निकालने की प्रतिक्रिया में प्रसव वेदना जैसा कष्ट होता है। ताप, दाह, सूजन, दर्द जैसे लक्षण उभरते हैं। होना यह चाहिये कि प्रकृति की सहायता की जाये, उसके काम में हाथ बटाया जाये। निकालते चलने के क्रम में सहयोग न बन पड़े तो अड़ंग अटकाने जैसा उपक्रम न किया जाय। मारक औषधियों के प्रचलित तरीकों में किया यह जाता है कि सफाई में लगे घटकों को भी विषाक्तता के साथ-साथ ही मार गिराया जाता

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। युद्ध तभी होता है जब दोनों ओर के योद्धा लड़ें। प्रहरियों का सफाया करके चोरी की खुली छूट दी जा सकती है, खदेड़ने के उपक्रम में जो हो-हल्ला मच रहा था उसे शान्त किया जा सकता है। मारक औषधियाँ यही करती हैं। उनकी अन्धी मारकाट में मित्र और शत्रु, प्रहरी और चोर समान रूप से मरते हैं। इतना ही नहीं—इस निमित्त बखेरे गये विष का प्रभाव बाद में भी देर तक बना रहता है।

मारक औषधियों के सहारे तत्काल लाभ को ध्यान में रखते हुये यह किया जाता है, रोगी को जो कष्ट हो रहा था, उसे किसी भी कीमत पर हल्का या बन्द किया जाये। इस प्रयोजन में पेटेण्ट औषधियाँ एक से एक बढ़ कर कमाल दिखाने में प्रतिद्वन्द्विता प्रस्तुत कर रही हैं। इस दृष्टि से लोग उन्हें अपनाने के लिये बेतहाशा दौड़ते हैं। चिकित्सक अपनी प्रवीणता सिद्ध करने के लिये और रोगी राहत पाने के लिये इसी पद्धति को अपनाते हैं। यह भूल जाते हैं कि कुछ ही समय उपरान्त इसके क्या परिणाम हो सकते हैं।

जादुई दवायें जब निकलती हैं तब उनके गुणगान, विज्ञापन से प्रभावित अनेक लोग उन्हें अपनाने में आतुरता बरतते हैं। देखते-देखते उनका भारी प्रचलन होता है और निर्माताओं की तिजोरियाँ विपुल धन से भरी चली जाती हैं। यह चमत्कार प्रदर्शन अन्ततः बहुत महँगा पड़ता है। रोगों के कारण जितनी जीवनीशक्ति नष्ट होती है उससे कहीं अधिक इस मारण मोहन के प्रयोग तन्त्र द्वारा समाप्त हो जाती है। इसी प्रकार जितनी विषाक्तता रोग के समय थी, उससे भी अधिक इन औषधियों के कारण बढ़ जाती है। फल यह होता है कि तेज आग जलाकर लाया गया उफान ठंडा होते ही स्थिति और भी गई-बीती बन जाती है। एक व्यथा से छुटकारा मिलते देर नहीं लगती कि नये किस्म के नये आकार-प्रकार के—नये विग्रह उठ खड़े होते हैं।

प्रगतिशील कहे जाने वाले सम्पन्न और शिक्षित देशों में इन प्रयोगों की पुनरावृत्ति होती रहती है। योरोप में कुछ समय पूर्व "थैलिडोमाइड' ने जो तहलका मचाया था, उसे अभी तक भुलाया नहीं जा सका है। गर्भिणी को आने वाली मितली को रोकने के लिये इस दवा की धूम मची थी। बाद में देखा गया कि ऐसी गर्भिणियों में से अधिकांश के अविकसित और विकृत अंगों वाले बच्चे उत्पन्न हुये।

पेचिशजन्य अमीबा का इलाज करने के लिये "ऑक्सीक्विनोलीन" औषधि ने बहुत ख्याति प्राप्त की थी। किन्तु बाद में देखा गया कि सेवनकर्त्ता आँखों की रोशनी गँवा बैठे।

ऐसी दवाओं पर बाद में प्रतिबन्ध भी लगते हैं पर तब तक बहुत देर हो चुकी होती है और असंख्यों उस जादू, चमत्कार के फेर में बहुत हानि उठा चुके होते हैं। बाद में जिन पर प्रतिबन्ध लगा, ऐसी औषधियों में एक 'एमिडोपाइरीन' भी है। बुखार और सिरदर्द घटाने के लिये 'फिनैसिटीन' की अपनी ध्वजा पताका तब समेटनी पड़ी जब उसके कारण गुर्दे खराब हो जाने का नया संकट उभरा और विरोध खड़ा किया गया। बच्चों की अपचजन्य बेचैनी को दूर करने के प्रति टेट्रासाइक्लीन के सस्पेन्शनों पर अमेरिका ने अपने यहाँ पिछले दिनों ही प्रतिबन्ध लगाया है। उसने बच्चों की बढ़वार रोक दी और दाँत खराब कर दिये।

वजन बढ़ाने के लिये कमजोर, दुबलों को कुछ दिन पूर्व तक एनोवालिक स्टोरायड वर्ग के टॉनिक दिये जाते हैं पर बाद में पता चला कि उसकी प्रतिक्रिया से कैन्सर तक हो सकता है।

पेट में गर्भ है या नहीं—इसकी हार्मोन परीक्षा करने वाली दवा में 'आक्सीक्विनोलिन" औषधि को अब निषिद्ध ठहरा दिया गया है। उनका जिनने भी सेवन किया, उन्हें बाद में अनेक प्रकार की नई व्यथाओं से ग्रसित होना पड़ा।

विकसित देशों की जनता जागरूक है। ऐसे विग्रह उत्पन्न होते ही उनका विरोध होता है। गर्भिणी की मितली रोकने वाली दवा "थिलिडोमाइड' पर कुछ रोगणियों ने मिलकर निर्माताओं के विरुद्ध अदालत में मुकदमा चलाया थ। फैसले में इतनी बड़ी रकम मुआवजे में दिलवाई गई कि फर्म दिवालिया हो गई।

अविकसित देशों में ऐसी व्यवस्था नहीं है। न तो वहाँ की जनता जागरूक है और न

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सरकारें ही जन-स्वास्थ्य के क्षेत्र में चलने वाले ऐसे घपलों पर ध्यान रखती हैं फलतः यह विनाश व्यवस्था वहाँ निधड़क चलती रही है।

अनेकों औषधि निर्मात्री कम्पनियाँ ऐसी हैं जिन्होंने अपना कारोबार अनेक देशों में फैलाने की सुविधा प्राप्त कर ली है वे प्रतिबन्धित दवाओं को दूसरे नाम से अल्प विकसित देशों में चलाने लगती हैं। चमत्कारी लाभ के लोभ में उनका प्रचलन भी देखते-देखते हो जाता है किन्तु बाद में यही देखा जाता है कि उनके दुष्परिणाम कितने हुये और इस व्यामोह में कितने किस प्रकार बर्बाद हो गये।

कठिन रोगों का सरल उपचार

शारीरिक रोगों की पहले भी कमी नहीं थी, पर अब तो वे और भी अधिक तेजी से बढ़ते जा रहे हैं। कारण कि मनुष्य के आहार में कृत्रिमता का और व्यवहार में अनैतिकता की अभिवृद्धि असाधारण रूप से हुई है। यह बढ़ोत्तरी ऐसी है जो शरीर में बेचैनी, उत्तेजना बनकर उभरती है और उनका विस्फोट चित्र-विचित्र रोगों के रूप में फूटकर निकलता है।

उपचार के लिये यों नई-नई औषधियों का आविष्कार होता जाता है। आज जिस औषधि को असाधारण बताया जा रहा है और जिसका महात्म्य दैवी चमत्कारों जैसा बताया जा रहा है उसी को कुछ दिनों के उपयोग के बाद प्रचार की गर्मी ठण्डी होते ही निरर्थक बताया जाने लगता है। इनमें से कई को तो हानिकारक भी बताया जाता है और उसके प्रयोग पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाता है। आकृति बदलती रहती है पर प्रकृति नहीं बदलती। नई औषधियों के नित नये आविष्कार होते रहते हैं साथ ही ऐसे रोगों का उद्भव भी होता रहता है, जिनका पहले नाम भी नहीं सुना गया था, जिसके लक्षण एवं निदान का कहीं, किन्हीं पुरातन पुस्तकों में उल्लेख तक नहीं मिलता।

जड़ की सिंचाई होते रहने पर वह हरी बनी रहेगी और टहनी पत्ते तोड़ते रहने पर भी नये-नये पल्लव फूटते रहेंगे। रुग्णता की जड़ आहार की कृत्रिमता और मन पर छाई हुई उच्छृंखलता—इन दोनों के सम्मिश्रण से शरीर और मन दोनों को आधि-व्याधियाँ घेरती हैं। औषधि उपचार से निराकरण तब तक नहीं हो सकता जब तक कि उसकी जड़ हरी-भरी है। एक पत्ता तोड़ने पर उसके स्थान पर नई कोंपलें उग आती हैं। एक नामरूप वाली बीमारी का तीव्र मारक औषधियों के प्रभाव से उफान कम होता है किन्तु उसके स्थान पर नया उद्भव उफन पड़ता है।

फसल के रोगों को निरस्त करने के लिये कीटनाशक रसायनें छिड़कने का सिलसिला चलता है। आरम्भ में उनका कुछ प्रभाव दिखाई देता है किन्तु कुछ ही दिन बाद वे रोगकीट उन दवाओं के अभ्यस्त हो जाते हैं। नशेबाज हल्के-भारी विषों का ही सेवन करते हैं। आरम्भ में उनकी हानियाँ, उत्तेजना ही दिखाई देती हैं किन्तु कुछ ही समय बाद नशेबाज उन द्रव्यों का और भी अधिक सेवन करने लगता है, इतना ही नहीं उनका आदी भी हो जाता है और उनका इस प्रकार अभ्यस्त हो जाता है कि उन्हें लिये बिना काम ही नहीं चलता। मलेरिया के मच्छर मारने के लिये आरम्भ में डी० डी० टी० का प्रयोग किसी हद तक सफल भी हुआ था, पर अब नई पीढ़ी के मच्छर उससे मरना तो दूर उसका सेवन करने के लिये आकुल-व्याकुल फिरते हैं। उन पर मारक प्रभाव काम नहीं करता। फसल पर रोग-कीटनाशक छिड़कने का भी यही परिणाम होता है, वे दवायें कुछ ही समय बाद गुणहीन सिद्ध होने लगती हैं और उनके स्थान पर नई अधिक तीक्ष्ण औषधियाँ बनानी पड़ती हैं, पर उसका प्रभाव भी चिरस्थाई नहीं रहता।

ठीक इसी प्रकार मनुष्यों के शरीर में उत्पन्न होने वाले रोगों के निमित्त जो औषधियाँ खोजी जाती हैं, उनमें से अधिकांश मारक एवं ज्ञान तन्तुओं को सुन्न करने वाली होती हैं, मारक औषधियाँ कुछ ही दिनों में अधिक मात्रा की माँग करने लगती हैं और अन्त में वह भी निरर्थक बन जाती हैं। रोगी इन भूल-भुलैयों में भटकता हुआ क्रमशः अधिक बड़ी जटिलता में फँसता जाता है। अस्पताल, चिकित्सक बढ़ते जाते हैं साथ ही रोगों के प्रकार एवं संकट भी।

स्थायी उपायों की दृष्टि से हमें सर्वप्रथम सात्विक और सीमित भोजन की मात्रा के

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

सम्बन्ध में ध्यान देना चाहिये। मसाले और नशे पेट में जाने से पूर्व ही रोके जाने चाहिए। चिकनाई, मिठाई, की मात्रा बढ़ने से भी आहार ऐसा बन जाता है, जो पोषण के प्रयोजन से दूर हटकर शोषण करने लगता है। माँस मनुष्य की प्रकृति के सर्वथा विपरीत होने के कारण उसे नीरोग नहीं रख सकता। उत्तेजना देकर ऐसी बलिष्ठता भले ही प्रदान कर दे, जो अधिक समय न ठहर सके और भीतर ही भीतर आरोग्य की जड़ें खोखली करती रहे।

कभी शरीर का सन्तुलन मात्र आहार पर निर्भर समझा जाता था, पर अब नये अनुसंधानों ने समूची दिशाधारा ही बदल दी है और बताया है कि मन उद्विग्न, चिन्तित, आवेशग्रस्त अथवा निढाल रहेगा तो उसका प्रभाव शरीर के अन्तरंग अवयवों पर पड़े बिना न रहेगा। जो असंतोष भरी विक्षुब्ध परिस्थितियों से घिरा हुआ है उसका नीरोग रहना कठिन है। जिस शरीर में से पोषक तत्व घटेंगे, जीवनी शक्ति का ह्रास होगा वह स्वयं ही गलता चला जायेगा और एक दिन किसी न किसी रोग का या रोग समुदाय का शिकार होकर रहेगा।

चिकित्सा कृत्य के लिये औषधि की विशिष्टता खोजने की अपेक्षा यह कहीं अच्छा है कि हम अपने दैनिक आहार पर ध्यान दें। उसमें फल एवं शाकों का अनुपात बढ़ावें। भाप पर उबाल लेना भर पर्याप्त समझें, भूख से कम खायें और भूख से अधिक मात्रा न बढ़ने दें, अभक्ष्य से परहेज करें। जबकि स्वाद के नाम पर आज गरिष्ठ और जायकेदार वस्तुओं की भरमार को ही सराहा जाता है। यह महँगे मोल में बीमारियों का खरीदना हुआ।

इसी प्रकार मानसिक सन्तुलन बनाये रहने के लिये आवश्यक है कि नीतिमत्ता का आश्रय ग्रहण करें। न वासनाओं को भड़कने दें और न महत्त्वाकांक्षाओं को इतनी तीव्र करें कि उनकी पूर्ति तो दूर, पूर्ति की योजना बनाने में ही मस्तिष्क का सन्तुलन गड़बड़ाने लगे। अमीरी की लालसा ऐसी ही है, जिसे पूरा कर सकने में कुबेर भी सफल न हो सके। बड़प्पन पाने और बनाये रखने के प्रयास में इन्द्र तक को अनेक बार हैरानियाँ उठानी पड़ी हैं, फिर साधारण मनुष्यों की तो बात ही क्या है ? उनकी क्षमता, सूझ-बूझ और परिस्थितियाँ साधारण स्तर की होती हैं। ऐसी दशा में उनका चक्रवर्ती बनने का स्वप्न देखना निरर्थक है। मतभेद को विद्वेष में बदलकर उनसे प्रतिशोध लेने के लिये उतारू होना व्यर्थ है। इस प्रयास में देवासुर संग्राम अनादिकाल से चलता रहा है और अनन्तकाल तक चलता रहेगा। खानदानी रंजिश पीढ़ियों चलती है और एक-दूसरे को नीचा दिखाने के प्रयास में दोनों ही पक्षों को असाधारण क्षति सहन करनी पड़ती है।

मन को डराना या साहस देना सरल है। यह कार्य स्वयं ही अपनी बिना शक्ति के सहारे किया जा सकता है। दूसरे विचारशील सहयोगी भी इसमें भरपूर सहायता कर सकते हैं। इच्छित साधन जुटाने की अपेक्षा यह कहीं अधिक सरल है कि परिस्थितियों के साथ तालमेल बिठाना सीखा जाये और अपने स्वरूप को हँसते-हँसाते रहने का बनाया जाये।

चिकित्सक यदि सचमुच चिकित्सक हैं तो रोगी को आहार-विहार को सही रखने का परामर्श दें। यह समझायें कि प्राकृतिक जीवनयापन करना, मन को उद्वेग रहित रखना रोगों से बचे रहने का सरलतम तरीका है। यदि बाहरी सहायता की आवश्यकता हो, तो औषधि के नाम पर काली मिर्च चबाकर भी चिन्तन तन्त्र को सही रखने से आरोग्य को अक्षुण्ण रखा जा सकता है।

शीघ्र स्वस्थ होने की रीति-नीति

बीमारियों को अधिक महत्त्व न देना एक अच्छा एवं परिष्कृत दृष्टिकोण है। प्रकृति सदा रोग निवारण में प्रवृत्त रहती है। वह बिना फीस वाली डॉक्टर है, जो अपने ढंग से भीतरी हेर-फेर द्वारा ही बिगड़ी परिस्थिति को सुधारने में लगी रहती है। जब तक उसे रोगी का तनिक भी सहयोग मिलता रहता है, तब तक हार नहीं मानती। रोगी का सहयोग यही हो सकता है कि वे धैर्य रखें और मनोबल को मजबूत बनाये रखें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

बीमारी का अर्थ मरण नहीं होता, किन्तु कई व्यक्ति ऐसा ही मान बैठते हैं और तिल को ताड़ बना लेते हैं। व्याधि के साथ व्यथा भी जुड़ी रहती है। उसका सामना करने के लिये बढ़िया उपचार ही पर्याप्त नहीं, यह भी आवश्यक है कि रोगी की सहनशीलता बढ़ी-चढ़ी हो, वह स्वयं को अन्य मनोरंजक प्रसंगों में लगाकर पीड़ा को हल्का कर सकें, अपना ही नहीं, सहानुभूति प्रकट करने वाले, परिचर्या में लगे हुये लोगों को भी ध्यान बँटाने, उनकी गम्भीरता को हल्का करने में समर्थ हो सकें।

बीमारी का समाचार सुनकर आने वाले सहानुभूति प्रदर्शकों का कर्त्तव्य है कि वे समाचार पाकर अत्यन्त चिन्तित होने की बात कहकर अपनी आत्मीयता का प्रदर्शन न करें। इस रोग के अन्य रोगी कितने दिनों तक कितने कष्ट में पड़े रहे और फिर अन्ततः मर गये-ऐसी घटनायें सुनाकर रोगी का मनोबल ही तोड़ा जाता है और अधिक चिन्तित बनाकर अधिक घबड़ाने के लिये उत्साहित किया जाता है। यह आत्मीयता कहाँ हुई ? इसे तो एक प्रकार की भीतरी शत्रुता ही कहना चाहिये। रोगी को औषधि से भी अधिक सहानुभूति की, उसका चित्त हल्का करने की, सम्भव हो तो सहायता करने की आवश्यकता पड़ती है। यदि उतना भी भारी पड़े-न बन सके, तो कम से कम उसके घावों पर आघात कर हरा तो करना ही नहीं चाहिये। जिन्हें ऐसे नाजुक अवसरों पर मरीजों से बात-व्यवहार करने की कला नहीं आती, उन्हें तो हाजिरी नोट कराकर उल्टे पैरों लौट आना चाहिये। इसी में दोनों की भलाई है, रोगी की बीमारी और गम्भीर बनने से बच सकेगी और सहानुभूति दर्शाने वाला कलंक से बच सकेगा। असावधानीपूर्वक अनावश्यक गपबाजी में बराबर यह खतरा बना रहता है कि प्रमादवश कोई ऐसी बात न निकल जाये जो रोगी के अचेतन में घुसकर उसे हानि पहुँचाये। अतः इष्ट, मित्रों को ऐसे समय हमेशा सतर्क रहना चाहिये और बीमारी एवं बीमार के सम्बन्ध में सोच-विचार कर बात करना चाहिये। जहाँ एकान्तजन्य नीरसता हो और अस्वस्थ के मन बहलाव के लिये बातचीत आवश्यक हो, उत्तम है कि वहाँ रोगी की रुचि का ही कोई विषय छेड़ा जाये और चर्चा उसी पर की जाय। जो प्रसंग अरुचिकर और उबाऊ हो, उसे इन चर्चाओं में सम्मिलित न ही किया जाये तो अच्छा है, क्योंकि इससे समय तो गुजर जाता है, किन्तु मनोरंजन जैसे उद्देश्य की पूर्ति नहीं हो पाती। अस्वस्थ से बातचीत के दौरान ध्यान इस पर भी दिया जाना चाहिये कि जिस औषधि का सेवन किया जा जा रहा है, जिस चिकित्सक से उपचार कराया जा रहा है, उन्हें घटिया नहीं बताया जाये, वरन् उनकी प्रशंसा ही करनी चाहिये। इससे सुनने वाले के मन में उन दोनों के प्रति विश्वास बढ़ता है और अभिभावक के प्रति श्रद्धा और द्विगुणित हो उठती है, यह जानकर कि उनने चिकित्सा की सर्वोत्तम व्यवस्था की है। रोगी के मन में यदि यह दृढ़ विश्वास पैदा हो जाये, तो फिर यह एक स्वसंकेत का काम करता है और वह शीघ्रता से आरोग्य लाभ करने लगता है। अच्छी से अच्छी दवा, बढ़िया से बढ़िया चिकित्सक और उत्तम से उत्तम उपचार भी तभी सफल हो पाते हैं, जब उनके प्रति बीमार की अच्छी धारणा हो। बुरी धारणा अन्ततः बुरा परिणाम ही प्रस्तुत करती है, अतः कुटुम्बियों और स्नेहीजनों का यह दायित्व है कि वे रोगग्रस्त को चिकित्सा के प्रति पूर्ण आश्वस्त करें और यह भरोसा दिलाने का प्रयत्न करें कि वह अवश्य स्वस्थ हो जायेगा।

रोग अच्छा होने में थोड़ा समय लगता है। कोई दवा ऐसी नहीं जो जादू की तरह रोग-मुक्ति दिला सके। संवेदना रहित दवा तो पीछे के परिणामों की दृष्टि से और भी अधिक भारी पड़ती है, इसलिये उपयुक्त यही है कि रोगी शान्त रहे, सहिष्णु बने, संयम बरते और किसी बहाने चित्त बटाये रखने का प्रयत्न करे। मनोबल किसी भी कारण फीका न पड़े। शीघ्र स्वास्थ्य-लाभ का यही उपयुक्त विकल्प है। इसे अपनाकर ही जल्दी स्वस्थता अर्जित की जा सकती है।

बीमारियों को हम निमन्त्रण देकर बुलाते हैं

शरीर की संरचना अद्भुत है। लगता है उसके निर्माता ने अपनी सारी कला इस छोटे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

से यन्त्र में समेटकर रख दी है। इसके सदुपयोग के साथ सम्भावना जुड़ी हुई है कि उसे धारण करने वाला आत्मा इस उपकरण की सहायता से अनेकानेक प्रकार के भौतिक तथा आत्मिक लाभ उठाये और अपूर्णता को पीछे छोड़ते हुये पूर्णता के लक्ष्य तक सरलतापूर्वक पहुँच सके।

दुरुपयोग तो अमृत का भी बुरा होता है। आत्मरक्षा के काम आने वाले अस्त्र-शस्त्रों को भी यदि गलत ढंग से प्रयुक्त किया जायेगा तो अपने ही हाथ-पैर काट देंगे। धन और बुद्धि का अवांछनीय उपयोग करके लोग किस प्रकार पतन के गर्त में गिरते और कष्ट भुगतते हैं यह कहीं भी कभी भी प्रत्यक्ष देखा जा सकता है।

हमें आये दिन शारीरिक रोग सताते हैं और कराहते हुये विभिन्न स्तर के कष्ट सहने के लिये विवश करते हैं। यह रोग आखिर हैं क्या ? ईश्वर ने जब इतना सुसम्पन्न शरीर दिया तो उसके साथ यह बीमारियों की व्यथा क्यों लगा दी ? जब इस प्रश्न पर विचार करते हैं तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचना पड़ता है कि रोग केवल हमारी प्रतिकूल चलने की उद्दण्ड नीति का दुष्परिणाम है। उन्हें कुपथगामिता का दण्ड भी कह सकते हैं। प्रकृति की अवज्ञा करते हुये हम चैन से नहीं बैठ सकते। नैतिक और सामाजिक अपराध करने वाले राजदण्ड पाते हैं प्रकृति की आचार संहिता का उल्लंघन करते हुये स्वेच्छाचार बरतने का दुष्परिणाम हमें विविध विधि रोगों के रूप में भुगतना पड़ता है।

अस्वस्थता का दावानल जिस तूफानी गति से फैल रहा है उसके पीछे प्रकृति के साथ किया गया असंयमरूपी अनाचार ही मुख्य कारण है। द्रुतगति से बढ़ रहे रोगों में से दो-चार पर भी दृष्टिपात करें तो प्रतीत होगा कि यह अभिवृद्धि अकारण नहीं है। शरीर के साथ बरती गई उपेक्षा एवं उद्दण्डता का प्रतिफल ही बढ़ती हुई बीमारी के रूप में सामने आ रहा है।

आमाशय और छोटी आँत के अग्रभाग—ग्रहणी के खोखले अवयवों में एक प्रकार का मखमली अस्तर है। इसमें अपच से उत्पन्न विषाक्तता के कारण छोटे-छोटे व्रण हो जाते हैं। इन्हें 'गैस्ट्रिक अल्सर' कहते हैं। गैस्टर का अर्थ है पेट। गैस्टर में होने वाले व्रण गैस्ट्रिक अल्सर कहलाते हैं। छोटी आँतों के अग्रभाग ग्रहणी के वृण को ड्यूडोनल अल्सर कहते हैं। यदि दोनों जगह व्रण हों तो उसे पेप्टिक अल्सर कहा जायेगा।

आमाशय में दो महत्त्वपूर्ण पाचक रस स्रवित होते रहते हैं। (१) हाइड्रोक्लोरिक एसिड (२) पेप्सीन। यह रस काफी तेज है। भोजन को वे ही पचाते हैं। पर यह आश्चर्य ही समझना चाहिये कि वे आमाशय को नहीं पचा डालते। कारण यह है कि आमाशय और ग्रहणी की दीवारों पर एक मखमली अस्तर चढ़ा रहता है। जो पाचक रसों और आमाशय की दीवारों को आपस में घुलने-मिलने नहीं देता। यदि किसी कारण यह अस्तर झीना पड़ जाय तो वे एसिड़ आमाशय की दीवारों को खरोंचेंगे और उसमें जख्म पैदा कर देंगे।

आमाशय के मखमली अस्तर में प्रायः १० अरब अम्लस्रावी कोशिकायें होती हैं। वे एक दिन रात में २००० घन सेन्टीमीटर पाचक रसों का स्राव करती हैं। कुछ व्यक्तियों की यह कोशिकायें बढ़कर दूनी तक हो जाती हैं और अधिक रस स्रावित करती हैं। ऐसे लोगों को पेप्टिक अल्सर हो जाता है।

पेट का बहुत सा काम मुँह को करना पड़ता है। सह्य तापमान—भोजन को छोटे टुकड़ों में तोड़कर पेट में पच सकने योग्य बनाना—मिर्च, मसाले आदि की अनुपयुक्तता दूर करना—मुँह द्वारा ठीक तरह चबाये जाने पर ही सम्भव होता है। पर कई लोग जल्दबाजी में बिना पूरा चबाये ही भोजन उदरस्थ करते रहते हैं। इससे आमाशय को दूना काम करना पड़ता है, ऐसी दशा में कठोर भोजन उस मखमली अस्तर को छील देता है और अल्सर की शिकायत उठ खड़ी होती है।

धूम्रपान, बहुत गर्म चाय, कॉफी पीना, मदिरा पान, मानसिक उत्तेजना की स्थिति में भोजन करना, एस्पिरीन और कोर्टिकोस्टेराइड वर्ग की दवाओं का अधिक सेवन भी अल्सर का कारण बन जाता है।

पेट के ऊपरी भाग में दर्द, जलन, ऐंठन, कचोट, खट्टी डकारें, पेट खाली होते ही पेट में

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

ऐंठन जैसी शिकायतें हों तो अल्सर की सम्भावना समझी जा सकती है। यह जख्म ग्रहणी का मार्ग छोटा कर सकते हैं। ऐसी दशा में भोजन नीचे आँतों में नहीं खिसकता और उल्टियाँ होने लगती हैं। जख्म बड़े हो जायँ और उनका प्रभाव रक्त वाहिनियों तक जा पहुँचे तो खून की उल्टियाँ भी होने लगती हैं।

कैंसर का प्रकोप द्रुतगति से बढ़ रहा है। वह गरीबी की अपेक्षा अमीरों में अधिक पनपता है, जहाँ सफाई, विश्राम तथा सुख-सुविधा के अनेकों साधन मौजूद हैं। इन दिनों संसार भर में प्रायः तीन करोड़ व्यक्ति इस रुला-रुलाकर मारने वाले दुष्ट रोग का त्रास सह रहे हैं। डॉ० एलिस वारकर के अनुसार उनमें से आधे अर्थात् डेढ़ करोड़ केवल अमेरिका और इंग्लैण्ड में हैं।

कैंसर लैटिन भाषा का शब्द है। उसका अर्थ होता है—केकड़ा। यह जल जन्तु अपनी घिनौनी आकृति एवं प्रकृति के कारण सहज ही डरावना लगता है। अपने पैने पंजे जहाँ भी गड़ा लेता है वहाँ मजबूती से जमा रहता है। जिन कोशिकाओं पर कैंसर के विषाणु छा जाते हैं, उन्हें इस प्रकार जकड़ते हैं कि हटने का नाम नहीं लेते। आरम्भ में थोड़ी सी सूजन, कसक और गाँठ से उसकी जड़ जमती है और फिर वह दिन-दिन अधिक कड़ी-बड़ी और विकृत होती चली जाती है। दाहं, शोथ, दर्द, उभार जैसी अनेक विकृतियाँ उठती-बढ़ती दिखाई देती हैं और व केवल पीड़ित अंग पर वरन् समस्त शरीर पर उसकी प्रतिक्रिया परिलक्षित होती है।

औषधियाँ, ऑपरेशन, रेडियम किरणें आदि विविध उपचार करने पर भी इस रोग से पिण्ड नहीं छूटता और अधिकांश पीड़ित मृत्यु के मुख में ही चले जाते हैं। भारत में इस रोग का आक्रमण ७० प्रतिशत मुख के क्षेत्र में होता है। मुख, गला, जीभ आदि इसके शिकार में अधिक आते हैं, इसके बाद २२ प्रतिशत को छाती, फेफड़ा और पेट में होता है। कुल मिलाकर ८ प्रतिशत शरीर के अन्य अंगों में पाया जाता है। यह अनुपात प्रकट करता है कि किन अवयवों के साथ कितना अत्याचार हुआ है और किस प्रकार उनका सर्वनाश प्रस्तुत हुआ है। पीड़ितों में प्रायः दो-तिहाई पुरुष अपेक्षाकृत हर क्षेत्र में अधिक उद्दंडता का परिचय देते हैं। नशेबाजी का शौक भी उन्हीं को होता है। बढ़ता हुआ धूम्रपान इस दुष्ट रोग का प्रधान कारण है। ४० प्रतिशत रोगी अति धूम्रपान के फलस्वरूप ही कैंसर के शिकार बनते हैं। कैंसर सर्वेक्षण से उपलब्ध आँकड़े बताते हैं कि सिगरेट न पीने वालों की तुलना में पीने वाले कैंसर के दस गुने शिकार होते हैं। भारत में ५५० करोड़ रुपया वार्षिक की तम्बाकू पीई जाती है। कैंसर रोगियों पर आने वाले चिकित्सा परिचर्या खर्च तथा काम हर्ज होने की हानि इससे कम नहीं अधिक ही होनी चाहिये। चोरी की राशि से यदि जुर्माना अधिक होता हो तो उसे अनुचित नहीं कह सकते।

मधुमेह कितना घातक है, यह हर कोई जानता है, पर इस जानकारी में इतनी और वृद्धि करने के लिये कोई तैयार नहीं कि यह जिव्हा के असंयम का ही परिणाम है। गरिष्ठ अधिक तले हुये—चटपटे पदार्थ अत्यधिक मात्रा में खाते रहने से आमाशय की कुछ रस ग्रन्थियाँ एक प्रकार से सूख ही जाती हैं और उनमें इन्सुलिन जैसे उपयोगी रसायन बनना बन्द हो जाते हैं, यही है मधुमेह का मूल कारण।

बिना खाये खाली पेट की अवस्था में यदि रक्त में १०० मिलीमीटर में १२० मिली ग्राम से ज्यादा शक्कर हो और पूरे भोजन के पश्चात् शक्कर का अनुपात १०० मिलीमीटर में १७० से अधिक हो तो उसे मधुमेह का रोगी माना जा सकता है।

जो कुछ हम खाते हैं, उससे ग्लूकोज बनता है। इस शकर को पकाकर उष्णता एवं शक्ति में परिणत करना इन्सुलिन एन्जाइम का काम है। भोजन का एक अंश ग्लाइकोजन बन जाता है जो पुट्ठों और जिगर में रहता है। उपवास के समय या शक्ति की आवश्यकता के समय शक्ति इसी भंडार से खर्च होती है लेकिन यदि श्रम से जी चुराकर आलसी स्वभाव बना लिया गया है और अतिरिक्त शकर बच गई तो वह चर्बी के रूप में शरीर में अपनी परतें जमा करती चली जाती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

शरीर में शकर की मात्रा बढ़ने लगे तो रोगी को हमेशा भूख जैसी पेट की जलन महसूस होगी। प्यास अधिक लगेगी। बार-बार और जल्दी-जल्दी पेशाब जाना पड़ेगा। स्नायुओं और संधियों में दर्द, कमजोरी, वजन में कमी, जहाँ तहाँ—फोड़े या सूजन की शिकायत दिखाई पड़ेगी।

भोजन में रहने वाली शर्करा तथा स्टार्च दोनों ही पेट में पहुँचकर ग्लूकोज, शर्करा के रूप में बदल जाते हैं। उससे शरीर को गर्मी, शक्ति और पोषण प्राप्त होता है। शर्करा रक्त में सम्मिश्रित होकर यह कार्य करती है और उसका कुछ भाग 'ग्लाइकोजन' नामक स्टार्च के रूप में जमा हो जाता है। किसी विशेष उछल-कूद या आकस्मिक विपत्ति का सामना करने के लिये जब अतिरिक्त शक्ति खर्च करनी पड़ती है तो उसकी आवश्यकता इसी भण्डार से होती है। जिगर की कोशिकायें संग्रहीत ग्लाइकोजन को ग्लूकोज, शर्करा में बदलकर रक्त में सम्मिलित होने के लिये भेज देती हैं और उसमें अतिरिक्त शक्ति खर्च की व्यवस्था बन जाती है।

मधुमेह के मरीजों के रक्त तथा मूत्र में शर्करा अनावश्यक मात्रा में भरी रहती है, पर शरीर को पोषण के लिये आवश्यक शर्करा नहीं मिलती और वह दिन-दिन दुबला होता जाता है। इसका कारण पेट की एक छोटी सी ग्रन्थि अग्न्याशय में गड़बड़ी उत्पन्न हो जाना है। आमाशय के पीछे दाईं ओर वह एक गुलाबी ग्रन्थि है। इसमें भोजन पचाने के लिये काम आने वाले 'एन्जाइम' नामक रासायनिक पदार्थ बनते हैं। इनमें से लाइपेज एन्जाइम चर्बी को, एमाइलोप्सन स्टार्च को और ट्रिप्सिन प्रोटीन को पचाता है। यह एन्जाइम जब समुचित मात्रा में नहीं बनते तो पाचन-तन्त्र द्वारा वह काम नहीं होता जिसके आधार पर शर्करा को शरीर पोषण के उपयुक्त बनने को अवसर मिल जाता। बिना पची शर्करा को गुर्दे यथावत् छान नहीं पाते और वह रक्त तथा पेशाब में अनावश्यक रूप से मिल जाती है।

जननेन्द्रिय के ऊपर पड़ने वाला अवांछनीय दबाव अनेक रोगों को जन्म देता है। स्त्रियों के कोमल अंग पुरुषों के अनाचार से अधिक उत्पीड़ित किये जाते हैं और वे अबलायें अनेकों यौन रोगों, मूत्र रोगों तथा पेडू, कमर की व्यथाओं से कराहती रहती हैं। इस अनाचार का प्रभाव गुर्दे पर पड़ता है और वे पथरी सरीखी कई बीमारियों से ग्रसित हो जाती हैं। भोजन की गरिष्ठता, उत्तेजकता और पानी पीने में कंजूसी भी गुर्दों की सामान्य स्थिति को लड़खड़ा देती है।

पथरी, मूत्राशय, गुर्दे, जिगर, पित्ताशय तथा यूरेटर मूत्र वाहिनी नलियों में पाई जाती है। पथरियाँ अक्सर गोल, अण्डाकार या लम्बाकार पाई जाती हैं। दो-तीन पथरी पास-पास हों तो उनके तल चपटे हो जाते हैं। मूत्रवाहक नली में बनने वाली पथरी लम्बी होती हैं, वे जिस अवयव में ढलती हैं उसके साँचे के अनुरूप अपनी शक्ल बना लेती हैं। मूत्राशय या पित्ताशय के पत्थर गोल होते हैं। गुर्दे के अन्दर बनने वाले चपटे होते हैं पर पीछे उन्हें जिन परिस्थितियों में रहना पड़ता है, उसी की आकृति के ढल जाते हैं। कुछ तो बारहसिंगों के सींगों के आकार तक के देखे गये हैं, जिनका बिना ऑपरेशन के बाहर निकाला जाना किसी प्रकार संभव ही नहीं हो सकता। यह पत्थर सर्वदा चिकने ही नहीं होते वरन् खुरदरे, दानेदार और काँटेदार भी पाये जाते हैं, उनकी चुभन से दर्द होता है और खून निकलने लगता है।

मूत्र नलियों में वे कम संख्या में होते हैं अक्सर दो-तीन। पित्ताशय में उनकी संख्या दर्जनों और कभी-कभी तो सैंकड़ों तक देखी गई है। उनके आकार और कड़ेपन को देखने से प्रतीत होता है कि वे भिन्न-भिन्न समयों पर भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में और भिन्न-भिन्न कारणों से बने हैं।

पथरी आखिर है क्या ? और किस चीज से बनती है। इसका विश्लेषण करने पर प्रतीत होता है कि यह शरीर के ही ऐसे मृत खंड हैं जो मल प्रवाह प्रक्रिया के साथ बाहर निकलने की अपेक्षा किसी कारणवश भीतर ही रुककर रह गये। यह मृत जीवाणुओं का केन्द्र आरम्भ में छोटा-सा होता है पर पीछे उसके इर्द-गिर्द कैल्शियम-फॉस्फेट आदि जमा होने लगते हैं और उनका आकार बढ़ता चला जाता है। पता तब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

चलता है जब वे दर्द करने लगते हैं। गुर्दे की पथरी में मूत्र-प्रक्रिया के गड़बड़ा जाने के अतिरिक्त एक कारण पैराथायराइड ग्रन्थि का विकारग्रस्त होना भी है। उसके कारण जब पेशाब बनने, छनने या निकलने में रुकावट होती है तो तेज दर्द अनुभव होता है। गुर्दे की पथरी का कण असह्य दर्द उत्पन्न करता है। कमर, पेट का आगे का भाग तथा मूत्र नली में विकट वेदना होती है, जी मिचलाता है और उल्टी आती है। प्रकृति पेशाब को बाहर निकालना चाहती है और पथरी उसमें रुकावट डालती है इस खींच-घसीट में अक्सर रक्त नलिकायें फट जाती हैं और पेशाब के साथ खून आने लगता है। बूँद-बूँद पेशाब आता है—जलन होती है और बार-बार पेशाब जाने की इच्छा बनी रहती है। यदि पथरी के कारण भीतर जख्म बन जाये और सूजन रहने लगे तो बुखार भी आने लग सकता है और उसका टेम्प्रेचर १०३ से १०४ तक हो सकता है।

यदि यह क्रम बहुत दिन चलता रहे तो गुर्दे गलने लगेंगे पर शरीर पर सूजन चढ़ आवेगी।

प्रकृति इन पत्थरों को स्वयं बाहर निकालती रहती है। यदि पानी पीने में कंजूसी नहीं की जाती तो वे छोटी होने की स्थिति में सहज ही बहकर निकल जाते हैं। जब दर्द होता है तब तो प्रकृति उन्हें बलपूर्वक पकड़कर बाहर धकेलने का विशेष प्रयत्न कर रही होती है। यदि बहुत बड़े पत्थर नहीं हैं और शरीर की जीवनी शक्ति बहुत निर्बल नहीं हो गई है, तो बहुत बार वे इस दर्द के दौरान ही निकल जाते हैं। यह मान बैठना ठीक नहीं कि पथरी बिना ऑपरेशन के अच्छी हो ही नहीं सकती, अक्सर प्रत्येक बड़े दौरे के बाद बहुत से पत्थर खुद ही निकल जाते हैं। दर्द बन्द होने का मतलब ही यह है कि उस बड़ी अड़चन को या तो बाहर निकाल दिया गया या धकेलकर रास्ते से इधर-उधर खिसका दिया गया है।

स्मरण रखा जाना चाहिये बीमारियाँ अकारण नहीं आतीं। वे निमन्त्रण देने, अनुरोध करने और आने-जाने की पेशगी खर्चा जमा करने पर भी बड़े नाज नखरे के साथ आती हैं और तभी तक ठहरती है जब तक उनके आवास-निवास की समुचित व्यवस्था बनी रहती है। यदि उन्हें विदा करना हो तो अपनी रीति-नीति बदलनी चाहिये। आहार-विहार की विधि व्यवस्था में परिवर्तन करना चाहिये। वे अनायास ही बिना दवादारू के ही विदा हो जायेंगी।

जड़ी-बूटी विज्ञान का नये सिरे से अनुसन्धान

अन्न, शाक और फल आहार के प्रमुख अंग हैं। आहार से ही रक्त-माँस बनता है। उसी के सहारे पुरुषार्थ करना और जीवित रहना बन पड़ता है। अस्तु, आहार की अनिवार्यता और महत्ता सभी समझते हैं।

इसी शृंखला में एक कड़ी जड़ी-बूटियों की और जुड़ती है। परमेश्वर की अनेकानेक महती अनुकम्पाओं में से एक यह भी है कि रोगों के निवारण और सामर्थ्य के अभिवर्धन हेतु बहुमूल्य जड़ी-बूटियाँ भी जहाँ-तहाँ उगती हैं। उनके आधार पर मनुष्य अपनी आरोग्य सम्बन्धी समस्याओं का समाधान सहज ही कर सकता है। खनिज सम्पदा का जीवन क्रम में कितना महत्त्व है, यह सभी जानते हैं। धातुयें, रसायनें, कोयला, तेल आदि अनेक बहुमूल्य वस्तुयें भूगर्भ से मिलती हैं। वे न हों तो कितनी कठिनाई का सामना करना पड़े। इसे सभी जानते हैं। ठीक यही बात वनौषधियों के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है।

सामान्य वनस्पतियाँ घास-चारे के रूप में पशुओं का और अन्न-शाक के रूप में मनुष्यों का जीवन चलाती हैं। इसलिये उन्हें वाग्भट्ट कहा गया है। इससे एक कदम आगे बढ़कर जड़ी-बूटियों की बात सामने आती है। खदानों में साधारणतया पत्थर, कोयले ही निकलते हैं, पर कहीं-कहीं उन्हीं में बहुमूल्य हीरा-पन्ना जैसे रत्न भी निकल आते हैं। यही बात वनस्पतियों के सुविस्तृत क्षेत्र में जड़ी-बूटियों के सम्बन्ध में भी कही जा सकती है। वे अनेकानेक शारीरिक मानसिक रोगों के निवारण में पूरी तरह समर्थ हैं। इतना ही नहीं, उनके सहारे शारीरिक बलिष्ठता, मानसिक प्रखरता भी उपलब्ध की जा सकती है। दीर्घायुष्य का लाभ मिल सकता है। उनके सहारे आत्मिक प्रगति का सुयोग भी बनता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

महर्षि चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट जैसे दिव्यदर्शी ऋषियों ने अथक् परिश्रम करके समस्त धरातल को खोजा और यह ढूँढ़ निकाला था कि किन वनौषधियों में क्या विशेष गुण हैं और उनसे मनुष्य का किस प्रकार क्या हितसाधन हो सकता है ? अपने अनुसंधान निष्कर्ष एवं अनुभव का सार उन्होंने आयुर्वेद ग्रन्थों में विस्तारपूर्वक लिखा है। यह ऐसा विज्ञान है कि यदि उसे समझाया और अपनाया जा सके तो स्वस्थता को अक्षुण्ण बनाये रखने का मार्ग अति सरल हो सकता है। इनके सहारे बलिष्ठ रहकर दीर्घायुष्य का लाभ उठाया जा सकता है।

इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिये कि इन दिनों एलोपैथी द्वारा प्रतिपादित मारक औषधियों का प्रचलन चल पड़ा है। रोगों का कारण विषाणुओं को माना और उन्हें मारने के लिये एण्टीबायोटिक्स के द्वारा शरसंधान किया जाता है। जो पक्ष एलौपेथी के औचित्य की परिधि में आते हैं, जहाँ कहीं सर्जरी अनिवार्य है, ऐसे अपवादों को छोड़कर उसके स्थान पर वनौषधि विज्ञान को प्रश्रय दिया जाये तो इसे दूरदर्शी विवेकशीलता कहा जायेगा।

आहार में से चटोरेपन हटाने और अभक्ष्य से मुँह मोड़ने की आवश्यकता समझी जानी चाहिये। शाकाहार का महत्त्व समझना चाहिये, साथ ही स्वास्थ्य समस्याओं के समाधान के लिये जड़ी-बूटियों का आश्रय लेना चाहिये। यही वह अवलम्बन है, जिसे पूर्वजों ने अपनाया था। वे निरोग, समर्थ, और दीर्घजीवी रहते थे। इसका कारण उनका संयमी जीवन था। उसी दूरदर्शिता की एक कड़ी यह भी है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी व्यवधानों का निराकरण वनौषधियों के सहारे किया जाय। इस आधार पर रक्षक जीवकोषों को बिना किसी प्रकार की हानि पहुँचाये रोगों को निरस्त किया जा सकता है। जड़ी-बूटियों की मुख्य विशेषता यह है कि वे जीवनी - शक्ति बढ़ाती हैं। उस बढ़ी हुई समर्थता के सामने विषाणु टिकते नहीं और सहज ही खदेड़ दिये जाते हैं। इस आधार पर बढ़ाई गई जीवनी-शक्ति भविष्य के लिये भी आरोग्य रक्षा की किलेबन्दी सुदृढ़ करती है। फलतः चिकित्सा के साथ-साथ समर्थता अभिवर्धन भी बन पड़ता है। जड़ी-बूटियाँ जीवनी-शक्ति बढ़ती हैं। यदि उन्हें शास्त्रीय अनुसंधानों, प्रतिपादनों के आधार पर अपनाया जाये तो गौदुग्ध की तरह वे हित साधन ही करती हैं। अनिष्ट की सम्भावना उनमें है नहीं। कोई जान-बूझकर विष निगले तो बात दूसरी है।

जड़ी-बूटियों में से कुछ ऐसी महत्त्वपूर्ण होती हैं, जिन्हें संजीवनी कहा जा सके। लक्ष्मण जी की मेघनाद के शक्तिबाण से अर्धमृत जैसी स्थिति हो गई थी। स्थिति की गम्भीरता देख कर रामचन्द्र जी विलाप करने लगे थे। सुषेण वैद्य को बुलाया गया। उनने हिमालय से एक दिव्य बूटी मँगाने को कहा। हनुमान लाये और उपचार से लक्ष्मण जी पुनः स्वस्थ हो गये। ऐसे ही अन्य प्रसंग हैं—वयोवृद्ध च्यवन ऋषि जर्जर शरीर थे। दुर्भाग्यवश उनकी आँखें भी चली गईं। उपचार के लिये अश्विनीकुमार वैद्य आये और उनने जड़ी-बूटी उपचार किया। फलतः उनकी नेत्र ज्योति ही नहीं जवानी भी लौट आई। उस योग का नुस्खा तो कहीं उपलब्ध नहीं, पर किम्बदन्ती के आधार पर उसी घटना का बखान करते हुये च्यवनप्राशावलेह अभी भी बाजारों में बिकता है।

कल्प चिकित्सा के नाम से आयुर्वेद में एक विशिष्ट उपचार पद्धति का वर्णन है। राजा ययाति जैसे वयोवृद्धों को उसी आधार पर तरुण बनाया गया था। ऋषियों के आश्चर्यजनक लम्बे जीवन का वर्णन मिलता है। इनमें उनकी योगसाधना तो प्रधान थी ही, दिव्य जड़ी-बूटियों का उपयोग भी सम्मिलित था।

सर्प और नेवले की लड़ाई के सम्बन्ध में कहा जाता है, कि सर्पदंश से आहत होने पर नेवला एक विशेष जड़ी को खाने दौड़ता है और उससे नई शक्ति पाकर साँप पर नया आक्रमण करता है। नेवले की जीत का कारण सर्प की तुलना में उसकी समर्थता नहीं, वरन् औषधिभिज्ञता ही चमत्कार दिखाती है।

इन दिनों जड़ी-बूटी का महत्त्व, उपयोग ही नहीं ज्ञान तक आँख से ओझल होता चला जा रहा है। एक जैसी शक्ल वाली वनस्पतियों को किसी के नाम पर किसी को उखाड़ा, बेचा और खरीदा जाता है। पंसारियों की दुकानों पर वे

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वर्षों पुरानी रखी रहती हैं और पहचान सही न होने से एक के स्थान पर दूसरी थमा दी जाती हैं। वनस्पतियाँ एक वर्ष में गुणहीन हो जाती हैं। होना यह चाहिये कि अवधि समाप्त होने पर गुणहीन हुई वनौषधियों को नष्ट कर दिया जाये। अंग्रेजी दवाइयों में यह ईमानदारी अभी भी पाई जाती है कि अवधि समाप्त होने पर इन्हें फेंक दिया जाता है। पर जड़ी-बूटियाँ तो बीस-तीस वर्ष तक भी यथावत् बिकती रहती हैं। गुणहीन होने पर उन्हें फेंक देने की अभी तक कहीं भी व्यवस्था नहीं हो सकी। यही कारण है कि उनका लाभ वैसा नहीं मिलता जैसा कि मिलना चाहिये था।

आवश्यकता यह समझी गई कि जड़ी-बूटी विज्ञान को पुनर्जीवित किया जाये। आयुर्वेद पाँचवा वेद है। इसे अथर्ववेद का व्याख्या विवेचन कहा जाता है। वेदों के उद्धार-प्रयास का सर्वप्रथम यहीं से आरम्भ होना चाहिये। आयुर्वेद में मात्र जड़ी-बूटियों का उपयोग, उपचार है। रस-भस्मों का प्रचलन तो बाद का भी है और बाहर से आया हुआ भी।

देव संस्कृति की पुरातन परम्पराओं को नवजीवन प्रदान करने के सन्दर्भ में शान्तिकुंज द्वारा महत्त्वपूर्ण सभी जड़ी-बूटियों का शोधकार्य नये सिरे से प्रारम्भ किया गया है। इसके लिये आश्रम की भूमि में दुर्लभ वनौषधियाँ दूर-दूर से, विशेषतया हिमालय क्षेत्र से खोज-खोजकर लाई और लगाई गई हैं। इन सभी का रासायनिक विश्लेषण करने के लिये एक सर्वांगपूर्ण प्रयोगशाला बनाई गई है। जिससे हर जड़ी-बूटी के असली-नकली होने का, उसमें रहने वाले पदार्थों तथा गुणों का वर्गीकरण-विश्लेषण हो सके। इस आधार पर यह सम्भव हुआ है कि वैज्ञानिक क्षेत्रों को भी जड़ी-बूटियों की गुण-गरिमा और प्रभाव क्षमता से परिचित-प्रभावित किये जाने में मदद मिली है।

इन प्रयोगों के आधार पर आशा की गयी है कि आयुर्वेद को पुनः विश्वव्यापी मान्यता मिलेगी। विज्ञान की परीक्षण कसौटी पर वह खरा उतरेगा। चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट आदि ऋषियों के महान प्रयास पर छाये हुये कुहासे को हटाने वाला नया प्रभात उदय होगा।

आयुर्वेद का पुनर्जीवन हो रहा है

चिकित्सा का मूलभूत प्रयोजन तात्कालिक कष्ट निवारण ही नहीं, वरन् रोग के मूल कारण को खोजना और उसका निराकरण करना है। प्राकृतिक चिकित्सा विधि तथा आयुर्वेद का प्रयास इसी दिशा में चलता है। संसार के अन्यान्य जीव-जन्तु यदा-कदा ही अस्वस्थ होते हैं। वे प्रकृति की रोग निवारक शक्ति की सहायता से अपना कष्ट निवारण कर लेते हैं। मनुष्य के लिये यह राजमार्ग खुला हुआ है जिसका अधिकाधिक समावेश भारतीय एवं अन्यान्य प्राचीन आयुर्विज्ञान में किया गया है।

चेतना जिस अवधि तक शरीर के साथ सम्बन्ध बनाये रखती है, उस अवधि को आयु कहते हैं। इसे स्वस्थ, स्थिर तथा निरोग बनाये रखने के लिये आयुर्वेद का जन्म हुआ था। इसका एक उद्देश्य आयु के हित के साथ जुड़ा हुआ है और दूसरा निदान तथा रोगों के शमन से है।

चीनी आयुर्विज्ञान ईसा से ३०० वर्ष पूर्व का है, जबकि भारत के आयुर्वेद का इतिहास इससे भी पुराना है। सबसे प्राचीन शल्य चिकित्सक सुश्रत थे जो उन दिनों प्रचलित सामान्य उपकरणों की सहायता से बारीक बाल को भी विभक्त करने में सफल रहे थे। गत शताब्दी के कुछ अंग्रेज अधिकारियों ने आयुर्वेद की शरण ली थी। ऐसा वृत्तान्त उनकी डायरियों के पन्नों से प्राप्त हुआ है, जिसे पढ़ने पर ज्ञात हुआ है कि भारतीय जलवायु में एलोपैथी दवाओं से लाभ न पाने पर उन्हें आयुर्वेद से राहत मिली थी, तभी तो उसकी भूरि-भूरि प्रशंसा आयुर्वेद ने की है। आज पश्चिम वालों का विश्वास जगा है कि भारतीय आयुर्वेद में अमृतत्व कहीं छिपा पड़ा है जिसे जिज्ञासापूर्वक खोज निकालने पर वे तुले हुये हैं। पिछले दिनों अमेरिका के एक विद्यार्थी ने पूना आयुर्वेद कॉलेज से आयुर्वेद की उपाधि ली है। प्रथम श्रेणी से प्रथम स्थान प्राप्त इस प्रतिभाशाली

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विद्यार्थी ने आयुर्वेद को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने की ठान ठान ली है।

"हीलिंग एण्ड कान्क्वेस्ट ऑफ पेन" नामक पुस्तक में लेखक डॉ० जे० फील लिखते हैं कि वर्तमान एलोपैथी पद्धति एक प्रयोग मात्र है। इसमें वैज्ञानिक अंधविश्वास की प्रधानता है। उच्च जीवाणु निरोधी हवा की प्रतिक्रिया से रोगी अनभिज्ञ रहता है और कभी-कभार भीषण यातना सहता है। दूसरी ओर इनके अधिक प्रयोग से रोगाणुओं की सहनशीलता ही बढ़ी है। वे विनष्ट तो होते ही हैं, संगदोष से बेचारे लाभकारी जीवाणु भी प्रभावित होते हैं। आरोग्य रक्षा जिन जीवाणुओं पर आधारित है, वे यदि मारक औषधियों द्वारा धराशायी कर दिये जायँ तो उसके फलस्वरूप एक नया संकट यह खड़ा होता है कि व्यक्ति की रोग-निरोधक क्षमता घटती जाती है। किसी भी बीमारी को आक्रमण करने की खुली छूट मिल जाती है। कभी-कभी उन्हें मामूली सर्दी-गर्मी ऋतु प्रभाव असह्य होते हैं और आये दिन लू लगने, जुकाम होने जैसी अनेकानेक शिकायतों से त्रस्त होते पाये जाते हैं।

डॉ० मेलविन कीथ की पुस्तक "नरक जाने का सीधा रास्ता" में प्रमाणों सहित इस सम्भावना का प्रतिपादन किया गया है कि एलोपैथिक दवाओं के अन्धाधुन्ध उपयोग से पीढ़ी-दर-पीढ़ी व्यक्ति अधिक अविकसित, पंगु एवं विकृत मस्तिष्क युक्त सन्तानें पैदा करते चले जायेंगे। इन गम्भीर दुष्परिणामों से ब्रिटिश मेडिकल एसोसियेशन ने चिन्ता व्यक्त की है। डॉ० हेचिंग्स ने तो झल्लाकर यहाँ तक कह डाला है—"नित नये-नये नामों से निकलने वाली इन अवांछनीय दवाओं को रोकने के लिये क्या कुछ नहीं किया जा सकता ?"

विकल्प के रूप में हमारे समक्ष एक ऐसा जीवन-दर्शन आता है, जिसमें प्राकृतिक आहार-विहार, रोगों के प्रति परिष्कृत दृष्टिकोण एवं औषधीय पौधों के रूप में सब ओर उपलब्ध दिव्य जड़ी-बूटियों की प्रधानता हो। भारत जैसी विशाल जनसंख्या वाले देश के लिये स्वास्थ्य की सुरक्षा और रोगों से बचाव के लिये महँगी चिकित्सा पद्धति उपयोगी नहीं है। पीपल, तुलसी जैसी दिव्य औषधियों की हमारे यहाँ पूजा की जाती रही है। इनकी रोग-निवारक क्षमता के अतिरिक्त और भी ऐसे गुण हैं जो मनुष्य के सर्वांगीण विकास में सहायक सिद्ध हो सकते हैं। जटामाँसी, पीली कन्नेर, सर्पगन्धा, गूगल, हरिद्रा, दारुहल्दी जैसी वनौषधियों के गुण-दोषों की विशद विवेचना आयुर्वेद में है। इनके सेवन द्वारा फलदायी परिणाम आज भी मिल रहे हैं। इन्हीं से उत्साहित शरीर औषधि अनुसंधान परिषद के निदेशक डॉ० पी० एम० वी० कुशक आश्वस्त हैं कि अब भारतीय जड़ी-बूटियों से ऐसी दवाओं के निर्माण में सहायता मिल सकने की संभावना है जो असाध्य रोगों को ठीक कर सकें।

चीन में व्यापक रूप से जड़ी-बूटियों के प्रयोग परीक्षण हुये हैं। वहाँ लगभग ५००० जड़ी-बूटियों को दवा के रूप में व्यवहृत किया गया है। वहाँ मलेरिया में 'चिंग हाओस' नामक दवा प्रयुक्त होती है जो वर्मवुड नामक जड़ी से विनिर्मित हुई। प्रयोग में यह क्लोरोक्वीन की अपेक्षा अधिक प्रभावी पायी गयी। इन जड़ी-बूटियों का उत्पादन राष्ट्रीय स्तर पर व्यापक करने के लिये वहाँ सभी कारगर उपाय अपनाये गये हैं। सड़कों की दोनों पटरियों पर वे ही वृक्ष आरोपित किये जाते हैं, जो चिकित्सा की दृष्टि से उपयोगी हों। इनसे व्याघ्र, चूर्ण, अवलेह विनिर्मित करने के लिये ग्रामीण स्वास्थ्य कर्मचारियों को शिक्षित किया जाता है। प्राप्त आँकड़ों के अनुसार १९७१ तक चीन सरकार तीन लाख स्वास्थ्यकर्त्ताओं को प्रशिक्षित करके गाँव-गाँव भेज चुकी है।

रूस का काकेशिया प्रदेश दीर्घजीवियों के लिये प्रसिद्ध है। वहाँ पर सहज रूप से उगी जड़ी-बूटियों की खोजबीन केन्द्रीय अनुसंधान संस्थान की औषधि प्रयोगशाला में हुई है। वहाँ की स्फूर्तिदायिनी जड़ी-बूटी सैक्लामेन के कन्द में सापोनिन होता है जो वहाँ वालों के लिये बहुत ही महत्त्वपूर्ण तत्व सिद्ध हुआ है। इस तत्व को डीओस्क्रिया फूल से भी वे पाते हैं, यह फूल काकेशिया में ढेरोंढेर खिलता है। वहीं के प्रो० द० चेवोतरयव ने अपने प्रयोग, परीक्षणों में जो पाया है उसे यों लिखा है—इस फूल से प्राप्त हुये सापोनिन का अब डिओस्पानिन नामक पदार्थ में प्रयोग किया जाता है, जिसके सेवन से शरीर

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

में शक्ति ही नहीं आती, थकान दूर होती है, नवस्फूर्ति आती है और स्मरण शक्ति नहीं गिरने पाती। इन्हीं गुणों के कारण यह शतायु लोगों द्वारा व्यवहृत पायी गयी है।" रूस में जड़ी-बूटियों द्वारा प्रदत्त सम्भावनाओं की कितनी लोकप्रियता है वह इस तथ्य से प्रतिपादित होती है कि राष्ट्रपति लियोनिद ब्रेझनेव को जब हृदयाघात पड़ा तब उनकी चिकित्सा के लिये सुनुम-ए-ए-मुखरीफन स्तावत नामक जड़ी-बूटी आवश्यक समझी गयी। यह बूटी आंध्र प्रदेश के एक विशेषज्ञ द्वारा पहचानी गयी और उन्हें उपचार हेतु भेजी गयी।

रूस की भाँति अन्यान्य देशों में भी वार्धक्य पर व्यापक शोध और प्रयोग-परीक्षण चल रहे हैं। उनका प्रयास इस दशा में है कि किस तरह मृत्यु को आगे खिसकाया जा सकता है। अपने देश में काया-कल्प एक ऐसी प्रक्रिया रही है जिसके बारे में चिकित्सकगण निरन्तर समुद्यत रहे हैं। उनका ध्यानाकर्षण हिमालय की तराई में दुर्लभ रूप से प्राप्त कायाकल्पी एवं अमर कण्टकी जैसे पौधों पर रहा है। मस्तिष्कीय शीतलता के लिये एवं स्मरण शक्ति को सतेज बनाये रखने के लिये शंखपुष्पी का प्रयोग व्यापक रूप से होता आया है। जिस भाँति हृदयाघात में 'मिल्टीरोइजा', खून के कैंसर में "सिफेलोटेक्सस" साँस अवरोध में "रियम टाकुटी कम" तथा "रेफेनस" का प्रयोग चीन वाले सफलतापूर्वक कर रहे हैं उसी प्रकार "कुमारिका" का प्रयोग कैंसर में क्या लाभदायी हो सकता है ? इसकी छानबीन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय का चिकित्सा संकाय प्रयासरत है। इतना ही नहीं, रतनजोत, सेल्सिया, मापिया, निकोटियाना आदि पौधों से भी यह उपचार ढूँढ़ा जा रहा है। इस दिशा में लखनऊ का केन्द्रीय भेषज अनुसंधान संस्थान भी ब्रह्मवर्चस् की तरह शोधरत है।

अपने चारों ओर उपलब्ध वनौषधियों के उपयोग को यदि बढ़ावा दिया जाये तो पीड़ित मानवता के लिये एक समग्र चिकित्सा प्रणाली सुलभ करायी जा सकती है।

इन उपलब्ध बूटियों में से कुछ तो प्रायः सभी जगह न्यूनाधिक रूप में पायी जाती हैं, उनमें से कुछ के नाम और गुण-उपयोग, शरीर और मन के रोगों में इस प्रकार हो सकता है।

शरीर रोग

(१) आमाशय रोगों में—मुलैठी, पुदीना, शंखपुष्पी (२) छोटी आँत के रोगों में—काला जीरा, दारू हल्दी, चित्रक (३) बड़ी आँत—कुटज, अम्लतास (४) यकृत—कुटकी, कालीमेघ (५) गुर्दे—पुनर्नवा, बला, वरुण (६) पुरुष यौन रोग—जावित्री (७) स्त्री यौन रोग—लोध्र, उलट कम्बल (८) श्वास—पिप्पली, भांरगी वासा (९) हृदयरोग—शंखपुष्पी, दमनक, बिल्व, तेजोबल। (१०) जोड़-संस्थान—गोखरू, रास्ना, हड़जोड़, (११) माँसपेशी नाड़ियाँ—अश्वगंधा, निर्गुण्डी (१२) रक्त शोधक—चिरायता, नागर मोथा (१३) अभावों की पूर्ति—आँवला, मण्डूकपर्णी ज्योतिष्मति (१४) त्वचा रोग—वाकुची अतिबला, कोकिलाक्ष चक्रमर्द (१५) हार्मोन सन्तुलन—कचनार, गुडमार।

मानसिक रोग

(१) उत्तेजना-आवेश—वच (२) मंद बुद्धि—ब्राह्मी (३) तनाव, अनिद्रा—सर्पगन्धा (४) शिथिलता—सप्तपर्णी (५) तनाव—तगर (६) विभ्रम—धमासा (७) स्नायुरोग—धब (८) भावुकता—समुद्रफल (९) अनुत्साह—पीपल (१०) नपुंसकता—क्षीरकाकोली (११) कामाधिक्य—जवा कुसुम।

इनके अतिरिक्त और भी अनेकों जड़ी-बूटियाँ हैं, जो स्थानीय जलवायु के अनुरूप उगाई जा सकती हैं। उनका गुण, विवेचन एवं उपयोग किसी आयुर्वेद ज्ञाता से जाना जा सकता है। क्षेत्र विशेष में उत्पन्न हुई वनस्पतियाँ वहाँ के निवासियों के लिये अन्न, फल, शाक की तरह ही उपयोगी पड़ती हैं। एक बार में एक औषधि लेने से वह अपना पूरा प्रभाव दिखाती है। एक साथ कइयों का सम्मिश्रण कर देने से उन सभी के स्वाभाविक गुण नष्ट हो जाते हैं और उसका प्रतिफल भी विचित्र हो जाता है, इसलिये जड़ी-बूटी उपचार में एक समय एक औषधि का प्रयोग-प्रचलन उपयुक्त है। चूर्ण बनाना हो तो पत्तियों-टहनियों का उपयोग करना चाहिये। क्वाथ बनाना हो तो जड़ तना, पत्ते, फूल, फल इन सभी का पंचांग बनाकर प्रयुक्त

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

किया जाना चाहिये। छोटी जड़ी-बूटियों की तरह बड़े औषधि वृक्ष भी होते हैं, हरड़, बहेड़ा, आँवला, अशोक अमलताश आदि पेड़ों से तो औषधि के अतिरिक्त भी अनेक लाभ मिलते हैं। इनसे शोभा-सुषमा बनती है, छाया भी मिलती है, और औषधियाँ भी प्राप्त होती हैं। अतः इनके लगाने, उगाने के सम्बन्ध में उनकी उपयोगिता, अनुपयोगिता का भी यदि ध्यान रखा जाये, तो सोने में सुगंध की उक्ति सहज ही चरितार्थ हो सकती है।

चमड़े के उपयोग से परहेज करें

जीव दया आदर्श का परिपालन करने वाले माँस नहीं खाते। भगवान ने मनुष्य को प्रकृतितः शाकाहारी बनाया है। फिर फल, दूध, मेवा जैसे पौष्टिक और स्वादिष्ट पदार्थों की भी कमी नहीं रहने दी है जो माँस की तुलना में अधिक निर्दोष, सुपाच्य एवं सस्ते भी हैं। कोई समय था जब पाश्चात्य शरीरशास्त्री प्रोटीन की अधिक मात्रा बताकर माँस की हिमायत और सिफारिश भी करते थे। पर अब दिन-दिन उनका उत्साह भी ठण्डा पड़ता जाता है और माँस के प्रोटीन को दुष्पाच्य एवं रोग कीटाणुओं की सम्भावना जन्य खतरे बताकर उसका विरोध करने और शाकाहार पर जोर देने लगे हैं।

यहाँ प्रसंग जीव दया का है। जो मनुष्य में ममता, स्नेह और करुणा के रूप में भरपूर मात्रा में दी है। उसे चरितार्थ करने पर ही सच्चे अर्थों में मनुष्य कहला सकता है। किसी प्राणी का वध करने में उसे कितना कष्ट होता होगा। इसे अपनी उँगली काटकर या शरीर में सुई चुभोकर देखा जा सकता है। फिर इतना चीत्कार भरा त्रास दूसरे प्राणियों को देने का निमित्त कारण बनना कितना अनुचित है। इसे कोई भी भावनाशील सहज अनुभव कर सकता है। भावनाशीलों को इस सन्दर्भ में अधिक विवेकशील होना चाहिये और दूसरों को वैसा ही दयालु बनाने का प्रयत्न करना चाहिये।

पशु - हत्या में माँस के अतिरित दूसरा प्रयोजन है, बढ़ता हुआ चमड़े का प्रयोग।

बढ़िया जूते इसी से बनते हैं। अटैची उसी की बहुतायत से बनती है। रोएदार चमड़े के कपड़े भी इसी प्रकार बनते हैं। धनी घरों की फैशनेबिल महिलायें अपने हैंडपर्स चमड़े के खरीदती हैं। यह खरीद एक प्रकार से माँस की बिक्री ही है। उससे पशु के माँस और चमड़े का दुहरा दाम मिलता है। फलतः कानून विरुद्ध होते हुये इस लाभदायक धन्धे में अनेकों लोग लगते हैं और कितने ही पीठ पीछे रहकर अपनी पूँजी इस कार्य में लगाते हैं। फलतः पशुबध के आँकड़े बढ़ते ही जाते हैं। जो लोग माँसाहार से परहेज करते हैं, उन्हें चमड़े का उपयोग करने से भी परहेज़ करना चाहिये। जो चीजें पहले मात्र चमड़े की ही बनती थीं वे अब रबड़ की--प्लास्टिक की बहुलता से बनने लगी हैं और चमड़े की तुलना में सस्ती भी होती हैं। बाटा कम्पनी के रबड़ के जूते, चप्पल मशहूर हैं। ऐसे और भी अनेक छोटे-बड़े निर्माता हैं जिनसे बाजार भरा रहता है फिर क्या कारण है कि हम उन सस्ती और हिंसारहित वस्तुओं का उपयोग न करें। मोटरों के पुराने टायरों से चप्पलें बनती हैं। कपड़े के जूते और प्लास्टिक के तले वाले भी बाजार में उपलब्ध हैं। फिर उन्हीं में से अपनी पसन्दगी की चीजें चुनकर क्यों न काम चलाया जाय।

कहने वाले यह भी कहते सुने गये हैं कि रबड़ या प्लास्टिक के जूतों से दिमाग गरम होता है, आँखें खराब होती हैं। ये बातें सर्वथा निरर्थक हैं। गायत्री तपोभूमि और शान्तिकुंज के सभी कार्यकर्त्ता चर्मरहित चप्पल पहनते हैं। न उनमें से किसी का दिमाग खराब हुआ है न आँखें और भी कितने ही लोग दार्मो में सस्ते होने के कारण इन्हें पहनते हैं, किसी को भी ऐसी शिकायत नहीं हुई कि इससे किसी प्रकार की स्वास्थ्य की हानि होती है।

अटैची बगैरह भी बढ़िया रेगजीन या दूसरे प्रकार की वस्तुओं से बनने लगे हैं। महिलाओं के लिये हैंडपर्स भी कितनी ही डिजायनों के कपड़े या प्लास्टिक के बनते हैं। सस्ते भी होते हैं। इसलिये विकल्प उपलब्ध होने से अब इस बात की मजबूरी नहीं रही कि चमड़े की बनी वस्तुयें खरीदनी ही पड़ेंगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मरे हुये पशुओं का माँस उपयोग में लाया जा सकता है पर उसे किसानों के चरस के लिये छोड़ देना चाहिये। वैसे ही पशुओं को स्वाभाविक मौत मरने का अवसर नहीं आता। उनमें से अधिकांश जीवित स्थिति में ही बूचर-खाने चले जाते हैं। चमड़े का परित्याग भी ऐसा प्रसंग है जिसे भावनाशीलों को जीव दया की दृष्टि से कार्यान्वित करना ही चाहिये।

मनोरंजन की आवश्यकता और स्तर

चौबीस घण्टे काम करने की न किसी में सामर्थ्य रहती है न शक्ति। परिस्थिति विशेष में यदा-कदा भले ही आठ घण्टे से अधिक श्रम किया जा सके, परन्तु रोज का क्रम इसी प्रकार का बनाने की चेष्टा की जाय तो अशक्तता, कमजोरी, रोग और दुर्बलता शीघ्र ही आ घेरती है और व्यक्ति पुनः लम्बे समय तक विश्राम के लिये बाध्य हो जाता है। अर्थात् अनवरत खर्च होने वाली शक्ति को उस अवधि में अर्जित करने के लिये प्रकृति द्वारा विवश कर दिया जाता है। शक्ति के अनुसार परिश्रम कर लेने के बाद व्यक्ति को विश्राम की आवश्यकता अनिवार्य रूप से पड़ती है।

विश्राम द्वारा शरीर तो अपनी खर्च हुई शक्ति को अर्जित कर लेता है। लेकिन शरीर के साथ-साथ मन को भी तो सक्रिय रहना पड़ता है। वैसी स्थिति में मानसिक शक्तियाँ भी खर्च होती हैं। उनके भी पुनरार्जन की आवश्यकता है। वे किस प्रकार अर्जित की जायँ। प्रायः सोते समय भी मन निष्क्रिय नहीं रहता है। व्यक्ति दिन भर जिन क्रिया-कलापों में व्यस्त रहा, रात को सोते हुये—विश्राम करते समय मन उसी धारा में क्रियाशील रहता है। न रहे तो भी मन कितनी ही आकांक्षायें, इच्छायें और संकल्प विकल्प करता रहता है। क्योंकि हम सोते समय तो शरीर को विश्राम की अवस्था में छोड़ देते हैं, पर मन के सम्बन्ध में चूक जाते हैं और मन उस समय भी व्यस्त रहता है। यही कारण है कि अधिक सोच-विचार करने वाले या चिन्ताओं में मग्न रहने वाले मानसिक दृष्टि से रुग्ण हो जाते हैं।

तो मन को भी विश्राम देने की आवश्यकता पड़ जाती है और उसी विश्राम की कला का नाम है, 'मनोरंजन'। जिसे आह्लाद, खुशी या हल्कापन लाना भी कहा जा सकता है। विश्राम काल में शरीर को शिथिल छोड़ना पड़ता है तथा मनोरंजन के समय मन ढीला हो जाता है। यद्यपि बिना मनोरंजन के भी मन को विश्राम में पहुँचाया जा सकता है, पर वह श्रम-साध्य है और उच्चस्तरीय योग, साधनाओं में रत रहने वाले लोगों के लिये ही सम्भव है। जन-सामान्य के लिये थके हुये मन को राहत पहुँचाने का काम मनोरंजन द्वारा ही सम्भव होता है और लोग थक जाने के बाद इसी कारण सिनेमा देखने, गीत-संगीत सुनने, हल्का-फुल्का साहित्य पढ़ने में अपना खाली समय लगाकर मन को बहलाते हैं।

व्यक्तित्व के सम्पूर्ण विकास के लिये मनोरंजन की आवश्यकता उसी प्रकार बतायी गयी है जिस प्रकार कि शरीर के लिये विश्राम की और इस आवश्यंकता को शिक्षा, स्वास्थ्य, सम्पर्क और उपयुक्त वातावरण की तरह ही शुद्ध और स्वस्थ रूप में पूरा करने का निर्देश दिया गया है। स्वस्थ मनोरंजन जहाँ व्यक्ति को नयी ताजगी देता है, जीवन में रस घोलता है और मनोभूमि में नयी शक्ति का संचार करता है, वहीं अस्वस्थ और अशुद्ध मनोरंजन उसे नीरस, कुण्ठित और पथभ्रष्ट बनाता है। स्वस्थ शरीर को भी अनुपयुक्त आहार-विहार जिस प्रकार लड़खड़ा देते हैं, उसी प्रकार अस्वस्थ मनोरंजन व्यक्ति को पथभ्रष्ट, कुमार्गगामी और दुर्व्यसनी बना देता है। स्वस्थ मनोरंजन जहाँ व्यक्ति में आगे बढ़ने की, कठिनाइयों से संघर्ष करने की, प्रतिकूलताओं से टक्कर, लोहा लेने की प्रेरणा देता है वहीं अशुद्ध मनोरंजन व्यक्ति में कायरता, बुजदिली, दोष-दुष्प्रवृत्तियों से लगाव और शौक-मौज के चस्के उत्पन्न करता है।

मनोरंजन की आवश्यकता उस समय और भी दृढ़ता के साथ अनुभव होने लगती है या उसका महत्त्व समझ में आने लगता है कि जबकि हम प्रत्येक व्यक्ति को इसके लिये

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लालायित देखते हैं। हर समय चेहरे पर मधुर मुस्कान लिये और खिल-खिलाकर हँसने वाले लोगों के सम्पर्क में आने की चाह तुरन्त उत्पन्न होती है। ताकि बिजली की सुचालक वस्तुओं की तरह उसमें विद्यमान आह्लाद का प्रवाह हमारे भीतर भी आ जाय। साधन सम्पन्न और धनवान, विभूतिवान व्यक्ति भी अपने महत्त्वपूर्ण कार्यों को एक तरफ छोड़कर खुले हृदय से हँसना या प्रफुल्लित होना चाहते हैं। वे लोग भी जिनके लिये पैसा जीवन से भी अधिक महत्त्वपूर्ण है, पैसा कमाना छोड़कर खुश होना चाहते हैं, क्यों ? स्पष्ट है कि मनोरंजन भूख, प्यास और निद्रा की तरह ही एक नैसर्गिक आवश्यकता है।

यह भी सत्य है कि दुनियाँ के महापुरुषों से लेकर सामान्य जनों तक जिनकी प्रवृत्तियाँ, विचार और कार्यक्षेत्र अलग-अलग रहते हैं और कोई भी चीज एक-दूसरे से नहीं मिलती, मनोरंजन के प्रति समान रूप से सजग रहते हैं। परिस्थितियाँ सभी के लिये अलग-अलग होते हुये भी प्रायः सभी व्यक्तियों में हास्य-विनोद और आमोद-प्रमोद की प्रवृत्ति समान रूप से विद्यमान रहती है।

मनोरंजन इतना आवश्यक है कि उसके बिना जीवन चल पाना कठिन ही नहीं, लगभग असम्भव-सा भी है, तो भी खेद है कि उसके स्तर की ओर हमारा कोई ध्यान नहीं रहता। गरीबी, अशिक्षा, संकीर्णता या कारण चाहे जो भी हो अधिकांश लोग मनोरंजन की आवश्यकता तो अनुभव करते हैं, पर उसके महत्त्व को नहीं समझते अथवा उसे हेय-स्तर का बनाये रखने में ही कोई भलाई दीखती है।

मनोरंजन के हेय और उत्कृष्ट स्तर के सम्बन्ध में कहा जा सकता है कि जो पशु-प्रवृत्तियाँ भड़कायें वह हेय और जो मानवीय गुणों के प्रति आस्था जगाये वह उत्कृष्ट। इस आधार पर उपलब्ध सभी मनोरंजन साधनों का विश्लेषण किया जा सकता है। आजकल उपयोग में लाये जाने वाले मनोरंजन साधनों में फिल्म और पुस्तकें प्रमुख हैं। खेद है कि इस ओर से हमें निराश ही होना पड़ेगा। फिल्में देखकर पशु-प्रवृत्तियों के शिकार हुये लोगों की कितनी घटनायें अखबारों में प्रकाशित हुआ करती हैं। साहित्य भी बहुत कुछ फिल्मों से प्रभावित हुआ। मानवीय गुणों के प्रति आस्था जागृत करने वाले उपन्यास, कहानियाँ, कवितायें बहुत कम दीखती हैं और सस्ती रोमाण्टिक पुस्तकें बड़ी मात्रा में छपकर धड़ल्ले से बिकती हैं।

लोग इन्हें इस कारण देखते हैं कि उन्हें मनोरंजन की आवश्यक खुराक मिलती रहे। परन्तु उसके प्रभाव को बारीक बातों का चयन करने की क्षमता जन-साधारण में नहीं होती। यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि व्यस्तता की अपेक्षा खाली समय में मन बड़ी गहराई से प्रभावित होता है। हम जब निश्चिन्त मुद्रा में अवकाश के समय कोई बात सुनते हैं तो देर तक वह स्मरण में बनी रहती है और बड़ी जल्दी में कहीं जा रहे हों तो कोई बात सुनकर भी वह बड़ी जल्दी विस्मृत हो जाती है। व्यस्त लोगों को अपने आस-पास क्या हो रहा है, इस बात का ध्यान नहीं रहता। सम्मोहन और कुछ नहीं, खाली मन में डाले गये संकेत ही हैं। विशेष उपचारों और प्रविधियों के कारण उनकी शक्ति बढ़ जाती है, यह बात और है। लेकिन मूल सिद्धान्त एक ही है–खाली मन में डाले गये संकेत और निर्देश। मनोरंजन भी उसी पद्धति से अपना प्रभाव डालता है और वह कथ्य को प्रेरणायें बनाकर प्रस्तुत करता है।

मनोरंजन का प्रभाव संस्कारों के रूप में भी पड़ता है और वे तत्काल यदि कोई प्रभाव नहीं दर्शाते तो कालान्तर में जब संस्कार दृढ़ हो जाते हैं तब अपना घातक असर पैदा करते हैं। अतः मनोरंजन को केवल विश्राम ही नहीं—मन को प्रभावित करने वाली एक कला के रूप में भी देखा जाना चाहिये और जो चीज कुरुचि जगाये, विकृतियाँ बढ़ाये, उनसे दूर रहना चाहिये।

एक स्वस्थ और परिष्कृत रूप यह भी है मनोरंजन का कि वह मन के साथ-साथ शरीर को भी लाभ पहुँचाये। इस दृष्टि से खेल-कूद, बालीबाल, कुश्ती, कबड्डी, क्रिकेट, तैरना, दौड़ लगाना आदि क्रीड़ाओं, कला अभ्यासों को भी मनोरंजन में सम्मिलित किया जा सकता है। मनोरंजन का इतना ही अर्थ है कि हम मन के खिंचे हुये तार थोड़े ढीले करें और जीवन वीणा को इस योग्य रहने दें कि पुनः उसका जब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

साज बजाना हो तब वह पहले की तरह ही चुस्त, सक्रिय और सतेज हो सके। हमें मनोरंजन के महत्त्व और स्तर को समझना चाहिये तथा उसे अस्वास्थ्यकर और हानिप्रद ढंग से प्रयोग में नहीं लेना चाहिये।

शृंगार-प्रसाधनों की अनुपयुक्तता

शृंगार-प्रसाधनों में कितने ही ऐसे हैं जो दैनिक उपयोग की वस्तुओं में सम्मिलित हो गये हैं। कभी इन्हें बड़े आदमियों के ढकोसले और विलासिता के चोंचले समझा जाता था, पर अब यह छूत देखा-देखी अमीरों की नकल करते हुये गरीबों को भी लग गई है। इतना ही नहीं वह दैनिक आवश्यकता की वस्तु समझी जाने लगी है। साथ ही उनके उपयोगी, लाभदायक होने की मान्यता भी बनती चली जा रही है।

स्त्रियाँ अपनी आत्महीनता की भावना का समाधान करने के लिये, अपनी सुन्दरता बढ़ी-चढ़ी दिखाने के लिये होठों की लाली, नाखूनों की पालिश, चेहरे पर पोतने के सफेद तथा लाल रंग, बालों में डालने के सुगन्धित तेल, आदि का उपयोग करती हैं और समझती हैं कि उनके कारण वे अधिक सुन्दर लगेंगी और अमीर समझी जायेंगी। इन वस्तुओं को बनाने वाले तथा विक्रेता ऐसे भी तो बताते रहते हैं जिससे इनके लाभदायक होने की बात खरीददार के दिमाग में बैठने लगे।

सच बात यह है कि उपरोक्त सभी लेप जिन रसायनों से बनते हैं उनमें त्वचा की स्वाभाविकता एवं कोमलता को चोट पहुँचाने का दोष होता है। इनका लगातार उपयोग करने पर त्वचा के छेद बन्द होने लगते हैं। भाप एवं पसीना बाहर निकलने में रुक जाता है। फलतः लेप वाले स्थानों की त्वचा, रूखी होने लगती है और काली पड़ जाती है। इनमें मिले हुये अनुपयुक्त रसायन पेट में, आँखों में, नाक में पहुँचते रहते हैं और वहाँ से आगे बढ़कर श्वाँस द्वारा मस्तिष्क, रक्त संचार, मुख तथा पेट को प्रभावित करते हैं। इस आधार होने वाली हानि तत्काल तो नहीं मालूम पड़ती पर कुछ समय बात वह प्रभाव कितने ही अवयवों में विजातीय द्रव्य इकट्ठा कर देता है और हानि उभरकर प्रकट होने लगती है।

सुगन्धित तेलों को लगाते रहने पर बालों की जड़ें कमजोर होती हैं। वे सफेद होने और झड़ने लगते हैं। इत्रों की तीक्ष्ण गन्ध मस्तिष्क को क्षति पहुँचाती है। जुकाम, अनिद्रा, सिरदर्द आदि का कारण बनती हैं। होम्योपैथी चिकित्सक अपना उपचार जहाँ भी करते है वहाँ तीव्र गन्ध का उपयोग करने को मना ही कर देते हैं। कारण कि उनका प्रभाव शरीर के भीतरी अवयवों पर, फेफड़े तथा रक्त संचार प्रक्रिया पर ऐसा बुरा होता है कि उस उपचार से होने वाले लाभ की सम्भावना ही चली जाती है।

अधिकांश क्रीमों में चर्बी का सम्मिश्रण रहता है। बिना चर्बी की क्रीम बाजार में तलाशने पर मुश्किल से ही कहीं मिलेगी। यही बात साबुनों के सम्बन्ध में भी है। बिना चर्बी का साबुन महँगा पड़ता और उतना चिकना, आकर्षक भी नहीं बनता। ऐसी दशा में साबुनों के उपयोग से स्वच्छता बढ़ने की बात एक भ्रम ही रह जाती है। यदि नहाने का साबुन आवश्यक समझा जाये तो उसे घर पर बना लेना चाहिये अथवा खद्दर भण्डार जैसे किसी प्रामाणिक संस्थान से खरीदना चाहिये जो चर्बी का उपयोग न होने की बात विश्वासपूर्वक कह सकें।

बालू, रेत, पीली मिट्टी, चिकनी, मुलतानी मिट्टी से हाथों को या शरीर की सफाई की जाये तो वह प्रचलित साबुनों की तुलना में कहीं अधिक उपयोगी रहेगी। बाल धोने के लिये शैम्पू खरीदते फिरने की अपेक्षा सूखे आँवले को पानी में पीसकर उससे सिर धोना कहीं अच्छा है। उससे बालों की जड़ें भी मजबूत होती हैं और बाल भी चिकने रहते हैं।

अच्छा हो, स्वास्थ्य को ध्यान में रखते हुये शृंगार प्रसाधनों की अनुपयुक्तता समझी जाये एवं इनके प्रचलन को आन्दोलन स्तर पर बन्द किया जाये।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सोने-चाँदी के जेवरों से मोह क्यों ?

आये दिन समाचार-पत्रों में उक्त आशय के समाचार प्रकाशित होते रहते हैं। अमुक स्टेशन पर गाड़ी में खिड़की के निकट बैठी हुई महिला के गले से बदमाश सोने की चेन खींच कर भाग गया। फलाँ नगर के फलाँ मार्ग पर महिला के गले का हार उड़ा लिया गया। कस्टम अधिकारियों ने अमुक बन्दरगाह पर दो लाख रुपये के स्वर्ण बिस्कुट बरामद किये। इन सबके पीछे एक ही कारण रहता है वह है हमारा सोने-चाँदी के आभूषणों के प्रति अनावश्यक मोह।

पुराने जमाने में ये आभूषण लोगों की हत्या के कारण बनते थे। राहजनी की वारदातें होती थीं। सुनसान जगह देखकर इक्के-दुक्के यात्रियों और उनके साथ की महिलाओं को लूट लिया जाता था। बच्चों के माता-पिता लाड़, प्यार जताने के लिये उनके गले में हँसलियाँ आदि गहने पहनाते थे, जिनके लोभ में कभी-कभी चोर उन्हें मारकर कुँए में फेंक देते थे और गहने उतार लेते थे। यह सब एकान्त देखकर किया जाता था। लेकिन आज तो महानगरों के व्यस्त बाजारों में दिन-दहाड़े, गुण्डे, बदमाश जेवर को उतार लेते हैं।

यह तो सोने-चाँदी के आभूषणों की एक हानि हुई। इनकी स्वास्थ्य पर कुप्रभाव से लेकर राष्ट्र के प्रति द्रोह करने तक की विडम्बनायें इनके साथ जुड़ी हुई हैं। इन्हें नजरअन्दाज करते हुये तो यही कहना पड़ेगा कि ये हमारे व्यक्तित्व को बढ़ाते नहीं मलीन ही करते हैं।

आर्थिक दृष्टि से सोचा जाये तो भी इस प्रवृत्ति का जो विकराल स्वरूप सामने आता है वह कम भयावह नहीं है।

उन दिनों जब बैंक वगैरह सुविधायें नहीं थीं। आड़े वक्त के लिये आभूषण बनवाकर रख लेना कुछ हद तक लोगों ने उचित समझा था और इसी कारण महिलाओं में विशेष रूप से आभूषणों का प्रचलन चल पड़ा था। विवाह के समय माता-पिता व नाते-रिश्ते वाले भी लड़की को जेवरों के रूप में उपहार देते थे जिससे कि उसके पास पर्याप्त स्त्री धन रहे और वह आड़े समय उनका सहारा ले सके। किन्तु अब समय बदल चुका है, उसका औचित्य कुछ भी नहीं रह गया है।

भारत जैसे गरीब देश में जहाँ के सामान्य आदमी के जीवनयापन की अनिवार्यतायें ही पूरी नहीं हो पातीं वहाँ गहने पहनने की बात निरी हृदयहीनता ही लगती है। दूसरी यह बात है कि भारतवर्ष में सोना व चाँदी नहीं के बराबर निकलता है। सोने की केवल एक खान जो मैसूर में है—कोलार। वह इतनी गहरी हो चली है कि बीच में तो बन्द ही हो गयी थी अब कुछ समय से पुनः चालू की है पर वह भी हमारी माँग का दस प्रतिशत भी पूरा नहीं कर पाती। ठीक यही हाल चाँदी का है। राजस्थान की जावर खान में जस्ते के साथ अल्प मात्रा में चाँदी निकलती है।

अपने इस शौक के लिये हमें विदेशों से सोना-चाँदी आयात करना पड़ता है। आवश्यकता जितना सोना चांदी हम मँगाने लग जाये तो देश का सारा व्यापारिक सन्तुलन ही बिगड़ जाये। अतः सरकार ने उस पर भारी ड्यूटी लगाकर इस आवक को निरुत्साहित करने का प्रयास किया है। किन्तु हमारी माँग ज्यों की त्यों है। उसे पूरी करने के लिये लोगों ने तस्करी अपना रखी है और हमारा यह गहने पहनने का शौक अनैतिकता बढ़ने का एक कारण बना हुआ है।

गहना बन जाने के बाद उसकी कीमत आधी हो जाती है। क्योंकि जो गहना खरीदा जाता है, उसमें पहले से टाँका व खोट तो मिली ही होती है ऊपर बनवाई के पैसे और देने पड़ते हैं। यदि वक्त जरूरत बेचने जाओ तो टाँका व खोट दोनों कटती है और छूट ऊपर से। इस प्रकार रुपया देकर तो जेवर बनाया जाता है। बेचने पर उसके पचास पैसे ही उठते हैं। पहनने से जो घिसता है उसका अन्दाज भी लगाया जाय तो पैंतीस-चालीस पैसे ही पल्ले पड़ते हैं।

यही धन यदि बैंक के बचत बैंक खाते में जमा करा दिया जाता तो उस पर प्रतिवर्ष दस प्रतिशत की दर से ब्याज भी मिलता और मूल धन ज्यों का त्यों सुरक्षित रहता। जब जी चाहे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तब वापस निकाला भी जा सकता था। साथ ही साथ यह धन राष्ट्रीय उद्योगों में नियोजित होता तथा देश की समृद्धि में काम आता।

जेवरों को हमारे समाज में प्रतिष्ठा व हैसियत का प्रतीक माना जाना हमारा सबसे बड़ा दुर्भाग्य है। कहीं शादी, ब्याह में जाना है या कहीं मेहमान बनकर जाना है तो जेवर पहनकर जाना महिलायें शान मानती हैं। जबकि इसमें शान जैसी कोई बात नहीं। हमारी आर्थिक समृद्धि तो यों ही लोगों को नजर आ जायेगी उसका प्रदर्शन करना क्या आवश्यक है। सच पूछा जाय तो घर की आर्थिक स्थिति तो डगमगा रही है लेकिन जेवर पहनकर यह दिखाया जाता है कि हम भी पैसे वाले—गहने वाले हैं।

यों तो जेवर को पहनने का रिवाज हमारे सारे देश में है। किन्तु राजस्थान, मध्य प्रदेश उत्तर प्रदेश, हरियाणा आदि प्रदेशों में उनका बहुत चलन है। राजस्थान की स्त्रियाँ तो पाँच-पाँच सेर तक चाँदी पहनती हैं। साधारण हैसियत के परिवार की एक महिला के पास भी सेर भर चाँदी के गहने तो होते ही हैं।

हर साल शादी, ब्याह के समय धड़ाधड़ चाँदी-सोने के जेवर खरीदे जाते हैं। समय के साथ अनैतिकता भी बढ़ी है। मनचाहा खोट मिलाया जाता है। यह जानते हुये भी लोग जेवर खरीदते हैं। लड़के वाला जिस प्रकार दहेज की माँग करता है वैसे ही लड़की वाले जेवरों की माँग किया करते हैं। धनवानों के पास तो पूँजी होती है सो वे रकम खरीद लेते हैं लेकिन उनकी देखा-देखी गरीब लोग भी उधार लेकर गहने खरीदते हैं। इसके लिये उन्हें अपने व्यवसाय में कमी करनी पड़ती है।

सिर पर कर्जा चल रहा है। खेत में डालने के लिये खाद के पैसे नहीं हैं। उत्तम बीज खरीदने के लिये रुपये नहीं हैं। धन्धे-व्यापार की बढ़ोत्तरी के लिये पूँजी का अभाव है लेकिन गहने चाहिये पहनने लिये। अनपढ़ व नासमझ स्त्रियाँ अपने पति की जान खाये रहती हैं गहनों के लिये-मेरे तो यह नहीं है—वह नहीं है—फलाँ ने तो देखो कैसी तगड़ी बनवाई है और अमुक की बहू ने तो सोने का लाकिट खरीदा है। उनकी यह देखा-देख की भक्ति बेचारे पति के लिये मुसीबत बन जाती है।

यदि जेवरों का बहिष्कार किया जाये और उनको न पहना जाय तो जिनके पास जेवर बनवाने के लिये धन नहीं है वे देख-देख कर ललचायें तो नहीं। समाज में जो विषमता फैली हुई है वह उजागर तो नहीं हो।

सोना और चाँदी प्रकृति प्रदत्त वस्तुयें हैं। यह घटाई-बढ़ाई नहीं जा सकती। धरती का पेट चीरकर जितना सोना चाँदी है सब निकाल लेने के बाद सोना, चाँदी, कहाँ से आयेगा ? पिछले दिनों सोने का दोहन कम हो जाने से अमेरिका जैसे देश की मुद्रा डॉलर को दो-दो बार संकट का सामना करना पड़ा।

सोना अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का आधार है। हमारी इस सोने-चाँदी के गहने पहनने की प्रवृत्ति के कारण हम अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में उस दम से खड़े नहीं रह सकते जिनके पास सोना है। जबकि हमारे पास वह है किन्तु गहनों के रूप में।

जिस देशों की सरकारों के पास पर्याप्त सोना-चाँदी होता है वे अपनी कागजी मुद्रा के पीछे उतना ही अथवा उसका आधा या कुछ प्रतिशत संचित कोष रखने के बाद मुद्रा छापते हैं। हमारे देश में भी पहले यही किया जाता था किन्तु अब तो एक निश्चित कोष जो रखा हुआ है, उसमें कुछ वृद्धि किये बिना ही मुद्रायें छापी जाती रही हैं। उसका परिणाम रुपये की कीमत घट जाने के रूप में सामने है यही महँगाई का एक मूल कारण भी है। यदि सोना, चाँदी, उपलब्ध होता तो हमारे देश में भी वह प्रणाली प्रयोग में लायी जाती रहती जिससे अनावश्यक मुद्रा प्रसार नहीं हो पाता।

इन आर्थिक हानियों के अतिरिक्त गहने पहनने से शरीर के अंगों की सफाई ठीक तरह नहीं हो सकती। उन्हें उठाये-उठाये फिरने में कितनी ही शारीरिक शक्ति यों ही नष्ट हो जाती है। लुटने व चोरी का भय तो बना ही रहता है। कभी-कभी जान पर भी आ बनती है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

गहने नारी की परतन्त्रता की निशानी हैं। पुरुष वर्ग उन पर अपने अधिकार जताने के लिये उन्हें बन्धनों में रखता था। बाद में वे स्वयमेव उनकी आदी हो गयीं और उन्हें भूषण मानने लगीं। किन्तु नारी के दया, ममता, करुणा, सहनशीलता, सृजनशीलता, स्नेह, सौजन्य, सहकारिता, परदुखकातरता के ये भूषण क्या कम हैं जो उसे इन निर्जीव चाँदी के टुकड़ों से अपने को सजाना पड़े। कोई भी विवेकशीला स्वाभिमानिनी नारी इसका अर्थ सहज ही लगा सकती है कि अपने को इन अलंकरणों से सजाकर वह पुरुष को आकर्षित करने वाली कठपुतली बन रही है।

देश में सोना नहीं के बराबर है, बाहर से तस्करों के द्वारा आता है। उसमें सर्राफ लोग टाँका व मनमानी खोट मिलाते हैं। यह एक अनैतिकता है। गहने पहनना प्रकारान्तर में अनैतिकता फैलाने का पापकर्म भी है।

इतनी सारी हानियों को देखते हुये हमारे समाज में जो यह सोने-चाँदी के गहने पहनने की अन्ध परम्परा चली आ रही है उसे मेटने के लिये सामूहिक प्रयास आवश्यक हैं।

भारत सरकार ने अपने अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार सन्तुलन व मुद्रा प्रसार का नियमन करने की दृष्टि से स्वर्ण नियन्त्रण विधान लागू किया जो हमारे लिये बहुत ही लाभकारी था। किन्तु उससे होने वाले लाभों को नजरअन्दाज न करते हुये स्वर्णाभूषण बनवाने काम गुपचुप रूप से चलता ही रहा। इससे तिहरा नुकसान हुआ, एक तो चोरी छिपे गहने बनवाने के कारण उनमें मिलावट किये जाने की सम्भावनायें व स्थितियाँ और भी व्यापक हो गयीं। इससे गहने बनवाने वालों को आर्थिक हानि उठानी पड़ी, दूसरे समाज में अनैतिकता का प्रसार हुआ और तीसरे सरकार को हानि हुई, तस्कर व्यापार बढ़ा।

सोने-चाँदी के जेवर पहने होने पर व्यक्ति में अपने सम्पन्न होने का गर्व तो उपजता ही है साथ-ही-साथ उसकी सुरक्षा की चिन्ता भी रहती है। जैसा कि इसके नाम से ही स्पष्ट है सोना। सोना पहन लेने या घर में रखे रहने पर ठीक से निश्चिन्त होकर नींद लेना दुष्कर हो जाता है। इस जंजाल से जितना दूर रहा जा सके उतना ही उत्तम है। बड़े-बड़े नगरों में चोरियों व अपराधों-की वारदातें बढ़ रही हैं। उनमें इन स्वर्णाभूषणों का होना भी एक कारण है। क्यों न इन विडम्बनाओं से मुक्ति पाकर सुख की नींद सोया जाये। इस प्रवृत्ति को मिटाने के लिये विवेकशील नागरिकों को सामूहिक प्रयास करने होंगे तभी हमारा समाज इससे मुक्त हो सकेगा।

माथे में सिंदूर भरना हानिकर

श्रृंगार प्रसाधनों में से अधिकांश ऐसे होते हैं जो चेहरे की चमक भले ही बढ़ा दें किन्तु त्वचा को तथा शरीर को अनेक प्रकार से हानियाँ ही पहुँचाते हैं। उनमें पड़ने वाले रंग, रसायन एवं सुगन्ध ऐसे होते हैं जो अन्ततः शरीर को क्षति ही पहुँचाते हैं। इनका उपयोग न करके घरेलू वस्तुओं में ही सफाई रखी जा सकती है। सुन्दरता तो स्वास्थ्य पर अवलम्बित है, यदि निरोग रहने के लिये आहार-विहार पर भोजन-व्यायाम, रहन-सहन तथा सफाई पर, समुचित ध्यान रखा जा सके तो स्वाभाविक सौन्दर्य बना रहेगा। फिर बाहर से लीप-पोत की जरूरत न पड़ेगी।

होठों की लाली और नाखून रंगने की पालिश उन स्थानों तक ही अपना प्रभाव सीमित नहीं रखती, वरन् आगे बढ़कर भोजन तथा पानी के सहारे पेट तक पहुँचती हैं और अपने साथ घुले हुये अनुपयुक्त रसायनों को भी पेट में, आँखों में, नाक में तथा अन्य मर्म स्थानों तक ले जाती है। उससे अन्ततः हानि ही होती है।

बढ़िया समझे जाने वाले साबुनों और क्रीमों में से अधिकांश में चर्बी का सम्मिश्रण होता है जिन्हें उस तरह की वस्तुओं के प्रयोग में आपत्ति है उनको अनजान में ही उनका सेवन करते रहना पड़ता है। अनजान में ही होती रहने वाली इस भूल के लिये उन्हें पश्चात्ताप भी करना पड़ता है।

अब इस सन्दर्भ में कुछ नये तथ्य प्रकाश में आये हैं कि शीशे का विशेष हानिकर प्रयोग भी श्रृंगार के नाम पर ही किया जाता है। सुहागिनों की माँग में जिस सिन्दूर का प्रयोग होता है वह उनके विवाहिता होने का साइन बोर्ड की तरह विज्ञापन तो करता है किन्तु बालों

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं मस्तिष्क को विशेष रूप से हानि पहुँचाता है।

वैज्ञानिक कथन के अनुसार, सीसा धातु की ५० मिलीग्राम मात्रा ही सहन कर सकता है। पर सिन्दूर लगाने वाली महिलाओं के बालों में उसकी ५०० मिलीग्राम तक की मात्रा बालों में ही पाई गई है। इससे बाल झड़ने, टूटने, छोटे पड़ने तथा जल्दी सफेद होने के रूप में प्रभावित होते हैं। रोमकूपों के साथ यह सीसा मस्तिष्क के भीतर तक जा पहुँचता है और अनिद्रा, सिरदर्द, विस्मरण, उदासी आदि कई तरह की व्यथायें पैदा करता है। रक्त के साथ मिलकर वह शरीर के अन्य भागों में भी पहुँचता है और यहाँ भी कुछ न कुछ उपद्रव खड़े करता है। महिलायें इस हानि से अपरिचित होने के कारण विवाह के नये-नये दिनों में इस प्रदर्शन को विशेष रूप से करती हैं। उन्हें समझाया जाना चाहिये कि इस विपत्ति से बचें। सुहाग-विज्ञापन के लिये किसी हल्के रंग की बिन्दी माथे पर लगा लेना ही पर्याप्त होना चाहिये।

आँखों में डालने के सुरमा में सीसा प्रधान होता है उससे आँखों की सुन्दरता तो बढ़ती मालूम पड़ती है और उसमें मिली हुई कपूर आदि की सुगन्ध भी लुभाती है, पर आँखों को उससे हानि ही हानि है। बच्चों की आँखों में सुरमा लगाना तो एक प्रकार से उनके साथ अत्याचार है। दृष्टि में कमी पड़ने तथा मोतिया उतर आने जैसी कई बीमारियों की इससे आशंका रहती है।

बर्तनों पर सीसे की कलई करा लेने से वे चमकने लगते हैं और खटाई आदि के खराब न होने की बात भी सोची जाती है। इसका कितना महत्त्व है इसे तो प्रयोक्ता ही जान सकते हैं पर इतना निश्चित है कि सीसे का अंश भोजन में सम्मिलित होता रहता है और उसकी थोड़ी मात्रा भी स्वास्थ्य को आघात पहुँचाती है।

चमक-दमक के नाम पर अपनाये गये श्रृंगार प्रसाधन अन्ततः प्रयोक्ता के लिये हानिकर ही होते हैं और उसका प्रभाव पीढ़ियों तक चलता है। सिर में बहुत सिन्दूर भरने वाली महिलाओं के दूध में भी वह विकार जा पहुँचता है जिससे उनके बच्चों के स्वास्थ्य को भी आघात लगता है।

मानव अंगों का घृणित व्यापार बन्द हो

आलू, मटर, टमाटर, गोभी आदि के बाजार में बिकने की बात तो अब तक देखी, सुनी जाती रही है। इसमें विचित्रता भी नहीं, यह सामान्य बात है, किन्तु जब मानवी अंग, अवयवों का क्रय-विक्रय होने लगे, तो इसे गम्भीर मामला माना जाना चाहिये, साथ ही अनैतिक और अमानवीय भी। दूसरे शब्दों में, यह कहा जा सकता है कि इस प्रक्रिया द्वारा एक वर्ग द्वारा पैसे के बल पर गरीबों का शोषण और उन्हें अपनी मौत मरने के लिये बाधित किया जा रहा है।

यहाँ कहने का आशय यह कदापि नहीं है कि किसी जरूरतमंद की सेवा-सहायता एवं अंगदान द्वारा जीवन रक्षा करना बुरी बात है। नैतिकता की सीमा के भीतर ऐसा करना अनुचित भी नहीं है, किन्तु सवाल यह है कि ऐसे कितने व्यक्ति हैं, जो स्वेच्छा से, परमार्थ परायणता के भाव से प्रेरित होकर ऐसा करना चाहते हैं। अधिकांश मामलों में ऐसे प्रकरणों में दाता की विवशता और कंगाली ही प्रकाश में आती है। बस यहीं से इस अमानवीय कृत्य की शुरूआत होती है। इससे पूर्व अंग-अवयवों का अभावग्रस्तों को दान वसीयतनामे के माध्यम से मृत्युपरान्त पूर्णतः परमार्थ की दृष्टि से किया जाता था जो निस्सन्देह नैतिक भी था और मानवीय भी। जो शरीर मृत्यु के बाद मिट्टी में मिल जाना है और सड़-गलकर नष्ट हो जाना है, उससे यदि किसी व्यक्ति की जीवन रक्षा हो जाय तो दिवंगत होने वाले को इसमें क्या आपत्ति हो सकती है। जीवन के अन्तिम क्षणों में उसका पवित्र कार्य उसे यह सन्तोष प्रदान करने के लिये काफी होता है कि जीते जी भले ही किसी की सेवा-सहायता न कर सका हो, पर मौत के बाद तो वह ऐसा कर ही सकेगा, दूसरे किसी मरणासन्न को जीवनदान देकर पुण्य-परमार्थ का भागी बनता है, सो अलग, किन्तु जब

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जीवित अवस्था में ही मानवी अंगों का व्यापार होने लगे, तो इसे दुर्भाग्य कहना चाहिये और आज के तथाकथित सभ्य समाज के सिर पर काले कलंक का टीका भी।

सर्वेक्षणों से ज्ञात हुआ है कि अपने देश के बड़े-बड़े शहरों के अस्पतालों में रिक्शा चालक, मजदूर, गरीब किसान, कुली जैसे निर्धन तबके के लोगों की लाइनें लगी रहती हैं। पूछने पर पता चलता है यह रक्तदाताओं की पंक्तियाँ हैं, जो अपनी छोटी कमाई के अतिरिक्त विभिन्न अस्पतालों में माह में अनेक-अनेक बार रक्तदान द्वारा अर्थोपार्जन करते और परिवार की गाड़ी किसी प्रकार खींचते-घिसटते जीवन गुजारते हैं। यह व्यापार यहीं तक सीमित होता, तो संतोष की साँस ली जा सकती थी, किन्तु जब व्यक्ति अपने वृक्क (किडनी), त्वचा के टुकड़े, आँख (कोर्निया), प्लासेण्टा ऊतक जैसे महत्त्वपूर्ण अंग-अवयवों को जीवित रहते ही आलू-गोभी की तरह बेचकर पैसा कमाने और अर्थोपार्जन का साधन मानने लगे, तो इसे क्या कहा जाये दुर्भाग्य ? दुर्विपाक ? अथवा उस समाज-व्यवस्था को दोष दिया जाय जिसने लोगों को अमीर-गरीब के दो खेमों में बाँट दिया।

सम्पन्न लोग तो पैसे के बल पर विलासिता के साधन जुटाते रहते हैं, वहीं दूसरी ओर गरीबों को अभावग्रस्तता की स्थिति में भली प्रकार एक जून का भोजन भी उपलब्ध नहीं हो पाता। ऐसी दशा में उनके पास दो ही विकल्प शेष रह जाते हैं या तो आत्महत्या कर लें अथवा जीने के लिये कोई ऐसा उपाय-उपचार अपनायें, जिससे अधिक नहीं, तो कम से कम मौलिक आवश्यकताओं की भलीभाँति पूर्ति होती रह सके। आज नौकरी पाना तो जमीन-आसमान के कुलाबे छानने की तरह है। मँहगाई सर चढ़ कर बोल रही है, जिसमें छोटी पूँजी से कोई वाणिज्य-व्यापार भी संभव नहीं। ऐसी स्थिति में जीवित अंग-अवयवों का विक्रय कर अपना जीवन-यापन करना उनके लिये अस्वाभाविक भी नहीं लगता। प्रति वर्ग इंच त्वचा के लिये उन्हें तीन सौ रुपये प्राप्त होते हैं। बड़े-बड़े शहरों में आज गुर्दे ५० हजार रुपये तथा आँख ८० हजार रुपये में बिकती हैं। इसके अतिरिक्त सर्वेक्षण के दौरान कई ऐसे व्यक्ति भी प्रकाश में आये हैं जो पैसों के लिये अपना एक हाथ, कान एवं यहाँ तक एक टाँग भी बेचने के इच्छुक थे। हों भी क्यों नहीं, क्यों इससे उन्हें इतना धन प्राप्त हो जाता है, जो उन्हीं के कथनानुसार तीन जन्मों में भी इतनी सम्पदा इकट्ठी करने की उनकी सामर्थ्य नहीं। ऐसी दशा में इस व्यवसाय का फूलना-फलना स्वाभाविक ही है।

एक अध्ययन के अनुसार सन् ८३ में ६० और सन् ८५ में ६०० से बढ़कर वृक्क (किडनी) व्यापार अब इतना बड़ा हो चुका है कि प्रति वर्ष २ हजार तक ऐसे जीवित वृक्क खरीदे-बेचे जाते हैं। इसी के साथ अन्य अंगों के क्रय-विक्रय में भी तेजी आयी है। वैसे तो यह व्यापार विभिन्न राज्यों के कलकत्ता, बम्बई, नड़ियाद, पुणे, मद्रास, बैंगलौर, जयपुर, मदुराई जैसे—सभी छोटे बड़े शहरों में चल रहा है, किन्तु महाराष्ट्र को इसका 'मक्का' कहा जाता है। तमिलनाडु का एक कस्बा है—विलिवक्कम। यहाँ यह धन्धा इतनी तेजी से चल पड़ा है कि लोगों ने इसका नाम बदलकर किडनीवक्कम—किडनीसोल्डम रख दिया है। इस प्रकार के व्यापार के लिये भारत विश्व भर में प्रसिद्ध है। किसी अन्य देश में ऐसा व्यापार चलता हो, इसकी कोई सूचना नहीं है। हाँ, विश्व स्वास्थ्य संगठन की एक रिपोर्ट के अनुसार होण्डुरास और ब्राजील से बच्चे इसी प्रयोजन के लिये दूसरे देशों को बेचे जाते हैं, पर अभी तक इसकी पुष्टि नहीं हो सकी है। भारत में इस अनौखे धन्धे का प्रारम्भ विदेशों से हुआ। आरम्भ में भारतीय विक्रेता अपने अंग विदेशों में जाकर एजेन्टों के माध्यम से बेचते थे, पर जब वहाँ ऐसे ऑपरेशनों पर पाबन्दी लगा दी गई तो अब ऐसे जरूरतमन्द लोग विदेशों से भारत की ओर आने लगे। सर्वेक्षण में देखा गया है कि खाड़ी देशों के निवासी वृक्क प्रत्यारोपण के लिये प्रायः बम्बई और सिंगापुर एवं थाइलैण्ड के निवासी मद्रास आया करते हैं।

ऐसी बात नहीं कि विदेशों में अंग-प्रत्यारोपण कार्य नहीं होता, पर भारत और उनमें मौलिक अन्तर यह है कि उनमें मृतकों से अंग

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्राप्त किये जाते हैं और रक्त बैंकों की तरह अन्य अंगों के लिये भी समुचित अंग बैंक स्थापित किये गये हैं। किन्तु भारत में अब तक ऐसी व्यवस्था नहीं हो सकी है। सन् ८० से पूर्व तक यहाँ भी अंग-प्रत्यारोपण के लिये अंग प्राप्ति का कार्य मृतकों एवं जीवित व्यक्तियों में सिर्फ रोगी के निकट सम्बन्धियों तक ही सीमित था, पर इसके बाद जब शक्तिशाली इम्यून प्रतिरोधी दवाओं का आविष्कार हुआ तो इनके प्रयोग से गैर सगे-सम्बन्धियों से प्राप्त अवयवों को रोगी के इम्यून सिस्टम द्वारा अस्वीकार करने की प्रवृत्ति पर भी अंकुश लगा पाने में सफलता प्राप्त कर ली गई। इस प्रकार दूसरे लोगों के भी अवयवों का सफलतापूर्वक प्रत्यारोपण अन्य लोगों में किया जाना सम्भव हो गया। बस यहीं से इस घृणित व्यापार की शुरूआत हुई। वैसे पैसे की दृष्टि से देखा जाय, तो रोगी अंग-क्रय से कोई आर्थिक लाभ में रहता हो ऐसी बात नहीं है, क्योंकि आँकड़े बताते हैं कि ५० हजार रुपया एक जीवित वृक्क को खरीदने में खर्च आता है। इसके अतिरिक्त ६० से ७० हजार ऑपरेशन का खर्चा। इसके बाद करीब तीन वर्ष तक ३ हजार प्रति माह के हिसाब से दवाओं का खर्चा। इस प्रकार कुल दो लाख से भी ऊपर का व्यय पूरी प्रक्रिया में आ जाता है। इतने रुपये में डायलिसिस जैसी मशीन से भी गुर्दे का काम लिया जा सकता है, फिर दूसरे व्यक्ति का जीवन खतरे में डालने का कोई औचित्य रह नहीं जाता और दाता की मृत्यु का दोष सिर पर ढोने के पाप से भी बचा जा सकता है, क्योंकि ऐसे आपरेशनों में लापरवाही के कारण कई बार अंग विक्रेताओं की मौत तक होती देखी गई है।

ऐसी दशा में प्रश्न उठता है कि उन निरीह मौतों और घृणित व्यापार के लिये दोषी कौन है ? डॉक्टर ? विकसित चिकित्सा विज्ञान ? अथवा पैसे के बल पर जीवन खरीदने वाले तथाकथित सम्पन्न व्यक्ति या दलाल ? आरोप चाहे जिसके सिर पर मढ़ दें, पर मूल कारण वहाँ से आरंभ होता है, जहाँ हम संवेदना पक्ष की उपेक्षा-अवहेलना कर निष्ठुरतापूर्वक निर्णय लेते हैं। तब मानवी अंग को निकालकर प्रत्यारोपण करना भी एक यान्त्रिक प्रक्रिया हो जाती है। विज्ञान के विकास को अभी कई मंजिलें पार करनी हैं। उसे तो प्रगति करनी चाहिये पर संवेदना की नकेल भी उसे पहननी होगी तभी यह घृणित व्यापार रुकेगा।

करुणा-भावसंवेदना के शुष्क हो जाने से आज समाज में एक शोषक-सम्पन्न तथा दूसरा शोषित-निर्धन-दुर्बल वर्ग पनपा है। सभ्यता का तकाजा यही है कि सम्पन्नता एवं बुद्धि कौशल के सहारे असहायों को और दुर्बल, विपन्न बनाने के बजाय उन्हें समर्थ-सशक्त आधार दिया जाये। एक सार्वभौम नीति बने जिसमें पीड़ित पक्ष के लिये चाहे, वह अमीर हो, अथवा गरीब, एक सुनिश्चित रूपरेखा निर्धारित हो। चिकित्सक अपनी आचार संहिता का पालन करें व मानव अंगों के व्यापार को पोषण न देकर आवश्यकता के अनुरूप नूतन अनुसंधान करें। अध्यात्म इसी नीति पर चलकर प्रगति करने की सम्मति सदा से देता रहा है।

उपयोगी और अनुपयोगी का अन्तर समझा जाय

प्रकृति में सब कुछ ऐसा नहीं है, जिसे मनुष्य के लिये उपयोगी ही कहा जा सकता है। हो सकता है, जो पदार्थ मनुष्य के लिये हानिकारक हों वे अन्य जीवों के लिये उपयोगी पड़ते हों। हो सकता है, उनसे सृष्टि-सन्तुलन का कोई अन्य प्रयोजन पूरा होता हो। मनुष्य की इसी में भलाई है कि वह अपनी विवेकबुद्धि से काम ले और मात्र उपयोगी से रिश्ता जोड़कर जो हानिकारक है, उनसे बचा रहे। अन्य प्राणी यह कार्य प्रकृति प्रेरणा का अनुसरण करके अनायास ही करते रहते हैं, किन्तु मनुष्य ने अपनी विशिष्ट प्रतिभा से जहाँ प्रकृति के रहस्यों को खोजा और उनसे असाधारण लाभ उठाया है वहाँ उसका यह अभिमान भी पनपा है कि वह अनुपयुक्त को भी काम में ला सकता है। इस अहंमान्यता ने उसे प्रकृति के कठोर नियमों के साथ भी टकराने के लिये प्रोत्साहित किया है। इस टकराव में उसे हर दृष्टि से घाटा ही घाटा सहन करना पड़ा है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

रासायनिक द्रव्यों को ही लें। उनमें से निस्सन्देह कितने ही बहुत उपयोगी हैं। आहार के उपरान्त विविध प्रयोजनों के लिये रसायनों का प्रयोग होता है। ठोस द्रव और वाष्प के रूप में प्रचुर परिमाण में रसायन सम्पदा हमारे चारों ओर बिखरी पड़ी है। प्राणियों की स्वाभाविक संरचना इसी प्रकार हुई है, जिसके द्वारा मात्र उपयोगी को ही ग्रहण किया जाये। जो अनुपयोगी हैं, उनसे बचते रहा जाये, उदाहरण के लिये विषों को ही लें। उनका स्वाद, गन्ध एवं अदृश्य प्रभाव ऐसा होता है, जिससे उनसे दूर रहने के लिये ही मन करता है। कितनी ही विषैली वनस्पतियाँ सामान्य घास-पात के साथ उगी होती हैं। पशु-पक्षी उन्हें छूते तक नहीं, न ग्रहण करते हैं। यह सामान्य ज्ञान हर वर्ग के प्राणियों को मिला है, मनुष्यों को भी। इसका व्यतिरेक जो भी करेगा, संकट सहेगा, भले ही वह प्रगतिशील कहा जाने वाला मनुष्य ही क्यों न हो।

वनस्पति समुदाय में कितनी ही अमृतोपम हैं कितनी ही विषतुल्य। लाभदायकों का उपयोग करके चिकित्सा प्रयोजन पूरा होता है और स्वास्थ्य रक्षा में सहायता मिलती है। इसके विपरीत जो विषाक्त है उन्हें ग्रहण करने पर विपत्ति के चंगुल में फँसना पड़ता है।

इन दिनों खनिजों और रसायनों के उपयोग में अंधेरगर्दी मची हुई है। तनिक सी तात्कालिक सुविधा के लिये भविष्य की दुरावस्थाओं को अनदेखा कर दिया जाता है। हानि का स्वरूप छोटा ही क्यों न हुआ हो पर वह लगातार चलता रहे, देर-सवेर में अनिष्ट होकर ही रहेगा। घुन तनिक-सा कीड़ा है पर यदि लगा रहे तो मजबूत शहतीरों को भी धराशायी कर देता है। छोटे-छोटे विषाणु काफी स्वस्थ और समर्थ काया को भी घुलाते-गलाते मृत्यु के मुख में धकेल सकते हैं।

श्रृंगार जैसे निरर्थक प्रयोजनों के लिये इन दिनों प्रसाधन सामग्री के रूप में ऐसे रसायन प्रयुक्त किये जा रहे हैं जिनसे रंग-रूप चमकाने और गन्ध की प्रसन्नता पाने जैसे लाभ तो मिलते हैं, पर उनकी विषाक्तता के त्वचा मार्ग से शरीर में प्रवेश करते जाने पर अन्ततः ऐसी हानियाँ होती हैं जिनके पीछे पछताना ही रह जाता है।

सुगन्धित तेल और साबुनों के बहुत गुण गाये जाते हैं पर यह भुला दिया जाता है कि शरीर कपड़ा नहीं है, जिसे कास्टिक सोड़ा जैसे तीक्ष्ण अम्लों का निरन्तर उपयोग करते रहने पर हानि न पहुँचे। कपड़े पर साबुन उपयोग करने पर उनके साफ होने का लाभ समझ में आता है और इस कारण उनकी आयु जो घटती है उसे सहन किया जा सकता है किन्तु शरीर के सम्बन्ध में उस प्रकार नहीं सोचा जाना चाहिये। शरीरशास्त्री जानते हैं कि चमड़ी पर एक स्वाभाविक तेल की परत रहती है। वह भीतरी व्यवस्था को सुरक्षित रखने और बाहरी आक्रमणों को निरस्त करने में असाधारण भूमिका निभाती है। यदि उसे तेल, साबुनों की भरमार से हटाया जाता रहे तो त्वचा की सुरक्षा शक्ति में भारी हानि पहुँचेगी और जो लाभ सोचा गया उसके स्थान पर नया संकट खड़ा होगा। रूखी त्वचा कठोर हो जाती है और अशक्त भी। उससे स्वाभाविक सौन्दर्य में क्षति पहुँचती है और सुरक्षा की दीवार भी टूटती है। शरीर की सफाई के लिये पानी से स्नान करना और खुरदरे तौलिये से रगड़कर मैल की परत हटा देना पर्याप्त है। आवश्यकता हो तो बालू, रेत या मुल्तानी मिट्टी का प्रयोग किया जा सकता है। बात-बात में साबुन की भरमार का जो फैशन इन दिनों चल पड़ा है, उसमें उत्साह की अति ने यह अनदेखा कर दिया है कि इन बट्टियों में जो क्षार और सुगन्धित कहे जाने वाले रसायन रहते हैं, उनकी धीमी प्रतिक्रिया अन्ततः कितनी हानि पहुँचा देगी।

सरसों के—तिली के तेल सिर में डालने की आवश्यकता को पूरा कर सकते हैं। सुगन्धित तेलों में पड़ने वाले सेंट तथा रंग बालों की जड़ों को क्षति पहुँचाते हैं और मजबूत होने की विज्ञापनबाजी को मिथ्या सिद्ध करके उल्टे उन्हें जल्दी सफेद करने या उखड़ने की प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं।

चेहरे पर पोते जाने वाले तेल, पाउडर होठों पर लाली, नाखूनों पर चढ़ाये जाने वाले पालिश, तीक्ष्ण गन्ध वाले इत्र, स्नो क्रीम आदि से श्रृंगार का कितना प्रयोजन पूरा होता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

दूसरे कितने चमत्कृत होते हैं। इस सम्बन्ध में उनके प्रयोक्ता अकारण ही भ्रम जंजाल में फँस जाते हैं। कृत्रिम रूप से की गई बनावटी सजावट, किसी के ओछे, छछोरे, बचकाने होने का ही प्रमाण प्रस्तुत करती है। अब कोई इतना मूर्ख नहीं रहा जो काली चमड़ी पर पुते हुये रंग पाउडर को देखते ही उसे श्वेत वर्ण मान ले। काले होठों पर लाली पोत लेने पर भी दर्शकों को तथ्य से अपरिचित नहीं रखा जा सकता। बनावट में प्रत्यक्ष ही धोखेबाजी की भावना है। इससे किसी की गरिमा बढ़ती नहीं वरन् उल्टी घटती है। भवें उस्तरे से साफ करके उनके स्थान पर काले रंग से नकली भवें बना लेने पर सुन्दर दीखने का स्वप्न निरर्थक है। वस्तुस्थिति कहाँ छिपती है। सिर के बाल मुड़ाने और उस स्थान पर नकली बालों का गूदड़ लपेट लेने पर उपहासास्पद ही बना जा सकता है। अब यह पोल सर्वविदित हो चुकी है। बनावट का तभी तक कुछ तुक है जब तक वह छिपी रहे। बच्चे नकली मूछें पहनकर भी जवान कहाँ बन पाते हैं, उल्टे उपहासास्पद बनते हैं। रामलीला में मुखौटा पहनकर फुदकने वाले पात्र उस आवरण की आड़ में असली हनुमान, जटायु नहीं बन सकते। आँखों का कौतूहल भर उत्पन्न करते हैं। यह बातें नटों को शोभा देती है। सामान्य जीवन में ऐसा विदूषक वेष बनाया जाये तो उसमें धन की बर्बादी तो है ही, बचकानेपन की छाप भी दर्शकों पर पड़ती है और वह लाभ नहीं मिलता जो सोचा गया है।

सबसे बड़ी बात है, शृंगार प्रसाधनों में प्रयुक्त होने वाले रसायनों से हानि। मनुष्य के उपयोगी रसायनों में उन सम्मिश्रणों की गणना नहीं होती। शर्बतों में, बर्फ की चुस्कियों में, मिठाइयों में मिलने वाले रंग को स्वास्थ्य की दृष्टि से हानिकारक घोषित किया गया है और कहा गया है कि आहार को उसके स्वाभाविक रंग में ही प्रयुक्त किया जाये। उसे दर्शनीय बनाने के लिये बाहर से कुछ न मिलाया जाये। यह प्रतिपादन सही है। विज्ञजन उसे अपनाते भी हैं। फिर शृंगार प्रसाधनों की विषाक्तता से दूर रहने की बात क्यों न सोची जाये ? इसमें धन की, समय की, स्वास्थ्य की बर्बादी के अतिरिक्त और कुछ है नहीं। दूसरों पर रौब जमाने के स्थान पर उल्टे इस उपक्रम को अपनाने वाले मनचले, छछोरे, अपव्ययी समझे जाते हैं और स्वाभाविक सम्मान को भी गँवा बैठते हैं।

स्वाभाविक आहार के माध्यम से हमें सभी पोषक तत्व मिल जाते हैं। ऊपर से नमक, मसाले और चीनी की भरमार करके उन्हें स्वादिष्ट बनाने के प्रयत्न में पेट और रक्त को खराब करने की ही परिणति हमारे सामने आती है। रासायनिक विश्लेषण करने पर ज्ञात हुआ है कि प्रचलित खारी नमक—सोडियम क्लोराइड नामक विष है। इसकी तनिक भी उपयोगिता नहीं। जितने नमक आवश्यक हैं वे सभी सामान्य शाक, फलों से भली प्रकार मिल जाते हैं। इस ऊपर के विष मिश्रण से कोई जायका भले ही बना ले, स्वास्थ्य की दृष्टि से तो उसमें हानि ही हानि है। यही बात चीनी के सम्बन्ध में भी है। शक्कर सामान्य आहार में, मात्रा में पर्याप्त और गुंण में सुपाच्य होती है। कैल्शियम हटा देने पर गन्ने की शक्कर अपने उपयोगी अंश से वंचित हो जाती है और सफेद चीनी, अस्थिक्षय जैसे अनेक संकट उत्पन्न करती है। जितनी चीनी आवश्यक है उसे तो हमारे मुँह की लार ही सामान्य आहार को अपने ढाँचे में बदलकर अपनी आवश्यकता आप पूरी कर लेती है। शरीर में भीतर ढूँढ़ने या बाहर से थोपने पर प्रस्तुत रसायनों की भरमार न तो बुद्धिमत्तापूर्ण है न उपयोगी। इस तथ्य को समझा भी जाना चाहिये और अपनाया भी जाना चाहिये।''

विषभक्षण नशेबाजी के रूप में खुलेआम होता है। यह धीमी आत्महत्या के अतिरिक्त और कुछ नहीं, इसे बुद्धिमान समझे जाने वाले मनुष्य द्वारा जान-बूझकर अपनाई अदूरदर्शिता या मूर्खता भी कहा जा सकता है।

रसायनों के व्यामोह में अब युद्ध प्रयोजनों के लिये भी उनका प्रयोग हो रहा है या होने जा रहा है। युद्ध की भी एक आचार-संहिता है। उसमें छिपकर घात करने के लिये अनजान स्थिति में विष देकर मार डालना भी वर्जित है। पर अब तो नीति-मर्यादा के सभी अनुबन्ध टूटते दीखते हैं। प्रतिपक्षी को निरस्त करने के लिये अब उसे विष देकर मार डालने या अर्धमृत बना देने की रणनीति अपनाई जा रही है। इस मर्यादा उल्लंघन के लिये बढ़ाये गये कदम सामान्य जीवन में नीति-नियम को अपनाने की परम्परा ही समाप्त करके रहेंगे।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन दिनों फेफड़ों में शोथ पैदा करने वाली 'पल्मोनरी ईडिगा', अश्रु बहाने वाली 'लैक्रेमेट', त्वचा पर फफोले डालने वाली, "वेसिक्रेण्ट", पक्षाघात करने वाली 'डाईफेलीन', छींक लाने वाली 'क्लोटोआर्सिन' की चर्चा बहुत होती रहती है। बुद्धिभ्रम, उत्पन्न करने वाली 'वी-जैड' का अभी-अभी आविष्कार हुआ है। इनके आधार पर प्रतिपक्षियों को अर्धमृत बनाया जा सकेगा जो अपने लिये, परिवार के लिये तथा सरकारों के लिये खर्चीले सिरदर्द बनकर शेष जीवन बितायेंगे।

तीसरे युद्ध की तैयारी में यह विचार चल रहा कि सर्वनाशी अणुयुद्ध के स्थान पर क्यों न रासायनिक युद्ध किया जाय जिससे मात्र नागरिक या सैनिक मरें और आक्रान्ता को उनके साधनों का भी लाभ मिल जाये। जबकि अणुयुद्ध में या तो कुछ बचेगा ही नहीं, या जो बचेगा विकिरण के कारण किसी काम का न रहेगा। ऐसा लाभ सोचने वाले यह भूल जाते हैं कि रासायनिक युद्ध में बरसाया गया विष भी कम घातक नहीं है। वह साँस, पानी या आहार के माध्यम से वनस्पतियों, प्राणियों और मनुष्यों में प्रवेश करेगा, उन सभी को विषाक्त बनाता चलेगा। इस प्रकार हम धीमी गति से एक ऐसे विषयुग में जा पहुँचेंगे जिसमें सर्प-बिच्छुओं की विषपायी और विष उगलने वाली बिरादरी ही जीवित रहेगी। शेष तो उस विष वर्षा की चपेट में आकर पहले ही दम तोड़ चुके होंगे।

उपयोगी, अनुपयोगी की परख सभी प्राणी कर सकते हैं और उपयुक्त को ग्रहण करने तथा अनुपयुक्त से बचने की नीति अपनाते हैं, फिर न जाने मनुष्य को इससे ठीक इसके विपरीत चलने की क्या सूझी है। अमृत को तिरस्कृत करने और विष को उदरस्थ करने में न जाने उसे क्या लाभ प्रतीत हो रहा है ?

सुगन्धित तेल घर में ही बनायें

शहरी जीवन में बच्चों को पाठशाला भेजने, पुरुषों को अपने कार्यालयों या दुकानों में जाने के लिये तैयार करने हेतु महिलाओं की व्यस्तता प्रायः प्रातःकाल होते ही प्रारम्भ होती और ११ बजे दिन तक समाप्त हो जाती है। गाँवों में गृहिणियों की यह व्यस्तता प्रायः ३ बजे अपरान्ह तक रहती है। इस तरह शहरों में ११ से ३ तथा गाँवों में २ से ५ का समय प्रायः हर महिला के लिये अवकाश का होता है। कामकाजी महिलायें यों इस अवकाश काल में भी छिटपुट काम करती रहती हैं किन्तु उससे उत्पादकता न्यूनतम ही होती है। यदि महिलायें इस समय का उपयोग छोट-छोटे कुटीर उद्योग धन्धों में करने लगें तो महत्त्वपूर्ण सहायक आजीविका कमा सकती हैं।

सरकारी कर्मचारियों को मिलने वाले वेतन, कृषि या लाभ प्रधान उद्योग ही सामान्यतः आजीविका की श्रेणी में आते हैं। स्थूल रूप से इनके प्रति आकर्षण प्रतीत होता है। जिसका महत्त्व प्रत्येक व्यक्ति समझता है और बढ़ाने का प्रयत्न करता है। इसके साथ ही आय का एक और साधन है जिसे हम बचत कह सकते हैं। जो कुछ उपलब्ध है उसी को बुद्धिमत्तापूर्ण ढंग से खर्च करके जो बचाया जाये वह भी परिवार की आय ही है। वेतन की कमाई स्त्रियों के लिये उतनी सम्भव नहीं। यह कार्य प्रायः पुरुषों को ही करना पड़ता है। स्त्रियाँ बचत की आय से परिवार की अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ बना सकती हैं।

कुछ उद्योग ऐसे हैं जिन्हें प्रत्येक परिवार में विकसित किया जा सकता है। उदाहरणार्थ, साबुन, सर्फ, स्याही, मोमबत्ती, वैसलीन, अगरबत्ती, बुनाई, कढ़ाई-सिलाई, कताई आदि।

साबुन का प्रयोग धनी-निर्धन, छोटे-बड़े शिक्षित-अशिक्षित सभी करते ही हैं। हर परिवार इसकी आवश्यकता अनुभव करता है। घर का मासिक बजट बनाते समय साबुन को भी अन्य महत्त्वपूर्ण वस्तुओं की भाँति सम्मिलित किया जाता है। बाजार से खरीदा गया महँगा साबुन हमारे बजट में बढ़ोत्तरी करता है। इसे यदि घर पर ही कुछ सामान जुटाकर बना लिया जाये तो सस्ते मूल्य पर काम चलाया जा सकता है।

समय की बचत, धोने की सुविधा तथा वस्त्रों को पर्याप्त स्वच्छ रखने की दृष्टि से आजकल सर्फ भी बड़ा उपयोगी समझा जाता है। हर घर में साबुन के साथ इसका प्रयोग भी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

होता है। ऊनी तथा रेशमी कपड़ों के लिये इसका प्रयोग खासतौर से करते हैं। इसे बाजार से खरीदने की अपेक्षा घर पर ही सरलता से बनाया जा सकता है। उसमें न तो अधिक श्रम लगता है और न समय ही।

शिक्षा की वृद्धि के साथ स्याही की आवश्यकता भी निरन्तर बढ़ती जा रही है। लिखाई का काम बच्चों से लेकर बड़ों तक सभी करते हैं। उनके लिये स्याही भी आवश्यक है। इसे घर पर ही इच्छानुकूल सस्ता बनाया जा सकता है।

प्रायः प्रयुक्त होने वाली मोमबत्तियाँ तथा अगरबत्तियाँ महिलायें घर में बैठे-ठाले बना सकती हैं। अगरबत्ती के मसाले को सीकों पर मात्र चिपकाना पड़ता है। इसमें विशेष श्रम की आवश्यकता नहीं होती है। एक स्थान पर बैठे-बैठे भी यह काम हो सकता है। मोमबत्तियाँ बनाने का साँचा भी १०० रुपये के लगभग आता है। मोम भी थोक में खरीदकर काम किया जा सकता है।

कढ़ाई से कपड़ों को सुन्दर बनाकर अपनी सुरुचि का परिचय दिया जा सकता है, लेकिन इसके अभाव में भी काम चल सकता है। इसके विपरीत बुनाई, सिलाई हम सभी के परिवारों की महती आवश्यकता है, बाजार में सस्ती ऊन से बनाये गये स्वेटर तथा अन्य ऊनी कपड़े अपनी मूल कीमत से बहुत महँगे मिलते हैं। सिलाई में भी इसी तरह कपड़े की कीमत का ही खर्च आता है। घर पर सिलाई कार्य करके समय पर मनपसंद कपड़े पा सकते हैं।

उपर्युक्त छोटे उद्योगों के अलावा कताई, हथकरघा, मुद्रणकला व फोटोग्राफी जैसे बड़े उद्योग भी घरों में चलाये जा सकते हैं। यदि बड़े उद्योग न चल सकें तो भी नित्यप्रति उपयोग में आने वाली वस्तुओं को तो निर्मित किया ही जा सकता है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है। "सुगन्धित तेल" भी उन्हीं में से एक है। अगले दिनों महिला जागृति अभियान के पृष्ठों पर इस प्रकार के गृह-उद्योगों की चर्चा की जाती रहेगी जिसके माध्यम से हजारों की संख्या में स्त्रियाँ इससे लाभान्वित होती रहेंगी।

सुगन्धित तेल तो प्रत्येक परिवार की आवश्यकता है। इसे थोड़े से खर्च से बनाया भी जा सकता है। उपयोगी वस्तुयें सरलतापूर्वक बाजार में उपलब्ध हो जाती हैं। ब्राह्मी—यह ब्राह्मी नामक पेड़ की पत्तियाँ होती हैं। आँवला प्रायः सारे देश में पाया जाता है, सम्भव हो तो हरे आँवले का प्रयोग करें अन्यथा आँवले के मौसम में आँवला उबालकर, सुखाकर रख सकते हैं। आवश्यकता पड़ने पर सूखे आँवलों को भिगोकर प्रयुक्त किया जा सकता है। सूखे हुये आँवले वर्ष भर खराब नहीं होते न ही उनके तत्व नष्ट होते हैं।

सरसों, तिली अथवा मूँगफली के तेल का प्रयोग किया जा सकता है। इसके लिये सबसे उपयुक्त तिली का तेल रहता है। सरसों तथा मूँगफली के तेल से भी काम चलाया जा सकता है। सुगन्धित तेल बनाने के लिये नारियल जैसे जमने वाले तेल प्रयोग में नहीं लाये जाते। नीम की पत्तियाँ तथा मेंहदी की पत्तियाँ तेल में डाली जा सकती हैं। यदि सम्भव हो तो लौकी का रस भी डाला जाना चाहिये जो मस्तिष्क को शीतल तथा बालों की जड़ों को मजबूत बनाता है। तेल को रंगीन करने के लिये तेल का रंग, सुगन्धित करने के लिये खुशबू सेंट बाजार से इच्छानुसार खरीदी जा सकती है।

सुगन्धित तेल बनाने से पूर्व यदि ब्राह्मी और आँवले सूखे हैं तो १२ घंटे के लिये भिगो देना चाहिये। दोनों ही चीजें हरी हों तो भिगोये बिना भी प्रयोग किया जा सकता है। भिगोते समय इतना पानी डाला जाये ताकि ब्राह्मी तथा आँवला पूरी तरह पानी में डूब जायें। १२ घंटे बाद तेल को अँगीठी पर गर्म होने रख दें। तेल अच्छी तरह गर्म हो जाये तब उसे अँगीठी से नीचे उतारकर धीरे से ब्राह्मी तथा आँवला पानी में से निचोड़कर थोड़ा-थोड़ा डाला जाये। तेल ठंडा होने लगे तब उसमें ब्राह्मी आदि का बचा पानी, लौकी का रस, नीम व मेंहदी की पत्तियाँ डालकर पुनः अँगीठी पर चढ़ा दें। अब तेल को धीमी आँच पर तब तक उबलने दें जब तक सारा पानी न जल जाये। पानी के जलने पर तेल को उतारकर ठंडा करके छान लें।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तदुपरान्त इच्छित रंग तथा सुगन्धि मिला दें, बस सुगन्धित तेल तैयार है।

बनाते समय सावधानियाँ भी उतनी ही आवश्यक तथा उपयोगी हैं जितना कि सुगन्धित तेल। सरसों और मूँगफली के तेल की सुगन्ध नष्ट करने के लिये तेल के गर्म होने पर उसमें आधा चम्मच नमक गीला करके या आधा नीबू डाला जा सकता है। इसे डालते समय तथा ब्राह्मी और आँवला को डालते समय तेल को सदैव नीचे उतारकर और ढककर ही डालना चाहिये ताकि तेल उबलकर हमारे ऊपर न आ सके। थोड़ी सी जल्दबाजी लाभ की अपेक्षा हानि कर सकती है। रंग तथा सुगन्धि को भी सावधानीपूर्वक थोड़े से तेल में मिला लें ताकि पूरे तेल में उसे भली प्रकार मिलाया जा सके।

छोटे कहे जाने वाले इन कुटीर उद्योगों को सामूहिक स्तर पर विकसित करके बड़ा रूप दिया जा सकता है। अपने निकटवर्ती बाजारों में इसका विक्रय भी किया जा सकता है। घर के पुरुष थोड़ा समय इस कार्य के लिये निकालकर दुकानदारों से सम्पर्क करके, बेचने वाली वस्तुओं का स्वरूप समझायें, वस्तुओं की उपयोगिता प्रामाणिकता समझने पर बिक्री का सिलसिला कुछ ही दिनों में भली-भाँति चल सकता है।

घर की स्त्रियाँ तथा आस-पास की अन्य महिलाओं को भी लाभ-हानि समझाकर महिलाओं की एक समिति बन सकती है। यह सभी महिलायें एकत्रित होकर नित्य प्रति कुछ समय लगाकर सामूहिक स्तर पर छोटे उद्योगों को बड़ा रूप दे सकती हैं और बड़ी मात्रा में सामान तैयार कर सकती हैं। इससे आर्थिक लाभ के साथ एक और भी गुण की वृद्धि होती है जिसे हम सहकारिता अथवा सहयोग के नाम से जानते हैं। परस्पर मिल-जुलकर काम करने का स्वभाव बनता है। एक दूसरे के मनोभावों को समझने का अवसर मिलता है और अपने आपे का दायरा विस्तृत होता है।

वर्तमान समय में कुटीर उद्योगों की उपयोगिता को ध्यान में रखकर सरकार ने बैंकों द्वारा ऋण देने की व्यवस्था बनाई है। जिससे कुटीर उद्योगों में वृद्धि हो सके। इस प्रकार की सुविधा हममें से प्रत्येक को उपलब्ध हो सकती है। आवश्यकतानुसार अपने समीपवर्ती बैंकों से इस प्रकार का ऋण लेकर कच्चा माल खरीदा जा सकता है। मौसम में खरीदने से चीज अच्छी भी मिलं जाती है और सस्ती भी। जैसे– आँवले की फसल वर्ष में दो बार होती है। इसे इसी समय खरीदकर इकट्ठा कर लेना चाहिये तदुपरान्त वर्ष भर काम किया जा सकता है।

तैयार सामान को अच्छे मूल्य पर बेचने के लिये यह भी आवश्यक है कि उनके पैकिंग की व्यवस्था की जाये। जैसे तेल की बिक्री के लिये ही बोतलों की, कार्क की तथा लेबिल भी आवश्यक हैं। इसे यदि रजिस्टर्ड कराया जा सके तो उसकी प्रामाणिकता बढ़ती है। लेबिल कहीं से प्रेस पर छपाये जा सकते हैं।

इस प्रकार के कुटीर उद्योग घर की आय में तो वृद्धि करते ही हैं, आवश्यकता पड़ने पर निर्वाह का साधन भी बन सकते हैं। विधवा परित्यक्ता, असहाय तथा उपेक्षित स्त्रियाँ इस प्रकार के कुटीर उद्योगों से अपनी जीविका चलाकर स्वावलम्बी बन सकती हैं। आत्महीनता को छोड़कर आत्म-सन्तोष और गौरव का जीवन व्यतीत कर सकती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

हरीतिमा वृद्धि से स्वार्थ-परमार्थ का समन्वय

पृथ्वी का जीवन प्राणियों और वनस्पतियों में विभक्त है। दोनों एक दूसरे के पूरक और पोषक हैं। पृथ्वी पर घास-पात के रूप में छोटी वनस्पतियाँ और बड़े पौधों के रूप में झाड़ और वृक्ष बढ़ते हैं। प्राणियों को इन्हीं के सहारे जीवन धारण करने का अवसर मिलता है। पशु-पक्षी, मनुष्य सभी घास-पात पर जीवित हैं। अन्न भी एक प्रकार की घास का बीज ही हैं। शाक-भाजी, फल, पत्ते यह भी वनस्पति ही हैं। मनुष्य इन्हीं को खाकर जीवित रहते हैं। वनस्पतियों के अभाव से पशु-पक्षी, मनुष्य कोई भी जीवित नहीं रह सकता। समुद्र और तालाबों में भी कई प्रकार की हलके किस्म की घास पाई जाती है। प्रायः उसी पर जल-जन्तुओं का निर्बाह होता है। हिंस्र प्राणी माँस खाते पाये जाते हैं पर माँस भी आखिर वनस्पतियों का एक विशेष उत्पादन ही तो है। दूध की पृथक् सत्ता नहीं। पशु घास खाते हैं और वह घास ही दूध बन जाती है। ऐसे प्राणी इस संसार में अति स्वल्प मात्रा में ही होंगे जो प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से वनस्पतियों का अपने निर्वाह में कोई उपयोग न करते हों। पशु-पक्षियों से लेकर कीड़े-मकोड़ों तक इस या उस प्रकार वनस्पति के सहारे ही प्राण धारण किये हुए हैं। आस-पास में बरसने वाली सूर्य की किरणें और जमीन से उगने वाली वनस्पति ही जीवन के दो प्रधान आधार हैं। इस संसार में जितना वैभव, सौन्दर्य, जीवन, आनन्द दृष्टिगोचर होता है, उसे इन्हीं दो ईश्वरीय विभूतियों का अनुग्रह कहना चाहिए।

खाद्य रूप में वनस्पतियों का उपयोग प्रत्यक्ष है। इसके अतिरिक्त उनका अप्रत्यक्ष लाभ और भी बड़ा है। पौधे ऑक्सीजन वायु उगलते हैं और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड ग्रहण करते हैं। मनुष्य व पशु कॉर्बन-डाइ-ऑक्साइड उगलते हैं और ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं। इस प्रकार मनुष्य पौधे की साँस पीकर और पौधे मनुष्य की साँस पीकर जीवित रहते हैं। यह आदान-प्रदान इतना महत्त्वपूर्ण है जिसे खाद्य उपलब्धि से भी बढ़ कर महत्त्व दिया जाना चाहिए। संसार में वृक्ष न रहें तो मनुष्यों की साँस द्वारा छोड़ी हुई तथा अन्य प्रकार से उत्पन्न हुई विषैली हवा से यह सारा वातावरण भर जायेगा और फिर अपनी धरती पर एक भी प्राणी का जीवन संभव न रहेगा।

वस्तुओं के मूल्यांकन में प्रायः हमसे भूल होती रहती है। धन-दौलत को महत्त्व दिया जाता है पर उनकी ओर ध्यान भी नहीं जाता, जिन पर हमारा जीवन निर्भर है। वनस्पति वर्ग को अपना जीवनसाथी मानकर चलना चाहिए और उन्हें सुविकसित स्थिति में रखना अपने ही हित साधन का एक अति महत्त्वपूर्ण अंग न मानना चाहिए। वनस्पति को तुच्छ न माना जाय, उसका महत्त्व समझा जाय और उसके अधिक उत्पादन, संवर्धन पर ध्यान दिया जाय।

जनसंख्या वृद्धि के कारण कल-कारखाने, निवास, सड़क आदि बनाने में बहुत सी भूमि वनस्पति उत्पादन से रहित हो गई है। घास उत्पन्न करने वाली भूमि अब दिन-दिन कम होती जा रही है। फलतः पशु-पक्षियों के निर्वाह साधन घट रहे हैं और वे कम होते चले जा रहे हैं।

स्मरण रखा जाय कि पक्षी उन कीड़ों को खाते हैं जो फसल नष्ट करते हैं। वे बीज खाते हैं और अपनी बीट द्वारा उन बीजों को दूर-दूर तक पहुँचाकर इस धरती पर जहाँ-तहाँ वृक्ष-झाड़-जड़ी-बूटियों के बोने-उपजाने की भूमिका निभाते हैं। पशुओं के मल-मूत्र एवं अस्थि-माँस से पृथ्वी को खाद मिलती है और उपज बढ़ती है अस्तु, वनस्पति और पशु-पक्षियों का सन्तुलन यथावत् बना रहना चाहिए अन्यथा जीवन-संकट की विभीषिका सामने आ खड़ी होगी।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इन दिनों बिना उपजाऊ जमीन को उपजाऊ बनाने के प्रयत्न हो रहे हैं और ऊबड़-खाबड़ भूमि को समतल किया जा रहा है, फिर भी वह उपलब्धि इतनी नहीं कि निवास व्यवस्था के उपयोग के लिए छिनी जमीन की क्षतिपूर्ति हो सके। इन दिनों जंगल कट रहे हैं। कृषि के लिए जमीन चाहिए, इसीलिए जंगलों को साफ किया जा रहा है और वृक्षों की संख्या घट रही है। जलावन, भवन-निर्माण एवं व्यावसायिक प्रयोजनों के लिए लकड़ी की माँग बढ़ रही है। फलतः वृक्ष तेजी से कटते तो हैं पर उनकी स्थान पूर्ति नहीं होती। यह दुहरा संकट है। वृक्षों की कमी पड़ते जाने से उनके द्वारा लकड़ी की आवश्यकता पूरी होने में कठिनाई उत्पन्न होती है और उसकी मँहगाई बढ़ती है। पत्तियों के सड़ने से भूमि को खाद मिलता है। उनकी कमी से भूमि की उर्वरा शक्ति घटेगी। फलतः अन्न और घास-पात का उत्पादन कम पड़ने से मनुष्यों और पशुओं के लिए संकट खड़ा होता चला जायेगा।

शुद्ध वायु की कमी पड़ते जाना इससे भी बड़ा संकट है। इस प्रकार वृक्षों को काटना अपने ही पैर पर कुल्हाड़ी मारने के बराबर है। यदि उन्हें काटना ही पड़े तो आवश्यक है कि उतने ही नये लगा दिये जायँ। सच तो यह है कि जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ वायुशुद्धि की आवश्यकता भी बढ़ेगी और उसकी पूर्ति मनुष्यों के अनुपात से ही वृक्षों की संख्या बढ़ाने से संभव हो सकती है। किन्तु हो उल्टा रहा है, वृक्ष कटते और घटते जा रहे हैं। फलतः लकड़ी की आवश्यकता एवं भूमि के लिए प्राकृतिक खाद मिलने में भारी अड़चन उत्पन्न हो रही है। शुद्ध वायु का बढ़ता संकट तो इससे भी अधिक बढ़-चढ़कर है।

वृक्ष घटने के संकट के और भी कई दुष्परिणाम हैं, जिनके कारण अगले दिनों में भयंकर कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा। वृक्षों की जड़ें जमीन में फैलती हैं और भूमि की परतों को रस्सों से कसने की तरह जकड़े रहती हैं। इससे भूमि रेत बनकर हवा में उड़ने से रुकती है और वर्षा के बहाव में कटने से भी बचती है। यदि पेड़ न रहें तो जड़ों द्वारा भूमि की परतें जकड़े रहने की सुरक्षा समाप्त हो जायेगी और हर वर्षा में उपजाऊ मिट्टी बह-बहकर नदी-नालों के सहारे समुद्र की ओर लुढ़कती जायगी। इसी प्रकार हवा के तेज झोंके भूमि को झकझोरेंगे और कड़ी जमीन को रेत के रूप में परिणित करने तथा आँधी के साथ इधर-उधर उड़ा ले जाने की हानि पहुँचाते रहेंगे।

जिन क्षेत्रों में पहले पेड़ थे तब वहाँ की भूमि बहुत अच्छी और उपजाऊ थी, पर जब वहाँ के पेड़ कट गये तो धीरे-धीरे वहाँ की उर्वरता घट गई और रेतीले रेगिस्तान दिखाई देने लगे। खाद मिलते रहने के कारण भूमि की ऊपरी परतें ही उपजाऊ होती हैं। वह पानी में बहने और हवा में उड़ने लगेगी तो निश्चित रूप से रेतीली एवं अनुत्पादक भूमि ही बढ़ेगी। उर्वरता के अभाव में मनुष्यों और पशुओं को भारी संकट का सामना करना पड़ेगा।

वृक्षों का वर्षा से भी घनिष्ठ सम्बन्ध है। उनमें एक विशेष आकर्षण शक्ति होती है जिससे बादल खिंचकर आते और पानी बरसाते हैं। जहाँ वृक्ष कटे हैं वहाँ उसी अनुपात से वर्षा भी घटेगी। ऐसे अनेक क्षेत्र हैं जहाँ उन हरे-भरे प्रदेशों में काफी वर्षा होती थी परन्तु जब उधर वृक्ष कट गये और नंगी भूमि रह गई तो वर्षा की भारी कमी पड़ गई और वे क्षेत्र सूखाग्रस्त होने के कारण विपत्ति में फँस गये। वृक्ष काटकर जो लाभ उठाया गया था उसकी तुलना में वनस्पति और वर्षा की कमी पड़ जाने की हानि अनेक गुनी कष्टदायक बनकर सामने आई।

एक ओर भूमि का अन्य उपयोग करने के लिए तथा लकड़ी की आवश्यकता पूरी करने के लिए वृक्षों का काटना आवश्यक है। दूसरी ओर उस कमी से शुद्ध वायु का संकट—पत्तियों से खाद मिलने की कमी—पक्षियों का आश्रयस्थल घटने से उनका विनाश, फलतः फसल शत्रु कीड़ों की वृद्धि जैसी कितनी ही कठिनाइयाँ सामने आती हैं। जड़ों द्वारा पकड़े न रहने से भूमि कटती और हवा में उड़ती है। वर्षा की कमी पड़ने से वे क्षेत्रसूखा ग्रस्त होकर दुर्भिक्ष

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

की स्थिति में पहुँचते हैं। साँप-छछूँदर जैसी स्थिति है। पेड़ काटे बिना काम भी नहीं चलता और काटने पर उसकी हानि इतनी होती है जिनकी तुलना में लाभ की उपयोगिता निरर्थक बनकर रह जाती है।

इस संकट का सामना करने का उपाय एक ही है कि नये वृक्ष लगाने का उत्साह उत्पन्न किया जाय और उसमें हर मनुष्य को पूरी-पूरी दिलचस्पी बनी रहे। यदि उत्साह हो तो उसे कार्यान्वित करना कुछ भी कठिन नहीं है। कृषि में प्रयुक्त होने वाली भूमि के अतिरिक्त भी जहाँ-तहाँ ऐसी जमीन पर्याप्त मात्रा में रहती है जिसमें वृक्ष उगाये जा सकते हैं।

सरकार वनभूमि को सुरक्षित रखने का प्रयत्न करती है और सड़कों के किनारे वृक्ष लगाने जैसे प्रयास करती है पर इतना बड़ा कार्य सरकार पर छोड़ देने से निश्चिंत नहीं रहा जा सकता । इसके लिए जन-साधारण में व्यक्तिगत रूप से अभिरुचि उत्पन्न करनी चाहिए और हरितिमा अभिवर्धन में अपना उत्साह भरा प्रयास प्रस्तुत करना चाहिए। वृक्षारोपण हमारी महत्त्वाकांक्षाओं में सम्मिलित रहना चाहिए। जिस प्रकार अपना व्यवसाय, धन, सम्मान, प्रभाव, यश आदि बढ़ाने में उत्साह रहता है, वैसी ही श्रेयस्कर सफलताओं में एक हरितिमा अभिवर्धन एवं वृक्षारोपण को भी सम्मिलित रखना चाहिए।

शोभा, सौन्दर्य, कला और सुसज्जा की दृष्टि से घर-आँगन में फूल और बेलें लगाने का उत्साह उत्पन्न करना चाहिए। यह प्रयास वस्तुतः बहुत ही सुरुचिपूर्ण है। घर-आँगन में, बरामदे के आस-पास आमतौर से थोड़ी बहुत कच्ची जमीन रहती है, उसमें फूल लगाये जा सकते हैं। खंभों के सहारे छतों, छप्परों पर बेलें चढ़ाई जा सकती हैं और अपना घर प्राकृतिक शोभा सुषमा से सुसज्जित बनाया जा सकता है।

बड़े शहर कस्बों में जगह की कमी पड़ती है वहाँ छत, आँगन सभी भरे होते हैं। इस स्थिति में गमलों का इस्तेमाल किया जा सकता है। मिट्टी, सीमेण्ट के गमले बाजार में बिकते हैं। पुराने डिब्बे कनस्तर काट-छाँटकर उन्हें ऊपर से रंग, पोत दिया जाय तो अच्छे-खासे गमले बन सकते हैं। पैकिंग में आने वाली लकड़ी की पेटियाँ भी काम दे सकती हैं, यहाँ तक कि नाद या टूटे घड़े के पेंदे भी इस प्रयोजन को पूरा कर सकते है। उनमें मिट्टी भर ली जाय—थोड़ा खाद डाला जाय, फूलों के पौधे और बेलें उन्हीं में आसानी से बोये जा सकते हैं। उनकी सिंचाई, रखवाली पर ध्यान रखा जा सके तो अपना घर हरियाली से सुशोभित और रंग-बिरंगे फूलों से सुसज्जित दिखाई पड़ सकता है। इसमें न तो कोई बड़ा खर्च करना है और न भारी परिश्रम। सच तो यह है कि यह एक ऐसा मनोरंजन है, जिसमें अपनी सृजनात्मक शक्ति, कुशल बुद्धि एवं कलात्मक दृष्टि का विकास होता है। श्रम करने का नया आधार मिलने से आलस्य, प्रमाद के रूप में छाई रहने वाली दरिद्रता से भी छुटकारा मिलता है। जागरूकता, स्फूर्ति एवं कुछ करने की उमंग न केवल अपने में वरन् पूरे परिवार में उत्पन्न की जा सकती है। बच्चों को ऐसे कार्यों में स्वभावतः उत्साह रहता है। यदि उन्हें इस दिशा में प्रोत्साहन एवं मार्गदर्शन दिया जा सके तो सहज ही वे अपने लिए एक सृजनात्मक कार्य प्राप्त कर लेंगे और तोड़-फोड़ की अव्यवस्था फैलाने से बचेंगे।

फूल-बेलों की तरह ही घरों में शाक-वाटिका लगाई जा सकती हैं। जिनके पास कच्ची खाली जगह है वे उसमें ऋतु के अनुरूप शाक-भाजी बो लिया करें। जिनके घरों में पक्की जगह है वे गमले, टोकरियाँ, पेटियाँ इस्तेमाल कर सकते हैं। हाथ की उगाई वस्तुओं के प्रयोग में एक भावनात्मक आनन्द होता है। छतों का पूरा इस्तेमाल किया जा सके तो पक्के घरों में भी इतनी सब्जी उगाई जा सकती है, जिससे किसी छोटी गृहस्थी का काम भली प्रकार चल सके। यह बचत भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। सबसे बड़ा लाभ परिवार के लोगों में सृजनात्मक क्षमता का विकास होना है जिसका मूल्य शाक-भाजी उगाने के सहारे मिलने वाले आर्थिक लाभ से भी कहीं अधिक है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

अदरक, हरी मिर्च, टमाटर, पोदीना, धनियाँ, पालक जैसी चटनी के काम आने वाली वस्तुएँ तो हर महीने हर मौसम में दो-चार गमलों में ही उगी रह सकती हैं और उनके सहारे अपने उत्पादन का गर्व तथा आनन्द सदा ही मिलता रह सकता है। इतना तो हर व्यक्ति कर सकता है। जिनके पास भूमि नहीं है, जो नौकरी व्यवसाय आदि में व्यस्त रहते हैं, उनके लिए भी वनस्पति उत्पादन में इतना योगदान तो बड़ी आसानी से संभव हो सकता है।

जिनके पास भूमि है, वे उसका अन्यमनस्क होकर उपयोग न करें वरन् यह दृष्टि रखें कि इसमें अधिकाधिक हरितिमा का उत्पादन करना है। अन्न-शाक, तिलहन, कपास आदि फसलें किस प्रकार अधिक मात्रा में उपजा सकते हैं, इसी के लिए उनका चिन्तन और प्रयास उत्साह-पूर्ण स्थिति में रहना चाहिए। इस क्षेत्र में भूमिधरों में स्वस्थ प्रतिस्पर्धा चलनी चाहिए कि किसका पुरुषार्थ अग्रणी रहा। अधिक शस्य सम्पदा का अनुदान कितना किस स्तर का किसने रखा, इसे प्रतिष्ठा और प्रतिस्पर्धा का विषय बनाना चाहिए और इस घुड़दौड़ में बाजी मारने की महत्त्वाकांक्षा हर किसी में जागनी चाहिए।

समुचित जुताई, सिंचाई, खाद, बीज और रखवाली का जागरूक पुरुषार्थ और तत्परता के साथ इस क्षेत्र में जुट पड़े तो हमारी फसलों का परिमाण और स्तर आज की अपेक्षा कल ही दूना हो सकता है। उस श्रम-यज्ञ का परिणाम यह होगा कि पशुओं और मनुष्यों को अधिक खाद्य प्राप्त करने और परिपुष्ट होने का अवसर मिलेगा। यह पुण्य परमार्थ अपने लिए भी तत्काल सत्परिणाम उपस्थिति करेगा। अधिक मेहनत से अधिक कमाई होगी और पुरुषार्थी को आत्म-सन्तोष अनुभव करने, सराहना पाने और सम्पन्न बनने का अवसर मिलेगा।

जो स्वयं कृषि नहीं कर सकते, उसे जिस-तिस को भाड़े, बटाई पर देते फिरते हैं उनके लिए यही उचित है कि इस प्रकार धरित्री की उत्पादन क्षमता में उपेक्षा, अवरोध उत्पन्न न करें और उसे उनके हाथ बेच दें जो उसमें पूरा ध्यान और पूरा श्रम नियोजित कर सकने की स्थिति में हैं। इससे अधिक हरितिमा उत्पादन करने का पथ-प्रशस्त होगा। किसान को मात्र अन्न ही नहीं शाक और फल उगाने की बात भी सोचनी चाहिए। मानवी आवश्यकताओं में शाकों और फलों का भी अति महत्त्व है। कृषि भूमि का एक भाग फल उगाने और फलों का छोटा उद्यान लगाने के लिए भी सुरक्षित रखा जाय। जिस प्रकार गौ-पालन करके परिवार के स्वास्थ्य संरक्षण की व्यवस्था बनाई जाती है, ठीक उसी प्रकार शाक और फलों की आवश्यक मात्रा में घर क लोगों को मिलती रहे यह ध्यान रखने योग्य बात है। अन्न और दूध की ही तरह शाक-फल भी भोजन के आवश्यक अंग हैं। यदि यह तथ्य समझ लिया जाय तो हर कृषक को इतने उत्पादन में भी अनाज, कपास, तिलहन आदि उगाने की तरह अभिरुचि उत्पन्न होगी। यह उत्पादन आर्थिक दृष्टि से भी अधिक लाभदायक है। कठिनाई केवल इतनी ही है कि हम ढर्रे पर पहिया लुढ़काने का मानसिक आलस्य जो चल रहा है उसी को चलने देने की आदत बनाये रहते हैं और तथा सोचने क्या करने की उमंग को फलवती नहीं होने देते। भोजन में कई तरह की वस्तुएँ रहने की तरह यदि कृषि उत्पादन में भी शाकों और फलों का उत्पादन आवश्यक मान लिया जाय तो आज की अपेक्षा कल स्थिति ही दूसरी होगी। उत्पादक धनी बनेंगे, अपने परिवार की स्वास्थ्य-वृद्धि करेंगे और उस उपयोगी उपज से अनेकों को लाभान्वित होने का अवसर मिलेगा।

जलाऊ ईंधन, इमारत तथा उपकरणों के लिए लकड़ी की जरूरत किसान की ही तरह उनको भी पड़ती है, जिनके पास जमीन नहीं है। अस्तु, जो जमीन कृषि के लिए उपयुक्त नहीं है उस पर जलाऊ लकड़ी के पेड़ लगाये जायँ। इससे भूमि की शोभा-सौन्दर्य बढ़ेगा और उसे हवा-पानी के दबाव से नष्ट न होने एवं अधिक वर्षा पाने का लाभ मिलेगा और मनुष्यों एवं पशु-पक्षियों की कई तरह की आवश्यकताएँ पूरी होंगी। खेतों पर भी पशुओं, मनुष्यों को छाँह पाने के लिए आश्रय की आवश्यकता पड़ती है। उसकी पूर्ति के लिए आम, जामुन, शहतूत, कटहल जैसे अधिक

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

छाया और अधिक फल देते रहने वाले वृक्ष लग सकते हैं। इनसे जगह तो घिरती है पर बिना सिंचाई, जुताई के सहज ही फलों की आमदनी भी तो होती रहती है। इस प्रकार फलदार वृक्षों का लगाना और घटिया जमीन में जलाऊ या इमारती पेड़ उगाना लगभग उतना ही लाभदायक जा पहुँचता है, जितना कि कृषि की उपज होती है। यदि कुछ कम भी रहे तो भी वृक्ष की बहुमुखी उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए उनके उत्पादन को ध्यान में रखा जाना और महत्त्व दिया जाना आवश्यक है।

यह व्यक्तिगत प्रयासों की बात हुई। भूमि वाले किसान अन्न, शाक एवं वृक्ष-उत्पादन में क्या कर सकते हैं, यह उनकी चर्चा हुई। बात यहीं समाप्त नहीं होती, इस दिशा में सेवा बुद्धि से सार्वजनिक प्रयासों में उत्साह उत्पन्न करने और सहकारिता के आधार पर बड़े उत्पादन की योजनाएँ व्यावसायिक आधार पर बढ़ाने की भी आवश्यकता है। जिस प्रकार कितने ही कल-कारखाने तथा उद्योग-धन्धे बड़ी पूँजी से बड़े पैमाने पर खड़े किये जाते हैं, उसी प्रकार शाक, फल और लकड़ी उगाने के लिए सहकारी समितियों का गठन होना चाहिए और उन्हें अपना कार्य-क्षेत्र उत्पादन बड़े पैमाने पर करने की बात सोचनी चाहिए। बात ध्यान आकर्षित होने की है। अत्यधिक लाभ कमाने का लालच थोड़ा पीछे कर दिया जाय और समाज की आवश्यकता पूर्ण करने वाले उत्पादन को महत्त्व दिया जाय तो निश्चय ही फल, शाक और जल, वन की उपज बढ़ाने के लिए कितने ही नये संस्थान खड़े करने की आवश्यकता अनुभव होगी। योजना बनाने वाले देखेंगे कि लूटमार जैसा लाभ न हो पर कामचलाऊ लाभांश इस उद्योग में भी इतना मिल सकता है, जिसे पर्याप्त और सन्तोषजनक कहा जा सके।

अच्छे पौधों की नर्सरी हर क्षेत्र में होनी चाहिए, जिसमें उस क्षेत्र में अच्छी तरह उग सकने वाले वृक्षों की पौध आसानी से मिल सके। ऋतुओं पर फलने वाले पुष्पों और विभिन्न शाकों के अच्छे बीज सुविधापूर्वक मिल सकें, इसका प्रबन्ध भी इसी नर्सरी में होना चाहिए। ये अपने यहाँ पौध उगाने और बीज बेचने के दोनों काम करें। पहाड़ों और जंगलों की जमीन को ठीक-ठाक करके उनमें पेड़ उगाने का काम प्रायः सरकार का वन-विभाग ही करता है। यह कार्य सहकारी समितियाँ बड़े पैमाने पर करने लगें तो अधिक उत्पादन के कारण सरकार को भी अब की अपेक्षा अधिक कर-लाभ मिलने लगेगा और अनेक व्यक्तियों को नये सिरे से एक व्यवसाय मिलेगा। वृक्ष उगाने के साथ-साथ अन्य अनेक सहायक धन्धे जुड़े हुए हैं। जैसे—रेशम, लाख, शहद, गोंद, कत्था जड़ी-बूटियाँ आदि का उत्पादन और उसी क्षेत्र में आसानी से हो सकने वाला पशुपालन। कृषि के काम आने वाली भूमि भी देश में कम नहीं है। वह ऐसे स्थानों पर है जहाँ पहुँचने और रहने की सुविधा कम होने के कारण आबादी बस नहीं सकी है। इस प्रकार की सारी भूमि को सहकारी वृक्ष उत्पादन की योजना के अन्तर्गत लिया जा सकता है। सरकारी योगदान से यह प्रयास अत्यधिक सफल हो सकता है और राष्ट्रीय आय बढ़ने एवं महत्त्वपूर्ण आवश्यकता की पूर्ति का उत्साहवर्धक साधन अनायास सामने आ खड़ा हो सकता है। मिल, कारखाने बनाने वाले मस्तिष्क और साधन यदि इस क्षेत्र को अपना सकें तो बहुत बड़ा काम हो सकता है। छोटे पैमाने पर भी छोटी-छोटी सहकारी समितियाँ स्थानीय सुविधा और आवश्यकता के अनुरूप कुछ काम कर सकती हैं। शाक उत्पादन और फल उद्योग के छोटे-बड़े कार्य तो हर जगह हो सकते हैं, उसे बड़े नगरों में भेजने के लिए ढुलाई का एक नया उद्योग खड़ा हो सकता है। व्यक्तिगत रूप से जिस तरह अन्य व्यवसाय किये जाते हैं, उसी प्रकार इस उद्योग की ओर ध्यान दिया जाने लगे तो प्रतीत होगा कि उपयोगिता और आजीविका की दोनों ही दृष्टि से इस दिशा में किये गये प्रयास कम लाभदायक नहीं हैं।

सार्वजनिक सेवा संगठनों का ध्यान इस ओर जाना चाहिए और अन्य लोकोपयोगी जनकल्याण के कार्यों में ही एक कार्य वृक्षारोपण को भी गिनना चाहिए और उसके लिए उसी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

उत्साह से काम करना चाहिए जिस प्रकार कि अन्य परमार्थ कार्यों के लिए किया जाता है। अपने समीपवर्ती क्षेत्र में ऐसे अनेक स्थान दृष्टि-गोचर हो सकते हैं जो अर्ध-सरकारी या वैयक्तिक होने के कारण उपेक्षित पड़े होते हैं और उन पर ध्यान न दिये जाने के कारण हरितिमा उत्पन्न कर सकना संभव नहीं हो पाता। ऐसे स्थानों में हरियाली उगाना सार्वजनिक सेवा संगठनों को अपने हाथ में लेना चाहिए।

पंचायतघर, स्कूल जैसी सरकारी, अर्ध सरकारी इमारतों के आस-पास खाली जगह पड़ी होती है। उनमें फूलों के जैसे—गुलाब, हारसिंगार, चमेली, चाँदनी, गुड़हल, रातरानी, झाड़ लग सकते हैं। नीबू, बेर अमरूद, अनार, फालसा जैसे फलों के भी प्रायः छोटे झाड़ ही होते हैं। जहाँ कम जगह है वहाँ इस प्रकार के फल-फूल वाले छोटे झाड़ और जहाँ अधिक जगह है वहाँ आम, जामुन, शहतूत, लीची, चीकू जैसे बड़े पेड़ लग सकते हैं। पक्की सड़कों और कच्चे रास्तों के किनारे भी इतनी जगह खाली रहती है कि उन पर छोटे-छोटे बड़े वृक्ष उगाये जा सकें। बड़े आदमियों के बड़े मकान भी काफी जगह घेरे पड़े होते हैं और उनमें पेड़ लगाने की गुंजायश रहती है। इनमें इस प्रकार का उत्पादन आसानी से हो सकता है।

झंझट इस आशंका से उत्पन्न होता है कि उत्पादनकर्ता उस पर अपना दावा प्रस्तुत करेंगे और अधिकार जमाने तथा लाभ लेने का प्रयत्न करेंगे। इस वादे का बेदावा मौखिक रूप या लिखित रूप में दे दिया जाय तो अपनी भूमि में वृक्ष लगाने देने से कोई इन्कार न करेगा और सेवा-संगठन को किसी प्रकार की अड़चन न पड़ेगी। सड़क के किनारे वाली जमीन प्रायः सरकारी निर्माण विभाग की होती है। उनके दफ्तर में अपने वृक्षारोपण की सूचना दे दी जाय और उस उत्पादन पर अपने अधिकार का दावा न करने का लिखित आश्वासन दे दिया जाय तो वैसा करने की स्वीकृति खुशी-खुशी मिल जायगी। गाँव के कच्चे रास्तों के किनारे इस प्रकार के आरोपण की स्वीकृति ग्राम पंचायत से ली जा सकती है। स्कूलों या अन्य सार्वजनिक इमारतों का स्थान मिलने में भी कोई अड़चन नहीं हो सकती।

जहाँ भी खाली किन्तु वृक्षारोपण के लिए उपयुक्त जगह हो वहाँ के लिए प्रयास करने पर उनके स्वामी सहज ही स्वीकृति दे सकते हैं। जब अधिकार पाने का लाभ लेने की दृष्टि नहीं है। मात्र वृक्षारोपण के सत्परिणाम से धरती की शोभा और लोकहित मंगल के अनेक संभावनाओं का विकास करना ही अपना ही लक्ष्य हो तो समझना चाहिए हर जगह इसके लिए पर्याप्त भूमि मिल सकती है और अपने ही क्षेत्र में सैकड़ों, हजारों नये वृक्ष लगा सकना संभव हो सकता है।

बीज बो देने या पौधा गाढ़ देने का नाम ही वृक्षारोपण नहीं है। यह तो प्रथम दिन का आरम्भिक कृत्य है। इस श्रीगणेश को ही लक्ष्य प्राप्ति मान बैठने की जैसी भूल नहीं करनी चाहिए जैसी कि इस प्रकार के आरम्भ शूरों द्वारा पिछले दिनों होती रही है। शिशु को जन्म देकर ही माता-पिता निश्चिन्त नहीं हो जाते वरन् उसे वयस्क स्वाबलम्बी बनने तक बराबर भरण-पोषण करते हैं यही बात वृक्षारोपण के सम्बन्ध में भी है। पौधों के लगाने के उपरान्त उनकी नियमित सिंचाई, गुड़ाई, खाद एवं रखवाली का प्रबन्ध होना चाहिए और इसकी योजना तथा व्यवस्था उसी समय बना ली जानी चाहिए जिस समय का वृक्ष लगाया गया है। आरोपण का कार्य तो उसने पूरे क्षेत्र में मिल-जुलकर एकाध सप्ताह में ही निपटाया जा सकता है किन्तु उन्हें सींचने के लिए स्वयंसेवी श्रम प्रक्रिया के कार्यक्रम बनाने और कंधे पर लिये उत्तरदायित्व को उत्साहपूर्वक निभाते रहने की बात प्रारम्भ में ही निश्चय कर लेनी चाहिए। लगाये गये पौधे को जानवर चर न जायें। इसके लिए उनके चारों ओर सूखे काँटों की नागफनी को, पत्थर के टुकड़ों को अथवा जैसी सुविधा हो, बाड़ बना देनी चाहिए। पत्ती किस मौसम में कितने दिन बाद कितना लगाना पड़ेगा और उसे कौन, कहाँ, किन साधनों में लावेगा इसकी सुनिश्चित योजना बनाई जाय और वृक्षारोपण के पुनीत कर्म में संलग्न हरित सेना के स्वयंसेवक अपने अपने हिस्से का उत्तरदायित्व बिना आलस्य के निबाहते रहने का वृत ग्रहण करें तो समझना चाहिए कि यह आरोपण अपने लक्ष्य तक पहुँच सकने में सफल हो जायेगा।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org
www.vicharkrantibooks.org

जन-जन में लोक सेवा की भावना जगाई जानी चाहिए और जिनमें उस प्रकार का उदार उत्साह पाया जाय उनके स्वयंसेवी संगठन खड़े किये जाने चाहिए। इस प्रकार के संगठन अपने सदस्य को बढ़ाते रहें। श्रमदान के द्वारा मानवीय आदर्शों की अनुकरणीय परम्परा स्थापित करने में यह सदस्य आगे रह सकते हैं। इस प्रकार उनकी संख्या बढ़ती रहे तो वृक्षारोपण ग्राम स्वच्छता जैसे अनेकों उपयोगी समाज कल्याण के कार्य सम्पन्न होते रह सकते हैं। वृक्षारोपण, कार्य को स्वयं श्रम करना तथा दूसरों को, उसके लाभ समझाना, यह दोनों ही कार्य साथ-साथ चलने चाहिए। स्वयं सेवक ही दौड़-धूप करते रहें और लोग स्वयं निष्क्रिय बने रहें तो भी कुछ कार्य न चलेगा। वस्तुतः यह कार्य जन-जन में अभीष्ट चेतना उत्पन्न होने से ही संभव हो सकता है। स्वयं सेवक तो अपने क्रिया-कलाप से उत्साह उत्पन्न करने एवं मार्ग-दर्शन करने का काम ही कर सकते हैं उनकी दौड़-धूप से स्वल्प मात्रा में ही कार्य हो सकता है। सारे देश को हरा-भरा बनाने के लिए तो प्रत्येक नागरिक में वैयक्तिक एवं सामाजिक कर्तव्य-पालन की वृद्धि होनी चाहिए। हरियाली की समीपता में शोभा, सौन्दर्य, आरोग्य एवं राष्ट्रीय तथा मानवीय समस्याओं के समाधान की दृष्टि जुड़ सके तो ही इस प्रयोजन की पूर्ति ठीक तरह हो सकनी संभव है।

आवश्यक है कि वृक्षारोपण एवं हरितिमा अभिवर्धन के लाभ जन-साधारण को समझाये जायें और उस विभीषिका का परिचय कराया जाय जिसके अनुसार वृक्ष-वनस्पतियों के घटने में पशु-पक्षियों एवं मनुष्य के अभावग्रस्त बनकर जीवन-मरण की विपत्तियों में फँस जाना निश्चित है। स्वच्छ वायु का प्रभाव प्राणियों की दम घोंटेगा। भूमि क्षरण के कारण अच्छी-खासी जमीन रेगिस्तान में बदलती चली जायेगी और प्रकृति इस मूर्खता का दण्ड वर्षा में कमी करने के रूप में देगी। ऋतुओं का संतुलन बिगड़ेगा और वर्षा ही नहीं सर्दी-गर्मी की मात्रा भी असंतुलित होकर मनुष्य का अहित उत्पन्न करेगी।

प्राकृतिक सौन्दर्य का अधिकांश वैभव वन सम्पदा पर टिका हुआ है। उद्यानों की परम्परा मिट जाय, पेड़, झाड़ न रहें तो यह धरती कितनी कुरूप लगेगी। इसे उन मरुस्थलों में जाकर ही जाना जा सकता है जहाँ हरितिमा का अभाव है। वे क्षेत्र श्मशान जैसे निष्प्राण और भयावह लगते हैं। शोभा, सुसज्जा की दृष्टि से पेड़-पौधों को प्रथम स्थान दिया जाना चाहिए। घरों में हरियाली उगाने और बेलें चढ़ाने और फूल लगाने का प्रबन्ध उसी सुरुचि में सम्मिलित किया जाना चाहिए जिसमें कि बालों में कंघी करना—कपड़ों को धोना, मकानों को पोतना जैसे कार्य दैनिक-जीवन में सम्पन्न किये जाते हैं। कमरों में टँगे चित्रों में भी प्राकृतिक दृश्यों का समावेश रहता है। यह सुरुचि समाज पर अंकित रहने तक सीमित न रहकर यदि प्रत्यक्ष बन सके तो उससे सुरुचि को कल्पना तक सीमित न रहने देने से आगे बढ़कर प्रत्यक्ष बनने का भी अवसर मिलता है और उस प्रयास में कितने ही प्रकार की उपलब्धियों से लाभान्वित हुआ जा सकता है।

भारतीय धर्म-शास्त्रों में वृक्षारोपण का भारी महत्त्व एवं पुण्य माना गया है। श्रावण मास में हरियाली अमावस्या और हरियाली तीज के दो पर्व विशेषतया उसी लिये हैं कि उन उत्सवों पर नये वृक्ष लगाये जायें। वर्षा ऋतुओं में उनके आसानी से लगने की संभावना रहती है, उस अवसर पर और कुछ न बन पड़े तो तुलसी के पौधे घरों में स्थापित करने और उनमें नित्य जल सिंचन करते रहने का धर्म कृत्य करने का प्रचलन तो अभी भी है। तुलसी बहुत ही आरोग्यवर्धक पौधा है। उसमें घर की वायु शुद्धि कीटाणुओं का नाश, वातावरण में सात्विकता तथा कई बीमारियों में प्रभावशाली औषधि का प्रयोजन पूरा होता है। वृक्षारोपण की प्रेरणा तो उस स्थापना के पीछे स्पष्ट रूप से कार्य करती है। पिछले दिनों प्रथा थी कि पुरोहित लोग अपने यहाँ तुलसी के पौधे उगाते थे और उन्हें प्रत्येक यजमान के घर हरियाली अमावस्या के दिन स्वयं जाकर स्थापित कराते थे। जिस घर में तुलसी का पौधा न होता उसमें अन्न ग्रहण न करते थे। इस प्रचलन से पेड़-पौधों के महत्त्व

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

एवं उस स्थापना में धर्म-भावना का समावेश परिश्रमिक होता है।

देवता और पितरों के नाम पर उनके आत्मा की तुष्टि एवं कीर्ति बनाये रखने के लिए स्मारक के रूप में वृक्षों की स्थापना भी धर्म मान्यता में सम्मिलित हैं। अपने पूर्व पुरुषों की स्मृति में अमीर लोग धर्मशाला, मंदिर, पुस्तकालय, कुआँ, तालाब आदि बनाते हैं। सर्वसाधारण के लिए यह भूमि की पुकार है कि सरल किन्तु लाभदायक स्मारक के रूप में फलदार वृक्षों का आरोपण करें। पूर्वजों की अथवा अपनी स्मृति के रूप में कई लोग बड़, पीपल, आँवला आदि वृक्ष लगाते हैं। इसमें अन्न क्षेत्र की तरह कितने प्राणियों को पोषण और कितनों को ही धर्मशाला की तरह आश्रय मिलता है। गीता में भगवान ने **"अस्वत्थ सर्व वृक्षाणां"** कहकर पीपल को अपना ही मूर्तिमान स्वरूप बताया है। इस प्रकार पीपल के आरोपण देवालय की स्थापना के समतुल्य पुण्य परमार्थ बन जाता है। वृक्षों को कर्ण, दधीचि, हरिश्चन्द्र, मोरध्वज, बलि, वाजिश्रवा जैसे आत्म-दानियों के समान गिना जाता है। परोपकार के लिए ही वे फलते-फूलते और जीवन देते हैं। उनकी छाया के नीचे थके-मादे प्राणी आश्रय प्राप्त करते हैं। प्राचीनकाल में तो आरण्यकों की छाया में ही बड़े-बड़े गुरुकुल चलते थे। ऋषियों की कुटिया उन्हीं की छाया में बनी होती थीं। अभी वे गरीबों के निवास के लिए सुरक्षित मकान का काम देते हैं।

सन्तान के पालन में जो आनन्द आता है वही पेड़-पौधे लगाने और उन्हें सींचने-बढ़ाने से मिल सकता है। मनोरंजन के लिए कई प्रकार के पशु-पक्षी पाले जाते हैं। उनके स्थान पर फलने-फूलने, वृक्षों का पालन और भी अधिक सुखद हो सकता है। पिंजड़ों में बन्द करके पक्षी और रस्से में जकड़कर पशु पालन कर अपना मनोरंजन करने वाले यदि लता-पुष्प बदलने और घरेलू उद्यान लगाने की बात सोचें तो वे देखेंगे कि बिना किसी प्राणी को बंधन में बाँधे मनोरंजन का कितना स्वस्थ और सात्विक आधार हाथ लग गया।

जड़ी-बूटियाँ आयुर्वेदिक औषधियों का प्रमुख आधार हैं। आज सही और ताजी जड़ी-बूटियाँ मिलने में भारी कठिनाई हो रही है। फलतः अपने चिकित्सा-विज्ञान की उपयोगिता घटती जा रही है। फिर जड़ी-बूटियों को उगाने का कार्य हाथ में लिया जा सके तो असली और ताजी जड़ी-बूटियों से बनी आयुर्वेदिक औषधियाँ ऐलोपैथी दवाओं की तुलना में हीं अधिक निर्दोष एवं गुण-कारक सिद्ध हो सकती हैं साथ ही उत्पादक का समुचित लाभ एवं यश प्राप्त करते, हुए जन साधारण को महत्त्वपूर्ण सेवा करने का अवसर मिल जाता है।

फलों की अपने देश में कितनी कमी और मँहगाई है। यही बात मेवों के सम्बन्ध में है। अब तक आयात करने पड़ते हैं। फलों के उद्यान लगाने और मेवा का वृक्ष लगाने का कार्य यदि योजनाबद्धरूप से किया जा सके तो उसमें आर्थिक लाभ तो स्पष्ट ही है। पौष्टिक खाद्य की आवश्यकता भी उस उत्पादन से पूरी हो सकती है। अफीम, तम्बाखू आदि हानिकारक पदार्थ की कृषि करने वाले शराब, सिगरेट आदि का उद्योग चलाने वाले यदि अपनी बुद्धि और पूँजी फल और मेवा के उद्यान लगाने में नियोजित कर सकें तो उससे वे स्वार्थ और परमार्थ का अच्छा समन्वय कर सकते हैं। विष्णु स्मृति में वृक्षारोपण का पुण्य बताते हुए कहा गया है—

वृक्षारोपयितुर्वृक्षाः परलोके पुत्रा भवन्ति।
वृक्षप्रदो वृक्षप्रसूनैर्देवाहे प्रीणयति—
फलैश्चतिथीन् छाययाचाभ्यागतान्
देवे वर्षत्युदकेन पितृन।
पुष्प प्रदानेनं श्रीमान् भवति।
कूपारामतड़ागेषु देवताततनेषु च।
पुनः संस्कारकर्ता च लभते मौलिकं फलम्।।

अर्थात्—जो मनुष्य वृक्षों का आरोपण करता है वे वृक्ष उसके परलोक में पुत्र होकर जन्म लेते हैं। वृक्षों का दान करने वाला वृक्षों के पुष्पों के द्वारा देवों को प्रसन्न करता है। फलों के द्वारा अतिथियों को सन्तुष्ट किया करता है और मेघ के बरसने पर छाया द्वारा अभ्यागतों को तथा जल से पितरों को प्रसन्न करता है। पुष्पों का दान करने से समृद्धिशाली होता है। कुआँ, उद्यान, तालाब और देवायतन का

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पुनःसंस्कार अर्थात् जीर्णोद्धार कराने वाला व्यक्ति मौलिक फल प्राप्त किया करता है, अर्थात् उनके नूतन निर्माण कराने के समान ही पुण्य फल पाता है।

इसके विपरीत जो वृक्षों को नष्ट करते हैं उनकी निन्दा-भर्त्सना की गई है। ऋग्वेद में ऋषि ने कहा है—

मा का कम्बीरमुद्वहो वनस्पतिन शस्तोर्वि हि नीनशः।
मोत सूरो अह एवा वन ग्रीवा आदधते वेः।।

ऋग. ०६। ४८। १७

अर्थात्—जिस प्रकार दुष्ट बाज पक्षी दूसरे पखेरुओं की गर्दन मरोड़कर उन्हें दुःख देता है और मार डालता है तुम वैसे न बनो और इन वृक्षों को दुःख न दो, इनका उच्छेदन न करो। ये पशु-पक्षियों और जीव-जन्तुओं को शरण देते हैं।"

वृक्षों और वनस्पतियों के सरल उत्पादन में जितना स्वार्थ, परमार्थ का समन्वय है उतना कदाचित ही अन्य किसी में होगा। ऐसे उपयोगी कार्य के लिए जन-जन के मन में प्रबल उत्साह उत्पन्न किया जाना चाहिए। इस अभियान से जहाँ तक एक ओर फलों, शाक-सब्जियों के उत्पादन में अभिवृद्धि होगी, वहीं दूसरी ओर आहार के संदर्भ में सर्वसाधारण का रुझान प्राकृतिक जीवनक्रम की ओर लौटेगा। इससे जहाँ अन्न की कमी फलों और सब्जियों से पूरी की जा सकेगी, वहीं आरोग्य लाभ का महत्त्वपूर्ण फायदा हर एक को मिल सकना संभव हो सकेगा।

वृक्ष हमारे जीवन-प्राण

मत्स्य पुराण में एक कथा आती है, जिसके अनुसार दस कुओं के निर्माण का पुण्य एक तालाब के निर्माण के बराबर तथा दस तालाबों का निर्माण एक सद्गुणी पुत्र के निर्माण के बराबर तथा दस सद्गुणी पुत्रों के बराबर पुण्य एक वृक्ष को तैयार करने का माना गया है।

यहाँ पर वृक्षों के महत्त्व को दर्शाया गया है। वेदों, उपनिषदों तथा आर्य ग्रन्थों में इस संदर्भ में विस्तृत विवरण मिलता है कि महान् ऋषि, तत्वदर्शी किसी महल में नहीं अपितु वनों एवं वृक्षों के सम्पर्क में रहकर ही सूक्ष्म दृष्टि सम्पन्न बने और उन्हीं की छाया में सद्ग्रन्थों का सृजन किया था। भगवान बुद्ध को राजमहलों में नहीं अपितु वट वृक्ष के नीचे बुद्धत्व प्राप्त हुआ था।

अरब राष्ट्रों में, जो इन दिनों विश्व में पेट्रोलियम आवश्यकता की पूर्ति करते हैं, कभी प्राचीन काल में घने जंगलों का विशाल भू-भाग था। काल चक्र के परिवर्तन के साथ-साथ विशाल वन-सम्पदा भूमिगत और ऊसर रेगिस्तान बन गया। यह उनके द्वारा किये गये दुष्कृत्यों की ही परिणति है। वातावरण के निर्माण में वृक्षों का जो महत्त्व है उस ओर अब धीरे-धीरे पर्यावरण वैज्ञानिकों का भी ध्यान गया है। वर्तमान खोजों से यह तथ्य उभरकर सामने आया है कि एक पीपल का वृक्ष अपने जीवनकाल में लगभग २२५० किलोग्राम कार्बन-डाइ-आक्साइड वायुमण्डल से खींचता है और उसके बदले में १,७१० किलोग्राम के लगभग प्राणवायु के रूप में ऑक्सीजन का विसर्जन करता है, जो करीब ६ लाख व्यक्तियों के लिये पर्याप्त है। दुर्भाग्य से यह वृक्ष भी कारखानों के मजदूरों की तरह कुछ घण्टों के लिये सांकेतिक हड़ताल कर दें, तो सारा विश्व तबाह हो जायगा।

वृक्षों की महिमा का वर्णन करते हुए भगवान कृष्ण ने गीता के दसवें अध्याय में कहा है कि वृक्षों में मैं पीपल का वृक्ष हूँ। इससे स्पष्ट है कि अन्य वृक्षों की अपेक्षा पीपल के वृक्ष में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड के शोषण की क्षमता तथा आक्सीजन के उत्सर्जन की क्षमता ज्यादा है। इस तथ्य को हमारे ऋषियों, मुनियों ने भी समझा था, इसी कारण भारतीय, हिन्दू धर्म में पीपल के वृक्ष को काटना प्रतिबन्धित माना है।

वृक्षों की कमी के कारण ही वातावरण प्रदूषण की समस्या पैदा हो गयी है। यदि वृक्ष लगाकर इसे रोका न गया तो कार्बन डाइ-ऑक्साइड की अधिकता से वातावरण में गर्मी बढ़ेगी और ध्रुवीय क्षेत्रों की बर्फ पिघल

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कर समुद्र का जल-स्तर ऊँचा होने व जल प्रलय आने की स्थिति पैदा हो सकती है।

विष्णु पुराण में उल्लेख है कि फल-फूल देने वाले वृक्ष को जहाँ विनिष्ट किया जाता है वहाँ अनावृष्टि, अतिवृष्टि और दुर्भिक्ष जैसे संकट अवश्यम्भावी हैं। इसी में आगे कहा गया है कि जिन्हें कुल और धन की रक्षा और वृद्धि करनी हो उन्हें फलदार वृक्षों की रक्षा एवं अभिवृद्धि करनी चाहिए।

अग्निपुराण में वृक्षों की महिमा का स्पष्ट उल्लेख है। उसमें कहा गया है कि उद्भिदों जैसा उपकारक अन्यत्र नहीं जो अयाचित बिना किसी भेदभाव और बदले की भावना के पत्र, पुष्पों, फल और मूल, वल्कल और काष्ठ तथा मधुरिमा छाया से सभी प्राणियों का उपकार करते रहते हैं।

अन्य पुराणों में भी वृक्ष पूजा और वृक्षारोपण सम्बन्धी प्रचुर सामग्री उपलब्ध है। वृक्षों का शुभाशुभ, मंगल विधान ब्रह्मवैवर्त पुराण के कृष्ण जन्म खण्ड अ-१०२ में उपलब्ध है।

पद्म पुराण में वृक्षारोपण नाम से पृथक् अध्याय ही है। इसमें वृक्ष पूजन व प्रतिष्ठा का विधान तक उपलब्ध है।

वट वृक्ष की पूजा का उल्लेख पद्म पुराण और मत्स्य पुराण में भी मिलता है। **"महेश्वरो वटो भूत्वा तिष्ठते"** शिव के रूप में इसकी पूजा की जाती है।

सुप्रसिद्ध पर्यावरणविद् वृक्षमानव डॉ. रिचार्ड बेकर का कहना है कि सघन वट वृक्षों की वायु में एक विशेष प्रकार की आर्द्रता होती है, जिससे उसके आस-पास के निवासी स्वस्थ एवं सक्रिय बने रहते हैं। पेड़ों के कटते चले जाने से रोगों के संक्रमण की दर बढ़ती चली जाती है। श्वाँस एवं त्वचा के रोग इसके दुष्परिणाम हैं।

शरीरशास्त्रियों के मतानुसार ऑक्सीजन जीवन का स्रोत है। वातावरण में उसकी कमी न केवल शारीरिक रुग्णता पैदा करती है वरन् अनेकों प्रकार के रोगों को भी जन्म देती है। स्वच्छ एवं प्रचुर प्राणवायु के अभाव में मस्तिष्क संस्थान असंतुलित हो जाता है। फलतः मनःस्थिति विक्षुब्ध, उत्तेजित, आवेशग्रस्त रहती है एवं आवेशग्रस्त मनःस्थिति की अपराध कृत्यों में महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। पंजाब में बढ़े आतंकवाद के मूल में वृक्षों का कटना ही मूल कारण है।

सम्पूर्ण समस्याओं के समाधान हेतु यूनेस्को के तत्वाधान में इण्डोनेशिया में १५० वैज्ञानिकों का एक सम्मेलन हुआ था, जिसमें आस्ट्रेलिया, नीदरलैण्ड, कनाडा, अमेरिका व ब्रिटेन के विशेषज्ञों ने भाग लिया। सम्मेलन के अध्यक्ष ब्लादीमिर कजीना ने चेतावनी देते हुए कहा कि "यदि वृक्ष नहीं रहेंगे तो मनुष्य भी नहीं रहेगा।" उनके अनुसार अमेरिका में लू, रूस में बाढ़, भारत में मौसम का अत्यन्त अनियमित हो जाना, जगह-जगह बीमारियों, असाध्य रोगों में वृद्धि का कारण वन-सम्पदा का निर्मम विनाश है। यदि समय रहते नहीं चेता गया तो सहारा सेगिस्तान की तरह स्थिति सारे विश्व की होगी। अतः समय आ गया है जब हमें वृक्षारोपण को अपनी महत्त्वपूर्ण गतिविधियों में सम्मिलित करना चाहिये। इसके लिये मकानों, जलस्रोत और खेतों के चारों ओर के अतिरिक्त गाँव के मिलन केन्द्र एवं पूजा के स्थानों के आस-पास घनी छाया वाले फलदार वृक्ष लगाये जाने चाहिए।

वृक्षारोपण को देवाराधन के समकक्ष पुण्य फलदायी माना गया है। वन्य सम्पदा हमारे देश की सांस्कृतिक धरोहर है। हरियाली अमावस्या पर नये वृक्ष लगाने की चिरकालीन परम्परा अपने देश में रही है। इस कार्य को यदि हर गाँव में एक छोटी नर्सरी बनाकर वहाँ से जनोपयोगी, घनी हरितिमा वाले पौधे वितरित करने के कार्य को जोड़ा जा सके तो चारों ओर हरियाली का साम्राज्य छा सकता है। इस प्रकार भारत भूमि को निश्चित रूप से अधिक से अधिक सुजला, सुफला, शस्य श्यामला बनाया जा सकता है। वर्तमान समय में इससे बढ़कर पुण्य और हो ही नहीं सकता।

वृक्षारोपण का पुण्यफल

वृक्षारोपण ऐसा परमार्थ है, जो मात्र श्रम एवं उत्साह की सहायता से ही संभव हो जाता है। खाली जमीनों पर फलदार एवं जलाऊ

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लकड़ी के पेड़ लगाये जा सकते हैं। वन सम्पदा के वृद्धि से (१) अधिक वर्षा होने (२) भूमि का कटाव रुकने (३) जमीन की उर्वरता बढ़ने (४) मौसम का संतुलन बनने (५) उपयोगी प्राणवायु प्राप्त होने (६) फल, छाया एवं लकड़ी मिलने (७) हरितिमा का उपयोगी मानसिक प्रभाव पड़ने (८) पशु-पक्षियों को आश्रय मिलने जैसे अनेकों लाभ हैं। धर्मशास्त्रों में वृक्षारोपण को परमपुण्य बताया गया है।

कीर्तिश्च मानुषे लोके प्रेत्य चैव शुभं फलम्।
लभ्यते नाकपृष्ठे च पितृभिश्च महीपते।।
देव-लोक गतस्यापि नाम तस्य न नश्यति।
अतीतानागतश्चैव पितृवंशाश्च भारत।।
तारयेत् वृक्षरोपीतु तस्माद् वृक्षान् प्ररोपयेत्।।

—महाभारत

"भरतनन्दन ! वृक्ष लगाने से मनुष्य-लोक में कीर्ति बनी रहती है और मृत्यु के पश्चात् स्वर्गलोक में शुभ फल की प्राप्ति होती है। वृक्ष लगाने वाला पुरुष पितरों द्वारा भी सम्मानित होता है। देवलोक में जाने पर भी उसका नाम नष्ट नहीं होता। वह अपने बीते हुए पूर्वजों और आने वाली सन्तानों को भी तार देता है। अतः वृक्ष अवश्य लगाने चाहिये।

तस्य पुत्रा भवन्त्येव पादपा नाच संशयः।
परलोक गतः स्वर्गे लोकांश्चाप्नोति सोव्ययान्।।

—महा.

जिसके कोई पुत्र नहीं है, उसके वृक्ष ही पुत्र होते हैं, इसमें संशय नहीं है। वृक्ष लगाने वाला पुरुष परलोक में जाने पर स्वर्ग में अक्षय लोकों को प्राप्त करता है।

पुष्पैः सुरगणान् वृक्षाः फलैश्चापि तथा पितृन्।
छायायां चातिथींस्तात पूजयन्ति महोरुहाः।।

—महा.

"तातः वृक्ष अपने फूलों से देवताओं का, फलों से पितरों का तथा छाया से अतिथियों का सदा पूजन करते रहते हैं।

भूमि दानेनयेलोका गोदानेन च कीर्तिताः।
तांल्लोकान्प्राप्नुयान्मर्त्यः पादपानां प्ररोपणे।।

—लिखित

भूमि के दान से जो लोक प्राप्त होते हैं और जो गौ के दान से बतलाये हैं। उन्हीं लोकों को वृक्षों को लगाने से मनुष्य पाता है।

पुष्पिताः फल वन्तश्च तर्पयन्तीह मानवान्।
वृक्ष दान पुत्र वद् वृक्षाः तारयन्ति परम च।।
तस्मात् तटाके वृक्षा वै रोप्याः श्रेयोऽर्थिना सदा।।

—दक्ष स्मृति

फल और फूलों से भरे हुये वृक्ष इस जगत् में मनुष्यों को तृप्त करते हैं जो वृक्ष, दान करते हैं उनको वे वृक्ष परलोक में पुत्र की भाँति पार उतारते हैं। अतः कल्याण की इच्छा चाहने वाले को सदा ही सरोवर के किनारे वृक्ष लगाना चाहिये।

त्रि लोकेषु च गुल्याणां वृक्षाणां देव पूजने।
प्रधान रूपा तुलसी भविष्यति वरानने।।

ब्रह्म वैवर्त

तीनों लोकों में जितने भी गुल्म एवं वृक्ष हैं उन सब में तुलसी सबसे श्रेष्ठ है।

इन्धनार्थमशुष्काणां द्रुमाणामवपातनम।
आत्मार्थं च क्रिया रम्भा निन्दितान्नादनं तथा।।

—मनु. ११। ६४

ईंधन के लिये हरे वृक्षों को काटना और निन्दित अन्न को खाना उपपातक है।

वृक्ष वनस्पति के प्रति श्रद्धा अक्षुण्ण रहें

पेड़-पौधों के प्रति पूज्यभाव रखने की अपनी परम्परा सदियों पुरानी है। दुनिया में कोई भी देश ऐसा नहीं जिसमें एक त्यौहार केवल इसीलिए मनाया जाता हो कि उस दिन हर व्यक्ति वृक्षारोपण आवश्य करे। यह पर्व भी ब्राह्मण पर्व कहलाता है—अर्थात् वृक्षारोपण को ब्रह्मकर्म के समतुल्य माना गया है। महाभारत ने तो एक वृक्ष लगाने को सौ पुत्रों से बढ़कर पुण्य माना है।

इस उदात्त दृष्टिकोण में विराट् आत्मा की अनुभूति भी संयुक्त हो सकती है और आत्मीयता के विस्तार का प्रायोगिक प्रशिक्षण भी किसी दृष्टि से लें यह एक उपयोगी और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

आवश्यक ही नहीं अनिवार्य परम्परा रही है। जिसकी वैज्ञानिक उपयोगिता इन दिनों समझ में आ रही है, जबकि वृक्ष-वनस्पति हमारे सम्मुख त्रिदेवों की तरह अत्यन्त पूज्य रूप में प्रतिष्ठित होते हैं। ब्रह्मा के रूप में वे सृष्टि में सौन्दर्य की रचना करते हैं। विष्णु के रूप में उनका पालन गुण सर्वविदित है। आज तो उनकी सर्वाधिक प्रतिष्ठा शिव रूप में है। इस रूप में मानवता का विष निरन्तर पीते रहने का देवकार्य वे न कर रहे होते, तो बीसवीं शताब्दी धरती में जीवन के सर्वनाश की शताब्दी होती। आज का विज्ञान भी स्वीकारता है कि मानवी अस्तित्व फ्लोरा (पृथ्वी के वनस्पति जगत) पर आधारित है। सूर्य से मिलने वाले अनुदान हम पचा नहीं पाते, यह वृक्ष ही हैं जो कच्चे अन्न को भोजन के रूप में पकाकर देने वाली माँ की तरह सौर ऊर्जा को पहले स्वयं आत्मसात करते और पीछे हमारे लिए उपयोगी और प्राणदायी बनाकर वातावरण में बिखेर देते हैं। इनके गुणों को देखकर ही किसी विद्वान ने आज के बुद्धिवाद पर व्यंग करते हुए लिखा है कि आज लोग मेट्रोलॉजिकल प्लान्ट, थर्मोप्लान्ट, हाइड्रोइलेक्ट्रिक प्लान्ट, प्रभृति प्लान्टों पर तो ध्यान देते हैं, पर प्लान्ट (पौधों) पर नहीं जिनके बिना मनुष्य का जीवन संकट में पड़ सकता है।

थोड़े से भी थोड़ा पढ़ा-लिखा व्यक्ति जानता है कि प्रश्वाँस क्रिया में धुँये तथा पदार्थों के सड़ने आदि से उत्पन्न कार्बन-डाइ-आक्साइड जो एक विषैली गैस है, उसे पेड़-पौधे ही सूर्य के साथ होने वाली फोटो-संश्लेषण क्रिया में काम में लेकर ग्रहण कर लेते हैं और बदले में आक्सीजन गैस छोड़ते हैं। जीवधारियों की प्रश्वाँस को अपनी श्वाँस और अपनी प्रश्वाँस को जीवन के लिए श्वाँस बनाकर वृक्ष-वनस्पति सृष्टि में जो "इकोलॉजिकल संतुलन" स्थापित करते हैं। उसी के कारण सृष्टि टिकी हुई है।

किन्तु लगता है मनुष्य उस सन्तुलन को बिगाड़ डालने और अपने हाथ अपनी 'खुदकशी" करने को तुल पड़ा है। जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ अधिक कृषिभूमि, अधिक आवास, सड़कों, नहरों, फैक्टरियों, बड़े-बड़े कारखानों के लिए अधिक जमीन चाहिए और यह सब जंगल साफ करके, वृक्षों का विनाश करके ही सम्भव है। वही हो रहा है जिससे आक्सीजन और कार्बन-डाइ-ऑक्साइड का संतुलन बिगड़ रहा है। ऑक्सीजन की जमा पूँजी कम और खर्च बढ़ाने से पिछले ५० वर्षों में कार्बन-डाइ-ऑक्साइड की मात्रा ०.०३० से बढ़कर ०.०४४ प्रतिशत बढ़ गई है। इस असंतुलन को पाटने के लिये अधिक से अधिक वृक्ष लगाने की आवश्यकता है। अब इसे मात्र धार्मिक दृष्टि से नहीं अपितु जीवनरक्षा की दृष्टि से भी पूरा किया जाना चाहिए।

कार्बन डाईआक्साइड के अतिरिक्त कल कारखानों से सल्फर-डाइ-ऑक्साइड, कैडमियम, लेड, नाइट्रोजन ऑक्साइड का विष भी बुरी तरह बढ़ता जा रहा है। टोक्यो (जापान), न्यूयार्क (अमेरिका) तथा लन्दन (इंग्लैण्ड) के कुछ क्षेत्र तो ऐसे हैं जहाँ साँस लेने तक में भी कष्ट होता है। यह विष मनुष्य देह के लिए प्रतिदिन ४० सिगरेटें पीने के बराबर नुकसानदायक होता है। शीशे (लेड) का जहर किडनी डैमेज (गुर्दा नष्ट करना), ब्लड प्रेशर तथा मस्तिष्कीय क्रियाओं को क्षतिग्रस्त करता है। सल्फर-डाइ-ऑक्साइड अस्थमा तथा श्वाँस सम्बन्धी कष्ट उठ खड़े होते हैं। हमारे देवता यह वृक्ष उस विष को पियें नहीं तो हर व्यक्ति रोगशैया पकड़ ले।

एक वृक्ष एक ऋतु में वायुमण्डल से १३० लिटर पेट्रोल के शीशे का अंश सोखकर उसे लेड फास्फेट में बदल देता है। यह पानी में घुलता नहीं, उसे वह अपने आप में जीवन भर आत्मसात किये रहता है। मर जाने के बाद ईंधन के रूप में उसे ही मनुष्य के लिए उपयोगी बनाकर छोड़ जाता है।. यही नहीं बड़े कारखाने जो ताप पैदा करते हैं, स्वयं प्रकृति की गर्मी की असह्य मात्रा को भी संतुलित रखने में यह वृक्ष सहायक होते हैं।

एटॉमिक रेडिएशन (अणु विकिरण) जैसे हानिकारक प्रभाव से भी वृक्ष हमारी जीवन-रक्षा करते हैं। मान्ट्रियल स्थित मैकगिल यूनिवर्सिटी की गैस्ट्रो इन्टेस्टाइनल रिसर्च लैबोरेटरी ने अपनी शोधों के आधार पर बताया है कि साधारण घास तक रेडियेशन से रक्षा करती है। अतएव पृथ्वी में हरितिमा अभिवृद्धि, वृक्षारोपण, पुष्पवाटिका अभियान को नैतिक कर्तव्य के रूप में पूरा करना चाहिए। शहरों में तो लॉन और पार्क इतने अधिक आवश्यक हैं कि उन्हें मनुष्य जीवन का हृदय ही कहा जा सकता है। वह

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

मस्तिष्क को दृष्टि मात्र से निद्रा प्रदान करने वाली शीतलता देते हैं। यदि शहरों में पार्क न हों तो पागलपन की मात्रा इतनी अधिक बढ़ सकती है कि उसे सम्भालना कठिन हो जाये।

जेट, हवाई-जहाजों, भारी मात्रा में रेलों, बसों, भारवाहनों तथा फैक्टरियों आदि के शोर-गुल से कानों में सीधा आघात पहुँचता है। वृक्ष न हों तो यह शोर-गुल ही लोगों को बहरा बना दे सकता है। किसी भी रूप में वृक्षों के प्रति श्रद्धा व्यक्त किये बिना काम चलेगा नहीं।

जंगल अनावश्यक न कटें यह कार्य सरकार देखे पर मनुष्य को तो स्थान-स्थान पर वृक्षारोपण करना ही चाहिये। घरों के आस-पास गमलों, लकड़ी की पेटियों में फल-फूल, सब्जियाँ लगाकर अपने लिए दोहरे लाभ की व्यवस्था कर सकते हैं। फूलों के पौधे तो कहीं भी निरर्थक स्थान मिले वहीं रोपें। यह न कहें कि यह स्थान उनका तो है ही नहीं। मानवता की सुरक्षा का दायित्व सब पर है, उसे उदारतापूर्वक पूरा किया जाना चाहिए।

वृक्ष सम्पदा को घटने न दें

वृक्ष-वनस्पतियों और पशु-पक्षियों समेत मनुष्य हरितिमा के आधार पर जीवित रहते हैं। पशु घास खाते हैं और पेड़ों के पत्ते चरते हैं। मनुष्य का आहार अन्न के दाने, शाक, फल व वनस्पति हैं। यह खाने को न मिले तो जीवित रहना सम्भव नहीं। माँसाहारी भी—शाकाहारी—प्राणियों का ही माँस खाते हैं। इस प्रकार जीवन को घास-स्तर की तथा वृक्ष-स्तर की वनस्पतियों पर ही निर्भर माना गया है। उसके उत्पादन और संरक्षण का पूरा ध्यान रखा जाय, तभी आवश्यकता की पूर्ति संभव है।

वृक्ष दिन भर ऑक्सीजन उगलते रहते हैं और प्राणियों के साँस द्वारा छोड़ी हुई कार्बन-डाइ-ऑक्साइड को निगलते हैं। इसलिये उन्हें नीलकण्ठ की उपमा दी गयी है। आग लगने तथा कारखानों से विषैली वायु निकालने का वायु प्रदूषण प्रायः वनस्पति द्वारा शोधित किया जाता है।

वृक्षों का चुम्बकत्व आकाश से बादलों को खींचता है और बरसने के लिए विवश करता है। जिन क्षेत्रों के वृक्ष कट जाते हैं, वहाँ वर्षा का अनुपात भी बहुत कम हो जाता है। लीबिया अब से १०० वर्ष पहले हरितिमा से भरा हुआ था। तब वहाँ वर्षा खूब होती थी और घास के सहारे पशु भी पलते थे। इस बीच वहाँ के जंगल कट गये। कीमती लकड़ी योरोप चली गई। वीरान क्षेत्र में वर्षा बन्द हो गई और बहुत बड़ा इलाका रेगिस्तान बन गया। इस अभाव के कारण वहाँ कितनी दरिद्रता बढ़ी होगी, इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है।

वृक्षों की जड़ें जमीन में गहरी जाती हैं और वर्षा के प्रवाह में बह जाने से उसे रोके रहती हैं। वृक्ष न हों तो वर्षा का पानी न तो जमीन के भीतर रुकेगा और न पकड़ के अभाव में मिट्टी यथास्थान टिकी रहेगी, बहकर नदी-नालों में चली जायेगी और भूमि की उपजाऊ ऊपर वाली परत न रहने पर न तो कृषि ठीक तरह फसल देगी और न जमीन में घास-पात उगेगी। मिट्टी वर्षा के पानी के साथ बहकर जब नदी-नालों में जाती है, तो उनकी सतह ऊपर उठती जाती है। गहराई कम होने पर पानी समतल भूमि में फैलता है और बाढ़ आने की स्थिति बन जाती है। इस बाढ़ में फसल बह जाती है और खेत कहीं से कहीं जा पहुँचते हैं, बालू-रेत से भर जाते हैं।

यह हानियाँ साधारण नहीं, असाधारण हैं। इसके अतिरिक्त एक और भी बड़ी बात यह है कि हरितिमा का मानसिक स्तर पर बड़ा प्रभाव पड़ता है। प्राचीनकाल के ऋषि-तपस्वी अपनी भाव-चेतना को उच्चस्तरीय बनाये रखने के लिए सघन वनों में रहते थे। वृक्षरहित क्षेत्रों में मनुष्यों की मनोवृत्ति नीरस और दुष्ट हो जाती है और वहाँ अपराध, विग्रह अपेक्षाकृत अधिक होने लगते हैं।

वृक्षों की जड़ें नीचे जमीन में जाती हैं, तो अपनी पकड़ के कारण वर्षा का पानी उस भूमि में रोके रहती हैं, फलतः उस क्षेत्र में उगने वाले पेड़-पौधों को खुराक मिलती रहती है। यदि पेड़ न हों तो समतल भूमि का पानी सर्राटे से बहकर नदी नालों में चला जाता है। जमीन एक-दो महीने में सूख जाती है। सर्दी के दिनों तथा गर्मी में पेड़-पौधों की जड़ें प्यासी रह सकती हैं फलतः वे सिंचाई का विशेष प्रबन्ध होने पर भी जीवित नहीं रहते हैं, अन्यथा प्राकृतिक रूप से उनका पालन-पोषण बन्द हो जाता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कुओं का, झरनों का, तालाब-बावड़ियों का पानी तभी अधिक दिन टिकता है, जब पेड़ों की जड़ें ऊपर की सतह को गीली रखती हैं, अन्यथा कुएँ सूख जाते हैं, उनका पानी गहराई में उतर जाता है। इन कारणों से मनुष्यों और पशुओं को, पानी का त्रास सहना पड़ता है।

वृक्षों के पत्ते तथा फूल ठंडक के दिनों में टूटकर जमीन पर गिरते हैं। वे सूखते और सड़ते रहते हैं, उनका खाद बनता रहता है। इस प्रकार जमीन को वृक्ष ऊपर से खाद बरसाते हैं और जड़ों से दूर-दूर तक नमी रोके रहने के कारण पानी देते रहते हैं। हरितिमा अपने आप बनी रहती है और नये पेड़-पौधे उगते-बढ़ते रहते हैं, किन्तु यदि वृक्षों को ईंधन या फर्नीचर के लिए बेहिसाब काटा जाने लगे और उनके स्थान पर नये पेड़ न उगें, तो उसके प्रतिफलस्वरूप सारे क्षेत्र की भूमि ऊसर और खाली दीखने लगेगी। पुराने कटते चलें और नये उगाये न जायें, तो उस अभाव के कारण लकड़ी दिन-दिन कम होती चली जायेगी।

पक्षी पेड़ों पर ही रहते हैं। वे कितने ही उपयोगी काम करते हैं। एक तो यह कि फसल को नष्ट करने वाले कीड़े-मकोड़े खाते रहते हैं और फसल की क्षति बचाते हैं। दूसरे यह कि अपने पंजों और पैरों के स्पर्श से जो पराग चिपका लेते हैं, उसे अन्य पेड़ पर बैठते समय मादा जाति के फूलों पर छिड़क देते हैं। फलस्वरूप उनको अच्छी तरह फलने का अवसर मिलता है। यदि पक्षी इस कार्य को न करें तो नर पराग के अभाव में उनका फलना रुक जायगा। छोटे फूल-पौधों का पराग प्रत्यावर्तन मोरों, तितलियों, मधुमक्खियों द्वारा होता है। इसलिए फूलने के बाद वे फल और बीज भी देते हैं। यह कार्य पेड़ों के फूलने के समय पक्षी करते हैं। उनके फलने का बहुत कुछ श्रेय इन पक्षियों को ही है। पक्षी पेड़ों पर ही घोंसले बनाते हैं। वे दूर-दूर तक उड़ते हैं और अपनी बीट के साथ इन पर्वतीय एवम् सुनसान क्षेत्रों में बीज गिरा देते हैं। फलतः उन क्षेत्रों में भी हरितिमा उगने लगती है, जहाँ मनुष्य का आवागमन नहीं होता। समुद्री टापुओं में जो वृक्ष-वनस्पतियाँ पायी जाती हैं, उसे पक्षियों द्वारा बोया गया ही समझना चाहिए।

अन्य पशु पेड़ों की छाया में ही सर्दी, गर्मी और वर्षा की भयंकरता से अपना बचाव करते हैं। इसलिए पेड़ न केवल पक्षियों के लिए वरन् पशुओं के लिए भी आश्रय-स्थल हैं। हिरन, लोमड़ी, खरगोश, सियार आदि जंगलों में ही खुराक एवं आश्रय प्राप्त करते हैं। उनके मल-मूत्र, हड्डी, चमड़ा आदि से वन-प्रदेश को कीमती खाद मिलती है और वह क्षेत्र सदा हरा-भरा रहता है। वन्य पशु जहाँ अपनी खुराक जंगलों से प्राप्त करते हैं, वहाँ बदले में उस क्षेत्र को कीमती खाद भी देते रहते हैं।

सभी विचारशील देशों में प्रायः एक तिहाई जमीन वन लगाने के लिए छोड़ी जाती है। वे जानते हैं कि लकड़ी के लोभ में यदि उस क्षेत्र की सफाई कर डाली गयी और खेत बना लिये गये तो इस छोटे लाभ के बदले जो हानि उठानी पड़ेगी, वह कहीं अधिक होगी। जमीन की मिट्टी बह जायेगी और वहाँ खड्डे-खंदक पड़ जायेंगे। जिनमें चोर-डाकू मजे से आश्रय प्राप्त करते रहें। जमुना और चम्बल के इर्द-गिर्द पेड़ों को लगाने या बढ़ाने का प्रयत्न नहीं किया गया, फलतः किनारों के आस-पास ही लाखों एकड़ जमीन खड्ड-खंदकों से भर गयी और उन इलाकों में छिपने की सुविधा होने के कारण डाकुओं की असाधारण बढ़ोत्तरी हो गई। उनके भय से खुशहाल किसान और व्यापारी जान बचाने के लिए शहरों में चले गये।

दुधारू पशुओं को जंगल-चरागाह में चरने भेजते रहने की सुविधा होने पर एक ग्वाला बीसियों पशुओं को चरा लेता है और उनके लिए खुराक की अतिरिक्त व्यवस्था नहीं करनी पड़ती। जहाँ पर यह सुविधा नहीं है, वहाँ पर घर बाँध कर जानवर पालने पड़ते हैं और खरीदा हुआ चारा लेने पर वे बहुत महँगे पड़ते हैं। ठाली पशुओं एवम् बच्चे, जानवरों का परिपालन तो एक प्रकार से अति कठिन ही हो जाता है। फलतः वे कसाई के यहाँ चले जाते हैं। इस प्रकार पशु घटते जाने से बैल-गाय आदि सभी की कीमतें बढ़ती हैं और दूध-घी जैसे खाद्य पदार्थों के दाम आकाश को चूमने

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

लगते हैं। गरीबों के बच्चे इतना महँगा दूध न पा सकने के कारण अत्यन्त दुबले रह जाते हैं और अकाल मृत्यु का शिकार बनते हैं। यदि जंगल चरागाह बने रहते तो, पशुओं की इतनी कमी न पड़ती। दूध के अभाव में बच्चों को दुर्बलता, रुग्णता और अकाल मृत्यु का ग्रास न बनना पड़ता।

कलकत्ता यूनिवर्सिटी कॉलेज ऑफ एग्रीकल्चर के डॉ. टी. एम. दास वनस्पतिशास्त्र के विशेषज्ञ हैं, उनके अनुसार एक वृक्ष अपने ५० वर्ष के जीवनकाल में जितनी सेवा करता है, उसकी कीमत पैसे में जोड़ने पर पन्द्रह लाख से अधिक आती है। एक वृक्ष ५० वर्ष की अवधि में ढाई लाख रुपये की ऑक्सीजन देता है। भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ाने में ढाई लाख रुपये के बराबर की खाद जितनी सहायता करता है, प्रदूषण नियन्त्रण के रूप में वायु-प्रदूषक अवयवों की मुफ्त सफाई पाँच लाख रुपये के बराबर करता है। आर्द्रता रोकने, वर्षा करने तथा खाद्य प्रोटीनों की कीमतें जोड़ने पर भी ५० वर्ष की अवधि में लगभग पाँच लाख रुपये की राशि आती है। ५५ लाख रुपये के बराबर वृक्ष की परोक्ष सेवाओं का मूल्यांकन करके सामान्यतया लकड़ी एवम् फलों से प्राप्त होने वाले कुछ सौ रुपये के रूप में उसकी कीमत आँकी जाती है।

यह तो एक वृक्ष की बात हुई। प्रकृति प्रदत्त वृक्ष-सम्पदा से मिलने वाले कुल भौतिक अनुदानों के लेखा-जोखा लेने पर ज्ञात होता है कि जितनी सेवा ये वृक्ष मुफ्त में करते हैं, उतनी शायद मनुष्य भी न करता हो। प्राप्त आँकड़ों के अनुसार अपने देश में कुल भू-भाग के २३ प्रतिशत क्षेत्र में वन हैं, जबकि पर्यावरण संतुलन एवम् देश के आर्थिक विकास के लिए कुल क्षेत्रफल का एक-तिहाई भाग वनों से आच्छादित रहना आवश्यक है। भारत के वन-क्षेत्र २ लाख ७४ हजार वर्ग मील में फैले हुए हैं, जो ३८ खरब ७८ अरब ११ करोड़ ३६ लाख ६० हजार वर्ग फीट के लगभग आता है। वर्ग फुटों में पेड़ों को गिना जाय, तो भारत के २३ प्रतिशत भू-भाग में फैले वृक्षों की संख्या १६ अरब ३६ करोड़ ५ लाख ६४ हजार ८ सौ होती है।

पर्यावरण सन्तुलन के लिए कुल भू-भाग के क्षेत्रफल का ३३ प्रतिशत वृक्ष वनस्पतियों से ढँका होना चाहिए। कभी देश की ७० प्रतिशत भूमि वनों से आच्छादित थी। कटते-कटते वह मात्र २२ प्रतिशत अब शेष बची है। अनिवार्य-पर्यावरण सन्तुलन सीमा से भी यह ११ प्रतिशत कम है। दूसरे प्रगतिशील देशों ने कड़ाई के साथ वन-सम्पदा को नष्ट करने पर रोक लगा दी है। फिनलैण्ड में अब भी ६६ प्रतिशत भूमि में वन हैं। जापान जैसे औद्योगिक राष्ट्र जहाँ कि ईंधन की अधिक आवश्यकता उद्योगों के लिए पड़ती है, में भी ६२ प्रतिशत क्षेत्रफल पेड़-पौधों से हरा-भरा है। रूस के कुल क्षेत्रफल के ३४ प्रतिशत तथा अमेरिका में ३३ प्रतिशत भाग में वन हैं। सर्वाधिक अदूरदर्शिता का परिचय अपने देशवासियों ने दिया है। अन्धाधुन्ध वृक्षों की कटाई के कारण असन्तुलन की स्थिति उत्पन्न हो गई। इस स्थिति को कड़ाई से रोकना होगा तथा संतुलन के लिए वृक्षारोपण जैसे पुनीत भौतिक और आध्यात्मिक लाभ देने वाले कार्य को अविलम्ब आरम्भ करना होगा।

एक वृक्ष काटने से अधिक से अधिक एक हजार रुपये कीमत की जलाऊ तथा अन्य निर्माण योग्य लकड़ी प्राप्त होती है, किन्तु उसके बने रहने से प्रतिवर्ष ३० हजार की स्वच्छ ऑक्सीजन, उर्वरक पानी और वायु प्रदूषण निवारण का लाभ प्राप्त होता है। कटाई का अर्थ होगा लम्बे समय तक प्रतिवर्ष ३० हजार रुपये के लगभग का जो योगदान प्रकृति के संतुलन के रूप में मिल सकता था, उससे वंचित रह जाना।

वृक्षों की उपयोगिता और महत्त्वपूर्ण भूमिका का रहस्य उद्घाटन वैज्ञानिक विकास के समय हुआ। विश्व के मूर्धन्य वनस्पतिशास्त्री-पर्यावरण विशेषज्ञ अब एक स्वर से स्वीकार कर रहे हैं, कि वृक्ष सम्पदा पर समस्त मानव-जाति का अस्तित्व टिका हुआ है। ये प्रकृति के सर्वश्रेष्ठ प्रहरी हैं, जिनके न रहने से प्राणि-समुदाय का जीवन संकट में पड़ जायेगा। प्रगतिशील देशों ने इस तथ्य को समझा है तथा अपनी वन सम्पदा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

को बचाने एवम् बढ़ाने के लिए हर तरह के कारगर उपाय सरकारी एवम् गैर-सरकारी स्तर पर आरम्भ कर दिये हैं।

एक व्यक्ति के जिम्मे १२ वृक्ष आते हैं। एक तरीका यह भी हो सकता है कि हर परिवार अपने पारिवारिक सदस्यों के हिसाब से वृक्षारोपण का दायित्व उठावें। मात्र पौधा लगाने को ही इतिश्री न समझा जाय। इनमें पानी-खाद देने तथा वृक्ष के रूप में विकसित होने तक समुचित देख-रेख की जाय। देखरेख, सुरक्षा एवम् परिपोषण की व्यवस्था न बन सकी तो श्रम का अधिकांश भाग सरकारी प्रयासों की भाँति निरर्थक चला जायेगा और अन्ततः असफलता हाथ लगेगी। प्रत्येक परिवार अपने-अपने हिस्से का दायित्व सँभाल ले, वृक्ष लगाने और उसे परिपक्व स्थिति तक पहुँचाने का काम चल पड़े, तो कुछ ही वर्षों में अनिवार्य वृक्ष-सम्पदा को ३३% तक पहुँचाया जा सकता है।

वैज्ञानिकों का एक और भी कथन है कि मौसम को सुव्यवस्थित रखने में वनों की महती भूमिका है। यदि पेड़ घटते जायेंगे तो उस क्षेत्र का मौसम गड़बड़ाने लगेगा, वर्षा घट जायेगी और सर्दी-गर्मी अधिक पड़ने लगेगी, इसका मनुष्य के शारीरिक और मानसिक दोनों ही स्वास्थ्यों पर बुरा असर पड़ता है, पशु दुर्बल होते जाते हैं और उनकी श्रम शक्ति तथा दूध देने की क्षमता घट जाती है। दुर्बल और रोगी, मनुष्य तथा बच्चे इस असंतुलन को बर्दाश्त नहीं कर पाते, फलतः उनके लिए जीवन संकट खड़ा हो जाता है। सर्दी से बचने के लिए ईंधन जलाने की आवश्यकता पड़ती है। इस प्रकार आर्थिक दबाव का एक कारण और भी बनता है।

पूर्वजों की स्मृति में वृक्ष लगाना एक उच्च कोटि का श्राद्ध-तर्पण माना गया है। कोई माननीय व्यक्ति हमारे यहाँ आते हैं, तो उनके हाथों वृक्ष आरोपण की प्रथा है। इस प्रकार विवाह, पुत्र-जन्म, परीक्षा में उत्तीर्ण होने, कोई आर्थिक लाभ होने के उपलक्ष्य में वृक्ष लगाने का पुण्य कृत्य किया जाय, तो बहुत सराहनीय समझा जायेगा।

औसत आवश्यकता के अनुसार ११ प्रतिशत वन क्षेत्र अपने देश में कम है। इसकी पूर्ति तब हो सकती है, जब हर आदमी १२ पेड़ लगाये। इसके लिए अपनी जमीन हो तो सर्वोत्तम, न हो तो सरकारी सड़कों के किनारे, रेलवे लाइन के समीप जहाँ बेकार जमीन पड़ी हो वहाँ अपने श्रम से लगाये पेड़ लगाये जा सकते हैं, उनका स्वामित्व सरकारी रहे तो भी हर्ज नहीं। ऊसर भूमि कितनी ही जगह पड़ी है। ग्राम पंचायतों से पूछकर खाली जगह का इसके लिए प्रयोग किया जा सकता है। वन प्रदेशों में जहाँ लोगों ने पेड़ काट तो लिए हैं पर फिर लगाये नहीं, वहाँ जाकर लगाने का प्रयत्न किया जाय और रखवाली के लिए बाड़ लगा दी जाय। गर्मी के दिनों में सिंचाई की एक-दो वर्ष आवश्यकता पड़ती है, फिर तो उनकी जड़ें गहरी चली जाती हैं और वे स्वावलम्बी हो जाते हैं।

जो लोग स्वयं श्रम करके वृक्ष नहीं लगा सकते, वे पैसा देकर दूसरों का श्रम खरीद सकते हैं और यह कार्य दूसरों के माध्यम से करा सकते हैं। यों सरकार भी इस दिशा में कुछ काम कर रही है, पर उसी के भरोसे हाथ-पर-हाथ रखकर हमें नहीं बैठा रहना चाहिए वरन् जन-स्तर पर भी जितना कुछ बन पड़े, अधिक से अधिक करने के लिए कटिबद्ध होना चाहिए।

हरीतिमा से स्नेह बढ़ायें फूल उगायें

प्राणि जगत की तरह ही वनस्पति जगत भी है। इन दोनों के बीच अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। एक-दूसरे पर निर्भर हैं। इनमें एक की स्थिति दुर्बल पड़ेगी तो दूसरे को भी दुर्दशाग्रस्त होना पड़ेगा।

प्राणियों का आहार वनस्पतियाँ हैं। माँसाहारी प्राणी भी मात्र उन्हीं को खाते हैं, जो शाकाहार पर निर्भर रहते हैं। माँसाहारी, माँसाहारी को खाने लगें तो उनका अस्तित्व ही खतरे में पड़ जायेगा। प्राणियों का मल-मूत्र खाद के रूप में वनस्पतियों को मिलता है। उनके द्वारा छोड़ी हुई साँस वनस्पतियों को सजीव साँस प्रदान करती

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

है। इसी प्रकार वृक्षों द्वारा छोड़ी हुई प्राणवायु से प्राणियों का गुजारा चलता है। अन्न, शाक, फल आदि के सहारे मनुष्य और घास-पत्ते खाकर अन्य प्राणी जीवित रहते हैं।

कृषि उद्यान के व्यवसाय से अधिकांश मनुष्यों की आजीविका चलती है। भारत जैसे कितने ही कृषि प्रधान देश इस संसार में हैं। उनके प्रजाजन अन्न, वस्त्र की सुविधा जुटाने वाले अनेकानेक कार्य करते और गुजर चलाते हैं। वृक्ष-वनस्पति का वर्षा से, मौसम से नदी नालों को नियंत्रित रखने से, भूमि क्षरण रोकने से, पशु-पालन व्यवस्था से सघन सम्बन्ध है। जलाऊ लकड़ी से लेकर इमारती प्रयोजनों में फर्नीचरों में जिनका निरन्तर उपयोग होता है उन वृक्षों को मानव जीवन का अविछिन्न सहचर ही माना जाना चाहिए। इनका परिपोषण संवर्धन अपने ही अंग-अवयवों एवं परिजनों के परिपालन जैसा ही माना जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में हमारा ध्यान तथ रुझान सदा ही केन्द्रित रहना चाहिए कि हरितिमा हमारे इर्द-गिर्द रहे और हम उसके सम्पर्क सान्निध्य में अधिकाधिक समय गुजारें। शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य की दृष्टि से यह आवश्यक भी है और उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण भी।

वृक्षों के आरोपण-संरक्षण के लिए उपयुक्त पर्याप्त भूमि चाहिए। हरितिमा संवर्धन से सम्बन्धित कृषि कार्य के लिए खेतों की आवश्यकता है। इन दो कार्यों को साधन-सम्पन्न ही कर सकते हैं। पर इस संदर्भ में दो कार्य ऐसे हैं जिन्हें हर वनस्पति प्रेमी सहज ही कर सकता है। एक है घरेलू शाक वाटिका तथा दूसरा है पुष्प-वाटिका पहला शरीर पोषण के लिए और दूसरा मानसिक उल्लास के लिए सस्ते में, सरलतापूर्वक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण पोषण प्रदान करते हैं। अपने समाज में हरे भोजन का प्रचलन कम है। तले भुने, अत्यधिक पिसे और छिलका उतारे हुए अन्न में कुछ सार रह नहीं जाता, वह कोयले जैसा नीरस एवं निरुपयोगी होता है। जीवन, जीवन प्रदान करता है। इस दृष्टि से हरे-भरे शाक फलों का भोजन में बाहुल्य रहना चाहिए। हरी पत्ती वाले कच्चे शाक सलाद, चटनी की तरह प्रयुक्त होते रहें तो भी स्वास्थ्यप्रद आहार की आवश्यकता पूरी हो सकती है। इसे दुर्भाग्य ही कहना चाहिए कि फूल तो दूर शाक-भाजी तक पर्याप्त मात्रा में लेने का प्रचलन नहीं है। कहीं कुछ है तो उसे भी इतना तला, भूना, उबाला जाता है कि वह भी कोयले के सदृश ही बनकर रह जाता है। यही कारण है कि हमारा समूचा समाज कुपोषण का शिकार है। इस मामले में धनी, निर्धन सब समान हैं। निर्धन को दरिद्रता के कारण और सम्पन्नों को चटोरेपन तथा पाक विज्ञान से सर्वथा अनजान रहने के कारण ऐसे भोजन पर निर्भर रहना पड़ता है जो सस्ता हो या महँगा। भोजन की मौलिक विशेषताओं से रहित ही होता है।

इस कमी की पूर्ति बहुत अंशों में घरेलू शाक-वाटिका कर सकती है। टोकरों में, गमलों में, क्यारियों में टूटे कनस्तरों में मिट्टी भरकर शाक-भाजी उगाये जा सकते हैं। इस सन्दर्भ में बेलों तथा पत्तियों वाले शाक अधिक मात्रा में उत्पन्न हो सकते और कम जगह रहते हुए भी अधिक फसल दे सकते हैं। लौकी, तोरई, सेम आदि की बेलें कम जगह में बोई जा सकती हैं और जिधर-तिधर फैलकर पर्याप्त मात्रा में बहुत दिन तक शाक की आवश्यकता पूरी करती रह सकती हैं। इसी प्रकार पालक, मैथी, बथुआ चौलाई, पोदीना, धनियाँ जैसे पत्ती वाले शाक भी उबालकर या कच्चे चटनी की तरह काम आते रह सकते हैं। जमीन में बोने की दृष्टि से अदरक सबसे लाभदायक है। हमें अपने घरों पर इन्हें बोने का प्रयत्न करना चाहिए ताकि जीवन दायक हरे आहार की आवश्यकता पूरी होती रहे और बिना खर्च के कुपोषण की समस्या से निपटने का प्रयोग मिलता रह सके।

मानसिक आवश्यकता को पूरी करने में हरितिमा संवर्धन-पुष्प वाटिका का उतना ही महत्त्व है जितना कि शरीर के लिये आहार का, इस भारी कमी को दूर करने के लिए घरेलू शाक वाटिका उगाने की हमारे प्रत्येक घर में फूलों के पौधे और बेलें रहनी चाहिए। इनके माध्यम से नेत्रों को शीतलता तथा मन को प्रसन्नता का लाभ मिलता है। कला और सौन्दर्य की आन्तरिक पिपासा को समाधान मिलता है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

तथा उत्पादन संरक्षण की प्रवृत्ति को वैसा ही पोषण मिलता है जैसा कि बालकों के लालन-पालन में अभिभावकों को आनन्द, उत्साह एवं कौशल बढ़ाने का सुयोग बनता है।

पेट आहार से भरता है कंठ की प्यास पानी से बुझती है। किन्तु अन्य ज्ञानेन्द्रियाँ भी ऐसी हैं जिन्हें अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए पदार्थों की माँग रहती है। इन इन्द्रियों में कान के लिए पोषक विषय संगीत है। ज्ञान वर्धन तो शिक्षण और परामर्श के आधार पर भी चल जाता है किन्तु कानों के माध्यम से अन्तराल में गुदगुदी करने का कार्य संगीत के माध्यम से ही बन पड़ता है। इस माध्यम से मिलने वाली दिव्य अनुभूति को नाद ब्रह्म के नाम से संबोधित किया जाता है। संगीत के अभाव में अन्तरंग नीरस रहने लगता है। भाव संवेदनाएँ प्रदान करने में यदि कर्ण कुहरों को संगीत तरंगों की उपलब्धि न हो तो भीतर ही कुछ ऐसी शुष्कता उत्पन्न होने लगती है जिसे कायिक दुर्बलता एवं रुग्णता उत्पन्न करते देखा जा सके। यही कारण है जीवनचर्या में कहीं न कहीं संगीत का स्थान रखने और व्यवस्था करने को महत्त्व दिया जाता है। भजन में स्तवन और कीर्तन का महत्त्वपूर्ण स्थान है। उसे आत्मोपचार के लिए संगीत तरंगों का उपचार ही कहा जा सकता है।

नेत्र और नाक को अभीष्ट रस प्रदान करने के लिए प्रकृति ने हरितिमा उगाई है साथ ही उसे पुष्पों से भी लादा है। पुष्प मात्र शोभा सज्जा ही नहीं हैं वरन् उनमें ऐसी विशेषताएँ भी भरी पड़ी हैं जो न केवल दर्शनीय सुषमा का रसास्वादन कराती हैं—न केवल नासिका को मन-भावन सुगन्ध प्रदान करती हैं अपितु चेतना में ऐसा उल्लास भी भरती हैं जिससे प्रसन्नता, निरोगिता एवं प्रेरणाप्रद उमंगों का लाभ भी मिल सके। इन उमंगों के सहारे मनुष्य की भाव कल्पना जगती है और उन प्रसुप्त केन्द्रों में उभार आता है जो समझदारी और सूझ-बूझ से सम्बन्धित हैं।

जहाँ फूल खिले होते हैं वहाँ दृष्टि अनायास ही खिंचती चली जाती है। ठहरने और देखने को मन करता है। पैर ठिठक जाते हैं और जी करता है कि इस शोभा सुषमा को देखते ही रहा जाय। बसन्त ऋतु में सरसों फूलती है तो लगता है धरती ने पीली चुनरी ओढ़ली। छोटे पौधे जहाँ-तहाँ उगे होते हैं उन पर भी उन दिनों फूल खिलते हैं। वे अपनी जगह जमे रहते हैं। कोई उन्हें तोड़ता नहीं-वे किसी से कुछ माँगते नहीं, फिर भी उनकी उपस्थिति भर से दर्शकों का मन फूलों की तरह ही प्रफुल्लित हो उठता है। उनका सृजन ही भगवान ने इस निमित्त किया है कि वे स्वयं खिलें और दूसरों को खिलायें।

दर्शनीय स्थानों में किले, मकबरे, घाट, मन्दिर, पुल, बाँध ही सब कुछ नहीं हैं, पुष्पोद्यान भी दर्शनीय स्थानों में आते हैं और प्रकृतिप्रेमी बड़े चावपूर्वक वहाँ पहुँचते हैं। उत्तराखण्ड में हेमकुण्ड के समीप फूलों की घाटी को इसलिए ख्याति मिली कि उस क्षेत्र पर अंग्रेजों की नजर गई। वहाँ की खोजबीन हुई। उस क्षेत्र से संग्रह करके विचित्र पुष्पों के बीज इंग्लैण्ड भेजे गये और उनकी बहुत चर्चा योरोप में हुई। ऐसी-ऐसी अनेकों फूलों की घाटियाँ हिमालय के उत्तराखण्ड में हैं। देश के, विश्व के विभिन्न क्षेत्रों में ऐसे पुष्पोद्यान हैं जिनमें सामान्य और असामान्य स्तर की अनेकानेक जातियाँ पाई जाती हैं। प्रकृति प्रेमियों के लिये यही तीर्थ है। भगवान की बनाई यह कलाकृतियाँ ऐसी हैं जिन्हें देखकर हर किसी का मन लुभाता है।

महाभारत में वर्णन आता है कि पाण्डव जब द्रोपदी से किसी इच्छित उपहार की माँग करने को कहने लगे तो उसने कोई बहुमूल्य आभूषण नहीं वरन् हिमालय पर पाये जाने वाले ब्रह्म कमल पुष्प की माँग की। भीम बहुत खोज के उपरान्त उसे ले भी आये। इससे प्रतीत होता है कि कलाप्रेमियों में पुष्पों के प्रति कितना मान और आकर्षण रहा है। पुष्प जितने नयनाभिराम होते हैं उतने ही मादक गंध की विशेषता से भी भरे पूरे रहते हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

विज्ञान के आरम्भिक दिनों में जलयान, वायुयान, रेल, मोटर आदि सवारियों पर चढ़ने और सिनेमा, रेडियो, टेलीविजन आदि देखने का शौक उमड़ा था। वह नशा अब ठंडा हो चला है और कलाप्रेमी लोकमानस फिर पुरातन काल जैसी प्रकृति शोभा का रसास्वादन करने के लिए मुड़ा है। अब पुष्पोद्यान लगाने की प्रवृत्ति बढ़ रही है। लोग घर-आँगन में पुष्प लगाना चाहते हैं। पार्कों को उनकी शोभा से संजोया जा रहा है। महलों, कोठियों से लेकर गरीबों के झोंपड़ों तक बेलों और पुष्पों की हरितिमा को शोभा-सज्जा का प्रधान माध्यम बनाया जा रहा है। जहाँ पक्की जगह है वहाँ गमलों की व्यवस्था की जा रही है। ऐसे पौधे तलाशे जा रहे हैं जो बन्द कमरों में भी हरे-भरे रह सकें। उत्सवों में फूलों का बाहुल्य रहता है। विवाहों में अब बन्धुओं के आभूषण सोने-चाँदी के पहनने और पहनाने का रिवाज घट रहा है और उनके स्थान पर फूलों के आभूषण बनाये और पहनाये जा रहे हैं। यह सुरुचि की बढ़ोत्तरी का चिन्ह है। इसे प्रकृति का सम्मान और प्रेम ही कहा तथा सराहा जायगा।

शारीरिक तथा मानसिक चिकित्सा की दृष्टि से फूलों ने अपना अनौखा स्थान बनाया है। जिस प्रकार पिछले दिनों जड़ी-बूटियों के सेवन से रोग निवारण का प्रयोग चलता था अब ठीक उसी प्रकार फूलों के रंग, गन्ध तथा रासायनिक प्रभाव का उपयोग करके स्वास्थ्य संवर्धन एवं रोग-निवारण की बात सोची जा रही है। इस दिशा में उत्साहवर्धक प्रगति भी हुई है।

गंध की क्षमता दृश्य प्रभाव से कम महत्त्व की नहीं। कीडे-मकोड़े और छोटे जीव-जन्तुओं की अन्य इन्द्रियाँ विकसित नहीं होतीं। वे मात्र गन्ध के सहारे ही अपना आहार खोजते, रास्ता तलाश करते, शत्रु से बचते और प्रणय निवेदन करते हैं। उनकी दुनियाँ गन्धमय है। हिंस्र पशुओं को शिकार ढूँढ़ने में बहुत कुछ सहायता गन्ध से ही मिलती है। जासूसी कुत्ते इसी आधार पर अपराधियों को तलाश करने में सफल होते हैं।

गन्ध का मनुष्य के लिए बहुत महत्त्व है पर उसे व्यवहार में सुरुचि या कुरुचि का ही माध्यम माना जाता है। दुर्गन्ध पर नाक-भौं सिकोड़ी जाती हैं उससे बीमारी का खतरा अनुभव किया जाता है। सुगन्ध को सुरुचि का प्रतीक माना जाता है और विलास-श्रंगार के लिए उसे काम में लाया जाता है। देवता को प्रसन्न करने में भी चन्दन, केशर, अगरबत्ती, हवन सामग्री आदि का प्रयोग होता है। अमीरों के यहाँ इत्रों की महक उठती रहती है।

अब इससे अगला प्रयोग स्वास्थ्य-संवर्धन और रोग-निवारण के लिए किया जाने लगा है। कुछ समय पूर्व संगीत द्वारा स्नायु संस्थान को उत्तेजित करके रोग निवारण के प्रयोग चले थे। अब इसी श्रंखला में गंध उपचार की एक नई कड़ी और जुड़ने जा रही है। इस आविष्कार को पुष्प चिकित्सा नाम दिया गया है।

पुष्पों के रंगों और आकृतियों की विशेषता मनमोहक मानी जाती रही है। इसलिए लोग पुष्प वाटिकाएँ लगाते हैं, मेजों पर गुलदस्ते सजाते हैं, मालाएँ पहनते और पहनाते हैं। महिलाओं के जूड़ों में और पुष्पों के कोटों में पुष्प लगे देखे जाते हैं। देवाराधना में, हर्षोत्सवों में, स्वागत सत्कारों में, सज्जा प्रयोजनों में तो उनकी प्रधानता रहती ही है। अब यह पाया गया है कि पुष्पों की चित्र-विचित्र गन्ध विभिन्न रोगों के उपचार में भी काम आ सकती है। उनमें मनमोहक गुण तो है ही, स्वास्थ्य सम्वर्धन और रोग-निवारण की विशेषता भी उत्साहवर्धक मात्रा में विद्यमान है।

सोवियत संघ के वाकू नगर में इसी प्रयोजन के लिए एक अस्पताल खोला गया है। उसमें मात्र रोगों के अनुसार अमुक गन्ध वाले पुष्पों के सूँघने की व्यवस्था है। रोगी को उन पुष्पों के गमलों के बीच बिठा दिया जाता है। उसे गहरी साँस लेकर सुगन्ध को खींचने और शरीर में भरने के लिए कहा जाता है। रोगी वैसा ही करता है। किसे कितनी देर तक, किस समय, किस पुष्प की गन्ध सूँघनी चाहिए यह उसके रोग निदान और निर्धारण के आधार पर किया जाता है। भिन्न-भिन्न पुष्पों में भिन्न-भिन्न रोगों के निवारण की क्षमता खोजी गई है। तदनुसार चिकित्सा पद्धति विकसित की गई है।

जो रोगी चल-फिर नहीं सकते उनके पलंग के इर्द-गिर्द गमले सजा दिये जाते हैं और

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

सिरहाने इस प्रकार के पुष्प पर्याप्त मात्रा में बिछाये जाते हैं कि रोगी को सरलतापूर्वक उनकी गन्ध मिलती रहे।

अब तक ऐसे ५५ प्रकार के पुष्प-पौधे चुने गये हैं जिनमें बलवर्धक एवं विषाणुनाशक गुण बड़ी मात्रा में हैं। अन्य तो अभी शोभा एवं प्रसन्नता की पूर्ति कर सकने वाले ही समझे जा रहे हैं। ठंडक के दिनों में रोगियों के कमरे गरम हवा से युक्त रखे जाते हैं ताकि गन्ध उड़कर नासिका तक पहुँचने में अड़चन न पड़े। समय-समय पर हलके या तेज गति से हवा फेंकने वाले पंखों का भी उपयोग किया जाता है जिससे रोगी के बिना अतिरिक्त प्रयास किये ही अपने स्थान पर बैठे या लेटे रहने पर भी पुष्पों की गन्ध का सान्निध्य प्राप्त होता रहे।

न केवल रोग-निवारण हेतु अपितु मानव समुदाय का रुझान सुरुचिपूर्ण बनाने तथा नैसर्गिक सौन्दर्य के माध्यम से प्रसन्नता भरा वातावरण लाने के लिए यह अनिवार्य है कि घर-घर, गाँव-गाँव, पुष्पवाटिका, शाकवाटिका का आन्दोलन चल पड़े। इसके बहुमुखी लाभ बताते हैं कि इसमें किसी प्रकार के घाटे का सौदा नहीं, नफा ही नफा है। हमें आर्थिक ही नहीं, अन्त के परिशोधन पक्ष पर भी ध्यान देना है। प्रकृति की ओर उन्मुख होकर मनुष्य उस शाश्वत सौन्दर्य रस का रसास्वादन करता है जो सदा-सदा से उसे प्रेरणा देता चला आया है।

वनौषधियों से हरीतिमा अभिवर्धन और स्वास्थ्य सम्वर्धन का दोहरा लाभ

वनस्पति और प्राणियों का अन्योयाश्रय सम्बन्ध है। एक जियेगा तो दूसरा जियेगा। मनुष्य का आहार वनस्पति है। जीवन की अधिकांश आवश्यकताएँ इन्हीं के सहारे उपलब्ध होती हैं। ईंधन, मकान, शैया, कपड़े, अनाज, शाक, औषधि यह सभी वृक्ष-वनस्पतियों के सहारे ही उपलब्ध होते हैं। पेड़ ही बादलों को खींचते और बरसने के लिए विवश करते हैं। उनके अभाव में किसी प्राणी का जीवन सुरक्षित नहीं। वनस्पतियाँ ऑक्सीजन छोड़ती हैं। उससे मनुष्य को साँस द्वारा वायु मिलती है। मनुष्य द्वारा छोड़ी कार्बन से पेड़ पलते हैं। प्राणियों द्वारा उपयोग में लाई हुई वनस्पतियाँ खाद बनकर वनस्पति उगाती हैं। वायु प्रदूषण, भूमि क्षरण जैसी अनेक विपत्तियों से बचाने में वृक्ष-वनस्पतियों की असाधारण भूमिका है। हमें अपने इस प्राणाधार क्षेत्र के प्रति भावनाशील एवं जागरूक होना चाहिए। उनका उत्पादन, संरक्षण एवं अभिवर्धन प्रकारान्तर से अपनी सुविधा सम्पदा एवं प्रगति का पथ प्रशस्त करता है।

वनस्पतियाँ उगाने में हमारा पूरा उत्साह नियोजित रहे। साथ ही अवांछनीय रूप से उनका नष्ट किया जाना भी रोकना चाहिए। जितना उनका उपयोग होता है उतना ही आरोपण-अभिवर्धन भी चलना चाहिए।

जिनके पास भूमि है वे उसका एक अंश उद्यान लगाने के लिए सुरक्षित रखें। मात्र अनाज से ही कमाई नहीं होती। वृक्ष भी तात्कालिक न सही दूरवर्ती लाभ देते और सत्परिणाम उत्पन्न करते हैं। जलाऊ लकड़ी नित्य काम में आती है तो उसे भण्डार में साथ-साथ जमा भी करते चलना चाहिए। खाली भूमि में जलाऊ, छायादार, चारा-पानी वाले, फलदार या औषधियों में काम आने वाले वृक्ष लगाते रहना चाहिए। जिनके पास अपनी भूमि नहीं वे दूसरों की, सरकार की भूमि में उन्हीं के निमित्त वृक्ष लगाकर लोकहित की एक उपयोगी सेवा-साधना कर सकते हैं। फल उद्यान लगाना घाटे का नहीं नफे का सौदा है। अनाज की फसल तो आदि से लेकर अन्त तक सेवा चाहती है पर वृक्षों को कुछ ही दिन सँभालने के उपरान्त वे फिर कोई सेवा नहीं माँगते और निरन्तर बहुमुखी प्रतिफल प्रस्तुत करते रहते हैं।

वृक्ष आर्थिक दृष्टि से ही नहीं, शरीर निर्वाह और मानसिक सन्तुलन की दृष्टि से भी महत्त्वपूर्ण हैं। जहाँ हरितिमा नहीं होती वहाँ बंजर व रेगिस्तानों के निवासी क्रूर कठोर प्रकृति के पाए जाते हैं। अपराध, मनोरोग और विग्रह भी ऐसे क्षेत्रों में अधिक होते हैं। हरितिमा न केवल नेत्रों को शीतलता एवं ज्योति प्रदान करती है

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

वरन् मानसिक सन्तुलन बनाने, शालीनता एवं प्रसन्नता तथा बलिष्ठता प्रदान करने की भी भूमिका निभाती है। मनुष्य का कर्तव्य है कि स्वार्थ एवं साधना से लेकर परमार्थ प्रयोजन तक के समन्वय का दृष्टिकोण अपनाते हुए हरितिमा सम्वर्धन के लिए प्रयत्नरत रहे। अपनी या पूर्वजों की स्मृति में वृक्षारोपण को श्राद्ध परम्परा की एक महत्त्वपूर्ण कड़ी समझा जा सकता है। अपना उपयोगी स्मारक किसी को बनाना हो तो उसे उद्यान लगाने, वृक्षारोपण करने की सस्ती किन्तु हर दृष्टि से श्रेयसिक्त योजना बनानी चाहिए।

हर स्तर का व्यक्ति इतना तो कर ही सकता है कि अपने घरों में पुष्प वाटिका, शाक वाटिका लगाये। पुष्प वाटिका में खिलते हुए फूल अपनी मुस्कान से हर किसी का मन लुभाते और सहज प्रसन्नता प्रदान करते हैं। पूजा उपचार में, अतिथि सत्कार में उनसे अच्छा और सस्ता दूसरा उपचार हो नहीं सकता। अतिथि के हाथ में एक छोटा-सा बटन गुलदस्ता थमा दिया जाय तो किसी भी भावनाशील की कृतज्ञता उभरेगी। घर के वातावरण में प्राणवायु का बाहुल्य रखने में पुष्पवाटिका का अपना महत्त्व है।

घरेलू शाक-वाटिका की उपयोगिता का तो कहना ही क्या। आँगन में, छत पर छोटे टोकरों-गमलों में शाक-भाजी के पौधे लगाए जा सकते हैं। छप्परों पर सेव, अंगूर, लौकी, तोरई, परवल आदि की बेलें चढ़ाई जा सकती हैं। इसमें न बहुत सा श्रम पड़ता है, न समय लगता है और न बड़े साधन जुटाने की आवश्यकता पड़ती है। मनोरंजन, कौतूहल एवं उत्साह की अभिवृद्धि का यह एक अच्छा स्वरूप है। जो इस आरोपण में रुचि लेते हैं उन्हें सृजनात्मक सत्प्रवृत्ति उभारने का अवसर मिलता है और उस आधार पर बढ़ने वाली अभिरुचि आगे चलकर बड़े निर्माणों के लिए आधारभूत कारण बनती है। शिशु पालन, पशु पालन की तरह वनस्पति उत्पादन, अभिवर्धन भी एक उपयोगी प्रसंग है। इस अभ्यास में जितना श्रम, समय लगता है उसकी तुलना में लाभ निश्चित रूप से अनेक गुना अधिक होता है।

इन दिनों कुपोषण की सर्वत्र शिकायत है। भोजन में पोषक-तत्व घटते जाने से अनेकानेक रोगों की अभिवृद्धि होती चली जा रही है। कुपोषण का प्रमुख कारण आहार में हरी वनस्पतियों की कमी होना है। एक तो चटोरेपन की आदत ने ऐसे ही लोगों को तली-भुनी चीजें खाने का आदी बना दिया है और हरे शाकों में स्वाद की कमी देखकर उपेक्षा बरती जाती है। दूसरे उसका खरीदना भी कम बोझिल नहीं है। अन्य वस्तुओं की तरह शाक भी कम महँगे नहीं हैं। कभी-कभी तो उनका भाव इतना महँगा हो जाता है कि उन्हें मात्र अमीर ही खरीद सकें। ऐसी दशा में शाकों के उपयोग से वंचित रहने वाले जन समुदाय को यदि कुपोषणजन्य, दुर्बलता एवं रुग्णता का शिकार बनना पड़ता हो तो इसमें आश्चर्य ही क्या ?

घरेलू शाक-वाटिकाएँ इस समस्या का सहज समाधान प्रस्तुत करती हैं। आँगनबाड़ी, छतबाड़ी, छप्परबाड़ी के रूप में थोड़ी-सी जानकारी प्राप्त करके थोड़े से उत्साह परिश्रम का प्रयोग करने भर से यह हो सकता है कि एक छोटी गृहस्थी के लिए कामचलाऊ मात्रा में हर मौसम में सब्जी उपलब्ध होती रह सके।

कम से कम चटनी वाटिका तो कोई भी लगा सकता है। गमलों में धनियाँ, पोदीना, पालक, अदरक, मिर्च आदि भी उतनी मात्रा में उगा ही सकते हैं कि उनकी एक-एक कटोरी चटनी घर के हर सदस्य को मिल सके। आँवला, नीबू आदि उसमें बाहर से खरीदकर मिला देने पर मात्रा, उपयोगिता एवं स्वादिष्टता और भी अधिक बढ़ जाती है। कुपोषण के संकट से निपटने में उतना उपाय उपचार भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं है। हमें इस प्रचलन को न केवल अपने घर में वरन् अपने प्रभाव क्षेत्र में अधिकाधिक विस्तृत करने का प्रयत्न करना चाहिए। इसमें प्रत्यक्ष लाभ और पुण्य परमार्थ के दोनों ही प्रयोजन समान रूप से सन्निहित हैं।

चिकित्सा की दृष्टि से जड़ी-बूटियाँ सर्वथा निरापद हैं। 'एण्टीबायोटिक्स' रसायनों का प्रचलन तत्काल भले ही कुछ लाभकारी दीखता हो पर पीछे उनकी प्रतिक्रिया स्वस्थ जीवाणुओं के संहार में हानिकारक ही सिद्ध होती है। चिकित्सा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयोजन में जड़ी-बूटियों के पुरातन प्रचलन को इन दिनों नये सिरे से पुनर्जीवित करने की आवश्यकता है।

आँगन में तुलसी का बिरवा रोपने की धर्म परम्परा बहुत ही महत्त्वपूर्ण एवं श्रेयष्कर है। वनस्पति को भगवान की प्रतिमा मानकर उस स्थापना के सहारे आँगन में भगवान का खुला मन्दिर बन जाता है। एक लोटा जल चढ़ा देने भर से तुलसी का सिंचन और सूर्यार्घ्यदान की देवपूजा बन पड़ती है। अगरबत्ती, दीपक जलाने, आरती-परिक्रमा करने से सामूहिक या एकांकी पूजा-अर्चना का उपक्रम परिवार में बन पड़ता है। इससे परिवार में धार्मिकता का भावनात्मक वातावरण बनता है। आस्तिकता, आध्यात्मिकता और धार्मिकता की जड़ें भी तुलसी के बिरवे के सहारे हरी रहती हैं।

तुलसी के स्पर्श से बहने वाली वायु में न केवल सर्प, बिच्छू आदि कृमि-कीटक भगाने का गुण है वरन् उसमें विषाणुनाशक, स्वास्थ्य-सम्वर्धक गुण भी है।

तुलसी एक रामबाण औषधि की तरह घरेलू चिकित्सा के काम आने वाली, समस्त रोगों में प्रयुक्त की जा सकने वाली उपचार पिटारी भी है। तुलसी के पत्ते एक तोले, काली मिर्च एक माशे पीसकर मूँग के बराबर गोली बनाकर रख लें। बच्चों को एक और बड़ों को दो तीन गोली शहद या पानी के साथ दिन में दो बार सभी रोगों में दे सकते हैं। फोड़ों पर तुलसी की पुल्टिस बाँधी जा सकती है या लेप किया जा सकता है। भिन्न-भिन्न रोगों में अनुपान भेद से तुलसी का पृथक् उपचार भी है। उसका विस्तृत वर्णन "तुलसी के चमत्कारी गुण" पुस्तक में दिया गया है।

घर-घर में तुलसी के थाँवले बनाने के रूप में देव-मन्दिरों की स्थापना का एक नया आन्दोलन इन दिनों प्रज्ञा अभियान द्वारा हाथ में लिया गया है। लक्ष्य ४ लाख बिरवे रोपकर तुलसी की महत्ता जन-जन तक पहुँचाने का है। इसके लिए एक क्यारी में बीज बोकर पौधे उगाए जायें और घर-घर जाकर यह पूछताछ की जाय कि इस स्थापना के लिए कौन तैयार है। जो तैयार हों उनके यहाँ पौधे मुफ्त में पहुँचाने और लगाने में योगदान करने का प्रयास व्यापक रूप से चलना चाहिए। अपने घर-गाँव में तुलसी औषधालय स्थापित करने के लिए हमें भरपूर प्रयत्न करना चाहिए। लगे हाथों पुष्पवाटिका लगाने का आन्दोलन भी साथ-साथ चल सकता है। इसके लिए शाक, पुष्प एवं तुलसी के पौधों की नर्सरी लगाने की चेष्टा विशेष रूप से करनी चाहिए। इसी आधार पर वितरण और स्थापना का उपक्रम ठीक प्रकार से चल सकेगा। बीज़ों के पैकेट क्षेत्रीय प्रज्ञा संस्थानों से ही उपलब्ध हो सकें, इसका प्रयास किया जा रहा है।

प्रज्ञापीठों में से प्रत्येक के पास थोड़ी-बहुत खाली भूमि है। उसमें जड़ी-बूटी उद्यान लगाया जाना चाहिए। शान्तिकुञ्ज में वह लगा भी है। प्रायः २४ औषधियों के सामान्य रोगों का घरेलू उपचार इनके सहारे सरलतापूर्वक हो सकता है। इनका विस्तृत वर्णन-विवचेन एवं उपचार क्रम "जड़ी-बूटियों द्वारा स्वास्थ्य संरक्षण" पुस्तक में किया गया है। इस पुस्तक में वनौषधि की पहचान, गुणधर्म, शुद्धाशुद्ध परीक्षा, प्रयोग-अनुपान सम्बन्धी विवरण जन सुलभ भाषा में विस्तार से दिया गया है। दो भागों में शीघ्र ही इसका द्वितीय संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इसे मार्गदर्शिका मानकर अपने यहाँ खाली जमीनों पर इन्हें वातावरण की अनुकूलता के अनुसार लगाया जा सकता है। जो बड़े वृक्ष रूप में हैं, सम्भवतः वे अपने यहाँ न लग सकें, इसलिये उनके तो प्रयुक्त अंगों की ही चूर्ण रूप में वीर्य कालावधि भलीभाँति जानकर सुरक्षित किया जा सकता है। जो क्षुप या रेंगने वाली वनौषधियाँ हैं, उन्हें तो हर कोई अपने घर, आँगन, प्रज्ञा संस्थान, ज्ञानमन्दिर के प्रांगण में बो सकता है।

किसी स्थानीय चिकित्सक के परामर्श से इन्हीं को ताजा खिलाकर या पुस्तक में दी गयी विधि के अनुसार फाण्ट, क्वाथ, कल्क बनाकर प्रयुक्त किया जा सकता है। हर प्रज्ञा संस्थान में इस तरह वनौषधि चिकित्सा केन्द्र स्थापित हो सकता है। पीड़ितों की सेवा सहायता हेतु ईसाई चर्च में डिस्पेंसरियाँ होती हैं। रामकृष्ण मिशन ने भी इसी के तरह औषधालय बनाये हैं। चीन की तो पूरी चिकित्सा पद्धति ही सर्वसुलभ वनौषधि प्रयोग पर टिकी हुई है। फिर वैसा ही प्रबन्ध

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

२४०० प्रज्ञा संस्थानों, पन्द्रह हजार स्वाध्याय मण्डलों एवं अगणित प्रज्ञा केन्द्रों में क्यों नहीं हो सकता ? लोकसेवा तो इसमें है ही, जन सम्पर्क—सत्प्रवृत्ति सम्वर्धन और मिशन की विचारणा का विस्तार कार्यक्रम भी साथ जुड़ा हुआ है। हर कोई चिकित्सक तो नहीं बन सकता, सत्परामर्शदाता तो बन ही सकता है। प्रचलित अनेकानेक सम्मिश्रण युक्त संदेहों के जाल में उलझी आयुर्वेद पद्धति के दुष्प्रभावों तथा महँगी लागत के कारण आलोचना की शिकार एलौपेथी चिकित्सा प्रणाली से यदि जन-साधारण को विरत कर शुद्ध काष्ठ औषधि के प्रयोग के लिए सहमत किया जा सके तो यह भी अपने आप में एक क्रान्ति होगी।

निर्धारित जड़ी-बूटियाँ, जिनका शरीर एवं मन के उपचार, स्वास्थ्य संरक्षण हेतु प्रयोग सुझाया गया है इस प्रकार हैं—(१) आमाशय एवं ऊर्ध्वगामी पाचन संस्थान हेतु मुलैठी, आँवला (२) अधोगामी पांचन संस्थान हेतु हरी तकी, बिल्व (३) हृदय एवं रक्तवाही संस्थान हेतु—अर्जुन, पुनर्नवा श्वाँस संस्थान के लिए—वासा एवं भारंगी (५) केन्द्रीय स्नायु संस्थान हेतु—ब्राह्मी, शंखपुष्पी (६) वात नाड़ी संस्थान हेतु—शुण्ठी एवं निर्गुण्डी (७) रक्त शोधन हेतु—नीम एवं सारिवाँ (८) ज्वर आदि प्रकोपों एवं प्रतिसंक्रामक के नाते—गिलोय, चिरायता (६) प्रजनन—मूत्रवाही संस्थान हेतु—अशोक, गोक्षुर एवं (१०) स्वाथ्यबर्धक रसायन के रूप में शतावर, अश्वगंधा। इनके अतिरिक्त तुलसी को सभी रोगों के उपचार के रूप में तथा नीम, घृतकुमारी, अपामार्ग, हरिद्रा, लहसुन को स्थानीय उपचार हेतु रखा गया है।

उपरोक्त औषधियों के अतिरिक्त गत दिनों ही दस और ऐसी औषधियाँ इस अमृतोपम वनौषधि समूह में जोड़ी गयी हैं, जिनके ऊपर प्रयोग केन्द्र में किये गये व विभिन्न समूहों के लिए प्रयुक्त करने का विधान बनाया गया है। ये हैं—बला, बहेड़ा, ज्योतिष्मती, बाकुची, रास्ना वरूण, नोग्र, शकपुरवा, आमलतास, इन्द्रजौ (कुटज)। आगे भी आवश्यकता पड़ने पर औषधियाँ बताई जाती रहेंगी।

इनके अतिरिक्त और भी अनेक जड़ी-बूटियाँ हैं जो स्थानीय जलवायु के अनुरूप उगाई जाती हैं। उनका गुण, विवेचन एवं उपयोग किसी आयुर्वेद ज्ञाता से जाना जा सकता है। किसी क्षेत्र में उत्पन्न हुई वनस्पतियाँ, वहाँ के निवासियों के लिए अन्न, फूल, शाक की तरह ही उपयोगी पड़ती हैं। एक बार में एक औषधि लेने से वह अपना पूरा प्रभाव दिखाती हैं। एक साथ कईयों का सम्मिश्रण कर देने से उन सभी के स्वाभाविक गुण नष्ट हो जाते हैं और उनका प्रतिफल भी विचित्र हो जाता है। इसलिए जड़ी-बूड़ी उपचार में एक समय एक ही औषधि का प्रयोग प्रचलन उपयुक्त है। चूर्ण बनाना हो तो पत्तियों—टहनियों का उपयोग करना चाहिए। क्वाथ बनाना हो तो जड़, तना, पत्ते, फल, फूल इन सभी का पंचांग प्रयुक्त किया जाना चाहिए। छोटी जड़ी-बूटियों की तरह बड़े औषधि वृक्ष भी होते हैं। हरड़, बहेड़ा, आँवला, अशोक, अमलतास आदि को उगाने लगाने से औषधि वृक्षों के उद्यान भी लग सकते हैं।

औषधि वृक्षों के उद्यान और जड़ी-बूटियों के कृषि-फार्म लगाकर स्वास्थ्य रक्षा की महत्त्वपूर्ण सेवा-साधना की जा सकती है। पँसारियों के यहाँ वर्षों पुरानी, सड़ी-गली, कुछ के स्थान पर कुछ उपलब्ध होने के कारण आयुर्वेद विज्ञान की दुर्गति हुई है। शाकाहार कम पड़ने से भी स्वास्थ्य गिरे हैं। इन अभावों की पूर्ति के लिए प्रज्ञा परिजनों को कुछ कहने लायक प्रयास में जुटना चाहिए।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

हमारा स्वास्थ्य संकट और उसका समाधान

यह प्रगति का युग कहा जाता है। बुद्धि कौशल से मनुष्य ने आर्थिक, वैज्ञानिक तथा सुविधा-साधनों की अभिवृद्धि में आश्चर्यजनक उन्नति की है। पर जहाँ तक व्यक्तिगत एवं सामाजिक जीवन की स्थिति का सम्बन्ध है निश्चित रूप से हम पिछड़ते ही चले गये हैं। इस तथाकथित उन्नति ने मानवीय सुख-शान्ति में अभिवृद्धि नहीं, कमी ही की है।

सामान्य समझ के अनुसार होना यह चाहिए कि जितने सुविधा-साधन बढ़ें उसी अनुपात से मनुष्य की सुख-शान्ति, प्रगति और समृद्धि का पथ प्रशस्त हो। किन्तु वैसा देखने में नहीं आता। लम्बे अतीत की बात जाने दें और सौ-पचास वर्ष पूर्व के जो भी व्यक्ति अभी जीवित हैं उनके बचपन में जो परिस्थितियाँ थीं उनका विवरण सुनें और आज से उसकी तुलना करें तो यही प्रतीत होगा कि इतने कम समय में कितना अधिक निषेधात्मक बदलाव हुआ है। विकृति, पतन, सन्ताप और द्वेष-दुर्भाव की ओर कितनी तेजी से बढ़े हैं। पचास-सौ वर्षों में धन, दौलत बहुत बढ़ी है। विकास के अनेक साधन बढ़े हैं। सहकारी बैंक, सहयोगी समितियाँ, सरकारी कृषि सहायता और समाज-कल्याण कार्यक्रम, स्कूल, अस्पताल, सड़कें, पुल, यातायात-साधन, डाक तार, व्यवसाय के साधन, कारखाने, नौकरी के क्षेत्र, मनोरञ्जन गृह आदि में भारी वृद्धि हो जाने के फलस्वरूप जन-साधारण की सुख-शांति में उसी अनुपात से वृद्धि होनी चाहिए थी और आज का मनुष्य सौ वर्ष पूर्व वालों की तुलना में अधिक सुखी एवं समुन्नत दिखाई देना चाहिए था। पर देखा इसके ठीक विपरीत जाता है।

आर्थिक सुविधा के फलस्वरूप बढ़ी हुई चमक-दमक और टीपटाप के अतिरिक्त और सभी दिशाओं में आज सूनापन-खोखलापन और अधः पतन दिखाई पड़ रहा है। स्वास्थ्य के सन्दर्भ में विचार करें तो इन दो-तीन पीढ़ियों में ही जन स्वास्थ्य की बुरी तरह दुर्दशा हो गई। पहले जहाँ साधारण व्यक्ति बीस-तीस मील पैदल आसानी से चल लेते थे। बैल न होने पर कृषि कार्यों में स्वयं उसकी स्थान पूर्ति करते थे। एक सेर अन्न आसानी से हजम कर लेते थे वहाँ अब एक-दो मील चलने के लिए भी सवारी का सहारा ताकना पड़ता है। शारीरिक परिश्रम सहन नहीं होता। देहाती नवयुवक अपनी अच्छी-खासी खेती करने की अपेक्षा शहरों में क्लर्की ढूँढ़ने के लिए मारे-मारे फिरते हैं। उसमें श्रम से घबराहट ही प्रधान कारण है। खेती का श्रम उन्हें अखरता है। शरीर उसमें असमर्थता अनुभव करता है।

यह अशक्तता इतनी व्यापकता होती है कि चार-छः दिन के लिए कोई बुखार, खाँसी का शिकार हो जाय तो सँभलने में महीनों का समय चाहिए। जहाँ कुछ समय पूर्व लोग महीनों जूड़ी, तिजारी का प्रकोप सहते हुए हल चलाते और कृषि कार्य करते रहते थे वहाँ जीवनी शक्ति के अभाव में अब सामान्य रोगों का मुकाबला कर सकना भी सम्भव नहीं हो रहा है। अब दस-पाँच पैसे की दवा में कोई रोग अच्छा नहीं हो सकता। सौ-दो-सौ रुपया तो जुकाम खाँसी ले मरते हैं फिर बड़ी बीमारियों के लिये तो हजारों की व्यवस्था किये बिना, सैकड़ों इन्जेक्शन लगवाये बिना छुटकारा नहीं। विचारने की बात है कि आखिर ऐसा हो क्यों गया ? साधन बढ़ने के साथ-साथ स्वास्थ्य का स्तर बढ़ना चाहिए था उल्टी गंगा कैसे बहने लगी ? लोग इस प्रकार कमजोर क्यों होते चले गये ?

महिलाएँ घर का काम-काज सँभालते हुए पुरुषों के साथ खेती-बाड़ी के कठोर परिश्रम में सहायता करती थीं। प्रसव होते रहते थे और किसी कष्टकर स्थिति का अनुभव न होता था।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

खाने को रूखा-सूखा दाल-दलिये जैसा भोजन फिर भी निरोग और हृष्ट-पुष्ट। आज परिश्रम भी कम, खाद्य पदार्थ की मूल्यवान सुविधाएँ भी अधिक, चिकित्सा के साधन भी बहुत फिर भी महिलाओं के स्वास्थ्य बेतरह गिरते चले जा रहे हैं। रंग-रोगन करके किसी प्रकार चेहरा ही कुछ आकर्षक सा बना रहता है। बाकी भीतर देखा जाय तो बिल्कुल खोखलापन। सामान्य दुर्बलता की शिकार रक्त की कमी, मूत्र रोग की व्यथा यह आये दिन की शिकायतें हैं जिनमें हमारा महिला समाज ग्रसित होता चला जा रहा है। यही हाल बच्चों का हैं। दस्त, उल्टी अपच, जिगर जैसे उदर रोगों में ६० प्रतिशत बच्चे ग्रसित मिलेंगे। दवादारू के बलबूते किसी प्रकार जिन्दा रह गये तो बड़े होने पर उनका कोई उज्ज्वल भविष्य नहीं बन पाता।

मनुष्य जैसा बुद्धि प्रधान प्राणी अपने कर्तृत्त्व पुरुषार्थ और विचारणा के आधार पर लाखों वर्षों से निरन्तर आगे बढ़ता चला गया है। एक-एक कर के प्रगति की अनेक मञ्जिलें उसने पूरी की हैं। वह प्रकृति से लड़ा है, परिस्थितियों से लड़ा है, कठिनाइयों से लड़ा है और इस संघर्ष में आश्चर्यजनक स्तर की सफलता प्राप्त करता चला आया है कि स्वास्थ्य के सम्बन्ध में पिछले दिनों क्या गड़बड़ हो गई। जिससे पीढी दर पीढ़ी वह क्रमशः अधिक दुर्बलता और अधिक रुग्णता का शिकार बनता चला जा रहा है।

तलाश करने पर एक ही उत्तर सामने उपस्थित होता है कि आहार-विहार सम्बन्धी हमारे स्वाभाविक दृष्टिकोण में विकृति आई। न अधिक चतुरता का चाव और उपयोग का ओछा आकर्षण हमें असंयम की ओर ले दौड़ा। परिश्रम से जी चुराने की, आरामतलबी में बड़प्पन मानने की प्रवृत्ति बढ़ी। जीभ के विविध स्वादों के पीछे आहार की स्वाभाविकता और सात्विकता नष्ट कर दी गई। तीन-चौथाई आहार अभक्ष्य स्तर का खाया जाने लगा। समय, मात्रा, स्वच्छता की बात ही भूल गये। जिव्हा का चटोरापन जिधर नचाता रहा, कठपुतली की तरह नाचते रहे। व्यञ्जन खाने वालों ने अपने को भाग्यशाली माना, देखने वालों ने लार टपकाई और सस्ती भोंड़ी शक्ल बनाकर मरने के लिए और भी अधिक गहरा गड्ढा खोदा। सस्ते अभक्ष्य तैयार करने वालों ने प्रतिस्पर्धा में एक से अधिक बढ़कर विष उगाये। हलवाइयों, होटलों और चाट-पकौड़ी की दुकानों पर ऐसे ही स्वास्थ्य को चौपट करने वाले उपहार लाखों टन नित्य बनते हैं और इन जिव्हा—लोलुप लोगों के पेट में प्रवेश करके स्वास्थ्य की सम्पत्ति का—पाचन क्रिया का सत्यानाश करते चले जाते हैं।

नशेबाजी एक अद्भुत विपत्ति है। उसमें न स्वाद, न रंग, न गुण, न कुछ। पैसा, खून, मस्तिष्क, चरित्र, चारों को ही बुरी तरह जलाने की बात सर्वविदित है। फिर भी न जाने कौन-सा कैसा दुर्भाग्य मनुष्य के मन में घुस पड़ा कि जिसे देखो वही नशेबाजी का शिकार दिखाई पड़ता है। शराब, गाँजा, अफीम, चरस, भाँग की कितनी बड़ी खपत है इसे भयावह सरकारी आँकड़ों और विक्रेताओं के हिसाब-किताब से भली प्रकार समझा जा सकता है। सबसे ऊपर तम्बाकू है। उसके बारे में तो कहना ही क्या। बीड़ी, सिगरेट, खानी, सुँघनी, छिकनी सब मिलाकर इनका इतना प्रचलन है कि अधिकांश लोगों को इसके बिना चैन नहीं। स्त्री-बच्चों की थोड़ी संख्या निकाल दी जाय तो फिर ऐसे व्यक्ति मुश्किल से ही ढूँढ़े मिलेंगे जो किसी प्रकार का नशा न करते हों। इसमें आर्थिक अपव्यय इतना होता है कि यदि इस रकम को बचा लिया जाय तो इसी से देश भर की शिक्षा व्यवस्था बन सकती है। शारीरिक दृष्टि से यह कहा जा सकता है कि लगभग एक चौथाई जीवन नशेबाजी में घट जाता है और लगभग एक तिहाई रोग इस कारण होते हैं। मन की अपवित्रता, उत्तेजना, आवेश, वासना, क्रोध, निष्ठुरता जैसी कितनी ही ऐसी बुराइयाँ उत्पन्न होती हैं जो नशेबाज को चारित्रिक दृष्टि से गया-गुजरा और सामाजिक दृष्टि से बहुत हद तक अवाञ्छनीय व्यक्ति बना देती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

विचारणीय बात है कि क्या इतनी बुराइयाँ और हानियाँ जानते हुए भी जो नशेबाजी करते हैं, उन्हें बुद्धिमान कहा जाय ? यदि उनका मस्तिष्क तीव्र भी मान लिया जाय तो भी इतना तो स्वीकार करना ही होगा कि इस समझदारी का ठीक से उपयोग नहीं किया गया। दिमाग में अक्ल का होना ही काफी नहीं, उसका सही तरीके से उपयोग कर सकना भी जरूरी है। जो अक्लमन्द होते हुए बेअक्ल के काम करें, उन्हें क्या कहा जाय ?

कामुकता की आग बालकों को छोटी उम्र में ही झुलसाने लगती है हत्यारी फिल्में इस दिशा में बढ़-चढ़कर शूर-वीरता दिखा रही हैं। उनकी करतूत अपने आप में अद्‌भुत है। छोटे बालकों को कुचेष्टाओं काम-क्रीड़ाओं इस प्रयोजन के लिए रचे गये कुचक्रों की पूरी पक्की शिक्षा गन्दी फिल्मों में मिल जाती है। इस तरह बचपन में जबकि उनके स्वास्थ्य का मूल ब्रह्मचर्य परिपक्व होना चाहिए था उद्विग्न होने लगता है। कामुकता के विचार कच्चे मस्तिष्कों में बुरी तरह उबलते हैं। उनके दुष्परिणामों का कच्ची उम्र में ज्ञान नहीं होता। कुविचारों को रोकने और काटने की कला भी विस्तृत नहीं होती। फलस्वरूप सपने मूर्त रूप धारण करते हैं। छोटी आयु के बालक कई तरह के लज्जाजनक अश्लील कृत्य गुप-चुप करने लगते हैं और उनके स्वास्थ्य पर कुठाराघात आरम्भ हो जाता है।

वासना भड़काने वाला साहित्य बुकसेलरों की दुकानों पर भरा पड़ा है। प्रकाशक लोग अब उसी तरह की चीजें आँधी, तूफान की तरह छापते हैं। क्योंकि उन्हीं की बिक्री अधिक है, उन्हीं से लाभ अधिक है। फोटो वाले, पटरी पर बैठने वाले पुस्तक विक्रेताओं की पोटली पर एक बार दृष्टि डाल लीजिये। उसमें इसी प्रकार की कामोत्तेजक, गन्दी, बेहूदी किताबें भरी पड़ी होंगी। क्या छोटी उम्र के, क्या बड़ी उम्र के सभी इन्हें खरीदते हैं। सिनेमा की तस्वीरों की नटों और नटनियों की करतूतें, उछल-कूद एवं विषैले कटाक्ष सिखाने वाली गन्दी कहानियों से सुसज्जित पत्र-पत्रिकाओं की भरमार है। तस्वीर और कलैण्डर वाले ऐसे ही चित्र प्रकाशित करने में जुटे हैं। इस प्रकार लगता है फिल्म और प्रेस ज्ञान संवर्धन में समर्थ इन दो महान् माध्यमों को कामदेवता ने खरीद लिया हो।

बड़ी आयु के लोग इस सम्बन्ध में छोटी आयु वालों की अपेक्षा कहीं अधिक अज्ञानी बने हुए हैं। विवाह का अर्थ कामुकता की अनियन्त्रित पूर्ति माना जाने लगा है। लोग अपने शरीर की संचित जीवन शक्ति को गन्दी नाली में बहा देना ही कोई बड़ा पुरुषार्थ अथवा लाभ मानते हैं। व्यभिचार की प्रवृत्ति बढ़ रही है, शील की उपेक्षा की जा रही है और विलास को प्रमुखता मिल रही है। मर्यादायें छोड़कर उच्छृंखल और निर्लज्ज बनते चले जा रहे हैं। इसका दुष्प्रभाव मन, चरित्र और स्वास्थ्य पर पड़ता ही है। संयम के बिना शक्ति का संचय कहाँ ? शक्ति की पूँजी जब इस तरह लुटाई जा रही हो तो स्वास्थ्य की सुरक्षा एवं परिपुष्टता के लिए उसे कैसे बचाया, संग्रह किया जा सकता है ?

मनुष्य की बुद्धि—विपरीतता की यह कैसी भयंकर विकृति और बिडम्बना है कि जो समझ, जो शक्ति, जो साधन स्वास्थ्य सम्वर्धन जुटाने में संलग्न होकर लोगों को स्वस्थ, सुन्दर, दीर्घजीवी, बलवान्, परिपुष्ट, पराक्रमी बना सकते थे वे ही उल्टा सर्वनाश करने में लगे हुए हैं। यह सुनिश्चित तथ्य है कि मनुष्य के शरीर में जो सुस्थिर जीवनी शक्ति रोगों का आक्रमण रोकने में बीमारी से संघर्ष करने, स्वास्थ्य को सुरक्षित रखने में संचित सम्पत्ति की तरह जमा रहती है वह ब्रह्मचर्य से ही संग्रहीत होती है। भीष्म, हनुमान, शंकराचार्य, दयानन्द आदि अगणित ऐतिहासिक महापुरुष अपनी शारीरिक और मानसिक प्रतिभा का चमत्कार जिस आधार पर दिखा सकने में समर्थ हुए उसका मूल ब्रह्मचर्य में ही सन्निहित था।

बिजलीघर में जितना शक्ति भण्डार होता है, उसी आधार पर सम्बन्धित मशीनें, बत्तियाँ, पंखे आदि चलते हैं। शक्तिकोष घट जाय तो उन सभी उपकरणों की चाल मन्द हो जाती है। मनुष्य के आहार द्वारा रक्त, माँस, अस्थि, मज्जा आदि बनते-बनते अन्ततः रेतस् एवम् ओजस् नामक तत्व बनते हैं, जो नस-नाड़ियों में, दिल-दिमाग में, आँत-आमाशय में, नेत्रों की ज्योति और प्राणी में, प्रजनन शक्ति और प्रतिभा से

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

समन्वित मनुष्य को प्रतिभाशाली, साहसी, पराक्रमी, बुद्धिमान बनाते हैं। यह रेतस् और ओजस् जिसके पास जितनी बड़ी मात्रा में संग्रहीत है वस्तुतः वह उतना ही बड़ा अमीर है। इस पूँजी की ब्याज पर कोई चाहे तो निरोग जीवन का आनन्द खुशी-खुशी लेता रह सकता है। इस सच्चाई से हर बाल-वृद्ध को अवगत होना चाहिये था और इतनी अमूल्य निधि का अपव्यय न होने पाये इसके बारे में सतर्क रहना चाहिये था, पर मानवीय दुर्बुद्धि को क्या कहा जाय। आज तो उसकी सारी चेष्टाएँ इस बात में लगी हुई हैं कि इस जीवन निधि को फूँक-फाँककर कितनी जल्दी स्वाहा किया जाय। आतिशबाजी जलाते समय जो मजा बच्चों को आता है जीवन के बहुमूल्य प्राण तत्व को इसी प्रकार समझकर लोग जलाते हैं और मोद मनाते हैं तब आश्चर्य होता है।

जन स्वास्थ्य की समस्या कितनी अधिक विकट होती चली जा रही है। इस पर यदि बारीकी से ध्यान दिया जाय तो पता चलेगा कि घाव भीतर-ही-भीतर कितना गहरा बढ़ता चला जा रहा है। सरकारी स्वास्थ्य रिपोर्ट यदाकदा छपती रहती है। उन्हें देखने से विदित होता है कि कितने अजीब-अजीब किस्म के रोग उपज पड़े हैं। उनमें कितने अधिक लोगों को कितना अधिक त्रास सहना पड़ता है। पुरानी बीमारियाँ जूड़ी, तिजारी अब कम देखने-सुनने में आती हैं क्योंकि शरीर में विजातीय पदार्थों को तेजी से मार-भगाने की क्षमता ही नहीं रही। अधजली लकड़ी के कोयले जैसे धीरे-धीरे सुलगते रहते हैं वैसे-वैसे मन्द रोग शरीर के अंग-प्रत्यंगों में जड़ जमाये बैठे रहते हैं और लकड़ी में लगे घुन की तरह उसे दिन-दिन खोखला करते चले जाते हैं। लोगों से पूछताछ की जाय तो अपच की शिकायत ६० प्रतिशत लोगों में पाई जायगी। अच्छी तरह भूख न लगना, पाचन ठीक से न होना, दस्त साफ न होना, गैस उठते रहना, मुँह में बदबू, पेट में भारीपन, दाँतों में पायेरिया, मुँह में छाले जैसी शिकायतें हर किसी को मिलेंगी। नींद पूरी न आना, सिर भारी रहना, गर्मी में गर्मी और सर्दी में सर्दी अधिक लगना, शरीर का निर्जीव सा रहना, थोड़ा काम करते ही भारी थकान का होना जैसी शिकायतें शायद ही किसी विरले व्यक्ति को न हों। अब यह बीमारियाँ भी एक प्रकार की फैशन बन गयी हैं। जिस प्रकार कलाई में घड़ी बँधी रहना एक शान है उसी प्रकार जुकाम, खाँसी, बवासीर, नींद लगने की गोली, एस्प्रीन आदि दस-पाँच दवाएँ साथ न रहें तो समझा जायगा वह गँवार किस्म का आदमी है, फैशनेबिल बाबूजी नहीं।

यह सामान्य शिकायतें हुईं। अन्य कितने ही तरह के रोग धीरे-धीरे जन स्वास्थ्य का अंग बनते चले जा रहे हैं। जोड़ों में दर्द, दिल की धड़कन, जुकाम, प्रमेह, प्रदर, पेशाब की जलन, बवासीर, मधुमेह जैसी बीमारियाँ नब्ज पकड़कर अन्धाधुन्ध हर किसी को बताना शुरु कर दीजिये, तीन चौथाई आदमी यही कहेंगे आपने बिलकुल ठीक बताया, हमें इन्हीं रोगों का कष्ट है। इनके अतिरिक्त अलग-अलग प्रकृति और परिस्थितियों के लोग अलग-अलग किस्म की बीमारियों से ग्रसित देखे जा सकते हैं। कोढ़, तपैदिक, उपदंश, दमा, फीलबन्द रक्तचाप जैसे रोगों की संख्या इतनी तेजी से बढ़ती चली जा रही है कि उनकी चिकित्सा का कोई प्रबन्ध ठीक से बन नहीं पड़ रहा है। एक हकीम की धूल चाटकर दूसरे डाक्टर के द्वारे नाक रगड़ते और हर जगह से ठगे और निराश व्यक्ति लाखों की संख्या में देखे जा सकते हैं जो तथाकथित चिकित्सा और चिकित्सकों के फेर में अपनी टुलीमुली सब खर्च करा चुके और अन्त में झक मारकर जिस-तिस परिस्थिति में पड़े कराह रहे हैं।

तथाकथित चिकित्सा विज्ञान की इन दिनों बड़ी तेजी से प्रगति हो रही है। सरकारी अस्पतालों की संख्या, सामर्थ्य, उत्साहपूर्वक बढ़ाई जा रही है। मेडीकल कालेजों की संख्या हर साल बढ़ रही है। सुशिक्षित डॉक्टर तेजी से बढ़ रहे हैं। गैर-सरकारी क्षेत्र में चिकित्सा व्यवसाय की भारी उन्नति है। किसी की हाट बाजार में चले जाइये। पान-बीड़ी बेचने वालों की तरह औषधि विक्रेताओं, चिकित्सकों की पर्याप्त संख्या मिल जायेगी। उन पर ग्राहकों की भीड़ मिलेगी। नित नई औषधियों के आविष्कार का क्रियाकलाप तेजी से चल रहा है। अनुसन्धान केन्द्र और निर्माणशालाएँ पूरे वेग से अपने

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

प्रयत्नों में लगे हुए हैं। एक से एक बढ़कर चमत्कारी औषधि बाजार में आने की घोषणा होती है। इतना प्रबल प्रयास होते हुए भी जन स्वास्थ्य में रत्ती भर भी सुधार नहीं हो रहा है वरन् सच तो यह है कि स्थिति बद से बदतर होती चली जा रही है। इसका साक्षी हर व्यक्ति स्वयं है। किसी से भी उसके स्वास्थ्य का इतिहास पूछ लीजिये वह यही कहेगा बढ़ते खून के थोड़े वर्ष जरा अच्छी तरह जरूर रह लिये बाकी तो दिन-दिन स्वास्थ्य गिरता ही चला जा रहा है। बाहर से देखने में चेहरा कुछ अच्छा-सा भले ही लगता हो पर भीतर ही भीतर सब कुछ खोखला हो गया। बाहर के लोग ऊपरी शक्ल देखकर किसी के अच्छे स्वास्थ्य का अनुमान लगाते रहते हैं। पर जिस पर बीतती है असली बात वही जानता है।

कोई विरले ही भाग्यवान जीवन के आधे समय में अभीष्ट पुरुषार्थ कर पाते हों बाकी आधा समय तो किसी न किसी रोग में संत्रस्त होकर बेकार पड़े रहने में ही गुजारना पड़ता है। इस वस्तुस्थिति को देखकर मस्तिष्क अनेक प्रश्नों में उलझ जाता है। जबकि इतनी सुविधा साधन सामग्री मौजूद है, चिकित्सा के इतने उपकरण प्रस्तुत हैं, तब अस्वस्थता एवम् दुर्बलता का यह दौर बढ़ता क्यों चला जा रहा है ? सौ-दो सौ वर्ष के तथाकथित अशिक्षित एवम् निर्धन पिछड़े लोगों की तुलना में अब हमारे पास साधन बहुत अधिक हैं। ज्ञान बहुत अधिक है। फिर आखिर क्या कारण है कि जन स्वास्थ्य का इतनी चिन्ताजनक रीति से ह्रास हो रहा है कि यदि उसे रोका न जा सका तो अगले पचास वर्ष में मानवीय पीढ़ियाँ स्वस्थ, समर्थ पुरुषार्थियों की नहीं वरन् दुर्बल, कामी, दीन, दुःखी लोगों की स्थिति में पहुँच जायँगी। जब शरीर ही दुर्बल होंगे, शरीरों में ही जान न होगी, बीमारियों ने ही जब ग्रसित कर रखा होगा तो फिर मनुष्य आखिर करेगा क्या ? वह न शूरवीर सैनिक योद्धा बन सकता है, न दिग्गज विद्वान्, न प्रतिभा से संसार को चमत्कृत कर सकता है और न अपने जीवन पर गर्व करने योग्य कोई बड़ी सफलता ही पा सकता है। तब भला ऐसे लोगों का मनुष्य जन्म किस काम का रह जायेगा ?

ऐसा हो क्यों रहा है ? कठिनाई क्या है जो जन स्वास्थ्य को सँभलने नहीं देती। इस प्रश्न का उत्तर उनके स्तर पर सोचने और हल करने से काम न चलेगा। दूध पानी मिला मिलता है। घी महँगा है, वेजीटेबिल घी ने स्वास्थ्य बिगाड़ दिया जैसे-बहाने ढूँढकर झूँठा आत्म-सन्तोष करने और अपने को निर्दोष मानने से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सकता, और न उनके उपाय ही कुछ काम चला सकते हैं। दुग्धशालाएँ, घृत भण्डार, फलों की खेती, मूल्यवान भोजन की व्यवस्था अच्छी बात है और उन्हें प्रोत्साहित किया ही जाना चाहिए। पर एक बात ध्यान रखनी चाहिये कि मुरझाया पेड़ जड़ सींचने से ही हरा होगा। पत्ते सींचकर कोई ठोस परिणाम पाने की आशा नहीं की जा सकती।

स्वास्थ्य समस्या हमने असंयम अपना कर उत्पन्न की है। और जब तक यह कारण बना रहेगा, उलझनों के सुलझने की कोई सम्भावना नहीं है। दिमागी विकृति ने कठिनाई को उत्पन्न किया है और यदि उसे हल करना हो तो सुधार वहीं करना चाहिए जहाँ से वह पैदा होती है। कच्चे देहाती बाँधों में चूहे छेद कर देते हैं और वहाँ से पानी बहने लगता है। यदि वह लगातार बहता रहे तो छेद चौड़ा होकर दूर-दूर तक के क्षेत्र को पानी में डुबा सकता है। इसलिये सम्बन्धित लोग बहते हुए पानी को रोकने के लिए सबसे पहले यह तलाश करते हैं कि आखिर पानी आता कहाँ से है ? छेद का मूल उद्गम कहाँ है ? यदि वह पता चल गया तो ही वह पानी बन्द हो सकता है अन्यथा बाहर से रोकथाम कर देने पर भी मूल उद्गम पानी को जोर से उकसाता रहता है और बहाव कहीं दूसरी जगह से फूट निकलता है। ठीक यही बात स्वास्थ्य समस्या पर लागू होती है। मूल्यवान आहार की सुव्यवस्था बनाने और चिकित्सा के साधन उत्पन्न करने के प्रयत्न सराहनीय हैं। इनसे थोड़ी सुविधा, सहायता भी मिल सकती है, पर समस्या का आन्तरिक हल नहीं निकल सकता।

अस्वस्थता का जो व्यापक दौर चल रहा है। स्वास्थ्य सम्पत्ति का जो बुरी तरह ह्रास हो रहा है, उसका कोई भौतिक कारण या प्रकृति

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

का प्रकोप नहीं, केवल मात्र मानवीय दुर्बुद्धि है। उल्टा सोचने, उल्टा समझने और उल्टा करने से ही यह संकट आया है। इसका निवारण इस उलटेपन को सुधारने के अतिरिक्त और किसी प्रकार नहीं हो सकता। ईश्वर की इच्छा है कि सृष्टि का हर प्राणी निरोग जीवनयापन करे। अतएव यह सुविधा सभी को दी है कि वह अपने सीमित साधनों के अन्तर्गत सीधे रास्ते चलकर स्वस्थ और दीर्घजीवी बना रहे। वन्य प्रदेशों में रहने वाले जितने भी जीव-जन्तु दिखाई पड़ते हैं उनमें से कभी कोई बीमार नहीं पड़ता। समय आने पर मरना सबको पड़ता है पर ऐसा कोई जीव नहीं पाया जाता जिसे रोगों में- कराहते हुए अथवा दुर्बलता ग्रसित होकर जीवनयापन करना पड़ता हो। लोमड़ी, खरगोश, बन्दर, हिरन, सियार, चीता, रीछ, बाघ, गिलहरी, गिरगिट, मोर, कबूतर, सारस, तीतर, मछली, कछुआ, मच्छर, खटमल आदि। किसी भी वर्ग के प्राणियों पर दृष्टि डालिये इनमें से कोई भी बीमार न देखा जायेगा। स्वाभाविक और सरल जीवन जीने वाले के लिए बीमार पड़ने का कोई कारण नहीं। यह मनुष्य ही है जो अपनी बुद्धि के अहंकार में स्वाभाविक सरल और सज्जनतापूर्ण सीधे-सीधे जीवनक्रम की उपेक्षा करके उल्टे रास्ते चलता है। आहार-विहार, असंयम का समावेश करके रोगों को उत्पन्न करने और उनके जाल-जंजाल में फँसकर कष्ट-पीड़ित जीवनयापन करने का सरंजाम इकट्ठा करता है। इस बुद्धिमानी की प्रशंसा की जाय या निन्दा ?

मनुष्य के सम्पर्क में जो प्राणी आये, जिनको उसने पालने, बाँधने का उपक्रम किया, अपनी बुद्धिमानी उन पर भी थोपी, आहार-विहार की दृष्टि में अस्त-व्यस्त किया वे बेचारे भी रोगों के मानवी उपहार का उपभोग कर रहे हैं। मनुष्य के पालतू जानवरों में भी अक्सर बीमारियाँ फैलती रहती हैं और उन्हें भी पशु चिकित्सकों एवं औषधियों का रसास्वादन करना पड़ता है। यदि वे मनुष्य से दूर रहकर जंगलों में रहने का अवसर पाते तो निश्चित रूप से इनमें से कोई बीमार न पड़ता और न किसी को इन चिकित्सकों अथवा चिकित्सा उपकरणों के दर्शन की आवश्यकता पड़ती।

कहने की आवश्यकता नहीं कि स्वास्थय जीवन की सर्वप्रथम आवश्यकता है। दुर्बलकाय व्यक्ति में पुरुषार्थ करने की क्षमता नहीं होती। जिसकी देह में आत्म शक्ति नहीं है वह कोई बड़ा काम कैसे करेगा ? देहयात्रा चलाने, इन्द्रियों की क्षमता बनाये रखने, भोजन हजम करने, चलने-फिरने, नहाने, खाने आदि में भी तो शक्ति खर्च होती है। यदि उतना ही उत्पादन हुआ तो फिर आजीविका उपार्जन, अध्ययन, प्रतिस्पर्धा और संघर्ष, पारस्परिक सहयोग, मनोरंजन आदि कार्यों के लिए अतिरिक्त शक्ति चाहिए और वह सशक्त रोग-मुक्त शरीर में ही उत्पन्न होती है। दुर्बल व्यक्ति इससे वञ्चित, रहता है। कोई कठिन काम करने का उत्साह ही नहीं होता, होता भी है तो तुरन्त थकान आ जाने के कारण उसे छोड़ना पड़ता है। ऐसे व्यक्ति ज्यो-त्यों जिन्दगी के दिन ही पूरे कर सकते हैं। कोई बड़ी सफलता जिस पर गर्व किया जा सके ऐसे लोगों के हाथ नहीं आती।

बीमार व्यक्ति तो धरती का भार है 'आप कराहता कष्ट सहता है।' दूसरों को सेवा में जुटाये रहकर उनका समय बिगाड़ता है। स्वयं दुःखी रहता और दूसरों को दुःख देता है। कुछ कमाना तो दूर, उल्टे दवा-दारू में पथ्य, उपचार में अनावश्यक खर्च कराके परिवार की अर्थ-व्यवस्था बिगाड़ता है। वातावरण में गन्दगी और मनहूसी पैदा करता है। छूत लगने से दूसरों को भी कोई रोग होने की आशंका बनी रहती है। बीमार शरीर का मस्तिष्क भी बीमार हो जाता है और वह चिड़चिड़ा-छिद्रान्वेषी दुर्भावना युक्त बनकर जिनके सम्पर्क में रहता है उनके लिए पग-पग पर क्षोभ का कारण बनता है। बीमारी का प्रजनन उनकी सन्तानें पैतृक विरासत लेकर जो कुछ आती हैं उसके फलस्वरूप उन बेचारों को भी रुग्ण रहना पड़ता है। अनेक ऐसी विकृतियाँ रोगी उत्पन्न करता है जिसमें वह अपने लिए, परिवार के लिए, समाज के लिए एक अभिशाप बनकर ही जीता है।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

कोई बीमार पड़ जाय तब तो वह सहानुभूति का पात्र और सेवा का अधिकारी है पर इससे पूर्व हर एक को यह विचार करना चाहिए कि बीमार न पड़े, दुर्बलताग्रस्त न हो। यदि समय रहते सतर्कता बरती जाय तो निस्सन्देह अस्वस्थता से बचा जा सकता है। कुछ पैतृक अथवा सामयिक रोगों को छोड़कर बाकी बीमारियाँ मनुष्य की स्वयं की उपार्जित की हुई होती हैं। कोई भी संयमी और सतर्क प्रवृत्ति का मनुष्य उनसे बड़ी आसानी से बचा रह सकता है।

बीमारी और कमजोरी असंयम की कीमत पर खरीदी जाती हैं। वे मुफ्त में नहीं मिलती। यदि यह खरीद बन्द कर दें तो वे जबरदस्ती गले नहीं पड़ सकतीं। बाजार में जाकर हम तरह-तरह की चीजें खरीदते हैं, उनकी कीमत चुकाते हैं तभी घर ला पाते हैं। बीमारियाँ भी ठीक इसी तरह की खरीदी जाने वाली वस्तु हैं। जिन्हें लोग बहुत पैसा और बहुत समय खर्च करके बहुत देर में खरीद पाते हैं। आहार के असंयम को ही लीजिये। तरह-तरह के जायकेदार व्यंजन कितनी मेहनत से कितना पैसा खर्च करके—कितनी देर में पकाये जाते हैं। आरोग्य शास्त्र की दृष्टि से यह व्यंजन बिलकुल निकम्मे, बेहूदे, हानिकारक, कूड़े-करकट की तरह हैं पर चटोरेपन के लाचच में उन्हें आवश्यकता से बहुत अधिक मात्रा में खाया जाता है। कायदे से होना यह चाहिए था कि यह चीजें तुरन्त ही हमें बीमार कर देतीं पर प्रकृति इस मामले में ढीली-पोली है। इन गुनाहों को इकट्ठे करती रहती है और तब कहीं बहुत देर में दण्ड व्यवस्था का उपक्रम जुटाती है। इसीलिए तो कहा गया है कि भरी-पूरी कीमत चुकाने पर भी बीमारी तुरन्त नहीं खरीदी जा सकती है। टिकट खरीदते समय स्टेशनों पर कई बार लम्बी लाइनों में खड़ा होना पड़ता है तब कहीं नम्बर आता है। इसी प्रकार आहार-विहार का असंयम करते रहने पर भी उसका प्रतिफल खरीदने में हमें बहुत-बहुत समय तक इन्तजार में खड़ा रहना पड़ता है। तब कहीं वह विपत्ति आती है।

यदि हम अदूरदर्शिता छोड़कर समझदारी का रास्ता अपनायें, दूर की बात सोचें, स्वास्थ्य का महत्त्व समझें, दुर्बलता और बीमारियों के प्रतिफल से डरें, तो कोई कारण नहीं है कि सात्त्विक आहार-विहार अपनाकर निरोग जीवन जीने की आकांक्षा उत्पन्न न हो। यदि वह आकांक्षा सच्ची एवं सुदृढ़ है तो उसके पूरे होने में रत्ती भर भी कठिनाई नहीं है। अफ्रीकी बन्दर बुद्धू किस्म के होते हैं वे बड़ी आसानी से शिकारियों की पकड़ में आ जाते हैं। शिकारी लोग छोटे मुँह के बर्तन जमीन में गाड़कर उसमें चना भर देते हैं। बन्दर उन्हें निकालने के लिये हाथ डालते हैं और मुट्ठी भर बाहर खींचते हैं बर्तन का मुँह इतना छोटा होता है कि बँधी मुट्टी बाहर निकल नहीं सकती। बन्दर उसी में कैद हो जाता है। भरी मुट्ठी खींच सकना सम्भव नहीं होता और मुट्टी खाली करके हाथ निकाल लेने की समझ उस बेवकूफ जानवर में होती नहीं। बस, होता यह है कि बन्दर चें-चें करते उस बर्तन से जूझते रहते हैं। शिकारी आकर उन्हें मार ले जाते हैं। बेवकूफ बन्दरों की यह मूर्खता अपने ऊपर क्रमशः लागू होती है। असंयम छोड़ते नहीं बनता। चटोरी जीभ सात्विक आहार के लिए रजामन्द नहीं होती, अन्य इन्द्रियाँ भी अपनी हरकतों से बाज नहीं आतीं और उधर प्रकृति भी अपनी नीति, असंयमी को रुग्णता के दण्ड, में परिवर्तन नहीं करती। फलतः बन्दर मारा जाता है। मनुष्य रोगों के कष्टों से कराह-कराह कर सड़ता, मरता रहता है।

क्या इस स्थिति को बदला नहीं जा सकता ? अपनी समझदारी का क्या पुनः निरीक्षण नहीं हो सकता ? क्या अपनी आदत बदली-सुधारी नहीं जा सकती ? अपना बदलना अपना सुधारना, अपने को काबू में लाना यदि सम्भव हो तो यह निश्चित है कि अस्वस्थता सम्बन्धी जिस व्यापक संकट में मनुष्य-जाति बुरी तरह फँस गई है उससे बड़ी सुगमतापूर्वक छुटकारा पाया जा सकता है। शारीरिक दुर्बलता को सशक्तता में बदला जा सकता है। बीमारियों से बिना हकीम डॉक्टरों की सहायता के छुटकारा पाया जा सकता है और वे सदा के लिए विदा हो सकती हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

इसके लिए कोई बड़ा साहसिक कदम उठाने, तप करने, साधना सीखने या कष्ट उठाने की आवश्यकता नहीं। केवल इतना भर करना पड़ेगा कि अपने मस्तिष्क में आहार-विहार सम्बन्धी जो अशुद्ध मान्यताएँ जड़ें जमाये बैठी हैं, उन्हें ढूँढ़ें और एक-एक को गन्दी चमगादड़ों की तरह बुहारी मार-मार कर घर से बाहर कर दें। ये चुड़ैलें जब तक अड्डा जमाये बैठी रहेंगी तब तक विपत्तियों का अन्त नहीं हो सकता।

आहार के सम्बन्ध में हमें कुछ स्वर्ण-सूत्र स्मृति में ही नहीं वरन् आस्था के क्षेत्र में प्रतिष्ठापित करने होंगे—(१) जीवन खाने के लिए नहीं—खाना जीवन के लिए है। (२) जायके के लिए अभक्ष्य उदरस्थ नहीं करते रहना है वरन् औषधि की तरह आहार को उपयुक्त की कसौटी पर कसकर ही अंगीकार करना है। (३) भूख लगे बिना कुछ नहीं खाना। (४) जब खाना तब आधा पेट रोटी के लिए, चौथाई पानी के लिए और चौथाई हवा के लिए नियत रहे। आधा नहीं तो तीन-चौथाई से ज्यादा पेट कभी न भरा जाय (५) मसालों का, तली चीजों का, मिठाइयों का पूरी तरह बहिष्कार (६) अपनी प्रकृति के अनुरूप वह आहार लेना जो जल्दी हजम होता हो (७) आहार में शाक-भाजी का बाहुल्य। (८) दो बार से अधिक भोजन न करना, बीच-बीच में कुछ खाते रहने की आदत बिलकुल छोड़ना। (९) प्रातःकाल के जल-पान में केवल दूध, छाछ जैसा हल्का पेय। (१०) खूब चबाकर और प्रसन्नता की मनःस्थिति में ईमानदारी की कमाई का भोजन करना। यह दस सूत्र ऐसे हैं जिनका समावेश यदि आहार के साथ कर लिया जाय तो पेट खराब न होने पायेगा। जो खाया जायगा ठीक तरह हजम हो जायेगा और उसमें शुद्ध रस सम बनेगा। इतनी भर व्यवस्था हो जाने से रोगों की जड़ कट सकती है। यह तथ्य सर्वविदित है कि समस्त बीमारियों की जड़ 'कब्ज' है। जिसका पेट खराब होगा उसका अपच विष और सड़न में परिणित होकर शरीर को विषैला बना देगा और वह विकृति जहाँ भी जम जायगी वहीं बीमारी उत्पन्न कर देगी। बीमारियों के नाम और स्वरूप अनेक हो सकते हैं पर उनका मूल कारण और आधार एक ही है अतएव यदि कब्ज से बचा जा सके तो आरोग्य सम्बन्धी समस्या का प्रमुख आधार मिल सकता है। कब्ज से बचे रहना बीमारियों से बचे रहने की सबसे बड़ी गारन्टी है। अस्वस्थ व्यक्ति कब्ज से पीछा छुड़ालें तो उनकी बीमारियों का आधार नष्ट हो सकता है और वे खोये हुए स्वास्थ्य को पुनः प्राप्त कर सकते हैं।

आहार सम्बन्धी उपर्युक्त दस सूत्र अति सरल हैं। पर वे हैं अति कठिन भी। अति कठिन इसलिये कि हमारी मान्यता विचार पद्धति और आदत जिस उलटे ढाँचे में ढल गई है उसे उलटने के लिये जिस साहस और मनोबल की आवश्यकता होती है उसका प्रायः भारी अभाव पाया जाता है। जिसे सही मानते हैं उसे मजबूती से पकड़ें, जो गलत प्रतीत होता है उसे छोड़कर अलग करें—इतनी हिम्मत हर जीवित मनुष्य में होनी चाहिए। उन्हें मृतक नहीं तो अर्ध-मृतक कहना चाहिये। जिनसे न अनुपयुक्त छोड़ते बनता है और न उपयुक्त को ग्रहण करने का साहस है। सूखे घास-पात जिस तरह नदी-प्रवाह में बहते चले जाते हैं उसी तरह जो ढर्रा बहुत दिनों से चला जा रहा है उसी में बहते चलने वाले बेजान मनुष्य अपने समाज में भरे पड़े हैं। ज्ञान की, विवेक की कोई बात इनकी समझ में नहीं आती। सुनकर, पढ़कर जरा सी फुरफुरी तो मन में आती है, एक आशा आकांक्षा उठती है कि यदि ऐसा अपने से बन पड़ा तो अच्छा होता। पर जैसे ही पढ़ना, सुनना बन्द हुआ कि वह अभिलाषा भी शान्त हो जाती है और ढर्रे का जीवन उसी पुरानी लकीर पर घसीट ले जाता है। हमारा तो एक दुर्भाग्य यह भी है कि कथा सुनने और कभी पढ़ने भर को पुण्य लाभ के लिए पर्याप्त मानने लगे हैं। सदुपदेशों को सुनना भर पर्याप्त है। इतने से ही स्वर्ग, मुक्ति मिल जाती है। ऐसी मान्यता मनोवृत्ति जिन लोगों की हो, उनसे जीवनक्रम में परिवर्तन न चाहे वह कितना ही सरल क्यों न हो, कम ही सँभलते हैं। इतने पर भी रास्ता और कोई नहीं। यह गाँठ बाँध लेने की बात है। यदि अपनी मान्यताएँ और आदतें बदलने को तैयार नहीं तो फिर अस्वस्थता की विभीषिका से छुटकारा पाने की आशा करना भी व्यर्थ है। पतन के गर्त में गिरते हुए पहिये की चाल क्रमशः तेज होती चली जाती है। हमारे

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

कष्टों का क्रम निकट भविष्य में तीव्र से तीव्रतर ही बनता चला जायेगा।

भील आदि वन्य जातियों के लोग आर्थिक कठिनाइयों से ग्रसित रहते हैं। बहुमूल्य खाद्य-पदार्थों, वस्त्र परिधानों और चिकित्सा आदि की सुविधाओं से उन्हें वंचित रहना पड़ता है फिर भी उनमें इतना बल होता है कि शेर का मुकाबला कर सकें और शिकार के लिए हिरन, सूअर जैसे द्रुतगामी पशुओं का मीलों पीछा कर सकें। उत्तरी ध्रुव पर एस्किमो जाति के लोग उस घोर शीत से घिरे, साधनों से सर्वथा रहित प्रदेश में रहते हैं। कितना कष्टसाध्य उनका जीवन है। फिर भी वे निरोग, परिपुष्ट, हँसमुख और दीर्घजीवी पाये जाते हैं। कारण इतना भर है कि उनने प्रकृति प्रदत्त स्वाभाविक बुद्धि का अवलम्बन लेकर सामान्य और सरल जीवन जीने की रीति-नीति अपनाई। इसके विपरीत हम हैं जो अगणित सुविधा-साधनों का सहारा होते हुए भी अपने शरीरों को दिनों-दिन गिराते, नष्ट करते चले जाते हैं। ऊपर वाली पीढ़ियों की तुलना में हर नीचे वाली पीढ़ी दुर्बल और रुग्ण बनती चली जा रही है। साधन-सुविधायें बढ़ाने के और भी अधिक प्रयत्न किये जा सकते हैं, पौष्टिक भोजन आराम, विश्राम, दवा-दारू जैसे साधनों का बढ़ाया जाना बुरा नहीं पर यह ध्यान रखना चाहिये कि केवल इन्हीं के सहारे हमारी स्वास्थ्य समस्या का समाधान संभव नहीं। यदि ऐसा हो सका तो धनी, अमीर और बड़े आदमी सभी निरोग, पहलवान जैसे परिपुष्ट दिखाई पड़ते और अभावग्रस्त गरीब मजदूर लोग दुर्बल एवम् रुग्ण पाये जाते पर होता उससे ठीक उल्टा है। अमीरों की तुलना में गरीब की शारीरिक स्थिति कहीं अच्छी पाई जाती है।

सच बात तो यह है कि इन दिनों हम एक भयानक बुद्धि भ्रम के युग में रह रहे हैं। सही और सीधी तरह न सोचकर लोग उल्टी और औंधी रीति से सोचने के आदी हो गये हैं। फलस्वरूप विविध-विध विकृतियाँ उगाते और उन्हीं में उलझ-सुलझकर रोते-चिल्लाते, मरते-गिरते रहते हैं। यह एक विचित्र विधि गति ही है कि एक ओर मानवीय बुद्धि अर्थ उपार्जन, दाव-पेच, कौतुक-कौतूहल और चमत्कार उत्पन्न करने में अपनी विलक्षणता सिद्ध कर रही है और दूसरी ओर आदर्शवादी आस्थाओं को तिलांजलि देकर ऐसी मुसीबतों में फँसती चली जा रही है जिन्हें देखते हुए उसकी बज्र मूर्खता में भी कोई सन्देह नहीं रह जाता। जो व्यक्ति व्यापार में रोज ढेरों पैसे कमाना जानता है वह अपने जीवन व्यवसाय में भयानक घाटा देता चला जाय और अन्ततः दिवालिया बन जाय तो उसे बुद्धिमान कहें या मूर्ख, निर्णय करते नहीं बनता। जो एक से एक बढ़कर दाव-पेच लड़ाना जानता है, मित्रों और शत्रुओं को उलट-पुलट कर रख देता है। जो बाल की खाल निकालने में कमाल की चतुराई दिखाता है वही व्यक्ति अपनी अशुद्ध मान्यताओं, अनुपयुक्त लिप्साओं और गन्दी आदतों के द्वारा होने वाले दुष्परिणामों को न समझ सके, जानकर भी अनजान बना रहे और वासनाओं की तनिक सी खुजली जरा देर के लिए खुजलाने के प्रलोभनों में अपना बहुमूल्य स्वास्थ्य गँवा डाले तब यह निर्णय करना कठिन हो जाता है कि उसे बुद्धिमान कहा जाय अथवा मूर्ख ?

मूर्खता विपत्तियों की जननी है। आज के बुद्धि प्रधान युग में मूर्खता का जितना अधिक विस्तार हुआ है उतना सृष्टि के आदि से लेकर अब तक कभी भी नहीं हुआ। यह कारण है कि मानव जीवन का हर क्षेत्र शोक, संतापों और कष्ट-क्लेशों से बुरी तरह आच्छादित बना पड़ता है। जो चतुरता बाल-क्रीड़ाओं में लगी हुई है वही यदि विवेक का अवलम्बन ग्रहण करने और सन्मार्ग पर चल सकने का शौर्य सम्पादित करने में लगी होती तो आज संसार की न जाने कितनी अच्छी, कितनी ऊँची, कितनी सुख-शान्ति-सम्पन्न परिस्थिति दृष्टिगोचर होती।

सुख-शान्ति का मार्ग सरल है। स्वास्थ्य और दीर्घ जीवन का मार्ग अति सरल है। अपनी साधारण चतुरता को छोड़कर सीधा-सादा रहन-सहन अपना लें तो प्रकृति के प्रतिरोध में जो दण्ड सहने पड़ते हैं उनका अवसर न आये। आहार सम्बन्धी दस सूत्र पिछले पृष्ठों पर बताये जा चके हैं। विहार सम्बन्धी दस सूत्र भी उतने ही उपयोगी हैं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

(१) शारीरिक ब्रह्मचर्य का अधिकाधिक पालन करें। जब सन्तानोत्पादन की अनिवार्य आवश्यकता अनुभव हो तभी काम सेवन की बात सोचें। पति-पत्नी परस्पर एक दूसरे को विकार बुद्धि से नहीं, दो भाइयों और मित्रों की निर्मल दृष्टि से देखें। (२) मानसिक कामुकता से बचें। मानवीय सौन्दर्य में पुष्प जैसी पवित्रता का आनन्द लाभ करें। दृष्टि और कल्पना में विकारों का विष न मिलावें। (३) रात्रि में जल्दी सोयें और प्रातः जल्दी उठें। (४) शरीर, वस्त्र, निवास और उपकरणों की स्वच्छता का पूरा-पूरा ध्यान रखें। (५) शारीरिक श्रम से जी जरा भी न चुरावें। हर दिन थकाने वाला परिश्रम करने की व्यवस्था बनाये रखें। (६) क्रोध, चिन्ता, आशंका, निराशा, ईर्ष्या-द्वेष जैसे मनोविकारों का परित्याग करें, हर मनुष्य हँसते-मुस्कराते रहने की आदत डालें। (७) वस्त्रों में न जकड़े रहें। सर्दी-गर्मी का प्रभाव सहन करने की आदत शरीर में बनायें रखें। (८) दुर्व्यसनों से बचें, नशा छुयें भी नहीं, बुरी संगति, बुरा साहित्य, बुरे मनोरञ्जन से सर्प की तरह बचें। (९) कृत्रिमता, शृंगार, बनावट फैशन की बचकानी पसन्दगी छोड़े, सज्जनों की तरह वेष सादा रखें। सन्तोषी जीवन जियें तथा महत्त्वाकांक्षाओं की आग में न जलें। (१०) दूसरों की नकल करें। उनकी विचारधारा, आदतें और रीति उन्हीं को मुबारक रहने दें। अपना मानसिक तथा शारीरिक क्रम विवेकशीलता के आधार पर विनिर्मित करें और अपनी राह पर मजबूती के साथ एकांकी चलते रहने का साहस एकत्रित करें।

यह दस सूत्र रहन-सहन सम्बन्धी ऐसे हैं जिनके आधार पर दिनचर्या और क्रिया-पद्धति का निर्धारण किया जाय तो स्वास्थ्य समस्या का समाधान बड़ी सरलतापूर्वक सम्पन्न हो सकता है। निरोग रहने के लिये किसी बड़ी शिक्षा-दीक्षा, अध्ययन, अनुभव, शोध, विश्लेषण, प्रवचन, श्रवण, मनन, चिन्तन आदि की आवश्यकता नहीं। आवश्यकता केवल इतनी भर है कि बुद्धि भ्रम का जो व्यापक जाल-जंजाल इन दिनों फैला हुआ है, उससे अपना बचाव कर लिया जाय। प्रकृति ने इतना स्वाभाविक ज्ञान मनुष्य समेत प्रत्येक जीव-जन्तु में दिया है कि वह अपने अन्तः प्रेरणा और प्रकृति के निर्देशों को मानकर चलता रहे तो मुक्त जीवन जीने में उसे तनिक भी कठिनाई न हो। पक्षी रात्रि होते ही अपने घोसले में चले जाते हैं और प्रातः होते ही अपने दैनिक पुरुषार्थ में जुट जाते हैं। हम भी रात्रि विश्राम और दिन काम में लगावें, रात को देर से सोने और सबेरे देर से उठने की बुरी आदत छोड़ें तो अक्षय स्वास्थ्य का आनन्द ले सकते हैं। सृष्टि का हर जीवन बिना पकाया भोजन लेता है, उसके प्राकृतिक स्वाद से सन्तुष्ट रहता है। हम अनावश्यक मिर्च, मसाले, खटाई-मिठाई की भरमार से भोजन को बचाये रहें, कच्चा न हो तो मामूली उबाल सेंक कर काम चलालें तो आहार की स्वाभाविकता बनी रह सकती है और पेट खराब होने से बचा रह सकता है। हृष्ट-पुष्ट नर पशु भी काम सेवन की बात तब सोचते हैं जब मादा गर्भ धारण के लिये आतुर होती है। अन्यथा वे उस सन्दर्भ में कोई चेष्टा नहीं करते। यही प्रवृत्ति मनुष्यों में रहे तो शक्ति का विपुल भण्डार उनके शरीर में संचित रहे और शुद्ध रक्त ही अपनी सामर्थ्य से हर रोग को परास्त करने में समर्थ बना रहे।

उल्टी समझ, उल्टी रुचि, उल्टी चाल यही वे भूलें हैं, जिन्होंने तथाकथित सभ्यता के नाम पर अपना जाल-जन्जाल तानकर बुद्धिमान समझे जाने वाले मनुष्य को बुरी तरह फँसाया और बुद्धिहीन बनाया है। इस स्थिति में ही यदि हमें पड़ा रहना हो तो यह बात भी गाँठ बाँध लेनी चाहिए कि आगे दिन-दिन हमारे वैयक्तिक और सार्वजनिक स्वास्थ्य का सत्यानाश ही होने वाला है। यह भ्रम दूर होना चाहिए कि कीमती खाद्य पदार्थ किसी को परिपुष्ट बना सकते हैं और दवा-दारू के सहारे रोगों से निपटा जा सकता है। हमें अपनी मान्यताओं को विवेक की आधारशिला पर विकसित करना होगा और दूसरों की नकल करके अपनी रीति-नीति बनाने की बात मन से बिल्कुल समाप्त करनी होगी। जो उचित है, उसी को अपनाने का साहस भीतर से जगाना होगा और अपना रास्ता अपने आप बनाने के लिये कटिबद्ध होना होगा। दूसरों की नकल करना बिल्कुल व्यर्थ है क्योंकि जिस जमाने में हम रह रहे हैं उसे पागलों की दुनियाँ बिना संकोच कहा जा सकता है। रोटी कमाने और धूर्तता बरतने की कला किसी प्रकार लोगों ने सीख ली इसलिए उन्हें कपड़े फाड़ने वाले और ईंट मारने वालों की श्रेणी में तो नहीं बिठाया जा सकता पर जहाँ तक विवेक, दूरदर्शिता, औचित्य हित-अनहित एवं चिरस्थायी

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

लाभ-हानि सोचने का प्रश्न है वहाँ तक निस्संकोच यह कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य के मामले में लोगों की रीति-नीति बिलकुल सिरफिरे लोगों जैसी है।

महान् मनीषी पी. साइरन ने लिखा है "अच्छा स्वास्थ्य एवं अच्छी समझ, जीवन के दो सर्वोत्तम वरदान हैं।" स्वास्थ्य का अच्छी समझ से बड़ा समीप का सम्बन्ध है। एक अंग्रेजी कहावत है "स्वस्थ दिमाग स्वस्थ शरीर में होता है' जिसकी शारीरिक स्थिति ही अच्छी न होगी उसका मस्तिष्क, उसके विचार व समझ कदापि परिपक्व न होंगे। व्यक्तित्व की परख स्वास्थ्य के अच्छे अथवा खराब होने से भी की जाती है। सदाचार व नैतिक जीवन जीने वाले व्यक्ति स्वस्थ, बलिष्ठ व निरोग होते हैं। उनके चेहरे पर सदैव मुस्कान खिली रहती है। ऐसे व्यक्तियों में कुछ ऐसा आकर्षण होता है कि हर कोई उनसे बात करने, मित्रता बढ़ाने और सदैव मिलते-जुलते रहने के लिए लालायित रहता है। उनसे अलग होने को किसी का जी नहीं करता। स्वस्थ व्यक्ति में प्राण शक्ति अधिक होती है। इसी से लोग उसकी ओर आकर्षित बने रहते हैं।

आज की हमारी रोग, शोक और दुर्बलता की स्थिति अशान्ति, असन्तोष और सन्ताप से भरी हुई जिन्दगी का मुख्य कारण अच्छी समझ का अभाव ही है, जो लोभ की मरु-मरीचिका और मोह की मृग-तृष्णा में भटकती हुई उस पथ पर नहीं आने देती, जिस पर स्वर्गीय शान्ति, निसर्ग सन्तोष और अप्रतिहत शीतलता के दर्शन हो सकते हैं। अपनी आकांक्षाओं की परीक्षा कीजिये, उन्हें सत्य एवं यथार्थ की कसौटी पर परखिये, हित-अनहित की तुला पर उनका मूल्याकंन करिये और जो भी बाधक आकांक्षायें हों उन्हें तुरन्त अपनी मनोभूमि से निकाल बाहर करिये। उचित उपयोगी और रम्य, रंजक आकांक्षाओं को पालिये, उनकी पूर्ति के लिये अबाध प्रयत्न एवं अखण्ड पुरुषार्थ करिये, सुन्दर शिष्ट और सुशील मार्ग का अवलम्बन कीजिये और तब देखिये कि आप के जीवन में स्थायी और अक्षय सुख-शान्ति, स्वास्थ्य का समावेश होता है या नहीं।

विवेक—यही मनुष्य का सबसे बड़ा गुरु, मार्गदर्शक-सहायक एवम् भाग्य निर्माता है। प्राचीनकाल में इस देश का प्रत्येक नागरिक—भारतीय संस्कृति का प्रत्येक अनुयायी—विवेक का उपासक था। गायत्री महामन्त्र के रूप में हमारा एकमात्र उपास्य विवेक था। जो उचित है, जो तर्कसंगत एवम् बुद्धिसम्मत है, उसी को ग्रहण करना, इसके अतिरिक्त अनुपयुक्त स्तर पर प्रचलित समस्त कूड़े-करकट को बुहारकर फैंक देना यही यहाँ के आत्म-बल की परखी हुई विशेषता थी। अनुपयुक्त रीति-रिवाज, आदतें, प्रथायें, परिपाटियाँ चाहे वे किन्हीं तथाकथित बड़े आदमियों द्वारा अपनाई, फैलाई हुई क्यों न रही हों यहाँ विवेकशील जन-मानस द्वारा सदा ठुकराई जाती रही हैं। आज हमारी वह मान्यता नष्ट हो गई तो और सब कुछ भी नष्ट हो गया, स्वास्थ्य भी। अवांछनीय व्यक्तियों का बाहुल्य जिस समाज में हो, उसकी परिपाटियाँ कभी विवेक-सम्मत नहीं हो सकतीं वहाँ मूर्खतापूर्ण प्रथायें ही पनपेंगी। इन दिनों आहार-विहार का असंयम आकाश-पाताल को छू रहा है, लोगों की सारी अक्ल पेट का सर्वनाश करने वाले व्यंजनों की किस्में तैयार करने में लगी हुई हैं। दावतों में इस दुर्बुद्धि का चमत्कार कहीं भी देखा जा सकता है। अमीरों की सजी-बजी थालियाँ भी यही साक्षी देंगी। कामुकता भड़काने वाले चित्र, गीत, वाद्य, प्रकाशन, शृंगार, दृश्य, अभिनय मनुष्य की स्वास्थ्य सम्पत्ति जीवन-शक्ति में आग लगाने के लिए तरह-तरह की आतिशबाजी का सृजन कर रहे हैं। रहन-सहन, आहार-विहार में कृत्रिमता का इतना अधिक समावेश होता चला जा रहा है मानों प्रकृति के निर्देशों का पूर्णतया बहिष्कार करने की ठान ली गई हो। नशों का विष पी-पीकर मीठी-मीठी, धीमी-धीमी आत्महत्या करने के लिये सारा समाज उन्मादियों जैसी कुचेष्टायें करने में मस्त है। इन परिस्थितियों में छुट-पुट उपाय बढ़ते हुए स्वास्थ्य संकट को नहीं रोक सकते। हमें वर्तमान विचार पद्धति और रीति-नीति में आमूलचूल परिवर्तन करना होगा। वैयक्तिक स्तर हो या सामाजिक स्तर, स्वास्थ्य समस्या के समाधान के लिये हमें अपनी विचारणा और रीति-नीति को बदलने के अतिरिक्त और रास्ता है ही नहीं।

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँच स्थापनाएँ

युगदृष्टा के स्तर की अवतारी सत्ता के रूप में परमपूज्य गुरुदेव ने अपने अस्सी वर्ष के जीवनकाल में जितना भी कुछ किया, उसकी मिसाल कहीं देखने को नहीं मिलती। करोड़ों व्यक्तियों के मनों का निर्माण, उनके सोचने के तरीके में बदलाव एवं युग निर्माण की पृष्ठभूमि बनाकर रख देने का कार्य इन्हीं के स्तर की सत्ता कर सकती थी, जो लाखों वर्षों में कभी-कभी धरती पर आती है। उनके द्वारा की गयी स्थापनाओं का जब प्रसंग आता है तब ईंट-गारे-चूने-सीमेंट से बने भवनों से पहले उनकी स्नेह-संवेदना से सिक्त हुए, ममत्व में स्नानकर उनके अपने हो गये लाखों व्यक्ति दिखाई पड़ते हैं, जिनने उनके एक इशारे पर अपना सब कुछ उनको अर्पित कर दिया। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में कभी ऐसा ही वातावरण भारत के कोने-कोने में दिखाई देता था, जब हर घर से सत्याग्रही निकलकर आ रहे थे। भावनाओं का आवेग चिरस्थायी नहीं रहता। वे ही लोग जो कभी राष्ट्र निर्माण के लिए अपना सब कुछ छोड़, पढ़ना-लिखना छोड़ देश को आजाद बनाने के लिए कूद पड़े थे, कभी गड़बड़ाने न पाएँ, उसी के लिए बापू ने आजादी के बाद काँग्रेस भंग कर देने व सभी को एक आदर्श स्वयं-सेवक की तरह दरिद्र नारायण का उत्थान कर राष्ट्र निर्माण में लग जाने की सलाह दी थी।

सभी इस तथ्य को जानते हैं कि ऐसा नहीं हुआ, राष्ट्र का कीर्ति-स्तम्भ रूपी वह महापुरुष भी एक वर्ष के अंदर ही शहादत को प्राप्त हो चला गया। गिने-चुने उनके आदर्शों पर चलने वाले रह गये, अवसरवादियों को राजनेतृत्व भाने लगा एवं राष्ट्र आजाद होकर भी उनके हाथ में आ गया जो ब्रिटिश तो नहीं थे किन्तु, उसी रंग में रँगे सत्ता के उन्माद में काम करने वाले शासक थे- सृजेता नहीं। जिंदा रहा तो मात्र बापू का दर्शन बुनियादी आधार पर टिका- मानव को बनाने का तंत्र-आश्रम तंत्र जो सेवाग्राम-साबरमती आश्रम के रूप में कार्य करता रहा और वह भी शीर्ष-पुरुष के न रहने, बिनोवाजी के चले जाने के बाद अस्तित्व व महत्व की दृष्टि से गौण हो गया। परमपूज्य गुरुदेव ने अपनी दिव्य-दृष्टि से यह सब पूर्व में ही देख लिया था कि कोई भी भव्य निर्माण, आश्रम या तंत्र बनाने से पूर्व राष्ट्र को सांस्कृतिक, भौतिक, आध्यात्मिक आजादी दिलाने वाले अगणित व्यक्ति तैयार करने पड़ेंगे। १९११ में आज से ८४ वर्ष पूर्व वि.संवत् २०८६ में जन्मे, राष्ट्र की आजादी में उन्मत्त बने श्रीराममत्त कहलाने वाले, आचार्यश्री ने पहले स्वयं को तपाया, वैचारिक क्रान्ति के निर्माण का आधारभूत तंत्र स्वयं व परमवंदनीया माताजी के रूप में खड़ा किया, 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका अपनी लेखनी से लिखी, ममत्व भरी चिट्ठियों व छोटी-छोटी एक आने की किताबों से जन-जन के मन को छुआ, तब जाकर अपने एक लक्ष के २४ गायत्री महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर उन्होंने गायत्री तपोभूमि, मथुरा की स्थापना की बात १९५२-५३ में सोची। सबसे पहली मंत्र दीक्षा वहीं पर १९५३ में दी व यह मानते हुए कि बिना आध्यात्मिक आधार बनाये, मनोभूमि में, भावनाओं के स्तर पर बदलाव लाये कोई क्रान्ति सफल नहीं हो सकती, धीमी खुराक देते हुए हर व्यक्ति को गायत्री व यज्ञ के तत्त्वदर्शन से जोड़ते हुए चले गये। गायत्री परिवार रूपी विराट वृक्ष का मूल आधार वह स्थापना है जो जन-जन के मनों में पहले हुई- उनकी भाव संवेदनाओं के उदात्तीकरण के रूप में सम्पन्न हुई व उनके अंदर अपनी गुरुसत्ता को त्याग करने की, यज्ञीय जीवन अपनाने की प्रेरणा बलवती होने लगी। उन्होंने सर्वमेध के रूप में अपना सर्वस्व बलिदान एवं नरमेध के रूप में अपने आप को समाज के हित न्यौछावर करने की भावना से दो यज्ञ किये। अपनी जमींदारी के बाण्ड बेचकर एवं परमवंदनीया माताजी के कीमती सोने के जेवर (ढाई सौ तोले) बेचकर जो स्वेच्छा से सम्पन्न हुआ, एक स्थापना भवन के रूप में जो हुई- वह थी **गायत्री तपोभूमि, मथुरा** जो वृन्दावन रोड पर ऋषि दुर्वासा की जन्मस्थली पर बनी आज से ४२ वर्ष पूर्व १९५३ में। प्रारंभिक स्थापना यों अखण्ड ज्योति संस्थान को माना जा सकता है जहाँ अखण्ड दीपक अपनी जन्मभूमि आँवलखेड़ा से जो वहाँ से मात्र ४० मील दूर थी, स्थापित किया गया था एवं प्रारंभिक तप-तितिक्षा वहीं पर १९४१ से, तपोभूमि की स्थापना से भी १२ वर्ष पूर्व आरम्भ हो गयी थी। इस प्रकार जन-जन के मनों का निर्माण उनके अंत:स्थल में प्रवेश कर उनके अंदर देवत्व के जागरण की ललक पैदा करने वाली पृष्ठभूमि पर स्थापनाओं का क्रम बना। किराये की ऐसी हवेली जिसे भुतहा हवेली कहा

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org

जाता था, में अखण्ड दीपक की स्थापना, उसके समक्ष तप, **अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा** के रूप में विकसित हुआ एवं एक और दूसरा निर्माण मथुरा में ही गायत्री तपोभूमि के रूप में हुआ जो कि ३ मील दूर वृन्दावन रोड पर १९५३ में बनाई गई। १९५३ में क्रमशः सुसंगठित गायत्री परिवार के बनने की प्रक्रिया चल पड़ी।

इस प्रारंभिक भूमिका को समझने के बाद ही परमपूज्य गुरुदेव की पाँच मूल स्थापनाओं एवं बाद में देश के कोने-कोने में बनी भव्य इमारतों के रूप में शक्तिपीठों, प्रज्ञा संस्थानों, भारत व विश्वभर में घर-घर में स्थापित स्वाध्याय मण्डलों व गायत्री परिवार की शाखाओं, प्रज्ञापीठों, चरणपीठों का महत्त्व समझा जा सकता है। नहीं तो जैसे अन्यान्य आश्रम-संस्थान बनते हैं, ऐसे इनका भी वर्णन किया जा सकता था व यह कहा जा सकता था कि यह वैभवपूर्ण स्थापनाएँ पूज्यवर ने कीं। उनमें यदि प्राण फूँके गये हों, प्राणवान व्यक्ति वहाँ रहते हों व उस शक्ति के महा-अवसान के बाद भी वे सतत् उसी दिशा में चल रहे हों तो माना जाना चाहिए कि प्रारंभिक पुरुषार्थ जो किया गया, वह औचित्यपूर्ण था।

परमपूज्य गुरुदेव की महत्त्वपूर्ण पाँच स्थापनाएँ इस प्रकार हैं–

(१) युगतीर्थ आँवलखेड़ा (२) अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा (३) गायत्री तपोभूमि, मथुरा (४) शान्तिकुंज, गायत्री तीर्थ, सप्तसरोवर, हरिद्वार तथा (५) ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, सप्तसरोवर, हरिद्वार ।

युगतीर्थ आँवलखेड़ा का नाम सबसे पहले इसलिए लिखा कि यहीं पर वह युगपुरुष संवत् १९६८ की आश्विन कृष्ण त्रयोदशी तिथि के दिन, ब्राह्ममुहूर्त में, जो अँग्रेजी तारीख से २० सितम्बर, १९११ के दिन आती थी, में जन्मा। एक श्रीमंत ब्राह्मण परिवार में, जहाँ धन की कोई कमी नहीं थी, पूरा परिवार संस्कारों से अनुप्राणित, पिता भागवत के प्रकाण्ड पंडित, बहुत बड़ी जागीर के मालिक। आज जहाँ पूज्यवर की स्मृति में एक विराट स्तंभ की, एक चबूतरे की तथा उनके कर्तृत्व रूपी शिलालेखों की स्थापना हुई है- वहीं पूज्यवर ने शरीर से जन्म लिया था। समीप बनी दो कोठरियाँ जो काल प्रवाह के क्रम में गिर सी गयी थीं, जीर्णोद्धार कर वैसी ही निर्मित कर दी गयी हैं- जैसी उनके समय में थीं। जन्मभूमि का कण-कण उस दैवीसत्ता की चेतना से अनुप्राणित है। उनके हाथ से खोदा कुँआ जिसे पूरे गाँव का एकमात्र मीठे जल वाला कुँआ माना गया- वह अभी भी है, उनके हाथ से रोपा नीम का पेड़ एवं वह बैठक जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में सब बैठकर चर्चा करते थे, आज भी उन दिनों की याद दिलाते हैं। पास में ही दो कोठरियाँ हैं जिनमें से एक कक्ष में वह स्थान है जहाँ दीपक के प्रकाश में से सूक्ष्म शरीरधारी गुरुसत्ता प्रकट हुई थी तथा जिसने उनके जीवन की दिशाधारा का १९२६ के बाद के क्रम का निर्धारण कर दिया था। यह सब देखकर मस्तिष्क-पटल पर वह दृश्य उभर आता था, जिसे गुरुसत्ता ने कभी देखा था व जो गायत्री परिवार की स्थापना का मूल आधार बना। आँवलखेड़ा में ही उनकी माताजी की स्मृति में स्थापित माता दानकुँवरि इण्टर कालेज है जो उनके द्वारा दान दी गयी जमीन में प्रदत्त धनराशि द्वारा विनिर्मित है। १९६३ से चल रहे इस इंटर कालेज से कई मेधावी छात्र निकल कर आत्म-निर्भर बने हैं व उच्च पदों पर पहुँचे हैं।

१९७९-८० में गायत्री शक्तिपीठ एवं कन्या इंटर कॉलेज की स्थापना का ताना-बाना बुना जाने लगा जो एक विशाल शक्तिपीठ तथा आसपास के दो सौ ग्रामों की बालिकाओं के पठन-पाठन की व्यवस्था करने वाले, उन्हें सुशिक्षित, संस्कारवान, आत्मावलम्बी बनाने वाले कन्या महाविद्यालय का अब रूप ले चुका है। प्रथम पूर्णाहुति हेतु इसी भूमि को जो शक्तिपीठ-जन्मभूमि-ग्रामीण क्षेत्र के चारों ओर है, इसीलिए चुना गया कि यहाँ से उद्भूत प्राण ऊर्जा से यहाँ आने वाला हर संकल्पित साधक अनुप्राणित होकर जाए व राष्ट्र के नव-निर्माण की सांस्कृतिक व भावनात्मक क्रान्ति की पृष्ठभूमि रख सके। यहाँ पूज्यवर १९३६-३७ तक ही रहे, कुछ दिन आगरा रहकर १९४०-४१ में मथुरा चले गये, जहाँ दो-तीन मकान बदलने के बाद वर्तमान मकान किराये पर लिया जिसे आज अखण्ड-ज्योति संस्थान कहते हैं।

अखण्ड ज्योति संस्थान, घीयामण्डी, मथुरा में स्थित है। परमपूज्य गुरुदेव सीमित साधनों में अपने अखण्ड दीपक के साथ यहीं रहने लगे एवं यहीं से क्रमशः आत्मीयता विस्तार की जन-जन तक अपने क्रान्तिकारी चिंतन के विस्तार की प्रक्रिया 'अखण्ड ज्योति' पत्रिका, जो आगरा से ही आरम्भ कर दी गयी थी, की 'गायत्री चर्चा' स्तम्भ व अन्यान्य लेखों की पंक्तियों के माध्यम से सम्पन्न होने लगी। व्यक्तिगत पत्रों द्वारा उनके अंतःस्थल को स्पर्श कर एक महान स्थापना का बीजारोपण होने लगा। यहीं पर अगणित दुःखी, तनावग्रसित

व्यक्तियों ने आकर उनके स्पर्श से नये प्राण पाये तथा उनके व परमवंदनीया माताजी के हाथों से भोजन-प्रसाद पाकर उनके अपने होते चले गये। हाथ से बने कागज पर छोटी ट्रेडिल मशीनों द्वारा यहीं पर अखण्ड ज्योति पत्रिका छापी जाती थी व छोटी-छोटी किताबों द्वारा लागत मूल्य पर उसे निकालने योग्य खर्च निकलता था। बगल की एक छोटी-सी कोठरी में जहाँ अखण्ड दीपक जलता था, आज पूजाघर विनिर्मित है। पूरी बिल्डिंग को खरीद कर उनके सुपुत्र ने एक नया आकार व मजबूत आधार दे दिया है किन्तु यह कोठरी अंदर से वैसी ही रखी गयी है जैसी पूज्यवर के समय में १९४२-४३ में रही होगी। तब से लेकर आगामी ३० वर्ष का साधनाकाल-लेखनकाल पूज्यवर का इसी घीयामण्डी के भवन में छोटी-छोटी दो कोठरियों में गहन तपश्चर्या के साथ बीता। तपोभूमि निर्माण की पृष्ठभूमि यहीं बनी, १९५८ में सहस्र कुण्डी यज्ञ की आधारशिला यहीं रखी गयी, यहीं सारी योजना बनी एवं विधिवत-गायत्री परिवार बनता चला गया। रोज आने वाले पत्रों को स्वयं परमवंदनीया माताजी पढ़ती जातीं एवं पूज्यवर इतनी ही देर में जवाब लिखते जाते, यही सूत्र संबंधों के सुदृढ़ बनने का आधार बना। हर परिजन को तीन दिन में जवाब मिल जाता, शंका-समाधान होता चला जाता एवं देखते-देखते एक विराट गायत्री परिवार बनता चला गया। गायत्री महाविज्ञान के तीनों खण्ड, युग निर्माण परक साहित्य, आर्ष-ग्रन्थों के भाष्य को अंतिम आकार देने का कार्य यहीं सम्पन्न हुआ। जनसम्मेलनों, छोटे-बड़े यज्ञों एवं १००८ कुण्डी पाँच विराट् यज्ञों में पूज्यवर यहीं से गये एवं विदाई सम्मेलन की रूपरेखा बनाकर स्थायी रूप से इस घर से १९७१ की २० जून को विदा लेकर चले गये। इस संस्थान के कण-कण में जहाँ आज १० लाख से अधिक संख्या में हिन्दी सहित सभी भाषाओं में अखण्ड ज्योति पत्रिका के प्रकाशन, विस्तार, डिस्पैच आदि का एक विराट तंत्र स्थापित है, परमपूज्य गुरुदेव की चेतना संव्याप्त अनुभव की जा सकती है। भले ही बहिरंग का कलेवर बदल गया हो, अंदर प्रवेश करते ही परमपूज्य गुरुदेव व परमवंदनीया माताजी की सतत विद्यमान प्राणचेतना के स्पन्दन वहाँ विद्यमान हैं, यह प्रत्यक्षत: देखा जा सकता है।

गायत्री तपोभूमि, मथुरा को परमपूज्य गुरुदेव की चौबीस महापुरश्चरणों की पूर्णाहुति पर की गयी स्थापना माना जा सकता है, जिसे विनिर्मित ही गायत्री परिवार रूपी संगठन के विस्तार के लिए किया गया था। इसकी स्थापना से पूर्व चौबीस सौ तीर्थों के जल व रज को संग्रहीत करके यहाँ उनका पूजन किया गया, एक छोटी किन्तु भव्य यज्ञशाला में अखण्ड अग्नि स्थापित की गयी तथा एक गायत्री महाशक्ति का मन्दिर विनिर्मित किया गया। चौबीस सौ करोड़ गायत्री मंत्रों का लेखन जो श्रद्धापूर्वक नैष्ठिक साधकों द्वारा किया गया था, यहाँ पर संरक्षित कर रखा गया है। पू. गुरुदेव की साधनास्थली व प्रात:काल की लेखनी की साधना की कोठरी यदि अखण्ड ज्योति संस्थान में थी तो उनकी जन-जन से मिलने, साधनाओं द्वारा मार्गदर्शन देने की कर्म-भूमि गायत्री तपोभूमि थी। यहीं पर १०८ कुण्डी गायत्री महायज्ञ में १९५३ में पहली बार पूज्यवर ने साधकों को मंत्र दीक्षा दी। यहीं पर १९५६ में नरमेध यज्ञ तथा १९५८ में विराट सहस्रकुण्डी यज्ञायोजन सम्पन्न हुए। श्रेष्ठ नररत्नों का चयन कर गायत्री परिवार को विनिर्मित करने का कार्य यहीं व्यक्तिगत मार्गदर्शन द्वारा सम्पन्न हुआ। हिमालय प्रवास से लौटकर पूज्य आचार्यश्री ने युग निर्माण योजना के शत-सूत्री कार्यक्रम एवं सत्संकल्प की तथा युग निर्माण विद्यालय के एक स्वावलम्बन प्रधान शिक्षा देने वाले तंत्र के आरम्भ होने की घोषणा की। यह विधिवत् १९६४ से आरम्भ किया गया एवं अभी भी सफलतापूर्वक चल रहा है। जिस कक्ष में परमपूज्य गुरुदेव सभी से मिला करते थे, अभी भी यहाँ देखा जा सकता है। भव्य निर्माण परमपूज्य गुरुदेव की १९७१ की विदाई के बाद यहाँ हो गया है किन्तु, कण-कण में उनकी प्राणचेतना का दर्शन किया जा सकता है। विराट प्रज्ञानगर, युग निर्माण विद्यालय, साहित्य की छपाई हेतु बड़ी-बड़ी ऑफसेट मशीनें तथा युग निर्माण साहित्य जो पूज्यवर ने जीवन भर लिखा, उसका वितरण-विस्तार तंत्र यहाँ पर देखा जा सकता है।

शान्तिकुंज, हरिद्वार ऋषि परम्परा के बीजारोपण केन्द्र के रूप में १९७१ में स्थापित किया गया था, जब परमपूज्य गुरुदेव मथुरा स्थायी रूप से छोड़कर परमवंदनीया माताजी को अखण्ड ज्योति दीपक की रखवाली हेतु यहाँ छोड़कर हिमालय में चले गये। गुरुसत्ता के निर्देश पर वे पुन: एक वर्ष बाद लौटे व तब शांतिकुंज को उनने एक बड़ा विराट रूप देने, सभी ऋषिगणों की मूलभूत स्थापनाओं को यहाँ साकार बनाने का निश्चय किया। इससे पूर्व परमवंदनीया माताजी ने २४ कुमारी कन्याओं के साथ अखण्ड दीपक के समक्ष २४० करोड़

गायत्री मंत्र का अखण्ड अनुष्ठान आरंभ कर दिया था। पूज्यवर ने प्राण प्रत्यावर्तन सत्र, जीवन साधना सत्र, वानप्रस्थ सत्र आदि के माध्यम से विभिन्न क्षेत्र में सक्रिय कार्य करने वाले कार्यकर्त्ता यहीं गढ़े। यह सत्र शृंखला कल्प साधना, संजीवनी साधना सत्रों के रूप में तब से ही ९ दिवसीय सत्रों व एक माह के युग शिल्पी प्रशिक्षण सत्रों के रूप में चल रही है, अभी भी अनवरत उसमें आने वालों का ताँता लगा रहता है। पहले से ही सब अपनी बुकिंग इसमें करा लेते हैं।

शांतिकुंज को गायत्री तीर्थ का रूप देकर सप्तऋषियों की मूर्तियों की स्थापना १९७८-७९ में की गयी, एक देवात्मा हिमालय विनिर्मित किया गया एवं यहाँ सभी संस्कारों को सम्पन्न करते रहने का क्रम बन गया जो सतत् चल रहा है। नित्य यहाँ दीक्षा, पुंसवन, नामकरण, विद्यारम्भ, यज्ञोपवीत, विवाह, श्राद्ध-तर्पण आदि संस्कार सम्पन्न होते हैं। इस बीच परमवंदनीया माताजी ने जागरण सत्र शृंखलाएँ सम्पन्न करना आरम्भ रखा। देव कन्याओं को प्रशिक्षित कर पूरे भारत में जीप टोलियों में भेजा गया। इनके माध्यम से तीन वर्ष तक भारत के कोने-कोने में तुमुलनाद होता रहा।

शांतिकुंज का गायत्री नगर जो आज एक विराट स्थापना के रूप में, एक एकेडमी के रूप में नजर आता है व जिसमें एक बार में एक साथ दस हजार व्यक्ति एक साथ ठहर सकते हैं, १९८१-८२ में बनना आरम्भ हुआ । विलक्षण, दुर्लभ जड़ी-बूटियों के पौधे यहाँ लगाये गये तथा प्रखर प्रज्ञा-सजल श्रद्धा रूपी तीर्थस्थली का पूज्यवर ने अपने सामने निर्माण कराया। यहीं उनके निर्देशानुसार उनके शरीर छोड़ने पर दोनों सत्ताओं को अग्नि समर्पित की जानी थी। स्वावलम्बन विद्यालय से लेकर एक विशाल चौके का निर्माण एवं गायत्री विद्यापीठ से लेकर भारत के सभी सरकारी विभागों के प्रशिक्षण के तंत्र की स्थापना यहाँ पर की गयी है एवं यह एक जीता-जागता तीर्थ अब बन गया है, जहाँ पर उज्ज्वल भविष्य की पूर्व झलक देखी जा सकती है। कम्प्यूटरों से सज्जित विशाल कार्यालय से लेकर पत्राचार विद्यालय जहाँ नित्य हजारों पत्रों के द्वारा पूरे तंत्र का मार्गदर्शन किया जाता है, यहाँ की विशेषता है।

ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान परमपूज्य गुरुदेव की अभिनव पाँचवीं स्थापना है, जहाँ पर विज्ञान और अध्यात्म के समन्वय का अभिनव शोध कार्य चल रहा है। इसे १९७१ की गायत्री जयंती पर आरम्भ किया गया था। वर्तमान शांतिकुंज- गायत्री तीर्थ से आधा किलोमीटर दूरी पर गंगातट पर स्थित यह संस्थान अपनी आकर्षक बनावट के कारण सहज ही सबके मनों को मोहकर आमंत्रित करता रहता है। इसमें तीन मंजिलों में प्रथम तल पर एक विज्ञान के उपकरणों से सुसज्जित यज्ञशाला विनिर्मित है तथा चौबीस कक्षों में गायत्री महाशक्ति की चौबीस मूर्तियाँ बीजमंत्रों व उनकी फलश्रुतियों सहित स्थापित हैं। द्वितीय तल पर एक वैज्ञानिक प्रयोगशाला है, जहाँ ऐसे उपकरण स्थापित हैं जो यह जाँच-पड़ताल करते हैं कि साधना से पूर्व व पश्चात्, यज्ञादि मंत्रोच्चारण के पूर्व व पश्चात् क्या-क्या परिवर्तन शरीर-मन की गतिविधियों व रक्त आदि संघटकों में देखने में आये। इनके आधार पर साधकों को साधना संबंधी परामर्श दिया जाता है। यहाँ पर वनौषधियों का विश्लेषण भी किया जाता है तथा यज्ञ ऊर्जा-मंत्र शक्ति का क्या प्रभाव साधक की मस्तिष्कीय तरंगों, जैव विद्युत आदि पर पड़ा, यह देखा जाता है। विभिन्न प्रकार के मनोवैज्ञानिक परीक्षण भी यहाँ किये जाते हैं। तृतीय तल पर एक विशाल ग्रंथागार स्थापित है, जहाँ विश्वभर के शोध प्रबंध वैज्ञानिक अध्यात्मवाद पर एकत्रित किये गये हैं। यहाँ प्रायः ४५००० से अधिक ग्रंथ हैं, जिनमें कई पुरातन पाण्डुलिपियाँ हैं। यह अपने आप में एक अनूठा संकलन है जो और कहीं एक साथ देखने में नहीं मिलता।

परमपूज्य गुरुदेव की उपरोक्त पाँच स्थापनाएँ किसी को भी यह परिचय दे सकती हैं कि किस विलक्षण दृष्टास्तर की वह महासत्ता थी जो हम सबके बीच अपना लीली संदोह रचकर चली गयी। प्रत्यक्ष तो यह केन्द्रीय पाँच स्थापनाएँ नजर आती हैं किन्तु ४८०० से अधिक अपने भवनों वाले प्रज्ञा संस्थान ४०००० से अधिक प्रज्ञामण्डल व स्वाध्याय मण्डल तथा अगणित गायत्री परिवार की शाखाएँ यदि इनमें मिलाई जाएँ तो इनका मूल्य राशि में आँका नहीं जा सकता। यही वह सब है जो उस महापुरुष को एक अवतारी स्तर की सत्ता के रूप में प्रतिष्ठापित करता है व जिसके कर्तृत्व पर श्रद्धावनत होने का मन करता है। ❑❑❑

www.awgp.org www.vicharkrantibooks.org

पं. श्रीराम शर्मा आचार्य का जीवनदर्शन : समग्र वाङ्मय

परमपूज्य गुरुदेव पं. श्रीराम शर्मा आचार्य ने जीवन भर जो अपनी लेखनी से लिखा, औरों को प्रेरित कर उनसे सृजनात्मक लेखन करवाया, पुस्तकों-पत्रिकाओं में जो प्रकाशित हुआ, समय-समय पर उनने अमृतवाणी के माध्यम से जो विचारों की अभिव्यक्ति की, विचौंरसार व सूक्तियाँ जो वे लिख गये या अनायास कभी कह गये तथा पत्रों के माध्यम से जो अंतरंग स्पर्श जन-जन को दिया, वह समग्र इस वाङ्मय के खण्डों में है । जिनके नाम इस प्रकार हैं :-

१. युगद्रष्टा का जीवन-दर्शन
समग्र वाङ्मय का परिचय
२. जीवन देवता की साधना-आराधना
३. उपासना-समर्पण योग
४. साधना पद्धतियों का ज्ञान और विज्ञान
५. साधना से सिद्धि-१
६. साधना से सिद्धि-२
७. प्रसुप्ति से जाग्रति की ओर
८. ईश्वर कौन है, कहाँ है, कैसा है ?
९. गायत्री महाविद्या का तत्वदर्शन
१०. गायत्री साधना का गुह्य विवेचन
११. गायत्री साधना के प्रत्यक्ष चमत्कार
१२. गायत्री की दैनिक एवं विशिष्ट अनुष्ठान-परक साधनाएँ
१३. गायत्री की पंचकोशी साधना एवं उपलब्धियाँ
१४. गायत्री साधना की वैज्ञानिक पृष्ठभूमि
१५. सावित्री, कुण्डलिनी एवं तंत्र
१६. मरणोत्तर जीवन : तथ्य एवं सत्य
१७. प्राणशक्ति : एक दिव्य विभूति
१८. चमत्कारी विशेषताओं से भरा मानवी मस्तिष्क
१९. शब्द ब्रह्म-नाद ब्रह्म
२०. व्यक्तित्व विकास हेतु उच्चस्तरीय साधनाएँ
२१. अपरिमित संभावनाओं का आगार मानवी व्यक्तित्व
२२. चेतन, अचेतन एवं सुपर चेतन मन
२३. विज्ञान और अध्यात्म परस्पर पूरक
२४. भविष्य का धर्म : वैज्ञानिक धर्म
२५. यज्ञ का ज्ञान-विज्ञान
२६. यज्ञ : एक समग्र उपचार प्रक्रिया
२७. युग-परिवर्तन कैसे और कब ?
२८. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-१
२९. सूक्ष्मीकरण एवं उज्ज्वल भविष्य का अवतरण-२
(सतयुग की वापसी)
३०. मर्यादा पुरुषोत्तम राम
३१. संस्कृति-संजीवनी श्रीमद्भागवत एवं गीता
३२. रामायण की प्रगतिशील प्रेरणाएँ
३३. षोडश संस्कार विवेचन
३४. भारतीय संस्कृति के आधारभूत तत्त्व
३५. समस्त विश्व को भारत के अजस्र अनुदान
३६. धर्मचक्र प्रवर्त्तन एवं लोकमानस का शिक्षण
३७. तीर्थ सेवन : क्यों और कैसे ?
३८. प्रज्ञोपनिषद्
३९. नीरोग जीवन के महत्त्वपूर्ण सूत्र
४०. चिकित्सा उपचार के विविध आयाम
४१. जीवेम शरदः शतम्
४२. चिरयौवन एवं शाश्वत सौन्दर्य
४३. हमारी संस्कृति : इतिहास के कीर्ति स्तम्भ
४४. मरकर भी अमर हो गये जो
४५. सांस्कृतिक चेतना के उन्नायक : सेवाधर्म के उपासक
४६. भव्य समाज का अभिनव निर्माण
४७. यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते, रमन्ते तत्र देवता
४८. समाज का मेरुदण्ड सशक्त परिवार तंत्र
४९. शिक्षा एवं विद्या
५०. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-१
५१. महापुरुषों के अविस्मरणीय जीवन प्रसंग-२
५२. विश्व वसुधा जिनकी सदा ऋणी रहेगी
५३. धर्मतत्त्व का दर्शन व मर्म
५४. मनुष्य में देवत्व का उदय
५५. दृश्य जगत् की अदृश्य पहेलियाँ
५६.ईश्वर विश्वास और उसकी फलश्रुतियाँ
५७. मनस्विता प्रखरता और तेजस्विता
५८. आत्मोत्कर्ष का आधार- ज्ञान
५९. प्रतिगामिता का कुचक्र ऐसे टूटेगा
६०. विवाहोन्माद : समस्या और समाधान
६१. गृहस्थ : एक तपोवन
६२. इक्कीसवीं सदी : नारी सदी
६३. हमारी भावी पीढ़ी और उसका नवनिर्माण
६४. राष्ट्र समर्थ और सशक्त कैसे बने ?
६५. सामाजिक, नैतिक एवं बौद्धिक क्रान्ति कैसे ?
६६. युग निर्माण योजना-दर्शन, स्वरूप व कार्यक्रम
६७. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त
६८. पूज्यवर की अमृतवाणी (भाग एक)
६९. विचारसार एवं सूक्तियाँ (प्रथम खण्ड)
७०. विचारसार एवं सूक्तियाँ (द्वितीय खण्ड)

वाङ्मय के आगे प्रकाशित होने वाले ३८ खण्ड निम्न विषयों पर होंगे--

७१. मनोविकारों की मनोवैज्ञानिक पृष्ठभूमि
७२. तनाव के कारण एवं उनके निवारण के उपाय
७३. चिन्तन का विधेयात्मक-निषेधात्मक स्वरूप
७४. पुरुषार्थ और मानवी जिजीविषा
७५. संकल्प बल का अनूठा प्रभाव
७६. बाल-विकास के विविध सोपान
७७. बाल मनोविज्ञान का सही उपयोग
७८. पारिवारिकता में सुसंस्कारों का योगदान
७९. पारिवारिक पंचशील और परिवार-निर्माण
८०. व्यक्तित्व के विकास की प्रक्रिया
८१. विचार-विज्ञान का महत्त्व
८२. सामाजिक समस्याएँ और उनका समाधान
८३. समाज-निर्माण के विभिन्न चरण
८४. सामाजिक जीवन में सद्गुणों की भूमिका
८५. नर-नारी की सामान्य समस्याएँ और उनका समाधान
८६. नारी जागृति की बाधाएँ एवं उनके निराकरण के उपाय
८७. पारिवारिक जीवन: एक तप-साधना
८८. दाम्पत्य जीवन के संयुक्त दायित्व
८९. नीति-विज्ञान और नैतिकता
९०. कृषि, व्यवसाय और उद्योग की उन्नति के आधार
९१. पूज्य गुरुदेव के स्फुट विचार
९२. पूज्यवर की अमृतवाणी-२
९३. पूज्य गुरुदेव की दिव्य अनुभूतियाँ
९४. पूज्य गुरुदेव के लिखे स्मरणीय पत्र
९५. तंत्र महाविज्ञान विवेचन
९६. मंत्र महाविज्ञान विवेचन
९७. महापुरुषों के प्रेरक जीवन-प्रसंग
९८. प्रेरणाप्रद कथा एवं गाथाएँ
९९. हृदयस्पर्शी विविध कथाएँ
१००. शान्तिकुंज का प्रज्ञा अभियान
१०१. युग निर्माण मिशन का क्रमिक इतिहास
१०२. वेद-सार-चिन्तन
१०३. पुराण-शोध-सार
१०४. उपनिषद् और आरण्यकों की दार्शनिक विषयवस्तु
१०५. काव्य-गीत-मंजूषा
१०६. मिशन के रचनात्मक कार्यक्रमों का क्रमिक इतिहास
१०७. मिशन की लोक-व्यवहार संहिता
१०८. गुरुदेव की अपने आत्मीय जनों से अपनी बातें

Complete work of Yugrishi Pt. Sriram Sharma Acharya (Founder of All World Gayatri Pariwar, Shantikunj, Haridwar) www.awgp.org
Free Download Life Chaning 3000+ Books, Magazines, Articles, Stories, Great Personalities, Poems and Many More www.vicharkrantibooks.org